श्री गुलाबमलजी सिरहमलजी नरलला
की तरफ से सादर भेट।

उत्तराध्ययन सूत्रम्।

(तृतीयो भागः)

॥ अथ पञ्चदशमध्ययनम् ॥

व्याख्यातं चतुर्दशमध्ययनम्। सम्प्रति सभिक्षु नामकं पञ्चदशमध्ययनमारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन्नध्ययने निर्निदानतागुणः प्रोक्तः, स च भिक्षोरेव, भिक्षुत्वं च गुणाधीनम्, इति भिक्षोर्गुणा अस्मिन्नध्ययने प्रोच्यन्ते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्य पञ्चदशाध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—मोणं चरिस्सामि समिच्च धम्मं, सहिए उज्जुकडे णियाणछिन्ने।
सथवं जहेज्ज अकामकामे, अन्नायएसी परिव्वए स भिक्खू ॥१॥

छाया—मौनं चरिष्यामि समेत्य धर्मं, सहितः ऋजुकृतो निदानच्छिन्नः।
संस्तवं जह्यादकामकामः, अज्ञातैषी परिव्रजेत्स भिक्षुः ॥ १ ॥

टीका—'मोणं' इत्यादि।

पन्द्रहवां अध्ययन प्रारंभ

चौदहवां अध्ययन समाप्त हुवा। अब पन्द्रहवां अध्ययन प्रारंभ होता है। इस अध्ययन का नाम सभिक्षु अध्ययन है चौदहवें अध्ययन के साथ इसका संबंध इस प्रकार से है—चौदहवें अध्यय मे निर्निदानतागुणरूप से प्रकट की गई है, और वह भिक्षु के ही होती हैं। कारण कि भिक्षुपन गुण के आधीन होता है। इस लिये इस अध्ययन मे भिक्षुओं के गुणों का कथन किया जायगा। इसी संबंध को लेकर इसका प्रारंभ किया गया है। इसका यह सर्व प्रथम सूत्र है—'मोणं' इत्यादि।

પંદરમા અધ્યયનનો પ્રારંભ

ચૌદમું અધ્યયન સંપૂર્ણ થયું, હવે પંદરમા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે આ અધ્યયનનું નામ સભિક્ષુ અધ્યયન છે ચૌદમા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે—ચૌદમા અધ્યયનમાં નિર્નિદાનતા ગુણરૂપથી પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે અને તે ભિક્ષુને જ હોય છે કારણકે, ભિક્ષુપણું ગુણને આધીન હોય છે આ માટે આ અધ્યયનમાં ભિક્ષુઓના ગુણોનું કથન કરવામાં આવશે આ સંબંધને લઈને એનો પ્રારંભ કરવામાં આવેલ છે આ અધ્યયનનું સહુથી પહેલું સૂત્ર છે "મોણં" ઇત્યાદિ।

विहारितया विहरेत्। य एवंविध. स भिक्षुरुच्यते। अनेन सिंहतया निष्क्रम्य सिंहतया विहरण भिक्षुतानिमित्तमुक्त साधूनाम्। चतुर्भङ्गी यथा—

(१) सिंहत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरति।
(२) सिंहत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति।
(३) सियालत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरति।
(४) सियालत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति।

एषु सिंहतया निष्क्रम्य सिंहतया विहरण सर्वोत्तमम् ॥ १ ॥

सिंहतया विहरणमेव विशेषतः प्राह—

मूलम्-राओवरयचरेज्ज लाढे, विरए वेदवियाऽऽयरक्खिए।
पन्न अभिभूय सव्वदंसी, जे कम्हिवि न मुच्छिए स भिक्खू ॥२॥

छाया—रागोपरत चरेत् लाढः, विरतो वेदविदात्मरक्षित ।
प्राज्ञः अभिभूय सर्वदर्शी, यः कस्मिन्नपि न मूर्च्छित' स भिक्षुः ॥२॥

टीका—'राओवरय' इत्यादि ।

लाढ =सदनुष्ठाने तत्परः, 'लाढ' इति देशीयशब्द', विरतः=आस्रवान्नि-

---

करता हुआ (परिव्वए–परिव्रजेत्) अनियत विहारी होता है-(स भिक्खू–स भिक्षु) वही भिक्षु है।

भावार्थ—इन पूर्वोक्त गुणविशिष्ट आत्मा ही भिक्षु है। इससे यहा साधुओं की भिक्षुता की निमित्तभूत चौभगी प्रकट की जाती है। जैसे-१ सिंहत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरति। २ सिंहत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति। ३ सियालत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरति। ४ सियालत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति। ८॥ इन चार भगो में सिंहवृत्ति से निकलकर सिंहवृत्ति से ही विचरना यह प्रथम भग सर्वोत्तम है ॥१॥

કુળોમા આહાર આદિની ગવેષણા કરતા કરતા परिव्वए–परिव्रजेत् અનિયત વિહારી બને છે स भिक्खू–स भिक्षु. તેજ ભિક્ષુ છે

ભાવાર્થ—આવા પૂર્વોક્ત ગુણ વિશિષ્ટ આત્મા જ ભિક્ષુ છે આથી જ અહી સાધુઓની ભિક્ષુપણાની નિમિત્તભૂત ચૌભગી પ્રગટ કરવામા આવે છે—જેમ (૧) सिंहत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरति (२) सिंहत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति (३) सियालत्ताए निक्खमति सिंहत्ताए विहरती. (४) सियालत्ताए निक्खमति सियालत्ताए विहरति આ ચાર ભાગોમા સિ હવૃત્તિથી નિકળીને સિ હવૃતિથી જ વિચરવુ એ પ્રથમ ભગ સર્વોત્તમ છે ॥૧॥

मौन=मुनिभाव चरिष्यामि=आसेविष्ये इति भावनया धर्म=दशविध श्रुत-चारित्रलक्षण च समेत्य=अङ्गीकृत्य सहितः=एकाकित्वस्यागमे निषिद्धत्वाद् द्विती यादि मुनिसहितः, तथा-ऋजुकृतः=मायारहितयाऽनुष्ठानपरायणः, निदान च्छिन्नः=छिन्ननिदानः निदानशल्यरहितः, सस्तव=पूर्वपरिचितैः पित्रादिभिः पश्चात्परिचितैः श्वशुरादिभिश्च सह परिचय, जह्यात्=परित्यजेत् । तथा=अकामकाम = कामाभिलापरहित , यद्वा-अकामो-मोक्षः सकलविषयाभिलापनिवृत्तिस्थानत्वात्, त कामयते य. स तथा, मोक्षाभिलापीत्यर्थः, तथा-अज्ञातैषी=यत्र कुलादौ साधोस्तपोऽनुष्ठानादिक न जानातितत्राहारादिगवेषक. सन् परिव्रजेत्=अनियत

अन्वयार्थ—जो (मोण-मौनम्) मुनिभाव का मैं (चरिस्सामि-चरिष्यामि) सेवन करूँगा इस भावना से (धम्म-धर्मम्) उत्तम क्षमा आदि रूप अथवा श्रुतचारित्ररूप धर्मको (समिच्च-समेत्य) अगीकार करके (सहिए-सहितः) द्वितीयादि मुनियो के साथ रहता है, एकाकी नहीं, क्यो कि अकेले रहनेका आगममें निषेध है। तथा (उज्जुकडे-ऋजुकृत') मायारहित होकर ही जो सयमरूपी अनुष्ठान परायण बना रहता है (णियाणछिन्ने-निदानछिन्न.) एव निदानशल्य से वर्जित हुआ (सथव जहेज्ज-सस्तव जह्यात्) पूर्वपरिचित पिता आदिके साथ तथा पश्चात् परिचित-श्वशुर आदिकों के साथ परिचय का त्याग कर देता है, एव (अकामकामे-अकामकामः) कामाभिलापरहित होकर अथवा मोक्षाभिलाषी बनकर ही (अन्नायएसी-अज्ञातैषी) साधुओं के तप अनुष्ठानादिक से अज्ञात-अपरिचित कुलो मे आहार आदि की गवेषणा

અન્વયાર્થ—જે मोण-मौनम् મુનિ ભાવનુ હુ चरिस्सामि-चरिष्यामि સેવન કરીશ એ ભાવનાથી धम्म-धर्मम् ઉત્તમ ક્ષમા આદિ રૂપ અથવા શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મને समिच्च-समेत्य અગિકાર કરીને सहिए सहित બીજા મુનિઓની સાથે રહે છે એકલા નહી કારણકે, એકલા રહેવાનો આગમમા નિષેધ છે તથા उज्जुकडे-ऋजुकृत માયા રહિત બનીને જ જે અનુષ્ઠાનમા પરાયણ બની રહે છે णियाण-छिन्ने-निदानच्छिन्न. અને નિદાન શલ્યથી વર્જીત થઈને सथव जहेज्ज-सस्तव जह्यात् પૂર્વ પરિચિત પિતા આદિની સાથે તથા પાછળથી જેની સાથે સબધ બધાયો છે એવા શ્વશુર આદિની સાથેના પરિચયનો ત્યાગ કરી દે છે અને अकामकामे-अकामकाम કામ અભિલાષાથી રહિત બનીને અથવા મોક્ષાભિલાષી બનીને જ अन्नायएसी-अज्ञातैषी સાધુના તપ અનુષ્ઠાન આદિથી અપરિચિત

समस्त प्राणिजातम्-आत्मवत् पश्यतीत्येवंशीलः, एतादृशो मुनिः अभिभूय= परिषहोपसर्गान् पराजित्य, रागोपरत-कामभोगाभिलापरहित यथास्यात्तथा, चरेत्= विहरेत्, तथा-यः कस्मिन्नपि सचित्ताचित्तमिश्रवस्तुनि मूर्च्छितः=आसक्तो न भवेत्। एतादृशोयो मूलगुणान्वित स भिक्षुरुच्यते ॥२॥

प्रकार है-प्राप्त सम्यग्दर्शन आदि की रक्षा करने में तत्पर बना हुआ। जीव अजीव आदि तत्त्व जिससे जाने जाते है उसका नाम वेद जैनशास्त्र है। उस वेद को जाननेवाला वेदवित् कहलाता है। जब 'वेदविदारक्षित.' ऐसा पद रखा जाय तब वेदको जाननेवाली जो विदा-बुद्धि-ज्ञान-उससे कुगति में गिरति हुई आत्मा की जिसने रक्षा की है। ऐसा दूसरा अर्थ यह होता है। जो मुनि आगमानुकूल आचरणशील होता है उससे ही आत्मारक्षित होती है-इससे यह बात सूचित होती है।

भावार्थ—जो मुनि सदनुष्ठान में तत्पर रहता है। आस्रव से निवृत्त होता है अर्थात् ऐसे कृत्य नहीं करता कि जिससे उसको नवीन कर्मों का बंध होवे, आगमका ज्ञाता होता है दुर्गति में पतन के हेतुभूत अपध्यान आदि अनर्थों से बचता रहता है। हेयोपादेय के ज्ञान से जिसका अन्त.करण वासित रहता है। ये सब जीव मेरे ही समान है। यह जानकर किसी को भी नहीं सताता है। परीपह एव उपसर्गों से जो कभी चलायमान नही होता है और न किसी भी पदार्थ में जिसकी मूर्च्छा होती है वही भिक्षु है ॥२॥

પ્રાપ્ત સમ્યગ્દર્શન આદિની રક્ષા કરવામા તત્પર બનેલા એવા જીવ અજીવ આદિ તત્વ જેનાથી જાણી શકાય છે તે વેદ છે એ વેદના જાણવાવાળા વેદવિત્ કહેવાય છે જ્યારે "वेदविदा रक्षित." એવુ પદ રાખવામા આવે ત્યારે વેદને જાણવાવાળી જે વિદા-બુદ્ધિ-જ્ઞાન જેણે કુગતિમા પડતી આત્માની રક્ષા કરેલ છે એવો બીજો અર્થ થાય છે જે મુનિ આગમ અનુકૂળ સમાચરણશીલ હોય છે એનાથી જ આત્માનુ રક્ષણ થાય છે આથી એ વાત સૂચિત બને છે

ભાવાર્થ-જે મુનિ સદનુષ્ઠાનમા તત્પર રહે છે, આસ્રવથી નિવૃત્ત બને છે, અર્થાત એવુ કૃત્ય નથી કરતા કે, જેનાથી તેને નવીન કર્મોનો બધ થાય આગમના જાણનાર હોય છે દુર્ગતિથી-પતનના હેતભૂત અપધ્યાન આદિ અનર્થોથી બચતા રહે છે હેય ઉપાદેયના જ્ઞાનથી જેનુ અત કરણ વાસિત રહે છે આ સઘળા જીવો મ્હારા સમાન જ છે એવુ જાણીને કોઈને પણ કદી સતાવતા નથી પરીષહ અને ઉપસર્ગોથી જે કદી ચલાયમાન થતા નથી અને કોઈપણ પદાર્થમા તેમનુ મન લલચાતુ નથી એજ ભિક્ષુ છે ॥ ૨ ॥

वृत्त., वेदवित्=विद्यते जीवाजीवादितत्त्वमनेनेति वेद आगमस्त वेत्तीति वेदवित्= आगमज्ञः, तथा–आत्मरक्षित.=रक्षितो दुर्गतिहेतोरपध्यानादेरात्मा येन स तथा, यद्वा–'आयरक्षित.' इतिच्छाया–रक्षित'–आयः रत्नत्रयमाप्तिलक्षणो लाभो येन स तथा, प्राप्त सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रयरक्षणशील इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् 'रक्षित' शब्दस्य परनिपात. । यद्वा वेदस्य=आगमस्य=विदा=बुद्धिर्ज्ञानमिति यावत्, तया रक्षितः–कुगतिपतनात् आत्मा येन स' तथा, 'प्रज्ञा श्रद्धाधराज्ञप्ति पण्डा सवेदन विदा' इति शब्दार्णवः । अनेन आगमानुकूलसमाचरणशीलस्यैव मुनेरात्मा रक्षितो भवतीति सूचितम् । तथा–प्राज्ञः=हेयोपादेयबुद्धिमान, सर्वदर्शी=सर्व–

इसी वात को सूत्रकार विशेषरूप से स्पष्ट करते हैं–'राओवरय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(लाढे–लाढ.) सदनुष्ठान–समय मे तत्पर (विरए–विरत') आस्रव से निवृत्त (वेदविया–वेदवित्) आगमका ज्ञाता तथा (आयरक्खिए–आत्मरक्षितः) आत्माका रक्षक (पन्ने–प्राज्ञः) हेय और उपादेय की बुद्धि से सपन्न एव (सव्वदसी–सर्वदर्शी) समस्तभूतों को अपने समान समझनेवाला मुनि (अभिभूय–अभिभूय) परीषह एव उपसर्गों को पराजित करके–जीत करके–(राओवरय–रागोपरतम्) कामभोगाभिलाषरहित होकर (चरेज्ज–विहरेत्) विचरता है और उस विहार मे (जे–यः) जो (कम्हिवि न मुच्छिए–कस्मिन् अपि मूर्च्छित' न भवति) किसी भी सचित्त अचित्त एव मिश्र वस्तुओ मे मूर्च्छित आसक्त नहीं होता है (स भिक्खू–स भिक्षुः) वह भिक्षु है। "वेदविदायरक्खिए" इस पदकी "वेदवित् आयरक्षितः" ऐसी भी छाया होती है–इसका अर्थ इस

આ વાતને સૂત્રકાર વિશેષરૂપથી પ્રગટ કરે છે "राओवरय" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—लाढे–लाढ. સદનુષ્ઠાનમા તત્પર, विरए–विरत. આસ્રવથી નિવૃત્ત वेदविया–वेदवित् આગમના જ્ઞાતા તથા आयरक्खिए–आत्मरक्षित આત્માના રક્ષક पन्ने–प्रज्ञ હેય અને ઉપાદેયની બુદ્ધિથી સપન્ન અને सव्वदसी–सर्वदर्शी જીવોને પોતાના સમાન સમજવાવાળા મુનિ अभिभूय–अभिभूय પરીષહ અને ઉપસર્ગોને પરાજીત કરીને राओवरय–रागोपरतम् કામભોગની અભિલાષાથી રહિત બનીને चरेज्ज–विहरेत् વિચરે છે, પછી તે વિહારમા जे–य જે कम्हिवि न मुच्छिए–कस्मिन्अपि न मूर्च्छित કોઈ પણ સચિત્ત અચિત્ત અને મિશ્ર–વસ્તુઓમા આસક્ત બનતા નથી स भिक्खू–स भिक्षु એજ ભિક્ષુ છે "वेदविदाय रक्खिए" આ પદની "वेदवित् आयरक्षितः" એવી પણ છાયા બને છે આનો અર્થ આ પ્રમાણે છે–

'अय मा परुपवचनैरधिक्षिपति, तथाप्यह क्षमामाश्रित्य सर्वं सहे, न च कुप्यामि, कीदृशोऽस्म्ह क्षमाशील ' इत्येव हर्परहित. सन् यः कृत्स्न=समस्त परीपहोपसर्गम् अध्यासीत=सहेत स भिक्षुरुच्यते ॥३॥

नित्य चरेत्) अप्रतिबन्ध विहार करे। विहार में (कसिण अहियासए-कृत्स्नम् अध्यासीत) वह आये हुए समस्त परीपह और उपसर्गों को सहता है। इस परिस्थितिवाला (जो होइ-य. भवति) जो मुनि होता है (स भिक्खू-स भिक्षुः) वही भिक्षु कहलाता है।

भावार्थ—इस अध्ययन मे सूत्रकार भिक्षु के लक्षणों को बतला रहे है इसीके सबध से वे कहते हैं कि जो मुनिराज विहार करते समय आक्रोश एव वध परीपह से नहीं चलित होते हैं प्रत्युत 'ये आक्रोश एव वध मेरे पूर्वकृत कर्मोंने ही मेरे पास उपस्थित किये हैं अत. मुझे इनको मध्यस्थ भाव से सहन करना चाहिये' यदि जरा भी चित्त मे इनके द्वारा क्षोभ का भाव जग जायगा तो मैं असयम स्थानो मे पतित हो जाऊगा' ऐसा समझकर इनको सहन करते है और जिनका यह विचार सदा बना रहता है कि तप और सयम की कसौटी प्रतिकूल सयोगो में ही होती है अत. तप सयमकी आराधना करने मे मुझे यदि परीपह और उपसर्गों का साम्हना करना पडता है तो इससे तप सयमकी दृढता ही होती है जिस मे मुझे बडा भारी लाभ है।

અપ્રતિબધ વિહાર કરે વિહારમા कसिण अहियासए-कृत्स्न अध्यासीत આવતા સઘળા પરીષહ અને ઉપસર્ગોને તે સહે છે આવી પરિસ્થિતિવાળા जो होइ-यः भवति જે મુનિ હોય છે स भिक्खू એ મુનિ જ ભિક્ષુ કહેવાય છે

ભાવાર્થ—આ અધ્યયનમા સૂત્રકાર ભિક્ષુના લક્ષણો બતાવી રહ્યા છે એમના જ સબધથી તેઓ કહે છે કે, જે મુનિરાજ વિહાર કરતા સમયે આક્રોશ અને વધ પરિષહથી ચલિત થતા નથી પરતુ "આ આક્રોશ અને વધ મારા પૂર્વકૃત કર્મોએ જ મારી સામે ઉપસ્થિત કરેલ છે આથી મારે એને મધ્યસ્થભાવથી સહન કરવા જોઇએ જો જરા સરખો પણ ચિત્તમા એનાથી ક્ષોભ ભાવ જાગી જાય તો હુ અસયમ સ્થાનોમા પતિત બની જઈશ" એવુ સમજીને તેને સહન કરે છે અને તેમના મનમા એ વિચાર સદાના માટે બન્યો રહે છે કે, તપ અને સયમની કસોટી પ્રતિકૂળ સયોગોમા જ થાય છે આથી તપ સયમની આરાધના કરવામા મારે જો પરીષહ અને ઉપસર્ગોનો સામનો કરવો પડે છે તો એનાથી તપ સયમની દૃઢતા થાય છે એનાથી મને ઘણો મોટો લાભ થાય છે તથા સત્કાર સન્માન મળવા છતા પણ જેમના ચિત્તમા થોડો સરખો પણ હર્ષનો ભાવ જાગૃત થતો નથી કેમકે,

तथा—

मूलम्-अक्कोसवह विइत्तु धीरे, मुणी चरे लाढे निच्चमायगुत्ते ।
अविग्गमणे असंपहिट्ठे, जो कसिणं अहियासए स भिक्खू ॥३॥

छाया—आक्रोशवध विदित्वा धीरो, मुनिश्चरेत् लाढो नित्यमात्मगुप्तः ।
अव्यग्रमना असम्प्रहृष्टो, यः कृत्स्नमध्यासीत स भिक्षुः ॥३॥

टीका—'अक्कोसवह' इत्यादि ।

मुनिः आक्रोशवधम्-आक्रोशनम्-आक्रोश -असभ्यालाप , वधस्ताडनम्, अनयो. समाहारद्वन्द्वः, एतत् आक्रोशवध, विदित्वा=' स्वकृतकर्मणः फल '-मिति मत्वा धीरः=क्षोभरहित', तथा-लाढ'=सदनुष्ठाने तत्परः, तथा आत्म गुप्त =गुप्तो रक्षितोऽसयमस्थानेभ्य आत्मा येन तथा-भूत सन् नित्य=सर्वदा चरेत्=अप्रतिबद्धो भूत्वा विहरेत् । तथा-अव्यग्रमना'=अव्यग्र तप' सयमाराधने अनाकुल मनो यस्य स तथा, अपि च-असम्प्रहृष्ट =सत्कारपुरस्कारे समाप्तेऽपि हर्षरहित , यद्वा-कश्चित् कमपि दुर्वचनादिभिर्भर्त्सयतीति दृष्ट्वा हर्षरहित., अथवा-

---

तथा—'अक्कोसवह' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—मुनि (अक्कोसवह-आक्रोशवधम्) असभ्यवचनरूप वधको अपने द्वारा पूर्वकृत कर्म का फल (विइत्तु-विदित्वा) जानकर के (धीरे लाढे-धीर' लाढ.) उस समय क्षोभरहित एव सदनुष्ठान मे तत्पर ही बना रहे और (आयगुत्ते-आत्मगुप्त) असयम स्थानो से अपनी आत्माकी रक्षा करता रहे। एव (अविग्गमणे-अव्यग्रमनाः) सयम तथा तपकी आराधना करने मे उपस्थित परीषह एव उपसर्गो से अनाकुल मन होकर तथा (असपहिट्ठे-असम्प्रहृष्ट.) सत्कार पुरस्कार से सत्कृत एव पुरस्कृत होने पर भी हर्षभाव से रहित होकर (निच्च चरे-

---

તથા—'अक्कोसवह' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—મુનિ अक्कोसवह-आक्रोशवधम् અસભ્ય વચનરૂપ આક્રોશ અને તાડનરૂપ વધને પોતાના દ્વારા પૂર્વકૃત કર્મનું ફળ विइत्तु-विदित्वा જાણીને धीरे लाढे-धीर लाढ' એ સમયે ક્ષોભ રહિત તેમજ સદનુષ્ઠાનમા તત્પર જ બની રહે અને आयगुत्ते-आत्मगुप्त અસયમ સ્થાનોથી પોતાના આત્માનુ રક્ષણ કરતા રહે અને अविग्गमणे-अव्यग्रमना સયમ તથા તપની આરાધના કરવામા આવતા પરીષહ અને ઉપસર્ગોથી અનાકુળ મન થઇને તથા असपहिट्ठे-असम्प्रहृष्ट સત્કાર પુરસ્કારથી સત્કૃત અને પુરસ્કૃત થવાથી પણ હર્ષભાવથી રહિત થઇને निच्चचरे-नित्य चरेत्

दशमशक, उपलक्षणत्वात्-मत्कुणसुलसुलादिकं च प्राप्य एतैर्दष्टे सति अव्यग्रमनाः= स्थिरचित्तो भवेत्, तथा दशमशकादिरहित स्थानलाभेऽपि असम्प्रहृष्टो भवेत्,= हृष्टचित्तो न भवेत्। एतादृशः समसुखदुःख. सन् यः कृत्स्न=सकल प्राप्त सुख-दुःखम् अध्यासीत=अधिसहेत, स भिक्षुरुच्यते। अनेन मुनिभिः प्रान्तशयनासन-शीतोष्णदशमशकादिपरीषहः सोढव्य इत्युक्तम् ॥४॥

विविध दशमशक च भक्त्वा) तथा शीत उष्णकी वेदना को एव विविध प्रकार के दशमशक मत्कुण सुल सुल आदि जीवों द्वारा उत्पन्न हुई वेदना को सहन करके (अव्वग्गमणे-अव्यग्रमना.) सदा स्थिर चित्त बना रहता है और (असपहिट्ठे-असम्प्रहृष्टाः) दशमश-कादि रहित स्थान के लाभ में हर्षित चित्त नहीं होता है। इस प्रकार दुःख और सुख में समचित्त रहते हुए (कसिण अहियासए स भिक्खू-कृत्स्नम् अध्यासीत स भिक्षुः) जो प्राप्त हुए सब सुखदुःख को शातिभाव से सहन करता है वही भिक्षु है।

भावार्थ—प्रान्तशयन आसन आदि को उपयोग में लाते समय 'ये ठीक नहीं हैं नवीन होना चाहिये' तथा "यह आहार आदि भोजन सामग्री सरस नहीं है नीरस है-सरस होती तो अच्छा होता-यह शीत उष्ण वेदना नहीं सही जाती पर क्या करे? सहनी पडती है, कोई इसके लिये गति ही नहीं है" इत्यादि विचारों से रहित जिसकी दृष्टि है ऐसा साधुजन ही भिक्षु हैं। पदार्थों में विषम दृष्टिवाला मुनि-जन भिक्षु नहीं है ॥४॥

વેદનાને અને વિવિધ પ્રકારના ડાસ, મચ્છર, માકડ, સુલસુલ આદિ જીવો દ્વારા ઉત્પન્ન થતી વેદનાને સહન કરીને अव्वग्गमणे-अव्यग्रमनाः સ્થિર ચિત્ત બની રહે છે તથા असपहिट्ठे-असम्प्रहृष्ट. ડાસ, મચ્છર આદિથી રહિત સ્થાનના લાભથી પ્રસન્ન ચિત્ત થતા નથી આ પ્રમાણે દુખ અને સુખમા સમચિત્ત રહીને कसिण अहियासए स भिक्खू-कृत्स्नम् अध्यासीत सः भिक्षु પ્રાપ્ત થતા સુખ અને દુખને શાંતિથી સહન કરે છે તેજ ભિક્ષુ છે

ભાવાર્થ—પ્રાન્ત શયન આસન આદિને ઉપયોગમા લેતી વખતે "આ ઠીક નથી, નવુ હોવુ જોઈએ" તથા "આ આહાર આદિ ભોજન સામગ્રી નિરસ છે, સરસ હોત તો સારૂ થાત, આ ઠડીની અને ઉષ્ણુતાની વેદના સહન થતી નથી પરંતુ શુ કરીએ, સહેવી પડે છે આને માટે બીજો કોઈ ઉપાય નથી" ઇત્યાદિ વિચારોથી રહિત જેમની દૃષ્ટિ છે એવા સાધુજન જ ભિક્ષુ છે પદાર્થોમા વિષમ દૃષ્ટિવાળા મુનિજન ભિક્ષુ નથી ॥૪॥

किं च--

मूलम्-पंतं सयणासणं भइत्ता, सीउण्हं विविहं च दसमसगं ।
अव्वग्गमणे असंपहिट्ठे, जे कसिणं अहियासए स भिक्खू ॥४॥

छाया--प्रान्तं शयनासनं भक्त्वा, शीतोष्णं विविधं च दशमशकम् ।
अव्यग्रमना असंप्रहृष्टो, यः कृत्स्नमध्यासीत स भिक्षुः ॥४॥

टीका--'पंतं' इत्यादि ।

मुनिः प्रान्तम्=असारं शयनासनं=शयनं च आसनं चेति शयनासनम्, तत्र-शयनं=संस्तारकादिकम्, आसनं=पीठफलकादिकं च, उपलक्षणत्वात्-आहारवस्त्रादिकं भक्त्वा=सेवित्वा, तथा-शीतोष्णं च सेवित्वा, तथा-विविधं=नानाप्रकारं

तथा सत्कार सम्मान के पाने पर भी जिनके चित्त मे जरासा भी हर्ष का भाव जागृत नहीं होता है-क्यों कि द्वेष जिस प्रकार उनको परिहार्य कहा गया है उसी प्रकार हर्षभाव भी परिहार्य कहा है, क्यों कि हर्षभाव मे रागपरिणति रहती है। तथा अनुकूल एवं प्रतिकूल संयोग को मुनिजन सहन करते है। यही बात "कृत्स्नमध्यासीत" इस पद द्वारा सूत्रकारने प्रदर्शित की है। इस प्रकार की परिस्थिति संपन्नमुनि भिक्षु कहलाता है ॥३॥

'पंतं सयणासणं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो मुनि (पंतं सयणासणं भइत्ता-प्रान्तम् शयनासनम् भक्त्वा) असार शयन—संस्तार आदि, आसन—पीठफलकादिक को उपयोग मे लाकर के, *तथा उपलक्षण से असार आहार तथा वस्त्रादिक का* सेवन करके (सीउण्हं विविहं दंसमसगं च भइत्ता-शीतोष्ण

દ્વેષ જે રીતે એમને પરિહાર્ય કહેવામા આવેલ છે એ પ્રમાણે હર્ષભાવ પણ પરિહાર્ય કહેવાયેલ છે કેમકે, હર્ષભાવ રાગ પરિણતિ રહે છે તથા અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ સંયોગને મુનિજન સહન કરતા રહે છે એજ વાત "कृत्स्नमध्यासीत" આ પદ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રદર્શિત કરેલ છે આ પ્રકારની પરિસ્થીતિથી સંપન્ન મુનિ ભિક્ષુ કહેવાય છે ॥ ૩ ॥

"पंतं सयणासणं" ઈત્યાદિ ।

"पंतं सयणासणं" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—જે મુનિ पंतं सयणासणं-भइत्ता-प्रान्तम् शयनासनम् भक्त्वा અસાર શયન—સંસ્તાર આદિ, આસન—પીઠ ફલકાદિકને ઉપયોગમા લઈને તથા ઉપલક્ષણથી અસાર આહાર તથા વસ્ત્રાદિકનુ સેવન કરીને તેમ જ सीउण्हं विविहं दंसमसगं च भइत्ता-शीतोष्णं विविधं दंशमशकं च भक्त्वा ઠંડી અને ઉષ્ણતાની

शुद्धात्मस्वरूपान्वेषको यो मुनि. स सयतः=सम्यग्यतनावान, सुव्रतः=पञ्चमहाव्रतधारी, तपस्वी=प्रशस्ततपः परायणो भवति। स एव मुनिर्भिक्षुरुच्यते। अनेन मुनिभि सत्कारपुरस्कारपरीपहः सोढव्य इत्युक्तम् ॥५॥

अपनयन से शुद्ध आत्मा के स्वरूप का गवेषक होता है (सजए-सयत') सम्यक् यतना सपन्न होता है (सुव्वए-सुव्रत') पचमहाव्रतधारी होता है। (तवस्सी-तपस्वी) प्रशस्त तपकी आराधना में परायण रहता है। (स भिक्खू -स भिक्षु') वही भिक्षु कहलाता है। इस से सूत्रकारने यह प्रदर्शित किया है कि मुनि को सत्कार पुरस्कार परीपह सहन करना चाहिए।

भावार्थ—अपनी प्रतिष्ठा मे जिसको राग नही है और अप्रतिष्ठा मे जिसको द्वेष नहीं है–प्रशसा में जिसको हर्ष नहीं और निंदा मे जिसको अमर्ष नही, वदना में जिसको मोद नही और तिरस्कार मे जिसको क्षोभ नहीं, पट्काय के जीवो की रक्षा करने रूप परमकरुणा जिसके अन्त.करण में सदा वसी रहती है–द्वितीयादि मुनियों सहित जो विचरता है और अकेला नहीं विचरता, शुद्ध आत्मा के स्वरूप की गवेपणा में जो मग्न बना रहता है, पच महाव्रतों की आराधना में जो कभी भी दोप नहीं आने देता, अनशन आदि तपों के आचरिन करने मे जिसको अधिक उल्लास होता है वही भिक्षु है ॥५॥

અપનયનથી શુદ્ધ આત્માના સ્વરૂપના ગવેષક હોય છે सजए–सयत' સમ્યક્ યતના સપન્ન હોય છે, सुव्वए–सुव्रतः પાચ મહાવ્રતધારી હોય છે, तवस्सी–तपस्वी પ્રશસ્તતપની આરાધનામા પરાયણ રહે છે स भिक्खू–स भिक्षुः તેજ ભિક્ષુ કહેવાય છે આથી સૂત્રકારે એ પ્રદર્શિત કરેલ છે કે, મુનિએ સત્કાર પુરસ્કારપરીષહ સહન કરવા જોઇએ

ભાવાર્થ—પોતાની પ્રતિષ્ઠામા જેને રાગ નથી તેમ અપ્રતિષ્ઠામા જેને દ્વેષ નથી, પ્રશસાથી જેને હર્ષ નથી અને નિદાથી જેને અમર્ષ–દુ ખ નથી, વદનામા જેને મોહ નથી અને તિરસ્કારમા જેને ક્ષોભ નથી ષટ્કાયના જીવોની રક્ષા કરનારા પરમ કરૂણા જેના અ ત કરણમા સદાએ વસેલી રહે છે અન્ય મુનિઓની સાથે જે વિચરે છે અને એકલા નથી વિચરતા શુદ્ધ આત્માના સ્વરૂપની ગવેષણામા જે મગ્ન બનીને જ રહે છે પાચ મહાવ્રતોની આરાધનામા જે કદી પણ દોષ આવવા દેતા નથી, અનશન આદિ તપોનુ આચરણ કરવામા જેમને અધિક ઉલ્લાસ થાય છે તેજ ભિક્ષુ છે ॥ ૫ ॥

तथा च—

मूलम्—नो सक्कियमिच्छई न पूयं, णो वि य वंदणगं कुओ पसंसं।
से संजए सुव्वए तवस्सी, सहिए आयगवेसए स भिक्खू ॥५॥

छाया—न सत्कृतमिच्छति न पूजां, नापि च वन्दनकं कुतः प्रशंसाम्?।
स संयतः सुव्रतस्तपस्वी, सहित आत्मगवेषकः स भिक्षुः ॥५॥

टीका—'नो सक्किय' इत्यादि।

यो मुनिः सत्कृतं=सत्कारम्–अभ्युत्थानादिरूपं न इच्छति=नाभिलषति, पूजां=वस्त्रपात्रादिप्राप्तिरूपां नापि च वन्दनकं=वन्दनं वाञ्छति। यो मुनिरेतादृशोऽस्ति, स प्रशंसां=स्वगुणोत्कीर्तनरूपां कुतः=कस्मात्कारणादिच्छेत्–न कदाचिदपीच्छेदिति भावः। पूर्वोक्तरूपः सहितः=द्वितीयादिमुनिसहितः, यद्वा–सहितः=हितेन सह, सहितः–षट्कायरक्षापरायणः, आत्मगवेषकः=कर्मरजोऽपनयनात्

'नो सक्किय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो मुनि (सक्किय–सत्कृतम्) सत्कारको–अभ्युत्थानादिकरूप विशेष प्रतिपत्ति को (न इच्छई–न इच्छति) नहीं चाहता है (न पूयं–न पूजाम्) न पूजा को–वस्त्रपात्र आदि की प्राप्तिरूप प्रतिष्ठा को चाहता है (णो वि वंदणगं–नापि वंदनकम्) और न "लोग मुझे वंदना करे" इस प्रकार अपने विशेष सत्कार को ही चाहता है वह (पसंसं कुओ–प्रशंसाम् कुतः) अपने गुणोत्कीर्तनरूप प्रशंसा का अभिलाषी कैसे हो सकता है। नहीं हो सकता। ऐसा (से–सः) वह साधु सदा (सहिए–सहितः) द्वितीयादि मुनियों के ही साथ रहता है अथवा वह (सहिए–स–हितः) हित सहित अर्थात् षट्काय के जीवों की रक्षारूप हित करने मे परायण रहता है (आयगवेसए–आत्मगवेषकः) कर्मरज के

"नो सक्किय" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—જે મુનિ सक्कियम्–सत्कृतम् સત્કારને–અભ્યુત્થાનાદિકરૂપ વિશેષ પ્રતિપત્તિને न इच्छइ–न इच्छति ચાહતા નથી, न पूयम्–न पूजाम् ન પૂજાને ચાહે છે, ન વસ્ત્રપાત્ર આદિની પ્રાપ્તિ રૂપ પ્રતિષ્ઠાને ચાહે છે णो वि वंदणग–नापि वंदनकम् તેમ ન તો લોકો મને વંદના કરે" આ પ્રમાણે પોતાના વિશેષ સત્કારને ચાહે છે તે पसंसं कुओ–प्रसंशाम् कुतः પોતાના ગુણગાનની પ્રશંસાના અભિલાષી તો કઈ રીતે બની શકે? નથી બનતા એવા से–सः તે સાધુ સદા सहिए–सहित બીજા મુનિઓની સાથે જ રહે છે, અથવા તે ષટ્કાયના જીવોની રક્ષા રૂપ હિત કરવામાં પરાયણ રહે છે आयगवेसए–आत्मगवेषकः કર્મરજના

च द्वयमपि त्यजति एव साध्वी अपि नर नारी च त्यजति द्वयमपि त्यजति च=पुनः कौतूहलम्=अभुक्ते विषये औत्सुक्यम्, उपलक्षणत्वाद् भुक्ते स्मृतिं च न उपैति=न प्राप्नोति, स भिक्षुरुच्यते ॥६॥

इत्थं सिंहविहारेण परीषहसहनपूर्वकं भिक्षुत्वं समर्थ्य सम्प्रति पिण्डविशुद्धि द्वारेण भिक्षुत्वं समर्थयति—

मूलम्-छिन्नं सरं भोमं अंतलिक्खं, सुमिणं लक्खणं दंडवत्थुविज्जं ।
अगवियारं सरस्सविजयं, जे विज्जाहिं ण जीवइ स भिक्खू ॥७॥

छाया—छिन्नं स्वरं भौममान्तरिक्षं, स्वप्नं लक्षणं दण्डवास्तुविद्यम् ।
अङ्गविकारं स्वरस्य विजयः, यो विद्याभिर्न जीवति स भिक्षुः ॥७॥

टीका—'छिन्न' इत्यादि ।

वस्त्रादीनां छेदनम्, तद्विषयकं शुभाशुभनिरूपकं सूत्रमपि छिन्नम् । छेदन

अथवा साध्वी, स्त्री और पुरुष दोनों का परिचय छोड देती है इसी तरह साधु भी स्त्री और पुरुष दोनों का परिचय छोड देता है। तथा अभुक्त विषय में (कोउहल-कौतूहलम्) औत्सुक्यभाव का एव उपलक्षण से भुक्त में स्मृतिरूप भाव का भी (न उवेइ-न उपैति) परित्याग कर देता है। (स भिक्खू-स भिक्षुः) यह भिक्षु है ॥६॥

इस प्रकार सिंहवृत्तिपूर्वक विहार मे परीषह जय करने से मुनि मे भिक्षुता का समर्थन करके अब सूत्रकार पिण्ड विशुद्धि द्वारा भिक्षुता का समर्थन करते हैं।

'छिन्न' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(छिन्न-छिन्नम्) वस्त्रादिकों के छेदन से शुभाशुभ के निरूपक सूत्र का नाम छिन्नसूत्र है। इसका ज्ञाता व्यक्ति वस्त्रादिकों को

છોડી દે છે, અથવા સાધ્વી સ્ત્રી અને પુરુષ બન્નેનો પરિચય છોડી દે છે એ રીતે સાધુ પણ સ્ત્રી તથા પુરુષ બન્નેનો પરિચય છોડી દે છે, તથા અભુક્ત વિષયમા कोउहल-कौतूहलम् ઉત્સુકતાના ભાવનો અને ઉપલક્ષણથી ભુક્તમા સ્મૃતિરૂપ ભાવનો પણ नउवेइ-नउपैति પરિત્યાગ કરી દે છે તે स भिक्खू-स भिक्षुः મુનિજ સાચા ભિક્ષુ છે ॥૬॥

આ પ્રમાણે સિંહવૃત્તિપૂર્વક વિહારમા પરીષહ જય કરવાથી મુનિ ભિક્ષુતાનુ સમર્થન કરીને હવે સૂત્રકાર પિંડવિશુદ્ધિદ્વારા ભિક્ષુતાનુ સમર્થન કરે છે—

"छिन्न" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—छिन्न-छिन्नम् વસ્ત્રાદિકોના છેદનથી શુભાશુભના નિરૂપક સૂત્રનુ નામ છિન્ન સૂત્ર છે એને જાણનાર વ્યક્તિ વસ્ત્રાદિકોને છિન્ન જોઇને અથવા તો

सम्प्रति स्त्रीपरीषहसहनमाह—

मूलम्-जेणं पुणं जहाइ जीवियं, मोहं वा कसिणं णियच्छइ ।
नरनारि पजहे सया तवस्सी, ण य कोऊहलं उवेइ स भिक्खू ॥६॥

छाया—येन पुनर्जहाति जीवितं, मोहं वा कृत्स्नं नियच्छति।
नरनारिं प्रजहाति सदा तपस्वी, न च कौतूहलमुपैति स भिक्षुः ॥६॥

टीका—'जेण' इत्यादि।

येन हेतुभूतेन पुनर्मुनिर्जीवितं=संयमजीवितं जहाति=परित्यजति। पुनः शब्दोऽस्य सर्वथा संयमघातित्वं सूचयति। वा=अथवा येन कृत्स्नं=सकलं, मोहं=कषाय नो कषायरूपं मोहनीयं कर्म नियच्छति=बध्नाति। तपस्वी=तपःपरायणो मुनिरेवंविधं नरनारिं=नरश्च नारीचेति समाहारः नरं नारीं च सदा प्रजहाति=परित्यजति। अयं भावः—स्त्री साध्वी चेत् ब्रह्मचर्यरक्षणार्थं त्यजति मुनिं पुरुषश्चेत् स्त्रैणां स्त्रियं त्यजति अथवा मुनिं स्व ब्रह्मचर्यपरिपालनार्थं नरनारीं

'जेण पुण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जेण-येन) जिसके प्रसंग में आने से मुनि (जीविय-जीवितम्) अपने संयमरूपी जीवन को बिलकुल ही (जहाइ-जहाति) छोड देता है अथवा (कसिणं मोहं नियच्छइ-कृत्स्नं मोहं नियच्छति) समस्त कषाय एवं नो कषायरूप मोहनीय कर्म का बंध करता है। इस प्रकार के (नरनारिं-नरनारि) नर और नारियों का परिचय (तवस्सी-तपस्वी) तप में परायण मुनि (पजहे-प्रजहाति) छोड देता है, तात्पर्य यह कि-अगर स्त्री अर्थात् साध्वी हो तो अपने ब्रह्मचर्य की रक्षाके लिये नर-पुरुषों के परिचय को त्याग देती है, और अगर नर-मुनि हो तो नारी-अर्थात् स्त्रीके परिचय को छोड देता है।

"जेण पुण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जेण-येन જેના પ્રસંગમાં આવવાથી મુનિ जीविय-जीवितम् પોતાના સંયમરૂપી જીવનને બીલકુલ जहाइ-जहाति છોડી દે છે અથવા कसिणं मोहं णियच्छइ-कृत्स्नं मोहं नियच्छति સમસ્ત કષાય અને નોકષાયરૂપ મોહનીય કર્મનો બંધ કરે છે આ પ્રકારનો नरनारीं-नरनारी નર અને નારીઓનો પરિચય तवस्सी-तपस्वी તપમાં પરાયણ મુનિ पजहे-प्रजहाति છોડી દે છે તાત્પર્ય એ છે કે-જો સ્ત્રી સાધ્વી હોય તો પોતાના બ્રહ્મચર્યની રક્ષા માટે 'नर' નામ પુરુષોના પરિચયને છોડી દે છે અગર 'नर' મુની હોય તો નારી અર્થાત્ સ્ત્રીના પરિચયને

छाया—देवेषु उत्तमो लाभो, मानुषेषु च मध्यमः ।
आसुरेषु च ग्लान्य, मरणं जानीहि राक्षसे ॥३॥ इति ।

वस्त्र में यदि अञ्जन=काजल लग जाय, खजन=गाडीके पहिये के भीतर का काला कीट लग जाय, या कर्दम अर्थात् कादव लग जाय, अथवा वस्त्र को यदि चूहा काट डाले, या वह आग से जल जाय, अथवा-वह तूर्णित अर्थात रफू किया हुआ-तुन्ना हुआ हो, कुट्टित अर्थात् छिद्र युक्त हो, अथवा गौ आदि पशुओं द्वारा चवाया गया हो, तो उसका शुभ और अशुभ फल होता है ॥१॥

वस्त्र के किस भाग मे किसका निवास है और किस भाग मे अजन आदि के लगने से या चूहा आदि के द्वारा छिद्र आदि होने से क्या फल होता है सो कहते ह—

वस्त्र में नौ भागों की कल्पना करनी चाहिये, उनमे चार भाग देवों के होते हं, दो भाग मनुष्यों के, दो भाग असुरों के होते हं, और वस्त्र का विचला भाग राक्षसो का होता है ॥२॥

देव के भागो मे कज्जल आदि का चिह्न होने से उत्तम लाभ होता है, मनुष्यों के भागों मे मध्यम लाभ होता है, असुरों के भागो मे ग्लानि होती है और राक्षसों के भाग मे मरण होता है ॥३॥

વસ્ત્રમા કદાચ આજણુ-કાજળ લાગી જાય, ખજન ગાડાના પૈડાની મળી લાગી જાય, યા કર્દમ અર્થાત્ કાદવ લાગી જાય, અથવા વસ્ત્રને કદાચ ઉદર કાપી નાખે, અથવા તો આગથી બળી જાય, અથવા-તે તૂર્ણિત અર્થાત રફુ કરવામા આવે-તુણવામા આવે, કુટ્ટિત અર્થાત છિદ્રવાળા હોય, અથવા ગાય આદિ પશુઓથી ચવાયેલા હોય, તો એના શુભ અને અશુભ ફળ થાય છે ॥ ૧ ॥

વસ્ત્રના કયા ભાગમા કોનો નિવાસ છે અને કયા ભાગમા આજણુ આદિ લાગવાથી કે, ઉદર આદિ દ્વારા છિદ્ર વગેરે થવાથી શુ ફળ થાય છે તે કહે છે—

વસ્ત્રમા નવ ભાગની કલ્પના કરવી જોઇએ તેમા ચાર ભાગ દેવોના હોય છે, બે ભાગ મનુષ્યોના, બે ભાગ અસુરોના હોય છે અને વસ્ત્રનો વચલો ભાગ રાક્ષસોનો હોય છે ॥ ૨ ॥

દેવોના ભાગોમા ઉત્તમ લાભ થાય છે મનુષ્યોના ભાગોમા મધ્યમ લાભ થાય છે, અસુરોના ભાગોમા ગ્લાની થાય છે, અને રાક્ષસોના ભાગમા મરણથાય છે ॥૩॥

हि-मूषकादिकृतम्, अग्निना दग्ध कण्टकादि जनित च। इदमुपलक्षण कज्जल कर्दमाद्युपलेपस्यापि।

उक्त च—'अजण-खजण-कद्दमलित्ते, मूसगभक्खिय अग्गिविदड्ढे।
तुन्निय-कुट्टिय-पज्जवलीढे, होइ विवागु सुहो असुहो वा ॥१॥

छाया—अञ्जन-खञ्जन-कर्दमलिप्ते, मूषकभक्षितेऽग्निविदग्धे।
तूर्णित-कुट्टित-पर्यवलीढे भवति विपाकः शुभाऽशुभो वा ॥१॥

वस्त्रस्य नव भागाः प्रकल्पनीया। तत्र दैविकादिभागव्यवस्थामाह—
"चत्तारि देवयाभागा, दो य भागा य माणुसा।
आसुरा य दुवे भागा, मज्झे वत्थस्स रक्खसो ॥२॥

छाया—चत्वारो देवताभागा', द्वौ च भागौ च मानुषौ।
आसुरौ च द्वौ भागौ, मध्ये वस्त्रस्य राक्षस• ॥२॥

फलमाह—'देवेसु उत्तमो लाहो, माणुस्सेसु य मज्झिमो।
आसुरेसु य गेलन्न, मरण जाण रक्खसे ॥३॥

छिन्न देखकर या चूहों द्वारा उन्हें काटा गया देखकर अथवा अग्नि आदि द्वारा दग्ध देखकर शुभ और अशुभ का निरूपण करता है। 'छिन्न' यह उपलक्षण है, इस से कज्जल कर्दम आदि द्वारा उपलिप्त वस्त्रादिक को देखकर भी शुभाशुभ का निरूपण करता है। कहा भी है—

"अजण-खजण-कद्दमलित्ते, मूसगभक्खिय अग्गिविदड्ढे।
तुन्निय-कुट्टिय-पज्जवलीढे, होइ विवागु सुहो असुहो वा ॥१॥
चत्तारी देवयाभागा, दो य भागा य माणुसा।
आसुरा य दुवे भागा मज्झे वत्थस्स रक्खसो ॥२॥
देवेसु उत्तमो लाहो माणुस्सेसु य मज्झिमो।
आसुरेसु य गेलन्न मरण जाण रक्खसे ॥३॥

ઉદરથી કાપવામા આવેલ જોઈને તેમજ અગ્નિ આદિ દ્વારા દગ્ધ થયેલ જોઈને શુભ અને અશુભનુ નિરૂપણુ કરે છે

"છિન્ન" આ ઉપલક્ષણુ છે આથી કજ્જલ કર્દમ આદિ દ્વારા ઉપલિપ્ત વસ્ત્રાદિકને જોઈને પણુ શુભાશુભનુ નિરૂપણુ કરે છે કહ્યુ પણુ છે—

"अजण-खजण-कद्दमलित्ते, मूसगभक्खिय अग्नि विदड्ढे।
तुन्निय=कुट्टिय-पज्जवलीढे, होइ विवागु सुहो असुहो वा ॥ १ ॥
चत्तारि देवयाभागा, दोय भागाय माणुसा।
आसुरा य दुवे भागा, मज्झे वत्थस्स रक्खसो ॥ २ ॥
देवेसु उत्तमो लाहो, माणुस्सेसु य मज्झिमो।
आसुरे सु य गेलन्न मरण जाण रक्खसे ॥ ३ ॥

कज्जल-कर्दम-गोमयलिप्ते, वाससि दग्धवति स्फटिते वा।
चिन्त्यमिदं नवधा विहितेऽस्मिन्निष्टमनिष्टफलं च सुधीभिः ॥२॥
भोगप्राप्तिर्देवतांशे नरांशे, पुत्रप्राप्तौ राक्षसांशे च मृत्युः।
प्रान्ते सर्वांशेऽप्यनिष्टं फलं स्यात्, प्रोक्तं वस्त्रे नूतने साध्वसाधु ॥३॥ इति

कज्जल-कर्दम गोमयलिप्ते वाससि दग्धवति स्फटिते वा।
चिन्त्यमिदं नवधा विहितेऽस्मिन् इष्टमनिष्टफलं च सुधीभिः ॥२॥
भोगप्राप्तिर्देवतांशे नरांशे, पुत्रप्राप्तिः स्याद्राक्षसांशे च मृत्युः।
प्रान्ते सर्वांशेऽप्यनिष्टं फलं स्यात्, प्रोक्तं वस्त्रे नूतने साध्वसाधु ॥३॥

इस विषय में रत्नमाला में इस प्रकार कहा है—

वस्त्र के कोने मे देवों का निवास है, दोनों तरफ के दोनों कोने के बीच में मनुष्य का निवास है, बीच के तीनों भागों में राक्षसों का निवास है। इसी प्रकार शय्या, आसन और पादुका के विषय में भी समझना चाहिये ॥१॥

यदि वस्त्र में काजल लग जाय, या कादव लग जाय, अथवा गोवर लग जाय, अथवा वस्त्र यदि जल जाय या फट जाय, तो नव कोष्ठक यंत्र मे इसका शुभ और अशुभ फल समझना चाहिये ॥२॥

देवता के अंशो मे कज्जल आदि के लगने से भोगप्राप्ति होती है, मनुष्यो के अंशो मे पुत्रप्राप्ति होती है, राक्षस के अंशो में मृत्यु होती है, तथा वस्त्र के प्रान्त भाग में सर्वत्र अनिष्ट फल होता है।

कज्जल-कर्दम गोमय लिप्ते वाससि दग्धवति स्फटिते वा।
चिन्त्यमिदं नवधा विहितेऽस्मिन् इष्टमनिष्टफलं च सुधीभिः ॥ २ ॥
भोगप्राप्तिर्देवतांशे नरांशे, पुत्रप्राप्तिः स्याद्राक्षसांशे च मृत्युः
प्रान्ते सर्वांशेऽप्यनिष्टं फलं स्यात्, प्रोक्तं वस्त्रे नूतने साध्वसाधु ॥ ३ ॥

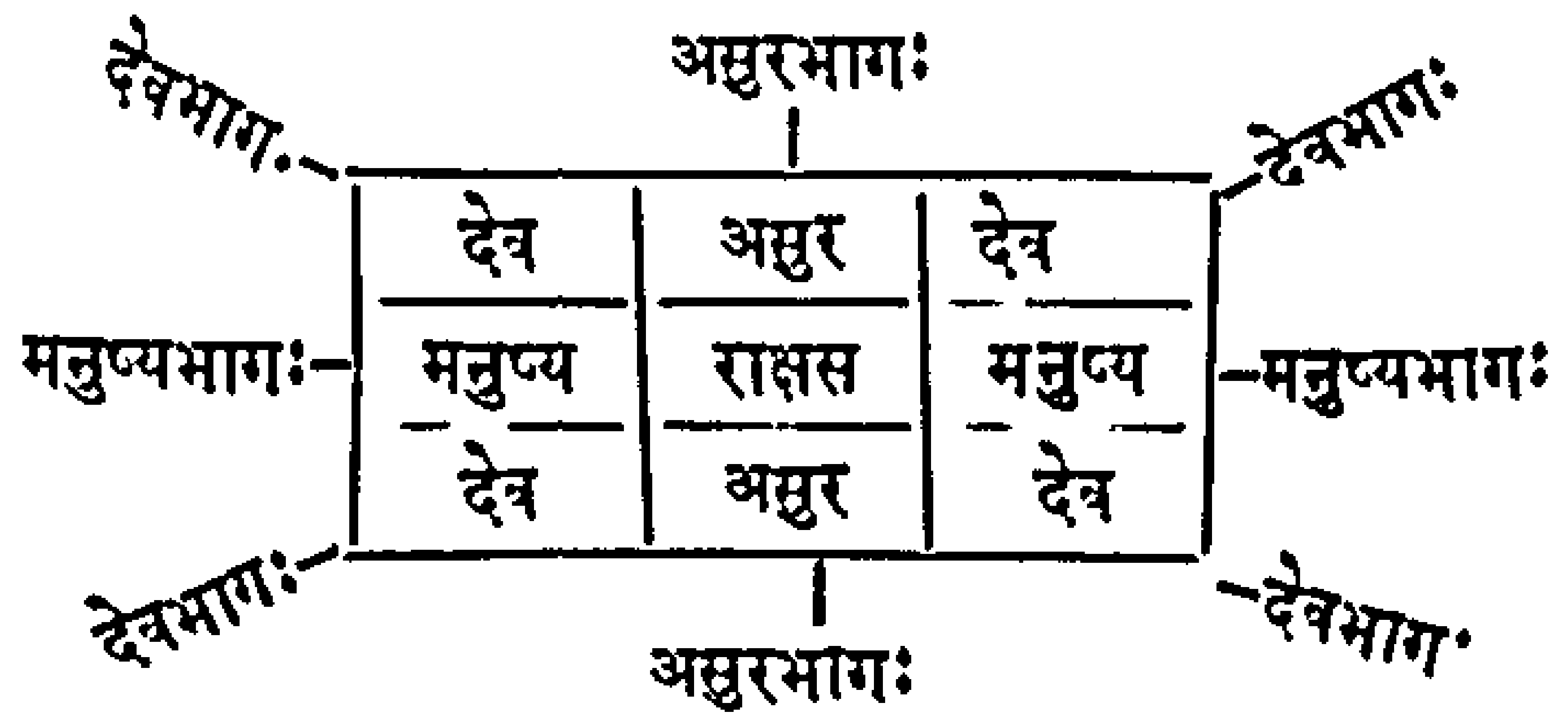
આ વિષયમા રત્નમાળામા આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

વસ્ત્રના ખૂણામા દેવોનો નિવાસ છે, બન્ને તરફના બન્ને ખૂણાની વચમા મનુષ્યોનો નિવાસ છે, વચ્ચેના ત્રણે ભાગોમા રાક્ષસોનો નિવાસ છે આજ પ્રમાણે શય્યા, આસન અને પાદુકાના વિષયમા પણ સમજવું જોઈએ ॥ ૧ ॥

કદાચ વસ્ત્રમા આજણ લાગી જાય, અથવા કાદવ લાગી જાય, અથવા છાણ લાગી જાય, અથવા વસ્ત્ર કદાચ બળી જાય કે, ફાટી જાય, તો નવ કોષ્ટક યંત્રમા એનુ શુભ અને અશુભ ફળ સમજી લેવુ જોઈએ ॥ ૨ ॥

દેવતાના અંશોમા આજણ આદિ લાગવાથી ભોગપ્રાપ્તિ થાય છે, મનુષ્યના અંશોમા પુત્રપ્રાપ્તિ થાય છે, રાક્ષસના અંશોમા મૃત્યુ થાય છે તથા વસ્ત્રના પ્રાન્ત

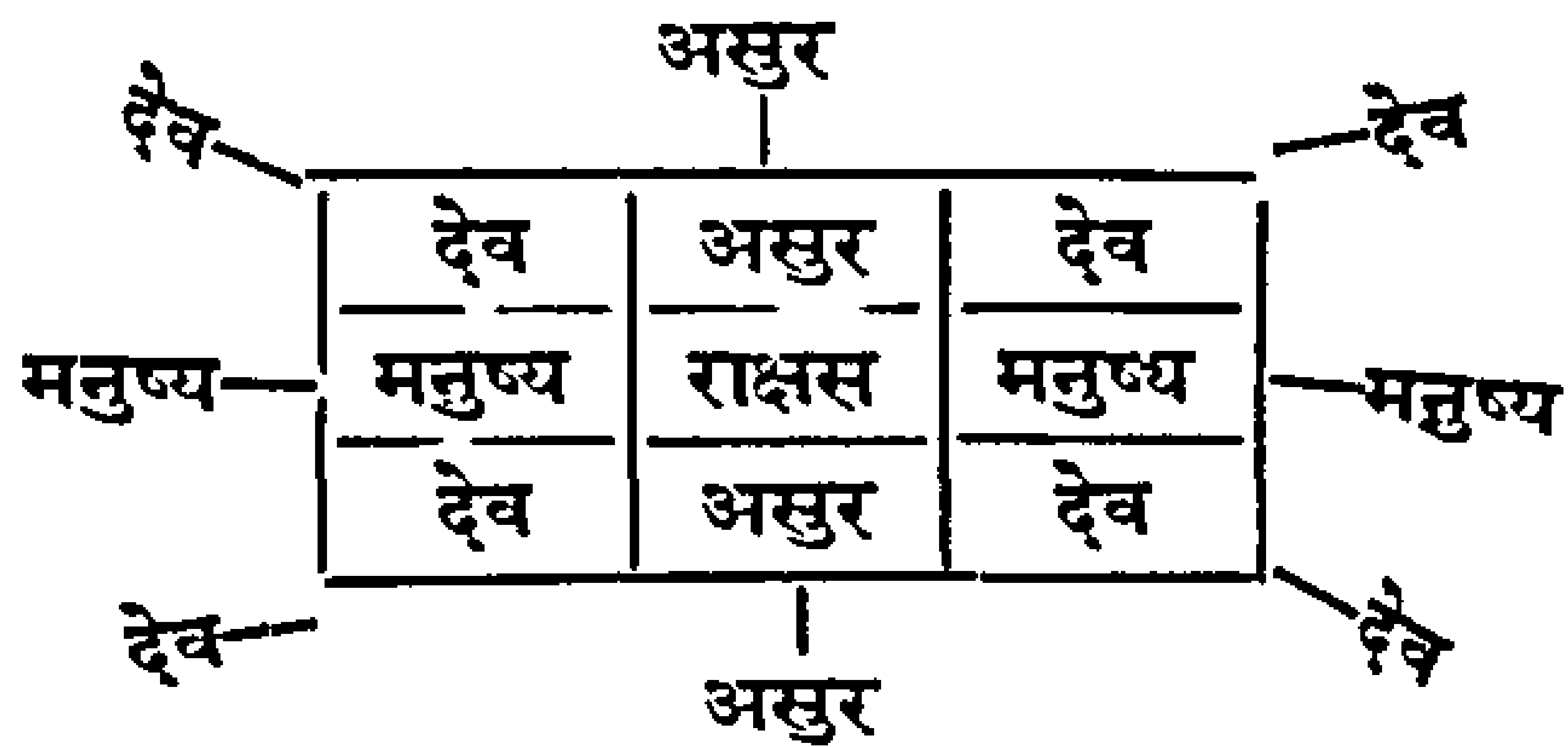
वस्त्रशुभाशुभ फलयन्त्रम्—



रत्नमालाया इवेवमुक्तम्—

"निवसन्त्यमरा हि वस्त्रकोणे, मनुजाः पार्श्वदशान्तमध्ययोश्च।
अपरेऽपि च रक्षसा त्रयोऽशा, शयने चासनपादुकासु चैवम् ॥१॥

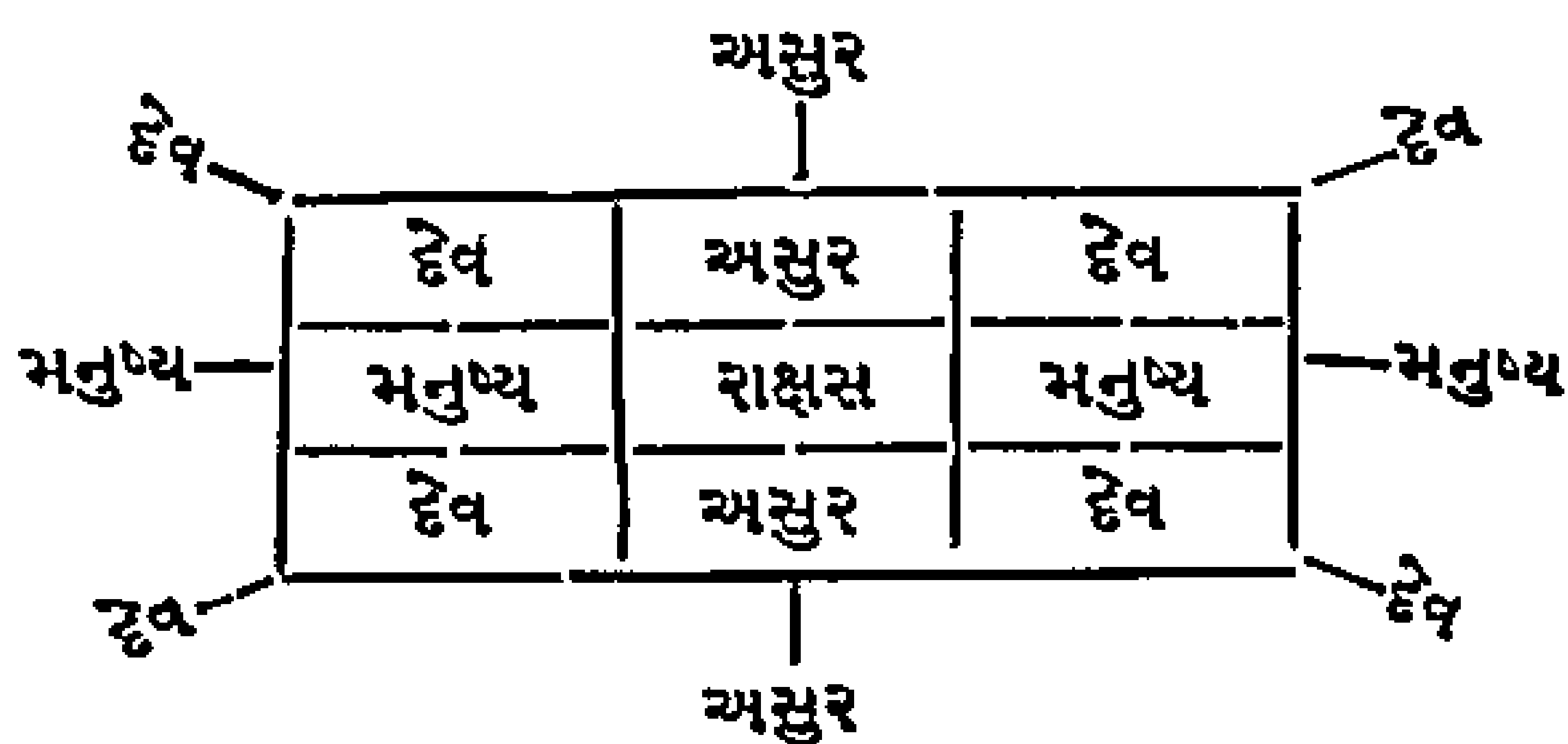
इसका शुभाशुभ सूचक यत्र इस प्रकार का है—



रत्नमाला में तो ऐसा कहा है—

"निवसन्त्यमरा हि वस्त्र कोणे मनुजाः पार्श्वदशान्तमध्ययोश्च।
अपरेऽपि च रक्षसा त्रयोऽशाः शयने चासनपादुकासु चैवम् ॥१॥

એનુ શુભાશુભ સૂચક યત્ર આ પ્રકારનુ છે—



રત્નમાળામા એવુ કહ્યું છે—

"निवसन्त्यमरा हि वस्त्रकाणे, मानुजाः पार्श्वदशान्तमध्ययोश्च।
अपरेऽपिच रक्षसा त्रयोऽशाः शयने चासनपादुकासु चैवम् ॥ १ ॥

"शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते ।
सेनापतिरमात्यश्च, राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥१॥ इत्यादि ।

तथा-अन्तरिक्षम्-अन्तरिक्षमाकाशम्, तत्र भवमान्तरिक्षं गन्धर्वनगरादिकम्, तस्य शुभाशुभप्रचकं शास्त्रमप्यान्तरिक्षम् ।

यथा--"कपिलं सस्यघाताय, माञ्जिष्ठं हरणं गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते, बलक्षोभं न संशयः ॥१॥
गन्धर्वनगरं स्निग्धं, समाकारं सतोरणम् ।
सौम्यां दिशं समाश्रित्य, राज्ञस्तद्विजयं करम् ॥२॥ इत्यादि ।

तथा-स्वप्नम्=स्वप्नशास्त्रम् । यथा—

कहते है। (सर-स्वरम्) दूसरा है स्वरशास्त्र तथा (भोम-भौमम्) तीसरा भौमशास्त्र है। भौमशास्त्र यह दिखलाता है कि भूमि के कंपन से शुभाशुभ कैसे जाना जाता है। कहा है—

"शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते ।
सेनापतिरमात्यश्च, राजा राष्ट्रं च पीड्यते" ॥१॥

अर्थात्—अगर भूमि बडे बडे शब्द के साथ कांपती हो तो सेनापति मंत्री राजा और राष्ट्र को पीडा होती है ॥१॥

चौथा है (अन्तलिक्ख-आन्तरिक्षम्) आकाशगत गन्धर्वनगर आदि को शुभाशुभ का प्रकट करना आन्तरिक्ष निमित्तज्ञान है,

जैसे—"कपिलं सस्यघाताय, माञ्जिष्ठं हरणं गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते, बलक्षोभं न संशयः ॥ १ ॥

બીજુ છે સ્વરશાસ્ત્ર તથા ત્રીજુ છે ભૌમશાસ્ત્ર, ભૌમશાસ્ત્ર એ બતાવે છે કે, ભૂમિના કંપવાથી શુભાશુભ કઈ રીતે જાણી શકાય છે કહ્યુ છે—

" शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते ।
सेनापतिरमात्यश्च, राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥ १ ॥ "

અર્થાત્—જો પૃથ્વી મોટા અવાજ સાથે કાંપતી હોય તો સેનાપતિ, મંત્રી રાજા અને રાષ્ટ્રને પીડા કારક છે

ચોથુ अतलिक्ख-अन्तरिक्षम् આકાશગત ગંધર્વનગર આદિને જોઈને શુભાશુભને પ્રગટ કરવુ તે આન્તરિક્ષ નિમિત્તજ્ઞાન છે

જેમ— " कपिलं सस्यघाताय, माजीष्ठं हरणं गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते, बलक्षोभं न संशयः ॥ १ ॥

एतन्मतानुसारेण वस्त्रशुभाशुभ फलयन्त्रम्--

राक्षसभाग

देवभागः— —देवभाग·

	देव	राक्षस	देव	
मनुष्यभाग·—	मनुष्यः	राक्षसः	मनुष्य	—मनुष्यभागः
	देवः	राक्षस	देव	

देवभाग— —देवभागः

राक्षसभागः

तथा–स्वर=स्वरशास्त्रम् । तथा–भौम=भूकम्पादिकम्, तस्य शुभाशुभप्रतिपादकं शास्त्रमपि भौमम् । यथा--

---

इस प्रकार नवीन वस्त्र मे कज्जल आदि के द्वारा शुभ अशुभ फल समझना चाहिये ॥३॥

इस मत के अनुसार वस्त्र के शुभाशुभ सूचकयन्त्र इस प्रकार है—

राक्षसभाग

देवभाग— —देवभाग

	देव	राक्षस	देव	
मनुष्यभाग—	मनुष्य	राक्षस	मनुष्य	—मनुष्यभाग
	देव	राक्षस	देव	

देवभाग— —देवभाग

राक्षसभाग

छिन्न सूत्र का ज्ञाता इन सब निमित्तों से शुभ और अशुभ का फल

ભાગમાં સર્વત્ર અનિષ્ટ ફળ થાય છે આ પ્રમાણે નવા વસ્ત્રમાં કાજળ આદિના દ્વારા શુભ અશુભ ફળ સમજવું જોઈએ ॥ ૩ ॥

આ મત મુજબ વસ્ત્રનું શુભાશુભ સૂચક યંત્ર આ પ્રમાણે છે

રાક્ષસ ભાગ

દેવ ભાગ— —દેવ ભાગ

	દેવ	રાક્ષસ	દેવ	
મનુષ્ય ભાગ—	મનુષ્ય	રાક્ષસ	મનુષ્ય	—મનુષ્ય ભાગ
	દેવ	રાક્ષસ	દેવ	

દેવ ભાગ— —દેવ ભાગ

રાક્ષસ ભાગ

છિન્ન સૂત્રને જાણનાર આ સઘળા નિમિત્તોથી શુભ અશુભને બતાવી શકે છે

इत्यादि। वास्तुविद्या=प्रासादादिनिर्माणे शुभाशुभकथनम्, अङ्गविकार=शिरःस्फुरणादि-शुभाशुभकथनम्। तथा-स्वरस्य विजयम्-स्वरस्य=पक्ष्यादिशब्दस्य विजयः=शुभाशुभकथनम्। एता विद्या सन्ति। य एताभिर्विद्याभिर्न जीवति=जीविका न करोति, स भिक्षुरुच्यते ॥७॥

तथा—

मूलम्-मंत मूल विविह विज्जचिंत, वमण-विरेयण-धूम-नेत्त-सिणाणं।
आउरे सरणं तिगिच्छियं चं, तं परिन्नाय परिव्वए स भिक्खू ॥८॥

छाया—मन्त्र मूल विविधा वैद्यचिन्ता, वमन-विरेचन-धूम-नेत्र-स्नानम्।
आतुरे स्मरण चिकित्सितं च, तत्परिज्ञाय परिव्रजेत् स भिक्षुः ॥८॥

छठवा निमित्तज्ञान है, लक्खण-लक्षण, गज, घोडा तथा स्त्री पुरुषो आदि को लक्षणों को देखकर उनका शुभाशुभ कथन करना। सातमा निमित्तज्ञान है (दण्डवत्थुविज्ज-दण्डवास्तुविद्याम्) दंड के एक पर्व अथवा दो पर्व देखकर उसके भले बुरे का कथन करना एवं प्रासाद आदि की रचना देखकर उसका शुभाशुभ का कथन करना (अंगवियार-अङ्गविकार) अंगो के फरकने आदि से शुभाशुभ का कहना (सरस्स विजय-स्वरस्य विजयः) पक्षी आदि के शब्दो द्वारा शुभाशुभ जानना ये सब निमित्तज्ञान हैं। इनका नाम निमित्तविद्या भी है (जे विज्जाहिं ण जीवई स भिक्खू-ये विद्याभिर्न जीवति स भिक्षुः) इन विद्याओ द्वारा जो मुनिजीविका नहीं करता है उसका नाम भिक्षु है। अर्थात् इन आठो अंग मे कहे हुवे निमित्तो को नहीं कहता वही साधु है ॥७॥

છઠું નિમિત્તજ્ઞાન છે लक्खण-लक्षण હાથી ઘોડા અને સ્ત્રી પુરુષો આદિના લક્ષણોને જોઈને એના શુભાશુભનુ કથન કરવુ સાતમુ નિમિત્તજ્ઞાન છે दंड वत्थु विज्ज-दंडवास्तुविद्याम् દંડ વાસ્તુ વિદ્યા-દંડના એક પર્વ અથવા બે પર્વ જોઈને તેના સારાબુરાનુ કથન કરવુ તેમ જ મહાન આદિની રચના જોઈને તેના શુભાશુભનુ કથન કરવુ अंगवियार-अङ्गविकारम् અંગોનુ ફરકવુ આદિથી શુભાશુભ કહેવુ सरस्स विजय-स्वरस्य विजय પક્ષી આદિના શબ્દોદ્વારા શુભાશુભ જાણવુ આ સઘળા નિમિત્તજ્ઞાન છે એનુ નામ નિમિત્તવિદ્યા પણ છે जे विज्जाहिं ण जीवई स भिक्खू-ये विद्याभिर्न जीवति स भिक्षुः આ વિદ્યાઓ દ્વારા જે મુનિ આજીવિકા ચલાવતા નથી એનુ નામ ભિક્ષુ છે અર્થાત્—આ આઠે અંગોમા કહેલ નિમિત્તોને કરતા નથી તેજ સાધુ છે ॥૭॥

"गायने रोदन विद्यान्नर्तने वधबन्धनम् ।
हसने शोचन ब्रूयात्पठने कलह तथा" ॥१॥ इत्यादि ।

तथा-लक्षण=स्त्रीपुरुषगजतुरगादीना लक्षणप्रतिपादक शास्त्रम् । दण्डवास्तुविद्यम्, तत्र-दण्डविद्या-दण्डस्य शुभाशुभकथनम्, 'एकपर्व पससति, दुपन्वा कलहकारिया'

गन्धर्वनगर स्निग्ध, समाकार सतोरणम्।
सौम्या दिश समाश्रित्य, राज्ञस्तद विजयकरम् ॥"

अर्थात्—अगर गन्धर्वनगर कपिल-ताम्रवर्ण का हो तो घासका नाश होता है। मजीठ-लाल वर्णवाला हो तो गायों का हरण होता है, और अव्यक्त-अस्पष्ट वर्णवाला हो तो सेनाका उपद्रव होता है, इसमे कोई सशय नही है ॥१॥

अगर गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में हो और वह स्निग्ध-चिकणा हो तो वह राजा के लिये विजयप्रद होता है ॥२॥

पाचवा निमित्तज्ञान है (सुविण-स्वप्नम्) स्वप्नशास्त्र—जैसे—

" गायने रोदन विद्यान्नर्तने वधबन्धनम् ।
हसने शोचन ब्रूयात्, पठने कलह तथा ॥१ "

अर्थात्—अगर स्वप्न मे गाना गावे तो उसका फल रुदन-रोना होता है, नृत्य करे-नाचे तो वध और बन्धन होता है, हसे तो चिन्ता होती है और पढे तो कलह होता है ॥१॥

गधर्वनगर स्निग्ध, समकार सतोरणम्
सोम्या दिश समाश्रित्य, राज्ञस्तद् विजय करम् ॥ "

અર્થાત્—જો ગન્ધર્વનગર કપિલ-તામ્ર વર્ણનુ હોય તો ઘાસનો નાશ થાય છે માજીઠ—લાલ વર્ણવાળુ હોય તો ગાયોનુ હરણ થાય છે અવ્યક્ત અસ્પષ્ટવર્ણ વાળુ હોય તો સેનામા ઉપદ્રવ થાય છે એમા કોઈ સશય નથી ॥ ૧ ॥

જો ગન્ધર્વનગર પૂર્વ દિશામા હોય અને તે સ્નિગ્ધ-ચીકણુ હોય તો રાજાને વિજય અપાવનાર હોય છે ॥ ૨ ॥

પાચમુ નિમિત્તજ્ઞાન છે सुविण—સ્વપ્ન શાસ્ત્ર—જેમ—

" गायने रोदन विद्यान्नर्तने वधबन्धनम् ।
हसने शोचन ब्रूयात् पठने कलह तथा ॥ १ ॥ "

અર્થાત્—જો સ્વપ્નમા ગાયન ગાય તો તેનુ ફળ રુદન રડાવનારૂ થાય છે નૃત્ય-નાચવુ થાય તો વધ અને બધન થાય છે હસે તો ચીતા કરાવનાર થાય છે અને ભણે તો કલહ કરાવનાર થાય છે ॥ ૧ ॥

सुदृव्यत्ययात्-आतुरस्य=रोगपीडितस्य सांसारिकस्वजनादेः स्मरणम्=हा मातः ! हा पितः ! मद्विना तव कीदृशी दशा भविष्यतीत्यादिरूपम्, तथा-चिकित्सितं= स्वपररोगप्रतीकारं च परिज्ञाय=ज्ञपरिज्ञयाऽनर्थमूलं परिज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परित्यज्य यः परिव्रजेत्=संयममार्गे विहरेत् स भिक्षुरुच्यते ॥८॥

तथा च—

मूलम्-खत्तिय-गणे-उग्ग-रायपुत्ता, माहण भोइय विविहा य सिप्पिणो।
नो तेसिं वयइ सिलोगपूयं, तं परिन्नाय परिव्वए स भिक्खू ॥९॥

छाया—क्षत्रियगणोग्रराजपुत्राः, ब्राह्मणा भोगिका विविधाश्च शिल्पिनः।
नो तेषां वदति श्लोकपूजं, तत्परिज्ञाय परिव्रजेत्स भिक्षुः ॥९॥

टीका—'खत्तिय' इत्यादि।

क्षत्रियगणोग्रराजपुत्राः-तत्र-क्षत्रियाः प्रसिद्धाः, गणाः मल्लादि समूहाः, उग्राः=उग्रवंशीयाः कोट्टपालादयो वा, राजपुत्राः=नृपसुताः, एषामितरेतरयोगस्ते, तथा-ब्राह्मणाः, भोगिकाः=विशिष्टनेपथ्यवन्तोराजमान्या अमात्यादयः, तथा-

अवस्था में संबंधियों के स्मरण करने की तथा (तिगिच्छियं-चिकित्सितम्) स्व और पर के रोग के प्रतिकार का (परिन्नाय-परिज्ञाय) ज्ञ परिज्ञा से उनको अनर्थ का मूल जानकर एवं प्रत्याख्यान परिज्ञा से परित्याग कर (जो परिव्वए-यः परिव्रजेत्) जो संयममार्ग में विचरता है (स भिक्खू-स भिक्षुः) वह भिक्षु है ॥ ८ ॥

तथा—'खत्तियगण०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(खत्तिय-गण-उग्ग-रायपुत्ता-क्षत्रियगणोग्रराजपुत्राः) क्षत्रियवंशोद्भव व्यक्तियों की, विशिष्ट शक्तिशाली पहिलवानों की, उग्र वंश में उत्पन्न हुए मनुष्यों की, एवं राजपुत्रों की (माहण-ब्राह्मणाः)

तिगिच्छियम् चिकित्सितम् પોતાના અને બીજાના રોગોને પ્રતિકાર परिन्नाय परिज्ञाय જ્ઞપરિજ્ઞાથી એ બધાને અનર્થનું મૂળ જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી પરિત્યાગ કરી जो परिव्वए-यः परिव्रजेत् જે સંયમ માર્ગમાં વિચરે છે, स भिक्खू-स भिक्षु તે ભિક્ષુ છે ॥૮॥

તથા—"खत्तियगण." ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—खत्तिय-गण-उग्ग-रायपुत्ता-क्षत्रिय-गणोग्रराजपुत्रा ક્ષત્રિય વંશમાં જન્મેલી વ્યક્તિઓની વિશિષ્ટ શક્તિશાળી પહેલવાનોની ઉગ્ર વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનુષ્યોની, અને રાજપુરુષોની તથા माहण-ब्राह्मणः બ્રાહ્મણ જનોની

टीका--'मत' इत्यादि ।

तत्=प्रसिद्ध मन्त्रम्=ओं ह्रों प्रभृतिक स्वाहापर्यन्तम्, मूलम्=राजहमी-शंखपुष्पी-शरपुङ्खादिकम्, तद्गुणसूचक शास्त्रमपि मूलमित्युच्यते, वनस्पति मूलिका कल्पशास्त्रमित्यर्थः, तत्, तथा-विविधाम्=अनेकप्रकारा वैद्यचिन्ताम्=पथ्यौषधात्मिका वैद्यजनोचिता चिन्ताम्, यथा—

"वर्जयेद् द्विदल शूली, क्षती मास, ज्वरी घृतम् ।
नवमन्नमतीसारी, नेत्ररोगी च मैथुनम्" ॥१॥ इत्यादि ।

तथा-वमन-विरेचन-धूम-नेत्र-स्नानम्=तत्र-वमनम्-वमनोपायः, अथवा-वमन-फलम्-"ज्वरादौ वमन श्रेष्ठ" मित्यादरूपम्, विरेचन=कोष्ठशुद्धिस्तदुपायो विरेचनम्, यद्वा-विरेचन-विरेचनफलम् तथा धूम=मन शिलासबन्धी भूतत्रासनोपाय, नेत्रम्-नेत्रसस्कारक समीराञ्जनादिक, स्नानम्=अपत्यार्थ मन्त्रौषधिजलैरभिषेचनम्, एषा समाहारस्तत्, तथा-आतुरे=रोगपीडिते सति स्मरणम्-हा मात ! हा पित ! अह साधुर्जातोऽस्मि, सम्प्रति को मम शरणम्, इत्यादिरूपम्, यद्वा-

---

तथा--' मत ' इत्यादि--

अन्वयार्थ-(मत-मन्त्रम्) मन्त्रोंका तथा (मूल-मूलम्) मूल-वनस्पति 'जडी बूटी' के गुणो के प्रतिपादक शास्त्र का (विविह विज्जचिंत-विविधा वैद्यचिन्ताम्) अनेक प्रकारके वैद्य सबधी विचारोका वमण-विरेयण-धूम-नेत्त-सिणाण वमन-विरेचन-धूम-नेत्र-स्नानम्) वमन-वमन के उपाय अथवा वमन के फल का=विरेचन=कोष्ठ शुद्धि के उपाय अथवा विरेचन के फल का धूम=भूत के डराने के लिये मन शिला आदि के धूम का तथा नेत्र=नेत्र रोग के लिये समीराञ्जनका एव स्नान=सन्तान के लिये मन्त्रौषधिजलसे अभिषेक का तथा (आउरे सरण-आतुरस्मरणम्) रोग

તથા—" मत " ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—मत-मत्रम् મત્રોનુ मूल-मूलम् મૂળ-વનસ્પતિ-'જડી બૂટી'ના ગુણોના પ્રતિપાદક શાસ્ત્રમા અનેક પ્રકારના विविह विज्जचिंत—विविधा वैद्य चिन्ताम् વૈદ્ય સબધી વિચારોનુ वमण-विरेयण-धूम-नेत्तसिणाण-वमन-विरेचन-धूम-नेत्र-स्नानम् વમન, વમનનો ઉપાય અથવા વમનનુ ફળ, વિરેચન-શુદ્ધિના ઉપાય અથવા વિરેચનના ફળ ધૂમ-ભૂતને ડરાવવામાટે મન શિલા આદિના ફળ, ધૂપ, નેત્ર-નેત્ર રોગને માટે સમીરાજન, અને સ્નાન-સતાનને માટે મત્રૌષધિ જળથી અભિષેક आउरे सरण-आतुरे स्मरणम् રોગ અવસ્થામા સબધિઓનુ સ્મરણ કરવાની,

उपलक्षणत्वात् परिचिताश्च भवेयु, वा=अथवा ये गृहिण' अप्रव्रजितेन=गृहस्था वस्थायामवस्थितेन संस्तुताः=परिचिता॰ भवेयु'। तेषा=तैरुभयावस्थाया परिचितैर्गृहस्थै सह ऐहलौकिकफलार्थम्—इहलोके भवम्—ऐहलौकिकम्—एतल्लोकसवन्धि यत्फल=वस्त्रपात्रादि, तदर्थं=तन्निमित्तम्—वस्त्रपात्रादिलाभार्थमित्यर्थ., य संस्तव =परिचय न करोति स भिक्षुरुच्यते ॥१०॥

मूलम्—सयणासणपाणभोयण, विविहं खाइमसाइम परेसिं।
अदए पडिसेहिए नियंठे, जे तत्थ न पउस्सेइ स भिक्खू ॥११॥

छाया—शयनासनपानभोजने, विविधे खादिमस्वादिमे परे ।
अदत्ते प्रतिषेधिते निर्ग्रन्थे, यस्तत्र न प्रद्वेष्टि स भिक्षु ॥११॥

टीका—'सयणासण' इत्यादि ।

शयनासनपानभोजने=शयन–शय्यासस्तारकादि, आसन–पीठफलकादि,

अपर च—'गिहिणो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जे गिहिणो—ये गृहिण') जो गृहस्थजन (पव्वइएण—प्रव्रजितेन) दीक्षित हुए साधु द्वारा (दिट्ठा—दृष्टा') देखे गये हों और परिचय में भी आये हों (व–वा) अथवा (अप्पव्वइएण—अप्रव्रजितेन) गृहस्थावस्था में रहे हुए उस साधु द्वारा (सथुया हवेज्ज—सस्तुता॰ भवेयु.) पहिले परिचय में आये हो (तेसिं—तेषाम्) उन दोनों प्रकार की अवस्थाओं में परिचित हुए गृहस्थोंका (यः) जो साधु (इहलोइयफलट्ठा—ऐहलौकिकफलार्थम्) इसलोक सबधी फल के लिये–वस्त्र पात्रादिक की उनसे प्राप्ति के निमित्त–सथव न करेइ स भिक्खू–सस्तवम् न करोति स भिक्षु') सस्तव–परिचय नहीं करता है वह भिक्षु है ॥ १० ॥

तथा—"गिहिणो" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—जे गिहिणो–ये गृहिण જે ગૃહસ્થ જન पव्वइयेण–प्रव्रजितेन દીક્ષિત બનેલા સાધુ દ્વારા પૂર્વે दिट्ठा–दृष्टाः જોવામા આવે અને તેમની સાથે પરિચય પણ થઇ ગયેલ હોય व–वा અથવા अप्पव्वइएण–अप्रव्रजितेन ગૃહસ્થાવસ્થામા રહેલા એ સાધુદ્વારા सथुया हवेज्ज–सस्तुताः भवेयु પહેલા પરિચયમા આવેલ હોય तेसिं–तेषाम् આ બન્ને પ્રકારની અવસ્થાઓમા પરિચિત એવા ગૃહસ્થોનુ जो–य જે સાધુ इहलोइयफलट्ठा—इहलौकिकफलार्थम् આ લોક સબધી ફળના માટે–વસ્ત્ર પાત્રાદિકની એમની પાસેથી પ્રાપ્તિના નિમિત્તે सथव न करेइ स भिक्खू—सस्तवम् न करोति स भिक्षु પરિચય કરતા નથી તે ભિક્ષુ છે ॥ ૧૦ ॥

विविधाः=नानाविधाः शिल्पिनः=चित्रकाररथकारादयश्च ये सन्ति । तेषां क्षत्रियादिना-तान् क्षत्रियादीन् यः श्लोकपूजं-श्लोकः=एते शोभना इत्येवंरूपा पूजा कीर्त्तिः, पूजा=एतेषां सत्कारपुरस्कारं कुरुतेत्येवंरूपा पूजा, अनयोः समाहारस्तत्, न वदति=न कथयति । किन्तु तत्=श्लोकपूजादिकं परिज्ञाय=ज्ञ परिज्ञया सावद्यरूपं ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया परित्यज्य यः परिव्रजेत्=संयममार्गे गच्छेत् स भिक्षुरुच्यते । 'माहण' 'भोइय' इति पदद्वयं लुप्तप्रथमान्तम् ॥९॥

अपरं च--

मूलम्-गिहिणो जे पव्वइयेण दिट्ठा, अप्पव्वइएण व संथुया हवेज्जा।
ते सि इहलोइयफलट्ठा, जो संथवं न करेइ से भिक्खू ॥१०॥

छाया---गृहिणो ये प्रव्रजितेन दृष्टा, अप्रव्रजितेन वा संस्तुता भवेयुः ।
तेषामैहलौकिकफलार्थं, यः संस्तवं न करोति स भिक्षुः ॥१०॥

टीका---'गिहिणो' इत्यादि ।

ये गृहिणो गृहस्थाः प्रव्रजितेन=गृहीतदीक्षेण साधुना दृष्टाः=अवलोकिता

तथा ब्राह्मण जनोंकी (भोइण-भोगिकाः) एवं भोगी जनोंकी राज्यमान्य अमात्य आदिकों की तथा (विविहाय सिप्पिणो-विविधाः शिल्पिनः) अनेक प्रकार के शिल्पीजनोंकी-रथकार, चित्रकार आदि, कारीगरो की-(सीलोगपूय-श्लोकपूजम्) जो मुनिजन "ये बहुत अच्छे हैं इनका सत्कार पुरस्कार करो" इस प्रकार दूसरो से (नो वयइ-न वदति) नहीं कहता है किन्तु उनकी (त-तत्) उस श्लोक पूजा को (परिन्नाय-परिज्ञाय) ज्ञ परिज्ञा से सावद्यरूप जानकर एवं प्रत्याख्यान परिज्ञा से उसका परित्याग कर (परिव्वए-परिव्रजेत्) संयममार्ग मे विचरता है (स भिक्खू-स भिक्षुः) उसका नाम भिक्षु है ॥९॥

અને भोइण-भोगिका ભોગીજનોની, રાજ્યમાન્ય આમાત્ય આદિકોની તથા विविहाय सिप्पिणो-विविधाः शिल्पिनः અનેક પ્રકારના શિલ્પીજનોની જેવા કે-રથકાર, ચિત્રકાર આદિ કારીગરોની सिलोगपूय-श्लोकपूजाम् જે મુનિજન "એ ઘણાજ સારા છે, એનો સત્કાર પુરસ્કાર કરો" આ પ્રમાણે બીજાને नो वयइ-नो वदति કહેતા નથી પરંતુ તેમની त-तत् એ શ્લોક પૂજાને परिन्नाय-परिज्ञाय જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સાવદ્યરૂપ જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી એનો પરિત્યાગ કરી परिव्वए-परिव्रजेत् સંયમમાર્ગમાં વિચરે છે स भिक्खू-स भिक्षु તેનું નામ ભિક્ષુ છે ॥૯॥

उपलक्षणत्वात् परिचिताश्च भवेयु , वा=अथवा ये गृहिण. अप्रव्रजितेन=गृहस्थावस्थायामवस्थितेन सस्तुता.=परिचिता. भवेयु । तेषा=तैरुभयावस्थाया परिचितैर्गृहस्थै. सह ऐहलौकिकफलार्थम्–इहलोके भवम्–ऐहलौकिकम्–एतल्लोकसबन्धि यत्फल=वस्त्रपात्रादि, तदर्थं=तन्निमित्तम्–वस्त्रपात्रादिलाभार्थमित्यर्थ , य. सस्तव =परिचय न करोति स भिक्षुरुच्यते ॥१०॥

मूलम्–सयणासणपाणभोयण, विविहं खाइमसाइम परेसि ।

अदए पडिसेहिए नियंठे, जे तत्थ न पउस्सई स भिक्खू ॥११॥

छाया—शयनासनपानभोजने, विविधे खादिमस्वादिमे परे ।

अदत्ते प्रतिषेधिते निर्ग्रन्थे, यस्तत्र न प्रद्वेष्टि स भिक्षु ॥११॥

टीका—'सयणासण' इत्यादि ।

शयनासनपानभोजने=शयन–शय्यासस्तारकादि, आसन–पीठफलकादि,

अपर च—'गिहिणो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जे गिहिणो—ये गृहिणः) जो गृहस्थजन (पव्वइएण–प्रव्रजितेन) दीक्षित हुए साधु द्वारा (दिट्ठा–दृष्टा') देखे गये हों और परिचय में भी आये हों (व–वा) अथवा (अप्पव्वइएण–अप्रव्रजितेन) गृहस्थावस्था में रहे हुए उस साधु द्वारा (सथुया हवेज्ज–सस्तुता. भवेयु.) पहिले परिचय में आये हों (तेसिं–तेषाम्) उन दोनों प्रकार की अवस्थाओं मे परिचित हुए गृहस्थोंका (यः) जो साधु (इहलोइयफलट्ठा–ऐहलौकिकफलार्थम्) इसलोक सबधी फल के लिये–वस्त्र पात्रादिक की उनसे प्राप्ति के निमित्त–सथव न करेइ स भिक्खू–सस्तवम् न करोति स भिक्षु') सस्तव–परिचय नही करता है वह भिक्षु है ॥ १० ॥

तथा—"गिहिणो" ईत्यादि ।

અન્વયાર્થ—जे गिहिणो–ये गृहिण જે ગૃહસ્થ જન पव्वइयेण–प्रव्रजितेन દીક્ષિત બનેલા સાધુ દ્વારા પૂર્વે दिट्ठा–दृष्टा. જોવામા આવે અને તેમની સાથે પરિચય પણ થઇ ગયેલ હોય व–वा અથવા अप्पव्वइएण–अप्रव्रजितेन ગૃહસ્થાવસ્થામા રહેલા એ સાધુદ્વારા सथुया हवेज्ज–सस्तुता. भवेयु પહેલા પરિચયમા આવેલ હોય तेसिं–तेषाम् આ બન્ને પ્રકારની અવસ્થાઓમા પરિચિત એવા ગૃહસ્થોનુ जो–य જે સાધુ इहलोइयफलट्ठा—इहलौकिकफलार्थम् આ લોક સબધી ફળના માટે–વસ્ત્ર પાત્રાદિકની એમની પાસેથી પ્રાપ્તિના નિમિત્તે सथव न करेइ स भिक्खू—सस्तवम् न करोति स भिक्षु પરિચય કરતા નથી તે ભિક્ષુ છે ॥ ૧૦ ॥

पान–धौतजलादिकम्, भोजन=विशुद्धाहारः, एषां समाहारस्तस्मिन, तथा–विविधे =अनेकविधे खादिमस्वादिमे=खादिमम्–अचित्तैषणीयपिण्डखर्जूरादिकम्, स्वादिमम्, लवङ्गादिकम्, अनयोः समाहारस्तस्मिंश्च स्वगृहे विद्यमानेऽपि परैः= गृहस्थजनैः कृपणत्वादिकारणेन अदत्ते तथा–दुर्लभबोधित्वेन प्रतिषेधिते="रे भिक्षो ! न त्वया कदाऽप्यस्मद्गृहे आगन्तव्यम्, न कदाचिदपि तुभ्य किमपि दास्यामी"–त्येवं प्रतिषिद्धे च सति यो निर्ग्रन्थः साधुस्तत्र=तेषु गृहस्थजनेषु न प्रद्वेष्टि=प्रद्वेषं न करोति, स भिक्षुरुच्यते। अनेन क्रोधपिण्डपरिहार उक्तः। उपलक्षणत्वाद्शेषभिक्षादोषपरिहारो बोध्यः। 'परसिं' इति तृतीयार्थे षष्ठी ॥११॥

तथा—'सयणासण०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(परसिं–परैः) गृहस्थजनो द्वारा (सयणासणपाणभोयण–शयनासनपानभोजने) शयन–शय्या सस्तारक आदि–आसन–पीठ-फलक आदि पान–धौतजलादिक, भोजन–विशुद्ध आहार आदि तथा (विविह खाइमसाइम–विविधे खादिमस्वादिमे) अनेकविध अचित्त-एषणीय पिण्ड खर्जूर आदि खादिम, तथा लवङ्गादिकरूप स्वादिम वस्तु (अदए–अदत्ते) अपने घरमे विद्यमान होने पर भी कृपणतावश यदि नही दी गई हो, तथा दुर्लभबोधि होने के कारण (पडिसेहिए–प्रतिषेधिते) उन्होंने ऐसा भी कह दिया हो कि–रे भिक्षो ! अब तुम हमारे घर पर भूलकर भी पग मत रखना–कभी भी मत आना मैं तुमको कुछ भी नहीं दूगा' इस तरह से आने के लिये निषेध भी कर दिया हो तो भी (नियठे–निर्ग्रन्थः) निर्ग्रन्थ–साधु (तत्थ न पउस्सइ–तत्र न प्रद्वेष्टि) उनके ऊपर द्वेषभाव नही करता है (स भिक्खू–स भिक्षुः) वही भिक्षु

તથા—" सयणासण " ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—परसिं–परैः ગૃહસ્થ જનો તરફથી सयणासणपाणभोयण–शयनासनपानभोजने શયન–શય્યા સસ્તારક આદિ, આસનપીઠ ફલક આદિ, પાન –ધૌત જલાદિક ભોજન–વિશુદ્ધ આહાર આદિ તથા विविह खाइम साइम–विविधे खादिमस्वादिमे અનેકવિધ અચિત્ત-એષણીય પિંડ ખજૂર આદિ, સ્વાદિમ–લવિંગા દિકરૂપ સ્વાદિમ વસ્તુ अदए–अदत्ते પોતાના ઘરમા વિદ્યમાન હોવા છતા પણ કૃપણ-તાવશ જો આપવામા આવેલ ન હોય તથા દુર્લભબોધિ હોવાના કારણે पडिसेहिए–प्रतिषेधिते એણે એવુ પણ કહી દીધુ હોય કે, હે ભિક્ષુ ! તમે અમારા ઘર ઉપર ભુલેચુકે પણ આજથી કોઇ દીવસ પગ મુકશો નહી હુ તમને કાંઈપણ આપનાર નથી આ પ્રમાણે આવવાની મના કરી હોય છતા પણ नियठे–निर्ग्रंथ નિગ્રંથ સાધુ तत्थ न पउस्सइ–तत्र न प्रद्वेष्टि એમના ઉપર દ્વેષભાવ રાખતા નથી स भिक्खू

इदानीं ग्रासैषणादोषपरिहारमाह—

मूलम्-जं किंचाहारपाणगं, विविहं खाइमसाइमं परेसिं लद्धुं ।
जो तं तिविहेणं णाणुकंपे, मणवयकायसुसंवुडे स भिक्खू ॥१२॥

छाया—यत्किंचिदाहारपानकं, विविधं खाद्य-स्वाद्यं परेभ्यो लब्ध्वा ।
यस्तं त्रिविधेन नानुकम्पते, मनोवाक्कायसुसंवृतः स भिक्षुः ॥१२॥

टीका—'जं किंचे' इत्यादि ।

यत्किंचित्=अल्पमपि आहारपानकम्=आहारम्=अन्नादिकम्, पानक-पानीय दुग्धादिकम्, तथा-विविधम्=अनेकप्रकारकं खाद्य-स्वाद्यम्=तत्र-खाद्यम्=अचित्तैषणीयपिण्डखर्जूरादिकम्, स्वाद्य=लवङ्गादिकम्, अनयोः समाहारस्तच्चपरेभ्यो =गृहस्थेभ्यो लब्ध्वा=समाप्य यः साधुः तं=वचनव्यत्ययात्तेनाहारादिना त्रिविधेन=

है। इस प्रकार प्रतिकूल के ऊपर भी क्रोध करने के परिहार के इस कथन से अशेष भिक्षा संबंधी दोषों का भी परिहार साधु को कर देना चाहिये, यह बात जानी जाती है ॥ ११ ॥

अब यहां ग्रासैषणा के दोषों का परिहार कहते हैं—

'जं किंचा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(विविहं-विविधम्) अनेक प्रकार का (खाइमसाइम-खाद्यम् स्वाद्यम्) खाद्य अचित्तएषणीय पिण्ड खर्जूरादिक आहार, स्वाद्य-लवंगादिक आहार, तथा (आहारपाणगं-आहारपानकम्) अन्नादिक से निष्पन्न रोटी आदिरूप आहार एवं पीने योग्य दुग्धादिकरूप आहार (परेसिं-परेभ्यः) दूसरे दाता गृहस्थों के यहां से (जं किंच-यत् किञ्चित्) मात्रा में अल्प भी मिले तो भी (लद्धु-लब्ध्वा) उसको प्राप्तकर (जो-यः) जो साधुजन (तं-तम्) उस प्राप्त आहार द्वारा (तिविहेणं-त्रिविधेन)

—સ ભિક્ષુ તે ભિક્ષુ છે આ પ્રમાણે પ્રતિકૂળના ઉપર પણ ક્રોધ ન કરવો તેમજ આ કથનથી અશેષ ભિક્ષા સબધી દોષોનો પણ પરિહાર સાધુએ કરવો જોઈએ એમ આ વાત જાણી શકાય છે ॥ ૧૧ ॥

હવે અહીં ગ્રાસૈષણાના દોષોનો પરિહાર કહેવામા આવે છે—

"जं किञ्चा" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—विविहं-विविधम् અનેક પ્રકારના खाइमसाइम-खाद्यम् स्वाद्यम् ખાદ્ય-અચિત્ત-એષણીય પિંડ ખજૂર આદિ આહાર, સ્વાદ્ય-લવિંગાદિક આહાર, તથા आहारपाणगं-आहारपानकम् અન્નાદિકથી નિષ્પન્ન રોટી આદિરૂપ આહાર અને પીવા યોગ્ય દૂધ આદિરૂપ આહાર परेसिं-परेभ्य, બીજા દાતા ગૃહસ્થોને ત્યાંથી जं किंच-यत् किंचित् માત્રામા અલ્પ પણ મળે તો પણ लद्धु-लब्ध्वा એને પ્રાપ્ત કરી जो-य જે સાધુજન तं-तम् એ પ્રાપ્ત આહાર દ્વારા तिविहेण-त्रिविधेन

मनोवाकायलक्षणेन प्रकारत्रणेय बालग्लानादीन्, नानुकम्पते=न ददाति स न भिक्षुरिति शेषः। उक्त च—

"असविभागी न हु तस्स मोक्खो" इति।

किन्तु यः साधु मनोवाकायसुसंवृतः=मनोवाकायैः सुष्ठु संवृतः-त्रिविधकारणेन बालग्लानादीननुकम्पते इति शेषः स भिक्षुरुच्यते। यद्वा-तम्=आहारादिकं नानुकम्पते=न प्रशसति-मनोऽनुकूलस्याहारादेः प्रशसा न करोति, उपलक्षणात्-मन प्रतिकूलस्य निन्दामपि न करोति किन्तु मनोवाकाय सुसंवृत'वशीकृतमनोवाकायो भवति स भिक्षुरुच्यते। अनेनार्थतो गृद्धयभावादङ्गारदोषपरिहार उक्तः ॥१२॥

मन वचन एव काय से (नाणुकपे-नानुकम्पते) बाल ग्लान आदि मुनियों पर दया नही करता है-अर्थात् उस प्राप्त आहार को जो विभक्त कर उनको प्रदान नही करता है-वह भिक्षु नहीं है। क्यों कि "असविभागी न हु तस्स मोक्खो"। 'जो सभोगी का विभाग नहीं करे उसको मोक्ष नही है' किन्तु जो साधु (मण-वयण-काय-सुसवुडे मनोवाकायसुसवृत') मन वचन एव काय से सुसवृत होकर उन बाल ग्लान आदि साधुजनों पर अनुकपा करता है-अर्थात् अल्प भी प्राप्त आहार आदि को विभक्तकर उनको देता है (स भिक्खू-स भिक्षु) वही भिक्षु है। अथवा उस आहारादि की प्रशसा नही करता है और उपलक्षण से निन्दा भी नही करता है अर्थात् मनके अनुकूल आहार आदि की प्रशसा और मनके प्रतिकूल आहार आदिकी निन्दा नही करता है किन्तु मनवचन काया से सुसवृत होकर रहता है वही भिक्षु कहलाता है। गृद्धि के अभाव से अगार दोष का परिहार कहा है ॥१२॥

મન, વચન અને કાયાથી नाणुकपे-नानुकम्पते બાલ ગ્લાન આદિ મુનિઓ ઉપર દયા કરતા નથી-અર્થાત્ પ્રાપ્ત થયેલા એ આહારને વિભક્ત કરી એને પ્રદાન નથી કરતા તે ભિક્ષુ નથી કેમકે, "असविभागी न हु तस्स मोक्खो" "જે સભોગીનો વિભાગ નથી કરતા તે મોક્ષ મેળવી શકતા નથી" તેમજ જે સાધુ मण-वयण-काय-सुसवुडे-मनोवाकायसुसवृत મન વચન અને કાયાથી સુસવૃત થઈને એ બાલ ગ્લાન આદિ સાધુજનો ઉપર અનુકપા રાખે છે અર્થાત પોતાને પ્રાપ્ત થયેલ થોડા આહાર આદિને પણ વિભક્ત કરીને તેમને આપે છે स भिक्खू-स भिक्षु તેજ ભિક્ષુ છે અથવા તે આહારાદિકની પ્રશસા કરતા નથી અને ઉપલક્ષણથી નિદા પણ કરતા નથી અર્થાત મનને અનુકૂલ આહાર આદિની પ્રશસા અને મનના પ્રતિકૂલ-આહાર આદિની નિદા કરતા નથી મનવચન અને કાયાથી સુસવૃત થઈને રહે તેજ ભિક્ષુ કહેવાય છે ગૃદ્ધિના અભાવમા અગાર દોષનો પરિહાર કહેલ છે ॥૧૨॥

सम्प्रति धूमदोषपरिहारमाह—

मूलम्-आयामगं चेव जवोदणं च, सीयं सोवीरं जवोदगं च ।
णो हीलए पिंडं णीरसं तु, पंतकुलाइं परिव्वए स भिक्खू ॥१३॥

छाया—आचामकं चैव यवोदनं च, शीतं सौवीरयवोदकं च ।
नो हील्येत् पिण्डं नीरसं तु, प्रान्तकुलानि परिव्रजेत् स भिक्षुः ॥१३॥

टीका—'आयामगं चेव' इत्यादि ।

साधुः प्रान्तकुलानि=दरिद्रकुलानि भिक्षार्थं परिव्रजेत्=गच्छेत् । न तु सर्वदा दानशूराणां धनिनामेव कुलानि गच्छेत् । एवं सति नियतपिण्डसेवनात् साधोः धर्महानिः स्यात् । तथा-तेषु प्रान्तकुलादिषु आचामकम्=शाकादीनामवस्रावणं चेव-चैव 'च' शब्दः पुनरर्थकः, 'एव' शब्दः पूरणार्थकः, च=पुनः यवोदनं= यवभक्तं 'जव खीचडा' इति प्रसिद्धं, शीतम्=शीतलं पर्युषितमोदनकरपट्टिकादिकम्, उपलक्षणत्वात्पर्युषिततक्रमिश्रितचणकाद्यन्नम्, तथा-सौवीरयवोदकं

तथा—'आयामगं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—साधु (पंतकुलाइं परिव्वए-प्रान्तकुलानि परिव्रजेत्) आहार के लिये दरिद्रकुलों में भी जावें, ऐसा वह न करे कि सदा धनिकों के घर पर भिक्षा के लिये जाय । क्यों कि ऐसा करना नियत-पिण्ड की प्राप्ति होते रहने से उस साधु के लिये चारित्र धर्म की हानि का कारण बन जाता है । अतः दरिद्रकुलों में भिक्षा के लिये जाने पर वहां उसको (आयामगं-आचामकम्) शाकादिकों का अवस्रावण-ओसामण, तथा चुरा हुआ मसालेयुक्त अथवा विना मसाले का नमक मिर्च-वाला पानी अथवा (जवोदणं-यवभक्तम्) जव का खीचडा अथवा (सीयं सोवीरं जवोदगं च-शीतं सौवीरयवोदकं च) पर्युषित-(वासी)

तथा—"आयामगं" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—સાધુ पंतकुलाइं परिव्वए-प्रान्तकुलानि परिव्रजेत् આહારને માટે દરિદ્ર કુળોમા પણ જાય, એવુ ન કરે કે, સદા ધનિકોના ઘેરજ ભિક્ષા માટે જાય કેમકે, આમ કરવાથી નિયતપિંડની પ્રાપ્તિ થતી હોવાથી એ સાધુના માટે પોતાના ધર્મની હાનિનુ કારણુ બની જાય છે આથી દરિદ્રકુળોમા ભિક્ષાને માટે જવાથી એમને आयामगं-आचामकं શાક આદિનુ અવસ્રાવણુ-ઓસામણુ ચોળેલા મસાલાવાળા અથવા વગર મસાલાનુ મીઠા મરચાવાળુ પાણી અથવા जवोदणं-यवभक्तम् જવની ખીચડી અથવા सीयं सोवीरं जवोदगं च-शीतं सौवीरयवोदकं च

च-तत्र सौवीर=काञ्जिकम्, यवोदक=यवधावनजलम् अनयो समाहारस्तच्च, समुपलभ्य, तु=पुनस्तत् नीरस विगतास्वाद पिण्डम्=यवसारणकादिरूप पानीय-माहार च न हीलयेत्=कुत्सितमिदमन्नम्, अपेयमिद पानीयम्, एव रूपेण न निन्देत्। एतादृशः प्रान्तकुलभिक्षाचारी यः साधुः स भिक्षुरुच्यते ॥१३॥

तथा च—

मूलम्-सद्दा विविहा भवंति लोए, दिव्वा माणुस्सया तहा तिरिच्छा।
भीमा भयभेरवा उराला, जो सोच्चा ण विहेज्जइ स भिक्खू ॥१४॥

छाया—शब्दा विविधा भवन्ति लोके, दिव्या मानुष्यकास्तथा तैरश्चाः।
भीमा भयभैरवा उदारा, य श्रुत्वा न बिभेति स भिक्षुः ॥१४॥

ओदन या रोटी आदि उपलक्षण से पर्युषित-वासी तक्र मिश्रित चणकादि अन्न, सौवीर-काजिक या जौ के धोने के जल ये ही सब-कुछ मिलेगा सो ये (नीरस पीड-नीरस पिण्डम्) नीरस आहार है। (समुपलभ्य) इसको पाकर (नो हीलए-नो हीलयेत्) ऐसे विचार से उस साधु को निंदा नही करना चाहीये कि 'यह कुत्सित अन्न है, यह पानी भी पीने योग्य नही है'। इस प्रकार प्रान्तकुल भिक्षाचारी जो साधु होता है (स भिक्खू-स भिक्षु) वही भिक्षु है।

भावार्थ—जो साधु अपनी भिक्षावृत्ति का लक्ष्य केवल श्रीमतो के ही घरो को नही बनाता है किन्तु दरिद्रों के घरों कों भी बनाता है और वहा पर उसको जो कुछ भी नीरस आहार मिलता है उसको सम-भाव से करता हैं वही भिक्षु है ॥१३॥

પર્યુષિત (વાસી) ભાત અથવા રોટી આદિ ઉપલક્ષણથી પર્યુષિત છાશ મિશ્રિત ચણકાદિ અન્ન, સૌવીર-કાજી અથવા જવના ધોવણનુ પાણી આ બધુ મળે છે नीरस पीड-निरस पिण्डम् આ નીરસ આહાર છે આવો નીરસ આહાર મળતા नो हीलए-नो हीलयेत् એવા વિચારથી એ સાધુએ નિદા ન કરવી જોઈએ કે "આ કુત્સિત અન્ન છે, આ પાણી પીવા યોગ્ય નથી" આ પ્રકારથી પ્રાન્તકુળ ભિક્ષાચારી જે સાધુ હોય છે તેજ ભિક્ષુ છે

ભાવાર્થ—જે સાધુ પોતાની ભિક્ષાવૃત્તિનુ લક્ષ કેવળ શ્રીમતોના જ ઘરોને બનાવતા નથી પરતુ દરિદ્રીઓના ઘરોમા પણ ભિક્ષાવૃત્તિ માટે જાય છે અને ત્યા તેને જે કાઈ નિરસ આહાર મળે છે એને સમભાવથી ગ્રહણ કરે છે તેજ ભિક્ષુછે ॥૧૩॥

टीका—'सद्दा' इत्यादि ।

लोके विविधाः=परीक्षाप्रद्वेषादिना क्रियमाणत्वादनेकविधाः दिव्याः=देवसम्बन्धिनः, मानुष्यकाः=मनुष्यसम्बन्धिनः तथा तैरश्चाः=तिर्यक्सम्बन्धिनश्च शब्दाः ध्वनयो भवन्ति। एते शब्दाः भीमाः=रौद्राः, भयभैरवाः–भयेन भैरवाः–अत्यन्त भयजनकाः, उदाराः महाध्वनिमया भवन्ति। यः साधुरेतादृशान् शब्दान् श्रुत्वा न बिभेति=धर्मध्यानात् प्रचलितो न भवति, स भिक्षुरुच्यते। अनेन सिंहविहारितायामुपसर्गसहिष्णुत्वं निमित्तमुक्तम् ॥१४॥

तथा—'सद्दा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(लोए–लोके) इस संसार में (विविह–विविधम्) परीक्षा करने के निमित्त को लेकर या द्वेष आदि कारण को लेकर विविध प्रकार के (सद्दा–शब्दाः) शब्द (दिव्वा–दिव्याः) देव संबंधी (माणुस्सया–मानुष्यकाः) मनुष्यसंबंधी, (तिरिच्छा–तैरश्चाः) तिर्यंच संबंधी (भवंति–भवन्ति) होते हैं। जो शब्द (भीमा–भीमाः) रौद्र (भयभेरवा–भयभैरवाः) एवं अत्यन्त भयजनक होते हैं जो (जो–यः) जो साधु इन शब्दों को (सोच्चा–श्रुत्वा) सुनकर के भी (ण विहेज्जइ–न बिभेति) नहीं डरता है–धर्मध्यान से विचलित नहीं होता है (स–भिक्खू–स भिक्षुः) वह भिक्षु है। इस कथन से इस बात की पुष्टि सूत्रकारने की है कि सिंहवृत्ति से विहार करने में साधु को उपसर्ग सहिष्णु होना चाहिये।

भावार्थ—संसार मे भिन्न २ प्राणियों के होने से उनकी विचारधाराएँ भी भिन्न २ हुआ करती हैं। कोई ऐसे भी भावुक जन होते

તથા "सद्दा" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—लोए–लोके આ સંસારમાં विविह–विविधा પરીક્ષા કરવાના નિમિત્તને લઈને અથવા તો દ્વેષ આદિ કારણોને લઈને વિવિધ પ્રકારના सद्दा–शब्दा શબ્દ दिव्वा–दिव्या દેવ સંબંધી, माणुसीया–मानुष्यकाः મનુષ્ય સંબંધી, तिरिच्छा–तैरिश्चा તિર્યંચ સંબંધી भवति–भवन्ति થાય છે જે શબ્દ भीमा–भीमाः રૌદ્ર અને भय–भेरवा–भवभैरवाः અત્યંત ભયાનક હોય છે जो–यः જે સાધુજન આવા શબ્દોને सोचा–श्रुत्वा સાંભળવા છતાં પણ ण विहेज्जइ–न बिभेति ડરતા નથી–ધર્મ ધ્યાનથી વિચલિત થતા નથી स भिक्खू–स भिक्षुः તે ભિક્ષુ છે આ કથનથી એ વાતની પુષ્ટી સૂત્રકારે કરી છે કે, સિંહવૃત્તિથી વિહાર કરવામાં સાધુએ ઉપસર્ગ સહિષ્ણુ બનવું જોઈએ

ભાવાર્થ—સંસારમાં ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારના પ્રાણીઓ હોવાથી એમનો વિચાર પણ ભિન્ન ભિન્ન હોય છે કોઈ પણ ભાવિકજન હોય છે કે સાધુને જોતાંજ શ્રદ્ધાથી

सम्पति समस्तधर्माचारमूल सम्यक्त्वमर्थयमाह—

मूलम्—वायं विविहं समिच्च लोए, सहिए खेयाणुगए य कोवियप्पा।
पन्ने अभिभूय सव्वदंसी, उवसंते अविहेडए स भिक्खू ॥१५॥

छाया—वादं विविधं समेत्य लोके, सहित खेदानुगतश्च कोविदात्मा।
प्राज्ञः अभिभूय सर्वदर्शी, उपशान्तः अविहेठकः स भिक्षुः ॥१५॥

हैं जो साधु को देखते ही श्रद्धा से उनके चरणा पर झुक जाते हैं और उनके दर्शन से अपना परम अहोभाग्य मानते हैं। कितनेक ऐसे भी होते हैं जो उन साधुओ की परीक्षा कर उन्हें फिर सच्चे साधु समझकर बाद में अपना उपास्य गुरुदेव मानते हैं। कितनेक ऐसे भी होते हैं जिन के हृदय मे वीतराग भी गुरुओं के प्रति हृदय में द्वेषकी अग्नि सिलगती रहती है। कोई देव भी साधुओं की परीक्षा किया करते हैं। विहार करते २ साधुजन भयकर अटवी मे मार्ग विस्मृति के कारण पहुँच जाते हैं, तब उनका सामना सिंहो से भी हो गया करता है। अत: साधुओ को चाहे देवसबधी भयकर रौद्र शब्द सुनने को मिले चाहे मनुष्य सबधी या तिर्यंच सबधी। परन्तु फिर भी साधु धन्य है जो इन भयोत्पादक रौद्र शब्दो को सुनकर भी अपने धर्मध्यान से विचलित नहीं होता है। ऐसा साधु ही भिक्षु सज्ञा का अधिकारी होता है ॥१४॥

એમના ચરણોમા ઝુકી જાય છે અને એમના દર્શનથી પોતાનુ પરમ અહોભાગ્ય માને છે કેટલાક એવા પણ હોય છે કે, તેઓ એ સાધુઓની પરીક્ષા કરીને પછીથી સચ્ચા સાધુ સમજ્યા પછી જ તેમને પોતાના ઉપાસ્ય ગુરુદેવ તરીકે માને છે કેટલાક એવા હોય છે કે, જેમના હૃદયમા વીતરાગ તેમજ ગુરુઓના તરફ હૃદયમા દ્વેષની અગ્નિ સળગતી રહે છે કોઈ કોઈ દેવ પણ સાધુઓની પરીક્ષા કરતા હોય છે વિહાર કરતા કરતા સાધુજન જ્યારે માર્ગ ભૂલાઇ જતા ભયકર જગલોમા પહોચી જાય છે ત્યારે તેમને સિંહોનો પણ સામનો કરવો પડે છે આથી સાધુઓને ચાહે દેવ સબધી ભયકર રૌદ્ર શબ્દ સાભળવા મળે ચાહે મનુષ્ય યા તો તિર્યંચ સબધી છતા પણ એ સાધુ ધન્ય છે કે જે આવા ભયોત્પાદક રૌદ્ર શબ્દોને સાભળીને પણ પોતાના ધર્મધ્યાનથી વિચલિત બનતા નથી એવા સાધુ જ ભિક્ષુ સજ્ઞાના અધિકારી હોય છે ॥ ૧૪ ॥

टीका—'वाय' इत्यादि ।

य. साधु. लोके प्रचलित विविधम्=अनेकप्रकार वाद=भिन्न भिन्न दर्शनाभिप्रायसूचक वाद—यथा—

सेतुकरणेऽपि धर्मो, भवत्यसेतुकरणेऽपि किल धर्म ।
गृहवासेऽपि च धर्मो, वनेऽपि वसता भवति धर्म ॥१॥
मुण्डस्य भवति धर्म , तथा जटाभि. सवासस धर्म. ।
गृहवासेऽपि च धर्मो वनेऽपि वसता भवति धर्म ॥२॥ इति ।

इत्यवरूप दर्शनान्तराभिमतमेकान्तवाद समेत्य=परिज्ञाय=ज्ञ परिज्ञया सयमहानिरूप ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया परित्यज्य सहित.=ज्ञानक्रियाभ्या सहित., यद्वा—हितेन—परिणामसुखावहेन जिनवचनेन सहित , किंवा—द्वितीयादिमुनिसहितः, खेदानुगत —खेदयति कर्माननेतिखेद.—सयमस्तमनुगत , सयमयुक्त इत्यर्थः च=पुन कोविदात्मा—कोविद —लब्धशास्त्रपरमार्थ आत्मा यस्य स तथा प्राज्ञो=हेयोपादेयबुद्धिमान् अभिभूय सवदर्शी=परीषहानभिभूय रागद्वषौ निराकृत्य च सर्व

तथा—'वाय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो साधु (लोए विविह वाय समिच्च—लोके विविध वाद समेत्य) लोकमे प्रचलित विविध मान्यताओं को ज्ञ परिज्ञा से सयम की हानिकारक जानकर पश्चात् प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग कर देता है और (सहिए—सहितः) ज्ञानक्रिया की दृढता से युक्त, यद्वा परिणाम मे सुखावह जिनवचन से युक्त अथवा द्वितीयादि मुनियुक्त बनकर (खेयाणुगए—खेदानुगत.) सयम की आराधना करने मे लवलीन रहता है एव (कोवियप्पा—कोविदात्मा) शास्त्रीय रहस्य ज्ञान से अपने आप को वासितकर (पन्ने—प्राज्ञ') हेय और उपादेय की बुद्धिसपन्न बन जाता है तथा (अभिभूय—अभिभूय) अनुकूल प्रतिकूल

તથા—'वाय'' ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—જે સાધુ लोए विविह वाय समिच्च-लोके विविध वाद समेत्य લોકોમા પ્રચલિત વિવિધ માન્યતાઓને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સ યમમા હાનીકારક જાણીને પછીથી પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેને પરિત્યાગ કરી દે છે, અને सहिए—सहितः જ્ઞાનક્રિયાની દઢતાથી યુક્ત યદ્વા પરિણામમા સુખાવહ જીન વચનથી યુક્ત અથવા બીજા મુનિઓથી યુક્ત બનીને खेयाणुगए—खेदानुगत. સ યમની આરાધના કરવામા લવલીન રહે છે અને कोवियप्पा—कोविदात्मा શાસ્ત્રીય રહસ્ય જ્ઞાનથી પોતાની જાતને વાસીત કરીને पन्ने—प्रज्ञ. હેય અને ઉપાદેયની બુદ્ધિ સ પન્ન બની જાય છે તેમજ अभिभूय—

प्राणिजातमात्मसदृश पश्यन्, अत एव उपशान्त'=कषायरहित सन् अविहे-
ठकः=अन्यस्याखेदकः स्यात्, स भिक्षुरुच्यते ॥१५॥

तथा—

मूलम्–असिप्पजीवी अगिहे अमित्ते, जिइंदिओ सव्वओ विप्पमुक्के।
अणुक्कसाई लहुअप्पभक्खी, चिच्चा गिह एगचरे स भिक्खूत्तिबेमि ॥१६॥

छाया—अशिल्पजीवी अगृह अमित्र, जितेन्द्रिय सर्वतो विप्रमुक्त ।
अणुकषायी च लघ्वल्पभक्षी, त्यक्त्वा गृहमेकचरः स भिक्षुः इति ब्रवीमि ॥१६॥

टीका—'असिप्पजीवी' इत्यादि ।

अशिल्पजीवी=शिल्प–चित्रपत्रच्छेदादिविज्ञान, तेन जीवितु शीलमस्येति शिल्पजीवी, न शिल्पजीवी–अशिल्पजीवी, शिल्पजीविकावर्जित इत्यर्थ, तथा–अगृह –नास्ति गृह यस्य स –गृहवर्जित, तथा–अमित्र –मित्रवर्जित, उपलक्षण तया शत्रुवर्जितश्च, तथा–जितेन्द्रिय –जितानि=स्ववशीकृतानि इन्द्रियाणि=श्रोत्रा

परीषहों से अचलित होकर (सव्वदंसी–सर्वदर्शी) समस्त जगत के प्राणीयों को अपने जैसा समझने लगता है और इसी भावना के बल पर वह (उवसते–उपशान्त) कषाय से रहित होकर (अविहेडए–अविहेठक) किसी भी प्राणी को खेदित नहीं करता है (स भिक्खू–स भिक्षु) उसी का नाम भिक्षु है ॥१५॥

तथा—'असिप्पजीवी' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(असिप्पजीवी–अशिल्पजीवी) चित्र काढना पत्र आदि का किसी विशिष्ट आकार से छेदन करना यह शिल्पविद्या है। इस शिल्पविद्या से जो अपनी जीवीका नहीं करता हो अर्थात् शिल्पीजीवी नहीं है (अगिहे–अगृह) गृहसे जो रहित है (अमित्ते अमित्र) मित्र

अभिभूय અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પરિષહોથી અચલિત બનીને सव्वदंसी–सर्वदर्शी સમસ્ત જગતના તમામ પ્રાણીઓને પોતાના જેવા સમજવા લાગે છે અને એ ભાવનાના બળ ઉપર તે उवसते–उपशान्त કષાયથી રહિત બનીને अविहेउए–अविहेठक કોઈપણ પ્રાણીને ખેદ ઉપજાવતા નથી स भिक्खू–स भिक्षु તેનુ નામ ભિક્ષુ છે ॥ ૧૫ ॥

તથા—'असिप्पजीवी' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—असिप्पजीवी–अशिल्पजीवी ચિત્ર ચિતરવુ, પત્ર આદિનુ કોઈ વિશિષ્ટ આકારથી છેદન કરવુ, એ શિલ્પ વિદ્યા છે આવી શિલ્પ વિદ્યાથી જે પોતાનો જીવન નિર્વાહ ન ચલાવતા હોય અર્થાત્ જે શિલ્પજીવી નથી अगिहे–अगृह ઘરથી જે રહિત છે अमित्ते–अमित्र મિત્ર તેમજ શત્રુ જેને કોઈ નથી

दांनि येन स, वशीकृतेन्द्रिय इत्यर्थः, तथा सर्वत.=सर्वप्रकारेण विप्रमुक्त = बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहरहित तथा-अणुकपायी-अणव -स्वल्पा -सञ्ज्वलननामान इति यावत्, ते च ते कपाया, ते सन्ति यस्यासौ अणुकपायी, मन्दकपायवानित्यर्थ, प्राकृतत्वात् कास्य द्वित्वम्। यद्वा-'अनु कपायी' इतिच्छाया अल्पकपायवानित्यर्थ। तथा-लघ्वल्पभक्षी-लघूनि नि साराणि पर्युषिताम्लतक्रमिश्रित वल्लचणकाद्यन्नानि अल्पानि स्तोकानि भक्षितु शीलमस्येति लघ्वल्पभक्षी-अन्त प्रान्तान्नपानसेवीत्यर्थ, एतादृश मन य साधु गृह=द्रव्यभावगृह त्यक्त्वा एकचर'=रागद्वेषरहित'

एव शत्रु जिसका कोई नहीं है (जिइंदिओ-जितेन्द्रिय) इन्द्रिया जिसकी वश मे है (सव्वओ विप्पमुक्के-सर्वत विप्रमुक्त') सर्व प्रकार से जो बाह्य एव आभ्यन्तर परिग्रह से रहित हुआ है तथा (अणुकसाई-अणुकपायी) मन्दकपायवाला है (लहु अप्पभक्खी-लघ्वल्पभोजी) लघु-नि सार, पर्युषित आम्ल तक्रमिश्रित वल्लचणक आदि अन्न-को अल्पमात्रा मे जो लेता है-अर्थात्-अन्त प्रान्त अन्न पान का जो सेवन करने वाला है, ऐसा साधु 'गिह चिचा-गृह त्यक्त्वा) द्रव्य एव भाव गृह का परित्याग करके (एगो-एक) रागद्वेष से रहित होकर चरे-विचरेत्) सयममार्ग मे विचरण करता है (स भिक्खू-स भिक्षुः) वही भिक्षु है। (त्ति बेमि-इति ब्रवीमि) इसी प्रकार भगवान के मुख से मैने सुना है सो तुम से कहा है।

भावार्थ—जो अशिल्पजीवी है, न जिसको अपना कोई घर है और न जिसका कोई शत्रु व मित्र है, इन्द्रियों की दासता का जिसने परिहार कर दिया है उनके अनुसार जो नहीं चलता है प्रत्युत इन्द्रियो

जिइंदिओ-जितेन्द्रिय જેના ઇન્દ્રિયો વશમા છે सव्वओ विप्पमुक्के-सर्वतः विप्रमुक्त. સર્વ પ્રકારના બહારના અને અદરના પરિગ્રહથી જે રહિત બનેલ છે તથા अणुकसाई-अणुकपायी મદ કષાયવાળા છે लहु अप्पभक्खी-लघ्वल्पभोजी लघु-નિ સાર, પર્યુષિત ખાટી છાશથી મિશ્રિત બલ્લચણક આદિ અન્નને અલ્પ માત્રામા જે લે છે અર્થાત-અન્ત પ્રાન્ત અન્નપાનનુ જે સેવન કરવાવાળા છે એવા સાધુ गृह चिचा-गृह त्यक्त्वा દ્રવ્ય અને ભાવગૃહનો પરિત્યાગ કરીને, एगे-एक રાગદ્વેષથી રહિત બનીને चरे-विचरेत् સયમમાર્ગમા વિચરણ કરે છે स भिक्खू-स भिक्षु તેજ ભિક્ષુ છે (त्ति बेमि-इतिब्रवीमि) આ પ્રકારે ભગવાનના મોઢેથી જે મે સાભળેલ છે તે તમોને કહેલ છે

ભાવાર્થ—જે અશિલ્પજીવી છે, જેને પોતાનુ કોઈ ઘર નથી તેમજ જેને કોઇ મિત્ર કે શત્રુ નથી ઇન્દ્રિયો ઉપર જેણે કાબુ મેળવેલ છે પરતુ એની માફક જે

सन् विचरेत्, स भिक्षुरुच्यते। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्यः ॥१६॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित कलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू छत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हा पुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलाल व्रति विरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्या टीकाया स भिक्षुनामक पञ्चदशमध्ययन समाप्तम्।

॥ शुभ भूयात् ॥

को ही अपने अनुसार चलाता है, परिग्रह कष्टों को सहनकरने में समर्थ है और जो अपरिग्रह के सिद्धान्त को अपने जीवन मे पूर्णरूप से सिद्धान्त मार्ग के अनुसार उतारा है, तथा इसी मार्ग पर चलने के लिये जो दूसरो को भी समझाता है। प्रबल कषाय की मात्रा जिसके भीतर नहीं है अत्यत मन्द कषाय वाला है, अर्थात्-शरीर निर्वाह के उचित ही जो अन्य प्रा त अन्न पान का सेवन करता है ऐसा साधु भिक्षु की कोटि में माना गया है। रागद्वेष से इसका कोई सबध नहीं रहता है। (इति ब्रवीमि) इस प्रकार इस अध्ययन का उपसहार करते हुए श्री सुधर्मास्वामी जबूस्वामी से कहते है कि-यहा तक इस अध्ययन मे जो कुछ भिक्षु के विषय मे कहा है वह सब मैंने वीर प्रभु के मुख से जसा सुना है-वैसा ही तुमसे कहा है अपनी निजी कल्पना से इस विषय को मने नही कहा है ॥ १६ ॥

॥ यह पन्द्रहवें अध्ययनका हिन्दी अनुवाद सपूर्ण हुवा ॥ १५ ॥

ચ લતા નથી ગ નુ ઈન્દ્રિયોને જ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે ચલાવે છે પરિગ્રહના કષ્ટોને સહન કરનાના જે સમર્થ છે અને અપરિગ્રહના સિદ્ધાતને જેણે પોતાના જીવનમા પૂર્ણરૂપથી સિદ્ધ ત માર્ગના અનુસાર ઉતારેલ છે, તેમજ એ માર્ગ ઉપર ચાલવા બીજાને જે સમજાવે છે પ્રબળ કષાયની માત્રા જેની અ દર નથી, અત્યત મ દ કષાયવાળા છે અર્થાત-શરીર નિર્વાહના માટે જ જે અન્તપ્રાન્ત અન્ન પાનનુ સેવન કરે છે એવા સાધુજ ભિક્ષુની કોટિમા માનવામા આવેલ છે રાગદ્વેષ સાથે એમનો કોઇ સ બ ધ હોતો નથી (ઇતિ બ્રવીમિ) આ પ્રકારે આ અધ્યયનનો ઉપસ હાર કરીને શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે આ અધ્યયનમા અહિ સુધી ભિક્ષુના વિષ યમા જે કાંઈ કહેવાયેલ છે તે બધુ શ્રી વીર પ્રભુના મોઢેથી મે જેવુ સાભળ્યુ છે તેવુ જ તમોને કહેલ છે મારી પોતાની કલ્પનાથી મે કાંઈ પણ કહેલ નથી ૧૬॥

શ્રી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના પ દરમા અધ્યયનનો ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સ પૂર્ણ ॥૧૫॥

॥ अथ षोडशमध्ययनम् ॥

व्याख्यातं पञ्चदशमध्ययनम्। अथ षोडशमारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः–अनन्तराध्ययने भिक्षुगुणाः प्रोक्ताः। ते गुणाश्च ब्रह्मचर्ययुक्तस्यैव भवन्ति। ब्रह्मचर्यं तु ब्रह्मचर्यगुप्तिपरिज्ञानतः सुदृढं भवति, इत्यतोऽस्मिन्नध्ययने ब्रह्मचर्यगुप्तयोऽभिधीयन्ते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्याध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्–सुयं मे आउसं! तेणं भगवया एवमक्खायं–इह खलु थेरेहिं भगवन्तेहिं दस बंभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता। जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजमबहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा ॥१॥

छाया—श्रुतं मया आयुष्मन्! तेन भगवता एवमाख्यातम्–इह खलु स्थविरैर्भगवद्भिर्दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि। यानि भिक्षुः श्रुत्वा निशम्य संयमबहुलः संवरबहुलः समाधिबहुलः गुप्तः गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तो विहरेत् ॥१॥

॥ सोलहवा अध्ययन प्रारंभ ॥

पन्द्रहवें अध्ययन का व्याख्यान हुवा, अब सोलहवा अध्ययन प्रारंभ होता है। इस अध्ययन का सम्बन्ध पन्द्रहवें अध्ययन के साथ इस प्रकार है–पन्द्रहवें अध्ययन मे जो भिक्षुगुण वर्णित किये गये हैं वे ब्रह्मचर्य से युक्त भिक्षु के ही हो सकते है। तथा ब्रह्मचर्य जब तक ब्रह्मचर्यगुप्ति का परिज्ञान नहीं होता है तबतक सुदृढ नही होता है अतः उसकी दृढता निमित्त इस अध्ययन मे ब्रह्मचर्यगुप्तियों का कथन किया जायगा। इसी संबंध से आये हुए इस अध्ययन का यह सर्वप्रथम सूत्र है। 'सुयं मे' इत्यादि

સોળમા અધ્યયનનો પ્રારંભ—

પંદરમું અધ્યયન કહેવાઈ ગયું, હવે સોળમા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે આ અધ્યયનનો સંબંધ પંદરમા અધ્યયનની સાથે આ પ્રકારનો છે–પંદરમા અધ્યયનમાં ભિક્ષુના ગુણોનું જે વર્ણન કરવામાં આવેલ છે તે બ્રહ્મચર્યથી યુક્ત એવા ભિક્ષુઓનું જ હોઈ શકે છે તથા બ્રહ્મચર્યગુપ્તિનું પરિજ્ઞાન જ્યાં સુધી થતું નથી ત્યાં સુધી સુદૃઢ બ્રહ્મચર્ય પાળી શકાતું નથી આથી એની દૃઢતા માટે આ અધ્યયનમાં બ્રહ્મચર્યગુપ્તિઓનું કથન કરવામાં આવશે આ સંબંધથી આવેલા આ અધ્યયનનું આ સર્વ પ્રથમ સૂત્ર છે — "सुयं मे" ઇત્યાદિ।

टीका—'सुयं मे' इत्यादि।

सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामिनं प्रत्याह—हे आयुष्मन्! जम्बूः! भगवता=ज्ञानादिगुणयुक्तेन तेन=लोकत्रयप्रसिद्धेन तीर्थंकरेण ज्ञातपुत्रमहावीरेण एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यातम्=सकलजीवभाषापरिणामिन्या भाषया कथितम्। तन्मया श्रुतम्। यद्वा—'आउसतेण' इत्येकं पदम्, आवसता इति छाया। 'मया' इत्यस्य विशेषणम्। आ=शास्त्रमर्यादानुसारेण, गुरुकुलवासे वसता मया तत् श्रुतम्। भगवत्कथितमेवार्थं तवाग्रे वर्णयामि, न तु स्वमनीषया परिकल्प्येतिभावः। भगवता यदाख्यातं तदाह—इह=अस्मिन् प्रवचने खलु=निश्चयेन स्थविरैः=पूर्वकालिकैः भगवद्भिः=समग्रैश्वर्यादि गुणयुक्तैस्तीर्थंकरैः दश=दशसंख्यकानि ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि=ब्रह्म=कामसेवनत्यागस्तत्र चरणं ब्रह्मचर्यं, तस्मिन् समाधिः=सम्यग

सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कह रहे हैं कि (आउस—आयुष्मन्) हे आयुष्मन्! (भगवया—भगवता) ज्ञानादिक गुणों से युक्त (तेण—तेन) उन लोकत्रय प्रसिद्ध ज्ञातपुत्र तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुने (एवमक्खाय—एवमाख्यातम्) सकल जीवों की भाषा मे परिणमित होनेवाली अपनी दिव्यवाणी द्वारा इस—वक्ष्यमाण—प्रकार से कहा सो वह (मे सुयं—मया श्रुतम्) मैने सुना—अथवा—(आउसतेण) यह एक पद भी हो सकता है इस की छाया "आवसता" ऐसी होती है इसका अर्थ "आ-शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार-गुरुकुल मे निवास करनेवाले मैने" ऐसा होता है। इससे सुधर्मास्वामी का यह अभिप्राय प्रकट होता है कि वे जो कुछ जम्बूस्वामी से कह रहे हैं वह अपनी ओर से नही कह रहे है किन्तु महावीर प्रभु से उन्हों ने जैसा सुना है वैसा ही वे जम्बूस्वामी से प्रकट कर कह रहे है। (इह खलु थेरेहिं भगवतेहिं दसबंभचेर समाहिट्ठाणा पण्णत्ता-

અન્વયાર્થ—સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહી રહ્યા છે કે, આયુષ્મન્! भगवया—भगवता જ્ઞાનાદિક ગુણોથી યુક્ત तेण—तेन એ ત્રણ લોકમ પ્રસિદ્ધ જ્ઞાનપુત્ર તીર્થંકર શ્રી મહાવીર પ્રભુએ एवमक्खाय—एवमाख्यातम् સકળ જીવોની ભાષામા પરિણમિત થનારી પોતાની દિવ્ય વાણી દ્વારા આ વક્ષ્યમાણ પ્રકારથી કહ્યુ તે मे सुय—मया श्रुतम् મે સાભળ્યુ અથવા—आउसतेण—આ એક પદ પણ થઇ શકે છે આની છાયા "आवसता" એવી થાય છે આનો અર્થ "આ-શાસ્ત્રીય મર્યાદા અનુસાર ગુરુકુળમા નિવાસ કરનાર મે" એવો થાય છે આથી સુધર્માસ્વામીનો એ અભિપ્રાય પ્રગટ થાય છે કે, તેઓ જે કાંઈ જમ્બૂસ્વામીને કહી રહ્યા છે તે પોતાના તરફથી ન બોલતા પરતુ મહાવીર પ્રભુ પાસેથી તેમણે જે કાંઈ સાભળેલ છે તેજ પ્રમાણે પ્રગટ કરતા જમ્બૂસ્વામીને કહી રહેલ છ इह खलु थेरेहिं भगवतेहिं दसबभ

समाधान-त्रिकरणत्रियोगैः प्रशस्तभावेन तत्समाराधनम्, तस्य स्थानानि=कारणानि प्रज्ञप्तानि=प्ररूपितानि। यानि ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि=श्रुत्वा=गुरुमुखादाकर्ण्य 'निशम्य=अर्थतोऽवधार्य भिक्षुः=कृतकारितानुमोदितपरिहारेण निर्दोषभिक्षाग्रहणशीलः, यद्वा-अष्टविधकर्मभेदनशीलो मुनिः 'संजमबहुले' संयमबहुलः-संयमः=सकलसावद्यविरति-लक्षणस्तम् विशुद्ध विशुद्धतरादिपरिणामक्रमेण बहु=बहु-सम्यक् यथा स्यात्तथा लाति=गृह्णातीति संयमबहुलः, यद्वा-बहुलः=विशुद्ध विशुद्धतरादिक्रमेण उत्तरोत्तरस्थानप्राप्त्या प्रचुरः संयमः=सकलसावद्यविरति-लक्षणो यस्य स तथा, प्रवर्धमानसंयमपरिणामवान् इत्यर्थः। अत एव-संवरबहुलः संव्रियते-कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन परिणामेन सः संवरः, बहुलः=प्रचुरः संवरः=आश्रवद्वारनिरोधलक्षणो यस्य स तथा, प्रवर्धमानास्रव

इह खलु स्थविरैः भगवद्भिः दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि) वे कहते हैं कि इस प्रवचन में निश्चय से भूतकाल के तीर्थंकर देवोंने कि जो समस्त ऐश्वर्य आदि गुणों से संपन्न थे दश ब्रह्मचर्य के समाधिस्थान प्ररूपित किये हैं। काम सेवन का त्याग करना इसका नाम ब्रह्म है। इस ब्रह्म मे जो लवलीन रहता है उसका नाम ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का त्रिकरण एवं त्रियोगों द्वारा जो सम्यक् प्रकारसे आराधन किया जाता है उसका नाम ब्रह्मचर्य-समाधि है-अर्थात् मन वचन काय एवं कृतकारित अनुमोदना से ब्रह्मचर्य का संरक्षण ही ब्रह्मचर्य समाधि है। इस ब्रह्मचर्य की समाधि के स्थान दश है। (जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजम बहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी सया अप्पमत्त विहरेज्जा-यानि भिक्षुः श्रुत्वा निशम्य संयमबहुल संवरबहुल समाधि-

थेरे समाहिट्ठाणा पण्णत्ता-इह खलु स्थविरैः भगवद्भिः दश ब्रह्मचर्यस्थानानि प्रज्ञप्तानि तेओ कहे छे के, आ प्रवचनमा निश्चयथी भूतकाळना तीर्थंकर देवोए के जे, समस्त ऐश्वर्य आदि गुणोथी संपन्न हता तेमणे ब्रह्मचर्यना दश समाधी स्थान प्ररुपित करेल छे काम सेवननो परित्याग करवो तेनु नाम ब्रह्म छे ते ब्रह्ममा लवलीन थवु तेनु नाम ब्रह्मचर्य छे ब्रह्मचर्यनु त्रण करण अने त्रण योगथी सम्यक् प्रकारथी आराधन कराय छे तेनु नाम ब्रह्मचर्य समाधी छे अर्थात्—मन, वचन, काया तेमज करवा कराववानी अनुमोदनाथी ब्रह्मचर्यनु संरक्षण ज ब्रह्मचर्य समाधी छे ब्रह्मचर्यनी समाधीना दश स्थान छे जे भिक्खु सोच्चा निसम्म संजमबहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारि सया अप्पमत्ते विहरेज्जा-यानि भिक्षुः श्रुत्वा निशम्य संयमबहुल संवरबहुल समाधिबहुल गुप्त गुप्तेन्द्रिय

निरोधपरिणामत्वानित्यर्थः। अत एव-समाधिबहुलः=बहुल'=प्रचुर समाधिश्चित्त स्वास्थ्य यस्य स तथा प्रवर्धमानचित्तस्वास्थ्ययसपन्नइत्यर्थः। अत्र सर्वत्र 'बहुल' शब्दस्य आर्षत्वात्परनिपातः। तथा-गुप्तः=मनोवाक्कायमयोगैरसयमस्थानेभ्यो रक्षित, गुप्तित्रययुक्तइत्यर्थः। अतएव-गुप्तेन्द्रियः-गुप्तानि=स्व स्व विषयप्रवृत्तितो निरुद्धानि इन्द्रयाणि=श्रोत्रादीनि येन स तथा-वशीकृतेन्द्रिय इत्यर्थः। अत एव-गुप्तब्रह्मचारी, अखण्डब्रह्मचर्यधारक इत्यर्थः, अप्रमत्त=प्रमादरहित सन्

बहुलः गुप्त गुप्तेन्द्रियः गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तो विहरेत्) इन ब्रह्मचर्य के समाधिस्थानों को निर्दोष भिक्षा ग्रहणशील भिक्षु गुरुमुख से सुनकर और अर्थरूप से उनको हृदय में धारण कर सयमबहुल बनजाता है। सकल सावद्यकर्मोका त्याग करना इसका नाम सयम है।

इस सयम की उत्तरोत्तर विशुद्ध विशुद्धतर आदि परिणाम क्रम से वृद्धि करना सयमबहुलता है। अर्थात् सकलसावद्यविरतिरूप सयमके परिणामो की आगे २ हीनता न होकर प्रत्युत वृद्धि होते रहना सो सयमबहुलता है। वह जिस मे हो उसको सयमबहुल कहते हैं। जब आत्मा मे सयम की बहुलता होती है तब वह आत्मा सवरबहुल बन जाता है। कर्मो के आगमन के लिये द्वाररूप जो प्राणातिपातादिक पाप है, जिन परिणामो से रुकजाते है उनपरिणामो का नाम सवर है। अर्थात्-नवीन कर्मों के आने के द्वारका ढकना इसका नाम सवर है। जो भिक्षु आत्मा सवर की बहुलता से सदा युक्त होता है वही सवर

गुप्तब्रह्मचारि सदा अप्रमत्तो विहरेत् આ બ્રહ્મચર્યસમાધીસ્થાનોને નિર્દોષ ભિક્ષા ગ્રહણ કરવાવાળા ભિક્ષુ ગુરુ મુખથી સાભળીને અને અર્થરૂપથી તેને હૃદયમા ધારણ કરી, સયમબહુલ બની જાય છે સઘળા સાવદ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરવુ એનુ નામ સયમ છે આ સયમની ઉત્તરોત્તર વિશુદ્ધ-વિશુદ્ધતર આદિ પરિણામ ક્રમથી વૃદ્ધિ કરવી તે સયમબહુલતા છે અર્થાત્-સકલસાવદ્યવિરતિરૂપ સયમના પરિણામોની આગળ જતા હીનતા ન થવા પામે અને વૃદ્ધિ થતી રહે તેજ સયમબહુલતા છે જેનામા તેજ હોય તેને સયમબહુલતા કહે છે જ્યારે આત્મામા સયમની બહુલતા આવે છે ત્યારે તે આત્મા સવરબહુલ બની જાય છે કર્મોના આગમનના દ્વારરૂપ જે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ છે તે જે પરિણામોથી રોકાઇ જાય છે એ પરિણામોનુ નામ સવર છે અર્થાત્-નવીન કર્મોના દ્વારનુ ઢાકણુ એનુ નામ સવર છે જે ભિક્ષુ આત્મા સવરની બહુલતાથી સદા યુક્ત હોય છે તે સવર બહુલ છે જ્યારે આત્મામા

सदा=सर्वकाल विहरेत्=मोक्षमार्गे विचरेत्। अय भावः—साधुर्हि पूर्वं दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि शृणोति। ततो ब्रह्मचर्यपरिपालने स्थिरो भवति। उक्त च—

"सोच्चा जाणइ कल्लाण, सोच्चा जाणइ पावग।
उभयपि जाणइ सोच्चा, ज सेय त समायरे ॥१॥

छाया—श्रुत्वा जानाति कल्याण, श्रुत्वा जानाति पापकम्।
उभयमपि जानाति श्रुत्वा, यच्छ्रेयस्तत् समाचरेत् ॥१॥ इति।

बहुल है। जब आत्मा मे सवर की बहुलता आ जाती है तब वह समाधिबहुल होता है। उस भिक्षुका चित्तबिलकुल स्वस्थ हो जाता है। अशुभ सकल्प विकल्प ही चित्त की अस्वस्थता है। और यह अशुभ सकल्प विकल्प रूप अस्वस्थता आस्रव के निमित्त से होती रहती है। जब आत्मा आस्रव के अभावरूप सवर से सहित हो जाता है तब उस में विचारों द्वारा अस्वस्थता कैसे आ सकती है? अर्थात् नहीं आ सकती इस लिये व समाधिबहुल होता है, (गुप्तः) गुप्तपद यह प्रकट करता है कि वह भिक्षु आत्मा मन वचन एव काय इन तीनों को सदा सुरक्षित रखता है—उनको जरा भी असयम स्थानों की ओर नहीं जाने देता है। गुप्तब्रह्मचारी जब इन्द्रियों में फँसने की वृत्ति सर्वथा शात हो जाती है तब वह आत्मा अपने मैथुन विरमणरूप ब्रह्मभाव को नव गुप्तियोंद्वारा सदा सुरक्षित रखता रहता है अर्थात वह अखण्ड—ब्रह्मचर्यका धारक हो जाता है। इस तरह वह (अप्पमत्ते—अप्रमत्त) प्रमाद के भय से निर्मुक्त हुवा (सया विहरेज्जा—सदा विहरेत्) सर्वकालमुक्ति माग मे विचरण करता है।

સવરની બહુલતા આવી જાય છે ત્યારે તે સમાધીબહુલ થાય છે એ ભિક્ષુનુ ચિત્ત બીલકુલ સ્વસ્થ બની જાય છે અશુભ સકલ્પ વિકલ્પ જ ચિત્તની અસ્વસ્થતા છે અને એ અશુભ સકલ્પ વિકલ્પરૂપ અસ્વસ્થતા આસ્રવના નિમિત્તથી થતી રહે છે જ્યારે આત્મા આસ્રવના અભાવરૂપ સવરથી સહિત થઇ જાય છે ત્યારે તેમા વિચારો દ્વારા અસ્વસ્થતા કેમ આવી શકે? અર્થાત્ આવી શકતી નથી આ કારણે તે સમાધિબહુલ છે ગુપ્તપદ એ પ્રગટ કરે છે કે તે ભિક્ષુ આત્મા મન વચન અને કાયા આ ત્રણેને સદા સુરક્ષિત રાખે છે એને જરા પણ અસયમસ્થાનો તરફ જવા દેતા નથી ઇન્દ્રિયોમા ફસાવાની વૃત્તિ જ્યારે સર્વથી શાત બની જાય છે ત્યારે તે આત્મા પોતાના મૈથુન વિરમણરૂપ બ્રહ્મભાવને નવ ગુપ્તિઓ દ્વારા સદા સુરક્ષિત રાખતા રહે છે અર્થાત્ તે અખડ બ્રહ્મચર્યના ધારક બની જાય છે આ રીતે અપ્રમત્ત પ્રમાદના ભયથી નિર્મુક્ત થઇને સર્વકાળ મુક્તિ માર્ગમા વિચરણ કરે છે

एतेन 'सयमबहुल-त्वादि दशविधब्रह्मचर्यस्थानफलम्' इति सूचितम्। तदविना भावित्वात्तस्य। अविनाभावित्व हि-तदभावे तदभावत्वम्। इह दशविध ब्रह्म चर्यस्थान विना सयमबहुलत्वादेरभावात् तदप्यनेन बोधितम् ॥१॥

एव सुधर्मस्वामिवचन श्रुत्वा जम्बूस्वामी परिपृच्छति—

मूलम्—कयरे खलु ते थेरेहिं भगवतेहिं दस बभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णता? जे भिक्खू सोच्चा निसम्म सजमबहुले सवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिदिए गुत्त बभचारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा ॥२॥

छाया—कतराणि खलु तानि स्थविरैर्भगवद्भि दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि? यानि भिक्षुः श्रुत्वा निशम्य सयमबहुलः, सवरबहुल समाधिबहुलो गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तो विहरेत् ॥२॥

भावार्थ—साधु जब सर्व प्रथम ब्रह्मचर्य के दश समाधिस्थानों को सुनता तभी वह सर्व प्रकार से ब्रह्मचर्य के परिपालन करने मे स्थिर-होता है। कहा भी है—

"सोचा जाणइ कल्लाण, सोचा जाणइ पावग।
उभयपि जाणइ सोचा, ज सेय त समायरे॥"

आत्मा सुनकर ही तो कल्याण–पुण्य को जान सकता है, और सुनकर ही अकल्याण–पाप को जान सकता है। तथा दोनो बातों को भी सुनकर ही जान सकता है। इस लिये जिसमे अपना श्रेय हो उसी मे ही प्रवृत्ति करनी चाहिये। दशविध ब्रह्मचर्यस्थान के विना ये सयमबहुलता आदि बातें नहीं हो सकती है क्यों कि ये उसकी अविनाभाविनी है यह बात भी इसी सूत्र से बोधित होती है ॥१॥

ભાવાર્થ—સાધુ જ્યારે સહુ પ્રથમ બ્રહ્મચર્યના દશ સમાધિસ્થાનોને સાભળે છે ત્યારે તે સર્વપ્રકારથી બ્રહ્મચર્યનુ પરિપાલન કરવામા સ્થિર બને છે કહ્યુ પણ છે—

" सोच्चा जाणइ कल्लाण, सोच्चा जाणइ पावग।
उभयपि जाणइ सोच्चा, ज सेय त समायरे॥ "

આત્મા સાભળીને કલ્યાણ–પુણ્યને જાણી શકે છે અને સાભળીને જ અકલ્યાણ –પાપને જાણી શકે છે તથા બન્ને બાબતોને સાભળીને જ જાણી શકે છે આથી જેમા પોતાનુ શ્રેય હોય એમાજ પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ દશવિધ બ્રહ્મચર્યસ્થાનના વગર સયમમા બહુલતા આદિ વાતો આવી શકતી નથી કારણકે એ તેની અવિના ભાવિની છે આ વાત પણ આજ સૂત્રથી બોધિત થાય છે ॥૧॥

टीका—'कयरे' इत्यादि ।

हे भदन्त ! 'थेरेहिं' स्थविरैः 'भगवंतेहिं' भगवद्भिः 'पण्णत्ता' प्रज्ञप्तानि 'तानि' 'दस बंभचेरसमाहिट्ठाणा' दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि खलु 'कयरे' कतराणि=कानि सन्ति ? भिक्षुर्यानि श्रुत्वा निशम्य संयमबहुलः संवरबहुलः समाधिबहुलो गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्तब्रह्मचारी अप्रमत्तश्च सन् सदा विहरेत् ॥२॥

अब दशविध ब्रह्मचर्यस्थानों को सूत्रकार कहते हैं—

'कयरे खलु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—सुधर्मास्वामी के वचनों को सुनकर जम्बूस्वामी उनसे पूछते हैं कि–(थेरेहिं–भगवंतेहिं दस बंभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता कयरे खलु ते–स्थविरैः भगवद्भिः दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि तानि खलु कतराणि) स्थविर भगवंतोंने जो ब्रह्मचर्य के समाधिस्थान दस कहे हैं वे कौन से हैं कि (जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजमबहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा–यानि भिक्षु श्रुत्वा निशम्य संयमबहुलः संवरबहुलः समाधिबहुलः गुप्तः गुप्तेन्द्रियः गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तः विहरेत्) जिन को भिक्षु सुनकर तथा हृदय मे धारणकर संयमबहुल बन जाता है, संवरबहुल बन जाता है समाधिबहुल बन जाता है, गुप्त बन जाता है, गुप्तेन्द्रिय बन जाता है गुप्तब्रह्मचारी बन जाता है और सदा अप्रमत्त होकर मोक्षमार्ग में विचरण करता रहता है ॥२॥

હવે બ્રહ્મચર્યના દશવિધ સ્થાનોને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

"कयरे खलु" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—સુધર્માસ્વામીના વચનોને સાંભળીને જમ્બૂસ્વામી એમને પૂછે છે કે, थेरेहिं भगवंतेहिं दस बंभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता कयरे खलु ते–स्थविरैः भगवद्भिः दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि तानि खलु कतराणि સ્થવિર ભગવંતો એ બ્રહ્મચર્યના જે દશ સમાધીસ્થાન કહેલ છે તે ક્યા છે કે, जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजमबहुले संवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तेंदिए गुत्तबंभयारि सया अप्पमत्ते विहरेज्जा–यानि भिक्षु श्रुत्वा निशम्य संयमबहुलः संवरबहुलः समाधिबहुलः गुप्तः गुप्तेन्द्रियः गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तः विहरेत् જેને સાંભળીને તથા હૃદયમાં ધારણ કરીને ભિક્ષુ સંયમબહુલ બને છે સંવરબહુલ બની જાય છે સમાધિબહુલ બની જાય છે ગુપ્ત બને છે ગુપ્તેન્દ્રિય બની જાય છે ગુપ્તબ્રહ્મચારી બની જાય છે તથા સદા અપ્રમત્ત બનીને મોક્ષમાર્ગમાં વિચરણ કરતા રહે છે ॥૨॥

सुधर्मास्वामी माह—

मूलम्—इमे खलु ते थेरेहि भगवतेहि दस बभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता जे भिक्खू सोच्चा निसम्म संजमबहुले सवरबहुले समाहिबहुले गुत्ते गुत्तिदिए गुत्तबभयारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा ॥३॥

छाया—इमानि खलु तानि स्थविरैर्भगवद्भिर्दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि, यानि भिक्षु. श्रुत्वा निशम्य सयमबहुलः सवरबहुल' समाधिबहुल' गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्तब्रह्मचारी सदा अप्रमत्तो विहरेत् ॥३॥

टीका—'इमे खलु' इत्यादि—

हे जम्बूः! 'थेरेहिं' स्थविरै भगवद्भि प्रज्ञप्तानि=कथितानि तानि दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि खलु इमानि=वक्ष्यमाणानि सन्ति। शेष पूर्ववत् ॥३॥

जम्बूस्वामी के प्रश्न का उत्तर सुधर्मास्वामी इस सूत्र द्वारा देते हैं—

'इमे खलु०' इत्यादि

अन्वयार्थ—हे जम्बू! (थेरेहि भगवतेहिं दस बभचेर समाहिट्ठाणा पण्णत्ता—स्थविरैर्भगवद्भिर्दश ब्रह्मचर्य समाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि तानि खलु इमानि) स्थविर भगवतोने जो ब्रह्मचर्यसमाधि के दश स्थान प्ररूपित किये है वे ये है कि (जे भिक्खू सोच्चा०—यानि भिक्षु श्रुत्वा०) जिनको भिक्षु गुरुमुख से सुनकर और उनको हृदय में धारणकर सयमीजन अच्छी तरह सयम की आराधना करने वाले हो जाते है सवर तत्व से अच्छीतरह सुशोभित होने लगते है अच्छी तरह समाधि से सपन्न बन जाते है, गुप्त—मन वचन काया को गोपने वाले हो जाते है तथा गुप्तेन्द्रिय—इन्द्रियों को वश में कर लिया करते है एव गुप्त-

જમ્બૂસ્વામીના પ્રશ્નનો ઉત્તર સુધર્માસ્વામી આ સૂત્ર દ્વારા આપે છે

"इमे खलु" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે જમ્બૂ थेरेहिं भगवतेहिं दस बभचेरसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता—स्थविरैर्भगवद्भिः दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रज्ञप्तानि સ્થવિર ભગવતોએ બ્રહ્મચર્યસમાધિના જે દશસ્થાન પ્રરૂપિત કરેલ છે તે એ છે કે जे भिक्खू सोच्चा—यानि भिक्षु श्रुत्वा ભિક્ષુ ગુરુમુખથી સાભળીને અને એને હૃદયમા ધારણ કરીને સયમીજન સારી રીતે સયમની આરાધના કરવાવાળા બની રહે છે સવરતત્વથી સારી રીતે સુશોભિત બની જાય છે સમાધિમા સપૂર્ણપણે તત્પર બની રહે છે ગુપ્ત મન, વચન, કાયાને ગોપવાવાળા થઇ જાય છે તથા ગુપ્તેન્દ્રિય-ઇન્દ્રિયોને

तानि ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि निरूपयति—

मूलम्—तं जहा विवित्ताइ सयणासणाइं सेविज्जा से निग्गंथे। नो इत्थी पसुपडगसंसत्ताइ सयणासणाइं सेविता हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह—निग्गंथस्स खलु इत्थी पसुपडगसंसत्ताइ सयणासयाइ सेवामाणस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा, केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा, तम्हा नो इत्थीपसुपडगसंसत्ताइ सयणासणाइ सेविता हवइ से निग्गंथे ॥४॥

छाया तद्यथा-विविक्तानि शयनासनानि सेवेत स निर्ग्रन्थः। नो स्त्री पशुपण्डकसंसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति, स निर्ग्रन्थः। तत्कथमिति चेदाचार्य आह—निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेदं वा लभेत, उन्मादं वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत्, केवलिप्रज्ञप्ताद् धर्माद् वा भ्रंसेत। तस्मात् नो स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति, स निर्ग्रन्थः ॥४॥

टीका—'तं जहा' इत्यादि।

हे जम्बू! तद्यथा=तेषु प्रथमं समाधिस्थानमाह—'विवित्ताइ' इत्यादि—तानि दश ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि यथा सन्ति तथा प्रदर्शयामः—यः साधुः विवि-

---

ब्रह्मचारी होते हुए सदा बिना किसी प्रमाद के मोक्षमार्ग में विचरते हैं ॥३॥

अब उन्हीं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानों को सूत्रकार इस प्रकार प्रकट करते हैं—'तं जहा' इत्यादि।

हे जम्बू! उन दस ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानों में से प्रथम समाधिस्थान (तं जहा-तद्यथा) इस प्रकार है—जो साधु (विवित्ताइ सयणा-

---

वशमां करी લે છે આ રીતે ગુપ્ત બ્રહ્મચારી બનીને કોઈપણ પ્રકારના પ્રમાદ વગર તેઓ સદા મોક્ષમાર્ગમાં વિચરતા રહે છે ॥ ૩ ॥

હવે એ બ્રહ્મચર્યસમાધીસ્થાનોને સૂત્રકાર આ પ્રમાણે પ્રગટ કરે છે—"तं जहा" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે જમ્બૂ! એ દશ સમાધિસ્થાનોમાંથી પ્રથમ સમાધીસ્થાન तं जहा-तद्यथा આ પ્રમાણે કે-જે સાધુ विवित्ताइ सयणासयाइ सेविज्जा से

क्तानि=स्त्रीपशुपण्डकादि वर्जितानि, शयनासनानि, तत्र शयनानि=शय्या सम्तारका-दीनि, आसनानि=पीठफलकादीनि, उपलक्षणत्वात् स्थानानि=अन्यान्यपिवृक्षमूलादीनि रूपाणि च सेवेत, स निर्ग्रन्थो भवति । इत्थं विधिमुखेनाभिधाय निषेधमुखे नाह–'नो इत्थी' इत्यादि–यः साधुः स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि, तत्र–स्त्रियः= दिव्या मानुष्यो वा, पशवः=अजैडकादय, पण्डकाः=नपुंसकानि एतैः संसक्तानि= सहितानि शयनासनानि सेविता=उपभोक्ता भवति, स नो–न निर्ग्रन्थो भवति । स्त्री पशुपण्डकादि रहितस्थानस्यैव सेवनेन निर्ग्रन्थत्वं भवतीति यदुच्यते–तत्क-थम्=किमत्र कारणमिति शिष्यजिज्ञासा भवतिचेत्तत्र आचार्य आह–'निग्गंथस्स' इत्यादि–स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणः निर्ग्रन्थस्य ब्रह्मचर्ये खलु=निश्चयेन शङ्का वा=स्त्र्यादिभिरत्यन्तापहृतचित्ततया मिथ्यात्वोदये सति 'मैथुनसेवने नवलक्षसूक्ष्मजीवाना विराधना भवतीति' जिनोक्त सत्य वा मिथ्या

सयाइ सेविज्जा से निग्गंथे–विविक्तानि शयनासनानि सेवेत स निर्ग्रन्थ) विविक्त–स्त्री पशु पडक आदि से वर्जित–शयन–शय्या, सस्तारक आदि तथा आसन–पीठ फलक आदि तथा स्थान–जगह आदि को सेवन करता है वही निर्ग्रंथ कहलाता है। इस प्रकार विधिमुख से कथन कर सूत्रकार अब इसी विषय को निषेधमुख से प्रतिपादित करते हैं–'नो' इत्यादि। (नो इत्थी पसु पडग संसत्ताइ सयणासयाइ सेवित्ता हवइ से निग्गंथे–नो स्त्री पशु पडकसंसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति स निर्ग्रन्थः) जो साधु शयन और आसन आदिको स्त्री पशु पडक आदि से ससक्त हुए सेवित करता है—दिव्य स्त्री, मानुष स्त्री, पशु स्त्री, पडक–नपुसक इनसे सहित शयनआसन आदि का उपभोग करता है– वह निर्ग्रन्थ नहीं है। स्त्री पशु पडक आदि से ससक्त पीठ फलक आदि के सेवन करने से निर्ग्रन्थ क्यों नहीं होता है इस बात का समाधान

निग्गंथे–विविक्तानि शयनासनानि सेवेत स निर्ग्रन्थ विविक्त–स्त्री, पशु, पंडक आदिथी वर्जित–शयन–शय्या संस्तारक आदि तथा आसन–पीठ फलक आदि तथा स्थान–जग्या आदिने सेवन करे छे तेज निर्ग्रंथ कहेवाय छे आ प्रमाणे विधि मुखथी कहीने सूत्रकार हवे एज विषयने निषेध मुखथी प्रतिपादित करे छे "नो" ईत्यादि। नो इत्थी पसुपडग ससत्ताइ सयणासयाइ सेविता हवइ से निग्गंथे–नो स्त्रीपशुपडक संसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति स निर्ग्रंथ जे साधु शयन अने आसन आदिने स्त्री, पशु, पंडक आदिथी दूर रहीने सेवन करे छे दिव्य स्त्री, मानुष स्त्री, पशु स्त्री, पंडक–नपुंसक एमनाथी सहित शयन–आसन आदिनो उपभोग करे छे ते निर्ग्रंथ नथी स्त्री, पशु, पंडक आदिथी संसक्त पीठ फलक

वेत्यादिरूपा शङ्का समुत्पद्येत । तथा 'कंखा वा'=काङ्क्षा स्त्र्यादिसेवनाभिलाषरूपा काङ्क्षा वा समुत्पद्येत। विचिकित्सा 'एतावद्धर्माचरणकष्टस्य फलं भविष्यति न वा ? इत्येवं स्वर्गापवर्गसुखप्राप्तिसंशयरूपा वा समुत्पद्येत। तथा—भेद=चारित्र विनाश वा लभेत, उन्माद=विषयाभिलाषातिरेकाच्चित्तविक्षेप वा 'पाउणिज्जा'

सूत्रकार "त कहमिति चे आयरिआह—तत्कथमिति चेत् आचार्य.आह" इस सूत्रांश से करते हैं। इसमे "तत्कथम" यह शका के स्थान मे आया है "इति चेत आचार्य आह" यह उत्तर के स्थान मे आया है—(निग्गथस्स खलु इत्थी पसु पडग ससत्ताइ सयणासणाइ सेवमानस्स बभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा— निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्री पशु पडक ससक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत— भेय वा लभेज्जा उम्माय वा पाउणिज्जा दीह कालिय वा रोगायक हवेज्जा केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भसेज्जा भेद वा लभेत उन्माद वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिक वा रोगातक भवेत् केवलि प्रज्ञप्तात् वा धर्मात् वा भ्रसेत) उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं कि—जो निर्ग्रन्थ स्त्रीपशु पडक से ससक्त शयन एव आसन आदि का उपभोग करता है उस निर्ग्रन्थ को अपने ब्रह्मचर्य मे निश्चय से शका उत्पन्न हो सकती है—परस्त्रीद्वारा अपहृत चित्त होने पर मिथ्यात्व के उदय से स्वय को इस प्रकार की शका हो सकती है कि—'भगवान् ने जो

આદિનુ સેવન કરવાથી નિર્ગ્રંથ કેમ નથી બનતા આ વાતનુ સમાધાન સૂત્રકાર "त कहमिति चे आयरिआह—तत्कथमिति चेत् आचार्य. प्राह" આ સૂત્રાશથી કહે છે તેમા "तत्कथम्" એ શકાના સ્થાનમા આવેલ છે "इतिचेत् आचाय आह" એ ઉત્તરના સ્થાનમા આવેલ છે ઉત્તર આપતા આચાર્ય કહે છે કે, निग्गथस्स खलु इत्थी पसुपडग ससत्ताइ सेवमानस्स बभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा—निग्रथस्य खलु स्त्री पशुपडक ससक्तानि शयनासनानि सेवमा नस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शका वा काक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत् । भेय वा लभेज्जा उम्माय वा पाउणिज्जा दीहकालिय वा रोगायक हवेज्ज—भेद वा लभेत उन्माद वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिक वा रोगातक भवेत् । જે નિર્ગ્રંથ સ્ત્રી, પશુ, પડકથી સસક્ત શયન અને આસન આદિનો ઉપભોગ કરે છે એ નિર્ગ્રંથને પોતાના બ્રહ્મચર્યમા નિશ્ચયથી શકા ઉત્પન્ન થાય ? પરસ્ત્રી દ્વારા અપહૃતચિત્ત થવાથી મિથ્યાત્વના ઉદયના કારણે પોતાને આ પ્રકારની શકા થઈ શકે છે કે, ભગવાને

क्तानि=स्त्रीपशुपण्डकादि वर्जितानि, शयनासनानि, तत्र शयनानि=शय्या सम्तारकादीनि, आसनानि=पीठफलकादीनि, उपलक्षणत्वात् स्थानानि=अन्यन्यपिवृक्षमूलादीनि रूपणि च सेवेत, स निर्ग्रन्थो भवति। इत्थं विधिमुखेनाभिधाय निषेधमुखेनाह–'नो इत्थी' इत्यादि–यः साधु स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि, तत्र–स्त्रिय = दिव्या मानुष्यो वा, पशवः=अजैडकादयः, पण्डकाः=नपुंसकानि एतैः संसक्तानि= सहितानि शयनासनानि सेविता=उपभोक्ता भवति, स नो–न निग्रन्थो भवति। स्त्री पशुपण्डकादि रहितस्थानस्यैव सेवनेन निग्रन्थत्वं भवतीति यदुच्यते–तत्कथम्=किमत्र कारणमिति शिष्यजिज्ञासा भवतिचेत्तत्र आचार्य आह–'निग्गंथस्स' इत्यादि–स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणः निर्ग्रन्थस्य ब्रह्मचर्ये खलु=निश्चयेन शङ्का वा=स्त्र्यादिभिरत्यन्तापहृतचित्ततया मिथ्यात्वोदये सति 'मैथुनसेवने नवलक्षसूक्ष्मजीवाना विराधना भवतीति' जिनोक्त सत्य वा मिथ्या

सयाइ सेविज्जा से निग्गंथे–विविक्तानि शयनासनानि सेवेत स निर्ग्रंथः) विविक्त–स्त्री पशु पंडक आदि से वर्जित–शयन–शय्या, सस्तारक आदि तथा आसन–पीठ फलक आदि तथा स्थान–जगह आदि को सेवन करता है वही निर्ग्रंथ कहलाता है। इस प्रकार विधिमुख से कथन कर सूत्रकार अब इसी विषय को निषेधमुख से प्रतिपादित करते है–'नो' इत्यादि। (नो इत्थी पसु पंडग संसत्ताइं सयणासयाइ सेवित्ता हवइ से निग्गंथे–नो स्त्री पशु पंडक संसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति स निर्ग्रन्थः) जो साधु शयन और आसन आदिको स्त्री पशु पंडक आदि से संसक्त हुए सेवित करता है—दिव्य स्त्री, मानुष स्त्री, पशु स्त्री, पंडक–नपुंसक इनसे सहित शयनआसन आदि का उपभोग करता है–वह निर्ग्रन्थ नहीं है। स्त्री पशु पंडक आदि से संसक्त पीठ फलक आदि के सेवन करने से निर्ग्रन्थ क्यों नही होता है इस बात का समाधान

निग्गंथे–विविक्तानि शयनासनानि सेवेत स निर्ग्रन्थ વિવિક્ત–સ્ત્રી, પશુ, પંડક આદિથી વર્જીત–શયન–શય્યા સંસ્તારક આદિ તથા આસન–પીઠ ફલક આદિ તથા સ્થાન–જગ્યા આદિને સેવન કરે છે તેજ નિર્ગ્રંથ કહેવાય છે આ પ્રમાણે વિધિ મુખથી કહીને સૂત્રકાર હવે એજ વિષયને નિષેધ મુખથી પ્રતિપાદિત કરે છે "नो" ઈત્યાદિ। नो इत्थी पसुपडग संसत्ताइ सयणासयाइ सेविता हवइ से निग्गंथे–नो स्त्रीपु पशुपडक संसक्तानि शयनासनानि सेविता भवति स निर्ग्रंथ જે સાધુ શયન અને આસન આદિને સ્ત્રી, પશુ, પંડક આદિથી દૂર રહીને સેવન કરે છે દિવ્ય સ્ત્રી, માનુષ સ્ત્રી, પશુ સ્ત્રી, પંડક–નપુંસક એમનાથી સહિત શયન–આસન આદિનો ઉપભોગ કરે છે તે નિર્ગ્રંથ નથી સ્ત્રી, પશુ, પંડક આદિથી સંસક્ત પીઠ ફલક

वेत्यादिरूपा शङ्का समुत्पद्येत। तथा 'कंखा वा'=काङ्क्षा स्त्र्यादिसेवनाभिलाषरूपा काङ्क्षा वा समुत्पद्येत। विचिकित्सा 'एतावद्धर्माचरणकष्टस्य फलं भविष्यति न वा?' इत्येवं स्वर्गापवर्गसुखप्राप्तिसंशयरूपा वा समुत्पद्येत। तथा–भेदं=चारित्र विनाशं वा लभेत, उन्मादं=विषयाभिलाषातिरेकाच्चित्तविक्षेपं वा 'पाउणिज्जा'

सूत्रकार "तं कहमिति चे आयरिआह–तत्कथमितिचेत् आचार्य प्राह" इस सूत्रांश से कहते हैं। इसमें "तत्कथम" यह शंका के स्थान में आया है "इति चेत आचार्य आह" यह उत्तर के स्थान में आया है–(निग्गंथस्स खलु इत्थी पसु पंडग संसत्ताइं सयणासणाइं सेवमानस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा–निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्री पशु पंडक संसक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत–भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहं कालियं वा रोगायंकं हवेज्जा केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं वा रोगातंकं भवेत् केवलि प्रज्ञप्तात् वा धर्मात् वा भ्रंसेत) उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं कि–जो निर्ग्रन्थ स्त्रीपशु पंडक से संसक्त शयन एवं आसन आदि का उपभोग करता है उस निर्ग्रन्थ को अपने ब्रह्मचर्य में निश्चय से शंका उत्पन्न हो सकती है–परस्त्रीद्वारा अपहृत चित्त होने पर मिथ्यात्व के उदय से स्वयं को इस प्रकार की शंका हो सकती है कि–'भगवान् ने जो

આદિનું સેવન કરવાથી નિર્ગ્રંથ કેમ નથી બનતા આ વાતનું સમાધાન સૂત્રકાર "तं कहमिति चे आयरिआह–तत्कथमिति चेत् आचार्य प्राह" આ સૂત્રાંશથી કહે છે તેમાં "तत्कथम्" એ શંકાના સ્થાનમાં આવેલ છે "इतिचेत् आचार्य आह" એ ઉત્તરના સ્થાનમાં આવેલ છે ઉત્તર આપતાં આચાર્ય કહે છે કે, निग्गंथस्स खलु इत्थी पसुपंडग संसत्ताइं सेवमानस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा–निर्ग्रंथस्य खलु स्त्री पशुपंडक संसक्तानि शयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत्। भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्ज–भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं वा रोगातंकं भवेत्। જે નિર્ગ્રંથ સ્ત્રી, પશુ, પંડકથી સંસક્ત શયન અને આસન આદિનો ઉપભોગ કરે છે એ નિર્ગ્રંથને પોતાના બ્રહ્મચર્યમાં નિશ્ચયથી શંકા ઉત્પન્ન થાય છે પરસ્ત્રી દ્વારા અપહૃતચિત્ત થવાથી મિથ્યાત્વના ઉદયના કારણે પોતાને આ પ્રકારની શંકા થઈ શકે છે કે, ભગવાને

माप्नुयात् । तथा स्त्रीपशुपण्डकससक्तशयनासनानि सेवमानस्य ब्रह्मचारिणः कामाधिक्यात् दीर्घकालिकः=दीर्घकालभावि रोगातङ्कं वा, तत्र रोगः=दाहज्वरजीर्णज्वरादिकः, आतङ्कः=शीघ्रघाती हृदयशूल–मस्तकशूल–कर्णशूलादिकः, भवेत् । कामाधिक्यात्कामिना दश भावाः=अवस्था भवन्ति । दशभावाश्चेत्थम्—

'प्रथमे जायते चिन्ता, द्वितीये द्रष्टुमिच्छति ।
तृतिये दीर्घनिःश्वासश्चतुर्थे ज्वर आविशेत् । १ ॥

मैथुन सेवन करने में नौलाख सूक्ष्म जीवों की विराधना होना कहा है सो सत्य है अथवा असत्य है । कांक्षा–साधु को स्त्र्यादि सेवन करनेरूप अभिलाषा भी उत्पन्न हो सकती है। विचिकित्सा–साधु को ऐसा संशय हो सकता है कि इतने धर्माचरण करने में जो मैं कष्ट सहन कर रहा हू सो उसका फल स्वर्ग अपवर्ग संबन्धी सुख मुझे प्राप्त होगा या नहीं । भेद–चारित्र विनाश का नाम भेद है–स्त्री पशुपंडक आदि से संसक्त शयनासन आदि सेवन करने वाले साधु का चारित्र से पतन भी हो सकता है । इस तरह करनेवाले साधु के चित्त में विषयाभिलाषा के अतिरेक से उन्माद–पागलपना भी हो सकता है तथा दीर्घकालिक रोगों का एव आतकों का उपद्रव भी हो सकता है । दाहज्वर जीर्णज्वर आदि का नाम रोग एव सद्यःप्राणापहारी हृदय-शूल, मस्तकशूल कर्णशूल आदि का नाम आतक है । काम की अधिकता से कामीजनों की दश प्रकार की अवस्थाए होती हैं–वे इस प्रकार से हैं–

જે મૈથુન સેવન કરવામા નવલાખ સૂક્ષ્મ જીવોની વિરાધના થતી હોવાનુ કહેલ છે તે સત્ય છે કે અસત્ય છે? શકા-સાધુને સ્રીઆદિ સેવન કરવારૂપ અભિલાષા પણ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે વિચિકિત્સા-સાધુને એવો સશય થઈ શકે છે કે, આટલુ ધર્માચરણ કરવામા હુ કષ્ટ સહન કરી રહ્યો છુ તો તેનુ ફળ સ્વર્ગ, અપવર્ગ સબધિ સુખ મને પ્રાપ્ત થશે કે નહીં ? ભેદ-ચારિત્ર વિનાશનુ નામ ભેદ છે સ્રી પશુ, પડક આદિથી સસકત શયન-આસન આદિ સેવન કરવાવાળા સાધુનુ ચારિત્રથી પતન પણ થઈ શકે છે આ પ્રમાણે કરવાવાળા સાધુના ચિત્તમા વિષયાભિલાષાના અતિરેકથી ઉન્માદ-પાગલપણુ પણ આવી જાય છે તથા દીર્ઘકાલીક રોગોને તેમજ આતકોને ઉપદ્રવ પણ થઈ જાય છે દાહજ્વર, જીર્ણજ્વર આદિનુ નામ રોગ અને સદ્ય પ્રાણાપહારી હૃદયશૂળ, મસ્તકશૂળ, કર્ણશૂળ, આદિનુ નામ આતક છે કામની અધિકતાથી કામીજનોની દશ પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે તે આ પ્રમાણે છે–

पञ्चमे दह्यते गात्रं, षष्ठे भक्तं न रोचते।
सप्तमे च भवेत्कम्प उन्मादश्चाष्टमे भवेत्' ॥ २ ॥

नवमे प्राणसन्देहो दशमे मरणं भवेत्। इति। तथा-अतिक्लिष्ट कर्मोदयेन केवलिप्रज्ञप्तात्=सर्वज्ञोपदिष्टात् धर्मात्=श्रुतचारित्ररूपाद् वा भ्रंसेत=भ्रष्टो भवेत्, यत एव 'तम्हा' तस्मात्कारणात् यः साधुः स्त्री पशु पण्डक संसक्तानि शयनासनानि सेविता=उपभोक्ता नो भवति, स निर्ग्रन्थ उच्यते ॥४॥

॥ इति प्रथमं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानम् ॥

"प्रथमे जायते चिन्ता, द्वितीये द्रष्टुमिच्छति।
तृतीये दीर्घनिश्वास, श्चतुर्थे ज्वर आविशेत् ॥१॥
पञ्चमे दह्यते गात्रम्, षष्ठे भक्तं न रोचते।
सप्तमे च भवे कम्प, उन्मादश्चाष्टमे भवेत् ॥ २ ॥
नवमे प्राणसंदेहो, दशमे मरणं भवेत् ॥"

प्रथम अवस्था मे कामिनी विषयक विचार, द्वितीय मे उसको देखने की इच्छा, तृतीय मे दीर्घनिश्वासों का आना, चतुर्थ मे ज्वर का होजाना, पञ्चम में शरीर मे दाह होने लगना, षष्ठ मे भोजन मे अरुचि हो जाना, सप्तम मे शरीर कापने लगना, अष्टम मे उन्माद होना, नवम मे प्राणो का संदेह और दशमी अवस्था मे मरण होना ये काम की दश अवस्थाएँ है। तथा जो साधु स्त्री पशु पडक संसक्त शयन आसन का सेवन करता है वह केवलि प्रज्ञप्त श्रुतचारित्ररूप धर्म से भी भ्रष्ट-पतित हो जाता है। (तम्हा-तस्मात्) इस लिए साधु को चाहिये

"प्रथमे जायते चिन्ता, द्वितीये द्रष्टुमिच्छति।
तृतीये दीर्घनिश्वास श्चतुर्थे ज्वरआविशेत् ॥ १ ॥
पचमे दह्यते गात्रम् पष्ठे भक्तं न रोचते।
सप्तमे च भवेत्कम्प, उन्मादश्चाष्टमे भवेत् ॥ २ ॥
नवमे प्राणसंदेहो, दशमे मरणं भवेत् ॥"

પ્રથમ અવસ્થામાં કામિની વિષયક વિચાર, બીજી અવસ્થામાં એને જોવાની ઇચ્છા ત્રીજી અવસ્થામાં દીર્ઘનિશ્વાસોનું આવવું ચોથી અવસ્થામાં જ્વરનું આવવું, પાંચમી અવસ્થામાં શરીરમાં દાહ થવા માંડવો, છઠ્ઠી અવસ્થામાં ભોજન અરુચિ થવી સાતમી અવસ્થામાં શરીરનું કાંપવા માંડવું આઠમી અવસ્થામાં ઉન્માદ થવો, નવમી અવસ્થામાં પ્રાણુ માટે સંદેહ થવો, અને દશમી અવસ્થામાં મરણુ થવું આ પ્રમાણે કામની દશ અવસ્થા છે જે સાધુ સ્ત્રી, પશુ પંડક સંસક્ત શયન આસનનું સેવન કરે છે તે કેવલી પ્રજ્ઞપ્ત શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મથી પણુ ભ્રષ્ટ-પતિત થઈ જાય છે

चरणस्य परलोके फलं भविष्यति न वा ? इत्येवं स्वर्गापवर्गसुखसमाप्तिसंशयरूपा वा समुत्पद्येत। भेदं वा लभेतेत्यादीनां व्याख्या पूर्ववद् बोध्या। अत एव तस्मात् खलु=निश्चयेन निर्ग्रन्थः स्त्रीणां कथां नो कथयेत् ॥५॥

॥ इति द्वितीयं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानम् ॥

अथ तृतीयमाह—

मूलम्—णो इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह—निग्गंथस्स खलु इत्थीहिं सद्धिं

निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीणां कथां कथयतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत) जो साधु इस प्रकार की कथा करता है उस ब्रह्मचारी साधु के ब्रह्मचर्य मे साधु को स्वयं मे इसका सेवन करू या नहीं इस प्रकार का संशय हो सकता है। कांक्षा-मैथुन करने की इच्छा उत्पन्न हो सकती है। विचिकित्सा-इस प्रकार के कठिन धर्माचरण का परलोक मे फल होता होगा या नहीं इस प्रकार की स्वर्ग और अपवर्ग की सुखप्राप्ति रूप संशय भी उत्पन्न हो सकता है। इसी तरह (भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा केवलि पण्णत्ताओ धम्माओ वा भंसेज्जा-भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं रोगातंकं वा भवेत् केवलिप्रज्ञप्तात् धर्मात् वा भ्रंसेत) इन समस्त पदों का अर्थ पीछे जैसा लिखा गया है वैसा ही यहां पर लगा लेना चाहिये। (तम्हा नो इत्थीणं कहं कहेज्जा-तस्मात् नो स्त्रीणां कथां कथयेत्) इसलिये निर्ग्रन्थ साधु को स्त्री कथा नहीं करनी चाहिये ॥ ५ ॥

चेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जेज्जा-ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत એ બ્રહ્મચારી સાધુના બ્રહ્મચર્યમાં-હું આનું સેવન કરૂં, કે નહીં ? આવી જાતનો સંશય થઈ જાય છે

શંકા-મૈથુન કરવાની ઈચ્છા પણ આથી જાગી જાય છે ચિકિત્સા આ પ્રકારના કઠણ ધર્માચરણથી પરલોકમાં એનું ફળ મળશે કે નહીં ? આ પ્રકારની સ્વર્ગ અને ઉપવર્ગની સુખપ્રાપ્તિરૂપ સંશય પણ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ રીતે भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायंकं वा हवेज्जा-केवलि पण्णत्ताओ धम्माओ वा भंसित्ता-भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं रोगातंकं वा भवेत् केवलिप्रज्ञप्तात् धर्मात् वा भ्रंसेत એ સમસ્ત પદોનો અર્થ પાછળ જે પ્રમાણે કહેવાયેલ છે એવો જ અહીં પણ સમજી લેવો જોઈએ આ માટે નિર્ગ્રંથ સાધુએ સ્ત્રી કથા ન કરવી જોઈએ ॥૫॥

सन्निसेज्जागयस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेयं वा लभेज्जा, उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा, केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भंसिज्जा, तम्हा खलु नो निग्गंथे इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जाए विहरिज्जा ॥३॥

छाया—नो स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहर्त्ता भवति स निर्ग्रन्थः । तत्कथमिति चेदाचार्य आह—निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेदं वा लभेत, उन्मादं वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत । केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रंसेत । तस्मात्खलु नो निर्ग्रन्थः स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहरेत् ।३॥

टीका—'णो इत्थीहिं' इत्यादि ।

यः साधुः स्त्रीभिः सार्द्धं=सह सन्निपद्यागतः—सन्निषीदन्ति=सम्यगुपविशन्ति जना अस्यामिति सन्निपद्या=पट्टिकापीठफलकचतुष्कमयासनम्, तां गतः=तत्रोपविष्टः सन् विहर्त्ता=अवस्थाता नो भवति स निर्ग्रन्थो भवति । उपलक्षणत्वात्-यत्र स्थाने स्त्री पूर्वमुपविष्टा आसीत्तत्र स्थाने घटिकाद्वयं यावदुपवेष्टा न भवति स निर्ग्रंथो भवति ॥३॥

॥ इति तृतीयं समाधिस्थानम् ॥

तृतीय ब्रह्मचर्यसमाधि स्थान इस प्रकार है—'णो इत्थीहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो साधु (इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता नो हवइ—स्त्रीभिः सार्धं सन्निपद्यागतो विहर्ता नो भवति) स्त्रीयों के साथ सन्निपद्या—पट्टिका, पीठ, फलक—चौकी आदि आसनो पर नहीं बैठता है (से निग्गंथे—स निर्ग्रन्थः) वही निर्ग्रन्थ साधु है । इसी तरह जिस स्थान पर पहिले स्त्री बैठ चुकी हो उस स्थान पर जो दो घडी के बाद बैठता है इसके पहिले नहीं वह निर्ग्रन्थ साधु है । एक आसन

त्रीजुं ब्रह्मचर्य समाधिस्थान आ प्रकारनु छे—

"णो इत्थीहिं" ईत्यादि !

जे साधु इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता नो हवइ—स्त्रीभिः सार्धं सन्निपद्या गतो विहर्ता नो भवति स्त्रीयोनी साथे सन्निपद्या—पट्टिका, पीठ, फलक, चोकी, आदि आसनो पर बेसता नथी से निग्गंथे—स निर्ग्रन्थः एज निर्ग्रंथ साधु छे आ प्रमाणे जे स्थान उपर पहेला स्त्री बेठेल होय, ए स्थान उपर बे घडी पछी ज तेओ बेसे छे ते पहेला नही तेज निर्ग्रंथ साधु छे एक आसन उपर स्त्रीनी

चरणस्य परलोके फलं भविष्यति न वा ? इत्येवं स्वर्गापवर्गसुखप्राप्तिसंशयरूपा वा समुत्पद्येत। भेदं वा लभेतेत्यादीनां व्याख्या पूर्ववद् बोध्या। अत एव तस्मात् खलु=निश्चयेन निर्ग्रन्थः स्त्रीणां कथां नो कथयेत् ॥५॥

॥ इति द्वितीयं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानम् ॥

अथ तृतीयमाह—

मूलम्—णो इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह—निग्गंथस्स खलु इत्थीहिं सद्धिं

निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीणां कथां कथयतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत) जो साधु इस प्रकार की कथा करता है उस ब्रह्मचारी साधु के ब्रह्मचर्य मे साधु को स्वयं में इसका सेवन करू या नही इस प्रकार का सशय हो सकता है। कांक्षा—मैथुन करने की इच्छा उत्पन्न हो सकती है। विचिकित्सा—इस प्रकार के कठिन धर्माचरण का परलोक मे फल होता होगा या नहीं इस प्रकार की स्वर्ग और अपवर्ग की सुखप्राप्ति रूप सशय भी उत्पन्न हो सकता है। इसी तरह (भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायकं हवेज्जा केवलि पण्णत्ताओ धम्माओ वा भंसेज्जा—भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं रोगातकं वा भवेत् केवलिप्रज्ञप्तात् धर्मात् वा भ्रंसेत) इन समस्त पदों का अर्थ पीछे जैसा लिखा गया है वैसा ही यहाँ पर लगा लेना चाहिये। (तम्हा नो इत्थीणं कहं कहेज्जा—तस्मात् नो स्त्रीणां कथां कथयेत्) इसलिये निर्ग्रन्थ साधु को स्त्री कथा नही करनी चाहिये ॥ ५ ॥

चेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जेज्जा—ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत એ બ્રહ્મચારી સાધુના બ્રહ્મચર્યમા—હુ આનુ સેવન કરૂ, કે નહીં ? આવી જાતનો સશય થઇ જાય છે

શકા—મૈથુન કરવાની ઇચ્છા પણ આથી જાગી જાય છે ચિકિત્સા આ પ્રકારના કઠણ ધર્માચરણથી પરલોકમા એનુ ફળ મળશે કે નહી ? આ પ્રકારની સ્વર્ગ અને ઉપવર્ગની સુખપ્રાપ્તિરૂપ સશય પણ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ રીતે भेयं वा लभेज्जा उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायकं वा हवेज्जा—केवलि पण्णत्ताओ धम्माओ वा भंसित्ता—भेदं वा लभेत उन्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालिकं रोगातकं वा भवेत् केवलिप्रज्ञप्तात् धर्मात् वा भ्रंसेत એ સમસ્ત પદોનો અર્થ પાછળ જે પ્રમાણે કહેવાયેલ છે એવો જ અહી પણ સમજી લેવો જોઇએ આ માટે નિર્ગ્રંથ સાધુએ સ્ત્રી કથા ન કરવી જોઇએ ॥૫॥

सन्निसेज्जागयस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेयं वा लभेज्जा, उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायकं हवेज्जा, केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भंसिज्जा, तम्हा खलु नो निग्गंथे इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जाए विहरिज्जा ॥६॥

छाया--नो स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहर्त्ता भवति, स निर्ग्रन्थः । तत्कथमिति चेदाचार्य आह-निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेदं वा लभेत, उन्मादं वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत् । केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रंसेत। तस्मात्खलु नो निर्ग्रन्थः स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहरेत् ।६॥

टीका—'णो इत्थीहिं' इत्यादि।

यः साधुः स्त्रीभिः सार्धं=सह सन्निपद्यागतः-सन्निषीदन्ति=सम्यगुपविशन्ति जना अस्यामिति सन्निपद्या=पट्टिकापीठफलकचतुष्ककाद्यासनम्, तां गतः=तत्रोपविष्टः सन् विहर्त्ता=अवस्थाता नो भवति, स निर्ग्रन्थो भवति । उपलक्षणत्वात्-यत्र स्थाने स्त्री पूर्वमुपविष्टा आसीत्तत्र स्थाने घटिकाद्वयं यावदुपवेष्टा न भवति स निर्ग्रन्थो भवति ॥६॥

॥ इति तृतीयं समाधिस्थानम् ॥

तृतीय ब्रह्मचर्यसमाधि स्थान इस प्रकार है-'णो इत्थीहिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता नो हवइ-स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहर्त्ता नो भवति) स्त्रीयो के साथ सन्निपद्या-पट्टिका, पीठ, फलक-चौकी आदि आसनो पर नहीं बैठता है (से निग्गंथे-स निर्ग्रन्थः) वही निर्ग्रन्थ साधु है। इसी तरह जिस स्थान पर पहिले स्त्री बैठ चुकी हो उस स्थान पर जो दो घडी के बाद बैठता है इसके पहिले नहीं वह निर्ग्रन्थ साधु है। एक आसन

त्रीजुं ब्रह्मचर्य समाधिस्थान आ प्रकारनुं छे--

"णो इत्थीहिं" ईत्यादि।

जे साधु इत्थीहिं सद्धिं सन्निसिज्जागए विहरित्ता नो हवइ-स्त्रीभिः सार्द्धं सन्निपद्यागतो विहर्त्ता नो भवति स्त्रीयोनी साथे सन्निषद्या-पट्टिका, पीठ, फलक, चोक, आदि आसनो पर बेसता नथी से निग्गंथे-स निर्ग्रन्थः एज निर्ग्रंथ साधु छे आ प्रमाणे जे स्थान उपर पहेला स्त्री बेठेल होय, ए स्थान उपर बे घडी पछी ज तेओ बेसे छे ते पहेला नही तेज निर्ग्रंथ साधु छे एक आसन उपर स्त्रीनी

चतुर्थमाह--

मूलम्--णो इत्थीणं इदियाइ मणोहराइं मणोरमाइ अलोएत्ता णिज्झाइत्ता हवइ, से निग्गथे। त कहमिति चे आयरियाह णिग्गंथस्स खलु इत्थीण इदियाइ मणोहराइ मणोरमाइं आलोयमाणस्स निज्झाएमाणस्स वभयारिस्स वभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेय या लेभेज्जा, उम्माय वा पाउणिज्जा, दीह--कालिय वा रोगायक हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भसेज्जा। तम्हा खलु णो णिग्गथे इत्थीणं इदियाइ मणोहराइ मणोरमाइ अलोएज्जा णिज्झाइज्जा ॥७॥

छाया--नो स्त्रीणाम् इन्द्रियाणि मनोहराणि मनोरमाणि आलोकयिता निध्याता भवति स निर्ग्रन्थ । तत्कथमिति चेदाचार्य आह निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीणाम् इन्द्रियाणि मनोहराणि मनोरमाणि आलोकयतो निध्यायतो ब्रह्मचारिणा ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेद वा लभेत, उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिक वा रोगातङ्क भवेत्, केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद्

पर उनके साथ वैठने पर क्या हानि है इसका आचार्य महाराज समाधानरूप उत्तर इस प्रकार देते है कि (निग्गथस्स खलु इत्थीहिं सद्धिं सन्निसेज्जा गयस्स वभयारियस्स वभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पजिज्जा–निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीभि सार्ध सन्निषद्यागतस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शका वा काक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत) उस निर्ग्रन्थ साधु को अपने ब्रह्मचर्य मे शका काक्षा आदि बातें पैदा हो सकती है। इसी प्रकार (भेय वा लभेज्जा–भेद वा लभेत) आदि पदो का भी अर्थ जैसा पहिले लिखआये है वैसा ही यहा लगा लेना चाहिये ॥६॥

સાથે બેસવાથી શુ નુકશાન છે? એનો આચાર્ય મહારાજ સમાધાનરૂપ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે કે, निग्गथस्स खलु इत्थीहिं सन्निसेज्जागयस्स वभयारियस्स वभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पजिज्जा- निर्ग्रंथस्य खलु स्त्रीभि सार्धं सन्निपद्यागतस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शका वा काक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत આમ કરવાથી એ નિર્ગ્રંથ સાધુને પોતાના બ્રહ્મચર્યમા શકા આશકા આદિ વાતો પેદા થાય છે આ રીતે भेय वा लभेज्जा–भेद वा लभेत આદિ પદોનો જે અર્થ આપવામા આવેલ છે તે આમા પણ સમજી લેવો જોઈએ ॥૬॥

प्रसेत। तस्मात् खलु नो निर्ग्रन्थः स्त्रीणाम् इन्द्रियाणि मनोहराणि मनोरमाणि आलोकयेत् निध्यायेत्। ७॥

टीका—'णो इत्थीण' इत्यादि।

मनोहराणि—मनसः=चित्तस्य हराणि=आकर्षकाणि, दृष्टमात्राण्येव चित्तविक्षेपकराणि, तथा—मनोरमाणि—मनसोरमाणि=आह्लादकराणि—दर्शनानन्तरं मनस आह्लादकराणि यानि स्त्रीणाम् इन्द्रियाणि=नयनवदननासिकादीनि सन्ति यः साधुः तानि इन्द्रियाणी आलोकयिता=आ=समन्ताद् ईषद् वा द्रष्टा तथा=निध्याता =दर्शनानन्तरम्—अहो! लावण्यं लोचनयोः, चन्द्रबिम्बकत्वं मुखस्य, ऋजुत्वं नासावंशस्येत्येवं निरन्तरं चिन्तयिता न भवति, स निर्ग्रन्थो भवति। शेषं पूर्ववत् ॥७॥

॥ इति चतुर्थं समाधिस्थानम् ॥

चतुर्थ ब्रह्मचर्यसमाधिस्थान इस प्रकार है—

'णो इत्थीण इंदियाइं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (इत्थीयाइं मनोहराइं मनोरमाइं इंदियाइं आलोएत्ता णिज्झाइत्ता णो हवइ से निग्गंथे—स्त्रीणां मनोहराणि मनोरमाणि इन्द्रियाणि आलोकयिता निध्याता नो भवति स निर्ग्रन्थः) स्त्रियों की मनोहर—चित्ताकर्षक तथा मनोरम आह्लादकारक, इन्द्रियों को—नयन, मुख, नासिका आदि को थोडा भी नहीं देखता है तथा देखने के बाद "देखो नेत्रों का लावण्य कितना अच्छा है" 'तथा मुख का सौंदर्य अपूर्व है' जो ऐसा विचार—नहीं करता है वही निर्ग्रन्थ साधु है। इससे विपरीत जो होता है वह निर्ग्रन्थ साधु नहीं कहलाता है। यहां से आगे के पदों के अर्थ का खुलाशा पीछे सूत्र मे किया जा चुका है सो वैसा ही अर्थ यहां पर लगा लेना चाहिये ॥ ७ ॥

ચોથુ બ્રહ્મચર્ય સમાધિસ્થાન આ પ્રકારનુ છે—

"णो इत्थीण इंदियाइं" ઇત્યાદિ।

જે સાધુ इत्थीयाइं मनोहराइं मनोरमाइं इंदियाइं आलोइत्ता णिज्झाइत्ता णो हवइ से निग्गंथे-स्त्रीणां मनोहराणि मनोरमाणि इन्द्रियाणि आलोकयिता निध्याता नो भवति स निग्रंथः' સ્ત્રીઓની મનોહર—ચિત્તાકર્ષક તથા મનોરમ—આલ્હાદકારક, ઇન્દ્રિયોને આંખ, મોઢું, નાક, વગેરેને જરા પણ જોતા નથી, તેમ જોયા પછી "જુઓ તેની આંખો કેવી આકર્ષક છે' તથા "મોઢાનું સૌંદર્ય કેવું અપૂર્વ છે" જે આવો વિચાર કદી પણ કરતા નથી એજ નિર્ગ્રંથ સાધુ છે આનાથી ઉલટી રીતે વર્તનાર જે હોય છે તે નિર્ગ્રંથ સાધુ નથી કહેવાતા અહીંથી આગળ પદોના અર્થના ખુલાસા પાછલા સૂત્રમાં કરાયેલ છે આથી એવોજ અર્થ અહીંયા સમજી લેવો જોઇએ ॥૭॥

पञ्चममाह—

मूलम्—नो इत्थीणं कुड्डुतरंसि वा दूसतरंसि वा भित्तितरंसि वा कूइयसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कंदियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणित्ता भवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह–निग्गंथस्स खलु इत्थीणं कुड्डुतरंसि वा दूसतरंसि वा भित्तितरंसि वा कूइयसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कंदियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणमाणस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेयं वा लभेज्जा, उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा खलु निग्गंथे नो इत्थीणं कुड्डुतरंसि वा दूसतरंसि वा भित्तितरंसि वा कूइयसद्दं वा रुइयसद्दं वा गीयसद्दं वा हसियसद्दं वा थणियसद्दं वा कंदियसद्दं वा विलवियसद्दं वा सुणमाणो विहरेज्जा ॥८॥

छाया—नो स्त्रीणां कुड्यान्तरे वा दूष्यान्तरे वा भित्त्यन्तरे वा कूजितशब्दं वा रुदितशब्दं वा गीतशब्दं वा हसितशब्दं वा स्तनितशब्दं वा क्रन्दितशब्दं वा विलपितशब्दं वा श्रोता भवति, स निर्ग्रन्थः। तत्कथमिति चेदाचार्य आह–निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीणां कुड्यान्तरे वा दूष्यान्तरे वा भित्त्यन्तरे वा कूजितशब्दं वा रुदितशब्दं वा गीतशब्दं वा हसितशब्दं वा स्तनितशब्दं वा क्रन्दितशब्दं वा विलपितशब्दं वा श्रृण्वतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेदं वा लभेत, उन्मादं वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत्। केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रंसेत। तस्मात्खलु निर्ग्रन्थो नो स्त्रीणां कुड्यान्तरे वा दूष्यान्तरे वा भित्त्यन्तरे वा कूजितशब्दं वा रुदितशब्दं वा गीतशब्दं वा हसितशब्दं वा स्तनितशब्दं वा क्रन्दितशब्दं वा विलपितशब्दं वा श्रृण्वन् विहरेत् ॥८॥

टीका—'णो इत्थीणं' इत्यादि।

यः साधुः कुड्यान्तरे वा=कुड्यं=पाषाणमयीभित्तिः तस्य अन्तरं= व्यवधानं तस्मिन्, दूष्यान्तरे वा=दूष्यं=वस्त्रनिर्मिता यवनिका, तस्य अन्तरं

तस्मिन्, भित्त्यन्तरे वा=भित्तिः=पक्वेष्टकादिविरचिता तस्या अन्तर तस्मिन् वा, स्थित्वा स्त्रीणा=स्त्रीसम्बन्धिकूजितशब्द वा=सुरतसमये कोकिलादि विविधपक्षि भाषारूपमव्यक्त शब्द वा, रुदितशब्द वा=प्रेमकलहजनित रोदनशब्द वा, गीत शब्द वा–पञ्चमरागादिना प्रारब्ध मनोहर सगीत वा, हसितशब्द वा=हास्ययुक्त शब्द वा, स्तनितशब्द वा=भोगसमये मेघगर्जनानुकारिशब्द वा, क्रन्दितशब्द वा=प्रोषितभर्तृकाणा विरहिणीना पतिविरहजनितमुच्चै रोदनरूप वा, विलपितशब्द

पचम समाधिस्थान इस प्रकार है—

'णो इत्थीण कुड्डतरसि वा इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (कुड्डतरसि वा दूसतरसि वा भित्तितरसि वा–कुड्यान्तरे वा दूष्यान्तरे वा भित्त्यन्तरे वा "स्थित्वा" कूइयसद्द वा रुइय सद्द वा कदियसद्द वा विलवियसद्द वा सुणित्ता नो हवइ से निग्गथे–कूजितशब्द वा रुदितशब्द वा क्रन्दित शब्द वा विलपित शब्द वा श्रोता न भवति स निर्ग्रन्थ) पाषाण निर्मित भीत के अन्तराल मे, वस्त्रनिर्मित यवनिका–के अन्तराल मे, पक्की ईंट आदि की बनी हुई भित्ति के अन्तराल मे ठहर कर स्त्रियों के कूजित शब्द–सुरतकाल के शब्द को, रुदित शब्द को–प्रणयकलह से जनित रोने की आवाज को, गीत शब्द को–पचम रागआदि द्वारा प्रारभ किये गये मनोहर सगीत को, हसित शब्द को–हास्ययुक्त वाणी को, स्तनित शब्द को–सभोग समय मे मेघ की गर्जना के समान होनेवाली अस्पष्ट ध्वनि को, क्रन्दित शब्द को–प्रोषितभर्तृका

પાચમુ બ્રહ્મચર્ય સમાધિસ્થાન આ પ્રકારનુ છે—

"णो इत्थीण कुड्डतरसि वा" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ कुड्डतरसि वा दूसतरसि वा भित्तितरसि वा–कुड्यान्तरे वा दूष्यान्तरे वा भित्त्यन्तरे वा स्थित्वा પાણાથી બનાવેલ અન્તરાલમા, વસ્ત્ર નિર્મિત યવનિકાના અન્તરાલમા, પાકી ઇંટ આદિથી બનાવવામા આવેલ ભીતના અન્તરાલમા રોકાઇને સ્ત્રીઓના कूइयसद्द वा रुइयसद्द वा कदियसद्द वा विलवियसद्द वा सुणित्ता नो हवइ से णिग्गथे–कूजितशब्द वा रुदितशब्द वा क्रन्दितशब्द वा विलपितशब्द वा श्रोता न भवति स निर्ग्रंथ. કૂજીત શબ્દ–સુરતકાળના શબ્દોને રૂદન શબ્દને–પ્રણય કલહથી થતા રૂદનના અવાજને ગીત શબ્દને પચમરાગ આદિ દ્વારા પ્રારભ કરવામા આવેલ મનોહર સગીતને, હાસ્ય શબ્દને હાસ્યયુક્ત વાણીને સ્તનિત શબ્દને–સભોગ સમયે મેઘગર્જનાની માફક થનારી અસ્પષ્ટ અવાજધ્વનીને, ક્રન્દિત શબ્દને–ભરણ પોષણ

वा=भर्तृगुण स्मार स्मार प्रलापरूप शब्द वा श्रोता नो भवति। स निर्ग्रन्थो भवति। शेष व्याख्यातप्रायम् ॥८॥

॥ इति पञ्चम समाधिस्थानम् ॥

षष्ठमाह--

मूलम्—नो इत्थीणं पुव्वरय वा पुव्वकीलिय वा अणुसरित्ता हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह–निग्गंथस्स खलु इत्थीण पुव्वरय पुव्वकीलिय अणुसरमाणस्स बभयारिस्स वभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेयं वा लभेज्जा, उम्माय वा पाउणिज्जा, दीहकालिय वा रोगायक हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ वा भसेज्जा। तम्हा खलु नो निग्गथे इत्थीण पुव्वकीलिय अणुसरेज्जा ॥९॥

छाया--नो स्त्रीभि. पूर्वरत पूर्वक्रीडितम् अनुस्मर्त्ता भवति। तत्कथमिति चेदाचार्य आह–निर्ग्रन्थस्य खलु स्त्रीभि. पूर्वरत पूर्वक्रीडितम् अनुस्मरतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेद वा लभेत, उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिक वा रोगातङ्क भवेत्, केवलिप्रज्ञप्ताद् धर्माद् भ्रसेत। तस्मात्खलु निर्ग्रन्थो नो स्त्रीभि पूर्वरत पूर्वक्रीडितमनुस्मरेत् ॥९॥

टीका—'नो निग्गथे' इत्यादि।

य स्त्रीभि सहकृत पूर्वरत=पूर्व=दीक्षाग्रहणात्प्राग् गृहस्थावस्थाकालिक रत विलास, तथा–स्त्रीभि सहकृत पूर्वक्रीडित=पूर्व=दीक्षाग्रहणात्प्राक् गृहस्थावस्था

ओ के पति विरहजन्य उच्चस्वर से रोने के शब्द को, विलपित शब्द को–पति के गुणो को बार बार याद कर के प्रलाप शब्द को, सुनता नही है वह निर्ग्रन्थ कहलाता है। इससे विपरीत नही–इस विषय पर कहे गये अवशिष्ट पदो की व्याख्या पहिले की व्याख्या के समान ही जानना चाहिये ॥ ८ ॥

આદિનો ભાર ઉપાડનાર મૃત્યુ પામેલ એવા પતિ વિરહ જન્ય ઉચ્ચસ્વરથી રોવાના શબ્દને, વિલાપના શબ્દને–પતિના ગુણોને વારવાર યાદ કરીને કરતા પ્રલાપ આદિ શબ્દને, જે સાભળતા નથી તે નિર્ગ્રંથ કહેવાય છે પરંતુ એનાથી વિપરીત રીતે વર્તનાર નહીં આ વિષય ઉપર કહેવામા આવેલ અવશિષ્ટ પદોની વ્યાખ્યા પહેલાની વ્યાખ્યા પ્રમાણે જ સમજી લેવી જોઈએ ॥ ૮ ॥

कालिक क्रीडित=द्यूतक्रीडादिकम् अनुस्मर्त्ता=चिन्तयिता नो भवति, स निर्ग्रन्थ भवति। शेष व्याख्यातप्रायम् ॥९॥

॥ इति षष्ठ समाधिस्थानम् ॥

सप्तममाह—

मूलम्—नो पणीय आहार आहारेत्ता हवइ से निग्गथे। त कह-मिति चे आयरियाह—निग्गथस्स खलु पणीय पाणभोयण आहारे-माणस्स बभयारिस्स बभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भय वा लभेज्जा, उम्माय वा पाउणिज्जा दीहकालिय वा रोगायक हवेज्जा, केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भसेज्जा। तम्हा खलु णो णिग्गथे पणीय आहार आहारेज्जा ॥१०॥

छाया—नो प्रणीतमाहारमाहारयिता भवति, स निर्ग्रन्थ । तत्कथमिति चेदाचार्य आह—निर्ग्रन्थस्य खलु प्रणीत पानभोजनमाहारयतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुपद्येत, भेद वा लभेत,

---

अब छठवाँ समाधिस्थान इस प्रकार है—

'णो इत्थीण पुव्वरय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (इत्थीण पुव्वरय वा पुव्वकीलिय वा अणु-सरित्ता हवइ से निग्गथे—स्त्रीभि. पूर्वरत पूर्वक्रीडित अनुस्मर्त्ता नो भवति स निर्ग्रन्थ.) पूर्वकाल मे अपनी स्त्री के साथ भोगे हुए भोगो का स्मरण नही करता है, उनके साथ कीगई अनेक क्रीडा-ओं को नही विचारता हैं वह निर्ग्रन्थ है। अवशिष्ट पदों का भावार्थ यहा पर पहिले की तरह जानना चाहिये ॥ ९ ॥

હવે છઠ્ઠું બ્રહ્મચર્ય સમાધિસ્થાન કહેવામા આવે છે તે આ પ્રકારનુ છે—

"णो इत्थीण पुव्वरय" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ इत्थीण पुव्वरय वा पुव्वकालीय वा अणुसरित्ता हवइ से निग्गथे—स्त्रीभि पूर्वरत पूर्वक्रीडित अनुस्मर्त्ता नो भवति स निर्ग्रंथ પૂર્વકાળમા એટલે દીક્ષિત થયા પહેલા ગૃહસ્થી અવસ્થામા પોતાની સ્ત્રી સાથે ભોગવેલા ભોગોનુ સ્મરણ્ કરતા નથી, એની સાથે કરવામા આવેલ અનેકવિધ ક્રીડાઓને વિચારતા નથી, તેજ નિર્ગ્રંથ છે અવશિષ્ટ પદોનો ભાવાથ અહી પહેલાના પદો પ્રમાણે સમજી લેવો જોઇએ ॥ ૯ ॥

उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिक वा रोगातङ्क भवेत्। केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रंसेत। तस्मात् खलु नो निर्ग्रन्थः प्रणीतमाहारमाहरेत्। ॥१०॥

टीका—'नो पणीय' इत्यादि।

य. प्रणीतम्=गलद्घृतबिन्दुकम् आहारम्=अशनादिकम्, उपलक्षणत्वादन्यदपि धातुवर्द्धकमाहारम्, आहारयिता=भोक्ता न भवति, स निर्ग्रन्थो भवति। प्रणीत सरस पानभोजन, तत्र-पान=दुग्धजलादिकम्, भोजनम्=अशनम्। उपलक्षणत्वात्खाद्य स्वाद्य च। शेष व्याख्यातप्रायम् ॥१०॥

॥ इति सप्तम समाधिस्थानम् ॥

अष्टममाह—

मूलम्—नो अइमायाए पाणभोयणं आहरेत्ता हवइ से निग्गंथे। त कहमिति चे आयरियाह—अइमायाए पाणभोयण आहारेमा-

---

सातवा समाधिस्थान इस प्रकार है—

नो पणीय इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (पणीय आहार आहारेत्ता नो हवइ से निग्गथे-प्रणीतम् आहारम् आहारयिता नो भवति स निर्ग्रंथ) प्रणीत आहार को-ऐसे आहार को कि जिसमें से घृत की बूंदे टपक रही हों-नही खाता है वह साधु निर्ग्रन्थ है। तथा उपलक्षण से यह भी यहा समझ लेना चाहिये कि जो साधु धातु की वृद्धि करनेवाले आहार को नही लेना है वह निर्ग्रन्थ है। क्यों कि-प्रणीत पान भोजन तथा लेह्य एव स्वाद्य को लेने वाले साधु के ब्रह्मचर्य मे शकाआदि उत्पन्न हो सकते है इत्यादि समस्त पदो का सबध यहा भी लगा लेना चाहिये। इन पदों की व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ १० ॥

સાતમુ બ્રહ્મચર્યસમાધિસ્થાન આ પ્રમાણે છે—

“नो पणीय” ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ पणीय आहार आहारेत्ता नो हवइ से निग्गथे-प्रणीतम् आहारम् आहारयिता नो भवति स निर्ग्रन्थ પ્રણીત આહારને-એવા આહાર કે, જેમાથી ઘીના ટીપા પડતા હોય એ નથી ખાતા તે સાધુ નિર્ગ્રંથ છે ઉપલક્ષણથી અહી સમજી લેવુ જોઈએ કે સાધુ સસધાતુની વૃદ્ધિ કરવાવાળા આહારને લેતા નથી તે નિગ્રંથ છે, કેમકે, પ્રણિત પાન ભોજન તથા લેહ્ય અને સાવદ્યને લેવાવાળા સાધુને બ્રહ્મચર્યમા શકા આદિ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે અવશિષ્ટપદોની વ્યાખ્યા પહેલાના પદોની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજી લેવી જોઈએ ॥ ૧૦ ॥

णस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिजा, भेय वा लभेज्जा उम्माय वा पाउणिज्जा, दीहकालिय वा रोगायंक हवेज्जा, केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भसेज्जा। तम्हा खलु णो णिग्गंथे अइमायाए पाणभोयणं भुंजेज्जा ॥११॥

छाया—नो अतिमात्रया पानभोजनमाहारयिता भवति, स निर्ग्रन्थः। तत् कथमिति चेदाचार्य आह–अतिमात्रया पानभोजनमाहारयतो ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेद वा लभेत, उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिक रोगातङ्क भवेत्, केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रसेत। तस्मात्खलु नो निर्ग्रन्थोऽतिमात्रया पानभोजन भुञ्जीत ॥११॥

टीका—'नो अइमायाए' इत्यादि।

यः साधुः अतिमात्रया=अतिशयिता मात्रा अतिमात्रा तया, मात्रामतिक्रम्येत्यर्थः पानभोजनम् उपलक्षणत्वात्खाद्य स्वाद्य च आहारयिता=भोक्ता न भवति, स निर्ग्रन्थः। उक्त च भोजनमात्राविषये—

"बत्तीस किर कवला, आहारो कुच्छिपूरओ भणिओ।
पुरिसस्स महिलियाए, अट्ठावीस भवे कवला ॥१॥

अष्टम समाधिस्थान इस प्रकार है—

'नो अइमायाए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (अइमायाए पाणभोयण आहारेत्ता न हवइ से निग्गथे–अतिमात्रया पान भोजनम् आहारयिता न भवति स निर्ग्रन्थ) मात्रा को उल्लघन करके पान, भोजन खाद्य एव लेह्य पदार्थों को नही खाता है वह निर्ग्रन्थ है। भोजन मात्रा के विषय मे इस प्रकार कहा गया है–

"बत्तीस किर कवला, आहारो कुच्छिपूरओ भणिओ।
पुरिसस्स महिलाए, अट्ठावीस भवे कवला ॥ १ ॥"

આઠમુ બ્રહ્મચર્યસમાધિસ્થાન આ પ્રમાણે છે—

"नो अइमायाए" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ अइमायाए पाणभोयण आहारेत्ता न हवइ से निग्गथे–अतिमात्रया पानभोजनम् आहारयिता न भवति स निर्ग्रंथ' માત્રાનુ ઉલ્લઘન કરીને પાન, ભોજન, સ્વાદ્ય, અને લેહ્ય પદાર્થોને ખાતા નથી, તે નિર્ગ્રંથ છે ભોજન માત્રાના વિષયમા આ પ્રમાણે કહેવામા આવેલ છે—

उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत्। केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रंसेत। तस्मात् खलु नो निर्ग्रन्थः प्रणीतमाहारमाहरेत्। ॥१०॥

टीका—'नो पणीय' इत्यादि।

य प्रणीतम्=गलद्घृतबिन्दुकम् आहारम्=अशनादिकम्, उपलक्षणत्वाद न्यदपि धातुवर्द्धकमाहारम्, आहारयिता=भोक्ता न भवति, स निर्ग्रन्थो भवति। प्रणीत सरस पानभोजन, तत्र–पान=दुग्धजलादिकम्, भोजनम्=अशनम्। उपलक्षणत्वात्खाद्य स्वाद्य च। शेष व्याख्यातमायम् ॥१०॥

॥ इति सप्तम समाधिस्थानम् ॥

अष्टममाह—

मूलम्—नो अइमायाए पाणभोयणं आहरेत्ता हवइ से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह–अइमायाए पाणभोयण आहारेमा-

---

सातवां समाधिस्थान इस प्रकार है—

नो पणीय इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (पणीय आहार आहारेत्ता नो हवइ से निग्गंथे–प्रणीतम् आहारम् आहारयिता नो भवति स निर्ग्रंथ.) प्रणीत आहार को–ऐसे आहार को कि जिसमें से घृत की बूंदे टपक रही हों–नहीं खाता है वह साधु निर्ग्रन्थ है। तथा उपलक्षण से यह भी यहां समझ लेना चाहिये कि जो साधु धातु की वृद्धि करनेवाले आहार को नहीं लेता है वह निर्ग्रन्थ है। क्यो कि–प्रणीत पान भोजन तथा लेह्य एवं स्वाद्य को लेने वाले साधु के ब्रह्मचर्य मे शका आदि उत्पन्न हो सकते हैं इत्यादि समस्त पदो का सबध यहा भी लगा लेना चाहिये। इन पदों की व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ १० ॥

સાતમુ બ્રહ્મચર્યસમાધિસ્થાન આ પ્રમાણે છે—

"नो पणीय" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ पणीय आहार आहारेत्ता नो हवइ से निग्गथे–प्रणीतम् आहारम् आहारयिता नो भवति स निर्ग्रन्थ પ્રણીત આહારને–એવો આહાર કે, જેમાથી ઘીના ટીપા પડતા હોય એ નથી ખાતા તે સાધુ નિર્ગ્રંથ છે ઉપલક્ષણથી અહી સમજી લેવુ જોઇએ કે સાધુ સપ્તધાતુની વૃદ્ધિ કરવાવાળા આહારને લેતા નથી તે નિર્ગ્રંથ છે, કેમકે, પ્રણિત પાન ભોજન તથા લેહ્ય અને સાવદ્યને લેવાવાળા સાધુને બ્રહ્મચર્યમા શકા આદિ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે અવશિષ્ટપદોની વ્યાખ્યા પહેલાના પદોની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજી લેવી જોઇએ ॥ ૧૦ ॥

कर्ता न भवति, स निर्ग्रन्थो भवति। यः साधु विभूषानुपाती न भवति, स एव निर्ग्रन्थो भवतीति यदुच्यते, तत्कथम्=किमत्र कारणम्, इति शिष्यजिज्ञासा भवति चेदाचार्य आह-'विभूसावत्तिए' इत्यादि, विभूषावर्तिकः=विभूषा-शरीर-शोभा वर्तयितुं=विधातुं शीलमस्येति विभूषावर्त्ती, स एव-विभूषावर्तिकः, अत एव-विभूषितशरीरः=भूषितम्-अलङ्कृतं शरीरं येन स विभूषितशरीरः=स्नानानुलेपनाद्यलङ्कृत गात्रो यो भवति, स स्त्रीजनस्य अभिलषणीयः=अभिलापयोग्यो भवति। उक्तं च-'उज्ज्वलवेषं पुरुषं दृष्ट्वा स्त्री कामयते' इति। ततः=तदनन्तरं

नौवा समाधिस्थान इस प्रकार है—

'नो विभूसाणुवाई-इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (विभूसाणुवाई नो हवइ से निग्गथे-विभूषानुपाती नो भवति स निर्ग्रन्थः) विभूषानुपाती नहीं होता है-शारीरिक शोभा संपादक स्नान, दन्तधावन आदि उपकरणों द्वारा शरीर का संस्कार नहीं करता है वह निर्ग्रन्थ है। इससे विपरीत करनेवाला अर्थात् स्नान आदि द्वारा शारीरिक संस्कार करनेवाला साधु निर्ग्रन्थ नहीं माना जाता है। क्यों कि इस प्रकार के आचरण से-अर्थात्-विभूषावर्त्ती होने से तथा स्नान अनुलेपन आदि द्वारा अलंकृत शरीरवाला होने से साधु (इत्थी जणेण अभिलसिज्जमाणस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा-स्त्री जनेन अभिलष्यमाणस्य ब्रह्मचारिणः ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत) स्त्रीजनोंद्वारा अभिलषणीय हो जाता है। क्यो कि-

નવમુ સમાધિસ્થાન આ પ્રમાણે છે—"नो विभूसाणुवाई" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ विभूसाणुवाई नो हवइ से निग्गथे-विभूषानुपाती नो भवति स निर्ग्रंथः વિભૂષાનુપાતી નથી થતા-શારીરિક શોભા સંપાદક સ્નાન, દંત ધાવન, આદિ ઉપકરણોદ્વારા શરીરનો સંસ્કાર કરતા નથી તે નિર્ગ્રંથ છે આનાથી વિપરીત રીતે વર્તનાર અર્થાત્ સ્નાન આદિદ્વારા શારીરિક સંસ્કાર કરવાવાળા સાધુ નિર્ગ્રંથ કહેવાતા નથી કેમકે, આ પ્રકારના આચરણથી અર્થાત્ વિભૂષાવર્તી થવાથી તથા સ્નાન અનુલેપન આદિદ્વારા અલંકૃત શરીરવાળા થવાથી સાધુ इत्थी जणेण अभिलसिज्जमाणस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा-स्त्री जनेन अभिलष्यमाणस्य ब्रह्मचारिणः ब्रह्मचर्ये शंका वा कांक्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत સ્ત્રીજનોદ્વારા અભિલષણીય થઈ જાય છે કેમકે, "उज्ज्वल-

छाया—द्वात्रिंशत् किल कवला, आहारः कुक्षिपूरको भणित ।
पुरुषस्य महिलिकाया अष्टाविंशतिर्भवेयु कवला' ॥१॥ इति ।
शेष प्रायो व्याख्यातपूर्वम् ॥११॥

॥ इत्यष्टम समाधिस्थानम् ॥

नवममाह—

मूलम्—नो विभूसाणुवाई हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह–विभूसावत्तिए विभसियसरीरे इत्थिजणस्स अभिलसणिज्जे हवइ। तओ ण तस्स इत्थिजणेणं अभिलसिज्जमाणस्स वभयारिस्स वभचेरे सका वा कखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा, भेय वा लभेज्जा, उम्माय वा पाउणिज्जा, दीहकालिय वा रोगायक हवेज्जा, केवलिपण्णत्ताओ वा धम्माओ भसेज्जा। तम्हा खलु नो निग्गथे विभूसाणुवाई सिया ॥१२॥

छाया—नो विभूषानुपाती भवति स निर्ग्रन्थ.। तत्कथमिति चेदाचार्य आह–विभूषावर्तिकः विभूषितशरीर. स्त्रीजनस्य अभिलषणीयो भवति। तत. खलु तस्य स्त्रीजनेन अभिलष्यमाणस्य ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ये शका वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेद वा लभेत, उन्माद वा प्राप्नुयात्, दीर्घ कालिक वा रोगातङ्क भवेत्। केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रसेत। तस्मात् खलु नो निर्ग्रन्थो विभूषानुपाती स्यात् ॥१२॥

टीका—'नो विभूसाणुवाई' इत्यादि

य' साधु. विभूषानुपाती–विभूषा=शरीरशोभामनुपतितु विधातु शीलमस्येति विभूषानुपाती शरीरशोभाकरणोपकरणे स्नानदन्तधावनादिभिश्च शरीरसस्कार

पुरुषों के बत्तीस ग्रासो का, स्त्री के अठाईस ग्रासो का पेट भर पूरा आहार माना जाता है ॥ १ ॥ शेष पदो की व्याख्या पहिले जैसी ही जाननी चाहिये—॥ ११ ॥

---

१ "बत्तीस किर कवला, आहारो कुच्छि पूरओ भणिओ।
पुरिसस्स महिलाए, अट्ठाविस भवे कवला ॥ १ ॥"

પુરુષોને માટે બત્રીસ કોળીયા અને સ્ત્રીઓને માટે અઠયાવીસ કોળીયાનો પેટ પુરો આહાર માનવામા આવેલ છે ॥૧॥ શેષ પદોની વ્યાખ્યા પહેલાના પદોની વ્યાખ્યા પ્રમાણે સમજી લેવી જોઈએ ॥ ૧૧ ॥

चर्ये शङ्का वा काङ्क्षा वा विचिकित्सा वा समुत्पद्येत, भेदं वा लभेत, उन्मादं वा प्राप्नुयात्, दीर्घकालिकं वा रोगातङ्कं भवेत्, केवलिप्रज्ञप्ताद् वा धर्माद् भ्रश्यत्। तस्मात्खलु नो निर्ग्रन्थः शब्दरूपरसगन्धस्पर्शानुपाती भवेत्। दशमं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानं भवति ॥१३॥

टीका—'नो सद्दरूवरस' इत्यादि।

यः साधु शब्दरूपरसगन्धस्पर्शानुपाती=शब्द=स्त्र्यादीनां मन्मनभाषितादिरूपं, रूप=स्त्रीसम्बन्धिकटाक्षादिकं चित्रगतं स्त्रीरूपं वा, रस=मधुरादिकः, गन्ध=कोष्ठपुटादिगन्धः, स्पर्श=कोमलस्पर्शः, एतान् अनुपतितुम्=अनुगन्तुं शीलमस्येति तथा, न भवति, स निर्ग्रन्थो भवति। यो मनोज्ञशब्दादिषु समासक्तो न भवति, स निर्ग्रन्थ इति भावः। शेषं व्याख्यातप्रायम्। उपसंहरन्नाह 'दसमे' इत्यादि–इदं दशमं=दशसंख्यापूरणं ब्रह्मचर्यं समाधिस्थानं भवति। प्रत्येकसमाधिस्थानस्य तुल्यबलत्वख्यापनार्थमिदमुक्तम् ॥१३॥

दशमा समाधिस्थान इस प्रकार है—

'नो सद्दरूव०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (सद्दरूव रस गंध फासाणुवाई नो हवइ–शब्द रूप रस गंध स्पर्शानुपाती नो भवति) स्त्रियों के मन्मनभाषित आदि शब्दों में, उनके कटाक्ष आदि कों में, अथवा चित्रगत स्त्री के रूप में, मधुरादिक रसों में, कोष्ठ पुटादिगंध में, कोमल स्पर्श में अनुपाती–समासक्त नहीं होता है (से निग्गंथे–स निर्ग्रन्थ) वह निग्रंथ साधु है। इस सूत्र में आये हुए शेष पदों का अर्थ प्रथम सूत्र में व्याख्यान हो चुका है। उसी के अनुसार यहां पर भी लगालेना चाहिये। अन्त में जो (दसमे बंभचेरसमाहिट्ठाणे हवइ–दशम ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानं भवति) ऐसा कहा है वह प्रत्येक समाधिस्थान मे तुल्यबलता

દશમુ બ્રહ્મચર્યસમાધિસ્થાન આ પ્રમાણે છે—"नो सद्दरूव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ सद्दरूव रस गंध फासाणुवाई नो हवइ–शब्द रूप–रस–गंध–स्पर्शानुपाति नो भवति સ્ત્રીઓના મન્મનભાષિત આદિ શબ્દોમા તેના કટાક્ષ આદિકોમા, અથવા ચિત્રગત સ્ત્રીના રૂપમા મધુરાદિ રસોમા કોષ્ઠ પુટાદિ ગંધમા, કોમલસ્પર્શમા આસક્ત થતા નથી से निग्गंथे–स निर्ग्रंथ, તે નિર્ગ્રંથ સાધુ છે આ સૂત્રમા આવેલા શેષ પદોના અર્થની પ્રથમ સૂત્રમા વ્યાખ્યા કરવામા આવી ગયેલ છે તેના અનુસાર અહીંયા પણ સમજી લેવુ જોઇએ અન્તમા જે दसमे बंभचेर समाहिट्ठाणे हवइ–दशम ब्रह्मचर्यसमाधिस्थान भवति એવુ કહેલ છે તે પ્રત્યેક સમાધિસ્થાનમા તુલ્ય બળપણુ પ્રદર્શિત

स्त्रीजनेन अभिलप्यमाणस्य=काम्यमानस्य ब्रह्मचारिणो निर्ग्रन्थस्य ब्रह्मचर्ये शङ्का वा "एता मा कामयन्ते किमेता उपभोग्याः? उत परिणामदारुणत्वादनुपभोग्याः?" इत्येवरूपा शङ्का समुत्पद्येत। काङ्क्षा वा=स्व कामयमाना स्त्रीरूपभोगाकाङ्क्षा वा समुत्पद्येत। विचिकित्सा वा=जिनप्ररूपित सिद्धान्ते संशयो वा समुत्पद्येत। शेष व्याख्यातप्रायम् ॥१२॥

॥ इति नवम समाधिस्थान समाप्तम् ॥

दशममाह—

मूलम्—नो सद्दरूवरसगंधफासाणुवाई हवइ, से निग्गंथे। तं कहमिति चे आयरियाह—निग्गंथस्स खलु सद्दरूवरसगंधफासाणुवाइस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जिज्जा भेयं वा लभेज्जा, उम्मायं वा पाउणिज्जा, दीहकालियं वा रोगायंकं हवेज्जा। केवलिपन्नत्ताओ वा धम्माओ भंसेज्जा। तम्हा खलु निग्गंथे नो सद्दरूवरसगंधफासाणुवाई हवेज्जा। दसमे बंभचेरसमाहिट्ठाणे हवइ ॥१३॥

'नो सद्दरूवरस' इत्यादि

छाया—नो शब्दरूपरसगन्धस्पर्शानुपाती भवति, स निर्ग्रन्थ। तत्कथमिति चेदाचार्य आह—निर्ग्रन्थस्य खलु शब्दरूपरसगन्धस्पर्शानुपातिनो ब्रह्मचारिणो ब्रह्म-

---

"उज्वलवेषं पुरुषं दृष्ट्वा स्त्री कामयते" ऐसा नीति का वचन है। जो स्त्रियों की अभिलाषा का विषय बन जाता है ऐसे ब्रह्मचारी साधु को ब्रह्मचर्य मे "ये मुझे चाहती हैं तो मै इनको क्यों नही चाहूं" अथवा परिणाममें दारुण होने से इनको नही इच्छु" इस प्रकार शंका उत्पन्न हो सकती है। अथवा-जिनप्ररूपित सिद्धान्त मे उसे संशय भी उत्पन्न हो सकता है। अवशिष्ट भेदादिक पदों की व्याख्या पहिले जैसी यहां पर भी लगा लेना चाहिये ॥ १२ ॥

वेषं पुरुषं दृष्ट्वा स्त्री कामयते" એવુ નીતિનુ વચન છે, જે સ્ત્રીઓની અભિલાષાનો વિષય બની જાય છે, તે આવા બ્રહ્મચારી સાધુને બ્રહ્મચર્યમા "એ મને ચાહે છે તો હુ તેને શા માટે ન ચાહુ ?" અથવા પરિણામમા દારૂણ હોવાથી એની ઇચ્છા ન કરૂ" આ પ્રકારની શકા આશકા ઉત્પન્ન થતી રહેવાનો સભવ રહે છે અથવા-જીન પ્રરૂપિત સિદ્ધાતમા તેને સશય પણ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે અવશિષ્ટ ભેદાદિક પદોની વ્યાખ્યા પહેલા જેવી અહી પણ સમજી લેવી જોઈએ ॥ ૧૨ ॥

कादि रहितश्च, य आलयो भवति, तम् आलय–गृहं निर्ग्रन्थो ब्रह्मचर्यस्य रक्षार्थं, 'तु' निश्चयेन निषेवते। एतादृशविशेषणविशिष्टे स्थाने निर्ग्रन्थस्तिष्ठतीति भाव। 'ज' इत्यादि प्राकृतत्वान्नपुंसकत्वेन निर्दिष्टम् ॥१॥

॥ इति प्रथमस्थानम् ॥

मूलम्–मणपल्हायजणणिं, कामरागविवड्ढणिं।
बंभचेररओ भिक्खू, थीकहं तु विवज्जए ॥२॥

छाया—मनःप्रह्लादजननीं कामरागविवर्द्धनीम्।
ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुः, स्त्रीकथां तु विवर्जयेत् ॥२॥

टीका—'मणपल्हाय' इत्यादि।

ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु मनःप्रह्लादजननीं=चित्ताह्लादजनिकां, कामरागविवर्द्धनीं=कामेषु=विषयेषु यो रागः=आसक्तिस्तस्य विवर्द्धनीं=वृद्धिकरीं स्त्रीकथां=स्त्रीपशुपण्डकादिकथां तु=निश्चयेन विवर्जयेत् ॥२॥

॥ इति द्वितीयस्थानम् ॥

स्त्रीजनों से रहित हो तथा पशु पंडक आदि से भी वर्जित हो (तं आलयम्–तम् आलयम्) उस वसति में ही निर्ग्रन्थ साधु (बंभचेरस्स रक्खट्ठा–ब्रह्मचर्यस्य रक्षार्थम्) ब्रह्मचर्य की रक्षा निमित्त (निसेवए–निषेवते) निवास करता है। अर्थात् जो वसति पूर्वोक्त विशेषणों से विशिष्ट होती है उसी में निर्ग्रन्थ साधु ठहरते हैं। इससे भिन्न मे नहीं।

॥ यह प्रथम स्थान है ॥ १ ॥

'मणपल्हायजणणिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(बंभचेररओ भिक्खू–ब्रह्मचर्यरतः भिक्षुः) ब्रह्मचर्य की पालना करने में लवलीन हुआ साधु (मणपल्हायजणणिं–मनःप्रह्लादजननीम्) चित्ताह्लादकारक एव (कामरागविवड्ढणिं–कामरागविवर्द्धनीम्)

थीजणेण य–स्त्रीजनेन च સ્ત્રી જનોથી રહિત હોય તથા પશુ પંડક આદિથી પણ વર્જીત હોય तं आलय–तम् आलयम् તે વસ્તીમાં જે નિર્ગ્રંથ સાધુ बंभचेरस्स रक्खट्ठा–ब्रह्मचर्यस्य–रक्षार्थम् બ્રહ્મચર્યની રક્ષા નિમિત્તે निसेवए–निषेवते રહે છે અર્થાત્ જે વસ્તી પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી વિશિષ્ટ હોય છે તેમાં નિર્ગ્રંથ સાધુ રોકાય છે એનાથી બીજી રીતે નહીં આ પ્રથમ સ્થાન છે ॥ ૧ ॥

"मणपल्हायजणणिं" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—बंभचेररओ भिक्खू–ब्रह्मचर्यरतः भिक्षुः બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરવામાં લવલીન બનેલા એવા સાધુ मणपल्हायजणणिं–मनःप्रह्लादजननीम् ચિત્ત પ્રસન્ન બનાવે તેવા અને कामरागविवड्ढणिं–कामरागविवर्द्धनीम् વિષય

मूलम्—भवति इत्थ सिलोगा। त जहा—

छाया—भवन्ति अत्र श्लोका। तद्यथा—

टीका—'भवति' इत्यादि।

अत्र ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानविपये श्लोका =पद्यरूपा भवन्ति=सन्ति। तद्यथा =ते श्लोका यथा सन्ति तथोच्यन्ते क्रमश.--'ज विवित्त' इत्यादि।

मूलम्-जं विवित्तमणाइन्नं, रहियं थीजणेणं यं।
बंभचेरस्स रक्खट्ठा, आलंय तुं निसेवेए ॥१॥

छाया--यो विविक्त अनाकीर्ण', रहितः स्त्रीजनेन च।
ब्रह्मचर्यस्य रक्षार्थम्, आलय तु निषेवते ॥१॥

टीका—'ज विविक्त' इत्यादि।

विविक्त =एकान्तभूतः स्त्रीजनादिनिवासाभावात्, अनाकीर्ण.=स्त्रीजनाद्य-सकुल –तत्तत्प्रयोजनेन तेषा तत्रानागमनात्, स्त्रीजनेन=व्याख्यानवन्दनादि समय विहाय समागतेन अकालचारिणा स्त्रीजनेन रहित =वर्जित, प्रक्रमात्–पशुपण्ड-

---

प्रदर्शित करने के लिये कहा गया है ॥ १३ ॥

अब इसी विषय को पद्यों मे कहने के लिये सूत्रकार कहते है— 'भवति' इत्यादि।

सूत्रकार ने इन ब्रह्मचर्य के समाधिस्थानो का गद्यरूप मे वर्णन करके अब श्लोको द्वारा भी वर्णन किया है सो वे श्लोक इस प्रकार हैं—

'ज' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(ज-य') जो आलय-वसति (विवित्तम्-विविक्त) स्त्रीजन आदि के निवास के अभाव से एकान्तरूप हो (अणाइन्न-अनाकीर्ण.) स्त्री जनादिक से असंयास हो (रहियम्-रहित) व्याख्यान एव वदना के समय के सिवाय अकाल मे आनेवाले (थीजणेण य-स्त्रीजनेन च)

કરવા માટે કહેવાયેલ છે તેવુ જાણવુ જોઈએ ॥ ૧૩ ॥

હવે આજ વિષયને પદ્યોમા કહેવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—

"भवति" ઇત્યાદિ।

સૂત્રકારે આ બ્રહ્મચર્યના સમાધિસ્થાનોનુ ગદ્ય રૂપમા વર્ણન કરીને હવે શ્લોકો દ્વારા કહે છે એ શ્લોક આ પ્રમાણે છે—"ज" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—ज-य. જે વસતી विवित्त-विविक्त' સ્ત્રી જન આદિના નિવાસના અભાવથી એકાન્તરૂપ હોય, अणाइण्ण—अनाकीर्ण સ્ત્રીજન આદિથી અસકુલ હોય, रहियम्—रहित વ્યાખ્યાન અને વદના આદિના સમય સિવાય બીજા સમયે આવનાર

मूलम्—अगपच्चगं संठाणं चारुल्लवियपेहियं ।
बंभचेररओ थीणं, चक्खुगेज्झं विवज्जए ॥४॥

छाया—अङ्गप्रत्यङ्गसंस्थानं, चारूल्लपितप्रेक्षितम् ।
ब्रह्मचर्यरतः, स्त्रीणां, चक्षुर्ग्राह्यं विवर्जयेत् ॥४॥

टीका—'अगपच्चग' इत्यादि। ब्रह्मचर्यरतः साधु स्त्रीणां=स्त्रीमनुष्यानां चारु=शोभनम् अङ्गप्रत्यङ्गसंस्थानम्=अङ्ग शिर प्रभृतिकम्, प्रत्यङ्ग=वक्षःस्थलादिकम्, संस्थानम्=आकार, एषां समाहारस्तत्, तथा—चारूल्लपितप्रेक्षितं च, तत्र—चारु=शोभनम् उल्लपित=मन्मनभाषितादि कामचेष्टाविशेषस्तत्साहचर्यान्मुखमप्युल्लपितम् प्रेक्षित=प्रेक्षण—कटाक्षनिरीक्षणादिरूप. तत्साहचर्यान्नेत्रमपिप्रेक्षितम्, अनयोः समाहारस्तत्, चक्षुर्ग्राह्य=चक्षुर्विषयागत भवेच्चेत्तदा सर्वथा तद् विवर्जयेत्। सति

'अगपच्चग' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(बंभचेररओ भिक्खू—ब्रह्मचर्यरतः भिक्षुः) ब्रह्मचर्य के पालन करने मे भली प्रकार से उद्यमशील बना हुआ साधु (थीण—स्त्रीणाम्) स्त्रियों के (चारु—चारु) सुन्दर (अगपच्चग संठाण—अगप्रत्यगसंस्थानम्) अग उपागों के संस्थान को अर्थात् शिर आदि अग एव वक्षःस्थल आदि उपागों की रचना को—आकार को, तथा (चारुल्लवियपेहियं—चारूल्लपितप्रेक्षितम्) सुन्दर उल्लपित—मन्मन भाषित आदि कामचेष्टा विशेष को तथा इसके साहचर्य से उनके मुख को तथा (प्रेक्षितम्) कटाक्षपूर्वक उनके निरीक्षण आदि को एव इसके साहचर्य से उनके नेत्रों को भी (चक्खुगेज्झ—चक्षुर्ग्राह्यम्) जब यह चीज अपनी दृष्टि की विषयभूत बने तब (विवज्जए—विवर्जयेत्) रागपूर्वक देखने का सर्वथा

"अगपच्चग" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—बंभचेररओ भिक्खू—ब्रह्मचर्यरतः भिक्षुः બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરવામાં સારી રીતે ઉદ્યમશીલ બનેલ સાધુ थीण—स्त्रीणां સ્ત્રીઓના चारु—चारु સુંદર अगपच्चगसठाण—अगप्रत्यगसंस्थानम् અંગ ઉપાંગના સ્થાનોને અર્થાત્ માથું આદિ અંગ તેમજ વક્ષસ્થળ આદિ ઉપાંગોની રચનાને—આકારને તથા चारुल्लवियपेहियं—चारूल्लपितप्रेक्षितम् સુંદર ઉલ્લપિત—મન્મનભાષિત આદિ કામ ચેષ્ટા વિશેષને તથા તેના સહવાસથી તેના ચહેરાને તથા प्रेक्षितम् કટાક્ષપૂર્વક તેના નિરીક્ષણ આદિને તેમજ તેના સહવાસથી તેના નેત્રોને પણ, चक्खुगेज्ज—चक्षुर्ग्राह्यम् જ્યારે આ સઘળી ચીજો પોતાની દૃષ્ટીની વિષયભૂત બને ત્યારે विवज्जए—विवर्जयेत् તેને રાગપૂર્વક જોવાનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે જો કે, જ્યાં સુધી નેત્રોનો સદ્ભાવ

मूलम्-समं च संथवं थीहिं, संकहं च अभिक्खणं ।
बंभचेररओ भिक्खू, णिच्चसो परिवज्जए ॥३॥

छाया—समं च संस्तवं स्त्रीभिः, संकथां च अभीक्ष्णम् ।
ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुः, नित्यशः परिवर्जयेत् ॥३॥

टीका—'समं च' इत्यादि।

च=पुनः ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुः स्त्रीभिः समं=सह संस्तवं=परिचयम्, एकासनोपवेशनं, तथा-यत्र स्त्रीपूर्वमुपविष्टा, तत्र स्थाने घटिकाद्वयाभ्यन्तरे उपवेशनं चेत्यर्थः, तथा-ताभिः सह संकथां=वार्तालापम्, च अभीक्ष्णं=सर्वथा नित्यशः =सततं, परिवर्जयेत् ॥३॥

॥ इति तृतीयस्थानम् ॥

विषयासक्तिवर्द्धक ऐसी (थीकहं-स्त्री कथाम्) स्त्री पशु पंडक आदि की कथा (विवज्जए-विवर्जयेत) सर्वथा परित्याग करे।

॥ यह द्वितीय-समाधिस्थान है ॥ २ ॥

'समं च' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(बंभचेररओ भिक्खू-ब्रह्मचर्यरतः भिक्षु) ब्रह्मचर्य की सम्यक् प्रकार से परिपालना करने में लवलीन बना हुआ निर्ग्रन्थ साधु (थीहिं समं-स्त्रीभिः समम्) स्त्रियों के साथ के (संथवं-संस्तवम्) परिचयका तथा उनके साथ एक आसन पर बैठने का एवं जहां पर स्त्री बैठी हो उस स्थान पर दो घडी के पहिले बैठने का तथा (संकहं-संकथाम्) उनके साथ रागपूर्वक बातचीत करने का (अभिक्खणं-अभीक्ष्णम्) सर्वथा (णिच्चसो-नित्यशः) नित्य (परिवज्जए-परिवर्जयेत्) परित्याग करे। यह तृतीय समाधि स्थान है ॥ ३ ॥

शक्तिने वधारनार એवी थीकहं-स्त्रीकथा स्त्री, पशु, पंडक आदिनी कथानो विवज्जए -विवर्जयेत् सर्वथा परित्याग करे आ बीजु समाधिस्थान छे ॥ २ ॥

"समं च" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—बंभचेररओ भिक्खू-ब्रह्मचर्यरत भिक्षु બ્રહ્મચર્યની સમ્યક્ પ્રકારથી પરિપાલના કરવામાં લવલીન બનેલ નિર્ગ્રંથ थीहिं समं-स्त्रीभिः समम् સાધુ સ્ત્રીઓની સાથેના संथवं-संस्तवम् પરિચયનો તથા તેની સાથે એક આસન ઉપર બેસવાનો તેમજ જે સ્થળે સ્ત્રીજન બેસી ચુકેલ હોય એ સ્થાન ઉપર બે ઘડી પહેલાં બેસવાનો તથા संकहं-संकथाम् તેની સાથે રાગપૂર્વક વાતચિત કરવાનો अभिक्खणं-अभीक्ष्णम् સર્વથા णिच्चसो-नित्यशः સતત परिवज्जए-परिवर्जयेत् પરિત્યાગ કરે આ ત્રીજુ સમાધીસ્થાન છે ॥ ૩ ॥

टीका—'कूइय' इत्यादि।

ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुः कुड्यान्तरादिषु स्थितः सन् श्रोत्रग्राह्य=श्रवणेन्द्रियविषय स्त्रीणा=स्त्रीसम्बन्धि कूजित रुदित गीत हसित स्तनित क्रन्दित च विवर्जयेत् कूजितादयः पूर्वं व्याख्याता ॥५॥

॥ इति पञ्चमस्थानम् ॥

मूलम्-हासं किडुं रइं दप्पं, सहसापत्तासियाणि यँ।

बंभचेररओ थीणं, कयाइवि नाणुचिंते ॥६॥

छाया—हास क्रीडा रतिं दर्प, सहसाऽवत्रासितानि च।

ब्रह्मचर्यरत स्त्रीणा, नानुचिन्तयेत्कदाचिदपि ॥६॥

टीका—'हास' इत्यादि।

ब्रह्मचर्यरत. साधु स्त्रीणा=स्त्रीसम्बन्धि हास=हास्यम्, क्रीडा=द्यूतक्रीडाम्,

---

'कूइय' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (बंभचेररओ-ब्रह्मचर्यरत') अपने ब्रह्मचर्य व्रत की रक्षा करने मे सर्वथा उपयुक्त है उसका कर्तव्य है कि वह भीत आदि की ओट मे हो कर (सोयगिज्ज-श्रोत्रग्राह्यम्) श्रवणेन्द्रिय के विषयभूत होनेवाले (कूइय रुइय गीय हसिय थणियकंदिय विवज्जए-कूजित रुदित गीत हसित स्तनित-क्रन्दित विवर्जयेत्) स्त्रियों के कूजित शब्द को, रुदित शब्द को, गीत को, हसने को, स्तनित तथा क्रन्दित शब्द को रागपूर्वक सुनने का परित्याग करे कूजित आदि शब्दों का अर्थ पहिले लिखा जा चुका है। यह पचम स्थान है ॥५॥

'हास किडुं' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(बंभचेररओ भिक्खू-ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु. ब्रह्मचर्य के पालन करने मे रत बना हुआ साधु (थीण-स्त्रीणाम्) स्त्रीयों के साथ पहिली

'कूइय' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—જે સાધુ बंभचेररओ-ब्रह्मचर्यरत પોતાના બ્રહ્મચર્ય વ્રતનુ રક્ષણ કરવામા સર્વથા ઉપયુક્ત છે તેનુ કર્તવ્ય છે કે, તે ભીત આદિની ઓથે રહીને सोयगिज्ज-श्रोत्रग्राह्यम કાનથી સાભળતા સ્ત્રિઓના કુજિત શબ્દોને, રૂદિત શબ્દોને ગીતોને, હાસ્યને સ્તનિત શબ્દને, તથા આક્રદના શબ્દને, રાગપૂર્વક સાભળવાનો પરિત્યાગ કરે કૂજિત આદિ શબ્દોના અર્થ અગાઉ કહેવાઈ ગયેલ છે આ પાચમુ સ્થાન છે ॥ ૫ ॥

'हास किड्डं' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—बंभचेररओ भिक्खु-ब्रह्मचर्यरत. भिक्षुः બ્રહ્મચર્યનુ પાલન કરવામા લવલીન બનેલા સાધુ थीण-स्त्रीणा સ્ત્રીની સાથે અગાઉ કરવામા આવેલ હાસ્ય

चक्षुषिरूपदर्शनमवश्यभावि, परन्तु ब्रह्मचारी स्त्रीणां पूर्वोक्त रूपम् अकस्माच्च क्षुर्विषयागतं रागपूर्वकं नावलोकयदितिभावः।

उक्त च–असक्क रूवमदट्टु चक्खुगोयरमागय ।
राग दोसे उ जे तत्थ, ते बुहो परिवज्जए ॥१॥ इति ।

छाया—अशक्य रूपमद्रष्टु, चक्षुर्गोचरमागतम् ।
रागद्वेषौ तु यौ तत्र, तौ बुध• परिवर्जयेत् ॥१॥ इति ।

॥ इति चतुर्थस्थानम् ॥

मूलम्–कूइयं रुइयं गीयं हसियं थणियं कंदियं ।
बंभचेररओ थीणं, सोयगिज्झं विवज्जए ॥५॥

छाया—कूजितं रुदितं गीतं, हसितं स्तनितं क्रन्दितम् ।
ब्रह्मचर्यरतः स्त्रीणां, श्रोत्रग्राह्यं विवर्जयेत् ॥५॥

परित्याग करे। यद्यपि जबतक नेत्रों का सद्भाव है–अर्थात् उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति है तबतक उनके द्वारा पदार्थों कारूप दर्शन अवश्य होता ही रहेगा तथा साम्हने जो चीज आवेगी वह देखी ही जावेगी–फिर भी जो ब्रह्मचारी साधु है वे जब इस प्रकार का रूप अकस्मात् अपनी दृष्टि का विषय बन जाता है तब उसको रागपूर्वक नहीं देखते हैं। रागपूर्वक अवलोकन करने मे पापबंध है। इसी बात को लेकर उसके देखने का परित्याग करनेका कहा गया है।

"असक्क रूवमदट्टु, चक्खुगोयरमागय ।
रागदोसे उ जे तत्थ, ते बुहो परिवज्जए ॥१॥"

इसी तरह प्रत्येक इन्द्रियों के विषय मे इस नीति को लगा लेना चाहिये। यह चतुर्थस्थान है ॥४॥

છે અર્થાત્–પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાની શક્તિ છે ત્યા સુધી તેના દ્વારા પદાર્થોનું રૂપ દર્શન જરૂરથી થતુ જ રહેવાનુ તથા સામે જે ચીજ આવશે તે જોવાઈ જ જશે છતા પણ જે બ્રહ્મચારી સાધુ છે તે જ્યારે આ પ્રકારનુ રૂપ અકસ્માત પોતાની દૃષ્ટીનો વિષય બને ત્યારે તેને રાગપૂર્વક જોતા નથી રાગપૂર્વક અવલોકન કરવામા પાપનો બંધ છે આ વાતને લઈને તેને જોવાનો પરિત્યાગ બતાવવામા આવેલ છે

"असक्क रूवमदट्टु चक्खुगोयरमागय ।
रागदोसे उ जे तत्थ ते बुहो परिवज्जए ॥ १ ॥"

આ પ્રમાણે પ્રત્યેક ઈન્દ્રિયોના વિષયમા આ નીતિને અનુસરવુ જોઈએ ॥૪॥

मूलम्—धम्मलद्धं मियं काले, जत्तत्थं पणिहाणवं ।
नाइमत्तं तु भुंजेज्जा, बंभचेररओ सया ॥८॥

छाया—धर्मलब्धं मितं काले, यात्रार्थं प्रणिधानवान् ।
नातिमात्रं तु भुञ्जीत, ब्रह्मचर्यरतः सदा ॥८॥

टीका—'धम्मलद्धं' इत्यादि ।

प्रणिधानवान्=प्रणिधान–चित्तसमाधिस्तद्वान्, तथा–ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुः धर्मलब्धम्=धर्मेण=मुनिकल्पानुसारेण लब्धम्=प्राप्तं, न तु प्रतारणादिना, तथा मितम् =परिमितम्—

"अद्धमसणस्स सव्व जणस्स कुज्जा दवस्स दो भाए ।
वाउपवियारणट्ठा, छब्भागं ऊणयं कुज्जा" ॥१॥

(पणीयं भत्तपाणं खिप्पं मयविवड्ढणं–प्रणीतं भक्तपानं क्षिप्रं मदविवर्धनम्) प्रणीत भक्तपान तथा जिससे शीघ्र कामोद्रेक बढे ऐसे भक्तपान का (निच्चसो नित्यशः) सर्वदा (परिवज्जए–परिवर्जयेत्) त्याग करे ॥ यह सप्तम समाधिस्थान है ॥ ७ ॥

'धम्मलद्धं' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(पणिहाणवं–प्रणिधानवान्) चित्त की समाधि संपन्न तथा बंभचेररओ–ब्रह्मचर्य की रक्षा करने मे सदा सावधान साधु (धम्मलद्धं–धर्मलब्धम्) मुनिकल्प के अनुसार प्राप्त हुए तथा (मियं मितम्) मर्यादायुक्त, जैसे—

"अद्धमसणस्स सव्व, जणस्स कुज्जा दवस्स दो भाए।
वाउपवियारणट्ठा, छब्भागं ऊणयं कुज्जा" ॥ १ ॥

पाणं खिप्पं मयविवड्ढणं–प्रणीतं भक्तपानं क्षिप्रं मदविवर्धनम् प्रणीत ખોરાક પાણી તથા જેનાથી કામ ઇત્યાદિ વાસનાઓ જાગૃતિ થાય એવા ખોરાક પાણીના निच्चसो–नित्यशः સર્વદા परिवज्जए–परिवर्जयेत् ત્યાગ કરે ॥ ७ ॥

'धम्मलद्धं' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—पणिहाणवं–प्रणिधानवान् ચિત્તની સમાધી સંપન્ન તથા बंभचेररओ–ब्रह्मचर्यरत બ્રહ્મચર્યની રક્ષા કરવામાં સદા સર્વદા સાવધાન બની રહેતા સાધુ धम्मलद्धं–धर्मलब्धम् મુનિકલ્પ અનુસાર પ્રાપ્ત થયેલ मियं–मितम् મર્યાદાયુક્ત

"अद्धमसणस्स सव्व, जणस्स कुज्जा दवस्स दो भाए ।
वाउपविचारणट्ठा छब्भागं उणयं कुज्जा ॥ १ ॥"

रतिं=प्रीतिं, दर्पम्=अहङ्कारम्, च=पुन. सहसा अवत्रासितानि=पराङ्मुख्या दयिताया सपदि त्रासोत्पादकानि स्वमूर्च्छावस्थासूचकानि नेत्रगोलकस्थिरीकरणादीनी यान्येतानि गृहस्थावस्थायामनुभूतानि न तानि कदाचिदपि अनुचिन्तयेत् अनुस्मरेत् ॥६

॥ इति षष्ठस्थानम् ॥

मूलम्-पणीयं भत्तपाणं तुं, खिप्पं मयविवड्ढणं ।
वभचेररओ भिक्खू, णिच्चसो परिवज्जए ॥७॥

छाया--प्रणीत भक्तपान तु, क्षिप्र मदविवर्धनम् ।
ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु, नित्यश परिवर्जयेत् ॥७॥

टीका--'पणीय' इत्यादि ।

ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु प्रणीत भक्तपान, तु=पुन. क्षिप्र=शीघ्र यथास्यात्तथा-मदविवर्धन-मद =कामोद्रेक, तस्यविवर्धन=वृद्धिकर यद् भक्तपान तत्, उपलक्षणत्वादेवविध खाद्यस्वाद्य च नित्यश =सर्वदा परिवर्जयेत् ॥७॥

॥ इति सप्तमस्थानम ॥

अवस्था मे की गई हँसी मजाक को (खिड्ड-क्रीडाम्) तथा उनके साथ अनुभूत क्रीडा को (रइम्-रतिम्) प्रीति को (दप्पम्-दर्पम्) मान को तथा (सहसावत्ता सियाणि य-सहसा अवत्रासितानि च) पराङ्मुख हुई स्त्री को इकदम त्रासोत्पादक ऐसी अपने द्वारा की गई स्वमुर्च्छावस्था सूचक नेत्रगोलक आदि को स्थिर करने रूप चेष्टाओ को (कयाइवि-कदाचिदपि) कभी भी (नाणुचिन्ते--न अनुचिन्तयेत्) याद न करे। यह छठवा समाधिस्थान है ॥६॥

'पणीय भत्तपाणतु' इत्यादि—

अन्वयार्थ--(वभचेररओ भिक्खू-ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु.) ब्रह्मचर्य की रक्षा करने मे सदा सावधान बने हुए साधु को चाहिये कि वह

અને મશ્કરી વિગેરેને खिड्ड-क्रीडा તથા એની સાથે અનુભવેલ ક્રીડાને, रइम्-रतिम् પ્રીતિને दप्पम्-दर्पम् માનને તથા सहसावत्ता सियाणि य-सहसा अवत्रासितानि च પરાગમુખ બનેલ સ્ત્રીને ત્રાસ પહોંચાડનાર એવી પોતાના તરફથી આચરાયેલ સ્વ મૂર્ચ્છાવસ્થા સૂચક આંખમીંચામણી આદિરૂપ ચેષ્ટાઓને कया इवि-कदाचिदपि કદી પણ नाणुचिंते-न अनुचितन्येत् યાદ ન કરે આ છઠું સમાધિસ્થાન છે ॥૬॥

पणीय भत्तपाण तु ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—वभचेररओ भिक्खू-ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु બ્રહ્મચર્યનુ રક્ષણ કરવામા સદા સાવધાન બની રહેલા સાધુ માટે એ મહત્વનુ છે કે, તે पणीय भत्त-

तथा—शरीरपरिमण्डनम्=शरीरशोभासम्पादकं केशश्मश्र्वादिसमारचनादिकं श्रृङ्गारार्थं न धारयेत्। विभूषणप्रियाः स्त्रियो भवन्ति, अतस्ता विभूषितं पुरुषं कामयन्ते। स्त्रीभिः काम्यमानाः ब्रह्मचर्याद् भ्रसन्ते। अतो ब्रह्मचर्यरतो भिक्षुर्न कदापि शरीरशोभां परिकल्पयेदिति भावः ॥९॥

॥ इति नवमं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानम् ॥

मूलम्—सद्दे रूवे य गंधे य, रसे फासे तहेव य।
पंचविहे कामगुणे, णिच्चसो परिवज्जए ॥१०॥

छाया—शब्दान् रूपाणि च गन्धांश्च, रसान् स्पर्शास्तथैव च।
पञ्चविधान् कामगुणान्, नित्यशः परिवर्जयेत् ॥१०॥

टीका—'सद्दे' इत्यादि।

शब्दान्=मन्मनभाषितादिरूपान्, च=पुनः रूपाणि=आकृतिगतान् गौरा-

'विभूस परिवज्जेज्जा' इत्यादि—

अन्वयार्थ—बंभचेररओ भिक्खू—ब्रह्मचर्यरतोभिक्षुः ब्रह्मचर्यव्रत में लवलीन हुआ भिक्षु (विभूस परिवज्जेज्जा—विभूषाम् परिवर्जयेत्) अति उत्कृष्ट वस्त्रों द्वारा शरीर की शोभा बढानी छोडे तथा (सिंगारत्थं सरीरपरिमंडणं परिवज्जए—श्रृंगारार्थम् शरीरपरिमंडनं परिवर्जयेत्) शरीर में शोभा के संपादक जो केश आदि की रचना है उसको श्रृंगार के विचार से धारण न करे। ब्रह्मचर्यरत साधु कभी भी शारीरिक शोभा संपादन करनेवाले पदार्थों का संबन्ध—अपने शरीर से न होने दे। शुश्रूषा विभूषा का सदा ही त्याग करे। यह नवम स्थान है ॥९॥

'सद्दे रूवे य' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(सद्दे—शब्दान्) मन्मनभाषित स्त्री आदि के शब्दों का

"विभूस परिवज्जेज्जा" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—बंभचेररओ भिक्खू—ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु બ્રહ્મચર્યવ્રતમાં લવલીન બનેલ ભિક્ષુ विभूस परिवज्जेज्जा—विभूषाम् परिवर्जयेत् અતિ ઉત્કૃષ્ટ વસ્ત્રોને પહેરવાનું છોડે તથા सिंगारत्थं सरीरपरिमंडणं परिवज्जए—श्रृंगारार्थम् शरीरपरिमण्डनं परिवर्जयेत् શરીરને શોભારૂપ એવા વાળ આદિની રચના છે એને શ્રૃંગારના વિચારથી ધારણ ન કરે. બ્રહ્મચર્યરત સાધુ કદી પણ શારીરિક શોભા સંપાદન કરવાવાળા પદાર્થોનો સંબંધ પોતાના શરીર સાથે ન થવા દે. સુશ્રૂષા વિભૂષાનો સદાસર્વદા ત્યાગ કરે. આ નવમું સ્થાન છે ॥ ૯ ॥

"सद्दे रूवे य" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—सद्दे—शब्दान् મન્મનભાષિત આદિ શબ્દોનો તથા रूवे—रूपाणि

छाया—अर्धमशनस्य सव्यञ्जनस्य कुर्याद् द्रवस्य द्वौ भागौ।
वायुप्रविचारणार्थं, षड्भागमून कुर्यात् ॥१॥

इत्याद्यागमोक्तमानान्वितम् आहार यात्रार्थं=संयमनिर्वाहार्थं, काले=शास्त्रविहित काले सदा भुञ्जीत, न तु रूपलावण्यवृद्ध्यर्थं भुञ्जीत, नाप्यकाले भुञ्जीत। तु=पुन कदाचिदपि अतिमात्र=मात्रामतिक्रम्य आहार न भुञ्जीत ॥८॥

॥ इत्यष्टमस्थानम् ॥

मूलम्-विभूसं परिवज्जेज्जा, सरीरपरिमंडणं।
बंभचेररओ भिक्खू, सिंगारत्थं नं धारए ॥९॥

छाया—विभूषा परिवर्जयेत्, शरीरपरिमण्डनम्।
ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु, शृङ्गारार्थं न धारयेत् ॥९॥

टीका—'विभूस' इत्यादि।

ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु' विभूषाम्=अत्युत्कृष्टवस्त्रपरिधानात्मिका परिवर्जयेत्,

---

अर्थात्—पेट मे छह भागो की कल्पना करे उनमें आधा अर्थात् तीन भागो को व्यञ्जन सहित आहार से भरे, दो भाग पानी से भरे, और छठा भाग वायु सचरण के लिये खाली रखे।

इस रीति से आगम मे प्रतिपादित प्रमाणविधि से संपन्न ऐसे आहार को (जत्तत्थ-यात्रार्थम्) सयम निर्वाह के लिये ही (काले-काले) शास्त्रविहित समय मे (सया भजेज्जा-सदा भुजीत) सदा आहार करे। रूपलावण्य आदि की वृद्धि के लिये नही करे और न अकाल मे ही आहार करे। तथा (कदाचिदपि) कभी भी (अइमत्त-आहारम् न भज्जिज्ज-अतिमात्र आहार न भुञ्जीत) मात्रा-से अधिक आहार न लेवे। यह अष्टम स्थान है ॥८॥

અર્થાત્—પેટના છએ ભાગોની કલ્પના કરે એમા અર્ધા અર્થાત્ ત્રણ ભાગોને વ્યજન સહિત આહારથી ભરે, બે ભાગ પાણીથી ભરે અને છઠ્ઠો ભાગ વાયુ સચરણના માટે ખાલી રાખે આ રીતથી આગમમા પ્રતિપાદિત પ્રમાણ વિધીથી સપન્ન એવા આહારનો जत्तत्थ-यात्रार्थं સયમના નિર્વાહ માટે જ काले-काले શાસ્ત્ર વિહિત સમયમા सया भजेज्जा-सदा भुजीत ઉપયોગ કરે રૂપલાવણ્ય આદિની વૃદ્ધિના માટે ન કરે, તેમ અકાળમા આહાર ન કરે अइमत्त आहारम् नभज्जिज्ज-अतिमात्रम् आहारम् न भुजित માત્રાથી અધિક પ્રમાણમા કાંઇ પણ આહાર ન લે આ આઠમુ સ્થાન છે ॥ ૮ ॥

छाया—आलय स्त्रीजनाकीर्ण', स्त्रीकथा च मनोरमा ।
सस्तवश्चैव नारीणा, तासामिन्द्रियदर्शनम् ॥११॥
कूजित रुदित गीत, हसित भुक्तासितानि च ।
प्रणीत भक्तपान च, अतिमात्र पानभोजनम् ॥१२॥
गात्रभूषणमिष्ट च, कामभोगाश्च दुर्जया ।
नरस्यात्मगवेषिणो, विष तालपुट यथा ॥१३॥

टीका—'आलओ' इत्यादि ।

स्त्रीजनाकीर्ण'=स्त्रीपशुपण्डकादिभि· सकुल· आलय =स्थानम्, च=पुनः मनोरमा=मनोहरा स्त्रीकथा, च=पुनः नारीणा सस्तव एव=स्त्रीभि·सह एकासने परिचयकरणम् एकासने समुपवेशनचापि, एवकारोऽप्यर्थकः, तथा–तासा= नारीणाम् इन्द्रियदर्शनम्=मुखनेत्रादीना सानुरागावलोकनम्, तथा स्त्रीणा कूजित,

प्रत्येक ब्रह्मचर्य समाधिस्थान मे जो 'सका वा कग्वा वा' इत्यादिपद प्रयुक्त किये गये है उनको तालपुट के दृष्टान्त से स्पष्टप्रतिपत्ति के लिये नीचे की तीन गाथाओं से कहते है 'आल ओ' इत्यादि, 'कूइय' इत्यादि, 'गत्तभूसणमिट्ठ च' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(थीजणा इण्णो आलओ–स्त्री जनाकीर्ण आलय') स्त्रीपशु पडक आदि कों से सहित वसति १ (मणोरमा थीकहा य–मनोरमा स्त्री कथा च) मनोहर स्त्रीकथा २ (नारीण सथवो चेव–नारीणां सस्तव चैव) स्त्रियो के साथ परिचय करना–एक आसनपर उनके साथ बैठना ३ (तासि इंदियदरिसण–तासाम इन्द्रियदर्शनम्) उनकी मुख नेत्र आदि इन्द्रियो को रागभाव से देखना ४ ॥११॥ तथा स्त्रियों के

પ્રત્યેક બ્રહ્મચર્યના સમાધિસ્થાનમા જે શકા આશકા વગેરે પદ પ્રયુક્ત કરવામા આવેલ છે એને તાલપુટના દૃષ્ટાતથી સ્પષ્ટ રીતે સમજવા માટે નીચેની ત્રણ ગાથાઓ દ્વારા કહેવામા આવે છે

"आलओ" ઇત્યાદિ !, "कूइय" ઇત્યાદિ !, "गत्तभूसणमिट्ठ च" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—थीजणाइण्णो आलओ–स्त्रीजनाकीर्णः आलय સ્ત્રી, પશુ, પડક, આદિકોથી સકુલ વસતિ (૧) मनोरमा थीकहा य–मनोरमा स्त्रीकथा च મનોહર સ્ત્રી કથા (૨) नारीण सथवो चेव–नारीणा सस्तव' चैव સ્ત્રીઓની સાથે પરિચય કરવો–એક આસન ઉપર એમની સાથે બેસવુ (૩) तासिं इदियदरिसण–तासा इन्द्रिय दर्शनम् એના મુખ, નેત્ર, આદિ ઇન્દ્રિયોને રાગભાવથી જોવી (૪) ॥૧૧॥ તથા સ્ત્રીઓના

दिवर्णान्, च=पुन. गन्धान्=घ्राणतृप्तिकरान सुरभिगन्धान् तथैव रसान=रसनेन्द्रियग्राह्यान् मधुरादीन् च=पुन स्पर्शान=त्वगिन्द्रियविषयान कोमलादिस्पर्शान् एतान् पञ्चविधान्=पञ्चप्रकारान् कामगुणान्=कामवर्धकान, ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु नित्यशः परिवर्जयेत्=परित्यजेत्। शब्दादि पञ्चविधविषयानुरागी न कदापि भवेदिति भावः।

॥ इति दशमस्थानम् ॥

यस्मात् प्रत्येक ब्रह्मचर्यसमाधिस्थाने 'शङ्का वास्यात्' इत्याद्युक्तम्, तत्स प्रति तालपुटविषदृष्टान्तेन स्पष्टप्रतिपत्तये पुनराह—

मूलम्—आलओ थीजणाइण्णो, थीकहा य मणोरमा।
सथवो चेव नारीणं, तासिं इंदियदरिसणं ॥११॥
कूइयं रुइयं गीयं, हसियं भुत्तासियाणि य।
पणीयं भत्तपाणं च, अइमायं पाणभोयणं ॥१२॥
गत्तभूसणमिट्ठं च कामभोगा य दुज्जया।
नरस्सऽत्तगवेसिस्स, विसं तालउडं जहा ॥१३॥

तथा (रूवे–रूपाणि) आकृति गत गौर आदि वर्णों का तथा (गधे–गधान्) घ्राणतृप्तविधायक रसों का एव (फासे–स्पर्शान्) स्पर्शन इन्द्रिय के विषय जो कोमलादि सुखकारी स्पर्श है उनका (पचविहे कामगुणे–पचविधान् कामगुणान्) इस प्रकार से इन पाच काम वर्द्धक गुणों का (बभचेररओ भिक्खू–ब्रह्मचर्यरत भिक्षु) ब्रह्मचर्य मे रत भिक्षु (णिच्चसो परिवज्जए–नित्यश परिवर्जयेत्) सदा परित्याग करे। इसका भाव यही है कि–शब्दादिक पाच प्रकार के विषयों मे भिक्षु अनुरागी नहीं बने।

यह दशमा स्थान है ॥१०॥

આકૃતિગત ઉજ્જવળ આદિ વર્ણોનો, गधे–गधान् તથા ઘ્રાણતૃપ્તિ વિધાયક સુરભિગધનો તથા रसे–रसान् રસના ઇન્દ્રિયના વિષયભૂત મધુરાદિરસોના અને फासे–स्पर्शान् ઇન્દ્રિયનો વિષય છે કોમલાદિ સુખકારી સ્પર્શને એનો पचविहे कामगुणे–पचविधान् कामगुणान् આ પ્રકારે પાચ કોમલાદિ સુખકારી સ્પર્શ છે તેના बभचेररओ भिक्खू–ब्रह्मचर्यरतो भिक्षु બ્રહ્મચર્યમા રત ભિક્ષુ સદા પરિત્યાગ કરે આનો ભાવ એ છે કે, શબ્દાદિક પાચ પ્રકારના વિષયોમા ભિક્ષુ અનુરાગી ન બને

આ દશમુ સ્થાન છે ॥ ૧૦ ॥

मारेण शमु जनयति । यथैतद् विपाकदारुण तथैव स्त्रीजनाद्याकीर्णालयाद्यपि इः हि शङ्कादि क जनयति, संयमात्मक भावजीवित शरीरधारणात्मक द्रव्यजीवित च विनाशयतीति ॥११॥१२॥१३॥

उक्तमर्थमुपसंहरन्नाह—

मूलम्--दुज्जए कामभोगे य, णिच्चसो परिवज्जए ।
सकट्ठाणाणि सव्वाणि, वज्जेज्जा पणिहाणवं ॥१४॥

छाया—दुर्जयान् कामभोगाश्च, नित्यशः परिवर्जयेत् ।
शङ्कास्थानानि सर्वाणि, वर्जयेत् प्रणिधानवान् ॥१४॥

टीका--'दुज्जए' इत्यादि ।

प्रणिधानवान्=अनशनादि दुष्करतपश्चर्यावान् मुनि दुर्जयान् कामभोगान् नित्यश परिवर्जयेत् । च=पुन' सर्वाणि=दशापि शङ्कास्थानानि=शङ्काकाङ्क्षादि

की तरह है। मुख मे डाला गया तालपुट विष तालीबजाने मे जितना समय लगता है उतने समय में खानेवाले के-प्राणों का विनाश कर देता है अत' जैसे यह विपाक दारुण होता है, उसी प्रकार से स्त्री जनादिकों से आकीर्ण आलय आदि भी जानना चाहिये । ये सब शका-दिक को उत्पन्न करते है और संयमरूप भावजीवित का तथा शरीर धारणरूप द्रव्यजीवित का विनाश करते है ॥१३॥

उक्त अर्थ का उपसहार करते हुए सूत्रकार उपदेश कहते है—
'दुज्जए' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पणिहाणव-प्रणिधानवान्) अनशन आदि दुष्कर तपश्चर्या करनेवाला मुनि (दुज्जए कामभोगे-दुर्जयान् कामभोगान्) दुर्जय कामभोगों का (णिच्चसो-नित्यश.) सर्वदा (परिवज्जए-परि-

નાખવામા આવેલ તાલપુટ ઝેર તાળી વગાડતા જેટલો સમય લાગે છે એટલા સમયમા ખાનારના પ્રાણનો વિનાશ કરી નાખે છે આથી એના જેટલુ વિપાક દારૂણ હોય છે એજ રીતે આ સ્ત્રી જન ઈત્યાદિથી આકીર્ણ આલાપ આદિને પણ જાણવા જોઈએ આ સઘળા શકા આશકાઓ જન્માવનાર છે અને સયમરૂપ ભાવ જીવનનો તથા શરીર ધારણરૂપ દ્રવ્ય જીવનનો વિનાશ કરનાર છે ॥૧૩॥

ઉક્ત અર્થનો ઉપસહાર કરતા સૂત્રધાર ઉપદેશ આપે છે કે,
"दुज्जए" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—અનશન આદિ દુષ્કર તપશ્ચર્યા કરવાવાળા મુનિ दुज्जए कामभोए ण-दुर्जया कामभोगान् દુર્જય કામભોગનો णिच्चसो-नित्यश સર્વદા परिवज्जए-

रुदित, गीत तथा हसितम्, कुडयन्तरादिपु स्थितस्य भिक्षोः स्त्रीकृत-कूजितादि श्रवणमित्यर्थः, च=पुनः भुक्तासितानि=भुक्तानि च आसितानि च-भुक्तासितानि-गृहस्थावस्थायां स्त्रीभि. सहकृतानामुपभोगाना, ताभि. सहैकासने समुपवेशनादीना च स्मरणम्। च=पुनः प्रणीत=गलद् घृतबिन्दुक भक्तपानम तथा-अतिमात्र=मात्रामतिक्रम्य कृत पानभोजनम्, च=पुनः इष्टम्=स्त्रीजनाभिलषित गात्रविभूषण शरीरविभूषकरणम्, च=पुन.दुर्जया:=दु खेन जेया कामभोगाः-तत्र-कामा =शब्दरूपलक्षणा =भोगा'=गन्धरसस्पर्शलक्षणा , आलयमारभ्य काम भोगपर्यन्ता एते सर्वे आत्मगवेषिण =चारित्रात्मगवेषकस्य नरस्य=सयतस्य कृते तालपुट=तालपुटनाम्ना प्रसिद्ध खे निर्विष्ट सत् करतल गनिकाल-

(कूइय रुइय गीय हसिय भुत्तासियाणि य-कूजित रुदित गीत हसित भुक्तासितानि च) कुडय आदि की ओट में छिपकर कूजित शब्द को, रुदित शब्द को, गीतों को हँसी मजाक को सुनना ५ एव गृहस्थावस्था में उनके साथ किये गये भोगों का तथा एक आसनपर बैठने आदिका स्मरण करना ६ (पणीय भत्तपाण च अइमाय पाणभोयण-प्रणीत भक्तपान च अतिमात्र पानभोजनम्) प्रणीत-सरस ७ तथा प्रमाण से अधिक पान भोजन करना ८ ॥१२॥ एव (इट्ठ-इष्टम्) स्त्रियों के लिये इष्ट ऐसा (गत्त भूसणम्-गात्रविभूषणम्) शरीर को विभूषित करना ९ यथा (दुज्जया कामभोगा-दुर्जया कामभोगा) दु.ख से जीतने योग्य काम-शब्द रूप एव भोग-गध, रस स्पर्श १० ये सब (अत्त गवेसिस्स नरस्स-आत्मगवेषिण नरस्य) आत्मा की गवेषणा करनेवाले मोक्षाभिलाषी के लीये (तालउड विस जहा-तालपुड विष यथा) तालपुट नामक प्रसिद्ध विष

कूइय रुइय गीय हसीय भुत्तासियाणि य-कूजित रुदित गीत हसित भुक्तासितानि च कूजित शब्दने, रुदन शब्दने गीतोने हसी मजाकने साभळवा (५) अने गृहस्थाश्रममा एमनी साथे करवामा आवेला भोगोनु स्मरण करवु तथा एक आसन उपर बेसवु वगेरेनु स्मरण करवु (६) पणीय भत्तपाण च अइमाय पाणभोयण-प्रणीत भक्तपान च अतिमात्र पानभोजनम् प्रणीत सरस भक्तपान (७) प्रमाणथी वधु प्रमाणमा आहार पाणीनु लेवु (८) इट्ठ-इष्टम् स्त्रीओने माटे इष्ट एवु गत्तभूसण-गात्रभूषणम् शरीरने विभूषित करवु (९) जीतवामा खूबज कठण एवा रस, स्पर्शन, शब्द अने गध (१०) आ सघळा अत्तगवेसिस्स नरस्स-आत्मगवेषिण नरस्य आत्मानी गवेषणा करवावाळा मोक्षाभिलाषी माटे तालउड विस जहा-तालपुट विष यथा तालपुट नामना प्रसिद्ध झेर जेवा छे एटले के मोढामा

=इन्द्रिय नो इन्द्रियनिग्रहवान, ब्रह्मचर्यसमाहित =ब्रह्मचर्यसमाधियुक्तः भिक्षु धर्मारामे=धर्म –श्रुतचारित्रलक्षणः, स एव सततमानन्दहेतुतया प्रतिपाल्यतया च आरामो, धर्माराम', यद्वा–धर्म आराम इव कर्मसन्तापसतप्तानां प्राणिनां शिवसुखहेतुत्वादभिलपितफलदायकत्वाच्च धर्मारामस्तस्मिन चरेत्=विहरेत् ॥१५॥

ब्रह्मचर्यमाहात्म्यमाह––

मूलम्––देवदानवगंधव्वा, जक्ख रक्खस किनरा ।
बंभयारी नमसंति, दुक्करं जे करंति ते ॥१६॥

छाया––देव दानव गन्धर्वा, यक्षराक्षस किन्नरा' ।
ब्रह्मचारिणो नमस्यन्ति, दुष्कर ये कुर्वन्ति तान् ॥१६॥

टीका—'देव दानव' इत्यादि ।

ये पुरुषाः स्त्रियो वा दुष्करम्=कातरजनैर्दुरनुचर ब्रह्मचर्य कुर्वन्ति=अनुतिष्ठन्ति, तान् ब्रह्मचारिणो देवदानवगन्धर्वा.–तत्र–देवा.=विमानवासिनो ज्योतिष्काश्च, दानवा =भवनपतय., गन्धर्वा.=देवगायका.–अष्टमव्यन्तरदेवाः, तथा–

एव नो इन्द्रिय का निग्रह करनेवाला तथा (बंभचेरसमाहिए–ब्रह्मचर्य समाहितः) ब्रह्मचर्यमे समाधिसपन्न ऐसा (भिक्खू–भिक्षुः) मुनि (धम्मारामे चरे–धर्मारामे चरेत्) श्रुतचारित्र रूप धर्माराममे–धर्मबगीचे मे विचरे । आराम–जिस प्रकार गर्मी से सतप्त प्राणिगणो के लिये आनद का हेतु होता है और इसीलिये वह सरक्षणीय होता है इसी प्रकार कर्मों के सतापसे सतप्त प्राणिगणों के लिये शिवसुखका हेतु होने से तथा अभिलपित फल प्रदाता होने से धर्म को आराम की उपमा दी गई है ॥१५॥

'देवदानवगधव्वा' इत्यादि—

अन्वयार्थ—(जे–ये) जो स्त्री अथवा पुरुष (दुक्करं–दुष्करम्) कायर

ઈન્દ્રિય અને નો ઈન્દ્રિયનો નિગ્રહ કરવાવાળા તથા बंभचेर समाहिए–ब्रह्मचर्य समाहित. બ્રહ્મચર્યમા સમાધિસપન્ન એવા भिक्खू–भिक्षुः મુનિ धम्मारामे चरे –धर्मारामे चरे શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મારામમા–ધર્મ બગીચામા વિચરે આરામ–જે પ્રમાણે ગરમીથી સતપ્ત પ્રાણીગણોને માટે આનદનો હેતુ હોય છે અને એજ કારણે તે સરક્ષણીય હોય છે આ રીતે કર્મોના સતાપથી સતપ્ત પ્રાણીગણોને માટે શિવસુખનો હેતુ હોવાથી તથા અભિલષિત ફળ પ્રદાતા હોવાથી ધર્મને આરામની ઉપમા આપવામા આવેલ છે ॥૧૫॥

"देवदानवगधव्वा" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—जे–ये જે સ્ત્રી અથવા પુરુષ दुक्करं–दुष्करम् કાયરજનો દ્વારા

जनकानि स्त्रीपशुपण्डकसहितस्थानादीनि वर्जयेत्। अन्यथा-जिनाज्ञाभङ्गचारित्र विराधनामिथ्यात्वादयो दोषा भवन्ति ।१४॥

एतद्वर्जकः सयत यत्कुर्यात्तदाह—

मूलम्—धम्मारामे चरे भिक्खू , धीइमं धम्मसारही ।
धम्मारामरए दंते , बंभचेरसमाहिए ॥१५॥

छाया—धर्मारामे चरेद् भिक्षुः, धृतिमान् धर्मसारथिः ।
धर्मारामरतो दान्तो, ब्रह्मचर्यसमाहितः ॥१५॥

टीका—'धम्मारामे' इत्यादि ।

धृतिमान्=धृतिः-परीषहोपसर्गसहनक्षमता, तद्वान्, धर्मसारथिः=धर्मस्य-धर्मस्वरथस्य सारथिः-वाहकः-'ठिओ उ ठावए परं' इति वचनादन्यानपि धर्मे प्रवर्त्तयिता अत एव धर्मारामरतः-श्रुतचारित्रधर्मोद्यानविचरणशील , दान्त

वर्जयेत्) परित्याग करे। तथा (सव्वाणि संकाठाणाणि-सर्वाणि शंकास्थानानि) शंका कांक्षा विचिकित्सा आदि जनक स्त्री पशुपंडक सहित आदि दश स्थानों को भी (वज्जेज्जा-वर्जयेत्) छोडे। नहीं तो जिनाज्ञाभंग चारित्र विराधना एवं मिथ्यात्व आदिक दोषों का पात्र उस साधु को होना पडेगा ॥१४॥

'धम्मारामे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(धीइमं-धृतिमान्) परीषह एवं उपसर्ग के सहन करने मे क्षमतावाला तथा (धम्मसारही-धर्मसारथिः) धर्मरूप रथ का सारथि-"ठिओ उ ठावए परम्" इस वचन के अनुसार अन्यजनों को भी धर्म मे प्रवृत्ति करनेवाला अतएव (धम्मारामरए-धर्मारामरत) श्रुतचारित्ररूप धर्मोद्यान में विचरण शील तथा (दंते-दान्त) इन्द्रिय

परिवर्जयेत् परित्याग करे तथा सव्वाणि संकाठाणाणि-सर्वाणि शंकास्थानानि तथा शंक-आशंक विचिकित्सा आदि जनक स्त्री, पशु, पंडक सहित आदि दश स्थानोने पण वज्जेज्जा-वर्जयेत् छोडे नही तो जीन आज्ञा भंग चारित्र विराधना अने मिथ्यात्व आदिक दोषोने पात्र ए साधुए थवु पडशे ॥१४॥

"धम्मारामे ईत्यादि ।

अन्वयार्थ—धीइमं-धृतिमान परिषह अने उपसर्गने सहन करवामा क्षमतावाळा तथा धम्मसारही-धर्मसारथि धर्म रूप रथना सारथी "ठिओ उ ठावए परम्" आ वचन अनुसार अन्य जनोने पण धर्मना प्रवृत्ति करावावाळा, अतएव धम्मारामरए-धर्मारामरत श्रुतचारित्ररूप धर्म ध्यानमा विचरणशील तथा दंते-दान्त

पर्येरस्य ब्रह्मचर्यधर्मस्य सप्रमाणता प्रतिपादिता। अस्य त्रिकालगोचरफलमाह– अनेन ब्रह्मचर्यलक्षणधर्मेण पुरा अनन्तासु उत्सर्पिण्यवसर्पिणीषु सिद्धा अभूवन्, सम्प्रति महाविदेहेषु सिध्यन्ति च। तथा–अपरे अनागतायामनन्ताद्धाया सेत्स्यन्ति=सिद्धा भविष्यन्ति। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्य ॥१७॥

इतिश्री–विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित कलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–शाहूछत्रपति–कोल्हापुर–राजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकर–पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्या टीकाया ब्रह्मचर्यसमाधिनामकं षोडशमध्ययनं सपूर्णम् ।

–नित्य') द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अप्रच्युत अनुत्पन्न एव स्थिर एक स्वभाववाला है और (सासए–शाश्वतः) पर्यायार्थिकनयकी अपेक्षा से शाश्वत्–निरतर अन्य अन्य रूपों द्वारा उत्पन्न होने की वजह से शाश्वत है। अथवा त्रिकाल में भी अविनश्वर होने से नित्य, तथा त्रिकाल मे फलदायक होने से शाश्वत है। इन ध्रुवादि विशेषणों द्वारा सूत्रकार ने इस ब्रह्मचर्यव्रत में प्रमाणता प्रतिपादित की है। त्रिकाल मे इसका क्या फल होता है, इस विषय को सूत्रकार बतलाते है (अणेण–अनेन) इस ब्रह्मचर्यरूप धर्म से (पुरा) अनत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालो मे (सिद्धा) सिद्ध हुए है (सिज्झंति–सिध्यन्ति) महाविदेहोंमे अभि भी सिद्ध होंगे। (त्तिबेमि–इति ब्रवीमि) ऐसा व्याख्यान मैंने हे जम्बू ! श्री महावीर प्रभु के मुखसे सुना है सो तुमसे भी ऐसा ही कहा है॥१७॥

इस प्रकार यह सोलहवा अध्ययन का हिन्दी अनुवाद सपूर्ण हुआ ॥१६॥

અપ્રચ્યુત અનુત્પન્ન અને સ્થીર એક સ્વભાવવાળા છે અને सासए–शाश्वतः પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાથી શાશ્વત–નિરતર અન્ય અન્ય રૂપો દ્વારા ઉત્પન્ન હોવાને કારણે શાશ્વત છે અથવા ત્રિકાળમા પણ અવિનશ્વર હોવાથી નિત્ય, તથા ત્રિકાળમા ફળદાયક હોવાથી શાશ્વત છે આ ધ્રુવાદિ વિશેષણો દ્વારા સુત્રકારે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતમા પ્રમાણતા પ્રતિપાદિત કરવામા આવેલ છે ત્રિકાળમા આનુ શુ ફળ મળે છે આ વિષયને સૂત્રકાર બતાવે છે अणेण–अनेन આ બ્રહ્મચર્યરૂપ ધર્મથી पुरा અનત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી કાળોમાં सिद्धा–सिद्धा' સિદ્ધ થયેલ છે सिज्झति–सिध्यन्ति મહાવિદેહોમા આજે પણ સિદ્ધ થાય છે અને અનાગત અનતકાળોમા પણ સિદ્ધ થશે એવુ વ્યાખ્યાન હે જમ્બૂ ! મે શ્રી મહાવીર પ્રભુના મુખથી સાભળેલ છે त्तिबेमि–इति ब्रवीमि એ પ્રમાણે જ તમોને કહેલ છે ॥૧૭॥

આ પ્રમાણે શ્રી ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રના સોળમા અધ્યયનનો ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સપૂર્ણ

यक्षराक्षसकिन्नराः-तत्र-यक्षाः=तृतीयव्यन्तरदेवाः, राक्षसाः=चतुर्थव्यन्तरदेवाः, किन्नराः=पञ्चमव्यन्तरदेवाः उपलक्षणात्सर्वेऽपिदेवा नमस्यन्ति=प्रणमन्ति ॥१६॥

सम्प्रत्यध्ययनमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—एस धम्मे धुवे निच्चे, सासए जिणदेसिए ।
सिद्धा सिज्झंति चाणेणं, सिज्झिस्संति तहा वरे त्ति बेमि ॥१७॥

छाया—एष धर्मो ध्रुवो नित्यः, शाश्वतो जिनदेशितः ।
सिद्धाः सिध्यन्ति चानेन, सेत्स्यन्ति तथाऽपरे इति ब्रवीमि ॥१७॥

टीका—'एस' इत्यादि ।

एषः=अस्मिन्नध्ययने कथितः-जिनदेशितो धर्मः=ब्रह्मचर्यलक्षणो ध्रुवः=स्थिरः परवादिभिरखण्डनीयत्वात्, तथा-नित्यः=द्रव्यार्थिकतयाऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावः, शाश्वतः=पर्यायार्थिकतया शाश्वदन्यान्यरूपेणोत्पन्नत्वात्, यद्वा-नित्यः=त्रिकालेऽप्यविनश्वरत्वात्, शाश्वतः=त्रिकालफलदायकत्वात् ध्रुवादिविशे

जनो द्वारा दुष्कर इस ब्रह्मचर्य का (करंति-कुर्वन्ति) पालन करते है (ते-तान्) उन ब्रह्मचारियो को (देवदानवगंधव्वा जक्खरक्खसकिंनरा-देवदानवगंधर्वाः यक्षराक्षसकिन्नराः) देव-विमानवासी तथा ज्योतिषी, दानव भवनपति, गंधर्व-देवगायक, आठवें व्यन्तर देव तथा यक्ष-तृतीयव्यन्तरदेव राक्षस-चतुर्थव्यन्तर देव, किंनर-पंचमव्यन्तरदेव, इस प्रकार समस्त देव (नमंसंति-नमस्यन्ति) नमस्कार करते है ॥१६॥

अब अध्ययनका उपसंहार करते है—'एस धम्मे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(एस-एष) इस अध्ययन मे कथित यह (जिणदेसिए-जिनदेशित) जिनेन्द्रद्वारा प्रतिपादित (धम्मे-धर्म) ब्रह्मचर्यरूप धर्म (धुवे-ध्रुव) परवादियो द्वारा अखण्डनीय होने से स्थिर तथा (निच्चे

દુશ્ચર એવા બ્રહ્મચર્યનું करंति-कुर्वन्ति પાલન કરે છે ते-तान् એ બ્રહ્મચારીઓને देवदानवगंधव्वा जक्खरक्खसकिंनरा-देवदानवगंधर्वा यक्षराक्षसकिन्नरा દેવ-વિમાનવાસી તથા જ્યોતિષી દાનવ-ભવનપતિ, ગાંધર્વ-દેવ ગાયક આઠમા વ્યન્તર-દેવ તથા યક્ષ-ત્રીજા વ્યંતર દેવ, રાક્ષસ-ચોથા વ્યન્તરદેવ કિન્નર-પાંચમા વ્યન્તર દેવ, આ પ્રકારે સમસ્ત દેવ नमंसंति-नमस्यन्ति નમસ્કાર કરે છે ॥१६॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરે છે-' एस धम्मे ' ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—एस-एष આ અધ્યયનમાં કહેવામાં આવેલ આ जिणदेसिए-જીનેન્દ્રદ્વારા પ્રતિપાદિત धम्मे-धर्म બ્રહ્મચર્યરૂપ ધર્મ धुवे-ध्रुव બીજા વાદવાળા આવા અખંડનીય હોવાથી સ્થિર તથા निच्चे-नित्य દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષા

पञ्चेरस्य ब्रह्मचर्यधर्मस्य सप्रमाणता प्रतिपादिता । अस्य त्रिकालगोचरफलमाह—अनेन ब्रह्मचर्यलक्षणधर्मेण पुरा अनन्तासु उत्सर्पिण्यवसर्पिणीषु सिद्धा अभूवन्, सम्प्रति महाविदेहेषु सिध्यन्ति च । तथा—अपरे अनागतायामनन्ताद्धायां सेत्स्यन्ति=सिद्धा भविष्यन्ति । 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थं पूर्ववद् बोध्य ॥१७॥

इतिश्री—विश्वविख्यात—जगद्वल्लभ—प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित कलापालापक—प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक—वादिमानमर्दक—शाहू-छत्रपति—कोल्हापुर—राजप्रदत्त—'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु—बालब्रह्मचारि—जैनाचार्य—जैनधर्मदिवाकर—पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां टीकायां ब्रह्मचर्यसमाधिनामकं षोडशमध्ययनं सपूर्णम् ।

-नित्य.) द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अप्रच्युत अनुत्पन्न एव स्थिर एक स्वभाववाला है और (सासए–शाश्वतः) पर्यायार्थिकनयकी अपेक्षा से शाश्वत्–निरंतर अन्य अन्य रूपों द्वारा उत्पन्न होने की वजह से शाश्वत है। अथवा त्रिकाल मे भी अविनश्वर होने से नित्य, तथा त्रिकाल मे फलदायक होने से शाश्वत है। इन ध्रुवादि विशेषणो द्वारा सूत्रकार ने इस ब्रह्मचर्यव्रत मे प्रमाणता प्रतिपादित की है। त्रिकाल मे इसका क्या फल होता है, इस विषय को सूत्रकार बतलाते हैं (अणेण–अनेन) इस ब्रह्मचर्यरूप धर्म से (पुरा) अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालो मे (सिद्धा) सिद्ध हुए हैं (सिज्झंति–सिध्यन्ति) महाविदेहोमे अभि भी सिद्ध होंगे। (त्तिबेमि–इति ब्रवीमि) ऐसा व्याख्यान मैने हे जम्बू! श्री महावीर प्रभु के मुखसे सुना है सो तुमसे भी ऐसा ही कहा है॥१७॥

इस प्रकार यह सोलहवा अध्ययन का हिन्दी अनुवाद सपूर्ण हुआ॥१६॥

અપ્રચ્યુત અનુત્પન્ન અને સ્થીર એક સ્વભાવવાળા છે અને सासए–शाश्वतः પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાથી શાશ્વત–નિરંતર અન્ય અન્ય રૂપો દ્વારા ઉત્પન્ન હોવાને કારણે શાશ્વત છે અથવા ત્રિકાળમા પણ અવિનશ્વર હોવાથી નિત્ય, તથા ત્રિકાળમા ફળદાયક હોવાથી શાશ્વત છે આ ધ્રુવાદિ વિશેષણો દ્વારા સૂત્રકારે આ બ્રહ્મચર્ય વ્રતમા પ્રમાણતા પ્રતિપાદિત કરવામા આવેલ છે ત્રિકાળમા આનુ શુ ફળ મળે છે આ વિષયને સૂત્રકાર બતાવે છે अणेण–अनेन આ બ્રહ્મચર્યરૂપ ધર્મથી पुरा અનંત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી કાળોમા सिद्धा–सिद्धा સિદ્ધ થયેલ છે सिज्झति–सिध्यन्ति મહાવિદેહોમા આજે પણ સિદ્ધ થાય છે અને અનાગત અનંતકાળોમા પણ સિદ્ધ થશે એવુ વ્યાખ્યાન હે જમ્બૂ! મે શ્રી મહાવીર પ્રભુના મુખથી સાભળેલ છે त्तिबेमि–इति ब्रवीमि એ પ્રમાણે જ તમોને કહેલ છે ॥૧૭॥

આ પ્રમાણે શ્રી ઉત્તરાધ્યનસૂત્રના સોળમા અધ્યનનો ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સંપૂર્ણ

सप्तदशमध्ययनं प्रारभ्यते

व्याख्यातं षोडशमध्ययनम्। सम्प्रति सप्तदशमारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः-पूर्वाध्ययने ब्रह्मचर्यगुप्तयः प्रोक्ताः, ताः पापस्थानवर्जनादेव भवन्ति। पापस्थानसेवनात् पापश्रमणा भवन्ति। ततः पापश्रमणानां स्वरूपं प्रतिबोधयितुमिदमध्ययनमारभ्यते। तस्यायगाथामाह—

मूलम्—जे केइ उ पव्वइए नियंठे, धम्मं सुणित्ता विणयोववण्णे।
सुदुल्लहं लहिउं बोहिलाभं, विहरेज्ज पच्छा य जहासुहं तु ॥१॥

छाया—यः कश्चित्तु प्रव्रजितो निर्ग्रन्थो, धर्मं श्रुत्वा विनयोपपन्नः।
सुदुर्लभं लब्ध्वा बोधिलाभं, विहरेत् पश्चाच्च यथासुखं तु ॥१॥

टीका—'जे केइ' इत्यादि।

यः कश्चित्-मोक्षाभिलाषी पुरुषः 'तु' इति निश्चयेन स्थविरानगारादि

॥ सत्रहवां अध्ययन प्रारंभ ॥

सोलहवां अध्ययनका व्याख्यान हो चुका अब सत्रहवां अध्ययन प्रारंभ होता है। इस अध्ययनका संबंध पहिले अध्ययनके साथ-अर्थात् सोलहवें अध्ययनके साथ-इस प्रकारसे है-वहां पर जो ब्रह्मचर्यकी गुप्तियां कही गई हैं सो वे गुप्तियां पापस्थानोंके वर्जनसे ही हो सकती हैं। अन्यथा नहीं। पापस्थानोंके सेवनसे तो पापश्रमण होते हैं। इसलिये पापश्रमणोंके स्वरूपको समझानेके लिये इस अध्ययनका प्रारंभ किया गया है। इसकी यह आद्य गाथा है—

'जे केइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जे केइ-यः कश्चित्) जो कोई मोक्षाभिलाषी पुरुष

સત્તરમા અધ્યયનનો પ્રારંભ—

સોળમું અધ્યયન સંપૂર્ણ થયું છે, હવે સત્તરમા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે આ અધ્યયનનો સંબંધ સોળમા અધ્યયન સાથે આ પ્રકારનો છે—સોળમા અધ્યયનમાં બ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિઓ કહેવામાં આવેલ છે એ ગુપ્તિઓ પાપસ્થાનોના વર્જનથી થઈ શકે છે, એના સિવાય નહીં પાપસ્થાનોના સેવનથી તો પાપશ્રમણ થાય છે આ કારણે પાપશ્રમણોના સ્વરૂપને સમજાવવા માટે આ અધ્યયનનો પ્રારંભ કરવામાં આવે છે આની આ પ્રથમ ગાથા છે— "जे केइ" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—जे केइ-यः कश्चित् જે કોઈ મોક્ષાભિલાષી પુરુષ સ્થવિર અણગાર

समीपे धर्मं=श्रुतचारित्ररूपं श्रुत्वा, तथा-सुदुर्लभं=अत्यन्तदुष्प्रापं बोधिलाभम्=सम्यग्दर्शनप्राप्तिरूपं लब्ध्वा=प्राप्य विनयोपपन्नः=विनयेन-ज्ञानविनयेन, दर्शनविनयेन, चारित्रविनयेन उपचारविनयेन=गुर्वादिशुश्रूषालक्षणेन च उपपन्नः=युक्तो भूत्वा प्रव्रजितः सन् निर्ग्रन्थः=संयतो जातः। सिंहवृत्त्या दीक्षां गृहीतवानिति भावः। च=पुनः पश्चात्=दीक्षाग्रहणानन्तरं यथासुखं तु=यथासुखमेव-निद्राप्रमादादिपरतया शृगालवृत्त्यैव-'तु' शब्द एवकारार्थकः विहरेत्=विहारं कुर्यात् स 'पापश्रमण' इत्युच्यते, इत्यग्रेण सम्बन्धः ॥१॥

पूर्वोक्तरूपः प्रमादी मुनिर्गुर्वादिना-'हे शिष्य ! त्वमधीष्व' इत्येवं प्रेरितः सन् ब्रवीति तदाह—

मूलम्—सेज्जा दढा पाउरणं मे अत्थि, उप्पज्जइ भोत्तुं तहेव पाउं।
जाणामि जं वट्टइ आउसुत्ति, किं नाम काहामि सुएण भंते ! ॥२॥

छाया—शय्या दृढा प्रावरणं मे अस्ति, उत्पद्यते भोक्तुं तथैव पातुम्।
जानामि यद्वर्तते, आयुष्मन्निति, किं नाम करिष्यामि श्रुतेन भदन्त ॥२॥

टीका—'सेज्जा' इत्यादि।

हे आयुष्मन् ! गुरो ! मे=मम दृढा=वातातपजलाद्युपद्रवनिवारिका शय्या

स्थविर अनगार आदिके समीप (धम्मं सुणित्ता-धर्मं श्रुत्वा) श्रुतचारित्ररूप धर्मका श्रवण कर तथा (सुदुल्लहं बोहिलाभं लहिउ-सुदुर्लभं बोधिलाभम् लब्ध्वा) अत्यन्त दुष्प्राप्य सम्यग्दर्शन प्राप्तिरूप बोधिलाभ प्राप्त करके (विणओववण्णे-विनयोपपन्नः) ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय, एवं उपचारविनय,=गुर्वादिशुश्रूषारूपसे युक्त बन (पव्वइए नियंठे-प्रव्रजितो निर्ग्रन्थः) दीक्षित होकर निर्ग्रन्थ साधु हो जाता है-सिंहवृत्तिसे दीक्षा धारण कर लेता है, परंतु पीछेसे वही व्यक्ति दीक्षा धारण करनेके बाद (जहासुहम्-यथासुखम्) निद्रा प्रमादिकमें तत्पर हो जानेके कारण शृगालवृत्तिसे (विहरेज्ज-विहरेत्) विचरता है ॥१॥

आदिनी समीप धम्मं सुणित्ता-धर्मं श्रुत्वा श्रुत चारित्ररूप धर्मनुं श्रवण करी तथा सुदुल्लह बोहिलाभं लहिउ-सुदुर्लभं बोधिलाभम् लब्ध्वा अत्यंत दुष्प्राप्य सम्यग्दर्शन प्राप्तिरूप बोधिलाभ प्राप्त करीने विणयोववण्णे-विनयोपपन्न ज्ञानविनय, चारित्रविनय अने उपचारविनय-गुरु आदिकोनी सेवारूपथी युक्त बनीने पव्वइए नियंठे-प्रव्रजितो निर्ग्रन्थ दीक्षित थईने निर्ग्रंथ-साधु बनी जाय छे सिंहवृत्तिथी दीक्षा धारण करी ले छे, परंतु पछीथी एज व्यक्ति दीक्षा धारण कर्या पछी जहासुहम्-यथासुखम् निद्राप्रमाद आदिमां तत्पर थई जवाना कारणे शृगालवृत्तिथी विहरेज्ज-विहरेत् विचरे छे ॥१॥

=वसति, तथा-दृढ=हिमानिलनिवारणसमर्थं 'चादर' इति भाषा प्रसिद्ध प्रावरण च अस्ति। उपलक्षणत्वात्-रजोहरणपात्राद्युपकरणं चापि मम पर्याप्तम्, तथा-मम भोक्तुम् अशनादिकम्, तथा पातुं=जलदुग्धादिकं पानं च उपपद्यते= पर्याप्त मिलति। तथा-यद् जीवाजीवादि तत्त्वं वर्तते, तदप्यहं जानामि। इति= अस्माद् हेतो हे भदन्त! श्रुतेन=शास्त्राध्ययनेन किं नाम करिष्यामि-नास्ति किमपि शास्त्राध्ययनस्य प्रयोजनमित्यर्थः ?। अयं भावः-ये भदन्तोऽधीयते,

ऐसे श्रमणको जब गुरु आगम पढनेके लिये कहते है, तो वह क्या कहता है-यह बात इस गाथा द्वारा सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं-

'सेज्जा दढा' इत्यादि—

अन्वयार्थ--(आउसु-आयुष्मन्) हे, आयुष्मन् गुरु महाराज! (मे-मे) मेरे पास (सज्जा-शय्या) जो वसति है वह (दढा-दृढा) वात आतप एव जलादिक के उपद्रवो से सुरक्षित है। तथा (पाउरण दढ-प्रावरण दृढम्) जो चादर है वह भी शीत आदि के उपद्रवसे मेरी रक्षा करसके ऐसी है। इसी तरह रजोहरण एव पात्रादिक उपकरण भी मेरे पास पर्याप्तमात्रामे है। तथा (भोत्त पाउ उप्पज्जइ-भोक्तु पातु उपपद्यते एव) खाने पीने को पर्याप्त मिल ही जाता है (ज वट्टइ त जाणमि-यद्वर्तते तत् जानामि) शास्त्रमे जीव अजीव आदिक जो तत्त्ववर्णित हुए हैं उनके विषयमे भी मै जानता हू। इसलिये (भते-भदन्त) हे भदन्त! (सुएण किं नाम काहामि-श्रुतेन कि नाम करिष्यामि) शास्त्र पढकर अब मै क्या करूँगा।

એવા શ્રમણને જ્યારે ગુરુ આગમ ભણવાનુ કહે છે ત્યારે તે શુ કહે છે? એ વાત આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે—"सेज्जा दढा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—आउसु-आयुष्मन् હે આયુષ્યમાન ગુરુ મહારાજ! मे-मे મારી પાસે सेज्जा-शय्या જે વસતિ છે તે दढा-दृढा વાત આતાપ-તડકો અને જળાદિકના ઉપદ્રવોથી સુરક્ષિત છે, તથા पाउरण दढ-प्रावरण दृढ જે ચાદર છે તે પણ ઠડી આદિના ઉપદ્રવથી મારી રક્ષા કરી શકે તેમ છે આજ પ્રમાણે રજોહરણ અને પાત્રાદિક ઉપકરણ પણ મારી પાસે પર્યાપ્તમાત્રામા છે તથા भोत्तु पाउ उप्पज्ज -भोक्तु पातु उपपद्यते एव ખાવાપીવાનુ પર્યાપ્ત મળી જ જાય છે ज वट्टइ त जानामि-यद्वर्तते तत् जानामि શાસ્ત્રમા જીવ અજીવ આદિક જે તત્વનુ વર્ણન કરાયેલ છે એમના વિષયમા પણ હુ જાણુ છુ આ કારણે भते- भदन्त હે ભદન્ત! શાસ્ત્ર ભણીને હવે હુ શુ કરૂ?

तेऽप्यतीन्द्रियं किमपि वस्तु न जानन्ति। पञ्चमारके केवलज्ञानाभावात्। तर्हि कि प्रयोजनं हृदयगलतालुशोषणेनाऽध्ययनेन' इत्येवमध्यवसाययुक्तो निर्ग्रन्थः पापश्रमण इत्युच्यते, इत्यग्रेण सम्बन्धः ॥२॥

अथ पापश्रमणलक्षणानि प्राह--

मूलम्—जे' केइ पव्वइए, निद्दासीले पगामसो।
भोच्चा पेच्चा सुहं सुअइ, पावसमणे-त्ति' वुच्चइ ॥३॥

छाया--यः कश्चित् प्रव्रजितो, निद्राशीलः प्रकामशः।
भुक्त्वा पीत्वा सुखं स्वपिति, पापश्रमण इत्युच्यते ॥३॥

टीका--'जे केइ' इत्यादि।

यः कश्चित् प्रव्रजितो=गृहीतदीक्षः साधुः मनोज्ञमशनादिकं प्रकामशः=

भावार्थ—जिनदीक्षा धारण करनेसे मेरी संयम अवस्था की सब कुछ आवश्यकताएं पूर्ण हो ही जाती है, कमी तो किसी बातकि रहती नही है, अतः आगम पढनेसे मुझे क्या लाभ है? जो आप लोग पढते है वे भी अतीन्द्रिय तत्त्वों को तो जान नही सकते है। क्यों कि पंचमकाल मे केवल ज्ञानका अभाव बतलाया गया है। तो फिर हृदय, गला एवं तालु को शुष्क बना देने वाले अध्ययनसे क्या प्रयोजन सध सकता है। अर्थात् कुछ भी नही, ऐसे बोलनेवाला पापश्रमण कहलाता है ॥२॥

अब यहां से पापश्रमणके लक्षण कहते है-'जे केइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जे केइ-यः कश्चित्) जो कोई (पव्वइए-प्रव्रजितः) दीक्षित साधु मनोज्ञ अशनादिकको (पगामसो-प्रकामशः) अत्यंत

ભાવાર્થ—જીન દીક્ષા ધારણ કરવાથી મારી સંયત અવસ્થાની બધી આવશ્યકતાઓ પૂર્ણ થઈ જાય છે આમાં કોઈ વાતની કમી પણ રહેતી નથી આથી આગમ ભણવાથી મને શું લાભ છે? આપ લોકો ભણો છો તેમ છતાં પણ અતીન્દ્રિય તત્વોને તો જાણી શકતા નથી કેમ કે પંચમકાળમાં કેવળ જ્ઞાનનો અભાવ બતાવેલ છે, તો પછી હૃદય, ગળુ અને તાળવાને શુષ્ક બનાવી દેનારા અધ્યયનોથી કયું પ્રયોજન સાધી શકાવાનું છે? અર્થાત્—કંઈ પણ નહીં, આવું બોલવાવાળા પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૨॥

હવે અહીં પાપશ્રમણના લક્ષણ કહેવામાં આવે છે—"जे केइ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—जे केइ-यः कश्चित् જે કોઇ पव्वइए-प्रव्रजितः દીક્ષિત સાધુ મનોજ્ઞ અશનાદિકને पगामसो-प्रकामशः અત્યંત भोच्चा भुक्त्वा ખાઈને તથા पेच्चा

अत्यन्त भुक्त्वा, दुग्धतक्रादिकं च प्रकामम् पीत्वा निद्राशीलः=निद्रालुः सन् सुखं यथा स्यात्तथा स्वपिति=शेते, स पापश्रमणः पापिष्ठ साधुरित्युच्यते ॥३॥

पुनरप्याह—

मूलम्—आयरियउवज्झाएहिं, सुयं विणयं च गाहिए ।
तें चेव खिंसई वाले, पावसमणे-त्ति वुच्चइ ॥४॥

छाया—आचार्योपाध्यायैः, श्रुतं विनयं च ग्राहितः ।
तानेव खिंसति बालः, पापश्रमण इत्युच्यते ॥४॥

टीका—'आयरिय' इत्यादि ।

आचार्योपाध्यायैः श्रुतम्=आगमं शब्दतः अर्थतश्च, विनयं=ज्ञानदर्शनचा-

---

(भोच्चा-भुक्त्वा) खा करके (पेच्चा-पीत्वा) तथा दुग्ध, तक्र आदि को खूब मनमाना पी करके (निद्दासीले-निद्राशील) निद्रा प्रमादमें पडकर (सुहं सुअइ-सुखं स्वपिति) सुखपूर्वक सोता रहता है (से पावसमणे त्ति वुच्चइ-सः पापश्रमणः इत्युच्यते) वह साधु पापश्रमण है-वह पापिष्ठ साधु है ऐसा कहा जाता है ।

भावार्थ—यथेच्छ खा पीकर जो निद्राशील बनकर सोता रहता है-धार्मिक क्रियाओंमें उपेक्षा रखता है वह साधु नहीं स्वादु पाप-श्रमण है ऐसा जानना चाहिये ॥ ३ ॥

तथा-'आयरिय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो मुनि (आयरिय उवज्झाएहिं-आचार्योपाध्यायैः) आचार्य एवं उपाध्याय (सुयं विणयं च गाहिए-श्रुतं विनयं च ग्राहितः) शास्त्र पढने की तथा विनयशील-ज्ञान दर्शन चारित्र एवं उपचार विनय

पीत्वा દૂધ, છાશ આદિને મનમાની રીતે ખૂબ પીને निद्दासीले-निद्राशील' નિદ્રા-પ્રમાદમા પડી सुह सुहइ-सुखं स्वपिति સુખપૂર્વક સુઇ રહે છે से पावसमणेत्ति वुच्चइ-सः पापश्रमण इति उच्यते તે સાધુ પાપશ્રમણ છે એવુ કહેવામા આવે છે

ભાવાર્થ—યથેચ્છ ખાઇ પીને જે નિદ્રાશીલ થઇને સૂતા રહે છે-ધાર્મિક ક્રિયાઓમા ઉપેક્ષાવૃત્તિ રાખે છે તે સાધુ નહીં પરંતુ પાપશ્રમણ છે એવુ જાણવુ જોઈએ ॥૩॥

તથા "आयरिय" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—જે મુનિ आयरिय उवज्झाएहिं-आचार्योपाध्यायैः આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયને सुय विणय च गाहिए-श्रुत विनय च ग्राहित શાસ્ત્ર ભણવાની, તથા વિનયશીલ જ્ઞાન દર્શન આદિ અને ઉપચાર વિનયને પાલન કરવાનુ શિક્ષણ આપે

रित्रोपचारात्मकं च ग्राहितः=शिक्षितस्तानेव आचार्यादीन् यो बालः=अज्ञानी खिंसति=निन्दति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥४॥

इत्थं ज्ञानाचारप्रमादिनमुक्त्वा सम्प्रति दर्शनाचारप्रमादिनमाह—

मूलम्—आयरियउवज्झायाणं, सम्मं नं पडितप्पए ।
अप्पडिपूयए थद्धे, पावसमणे-त्ति वुच्चइ ॥५॥

छाया—आचार्योपाध्यायानां, सम्यङ् न परितृप्यति ।
अप्रतिपूजकः स्तब्धः, पापश्रमण इत्युच्यते ॥५॥

टीका—'आयरिय' इत्यादि ।

यः साधुः आचार्योपाध्यायानाम्=आचार्योपाध्यायगुर्वादीन सम्यक्=शास्त्रोक्तरीत्या न परितृप्यति=परितर्पयति=सेवाशुश्रूषादिभिर्न प्रसादयति । तथा-अप्रतिपूजकः=केनचिन्मुनिनोपकृतोऽपि न प्रत्युपकारकः, तथा-स्तब्धः अहङ्कारी, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥५॥

को पालन करने की-शिक्षा देते हैं तो (बाले-बालः) यह बाल श्रमण (ते चेव खिंसइ-तानेव खिंसति) उन पर भी रुष्ट होता है, उनकी भी निंदा करने लगता है वह पापश्रमण है ॥ ४ ॥

इस प्रकार ज्ञानाचार मे प्रमादी का स्वरूप कहकर अब सूत्रकार दर्शनाचार के प्रमादी का स्वरूप कहते है—

'आयरिय०' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो साधु (आयरिय उवज्झायाणं सम्मं न पडितप्पइ-आचार्योपाध्यायाना सम्यक् न परितृप्यति) आचार्य उपाध्याय आदि गुरुजनोंको शास्त्रोक्त पद्धति के अनुसार सेवा शुश्रूषा आदि द्वारा प्रसन्न नही करता है तथा (अप्पडिपूयए-अप्रतिपूजक) अपने ऊपर उपकार करने वाले मुनिजनोका भी जो प्रत्युपकार नही करता है एवं

છે ત્યારે बाले-बालः એ બાલશ્રમણ ते चेव खिंसइ-तानेव खिंसति એમના ઉપર રૂષ્ટ થાય છે, એમની પણ નિંદા કરવા લાગે છે, તે પાપશ્રમણ છે ॥૪॥

આ પ્રમાણે જ્ઞાન આચારમાં પ્રમાદીનું સ્વરૂપ કહીને હવે સૂત્રકાર દર્શનાચારના પ્રમાદીનું સ્વરૂપ કહે છે—"आयरिय" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ आयरिय उवज्झायाणं सम्मं न पडितप्पइ-आचार्योपाध्यायाना सम्यक् न परितृप्यति આચાર્ય ઉપાધ્યાય આદિ ગુરૂજનોની શાસ્ત્રોક્ત પદ્ધતિના અનુસાર સેવા શુશ્રૂષા કરીને તેમને પ્રસન્ન કરતા નથી, તથા अप्पडि-

सम्प्रति चारित्राचार प्रमादिनमाह--

मूलम्--सम्मद्दमाणे पाणाणि, बीयाणि हरियाणि य ।
असंजए संजयमन्नमाणो, पावसमणे-त्ति वुच्चइ ॥६॥

छाया--सम्मर्दयन् प्राणान्, बीजानि हरितानि च ।
असंयतः संयतं मन्यमानः, पापश्रमण इत्युच्यते ॥६॥

टीका--'सम्मद्दमाणे' इत्यादि ।

प्राणान्=प्राणिनो-द्वीन्द्रियादीन्, बीजानि=शाल्यादीनि, हरितानि दूर्वादीनि, उपलक्षणत्वात् सर्वाण्यप्येकेन्द्रियाणि च सम्मर्दयन्=चरणादिभिः पीडयन्, अतएव-असंयतः=संयतभावरहितः, तथाप्यात्मानं संयतं मन्यमानो योऽस्ति, स पापश्रमण इत्युच्यते ।६॥

(थद्धे-स्तब्ध.) जो अहंकार मे ही मस्त बना रहता है वह मुनि पापश्रमण है, अर्थात् दर्शनाचार मे शिथिल होने से वह साधुके कर्तव्यसे बहुत दूर है वास्तविक साधु नही है ॥५॥

अब चारित्राचार मे प्रमाद करनेवाले का स्वरूप कहते हैं—

'समद्दमणे' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (पाणाणि बीयाणि सम्मद्दमाणे-प्राणान् बीजानि समर्दयन्) द्वीन्द्रियादि जीवोंको, शाली आदि बीजोंको, दूर्वादिक हरित अकूरोंको तथा उपलक्षणसे समस्त एकेन्द्रिय जीवोंको चरण आदि द्वारा पीडित करता हुआ (असजए-असंयत) संजमभावसे वर्जित हो रहा है, फिर भी अपने आपको जो संयत (मुनि) मान रहा है ऐसा वह साधु पापश्रमण कहलाता है ॥ ६ ॥

पूयए-अप्रतिपूजक पोताना उपर उपकार करवावाळा मुनिजनोनो पण जे प्रत्युपकार करता नथी अने थद्धे-स्तब्ध, जे अहंकारमा ज मस्त बनीने रहे छे ते मुनि पापश्रमण छे अर्थात्—दर्शनाचारमा शिथिल होवाथी ते साधुना कर्तव्यथी खूब दूर छे वास्तविक साधु नथी ॥५॥

हवे चारित्राचारमा प्रमाद करवावाळानु स्वरूप कहे छे—"समद्दमाणे" इत्यादि।

अन्वयार्थ—जे साधु पाणाणि बीयाणि सम्मद्दमाणे-प्राणान् बीजानि समर्दयन् बे इन्द्रियवाळा जीवोने, डांगर आदि बीजोने, दुर्वादिक हरित अंकुरोने तथा उपलक्षणथी समस्त एकेन्द्रिय जीवोने चरण आदि द्वारा पीडा पहोंचाडीने असजए-असयत संयम भावथी वर्जित बनी रहेल होय तेम छता पण पोते पोतानी जातने संयत मानी रहेल होय एवा ते साधु पापश्रमण कहेवाय छे ॥६॥

तथा—

मूलम्—संथारं फलगं पीढं, निसिज्जं पायकंबलं।
अप्पमज्जियमारुहइ, पावसमणे-त्ति वुच्चइ ॥७॥

छाया—संस्तारं फलकं पीठं, निषद्यां पादकम्बलम्।
अप्रमार्ज्य आरोहति, पापश्रमण इत्युच्यते ॥७॥

टीका—यः साधुः संस्तारम्=शयनासनम्, फलकं=पट्टकादिकम्, पीठं='बाजोठ' इति भाषा प्रसिद्धम्, निषद्याम्=स्वाध्यायभूमिं, पादकम्बलं=पादप्रोञ्छनार्थं कम्बलं=कम्बलखण्डं पादकम्बलं तम् ऊर्णामयं वस्त्रं उपलक्षणत्वात् सूत्रमयं वा, अप्रमार्ज्य=रजोहरणादिना, उपलक्षणत्वादप्रत्युपेक्ष्य च आरोहति=उपविशति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥७॥

तथा—

मूलम्—दवदवस्स चरइ, पमत्ते य अभिक्खणं।
उल्लंघणे य चंडे य, पावसमणे-त्ति वुच्चइ ॥८॥

छाया—द्रुतं द्रुतं चरति, प्रमत्तश्च अभीक्ष्णम्।
उल्लङ्घनश्च चण्डश्च, पापश्रमण इत्युच्यते ॥८॥

तथा-'संथारं' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (संथारं फलगं पीढं निसिज्जं पायकंबलं-संस्तारम् फलकं पीठं निषद्यां पादकम्बलम्) संस्तारक-शयनासनको फलक-पट्टक आदिको, पीठ-बाजोठको, निषद्या स्वाध्यायभूमिको, पाद-कम्बल-चरणपोंछनेका अथवा ऊर्णामय छोटे वस्त्रको (अप्पमज्जिय-अप्रमार्ज्य) रजोहरण आदिसे प्रमार्जित न करके तथा न देख करके इनपर (आरुहइ-आरोहति) बैठता है वह (पावसमणे त्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण ऐसा कहा जाता है ॥ ७ ॥

तथा 'संथारं' ईत्यादि।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ संथारं फलगं पीढं निसिज्जं पायकंबलं-संस्तारम् फलकं पीठं निषद्या-पादकम्बलम् સંસ્તારક-શયનાસનને, ફલક-પટ્ટક આદિને, પીઠ-બાજોઠને નિષદ્યા-સ્વાધ્યાય ભૂમિને, પાદકમ્બલ-પગલુછવાના ઉર્ણામય નાના વસ્ત્રને, અથવા સુતરના નાના વસ્ત્રને अप्पमज्जिय-अप्रमार्ज्य રજોહરણ આદિથી પ્રમાર્જીત ન કરીને તથા ન તો જોઈ ને તેના પર आरुहइ-आरोहति બેસે છે તે पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते પાપશ્રમણ છે એવુ કહેવામા આવે છે ॥૭॥

टीका--'दवदवस्स' इत्यादि ।

यो द्रुत द्रुत=शीघ्र शीघ्र चरति=भिक्षादौ पर्यटति, च=पुनः अभीक्ष्ण=पुन पुन' प्रमत्त =साधुक्रियासु प्रमादकारक , तथा उल्लङ्घन =साधुमर्यादोल्लङ्घनकारक', तथा-चण्ड.=क्रोधाध्मातचित्तश्च भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥८॥

तथा—

मूलम्--पडिलेहेइ पमत्ते, अवउज्झइ पायकवंल ।
पडिलेहणा अणाउत्ते, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥९॥

छाया—प्रतिलेखयति प्रमत्त' अपोज्झति पात्रकम्बलम् ।
प्रतिलेखनायामनायुक्त , पापश्रमण इत्युच्यते ॥९॥

टीका—'पडिलेहेइ' इत्यादि ।

यो वस्त्रपात्र सदोरकमुखवस्त्रिकादिक प्रमत्त सन् प्रतिलेखयति=किंचिद्

तथा 'दवदवस्स' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (दवदवस्स चरइ-द्रुत द्रुत चरति) भिक्षा आदिके समयमे जल्दी २ चलता है तथा (अभिक्खणं-अभीक्ष्णम्) बार २ (पमत्ते-प्रमत्त') साधुक्रियाओके करनेमे प्रमादी बनता रहता है। तथा (उल्लंघणे-उल्लंघन.) साधुमर्यादाका उल्लंघन करता है (चंडे-चण्ड.) क्रोध न करनेके लिये समझाने बुझाने पर भी जो क्रोध करता है (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) उसको पापश्रमण कहा गया है॥८॥

तथा—'पडिलेहेइ' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (पमत्ते-प्रमत्त') प्रमादी बनकर (पडिलेहेइ-प्रतिलेखयति) वस्त्र, पात्र, सदोरक-मुखवस्त्रिका आदि की प्रतिलेखना

તથા—"दव दवस्स" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—જે સાધુ दव दवस्स चरइ-द्रुत द्रुत चरति ભિક્ષા આદિના સમયે જલદી જલદી ચાલે છે તથા अभीक्खण-अभीक्ष्य વારવાર पमत्ते-प्रमत्त સાધુ ક્રિયાઓને કરવામા પ્રમાદી બની રહે છે તથા उल्लघणे-उल्लघन સાધુ મર્યાદાનુ ઉલ્લઘન કરે છે, चडे-चण्ड સમજાવતા સમજાવનાર સામે ક્રોધ કરે છે पावसमणे त्ति वुचइ-पापश्रमण इत्युच्यते આવા સાધુને શાસ્ત્રીય ભાષામા પાપશ્રમણ કહેવામા આવેલ છે ॥ ૮ ॥

તથા—"पडिलेहेइ" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—જે સાધુ पमत्ते-प्रमत्त પ્રમાદી બનીને पडिलेहेइ-प्रतिलेखयति વસ્ત્ર, પાત્ર, સદોરકમુખવસ્ત્રિકા વગેરેની પ્રતિલેખના કરે છે—કેટલાક ઉપકરણોનુ

वस्तु प्रतिलेखयति, किंचिन्न प्रतिलेखयति, अविधिना वा प्रतिलेखयतीत्यर्थः। तथा-पायकम्बलं=पात्रं च कम्बलं च उपलक्षणत्वात् स्वकीय सर्वमुपधिम्, प्रति लेखनक्रियायाम् अनायुक्त =अनुपयुक्तो भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥९॥

तथा—

मूलम्—पडिलेहेइ पमत्ते से जं किं चि हु णिसामियाँ।

गुरु परिभावए णिच्चं, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१०॥

छाया—प्रतिलेखयति प्रमत्तः सः, यत् किंचिद् हु निशम्य।
गुरुपरिभावको नित्यं, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१०॥

टीका—'पडिलेहेइ' इत्यादि।

यत्किंचिद् हु 'हु' शब्दोऽप्यर्थे, यत्किंचिदपि या काचिदपि वार्ता नि शम्य=श्रुत्वा तदन्यग्रचित्ततया प्रमत्तः सन् प्रतिलेखयति=वस्त्रपात्रादेः प्रति

करता है-कितनेक उपकरणो का प्रतिलेखन करता है, कितनेकका नहीं करता है अथवा अविधिपूर्वक प्रतिलेखना करता है, तथा (पायकंबल अवउज्झइ-पात्रकम्बलम् अपोज्झति) पात्र एवं कम्बल आदि अपनी उपधिकी संभाल नहीं रखता है किसी को कहीं पर किसी को कहीं पर इस तरह से उनको जहां तहां रख देता है एवं (पडिलेहणा अणा उत्ते-प्रतिलेखनायामनुपयुक्तः) प्रतिलेखन क्रियामें जो अनुपयुक्त अर्थात् उपयोगी नहीं रखा-रहता हो-प्रतिलेखन क्रिया करता तो है पर उसमें उसका उपयोग न लगा हो ऐसा साधु (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहा गया है ॥९॥

तथा—पडिलेहेइ" इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (जं किंचि णिसमिया-यत् किञ्चित अपि निशम्य) इधर उधर की बातो को सुनता हुआ (पडिलेहेइ-प्रतिलेखयति)

પ્રતિલેખન કરે કેટલાકનું કરતા નથી અથવા અવિધિપૂર્વક પ્રતિલેખન કરે છે, તથા पायकंबल अवउज्झइ-पात्रकम्बलम् अपोज्झति પાત્ર અને કમ્બલ આદિ પોતાની સઘળી ઉપધિની સંભાળ રાખતા નથી કોઈને કયાં અને કોઈને કયાં એ રીતે એને જ્યાં ત્યાં રાખી દે છે અને पडिलेहणा अणाउत्ते-प्रतिलेखनायामनुपयुक्त પ્રતિલેખન ક્રિયા કરે તો છે પરંતુ તેમાં તેનો બરોબર ઉપયોગ કરેલ ન હોય આવા સાધુને પાપશ્રમણ કહેવામાં આવેલ છે ॥૯॥

તથા—"पडिलेहेइ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ जं किंचि णिसामिया—यत्किंचित् अपि निशम्य અહીં તહીં ની વાતોને સાંભળતો રહીને पडिलेहेइ—प्रतिलेखयति વસ્ત્ર। પાત્રાદિકની પ્રતિલેખના

लेखना करोति । उपलक्षणत्वात्-स्वयं च वार्तालापं कुर्वन् प्रतिलेखयति । तथा -नित्य=सर्वदा गुरुपरिभावकः=गुरोराशातनाकारको भवति । एतादृशो यः साधुः स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१०॥

तथा—

मूलम्—बहुमायी पमुंहरी, थंद्धे लुद्धे अणिग्गहे ।
असंविभागी अचियँत्ते, पावसंमणे त्ति वुच्चंइ ॥११॥

छाया—बहुमायी प्रमुखरः, स्तब्धो लुब्ध अनिग्रहः ।
असंविभागी अप्रतिकरः, पापश्रमण इत्युच्यते ॥११॥

टीका—'बहुमायी' इत्यादि ।

बहुमायी=प्रचुरमायायुक्तः प्रमुखरः=प्रकर्षेण वाचालः, स्तब्धः=अहङ्कारी लुब्धः=लोभी, अनिग्रहः=अवशीकृतेन्द्रियनोइन्द्रियसमूहः, असंविभागी=ज्ञानादि

वस्त्र पात्रादिकों की प्रतिलेखना करता है वह (पमत्ते-प्रमत्तः) प्रमत्त है तथा प्रतिलेखन क्रियाके समयमें भी जो दूसरोंसे वार्तालाप करता है और प्रतिलेखना करता जाता है वह भी प्रमत्त है तथा (णिच्चं गुरुपरिभावए-नित्यं गुरुपरिभावकः) हमेशा जो गुरुदेवकी आशातना करता रहता है वह भी प्रमत्त है ऐसा साधु (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहा गया है ॥१०॥

तथा—'बहुमायी' इत्यादि—

जो साधु (बहुमायी-बहुमायी) प्रचुर मायाचार संपन्न हो (पमुहरी-प्रमुखरः) प्रचुर बकवाद करनेवाला हो (थद्धे-स्तब्धः) अहंकारी हो (लुद्धे-लुब्धः) लोभी हो (अनिग्गहे-अनिग्रहः) इन्द्रियोंको वशमें करने

કરે છે, તે पमत्ते-प्रमत्त પ્રમત્ત છે તથા પ્રતિલેખનક્રિયાના સમયમા પણ જે બીજાઓથી વાર્તાલાપ કરે છે અને પ્રતિલેખના કરતા જાય છે તે પણ પ્રમત્ત છે તથા णिच्चं गुरुपरिभावए હમેશા જે પોતાના ગુરુદેવની આશાતના કરતા રહે છે તે પણ પ્રમત્ત છે पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमणइत्युच्यते એવા સાધુને પાપશ્રમણ કહેવામા આવેલ છે ॥૧૦॥

તથા-"बहुमायी" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ बहुमायी-बहुमायी પ્રચુર-અત્યંત માયાચાર સંપન્ન હોય पामुहरी-प्रमुखर પ્રચુર-વધારે બકવાદ કરનાર હોય थद्धे-स्तब्ध અહંકારી હોય, लद्धे-लुब्ध લોભી હોય, अनिग्गहे-अनिग्रह ઇન્દ્રિયોને વશમા રાખનાર ન હોય

भ्योऽशनपानादीनामसंविभागकारः तथा–अप्रीतिकरः=गुर्वादिष्वप्रीतिमांश्च यो भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥११॥

तथा—

मूलम्—विवायं च उदीरेइ, अधम्मे अत्तपण्णहा ।
वुग्गहे कलहे, रत्ते पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१२॥

छाया—विवादं च उदीरयति अधर्म आप्तप्रज्ञाहा ।
व्युद्ग्रहे कलहे रक्तः, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१२॥

टीका—'विवाय' इत्यादि।

यो विवादम्=उपशान्तमपि कलहम्, उदीरयति=प्रकटीकरोति, तथा यः अधर्मः=दशविधयतिधर्मवर्जितः, तथा आप्तप्रज्ञाहा=आप्ता=सद्बोधरूपतया इह लोकपरलोकयोर्हिता या प्रज्ञा=आत्मनः परस्य वा सद्बुद्धिस्तां हन्ति=कुतर्कजालैर्नाशयति यः स तथा, इहलोकपरलोकहितावहसद्बुद्धिनाशक इत्यर्थः,

वाला न हो (असंविभागी–असंविभागी) ग्लानादिक साधुओं का विभाग नहीं करता हो तथा (अचियत्ते–अप्रीतिकरः) अपने गुरुदेवों पर भी जिसकी प्रीति न हो वह साधु (पावसमणे त्ति वुच्चइ–पापश्रमण इत्युच्यते) साधु पापश्रमण कहा जाता है ॥ ११ ॥

तथा—'विवाय च' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (विवाय च उदीरेइ–विवाद उदीरयति) शांत हुए झगडेको भी नया नया रूप देकर बढानेकी चेष्टा करता है (अधम्मे अत्तपण्णहा–अधर्म आप्तप्रज्ञाहा) दशविधयतिके धर्मसे रहित होता है। तथा सद्बोधस्वरूपकी, अपनी तथा परकी प्रज्ञाको कुतर्कों द्वारा नष्ट करता है अथवा आत्मस्वरूपकी प्रदर्शित बुद्धिका जो बिगाडता रहता है।

असंविभागी असंविभागी ગ્લાનાદિક સાધુઓનો વિભાગ ન કરતા હોય, તથા અચિયત્તે-અપ્રીતિકર પોતાના ગુરુદેવો ઉપર પણ જેની પ્રીતિ ન હોય તે સાધુ પાવસમણેત્તિ-પાપશ્રમણ इत्युच्यते પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૧॥

તથા—"विवाय च" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ— જે સાધુ विवाद उदीरेइ–विवाद उदीरयति શાંત થયેલ કજીયાને પણ નવું નવું રૂપ આપીને તેને વધારવાની ચેષ્ટા કરે છે अधम्मे अत्तपण्णहा अधर्म आप्तप्रज्ञाहा દશવિધિયતિના ધર્મથી રહિત બને છે, તથા સદ્બોધરૂપ પોતાની તથા બીજાની પ્રજ્ઞાને કુતર્કોથી નષ્ટ કરે છે, અથવા આત્મસ્વરૂપની પ્રદર્શિત બુદ્ધિને જે બગાડતા

'आत्मप्रज्ञाहा' इतिच्छायापक्षे—आत्मनः=आत्मस्वरूपस्य दर्शिका या प्रज्ञा तां हन्ति यः स तथा, आत्मस्वरूपप्रदर्शकबुद्धिविनाशक इत्यर्थः, 'आत्मप्रश्नहा' इतिच्छायापक्षे तु—आत्मनः=आत्मविषये यः प्रश्नस्तं हन्ति यः स तथा, अयं भावः—यदि कश्चित् पृच्छति—किं भवान्तरयायी आत्मा उत नेति ? ततः सोऽतिवाचालतया तं प्रश्नमेव हन्ति, यथा—नास्त्यात्मा प्रत्यक्षादिप्रमाणैरनुपलभ्यमानत्वात् ततोऽयुक्तोऽयं ते प्रश्नः। सति हि धर्मिणि धर्माश्चिन्त्यन्ते इति। तथा—यो व्युद्ग्रहे=हस्ताहस्त्यादियुद्धे, कलहे=वाचिकयुद्धे च रतः=तत्परो भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१२॥

किंच—

मूलम्—अथिरासणे कुक्कुइए, जत्थ तत्थ निसीयंइ ।
आसंणम्मि अणाउत्ते, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१३॥

अथवा "अत्तपण्णहा"की संस्कृतच्छाया "आत्मप्रश्नहा" ऐसी भी हो सकती है इसका अर्थ "यदि कोई—उससे ऐसा प्रश्न करता है कि भवान्तरमें जानेवाली आत्मा है कि नहीं है" सो वह उस प्रश्नको अपने कुतर्कोंद्वारा नष्ट कर देता कि प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे अनुपलभ्यमान होनेसे गधेके सींगकी तरह जब आत्माका ही अस्तित्व नहीं है तो फिर भवान्तरमे कोन जायगा ? इसलिये यह प्रश्न ही अयुक्त है कारण कि धर्मीके होने पर ही उसके धर्मोंका विचार होता है" ऐसा होता है। (वुग्गहे कलहे रत्ते—व्युद्ग्रहे कलहे रक्तः) हस्ति आदि के युद्धमे तथा वाचिक कलहमे तत्पर रहता है वह (पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहलाता है ॥१२॥

રહે છે, અથવા "अत्तपण्णहा"ની સંસ્કૃત છાયા "आत्मप्रश्नहा" એવી પણ થઈ શકે છે આનો અર્થ "જો કોઈ એનાથી એવો પ્રશ્ન કરે કે ભવાન્તરમાં જવાવાળો આત્મા છે કે, નથી ?" ત્યારે તે પોતાના કુતર્કોદ્વારા આ પ્રશ્નને નષ્ટ કરી દે છે અને કહે છે કે, પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી અનુપલભ્યમાન હોવાથી ગધેડાના શીંગડાની માફક જ્યારે આત્માનું જ અસ્તિત્વ નથી તો પછી ભવાન્તરમાં કોણ જવાનું છે ? આ કારણે એ પ્રશ્ન જ અયુક્ત છે કારણ કે, ધર્મી હોવાથી જ એના ધર્મનો વિચાર થાય છે" એવો થાય છે वुग्गहे कलहे रत्ते—व्युद्ग्रहे कलहे रक्त હાથી આદિના યુદ્ધમાં તથા વચનના કલહમાં તત્પર રહે છે તે पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૨॥

छाया—अस्थिरासनः कौकुचिकः, यत्र तत्र निषीदति ।
आसने अनायुक्त, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१३॥

टीका—'अथिरासणे' इत्यादि ।

य. साधु. अस्थिरासन=स्थिरासनवर्जितो भवति, तथा य. कौकुचिकः=भण्डचेष्टाकारको भवति । तथा यो यत्र तत्र=सरजस्कादिस्थानेऽप्रासुकभूमौ च निषीदति=उपविशति, तथा य. आसने अनायुक्त=अनुपयुक्तो भवति एतादृश साधु पापश्रमण इत्युच्यते ॥१३॥

किंच—

सूत्रम्—ससरक्खपाओ सुयइ, सेज्जं न पडिलेहइ ।
संथारए अणाउत्तो पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१४॥

छाया—सरजस्कपादः स्वपिति, शय्या न प्रतिलेखयति ।
सस्तारके अनायुक्त, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१४॥

टीका—'ससरक्खपाओ' इत्यादि ।

य. साधु. सरजस्कपाद.=सचित्तरज संलग्नचरण सन् स्वपिति=शेते, तथा-शय्या=वसतिं न प्रतिलेखयति, न च प्रमार्जयति । तथा—सस्तारके=

तथा—'अथिरासणे' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (अथिरासणे अस्थिरासन) स्थिर आसनसे रहित होता है तथा (कुक्कुइए—कौकुचिक) भाण्ड चेष्टा करनेवाला होता है तथा (जत्थ तत्थ निसीयइ—यत्र तत्र निषीदति) जहाँ तहाँ अर्थात् सचित्त रजवाली तथा बीजादियुक्त अप्रासुक भूमिपर बैठता है तथा (आसणम्मि अणाउत्ते—आसने अनायुक्त.) आसन मे उपयोग रहित होता है ऐसा साधु (पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहलाता है ॥१३॥

તથા—"अथिरासणे" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ अथिरासणे—अस्थिरासन સ્થિર આસનથી રહિત હોય છે તથા कुक्कुइए—कौकुचिक ભાંડચેષ્ટા કરવાવાળા હોય છે, તથા जत्थ तत्थ निसीयइ—यत्र तत्र निषीदति જ્યાં ત્યાં અર્થાત્ સચિત્તરજવાળી તથા બિજાદિયુક્ત અપ્રાસુક ભૂમિ પર બેસે છે, તથા आसणम्मि अणाउत्ते—आसने अनायुक्त. આસનનો ઉપયોગ કરતા નથી, એવા સાધુ पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥ ૧૩ ॥

'आत्मप्रज्ञाहा' इतिच्छायापक्षे-आत्मन'=आत्मस्वरूपस्य दर्शिका या प्रज्ञा तां हन्ति यः स तथा, आत्मस्वरूपप्रदर्शकबुद्धिप्रणाशक इत्यर्थः, 'आत्मप्रश्नहा' इतिच्छायापक्षे तु-आत्मन'=आत्मविषये यः प्रश्नस्तं हन्ति यः स तथा, अयं भावः- यदि कश्चित् पृच्छति-किं भवान्तरयायी आत्मा उत नेति ? ततः सोऽतिवाचालतया तं प्रश्नमेव हन्ति, यथा-नास्त्यात्मा प्रत्यक्षादिप्रमाणैरनुपलभ्यमानत्वात् ततोऽयुक्तोऽयं ते प्रश्नः। सति हि धर्मिणि धर्माश्चिन्त्यन्ते इति। तथा -यो व्युद्ग्रहे=हस्ताहस्त्यादियुद्धे, कलहे=वाचिकयुद्धे च रतः=तत्परो भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१२॥

किंच--

मूलम्--अथिरासणे कुक्कुइए, जत्थ तत्थ निसीयई।
आसणम्मि अणाउत्ते, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१३॥

अथवा "अत्तपण्णहा"की संस्कृतच्छाया "आत्मप्रश्नहा" ऐसी भी हो सकती है इसका अर्थ "यदि कोई-उससे ऐसा प्रश्न करता है कि भवान्तरमें जानेवाली आत्मा है कि नहीं है" सो वह उस प्रश्नको अपने कुतर्कोंद्वारा नष्ट कर देता कि प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे अनुपलभ्यमान होनेसे गधेके सींगकी तरह जब आत्माका ही अस्तित्व नहीं है तो फिर भवान्तरमें कौन जायगा ? इसलिये यह प्रश्न ही अयुक्त है कारण कि धर्मीके होने पर ही उसके धर्मोंका विचार होता है" ऐसा होता है। (वुग्गहे कलहे रत्ते-व्युद्ग्रहे कलहे रक्त') हस्ति आदि के युद्धमें तथा वाचिक कलहमें तत्पर रहता है वह (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहलाता है ॥१२॥

રહે છે, અથવા "अत्तपण्णहा"ની સંસ્કૃત છાયા "आत्मप्रश्नहा" એવી પણ થઈ શકે છે આનો અર્થ "જો કોઈ એનાથી એવો પ્રશ્ન કરે કે ભવાન્તરમાં જવાવાળો આત્મા છે કે, નથી ?" ત્યારે તે પોતાના કુતર્કોદ્વારા આ પ્રશ્નને નષ્ટ કરી દે છે અને કહે છે કે, પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી અનુપલભ્યમાન હોવાથી ગધેડાના શીંગડાની માફક જ્યારે આત્માનું જ અસ્તિત્વ નથી તો પછી ભવાન્તરમાં કોણ જવાનું છે ? આ કારણે એ પ્રશ્ન જ અયુક્ત છે કારણ કે, ધર્મી હોવાથી જ એના ધર્મનો વિચાર થાય છે" એવો થાય છે वुग्गहे कलहे रत्ते-व्युद्ग्रहे कलहे रक्त હાથી આદિના યુદ્ધમાં તથા વચનના કલહમાં તત્પર રહે છે તે पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमणइत्युच्यते પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૨॥

विकृति, उपलक्षणत्वाद् घृताद्यशेषविकृतीश्च आहारयति। तथा-तपः कर्मणि=अनशनादौ अरत=अतत्परश्च भवति, स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१५॥

किंच—

मूलम्—अत्थंतम्मि यं सूरम्मि, आहारेइ अभिक्खणं।
चोइओ पडिचोएइ, पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥१६॥

छाया—अस्तान्ते च सूर्ये, आहारयति अभीक्ष्णम्।
नोदितः प्रति नो दयति, पापश्रमण इत्युच्यते ।१६॥

टीका—'अत्थतम्मि' इत्यादि।

यः साधुः अस्तान्ते च सूर्ये=सूर्योदयादारभ्य सूर्यास्तपर्यन्ते काले अभीक्ष्ण=तथाविधकारण विना पुनः पुनः आहारयति=भुङ्क्ते, तथा च-य श्रुताध्ययनवाचनादिरूपाया ग्रहणशिक्षाया यथावस्थितसाध्वाचारपालनरूप यथा कालप्रतिलेखनाप्रतिक्रमणादिरूपायामासेवनाशिक्षाया च गुर्वादिभिर्नोदितः प्रेरितः

पुनः (दुद्धदही-दुग्धदधिनी) दुग्ध दहीरूप (विगइओ-विकृती) विकृतियोंको तथा उपलक्षणसे घृतादिक अशेष विकृतियोंको (आहारेइ-आहारयति) आहार करता है तथा (तवोकम्मे अरए-तपःकर्मणि अरतः) अनशन आदिक तपस्यामें लवलीन नहीं रहता है-तपस्याओंको नहीं करता है-वह (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) साधु पापश्रमण है ॥१५॥

तथा—'अत्थतम्मि य' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (अत्थतम्मि य सूरम्मि-अस्तान्ते च सूर्ये) सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्ततक (अभिक्खणं-अभीक्ष्णम्) पुनः पुनः विना विशेष कारणके (आहारेइ-आहारयति) खाता रहता है (चोइओ-नोदितः) श्रुत अध्ययन, वाचन आदिरूप ग्रहणशिक्षामें तथा यथावस्थित साध्वाचार पालनरूप तथा यथाकाल प्रतिलेखना प्रतिक्रमण करना आदिरूप

—दुग्धदधिनि દૂધ દહી રૂપ विगइओ-विकृति વિકૃતિઓને તથા ઉપલક્ષણથી ઘતાદિક અશેષ વિકૃતિઓને आहारेइ-आहारयति ખાય છે, તથા અનશન ઉણોદરી આદિક तवोकम्मे अरए-तपःकर्मणि अरत तपस्याઓમાં લવલીન રહેતા નથી-તપસ્યા ઓ કરતા નથી તે पावसमणेत्ति वुचइ-पापश्रमण इति उच्यते સાધુ પાપશ્રમણ છે ॥૧૫॥

તથા—"अत्थतम्मि य" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ अत्थतम्मिय सूरम्मि-अस्तान्ते च सूर्ये સૂર્યોદયથી સૂર્યાસ્ત સુધી अभीक्खण-अभीक्ष्णम् ઘડી ઘડી વિના વિશેષ કારણે आहारेइ-आहारयति ખાયા કરે છે चोइओ-नोदित શ્રુત અધ્યયન વાચન આદિરૂપ ગ્રહણ શિક્ષામાં તથા સ્થિત સાધુ આચાર પાલનરૂપ તથા યથાકાળ પ્રતિલેખના, પ્રતિક્રમણ

दर्भादिसंस्तारके अनायुक्त=अनुपयुक्तो भवति। कारण विना रात्रेः प्रथमयामे शेते, तथा कुक्कुटीवत् पादप्रसारणं कृत्वा च शेते। स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१४॥

उक्तश्चारित्राचारप्रमादी सम्प्रति तप आचारप्रमादी वर्ण्यते—

मूलम्—दुद्धदहीविगईओ, आहारेइ अभिक्खणं।
अरए यं तवोकम्मे पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥१५॥

छाया—दुग्धदधिनी विकृती, आहारयति अभीक्ष्णम्।
अरतश्च तपः कर्मणि, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१५॥

टीका—'दुद्धदही' इत्यादि।

यः साधुः कारणं विना अभीक्ष्णं=पुनः पुनः दुग्धदधिनी=दुग्धदधिरूपे

तथा—'ससरक्खपाओ' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (ससरक्खपाओ—सरजस्कपादः) सचित्त धूलिसे धूसरित पैर होने पर (सुयइ—स्वपिति) सो जाता है तथा (सेज्जं न पडिलेहइ—शय्यां न प्रतिलेखयति) अपनी वसतिकी प्रतिलेखना नहीं करता है तथा (संथारए अणाउत्तो—संस्तारके अनायुक्तः) दर्भादिकके संस्तारकमें अनुपयुक्त रहता है कारणके विना रात्रिके प्रथम याम (प्रहर) में ही सो जाता है तथा कुक्कुटी कुकडी—मुर्गीके समान पैर पसार कर सोता है वह (पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते) साधु पापश्रमण कहा गया है ॥१४॥

चारित्राचारके प्रमादीका स्वरूप कहकर अब तप आचारके प्रमादी के विषयमें कहते हैं—'दुद्धदही' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु कारण विना (अभीक्खणं—अभीक्ष्णम्) पुनः

તથા—"ससरक्खपाओ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ ससरक्खपाओ—सरजस्कपाद ધૂળથી ભરેલા પોતાના પગ હોય છે છતાં सुयइ—स्वपिति એમના એમ સુઈ જાય છે, તથા सेज्जं न पडिलेहइ—शय्यां न प्रतिलेखयति પોતાની વસતિની પ્રતિલેખના કરતા નથી, તથા संथारए अणाउत्तो—संस्तारके अनायुक्तः દર્ભાદિકના સંસ્તારકમાં અનુપયુક્ત રહે છે, દિવસના પ્રથમ પ્રહરમાજ સુઈ જાય છે, તથા કુકુટીની માફક પગ પસારીને સુવે છે તે સાધુ पावसमणेत्ति वुच्चइ—पापश्रमण इत्युच्यते પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૪॥

ચારિત્રાચારના પ્રમાદીના સ્વરૂપને કહીને હવે તપ આચારના પ્રમાદીના વિષયમાં કહે છે—"दुद्धदही" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ કારણવગર अभीक्खणं—अभीक्ष्णम् ફરી ફરી दुद्ध—दही

स्वाध्यायकरणसमर्थानपि तत्र स्वल्पतो वृद्धादीन् न तत्र प्रेरयति, मामेव तत्कर्तुं प्रेरयति। आनीतमन्नादिकं बालग्लानादिभ्यो ददाति, मां तु 'तपः–कुरु' इति कथयति। इत्यादि दोषं दत्त्वा साध्वाचारपालनासमर्थतयाऽऽहारादिलोलुपतया च आचार्यं परित्यजतीति भावः। तथा—यः परपाषण्डसेवकः= जिनोक्तधर्मं विहाय परधर्मस्य सेवकः=आराधको भवति। तथा च यो गाणङ्गणिकः—स्वच्छन्दतया षड्मासाभ्यन्तर एव गणाद् गण=स्वगच्छं त्यक्त्वा गच्छान्तरं गच्छति, अत एव दुर्भूतः=दुराचारतयाऽतिनिन्दनीयो भवति। स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१७॥

कीया करते है। तथा स्वाध्याय करनेमें समर्थ इन वृद्धादिक मुनियोंको तो आप स्वाध्याय करनेके लिये प्रेरित नहीं करते है मुझे ही जो इस काममें समर्थ नहीं हूँ–प्रेरित किया करते है। भिक्षामें लभ्य अन्नादिक सामग्री आप बालग्लान मुनियोंको तो देते हैं मुझे नहीं–उलटा मुझ से आप यही कहते रहते है कि तप करो। भला यह भी कोई बात है। इस प्रकार दोष देकरके वह पापश्रमण साध्वाचार–पालन करनेमें साध्वाचार पालनमें असमर्थ होनेकी वजहसे तथा आहार आदिकमें लोलुपी होनेकी वजहसे आचार्यका परित्याग कर देता है। तथा (परपासंड-सेवए–परपाषण्डसेवकः) जिनोक्त धर्मको छोडकर वह परधर्मका आराधक हो जाता है। (गाणगणिए–गाणङ्गणिकः) तथा स्वच्छन्द होनेसे वह छह माहके भीतर ही अपने गच्छका परित्याग कर दूसरे गच्छ में चला जता है। इसीलिये (दुब्भूए–दुर्भूतः) दुराचारी होनेके कारण

અને મનેજ જ્યારેને ત્યારે કામ ચીંધ્યા કરો છો સ્વાધ્યાય કરવામાં સમર્થ એવા આ વૃદ્ધાદિક મુનિઓને તો આપ સ્વાધ્યાય કરવાનું કહેતાજ નથી અને હું જે એ કામમાં અસમર્થ છું તેનેજ કહ્યા કરો છો. ભિક્ષામાં લભ્ય અન્નાદિક સામગ્રી આપ બાલગ્લાન મુનિઓને આપો છો અને મને આપતા નથી ઉલટા મને આપ એમજ કહ્યા કરો છો કે, તપ કરો ભલા આ પણ કોઈ વાત છે! આ પ્રમાણે દોષ દઈને તે પાપશ્રમણ સાધ્વાચાર પાલન કરવામાં–સાધુઆચાર પાલનમાં અસમર્થ હોવાના કારણે તથા આહાર આદિકના લોલુપિ હોવના કારણે આચાર્યનો પરિત્યાગ કરી દે છે તથા परपासंडसेवए परपाषंडसेवकः' જીનોક્ત ધર્મને છોડીને તે બીજા ધર્મનો આરાધક બની જાય છે गाणगणिए–गाणङ्गणिकः, તથા સ્વચ્છંદ હોવાથી તે છ માસની અંદરજ પોતાના ગચ્છનો પરિત્યાગ કરી બીજા ગચ્છમાં આવ્યો જાય છે આ કારણે दुब्भूए–दुर्भूतः દુરાચારી હોવાથી તે અતિ નિંદાને

सन् गुरुमेव प्रतिनोदयति=प्रेरयति-यथाकुशला भवानुपदेशदाने न तु क्रियायाम् । भवतैव कथ न क्रियते इत्यादि । एव विध पापश्रमण इत्युच्यते ॥१६॥

किंच—

मूलम्—आयरियपरिच्चाइ, परपासण्डसेवए ।
गाणंगणिए दुब्भूए, पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥१७॥

छाया—आचार्यपरित्यागी, परपाषण्डसेवक ।
गाणङ्गणिको दुर्भूत , पापश्रमण इत्युच्यते ॥१७॥

टीका—'आयरिय' इत्यादि ।

य आचार्यपरित्यागी=आचार्यं परित्यजतीति आचार्यपरित्यागी भवति । समर्थैरपि वृद्धादिभि॰ कार्यं न कारयति, मामेव कार्यं कर्तुं प्रेरयति । तथा-

आसेवन शिक्षामे गुर्वादिकोंके द्वारा प्रेरित होने पर (पडिचोइए-प्रतिनोदयति) जो स्वय गुरुओंके साथ वादविवाद करने लग जाता है-जैसे-आप उपदेश देनेमे जितने बडे दक्ष है उतने क्रियामे दक्ष नही है-यदि ऐसी ही बात है तो आप ही क्यो नही कर लेते इत्यादि। इस प्रकारका साधु (पावसमणेत्ति वुच्चइ-पापश्रमण इत्युच्यते) पापश्रमण कहा गया है ॥१६॥

तथा—'आयरिय परिचाई' इत्यादि—

अन्वयार्थ—जो साधु (आयरिय परिच्चाइ-आचार्य परित्यागी) आचार्यका परित्याग कर देता है अर्थात् जब वे कुछ कार्य करनेके लिये कहते हैं तब उनसे ऐसा कहता है कि आप इन समर्थ वृद्धादिक साधुओ द्वारा तो काम कराते नही है, केवल मुझे ही कार्य करनेके लिये प्रेरित

કરવુ આદિરૂપ આસેવન શિક્ષામા ગુરુ આદિ દ્વારા પ્રેરણા થતા પડિચોઇઓ-પ્રતિનોન્યતિ જે ગુરુઓની સાથે વાદવિવાદ કરવા લાગી જાય છે-જેમકે આપ ઉપદેશ આપવામા જેટલા ચતુર છો તેટલા ક્રિયામા નથી જો એમજ છે તો આપજ કેમ નથી કરી લેતા! ઇત્યાદિ આ પ્રકારના સાધુ પાવસમણેત્તિ વુચ્ચઇ-પાપશ્રમણ ઇત્યુચ્યતે પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૬॥

તથા—"આયરિય પરિચ્ચાઇ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ आयरिय परिच्चाइ-आचार्य परित्यागी આચાર્યનો પરિત્યાગ કરી દે છે અર્થાત્-જ્યારે તે કાંઈ કામ કરવાને માટે કહે છે ત્યારે એમને એવુ કહે છે કે, આપ આ સમર્થ વૃદ્ધાદિક સાધુઓ પાસે તો કામ કરાવતા નથી

किंच--

मूलम्--सनाईपिंड जेमेइ, निच्छेई सामुदाणियं ।
गिहिनिसिज्जं च वाहेइ, पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥१९॥

छाया--स्वज्ञातिपिण्ड जेमति, नेच्छति सामुदानिकम् ।
गृहिनिपद्या च वाहयति, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१९॥

टीका--'सनाइपिंड' इत्यादि ।

यः स्वज्ञातिपिण्ड=स्वाः स्वकीया ये ज्ञातयः=संसारावस्थाया बान्धवास्तैर्दत्त पिण्ड=यथेप्सितस्निग्धमधुराहार जेमति=भुङ्क्ते, किन्तु सामुदानिक-समुदानानि=भिक्षास्तेषां समूहः सामुदानिकम्=अनेकगृहेभ्य आनीता भिक्षाम्, न इच्छति=नाभिलपति । च=पुनः गृहिनिपद्या=गृहिणा या निपद्या=पर्यङ्कतूल्यादिका ता वाहयति=आरोहति, गृहस्थस्य पर्यङ्कादौ समुपविशतीत्यर्थः । स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१९॥

सम्प्रत्य ध्ययनार्थमुपसंहरन् उक्तरूपदोषसेवनस्य फलमाह--

मूलम्--एयारिसे पंचकुसीलऽसंवुडे, रूवधरे मुणिवराण हिट्ठिमे ।
एयंसि लोए विसमेव गरहिए, न से इहं नेव परत्थ लोए ॥२०॥

तथा--'सनाइपिंड' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--जो साधु (सनाइपिंड-स्वज्ञातिपिण्डम्) स्वज्ञातिपिण्ड को-संसारावस्था के अपने बंधुओं द्वारा प्रदत्त भिक्षा को (जेमेइ-जेमति) खाता है और (सामुदाणिय निच्छइ-सामुदानिकम् नेच्छति) अनेक गृहों से लाई हुई भिक्षा की इच्छा नहीं करता है तथा (गिहि निसज्ज च वाहेइ-गृहिनिपद्या च वाहयति) गृहस्थजनों की शय्या पर बैठता है (से पावसमणेत्ति वुच्चइ-स पापश्रमण इत्युच्यते) वह साधु पापश्रमण कहा जाता है ॥१९॥

तथा--'सनाइपिंड ईत्यादि ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ सनाइपिंड-स्वज्ञातिपिण्डम् સ્વજ્ઞાતિપિંડને-સંસાર અવસ્થાના પોતાના બંધુઓ દ્વારા પ્રદત્ત ભિક્ષાને जेमेइ-जेमति ખાય છે અને सामुदाणिय निच्छइ-सामुदाणिकम्-नेच्छति અનેક ગૃહસ્થોને ત્યાંથી લાવવામાં આવેલી ભિક્ષાની ઈચ્છા કરતા નથી તથા गिहि निसज्ज च वाहेइ-गृहि निपद्या च वाहयति ગૃહસ્થજનોની શય્યા ઉપર બેસે છે से पावसमणेत्ति वुच्चइ-स पापश्रमण इत्युच्यते તે સાધુ પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૯॥

सम्प्रति वीर्याचार प्रमादिनमाह—

मूलम्—सयं गेहं परिच्चज्ज, परगेहंसि वावरे ।
निमित्तेण य ववहरइ, पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥१८॥

छाया=-स्वक गेह परित्यज्य, परगेहे व्यापृणोति ।
निमित्तेन च व्यवहरति, पापश्रमण इत्युच्यते ॥१८॥

टीका—'सय गेह' इत्यादि ।

य' साधु' स्वक=स्वकीय गेह परित्यज्य अगार त्यक्त्वाऽनगारिता प्रतिपद्य परगेहे=गृहस्थगृहे व्याप्रियते=आहारार्थी सन् गृहस्थस्य कार्य करोतीत्यर्थ' । च=पुन॰ निमित्तेन=शुभाशुभकथनेन व्यवहरति=द्रव्यमर्जयति । यद्वा–गृहस्थादि निमित्त क्रयविक्रयादिक कुरुते । स पापश्रमण इत्युच्यते ॥१८॥

अतिनिन्दाका पात्र होता है। ऐसा जो साधु होता है (पावसमणेत्ति वुच्चइ–स पापश्रमण इत्युच्यते) वह पापश्रमण कहलाता है ॥१७॥

अब वीर्याचार मे प्रमाद करने वालेका स्वरूप कहते है–'सय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो साधु (सय गेह–स्वक गेहम्) अपने घरको छोडकर–मुनिव्रत धारण कर–(परगेहंसि वावरे–परगेहे व्याप्रियते) गृहस्थके घरपर आहारार्थी होकर उसका कार्यकरता है और (निमित्तेण य ववहरइ–निमित्तेन व्यवहरति) शुभ और अशुभके कथनरूप निमित्त से द्रव्यको एकत्रित करता है अथवा गृहस्थ आदि के निमित्त क्रय विक्रयआदि करता है (से पावसमणेत्ति वुच्चइ–स पापश्रमण इत्युच्यते) वह साधु पापश्रमण कहलाता है ॥१८॥

પાત્ર બને છે એવા જે સાધુ હોય છે તે पावसमणेत्ति वुच्चइ–स पापश्रमण इत्युच्यते તે પાપશ્રમણ કહેવાય છે ॥૧૭॥

હવે વિર્યાચારમા પ્રમાદ કરવાવાળાનુ સ્વરૂપ કહે છે—"सय" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે સાધુ सय गेह–स्वक गेह પોતાના ઘરને છોડીને મુનિવ્રત ધારણ કરી परगेहसि वावरे–परगेहे व्याप्रियते ગૃહસ્થના ઘેર આહારાર્થી થઇને એનુ કામ કરે છે અને निमित्तेण य ववहरइ–निमित्तेन व्यवहरति શુભ તથા અશુભ કથનરૂપ નિમિત્તથી દ્રવ્યને એકત્રિત કરે છે અથવા ગૃહસ્થ આદિના નિમિત ક્રયવિક્રય કરે છે से पावसमणेत्ति वुच्चइ–स पापश्रमण इत्युच्यते તે સાધુ પાપશ્રમણ કહેવાયછે ॥૧૮॥

छाय स्वाभिप्रायानुरूपवर्त्तिनः। पञ्चकुशीला हि जिनमते अवन्दनीया भवन्ति-

उक्तं च—"पासत्थो ओसन्नो होइ कुसीलो तहेव संसत्तो।
अहच्छंदो वि य एए अवंदणिज्जा जिणमयम्मि" ॥१॥

छाया—पार्श्वस्थः अवसन्नः भवति कुशीलस्तथैव संसक्तः।
यथाच्छन्दोऽपि च एते अवन्दनीया जिनमते ॥ इति।

तेषामिव अमगृत्त=अनिरुद्धाश्रवद्वारः, तथा-रूपधर=मुनिवेषस्यैव धरः=धारकः-मुनिवेषमात्रधारीत्यर्थः, अतएव मुनिप्रवराणां=प्रधानमुनीनां मध्ये अवस्तनः=अत्यन्तनिकृष्टः अस्मिन् लोके विषमिव गर्हितः=निन्दनीयो भवति=तथा-स एतादृश साधुः इह=अस्मिन् लोके न भवति। चतुर्विंशमदैः रनादरणीयो भवति

वह संसक्त है ४। शास्त्रीय मर्यादाका परिहार कर अपनी इच्छानुसार जो चलता है वह यथाच्छन्द है ५। ये पांच कुशील जिनमत में अवन्दनीय कहे हैं।

उक्तंच—"पासत्थो ओसन्नो होइ, कुसीलो तहेव संसत्तो।
अहच्छंदो वियएए, अवंदणिज्जा जिणमयम्मि ॥१॥"

(रूवधरे-तथा रूपधर) तथा मुनिवेषका ही वह धारक होता है इसलिये (मुणिवराणहिट्ठिमे-मुनिवराणामधस्तन) सदा वह मुनियोंके बीच मे अत्यन्त निकृष्ट माना जाता है। तथा वह (एयंसि लोए-अस्मिन् लोके) इसलोक में (विसमेव गरहिए-विषमिव गर्हित) विषके समान गर्हित होता है (से-सः) ऐसा वह साधु (इह परत्थलोए नेव-इह परलोके न भवति) न तो इसलोकका रहता है और न परलोकका रहता है। अर्थात्-उसके ये दोनों भव बिगड जाते हैं। क्योंकि वह

હોય છે તે સંસક્ત છે (૪) શાસ્ત્રીય મર્યાદાનો ત્યાગ કરી પોતાની ઇચ્છા અનુસાર જે ચાલે છે તે યથાચ્છંદ છે આ પાંચ કુશીલને જીનમતમાં અવંદનિય બતાવેલ છે

ઉક્તં ચ—પાસત્થો ઓસન્નો હોઇ, કુસીલો તહેવ સંસત્તો।
અહચ્છંદો વિયએએ, અવંદણિજ્જા જીણમયમ્મિ ॥१॥"

રૂવધરે-તથારૂપધર તથા મુનિવેશને એ ધારણ કરનાર હોય છે આ કારણે મુણિવરાણહિટ્ઠિમે-મુનિવરાણામધસ્તનઃ સદા તે પ્રધાન મુનિઓની વચમાં અત્યંત નિકૃષ્ટ માનવામાં આવે છે તથા તે એયંસે લોએ-અસ્મિન્ લોકે આ લોકમાં વિસમેવ ગરહિએ-વિષમિવગર્હિતઃ ઝેરની માફક ગર્હિત હોય છે સે-સઃ એવા તે સાધુ ઇહ પરત્થલોએ નેવ-ઇહ પરલોકે ન ભવતિ ન તો આ લોકના રહે છે તેમ ન તો પરલોકના રહે છે અર્થાત્-એના એ બન્ને ભવ બગડી જાય છે કેમકે, તે

छाया--एतादृशः पञ्चकुशीलासंवृत्तः, रूपधरो मुनिप्रवराणामधस्तनः ।
अस्मिन् लोके विषमिव गर्हितः, न स इह न परत्रलोके ॥२०॥

टीका--'एयारिसे' इत्यादि ।

एतादृशः=पूर्वोक्तरूपः पञ्चकुशीलासंवृत'=पञ्चकुशील'-पार्श्वस्थावसन्नकुशील संसक्तयथाच्छन्दाः-तत्र-पार्श्वस्थाः-सदनुष्ठानात् पार्श्वे तिष्ठन्तीति पार्श्वस्थाः-शिथिलाचारा इत्यर्थः। अवसन्ना'=साधुक्रियाराधने खेदखिन्ना। कुशीलाः=कुत्सितम्=उत्तरगुणप्रतिसेवया दुष्टं शीलमाचारो येषां ते तथा। संसक्ताः=दधिदुग्धादि विकृतिष्वासक्ताः, यद्वा-उत्कृष्टाचारिषु-उत्कृष्टाचारिणः शिथिलाचारिषु शिथिलाचारिण इत्येवं बहुरूपधारिणः। यथाच्छन्दाः=शास्त्रमर्यादा वि

सूत्रकार इस समय अध्ययन का उपसंहार करते हुए उक्त दोषो के सेवन का फल इस गाथा द्वारा कहते है-'एयारिसे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—जो (एयारिसे-एतादृश') ऐसा साधु होता है वह (पंचकुसीलऽसंवुडे-पंचकुशीलासंवृत') पंचकुशीलों के समान अनिरुद्ध आस्रव द्वारवाला होता है। पार्श्वस्थ, अवसन्न, कुशील, संसक्त और यथा छन्द ये पंचकुशील साधु है। जो अपने आचार मे शिथिल होता है वह पार्श्व है १, साधु क्रियाओं के आराधन करने मे जो खेदखिन्न होता है वह अवसन्न है २। उत्तर गुणोंकी प्रतिसेवासे जिसका आचार दुष्ट होता है वह कुशील है ३। दधिदुग्ध आदि विकृतियो मे जो आसक्तचित्त रहता है अथवा उत्कृष्ट चारित्रियो मे जो उत्कृष्ट चारित्रका पालन करता है, एवं शिथिलाचारियोंके बीच जो शिथिलाचारी बन जाता है इस तरह बहुरूपधारी जो साधु होता है

સૂત્રકાર આ સમયે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતા ઉક્ત દોષોના સેવનનું ફળ આ ગાથા દ્વારા કહે છે—"एयारिसे" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—જે एयारिसे—एतादृश એવા સાધુ હોય છે તે पंचकुसीलसंवुडे पंचकुशीलासंवृत પાંચ કુશીલની માફક અનિરૂદ્ધ આસ્રવદ્વારવાળા થાય છે પાર્શ્વસ્થ, અવસન્ન, કુશીલ, સંસક્ત અને યથાચ્છંદ આ પાંચ કુશીલ સાધુ છે જે પોતાના આચારમાં શિથિલ હોય છે તે પાર્શ્વસ્થ છે (૧) સાધુ ક્રિયાઓનું આરાધન કરવામાં જે ખેદખિન્ન હોય છે તે અવસન્ન છે (૨) ઉત્તરગુણોની પ્રતિસેવાથી જેનો આચાર દુષ્ટ હોય છે તે કુશીલ છે (૩) દૂધ દહીં આદિ વિકૃતિઓમાં જે આસક્ત ચિત્ત રહે છે અથવા ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રીઓમાં જે ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રનું પાલન કરે છે અથવા શિથિલાચારિયોની વચમાં જે શિથીલાચારી બની જાય છે આ રીતે બહુરૂપધારી જે સાધુ

अमृतमिव पूजित'=चतुर्विधसङ्घैः प्रशसित' सन् इम लोक तथा पर लोक च आराधयति । 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद्बोध्य' ॥२१॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित कलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू- छत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हा पुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्या टीकाया पापश्रमणीय नाम सप्तदशम ध्ययन समाप्तम् ।

वह मुनियों के बीच प्रशस्त-व्रतधारी माना जाता है । तथा वह (अयसिलोए-अस्मिन् लोके) इसलोकमें (अमय व-अमृतमिव) अमृत के समान (पूइए-पूजितः) आदरणीय होता है । चतुर्विध सघके द्वारा आदरणीय होकर वह (इण लोग तहा परलोग आराहए-इम लोक तथा परलोक आराधयति) अपने इसलोक को एव परलोकको भी सफल बना लेता है । (त्तिबेमि-इति ब्रवीमि) ऐसा मैं कहता हू अर्थात्- सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते कह रहे है कि जैसा मेने श्रीवीर- प्रभु से सुना हैं सो तुम से कहा हैं । अपनी तर्क से कुछ नहीं कहा है ॥२१॥

पापश्रमणीय नामके इस सत्रह वें
अध्ययन का हिन्दी अनुवाद
समाप्त हुआ ॥ १७ ॥

તથા તે અયસિલોએ-અસ્મિન્લોકે આ લોકમા અમય વ-અમૃતમિવ અમૃતની માફક પૂઇએ-પૂજિત' આદરણીય થાય છે ચતુર્વિધસઘ દ્વારા આદર પામીને તે इण लोग तहा पर लोग आराहए-इम लोक तथा पर लोक आराधयति પોતાના આલોક અને પરલોકને પણ સફળ બનાવી લે છે त्ति बेमि-इति ब्रवीमि એવુ હુ કહુ છુ સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે જેવુ મે મહાવીરપ્રભુ પાસેથી સાભળેલ છે તે તમને કહ્યુ છે મારા પોતાના તરફથી કાઇ પણ કહેલ નથી

શ્રી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના પાપશ્રમણીય નામના સત્તરમા અધ્યયનનો
ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સ પૂર્ણ ॥૧૭॥

तृणस्येव तुच्छत्वात्, परत्र=परस्मिन् लोकेऽपि नैव भवति=स्वर्गमोक्षादिसुखभागी न भवति श्रुतचारित्रविराधकत्वात्। निरर्थकमेव तज्जन्म भवतीति भावः ॥२०॥

अथपूर्वोक्त दोष परिहार फलमाह—

मूलम्—जे वज्जए एए सया उ दोसे, से सुव्वए होइ मुणीण मज्झे।
अंयंसि लोए अमयंव पूइए, आराहए लोगमिणं तहा परं त्ति बेमि ॥२१॥

छाया—यो वर्जयति एतान् सदा तु दोषान्, स सुव्रतो भवति मुनीनां मध्ये।
अस्मिँल्लोके अमृतमिव पूजितः, आराधयति लोकमिमं तथा परं इति ब्रवीमि ॥२१॥

टीका—'जे वज्जए' इत्यादि।

यः साधुरेतान् पूर्वोक्तान् ज्ञानातिचारादिन् दोषान् सदा तु=सदैव वर्जयति परिहरति, स मुनीनां मध्ये सुव्रतः=प्रशस्तव्रतधारी भवति। तथा सः अस्मिँल्लोके

इसलोकमे चतुर्विधसंघ-द्वारा अनादरणीय होता है कारण कि तृण के समान वह संघकी दृष्टिसे बिलकुल गिर जाता है। तथा श्रुतचारित्रका विराधक होने से परलोक में वह स्वर्गमोक्ष आदिके सुखों का भी अधिकारी नहीं रहता है। अतः उसका जन्म निरर्थक ही जाता है ॥२०॥

अब उक्त दोषोंके परिहारका फल कहते हैं-'जे वज्जए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जे-यः) जो साधु (एतान् दोषान्) इन ज्ञानातिचारादिक-ज्ञानाचार आदि संबधी दोषोंको (सया उ वज्जए-सदा तु वर्जयति) सदैव दूर कर देता है-उनका सदा के लिये परित्याग कर देता हैं (से मुणीण मज्झे सुव्वए होइ-सः मुनीनां मध्ये सुव्रतो भवति)

આલોકમાં ચતુર્વિધસંઘ દ્વારા અનાદરણીય બને છે કારણ કે તણખલાની માફક તે સંઘની દૃષ્ટિથી બિલકુલ નીચે પડી જાય છે તથા શ્રુતચારિત્રના વિરાધક હોવાથી પરલોકમાં તે મોક્ષ આદિના સુખોના પણ અધિકારી રહેતા નથી આથી એનો જન્મ નિરર્થક જ જાય છે ॥૨૦॥

હવે ઉક્ત દોષોના પરિહારનું ફળ કહેવામાં આવે છે—'जे वज्जइ' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—जे-य જે સાધુ एए दोसे-एतान् दोषान् આવા જ્ઞાનાતિચારાદિક-જ્ઞાનાચાર સંબંધી દોષોને सयाउ वज्जए-सदातु वर्जयति સદૈવ દૂર કરી દે છે-તેનો સદાને માટે પરિત્યાગ કરી દે છે, से मुणीणमज्झे सुव्वए होइ-स मुनीनां मध्ये सुव्रतो भवति તે મુનિઓની વચમાં પ્રશસ્ત વ્રતધારી મનાય છે

शिबिकादिरूपम्, उदीर्णम्=उदयप्राप्त बलवाहन यस्य स तथा, विस्तीर्णबल-वाहनसपन्नइत्यर्थः, सजया नाम्ना=सजय इति नाम्ना नाम=प्रसिद्धो नाम शब्दोऽत्र प्रसिद्धार्थे, राजा काम्पिल्ये नगरे आसीत्। स राजा एकदा काम्पिल्य नगरात् मृगव्यम्=आखेट कर्तुम् उपनिर्गतः=निर्यातः ॥१॥

स कथ निर्गतः? इत्याह —

मूलम्—हयाणीए गयाणीए, रहाणीए तहेव य।
पायत्ताणीए महया, सव्वओ परिवारिए ॥२॥

छाया—हयानीकेन गजानीकेन, रथानीकेन तथैव च।
पादातानीकेन महता, सर्वत परिवारित ॥२॥

टीका—'हयाणीए' इत्यादि।

स राजा महता=विशालेन हयानीकेन=अश्वसेनया, गजानीकेन=गज सेनया रथानीकेन=रथसेनया तथैव पादातानीकेन=पदातिसेनया च सर्वतः=

अथवा चतुरग सैन्य का नाम बल है, गज, अश्व, शिबिका आदि का नाम वाहन है। ये दोनो जिसके विशिष्ट उदयको प्राप्त हो चुके है। ऐसा (नामेण सजए—नाम्ना सजय') सजय नाम का प्रसिद्ध राजा (कपिल्ले नगरे—काम्पिल्ये नगरे) काम्पिल्य नगर मे था। वह राजा एकदिन की बात है कि (मिगव्व उवणिग्गए—मृगव्यमुपनिर्गतः) शिकार खेलने के लिये नगर से निकला ॥१॥

शिकार के लिये किस प्रकार निकला? सो कहते हैं—'हयाणी' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वह राजा (महया हयाणीए—महता हयानीकेन) विशाल अश्वसेना से, विशाल (गयाणीए—गजानीकेन) गजसेना से विशाल (रहाणीए—रथानीकेन) रथसेना से तथैव (पायत्ताणीए—पादातानीकेन)

ચતુરગસૈન્યનુ નામ બળ છે હાથી, ઘોડા, પાલખી, આદિનુ નામ વાહન છે આ બન્ને જેને સપૂર્ણ પ્રાપ્ત થઈ ચૂક્યા છે એવા नामेण सजए नाम्ना सजयः સજય નામના પ્રસિદ્ધ રાજા कपिल्ले नगरे—काम्पिल्ये नगरे કાપિલ્યનગરને વિશે રાજ્ય કરતા હતા એ રાજા એક દિવસ मिगव्व उवणिग्गए—मृगव्यमुपनिर्गतः શિકાર ખેલવા માટે નગર બહાર નીકળ્યા ॥ ૧ ॥

શિકાર માટે કેવી રીતે નીકળ્યા? એને સૂત્રકાર કહે છે—"हयाणी" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—તે રાજા પોતાની महया हयाणीए महता हयानीकेन વિશાળ અશ્વસેના गयाणीए—गजानीकेन વિશાળ હાથી સેના વિશાળ रहाणीए—रथानीकेन રથ સેના તથા पायत्ताणीए—पादातानीकेन પાયદળ સેના વિગેરેથી सव्वओ—सर्वतः

अथाष्टादशमध्ययनं प्रारभ्यते—

उक्त सप्तदशमध्ययनम् । सम्प्रति सयतीयाख्यमष्टादशमारभ्यते । अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्ध —पूर्वस्मिन्नध्ययने पापस्थानवर्जनमुक्तम् । तच्च सयतस्यैव भवति । स च भोगर्द्धित्यागादेव भवति । स सजयनृपोदाहरणत इहाध्ययने वक्ष्यते—इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्याध्ययनस्येदमादिम सूत्रम्—

मूलम्—कपिल्ले नगरे राया, उदिन्नबलवाहणो ।
णामेण सजए णाम, मिगव्व उवणिग्गए ॥१॥

छाया—काम्पिल्ये नगरे राजा, उदीर्ण बलवाहनः ।
नाम्ना सजयो नाम, मृगव्यमुपनिर्गत ॥१॥

टीका—'कपिल्ले' इत्यादि ।

उदीर्णबलवाहन =बल—शरीरसामर्थ्यं चतुरङ्गसैन्यरूप च, वाहन=गजाश्व

॥ अठारहवा अध्ययन प्रारभ ॥

सत्रहवा अध्ययन कहा गया है । अव अठारहवां अध्ययन कहा जाता है । इस अध्ययन का सत्रहवें अध्ययन के साथ सबध इस प्रकार से है—सत्रहवें अध्ययन में पापस्थानों का वर्जन कहा है, वह सयत के ही होता है । सयत वही हो सकता है जो भोग और ऋद्धि का त्याग करता है । यह बात हमको सजय राजा के उदाहरण से भलीभांति ज्ञात हो सकती है । अतःइस अध्ययन मे सजय राजा का उदाहरण प्रकट किया जाता है । इस अध्ययन का सर्व प्रथम सूत्र इस प्रकार है—'कपिल्ले' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(उदिन्नबलवाहणो—उदीर्णबलवाहन.) शरीरसामर्थ्य

અઢારમા અધ્યયનનો પ્રારભ—

સત્તરમુ અધ્યયન આગળ કહેવાઇ ગયુ હવે અઢારમા અધ્યયનનો પ્રારભ થાય છે આ અધ્યયનનો સત્તરમા અધ્યયન સાથેનો સબધ આ પ્રકારનો છે—સત્તરમા અધ્યયનમા પાપસ્થાનોનુ વર્જન કહેલ છે એ સયતને જ થાય છે સયત એ બની શકે છે કે, જે ભોગ અને રિદ્ધિનો ત્યાગ કરે છે આ વાત સજય રાજાના ઉદાહરણથી સારી રીતે જાણી શકાય છે આથી આ અધ્યયનમા સજય રાજાનુ ઉદાહરણ પ્રગટ કરવામા આવે છે આ અઢારમા અધ્યયનનુ સહુથી પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—"कपिल्ले" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—उदिन्न बलवाहणो—उदीर्णबलवाहन શરીર સામર્થ્ય અથવા

अत्रान्तरे यज्जात तदाह—

मूलम्—अह केसरंम्मि उज्जाणे, अणगारे तवोधणे ।
सज्झायझाणसजुत्ते, धम्मंज्झाणं झियायइ ॥४॥

छाया—अथ केशरे उद्याने, अनगारस्तपोधनः ।
स्वाध्यायध्यानसयुक्त, धर्मध्यान ध्यायति ॥४॥

टीका—'अह केसरम्मि' इत्यादि ।

अथ=अनन्तरम् केशरे उद्याने=केशराख्ये उद्याने स्वाध्यायध्यानसयुक्त = स्वाध्याय =आगमाध्ययनम्, ध्यानम्=धर्मध्यान, ताभ्या सयुक्त=स्वाध्यायध्यानादौ तत्पर तपोधनः=तप एव धन यस्य स तथा–तपोधनसम्पन्न, एक.– अनगारो=मुनि. धर्मध्यानम्=आज्ञाविचयापायविचयविपाकविचयसस्थानविचयरूप ध्यायति=चिन्तयति ॥४॥

तथा—

मूलम्—अप्फोवमडवम्मि,झायइ खवियासवे ।
तस्सगए मिगे पास, वहेइ से णराहिवे ॥५॥

इस समय क्या हुआ यह बात सूत्रकार कहते है—'अह' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह–अथ) जब राजा मृगों की शिकार कर रहा था उस समय (केसरम्मि उज्जाणे–केशरे उद्याने) उस केसर नामके बगीचे में (सज्झायज्झाणसजुत्ते–स्वाध्यायध्यानसयुक्त.) स्वाध्याय–आगमाध्ययन मे एव धर्मध्यान मे तत्पर (अणगारे–अनगार) एक मुनि राज कि (तवोधणे–तपोधनः) तप ही जिनका धन (धम्मज्झाण झियायइ–धर्मध्यान ध्यायति) आज्ञाविचय, १ अपायविचय, २ विपाकविचय ३ एव धर्म सस्थान विचयरूप ४ धर्मध्यानका चिन्तवन कर रहे थे ॥४॥

આ પ્રમાણે શિકાર કરતી વખતે શુ બન્યુ, આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે — "अह" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—अह–अथ જ્યારે રાજા મૃગોનો શિકાર કરી રહ્યા હતા તે સમયે એ केसरम्मि उज्जाणे–केशरे उद्याने કેશર ઉદ્યાનમા स्वाध्यायध्यानसजुत्ते–स्वाध्याय ध्यानसयुत स्वाध्याय–આગમ અધ્યયનમા તેમજ ધર્મધ્યાનમા તત્પર એવા अणगारे–अनगारः એક મુનિરાજ કે तवोधणे–तपोधन' તપ જેનુ ધન છે, धम्मज्झाण झियायइ–धर्मध्यान ध्यायति આજ્ઞા વિચય, અપાય વિચય, વિપાક વિચય અને સસ્થાન વિચયરૂપ ધર્મધ્યાનનુ ચિતવન કરી રહ્યા હતા ॥૪॥

समन्तात् परिवारितः=परिवेष्टितः सन् विनिर्गतः। 'हयाणीए' इत्यादौ आर्षत्वात् तृतीयार्थे प्रथमा ॥२॥

विनिर्गत्य यत्कृतवांस्तदाह—

मूलम्—मिए छुभित्ता हयगओ, कंपिल्लुज्जाणकेसरे ।
भीए संते मिए तत्थ, वहेइ रसमुच्छिए ॥३॥

छाया—मृगान् क्षोभयित्वा हयगतः, काम्पिल्योद्यानकेशरे ।
भीतान् श्रान्तान् मितांस्तत्र, हन्ति रसमूर्छितः ॥३॥

टीका—'मिए' इत्यादि ।

हयगत =अश्वारूढः रसमूर्च्छितः=मृगमांसास्वादलोलुपः स संयतो राजा तत्र काम्पिल्योद्यानकेशरे=कम्पिल्यनगरस्थे केशरनामकोद्याने मृगान् क्षोभयित्वा =प्रेरितान् कृत्वा भीतान्=मरणभयत्रस्तान् श्रान्तान्=इतस्ततः परिधावनेन ग्लानान्, मितान्=कतिपयान् मृगान् हन्ति=हतवान् ॥३॥

पदाति सेना से (सव्वओ-सर्वतः) समन्ततः (परिवारिए-परिवारितः) परिवृत होता हुआ (विनिग्गए-विनिर्गतः) नगरसे शिकार खेलने के लिये निकला इस प्रकार का संबंध इस श्लोक के साथ लगा लेना चाहिये ॥२॥

निकल कर जो किया सो कहते हैं—'मिए' इत्यादि !

अन्वयार्थ—(रसमुच्छिए-रसमूर्च्छितः) मृग मांस के स्वाद का लोलुपी वह संजय राजा (हयगओ-हयगतः) घोडे पर सवार होकर (कंपिल्लुज्जाणकेसरे-काम्पिल्योद्यानकेशरे) काम्पिल्य नगर के केशर नामक उद्यान मे पहुँचा और वहा पहुँचकर उसने (मिए छुभित्ता-मृगान् क्षोभयित्वा) मृगों को प्रेरित किया। जब ये (भीए-भीतान्) इसकी मरणभय से भयत्रस्त (संते-श्रान्तान्) श्रान्त, हुए उनमे से इसने (मिए मितान्) कितनेक मृगोंको (वहेइ-हन्ति) मारे ॥३॥

सर्व रीते परिवरिए-परिवारित परिवृत थईने विनिग्गए-विनिर्गत नगरथी બહાર શિકાર ખેલવા માટે નીકળ્યા આ પ્રકારનો સંબંધ આ શ્લોકની સાથે છે ॥૨॥

રાજાએ નગર બહાર નીકળીને શું કર્યું તેને કહે છે—"मिए" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—रसमुच्छिए-रसमूर्च्छित. મૃગ માંસના સ્વાદલોલુપિ એવા એ કાંપિલ્યનગરના રાજા हयगओ-हयगत ઘોડાપર સ્વાર થઈને कपिल्लुज्जाणकेसरे-कम्पिल्योद्यानकेशरे-કેસર નામના ઉદ્યાનમાં ગયા, ત્યાં પહોંચીને તેણે मिए छुभित्ता-मृगान् क्षोभयित्वा મૃગોને મારવા માટે પ્રેરિત કર્યાં જ્યારે તે भीए-भीतान રાજાની આ પ્રકારની સેના ઇત્યાદિને જોઈ ઉદ્યાનમાંના મૃગો ભયભીત બન્યા संते-श्रान्तान् શ્રાન્ત બન્યા ત્યારે તેમાથી કેટલાક મૃગોનો રાજાએ શીકાર કર્યો ॥૩॥

शीघ्रम् आगत्य हतान् मृगान् दृष्ट्वा, तु=पुनः तत्र गर्दभालिम् अनगारं=पश्यति ॥६॥

तथा—

मूलम्—अह राया तत्थ संभंतो, अणगारो मणा हओ।
मए उ मंदपुन्नेण, रसगिद्धेणं घित्तुणा ॥७॥

छाया—अथ राजा तत्र सम्भ्रान्तः, अनगारो मनागाहतः।
मया तु मन्दपुण्येन, रसगृद्धेन घातुकेन ॥७॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=अनन्तरं तत्र=तस्मिन् मुनौ दृष्टे सति सम्भ्रान्तः=भयत्रस्तः स राजा-एवमचिन्तयत्-मन्दपुण्येन=पुण्यहीनेन रसगृद्धेन=रसलोलुपेन घातुकेन=जीवहननशीलेन मनाक्=मृगयारूप निरर्थकं कार्यं कुर्वता मया एष अनगारो हतः=मारितस्तदीय मृगहननात्। परमकारुणिकाः साधवो हि परदुःखेन दुःखिता भवन्ति ॥७॥

अश्वगत) घोडे पर चढा हुआ (सो राया-स राजा) वह राजा (खिप्पम्-क्षिप्रं) शीघ्र ही (तहिं-तत्र) उस स्थान पर (आगम्म-आगम्य) आकर (हए मिए उ पासित्ता-हतान् मृगान् दृष्ट्वा) मरे हुए मृगोंको देखने लगा। इतनेमें ही (तत्थ अणगारं पासइ-तत्र अनगारं पश्यति) उसकी दृष्टि एक मुनिराज पर पडी जो वहीं बैठे हुए थे ॥६॥

तथा—'अह राया' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह-अथ) इसके बाद (तत्थ-तत्र) उन मुनिराजके दिखने पर (संभंतो-सम्भ्रान्तः) भयत्रस्त (राया-राजा) राजाने ऐसा विचार किया कि-मुनिराजके मृगोंको मार देनेसे (मंदपुन्नेण-मंदपुण्येन) पुण्यहीन (रसगिद्धेण-रसगृद्धेन) तथा रसलोलुपी मुझ (घित्तुणा-घातु-

---

अश्वगतः घोडा उपर स्वार थयेल सो राया-स राजा ते राजा खिप्प-क्षिप्रम् शीघ्रज तहिं-तत्र ओ स्थान उपर आगम्म-आगम्य आव्या अने आवीने हए मिएउ पासित्ता-हतान् मृगान् दृष्ट्वा मरेला मृगोने जोवा माडया आ समये ओ तत्थ अणगारं पासइ-तत्र अनगारं पश्यति लतामंडपमा बेठेला ओक मुनिराज उपर ओनी दृष्टी गई ॥६॥

तथा—'अह राया' ईत्यादि।

अन्वयार्थ—अह-अथ त्यारपछी तत्थ-तत्र आ मुनिराज उपर दृष्टि पडता संभंतो-सम्भ्रान्तः भयत्रस्त राया-राजा ओ राजाना दिलमा ओक प्रकारनु ओवु दुःख जन्म्यु के, मंद पुन्नेण-मदपुण्येन मे पुण्यहिन तथा रसगिद्धेण-रसगृद्धेन रसलोलुपि घित्तुणा-घातुकेन घातके केवळ आ मृगोने नथी मार्या परंतु मणा-मनाक् व्यर्थज आ

छाया--अप्फोवमण्डपे ध्यायति, क्षपितास्रवः ।
तस्यागतान् मृगान पार्श्वे, हन्ति स नराधिपः ॥५॥

टीका--'अप्फोवमडवम्मि' इत्यादि ।

क्षपितास्रवः=क्षपिताः-दूरीकृताः आस्रवाः=प्राणातिपातादयो येन स. तथाभूत, गर्दभालिरनगार. अप्फोवमण्डपे-वृक्षाद्याकीर्णनागवल्ल्याद्याच्छादित मण्डपे 'अप्फोव' इतिवृक्षाद्याकीर्णप्रदेशवाचको देशी शब्दः । ध्यायति=धर्मध्यान करोति । तस्य मुने पार्श्वम् आगतान मृगान स नराधिप हन्ति=हतवान् ॥५॥

ततो यदभूत्तदाह--

मूलम्--अहं आसंगओ रायो, खिप्पमागम्म सो तहिं ।
हए मिए उ पासित्ता, अणगार तत्थ पासई ॥६॥

छाया--अथ अश्वगतो राजा, क्षिप्रमागम्य स तत्र ।
हतान् मृगास्तु दृष्ट्वा, अनगार तत्र पश्यति ॥६॥

टीका--'अह' इत्यादि ।

अथ=अनन्तरम् अश्वगत'=अश्वारूढ' स राजा तत्र=तस्मिन् मण्डपे क्षिप्र=

तथा--'अप्फोवमडवम्मि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ (खवियासवे--क्षपितास्रव.) आस्रवोंको दूर करनेवाले वे गर्दभालि अनगार (अप्फोवमडवम्मि--अप्फोवमडपे) वृक्षादिसे व्याप्त तथा नागवल्लि आदिसे आच्छादित मडपमें (ज्झायइ--ध्यायति) धर्मध्यान कर रहे थे । (तस्स पास आगए मिगे से णराहिवे वहेइ-तस्य पार्श्वे आगतान् मृगान् स नराधिपः हन्ति) उन मुनिराजके पासमें आये हुए उन मृगोंको उस राजाने मारा ॥५॥

फिर क्या हुवा ? सो कहते हैं--'अह आसगओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(अह-अथ) जब मृग मरचुके तब (आसगओ-

तथा--"अप्फोवमडवम्मि" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--खवियासवे-क्षपितास्रव આસ્રવોને દૂર કરનાર તે ગર્દભાલિ અનગાર अप्फोवमडवम्मि अप्फोवमडपे વૃક્ષાદિકથી ઘેરાએલા તથા નાગવલિ આદિથી છવાએલ મ ડપમા ज्झायइ-ध्यायति ધર્મધ્યાન કરી રહ્યા હતા तस्स पास आगए मिगे से णराहिवे वहेइ-तस्य पार्श्वे आगतान् मृगान् स नराधिप. हन्ति મૃત્યુના ડરથી અકળાઈને નાસભાગ કરતા મૃગો એ લતામ ડપમા બેઠેલા મુનિરાજની પાસે દોડી ગયા છતા પણ રાજાએ ત્યા જઈ તેમનો સહાર કર્યો ॥૫॥

પછી શુ થયુ ? તેને કહે છે- "अह-आसगओ" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--अह-अथ જ્યારે મૃગલાનો સહાર થ ગયો ત્યારે आसगओ

टीका—'अह मोणेण' इत्यादि ।

अथ=अनन्तर मौनेन=तूष्णींभावेन ध्यानम्=धर्मध्यानम् आश्रित स भगवान्=माहात्म्यसम्पन्नो नाम्ना गर्दभालि., अनगार =मुनि. यदा राजान न प्रतिमन्त्रयति=प्रतिवक्ति । तत स राजा भयद्रुत =भयत्रस्तो जातः ॥९॥

भीतो राजाऽनगारमुवाच—

मूलम्—संजओ अहंमस्सीति, भगवं वाहराहि मे ।
कुद्धो तेएणं अणगारे, दहेज्ज नरकोडिओ ॥१०॥

छाया—संजय अहमस्मीति, भगवन् व्याहर माम् ।
क्रुद्धस्तेजसाऽनगारः, दहेत् नरकोटीः ॥१०॥

टीका—'संजओ' इत्यादि ।

हे भगवन्! अह संजयो नाम राजाऽस्मि, नत्वन्य कश्चित्पामर., इति

मुनिराज ध्यानस्थ होनेसे नही बोले तब क्या हुआ ? सो सूत्रकार कहते है—'अह मोणेण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—उस समय (मोणेण-मौनेन) मौनसे (भगव अणगारे-भगवान् अनगार) वे माहात्म्यसपन्न मुनिराज (ज्झाणमस्सिओ-ध्यानमाश्रित') धर्मध्यानमे लवलीन बने हुए थे। इसलिये (रायाण पडि ण मतेइ--राजान प्रति न मत्रयति) राजाकी बातोंका उन्होंने कोई प्रत्युत्तर नही दिया।(तओ राया भयदुओ--तत. राजा भयद्रुत) इस परिस्थितिको देखकर राजा भयसे विशेष त्रस्त हो गया ॥९॥

भयत्रस्त राजाने क्या कहा ? सो कहते हैं—'संजओ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—पुन राजाने कहा- हे भगवन् ! (अह संजओ णाम

मुनिराज ध्यानस्थ હોવાથી કાંઈ બોલ્યા નહીં ત્યારે શુ થયુ ? તેને સૂત્રકાર કહે છે—"अह मोणेण" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—એ સમયે मोणेण—मौनेन મૌનના કારણે भगव अणगारे—भगवान् अणगार એ માહાત્મ્ય સપન્ન આ મુનિરાજ ज्झाणमस्सिओ—ध्यानमाश्रित ધર્મ ધ્યાનમા લવલીન બનેલ હતા આ કારણે रायाण पडि ण मतेइ—राजान प्रतिन मत्रयति રાજાની વાતનો તેમણે કોઇ પ્રત્યુત્તર આપ્યો નહીં तओ राया भयदुओ—तत राजा भयद्रुत આ પ્રકારની સ્થિતિ જોઇ રાજાના મનમા ખૂબજ ભય ઉત્પન્ન થયો ॥૯॥

ભયત્રસ્ત રાજાએ શુ કહ્યુ ? તેને કહે છે—"संजओ" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—ફરીથી રાજાએ કહ્યુ, હે ભગવન્ ! अह संजओ णाम राया अस्सि—

ततो राजा यत्कृतवांस्तदाह—

मूलम्—आस विसज्जइत्ताणं, अणगारस्स सो निवो।
विणयेण वंदइ पाए, भगवं! एत्थ मे खमे ॥८॥

छाया—अश्व विसृज्य खलु, अनगारस्य स नृपः।
विनयेन वन्दते पादौ, भगवन्! अत्र मे क्षमस्व ॥८॥

टीका—'आस' इत्यादि :

स सजयनामा नृप अश्व विसृज्य=विमुच्य गर्दभालेरनगारस्य पादौ विनयेन =सविनय वन्दते ब्रवीति च—हे भगवन्! अत्र मृगवधे जात ममापराध क्षमस्व ॥८॥

ततः किमभूदित्याह—

मूलम्—अह मोणेण सो भगवं, अणगारे झाणमस्सिओ।
रायाणं णं पडिमंतेइ, तओ राया भयद्दुओ ॥९॥

छाया—अथ मौनेन स भगवान्, अनगारो ध्यानमाश्रित।
राजान न प्रतिमन्त्रयति, ततो राजा भयद्रुत. ॥९॥

केन) घातकने मृगोको नही मारा है किन्तु (मणा—ननाक्) व्यर्थ ही उन (अणगारो—अनगारः) मुनिराजको (आहओ—आहतः) मारा है ॥७॥

फिर राजाने क्या किया सो कहते हैं—'आस' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सो निवो—स. नृपः) उस राजाने (आस विसज्जइत्ताण—अश्व विसृज्य खलु) घोडेको छोडकर (विणयेण—विनयेन) बडे विनयके साथ (अणगारस्स पाए वंदइ—अनगारस्स पादौ वदते) उन मुनिराजके दोनो चरणोंमे अपना मस्तक झुका दिया और कहने लगा (भगव—भगवन्) हे नाथ! (एत्थ मे खमे—अत्र में क्षमस्व) इस मृगवधसे होनेवाले मेरे अपराधको आप क्षमा करे ॥८॥

ઉદ્યાનમા બેઠેલા अणगारो—अनगारो મુનિરાજને જ आहओ—आहत मारेल છે ॥७॥

આ પછી રાજાએ શુ કર્યુ તે કહે છે—"आस" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—આ પ્રકારનો મનમા પશ્ચાત્તાપ કરતા सो निवो—स नृप એ રાજાએ आस विसज्जइत्ताण—अश्व विसृज्य खलु ઘોડાને છોડીને विणएण—विनयेन ઘણાજ વિનયની સાથે अणगारस्स पाए वंदइ—अनगारस्य पादौ वन्दते એ મુનિરાજના ચરણોમા પોતાનુ મસ્તક ઝુકાવી દીધુ અને કહેવા માંડયુ કે, भगव—भगवन् હે નાથ। एत्थमे खमे—अत्र मे क्षमस्व આ મૃગલાના વધથી થયેલા મારા અપરાધને [illegible]

सर्वत्र पश्यन् सर्वेषां प्राणिनामभयदाता भव। यथा तव मरणभयं तथैवान्येषामपि। किं च हे राजन्। अनित्ये=जलबुद्बुदवच्चपले अस्मिन् जीवलोके=संसारे हिंसायां=प्राणिवधे किं प्रसज्जसि=कथं प्रसक्तो भवसि। जीवलोकस्यानित्यत्वे त्वमप्यनित्यः। तत्कथं कतिपयदिनस्थायि जीवनस्य कृते त्वं पापमर्जयसीति भावः ॥११॥

किंच--

मूलम्--जया सव्वं परिच्चज्ज, गंतव्वमवसस्स ते।
अणिच्चे जीवलोगम्मि, किं रज्जम्मि पसज्जसि ॥१२॥

छाया--यदा सर्वं परित्यज्य, गन्तव्यमवशस्य ते।
अनित्ये जीवलोके, किं राज्ये प्रसज्जसि ॥१२॥

पार्थिव!) हे राजन्! (अभओ-अभयम्) तुम भयमत करो। तथा तुम प्रजापालक हो इस कारणसे समस्त जीवों को अपने जैसा मानकर तथा प्रजा स्वरूप समझकर (अभयदाया भवाहि य-अभयदाता भव च) उनके लिये अभय दाता बनो। जैसे मरण का भय तुमको है वैसे ही सबको है। फिर हे राजन्! (अणिच्चे जीवलोगम्मि-अनित्ये जीवलोके) यह जीवलोक अनित्य है-जलबुदबुदके समान चपल है तथा फिर तुम (किं-किम्) क्यों (हिंसाए पसज्जसि-हिंसायां प्रसज्जसि) इस हिंसा कर्म मे लवलीन हो रहे हो। तात्पर्य इसका केवल यही है कि जब जीवलोक अनित्य है तो तुम भी अनित्य हो-यहां शाश्वत इस पर्याय मे रहनेवाले नही हो तो फिर क्यों कुछेक दिनो तक रहनेवाले इस जीवन के लिये तुम पाप का उपार्जन कररहे हो॥ ११ ॥

હે રાજન્! अभओ-अभयम् तु નિર્ભય હો! તમારૂ કર્તવ્ય પ્રજાપાળક તરીકેનુ છે આ કારણે સઘળા જીવોને પોતાના જેવા માનીને તથા પ્રજા સ્વરૂપ સમજીને अभयदाया भवाहि य-अभयदाता भव च એના અભય દાતા બનો. જેમ મરણનો ભય તમને છે એવોજ ભય બધાને છે પછી હે રાજન! अणिच्चे जीवलोगम्मि-अनित्ये जीवलोके આ જીવલોક અનિત્ય છે પાણીના પરપોટાની જેમ ચપલ છે, છતા પણ તમે किं हिंसाए पसज्जसि-किम् हिंसाया प्रसज्जसि શા માટે આ હિંસા કાર્યમા લવલીન બની રહ્યા છો? તાત્પર્ય આનુ ફક્ત એજ છે કે, જ્યારે જીવલોક અનિત્ય છે, તમે પણ અનિત્ય છો, શાશ્વત આ પર્યાયમા રહેવાવાળા નથી તો પછી શા માટે અલ્પ દિવસો સુધી રહેવાવાળા આ જીવનના માટે પાપનુ ઉપાર્જન કરી રહ્યા છો? ॥૧૧॥

हेतोः मा व्याहर=कथय किमपि । भवादृश अनगारः=साधुः क्रुद्धः सन तेजसा=तेजोलेश्यादिना नरकोटीः=अनेककोटीसङ्ख्यकान नरान दहेत्=भस्मकुर्यात् । ममैकस्य का कथा ? अतोऽहमस्मि भयत्रस्तः । तस्माद् हे भगवन् ! मुञ्चतु भवान् कोपम् । दयस्व मयि ॥१०॥

ध्यानपूर्त्तौ नरपतिवचन निशम्य मुनिराह---

मूलम्--अभंओ पत्थिवा ! तुज्झं, अभयंदाया भवाहि यं ।
अंणिच्चे जीवलोगम्मि, किं हिंसाए पसज्जसि ॥११॥

छाया--अभय पार्थिव ! तव, अभयदाता भव च ।
अनित्ये जीवलोके किं, हिंसाया प्रसज्जसि ॥११॥

टीका--'अभओ' इत्यादि ।

हे पार्थिव !=राजन ! तव अभयमस्तु ! तथा त्वमपि च आत्मौपम्येन

राया अस्मि अह सजयो नाम राजा अस्मि) मैं सजय नामका राजा हू । अत आपसे प्रार्थना कर रहा हू कि आप (मे वाहराहि--माम् व्याहर) मुझसे कुछ कहे । क्यो कि (तेएण कुद्धो अणगारो नरकोडिओ दहेज्ज--तेजसा क्रुद्धः अनगार नरकोटीर्दहेत्) तेजोलेश्या आदि रूप तेजसे क्रुद्ध हुआ अनगार अनेक कोटि मनुष्योंको भी भस्म कर सकता है, मुझ एककी तो बात ही क्या है । इसलिये आप जब नही बोल रहे है तब मेरे हृदयमे बडा भारी भय जागृत हो रहा है । अत हे नाथ ! आप क्रोध न करे और मुझ पर दया करे यही प्रार्थना है ॥१०॥

ध्यान पूरा होने पर मुनिराज कहते हैं-'अभओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--राजाकी प्रार्थना सुनकर मुनिराजने कहा (पत्थिवा-

अह सजयो नाम राजा अस्मि हु सजय नामनो राजा छु अने आपने प्रार्थना करु छु के, आप मे वाहराहि-माम् व्याहर मने काइक कहो केमके, तेजोलेश्या आदिरूप तेएण कुद्धो अणगारो नरकोडिओ दहेज्ज-तेजसा क्रुद्धः अनगार नरकोटीर्दहेत् तेजथी क्रोधित बनेल अनगार अनेक कोटी मनुष्योनो पण सहार करी शके छे मारा जेवा एकनी तो वात ज क्या रही ? आथी आप ज्यारे बोलता नथी त्यारे मारा हृदयमा खूबज भय व्यापी रह्यो छे आथी हे नाथ आप क्रोध न करता मारा उपर दया करो एवी मारी नम्र प्रार्थना छे ॥१०॥

ध्यान पुरु थता मुनिराज कहे छे--"अभओ" ईत्यादि !

अन्वयार्थ--राजानी प्रार्थना साभळीने मुनि[illegible]

चैव=जीवनमपि रूप चापि विद्युत्सपातचञ्चलम्=विद्युतो यः सपात =सपतन तद्व चञ्चल=चपलम् अस्ति । तत्रासक्तस्त्व प्रेत्यार्थं=परलोकस्वरूपम् अर्थ=हित नाव-बुध्यसे=न जानासि ॥१३॥

तथा--

मूलम्--दाराणि यं सुया चेवं, मित्ता यं तह बंधवा ।
जीवंतमणु जीवंति, मयं नाणुव्वयंति यं ॥१४॥

छाया--दाराश्च सुताश्चैव, मित्राणि च तथा बान्धवाः ।
जीवन्तमनुजीवन्ति, मृत नानुव्रजन्ति च ॥१४॥

टीका--'दाराणि य' इत्यादि ।

हे राजन् ! दारा'=स्त्रिय', च=पुन सुता.-पुत्रा. च=पुनः, मित्राणि तथा बान्धवा.=भ्रातर, सहायकाश्च जीवन्त=प्राणान् धारयन्त जनम् अनु-

जीवित आदि पर्यायों में तुम मोहाधीन बन रहे हो वह 'जीवीय चेव रूव च-जीवित चैव रूप च) जीवित एव रूप (विज्जुसपायचचल-विद्युत् सपातचचलम्) सब बिजली की चमक के समान चचल है । इसमे मोहाधीन होकर ही (पेच्चत्थ णावबुज्झसि-प्रेत्यार्थं न अवबुध्यसि) तुम अभीतक परलोकरूप अर्थ को नही जान सके हो ॥ १३ ॥

तथा--'दाराणि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे राजन् ! देखो ससार कितना स्वार्थी है जो (दाराणि य सुयाचेव मित्ताय तह बधवा-दाराश्च सुताश्चैव मित्राणि-तथा बाधवाश्च) स्त्री, पुत्र एव मित्र तथा बाधवजन ये सब (जीवन्तमणुजीवति-जीवन्त मनुव्रजन्ति) जीवीत रहते २ के ही साथी हुआ करते हैं-कमाये गये द्रव्य

પર્યાયોમા તમો મોહાધીન થઈ રહ્યા છો એ जीविय चेव रूव च-जीवित चेव रूप च જીવન અને રૂપ સઘળા विज्जुसपाय चचल-विद्युत् सपात चचलम् વિજળીની ચમક જેવા ચચળ છે આમા મોહાધીન થઈને જ पेच्चत्थ णावबुज्झसि-प्रेत्यर्थं न अवबुध्यसि તમોએ આજસુધી પરલોકરૂપ અર્થને જાણેલ નથી ॥૧૩॥

તથા--"दाराणि" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--હે રાજન ! જુઓ સ સાર છે, दाराणि य सुयाचेव मित्ताय तह बाधवा-दाराश्च सुताश्चैव मित्राणि तथा बाधवाश्च આમા સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર તથા બાધવજનો એ સઘળા जीवन्तमणुजीवति-जीवन्तमनुव्रजन्ति જીવતા માનવીનાજ સાથી છે કમાયેલા દ્રવ્યમા સમ્મિલિત થઈને ખૂબ મોજમજા ઉડા

टीका—'जया' इत्यादि ।

यदा सर्वम् अन्तः पुरादिकं कोश कोष्ठागारभाण्डागारादिकं च परित्यज्य अवशस्य=परतन्त्रस्य ते—तव भवान्तरमवश्यमेव गन्तव्यम्। तदा हे राजन्! अनित्येऽस्मिञ्जीवलोके राज्ये किं प्रसज्जसि=कथं प्रसक्तो भवसि ? ॥१२॥

किंच

मूलम्—जीवियं चेवं रूवं च, विज्जुसंपायचंचलं ।
जत्थं तं मुज्झसि रायं, पेच्चंत्थं णावबुज्झसि ॥१३॥

छाया—जीवितं चैव रूपं च, विद्युत्संपातचञ्चलम् ।
यत्रत्वं मुह्यसि राजन् !, प्रेत्यार्थं नावबुध्यसे ॥१३॥

टीका—'जीविय' इत्यादि ।

हे राजन्! यत्र=जीविते रूपे च त्वं मुह्यसि=मोहं प्राप्नोषि, तज्जीवित

'जया' इत्यादि !

अन्वयार्थ—(जया-यदा) जब यह बात निश्चित है कि (अवसस्स-अवशस्य) मृत्यु के पंजे द्वारा परोक्षरूप में पराधीन हुए (ते-ते) तुम को (सव्व परिचज्ज-सर्वं परित्यज्य) इस अन्तःपुर, कोश, कोष्ठागार, भाण्डागार आदि का परित्याग करके (गतव्व-गन्तव्यम्) भवान्तर मे जाता है तो हे राजन्! फिर (किं-किम्) क्यों (अनिच्चे जीवलोगम्मि-अनित्ये जीवलोके) अनित्य-अनवस्थित-इस जीवलोक में वर्तमान (रज्जम्मि-राज्ये) क्षणभगुर राज्यमें (पसज्जसि-प्रसज्जसि) फँस रहे हो ॥१२॥

फिर भी—'जीविय' इत्यादि !

अन्वयार्थ—हे राजन्! (जत्थ तं मुज्झसि-यत्र त्वं मुह्यसि) जिन

"जया" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—जया-यदा જ્યારે એ વાત નિશ્ચિત છે કે अवसस्स-अवशस्य મૃત્યુના પંજાથી પરાધીન એવું જીવન જીવતા ते-ते તમોએ सव्व परिच्चज्ज-सर्वं परित्यज्य આ અન્તઃપુર, કોશ કોષ્ઠાગાર, સેના, સાહ્યબી, આદિનો પરિત્યાગ કરીને गतव्वम्-गन्तव्यम् ભવાન્તરમાં જવાનું જ છે તો, હે રાજન્! પછી किं-किम् શા માટે अनिच्चे जीवलोगम्मि-अनित्ये जीवलोके આ અનિત્ય-અનવસ્થિત આ જીવલોકમાં વર્તમાન रज्जम्मि-राज्ये ક્ષણભંગુર એવા આ રાજ્યલોભમાં पसज्जसि-प्रसज्जसि શા માટે ફસાઈ રહ્યા છો ? ॥૧૨॥

છતાં પણ—"जीविय" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે રાજન! जत्थ त्वं मुज्झसि-यत्र त्वं मुह्यसि જે જીવન આદિ

निर्हरन्ति। तस्मादेव ससारदशा ज्ञात्वा हे राजन्! तप =तपस्या चरे =कुरु ॥१५

किंच—

मूलम्—तओ तेणज्जिए दव्वे, दारे य परिरक्खिए।
कीलंतऽन्ने नरा राय, हट्टतुट्ठमलंकिया॥१६॥

छाया—ततस्तेनार्जितानि द्रव्याणि, दाराश्च परिरक्षितान्।
क्रीडन्त्यन्ये नरा राजन्। हृष्टतुष्टा अलङ्कृता ॥१६॥

टीका—'तओ' इत्यादि।

हे राजन्। ततः=तस्य द्रव्योपार्जकजनस्य मृत्योरनन्तरम् तेन जनेन अर्जितानि द्रव्याणि, तथा तेन परिरक्षितान् दाराश्च गृहीत्वा अन्ये नरा हृष्ट तुष्टा –तत्र–हृष्टा =बहि पुलकादि मन्त', तुष्टा'=आन्तरप्रीतिसम्पन्ना, तथा-

---

पिता को कि जिसका घरमें एकच्छत्र राज्य था उसी घर से बाहर निकाल देते हैं। तथा (पियरो वि पुत्ते बधू नीहरति–पितरोऽपि पुत्रान् बन्धून् निर्हरन्ति) पिता भी मरजाने पर प्राणों से भी अधिक प्रिय पुत्रों को तथा अपने बन्धुजनों को बाहर निकाल देता है। अत ससारकी (राय–राजन्) हे राजन्! इस प्रकार दशा देखकर (तव चरे–तपश्चरे) इस जीवनको सफल करनेके लिये तुम तपस्या करो ॥ १५ ॥

फिर भी—'तओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(राय–राजन) हे राजन्। द्रव्योपार्जक व्यक्तिकी मृत्यु के बाद (तेणज्जिए दव्वे परिरक्खिए दारे य–तेनार्जितानि द्रव्याणि परिरक्षितान् दारान् च) उसके द्वारा पहिले उपार्जित किये गये द्रव्य को तथा उसकीपरिरक्षित दारा–स्त्रीजन को (अन्ने नरा कीलति–अन्ये नराःक्रीड-

---

તેનેજ (શબને) એ ઘરમાથી બહાર કાઢે છે તથા पियरोवि पुत्ते बधू नीहरति–पितरोऽपि पुत्रान बन्धून् निर्हरन्ति આજ પ્રમાણે પિતા પણ મરી જનાર પોતાના પ્રિય પુત્રને તેમજ બધુ વગેરેને પણ આજ પ્રમાણે ઘરમાથી બહાર કાઢે છે આ પ્રમાણેની સસારની राय–राजन् હે રાજા દશા જોઇને तव चरे–तपश्चरे આ જીવનને સફળ બનાવવા માટે હે રાજન્! તમે તપસ્યા કરો ॥ ૧૫ ॥

ફરી પણ—"तओ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—राय–राजन् હે રાજન્! દ્રવ્યનુ ઉપાર્જન કરનાર વ્યક્તિના મૃત્યુ બાદ तेणज्जिए दव्व परिरक्खिए दारे य–तेनार्जितानि द्रव्याणि परिरक्षितान् दारान् च તેણે ઉપાર્જન કરેલા દ્રવ્યને તથા તેની આશ્રિત સ્ત્રી જનને પ્રાપ્ત કરીને

जीवन्ति=तदुपार्जितवित्ताद्युपभोगेरुप जीवन्ति, च=पुनः मृत नानुव्रजन्ति। मनुष्याः अनेकविधोपायैर्वित्तमर्जयन्ति। तद्वित्तमुपभुज्य कलत्रादयो जीवन्ति। परन्तु स वित्तोपार्जको मृतश्चेत्तदा तस्य पृष्ठे न कोऽपि गच्छतीति भावः ॥१४॥

तथा--

मूलम्--नीहँरति मंय पुत्ता, पियँरं परमदुक्खिया।
पियँरो वि तहा पुत्ते बंधूँ रांय तंव चरे ॥१५॥

छाया- निर्हरन्ति मृत पुत्राः, पितर परमदुःखिता।
पितरोऽपि तथा पुत्रान्, बन्धून् राजन्! तपश्चरे ॥१५॥

टीका--'नीहरति' इत्यादि।

परमदुःखिता=पितृमरणेनातीव दुःखयुक्ता पुत्रामृत पितर निर्हरन्ति=गृहान्निःसारयन्ति। तथा पितरोऽपि पुत्रान् निर्हरन्ति, तथा बान्धवाश्च बन्धून्

मे सम्मिलित होकर खूब मजा मौज उडाया करते हैं-(मय नाणुव्वयति य-मृत नानुव्रजन्ति च) परन्तु जब विचारे इस जीवको परलोक में जानेका समय आ जाता है मृत्यु आकर जब इसके गलेको धर दबाता है तब कोई भी ऐसा नही निकलता जो इसकी उससे रक्षा कर सके तथा उसके पीछे२ जा सके। सबके सब एक ओर खडे हो जाते है ॥१४॥

तथा—'नीहरति' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे राजन्! इससे अधिक ससार की असारता और क्या होगी जो (परमदुक्खिया-परमदुःखिता) पिताको परलोक मे जाते समय (पुत्ता-पुत्राः) पुत्रादिक मिलकर परमदुःखित हुआ करते है। तथा (मय पियर नीहरति-मृत पितर निर्हरन्ति) मरे हुए उस बिचारे

વવામા જ આનદ માનનારા હોય છે मय नाणुव्वयति य-मृत नानुव्रजति च પરતુ જ્યારે આ બીચારા જીવને પરલોકમા જવાનો સમય આવે છે મૃત્યુ આવીને જ્યારે એના ગળાને ટુપો દે છે ત્યારે કોઈ પણ એવુ નથી આગળ આવતુ કે, જે એ જીવની રક્ષા કરી શકે, અથવા તો એની પાછળ પાછળ જાય એ સઘળા એ સમયે એક બાજુએ ખસીને ઉભા રહી જાય છે જ્યારે જીવને એકાકિ જવું પડે છે ॥૧૪॥

તથા—"नीहरति" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે રાજન! આનાથી વધારે સસારની અસારતા બીજી શુ હોય? જે परमदुक्खिया-परमदुःखिता પિતાના પરલોકમા જવા કાળે पुत्तो-पुत्रा પુત્રાદિક એકઠા મળેલા પરમદુઃખિત થયા કરે છે તથા मयपियर नीहरति-मृत पितर निर्हरन्ति મરી જનાર બિચારા એ પિતા કે, જેનુ ધમા સપૂર્ણપણે ચલણ ચાલતુ હતુ

तेन सार्धं गच्छति। यतश्च शुभाशुभकर्माण्येव जनमनुगच्छन्ति, अतो हे राजन्! शुभहेतुक तप एव समाचरेति भाव ॥१७॥

मुनिवचन निशम्य राजा यत्कृतवान्नदुच्यते--

मूलम्--सोऊण तस्स सो धम्मं अणगारस्स अंतिए।
महयासंवेगनिव्वेयं, समावन्नो नराहिवो ॥१८॥

छाया--श्रुत्वा तस्य स धर्मम्, अनगारस्य अन्तिके।
महासंवेगनिर्वेदं, समापन्नो नराधिप ॥१८॥

टीका--'सोऊण' इत्यादि।

तस्य=अनगारस्य अन्तिके=समीपे धर्मं=श्रुतचारित्ररूप श्रुत्वा स नराधिप =संयत. महासंवेगनिर्वेद=संवेगो=मोक्षाभिलाषः, निर्वेदः=संसारोद्वेग, अनयोः समाहारः, महच्च तत् संवेगनिर्वेदं च महासंवेगनिर्वेदम् अत्युत्कृष्ट मोक्षाभिलाष वैराग्य च समापन्नः=प्राप्तवान् ॥१८॥

है। कोई दूसरा जन उसके साथ नहीं जाता। जब यह बात है कि जीव के साथ शुभ और अशुभ कर्म जाते ह, तो हे राजन्! शुभ कर्म हेतुक जो तप है उसको ही तुम करो ॥१७॥

इस प्रकार मुनिराज के वचन सुनकर राजाने क्या किया इस बात को सूत्रकार इस गाथा द्वारा प्रकट करते है--'सोऊण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तस्स–तस्य) उन (अणगारस्स–अनगारस्य) मुनिराज के (अंतिए–अन्तिके) समीप (धम्मं सोऊण–धर्मं श्रुत्वा) श्रुतचारित्र रूप धर्मका उपदेश सुनकर (सो नराहिवो–स नराधिप) उस संजय राजा को (महया संवेग निव्वेयं समावन्नो–महासंवेगनिर्वेद समापन्न) अत्युत्कृष्टसंवेग–मुक्ति प्राप्तिकी अभिलाषा तथा निर्वेद–संसार से वैराग्य प्राप्त हो गया ॥१८॥

જ્યારે આ વાત છે કે, જીવના સાથે કેવળ શુભ અને અશુભ કર્મજ જાય છે તો હે રાજન! શુભકર્મના હેતુરૂપ જે તપ છે તેનેજ તમે આદરો ॥ ૧૭ ॥

આ પ્રકારના મુનિરાજના વચન સાંભળીને રાજાએ શુ કર્યુ, એ વાતને સૂત્રકાર આ ગાથાદ્વારા પ્રગટ કરે છે--"सोऊण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--तस्स–तस्य એ अणगारस्स–अनगारस्य મુનિરાજની अंतिए–अन्तिके પાસેથી धम्मं सोऊण–धर्मं श्रुत्वा શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળીને सो नराहिवो-स नराधिपः એ સંજય રાજાને महया संवेग निव्वेयं समावन्नो–महता संवेग-निर्वेद समापन्न સંસાર ઉપર વૈરાગ્ય આવ્યો તેમજ મુક્તિ પ્રાપ્તિની અભિલાષા પૂર્ણપણે જાગી ॥ ૧૮ ॥

अलङ्कृताः=अभूषितशरीरा सन्तः क्रीडन्ति=रमते। ईदृशी संसारस्थिति रत स्मात्। तपः संयमाराधनमेव श्रेयस्करमिति ॥१६।

मरणानन्तरं जीवस्य यद् भवति, तदुच्यते--

मूलम्--तेणावि जं कयं कम्मं, सुहं वा जइ वा दुहं।
कम्मुणा तेण संजुत्तो, गच्छई उ परं भवं ॥१७॥

छाया--तेनाऽपि यत्कृत कर्म, सुखं वा यदि वा दुःखम्।
कर्मणा तेन संयुक्तः, गच्छति तु परं भवम् ॥१७॥

टीका--'तेणावि' इत्यादि।

तेनापि मरणोन्मुखेन जनेन पूर्वं सुखं=सुखहेतुकं शुभं, यदि वा=अथवा दुःखं=दुःखहेतुकम् अशुभं यत्कर्म कृतम्, तेन=पूर्वोपार्जितकर्मणा, 'तु'=इति निश्चयेन संयुक्तः, एकाकी सन् परं भवं=भवान्तरं गच्छति, न चान्य कोऽपि

न्ति) प्राप्तकर दूसरे व्यक्ति आनन्द करते हैं और (हट्ठ तुट्ठा हवइ-हृष्टतुष्टा भवन्ति) हर्षित होते रहते हैं और खूब सन्तुष्ट रहा करते हैं (अलंकिया हवइ-अलंकृताश्च भवन्ति) तथा विभूषित शरीर होकर रहते हैं ॥ १६ ॥

मरने पर जीवका क्या होता है सो कहते हैं—'तेणावि' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(तेणावि जं सुह दुह वा-तेनापि यत् पूर्वं सुखं दुःखं वा यत्कर्मकृतम्) मरणोन्मुख उस मनुष्यने पहिले जो सुख हेतुक शुभकर्म अथवा दुःख हेतुक अशुभ कर्म किया है (तेण कम्मुणा संजुत्तो परभवं उ गच्छई-तेन कर्मणा संयुक्तः परं भवं तु गच्छति) उसी के अनुसार वह प्राणी उस कर्म से युक्त होकर परभव मे अकेला ही जाता

अ ने नरा कीलंति-अन्ये नरा क्रीडन्ति બીજી વ્યક્તિ આનંદ કરે છે, અને हट्ठ तुट्ठा हवइ-हृष्टतुष्टा भवन्ति હર્ષિત થતી રહે છે અને ઘણા સંતુષ્ટ રહ્યા કરે છે अलंकिया हवइ-अलंकृताश्च भवन्ति અને તેઓ શરીર શણગારી ઠાઠમાઠથી રહે છે ॥૧૬॥

મરી જવાથી જીવનું શું થાય છે તેને કહે છે—"तेणावि" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--तेणावि जं सुह वा-तेनापि यत् पूर्वं सुखं दुःखं वा यत्कर्म कृतम् મરણ પથારીમાં પડેલા એ મનુષ્યે પહેલા જે સુખના હેતુરૂપ જે જે શુભકર્મ અથવા દુઃખના હેતુરૂપ જે જે અશુભ કર્મ કરેલ છે तेण कम्मुणा संजुत्तो परभवं उ गच्छई-तेन कर्मणा संयुक्त परभवं तु गच्छति તેના અનુસાર તે પ્રાણી તે કર્મ યુક્ત બનીને પરભવમાં એકલોજ જાય છે કોઈ બીજા જીવ એની સાથે જતા નથી

कुलेऽजनि। तत्र च कुतश्चित्तथाविधनिमित्तत• सजातपूर्वजन्मस्मृतिर्विरतिमापन्न प्रव्रज्यामङ्गीकृतवान्। ततोऽप्रतिबद्धविहारितया विहरन् क्षत्रियराजर्षि सजयमुनि विलोक्य त पृच्छति–हे मुने। यथा ते=तव रूप प्रसन्न=विकारवर्जित दृश्यते, तथा=तदनुरूपमेव ते=तव मनोऽपि प्रसन्न=निर्विकार दृश्यते ।२०॥

इस प्रकार दीक्षा धारणकर सजयमुनि गीतार्थ बन गये। और दस प्रकार की मुनि सामाचारी का पालन करने में सावधान बनकर उन्हों ने गुरु की आज्ञा से एकाकी होकर विहार करना प्रारभ किया। विहार करते २ ये एक नगर में आये। वहां क्या हुआ सो अब प्रकट किया जाता है—'चिचा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(खत्तिय-क्षत्रिय) किसी क्षत्रिय ने (रज्ज चिचा-राज्य त्यक्त्वा) राज्य का परित्याग करके (पव्वइए-प्रव्रजितः) दीक्षा धारण की थी। यह क्षत्रिय राजऋषि थे, तथा पूर्वजन्म मे वैमानिक देव थे। वहा से चवकर क्षत्रिय कुल मे इन्हों ने जन्म धारण किया था। किसी निमित्त को पाकर इनको पूर्वजन्म की स्मृति आजाने के कारण सर्व विरति का उदय आ गया था, सो इन्हों ने शीघ्र ही राज्य का परित्याग कर दीक्षा धारण करली। अप्रतिबद्ध विहारी होने के कारण ये क्षत्रिय राजर्षि विहार करते हुए यहीं पर आ गये थे। सो उन्हों ने सजय मुनि को देखकर यह पूछा–हे मुने!–(जहा ते रूप दीसइ–यथा ते रूप दृश्यते) जैसा तुम्हारा रूप विकार वर्जित दिख रहा है (तहा-

આ પ્રમાણે દીક્ષા ધારણ કરીને સજય મુનિ ગીતાર્થ બની ગયા અને દસ પ્રકારની મુનિસામાચારીનુ પાલન કરવામા સાવધાન બનીને તેઓએ ગુરુની આજ્ઞાથી એકાકી બની વિહાર કરવાનો પ્રારભ કર્યો વિહાર કરતા કરતા તેઓ એક નગરમા આવ્યા ત્યા શુ બન્યુ તેને હવે પ્રગટ કરવામા આવે છે—"चिच्चा" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—खत्तिए-क्षत्रिय કોઈ ક્ષત્રિયે रज्ज चिच्चा-राज्य त्यक्त्वा રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને पव्वइए-प्रव्रजित દીક્ષા ધારણ કરેલ હતી તે ક્ષત્રિય રાજર્ષિ હતા તથા પૂર્વજન્મમા વૈમાનિક દેવ હતા ત્યાથી ચ્યવીને ક્ષત્રિયકુળમા તેઓએ જન્મ ધારણ કરેલ હતો કોઈ નિમિત્તને લઈને તેને પૂર્વ જન્મની સ્મૃતિ આવી જવાના કારણે સર્વવિરતિનો ઉદય થઈ ગયો આથી તેઓએ તરતજ રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને દીક્ષા ધારણ કરી લીધી અપ્રતિબદ્ધ વિહારી હોવાના કારણે એ ક્ષત્રિય રાજર્ષિ વિહાર કરતા કરતા અહી આવી પહોચ્યા હતા તેમણે સજય મુનિને જોઈને પૂછ્યુ કે, હે મુનિ! जहा ते रूव दीसइ–यथा ते रूप दृश्यते જે પ્રકારે તમારૂ રૂપ

ततः किं कृतवानित्याह—

मूलम्—सजंओ चंइउ रज्जं, निक्खंतो जिणसासणे ।
गद्दभालिस्स भगवओ अणगारस्स अंतिए ॥१९॥

छाया—सञ्जयस्त्यक्त्वा राज्यं, निष्क्रान्तो जिनशासने ।
गर्दभालेर्भगवतः, अनगारस्य अन्तिके ॥१९॥

टीका—'सजओ' इत्यादि ।

संवेगनिर्वेदसमापन्नः सञ्जयनामको राजा राज्यं त्यक्त्वा भगवतो गर्दभालेरनगारस्य अन्तिके=समीपे जिनशासने निष्क्रान्तः=प्रव्रजितः ॥१९॥

एवं गृहीतप्रव्रज्यो गीतार्थो नित्यकर्मरूप दशविधचक्रवालसामाचारीरतः स सञ्जयोऽनगारो गुरोरादेशात् प्रतिबद्धविहारितया एकाकी विहरन् कश्चित् सन्निवेशं जगाम, तत्र यदभूत्तदुच्यते—

मूलम्—चिच्चा रज्जं पव्वइए, खत्तिए परिभासई ।
जहा ते दीसई रूवं, पसन्नं ते तहा मणो ॥२०॥

छाया—त्यक्त्वा राज्यं प्रव्रजितः, क्षत्रियः परिभाषते ।
यथा ते दृश्यते रूपं, प्रसन्नं ते तथा मनः ॥२०॥

टीका—'चिच्चा' इत्यादि ।

कश्चित्क्षत्रियः राज्यं त्यक्त्वा=परित्यज्य प्रव्रजितः=प्रव्रज्यां गृहीतवान् । अयं हि क्षत्रियराजर्षिः पूर्वजन्मनि वैमानिकः देव आसीत् । ततश्च्युतः क्षत्रिय

फिर राजा ने क्या किया सो कहते हैं—'सजओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(सजओ-संयत) संवेग एवं निर्वेद से युक्त संजय राजा ने (रज्जं चइउ-राज्यं त्यक्त्वा) राज्यका परित्याग करके (अणगारस्स गद्दभालिस्स भगवओ-अनगारस्य गर्दभाले भगवत) मुनिराज गर्दभालि महाराजके (अंतिए-अन्तिके) पास (जिणसासणे निक्खतो-जिनशासने निष्क्रान्त) दीक्षा धारण करली ॥१९॥

આ પછી રાજાએ શું કર્યું તેને કહે છે—"सजओ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—सजओ-संयत સંવેગ અને નિર્વેદથી યુક્ત સંજય રાજાએ रज्जं चइउ-राज्यं त्यक्त्वा રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને अणगारस्स गद्दभालिस्स भगवओ-अनगारस्य गर्दभाले भगवत મુનિરાજ ગર્ધભાલી મહારાજની अंतिए-अंतिके પાસે जिण सासणे निक्खतो-जिनशासने निष्क्रान्त દીક્ષા અંગીકાર કરી ॥૧૯॥

संजयमुनिराह—

मूलम्—संजओ नाम नामेण तहा गोत्तेण गोयमे ।
गद्दभाली ममायरियां, विज्जाचरणपारगा ॥२२॥

छाया—संजयो नाम नाम्ना, तथा गोत्रेण गौतमः ।
गर्दभालयो ममाचार्याः, विद्याचरणपारगाः ॥२२॥

टीका—'संजओ' इत्यादि ।

हे मुने ! अहं नाम्ना संयतो नाम अस्मि, तथा–गोत्रेण गौतमोऽस्मि । तथा–विद्याचरणपारगाः=श्रुतचारित्रपारङ्गताः गर्दभालयो नाम ममाचार्याः सन्ति । अयमाशयः–गर्दभालेराचार्यस्योपदेशात्प्राणातिपातादेर्निवृत्तोऽहं मुक्त्यर्थं-माहनोऽभवम् । अनेन पञ्चमहाव्रतरूपमूलगुणसमाराधकत्वं ध्वनितम् । तथा–तदुपदेशानुसारेण आचार्यान् सेवे ! अनेन गुरुसेवा–परायणता सूचिता । तदुपदे-

इस पर अब संजयमुनि कहते है–'संजओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ–हे मुने ! (नामेण संजओ नाम–नाम्ना संजय नाम) मैं नाम से संजय हूं, अर्थात् मेरा नाम संजय है तथा (गोत्तेण गोयमे-गोत्रेण गौतम अस्मि) मैं गोत्र से गौतम हूं अर्थात् गौतम गोत्री हूं । तथा (विज्जाचरणपारगा गद्दभाली ममायरिया–विद्याचरणपारगा गर्द-भालय मम आचार्याः सन्ति) श्रुतचारित्रपारगत गर्दभालि नामक आचार्य मेरे आचार्य है ।

भावार्थ—गर्दभालिआचार्य महाराज के उपदेश से मैंने प्राणातिपा-तादिक पापो का परित्याग कर यह दीक्षा धारण कि है । वे ही मेरे गुरू हैं । मुक्ति प्राप्त करने की कामना से ही मैं माहन–मुनि बना हूं । आचार्यों की सेवा भी मैं उन्ही के उपदेशानुसार करता हूं । तथा उन्हीं

આના પ્રત્યુત્તરમાં સંજય મુનિ કહે છે–"संजओ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ–હે મુનિ ! नामेण संजओ नाम–नाम्ना संजय नाम હું નામથી સંજય છું અર્થાત મારૂ નામ સંજય છે તથા હું गोत्तेण गोयमे–गोत्रेण गौतमः अस्मि હું ગોત્રથી ગૌતમ છું ગૌતમગોત્રી છું તથા શ્રુતચારિત્ર પારગત ગર્દભાલી મારા આચાર્ય છે

ભાવાર્થ––ગર્દભાલી આચાર્ય મહારાજના ઉપદેશથી મેં પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોનો પરિત્યાગ કરી આ દીક્ષા ધારણ કરેલ છે એઓશ્રી મારા ગુરુ છે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની કામનાથીજ હું મુનિ બન્યો છું આચાર્યોની સેવા પણ હું તેમના

तथा--

मूलम्--कि णामे ? किं गोत्ते ? कस्सट्ठाए व माहणे ? ।
कह पडियरसी बुद्धे ?, कह विणीयेत्ति वुच्चसि ॥२१॥

छाया—किं नामा ? किं गोत्रः ? कस्मै अर्थाय वा माहनः ।
कथं प्रतिचरसि बुद्धान् ? कथं विनीत इत्युच्यसे ॥२१॥

टीका—'किं नाम' इत्यादि ।

हे मुने ! त्वं किंनामा असि=तव नाम किमस्ति ? तथा किं गोत्रोऽसि= तव गोत्रं किमस्ति, कस्मै वा अर्थाय=किं प्रयोजनमुद्दिश्य त्वं माहनः-मा हन्ति कमपि प्राणिनं मनोवाक्कायैर्यः स माहनः=प्रव्रजितः । तथा बुद्धान्= आचार्यान् कथं=केन प्रकारेण प्रतिचरसि=सेवसे, कथं च त्वं विनीतः=विनयवान् इत्युच्यसे ॥२१॥

तथा) उसी प्रकार से (ते मणो पसन्नं दीसइ-ते मनः प्रसन्नं दृश्यते) तुम्हारा मन भी विकार वर्जित प्रसन्न मालूम पडता है ॥२०॥

तथा-' किं णामे ' इत्यादि—

अन्वयार्थ-हे मुने (किं णामे-किं नामा) आप का क्या नाम हैं तथा (किं गोत्ते-किं गोत्रः) गोत्र आपका क्या है। (कस्सट्ठाए व माहणे-कस्मै वा अर्थाय त्वं माहनः) किस प्रयोजन को लेकर आप मन वचन एवं काय से प्राणातिपात आदि से विरक्त हुए हैं अर्थात् दीक्षित हुए हैं। तथा (बुद्धे कह पडियरसी-बुद्धान् कथं प्रतिचरसि) आचार्यों की किस प्रकार से आप सेवा करते हैं और आप (कह विणीएत्ति वुच्चसि-कथं विनीत इत्युच्यसे) विनयवान है यह बात कैसे घटित हुए है अर्थात् आप विनयशील कैसे बने ॥२१॥

વિકાર વર્જીત દેખાય છે, तहा-तथा તેવા પ્રકારે ते मणो पसन्न दीसइ-ते मनः प्रसन्नं दृश्यते તમારૂં મન પણ વિકાર વગરનું પ્રસન્ન માલુમ પડે છે ॥૨૦॥

તથા--"किं णामे" ઈત્યાદિ !

હે મુનિ ! किं णामे-किं नामा આપનું નામ શું છે, તથા किं गोत्ते-किं गोत्र આપનું કયું ગોત્ર છે, कस्सट्ठाए व माहणे-कस्मै वा अर्थाय त्वं माहनः કયા પ્રયોજનને લઈ આપ મન, વચન, અને કાયાથી પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરકત બન્યા છો અર્થાત દીક્ષિત થયા છે ? તથા बुद्धे कह परियटसि-बुद्धान् कथं प्रतिचरसि આચાર્યોની આપ કઈ રીતે સેવા કરો છો, અને આપ વિનયવાન છો એ વાત કઈ રીતે મનાયેલ છે અર્થાત આપ વિનયશીલ કઈ રીતે બન્યા ? ॥૨૧॥

'किरिय' इत्यादौ प्राकृतत्वान्नपुंसकत्वम्। तथा-अनाने=वस्तुतत्त्वानवगमः, इत्येव रूपैरेतैः स्वस्वाभिप्रायकल्पितैश्चतुर्भिः स्थानैः=हेतुभिः मेयज्ञाः=मीयते इति मेयम् -ज्ञेयं जीवादिवस्तु तज्जानन्तीति मेयज्ञाः =स्वस्वाभिप्रायपरिकल्पितवस्तुस्वरूपाः सर्वज्ञसिद्धान्तबहिर्वर्तिनः कुतीर्थिका इत्यर्थः। किं=कुत्सित प्रभाषन्ते कुत्सितत्वमेषां सद्युक्तिवर्जितत्वात्। तथाहि-क्रियावादिनो यद्यप्यात्मानं सत्तां प्रति पन्नास्तथाऽपि ते आत्मनि एकान्ततो विभुत्वाविभुत्वकर्तृत्वाकर्तृत्वमूर्तत्वामूर्तत्वादिकं मन्यन्ते। तत्र आत्मनो विभुत्व-व्यापकत्वं न सगच्छते, शरीर एव लिङ्गभूत चैतन्योपलम्भे ।

(अन्नाण-अज्ञानम्) वस्तुतत्त्व का अनवगम (एतेहिं चउहिं ठाणेहिं-एतैः चतुर्भिः स्थानैः) इन चार स्थानों द्वारा अपने २ अभिप्राय से कल्पित इन चार हेतुओं द्वारा (मेयन्ने-मेयज्ञाः) अपनी २ बुद्धि के अनुसार जिन्हों ने वस्तुका स्वरूप परिकल्पित किया है, सर्वज्ञ के सिद्धान्त के अनुसार जीवादिक पदार्थों के स्वरूप को जो नहीं मानते हैं ऐसे सर्वज्ञ सिद्धान्त से बहिष्कृत कुतीर्थिक जन (किं पभासइ-किं प्रभाषन्ते) कुत्सित ही तत्त्वों की प्ररूपणा करते हैं। कारण कि उनका जो कुछ भी कथन है वह सत् युक्तियों से सर्वथा वर्जित एवं मनगढन्त है। क्रियावादियों का ऐसा कहना है कि आत्मा है तो सही परन्तु एकान्त से विभु भी है अविभु भी है कर्त्ता भी है अकर्त्ता भी है, मूर्त्तिक भी है अमूर्त्तिक भी है। परन्तु ऐसी ये मान्यताए ठीक नहीं हैं कारण के शरीर मे ही आत्मा के लिङ्गभूत चैतन्य की उपलब्धि होने से आत्मा मे व्यापकता घटित नहीं होती है।

સઘળાને નમસ્કાર કરવારૂપ વિનય અને अन्नाण-अज्ञानम् વસ્તુતત્વનુ જ્ઞાન एतेहिं चउहिं ठाणेहिं-एतैः चतुर्भिः स्थानैः આ ચારે સ્થાનોદ્વારા मेयन्ने-मेयज्ञा પોતપોતાની બુદ્ધિ અનુસાર જેઓએ વસ્તુનુ સ્વરૂપ પરિકલ્પિત કરેલ છે સર્વજ્ઞના સિદ્ધાત અનુસાર જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને જે નથી માનતા એવા સર્વજ્ઞ સિદ્ધાન થી બહિષ્કૃત કુતિર્થિકજન किं पभासइ-किं प्रभाषन्ते કુત્સિત જ તત્વોની પ્રરૂપણા કરે છે કારણ કે, તેમનુ જે કાંઈ પણ કહેવાનુ હોય છે તે સતયુક્તિયોથી સર્વથા વર્જીત અને મનથી ઉપજાવી કાઢેલુ છે ક્રિયાવાદીઓનુ એવુ કહેવાનુ છે કે, આત્મા છે તો ખરો, પરતુ તે એકાન્તથી વિભુ પણ છે, અવિભુપણ છે કર્તા પણ છે, અકર્તા પણ છે, મૂર્તિક પણ છે, અમૂર્તિક પણ છે પરતુ એવી એ માન્યતાઓ ઠીક નથી કારણ કે, શરીરમા આત્માના લિંગભૂત ચૈતન્યની ઉપલબ્ધિ થવાથી આત્મામા વ્યાપકતા ઘટિત થતી નથી

शानुसारेण सकलमुनिक्रिया करोमि। अतोऽहमस्मि विनीतः। आचार्यानुसेवनेन, तदुपदेशानुसारग्रहणाऽऽसेवना-शिक्षासु प्रवर्तनेन चोत्तरगुणसमाराधकत्वं सूचितम् ॥२२॥

अथ तद्गुणाकृष्टोऽपृष्टोऽपि क्षत्रियराजऋषिराह—

मूलम्—किरियं अकिरियं विणयं, अन्नाणं च महामुणी।
एएहिं चउहिं ठाणेहिं, मेयन्ने किं पभासई ॥२३॥

छाया—क्रिया अक्रिया विनयः, अज्ञानं च महामुने?।
एतैश्चतुर्भिः स्थानैः, मेयज्ञाः किं प्रभाषन्ते ॥२३॥

टीका—'किरियं' इत्यादि।

हे महामुने! क्रिया=अस्तीत्येवरूपा-जीवादिसत्तारूपेत्यर्थः, अक्रिया=तद्विपरीता-जीवादिपदार्थाना नास्तित्वरूपा, विनयः=सर्वेभ्यो नमस्कारादिकरणम्,

के कथनानुसार सकल मुनिक्रियाओं की आराधना करता हूं। इसीसे मैं विनीत बना हूं। माहन पदसे पंचमहाव्रत रूप मूलगुणोंकी आराधकता, आचार्य सेवा से गुरुसेवा में परायणता एवं आचार्यकी सेवा से तथा उनके उपदेशानुसार ग्रहणशिक्षा एवं आसेवन शिक्षा में प्रवर्तन करने से उत्तरगुणोंकी समाराधकता उनमें प्रकट की गई जाननी चाहिये ॥२२॥

इस प्रकार सुनकर उनके गुणों से आकृष्ट क्षत्रिय राजऋषिने विना पूछे ही जो कहा सो कहते हैं—'किरियं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे महामुने! (किरियं-क्रिया) जीवादिकों की सत्तारूप क्रिया तथा (अकिरियं-अक्रिया) जीवादिक पदार्थों की नास्तित्वरूप अक्रिया तथा (विणयं-विनय) सबको नमस्कार करने रूप विनय एवं

ઉપદેશ અનુસાર કરૂં છું તથા તેઓના કથન અનુસાર સઘળી મુનિ ક્રિયાઓની આરાધના કરૂં છું આથી હું વિનીત બનેલ છું મુનિપદથી પાંચ મહાવ્રતરૂપ મૂળ ગુણોની આરાધકતા આચાર્ય સેવાથી, ગુરુસેવામાં પરાયણતા અને આચાર્યની સેવાથી તથા તેમના ઉપદેશ અનુસાર ગ્રહણ શિક્ષા અને આસેવન શિક્ષામાં પ્રવૃત્તિ કરવાથી ઉત્તર ગુણોની સમારાધકતા એમાં પ્રગટ કરાયેલી જાણવી જોઈએ ॥૨૨॥

આ પ્રકારે સાંભળીને તેમના ગુણોથી આકર્ષાઈને ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ પૂછયા વગર જ કાંઈ કહ્યું તેને કહે છે—"किरियं" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે મહામુનિ! किरियं-क्रिया જીવાદિકોની સત્તારૂપ ક્રિયા તથા अकिरियं-अक्रिया જીવાદિક પદાર્થોની નાસ્તિત્વરૂપ અક્રિયા તથા विणयं-विनय

तर्हि चैतन्यस्य सकलशरीरव्यापिता न स्यात्तदा चैतन्याधिष्ठितशरीरावयवातिरिक्तशरीरावयवेषु आघाते सत्यपि वेदनानुभवो न स्यात्। न चैतदिष्यते, वेदनाया अनुभवसिद्धत्वात्, इति नास्त्यविभुरात्मा। एवं कर्तृत्वाकर्तृत्वादिकमपि आत्मनि एकान्ततो नास्ति। अक्रियावादिनस्तु अस्तिक्रियाविशिष्टमात्मानं नेच्छन्ति। एतन्मतमप्यसङ्गतमेव। 'अहं सुखी' इत्यादि प्रत्ययस्य मानसप्रत्यक्षत्वात्।

अर्थात् प्रत्येक जीवात्मा का आत्मा उसके गृहीत शरीर प्रमाण ही है, यदि इसको अविभु-अङ्गुष्ठप्रमाण माना जायगा तो चैतन्य में सकल शरीर व्यापकता नहीं आसकने के कारण चैतन्याधिष्ठित शरीरावयवों में ही आघात आदि होने पर वेदना का अनुभव हो सकेगा, जिन प्रदेशों मे चैतन्याधिष्ठिता नहीं होगी उन शरीर प्रदेशों मे वेदनानुभव नहीं होगा परन्तु ऐसा नहीं होता है और न ऐसा अनुभव मे ही आता है। एकत्र व्याघात होने पर शरीर मे वेदनाका अनुभव प्रत्येक को होता है अत आत्मा अङ्गुष्ठ प्रमाण नहीं है किन्तु स्व गृहित शरीर प्रमाण ही है। इसी तरह कर्तृत्व भी आत्मा मे एकान्तत. युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होते है।

अक्रियावादी आत्मा को अस्ति क्रिया विशिष्ट नहीं मानते है सो इनका मत भी असंगत ही है। क्यो कि 'अहं सुखी'' इत्यादि प्रत्यय उसको अस्ति क्रिया विशिष्ट सिद्ध करते ह। आत्मा के अभाव मे "अहं सुखी" इत्यादि प्रत्यय हो ही नहीं सकता है।

અર્થાત્-પ્રત્યેક જીવાત્માનો આત્મા એણે ગ્રહણ કરેલા શરીર પ્રમાણુજ છે જો તેને અવિભૂ-અંગુષ્ટ પ્રમાણ માનવામા આવે તો ચૈતન્યમા સઘળા શરીરની વ્યાપકતા ન આવી શકવાના કારણે ચૈતન્ય વિષ્ટિત શરીરના અવયવોમાજ આઘાત આદિ થવાથી વેદનાનો અનુભવ થઈ શકશે જે પ્રદેશોમા ચૈતન્યનુ અધિષ્ઠાતાપણુ ન હોય એ શરીર પ્રદેશોમા વેદનાનો અનુભવ થઈ શકે નહીં પરંતુ એવુ બનતુ નથી તેમજ ન તો તેવુ અનુભવમા પણ આવે છે એક આઘાત લાગવાથી તેની વેદના સઘળા શરીરમા લાગે છે એથી આત્મા અંગુષ્ઠ પ્રમાણુ નથી પરંતુ આખા શરીરમા વ્યાપક છે આવી રીતે કર્તૃત્વ પણ આત્મામા એકાન્તત યુક્તિસંગત પ્રતિત થતા નથી

અક્રિયાવાદી આત્માને અસ્તિક્રિયા વિશિષ્ટ માની શકાતો નથી આથી તેનો મત પણ અસંગત જ છે કેમકે, "अहं सुखी" ઇત્યાદિ પ્રત્યય એને અસ્તિક્રિયા વિશિષ્ટ સિદ્ધ કરે છે આત્માના અભાવમા "अहं सुखी" ઇત્યાદિ પ્રત્યય લાગુ થઈ શકતુ જ નથી

ननु आत्मनोऽव्यापकत्वे तद्गुणयोर्धर्माधर्मयोरप्यव्यापकत्वं स्यात्तर्हि द्वीपान्तर्गतदेवदत्तादृष्टाकृष्टमणिमुक्तादीनामिहागमनं न स्यादिति चेदुच्यते-यथा भिन्नदेशस्थस्याऽपि लोहचुम्बकस्य लोहाकर्षणशक्तिर्दृश्यते, तथैव धर्माधर्मयोरपि दूरस्थवस्त्वाकर्षणमुपपद्यत एवेति नास्यात्मनोऽव्यापित्वे कश्चिद् विरोध इति नास्ति एकान्ततो विभुरात्मा।

तथाऽविभुत्वमप्यात्मनो न युज्यते, यद्यात्माऽविभुरङ्गुष्ठमात्रप्रमाणः स्या

यदि यहा पर यह कहा जाय कि आत्मा को अव्यापक मानने पर उसके गुणभूत धर्म और अधर्म को भी अव्यापक मानना पडेगा। यदि प्रत्युत्तर में ऐसा कहा जाय कि हम धर्माधर्म पुण्यपाप को भी अव्यापक मान लेंगे तो ऐसा कहना उचित नहीं माना जा सकता, कारण कि दीपान्तर्गत जो मणि आदिक पदार्थ हैं वे देवदत्त के अदृष्ट से-पुण्य पाप से-आकृष्ट होकर जो उसको प्राप्त हो जाते हैं वे प्राप्त नहीं हो सकेंगे ? कारण कि देवदत्त का अदृष्ट तो अव्यापक है। फिर उनको उसके पास तक कौन खिंचकर लावेगा। सो इस प्रकार अदृष्ट को अव्यापक मानने पर दोष नहीं दिया जा सकता है कारण हम प्रत्यक्ष से देखते हैं कि चुम्बक पत्थर लोहे को जो कि उससे दूर रखा रहता है भिन्न प्रदेशवर्ती होता है खिंच लेता है। तब यह नियम कैसे माना जा सकता है, कि अदृष्ट को व्यापक मानने पर ही भिन्न प्रदेशवर्ती मणि मुक्तादिक खिंच सकते हैं अन्यथा नहीं।

इसी तरह आत्मा को अविभुत्व एकान्ततः मानना ठीक नहीं है

જો કદાચ અહીંયા એવુ કહેવામા આવે કે આત્માને અવ્યાપક માનવાથી તેના ગુણભૂત ધર્મ અને અધર્મને પણ અવ્યાપક માનવા પડશે જો પ્રત્યુત્તરમા એમ કહેવામા આવે કે, અમે ધર્માધર્મ પુણ્યપાપને પણ અવ્યાપકજ માની લઈશુ તો આ પ્રકારનુ કહેવુ ઉચિત માની શકાતુ નથી કારણકે, દિપાન્તર્ગત જે મણી આદિક પદાર્થ છે તે દેવદત્તના અદૃષ્ટથી-પુણ્ય-પાપથી આકર્ષાઈને જે તેને પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રાપ્ત થઇ શકશે નહિ ? કારણકે, દેવદત્તનુ અદૃષ્ટત્વ તો અવ્યાપક છે પછી તેને એની પાસે ખેચીને કોણ લઇ આવશે ? તો આ પ્રકારે અદૃષ્ટને અવ્યાપક માનવાથી દોષ આપી શકાતો નથી, કારણકે અમે પ્રત્યક્ષથી જોઈએ છીયે કે, ચુંબક લોઢાને જોકે, તેનાથી છેટે હોય છે, જુદા આકારનુ હોય છે છતા તેને પોતાની પાસે ખેચે છે ત્યારે આ નિયમ કઇ રીતે માની શકાય કે, અદૃષ્ટને વ્યાપક માનવાથી જ ભિન્ન પ્રદેશવર્તિ મણી મુક્તાદિકને ખેચી શકે છે અન્યથા નહીં

એ જ પ્રમાણે આત્માને અવિભૂત્વ એકાન્તતઃ માનવો એ પણ ઠીક નથી

तद्विना नास्तीष्टसिद्धिरिति । इदमप्ययुक्तमेव—ज्ञानमन्तरेण हेयोपादेयनिवृत्ति-प्रवृत्त्यसंभवात् । ज्ञानं विना कष्टानुष्ठानं पशुकृतमिव व्यर्थमेव स्यात् । अतोऽज्ञान-वादिमतमप्ययुक्तम् । एषां चतुर्णां त्रिपष्ट्यधिकशतत्रयभेदाः । तत्र क्रियावादिनो ऽशीत्यधिकशतसंख्यकाः, अक्रियावादिनः चतुरशीतिसंख्यकाः वैनयिका द्वात्रिंशत् । अज्ञानवादिनश्च सप्तषष्टिसंख्यकाः । एते सर्वे कुत्सितं भाषन्ते । अत एषां मतं सर्वथाऽनुपादेयमेव । 'मेयन्ने' 'पभासई' इत्यत्रैकवचनमार्षत्वात् ॥२३॥

न चैवत्स्वाभिप्रायेणोच्यते, इत्याह—

मूलम्—इइ पाउकरे बुद्धे, नायए परिनिव्वुडे ।
विज्जाचरणसंपन्ने, सच्चे सच्चपरक्कमे ॥२४॥

छाया—इति प्रादुरकार्षीद् बुद्धः, ज्ञातकः परिनिर्वृतः ।
विद्याचरणसंपन्नः सत्यः सत्यपराक्रमः ॥२४॥

टीका—'इइ' इत्यादि ।

बुद्धः=ज्ञाततत्त्वः परिनिर्वृतः=कषायानलविध्यापनात्परि समन्तात् शीती भूतः, विद्याचरणसंपन्नः—विद्याचरणाभ्यां=क्षायिकज्ञानचारित्राभ्यां संपन्नः—युक्तः,

ही करने मे इष्टसिद्धि निहित है, इसके विना नही । सो ऐसी मान्यता भी ठीक नही है क्यों कि ज्ञान के विना तपरूप कष्टों का अनुष्ठान करना अज्ञानमूलक होने से पशुक्रिया के समान व्यर्थ है । इन क्रिया अक्रिया, वैनयिक तथा अज्ञानी के भेद तीनसौतिरसठ ३६३ हैं । क्रिया-वादीके भेद एकसौ अस्सी १८०, अक्रियावादी के भेद चोरासी ८४, विनयवादी के भेद बत्तीस ३२, तथा अज्ञानवादी के भेद सडसठ ६७ हैं । इन सबकी मान्यताएँ युक्तियुक्त नही है, अतः इनका कथन कुत्सित कथन है । इसी लिये इनका मत जीवो को उपादेय नही है ॥२३॥

કોણ કરી શકે છે ? આ કારણે તપ કરવામાં જ ઈષ્ટસિદ્ધિ નિહિત છે આના વગર નહીં તો આવી માન્યતા પણ બરોબર નથી કેમકે, જ્ઞાન વગર તપરૂપ કષ્ટોનું અનુષ્ઠાન કરવું તે, અજ્ઞાનથી ભરેલું હોવાથી પશુક્રિયા પ્રમાણે વ્યર્થ છે આ ક્રિયા, અક્રિયા, વૈનયિક તથા અજ્ઞાનીના ભેદ (૩૬૩) ત્રણસો ત્રેસઠ છે ક્રિયા વાદીના ભેદ એકસો એંસી (૧૮૦) છે, અક્રિયાવાદીના ભેદ ચોર્યાસી (૮૪) છે, વૈનયિકોના ભેદ (૩૨) બત્રીસ છે તથા અજ્ઞાનવાદીઓના ભેદ સડસઠ (૬૭) છે આ સહુની માન્યતાઓ યુક્તિયુક્ત નથી આવી એમનું કથન કુત્સિત કથન છે આ કારણે એમનો મત જીવોને ઉપાદેય નથી ॥૨૩॥

विनयवादिनस्तु सुरनृपमुनिगजवाजिगोमृगकरभमहिषकुक्कुरच्छगलशृगालकाकमकरादि नमस्कारकरणादेव कर्मक्षय मन्यन्ते। एषा मते विनयादेव श्रेयो नान्यथा। एतन्मतमपि न समीचीनम्। शास्त्रे गुणाधिकस्यैव विनयार्हतया प्रतीतत्वात्। तदन्यविनयेऽशुभफलप्रसङ्गाच्च। अज्ञानवादिनस्तु ज्ञानस्य मोक्ष प्रति कारणत्व न प्रतिपद्यन्ते। ते वदन्ति-जगद्विषये आत्मविषये च विभिन्ना पन्थानः। तत्र किं सत्यम्? किं मिथ्या? इति को वेत्ति? अतः कष्ट-तप एव कार्यम्।

विनयवादियो की ऐसी मान्यता है कि सुर, नृपति, गज, वाजी, गाय, मृग, करभ-उष्ट्र, महिष, कुक्कुर, छगल, काक, मकर आदिको नमस्कार करने से कर्मोंका क्षय होता है। विनय के आश्रय से ही आत्मा का श्रेय है अन्यथा नहीं। यह मान्यता विनयवादियों की है। सो ऐसी कल्पना भी उचित नहीं है क्यों कि विनय तो गुणाधिक का ही किया जाता है। यद्यपि गुणाधिकता केवल केवलियों में ही उत्कृष्ट रूप से है। फिर भी बीच के जीवों मे यथायोग्य से उसका प्रकाश होता है अतः सबको विनय का पात्र न मानकर गुणाधिक को ही विनय का स्थान माना है। अन्य अज्ञानी प्राणियों का विनय उल्टा अशुभ फलप्रद कहा गया है।

अज्ञानवादी ज्ञान को मोक्ष के प्रतिकारण रूपसे नहीं मानते, उनका कहना है कि इस संसार मे आत्मा के विषय में भिन्न २ मान्यताएँ प्रचलित है तब किन २ मान्यताओ मे सत्य है किन २ मे असत्य है? इस बातका निर्णय कौन कर सकता है। इसलिये तप

વિનયવાદિઓની એવી માન્યતા છે કે, સુર, નૃપતિ, ગજ, વાજી, ગાય, મૃગ, કરભ, ઉંટ, ભેંસ, કુકકુર, છગલ, કાક, મકર, આદિને નમસ્કાર કરવાથી કર્મોનો ક્ષય થાય છે વિનયના આશ્રયથીજ આત્માનુ શ્રેય છે એ શીવાય નહી આવી માન્યતા વિનયવાદીની છે તો આવી કલ્પના પણ ઉચિત નથી કેમકે, વિનય તો ગુણવાળાઓનોજ કરવામા આવે છે જો કે, ગુણાધિકતા તો ફક્ત કેવળીઓમાજ ઉત્કૃષ્ટરૂપથી છે છતા પણ વચ્ચેના જીવોમા ક્રમ અનુસાર તેનો પ્રકાશ થાય છે આથી સઘળાને વિનયના પાત્ર ન માનીને ગુણાધિકને જ વિનયનુ સ્થાન માનવામા આવેલ છે અન્ય અજ્ઞાની પ્રાણીઓનો વિનય ઉલ્ટો અશુભ ફળને આપનાર બતાવવામા આવેલ છે

અજ્ઞાનવાદી જ્ઞાનને મોક્ષના પ્રતિકારણરૂપથી માનતા નથી તેમનુ કહેવુ છે કે, આ સસારમા આત્માના વિષયમા ભિન્ન ભિન્ન મા યતાઓ પ્રચલિત છે ત્યારે કઇ કઈ માન્યતાઓમા સત્યતા છે, કઈ કઇમા અસત્યતા છે? આ વાતનો નિર્ણય

तद्विना नास्तीष्टसिद्धिरिति । इदमप्ययुक्तमेव-ज्ञानमन्तरेण हेयोपादेयनिवृत्ति-प्रवृत्त्यसंभवात् । ज्ञान विना कष्टानुष्ठान पशुकृतमिव व्यर्थमेव स्यात् । अतोऽज्ञान-वादिमतमप्ययुक्तम् । एषा चतुर्णां त्रिषष्ट्यधिकशतत्रयभेदा. । तत्र क्रियावादिनो ऽशीत्यधिकशतसंख्यका', अक्रियावादिन' चतुरशीतिसंख्यका. वैनयिका द्वात्रिंशत् । अज्ञानवादिनश्च सप्तषष्टिसंख्यका. । एते सर्वे कुत्सित भाषन्ते । अत एषा मत सर्वथाऽनुपादेयमेव । 'मेयन्ने' 'पभासई' इत्यत्रैकवचनमार्षत्वात् ॥२३॥

न चैतत्स्वाभिप्रायेणोच्यते, इत्याह—

मूलम्—इइ पाउकरे बुद्धे, नायए परिनिव्वुडे ।
विज्जाचरणसंपन्ने, सच्चे सच्चपरक्कमे ॥२४॥

छाया—इति प्रादुरकार्षीद्बुद्धो, ज्ञातकः परिनिर्वृत ।
विद्याचरणसंपन्न' सत्यः सत्यपराक्रमः ॥२४॥

टीका—'इइ' इत्यादि ।

बुद्ध.=ज्ञाततत्त्वः परिनिर्वृतः=कषायानलविध्यापनात्परि समन्तात् शीती भूत., विद्याचरणसंपन्न -विद्याचरणाभ्या=क्षायिकज्ञानचारित्राभ्या संपन्न.-युक्त ,

ही करने मे इष्टसिद्धि निहित है, इसके विना नही । सो ऐसी मान्यता भी ठीक नही है क्यों कि ज्ञान के विना तपरूप कष्टों का अनुष्ठान करना अज्ञानमूलक होने से पशुक्रिया के समान व्यर्थ है । इन क्रिया अक्रिया, वैनयिक तथा अज्ञानी के भेद तीनसौतिरसठ ३६३ है । क्रिया-वादीके भेद एकसौ अस्सी १८०, अक्रियावादी के भेद चोरासी ८४, विनयवादी के भेद बत्तीस ३२, तथा अज्ञानवादी के भेद सडसठ ६७ हैं । इन सबकी मान्यताएँ युक्तियुक्त नही है, अत' इनका कथन कुत्सित कथन है । इसी लिये इनका मत जीवो को उपादेय नही है ॥२३॥

કોણ કરી શકે છે ? આ કારણે તપ કરવામાં જ ઈષ્ટસિદ્ધિ નિહિત છે આના વગર નહીં તો આવી માન્યતા પણ બરોબર નથી કેમકે, જ્ઞાન વગર તપરૂપ કષ્ટોનું અનુષ્ઠાન કરવું તે, અજ્ઞાનથી ભરેલું હોવાથી પશુક્રિયા પ્રમાણે વ્યર્થ છે આ ક્રિયા, અક્રિયા, વૈનયિક તથા અજ્ઞાનીના ભેદ (૩૬૩) ત્રણસો ત્રેસઠ છે ક્રિયા વાદીના ભેદ એકસો એસી (૧૮૦) છે, અક્રિયાવાદીના ભેદ ચોર્યાસી (૮૪) છે, વૈનયિકોના ભેદ (૩૨) બત્રીસ છે તથા અજ્ઞાનવાદીઓના ભેદ સડસઠ (૬૭) છે આ સહુની માન્યતાઓ યુક્તિયુક્ત નથી આવી એમનું કથન કુત્સિત કથન છે આ કારણે એમનો મત જીવોને ઉપાદેય નથી ॥૨૩॥

अत एव-सत्यः=सत्यवाद आप्त इत्यर्थः, तथा-सत्यपराक्रमः=सत्यवीर्यः, ज्ञातकः= ज्ञातपुत्रो महावीर इति=एते क्रियावाद्यादयः कुत्सितं प्रभाषन्ते इति प्रादुरकार्षीत्=प्रकटितवान् ॥२४॥

तेषां क्रियावाद्यादीनां फलमाह—

मूलम्—पडंति नरए घोरे, जे नरा पावकारिणो ।
दिव्वं च गइं गच्छंति, चरित्ता धम्ममारियं ॥२५॥

छाया—पतन्ति नरके घोरे, ये नराः पापकारिणः ।
दिव्यां च गतिं गच्छन्ति, चरित्वा धर्ममार्यम् ॥२५॥

टीका—'पडंति' इत्यादि ।

पापकारिणः=पापं कर्तुं शीलं येषां ते तथा-क्रियावाद्यादिकृतासत्प्ररूपणापरायणाः ये नराः-ते घोरे=निरन्तरान्धकारादिना भयानके नरके=सीमन्तकादि

यह अभिप्राय अपने मनसे नहीं कहा गया है सो कहते हैं-'इइ' इत्यादि

अन्वयार्थ—(बुद्धे-बुद्ध) बुद्ध-तत्व ज्ञाता, (परिनिव्वुडे-परिनिर्वृत) कषायरूप अग्नि के सर्वथा शान्त हो जाने से सब तरह से शीतीभूत हुए तथा (विज्जाचरणसंपन्ने-विद्याचरणसंपन्न) क्षायिक ज्ञान एवं चारित्र से संपन्न, इसीलिये (सच्चे-सत्यः) सत्यवाणी बोलने वाले आप्त-तथा (सच्चपरक्कमे-सत्यपराक्रम) अनंतवीर्यसंपन्न ऐसे (नायए-ज्ञातक) ज्ञातपुत्र श्री महावीर प्रभुने ही (इइ पाउकरे-इति प्रादुरकार्षीत्) 'ये क्रियावादी आदिक कुत्सित बोलते हैं' इसका स्वरूप कहा है। हमने अपनी तरफ से ऐसा नहीं कहा है ॥२४॥

આ અભિપ્રાય પોતાના મનથી કહેવામા આવેલ નથી, તેને કહે છે—"इइ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—बुद्धे-बुद्ध બુદ્ધ તત્વજ્ઞાતા વળી જે परिनिव्वुडे-परिनिर्वृत्त કષાયરૂપ અગ્નિના સંપૂર્ણપણે શાન્ત થઇ જવાથી સઘળી બાજુથી શીતળ એવા તથા विज्जाचरणसंपन्ने-विद्याचरणसंपन्न ક્ષાયિક જ્ઞાન અને ચારિત્રથી સંપન્ન એથી सच्चे-सत्य સત્યવાણી બોલવાવાળા આપ્ત તથા सच्चपरक्कमे-सत्यपराक्रम અનંત વિર્ય સંપન્ન એવા नायए-ज्ञातक જ્ઞાતપુત્ર શ્રી મહાવીર પ્રભુએ જ "આ इइ पाउकरे-इति प्रादुरकार्षित "આ ક્રિયાવાદિ વગેરે ખોટું બોલે છે" તેનું સ્વરૂપ બતાવેલ છે અમે અમારા તરફથી કાંઈ કહેલ નથી ॥૨૪॥

नरकावासाः पतन्ति। च=पुन. आर्यम्=उत्तमम् धर्मं=जिनप्ररूपित सद्धर्मं चरित्वा=आसेव्य, तु नरा, दिव्या=देवलोकसम्बन्धिनीं गतिं सर्वगतिप्रधाना सिद्धिरूपा गतिं वा गच्छन्ति। हे सजय मुने! असत्प्ररूपणापरिहारेण सत्प्ररूपणापरायणनैव भवता भवितव्यमिति भाव ॥२५॥

एते क्रियावादिप्रभृतय. पापकारिण कथम्? इत्याह—

मूलम्—मायावुइयमेयं तु, मुसा भासा निरट्ठिया।
सजममाणो वि अहं, वसामि इरियामि य ॥२६॥

छाया—मायोक्तमेतत्तु मृषा भाषा निरर्थिका।
सयच्छन्नपि अह, वसामि ईरे च ॥२६॥

उन क्रियावादी आदिकों की तथा जिनप्रणीत सद्धर्मकी आराधना करनेवालो की क्या क्या गति होति है? सो कहते हैं—'पडति' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पावकारिणो–पापकारिणः) क्रियावादी आदि व्यक्तियों द्वारा कृत असत्प्ररूपणाके सेवन करने मे परायण (जे–ये) जो (नरा–नरा) मनुष्य है वे (घोरे नरग पडति–घोरे नरके पतन्ति) मरकर भयकर सीमन्तक आदि नरकावास मे जाते है। (च आरिय धम्म चरित्ता–च आर्य धर्मं चरित्वा) जिन प्ररूपित धर्मका सेवन करते है वे उसके सेवन से (दिव्व गइ गच्छति–दिव्या गतिं गच्छन्ति) देवलोक को अथवा समस्त गतियों मे प्रधानभूत गति सिद्धिगति को प्राप्त करते हैं। इस लिये हे सयतमुने! असत्प्ररूपणा का परित्याग करके तुमको सत्प्ररूपणा करने मे ही परायण बने रहना चाहिये ॥२५॥

એ ક્રિયાવાદી આદિઓની તથા જીનપ્રણીત સદ્ધર્મની આરાધના કરવાવાળાની શુ શુ ગતિ થાય છે તેને કહે છે—"पडति" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—पावकारिणो–पापकारिण' ક્રિયાવાદી આદિ વ્યક્તિઓ દ્વારા કરાતી અસત્ પ્રરૂપણાનુ સેવન કરવામા પરાયણ जे–ये જે नरा–नरा મનુષ્ય છે તે घोरे नरए पडति–घोरे नरके पतन्ति મરીને ભયકર સીમતક આદિ નરકાવાસમા જાય છે તથા જે વ્યક્તિ च आरिय धम्म चरित्ता–आर्य धर्मं चरित्वा જીન પ્રરૂપિત ધર્મનુ સેવન કરે છે તે તેના સેવનથી दिव्व गइ गच्छति–दिव्या गतिं गच्छन्ति દેવલોકને અથવા સમસ્ત ગતિઓમા પ્રધાનભૂત ગતિ સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરે છે આ કારણે હે સયત મુનિ! અસત્ પ્રરૂપણાનો પરિત્યાગ કરીને તમારે સત્ય પ્રરૂપણા કરવામાજ પરાયણ બની રહેવુ જોઈએ ॥૨૫॥

टीका—'मायावुइयं' इत्यादि।

हे संजय मुने! क्रियावाद्यादिभिर्यत्प्ररूपितम्, एतत्सर्वं तु मायोक्तम्=मायाभाषितम्। तथा क्रियावादिप्रभृतीनां भाषा=उक्तिः मृषा अलीका, निरर्थिका=शिवसुखवर्जिता चास्ति। तत एवाहं संयच्छन्नपि=क्रियावाद्यादिमतश्रवणादिभ्यो निवर्तमान एव, अपिशब्दो निश्चयार्थकः, वसामि=तिष्ठामि स्वात्मनीति शेषः। इदं हि संजयमुने: स्थिरीकरणार्थमुक्तम्। अयं भावः—यथाऽहं क्रियावाद्यसत्प्ररूपणातो निवृत्तस्तथा त्वयाऽपि निवर्त्तितव्यमिति।

उक्तञ्चापि—" ठियो य ठावए परं "

छाया—स्थितश्च स्थापयति परम् इति। च=पुनरहम् ईरे=संयममार्गे विचरामि ॥२६॥

ये क्रियावादी आदि पापकारी कैसे हैं? इस बातको क्षत्रिय राजऋषि प्रदर्शित करते हैं—'मायावुइयं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे संजयमुने! क्रियावादी आदि जनों द्वारा जो कुछ भी प्ररूपित किया गया है (एयं-एतत्) यह सब (माया वुइयम्-मायोक्तम्) माया से ही कहा गया है तथा (मुसा भासा निरत्थिया-मृषा भाषा निरर्थिका) इसकी भाषा-वाणी-मृषा-सर्वथा अलीक है और निरर्थक-शिवसुख से जीवों को वर्जित करनेवाली है। इसीलिये (अहं संजममाणोवि-अहं संयच्छन्नपि) मैं क्रियावादी आदि के मतके श्रवण आदि से दूर होकर निश्चय से (वसामि-वसामि) अपनी आत्मा में बसता हूं, यह बात संजयमुनि की स्थिरता के निमित्त ही क्षत्रिय राजऋषिने कही है। तात्पर्य इसका यह है कि जिस प्रकार मैं क्रियावादी आदिकी असत्प्ररूपणा से परे रहता हूं उसी तरह से आपको भी दूर रहना चाहिये। कहा भी है-"ठिओ य ठावए परं" जो स्वयं स्थित

એ ક્રિયાવાદી આદિ પાપકારી કેવા છે? આ વાતને ક્ષત્રિય રાજર્ષિ પ્રદર્શિત કરે છે—"माया वुइय" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે સંજય મુનિ! ક્રિયાવાદી આદિજનો દ્વારા જે કંઈ પણ પ્રરૂપિત કરવામાં આવેલ છે एय-एतत् તે સઘળું माया वुइयम्-मायोक्तम् માયાથી જ કહેવામાં આવેલ છે તથા मुसाभासा निरत्थिया-मृषाभाषा निरर्थिका એની ભાષા, વાણી, મૃષા, સર્વથા અલીક છે અને નિરર્થક શિવસુખથી જીવોને વર્જીત કરવાવાળી છે આ કારણે હું अह संजममाणो वि-अहं संयच्छन्नपि ક્રિયાવાદી આદિના મતને સાંભળવાથી દૂર રહીને નિશ્ચયથી वसामि-वसामि પોતાના આત્મામાં વસું છું આ વાત સંજય મુનિની સ્થિરતાના માટે જ ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ કહેલ છે તાત્પર્ય આનું એ છે કે, જે પ્રકારે હું ક્રિયાવાદી આદિની અસત્ પ્રરૂપણાથી દૂર રહું છું એજ પ્રમાણે તમારે પણ દૂર રહેવું જોઈએ કહ્યું પણ છે—"ठीओ य

'कथं भवान् क्रियावाद्यादिमतश्रवणान्निवृत्त ? इति संयतमुनिजिज्ञासाया क्षत्रियराजऋषि माह--

मूलम्--सव्वे ते विदिता मज्झ, मिच्छादिट्ठी अणारिया ।
विज्जमाणे परे लोए, सम्मं जाणामि अप्पग ॥२७॥

छाया--सर्वे ते विदिता मम, मिथ्यादृष्टयः अनार्या ।
विद्यमाने परे लोके, सम्यग् जानामि आत्मानम् ॥२७॥

टीका--'सव्वे ते' इत्यादि ।

हे संजयमुने ! ते पूर्वोक्ता सर्वे क्रियावादिप्रभृतयो मम=मया विदिता=ज्ञाता । एते हि मिथ्यादृष्टय=मिथ्यादर्शनयुक्ताः सन्ति, अत एव एते अनार्या=पशुहिंसाद्यनार्यकर्मयुक्ता सन्ति एते एवंविधा सन्ति इति भवता कथं ज्ञातम् ? इत्याह-'विज्जमाणे' इत्यादि । विद्यमानान्=सम्प्रति वर्तमानान् कुतीर्थिकान् क्रियावादिप्रभृतीन्, कुत्सितमरूपणया, परे लोके=परभवे-नरक

होता है वही दूसरों को भी स्थिर करता है। तथा मैं (य इरियामि-च ईरे) संयममार्ग मे विचरण करता हूं ॥२६॥

आप क्रियावादी आदिके मतश्रवण से निवृत्त हुए हैं ? इस संजय की जिज्ञासा का समाधान करते हुए क्षत्रिय राजऋषि कहते हैं—'सव्वे ते' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे संजय मुने ! (ते सव्वे मिच्छादिट्ठी अणारिया मज्झ विदिता-ते सर्वे मिथ्यादृष्टयः अनार्या मम विदिता) पूर्वोक्त वे सब क्रियावादी आदि मिथ्यादृष्टि है तथा अनार्य हैं यह मै अच्छी तरह से जानता हूं। तथा ये (विज्जमाणे परे लोए-विद्यमाने परे लोके) सब विद्यमान परलोक मे विविध प्रकार की यातनाओं का अनुभव करेगे

ठावए पर" જે સ્વયં સ્થિત હોય છે તે બીજાને પણ સ્થિર કરે છે य इरियामि-च ईरे તથા હું સંયમમાર્ગમાં વિચરણ કરૂં છું ॥૨૬॥

આપ ક્રિયાવાદી આદિના મત શ્રવણથી કઇ રીતે નિવૃત્ત બન્યા છો ? આવી સંજયની જીજ્ઞાસાનું સમાધાન કરતા ક્ષત્રિયરાજર્ષિ કહે છે—"सव्वे ते" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે સંજય મુનિ ! ते सव्वे मिच्छादिट्ठी अणारिया मज्झ विदिता-ते सर्वे मिथ्यादृष्टय अनार्या मम विदिता પૂર્વોક્ત એ સઘળા ક્રિયાવાદી આદિ મિથ્યાદૃષ્ટી છે તથા અનાર્ય છે એ હું સારી રીતે જાણું છું તથા એ विज्जमाणे परे लोए-विद्यमाने परे लोके સઘળા વિદ્યમાન પરલોકમાં વિવિધ પ્રકારની યાતના

निगोदादौ विविधदुःसहयातना अनुभविष्यत., अह सम्यग् जानामि-अतिशय ज्ञानेनेत्यर्थः। यद्वा-परोलोकः=परभवः, विद्यमान. अस्तीति सम्यग् जानामि। तथा-आत्मान चापि सम्यग् जानामि, जातिस्मरणलाभेनेत्यर्थः। अतस्तेषा सङ्ग न करोमीति भाव ॥२७॥

उक्तार्थं विशदयति—

मूलम्—अहमासि महापाणे, जुइमंवरिससओवमे।
जा सा पाली महापाली, दिव्वा वरिससओवमा ॥२८॥

छाया—अहमास महाप्राणे, द्युतिमान् वर्षशतोपम ।
या सा पालिर्महापालि., दिव्या वर्षशतोपमा ॥२८॥

टीका—'अहमासी' इत्यादि।

हे मुने! महाप्राणे=ब्रह्मनामकपञ्चमदेवलोकस्य महाप्राणनामके विमाने, अह द्युतिमान्=दीप्तिमान् वर्षशतोपम =वर्षशतजीविना उपमा=सादृश्य यस्य स,

नरक निगोदादिक के भयकर कष्टों को सहन करेगे य बात भी (सम्म जाणामि-सम्यक् जानामि) अच्छी तरह से जानता हू। अथवा "परोलोको विद्यमानो" परलोक विद्यमान है यह बात भी मै अतिशयज्ञान से जानता हू। तथा जातिस्मरणज्ञान के लाभ से (अप्पग सम्म जाणामि आत्मान सम्यक् जानामि) मै अपनी आत्मा को भी जानता हू। इसलिये मै उनकी सगति करने से दूर रहता हू ॥२७॥

इसी अर्थ को पुन विशद करते हुए वे कहते है-'अहमासि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे मुने! (महापाणे-महाप्राणे) ब्रह्म नामके पचम देवलोक के महाप्राण नामक विमान मे (अह-अहम्) मै (जुइम-द्युतिमान्) दीप्ति विशिष्ट (वरिससओवमे-वर्षशतोपम. अहम्) सौ १००

ઓનો અનુભવ કરશે, નરક નિગોદાદિકના ભયકર કષ્ટોને સહન કરશે, આ વાત પણ सम्म जाणामि सम्यक् जानामि સારી રીતે જાણુ છુ અથવા "परलोको वि मानो" પરલોક વિદ્યમાન છે આ વાત પણ હુ અતિશય જ્ઞાનથી જાણુ છુ તથા જાતિ સ્મરણ જ્ઞાનના લાભથી अप्पग सम्म जाणामि-आत्मान सम्यक् जानामि હુ મારા આત્માને પણ જાણુ છુ આ માટે હુ એમની સગત કરવાથી દૂર રહુ છુ ॥૨૭॥

આજ અર્થને ફરીથી સ્પષ્ટ કરતા તેઓ કહે છે—"अहमासि" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે મુનિ! महापाणे-महाप्राणे બ્રહ્મનામના પાચમા દેવલોકના મહાપ્રાણ નામના વિમાનમા अह-अहम् હુ जुइम-द्युतिमान् દીપ્તિ વિશિષ્ટ वरिससओवमे-वर्षशतोपम સો વર્ષના પૂર્ણ આયુવાળા જીવની સમાન હતો અર્થાત

वर्षशतपरिपूर्णायुर्जीववत्तः आसम्=अभूवम्। यथा जीवो यदि मनुष्यलोके शतवर्षपर्यन्तं जीवति, तदा स परिपूर्णायुष्को भवति, तथैव अह महाप्राणनाम्नि ब्रह्मनामकपञ्चमदेवलोकविमाने परिपूर्णायुष्कोऽभवम् इति भाव.। देवलोके हि या सा पालि-पालिरिव पालि.=जीवितजलधारणाद् भवस्थिति, सा चेह पल्योपमप्रमाणा। तथा-महापालि=सागरोपमप्रमाणा च भवस्थिति रस्ति। सागरोपमप्रमाणत्वेनास्या महत्त्वम्। एतद्देवस्थितिद्वय देवसम्बन्धि। अनयोर्भवस्थित्योर्मध्ये महापालिर्नाम भवस्थिति, दिव्यावर्षशतोपमा=देवभवसम्बन्धि वर्षशततुल्या, सागरोपमप्रमाणा आसीत्, यथा-मृत्युलोके वर्षशत परमायुस्तथैव तत्र महापालि' परमायु'। तावदायुष्कोऽहमभवम्, अतो मम पञ्चम देवलोके उत्कृष्टतो वर्षशतोपमदशसागरोपमस्थितिरासीत् ॥२८॥

तथा—

मूलम्—से' चुँओ बंभलोगाओ, माणुँस्सं भवमागओ।
अप्पणो यं परेसिं चँ, आउँ जाणे जँहा तँहाँ ॥२९॥

वर्ष की पूर्ण आयुवाले जीव के समान था, अर्थात् मनुष्यलोक मे जिस प्रकार कोई जीव सौ १०० वर्ष की आयुतक जीवित रहता है वह जैसे पूर्णायुष्क कहलाता है इसी प्रकार मै भी उस विमान मे परिपूर्ण आयुवाला देव था। स्वर्गो मे पल्यप्रमाण एव सागरप्रमाण स्थिति देवोंकी कही गई है। सो यहा पालि शब्द से पल्यप्रमाण एव महापाली शब्द से सागर प्रमाण स्थिति ग्रहण करना चाहिये। क्षत्रिय राजऋषि कह रहे हैं कि वहा पर मेरी (दिव्वा-दिव्या) देवसबधी स्थिति (वरिससओवमा महापाली-वर्षशतोपमा महापालि.) मनुष्य पर्याय की सौ १०० वर्ष प्रमाण आयु भोगनेवाले जीव के समान दस १० सागर की पूर्णस्थिति थी ॥२८॥

મનુષ્યલોકમા કોઈ જીવ સો વર્ષની આયુ-સુધી જીવીત રહે છે તે જેમ પૂર્ણ આયુષ્યવાળો કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે હુ પણ તેજ વિમાનમા પરિપૂર્ણ આયુષ્યવાળો દેવ હતો સ્વર્ગમા પલ્ય પ્રમાણુ અને સાગર પ્રમાણુ સ્થિતિ દેવોની બતાવવામા આવેલ છે તો અહી પાલી શબ્દથી પલ્ય પ્રમાણુ અને મહાપાલી શબ્દથી સાગર પ્રમાણુ સ્થિતિ ગ્રહણુ કરવી જોઈએ ક્ષત્રિય રાજર્ષિ કહી રહ્યા છે કે, ત્યા મારી દિવ્વા-દિવ્યા દેવ સબધી સ્થિતિ वरिससओवमा महापाली-वर्षशतोपमा महापालि મનુષ્ય પર્યાયની સો વષ પ્રમાણુ આયુ ભોગવનારા જીવના સમાન દસ સાગરની પૂર્ણ સ્થિતિ હતી ॥૨૮॥

छाया—अथ च्युतो ब्रह्मलोकात्, मानुष्य भवमागत. ।
आत्मनश्च परेषा च, आयुर्जाने यथा तथा ॥२९॥

टीका—'से' इत्यादि ।

अथ=आयु. समाप्त्यनन्तर ब्रह्मलोकात्=पञ्चमकल्पात् च्युतोऽह मानुष्य=मनुष्यसम्बन्धिन भव=जन्म आगत =प्राप्त. । इत्थमात्मनो जातिस्मरणात्मकमतिशयमुक्त्वाऽतिशयान्तरमाह–च=पुनरहम्, आत्मन.=स्वस्य परेषाम् अन्येषा च आयु =जीवित यथा–येन प्रकारेण अस्ति, तथा तेन प्रकारेणैव जाने । इदमुपलक्षण ततश्च–गतिमपि जानामीत्यर्थ ॥२९॥

क्षत्रियराजर्षिरित्थ प्रसङ्गतोऽपृष्टमपि स्ववृत्तान्तमावेद्य सम्प्रत्युपदिशन्नाह–

मूलम्—नाणारुइं च छंदं च, परिवज्जिज्ज संजए ।
अणट्ठा जे य सव्वत्था, इइ विज्जामणुसंचरे ॥३०॥

छाया—नानारुचिं च छन्द च, परिवर्जयेत्सयतः ।
अनर्था ये च सर्वार्था., इति विद्यामनुसचरे ॥३०॥

तथा—'से चुओ इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अह–अथ) देवभव सबधी आयु के समाप्त होने पर (बभलोगाओ चुओ–ब्रह्मलोकात् च्युत॰) उस पचम स्वर्ग से चवा हुआ मै (माणुस्स भवमागओ–मानुष्य भवमागत॰) मनुष्य सबधि भव मे आया हू । इस प्रकार अपना जातिस्मरणात्मक अतिशय कहकरके उन क्षत्रिय राजर्षिने सजयमुनि से यह भी कहा कि–मै (अप्पणो परेसिं च जहा आउ तहा जाणे–आत्मनःपरेषा च यथा आयु तथा जाने) अपन तथा परके आयुष्यको भी वह जितना है उसको मै जानता हू । उपलक्षण से गतिको भी जानता हू ॥२९॥

તથા—"से चुओ" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—अह–अथ દેવભવરૂપી આયુષ્ય પૂર્ણ થવાથી बभलोगाओ चुओ–ब्रह्मलोकात् च्युत તે પાંચમા સ્વર્ગથી આયુબંધ પુરો થતાં ત્યાંથી ચ્યવીને माणुस्स भवमागओ–मानुष्य भवमागत. હું મનુષ્યભવમાં આવેલ છું. આ પ્રમાણે પોતાનું જાતિસ્મરણાત્મક વર્ણન કરીને તે ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ સંજય મુનિને એ પણ કહ્યું કે, હું अप्पणो परेसिं च जहा आउ तहाजाणे–आत्मन परेषा च यथा आयु तथा जाने મારૂં પોતાનું તથા બીજાનું આયુષ્ય કેટલું છે તે પણ જાણું છું ઉપલક્ષણથી ગતિને પણ જાણું છું ॥૨૯॥

टीका—'नाणारुइ' इत्यादि।

हे संजय! हे साधो! नाना=अनेकविधा रुचिं=अक्रमात्क्रियावादादिमत-विषयमभिलाषं च=पुनः अनेकविधं छन्दं=स्वमतिपरिकल्पितमभिप्रायं च संयत = साधुः परिवर्जयेत्=सर्वथा त्यजेत्। तथा—अनर्थाः =अनर्थहेतवो ये च सर्वार्थाः = प्राणातिपातादिदोषास्तानपि सर्वथा वर्जयेत्। इति=इत्येवं रूपां विद्यां सम्यग्ज्ञान रूपाम् अनुसञ्चरे =अनु=लक्ष्यीकृत्य संचरेः=संयममार्गे विचर ॥३०॥

सम्प्रति क्षत्रियराजऋषिः स्वाचारं प्राह—

मूलम्—पडिक्कमामि पसिणाणं परमंतेहिं वा पुणो।
अहो उट्ठिए अहोरायं, इइ विज्जा तवं चरे ॥३१॥

छाया—प्रतिक्रमामि प्रश्नेभ्यः, परमन्त्रेभ्यो वा पुनः।
अहो उत्थितः अहोरात्रम्, इति विद्वान् तपश्चरेत् ॥३१॥

इस प्रकार नहीं पूछने पर भी अपने वृत्तान्तको क्षत्रिय राजर्षि संजय मुनि से कहकर फिर उपदेश करते हैं-'नाणारुइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे संजय! (संजए-संयत.) साधु का कर्तव्य है कि वह (नाणारुइं च छंदं च परिवज्जिज्ज—नानारुचिं छंदं च परिवर्जयेत्) अनेकविध क्रियावादि आदि मिथ्यादृष्टियों के मत विषयक अभिलाषा का तथा स्वमतिकल्पित अभिप्रायका परित्यागकर देवे। तथा (अणत्था जे य सव्वत्था—अनर्था ये च सर्वार्था) समस्त अनर्थोंके कारण जो प्राणातिपादिक दोष हैं उनका भी वह परिहार करदेवे। (इइ—इति) इस प्रकारकी यह (विज्जामणु—विद्यामनु) सम्यग्ज्ञानरूप विद्या को लक्ष्य मे रखकर तुम (संचरे—संचरे) संयममार्ग मे रत रहो ॥३०॥

આ પ્રમાણે ન પૂછવા છતાં પણ પોતાના વૃત્તાંતને ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ સંજયમુનિને કહીને ફરીથી ઉપદેશ આપતાં કહ્યું કે,- "नाणारुइ" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે સંજય! संजए—संयत સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તે नाणारुइ च छंदं च परिवज्जिज्ज—नानारुचिं च छंदं च परिवर्जयेत् અનેકવિધ ક્રિયાવાદી આદિ મિથ્યાદૃષ્ટીઓના મતવિષયક અભિલાષાને તથા સ્વમતિકલ્પિત અભિપ્રાયને સર્વથા પરીત્યાગ કરી દે તથા अणत्था जे य सव्वत्था—अनर्था ये च सर्वार्था સઘળા અનર્થોનું કારણ જે પ્રાણાતિપાત દોષ છે તેનો પણ તે પરિહાર કરી દે इइ—इति આ પ્રકારની આવી विज्जामणु—विद्यामनु સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપ વિદ્યાને લક્ષમાં રાખીને તમે संचरे—संचरे સંયમ માર્ગમાં રત રહો ॥૩૦॥

छाया—अथ च्युतो ब्रह्मलोकात्, मानुष्य भवमागतः ।
आत्मनश्च परेषा च, आयुर्जाने यथा तथा ॥२९॥

टीका—'से' इत्यादि ।

अथ=आयु' समाप्त्यनन्तर ब्रह्मलोकात्=पञ्चमकल्पात् च्युतोऽह मानुष्य=मनुष्यसम्बन्धिन भव=जन्म आगत =प्राप्त । इत्थमात्मनो जातिस्मरणात्मकमतिशयमुक्त्वाऽतिशयान्तरमाह—च=पुनरहम्, आत्मन.=स्वस्य परेषाम् अन्येषा च आयु.=जीवित यथा—येन प्रकारेण अस्ति, तथा तेन प्रकारेणैव जाने । इदमुपलक्षण ततश्च—गतिमपि जानामीत्यर्थ' ॥२९॥

क्षत्रियराजऋषिरित्थ प्रसङ्गतोऽपृष्टमपि स्ववृत्तान्तमावेद्य सम्प्रत्युपदिशन्नाह—

मूलम्—नाणारुइ चं छंद च, परिवज्जिज्ज सजए ।
अणट्ठा जे यं सव्वत्था, इइ विज्जामणुसंचरे ॥३०॥

छाया—नानारुचि च छन्द च, परिवर्जयेत्संयत' ।
अनर्था ये च सर्वार्था., इति विद्यामनुसचरे ॥३०॥

तथा—'से चुओ इत्यादि'

अन्वयार्थ—(अह-अथ) देवभव सबधी आयु के समाप्त होने पर (बभलोगाओ चुओ-ब्रह्मलोकात् च्युत.) उस पचम स्वर्ग से चवा हुआ मै (माणुस्स भवमागओ-मानुष्य भवमागत) मनुष्य सबधि भव में आया हू। इस प्रकार अपना जातिस्मरणात्मक अतिशय कहकरके उन क्षत्रिय राजर्षिने सजयमुनि से यह भी कहा कि—मै (अप्पणो परेसिं च जहा आउ तहा जाणे—आत्मन.परेषा च यथा आयु. तथा जाने) अपन तथा परके आयुष्यको भी वह जितना है उसको मै जानता हू। उपलक्षण से गतिको भी जानता हू ॥२९॥

तथा—"से चुओ" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—अह—अथ દેવભવરૂપી આયુષ્ય પૂર્ણ થવાથી बमलोगाओ चुओ—ब्रह्मलोकात् च्युत તે પાચમા સ્વર્ગથી આયુબધ પુરો થતા ત્યાથી ચ્યવીને माणुस्स भवमागओ—मानुष्य भवमागत' હુ મનુષ્યભવમા આવેલ છુ આ પ્રમાણે પોતાનુ જાતિસ્મરણાત્મક વર્ણન કરીને તે ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ સજય મુનિને એ પણ કહ્યુ કે, હુ अप्पणो परेसिं च जहा आउ तहाजाणे—आत्मन परेषा च यथा आयु तथा जाने મારૂ પોતાનુ તથા બીજાનુ આયુષ્ય કેટલુ છે તે પણ જાણુ છુ ઉપલક્ષણથી ગતિને પણ જાણુ છુ ॥૨૯॥

कथं भवानायुर्जानातीति संजयमुनिना पृष्टोऽसौ क्षत्रियराजर्षिराह—

मूलम्—जं च मे पुच्छसी काले, सम्मं सुद्धेण चेयसा ।
ताइं पाउकरे बुद्धे, तं नाणं जिणसासणे ॥३२॥

छाया—यच्च मा पृच्छसि काले, सम्यक् शुद्धेन चेतसा ।
तत् प्रादुरकार्षीद् बुद्धः, तज्ज्ञानं जिनशासने ॥३२॥

टीका—'जं च मे' इत्यादि ।

हे संजय ! सम्यक् शुद्धेन=अतिनिर्मलेन चेतसा समुपलक्षित, मां यत् काले-कालविषयम्=आयुर्विषयं ज्ञानं पृच्छसि । तत्=ज्ञानम् बुद्धः सर्वज्ञः श्री महावीरः प्रादुरकार्षीत्=प्रकटितवान्, अत एव तज्ज्ञानं जिनशासने=जिनप्ररूपितसिद्धान्ते एव वर्तते, नत्वन्यस्मिन् सुगतादिशासने। अतो जिनशासने एव यत्नो विधेयः अहमपीदं परिज्ञाय जिनशासने एव यत्नवानस्मि, न तु सौगतादि-शासने। तत्प्रसादादतिशयज्ञानं प्राप्तोऽस्मि। त्वयाऽपि तत्रैव यतितव्यं नान्यत्रेति भावः । 'तं' इति वाच्ये 'ताइं' इति बहुवचननिर्देशः सौत्रत्वात् ॥३२॥

संयममुनि ने क्षत्रिय राजर्षि से पूछा कि आप आयु को कैसे जानते हैं? तब क्षत्रिय राजर्षि कहते हैं 'जं च मे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे संजय ! (सुद्धेण चेयसा-शुद्धेन चेतसा) अति निर्मल चित्त से युक्त तुम (मे-माम्) मुझ से (काले पुच्छसी-काले पृच्छसि) आयुके विषय में जो पूछ रहे हो सो (ताइं-तत्) उस विषयक ज्ञान को (बुद्धे-बुद्धः) सर्वज्ञ महावीर प्रभु प्रकट किया है (तं नाणं-तत् ज्ञानम्) वह ज्ञान (जिणसासणे-जिनशासने) जिन-प्ररूपित सिद्धान्त मे ही है। अन्य सुगतादि प्रणीत शास्त्रों मे नही है। इसलिये तुम जिनशासन मे इस ज्ञानकी प्राप्ति के निमित्त प्रयत्नशील रहो। मैने भी यह ज्ञान वही से प्राप्त किया है॥३२॥

સંજયમુનિએ ક્ષત્રિયરાજર્ષિને પૂછયુ કે, આપ આયુને કઇ રીતે જાણો છો? ત્યારે ક્ષત્રિય રાજર્ષિ કહે છે—"जच मे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે સંયત ! सुद्धेण चेयसा-शुद्धेन चेतसा અતિ નિર્મળ ચિત્તવાળા એવા તમે मे-माम् મને काले पुच्छसी-काले पृच्छसि આયુના વિષયમા જે પૂછી રહ્યા છો તો ताइं-तत् આ વિષયના જ્ઞાનને बुद्धे-बुद्धः સર્વજ્ઞ મહાવીર પ્રભુએ પ્રગટ કરેલ છે तं नाणं-तत् ज्ञानम् તે જ્ઞાન जिणसासणे-जिनशासने જીન પ્રરૂપિત સિદ્ધાંત માજ છે અન્ય સુગતાદિ પ્રણીત શાસ્ત્રોમા નથી આથી તમે જીન શાસનમા આ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્નશીલ રહો મે પણ આ જ્ઞાન એમાથીજ પ્રાપ્ત કરેલ છે ॥૩૨॥

टीका—'पडिक्कमामि' इत्यादि ।

हे संजय मुने ! अहं प्रश्नेभ्यः=शुभाशुभसूचकेभ्योऽङ्गुष्ठादिप्रश्नेभ्यः वा=अथवा-पुनः परमन्त्रेभ्यः=परेषां=गृहस्थानां ये मन्त्रास्तत्कार्यालोचनरूपास्तेभ्यः प्रतिक्रमामि=प्रतिनिवृत्तो भवामि । एवं रूपं सावद्यं कर्म नाहं करोमीति भावः । यः संयत एवं विधसावद्यरूपप्रश्नादिव्यापारपरिवर्जनेन संयमं प्रति उत्थितः=उत्थानशीलो भवति अहो ! तद्विषये किं वक्तव्यम् ? एवं विधस्तु कश्चिदेव महात्मा भवति, अत उक्तम् 'अहो' इति । अतो हे संजय मुने ! त्वम् इति=एतदनन्तरोक्तमर्थं विद्यात्=जानीयात्ततः—अहोरात्रम्=अहर्निशं प्रतिक्षणमित्यर्थः, तपः=सावद्यव्यापारविरतिलक्षणम् चरेः=आसेवस्व । न तु प्रश्नादिकम् ॥३१॥

अब क्षत्रिय राजर्षि अपने आचार को कहते हैं—'पडिक्कमामि' इत्यादि !

अन्वयार्थ—हे संजय मुने ! मैं (पसिणाणं पुणो परमंतेहिं वा प्रश्नेभ्यः पुनः परमंत्रेभ्योवा) शुभाशुभ सूचक अंगुष्ठादि के प्रश्नों से अथवा गृहस्थजनों के तत्तत्कार्यालोचनरूप मंत्र हैं उनसे (पडिक्कमामि-प्रतिक्रमामि) प्रतिनिवृत्त हो गया हूं अर्थात् अब मैं इस प्रकार के सावद्यरूप कर्म नहीं करता हूं, जो संयत इस प्रकार के सावद्यरूप प्रश्नादिक के व्यापार के परिवर्जन से संयम के प्रति सदा (उट्ठिए—उत्थितः) उत्थानशील बना रहता है (अहो—अहो) उसके विषय में क्या कहना है—ऐसा तो कोइ ही महात्मा होता है। इसलिये हे संयतमुने ! तुम इस अनन्तरोक्त अर्थको (विज्जा—विद्यात्) जानो और (अहोराय—अहोरात्रम्) प्रतिक्षण (तव चरे—तपश्चरेः) सावद्यव्यापार विरतिरूप तपका अनुष्ठान करो । प्रश्नादिक में समय मत बीताओ ॥३१॥

હવે ક્ષત્રિય રાજર્ષિ પોતાના આચારને કહે છે—"पडिक्कमामि" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે સંજયમુનિ ! હું पसिणाणं पुणो परमंतेहिं वा—प्रश्नेभ्यः पुनः परमंत्रेभ्यः=શુભાશુભ સૂચક અંગુષ્ઠાદિના પ્રશ્નોથી અથવા ગૃહસ્થજનોના તત્તત્કાર્યાલોચનરૂપ જે મંત્ર છે તેનાથી पडिक्कमामि—प्रतिक्रमामि હું સર્વદા નિવૃત્ત થઈ ગયો છું અર્થાત્ હવે હું તેના પ્રકારના સાવદ્યરૂપ કર્મને કરતો નથી જે સંયત આ પ્રકારના સાવદ્યરૂપ પ્રશ્નાદિકના વ્યાપારના પરિવર્જનથી સંયમના તરફ સદા उट्ठिए—उत्थित ઉત્થાનશીલ બની રહે છે अहो—अहो એના વિષયમાં શું કહેવાનું હોય ! આવા તો કોઈક જ મહાત્મા હોય છે આથી હે સંયત મુનિ ! આ અનંતરોક્ત અર્થને विज्जा—विद्यात् જાણો અને अहोराय—अहोरात्रम् પ્રતિક્ષણ तव चरे तपश्चरे સાવદ્ય વ્યાપાર વિરતરૂપ તપનું અનુષ્ઠાન કરો. પ્રશ્નાદિકમાં સમય વિતાવો નહીં ॥૩૧॥

सम्यग्ज्ञानयुक्तो भवेत्। यस्मादेव तस्मात्-हे मुने! त्वमपि सुदुश्चर-कातर-जनैर्दुराराध्य धर्म=श्रुतचारित्ररूप चर=समाराधय ॥३३॥

पुनः क्षत्रियराजऋषि सजयमुनि महापुरुषोदाहरणैः स्थिरीकर्तुमाह--

मूलम्--एयं पुण्णपयं सोच्चा, अत्थधम्मोवसोहियं।
भरहो वि भारहं वासं, चिच्चा कामाइ पव्वए ॥३४॥

छाया—एतत्पुण्यपदं श्रुत्वा, अर्थधर्मोपशोभितम्।
भरतोऽपि भारतं वर्षं, त्यक्त्वा कामान् प्रव्रजित ॥३४॥

टीका—'एय' इत्यादि।

अर्थधर्मोपशोभितम्-अर्यते=प्रार्थ्यते इत्यर्थः=स्वर्गापवर्गलक्षणः पदार्थः, धर्मः=तदुपायभूतः, अर्थश्च धर्मश्च-अर्थधर्मौ, ताभ्यामुपशोभितम्, सहितम् एतत्=पूर्वोक्त पुण्यपद-पुण्यहेतुत्वात्पुण्यम्, तच्च तत्पद चेति तत्, यद्वा-पुण्य=सुकृत पद्यते गम्यते (ज्ञायते) येन तत् पुण्यपदम्=क्रियावाद्याद्यभिमतनानारुचिपरिवर्जनाद्या

दृष्टिसपन्नः) सम्यक् ज्ञान से सपन्न बने। जब मुनि के लिये इस प्रकार का प्रभुका उपदेश है तब तुम भी (सुदुच्चर धम्म चर-सुदुश्चर धर्म चर) कायर जनों से दुराराध्य इस श्रुतचारित्ररूप धर्म की आराधना करने मे सदा सावधान रहो ॥३३॥

इस प्रकार क्षत्रिय राजऋषि सजयमुनि को अपने कर्तव्यमे स्थिर रहने के उपदेश के प्रसग मे दृष्टान्त द्वारा उपदेश देते है-'एय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अत्थधम्मोवसोहिय-अर्थधर्मोपशोभितम्) स्वर्ग मोक्ष-रूप पदार्थ से एव इस पदार्थ की प्राप्ति मे उपायभूत धर्म से शोभित (एय पुण्णपय सोच्चा-एतत्पुण्यपद श्रुत्वा) इस पूर्वोक्त पुण्यपद को सुन-

साथे दिट्ठिसपन्ने-दृष्टिसपन्न, सम्यग्ज्ञानथी सपन्न બને જ્યારે મુનિના માટે પ્રભુનો આ પ્રકારનો ઉપદેશ છે ત્યારે તમે પણ सुदुच्चर धम्म चर-सुदुश्चर धर्म चर કાયર જનોથી અસાધ્ય એવા આ શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામા સદા સાવધાન રહો ॥૩૩॥

આ પ્રકારે ક્ષત્રિય રાજર્ષિ સજયમુનિને પોતાના કર્તવ્યમા સ્થિર રહેવાના ઉપદેશના પ્રસગમા દૃષ્ટાત દ્વારા સમજાવે છે--"એય" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—अत्थधम्मोवसोहिय-अर्थधर्मोपशोभितम् સ્વર્ગ મોક્ષરૂપ પદાર્થથી અને આ પદાર્થની પ્રાપ્તિમા ઉપાયરૂપ ધર્મથી શોભિત एय पुण्णपय सोच्चा-

पुनरुपदेष्टुमाह—

मूलम्—किरियं चँ रोयँए धीरें, अकिरियं परिवज्जए ।
दिट्ठीएँ दिट्ठीसंपँन्ने, धम्मं चँर सुदुच्चंरं ॥३३॥

छाया—क्रियां च रोचयेद् धीरः, अक्रियां परिवर्जयेत् ।
दृष्टया दृष्टिसम्पन्नो, धर्मं चर सुदुश्चरम् ॥३३॥

टीका—'किरियं च' इत्यादि ।

हे संजय मुने ! धीरः=संयमधृतिमान् मुनिः क्रियाम्=सदनुष्ठानात्मिकाम् उभयकाले प्रतिक्रमणप्रतिलेखनारूपां मोक्षमार्गसाधनभूतां ज्ञानसहितां क्रियां स्वयं रोचयेत्=कुर्यात्, चकारस्योपलक्षणत्वादन्यैरपि कारयेत्। यद्वा-क्रियाम्='अस्ति जीवः, अस्ति अजीवः' इत्यादिरूपां जीवाजीवादिसत्तां स्वयं रोचयेत्=मन्येत, चकारादन्यानपि मानयेत्। तथा-अक्रियाम्=मिथ्यात्विभिः कल्पितामज्ञानरूपां कष्टक्रियां, यद्वा-अक्रियाम्='नास्ति जीवः, नास्ति अजीवः' इत्यादिरूपां परिवर्जयेत्=परित्यजेत्। तथा-दृष्टया=सम्यग्दर्शनात्मिकया बुद्धया सह दृष्टिसम्पन्नः=

फिर उपदेश करते हैं 'किरियं च' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे संजय ! (धीरे किरियं रोयए-धीरः क्रियां रोचयेत्) संयम में धृतिसंपन्न मुनि का कर्तव्य है कि वह सदनुष्ठानात्मक प्रतिक्रमण एवं प्रतिलेखनरूप क्रिया को दोनों समय करे। तथा दूसरों से भी करावे। अथवा-"जीव है अजीव है" इत्यादिरूप से जीव और अजीव की सत्ता को वह स्वयं स्वीकार करे और दूसरों को भी इसकी स्वीकृति करावे। तथा (अकिरियं परिवज्जए-अक्रियां परिवर्जयेत्) मिथ्यादृष्टियों द्वारा कल्पित अज्ञानरूप कष्ट क्रिया का अथवा जीव नहीं है अजीव नहीं है इत्यादि जीवाजीव विषयक नास्तित्व क्रिया का परित्याग करे। और (दिट्ठीए-दृष्टया) सम्यग्दर्शनरूप बुद्धिके साथ (दिट्ठिसंपन्ने

ફરીથી ઉપદેશ કહે છે—"किरियं च" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે સંજય धीरे किरियं रोयए—धीरः क्रियां रोचयेत् સંયમમાં જ્ઞાન સંપન્ન મુનિનું કર્તવ્ય છે કે, તે સદનુષ્ઠાનાત્મક પ્રતિક્રમણ અને પ્રતિલેખન રૂપ ક્રિયાને બન્ને સમય કરે તથા બીજાઓ પાસે કરાવે અથવા "જીવ છે અજીવ છે" ઇત્યાદિરૂપથી જીવ અને અજીવની સત્તાને તે સ્વયં સ્વીકાર કરે અને બીજાઓ પાસે પણ તેનો સ્વીકાર કરાવે તથા अकिरियं परिवज्जए—अक्रियां परिवर्जयेत् મિથ્યાદૃષ્ટિઓ દ્વારા કલ્પિત અજ્ઞાનરૂપ કષ્ટ ક્રિયાનું અથવા જીવનથી અજીવ નથી ઇત્યાદિ જીવાજીવરૂપ નાસ્તિત્વ ક્રિયાનો પરિત્યાગ કરે અને दिट्ठीए—दृष्टया સમ્યગદર્શનરૂપ બુદ્ધિની

सम्यग्ज्ञानयुक्तो भवेत्। यस्मादेव तस्मात्-हे मुने! त्वमपि सुदुश्चर-कातर-जनैर्दुराराध्य धर्मं=श्रुतचारित्ररूपं चर=समाराधय ॥३३॥

पुनः क्षत्रियराजऋषिः संजयमुनिं महापुरुषोदाहरणैः स्थिरीकर्तुमाह--

मूलम्--एयं पुण्णपयं सोच्चा, अत्थधम्मोवसोहियं।
भरहो वि भारहं वासं, चिच्चा कामाइ पव्वए ॥३४॥

छाया—एतत्पुण्यपदं श्रुत्वा, अर्थधर्मोपशोभितम्।
भरतोऽपि भारतं वर्षं, त्यक्त्वा कामान् प्रव्रजितः ॥३४॥

टीका—'एयं' इत्यादि।

अर्थधर्मोपशोभितम्-अर्थ्यते=प्रार्थ्यते इत्यर्थः=स्वर्गापवर्गलक्षणः पदार्थः, धर्मः=तदुपायभूतः, अर्थश्च धर्मश्च-अर्थधर्मौ, ताभ्यामुपशोभितम् सहितम् एतत्= पूर्वोक्तं पुण्यपदं-पुण्यहेतुत्वात्पुण्यम्, तच्च तत्पदं चेति तत्, यद्वा-पुण्यं=सुकृतं पद्यते गम्यते (ज्ञायते) येन तत् पुण्यपदम्=क्रियावाद्याद्यभिमतनानारुचिपरिवर्जनाद्या

दृष्टिसंपन्न) सम्यक् ज्ञान से संपन्न बने। जब मुनि के लिये इस प्रकार का प्रभु का उपदेश है तब तुम भी (सुदुच्चरं धम्मं चर-सुदुश्चरं धर्मं चर) कायर जनों से दुराराध्य इस श्रुतचारित्ररूप धर्म की आराधना करने मे सदा सावधान रहो ॥३३॥

इस प्रकार क्षत्रिय राजऋषि संजयमुनि को अपने कर्तव्य मे स्थिर रहने के उपदेश के प्रसंग मे दृष्टान्त द्वारा उपदेश देते है-'एयं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अत्थधम्मोवसोहियं-अर्थधर्मोपशोभितम्) स्वर्ग मोक्ष-रूप पदार्थ से एवं इस पदार्थ की प्राप्ति मे उपायभूत धर्म से शोभित (एयं पुण्णपयं सोच्चा-एतत्पुण्यपदं श्रुत्वा) इस पूर्वोक्त पुण्यपद को सुन-

साथे दिट्ठिसंपन्ने-दृष्टिसंपन्न सम्यग्ज्ञानथी संपन्न बने ज्यारे मुनिना माटे प्रभुनो आ प्रकारनो उपदेश छे त्यारे तमे पण सुदुच्चरं धम्मं चर-सुदुश्चरं धर्मं चर कायर जनोथी असाध्य एवा आ श्रुत चारित्ररूप धर्मनी आराधना करवामां सदा सावधान रहो ॥३३॥

आ प्रकारे क्षत्रिय राजर्षि संजयमुनिने पोताना कर्तव्यमां स्थिर रहेवाना उपदेशना प्रसंगमां दृष्टांत द्वारा समजावे छे--"एयं" इत्यादि।

अन्वयार्थ—अत्थधम्मोवसोहियं-अर्थधर्मोपशोभितम् स्वर्ग मोक्षरूप पदार्थथी अने आ पदार्थनी प्राप्तिमां उपायरूप धर्मथी शोभित एयं पुण्णपयं सोच्चा-

वेदकं जिनप्रवचनरूपं शब्दसन्दर्भमाचार्यसमीपे श्रुत्वा भरतोऽपि=भरतनामा-प्रथमचक्रवर्त्यपि कदाचिदादर्शभवनेऽनित्यभावनां भावयन् भारतं वर्षं=षट्खण्डर्द्धिसम्भृतं भरतक्षेत्रं तथा कामान्=शब्दादिरूपान् कामभोगांश्च त्यक्त्वा प्रव्रजितः=प्रव्रज्यां गृहीतवान्। सकलनृपेषु ऋषभपुत्रो भरतः श्रेष्ठः, तेन समाश्रितोऽयं जिनोक्तमार्गः। अतस्त्वयाऽपि अस्मिन् जिनोक्तमार्गे एव गन्तव्यमिति भावः।३४॥

भरतचक्रवर्तिनः कथा—

अस्ति भारते वर्षे सकलनगरीमुकुटायमाना शक्राज्ञया वैश्रवणदेवेन विनिर्मिता नगरीनिर्माणकलाऽऽदर्शभूताऽयोध्या नाम नगरी। तत्र पूर्वाचरित मुनिवैयावृत्त्येन भगवतः प्रथमजिनस्य पुत्रत्वेनाजनि भरतो नाम प्रथमश्चक्रवर्ती।

करके (भरहोऽवि–भरतोऽपि) भरत नाम के प्रथम चक्रवर्तीने भी (भारहं वासं कामाइं चिच्चा–भारतं वर्षं कामान् त्यक्त्वा) भारतवर्ष के समस्त साम्राज्य का तथा शब्दादिक रूप कामभोगों का परित्याग करके (पव्वइए–प्रव्रजितः) दीक्षा अंगीकार की।

भरतचक्रवर्ती की कथा इस प्रकार है—

भारतवर्ष मे अयोध्या नामकी एक नगरी थी। वह अपनी रचना से सकलनगरीयों मे प्रधान थी। इसको इन्द्रकी आज्ञा से वैश्रवणदेव–कुबेरने रचाया था। इसके शासक प्रथम जिनेन्द्र ऋषभदेव थे। इनके पुत्र का नाम भरत था। भरतने पूर्वभव मे मुनियों की वैयावृत्ति की थी। उससे अर्जित पुण्यराशि के प्रभाव से ही उसको ऋषभदेव जैसे तीर्थंकर के पुत्र होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। भगवान् के दीक्षित होने के बाद ही भरतको चक्रवर्ती पदकी प्राप्ति

एतत्पुण्यपदं श्रुत्वा આ પુણ્યોક્ત પદને સાંભળીને भरहोऽवि–भरतोऽपि ભરત નામના પ્રથમ ચક્રવર્તીએ પણ भारहं वासं कामाइं चिच्चा–भारतं वर्षं कामान् त्यक्त्वा ભારતવર્ષના સઘળા સામ્રાજ્યનો તથા શબ્દાદિરૂપ કામભોગોનો પરિત્યાગ કરીને पव्वइए–प्रव्रजितः દીક્ષા અંગીકાર કરી

ભારત વર્ષમા અયોધ્યા નામની એક નગરી હતી તે પોતાની રચનાથી સઘળી નગરીઓમા પ્રધાનરૂપે હતી તેને ઇન્દ્રની આજ્ઞાથી વૈશ્રવણ દેવ કુબેરે રચેલ હતી તેના શાસક પ્રથમ જીનેન્દ્ર ઋષભદેવ હતા તેમના પુત્રનુ નામ ભરત હતુ ભરતે પૂર્વભવમા મુનિઓની વૈયાવૃત્તિ (સેવા) કરેલ હતી એનાથી અર્જીત પુણ્યરાશિના પ્રભાવથી જ તેને ઋષભદેવ જેવા તીર્થંકરના પુત્ર થવાનુ સૌભાગ્ય

स ह्रि स्वर्गसमृद्धिप्रतिस्पर्द्धिकाया तस्यामयोध्याया स्थितो नवनिधानानां चतुर्दशरत्नानां द्वात्रिंशत्सहस्रनरपतीनां द्विसप्ततिसहस्रपुरवराणां षण्णवतिकोटिग्रामाणां द्वात्रिंशत्सहस्रदेशानाम्, अष्टचत्वारिंशत् सहस्रपत्तनानामधीश्वरः, नवनवतिसहस्रद्रोणमुखानां परिरक्षकः, चतुरशीतिशतसहस्रहयगजरथानां षण्णवति कोटिपदातीनामधिपतिः, षोडशसहस्रदेवानां षट्खण्डभरतक्षेत्रस्य चाधिपत्यमनुभवन्, चतुःषष्टि सहस्रान्तःपुरीभिः सहान्तःपुरे सक्रीडन्, स्वसम्पत्त्यनुसारेण सार्धर्मिकवात्सल्यं कुर्वन्, जिनशासनं प्रदीपयन्, दीनहीनान् परिरक्षयंश्च कियन्तं कालं व्यतिक्रान्तवान्।

हुई थी। चक्रवर्ती पद के उपलक्ष्य मे इनको स्वर्ग की समृद्धि को भी मात करनेवाली अयोध्या नगरी के शासक होनेका पद प्राप्त हुआ था। नवनिधि और चौदह रत्न के ये अधिपति थे। बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा इनकी सेवा मे रहते थे। बहत्तर ७२ हजार पुरोके ये शासक थे। छयानवे ९६ करोड गाँवो मे इनकी अखंड आज्ञा चलती थी। बत्तीस हजार देशों के सौभाग्य का निर्णय इनके हाथमे था। अडतालीस ४८ हजार पत्तनो के ये अधीश्वर थे। निन्नानवे ९९ हजार द्रोणमुखो के ये रक्षक थे। चोरासी ८४ लाख हाथी और इतने ही घोडे इनकी सेवामे थे। छयानवे ९६ करोड सैनिको के ये स्वामी थे। सोलह १६ हजार देवों का तथा षट्खण्डमंडित भरतक्षेत्रका एकाधिपत्य इनके हाथ मे था। इनके चौसठ ६४ हजार अन्तःपुर थे। ये अपनी विभूति के अनुसार साधर्मिक वात्सल्य भी किया करते थे।

પ્રાપ્ત થયુ હતુ ભગવાને દીક્ષા અંગિકાર કર્યા પછી ભરતને ચક્રવર્તીપદની પ્રાપ્તિ થઈ હતી. ચક્રવર્તી પદના ઉપલક્ષ્યમા તેમને સ્વર્ગની સમૃદ્ધિને પણ ઝાંખી પાડે એવી અયોધ્યા નગરીના શાસક થવાનો યોગ સાપડયો હતો. નવનિધિ અને ચૌદ રત્નોના એ અધિપતિ હતા. બત્રીસ હજાર મુગટધારી રાજવીઓ તેમની સેવામા રહેતા હતા બોતેર હજાર (૭૨૦૦૦) નગર ઉપર એમનુ શાસન હતુ છન્નુ કરોડ (૯૬૦૦૦૦૦૦૦) ગામોમા તેમની અખંડ આજ્ઞા ચાલતી હતી બત્રીસ હજાર (૩૨૦૦૦) દેશોના સૌભાગ્યનો નિર્ણય એમના હાથમા હતો અડતાલીસ હજાર (૪૮૦૦૦) પટ્ટણોના એ અધીશ્વર હતા નવ્વાણુ હજાર (૯૯૦૦૦) દ્રોણ મુખોના એ રક્ષક હતા ચોર્યાશી લાખ (૮૪૦૦૦૦૦) હાથી અને એટલાજ ઘોડાઓ એમની સેનામા હતા છન્નુ કરોડ (૯૬૦૦૦૦૦૦૦) સૈનીકોના એ સ્વામી હતા સોળ હજાર (૧૬૦૦૦) દેવોના તથા છ ખંડ મંડિત ભરતક્ષેત્રનુ એકાધિપત્ય એમના હાથમા હતુ તેમને ચોસઠ હજાર (૬૪૦૦૦) અન્તઃપુર હતા તેઓ પોતાની વિભૂતિના અનુસાર સાધર્મિક વાત્સલ્યો પણ કર્યા કરતા હતા જીનશાસનની પ્રભાવના

एकदाऽसौ चक्रवर्ती प्रातरभ्यक्तोद्वर्तितशरीरः कृतस्नानः सुरभिवासित वसन परिधानः सर्वालङ्कारभूषिततनुः स्वादर्शभवने गतः। तत्र स्वशरीरं प्रेक्षमाणस्य तस्यैकाङ्गुलित एकाङ्गुलिमुद्रा मणिरत्नकुट्टिमप्रासादभूमौ निपतिता। स्वशरीरशोभानिरीक्षणासक्तमानसेन तेन भरतेन स्वाङ्गुलिविनिर्गताया अङ्गुलिमुद्राया निपतनं न ज्ञातम्। मुद्रारहिताऽङ्गुली आदर्शे दृष्टा। सा हि नितराम शोभमाना दृश्यते स्म। चक्रवर्तिना द्वितीयाङ्गुलितोऽपि मुद्रा निस्सारिता, साऽप्य शोभमाना दृष्टा। एवं क्रमेण तृतीयचतुर्थपञ्चमाङ्गुलीतोऽपि निस्सारिता, ता अपि

जिनशासनकी प्रभावना भी करते थे। दीनहीन जनोंकी रक्षा भी करते थे। इस तरह इनका जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत होता था।

एक समय की बात है कि चक्रवर्ती ने प्रातः अपने शरीर पर मालिश करवाई उसको विविध प्रकार के उबटनोसे उद्वर्तित करवाया। स्नानागार मे फिर उन्होंने अच्छी तरह स्नान किया। शरीर को पोछ पाछकर पश्चत् शरीर को सुरभिवासित वस्त्रों से सुसज्जित एव विशिष्ट आभूषणो से अलकृत कर वे अपने आदर्शभवन मे गये। वहा जिस समय ये अपने शरीर की शोभा का निरीक्षण कर रहे थे उस समय इनकी अगुली से एक अगूठी निकलकर मणिरत्न निर्मित भूमि के ऊपर जा पडी। 'अगूठी अगुली से निकलकर भूमि पर गिर पडी है' इस बात का उस समय इनको पता नही पडा। दर्पण मे अगूठी रहित अगूली देखने पर इनको अगूली सुहावनी नही लगी। चक्रवर्तीने दूसरी अगुली से भी अगूठी उतारी तो वह भी सुहावनी नही लगी।

પણ કરતા હતા દીનહીનજનોની રક્ષા પણ કરતા હતા આવી રીતે એમનુ જીવન આનદ પૂર્વક વ્યતીત થતુ હતુ

એક સમયની વાત છે કે, ચક્રવર્તીએ સવારમા પોતાના શરીરની માલિશ કરાવી અને એને વિવિધ પ્રકારના ઉવટનોથી ઘસાવ્યુ ત્યાર બાદ સ્નાનાગારમા જઈને સારી રીતે સ્નાન કર્યું શરીરને લૂછ્યુ, લુછયા પછી શરીરને સુરભિવાસિત વસ્ત્રોથી સુસજ્જીત અને વિશિષ્ટ આભુષણોથી અલકૃત કરી તે પોતાના આદર્શ ભુવનમા ગયા ત્યા જે વખતે તેઓ પોતાના શરીરની શોભાનુ નિરીક્ષણ કરી રહ્યા હતા એ વખતે એમની આગળીમાથી એક વીટી નીકળી મણીરત્નવાળી ભૂમિ ઉપર જઈ પડી—"વીટી આગળીમાથી સરી જઈને ભૂમિ ઉપર પડી છે" આ વાતની તેમને એ સમયે ખબર ન પડી દર્પણમા વીટી રહિત એવી બૂચી આગળી તેમને જોવામા આવતા પોતાની તે આગળી શોભાયુક્ત ન જણાઈ જેથી ચક્રવર્તીએ બીજી આગળીમાથી પણ વીટી ઉતારી તો તે પણ સુશોભિત ન લાગી આ પ્રકારે

नितरामशोभमाना दृष्टा'। ततः सर्वमाभरणमुत्तारितम्। तदा स्वशरीरमतीवा शोभमानं दृष्ट्वा संवेगमापन्नश्चक्रवर्ती चिन्ताचक्रारूढ एवं व्यचिन्तयत्–अहो! कीदृशमशोभनमिदं शरीरम्। नास्त्यस्य किमपि स्वाभाविकं सौन्दर्यम्। किन्तु आगन्तुकद्रव्यैरेवेदमङ्गं शोभते। अतो ये शरीरं सुन्दरं मन्यमानास्तत्रासक्तास्ते हि विवेकविकला एव। अहो! कीदृशमशोभनमिदं शरीरम्? यत्सद्भावात् किल मनोज्ञान्नपानविविधखाद्यस्वाद्य पुष्पगन्धांशुकादिकं च विनश्यति।

उक्तं च— 'मणुन्नं असणं पाणं, विविहं खाइमसाइमं।
सरीरसंगमावन्नं सव्वं पि असुई भवे ॥१॥
वरं वत्थं वरं पुप्फं, वरं गंधविलेवणं।
विनस्सए सरीरेण, वरं सयणमासणं ॥२॥

इस प्रकार क्रमशः उन्होंने अपनी पांचो ही अंगुलियों से अंगूठियों उतार डाली तो वे भी देखने पर उनको सुहावनी प्रतीत नहीं हुई। इसी तरह उन्होने अपने शरीर से भी समस्त आभरण उतार दिये और शरीर को ज्यों ही दर्पण मे देखा तो वह भी उनको भद्दा नजर आया। इस प्रकारकी शारीरिक परिस्थिति से उनके चित्त मे संवेग भाव जग उठा। उन्होने विचार किया–देखो कितना यह शरीर अशोभन है। इसमे निजका सौन्दर्य कुछ भी नही है। ये तो बाहीरी सुन्दर वस्तुओं के समागमसे ही सुन्दर लगता है। जो प्राणी शरीर को सुन्दर मानकर उसमे रातदिन आसक्त बने हुए है वे नियमत विवेकसे विकल हो रहे है। इस अशोभन शरीर के संबंध से मनोज्ञ अन्न, पान, विविध प्रकार का खाद्य, पुष्प, स्वाद्य, गंधवस्त्र आदि ये सब ही वस्तुएँ अपवित्र एवं विनष्ट होजाती है। कहा भी है—

તેમણે ક્રમશ પાંચે આંગળીઓમાંથી વીંટીઓ ઉતારી નાખી તો તે પણ તેમને સોહામણી ન લાગી આ પ્રમાણે તેમણે પોતાના શરીર ઉપરના સઘળા આભરણો ઉતારી નાખ્યા અને શરીરને જ્યારે અરિસામાં જોયું તો અલંકાર રહિત એવું શરીર તેમને સાવ બેડોળ દેખાયું આ પ્રકારની શારીરિક પરિસ્થિતિથી તેના દિલમાં સંવેગભાવ જાગી ઉઠયો. તેમણે વિચાર કર્યો કે, જુઓ! આ શરીર કેટલું અશોભિતું છે, તેનું પોતાનું સૌદર્ય તો કાંઈ પણ નથી આ તો બહારની સુંદર વસ્તુઓના સમાગમથી જ સુંદર લાગે છે જે પ્રાણી શરીરને સુંદર માનીને તેમાં રાતદિવસ આસક્ત બની રહે છે તે, નિયમત વિવેકથી વિકળ બની રહેલ છે આ અશોભન એવા શરીરના સંબંધથી મનોજ્ઞ અન્નપાન વિવિધ પ્રકારના ખાદ્ય, સ્વાદ્ય, પુષ્પ, ગંધ, વસ્ત્રઆદિ એ સઘળી જ વસ્તુઓ અપવિત્ર અને વિનષ્ટ થઈ જાય છે કહ્યું પણ છે—

निहाणं सव्वरोगाणं, कयग्घमथिरं इमं ।
पचासुइभूयमयं, अथक्कपरिकम्मणं ॥३॥

छाया—मनोज्ञमशनं पानं, विविधं खादिमस्वादिमम् ।
शरीरसङ्गमापन्नं सर्वमपि अशुचि भवेत् ॥१॥
वरं वस्त्रं वरं पुष्पं, वरं गन्धविलेपनम् ।
विनश्यति शरीरेण, वरं शयनमासनम् ॥२॥
निधानं सर्वरोगाणां, कृतघ्नमस्थिरमिदम् ।
पश्चादशुभभूतमनर्थं प्रतिकर्मकम् ॥३॥ इति ।

तदहो! निर्विवेकिता विदुषामपि । तेऽपि किल अनित्यस्यास्य शरीरस्य कृते मूर्खवत्पापानि कुर्वन्ति, मोक्षद्वारभूतमिदं मानुषं जन्म व्यर्थं नयन्ति । अतो मोक्षसाधन

"मणुन्नं असणं पाणं विविहं खाइमसाइमं ।
सरीरसंगमावन्नं, सव्वंपि असुई भवे ॥१॥
वरं वत्थं वरं पुप्फं, वरं गंधविलेवणं ।
विनस्सए सरीरेण, वरं सयणमासणं ॥२॥
निहाणं सव्वरोगाणं कयग्घमथिरं इमं ।
पचासुइभूयमयं अथक्कपरिकम्मणं ॥३॥"

जब इसकी यह स्थिति है तो यह कितने अचरजकी बात है कि विद्वान भी इसके पीछे बिलकुल अविवेकी बन रहे हैं। मूर्खों के विषय में तो कहा ही क्या जा सकता है। परन्तु अपने आपको विद्वान् माननेवाले प्राणी भी इस अनित्य शरीर के निमित्त मूर्खोंकी तरह नाना प्रकार के पापों को करते हुए मोक्ष के द्वारभूत इस मनुष्यभव को व्यर्थ गवाँ देते है। जैसे कोई जुआरी जुआ खेलने के

'मणुन्नं असणं पाणं, विविहं खाइमसाइमं ।
सरीरसंगमावन्नं, सव्वंपि असुई भवे ॥१॥
वरं वत्थं वरं पुप्फं, वरं गंधविलेवणं ।
विनस्सए सरीरेण, वरं सयणमासणं ॥२॥
निहाणं सव्वरोगाणं, कयग्घमथिरं इमं ।
पचासुइभूयमयं, अथक्कपरिकम्मणं ॥३॥

જ્યારે તેની આ સ્થિતિ છે તો એ કેટલી અચરજની વાત છે કે વિદ્વાન પણ તેની પાછળ બિલકુલ અવિવેકી બની જાય છે તો પછી મુર્ખાઓના વિષયમા તો કહેવાનુ જ શુ હોઈ શકે? પરતુ પોતાની જાતને વિદ્વાન માનવાવાળા પ્રાણી પણ અનિત્ય એવા સસારના અર્થે મૂર્ખાઓની માફક અનેક પ્રકારના પાપો કરીને મોક્ષના દ્વારભૂત આ મનુષ્યભવને વ્યર્થ ગુમાવી દે છે જેમ કોઇ જુગારી જુગાર રમવાની

भूतमिदं मानुषं जन्मशरीरार्थेन पापकर्मणा द्यूतेन सद्रत्नमिव नो विनाशनीयम्।
उक्तं च—लोहाय नावं जलधौ भिनत्ति, सूत्राय वैडूर्यमणिं दृणाति ।
सचन्दनं लोपति भस्महेतो,-र्यो मानुषत्वं नयतीन्द्रियार्थे ।१॥
इत्यादिकं। चिन्तयतस्तस्य मनसि संवेगः समुत्पन्नः। क्रमशो विवर्द्धमानवैराग्य स शिवसद्मनो निश्रेणिं क्षपकश्रेणिं समारूढ । इत्थं घनघातिकर्मत्रयं कृत्वा

होंस से सद्रत्न को गवाँते हुए आगे पीछे का विचार नहीं करता है उसी तरह मोक्षसाधनभूत इस मनुष्यजन्म को शरीर के निमित्त नष्ट-भ्रष्ट करते हुए प्राणी जरा भी आगेपीछे का विचार नहीं करते हैं। अत यह मनुष्यभव इस तरह से नष्ट करनेके लायक नहीं है। कहा भी है—

"लोहाय नावं जलधौ भिनत्ति, सूत्राय वैडूर्यमणिं दृणाति ।
सचन्दनं लोपति भस्महेतो, र्यो मानुषत्वं नयतीन्द्रियार्थे ॥१॥

जो प्राणी इन्द्रिय विषयों की पुष्टि निमित्त प्राप्त मनुष्यजन्म को निष्फल करते है वे उस प्राणी के समान है, जो समुद्र मे पडे हुए जहाज को लोह की प्राप्ति के निमित्त तोड रहा हो, अथवा मलयगिरि चदन को राख के लिये जला रहा हो। इस प्रकार विचार करते हुए चक्रवर्ती के चित्त मे संवेग की तरङ्गे उठने लगी। जब संवेगभाव अच्छी तरह पुष्ट हो चुका तो चक्रवर्तीने उसी समय मोक्ष प्रासाद पर पहुँचने के लिये निःश्रेणी स्वरूपक्षपकश्रेणी पर आरोहण किया। इस प्रकार

હોશમા પોતાના સર્વ દ્રવ્યને ગુમાવતા આગળ પાછળનો વિચાર કરતો નથી એવી રીતે મોક્ષસાધનભૂત આ મનુષ્યજન્મને શરીરના નિમિત્ત નષ્ટભ્રષ્ટ કરીને એ પ્રાણી આગળ પાછળનો જરા સરખોએ વિચાર કરતો નથી, આથી આ મનુષ્યભવ આવી રીતે નષ્ટભ્રષ્ટ કરવાને યોગ્ય નથી કહ્યુ પણ છે—

"लोहाय नावं जलधौ भिन्नत्ति, सूत्राय वैडूर्यमणिं दृणाति ।
सचन्दनं लोपति भस्महेतो, र्यो मानुषत्वं नयतीन्द्रियार्थे ॥१॥"

જે પ્રાણી પ્રાપ્ત મનુષ્ય જન્મને ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પુષ્ટિ નિમિત્તે નિષ્ફળ કરે છે તે એ મૂર્ખ પ્રાણીના જેવા છે કે જે સમુદ્રમા પડી રહેલા જહાજને કેવળ લોઢાની પ્રાપ્તિ અર્થે તોડી રહેલ હોય તથા સૂત્રના માટે પોતાના વૈડુર્યમણીની માળાને તોડી રહેલ હોય, અથવા તો મલયગિરિ ચદનને કેવળ રાખના માટે બાળી રહેલ હોય આ પ્રકારનો વિચાર કરી રહેલા ચક્રવર્તીના ચિત્તમા સવેગના તરગો ઉઠવા લાગ્યા જ્યારે સવેગભાવ પૂર્ણ રીતે પુષ્ટ થયો ત્યાર ચક્રવર્તીએ એ વખતે મોક્ષપ્રાસાદ ઉપર પહોચવા માટે નિસરણી સ્વરૂપ ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરોહણ કર્યું

भावचारित्रमाश्रितः स चक्रवर्ती अज्ञानतिमिरनाशकं केवलज्ञानं प्राप्तवान्। एवं प्रतिपन्नकेवलज्ञानस्य तस्य पुरतो विनयावनतशिराः शक्रः प्रादुरभूत्। स हि बद्धाञ्जलिरेवमुवाच–महाराज! द्रव्यलिङ्गं प्रतिपद्यताम्। येन भवतो दीक्षामहोत्सवं कुर्मः। शक्रवचनं निशम्य भरतः स्वहस्तेन पाञ्चमौष्टिकं लोचं कृतवान्, परिधत्तवांश्च शक्रदत्तं मुनिवेषं, निर्जगाम च गृहाच्चन्द्र इव वारिदाडम्बरात्। एवं गृहीतदीक्षाव्रतमुक्तोपरिग्रहारम्भितव्रतमदोरकमुखवस्त्रिकं भरतं मुनिं निरीक्ष्य तत्प्रतिबोधनात् परिक्षीणममत्ववासनाः दशसहस्रभूपा अपि दीक्षां गृहीतवा

जब वे क्षपकश्रेणी पर आरूढ हो चुके तो उसी समय चार घातिक कर्मों के विनाश से भावचारित्रविशिष्ट उनकी आत्मा में अज्ञानतिमिर विनाशक केवलज्ञान हो गया। केवलज्ञान की उत्पत्ति होते ही ठीक उसी समय विनयावनत इन्द्र उनके पास में आकर उपस्थित हो गया। हाथ जोडकर इन्द्रने कहा–महाराज अब आप द्रव्यलिङ्ग धारण कर लीजिये। जिससे हम लोग दीक्षामहोत्सव कर सकें। इस प्रकार शक्रके वचन सुनकर भरत महाराजने अपने हाथ से उसी समय अपने मस्तक के केशों का पचमुष्टि लुचन किया और इन्द्र द्वारा दत्त मुनिवेष धारण किया, चद्रमा जिस प्रकार मेघके आडम्बर से रहित होकर बाहिर निकलता है उसी प्रकार वे भरत महाराज भी उस आदर्शभवन से बिलकुल निर्लिप्त होकर बाहर निकले। भरतमहाराज को इस प्रकार मुनिवेष से सज्जित देखकर–अर्थात मुखपर सदोरकमुखवस्त्रिका बधी हुई आदि देखकर–दस १० हजार अन्य राजा भी मुनिदीक्षा से दीक्षित

આ પ્રમાણે જ્યારે તેઓ ક્ષપકશ્રેણી ઉપર ચઢયા ત્યારે એ સમયે ચાર ઘાતી કર્મોના વિનાશથી ભાવચારિત્ર વિશિષ્ટ એવા એમના આત્મામા અજ્ઞાનતિમિર વિનાશક એવુ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયુ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતા એજ સમયે વિનયાવનત ઇન્દ્ર એમની પાસે આવીને ઉપસ્થિત થયા બે હાથ જોડીને ઇન્દ્રે કહ્યુ—'મહારાજ! હવે આપ દ્રવ્યલિગ ધારણ કરી લ્યો કે જેનાથી અમે લોકો આપનો દીક્ષામહોત્સવ કરી શકીએ' આ પ્રકારના ઇન્દ્રના વચન સાભળીને ભરતમહારાજે પોતાના માથાના વાળનો પોતાના હાથથી પચમુષ્ટિ લોચ કર્યું અને ઇન્દ્રે ભેટ ધરેલ મુનિવેશને ધારણ કર્યો ચદ્રમા જે પ્રમાણે મેઘના આડબરથી રહિત થઈને પૂર્ણસ્વરૂપે બહાર નીકળે છે એજ પ્રમાણે ભરત મહારાજા પણ એ આદર્શભવનમાથી બિલકુલ નિર્લેપ બનીને બહાર નીકળ્યા ભરત મહારાજને આ પ્રકારે મુનિવેષમા બનેલા જોઇને, અર્થાત્ મુખ ઉપર સદોરકમુખવસ્ત્રિકા બાધેલ વગેરે જોઇને દસ હજાર અન્ય રાજાઓએ પણ દીક્ષા અગીકાર કરી ભરત મહારાજે એમને

तदनुयायिनो जाताः। शक्रादयो देवा इति प्रणम्य स्वस्थानं गताः। भरतमुनिरपि केवलिभूत्वा दशसहस्रानगारपरिवारैः सह भूमण्डले विहरन् भव्यान् प्रतिबोधयति। किंचिन्न्यूनलक्षपूर्वाणि केवलिपर्यायं पालयित्वा सिद्धिगतिं गतः। भरतपट्टे तु शक्रेणादित्ययशा अभिषिक्तः।

भरतस्य कौमारे सप्तसप्ततिलक्षपूर्वाणि, माण्डलिकत्वे वर्षसहस्रं व्यतीतम्। तदनु चक्ररत्नं समुत्पन्नम्। चक्रवर्तित्वे एकसहस्रवर्षन्यूनं षड्लक्षपूर्वाणि गतानि। इत्थं गृहस्थावासे त्र्यशीतिलक्षपूर्वाणि व्यतीतानि। केवलित्वे किंचिदूनलक्ष

होकर उनके अनुयायी बन गये। भरतमहाराजने इनको प्रतिबोधित किया था। इससे इसकी संसारवासना परिक्षीण हो चुकी थी, तभी जा कर इन्होंने मुनिदीक्षा अंगीकार की। इन्द्रादिक देव इनको नमन कर पीछे अपने २ स्थान पर चले गये। भरत केवली महाराज भी दस हजार साधुओं से परिवृत होकर भूमण्डल मे विहार करने लगे और जगह २ भव्य जीवों को सद्धर्म की देशना के पान कराने से तृप्त करने लगे। कुछ कम एक लाख पूर्वतक केवलीपर्याय मे रहकर पश्चात् भरतमहाराजने सिद्धिगति को प्राप्त कर लिया। भरत के पट्टपर इन्द्रने इनके पुत्र आदित्ययश को अभिषिक्त किया।

भरतमहाराज के कौमारकाल मे सतहत्तर ७७ लाख पूर्व, तथा मांडलिक पद मे एकहजार वर्ष व्यतीत हुए पश्चात् उनको चक्ररत्नकी प्राप्ति हुई। चक्रवर्ती के पद का भोग करते हुए एक हजार वर्ष कम छह लाख पूर्व इनके समाप्त हुए हैं। इसी प्रकार गृहस्थावास मे रहते २ इन्होंने तयासी ८३ लाख पूर्व व्यतीत किये हैं। संपूर्ण श्रामण्य

પ્રતિબોધિત કર્યા આ કારણે તેમની સંસાર ઉપરની વાંછના પરિક્ષીણ બની ચૂકી હતી તેથી જ તેમણે દીક્ષા અંગિકાર કરી લીધી ઇન્દ્રાદિક દેવ વિગેરે તેમને નમન કરી પછી પોતપોતાના સ્થાન પર ચાલ્યા ગયા ભરત કેવલી મહારાજ પણ દસ હજાર સાધુઓથી પરિવૃત બનીને ભૂમંડળમા વિહાર કરવા લાગ્યા અને સ્થળે સ્થળે ભવ્ય જીવોને દેશનાનું પાન કરાવીને તૃપ્ત કરવા લાગ્યા એક લાખ પૂર્વથી થોડા ઓછા સમય સુધી કેવળી પર્યાયમા રહીને પછીથી ભરત મહારાજે સિદ્ધ ગતિને પ્રાપ્ત કરી લીધી ભરતના સ્થાન ઉપર ઈન્દ્રે તેમના પુત્ર આદિત્યયશને સ્થાપિત કર્યા

ભરત મહારાજના કુમાર કાળમા સીત્તોતેર લાખ (૭૭૦૦૦૦૦) પૂર્વ, તથા માંડલિક પદમા એક હજાર (૧૦૦૦) વર્ષ વ્યતીત કરી પછીથી તેમને ચક્રવર્તી પદની પ્રાપ્તિ થયેલી છ લાખ પૂર્વમા એક હજાર વર્ષ ઓછા એટલો સમય એમણે ચક્રવર્તી પદને ભોગવ્યું આ પ્રમાણે ગૃહસ્થાવસ્થામા રહીને તેઓએ ત્યાસી લાખ

पूर्वाणि। सपूर्णश्रामण्यपर्याये लक्षपूर्वाणि। एव भरतचक्रिणः सर्वमायुश्चतुर-शीतिलक्षपूर्वपरिमितमभूत् ॥३४॥

॥ इति भरतचक्रिकथालेशः ॥

तथा—

मूलम्—सगरो वि सागरंत, भरहवास नराहिवो।
इस्सरिय केवल हिच्चा, दयाए परिनिव्वुए ॥३५॥

छाया—सगरोऽपि सागरान्त, भारतवर्षं नराधिपः।
ऐश्वर्य केवल हित्वा, दयया परिनिर्वृत ॥३५॥

टीका—'सगरो वि' इत्यादि।

हे मुने! नराधिप' सगरोऽपि–सगरनामा द्वितीयचक्रवर्त्यपि सागरान्त=दिक्त्रये सागरपर्यन्त , उत्तरदिशि चुल्लहिमवत्पर्यन्त च भारतवर्षम्, तथा केवलम्=अद्वितीयम् ऐश्वर्य च हित्वा=परित्यज्य दयया=सयमेन परिनिर्वृत =मुक्त• ॥३५॥

पर्याय में इनका एक लाख पूर्व निकला है। इनकी आयु चोरासी ८४ लाख पूर्वकी थी ॥३४॥

॥ भरत चक्रवर्ती कथा सपूर्ण ॥

फिर दृष्टान्त कहते है—'सगरो वि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे सजय मुने! अब मै तुमको सगर चक्रवर्तीका भी दृष्टान्त सुनाता हू (नराहिवो–नराधिप') नराधिप (सगरो वि–सगरोऽपि) सगरचक्रवर्ती भी (सागरत–सागरान्तम्) सागरपर्यन्त–तीनदिशाओं मे समुद्र पर्यन्त तथा उत्तर दिशा में चुल हिमवत्पर्यन्त (भरहवास–भारतवर्षम्) भारत वर्षका शासन करके पश्चात् उसके (केवल इस्सरिय–केवल ऐश्वर्यम्) असाधारण ऐश्वार्यका (हिच्चा–हित्वा)

પૂર્વ વ્યતીત કરેલા સપૂર્ણ શ્રામણ્ય (સાધુ) પર્યાયમા એમણે એક લાખ પૂર્વ વ્યતીત કરેલા આ પ્રમાણે તેમનુ આયુષ્ય (૮૪૦૦૦૦૦) ચોર્યાસી લાખ પૂર્વનુ હતુ ॥૩૪॥

એ રીતે ભરત ચક્રવર્તીની કથા સપૂર્ણ થઇ

ફરીથી દૃષ્ટાત કહે છે—"सगरो वि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે સજયમુનિ! હવે હુ તમને સગરચક્રવર્તીનુ દૃષ્ટાત પણ સભળાવુ છુ नराहिवो–नराधिप નરાધિપ सगरो वि–सगरोऽपि સગર ચક્રવર્તી પણ सागरत–सागरान्तम् સાગર પર્યંત–ત્રણ દિશાઓમા સમુદ્ર પર્યંત તથા ઉત્તર દિશામા ચૂલ હિમવત્ પર્યંત भारहवास–भारतवर्षम् ભારતવર્ષનુ શાસન કરીને પછીથી તેમણે केवल इस्सरिय–केवल ऐश्वर्य અસાધારણ ઐશ્વર્યનો हिच्चा–हित्वा

अथ सगरचक्रवर्तिकथा—

आसीदयोध्या नगर्यामिक्ष्वाकुकुलभूषणो जितशत्रुर्नाम नराधिपः, तस्य लघुभ्राता सुमित्र नामा कुमारश्चासीत् युवराजः। आसीच्च [illegible] विजया नाम सकलगुणालङ्कृता महिषी, सुमित्रस्य च यशोमती नाम। एकदा सुकोमल शय्यायां शयाने उभे अपि महिष्यौ चतुर्दश स्वप्नान् दृष्टवत्यौ। जितशत्रु [illegible] विजया नाम्न्या पुत्रः प्रसूत तस्य नाम अजित इति दत्तम्। स हि [illegible] तीर्थकरो जात. सुमित्र युवराजपत्न्या यशोमत्या सगरनामा द्वितीयचक्रवर्ती प्रसूतः। सितपक्ष चन्द्र इव प्रवर्द्धमानौ तौ युवावस्था प्राप्तवन्तौ। मातापितृभ्यां तयोर्विवाह.

परित्याग करके (दयाए परिनिव्वुए-दयया परिनिर्वृत्तः) संयम की आराधना से मुक्तिको प्राप्त किया हैं।

सगर चक्रवर्ती की कथा इस प्रकार है—

अयोध्या नामक नगरी में इक्ष्वाकु कुल का भूषण स्वरूप एक जितशत्रु नामका नीतिमान् राजा था। इनका एक छोटा भाई जिसका नाम सुमित्र था राजा जितशत्रुकी रानीका नाम विजया था। यह सकल गुणों से युक्त थी। सुमित्र युवराजकी रानीका नाम यशोमति था। एक समय की बात है कि कोमल शय्यापर सोई हुई इन दोनों रानियों ने रात्रिके पिछले पहरमें चौदह १४ स्वप्नोंको देखा। उन दृष्ट उत्तम स्वप्नों के अनुसार जितशत्रु राजाकी रानीके अजित नामका पुत्र तथा सुमित्र युवराजकी रानीके सगर नामना पुत्र हुआ अजित द्वितीय तीर्थंकर और सगर द्वितीय चक्रवर्ती हुए। शुक्लपक्षके चन्द्रमा के

પરિત્યાગ કરીને दयाए परिनिव्वुए-दयया परिनिर्वृत्तः સંયમની આરાધનાથી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરેલ છે

સગર ચક્રવર્તીની કથા આ પ્રકારની છે—

અયોધ્યા નગરીમા ઇક્ષ્વાકુ કુળના ભૂષણ સ્વરૂપ એવા એક જીતશત્રુ નામે રાજા રાજ્ય કરતા હતા તેમને એક નાના ભાઈ હતા કે જેમનુ નામ સુમિત્ર હતુ રાજા જીતશત્રુની રાણીનુ નામ વિજયા હતુ તે સર્વ ગુણોથી યુક્ત હતી સુમિત્ર યુવરાજની રાણીનુ નામ યશોમતી હતુ એક સમયની વાત છે કે, કોમળ શૈયા ઉપર સુતેલી બન્ને રાણીઓએ રાત્રિના પાછલા પહોરમા ચૌદ સ્વપ્ના જોયા તે જોએલા સ્વપ્ન અનુસાર જીતશત્રુ રાજાની રાણીએ અજીત નામના પુત્રનો, તથા સુમિત્ર યુવરાજની રાણીએ સગર નામના પુત્રનો જન્મ આપ્યો અજીત બીજા તીર્થંકર અને સગર બીજા ચક્રવર્તી થયા શુકલપક્ષના ચદ્રમાની માફક આ બન્ને કુમારો કાળક્રમથી

पूर्वाणि। सपूर्णश्रामण्यपर्याये लक्षपूर्वाणि। एव भरतचक्रिणः सर्वमायुश्चतुरशीतिलक्षपूर्वपरिमितमभूत् ॥३४॥

॥ इति भरतचक्रिकथालेशः ॥

तथा—

मूलम्—सगरो वि सागरंत, भरहवास नराहिवो।
इस्सरिय केवल हिच्चा, दयाए परिनिव्वुए ॥३५॥

छाया—सगरोऽपि सागरान्त, भारतवर्ष नराधिपः।
ऐश्वर्य केवल हित्वा, दयया परिनिर्वृत ॥३५॥

टीका—'सगरो वि' इत्यादि।

हे मुने! नराधिपः सगरोऽपि-सगरनामा द्वितीयचक्रवर्त्यपि सागरान्त=दिक्त्रये सागरपर्यन्त, उत्तरदिशि चुल्लहिमवत्पर्यन्त च भारतवर्षम्, तथा केवलम्=अद्वितीयम् ऐश्वर्य च हित्वा=परित्यज्य दयया=सयमेन परिनिर्वृत'=मुक्त. ॥३५॥

पर्याय में इनका एक लाख पूर्व निकला है। इनकी आयु चौरासी ८४ लाख पूर्वकी थी ॥३४॥

॥ भरत चक्रवर्ती कथा सपूर्ण ॥

फिर दृष्टान्त कहते हैं—'सगरो वि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे सजय मुने! अब मैं तुमको सगर चक्रवर्तीका भी दृष्टान्त सुनाता हू (नराहिवो-नराधिप.) नराधिप (सगरो वि-सगरोऽपि) सगरचक्रवर्ती भी (सागरत-सागरान्तम्) सागरपर्यन्त-तीनदिशाओं मे समुद्र पर्यन्त तथा उत्तर दिशा मे चुल हिमवत्पर्यन्त (भरहवास-भारतवर्षम्) भारत वर्षका शासन करके पश्चात् उसके (केवल इस्सरिय-केवल ऐश्वर्यम्) असाधारण ऐश्वार्यका (हिच्चा-हित्वा)

પૂર્વ વ્યતીત કરેલા સપૂર્ણ શ્રામણ્ય (સાધુ) પર્યાયમા એમણે એક લાખ પૂર્વ વ્યતીત કરેલા આ પ્રમાણે તેમનુ આયુષ્ય (૮૪૦૦૦૦૦) ચોર્યાશી લાખ પૂર્વનુ હતુ ॥૩૪॥

એ રીતે ભરત ચક્રવર્તીની કથા સપૂર્ણ થઇ

ફરીથી દૃષ્ટાત કહે છે—"सगरो वि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે સજયમુનિ! હવે હુ તમને સગરચક્રવર્તીનુ દૃષ્ટાત પણ સભળાવુ છુ नराहिवो-नराधिप નરાધિપ सगरो वि-सगरोऽपि સગર ચક્રવર્તી પણ सागरत-सागरान्तम् સાગર પર્યંત-ત્રણ દિશાઓમા સમુદ્ર પર્યંત તથા ઉત્તર દિશામા ચૂલ હિમવત્ પર્યંત भारहवास-भारतवर्षम् ભારતવર્ષનુ શાસન કરીને પછીથી તેમણે केवल इस्सरिय-केवल ऐश्वर्य અસાધારણ ઐશ્વર્યનો हिच्चा-हित्वा

सगर तु समुत्पन्नचतुर्दशरत्न : षट्खण्ड भरतक्षेत्र विजित्य चक्रवर्ती जात । प्रजा पालयामास ।

सगरस्य षष्टिसहस्रसंख्यका' पुत्रा जाता । तेषु ज्येष्ठो जह्नुकुमार आसीत् । जह्नुना विनयादिना पिता सगर सन्तोषित । सतुष्ट सगर पुत्रमुवाच–या-चस्व यत्तव रोचते । जह्नुरुवाच–तात ! यदि भवान सन्तुष्टस्तदा भवदाज्ञया चतुर्दशरत्नसहितोऽखिलभ्रातृवर्गपरिवृत. ससैन्य पृथिवीं परिभ्रमामि । तातेनानुज्ञातम् । ततोऽसौ ससैन्य सस्थित । पृथिव्या परिभ्रमन् विविधाश्चर्य

चक्र को प्रवर्तित हुए वे अजितकुमार तीर्थंकर भूमण्डल में विहार करने लगे।

इधर सगरने १४ चौदह रत्नोंके अधिपति बनकर षट्खण्डमंडित भरतक्षेत्रको अपने आधीन करके चक्रवर्ती पदका उपभोग करते हुए अपनी प्रजाका भलीभाति पालनपोषण करना प्रारम्भ किया। सगर-चक्रवर्तीके ६० साठ हजार पुत्र थे। इन सबमें जो ज्येष्ठ पुत्र था उसका नाम जह्नुकुमार था। इसने विनयादि गुणों से पिता सगर-चक्रवर्ती को अपनी तर्फ बहुत आकर्षित कर रखा था। सगरचक्र-वर्तीने एक दिन जह्नुकुमार से कहा–कि–जो तुमको रुचे वह तुम मुझ से माग लो। पिताकी इस बातका प्रत्युत्तर देनेके लिये जह्नु-कुमारने ऐसा कहा कि–यदि आप मुझको सतुष्ट होकर देनेके लिये जो तैयार हैं तो मैं चाहता हूँ कि मैं चौदह १४ रत्नों से युक्त होकर सब भाइयों को साथमें ले सैन्य सहित इस पृथ्वीमडल पर घूमू। जह्नुकुमारकी बातको चक्रवर्तीने "जैसा तुम चाहते हो वैसा

કરી તપસ્યાની આરાધના કરીને તથા તીર્થંકર પદને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મચક્રને પ્રવર્તાવતા એ અજીતકુમાર તીર્થંકર ભૂમંડળમા વિહાર કરવા લાગ્યા

આ તરફ સગર રાજા ચૌદ રત્નોના અધિપતિ બનીને છ ખડ ધરતી માહેના ભરત ક્ષેત્રને પોતાના આધિન કરીને ચક્રવર્તી પદનો ઉપયોગ કરતા પોતાની પ્રજાનુ ભલી રીતે પાલન કરવાનુ શરૂ કર્યું સગર ચક્રવર્તીને સાઠ હજાર પુત્રો હતા આ સઘળામા જે જ્યેષ્ઠ પુત્ર હતા તેનુ નામ જહ્નુકુમાર હતુ તેણે વિનયાદિ ગુણોથી પિતા સગર ચક્રવર્તીને પોતાના તરફ આકર્ષ્યા હતા સગર ચક્રવર્તીએ એક દિવસ જહ્નુકુમારને કહ્યુ કે, જે તમને રૂચે તે વરદાન માની મારી પાસેથી માગી લ્યો પિતાની આ વાતનો પ્રત્યુત્તર આપવા માટે જહ્નુકુમારે એવુ કહ્યુ કે, કદાચ આપ સતુષ્ટ થઈને મને આપવા માટે તૈયાર હો તો મારી ઈચ્છા છે કે, હુ ચૌદ રત્નોથી યુક્ત બની સઘળા ભાઈઓને સાથે લઈ સૈન્ય સહિત આ ભૂમડળ ઉપર ફરૂ જહ્નુકુમારની આ પ્રકારની વાત સાભળીને સગરચક્રવર્તીએ કહ્યુ કે, " તમારી ઈચ્છા

कारितः ? अनन्तरं जितशत्रुणा सुमित्रेण च एवं परिचिन्तितम्—एतौ हि राज्य-धुराधारणे समर्थौ जातौ। अतो राज्यभारमनयोरारोप्य प्रव्रजितव्यमावाभ्याम्। एवं विचिन्त्य तौ राज्येऽजितकुमारं युवराजपदे च सगरं संस्थाप्य प्रव्रजितौ।

अजितो राज्यधुरामुद्वहन् प्रजाः प्रजा इव परिपालयन् कियत्कालं राज्यं कृतवान्। तीर्थप्रवर्तनसमये स्वराज्ये सगरं संस्थाप्य स दीक्षां गृहीतवान्। गृहीतदीक्षोऽजितस्वामी तपस्तप्त्वा तीर्थङ्करपदवीमाश्रित्य धर्मचक्रं प्रवर्तयन् भुवि विहरति स्म।

समान प्रवर्धमान ये दोनो कालक्रम से जब युवावस्था संपन्न हुए तब माता पिता ने इन दोनोका विवाह कर दिया। जब इन दोनोंका विवाह अच्छीतरह से संपन्न हो गया और ये दोनों आनंदपूर्वक रहेने लगे तब पिताने–जितशत्रु और सुमित्रने मिलकर एकदिन ऐसा विचार किया कि ये दोनो ही अब राज्यकी धुरा धारण करने में समर्थ हो चुके है इसलिये इस स्थिति मे अब हमको यह चाहिये कि हम दोनो इन पर राज्य का भार रखकर दीक्षित हो जावें। जब उन दोनोंका यह विचार निर्णीत हुआ तब उन दोनोंने अजितको राज्यगद्दी पर बैठा कर तथा सगर को युवराजपद प्रदान कर एकही साथ मुनि दीक्षा धारण करली। अजितकुमार ने राज्यशासनका भार बहुत ही बुद्धिमत्तासे संभाला और चलाया। उन्होंने–सन्तानके समान अपनी प्रजा का पालन किया। जब तीर्थ प्रवर्तनका समय आया तब अपने स्थान पर युव राज सगरको स्थापित कर अजितकुमारने भी जिनदीक्षा धारण करली। तपस्या की आराधना करके तथा तीर्थंकर पदको आश्रित करके धर्म-

જ્યારે યુવાવસ્થા સંપન્ન થયા ત્યારે માત પિતાએ એ બન્નેના વિવાહ કરી દીધા જ્યારે એ બન્નેના વિવાહનું કાર્ય સારી રીતે સંપૂર્ણ થયું, અને એ બન્ને આનંદપૂર્વક રહેવા લાગ્યા ત્યારે પિતા જીતશત્રુ અને સુમિત્રે મળીને એક દિવસ એવો વિચાર કર્યો કે, આ બન્ને જણા હવે રાજ્યધુરાનું વહન કરવામાં સમર્થ છે આથી આપણા બન્ને માટે એ ઈચ્છનીય છે કે, રાજ્યધુરાનો ભાર એ બન્ને કુમારોને સોંપી આપણે દીક્ષિત બની જઈએ જ્યારે આ બન્ને જણાનો એ વિચાર પાકો થયો ત્યારે તે બન્ને જણાએ અજીતને રાજગાદી, તથા સગરને યુવરાજ પદ પ્રદાન કરી એકી સાથે મુનિ દીક્ષા ધારણ કરી અજીત કુમારે રાજ્ય શાસનનો ભાર ઘણી જ બુદ્ધિમત્તાથી સંભાળ્યો અને ચલાવ્યો તેમણે પોતાની પ્રજાનું પોતાના સંતાનની માફક પાલન કર્યું જ્યારે તીર્થ પ્રવર્તનનો સમય આવ્યો ત્યારે પોતાના સ્થાન ઉપર યુવરાજ સગરને સ્થાપિત કરી અજીત કુમારે પણ જીન દીક્ષા ધારણ

भम दृष्टवन्त'। नागराजो हि क्षुब्ध नागलोक दृष्ट्वा क्रोधाध्मातचित्तोऽब्रवीत्-अरे मूर्खाः! यूय किं कुरुथ? किं मृत्युमुखे पतितुमिच्छा वर्तते युष्माकम्? जह्नुकुमारप्रमुखा राजकुमारा अत्यन्तक्रोधयुक्त त नागराज दृष्ट्वा सविनयमूचु-नागराज! क्षमस्व अस्माकमपराध, कुरु प्रसादम्, उपसहर क्रोधावेगम्। हेमगिरि पर्वतपरिरक्षणार्थमस्माभिः परिखा कृता, न पुनरत्र करिष्याम। समुपशान्तक्रोधो नागराज उवाच-गच्छत यूयम्। नाह युष्माकमनिष्ट करिष्यामि। यतो हि यूय चक्रवर्तिनः पुत्रा'। नागराजवचन निशम्य ते सर्वे कुमाराः परिखातो

नागराज अपने नागलोक को क्षुभित हुए देखकर उसके क्रोधका आवेग उमड आया। क्रोधाध्मातचित्त (क्रोध से जलते हुए) होकर नागराजने कहा-अरे मूर्खो! तुम सब यह क्या कर रहे हो। क्या मरनेकी इच्छा है। नागराज को जब इस प्रकार क्रोध के आवेग से भरा हुआ देखा तो वे सब के सब उसको शात करने के विचार से बडे विनय के साथ उससे कहने लगे-हे नागराज! हमारे इस अपराध को आप क्षमा करें। तथा प्रसन्न होवें और इस क्रोध के आवेश को शात करनेकी कृपा करे। हमने जो इस कामका आरभ किया है उसका अभिप्राय केवल हेम पर्वतकी रक्षा करना है। इस में यदि आपको अप्रसन्नता होती है तो हम इसको बदकर देते है-आगे ऐसा नही करेगे। जह्नु आदि कुमारोंके इस प्रकार वचन सुनकर नागराजका कोप उतर गया, शात कोप होकर उसने कहा-ठीक है-अब तुम सब यहा से चले जाओ-मैं तुम्हारा अनिष्ट नही करना चाहता हू, क्यों कि तुम सब चक्रवर्तीके

આકુળ-વ્યાકુળ જોઈને ક્રોધના આવેશમા આવી ગયા ક્રોધના આવેશમા આવીને નાગરાજે કહ્યુ, અરે મૂર્ખાઓ! તમે સઘળા આ શુ કરી રહ્યા છો? શુ મરવાની ઇચ્છા છે? નાગરાજને જ્યારે આ પ્રમાણે ક્રોધના આવેશથી ભરેલા જોયા ત્યારે સઘળાઓએ તેને શાન્ત કરવાના આશયથી ઘણા વિનયની સાથે તેને કહેવા લાગ્યા, હે નાગરાજ! અમારા આ અપરાધને આપ ક્ષમા કરો તથા પ્રસન્ન થાઓ અને આપના ક્રોધના આવેશને શાન્ત કરવાની કૃપા કરો અમે જે આ કામનો આરભ કર્યો છે તેનો હેતુ ફક્ત હેમપર્વતની રક્ષા કરવી એજ માત્ર છે આમા જો આપની અપ્રસન્નતા થાય છે તો અમો આ કામ બધ કરી દઈએ આગળ આવુ કરીશુ નહીં જુહ્નુકુમાર આદિ કુમારોનુ આ પ્રકારનુ વચન સાભળીને નાગરાજનો કોપ ઉતરી ગયો શાત બનીને તેમણે કહ્યુ, ઠીક છે હવે તમો સઘળા અહીંથી ચાલ્યા જાવ હુ તમારૂ અનિષ્ટ કરવા ચાહતો નથી કેમ કે, તમે સઘળા ચક્રવર્તીના

पश्यन्नसौ विशिष्टशोभासम्पन्नस्य हेमशिखरनामकपर्वतस्य समीपे समागतः। सैन्यमधः स्थापयित्वा भ्रातृभिः सह हेमशिखरपर्वतमारूढः। पर्वतशोभा निरीक्षमाणस्य तस्य हृद्येयमभूत् कश्चिदप्यस्य शोभा न नाशयेदतो मया एतद्रक्षणार्थं किमपि कर्तव्यम्? इति विचार्य पर्वतादवरुह्य तच्चतुर्दिक्षु जह्नुप्रमुखा दण्डरत्नेन खातुं प्रवृत्ताः। इत्थं खातं कुर्वाणास्ते भूम्यन्तः कृतनिवास नागराज ज्वलन

करो" इस प्रकार अपनी अनुमति देकर स्वीकृत की। जह्नुकुमार भी सैन्य से परिवृत होकर भाइयों को साथ लेकर घूमने के लिये घर से निकला। घूमते २ इसने भूमि के ऊपर बडे २ आश्चर्य देखे। आगे २ यह ज्यों २ बढने लगा इसको घूमनेमें बहुत सी बातोंका भी अनुभव होने लगा। चलते २ यह वहाँ जा पहुँचा जहाँ कि विशिष्ट शोभा सपन्न हैम नामका पर्वत अडिग खडा हुवा था। इसने वहा आते ही तलहटी मे अपनी सब सेना ठहरा दी, और भाइयो के साथ पर्वत पर चढना प्रारभ किया। पर्वतकी शोभा देखते हुए जब यह आगे बढ रहा था, तब सहसा इसके मनमे विचार आया कि कहीं किसी समय कोई इसकी शोभा नष्ट न कर दे, इसलिये इस पर्वत की रक्षाके निमित्त कुछ करना चाहिये। ऐसा विचार कर वह भाईयों के साथ पर्वत से नीचे उतर आया और पर्वतकी चारों दिशाओं में दण्डरत्न से उसने सबके साथ खाई खोदना प्रारभ किया। खोदते २ जब वे विशेष भूमिके नीचे पहुच चुके तब भूमिके नीचे रहा हुआ ज्वलनप्रभ

મુજબ વર્તો" આ પ્રમાણે તેની વાતનો સ્વીકાર કરી અનુમતી આપી જહ્નુકુમાર પણ સૈન્યને સાથે લઈ પોતાના ભાઈઓની સાથે ભૂમંડળના પરિભ્રમણ માટે નીકળ્યો. ફરતા ફરતા તેણે ભૂમિના મોટા મોટા આશ્ચર્ય જોયા જેમ જેમ તે આગળ વધવા માંડયા તેમ તેમ તેને ઘણી એવી વાતોનો અનુભવ થવા લાગ્યો. ચાલતા ચાલતા તે એવે સ્થળે પહોચ્યા કે જે જગ્યાએ હૈમ નામનો પર્વત અડગપણે ઉભેલ હતો. તેણે ત્યા પહોંચતા જ પર્વતની તલેટીમા પોતાનો પડાવ નાખ્યો અને ભાઈઓ સાથે પર્વત ઉપર ચડવાનો પ્રારભ કર્યો પર્વતની શોભા જોતા જોતા જ્યારે તે આગળ વધી રહેલ હતા ત્યારે સહસા તેના મનમા વિચાર આવ્યો કે, કદાચ કોઈ સમય કોઈ આ શોભા નષ્ટ ન કરી દે એટલા માટે આ પર્વતની રક્ષા નિમિત્તે કાંઈક બદોબસ્ત કરવો જોઇએ આવો વિચાર કરી તે ભાઈઓની સાથે પર્વત ઉપરથી નીચે ઉતરી આવ્યો અને પર્વતની ચારે દિશાઓમા દંડરત્નથી તેણે સઘળાની સાથે ખાઈ ખોદવાનો પ્રારભ કર્યો ખોદતા ખોદતા વિશેષ ભૂમિની નીચે પહોચી ચૂકયા ત્યારે ભૂમિની નીચે રહેલા જ્વલનપ્રભ નાગરાજ પોતાના નાગલોકને ગભરાયેલા

राधस्य फलम्। इत्युक्त्वा नागराजो दृष्टिविषान् महोरगान् प्रैषीत्। ते च नयनाग्निज्वालाभिस्तान् भस्मीचक्रुः। भस्मीभूतास्तान् कुमारान् दृष्ट्वा सैन्ये हाहाकारो जातः। सैनिकैर्विचारितम्–अहो! हता वयम्। सर्वे कुमारा मृताः। एकोऽपि नावशिष्टः। कथं चक्रवर्तिने वज्रपातसदृशममुं वृत्तान्तं निवेदयामः। अतोऽस्माभिरपि चिताप्रवेशः कर्तव्यः। एवमामन्त्र्य ते सर्वेऽपि चितानिर्माय तत्र प्रवेष्टुमुद्यताः। एतस्मिन्नेव समये कश्चिद् द्विजः समागतः। स तान् चितासु प्रवेष्टुमुद्यतान् दृष्ट्वा प्रोवाच–कथं यूयं चितासु प्रवेष्टुमुद्यताः? ते हि तस्मै सर्वं

रहे हो, अतःअपने कियेका फल भोगो" ऐसा कह कर नागराज ने दृष्टिविष सर्पोंको भेजा। वे उसी समय उन सबकुमारोंको नेत्रकी अग्निज्वाला से भस्मसात् कर दिया। भस्मीभूत हुए कुमारों को देखकर सैन्य में हाहाकार मच गया। सब सैनिकोंने विचार किया "देखो हम लोगों की हतभाग्यता जो सब ही कुमार मर चुके हैं एक भी उनमे से बाकी नहीं बचा। अब चक्रवर्ती के लिये वज्रपात के समान इस वृत्तान्त को कैसे जाकर कहा जायगा। इसलिये सब से अच्छी बात यही है कि हम सब लोग यहां पर चिता निर्मित कर उसमें दग्ध-जल जावें।" इस प्रकार विचार कर उन सब लोगोंने चिताको बनाकर उसमें प्रविष्ट होनेका उद्यम ही किया था कि इतने मे वहां एक ब्राह्मण आ पहुँचा। चितामें प्रविष्ट होने के लिये उद्यमशील इन लोगोंको देखकर उस ब्राह्मणने उनसे कहा–कहो क्या बात हैं आप लोग चिता में प्रविष्ट होनेके लिये तैयारी क्यों कर रहे हो। ब्राह्म-

કરવાથી રોકાતા નથી આથી તમારા કરેલાનું ફળ ભોગવો એવું કહીને નાગરાજે દૃષ્ટિવિષ સર્પોને મોકલ્યા એ સર્પોએ એજ વખતે પોતાના નેત્રની અગ્નિજ્વાળાથી બાળીને રાખ કરી દીધા ભસ્મિભૂત થયેલા કુમારોને જોઇને સૈન્યમાં હાહાકાર મચી ગયો સઘળા સૈનિકોએ વિચાર કર્યો, કે જુઓ! અમારા લોકોની હતભાગ્યતા સઘળા કુમારો મરી ચૂક્યા છે એમાંથી એક પણ બાકી બચેલ નથી હવે ચક્રવર્તીને માટે વજ્રપાત સમાન આ વૃત્તાંતને તેમની પાસે જઈને કઇ રીતે કહી શકાય? આથી સહુથી સારી વાત તો એ છે કે, આપણે સઘળા પણ અહીં જ ચિતા ખડકીને બળી મરીએ આ પ્રકારનો વિચાર કરીને તે સઘળા લોકોએ ચિતા તયાર કરી તેમાં પ્રવેશ કરવાની તયારી કરી રહેલ હતા એ સમયે ત્યાં એક બ્રાહ્મણ આવી પહોંચ્યો તેણે પેલા લોકોને ચિતામાં જીવતા બળી મરવાની તૈયારી કરતા જોઇને તે બ્રાહ્મણે તેમને કહ્યું–કહો શું વાત છે? તમો જીવતા બળી મરવાની તયારી

निष्क्रान्ताः। ततो जह्नुकुमारेण भ्रातरः प्रोक्ताः–एषा परिखा दुर्लङ्घ्याऽपि जलविरहिता न शोभते। क्रमेण चैषा पांसुभिः पूरिता भविष्यति। तदाऽस्माकं सकलोऽपि श्रमो निरर्थको भविष्यति। अतो गङ्गोदकैरेषा परिपूरणीया। भवितव्यतावशाज्जह्नुकुमारवचनं सर्वैः कुमारैरङ्गीकृतम्। जह्नुकुमारो दण्डरत्नेन गङ्गातटं भित्त्वा तज्जलेन परिखां पूरितवान्। पूरितायां परिखायां पुनरपि क्षुब्धं नागलोकं निरीक्ष्य नागराजो बहिरागत्यैवमुक्तवान्–रे मूर्खाः! वारमेकं युष्माकमपराधो मया सोढः। पुनरपि मूढतया ममापराधः कृतः। तदनुभवतास्याप

पुत्र हो। नागराजके इस प्रकार के वचन सुनकर वे सबके सब उस परिखा–खाईसे बाहर निकल आये। बाहर आकर जह्नुकुमार ने भाइयोंसे कहा कि यद्यपि यह परिखा दुर्लंघ्य बन चुकी है फिर भी इसकी शोभा बिना जलके नहीं हो सकती है, यदि यह इसी तरहकी रही तो कभी न कभी धूलमिट्टी आदि से भर जावेगी फिर हमलोगोंका इतना यह परिश्रम व्यर्थ हो जावेगा, इसलिये गंगाजल से यदि यह भर दी जावे तो बहुत अच्छा है। जह्नुकुमार ने दंडरत्न से गंगाका तट विदारणकर उससे जल से परिखा–खाई को भर दिया। जब परिखा भर चुकी तब नागराजने फिर नागलोकको उस पानी के वेग से क्षुब्ध हुआ देखा तो नागराज बाहिर आकर इनसे पुन बोला–रे मूर्खो! एकबार तो हमने तुम्हारा अपराध क्षमा कर दिया, पर तुम अपने स्वभावको नहीं छोड रहे हो, समझाने पर भी तुम अपराध करनेसे नहीं चूक

પુત્ર છો નાગરાજનુ આ પ્રકારનુ વચન સાભળીને એ સઘળાએ પરિખાથી બહાર નીકળી આવ્યા અને બહાર આવીને જહ્નુકુમારે ભાઈઓને કહ્યુ કે, જોકે, આપણે ખોદેલી ખાઈ ઓળગવી દુર્લભ બની ગયેલ છે છતા પણ આની શોભા જળ વગર સુદર ન દેખાય જો કદાચ એ ખાઈ આવીને આવી જ રહે તો કદી નેકદી એ ધૂળ માટી આદિથી ભરઈ જવાની અને એ કારણે આપણો પરિશ્રમ વ્યર્થ થઈ જવાના આથી આને જો ગગાજળથી ભરવામા આવે તો ઘણુ જ સારૂ થાય જહ્નુકુમારની આ વાત સાથે બધા સહમત થયા જહ્નુકુમારે દડરત્નથી ગગાના એક કિનારાનુ ભેદન કરીને એના જળથી એ ખાઈ ભરી દીધી જ્યારે એ ખાઇ પાણીથી ભરાઇ ગઈ ત્યારે નાગરાજે એ પાણીના આવેગથી નાગલોકને આકુળ વ્યાકુળ બનેલુ જોયુ અને તુરત જ નાગરાજે બહાર આવીને રાજકુમારો તરફ ક્રોધયુક્ત બનીને કહેવા માડયુ રે મૂર્ખાઓ! એક વખત મે તમારો અપરાધ ક્ષમા કરીદીધો પરતુ તમે પોતાના સ્વભાવને છોડતા નથી સમજાવવા છતા પણ તમો અપરાધ

ब्राह्मणोऽपि कमप्यनाथं मृतं बालकं समादाय राजकुलद्वारे गत्वाऽत्युच्चैराक्रन्दितवान्। मुहुर्मुहुः क्रन्दतं तं द्विजं समाहूय सगरः प्राह-भो ब्राह्मण! कथं रोदिषि? ब्राह्मणः प्राह-राजन्! ममायमेक एव पुत्रः। असौ हि सर्पेण दष्टो गतचेतनो वर्तते। अतो जीवयैनम्। नाहमेनं विना जीवितुं शक्नोमि। अतो दयस्व, जीवय च मम पुत्रम्। अस्मिन्नेवावसरे राजकुमारानुयायिनः सामन्तादयोऽपि तत्रागत्योपविष्टाः। राज्ञाऽपि स्वभृत्यैः समाहूता विषवैद्याः। विषवैद्यकृतचिकित्सया विप्रपुत्रो न जीवितः। तदा विप्रपरितोषार्थं सगरश्चक्रवर्ती वदति-

उधर वह ब्राह्मण किसी अनाथ मृतक बालक को लेकर राजद्वार में पहुँचा। और पहुँच कर बडे जोरों से चिल्ला २ कर रोने लगा। बारबार बुरी तरह आक्रन्द करनेवाले उस ब्राह्मण को पास मे बुलाकर सगर चक्रवर्तीने पूछा-ब्रह्मदेव! कहो, क्यों रो रहे हो? ब्राह्मणने कहा-राजन्। मेरा यह एक ही पुत्र था। इसको सर्पने काट खाया है सो यह चैतन्य रहित होकर इस अवस्था मे पहुँच गया है-कृपा कर आप इसको जिला दीजिये। मै एक क्षण भी इसके विना जीवित नही रह सकता हूं। बडी दया होगी नाथ! जो आप मेरे इस लालको जिला देंगे तो। ब्राह्मण जब इस प्रकारकी बातें कह रहा था, कि इसी अवसर मे राजकुमारानुयायी सामन्त जन आदि वहां आकर बैठ गये। राजाने विषवैद्यको बुलानेके लिये नौकरो को भेज दिया। वे आये और उन्होने उसकी चिकित्सा भी करना प्रारंभ किया, परन्तु वह मृत पुत्र किसी भी तरह से जीवित नही हो सका। चक्रवर्तीने

બીજી બાજુ મનિકોને આશ્વાસન આપી નીકળેલ તે બ્રાહ્મણ કોઈ અનાથ મરેલા બાળકને લઈને રાજદ્વારમા પહોચ્યો અને ત્યા પહોચીને રાડો પાડીને જોરજોરથી રોવા લાગ્યો વારવાર જોરશોરથી ચિત્કાર કરતા એ બ્રાહ્મણને પોતાની પાસે બોલાવીને સગર ચક્રવર્તીએ પૂછ્યુ હે બ્રહ્મદેવ! કહો કેમ રોઈ રહ્યા છો? બ્રાહ્મણે કહ્યુ, રાજન્ મારો આ એકજ પુત્ર હતો તેને સાપે કરડી ખાધો છે જેથી તે ચૈતન્ય સહિત થઈને આ અવસ્થાને પામ્યો છે કૃપા કરીને તેને આપ જીવતો કરી દો હુ તેના વગર એક ક્ષણ પણ જીવીત રહી શકુ તેમ નથી જો આપ મારા આ બાળકને જીવાડી દેશો તો ખૂબજ દયા થશે મહારાજ! બ્રાહ્મણ જ્યારે આ પ્રકારની વાત કરી રહેલ હતો એજ સમયે રાજકુમારોની સાથે ગયેલા સામંત જન આદિ ત્યા આવીને બેસી ગયા રાજાએ વિષવૈદ્યને બોલાવવા માણસોને દોડાવ્યા વિષ વૈદ્યો આવ્યા અને ચિકિત્સાનો પ્રારંભ પણ કર્યો પરંતુ તે મરેલ બાળક કોઈ પણ રીતે જીવીત થઇ શકયો નહી ચક્રવર્તીએ જ્યારે આ જોયુ તો તેણે એ બ્રાહ્મણને

वृत्तान्त निवेदितवन्त'। द्विज. प्राह—अये! मुञ्चत विषादम्। मृत्युर्हि प्राणिनामवश्यभावी। नास्ति कश्चिद् यो जातो न म्रियते। अतो विषादो न कर्त्तव्यः। ससारे न कस्यचिदात्यन्तिक दुःख सुख वा अस्ति।

उक्त चापि—कालम्मि अणाइए, जीवाण विविहकम्मवसगाण।

त नत्थि सविहाण, ज ससारे न सभवइ ॥१॥

छाया—काले अनादिके, जीवाना विविधकर्मवशगानाम्।

तन्नास्ति सविधान, यत्ससारे न सम्भवति ॥१॥ इति।

अतो विरमत यूय चिताप्रवेशतः। अह सगरचक्रिणे सर्व वृत्तान्त निवेदयिष्यामि। एव ब्राह्मणवचन निशम्य ते सर्वे चिताप्रवेशकर्मतो विनिवृत्ताः।

एकी बात सुनकर उन सबने जो कुछ बात घटित हुई थी वह सब यथार्थरूप मे उसको कह सुनाई। सुनकर ब्राह्मणने कहा—तुम लोग विषाद मत करो, कारण कि जो ससार मे जन्मा है—उसकी मृत्यु तो अवश्यभावी है—"जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु." ऐसा 'सिद्धान्त है। एकान्तत आत्यन्तिक सुख और दुःख इस प्राणी को ससार मे स्थिररूप से नही होते है, कहा भी है—

"कालम्मि अणाइए जीवाण, विविहकम्मवसगाण।

त नत्थि सविहाण, ज ससारे न सभवइ ॥१॥"

इसलिये चितामे प्रवेश करने से आप लोग ठहर जावें, मै जाकर सगर चक्रवर्ती से यह सब समाचार कह देता हूँ। इस प्रकार ब्राह्मण के वचन से सब सैनिक चिता मे प्रवेश करने से रुक गये।

આ માટે ડરી રહ્યા છો? બ્રાહ્મણની વાત સાભળીને સઘળા માનકોએ જે કાંઇ બીના બનેલ હતી તે યથાર્થરૂપથી તેને કહી સભળાવી સાભળીને બ્રાહ્મણે કહ્યુ—તમે લોકો વિષાદ ન કરો કારણકે, જે સસારમા જન્મ્યા છે તેનુ મૃત્યુ ના અવશ્ય છેજ "जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु" એવો સિદ્ધાત છે એકાન્તત આત્યતિક સુખ અને દુખ આ પ્રાણીને સસારમા સ્થિર રૂપથી હોતા નથી કહ્યુ પણ છે—

"कालम्मि अणाइए जीवाण विविहकम्मवसगाण।

त नत्थि सविहाण, ज ससारे न सभवई ॥ १ ॥"

આ કારણે ચીતામા પ્રવેશ કરવાથી આપ લોક રોકાઇ જાવ હુ જઇને સગર ચક્રવર્તીને સઘળા સમાચાર કહી દઉ છુ આ પ્રકારના બ્રાહ્મણના વચનથી તે સઘળા સૈનિક ચીતામા પ્રવેશ કરતા રોકાઈ ગયા

अता हे ब्राह्मण! विज्ञोऽपि सन यत्र खिद्यसे, तदत्यन्तमनुचितम्। तस्मात् शोक परित्यज्य किंचिदात्महित साधय, यावत्त्र सिंहेन मृग इव मृत्युना न परिगृह्यसे। ब्राह्मणेनोक्तम्–राजन। भवदुक्त सर्वमहमपि जानामि। किन्तु किं करोमि? एक एवाय मम शिशु। अयमपि मृतः। साम्प्रत मम कुलक्षयो जात'। कुलक्षय परिचिन्तयतो मे धैर्य शतधा परिभ्रष्टम्। हृदय च मे सहस्रधा विदीर्यते। अतो नाह शक्नोमि धैर्यमास्थाय हृदय दृढीकर्तुम्। तस्माद् हे राजेन्द्र।

"अत्थि कोई भवणे जस्स, जायाइ नेव यायाइ।
नियकम्मपरिणईए जम्मरणाइ ससारे ॥१॥"

है कोइ त्रिभुवन में ऐसा कि जिसके जन्मे हुए मरे नहीं है? ससारमें अपनी २ कर्मपरिणाति से ही जन्ममरण होते है। इसलिये जब ऐसी बात है तो हे ब्राह्मण! तुम समझदार होकर भी जो दुःखित हो रहे हो यह बात बहुत ही अनुचित है इसलिये अब शोकका परित्याग कर कुछ आत्महित को साधन करने का प्रयत्न करो कि जिस से मृग तुल्य तुम मृत्युरूपी सिंह के द्वारा गृहीत न हो सको।

चक्रवर्ती की इस प्रकार शिक्षाप्रद वाणी सुनकर ब्राह्मणने कहा–हे राजन्। आप जो कुछ कह रहे हैं वह मैं सब समझता हू। परतु क्या करू? यह एक ही तो मेरा पुत्र था, सो यह भी मर गया, अब तो मेरे कुलका ही सर्वथा विनाश हो चुका है। कुलक्षय का विचार आते ही मेरा धैर्य टूट जाता है। हृदय भी इस समय इसी विचार से फटा जा रहा है इसलिये मैं किसी भी तरह धैर्यका अव-

"अत्थि कोइ भवणे, जस्स जायाइ नेव यायाइ।
नियकम्म परिणइए, जम्म मरणाइ ससारे ॥१॥"

આ ત્રિભુવનમા એવુ કોઇ પણ નથી કે, જેનો જન્મ થયો હોય પરતુ મૃત્યુ ન થયુ હોય મસારમા પોત પોતાના કર્મની પરિણતીથી જ જન્મ મરણ થાય છે આ કારણે જ્યારે આવી વાત છે તો, હે બ્રાહ્મણ તમે સમજદાર હોવા છતા પણ કેમ દુખીત થઇ રહ્યા છો આ વાત ખૂબજ અનુચિત છે આથી હવે શોકનો પરિત્યાગ કરી આત્મહીતનુ સાધન કરવાનો પ્રયત્ન કરો કે જેનાથી મૃગતુલ્ય એવા તમે મૃત્યુરૂપી સિહ વડે ઝડપાઇ ન જાવ

ચક્રવર્તીની આ પ્રકારની શિક્ષાપ્રદ વાણીને સાભળીને બ્રાહ્મણે કહ્યુ–હે રાજન! આપ જે કાઇ કહી રહ્યા છો તે સઘળુ હુ સારી રીતે જાણુ છુ અને તે હુ સમજુ છુ પરતુ શુ કરૂ? આ એકજ મારો પુત્ર હતો અને એ પણ મરી ગયો હવે તો મારા કુળનો સર્વથા વિનાશ જ થઇ ચૂકેલ છે કુળક્ષયનો વિચાર આવતા જ મારૂ ધૈર્ય ખૂટી જાય છે, હૃદય પણ આ સમયે એવા વિચારથી ફાટી જાય છે, આથી હુ

हे ब्राह्मण! यस्मिन् गृहे न कश्चिन्मृतस्तस्माद् गृहाद् भस्म समानय, तत्पुत्र जीवयिष्यामि। ततोऽसौ नगरे प्रतिगृहं गत्वा भस्मालाभेन निराशो भूत्वा चक्रवर्तिसमीपे समागतः। तदा सगरो ब्राह्मणमब्रवीत्-भो ब्राह्मण! धारय धैर्यम्, दूरीकुरु पुत्रमरणज सन्तापम्। नास्ति कश्चिज्जीवलोके यो जातो न मृत । जातस्य हि मृत्युर्ध्रुवः। ममापि भूयासः पूर्वजा मृताः। मृत्यु र्हि न कमपि मुञ्चति। सर्वसाधारणमिद मरणम्।

उक्त च--किं अत्थि कोइ भुवणे, जस्स जायाइ नेव गायाइ।
नियकम्मपरिणईए, जम्ममरणाइ समारे ॥१॥

छाया--किमस्ति कोऽपि भुवने, यस्य जाता (पुत्राः) नैव याता (मृता)।
निजकर्मपरिणत्या, जन्ममरणानि ससारे ॥१॥ इति।

जब देखा तो उसने उस ब्राह्मण से परितोप के निमित्त इस प्रकार कहा-हे ब्राह्मण! जिस घरमे किसीकी भी मृत्यु न हुई हो तुम जाकर उस घर से राख ले आओ, मै तुम्हारे पुत्र को जीवित कर दूगा। चक्रवर्ती की बात सुनकर ब्राह्मण नगर में प्रत्येक घर पर जाकर चक्रवर्ती के कहे अनुसार राख मागने लगा-परतु किसी भी जगह उसको इस प्रकार की राख उपलब्ध नहीं हुई, अत वह निराश होकर वापिस चक्रवर्ती के पास लौट आया। सगरने ब्राह्मण को देखकर कहा-हे ब्राह्मण! धैर्य धारण करो, पुत्र के मरणजन्य सताप को छोडो ऐसा कोई भी प्राणी ससार मे नहीं है जो पैदा होकर मरे नहीं-जो उत्पन्न हुआ है उसका विनाश अवश्यभावी है। मेरे ही बहुत से पूर्वज काल के ग्रास बन चुके है। मृत्यु तो किसीको भी नहीं छोडता है। सबको एक दिन मरना ही है, कहा भी है कि—

दीलासो आपवा निमित्तथी आ प्रमाणे कहु, हे ब्राह्मण! जे घरमा कोइनु पण मृत्यु थयेल न होय तेवा घेर जईने राख लई आवो एटले हु तमारा पुत्रने जीवतो करी दईश चक्रवर्तीनी वात साभळीने ब्राह्मण नगरमा प्रत्येक घर पर जईने चक्रवर्तीना कह्या अनुसार राखनी मागणी करवा लाग्यो परतु कोइ पण जग्याए तेने आ प्रकारनी राख मळी नही आथी ते निराश थईने चक्रवर्तीनी पासे पाछो फर्यो सगरे ब्राह्मणने जोइने कहु, हे ब्राह्मण! धैर्य धारण करो पुत्रना मरण जन्य सताप छोडो, एवो कोई पण प्राणी जगतमा नथी के, जे पेदा थईने मरे नही जे उत्पन्न थाय छे तेनु मृत्यु अवश्य थाय छे ज मारा प घणा पूर्वजो काळनो कोळीओ बनी चूकया छे मृत्यु तो कोईने पण छोडतु नथी सघळाए कोई एक दिवस मरवानु तो छे ज कहु पण छे के—

अतो हे ब्राह्मण ! विज्ञोऽपि सन् यत्त्वं खिद्यसे, तदत्यन्तमनुचितम् । तस्मात् शोकं परित्यज्य किंचिदात्महितं साधय, यावत्त्वं सिंहेन मृग इव मृत्युना न परिगृह्यसे । ब्राह्मणेनोक्तम्-राजन् । भवदुक्तं सर्वमहमपि जानामि । किन्तु किं करोमि ? एक एवायं मम शिशुः । अयमपि मृतः । साम्प्रतं मम कुलक्षयो जातः । कुलक्षयं परिचिन्तयतो मे धैर्यं शतधा परिभ्रष्टम् । हृदयं च मे सहस्रधा विदीर्यते । अतो नाहं शक्नोमि धैर्यमास्थाय हृदयं दृढीकर्तुम् । तस्माद् हे राजेन्द्र ।

"अत्थि कोई भवणे जस्स, जायाइ नेव यायाइ ।
नियकम्मपरिणईए जम्मरणाइ संसारे ॥१॥"

है कोई त्रिभुवन में ऐसा कि जिसके जन्मे हुए मरे नहीं है ? संसारमें अपनी २ कर्मपरिणति से ही जन्ममरण होते हैं। इसलिये जब ऐसी बात है तो हे ब्राह्मण ! तुम समझदार होकर भी जो दुःखित हो रहे हो यह बात बहुत ही अनुचित है इसलिये अब शोकका परित्याग कर कुछ आत्महित को साधन करने का प्रयत्न करो कि जिस से मृग तुल्य तुम मृत्युरूपी सिंह के द्वारा गृहीत न हो सको।

चक्रवर्ती की इस प्रकार शिक्षाप्रद वाणी सुनकर ब्राह्मणने कहा-हे राजन्। आप जो कुछ कह रहे हैं वह मैं सब समझता हूं। परतु क्या करूं ? यह एक ही तो मेरा पुत्र था, सो यह भी मर गया, अब तो मेरे कुलका ही सर्वथा विनाश हो चुका हैं। कुलक्षय का विचार आते ही मेरा धैर्य टूट जाता है। हृदय भी इस समय इसी विचार से फटा जा रहा है इसलिये मैं किसी भी तरह धैर्यका अव-

"अत्थि कोइ भवणे, जस्स जायाइ नेव यायाइ ।
नियकम्म परिणइए, जम्म मरणाइ संसारे ॥१॥"

આ ત્રિભુવનમા એવુ કોઇ પણ નથી કે, જેનો જન્મ થયો હોય પરંતુ મૃત્યુ ન થયુ હોય સંસારમા પોત પોતાના કર્મની પરિણતીથી જ જન્મ મરણ થાય છે આ કારણે જ્યારે આવી વાત છે તો, હે બ્રાહ્મણ તમે સમજદાર હોવા છતા પણ કેમ દુખીત થઇ રહ્યા છો આ વાત ખૂબજ અનુચિત છે આવી હવે શોકનો પરિત્યાગ કરી આત્મહીતનુ સાધન કરવાનો પ્રયત્ન કરો કે જેનાથી મૃગતુલ્ય એવા તમે મૃત્યુરૂપી સિંહ વડે ઝડપાઇ ન જાવ

ચક્રવર્તીની આ પ્રકારની શિક્ષાપ્રદ વાણીને સાંભળીને બ્રાહ્મણે કહ્યુ-હે રાજન્ । આપ જે કાંઇ કહી રહ્યા છો તે સઘળુ હુ સારી રીતે જાણુ છુ અને તે હુ સમજુ છુ પરંતુ શુ કરૂ ? આ એકજ મારો પુત્ર હતો અને એ પણ મરી ગયો હવે તો મારા કુળનો સર્વથા વિનાશ જ થઇ ચૂકેલ છે કુળક્ષયનો વિચાર આવતા જ મારૂ ધૈર્ય ખૂટી જાય છે, હૃદય પણ આ સમયે એવા વિચારથી ફાટી જાય છે, આથી હુ

येन केनापि प्रकारेण जीवय मम पुत्रम्, देहि मह्य मनुष्यभिक्षाम्, निवारय मत्कुलक्षयम्। त्व हि दीनानाथरक्षकोऽप्रतिहतप्रतापश्चासि। अतस्त्व ममकुलक्षय निराकर्त्तुं समर्थोऽसि। चक्रवर्त्तिना प्रोक्तम्—ब्राह्मण! यस्य प्रतीकारो न स्ति, तत्र कोऽपि किमपि कर्त्तु न शक्नोति।

उक्त च—"सीयति सव्व सत्थाइ, एत्थ न कमति मततताइ ।
अदिट्ठपहरणम्मि विहिम्मि, कि पोरस कुणइ ॥१॥"

छाया—सीदन्ति सर्वशास्त्राणि, अत्र न क्रामन्ति मन्त्रतन्त्राणि ।
अदृष्टप्रहरणे विधौ, कि पौरुष करोति ॥ इति ।

तस्माद् हे ब्राह्मण! मुञ्च शोकम् कुरु परलोकहितावह धर्मम्। मूर्खे एव हते

लम्बन कर हृदय को दृढ करने में समर्थ नहीं हूँ, अत. हे राजेन्द्र! जैसे भी हो सके आप इस मेरे मृत पुत्र को जीवित कर दें। आप बडे दयालु है। मुझे मनुष्य की भिक्षा देकर कृतार्थ करो। मेरे कुलका यह क्षय दूर करो। आप दीनहीन अनाथ जनों के रक्षक हो। शक्ति एव प्रताप भी आपका अप्रतिहत है इसीलिये आप क्षयके गढे मे पडे हुए मेरे कुल को उबारने के लिये हाथ बढाओ।

इस प्रकार इस आर्त ब्राह्मणकी वाणी को सुनकर चक्रवर्तीने कहा—हे ब्राह्मण। अनुपायसिद्ध वस्तु मे सहनशीलता रखना यही सब से अच्छा सतोष प्राप्ति का मार्ग है, सो देखो जिसका कोई प्रतिकार नही है वहाँ कोई कुछ भी नही कर सकता है। बस अब जो कुछ हो गया सो हो गया, इस में सतोष करने से ही सब भलाई है। अब मनुष्य पर अदृष्ट प्रहरणवाले विधिका प्रहार होता है, उस समय सब शास्त्र एक

કોઇ પણ રીતે ધૈર્યનુ અવલબન કરી હૃદયને દૃઢ કરવામા સમર્થ થઇ શકતો નથી માટે હે રાજન્! ગમે તેમ કરી આપ મારા આ મરેલા પુત્રને જીવીત કરી દો આપ ઘણા દયાળુ છો, મને મનુષ્યની ભિક્ષા આપીને કૃતાર્થ કરો મારા કુળનુ નીકદન દૂર કરો આપ દીનહીન અનાથ જનોના રક્ષક છો શક્તિ અને પ્રતાપ પણ આપનો વિશાળ છે આ કારણે આપ મારા આ વિલીન થતા કુળને ઉગારવા માટે આપનો હાથ લબાવો

આ પ્રકારની બ્રાહ્મણની આર્દ્રતાભરી વાણીને સાભળીને ચક્રવર્તીએ કહ્યુ—હે બ્રાહ્મણ! અનુપાયસિદ્ધ વસ્તુમા સહનશીલતા રાખવી એજ સહુથી સારો સતોષ પ્રાપ્તિનો માર્ગ છે તેને જુઓ જેનો કોઇ રીતથી પ્રતિકાર થઇ શકતો નથી, ત્યા કોઇ કાઈ કરી શકતુ નથી જે કાઈ બની ગયુ તે બની ગયુ આમા સતોષ કરવાથીજ હવે ભલાઇ છે જ્યારે માણુસ ઉપર અદૃશ્ય પ્રહારવાળા વિધિનો કોપ

नष्टे मृते च करोति शोकम्। विज्ञस्तु सर्वमनित्य मन्यमानस्तत्राऽपि कल्याणकारक धर्ममेव करोति। एव राज्ञो वचन निशम्य विप्रः प्राह—राजन्! सत्यमेव भवता प्रोक्तम्-पुत्रे मृते पित्रा शोको न कर्तव्यः। ततो भवताऽपि शोको न कर्तव्य'? असभावनीय भवतः शोककारण समुपस्थितम्। सभ्रान्तेन चक्रवर्तिना प्रोक्तम्-विप्र! कीदृश मम शोककारणम्? तत्स्पष्ट कथय। विप्रेण

तरफ रखे रह जाते हैं, मत्र तत्र आदि सब उपाय व्यर्थ हो जाते है, इस पर किसीका भी पुरुषार्थ नहीं चलता है, इसलिये हे ब्राह्मण! अब हमारी तुम को यही सम्मति है कि तुम शोकके स्थान मे सतोष एव परलोक हितावह धर्मको ही स्थान दो। शोक करना बुद्धिमानी का चिह्न नही है। किसी वस्तु के नष्ट होने पर, चुरा जाने पर, नष्ट होने पर, तथा मृत होने पर मूर्खजन ही शोक किया करते है। जो बुद्धिमान् होते हैं वे ऐसे समय मे भी समस्त पदार्थों को अनित्य जानकर उसके वियोग मे भी कल्याणकारक धर्म का ही आश्रय ग्रहण करते है।

इस प्रकार चक्रवर्ती के हितविधायक वचन सुनकर ब्राह्मणने कहा—राजन्। आपने जो कुछ कहा है वह सर्वथा सत्य ही कहा है। 'पुत्रके मरजाने पर पिता को शोक नहीं करना चाहिये' आपका यह कथन सर्वथा शास्त्रानुकूल है। इसी तरह आपको भी शोक नहीं करना चाहिये, कारण कि आपको भी शोक करनेका कारण समुपस्थित हो चुका है। ब्राह्मण की अटपटी बात सुनकर चक्रवर्तीने सभ्रान्तचित्त होकर उससे पूछा कि—हे ब्राह्मण! तुम क्या कह रहे हो—मेरे

ઉપરે છે તેજ સમયે સઘળા શસ્ત્ર એક બાજુ પડયા રહે છે મ ત્રત ત્ર આદિ સઘળા ઉપાય વ્યર્થ જાય છે તેના ઉપર કોઈનો પણ પુરુષાર્થ ચાલતો નથી આથી હે બ્રાહ્મણદેવ! મારી તમને એ વિનતી છે કે, તમે શોકના સ્થાનમા સ તોષ અને પરલોક હિતાવહ ધર્મનેજ સ્થાન આપો, શોક કરવો એ બુદ્ધિમાનનુ કામ નથી કોઈ વસ્તુનો નાશ થવાથી, ચોરાઈ જવાથી, તેમજ મૃત્યુ થવાથી, મૂર્ખ માણસ જ તેનો શોક કરે છે જે બુદ્ધિમાન હોય છે તે એવા સમયે સઘળા પદાર્થોને અનિત્ય જાણીને તેના વિયોગમા પણ કલ્યાણકારક ધર્મનો જ આશ્રય ગ્રહણ કરે છે

આ પ્રકારના ચક્રવર્તીના હિતવિધાયક વચનોને સાભળીને બ્રાહ્મણે કહ્યુ કે હે રાજન્! આપે જે કાઇ કહ્યુ છે તે સર્વથા સત્ય જ કહ્યુ છે "પુત્રના મરી જવાથી પિતાએ શોક ન કરવો જોઈએ" આપનુ આ કહેવુ સર્વથા શાસ્ત્ર અનુકૂળ છે આવી રીતે આપે પણ શોક ન કરવો જોઈએ કારણકે, આપને પણ શોક કરવાનુ કારણ સમુપસ્થિત થયેલ છે બ્રાહ્મણની અટપટી વાત સાભળીને ચક્રવર્તીએ સભ્રા ત

मोक्तम्—महाराज ! तव षष्ठिसहस्रसंख्यकाः पुत्राः समकमेव कालधर्मं प्राप्ताः। विप्रवचनं राजकुमारानुयायिभिः सामन्तादिभिश्च समर्थितम्। इमं वज्राघातसदृशं पुत्रमरणवृत्तान्तं श्रुत्वा सगरो वज्राहत इव विनष्टचेतनः सन् सिंहासनान्निपतितो मूर्च्छितश्च। सेवकैरुपचरितः कथंचिल्लब्धसंज्ञ आर्त्तस्वरेण विलापं कृतवान्-हा पुत्राः! हा हृदयदयिताः! हा बन्धुवल्लभाः! हा शुभस्वभावाः! हा विनीताः! हा सकलगुणनिधयः! कथं मामनाथं मुक्त्वा यूयं गताः? युष्मद् विरहार्त्तस्य

शोक का कारण कैसा उपस्थित हो चुका है? जल्दी स्पष्टरूप से बतलाओ। चक्रवर्ती की उतावली देखकर ब्राह्मणने कहा—महाराज! आपको पता नहीं, आपके साठ हजार पुत्र एक साथ काल के ग्रास बन चुके है। ब्राह्मण के इस आघातजनक समाचार का वहा पर बैठे हुए राजकुमारानुयायी सामन्तजनोंने भी समर्थन किया, अब क्या था—वज्राघातसदृश पुत्रमरण वृत्तान्त सुनकर चक्रवर्ती एकदम सिंहासन से नीचे गिर पडे और मूर्च्छित हो गये। उस समय ऐसा ज्ञात हो रहा था कि मानो वज्र के प्रहार से ही चक्रवर्ती कि चेतना नष्ट हो गई है। यथाकथंचित् सेवकों द्वारा जब शीतलोपचार से प्रकृतिस्थ किये गये तब आर्तस्वर से विलाप करते हुए उन्होने इस प्रकार कहना प्रारभ किया।

हाय पुत्रवृन्द! हाय हृदय के एक मात्र अवलम्बन! हाय बन्धुवल्लभ! हा शुभस्वभावसपन्न! हा विनीत! हा सकलगुणनिधि! तुम सब एक ही साथ मुझे अनाथ करके कहाँ चले गये हो। क्या तुम को

ચિત્ત થઈ પૂછયુ કે, હે બ્રાહ્મણ! તમે શુ કહી રહ્યા છે? મારા શોકનુ કારણ કઈ રીતે ઉપસ્થિત થયેલ છે જલદી સ્પષ્ટરૂપથી બતાવો! ચક્રવર્તીની આતુરતા જોઈને બ્રાહ્મણે કહ્યુ, મહારાજ! આપને ખબર નથી પણ આપના (૬૦) સાઠ હજાર પુત્રો એકી સાથે કાળનો કોળીયો બની ચૂકેલ છે બ્રાહ્મણના આ આઘાતકારક સમાચારનુ ત્યા બેઠેલા રાજકુમારની સાથે ગયેલા સામતોએ પણ સમર્થન કર્યું પછી શુ બાકી રહ્યુ? વજ્રના આઘાત જેવુ પુત્રોના મરણનુ વૃત્તાત સાભળીને સગર ચક્રવર્તી એકદમ સિહાસનથી નીચે ગબડી પડયા અને મૂર્છિત બની ગયા આ વખતે એવુ દેખાતુ હતુ કે, ખરેખર વજ્રના આઘાતથીજ ચક્રવર્તીની ચેતના નષ્ટ બની ચૂકેલ છે, સેવકોએ જ્યારે સપૂર્ણ શિતળ ઉપચારો કર્યા અને રાજાને જ્યારે સ્વસ્થ કરવામાં આવ્યા ત્યારે આર્તસ્વરથી વિલાપ કરીને તેમણે આ પ્રકારે દર્દભર્યો પ્રલાપ કર્યો

હાય પુત્રવૃન્દ! હૃદયના એકમાત્ર અવલબન, બધુ વલ્લભ શુભ સ્વભાવ સપન્ન, વિનીત, સઘળા ગુણવાળા તમો સઘળા મને એકલો મૂકિને કયા ચાલ્યા

मम कीदृशी दशा भविष्यति ? हा पुत्राः ! सकृदपि मम लोचनगोचरता मागच्छत ! हा निर्दय पापिन ! विधे ! एककालेनैव मम सर्वान् सुतान् संहरतस्तव हृदये करुणया पदं कथं नार्पितम् ? अरे विधात ! कथमिदमकरणीयं त्वया कृतम् । हा हृदय ! कथं न शतधा विदीर्यसे ? अरे ! पुत्रमरणं श्रुत्वाऽपि यन्न शतधा विदीर्यसे तन्मन्येऽतिनिष्ठुरमसि । अहो ! सर्वसुखावसान परलोकपथं श्रितान् सुतान् श्रुत्वा यन्न मृतोऽस्मि, तन्मन्ये कृत्रिममेव सुतेषु मत्प्रेम । इत्येवं विलपन्तं चक्रवर्तिनं विप्रः प्राह–महाराज ! त्वं तु मां समुपदिश्याह–शोको न

इस बातकी खबर नहीं थी, कि तुम्हारे विना मेरी क्या दशा होगी। हाय तुमने कुछ भी नहीं विचारा–बेटा ! तुम जहां भी होओ वहां से शीघ्र आकर रोती हुई मेरी इन आंखों को पुलकित करो। हा निर्दय ! पापीदैव ! एक साथ ही मेरे हृदय के इन हारों को हरण करनेवाले तुझे मेरे ऊपर जरा भी दया नहीं आई। हे विधाता नहीं करने योग्य काम तूने मेरे साथ क्यों कर दिखाया। हे हृदय ? अब तू पुत्रों के विरह में कैसे उच्छ्वासित होगा ? इसलिये अच्छा है कि तू इसी समय फट जा। पुत्रों का मरण सुनकर भी जो नहीं फट रहा है उस से ज्ञात होता है कि तू अति निष्ठुर है। अरे ! मैं अपने पुत्रोंकी मृत्यु सुनकर भी जो जीवित बना हुआ हूं इससे यही पता चलता है कि पुत्रों के ऊपर मेरा प्रेम केवल कृत्रिम ही था।

इस प्रकार विलाप करते हुए चक्रवर्ती से ब्राह्मणने कहा–हे महाराज ! क्या कर, रहे हो, सोचो तो सही, अभी आपने मुझे किस

ગયા ? શું તમને ખબર ન હતી કે, તમારા વગર મારી શું દશા થશે ? હાય ! તમોએ કાંઈપણ વિચાર્યું ? બેટાઓ ! તમો જ્યાં હો ત્યાંથી આવીને રોઈ રહેલી મારી આ આંખોને પુલકિત બનાવો. હાય ! નિર્દય પાપી દૈવ ! એક સાથે જ મારા હૃદયના એ હારોને હરણ કરવાવાળા તને મારા ઉપર જરા પણ દયા ન આવી ? હે વિધાતા ! ન કરવા યોગ્ય કામ તે શા માટે કર્યું ? હે હૃદય હવે તું પુત્રોના વિરહમાં કઈ રીતે શાંતિ ધારણ કરી શકીશ ? આ કારણે સારૂં છે કે તું આજ વખતે ફાટી જા પુત્રોનું મરણ સાંભળીને પણ તું ફાટતું નથી આથી એવું જાણી શકાય છે કે તું અતિ નિષ્ઠુર છે અરે ! હું મારા પુત્રોનું મૃત્યુ સાંભળીને પણ જીવતો રહ્યો છું ? આનાથી એ જાણી શકાય છે કે પુત્રો ઉપર મારો પ્રેમ કેવળ કૃત્રિમ જ હતો.

આ પ્રમાણે વિલાપ કરતા ચક્રવર્તીને બ્રાહ્મણે કહ્યું–હે મહારાજ ! આપ શું કરી રહ્યા છો ? વિચારો તો ખરા, હમણાં જ આપે મને કેવા સુદૃઢ ઉપદેશથી

कर्तव्यः। परन्तु स्वय शोक कथ करोषि। अथवा सर्वत्र एवमेव दृश्यते।

उक्त च—"पर वसणमि सुहेण, ससारासारत्त कहेइ लोओ ।
णियवधुजणविणासे, सव्वस्स वि चलइ धीरत्त ॥१॥

छाया—परव्यसने सुखेन समारासारता कथयति लोकः ।
निजबन्धुजनविनाशे, सर्वस्यापि चलति धीरत्वम् ॥ इति ।

हे राजन्! जानाम्यह पुत्रमरणजनित दुःसह दु.खम्। मम तु एकस्यैव पुत्रस्य मरणेन दु.सह दु ख समुपस्थितम्। तर्हि षष्टिसहस्रपुत्रविनाशे यद् भवतो दु.ख

ललित उपदेशसरणि से समझाया है-फिर उसको एकदम आप स्वय क्यों भूल रहे हो-आपने अभी तो कहा था कि पुत्र के मरण में शोक बुद्धिमान् को नहीं करना चाहिए, फिर स्वय अबुद्धिमान् क्यो बन रहे हो। क्या यही बात है कि—

"परवसणमि सुहेण, ससारासारय कहेइ लोओ ।
णिय वधुजणविणासे, सव्वस्स विचलइ धीरत्त ॥"

दूसरों को ही दुःख मे ससारकी असारता बताकर धैर्य बधाया जाता है किन्तु जब अपने मे दु.ख आ पडता है तब सब का धैर्य विचलित होजाया करता ॥१॥

दूसरो को ही दु.ख में धैर्य बधाया जाता है किंतु अपने आपको नही। यद्यपि यह बात सत्य है कि पुत्रके मरण मे सबका धैर्य विचलित हो जाता है। पुत्र का मरणजन्य दु ख प्राणियो को असह्य हो उठता है। एक पुत्रके मरणसे जब मुझे दु ख दुःसह हो रहा है तब साठ ६० हजार पुत्रो के मरण से आपके दुःखका वर्णन होना सर्वथा

समजाव्यो हतो पछी तेने आप एकदम भूली जाव छो? आपे हमणा तो कह्यु हतु के पुत्रना मरणमा बुद्धिमाने शोक करवो न जोइए, तो पछी आप पोते ज अबुद्धिमान केम बनी रह्या छो? शु ए ज वात छे के—

"परवसणमि सुहेण, समारासारय कहेइ लोओ ।
णिय वधुजन विणासे, सव्वस्स विचलइ धीरत्त" ॥

बीजाओनेज दु खमा ससारनी असारता बतावीने धीरज अपाय छे किन्तु ज्यारे पोताना उपर दु ख आवी पडे छे त्यारे सघायनु धैर्य चलायमान थई जाय छे ॥१॥

बीजाओने ज दु खमा धैर्य बतावाय छे, पोतानी जातने नहीं जो के ए वात सत्य छे के पुत्रना मरणमा सहु कोइनु धैर्य विचलीत थई जाय छे पुत्रनु मरण जन्य दु ख प्राणीओने असह्य थई जाय छे एक पुत्रना मरणथी मने असह्य दु ख थइ रह्यु छे त्यारे साठ हजार (६००००) पुत्रोना मरणथी आपना दु खनु

तच्च अवर्णनीयमेव तथापि हे राजन्। सत्पुरुषा एव कष्टं सोढुं समर्था भवन्ति, पृथिव्येव वज्रनिपतनं सहते, नापरः। अतोऽवलम्बता धैर्यम्, सहस्व वडवाग्निं मर्णव इव दुःसहं पुत्रमरणजं दुःखम्। धीरा हि यथाऽन्यं शिक्षयन्ति, तथैव स्वयमप्याचरन्ति। अतो विलापेनालम्।

उक्तं चापि—सोयताण वि नो ताणं, कम्मबंधो उ केवलो।
तो पंडिया न सोयंति, जाणंता भवरूवयं ॥१॥

छाया—शोचतामपि नो त्राणं, कर्मबन्धस्तु केवलः।
तस्मात्पण्डिता न शोचन्ति, ज्ञात्वा भवरूपकम् ॥ इति ॥

अशक्य है फिर भी हे राजन्। जो सत्पुरुष हुआ करते हैं वे ही ऐसे कष्टोंको सहन करने मे शक्तिशाली हुआ करते हे, वज्रका पात तो पृथिवी ही सहन करती है। और कोई नही। इसलिये अब आप धैर्य ही धारण करें। जिस प्रकार समुद्र दुःसह वडवाग्निको सहन करता है इसी तरह आपको भी यह असंभावनीय दुःख सहन करना चाहिये। धीर तो वही है जो दूसरोंको समझाकर भी स्वयं समझ जाते है। तथा दूसरों को जैसे आचरण करनेकी शिक्षा देते हैं वैसा ही आचरण स्वयं करते हैं। इसलिये अब विलाप करने से कोई लाभ नहीं है, कहा भी है—

"सोयताण वि नो ताणं, कम्मबंधो उ केवलो।
तो पंडिया नो सोयंति, जाणंता भवरूवयं ॥ १ ॥"

यद्यपि मरे हुए के पीछे रोनेवाले मनुष्य उस मृत आत्माकी कुछ भी रक्षा नहीं कर सकते हे केवल कर्मबन्ध ही करते हैं।

વર્ણન કરવું અશક્ય છે છતાં પણ હે રાજન્! જે સત્પુરુષ હોય છે તેજ આવા કષ્ટોને સહન કરવામાં શક્તિશાળી બને છે. વજ્રનો પાત તો પૃથ્વી જ સહન કરે છે, બીજું કોઈ નહીં. આ માટે આપ ધૈર્ય ધારણ કરો. જે પ્રકારે સમુદ્ર દુઃસહ વડવાગ્નિને સહન કરે છે તે રીતે આપે પણ આ અસંભવનીય દુઃખ સહન કરવું જોઈએ. ધીર પુરુષો તો એજ છે કે બીજાને સમજાવીને પોતે ધૈર્યને ધારણ કરતા હોય છે. જે રીતે બીજાઓને સહનશીલ બનવાનું કહે છે એજ આચરણને પોતે આચરતા હોય છે. આમ હવે વિલાપ કરવાથી કોઈ લાભ નથી. કહ્યું છે—

"સોયताण वि नो ताणं, कम्मबंधो उ केवलो।
तो पंडिया नो सोयंति, जाणंता भवरूवयं ॥१॥

જો કે મરેલાઓની પાછળ રોવાવાળા મનુષ્ય તે મૃત આત્માની જરાપણ રક્ષા કરી શકતા નથી. કેવળ કર્મ બંધજ કરે છે.

एव मादिवचनोपन्यासैर्भेण स्वस्थीकृतो राजा। अनन्तर स विप्रः सामन्तादीन् सर्वं वृत्त निवेदयितु कथितवान। ब्राह्मणेन प्रेरिता सामन्तादयः सर्वं निवेदितवन्त, अवसरोचितैर्वचनैः समासान्त्वयश्च। ततो धैर्यमास्थाय चक्रवर्ती सगरः सकला कालोचितक्रियामकरोत्। क्रमेण नि:शोकश्चाभूत्। अनन्तर चक्रवर्ती सगरः प्रशस्ते मुहूर्ते भगीरथनामक जह्नुपुत्र राज्येऽभिषिच्य स्वय भगवतोऽजितनाथस्य समीपे दीक्षा गृहीत्वा क्रमेण कर्मक्षय कृत्वा सिद्धो जात।

अन्यदा राजा भगीरथ कमप्यतिशयज्ञानवन्तमजितनाथशासनस्थ विश्वमित्रनामक मुनि पृष्टवान्–भगवन्। मम पिता जह्नुः, तद्भ्रातरश्च सर्वपष्टि-

इत्यादि वचनोंद्वारा समझा बुझाकर ब्राह्मणने राजाको स्वस्थ किया। स्वस्थ होने पर ब्राह्मणने सामन्त आदिको समस्त वृत्तान्त बतलाने के लिये कहा, तब उन लोगोंने यथावत् समस्त साठ ६० हजार पुत्रोंके मरण का वृत्तान्त राजा को सुना दिया। तथा अवसरोचित वचनोंद्वारा राजा को समझा बुझाकर धैर्य बधाया। इसके बाद धैर्यसे समन्वित होकर चक्रवर्ती सगर ने उनकी कालोचित सकल क्रियाएँ की और धीरे २ पुत्रोंका मरण जन्य दुःख भी बिलकुल भूल गया। कुछ समय बाद सगर चक्रवर्ती प्रशस्त मुहूर्त में भगीरथ नामक जह्नु के पुत्र का राज्य–अभिषेक कर भगवान् अजितनाथ के समीप जाकर जिन दिक्षा अंगीकार की और खूब तपश्चर्याकी तथा कर्मक्षय करके सिद्ध पदको प्राप्त किया।

एक दिनकी बात है कि–भगीरथ राजा ने अजित नाथके शासनः

ઇત્યાદિ વચનો દ્વારા રાજાને સમજાવી બ્રાહ્મણે સ્વસ્થ કર્યો રાજાના સ્વસ્થ બન્યાથી બ્રાહ્મણે સામંત આદિને સઘળો વૃત્તાંત જણાવવાનું કહ્યું . તે લોકોએ બની ગયેલ સઘળા બનાવની યથાવત વિગત કહી સંભળાવી, તથા અવસરોચિત વચનોથી રાજાને સમજાવીને ધૈર્ય ધારણ કરાવ્યું આ પછી ધૈર્યથી સમન્વીત બનીને ચક્રવર્તી સગર રાજાએ પોતાના એ મૃત્યુ પામેલા સાઠ હજાર પુત્રોની કાલોચિત સઘળી ક્રિયાઓ કરી, અને ધીરે ધીરે પુત્રોના મૃત્યુનો શોક પણ વિસરી ગયા થોડા સમય પછી ચક્રવર્તી સગર રાજાએ સારા મુહૂર્તમાં યુવરાજ જન્હુના ભગિરથ નામના પુત્રનો રાજ્યાભિષેક કરીને પોતે ભગવાન અજીતનાથની પાસે જઈને જીન-દીક્ષા અંગિકાર કરી, અને ખૂબ તપસ્યા કરવા માંડી આ રીતે તપસ્યામાં એકાગ્ર ચિત્ત બનીને રાજા સગરે કર્મક્ષય કરીને સિદ્ધપદને પ્રાપ્ત કર્યું

એક સમયની વાત છે કે આ તરફ ભગિરથ રાજાએ અજીતનાથના શાસન-

सहस्रमरयकाः केन पापेन समकालमेव मरणं प्राप्ताः? मुनिना प्रोक्तम्-राजन्! एकदा पञ्चमहाव्रतधारिणः षट्कायप्रतिपालनपरायणाः कक्षधृतरजोहरणाः परिवृतपात्रोपकरणाः मुखनिरुद्धसदोरकमुखवस्त्रिकाः साधवो ग्रामानुग्रामं विहरमाणा एकस्मिन्ननार्यग्रामे समागताः। तद्ग्रामवासिनः षष्ठिसहस्रमरयकाः अनार्यास्तान् साधून् हेरिकान् मन्यमाना उपद्रवन्ति स्म। तैः केषाञ्चिद्रजोहरणानि दग्धानि, केषाञ्चित्सदोरका मुखबद्धा मुखवस्त्रिका मुखादुत्तार्य दग्धाः केषाञ्चिद्-

---

वर्ती विश्वमित्र नामके अतिशय ज्ञानवंत मुनिराज से पूछा-भगवन्! यह तो कहो कि मेरे पिता तथा उनके अन्य भाई साठ ६० हजार सगरके पुत्र थे सब किस पापके उदय से एक ही काल में मरणको प्राप्त हुए हैं। भगीरथ के इस प्रश्न को सुनकर ज्ञानी मुनिराज ने कहा-हे राजन् सुनो हम तुमको इसका कारण बतलाते हैं वह इस प्रकार है—

एक समय पांच महाव्रतों के धारी, षट्कायजीवों के प्रतिपालक, रजोहरण से सुशोभित, पात्रादिक उपकरण धारक एव मुख पर निबद्ध सदोरकमुखवस्त्रिका संपन्न साधुसंघ ग्रामानुग्राम विहार करते हुए एक अनार्यग्राम में आ पहुँचे। उस ग्राम में अनार्यों की संख्या साठ (६०) हजार की थी। साधुओं को देखकर उन अनार्योंने उनको हेरिक (गुप्तचर) समझा। इस विचार से सबने मिलकर उनके ऊपर अनेक प्रकारके उपद्रव करना प्रारंभ किया। कितनेक मुनिराजो के रजोहरण जला दिये, कितनोंकी मुख पर बंधी हुई, दोरासहित मुखवस्त्रिका-

---

વર્તી વિશ્વામિત્ર નામના અતિશય જ્ઞાનસંપન્ન મુનિરાજને પૂછયું—ભગવાન! એ તો બતાવો કે મારા પિતા અને તેમના બીજા ભાઈઓ સગર રાજાના (૬૦) સાઠ હજાર પુત્રોએ સઘળાનું કયા પાપના ઉદયથી એક જ કાળમાં મૃત્યુ થયું છે? ભગિરથનો આ પ્રશ્ન સાંભળીને જ્ઞાની મુનિરાજે કહ્યું કે હે રાજન્! સાંભળો હું તમને એનું કારણ બતાવું છું, તે આ પ્રકારે છે—

એક સમય પાંચ મહાવ્રતોના ધારક, ષટ્કાય જીવોના પ્રતિપાલક, રજોહરણથી સુશોભિત, પાત્રાદિક ઉપકરણને ધારણ કરેલા અને મુખ ઉપર નિબદ્ધ સદોરકમુખવસ્ત્રિકા સંપન્ન સાધુ સંઘ ગામેગામ વિહાર કરતા કરતા એક અનાર્ય ગામમાં જઈ પહોંચ્યા એ ગામમાં અનાર્યોની સંખ્યા સાઠ હજાર (૬૦)ની હતી સાધુઓને જોઈને તે અનાર્યોએ તેમને ગુપ્તચર સમજ્યા આવા વિચારથી સઘળાએ મળીને તેમના ઉપર અનેક પ્રકારના ઉપદ્રવ કરવાનો પ્રારંભ કર્યો કેટલાક મુનિરાજોના રજોહરણ બાળી નાખ્યા, કેટલાકોના મુખ ઉપરની દોરા સાથેની મુખવસ્ત્રિ

वस्त्रपात्राद्युपधिः प्रज्वालित । परं तद्ग्रामनिवासिना केनापि कुम्भकारेण निवा रितास्ते साधूंस्त्यक्तवन्त । तत्समये तै गैर्वैस्तत्प्रत्ययिकं निकाचितकर्मबद्धम्। एकदा तत्रत्य एकश्चौरोऽन्यत्रग्रामे राजभवने चौर्यं कृत्वा तत्रागतवान । राजा नयुक्त राजपुरुषैः साधुतया प्रसिद्ध कुम्भकारम् बहिर्निष्काम्य द्वारपिधानपूर्वक स ग्राम प्रज्वालित तत्पापेन ते षष्टिसहस्रसंख्यका अनार्या अग्नौ भस्मीभूता'। उत्पन्नाश्च विराटविषये अन्तिमग्रामे कोद्रवधान्यत्वेन (पुञ्जीभूतान कोद्रवधान्य रूपानना‍र्यजीवान कश्चित्करी स्वचरणेन मर्दितवान। ततोमृतास्ते नानाविधासु

ओंको मुख पर से खीचकर जला दी, कितनोंकी वस्त्र पात्रादिक उपधि जला दी। उस ग्राम मे एक कुम्भार भी रहता था। जब उसने इन अनार्योंका ऐसा व्यवहार मुनियों के प्रति होते देखा तो उसने उन सब को समझा बुझाकर शात किया, और साधुओं की रक्षा की। उस समय उन्होंने तत्सम्बन्धी कर्मों का बध किया। एक दिन की बात है कि-उनमे का कोई एक चोरने किसी गाममे जाकर राज-भवनमे चोरी की, इतनेमे उनके पीछे २ राजपुरुष आये। उन राजपुरु-षोंने कुम्भकारको सज्जन जानकर बाहर निकाल दिया और उस समस्त ग्रामको सबके घरों के दरवाजे बद करके और उनमे उन चोरों को भीतर करके जला दिया। उस पाप से वे सब के सब साठ (६०) हजार अनार्य अग्नि मे भस्मसात हो गये। मर कर फिर ये सब के सब विराटदेशमे अन्तिनामक ग्राम मे कोद्रवधान्य की पर्याय से उत्पन्न हुए। कोद्रवधान्यरूप से पूंजीभूत हुए उन अनार्य जीवोंको किसी हाथीने

काओ खेचीने बाळी नाखी केटलाकनी वस्त्रपात्रादिक उपधीने बाळी नाखी ए गाममा एक सुशील कुभार पण रहेतो हतो. तेणे मुनियो तरफ आचरवामा आवतो अनार्यो तरफनो आवो व्यवहार जोयो त्यारे सघळाने समजावी बुझावीने शात कर्या अने साधुओनी रक्षा करी आ समये एमणे ए सबधी कर्म बध कर्यो एक दिवसनी वात छे के तेओमाना कोई एक चोरे कोई गाममा जईने राज भवनमा चोरी करी राजाना माणसोए चोरनो पीछो पकड्यो ए गामे राजना सनिको पहोची गया गाममा एक कुभारने साधुपुरुष समजीने तेने गाममाथी बहार काढीने पछीथी ए गामना सघळा घरोना दरवाजा बध करी दईने ए चोरोनी साथे सघळा गामने बाळी मूक्यु आथी ए सघळा साठ हजार (६००००) अनार्यो अग्निमा भस्मीभूत थई गया मरीने ए सघळा विराट देशमा अतिम गाममा कोद्रव धान्यनी पर्यायमा उत्पन्न थया कोद्रव धान्य रूपथी पूजीभूत थयेल ए

दुःखप्रचुरासु योनिषु परिभ्रम्यानन्तरभवे किंचित्पुण्यमुपार्जितवान्। तत्पुण्यप्रभावेण षष्टिसहस्रसगरचक्रवर्त्तिसुतत्वेनोत्पन्नाः। अवशिष्टदुष्कर कर्मफलेन नागक्रोधाग्नौ भस्मीभूताः। सोऽपि कुम्भकारः साधुरक्षणपुण्यप्रभावेण स्वायुःक्षये मरणं सम्प्राप्य कस्मिंश्चित्सन्निवेशे धनधान्यादि समृद्धे वणिक्कुले समुत्पन्नः। तत्र दानादि सुकृतं निरन्तरं कुर्वन् साधून् सेवमानो धार्मिकवृत्त्या स्थितः। ततः कालधर्ममुपागत्य स कस्यापि नरपतेः पुत्रो भूत्वा समुत्पन्नः। तत्र प्रतिपन्नराज्यभारः स शुभानुबन्धेन शुभकर्मोदयेन राज्यं परित्यज्य दीक्षा

अपने पैरों तले मसल डाला। उस पर्याय से च्युत होकर फिर ये दुःख प्रचुर नाना प्रकारकी योनियों मे परिभ्रमण करते रहे। अनन्तर भव में इन्होंने कुछ पुण्य का संचय किया। उसके प्रभाव से ये सगर-चक्रवर्तीके यहां पुत्ररूप से उत्पन्न हो गये। परतु दुष्कर्म इनके उदय मे अवशिष्ट था सो ये उसके प्रभाव से ही नागराजने भेजे हुए नागोंकी क्रोधरूपी अग्नि में इस तरह प्रज्वलित हुए है। वह कुम्भारकी जिसने पहिले उन अनार्योंको साधुओं पर उपद्रव नही करनेके लिये सम-झाया था उस पुण्य बंध से अपनी आयु के क्षय होने पर मरकर किसी नगर में धनधान्यादि से समृद्ध वणिक्कुल मे उत्पन्न हुआ। वहा उसने दानादिक द्वारा सुकृतका खूब संचय किया, साधुओं की अच्छी सेवा की, इस प्रकार धार्मिक वृत्ति से अपना समय निकाला। पश्चात् मरकर वह फिर किसी राजाके वहां पुत्ररूप से उत्पन्न हो गया। वहा इसने अच्छी तरह से राजकाज संभाला। शुभानुबंध वाले शुभकर्म के उदय से

અનાર્ય જીવોને કોઇ-હાથીએ પોતાના પગ તળે મસળી નાખ્યા એ પર્યાયથી ચ્યુત થઇને પછીથી તેઓ નાના પ્રકારના દુખો ભોગવતા અનેક યોનીઓમા પરિભ્રમણ કરતા રહ્યા અનન્તર ભવમા એમણે કાંઇક પુણ્યનો સંચય કર્યો એના પ્રભાવથી તેઓ સગર ચક્રવર્તીને ત્યા પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયા પરંતુ દુષ્કર્મ એમના ઉદયમા અવશિષ્ટ હતા જેથી કરીને પ્રભાવથી જ નાગોના ક્રોધ રૂપી અગ્નિમા આ રીતે પ્રજ્વલિત બન્યા છે એ કુંભાર કે જેણે પહેલા એ અનાર્યોને સાધુઓ ઉપર ત્રાસ ન ગુજારવા સમજાવેલ એ પુણ્યબંધથી પોતાનુ આયુષ્ય પૂરૂ થતા મરીને કોઈ નગરમા ધનધાન્યાદિક સમૃદ્ધ વણિક કુળમા ઉત્પન્ન થયો ત્યા તેણે દાનાદિક દ્વારા સુકૃત્યનો ખૂબ સંચય કર્યો, સાધુઓની સારી રીતે સેવા કરી અને એ રીતે ધાર્મિક વૃત્તિથી પોતાનો સમય કાઢયો એ પછી ત્યાથી મરીને તે કોઇ રાજાને ત્યા પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયો, ત્યા તેણે સારી રીતે રાજકાર્ય સંભાળ્યુ શુભાનુબંધવાળા શુભ કર્મોના ઉદયથી તે રાજકુમારે પછીથી રાજ્યનો પરિત્યાગ કરી દીક્ષા

वस्त्रपात्राद्युपधिः प्रज्वालितः। पर तद्ग्रामनिवासिना केनापि कुम्भकारेण निवारितास्ते साधूँस्त्यक्तवन्त। तत्समये तै सर्वैस्तत्प्रत्ययिक निकाचितकर्मबद्धम्। एकदा तत्रत्य एकश्चौरोऽन्यत्रग्रामे राजभवने चौर्यं कृत्वा तत्रागतवान। राजा नियुक्त राजपुरुषैः साधुतया प्रसिद्ध कुम्भकारम् बहिर्निष्काश्य द्वारपिधानपूर्वक स ग्राम' प्रज्वालित तत्पापेन ते षष्टिसहस्रसख्यका अनार्या अग्नौ भस्मीभूता.। उत्पन्नाश्च विराटविषये अन्तिमग्रामे कोद्रवधान्यत्वेन (पुञ्जीभूतान कोद्रवधान्य रूपाननार्यजीवान कश्चित्करी स्वचरणेन मर्दितवान। ततोमृतास्ते नानाविधासु

ओंको मुख पर ले खींचकर जला दी, कितनोंकी वस्त्र पात्रादिक उपधि जला दी। उस ग्राम मे एक कुभार भी रहता था। जब उसने इन अनार्योका ऐसा व्यवहार मुनियो के प्रति होते देखा तो उसने उन सब को समझा बुझाकर शात किया, और साधुओं की रक्षा की। उस समय उन्होंने तत्सम्बन्धी कर्मों का बध किया। एक दिन की बात है कि—उनमें का कोई एक चोरने किसी गाममे जाकर राजभवनमे चोरी की, इतनेमे उनके पीछे २ राजपुरुष आये। उन राजपुरुषोंने १ भकारको सज्जन जानकर बाहर निकाल दिया और उस समस्त ग्रामको सबके घरों के दरवाजे बद करके और उनमें उन चोरो को भीतर करके जला दिया। उस पाप से वे सब के सब साठ (६०) हजार अनार्य अग्नि मे भस्मसात हो गये। मर कर फिर ये सब के सब विराटदेशमे अन्तिनामक ग्राम मे कोद्रवधान्य की पर्याय से उत्पन्न हुए। कोद्रवधान्यरूप से पूजीभूत हुए उन अनार्य जीवोंको किसी हाथीने

काओ ખેચીને બાળી નાખી કેટલાકની વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપધીને બાળી નાખી એ ગામમા એક સુશીલ કુભાર પણ રહેતો હતો તેણે મુનિયો તરફ આચરવામા આવતો અનાર્યો તરફનો આવો વ્યવહાર જોયો ત્યારે સઘળાને સમજાવી બુઝાવીને શાત કર્યા અને સાધુઓની રક્ષા કરી આ સમયે એમણે એ સબધી કર્મ બધ કર્યો એક દિવસની વાત છે કે તેઓમાના કોઈ એક ચોરે કોઈ ગામમા જઈને રાજ ભવનમા ચોરી કરી રાજાના માણસોએ ચોરનો પીછો પકડયો એ ગામે રાજના સનિકો પહોચી ગયા ગામમા એક કુભારને સાધુપુરુષ સમજીને તેને ગામમાથી બહાર કાઢીને પછીથી એ ગામના સઘળા ઘરોના દરવાજા બધ કરી દઈને એ ચોરોની સાથે બધા ગામને બાળી મૂક્યુ આથી એ સઘળા સાઠ હજાર (૬૦૦૦૦) અનાર્યો અગ્નિમા ભસ્મીભૂત થઈ ગયા મરીને એ સઘળા વિરાટ દેશમા અતિમ ગ્રામમા કોદ્રવ ધાન્યની પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયા કોદ્રવ ધાન્ય રૂપથી પૂજીભૂત થયેલ એ

दुःखप्रचुरासु योनिषु परिभ्रम्यानन्तरभवे किंचित्पुण्यमुपार्जितवान्। तत्पुण्य प्रभावेण षष्टिसहस्रसंख्यकास्ते सगरचक्रवर्तिसुततयोत्पन्नाः। अवशिष्टदुष्कर कर्मफलेन नागक्रोधाग्ना भस्मीभूताः। सोऽपि कुम्भकारः स्वकृतपुण्यप्रभावेण स्वायुः क्षये मरणं सम्प्राप्य कस्मिंश्चित्सन्निवेशे धनधान्यादिसमृद्धे वणिक्कुले समुत्पन्नः। तत्र दानादि सुकृतं निरन्तरं कुर्वन् साधून् सेवमानो धार्मिकतया स्थितः। ततः कालधर्ममुपागत्य स कस्यापि नरपतेः पुत्रो भूत्वा समुत्पन्नः। तत्र प्रतिपन्नराज्यभारः स शुभानुबन्धेन शुभकर्मोदयेन राज्यं परित्यज्य दीक्षा

अपने पैरो तले मसल डाला। उस पर्याय से च्युत होकर फिर ये दुःख प्रचुर नाना प्रकारकी योनियों मे परिभ्रमण करते रहे। अनन्तर भव में इन्होंने कुछ पुण्य का सचय किया। उसके प्रभाव से ये सगर-चक्रवर्तीके यहा पुत्ररूप से उत्पन्न हो गये। परतु दुष्कर्म इनके उदय मे अवशिष्ट था सो ये उसके प्रभाव से ही नागराजने भेजे हुए नागोकी क्रोधरूपी अग्नि में इस तरह प्रज्वलित हुए है। वह कुम्भारकी जिसने पहिले उन अनार्योंको साधुओं पर उपद्रव नही करनेके लिये समझाया था उस पुण्य बध से अपनी आयु के क्षय होने पर मरकर किसी नगर मे धनधान्यादि से समृद्ध वणिक्कुल मे उत्पन्न हुआ। वहा उसने दानादिक द्वारा सुकृतका खूब सचय किया, साधुओ की अच्छी सेवा की, इस प्रकार धार्मिक वृत्ति से अपना समय निकाला। पश्चात् मरकर वह फिर किसी राजाके वहा पुत्ररूप से उत्पन्न हो गया। वहां इसने अच्छी तरह से राजकाज सभाला। शुभानुबध वाले शुभकर्म के उदय से

અનાર્ય જીવોને કોઇ હાથીએ પોતાના પગ તળે મસળી નાખ્યા એ પર્યાયથી ચ્યુત થઇને પછીથી તેઓ નાના પ્રકારના દુઃખો ભોગવતા અનેક યોનીઓમા પરિભ્રમણ કરતા રહ્યા અનન્તર ભવમા એમણે કાંઇક પુણ્યનો સચય કર્યો એના પ્રભાવથી તેઓ સગર ચક્રવર્તીને ત્યા પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયા પરતુ દુષ્કર્મ એમના ઉદયમા અવશિષ્ટ હતા જેથી કરીને પ્રભાવથી જ નાગોના ક્રોધ રૂપી અગ્નિમા આ રીતે પ્રજ્વલિત બન્યા છે એ કુભાર કે જેણે પહેલા એ અનાર્યોને સાધુઓ ઉપર ત્રાસ ન ગુજારવા સમજાવેલ એ પુણ્યબધથી પોતાનુ આયુષ્ય પૂરૂ થતા મરીને કોઈ નગરમા ધનધાન્યાદિક સમૃદ્ધ વણિક કુળમા ઉત્પન્ન થયો ત્યા તેણે દાનાદિક દ્વારા સુકૃત્યનો ખૂબ સચય કર્યો, સાધુઓની સારી રીતે સેવા કરી અને એ રીતે ધાર્મિક વૃત્તિથી પોતાનો સમય કાઢયો એ પછી ત્યાથી મરીને તે કોઇ રાજાને ત્યા પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયો, ત્યા તેણે સારી રીતે રાજકાર્ય સભાળ્યુ શુભાનુબધવાળા શુભ કર્મોના ઉદયથી તે રાજકુમારે પછીથી રાજ્યનો પરિત્યાગ કરી દીક્ષા

गृहीत्वा शुद्धं चारित्रं परिपालयन् स्वायुः समाप्य सुरलोकं गतः । ततश्च्युतः स जह्नुसुतो भूत्वा समुत्पन्नः। हे राजन्! स एवासि त्वम्। भगीरथोऽपि मुनिवचनमाकर्ण्य संजातश्रद्धः श्रावकधर्ममङ्गीकृत्य स्वपुरीं जगाम ॥३५॥

॥ इति सगरचक्रवर्तिकथालेशः ॥

तथा—

मूलम्—चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महिड्ढीओ ।

पव्वज्जमब्भुवगओ, मघवं नाम महाजसो ॥३६॥

छाया—त्यक्त्वा भारतं वर्षं, चक्रवर्ती महर्द्धिकः ।

प्रव्रज्यामभ्युपगतः, मघवा नाम महायशाः ॥३६॥

टीका—'चइत्ता' इत्यादि ।

महायशाः=महायशस्वी महर्द्धिकः=चतुर्दशरत्ननवनिधानयुक्तो वैक्रियलब्धियुक्तो वा मघवानाम तृतीयश्चक्रवर्ती भारतवर्षं त्यक्त्वा=षट्खण्डऋद्धिं परित्यज्य प्रव्रज्यामभ्युवगतः=दीक्षां गृहीतवान् ॥३६॥

इसने पीछे राज्यका परित्याग कर दीक्षा अंगीकार कर ली। शुद्ध चारित्रकी अच्छी तरह से पालना करते हुए इसने फिर वहां से मरकर देव पर्याय पाई। वहां से चव कर अब यह जह्नु का पुत्र भगीरथ हुआ है ! हे राजन् वह तुम ही हो। इस प्रकार मुनिराजके वचन सुनकर भगीरथ ने उनसे श्रावक धर्म स्वीकार कर लिया और शुद्ध श्रावक बनकर वह वहां से वापिस अपने नगर को लौट आया ॥३५॥

तथा—'चइत्ता' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महाजसो-महायशाः) महायशस्वी-नवनिधि एवं चौदह रत्नों के अधीश्वर अथवा वैक्रीयलब्धि से युक्त (मघवं नाम चक्कवट्टी-मघवा नाम चक्रवर्ती) मघवा नामके तृतीय चक्रवर्ती ने

અંગિકાર કરી શુદ્ધ ચારિત્રનું સારી રીતે પાલન કરીને એ ત્યાંથી મરીને દેવ પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા ત્યાંથી ચ્યવીને આજે તે યુવરાજ જહ્નુના પુત્ર ભગિરથ નામથી અવતરેલ છે. હે રાજન્! એ તમેજ છો. આ પ્રકારના મુનિરાજના વચન સાંભળીને ભગિરથે તેમની પાસે શ્રાવકધર્મનો સ્વીકાર કર્યો અને શુદ્ધ શ્રાવક બનીને એ ત્યાંથી પોતાના નગરમાં પાછા ફર્યા ॥૩૫॥

તથા—"चइत्ता" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—महाजसो-महायशा. મહાયશસ્વી નવનિધિ અને ચૌદ રત્નોના અધીશ્વર અથવા વક્રિય લબ્ધિથી मघवं नाम चक्कवट्टी-मघवा नाम चक्रवर्ती મઘવા નામના ત્રીજા ચક્રવતી'એ भारहं वासं-भारत वर्षम् ભરતક્ષેત્રના ષટ્ખંડની

मघवचक्रवर्तिनः कथा—

आसीदिह भगवतो धर्मशान्तिनाथयोरन्तरे भारते वर्षे महीमण्डलनामके पुरे नरपतिनामा नृपः। स हि स्व प्रजावत्प्रजाः परिपालयन् सम्यग्धर्मं सर्वत्र प्रसारयन् कियन्ति वर्षाणि पृथिवीं पालयामास। अन्यदा तत्पुरोद्यानसमागतस्य विश्रुतकीर्तिनाम्नः कस्यचिन्मुनेरुपदेशात्सजातसवेगः स नरपतिः नृपो राज्यं परित्यज्य दीक्षामङ्गीकृतवान्। मुनिधर्मे प्रमादरहितः स विशुद्धं चारित्रं परि-

(भारहं वास–भारतं वर्षम्) भरतक्षेत्र के षट्खंड की ऋद्धिका (चइत्ता–त्यक्त्वा) त्यागकर (पव्वज्जमब्भुवगओ–प्रव्रज्या अभ्युपगतः) संयम लिया।

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र में धर्मनाथ एव शान्तिनाथ भगवान् के अन्तर में महीमण्डल नामके पुर मे नरपति नामका एक सुप्रसिद्ध राजा था यह अपनी सन्तति के समान प्रजा की अच्छी तरह पालन पोषण करने में लगा रहा था। 'सम्यग्धर्म की छत्रछाया मे रह कर जनता अपना हितकरे' इस विचार से यह उसके प्रचार के साधनों मे कमी नही रखता था। धर्मका प्रचार करना एव प्रजा का अच्छी तरह पालन करना, इन दो कार्यों में इनका समय का अधिक से अधिक भाग व्यतीत होता था। इस प्रकार पृथ्वी का शासन करते २ कितनेक वर्ष निकल गये। एक समय उस पुर के उद्यान मे विश्रुतकीर्ति नामके मुनिराज पधारे। राजा धर्मश्रवण के लिये उनके समीप वहा गया। वहा उनके श्रीमुख से सम्यग्धर्म का उपदेश सुनकर राजा का वैराग्यभाव जग

રિદ્ધિનો चइत्ता–त्यक्त्वा ત્યાગ કરી पव्वज्जमब्भुवगओ–प्रव्रज्यामभ्युपगतः સયમને ધારણ કરેલ એમની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભરતક્ષેત્રમા ધર્મનાથ અને શાતિનાથ ભગવાનના સમય કાળમા મહીમ ડળ નામના નગરના નરપતિ નામના એક સુપ્રસિદ્ધ રાજા હતા તે રાજા પ્રજાનુ પાલન પોતાની સતતિની માફક કરતા હતા "સમ્યગ્ધર્મની છત્રછાયામા રહીને લોકો પોતાનુ હિત કરે" આવા વિચારથી એ તેના પ્રચારના સાધનોમા કદી પણ કમીપણુ આવવા દેતા નહીં ધર્મનો પ્રચાર કરવો અને પ્રજાનુ સારી રીતે પાલન કરવુ આ બન્ને કાર્યોમા એમના સમયનો વધુમા વધુ ભાગ વ્યતીત થતો હતો આ પ્રમાણે શાસન કરતા કરતા કેટલાક વર્ષો વીતી ગયા એક સમય એ નગરના ઉદ્યાનમા વિશ્રુત કીર્તિ નામના મુનિરાજ આવેલા રાજા ધર્મશ્રવણ માટે એમની પાસે ગયા અને ત્યા મુનિરાજના શ્રીમુખથી સમ્યગ્ધર્મનો ઉપદેશ સાભળી રાજાને વૈરાગ્યભાવ

पाल्य कालमासे कालं कृत्वा म यग्रैवेयके अहमिन्द्रोऽभवत् । स देवस्ततश्च्युतो भरतक्षेत्रस्य श्रावस्त्या नगर्यां राज्ञः समुद्रविजयस्य दृष्टचतुर्दशस्वप्नाया भद्रा भार्यायाः कुक्षौ समुत्पन्नः । दृष्टचतुर्दशस्वप्ना राज्ञी भद्रा स्वप्नवृत्तान्तं पतिसमीपे निवेदितवती । राजा प्राह-तव गर्भे चक्रवर्ती समवतीर्णः । नूनं महाभाग्यशालिनी त्वमसि । पतिवचनं निशम्य राज्ञी भद्रा प्रहृष्टा जाता । क्रमेण पुत्रं जनितवती । पितृभ्यां 'मघवा' इति नामकृतम् । स शुक्लपक्षचन्द्रवत् प्रवर्द्धमानः

उठा । शीघ्र ही उन्होंने राज्यका परित्याग कर जैनदीक्षा धारण की। मुनिधर्म मे प्रमाद रहित होकर राजाने विशुद्धचरित्र का अच्छी तरह परिपालन किया। चारित्र पालते २ ही मृत्यु के अवसर मे मर कर ये मध्यम ग्रैवेयक मे अहमिन्द्र हुए। वहांकी भवस्थिति समाप्त कर ये वहा से चव कर भरतक्षेत्रकी श्रावस्ती नगरी में राजा समुद्रविजयकी रानी भद्राकी कुक्षि मे पुत्ररूप से अवतरित हुए। इनके आनेके समय रानीने चौदह स्वप्नों को देखा था। इन दृष्टस्वप्नों को इनका क्या फल हैं यह जानने के लिये रानी सुभद्राने अपने पति से कहा-तब उन्होंने प्रत्युत्तर रूप मे रानी से यह कहा कि-देवि ! तुम्हारे गर्भ मे चक्रवर्ती का आगमन हो चुका है इसी बातकी सूचना इन स्वप्नों से मिलती है। चक्रवर्ती जैसे पुत्र के उत्पन्न करने से निश्चय से तुम बडी ही भाग्यशालिनी हो। इस प्रकार दृष्टस्वप्नो के फलसूचक पतिदेवके वचनो को सुनकर रानी बहुत ही हर्षितचित्त हुइ। क्रमश गर्भ बढने लगा। जब ठीक नौमास साढेसातदिन का समय पूर्ण हो चुका तब रानीने

જાગૃત થયો. આથી તેણે રાજ્યનો પરિત્યાગ કરી વૈરાગ્ય ભાવે સંયમ ધારણ કર્યો. મુનિધર્મમાં પ્રમાદ રહિત થઈને રાજાએ વિશુદ્ધ ચારિત્રનું સારી રીતે પાલન કર્યું ચારિત્રને પાળતાં પાળતાં કાલના અવસરે કાલ કરીને તે મધ્યમ ગ્રૈવેયકમાં અહમિંદ્ર થયા. ત્યાંની ભવસ્થિતિ સમાપ્ત કરીને ત્યાંથી ચ્યવીને ભારતક્ષેત્રની શ્રાવસ્તી નગરીમાં રાજા સમુદ્રવિજયની ભદ્રા નામની રાણીની કૂખે પુત્રરૂપે અવતર્યા. એમના આગમન સમયે રાણીએ ચૌદ સ્વપ્ન જોયાં. પોતે જોયેલાં એ સ્વપ્નોનું શું ફળ છે એ જાણવા માટે રાણી ભદ્રાએ પોતાના પતિને કહ્યું ત્યારે તેના પ્રત્યુત્તરમાં રાજાએ રાણીને કહ્યું કે, દેવિ ! તમારા ગર્ભથી ઉત્પન્ન થનાર બાળક ચક્રવર્તી બનશે આ વાતની સૂચના આ સ્વપ્નાઓથી મળે છે. ચક્રવર્તી જેવા પુત્રની માતા બનનાર તું ખૂબજ ભાગ્યશાળી છો. આ પ્રમાણે જોયેલાં સ્વપ્નોનું ફળ પોતાના પતિ પાસેથી જાણીને રાણી ખૂબજ હર્ષિત બની. પુરા નવ માસ અને સાડાસાત દિવસનો સમય પૂર્ણ થયો ત્યારે રાણીએ પુત્રરત્નને જન્મ આપ્યો. માતાપિતાને

क्रमेण यौवन प्राप्तवान्। राज्यधुराधरणक्षम पुत्र विलोक्य समुद्रविजयस्तस्मिन राज्यभारमारोप्य स्वय परलोकहितकरीं क्रिर्ति कुर्वाण समाहितचित्त' क्रमेण स्वकल्याण साधयामास। पित्राऽर्पितराज्यभारो मघवा समुत्पन्नचतुर्दशरत्नै षट्खण्ड भरतक्षत्र प्रसाध्य चक्रवर्ती भूत्वा चिरकाल चक्रिश्रिय परिभुज्य धर्मघोष मुनेः सदुपदेशात्सजातवैराग्य. प्रव्रज्या गृहीतवान। प्रव्रज्यानन्तर मघवामुनि

पुत्ररत्न को जन्म दिया। माता पिता को बडा आनन्द हुआ। उसका नाम उन्होंने मघवा रक्खा। शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की तरह मघवा के शरीरकी वृद्धि होने लगी। जब वह यौवन अवस्था में आये, तब समुद्रविजय राज्यका भार इनको सौंपकर स्वय परलोक मे हितविधायक-कार्यों की आराधना करने मे सावधान बन गये। इस प्रकार समाहित चित्त बनकर समुद्रविजय ने आत्मकल्याण के मार्गकी साधना करते हुए अपना जीवनका समय व्यतीत किया। मघवा राजा ने भी पिता द्वारा प्रदत्त राज्यका अच्छी तरह पालन करते हुए उसका सचालन बडी ही योग्यता के साथ करना प्रारभ किया। क्रमश' कालान्तर में इनको चक्रवर्ती पदके सूचक नवनिधि एव चौदह रत्नों की प्राप्ति हुई। इन्होंने षट्खड मडित भरतक्षेत्र को विजितकर उसमें अपना एक छत्रराज्य स्थापित किया। इस प्रकार चक्रवर्ती के वैभव का उपभोग करते हुए इनका बहुत समय निकल गया। एक समय वहा धर्मघोष नामके मुनिराज आये। उनसे श्रुतचारित्ररूप धर्मका उपदेश सुनकर चक्रवर्ती को ससार से वैराग्य हो गया। शीघ्र ही

घणो આનંદ થયો એનુ નામ તેમણે મઘવા રાખ્યુ શુક્લપક્ષના ચદ્રમાની માફક મઘવાના શરીરની વૃદ્ધિ થવા લાગી જ્યારે તે યુવાવસ્થામા પહોચ્યો ત્યારે સમુદ્ર વિજયે રાજ્યને। ભાર તેને સોપી દઇ પોતે પરલોકના હિતાવધાયક કાર્યોની આરાધના કરવામા સાવધાન બની ગયા આ પ્રમાણે સમાહિત ચિત્ત બનીને સમુદ્રવિજયે આત્મ કલ્યાણના માર્ગની સાધના કરતા કરતા પોતાના જીવનનો સમય પુરો કર્યો મઘવા રાજાએ પણ પિતાએ સોપેલા રાજ્યની સારી રીતે દેખભાળ કરવા ઉપરાંત પ્રજાને સપૂર્ણપણે સતોષવાનુ કાર્ય કર્યું સમય વિતતા તેને ચક્રવર્તી પદના સૂચક ચૌદ રત્નોની પ્રાપ્તિ થઇ તેણે છ ખડથી ભરેલા ભરતક્ષેત્રમા સર્વત્ર વિજય કરી પોતાનુ એક છત્ર રાજ્ય સ્થાપ્યુ આ રીતે ચક્રવર્તીપદની પ્રાપ્તિ અને તેના વૈભવનો ઉપભોગ કરતા તેનો ઘણો સમય વીત્યો એક વખત ત્યા ધર્મઘોષ નામના મુનિરાજનુ આગમન થતા એમની પાસેથી શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનો ઉપદેશ સાભળીને સ સારથી વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થતા

श्रुतचारित्रधर्मं सम्यक् परिपाल्य तृतीयदेवलोके गतः। ततश्च्युतो महाविदेहे केवली भूत्वा सिद्धिगतिं गमिष्यति। मघवचक्रवर्तिनः सर्वमायुः पञ्चलक्षवर्षाणि।

॥ इति मघवचक्रवर्तीकथा ॥

तथा—

मूलम्—सणंकुमारो मणुस्सिदो, चक्कवट्टी महिड्डिओ।
पुत्तं रज्जे ठवित्ताणं, सो वि राया तवं चरे ॥३७॥

छाया—सनत्कुमारो मनुष्येन्द्रः, चक्रवर्ती महर्द्धिकः।
पुत्रं राज्ये स्थापयित्वा खलु, सोऽपि राजा तपोऽचरत् ॥३७॥

टीका—'सणकुमारो' इत्यादि।

स प्रसिद्धो महर्द्धिको मनुष्येन्द्रश्चतुर्थश्चक्रवर्ती राजा सनत्कुमारोऽपि पुत्रं राज्ये स्थापयित्वा तपः=चारित्रम् अचरत्=समाराधितवान् ॥३७॥

उन्होंने राज्यका परित्याग कर उन्ही के समीप जिनदीक्षा धारण की। धर्मका परिपालन अच्छी तरह करके फिर वे चक्रवर्ती तृतीय देवलोक मे गये। वहा से चवकर महाविदेह मे केवली होकर सिद्धि पदको प्राप्त करेगे। इनकी आयु पाच लाख वर्षकी थी ॥३६॥

फिर भी—'सणकुमारो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सो–स ड स प्रसिद्ध (महिड्डिओ–महर्द्धिक) महाऋद्धि सपन्न (मणुस्सिदो–मनुष्येन्द्रः) मनुष्यों मे इन्द्र जैसे चतुर्थ (चक्कवट्टी–चक्रवर्ती) चक्रवर्ती (सणकुमारो –सनत्कुमार अपि) सनत्कुमार ने भी (पुत्त रज्जे ठवित्ताण–पुत्र राज्ये स्थापयित्वा) अपने पुत्रको राज्य मे स्थापित करके (तव चरे–तप अचरत्) चारित्र की आराधना की।

તેણે તુરતજ રાજ્યને પરિત્યાગ કરી તેમની પાસેથી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી ધર્મનુ સારી રીતે પરિપાલન કરીને તે ચક્રવર્તી મરીને ત્રીજા દેવલોકમા ગયા અને ત્યાનુ આયુષ્ય પુરૂ કરી ત્યાથી ચ્યવીને મહાવિદેહમા કેવળી થઈને સિદ્ધિપદને પ્રાપ્ત કર્યું એમનુ આયુષ્ય પાચ લાખ વર્ષનુ હતુ ॥૩૬॥

પછી પણ—"सणकुमारो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—सो–स એ પ્રસિદ્ધ महिड्डिओ–महर्द्धिक મહા રિદ્ધિ સપન્ન मणुस्सिदो–मनुष्येन्द्र મનુષ્યોમા ઇન્દ્ર જેવા ચોથા चक्कवट्टी–चक्रवर्ती ચક્રવતી सणकुमारोऽवि–सनत्कुमारोऽपि સનત્કુમારે પણ पुत्त रज्जे ठवित्ताण–पुत्र राज्ये स्थापयित्वा પોતાના પુત્રને રાજ્યશાસનની ધુરા સોપી દઈ तव चरे–तप अचरत् ચારિત્રની આરાધના કરી

अथ सनत्कुमारचक्रवर्तीकथा—

अत्र भारते वर्षे कुरुजाङ्गलदेशे हस्तिनापुरे धर्मशान्तिजिनयोरन्तरेऽश्वसेना ख्यस्य भूपतेर्दृष्ट चतुर्दशस्वप्नाया सहदेवीनामभार्यायाः कुक्षौ चतुर्थश्चक्रवर्ती समुत्पन्न । पूर्णे काले राज्ञी जगज्जनमनोहर सर्वलक्षणलक्षित कुमार जनितवती। राजा महता समुत्सवेन तस्य कुमारस्य सनत्कुमार इति नाम कृतम्। स हि उद्गत कल्पवृक्ष इव क्रमेण ववृधे। तस्मिन नगरे सूरनामा क्षत्रिय आसीत्। तत्पत्नी कालिन्दी नाम। तत्पुत्रो महेन्द्रसिंह । स हि सनत्कुमारस्य मित्र-

सनत्कुमार चक्रवर्तीकी कथा—

भारतवर्ष मे कुरुजागल नामका एक देश ह। उसमे हस्तिनापुर नामका एक नगर है। इसमें धर्मनाथ और कुंथुनाथ हुए हैं। इनके अन्तराल के समय में वहा अश्वसेन राजाका शासन था। उनकी रानी का नाम सहदेवी था। इसकी कुक्षि से ही सनत्कुमार चक्रवर्ती का जन्म हुआ है। जब ये सहदेवी की कुक्षि में अवतरित हुए थे, तब उसने चौदह स्वप्न देखे थे। रानीने जब सर्वलक्षण लक्षित इस जगतमनोहर पुत्रको जन्म दिया था, उस समय राजा ने इसके जन्म का बडा भारी उत्सव किया था। और नाम इसका सनत्कुमार रखा था। जिस प्रकार उगा हुआ कल्पवृक्ष क्रमशः खूबवढता है उसी प्रकार सनत्कुमार भी दिन प्रतिदिन क्रमशः बढने लगे। सूर नामका एक दूसरा क्षत्रिय हस्तिनापुर में रहता था। कालिन्दी नामकी इसकी स्त्रीथी। इस से सूर को एक पुत्र की प्राप्ति हुई थी, उसका नाम महेन्द्रसिंह था।

સનત્કુમાર ચક્રવતીની કથા—

ભારતવર્ષમા કુરૂજાગલ નામનો એક દેશ છે, એમા હસ્તિનાપુર નામના નગરમા ધર્મનાથ અને કુંથુનાથ પ્રભુ થયા હતા એમના અંતરાળના સમયમા ત્યા અશ્વસેન રાજાનુ શાસન હતુ એમની રાણીનુ નામ સહદેવી હતુ સહદેવીની કૂખે સનત્કુમાર ચક્રવર્તીનો જન્મ થયો હતો જ્યારે સનત્કુમાર ગર્ભાવાસમા હતા ત્યારે સહદેવીને ચૌદ સ્વપ્ન આવેલ હતા રાણીએ જ્યારે સઘળા લક્ષણથી યુક્ત એવા પુત્રને જન્મ આપ્યો ત્યારે રાજાએ તેના જન્મનો ભારે ઠાઠમાઠથી ઉત્સવ મનાવ્યો હતો અને એનુ નામ સનત્કુમાર રાખ્યુ જે પ્રમાણે ઉગેલુ કલ્પવૃક્ષ ક્રમશ ખૂબ વધે છે આ પ્રમાણે સનત્કુમાર પણ દિનપ્રતિદિન ક્રમશ વધવા માંડ્યા સૂર નામનો એક બીજો ક્ષત્રિય પણ હસ્તનાપુરમા રહેતો હતો તેને કાલિન્દી નામની સ્ત્રી હતી જેનાથી સૂરને એક પુત્રની પ્રાપ્તિ થયેલ હતી, જેનુ નામ મહેન્દ્રસિંહ હતુ તે

मासीत्। तेन सह सनत्कुमारः कलाचार्यसन्निधौ सकलामपि कलां लील्या गृहीतवान्। क्रमेण कुमारस्तारुण्यं प्राप्तः।

अन्यदा वसन्तसमये सनत्कुमारः स्वमित्रेण महेन्द्रसिंहेनान्यैश्च राजकुमारैः सह मकरन्दाख्यमुद्यानं क्रीडार्थं गतवान्। तत्र स राजकुमारो मित्रैः सह नानाविधाः क्रीडाः कृतवान्। तत्राश्वक्रीडां कर्तुं सर्वे कुमारा अश्वारूढाः स्वं स्वमश्वं खेलयन्ति। सनत्कुमारोऽपि जलधिकल्लोलनामकमश्वमारूढः। ततोऽसौ वायुवेगेनधावितुं प्रवृत्तः। सनत्कुमारो वल्गामाकृष्य तुरगं स्तोभयितुं यथा यथा प्रयतते, तथा तथा स तुरगः प्रधावति।

यह सनत्कुमार का मित्र था। मित्रके साथ २ ही सनत्कुमारने कलाचार्य के पास सकल कलाओं का अभ्यास किया। फिर वे कुमार युवान हो गये।

एक समयकी बात है कि वसन्त के समय सनत्कुमार अपने मित्र महेन्द्रसिंह एवं अन्य राजकुमारों के साथ क्रीडा करने के लिये मकरन्द नामके उद्यान मे गये हुए थे। मित्र के साथ उन्होंने विविध प्रकारकी वहां क्रीडाएँ की। उन मे एक अश्वक्रीडा भी थी। सब साथ के राजकुमारोने अपने २ घोडों पर चढकर घोडो को नचाना प्रारंभ किया। सनत्कुमार भी जलधिकल्लोल नामक घोडे पर उसी समय चढा। सनत्कुमार के सवार होते ही घोडा पवनवेग से चला। जब सनत्कुमारने घोडेकी वायुके वेगके समान चाल देखी तो उसको थांभने के लिये उसने उसकी जैसे २ लगाम खेंचनी प्रारंभ की कि तैसे २ वह घोडा भी अधिकाधिक वेग से आगे २ बढने लगा। इस

જે સનત્કુમારનો મિત્ર હતો મિત્રની સાથે સનત્કુમારે કળાચાર્યની પાસે સકળ કળાઓનો અભ્યાસ કર્યો અને યુવાવસ્થાએ પહોંચ્યા

એક સમયની વાત છે કે, વસંતઋતુના સમયે સનત્કુમાર પોતાના મિત્ર મહેન્દ્ર સિંહની સાથે તથા અન્ય રાજકુમારોની સાથે વિવિધ પ્રકારની ક્રીડા કરવા માટે મકરન્દ નામના ઉદ્યાનમાં ગયા હતા મિત્રની સાથે તેણે એ ઉદ્યાનમાં વિવિધ પ્રકારની ક્રીડાઓ કરી સાથેના રાજકુમારોએ પણ પોતપોતાના ઘોડાઓ ઉપર ચઢીને ઘોડાઓને નચાવવાનું શરૂ કર્યું સનત્કુમાર પણ જલધિકલ્લોલ નામના ઘોડા ઉપર સ્વાર થયેલ હતા ઘોડો પવનવેગથી દોડવા માંડયો સનત્કુમારે ઘોડાની વાયુવેગથી ચાલવાની ચાલ જોઈને તેને રોકવા માટે લગામ ખેંચી લગામ ખેંચતા ઘોડો વધુ વેગથી દોડવા લાગ્યો આ પ્રકાર તેજીથી દોડતા ઘોડાને કારણે રાજકુમારના જે સાથીઓ હતા તે સઘળા પાછળ રહી ગયા અને ઘોડો સનત્કુમારને લઈને એટલી

सनत्कुमारानुयायिनोऽश्वारूढा। सर्वे कुमाराः पृष्ठतः स्थिताः। स तुरगः सनत्कुमारमादायादृश्यतां गतः। ज्ञातवृत्तान्तो राजाश्वसेनः कुमारमन्वेषयितुं तत्तुरगपदचिह्नमनुसृत्य गन्तुं प्रवृत्तः। अस्मिन्नवसरे प्रचण्डो वायुर्वातुं प्रवृत्तः। तुरगपदचिह्नानि वायुनाऽपनीतानि। निरुपायो भूत्वा तत्पिताऽश्वसेनः सपरिवारः प्रत्यावृत्तः। अस्मिन्नवसरे महेन्द्रसिंहोऽश्वसेनभूपतिं प्रणिपातपुरस्सरं प्राह—देव ! दैवादिदं सर्वमनिष्टमापतितम्। तथाप्यहं मित्रमन्विष्य तेन सहैव भवच्चरणे समागमिष्यामि। इत्थं राजानं समाश्वास्य दृढं बलसम्पन्नं सैन्यं गृहीत्वा धीरो

तेजी मे सनत्कुमार के अनुयायी जितने भी अश्वारूढ राजकुमार थे वे सब के सब उसके पीछे रह गये। घोडा सनत्कुमार को लेकर इतनी तेजी से आगे बढा कि देखते २ वह अदृश्य हो गया। जब यह खबर अश्वसेन को मिली तो वह सनत्कुमार की खोज करनेके लिये घर से चला, पर जाया कहा जाय, इसलिये अश्वसेनने घोडेके पदचिह्नो का अनुसरण करके जाना उचित समझा। ऐसा ही किया गया, परन्तु ज्यो ही वह आगे बढने लगा कि इतने में प्रचड वायुवेगने घोडे के उन पदचिह्नो को भी मिटा दिया। निरुपाय होकर राजा अपने परिवार सहित वापिस घर पर लौट आया। अश्वसेन को वापिस घर पर लौटा हुआ देखकर महेन्द्रसिंहने बडे विनीतभाव से उनसे कहा—हे देव ! दैवदुर्विपाक से ही यह सब अनिष्ट हुआ है, तो भी मै अपने मित्र की खोज करुगा और उसको साथ लेकर ही आपके चरण मे वापिस आकर उपस्थित होऊँगा। इस प्रकार राजाको धैर्य बधाकर महेन्द्रसिंह बलिष्ट सैन्य को अपने साथ मे लेकर सनत्कुमारकी खोजके

તેજીથી આગળ વધતો ગયો, અને સાથીદારો દેખાતા પણ બંધ થઇ ગયા. જ્યારે આ ખબર અશ્વસેનને મળ્યા તો તે સનત્કુમારની શોધ કરવા માટે બહાર નીકળ્યા પરંતુ શોધ કઈ રીતે કરવી આ વિચાર મુંઝવનારો હતો. છેવટે ઘોડાના પગના ચિન્હો જોઈને તે તરફ તપાસ કરવા જવાનું ઉચિત માન્યું અને એમ જ કર્યું પરંતુ એજ સમયે ભયંકર એવો વાવંટોળ ઉઠતા ઘોડાના એ પદચિન્હો પણ ભુંસાઇ ગયા. નિરૂપાય બનીને રાજા પોતાના પરિવાર સહિત ઘેર પાછા ફર્યા. અશ્વસેનને ઘેર પાછા ફરેલા જોઈને મહેન્દ્રસિંહે ઘણાજ વિનયભાવથી તેમને કહ્યું—હે દેવ ! દૈવ દુર્વિપાકથીજ આ સઘળો અનિષ્ઠ થયેલ છે. તો પણ હું મારા મિત્રની શોધ કરીશ અને તેને સાથે લઈને આપના ચરણમાં પાછો ઉપસ્થિત થઈશ. આ પ્રકારનું રાજાને ધૈર્ય બંધાવી મહેન્દ્રસિંહ સૈન્યને પોતાની સાથે લઈ સનત્કુમારની શોધ કરવા

महेन्द्रसिंहो महारण्य मविवेश। तत्र महारण्ये सर्वे सैनिकाः कुमारमन्विष्य प्रत्यावृत्ताः। महेन्द्रसिंहस्तु सज्जितधनुर्निकुञ्जेषु पर्वतकन्दरासु गिरिनिर्झरिणी तटेषु च सनत्कुमार समन्वेषयन परिभ्रमति। ततोऽकस्माद् वन्दिवाचं श्रुतवान्।

"कुरुवंशावतंसश्री, अश्वसेननृपात्मज!।
सनत्कुमार! सौभाग्य!, जितमार! चिरंजय ॥१॥
जय अश्वसेन नभस्तल-मृगाङ्क! कुरुभवनलग्नस्तम्भ!।
जय त्रिभुवननाथ! सनत्कुमार! जय लब्धमाहात्म्य! ॥२॥

लिये घर से निकला। खोजते २ वह उसी जंगल में जा पहुंचा कि जहां से पहिले समस्त सैनिक जन कुमार की तलाश कर वापिस लौट आये थे। और उसके साथके सैनिक भी इसका साथ नहीं दे रहे थे। अपने धनुष को सज्जित करके पराक्रमि महेन्द्रसिंहने वहां के निकुंजों में, पर्वतकी कन्दराओं मे, गिरिनदियों के तटों पर अपने मित्र सनत्कुमारकी गवेषणा करनी प्रारंभ कर दी। वह जब यहां से वहां उसकीखोज में घूम फिर रहा था तो अकस्मात उसके कानों मे भनक पडी, उसने सुना—

"कुरुवंशावतंसश्री-अश्वसेननृपात्मज!।
सनत्कुमार! सौभाग्य! जितमार! चिरंजय! ॥१॥
जय अश्वसेन-नभस्तल-मृगाङ्क! कुरुभवनलग्नस्तंभ!
जय त्रिभुवननाथ! सनत्कुमार! जय लब्धमाहात्म्य ॥२॥"

हे कुरुवंश के भूषण श्री अश्वसेन राजाके सुपुत्र सनत्कुमार!

નીકળી પડયો. શોધખોળ કરતા કરતા તે એ જંગલમાં જઈ પહોંચ્યો કે, જ્યાં અગાઉ રાજકુમારની શોધ કરવા માટે સનિકો જઈ આવ્યા હતા. જંગલ ખુબજ અટપટુ હોવાથી તેની સાથેના સૈનીકોની હિંમત પણ આગળ વધવામાં ચાલતી ન હતી. છેવટે મહેન્દ્રસિંહ એકલોજ પોતાના ધનુષ્યને સુસજ્જીત કરીને આગળ વધ્યો. ભારે કષ્ટ સાથે તે ગિરીકંદરાઓમાં, ઘાડા જંગલમાં, નદીઓના તટોમાં, રખડતો રખડતો પોતાના મિત્રની શોધ કરતો હતો. જ્યારે આ પ્રમાણે રાજકુમારની શોધમાં ભટકી રહ્યો હતો ત્યારે અચાનક તેના કાનો ઉપર અવાજ અથડાયો. તેણે સાંભળ્યું —

"કુરુવંશાવસતશ્રી, અશ્વસેનનૃપાત્મજ।
સનત્કુમાર! સૌભાગ્ય! જિતમાર ચિરંજય ॥૧॥
જય અશ્વસેન-નભસ્તલ-મૃગાઙ્ક! કુરુભવનલગ્નસ્તંભ!
જય ત્રિભુવનનાથ! સનત્કુમાર! જય લબ્ધમાહાત્મ્ય ॥૨॥

હે કુરુવંશના આભૂષણ શ્રી અગ્નિસેન રાજાના સુપુત્ર સનત્કુમાર હે સૌભાગ્ય

इतिवचनं श्रुतवान्। ततो महेन्द्रसिंहो निश्चितवान्-अत्रैव सनत्कुमारोऽस्तीति। अथ प्रमुदितमना महेन्द्रसिंहोऽतित्वरया समागत्य सनत्कुमारस्य चरणयोर्निपतितः। हर्षाश्रुपूरितनयनः सनत्कुमारोऽपि महेन्द्रसिंहं समुत्थाप्य गाढमालिलिङ्ग। ततो विद्याधरानीते सुखासने तौ समुपविष्टौ। विद्याधरास्तत्समीपे समुपविष्टाः। अथ सनत्कुमारो महेन्द्रसिंहमब्रवीत्-मित्र! मम वृत्तान्तः कथं भवता ज्ञातः?।

हे सौभाग्यशाली हे जितेन्द्रिय! आपकी जय हो! हे अश्वसेनरूपी आकाशमण्डलके चन्द्र! हे कुरुवंशरूपी भवनमें लगे हुए स्तम्भ! हे त्रिभुवननाथ सनत्कुमार आपकी जय हो। हे पूर्वभवके वैरी देवको जीतकर जयलक्ष्मी को पाये हुए हे सनत्कुमार! आपकी जय हो।

इस प्रकार सनत्कुमारकी स्तुतिकारक वचनों को सुनकर महेन्द्रसिंहने निश्चित किया कि अवश्य सनत्कुमार यहीं पर है। उसको बडा हर्ष हुआ। वह शीघ्र ही प्रसन्नचित्त होकर वहां से आगे बढा। देखा सनत्कुमार बैठा है। जल्दी उसके पास पहुँचकर महेन्द्रसिंहने अपना मस्तक उनके चरणों पर रख दिया। महेन्द्र का अवलोकन करते ही सनत्कुमारके भी नयन आर्द्र हो गये। दोनो हाथों से पकडकर सनत्कुमारने अपने मित्रको उठाया और उसका गाढ आलिङ्गन किया। पश्चात् विद्याधरों के लाये हुए सिंहासन पर दोनों बैठ गये। विद्याधर भी इन्हीके पास बैठ रहे। फिर सनत्कुमारने महेन्द्रसिंह से कहा-हे मित्र! आपको यह कैसे पता पडा कि मैं यहां पर हूँ।

શાળી હે જીતેન્દ્રિય આપનો જય થાવ હે અશ્વસેન રૂપી આકાશ મણ્ડલના ચંદ્ર હે કુરૂવંશરૂપી ભવનમાં લાગેલા સ્તંભ હે ત્રિભુવનનાથ સનત્કુમાર આપનો જય થાવ હે પૂર્વભવના વૈરી દેવને જીતી તે જયલક્ષ્મીને મેળવેલા હે સનત્કુમાર આપનો જય થાવ

આ પ્રમાણે સનત્કુમારના સ્તુતિકર વચનોને સાંભળીને મહેન્દ્રસિંહે નિશ્ચય કર્યો કે, અવશ્ય સનત્કુમાર અહીંયા છે આથી તેને ઘણોજ હર્ષ થયો અને તે પ્રસન્નચિત્ત થઈને ઉતાવળે ત્યાંથી આગળ વધ્યો. જોયું તો સનત્કુમાર બેઠેલ છે. જલદીથી તેની પાસે પહોંચીને મહેન્દ્રસિંહે પોતાનું મસ્તક એના ચરણો ઉપર રાખી દીધું મહેન્દ્રને જોતાજ સનત્કુમારના નયનોમાં પણ જળબિંદુ આવી ગયાં તેને બન્ને હાથેથી પકડીને ઉભો કર્યો અને ગાઢ આલિંગન આપ્યું, પછી વિદ્યાધરોએ લાવેલા સિંહાસન ઉપર બન્ને બેઠા વિદ્યાધર પણ એમની પાસે ત્યાં બેઠા પછી સનત્કુમારે મહેન્દ્રસિંહને કહ્યું કે, હે મિત્ર! તમને એ કયાંથી ખબર પડી કે, હું અહિં આ સ્થળે છું?

अथैव पृष्टो महेन्द्रसिंहः कुमार माह-कुमार ! अश्वकृतापहरणात्मभृति स्ववृत्तान्त प्रथम निवेदय ?, महेन्द्रसिंहवचन निशम्य सनत्कुमारो वकुलमतीं स्वचरित्र कथयितुमादिश्य स्वय शयितु गत । वकुलमती च सनत्कुमारस्य सर्वं वृत्तान्त स्वविद्यावलेन कथयितु मवृत्ता । सा माह-भो महेन्द्रसिंह !-तदानीं युष्मासु पश्यत्सु तुरङ्ग आर्यपुत्रमादाय वन मविष्टः । वने मधावतोऽश्वस्यैकाहो रात्रो व्यतीतः । द्वितीय दिवसेऽपि तथैव मधावतस्तस्य म ध्याह्नकाल. समुपस्थितः । क्षुधापिपासाकुलित स्थित त तुरङ्गम दृष्ट्वा कुमारस्ततोऽवतीर्ण. । अश्वोऽपि मृत. ।

महेन्द्रसिंहने मत्युत्तरमे सनत्कुमार से कहा-कुमार । पहिले आप ही यह बतलाईये कि जब घोडा आपको हरण कर यहा तक ले आया तब कौन २ सी घटनाएँ आपके साथ घटी । महेन्द्रकी बात सुनकर सनत्कुमारने अपने पास बैठी हुई वकुलमती से कहा कि वकुलमती। इनको हमारा तुम सब वृत्तान्त कह सुनाओ । मुझे इस समय निद्रा आ रही है अत मैं आराम करनेके लिये जाता हू । ऐसा कहकर वह वकुलमतीको वृत्तान्त सुनानेका आदेश देकर सोनेके लिये चला गया । वकुलमतीने अपनी विद्याके बल से सनत्कुमार से सबध रखनेवाले सब वृत्तान्त को जानकर इस प्रकार कहना प्रारभ किया ।

महेन्द्रसिंह ! आप लोगोंके देखते २ जब वह घोडा आर्यपुत्रको लेकर वनमे प्रविष्ट हो गया तब भी उसका दौडना शात नहीं हुआ इसी तरह एक दिन और एक रात दौडता रहा। दूसरा दिन जब प्रारभ हुआ तब भी वह मध्याह्नकाल तक इसी तरह दौडता रहा ।

મહેન્દ્રસિંહે પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ કે, કુમાર ! પહેલા આપ જ બતાવો કે જ્યારે ઘોડો આપને અહીં સુધી ખેચી લાવ્યો ત્યારે કેવી કેવી મુશ્કેલીઓ આપને સહન કરવી પડી મહેન્દ્રની વાત સાભળીને રાજકુમાર સનત્કુમારે પોતાની પાસે બેઠેલી બકુલમતિને કહ્યુ કે, બકુલમતિ ! આને મારૂ સઘળુ વૃત્તાત કહી સભળાવો મને આ સમય નિદ્રા આવી રહી છે તેથી હુ આરામ કરવા માટે જાઉ છુ આ પ્રમાણે કહી બકુલમતિને વૃત્તાત સભળાવવાનો આદેશ આપીને સુવા માટે સનત્કુમાર ચાલી ગયા બકુલમતિએ પોતાની વિદ્યાના બળથી સનત્કુમારથી સબધ રાખવાવાળા સઘળા વૃત્તાતને જાણીને આ પ્રકારે કહેવાનો પ્રારભ કર્યો

મહેન્દ્રસિંહ ! આપ લોકોના જોતા જોતા જ્યારે તે ઘોડો આર્યપુત્રને લઈને વનમાં ચાલી નીકળેલો ત્યારે વનમા પ્રવેશ્યા પછી પણ તેનુ દોડવાનુ શાત ન થયુ આવી રીતે એક દિવસ અને એક રાત સતત એ ઘોડો દોડતો રહ્યો બીજા દિવસના મધ્યાહ્ન કાળ સુધી પણ તેણે પોતાનુ દોડવાનુ ચાલુ રાખેલુ આખરે તે ભૂખ

कुमारः प्रचलितः। स पिपासा क्रुशो भूत्वा शीतले तरुतले समुपाविशत्। अत्रावसरे आर्यपुत्रपुण्यप्रभावेण तद्वृक्षवासी यक्षः विमलैः शीतलजलैरार्यपुत्र मभ्यषिञ्चत्। आर्यपुत्रो यथोपनीत जलं पीत्वा स्वस्थतामुपगतस्तं पृष्टवान्-हे उपकारक! कस्य कस्त्वम्? कुतश्च त्वया जलमानीतम्? स प्राह-अहमस्मि यक्षोऽसिताक्षनामा एतद्वृक्षवासी। हे कृतिन्! तव कृते मया मानसरोवरा ज्जलमानीतम्। एवं तेन प्रोक्त आर्यपुत्र. प्राह-हे मित्र! मानसे मज्जनं विना

जब वह दौडते २ क्षुधा एवं पिपासा से आकुलित होकर खडा हो गया, तब कुमार उस से नीचे उतर गये। घोडा उसी समय मर गया। कुमार भी वहां से चल दिये। कुमार उस समय पिपासा से आकुलित हो रहे थे अतः वे किसी शीतल वृक्षके नीचे आकर बैठ गये। इतनेमें उस वृक्ष पर रहनेवाले किसी एक यक्षने आर्यपुत्र के पुण्यप्रभाव से प्रेरित होकर इनका विमल शीतलजल से अभिषेक किया तथा इनको शीतल जल भी पिलाया। पश्चात् जब आर्यपुत्र स्वस्थ हुए, तब उन्होंने उस यक्ष से पूछा-हे उपकारक! कहो तुम कौन हो? कहां से जल लाये हो? कुमार से उसने कहा-मैं इस वृक्ष पर रहनेवाला एक यक्ष हूं, मेरा नाम असिताक्ष है। हे कृतिन्! आपके लिये मैं यह जल मानसरोवर से लाया हूं। जब इस तरह यक्षने कहा-तब कुमारने फिर उस से कहा-हे मित्र! तुमने मुझे अभिषिक्त किया सो ठीक-परंतु जबतक मैं स्वयं मानसरोवर

અને તરસથી વ્યાકુળ બની ગયો ત્યારે ઉભો રહી ગયો. કુમાર તેના ઉપરથી નીચે ઉતરી પડયા અને ઘોડો એ પછી તુરતજ ભૂખ તરસની વ્યાકુળતાને લઈને પડીને મરી ગયો. કુમારે તે સમયે ત્યાંથી ચાલવા માંડયું તેને ભૂખ અને તરસ સતાવી રહેલ હતી આથી તે ચાલતા ચાલતા એક શીતળ વૃક્ષની છાયા તળે જઈને બેસી ગયા આ સમયે તે વૃક્ષ ઉપર રહેવાવાળા એક યક્ષે આર્યપુત્રના પુણ્ય પ્રભાવથી પ્રેરીત બની તેનો વિમલ શીતળ જળથી અભિષેક કર્યો અને પાણી પણ પાયું પછી જ્યારે આર્યપુત્ર સ્વસ્થ બન્યા ત્યારે તેણે તે યક્ષને કહ્યું કે, હે ઉપકારક! કહો તમો કોણ છો અને આ પાણી કયાંથી લાવ્યા? કુમારને તેણે કહ્યું કે, હું આ વૃક્ષ ઉપર રહેવાવાળો યક્ષ છું અને મારૂં નામ અસિતાક્ષ છે હે પુણ્ય-શાળી! આપના માટે આ નિર્મળ પાણી હું માનસરોવરમાંથી લાવ્યો છું યક્ષની આ વાત સાંભળીને કુમારે તેને ફરીથી કહ્યું કે, હે મિત્ર તમે મને અભિષિક્ત સિંચિત કર્યો તે ઠીક, પરંતુ હું પોતે જ્યાં સુધી માન સરોવરમાં સ્નાન ન કરૂં ત્યાં સુધી

मम तापो न शममेष्यति। ततो यक्षस्त मानसे नीतवान्। स तत्र स्नात्वा-ऽपगतक्लमो यावज्जलान्निर्गन्तुमिच्छति, तावदेव स यक्षः–'मम पूर्वजन्मशत्रुरयम्' इति स्वोपयोगेन विज्ञाय क्रोधारुणलोचनस्तदुपरि वृक्ष निपातितवान्। आर्यपुत्रोऽपि स्वोपरि समापतन्त वृक्ष करतलाघातेन निवारितवान्। ततोऽसौ यक्षो धूलिपुञ्जैश्चतुर्दिग्विभाग पूरयित्वा ज्वलज्ज्वालाकरालमुखान विमुक्ताट्टहासान् पिशाचान् विकुर्वितवान्। आर्यपुत्रो भयावहा यक्षमाया विलोक्यापि निर्भीत एव तस्थौ। ततो यक्ष आर्यपुत्र नागपाशैर्बद्धवान्। परन्तु नागो यथाजीर्णरज्जुबन्धन

मे स्नान नहीं करूँगा–तबतक मेरा ताप शात नहीं हो सकेगा। कुमार की बात सुनते ही यक्ष ने उनको मानसरोवर पर पहुंचा दिया। कुमारने वहां जाकर स्नान किया। उससे उनका ताप शात हो गया। वे उस सरोवर से बाहर निकलने वाले ही थे कि इतने में यक्ष के मन मे विचार आया कि यह तो मेरा पूर्वभव का वैरी है। बदला लेनेका यह अच्छा मौका है। ऐसा अपने उपयोग से विचारकर उसने कुमार के ऊपर क्रोध से अरुण नेत्र होकर एक वृक्ष उखाडकर पटक दिया। कुमारने जब वृक्षको अपने ऊपर गिरते हुए देखा तो शीघ्र ही उसको दोनों हाथो से बीच ही में थाम लिया। पश्चात् यक्षने धूलिपुञ्ज से चारों दिशाओ को धूसरित करते हुए ज्वलज्ज्वाला जैसे कराल मुखवाले तथा भयकर अट्टहास करनेवाले ऐसे पिशाचों को अपनी विक्रिया के प्रभाव से निर्मितकर दिखलाया। उस समय भी आर्यपुत्र उस भयावह यक्षमाया को देखकर निर्भय ही बने रहे। यक्षने पीछे से आर्यपुत्र को नागपाशों से जकड दिया परतु हाथी जैसे जीर्ण

મારો તાપ શાત થઈ શકશે નહી કુમારની વાત સાભળીને યક્ષ તેને માન સરોવર ઉપર લઇ ગયો કુમારે ત્યા પહોચીને સ્નાન કર્યું જેથી તેનામા સ્વસ્થતા આવી ગઈ સ્નાનથી નિવૃત્ત થઈ તે સરોવરમાથી બહાર નિકળવાની તૈયારીમા હતા એ વખતે યક્ષના મનમા વિચાર આવ્યો કે, આ તો મારો પૂર્વભવનો વેરી છે, જેથી બદલો લેવાનો આ ખરેખરો સમય છે એવો પોતાના મનમા વિચાર કરી તેણે કુમારની સામે લાલ આખ કરીને એક વૃક્ષ ઉખાડીને ફેકયુ કુમારે જ્યારે પોતાના ઉપર વૃક્ષને પડતા જોયુ તો તેણે બન્ને હાથ લાબા કરીને તેને અદ્ધર જ ઝીલી લીધુ આ જોઈ યક્ષે ચારે દિશાઓને ધૂળના ગોટેગોટાથી ભરી દઇને આગના ભડકા જેવુ કરાળમુખ ધરાવતા તથા ભયકર અટ્ટહાસ્ય કરવાવાળા એવા પિશાચોને પોતાની વૈક્રિયશક્તિના પ્રભાવથી ઉત્પન્ન કરી બતાવ્યા આ સમયે પણ આર્યપુત્ર એ માયાવી માયાથી ન ડગતા નિર્ભયતાથી ઉભા રહ્યા આ પછી યક્ષે આર્યપુત્રને નાગપાશથી બાધા લીધા પરતુ હાથી જે પ્રમાણે જુના દોરડાઓને તોડીને ફેકી

सम्बन्धोटयति, तथैव त्रोटितवानार्यपुत्रोऽपि नागपाशान। अनन्तर यक्षः करा घातैरार्यपुत्रस्योरस्यताडयत्। आर्यपुत्रोऽपि मुष्टिमुद्यम्य त यक्षमताडयत्। ताडितो यक्षो लोहमुद्गरेणार्यपुत्रमताडयत्। ततः आर्यपुत्रश्चन्दनतरुमुन्मूल्य तत्प्रहारेण यक्ष निपातितवान। अथ कियत् कालानन्तर स्वस्थतामुपगतो यक्षो विशाल गिरि मुत्पाट्य आर्यपुत्रस्योपरिमक्षिप्तवान्। तेन गिरिप्रहारेणार्यपुत्रः समाहत ततः कियत्कालानन्तर लब्धसज्ञ आर्यपुत्रस्तेन यक्षेण सह बाहुयुद्धेन योद्धु प्रवृत्त। वातमतिवातैर्युध्यमानयोस्तयोर्मध्ये न कोऽपि विजय प्राप्तवान्। तत कुमारेण करमुद्गराहतो यक्षः प्रचण्डवाताहततरुरिव भूमौ निपतितो मृत इव दृश्यते स्म।

रज्जुको तोड फेंकता है उसी तरह उन नागपाशों को आर्यपुत्र ने तोड दिया। यक्ष ने हाथके आघातो द्वारा आर्यपुत्र को ताडित किया, परतु आर्यपुत्रने भी उसको खूब मुठी बांध २ कर पीटा। लोहमय मुद्गरा से जब यक्षने इनको मारना प्रारभ किया तो इनने भी चदन का वृक्ष उखाडकर उसके ऊपर फेंक दिया। उसके ऊपर गिरते ही वह धडाम से नीचे गिर पडा। कुछ काल बाद जब यक्ष सचेत हुआ तो उसने आर्य पुत्र के ऊपर एक विशाल पर्वत उठाकर फेंका, इससे ये दबे जैसे हो गये। पहाड के प्रहार से इनको चोट पहुची, परतु स्वस्थ होते ही कुछ कालबाद इन दोनोंका बाहुयुद्ध होना प्रारभ हुवा। लडते २ जब विजय किसी को नही मिला-कोई भी हारने में नही आया तब कुमार ने हाथ मे पकडे हुए मुद्गर से इनको ऐसा मारा कि जिस प्रकार आधी के वेग से वृक्ष जमीन पर गिर पडता है, उसी तरह वह यक्ष गिर पडा और अब मरा हो गया। जब इस प्रका-

છે ને તેવી રીતે એ નાગપાશને આર્યપુત્રે તોડી નાખ્યા યક્ષે આર્યપુત્ર ઉપર હાથથી જુલમ ગુજારવો શરૂ કર્યો પરતુ આર્યપુત્રે પણ તેનો એવોજ સજ્જડ સામનો કર્યો કે જેથી ઉલટ યક્ષનેજ સહન કરવુ પડયુ તે પછી લોઢાના ગદાના પ્રહારો તેણે રાજ કુમાર ઉપર કરવા માડ્યા જેથી રાજકુમારે પણ એક ચદન વૃક્ષને ઉખાડીને યક્ષના ઉપર ફેકયુ એ ચદન વૃક્ષના આઘાતથી યક્ષ નીચે પટકાઇ પડયો થોડો વખત અચેતન હાલતમા તે જમીન ઉપર પડી રહ્યો આ પછી સચેત બન્યો અને તેણે આર્યપુત્ર ઉપર એક પર્વત ઉપાડીને ફેકયો આ પર્વતના ભાર તળે ત થોડા દબાયા અને થોડી ચોટ પહોચી પરતુ સ્વસ્થ થઇને પછીથી બન્ને બાથ બાથી કરવા લાગ્યા લડતાં, લડતા જ્યારે બન્ને સમાનતાએજ રહ્યા કોઇ હાર્યું નહી ત્યારે કુમારના હાથમા એક લોઢાનુ મુદ્ગળ (ગદા) આવી જતા એનાથી યક્ષને એવો માર્યો કે, ભયકર આધીના વેગથી જેમ વૃક્ષ ઉખડીને પડી જાય છે તેવી રીતે તે યક્ષ પડી ગયો અને અધમુવો બની ગયો જ્યારે

तदनन्तरमुच्चैराक्रन्दन् यक्षस्ततो निर्गतो न भूयोऽपि दृष्टः। युद्धकौतुकदिदृक्षया नभस्तलसमागतैर्देवैर्विद्याधरैः पुष्पवृष्टिः कृता, प्रशंसितश्चकुमारः।

ततः प्रचलितोऽसौ कुमारः प्रियसंगमानाम्नीं विद्याधरनगरीं गतः। तत्र भानुवेगनाम्ना विद्याधरेण स्वकन्या तस्मै प्रदत्ता। ततः प्रचलितोऽसौ कुमारः कियद् दूरं गत्वा पर्वतशिखरे मणिमयस्तम्भप्रतिष्ठितं सुधाधवलं सप्तभूमं दिव्यं प्रासादं दृष्टवान्। तं दृष्ट्वा किमेतत्-इति चिन्तयन् आर्यपुत्रस्तद्भवनसमीपं गतः। तत्र गतः स कस्याश्चित्स्त्रिया रोदनशब्दं भवनात्समागच्छन्तमाकर्ण्य भवनमध्ये प्रविष्टः। एकामेकां भूमिकामारुह्य क्रमेण भवनस्य सप्तमभूमिकां गतः। तत्र-

रकी यक्षकी स्थिति हो गई तब वह यक्ष कुछ समय बाद वहां से उठकर रोता हुआ चला गया और फिर दिखलाई नहीं पडा।

आर्यपुत्र के ऊपर इस विजय से प्रसन्न होकर पहिले से ही युद्ध को देखनेकी अभिलाषा से उपस्थित हुए देवों ने एवं विद्याधरों ने मिलकर मनमानी पुष्पवृष्टि की और कुमार की खूब प्रशंसा भी की। वहां से विजय लेकर फिर कुमारने प्रियसंगम नाम की विद्याधर नगरी मे प्रवेश किया। वहां पहुंचते ही कुमार को भानुवेग नामक किसी विद्याधरने अपनी कन्यादी। वहां से कुमार फिर चल दिये सो कुछ दूर जाकर इन्होंने पर्वतशिखर पर मणिमय स्तंभों से प्रतिष्ठित तथा सुधा से धवलित हुए सप्तभूमिवाले एक दिव्यप्रासाद को देखा। उसने देखकर ये "यह क्या है" ऐसा विचार कर उसके पास पहुंचे तो वहां इनके कानमें किसी स्त्रीके रोनेकी आवाज पडी जो उस मकान के भीतर से आ रही थी। आवाज के कानमें पडते ही उस मकान के भीतर घुस गये। वहां पहुंचकर ये क्रम२ चढकर अन्तिम

આ પ્રકારની યક્ષની સ્થિતિ થઈ ગઈ ત્યારે તે યક્ષ થોડા સમય પછી ત્યાથી ઉઠીને રોતો રોતો ચાલતો થઈ ગયો અને પછી પાછો દેખાયો નહી

આર્યપુત્રના આ વિજયથી પ્રસન્ન થઈ અગાઉથીજ યુદ્ધને જોવાની અભિલાષ થી ઉપસ્થિત થયેલા દેવોએ અને વિદ્યાધરોએ મળીને એમના ઉપર પુષ્પવૃષ્ટિ કરી અને પ્રશંસા કરી ત્યાથી વિજય મેળવીને કુમાર પ્રિયસંગમ નામની વિદ્યાધરનગરીમા ગયા ત્યા પહોચતાજ કુમારને ભાનુવેગ નામના વિદ્યાધરે પોતાની કન્યા અર્પણ કરી ત્યાથી કુમાર ચાલી નીકળ્યા અને થોડે દૂર જઈને તેઓએ પર્વત શિખર ઉપર મણીમયસ્તભોથી શોભતા અને સુધાથી દેદિપ્યમાન એવા સાતમાળવાળા એક દિવ્ય ભવનને જોયુ એને જોઈને તે "આ શુ છે?" એવો વિચાર કરીને તેની પાસે પહોચ્યો. તો ત્યા એક સ્ત્રીના રૂદનનો અવાજ તેના કાને અથડાયો કે જે ઉપરોક્ત ભવનની અદરથી આવી રહેલ હતો અવાજ પોતાના કાને અથડાતાં જ કુમાર ઘણી ઉતા-

जगत्त्रयजनोत्कृष्ट ! कुरुवंशनभोरवे ! ।
सनत्कुमार ! भर्तात्वं भूयाज्जन्मान्तरेऽपि मे ॥

इति विलपन्तीं नयनानन्दकरीं काञ्चित्कन्या ददर्श। तां दृष्ट्वाऽऽर्यपुत्रोऽचिन्तयत्-एषा का? या मां स्मरति? इति विचिन्त्य करुणस्वरेण विलपन्तीमधोमुखीं तां कन्यां प्राह-भद्रे! त्वं काऽसि। कथं तव सनत्कुमारेण सह सम्बन्धः? तं वारं वारं स्मरन्ती त्वं केन दुःखेन रोदिषि? एवमार्यपुत्रेण पृष्टा सा सुखासनदानेन कुमारं सत्कृत्य सुस्मिता विस्मिता चैव वदति-कुमार! साकेतपुरेशस्य सुराष्ट्रराजस्य चन्द्रकलानाम भार्यायाः सकाशाद् गृहीतजन्मा सुनन्दा

मंजिल पर जा पहुंचे। वहां उन्होंने एक विलक्षण बात देखी, वह यह थी कि-वहां एक कोई नयनानन्दकारी कन्या इस प्रकार विलाप करती हुई कह रही थी कि "हे तीनलोकमें उत्कृष्ट! कुरुवंश के सूर्य! सनत्कुमार! जन्मान्तर में तुम मेरे पति होओ" इस स्थिति को देखकर कुमारने मनमें विचार किया कि-यह कौन है जो मुझे स्मरण कर रही है। इस तरह सोच विचार कर कुमार करुणस्वर से विलाप करती हुइ तथा अधोमुखस्थित उस कन्या के पास जाकर कहने लगा-भद्रे! तुम कौन हो? तथा सनत्कुमार के साथ तुम्हारा क्या संबध है। और क्यों उसको वारवार याद करके तुम किस दुःख से पीडित होकर रो रही हो?। जब कुमारने उस कन्या से इस प्रकार पूछा तो वडी विस्मित हुई और एकदम उठकर उसने कुमारको बैठने के लिये आसन दिया। हँसकर पश्चात् वह कुमार से कहने लगी-कुमार। मेरा नाम सुनन्दा है। मैं साकेतपुर के अधिपति सुराष्ट्रराज की चन्द्रकला

વગથી એ ભુવનની અંદર જઈ પહોચ્યા અને એક પછી એક મજલા ચઢીને છેલ્લા મજલા ઉપર જઈ પહોચ્યા ત્યાં તેમણે એક વિલક્ષણ ઘટના જોઈ તે એ હતી કે, ત્યાં એક સુંદર એવી કન્યા વિલાપ કરતાં કરતાં બોલતી હતી કે, "હે ત્રણ લોકમાં ઉત્કૃષ્ટ કુરુવંશના સૂર્ય સનત્કુમાર જન્માંતરમાં તમે મારા પતિ બનો" આ સ્થિતિને જોઈને કુમારે મનમાં વિચાર કર્યો કે, આ કોણ છે કે, જે મારૂ સ્મરણ કરી રહેલ છે? આ પ્રકારે વિચારીને કુમાર કરૂણ રુદનથી વિલાપ કરતી એ કન્યાની પાસે જઈને કહેવા લાગ્યા કે, હે ભદ્રે! તમો કોણ છો, અને સનત્કુમારની સાથે તમારો શો સંબંધ છે, તમે ક્યા દુઃખથી પીડિત થઈને તેને વારવાર યાદ કરીને રોઈ રહેલ છો? કુમારે જ્યારે એ કન્યાને આ પ્રમાણે પૂછ્યું તો તે ખૂબજ વિસ્મય પામી અને એકદમ ઉભી થઈ ગઈ અને કુમારને બેસવા માટે આસન આપ્યું હસીને પછીથી તે તેને કહેવા લાગી. હે કુમાર! મારૂ નામ સુનંદા છે હું સાકેતપુરના અધિપતિ સુરાષ્ટ્ર રાજની ચંદ્રકળા નામની

जाताऽस्मि। बाल्यात् प्रभृति मातापित्रोर्नयनानन्दकरी। सर्वासु कला-
सु। [illegible] तदा ममानुरूपो वरः कः स्यादिति
चिन्तया मम पिता राज्ञां चित्रपटानि मां दर्शयामास। परन्तु मम मनस्तु
नाऽरमत शुष्कपुष्पेषु भ्रमरीव। अन्यदा नैमित्तिकेन मम पितुः समीपे
कथितम् अस्या भर्ता सनत्कुमारो भविष्यति। मया सनत्कुमारो मनसा पतिर्वृत।

एकदा रात्रौ स्वशय्यायां शयिताऽहं प्रातरुत्थायात्मानमेतद्भवनगतम
पश्यम्। पश्चात् ज्ञातं यत्कोऽपि विद्याधरो मामपहृत्य स्वविद्यानिर्मितेऽस्मि

नामकी भार्या से उत्पन्न हुई हूं। बाल्यकाल से ही मैं अपने माता-पिताके नयनों को आनंददायिनी रही हूं। उन्होंने मुझे प्रत्येक कला-ओंमें निपुण बना दिया है। यहांतक कि कलाओं को सीखते २ ही मैं जुवान हुई हूँ। उन्होंने अब मुझे इस अवस्थामें देखा तो मेरे परिणयनकी उनको बडी भारी चिन्ता लग गई–"इसका पति कौन बने" इस विचार से वे मुझे राजाओं के चित्रपट मँगवा २ कर दिखाने लगे। परन्तु जिस प्रकार शुष्क पुष्पो में भमरीका चित्त नहीं रमता है उसी प्रकार मेरा चित्त भी उनमें सतुष्ट नहीं हुआ। एक दिनकी बात है कि किसी नैमित्तिकने मेरे पिता के पास जाकर ऐसा कहा कि–'इसका भर्ता सनत्कुमार होगा'। मैंने भी इस प्रकार बात सुनकर सनत्कुमार को अपना पति उसी दिन से बना लिया है।

एक दिन रात्रि मे अपनी शय्या पर सोई हुई मैने प्रातः उठ-कर अपने आपको इस भवन मे पाया। अपनी स्थितिको देखकर मै

પત્નીથી ઉત્પન્ન થયેલ છુ બાલ્યકાળથી હુ મારા માતાપિતાના નયનોને હર્ષિત બનાવતી રહી છુ તેઓએ મને પ્રત્યેક કળાઓમા નિપુણ બનાવેલ છે ત્યા સુધીકે, કળાઓને શીખતા શીખતાજ હુ યુવાન બની ગઈ તેઓએ જ્યારે મને આ અવસ્થામા જોઈ એટલે મારા લગ્ન માટે તેમને ભારે ચિ તા થવા લાગી "આનો પતિ કોણ બનશે !" આ વિચારથી તેઓ મને રાજાઓની છબીઓ મ ગાવીને બતાવવા લાગ્યા પર તુ જે પ્રમાણે સુકા ફુલમા ભમરીનુ ચિત્ત લાગતુ નથી, એ પ્રમાણે મારૂ ચિત્ત પણ એ છબી જોતા સ તુષ્ટ ન થયુ એક દિવસની વાત છે કે, કોઈ જોશીએ મારા પિતાની પાસે આવીને એવુ કહ્યુ કે, "તમારી પુત્રીનો પતિ સનત્કુમાર થશે" મે પણ તેની એ વાત સાભળીને એજ સમયથી સનત્કુમારને મારા હૃદયના દેવ તરીકે સ્થાપિત કરેલ છે

એક દિવસ રાત્રે હુ મારા શયનભૂવનમા સૂતેલી હતી સવારના ઉઠીને જોઉ છુ તો આ ભવનમા હુ આવી પડેલી હોવાનુ જણાયુ મારી આ સ્થિતિ જોઇને

न्भवने विनिक्षिप्य क्वाऽपि गत'। असहायाऽह त कुमार स्मार स्मार रोदिमि। हे कुमार! बालानामबलाना दुःखिताना च रोदनमेव बलम्। एव सुनन्दनाया वचन श्रुत्वाऽऽर्यपुत्र• माह–अये यस्य कृते त्व रोदिषि स तवाग्रे तिष्ठति। अहमेव सनत्कुमारोऽस्मि।

तदा अशनिवेगनाम्नो विद्याधरस्य पुत्रो वज्रवेग नामकः क्रुधा समुपस्थितः। स हि तत्क्षण एव आर्यपुत्र हस्तेनोत्थाप्य आकाशे प्रक्षिप्तवान। सुनन्दना चेमा घटना विलोक्यार्यपुत्रानिष्टशङ्कया रुदती मूर्च्छिता सती भूमौ निपतिता। विद्याधरप्रक्षिप्तआर्यपुत्रोऽपि भूमौ पतित समुत्थाय वज्रनिभया

समझ गई कि किसी विद्याधरने अपनी विद्या के बल से मेरा अपहरण किया है और बनावटी इस घरमे मुझे छिपाकर रक्खा है। और स्वय न मालूम कहा चला गया है। सो असहाय बनी हुई मै अब कुमारको याद कर २ के रो रही हूँ। क्यों कि "बालाना रोदन बलम्" बालाओं एव दुःखित अबलाओंका बल एक रोना ही है।

इस प्रकार सुनन्दा के वचन सुनकर सनत्कुमारने कहा–अरे तू जिसके लिये रो रही है वह व्यक्ति तेरे आगे खडा हुआ है। मेरा ही नाम सनत्कुमार है। इतने में ही अशनिवेग विद्याधर का पुत्र वज्रवेग क्रोध से भरा हुआ वहाँ आ पहुँचा। उसने उसी समय सनत्कुमार को हाथ से पकडकर आकाशमें उछाल दिया। सुनदाने जब सनत्कुमारको पकडकर उछालते हुए देखा तो वह इस घटना से अनिष्टकी आशका करने लगी और रोती २ वह मूर्च्छित भी हो गई,

હુ સમજી ગઈ કે, કોઈ વિદ્યાધરે પેતાની વિદ્યાના બળથી મારૂ અપહરણ કરેલ છે, અને પોતે પોતાની વિદ્યાના જોરથી બનાવેલા આ ભવનમા મને રાખેલ છે અને પોતે ન માલુમ કયા ચાલ્યો ગયેલ છે આથી અસહાય બનેલ એવી હુ કુમારને યાદ કરી કરીને રોઈ રહી છુ કેમકે, "बालाना रोदन बलम्" બાળાઓ અને દુખિત અબળાઓનુ એક માત્ર બળ રૂદન જ છે

આ પ્રકારના સુનદાના વચનોને સાભળીને સનત્કુમારે કહ્યુ–તુ જેના માટે રોઈ રહેલ છે તે વ્યક્તિ તારી સામેજ ઉભેલ છે, મારૂ નામજ સનત્કુમાર છે આ સમયે અશનિવેગ વિદ્યાધરનો પુત્ર વજ્રવેગ ક્રોધથી ભરપૂર એવો ત્યા આવી પહોચ્યો અને તેણે તે સમયે સનત્કુમારને પકડીને હાથથી આકાશ તરફ ઉછાળી દીધો. સુનદાએ સનત્કુમારને પકડીને ઉછાળતા જોયો ત્યારે તે આઘાતનાથી અનિષ્ટની આશકા કરવા લાગી અને રોતા રોતા તે મૂર્છિત બની ગઈ અને એક તરફ પછ

मुष्ट्या विद्याधरपुत्रोऽपि समताडयत्। आर्यपुत्रमुष्टिघातेन शोणितमुद्वमन् स विद्याधरो भूमौ निपतितो मृतश्च। अक्षताङ्ग आर्यपुत्रः सुनन्दाया समीपे समागत्य मधुरवचनैः समाश्वास्य विद्याधरमरणेन निर्भया ता स्वं स्ववृत्तान्तं निवेदितवान्। आर्यपुत्रश्च तां गान्धर्वेण विधिना परिणीतवान्। सा हि आर्यपुत्रस्य स्त्रीरत्न भविष्यति। ततः किञ्चित्कालान्तर वज्रवेगविद्याधरस्य भगिनी सन्ध्यावली तत्र समुपागता। सा हि भ्रातरं निहतं दृष्ट्वाऽऽर्यपुत्र प्रति कोपाविष्टमानसा जाता। परन्तु नैमित्तिकवचन स्मृत्वा सा तस्य समीपमागत्य सविनयमिदमुवाच–

गया एक ओर जमीन पर गिर पडी। सनत्कुमार ज्यों ही आकाश से जमीन ऊपर गिरे त्यों ही उन्होंने वज्रतुल्य अपनी मुष्टि द्वारा विद्याधरकी छातीमें एक भयकर मुक्का मारा–जिस से ताडित होकर वह खूनकी उल्टिया करने लगा। खूनका वमन करते २ वह मर भी गया। सनत्कुमार को कोई भी चोट नहीं आई। मुस्कराते हुए वह सकुशल सुनदाके पास आये और मधुर वचनों से उस से बोले–तुम चिन्ता मत करो। धैर्य धरो–वह दुष्ट विद्यधर मर गया है। अब भय करनेकी कोई बात नहीं है। इस प्रकार समझाबुझाकर उसको फिर अपना समस्त वृत्तान्त भी सुना दिया। तथा उसके साथ गांधर्व विधि से विवाह भी कर लिया। यही सुनदा सनत्कुमार चक्रवर्तीका स्त्रीरत्न बनेगी।

कुछ समय बाद वहा पर वज्रवेग विद्याधरकी बहिन जिसका नाम सध्यावली था आगई। अपने भाईको मरा हुआ देखकर वह आर्यपुत्र के प्रति कुपित चित्त तो हुई, परन्तु नैमित्तिक के वचनकी

ડાઈ પડી સનત્કુમાર જ્યા આકાશ તરફથી જમીન ઉપર પડ્યા અને પડતાની સાથેજ ઉઠીને તેણે વિદ્યાધરની છાતીમા એક વજ્રતુલ્ય મુક્કો લગાવ્યો. સનત્કુમારના હાથનો વજ્રતુલ્ય મુક્કો પોતાની છાતીમા પડતા એ વિદ્યાધર દુ ખથી પિડાવા લાગ્યો અને લોહીની ઉલટીઓના ભારે વહનથી તેનુ ત્યાજ મૃત્યુ નીપજ્યુ સનત્કુમારને ક્યાય જરા સરખી પણ ચોટ ન લાગી હસતા હસતાં તે સુખરૂપ સુનદાની પાસે ગયા અને મધુર વચનોથી બોલવા લાગ્યા "તમે ચિતા ન કરો, ધૈર્ય ધરો, એ દુષ્ટ વિદ્યાધર મરી ગયેલ છે હવે કોઇ રીતે ગભરાવાની જરૂર નથી" આ પ્રમાણે રાજકુમારી સુનદાને સમજાવીને તેણે પછી તેને પોતાનુ સઘળુ વૃત્તાત પણ સભળાવી દીધુ અને તેની સાથે ગાધર્વવિધિથી વિવાહ પણ કરી લીધો આથી સુનદા સનત્કુમાર ચક્રવર્તીની પત્ની બની ગઇ

થોડા સમય બાદ ત્યા વજ્રવેગ વિદ્યાધરની બહેન કે, જેનુ નામ સધ્યાવલિ હતુ તે ત્યા આવી અને પોતાના ભાઈને મરેલો જોઈને તે આર્યપુત્ર તરફ ક્રોધાય-

कुमार! नैमित्तिकेनाहमादिष्टा, यस्तव भ्रातृघातकः स एव तव पतिर्भविष्यति. अतोभवान मां पत्नीत्वेनाङ्गीकर्तुमर्हति। सुनन्दानुमत्या तया सह लग्नं कृतवान्।

अत्रान्तरे मम भ्रातरौ हरिश्चन्द्रचन्द्रसेनाभिधानौ आर्यपुत्रसमीपमागत्य कवचं रथं च समर्प्य सविनयमिदमुक्तवन्तौ कुमार। चन्द्रवेगभानुवेगविद्याधरराजयोः पुत्रौ हरिश्चन्द्रचन्द्रसेनाभिधानावावाम्। ताभ्यां भवदर्थे रथः कवचं च प्रेषितम्। गृह्णातु भवानेतद्द्वयम्। अस्मत्पितरौ च सेनया सह भवत साहाय्य कर्तुं त्वरितमेवागच्छतः। कुमारेण प्रोक्तम्।—को मया सह योद्धुमायाति यद्

स्मृति आजाने से उसने आर्यपुत्र के समीप आकर बडे विनय से ऐसा कहा कि कुमार! मुझ से नैमित्तिकने कहा है कि जो तेरे भाईका विघातक होगा वही तेरा पति होगा, इसलिये आप मुझे अपनी पत्नी बनाकर कृतार्थ करें। उसकी जब ऐसी बात सुनदाने सुनी तो सनत्कुमार को उसके साथ विवाह करनेकी उसने अनुमति दे दी। दोनों का विवाह हो गया।

इसके बाद मेरे दो भाई आर्यपुत्रके पास आये। एकका नाम हरिश्चंद्र एव दूसरेका नाम चन्द्रसेन था। उन्होंने आर्यपुत्र को कवच और रथ समर्पित करते हुए ऐसा कहा—कुमार! हम दोनों चन्द्रवेग एव भानुवेग विद्याधर के पुत्र हे। उन लोगोंने आपके लिये ये रथ और कवच भेजे हैं। आप उनको लीजिये। वे दोनों आपकी सहायता के लिये ससैन्य त्वरित आ रहे हैं। उनकी इस बातको सुनकर कुमारने कहा—हमारे साथ युद्ध करने के लिये कौन आ रहा हैं जो

भान બની પરંતુ જોશ જોનારના વચનની સ્મૃતિ આવી જવાથી તેણે આર્યપુત્રની સામે આવીને ઘણા વિનયથી એવું કહ્યું કે, કુમાર! મને જોશ જોનારે કહ્યું છે કે જે તારા ભાઈને મારનાર હશે તેજ તારો પતિ થશે માટે આપ મને પોતાની પત્ની બનાવીને કૃતાર્થ કરો" તેની આવી વાતો સુનંદાએ સાંભળી તો તેણે સનત્કુમારને તેની સાથે લગ્ન કરવાની અનુમતી આપી બન્નેના લગ્ન થઈ ગયા.

આ પછી મારા બે ભાઈ આર્યપુત્રની પાસે આવ્યા, એકનું નામ હરિશ્ચંદ્ર અને બીજાનું નામ ચંદ્રસેન આ બન્ને ભાઈઓએ આર્યપુત્રને કવચ અને રથ સમર્પિત કરતા કહ્યું કે કુમાર! અમે બન્ને ચન્દ્રવેગ અને ભાનુવેગ વિદ્યાધરના પુત્ર છીએ, તેમણે આપના માટે કવચ અને રથ મોકલેલ છે તો અનો સ્વીકાર કરો એ બન્ને આપની સહાયતા માટે સૈન્ય સહિત આ તરફ જલદીથી આવી રહ્યા છે તેની આ વાતને સાંભળીને કુમારે કહ્યું મારી સાથે યુદ્ધ કરવા માટે કોણ આવી રહ્યું છે, જેથી

मुष्ट्या विद्याधरपुनोऽमि समताडयत्। आर्यपुत्रमुष्टिघातेन शोणितमुद्वमन स विद्याधरो भूमौ निपतितो मृतश्च। अक्षताङ्ग आर्यपुत्रः सुनन्दाया• समीपं समागत्य मधुरवचनैः समाश्वास्य विद्याधरमरणेन निर्भया ता मत्वे स्ववृत्तान्त निवेदितवान्। आर्यपुत्रश्च ता गान्धर्वेण विधिना परिणीतवान्। सा हि आर्यपुत्रस्य स्त्रीरत्न भविष्यति। ततः किञ्चित्कालान्तर वज्रवेगविद्याधरस्य भगिनी सन्ध्यावली तत्र समुपागता। सा हि भ्रातर निहत दृष्ट्वाऽऽपुत्र मति कोपाविष्टमानसा जाता। परन्तु नैमित्तिकवचन स्मृत्वा सा तस्य समीपमागत्य सविनयमिदमुवाच-

तथा एक और जमीन पर गिर पडी। सनत्कुमार ज्यो ही आकाश से जमीन ऊपर गिरे त्यों ही उन्होंने वज्रतुल्य अपनी मुष्टि द्वारा विद्याधरकी छातीमें एक भयकर मुक्का मारा-जिस से ताडित होकर वह खूनकी उल्टिया करने लगा। खूनका वमन करते २ वह मर भी गया। सनत्कुमार को कोई भी चोट नहीं आई। मुस्कराते हुए वह सकुशल सुनदाके पास आये और मधुर वचनों से उस से बोले-तुम चिन्ता मत करो। धैर्य धरो-वह दुष्ट विद्यधर मर गया है। अब भय करनेकी कोई बात नही है। इस प्रकार समझाबुझाकर उसको फिर अपना समस्त वृत्तान्त भी सुना दिया। तथा उसके साथ गाधर्व विधि से विवाह भी कर लिया। यही सुनदा सनत्कुमार चक्रवर्तीका स्त्रीरत्न बनेगी।

कुछ समय बाद वहा पर वज्रवेग विद्याधरकी बहिन जिसका नाम सध्यावली था आगई। अपने भाईको मरा हुआ देखकर वह आर्यपुत्र के प्रति कुपित चित्त तो हुई, परन्तु नैमित्तिक के वचनकी

ढाई पडी सनत्कुमार ज्या आकाश तरफथी जमीन उपर पडया अने पडतानी साथेज उठीने तेणे विद्याधरनी छातीमा એક वज्रतुल्य मुक्को लगाव्यो सनत्कुमारना हाथनो वज्रतुल्य मुक्को पोतानी छातीमा पडता એ विद्याधर दुःखथी पिडावा लाग्यो. અને લોહીની ઉલટીઓના ભારે વહનથી તેનુ ત્યાજ મૃત્યુ નીપજ્યુ સનત્કુમારને ક્યાય જરા સરખી પણ ચોટ ન લાગી હસતા હસતા તે સુખરૂપ સુનદાની પાસે ગયા અને મધુર વચનોથી બોલવા લાગ્યા "તમે ચિતા ન કરો, ધર્ય ધરો, એ દુષ્ટ વિદ્યાધર મરી ગયેલ છે હવે કોઇ રીતે ગભરાવાની જરૂર નથી" આ પ્રમાણે રાજકુમારી સુનદાને સમજાવીને તેણે પછી તેને પોતાનુ સઘળુ વૃત્તાત પણ સભળાવી દીધુ અને તેની સાથે ગાધર્વવિધિથી વિવાહ પણ કરી લીધો આથી સુનદા સનત્કુમાર ચક્રવર્તીની પત્ની બની ગઇ

થોડા સમય બાદ ત્યા વજ્રવેગ વિદ્યાધરની બહેન કે, જેનુ નામ સધ્યાવલિ હતુ તે ત્યા આવી અને પોતાના ભાઇને મરેલો જોઈને તે આર્યપુત્ર તરફ ક્રોધાવ-

युद्धमानयोस्तयोः सैन्य परिभ्रष्टम्। तत आर्यपुत्र स्वयमेव धनुरादायाशनिवेगेन सह योद्धु प्रवृत्त'। महापराक्रमशालिनोस्तयोरभूतपूर्व युद्ध प्रवृत्तम्। हस्तलाघव प्रदर्शयता कुमारेणाशनिवेगसैन्ये बाणवृष्टि कृता। बाणवृष्ट्या सूर्य किरणा आच्छादिता। ततोऽशनिवेगसैन्येऽन्धकारो जात। एव दृष्ट्वाऽशनिवेग आर्यपुत्र प्रति नागास्त्र प्रहितवान्। तत्प्रतिकाराय आर्यपुत्रेण गारुडमस्त्र सधृतम्। धनुर्निगतगारुडास्त्रेण नागास्त्र विनिहतम्। ततोऽशनिवेगेनाग्नेयमस्त्र प्रहितम्, आर्यपुत्रेण तत्प्रतिकर्तु वारुणास्त्रम्। पुनरशनिवेगेन वायव्यमस्त्र प्रहितम्, आर्यपुत्रेण पर्वतास्त्रप्रयोगेण तत्प्रभाव प्रतिरुद्ध'। एवमार्यपुत्रेण शत्रोर्दिव्यान्यस्त्राणि स्वदिव्यास्त्रप्रभावेण विफली कृतानि। इत्थ स्वप्रयत्न निष्फल

सैन्य भाग गया। जब आर्यपुत्रने ऐसी हालत देखी तो वे स्वय धनुषको लेकर अशनिवेग के साथ युद्ध करने में प्रवृत्त हो गये। अशनिवेग और आर्यपुत्र, इन दोनों का विशेष पराक्रमशाली होने से अभूतपूर्व युद्ध हुवा। हस्तलाघव दिखलाने हुए आर्यपुत्रने अशनिवेगकी सेना में बाणोंकी वृष्टि करना प्रारभ कर दी। इतने बाणों की वर्षा आर्यपुत्रने उस समयकी कि जिससे सूर्यका बिम्ब भी ढक गया। इस से अशनिवेग की सेना मे अधकार छा गया। अशनिवेगने उसी समय आर्यपुत्रके प्रति नागास्त्र छोडा। उसके प्रतिकार के लिये आर्यपुत्रने भी गारुडास्त्र छोडा। फिर अशनिवेगने आग्नेय-अस्त्र, आर्यपुत्रने प्रतिकार के लिये वारुणास्त्र, अशनिवेगने वायव्यास्त्र, आर्यपुत्रने पर्वतास्त्र। इस प्रकार दोनों तरफ दिव्यास्त्रों से सघर्ष चलने लगा। अन्त मे आर्यपुत्र के दिव्यास्त्रोने अशनिवेगके दिव्यास्त्रों को सर्वथा

અશનીવેગના જોર સામે એમનુ સૈન્ય ટકી શકયુ નહીં આર્યપુત્રે જ્યારે આ હાલત જોઇ તો તેઓ પોતે હાથમા ધનુષ્ય લઇને અશનીવેગની સામે યુદ્ધ કરવા તત્પર બન્યા અશનીવેગ અને આર્યપુત્ર બન્ને પરાક્રમશાળી હોવાથી ભયકર એવુ યુદ્ધ ચાલ્યુ પોતાના હાથનુ ચાતુર્ય બતાવતા આર્યપુત્રે અશનીવેગની સેના ઉપર બાણોની વૃષ્ટિ કરવા માડી તેણે અસખ્ય એવા બાણોની વર્ષા કરી કે જેને લઇને સૂર્યનુ બિબ પણ ઢકાઇ ગયુ આથી અશનીવેગની સેનામા અધકાર છવાઇ ગયો અશનીવેગે એ સમયે આર્યપુત્ર તરફ નાગાસ્ત્ર છોડયુ એના પ્રતિકાર માટે આર્યપુત્રે ગરૂડાસ્ત્ર છોડયુ પછી અશનીવેગે અગ્નિઅસ્ત્ર છોડયુ, તો આર્યપુત્રે વારૂણાસ્ત્ર છોડયુ અશનીવેગે વાયવ્યાસ્ત્ર છોડયુ તો કુમારે પર્વતાસ્ત્ર છોડયુ આ પ્રકારે બન્ને બાજુએથી દિવ્યાસ્ત્રોથી સગ્રામ ચાલવા લાગ્યો અતમા આર્યપુત્રે પોતાના દિવ્યાસ્ત્રોથી અશનીવેગના દિવ્યાસ્ત્રોને સર્વથા નિષ્ફળ બનાવી દીધા પોતાના પ્રયત્નોની

भवन्तो मम सहायता कर्तुं प्रवृत्ता'। ताभ्यामुक्तम्-कुमार! भवता वज्रवेगो व्यापादितः, इति वृत्तान्तं विद्यावलेनाधिगम्य तत्पिताऽशनिवेगो निजसैन्यं सज्जीकृत्य भवता सह योद्धुमागच्छति। अत एव वयं भवत्साहाय्ये समागताः'। तस्मिन्नेव काले आर्यपुत्रस्य सहायतां कर्तुं समागतौ चन्द्रवेगभानुवेगौ। सन्ध्यावल्या च आर्यपुत्राय प्रज्ञप्ति विद्या दत्ता। अत्रानन्तरेऽशनिवेग ससैन्यः समागतः। ससैन्यचन्द्रवेगभानुवेगसहितआर्यपुत्रोऽप्यशनिवेगेन सह योद्धुं युद्धभूमौ गतः। पूर्वं चन्द्रवेगभानुवेगौ योद्धुमुद्यतौ। चिरकालमशनिवेगेन सह

आप लोग मेरी सहायता करने में उद्यमशील हो रहे हैं। तब उन दोनोंने कहा-हे कुमार! आपने जो वज्रवेग को मारडाला है, सो इस समाचार को उसके पिता अशनिवेगने अपनी विद्याके प्रभाव से जान लिया है। अतः वह सैन्य को सज्जित करके आपके साथ युद्ध करनेके लिये आ रहा है। इसीलिये हमलोग आपकी सहायता करनेमे उद्यमशील हो रहे हैं। वे जब इस प्रकार कह रहे थे कि इतनेमें ही चन्द्रवेग और वायुवेग विद्याधर सनत्कुमारकी सहायता के लिये वहां पर आ पहुँचे। सन्ध्यावलीने आर्यपुत्र के लिये उसी समय प्रज्ञप्ति नामकी विद्या दी। ससैन्य अशनिवेग भी आ पहुँचा। दोनो तरफ से युद्ध छिड गया। आर्यपुत्र ससैन्य चन्द्रवेग एवं भानुवेग से युक्त होकर उस अशनिवेग से युद्ध करनेके लिये रणाङ्गण मे जा पहुचे। सब से पहिले चन्द्रवेग एवं भानुवेगने अशनिवेग के साथ युद्ध करना प्रारंभ किया। बहुत देरतक इनका युद्ध होता रहा। अशनिवेग के सामने इनकी

આપ લોક મને સહાય કરવામા ઉદ્યમશીલ બની રહ્યા છે? ત્યારે એ બન્નેએ કહ્યુ કે આપે વજ્રવેગ વિદ્યાધરને મારી નાખેલ છે આ સમાચારને તેના પિતા અશનીવેગે પોતાની વિદ્યાના બળથી જાણી લીધેલ છે જેથી તે સૈન્યને સજ્જ કરીને તમારી સામે લડવા માટે આવી રહેલ છે આથી અમે લોકો આપને સહાય કરવામા ઉદ્યમશીલ થઈ રહ્યા છીએ જ્યારે આ પ્રકારની વાતો થતી હતી એજ સમયે ચદ્રસેન અને વાયુવેગ વિદ્યાધર પોતાની સેના સાથે સનત્કુમારની સહાયતા માટે ત્યા આવી પહોચ્યા સધ્યાવલીએ આ સમયે આર્યપુત્રને પ્રજ્ઞપ્તિ નામની વિદ્યા આપી અશનીવેગ પણ પોતાના લશ્કર સાથે ત્યા આવી પહોચ્યો સામસામે યુદ્ધનો મોરચો રચાઈ ગયો આર્યપુત્ર, ભાનુવેગ તથા ચદ્રવેગની સાથે સૈન્યને લઈને અશનીવેગની સામે યુદ્ધ કરવા રણાગણમા જઈ પહોચ્યા સહુથી પહેલા ચદ્રવેગ અને ભાનુવેગે અશનીવેગની સાથે યુદ્ધ કરવાનો પ્રારભ કર્યો ઘણો સમય તેમનુ યુદ્ધ ચાલુ રહ્યુ

सन्ध्यावलिभ्यां सहित आर्यपुत्रश्चन्द्रवेगादिभिः सह वैताढ्यगिरौ समागतः। तत्र सर्वे विद्याधराः संभूय तमार्यपुत्रं विद्याधरचक्रवर्तित्वे संस्थापितवन्तः।

ततोऽन्यदा मम पिता चन्द्रवेगः समागत्यार्यपुत्रमविज्ञपत्-कुमार! अर्चिमालिनामा नैमित्तिको मामेवमुक्तवान्, सनत्कुमारो नाम भाविचतुर्थचक्रवर्ती तव शतपुत्रीणां भर्ता भविष्यति। स हि महाबाहुर्मासेनात्र मानससरोवरे समागमिष्यति। असिताक्षं यक्षं पराजेष्यति। अतो हे कुमार! अर्हति भवान् बकुलमतीप्रभृति मम सुताशतं परिणीय मां कृतार्थयितुम्। एवं मम पित्रा विज्ञप्त आर्यपुत्रोऽस्मान् परिणीतवान् महता महोत्सवेन। ततः प्रभृति विविधकला चतु-

सन्ध्यावली को साथ लेकर फिर आर्यपुत्र वहां से चन्द्रवेग आदि विद्याधरों के साथ वैताढ्यगिरि पर आ पहुँचे। वहां सब विद्याधरोंने मिलकर आर्यपुत्रको विद्याधरों के चक्रवर्तीपद पर स्थापित कर दिया।

एक समय की बात है कि मेरे पिता चन्द्रवेगने आकर आर्यपुत्र से इस प्रकार कहा-हे कुमार! अर्चिमाली नैमित्तिकने मुझ से ऐसा कहा है कि भावि चक्रवर्ती सनत्कुमार तुम्हारी सौ पुत्रियों का पति होगा और वह महाबाहु यहां मानसरोवर पर एक महिने में आवेगा, यहां आते ही वह असिताक्ष यक्षको पराजित करेगा। इसलिये हे कुमार! बकुलमती आदि मेरी सौ पुत्रियों को आप वरणकर मुझे कृतार्थ करने की कृपा करें। ऐसा जब मेरे पिताने आर्यपुत्र से कहा तब आर्यपुत्रने हम सब के साथ बडे उत्सवपूर्वक वैवाहिक संबंध कर

हित थयेल सुनंदा अने संध्यावलीने साथे लईने पछी आर्यपुत्र त्यांथी चंद्रवेग आदि विद्याधरोनी साथे वैताढयगिरि उपर पहोंच्या त्यां सघळा विद्याधरोए मळीने आर्यपुत्रने विद्याधरोना चक्रवर्तीपद उपर स्थापित कर्या

એક સમયની વાત છે કે, મારા પિતા ચંદ્રવેગે આર્યપુત્રની પાસે જઈને કહ્યું કે, હે કુમાર! અર્ચિમાલી જ્યોતિષીએ મને એવું કહેલ છે કે, ભાવી ચક્રવર્તી સનત્કુમાર તમારી સો પુત્રીઓના પતિ બનશે જ્યારે એ મહાબાહુ અહીં માન સરોવર ઉપર એક મહિનામાં આવશે અને આવીને તે અસિતાક્ષ યક્ષને પરાજીત કરશે આ કારણે હે કુમાર! બકુલમતિ આદિ મારી સો પુત્રીઓનો આપ સ્વીકાર કરી મને કૃતાર્થ કરો આ પ્રમાણે મારા પિતાએ જ્યારે આર્યપુત્રને કહ્યું ત્યારે આર્યપુત્રે અમો સઘળી બહેનોની સાથે ઘણા જ ઉત્સાહપૂર્વક વિવાહ કર્યો જ્યારથી અમારી સાથે આર્યપુત્રનો વિવાહ થયેલ છે ત્યારથી આર્યપુત્ર વિવિધ કળાઓમાં

दृष्ट्वा तीव्र क्रुद्धोऽशनिवेग• कार्मुकमादायार्यपुत्रोपरि बाणावलिं ववर्ष। आर्यपुत्रोऽपि तस्य जयाशया सह धनुर्गुणमर्द्धेन्दुना बाणेन चिच्छेद। एवं छिन्न धनुर्गुणः सोऽश निवेगो रोपारुणितलोचन' कृपाणमादाय आर्यपुत्र हन्तु स्वरथादवतीर्य धावितवान्। अत्रानन्तरे आर्यपुत्रो निशितेन शरेण तद्बाहू मृणालच्छेदमिव चिच्छेद। छिन्नयोरपि बाह्वो' कोपपरीतलोचन स्व प्रतिमधावन्त त विलोक्य आर्यपुत्रो विद्यादत्तेन चक्रेण तस्य शिरश्छेदितवान्। इत्थमार्यपुत्रेण हतोऽशनिवेग'। तदा सर्वे विद्याधराः 'जय जय' नाद कृतवन्त•। तत सानन्दाभ्या सुनन्दा

निष्फल बना दिया। अपने प्रयत्नको निष्फल जाता देखकर अशनि-वेगका चहेरा क्रोधकी प्रबल ज्वाला से धमधमा उठा। उसने उसी समय धनुषको हाथ मे लेकर उससे बाणावली छोडना आर्यपुत्रके ऊपर प्रारंभ कर दी। आर्यपुत्रने उसी समय अर्धेन्दुबाण से उसका धनुष बीच में ही काट डाला। जब अशनिवेगने अपना धनुष कटा हुआ देखा तो क्रोध मे भरकर वह आर्यपुत्रको मारनेके अभिप्राय से रथ से उतर कर तलवारकी चोट उनपर करनेके लिये दौडा। इसीके बीच आर्यपुत्रने अपने तीखे बाण से उसके दोनों बाहुओं को काट दिया। बाहुओ के काटनेपर भी अशनिवेग को क्रोधाविष्ट होकर अपनी तरफ आते हुए देखा तो आर्यपुत्रने विद्याद्वारा प्रदत्त चक्रसे उसका मस्तक काट दिया। इस प्रकार आर्यपुत्र द्वारा अशनिवेग का विनाश हुआ सुनकर विद्याधरों को बडी खुशी हुई। उन्होंने "जयजय" शब्दों से आकाशतल गुजा दिया। आनदित बनी हुइ सुनदा एव

નિષ્ફળતા જોઈને અશનીવેગનો ચહેરો ક્રોધની જ્વાળાથી ધમધમી ઉઠયો તેણે એજ સમયે ધનુષ્યને હાથમા લઈને તેનાથી બાણો છોડવાનુ ચાલુ કર્યું આર્યપુત્રે એ સમયે અર્ધેન્દુ બાણથી તેનુ ધનુષ્ય વચમાથી કાપી નાખ્યુ જ્યારે અશનીવેગે પોતાના ધનુષ્યને કપાતુ જોયુ તો ક્રોધમાં આવીને તે આર્યપુત્રને મારવાના અભિપ્રાયથી રથમાથી ઉતરીને તરવારની ચોટ લગાવવા દોડયો આ સમયે આર્યપુત્રે પોતાના તીક્ષ્ણ એવા બાણથી તેના બન્ને હાથોને કાપી નાખ્યા પોતાની બન્ને ભુજાઓ કપાઇ જવા છતા પણ અશનીવેગને ક્રોધના આવેશમા પોતાની તરફ દોડયો આવતો જોયો ત્યારે આર્યપુત્રે વિદ્યાદ્વારા પ્રદત્ત ચક્રથી તેનુ માથુ કાપી નાખ્યુ આ પ્રકારે આર્યપુત્રના હાથથી અશનીવેગનો વિનાશ થયો હોવાનુ જાણીને વિદ્યાધરોને ઘણીજ ખુશી થઈ, તેમણે 'જયજય" શબ્દોથી આકાશ અને પૃથ્વીને ગજાવી મૂકી આન-

विमानहयगजवाहनाद्यारूढविद्याधरवृन्देन सह स्वप्रियाभिः सहित समित्रो गगनमार्गेण प्रस्थितः स्वल्पेनैव कालेन हस्तिनापुरमागत । महत्या विद्याधरऋद्ध्या विद्याधरपरिवारेण पत्नीभिश्च सह समागत कुमारमालोक्य नागरिका नितरा प्रमोदमापन्ना । कुमारस्य मातापितरौ कुमार शिरस्याघ्राय सम्प्राप्तप्राणाविव जातौ । तत शुभमुहूर्ते कुमारपित्राऽश्वसेनेन महता समारोहेण सह कुमारो राज्येऽभिषिक्त । महेन्द्रसिंहश्च सेनापति॰ कृत । मातापितृभ्या धर्मघोषस्थविराणा समीपे दीक्षा गृहीत्वा स्वजन्मसाफल्य सम्पादितम् ।

चित्त में आ जाय। महेन्द्रसिंह के इस प्रकार वचन सुनकर कुमार उसी क्षण वहा से विमान, हय, गज, वाहन आदि पर आरूढ हुए विद्याधरवृन्द के साथ अपनी प्रियाओं को साथ लेकर गगनमार्ग से हस्तिनापुर की ओर चल दिया। थोडी देर मे वह हस्तिनापुर आ पहुँचा। कुमार के आते ही समस्त नागरिकों में उसकी अपार विभूति से स्त्रियों की प्राप्ति से एव साथ में रहे हुए विद्याधरों के परिवार से अपार हर्ष की लहर दौड गई। मातापिताने कुमार के मस्तक को बडी ममता से सूघा। उस समय वे ऐसे मालूम पडे कि मानो इनमें नवीन चेतना आ गई है। शुभमुहूर्त मे कुमार के पिता अश्वसेनने बडे भारी समारोह के साथ कुमार का राज्य मे अभिषेक किया और उसके मित्र महेन्द्रसिंह को उसका सेनापति बनाया। बाद में मातापिता दोनोंने धर्मघोष स्थविर के पास जाकर दीक्षा धारण कर अपने मनुष्यभव को सफल बनाया।

સાભળીને કુમાર એજ સમયે ત્યાથી વિમાન, હાથી, ઘોડા, વાહન આદિથી સજ્જ બનીને વિદ્યાધર વૃન્દની સાથે પોતાની પત્નીઓને સાથમા લઈને ગગન માર્ગથી હસ્તિનાપુરની તરફ ઉપડયા થોડા જ વખતમા હસ્તિનાપુર પહોચી ગયા કુમારના આગમનથી સઘળા નગરજનોમા હર્ષની લહેર દોડવા લાગી, એની અપાર વિભૂતિ તેમ જ સ્ત્રીઓની પ્રાપ્તિ અને સાથે આવેલા વિદ્યાધરોના પરિવારને જોઈ સહુ કોઈ વાહવાહ પોકારવા લાગ્યા માતાપિતાએ ભારે મમતાથી કુમારને છાતી સાથે ચાપ્યા, આથી તેમનામા જાણે કોઈ નવીન ચેતના આવી ગયેલ હોય તેવો ભાસ સહુ કોઈને થવા લાગ્યો નગરભરમા ઉલ્લાસ જ ઉલ્લાસ જણાવા લાગ્યો નગરજનોએ ભારે ઉત્સાહ મનાવ્યો. અને રાજા અશ્વસેને ભારે સમારંભની સાથે કુમારનો રાજ્યાભિષેક કર્યો કુમારના મિત્ર મહેન્દ્રસિંહને સેનાપતિપદે સ્થાપવામા આવ્યા બાદમા રાજા રાણી બન્નેએ ધર્મઘોષ મુનિના પાસે જઈ દીક્ષા ધારણ કરી અને પોતાના મનુષ્યભવને સફળ બનાવ્યો.

राभिर्विद्याधरीभि सह विहरन विद्याधरेन्द्रसेवितचरणयुगलोऽय सुखेनात्रास्ते। अद्य तु क्रीडाविहारमनुलक्ष्यार्यपुत्रोऽस्माभिः सहात्र क्रीडावने समागतो भाग्यवशाद् भवानपि अत्र समागतः। एव ब्रुवत्या बकुलमत्या सनत्कुमारः शयन गृहान्निर्गतः। ततो महेन्द्रसिंहेन सह सपरिवारो वैताढ्य समागतः।

अथान्यदा प्राप्तावसरो महेन्द्रसिंहः कुमारमुवाच—कुमार! भवद्वियोगेन भवतः पितरौ नितरा विपीडितः। अतोऽर्हति भवान् स्वसन्दर्शनेन पित्रोर्दुःख मपनीय तौ प्रसादयितुम्। इति महेन्द्रसिंहवचो निशम्य कुमारस्तत्क्षण एव

लिया। जब से हम लोगों के साथ आर्यपुत्र का विवाह हुआ है तब से आर्यपुत्र विविध कलाओं में चतुर विद्याधरियों के साथ आनंदपूर्वक अपने समय को अतिवाहित कर रहे हैं। समस्त विद्याधरेन्द्र इनके चरणकमलों की सेवा मे उपस्थित रहा करते हैं। आज आर्यपुत्र हम सब के साथ क्रीडा कौतुक करनेकी भावना से क्रीडावन में आये हुए थे कि इतने मे भाग्यवश आपका भी यही पर समागम हो गया।

इस प्रकार महेन्द्रसिंह को जब बकुलमती-कुमार की कथा सुना रही थी कि इसी समय सनत्कुमार भी शयनगृह से बाहिर निकल पडे। और महेन्द्रसिंह को साथ लेकर सपरिवार वे वैताढ्य की तरफ चल दिये।

एक दिनकी बात है कि महेन्द्रसिंहने उचित समय पाकर कुमार से कहा-कुमार। आपके मातापिता आपके वियोग से अत्यत दुःखित हो रहे है। इसलिये अब आप ऐसा करे कि घरपर चलकर उनसे मिललें-ताकि उनका विषाद नष्ट हो जाय, और प्रसन्नता उनके

ચતુર વિદ્યાધરીઓની સાથે આનંદપૂર્વક પોતાનો સમય વિતાવી રહેલ છે સઘળા વિદ્યાધરેન્દ્ર તેમના ચરણકમળની સેવા કરવામા તત્પર રહે છે આજે અમો સઘળાની સાથે વનક્રીડા કરવા માટે આર્યપુત્ર અહી આવેલ છે અને એજ સમયે ભાગ્યવશાત આપનો અહીં પર સમાગમ થઈ ગયો.

આ પ્રકારે મહેન્દ્રસિંહને બકુલમતી સનત્કુમારની કથા સંભળાવી રહી હતી હતી તે સમયે સનત્કુમાર પણ આરામ લઈને બહાર આવી પહોચ્યા, અને પછી મહેન્દ્રસિંહને સાથે લઈ સપરિવાર તે વૈતાઢયની તરફ ચાલી નીકળ્યા

એક સમયની વાત છે કે, મહેન્દ્રસિંહે યોગ્ય સમય જોઈને કુમારને કહ્યું, હે કુમાર! આપના માતાપિતા આપના વિરહથી દુ ખી થઈ રહ્યા છે આ કારણે આપ એવું કરો કે ઘેર ચાલીને આપ એમને મળો કે જેનાથી એમનો વિષાદ દૂર થાય અને તેમના ચિત્તમા પ્રસન્નતા આવી જાય મહેન્દ્રસિંહના આ પ્રકારના વચન

सौधर्मेन्द्र पृष्टवन्तः–स्वामिन्! केन कारणेनास्य देवस्य–देहप्रभेदृशी जाता? शक्रः प्राह–भो देवा.! अनेन पूर्वभवेऽखण्डमाचामाम्लतपः कृतम्। तत्प्रभावादस्य देवस्यैव समुत्कृष्टा देहप्रभाऽस्ति। देवै पुनरिन्द्र पृष्ट–कश्चिदस्ति देहप्रभयै-तदेवसदृशः। इन्द्रेणोक्तम् अस्ति हस्तिनापुरे कुरुवंशीय सनत्कुमारनामा चक्र-वर्ती। स हि स्वदेहप्रभया सर्वानपि देवानतिशेते। इद शक्रवचनमश्रद्दधानौ विजयवैजयन्तनामानौ देवौ ब्राह्मणवेष कृत्वा हस्तिनापुरमायातौ। तयोर्विशिष्ट तेजो दृष्ट्वा विशिष्टौ कावप्येताविति निश्चित्य प्रतिहारिभिर्भूपभवन प्रवेशितौ

उसके जाते ही बैठे हुए उन देवोंने सौधर्मेन्द्र से पूछा–स्वामिन्! किस प्रकार से इस देवकी देहप्रभा इतनी उत्तीस थी। शकने प्रत्यु-त्तर रूप में कहा–हे देवो! इसने पूर्वभव में अखण्ड आचाम्लव्रत का आराधन किया है। उसीके प्रभाव से ही इसके देहकी इतनी विशिष्ट दीप्ति हुई है। देवोंने पुनः इन्द्र से पूछा–क्या ऐसी उत्कृष्ट देहप्रभा-वाला और भी कोई है? जो इसकी समानता कर सके। इन्द्रने कहा हा है–हस्तिनापुर में कुरुवंशोद्भव सनत्कुमार चक्रवर्ती ऐसा है। वह अपनी देहप्रभा से समस्त देवोंकी देहप्रभाको फीका करता है। इस प्रकारके कहे गये इन्द्रके वचनो पर विश्वास नही करनेवाले विजय वैजयन्त नामक दो देवोंने ब्राह्मणका वेष लेकर सनत्कुमारकी देह-प्रभाको निरीक्षण करनेका विचार किया। वे उस वेषमे हस्तिनापुरमें आये। उन ब्राह्मण देवोंकी विशिष्ट तेजस्विता देखकर 'ये कोई विशिष्ट व्यक्ति है' ऐसा विचार कर प्रतिहारजनोंने उनको चक्रवर्ती के

ગયા તેમના જવા પછી ત્યા બેઠેલા દેવોએ સૌધર્મેન્દ્રને પૂછ્યુ, સ્વામિન્! કયા કારણથી એ આવેલા દેવની દેહપ્રભા એટલી ઉજ્જવળ હતી? સૌધર્મેન્દ્રે પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ કે, હે દેવો! તેણે પૂર્વભવમા અખડ આચામ્લવ્રતનુ આરાધન કરેલ છે તેના પ્રભાવથી જ એના દેહની આ કાન્તિ થયેલ છે દેવોએ ફરીથી ઇન્દ્રને પૂછ્યુ શુ આવા ઉત્કૃષ્ટ દેહપ્રભાવાળા બીજા પણ કોઈ છે? જે એમની સમાનતા કરી શકે? ઇન્દ્રે કહ્યુ, હા છે હસ્તિનાપુરમા કુરુવશમા જન્મેલ સનત્કુમાર ચક્રવર્તી એવા છે, તે પોતાની દેહપ્રભાથી સમસ્ત દેવોની દેહપ્રભાને ફિક્કી પાડે છે આ પ્રમાણે ઇન્દ્રે કહેલ વાત ઉપર વિશ્વાસ ન કરવાવાળા બે દેવો વિજય અને વિજયતે બ્રાહ્મણનો વેશ લઈને સનત્કુમારની દેહપ્રભાનુ નિરીક્ષણ કરવાનો વિચાર કર્યો તેઓ બ્રાહ્મણનો વેશ લઈ હસ્તિનાપુર આવ્યા આ બ્રાહ્મણદેવોની વિશિષ્ટ તેજસ્વીતા જોઇને "આ કોઈ વિશિષ્ટ વ્યક્તિ છે" આવો વિચાર કરી પ્રતિહારોએ તેમનો ચક્રવર્તીના મહે

अथ प्रवर्द्धमानकोशबलादिसारो राजा सनत्कुमारश्चक्रवर्ती इत्यादिभय-निवारणपुरस्सरं प्रजाः स्वप्रजावत्परिपालयामास। ततः सनत्कुमारचक्रवर्तिभवने नवनिधिसहितानि चतुर्दशरत्नानि समुत्पन्नानि। ततः सनत्कुमारश्चक्रवर्ती चक्र-रत्नप्रदर्शितमार्गेण मगधवरदामप्रभासतिन्धुखण्डप्रपातादिक्रमेण सकलं भरतक्षेत्रं प्रसाध्य चक्रवर्तिपदं प्राप्तवान्।

अथान्यदा सुधर्मासभायां सौधर्मेन्द्रोऽनेकदेवदेवी समुपसेवितः स्वसिंहा सनारूढ आसीत्। तस्मिन् समये कश्चिदीशानकल्पदेवः सौधर्मेन्द्रसमीपे समागतः। तद्देहप्रभया सकलदेवदेहप्रभाऽऽदित्योदये चन्द्रग्रहादिप्रभेव निष्प्रभी कृता। स देवः सौधर्मेन्द्रं प्रणम्य स्वलोकं गतः। तस्मिन् गते तत्र स्थिता देवा

सनत्कुमार का राज्य में अभिषेक होने पर कोष (खजाना) एवं बल आदि समस्त खूब बढने लगा। कुछ समय बाद सनत्कुमार चक्रवर्ती पद से भी अलकृत हो गये। उन्होंने स्वचक्र परचक्र आदि के भयको हटाते हुए अपनी प्रजा का सतति के समान न्यायनीति के अनुसार पालन करना प्रारभ किया। नवनिधि चौदह रत्नोंकी प्राप्ति भी इनको हो गई। चक्ररत्न द्वारा प्रदर्शित मार्गके अनुसार उन्होंने भरतक्षेत्रके छह खडो पर अपनी विजयका झडा भी फहरा दिया।

एक समय सुधर्मासभा मे सौधर्मेन्द्र अनेक देव एव देवियोंके साथ वातचित करता हुआ अपने सिंहासन पर बैठा हुआ था। इतने मे ईशानकल्प का कोई एक देव उसके पास आया, उस आये हुए देवकी देहप्रभा से उपस्थित उन देवोंकी देहप्रभा आदित्य के उदय में चन्द्रग्रह आदिकी प्रभाकी तरह फीकी पड गई। आते ही उसने सौधर्मेन्द्र को नमन किया और अपने स्थान को चल दिया।

સનત્કુમારે રાજ્યધુરા ગ્રહણ કર્યા પછી રાજ્યના કોષ (ખજાના)મા તેમ જ બળ (સૈન્ય)મા સારી એવી વૃદ્ધિ થવા લાગી, અને થોડા જ સમય પછી સનત્કુમાર ચક્રવર્તી પદથી અલકૃત બની ગયા તેમણે સ્વચક્ર અને પરચક્રના ભયને દૂર કરી સઘળા પ્રજાજનોનુ ન્યાયનીતિ અનુસાર પાલન કરવાનો પ્રારભ કરી દીધો નવનિધિ ચૌદ રત્નોની પ્રાપ્તિ પણ તેને થઇ ગઇ ચક્રરત્ન દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ અનુસાર તેમણે ભરતક્ષેત્રના છએ ખડો ઉપર પોતાનો વિજયધ્વજ ફરકાવી દીધો

એક સમય સુધર્માસભામા સૌધર્મેન્દ્ર અનેક દેવ અને દેવીઓની સાથે વાત ચીત કરતા પોતાના સિંહાસન ઉપર બેઠેલ હતા એટલામા ઇશાન કલ્પનો કોઈ એક દેવ તેમની પાસે આવ્યો એ આવેલા દેવની દેવપ્રભાથી ત્યા બેઠેલા દેવોની દેહ પ્રભા સૂર્યના પ્રકાશથી ચદ્ર તારાઓ વગેરે જેમ ઝાખા પડી જાય તેવી દેખાવા લાગી ત્યા આવતા જ તેમણે સૌધર્મેન્દ્રને નમન કર્યું અને પોતાના સ્થાન ઉપર ચાલ્યા

राजाऽपि सविधिस्नानमकरोत्। स्नानानन्तरं सर्वमङ्गमाभूषणैराभूषयत्। एवं विभूषितशरीरो राजा सभायामागत्य सिंहासने समुपविष्टः। ततः प्रतिहारिणा स चक्रवर्ती द्विजावाकारयत्। द्विजावपि सभायामागत्य राज्ञो रूपं दृष्ट्वाऽतीव विषण्णौ सोचतु-अहो! मनुष्याणां रूपलावण्ययौवनानि क्षणदृष्टनष्टानि भवन्ति। तयोरेव वचनमाकर्ण्य चक्रवर्तिना प्रोक्तम्-भो! किमेवं भवन्तौ मम शरीरं निन्दतः? ताभ्यामुक्तम्-राजन्! देवानां रूपयौवनलावण्यानि प्रथमवयसः प्रभृति षण्मासशेषायुर्यावद् भवन्ति। यावज्जीवं न हीयन्ते। त्वच्छरीरे त्वाश्चर्यं दृश्यते।

हुए जाकर बैठ गये। इस तरफ राजाने सविधिस्नान किया और उसके बाद समस्त आभूषण पहिरे। सब प्रकार से सुसज्जित होकर पश्चात वह सभा में आकर सिंहासन पर विराजमान हो गये, बाद में राजाने प्रतिहार से कहा कि उन आये हुए दोनों ब्राह्मणों को बुलाओ। प्रतिहारने उनको बुलाया। वे सभामें आये। सिंहासन पर बैठे हुए राजाको देखा। देखते ही नाक भों सिकोडकर उन्होंने कहा-अहो! मनुष्योंका रूपलावण्य एवं यौवन क्षणभर में देखते २ ही विनष्ट हो जाता है। उनके इस प्रकार खेद खिन्न हुए चित्त से कहे गये वचनों को सुनकर चक्रवर्तीने उनसे कहा-कहो, क्या बात है क्यों तुम लोग मेरे शरीरकी निंदा कर रहे हो। उन्होंने चक्रवर्तीके वचनों के प्रत्युत्तर में कहा राजन्! देवोंका रूप यौवन एवं लावण्य प्रथम अवस्था से लेकर छहमासकी अवशिष्ट आयुके पहिले २ तक स्थिर रहता है वह यावज्जीव हीयमान नहीं है। परन्तु आपका यह शरीर ऐसा नहीं है।

સ્નાન કર્યું અને ત્યારપછી સઘળા આભૂષણો પહેર્યા સંપૂર્ણપણે સુસજ્જીત બનીને પછીથી તે રાજસભામા આવી સિંહાસન ઉપર બેસી ગયા એ પછી તેણે પ્રતિહારને આવેલા તે બન્ને બ્રાહ્મણોને બોલાવી લાવવા જણાવ્યું પ્રતિહારે બન્નેને બોલાવ્યા તેથી તેઓ સભામા આવ્યા અને સિંહાસન ઉપર બેઠેલા રાજાને તેમણે જોયા જોતાજ નાક અને મોઢું બગાડતા તેમણે કહ્યુ, અહો મનુષ્યનુ રૂપ, લાવણ્ય અને યૌવન ક્ષણભરમા જોતજોતામા વિનિષ્ટ થઈ જાય છે તેમના આ પ્રકારના ખેદખિન્ન રીતે કહેવામા આવેલા વચનોને સાભળીને ચક્રવર્તીએ તેમને કહ્યુ, કહો શુ વાત છે, શા માટે તમે લોકો મારા શરીરની આ પ્રકારે નિંદા કરી રહ્યા છો? તેમણે ચક્રવર્તીના વચનોના પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ, રાજન્! દેવોનુ રૂપ યૌવન અને લાવણ્ય પ્રથમ અવસ્થાથી લઈને છઠમહિનાની છેલ્લી ઘડીઓ પહેલા એકસરખુ રહે છે તે યાવત્

तौ राज्ञः समीप गतौ। तत्र ताभ्या तेऽमभ्यङ्गयन् राजा दृष्ट। शक्रगीत रूपादपि सातिशय रूप बिभ्राण राजान दृष्ट्वा तौ नितरा विस्मयमागतौ। तौ दृष्ट्वा राजा प्रोवाच-किमर्थ भवतोरागमन मम गृहे जातमिति कथ्यता भवन्तौ? धृतब्राह्मणरूपाभ्या देवाभ्यामुक्तम्-राजन्! तव सौन्दर्य त्रिभुवनेऽपि गीयते। अतस्तत्सौन्दर्यं द्रष्टुकामावावामत्रागतौ। तयोर्वचनमाकर्ण्य रूपगर्वितेन राज्ञा प्रोक्तम्-ब्राह्मणौ! सम्प्रति किं भवद्भ्या मम रूप दृष्टम्। स्तोक काल प्रतीक्षेता यावदह विभूषितशरीरः सभामण्डपे समागच्छामि। राज्ञो वचन निशम्य 'एवमस्तु' इत्युक्त्वा तौ द्विजौ राजनिर्दिष्टस्थाने राजान प्रतीक्षमाणौ स्थितौ। इतश्च

महल मे प्रविष्ट कराया और राजाके पास भी उनको पहुँचा दिया। राजाके पास पहुँचकर उन दोनोंने उस समय राजाको तैलका मर्दन करते हुए देखा। इन्द्रने चक्रवर्ती के रूपकी जैसी प्रशसा कीथी उस से भी कही अधिक चक्रवर्ती के रूपका निरीक्षण कर ये दोनों देव अधिक विस्मित हुए। देखकर चक्रवर्तीने उन से कहा-कहिये आप लोगोका यहां तक आगमन किस निमित्त से हुआ है। उन ब्राह्मण वेपधारी देवोंने चक्रवर्ती से कहा-राजन्! आपका सौन्दर्य सुना है त्रिभुवन मे सर्वश्रेष्ठ है अत उसको ही देखनेकी इच्छा से हमलोग यहा आये है। उनके इस वचनको सुनकर रूप से गर्वित हुए चक्रवर्तीने उनसे कहा-ब्राह्मणों! इस समय मेरा क्या रूप है जिसको आप देख रहे हैं। उस समय देखना जब कि मैं विभूपित शरीर होकर सभामडप मे जाऊँ। चक्रवर्ती के वचन सुनकर "एवमस्तु" कह कर वे दोनो ब्राह्मण राजनिर्दिष्ट स्थान में बुलानेकी प्रतीक्षा करते

સભા પ્રવેશ કરાવ્યો અને ચક્રવર્તીની પાસે પહોચાડયા રાજાની પાસે પહોચીને એ દેવોએ તે સમયે રાજાને તેલનુ મર્દન કરતા જોયા ઇન્દ્રે ચક્રવર્તીના રૂપની જે પ્રશસા કરેલ હતી તેથી પણ વધારે રૂપનાશીને જોઇને બન્ને દેવો વિસ્મય થયા તેમને જોઈને ચક્રવર્તીએ પૂછયુ, કહો! આપનુ આગમન કયા કારણે થયુ છે? બ્રાહ્મણ વેશધારી એ દેવોએ ચક્રવર્તીને કહ્યુ, હે રાજન્! આપના સૌંદર્ય વિશે અમે સાભળ્યુ છે કે ત્રિભુવનમા તે સર્વશ્રેષ્ઠ છે જેથી તેને જોવાની ઇચ્છાથી અમે અહીંયા આવેલ છીએ તેમના આ વચન સાભળીને રૂપથી ગર્વિત થયેલ ચક્રવર્તીએ તેમને કહ્યુ-બ્રાહ્મણો! આ સમય મારૂ શુ રૂપ છે કે જેને આપ જોઈ રહ્યા છો? મારૂ રૂપ એ સમયે જોવુ કે જે સમયે હુ વિભૂષિત શરીરવાળો બનીને સભા મડપમા જાઉ ચક્રવર્તીનુ વચન સાભળીને 'એવમસ્તુ' કહીને તે બન્ને બ્રાહ્મણ રાજનિર્દિષ્ટ સ્થાનમા બેલાવવાની પ્રતીક્ષા કરતો જઈને બેસી ગયા રાજાએ સવિધિ

ग्रह इव नितान्तदु:खावहः। अतः एतत्सर्वं परित्यज्य परलोकहितसाधकः संयम एव संसेव्यः। एवं विचार्य चक्रवर्ती तस्मिन्नेव काले चन्द्रसेनपुत्रं राज्येऽभिषिच्य प्रव्रज्याग्रहणार्थमुद्यमं चकार। एतद्दृष्ट्वा धृतविप्रवेषाभ्यां देवाभ्यां गीतम्-

अनुचरितं खलु भवता, चरितं निजकस्य पूर्वपुरुषस्य।
भरतमहानरपतिना, त्रिभुवनविख्यातकीर्तिमता।

एवं चक्रवर्तिनः प्रशंसां कृत्वा देवौ गतौ। चक्रवर्ती च सर्वं परित्यज्य विजयधराचार्यसमीपे दीक्षां गृहीतवान्। गृहीतदीक्षस्य चक्रिणः पृष्ठतः स्त्रीरत्नादीनि चतुर्दशरत्नानि, सर्वा रमण्यः, सर्वे सामन्ताः सैन्यानि, नवनिधयो, विद्याधरराजादयश्च षण्मासान् यावत् अनुबभ्रमुः। परन्तु संयमिना तेन सिंहावलोकितेनाऽपि ते नावलोकिताः।

अनिष्ट ग्रहके समान नितान्त दुःखदायक है। अतः इन सबका परित्याग करके परलोक में हितसाधक संयम ही एक मात्र भले प्रकार सेव्य है। ऐसा विचार कर चक्रवर्तीने उसी समय राज्य मे चन्द्रसेन पुत्र का अभिषेक करके प्रव्रज्या ग्रहणके लिये उद्योग प्रारंभ किया। ऐसी बात जब उन ब्राह्मण वेषधारी देवोंने देखी तो वे चक्रवर्तीकी प्रशंसा करते हुए कहने लगे कि धन्य है आपको जो आपने अपने पूर्व पुरुषोंके चरितका अनुकरण किया है। भरतचक्रवर्तीने भी ऐसा ही किया था। इस प्रकार प्रशंसा करके वे देव चले गये। पश्चात् चक्रवर्तीने समस्त परिग्रहका परित्याग करके विजयधराचार्य के पास दीक्षा धारण कर ली। मुनि दीक्षा से युक्त हुए चक्रवर्तीके पीछे २ स्त्रीरत्न आदि चौदह रत्न, समस्त रमणीजन, समस्त सामन्तवर्ग, सैन्यवृन्द,

---

ઉન્માદ છે પરિગ્રહ ગ્રહની માફક ભયંકર દુ:ખને આપનાર છે આથી એ સઘળાનો પરિત્યાગ કરીને પરલોકમાં હિતસાધક સંયમ જ સર્વ પ્રકારથી સેવન કરવા યોગ્ય છે આવો વિચાર કરીને ચક્રવર્તીએ પોતાના ચંદ્રસેન નામના પુત્રને રાજ્ય ગાદી ઉપર અભિષેક કરીને પ્રવ્રજ્યા ધારણ કરવાની પ્રવૃત્તિ શરૂ કરી દીધી આ વાત જ્યારે એ બ્રાહ્મણ વેશધારી દેવોએ જાણી તો તેઓ ચક્રવર્તીની પ્રશંસા કરતા કહેવા લાગ્યા કે, ધન્ય છે આપને કે, આપે આપના પૂર્વજોના પગલાનું અનુકરણ કર્યું છે ભરત ચક્રવર્તીએ પણ આજ પ્રમાણે કરેલ હતું આ પ્રકારની પ્રશંસા કરીને તે દેવ ચાલ્યા ગયા પછીથી ચક્રવર્તીએ સઘળા પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરીને વિજયધર આચાર્યની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી મુનિ દીક્ષાથી યુક્ત થયેલા ચક્રવર્તીની પાછળ સ્ત્રીરત્ન આદિ ચૌદ રત્ન, સઘળો સ્ત્રીસમાજ, સઘળા સામંતવર્ગ,

यत्तत्र रूपलावण्यादीनि किंचित्क्षणपूर्वमासीत्तदधुना विनष्टम्। राज्ञा प्रोक्तम्-कथ भवद्भ्यां ज्ञातम्? ताभ्यां प्रोक्तम्-थूत्कृत्य दृश्यताम्। भूपेन थूत्कृतम्। तत्र-थूत्कारे कृमिपुञ्जो दृष्टः। तदनु तेन केयूरादिविभूषित स्वबाहुयुगल हारादिविभूषित स्ववक्ष'स्थल च विवर्णमुपलक्ष्य चिन्तितवान्-अहो अनित्यता ससारस्य! असारता शरीरस्य! यन्मम शरीर त्रिभुवनसुन्दरमासीत्, तदियताऽल्पकालेनैव वैवर्ण्यमुपगतम्। अतोऽस्मिन्ससारे जनानामासक्तिरयुक्ता, शरीरे मोहकरणमज्ञानम्, रूपयौवनाभिमानो निर्विवेकिता, भोगासेवनमुन्माद, परिग्रहो

अभी पहिले जैसा रूपलावण्य आदि विशिष्ट शरीर आपका था वैसा वह अव नहीं रहा है। राजाने उनकी बात सुनकर कहा-यह बात तुमने कैसे जाना। तब उन्होने कहा-थूक कर आप इसकी परीक्षा कीजिये। राजाने वैसा ही किया। थूककर देखा तो उसमें कृमियोंका पुज दृष्टिगोचर हुआ। बाद मे केयूरादि से विभूषित स्वबाहु युगलको एव हारादि से विभूषित अपने वक्ष'स्थल को विवर्ण देखकर चक्रवर्तीने विचार किया-देखो ससारकी अनित्यता-शरीरकी आसारता-जो मेरा शरीर त्रिभुवन में सुदर था वह इतने थोडे से ही समय में विवर्ण बना हुआ दृष्टिगोचर होने लगा है। अतः इस ससार में मनुष्यकी आसक्ति ही अयुक्त है। शरीर मे मोहका कारण अज्ञानभाव है। रूप एव अज्ञानका अभिमान करना वह मनुष्योंकी बडी भारी निर्विवेकता है, भोगोंका आसेवन एक तरहका उन्माद है, परिग्रह

જીવ હિયમાન નથી પરતુ આપનુ આ શરીર એવુ નથી થોડા વખત ઉપર આપનુ રૂપ લાવણ્ય વિશિષ્ટ પ્રકારનુ હતુ તેવુ અત્યારે નથી રાજાએ તેમની વાત સાભળીને કહ્યુ, આ વાત કઇ રીતે તમે જાણી? આનો ઉત્તર આપતા તેમણે કહ્યુ કે, થૂકીને આપ એની પરીક્ષા કરો રાજાએ એ પ્રમાણે કર્યું, થૂકીને જોયુ તો એમા કૃમિ જીવાતો થોકબધ જોવામા આવી બાદમા કેયૂરાદિથી વિભૂષિત પોતાની બન્ને ભુજાઓને તેમ જ હાર આદિથી વિભૂષિત વક્ષ સ્થળને વિવર્ણ જોઇને ચક્રવર્તીએ વિચાર કર્યો કે સસારની કેવી અનિત્યતા છે? શરીરની પણ અસારતા છે, મારૂ જે શરીર ત્રિભુવનમા સુદર હતુ તે આટલા થોડા જ સમયમા વિવર્ણ થયેલુ દષ્ટિએ પડે છે આથી આ સસારમા મનુષ્યની આસક્તિ જ અયુક્ત છે શરીરના મોહનુ કારણ અજ્ઞાનભાવ છે રૂપ અને યૌવનનુ અભિમાન કરવુ એ મનુષ્યની મોટામા મોટી નિર્બળતા છે ભોગોનુ આ સેવન એક પ્રકારનો

एकदा सुधर्मासभायां समुपविष्टः सौधर्मेन्द्रः सनत्कुमारऋषिं प्रशंसन्निदमाह–अहो देवाः ! पश्यन्तु भवन्त सनत्कुमारऋषेर्धीरताम्। व्याधिभिः पीड्यमानस्तदपाकरणे समर्थोऽपि न तानपाकरोति। एवमिन्द्रवचनं निशम्य तावेव देवौ शक्रवचनमश्रद्दधानौ सनत्कुमारऋषेर्धैर्यं परीक्षितुकामौ वैद्यवेषं कृत्वा ऋषिसमीपमायातौ। प्रोचतुश्च तौ ऋषिम्–हे ऋषे ! भवच्छरीरं व्याधिभिराक्रान्तम् आवां सद्वैद्यौ भवद्रोगान् प्रतिकर्तुं समर्थौ अतः आज्ञापयतु भवान् चिकित्सितुम्। एवं ताभ्यामुक्तः सनत्कुमार ऋषिर्न किञ्चिदप्युवाच। मौनावलम्बिन

करके भी चक्रवर्तीने स्वशरीर मे वर्तमान व्याधियों का किसी भी प्रकार का प्रतिकार नहीं चाहा।

एक समय सुधर्मासभा में समुपविष्ट सौधर्मेन्द्रने सनत्कुमार ऋषिकी प्रशंसा करते हुए ऐसा कहा–अहो देवो! देखो सनत्कुमार मुनिकी धीरता जो व्याधियों को दूर करनेकी शक्तिवाले होने पर भी व्याधियों को दूर करनेकि इच्छातक भी नहीं करते है। इन्द्रके इन प्रशंसाभरे वचनों को सुनकर उन्ही पहिले देवोको इन्द्रके वचन पर विश्वास नही जमा अतः वे दोनों सनत्कुमार ऋषिके धैर्यकी परीक्षा करने निमित्त वैद्यका वेष लेकर उनके पास आये, कहने लगे हे ऋषि! आपका शरीर इस समय अनेक व्याधियों से आक्रन्द हो रहा है। अतः हम वैद्य होनेके नाते यह चाहते हैं कि आपका इलाज करे। इसके लिये आप शीघ्र आज्ञा दो। इस प्रकार जब उन दोनों देवोने कहा तो सनत्कुमार ऋषिने उनको बातका कोइ भी उत्तर नहीं दीया,

થવા છતા પણ ચક્રવર્તીએ પોતાના શરીરમાના કોઈ પણ રોગનો પ્રતિકાર ન કર્યો

એક સમય સુધર્માસભામા સઘળાનો સામે સૌધર્મેન્દ્રે સનત્કુમાર ઋષિની પ્રશસા કરીને એવુ કહ્યુ કે, હે દેવો ! જુઓ સનત્કુમાર મુનિની ધીરતા કે જેઓ પોતે વ્યાધિઓને દૂર કરવાની શક્તિવાળા હોવા છતા પણ વ્યાધિઓને દૂર કરવાની ઈચ્છા પણ કરતા નથી ઇન્દ્રના આ પ્રશસા ભરેલા વચનો સાભળીને પહેલાના એ બે દેવોને તેમની વાત ઉપર વિશ્વાસ ન બેઠો આથી તેઓ સનત્કુમાર મુનિના ધૈર્યની પરીક્ષા કરવા નિમિત્ત વૈદ્યનો વેશ લઈને તેમની પાસે આવ્યા અને કહેવા લાગ્યા કે, હે ઋષિ ! આપનુ શરીર અનેક વ્યાધિઓથી આ સમયે વ્યાકુળ જણાય છે અમો વૈદ્ય હોવાથી ઇચ્છીએ છીએ કે, આપના દર્દોનો ઈલાજ કરીએ, તો કૃપા કરી આપ જલ્દીથી આજ્ઞા આપો આ પ્રકારે જ્યારે બન્ને દેવોએ કહ્યુ તો સનત્કુમાર ઋષિએ તેમની વાતનો કાંઈ પણ ઉત્તર આપ્યો નહીં, પરતુ મૌનનુ અવલ બન

प्रथम षष्ठभक्त कृत्वा पारणायां तेन केनाऽपि गृहस्थेन दत्तमजातकमुप लब्धम्। ततः प्रभृति षष्ठभक्तमेव तेन कृतम्। पारणायां चान्त प्रान्तनीरसाहारादिक तेन गृहीतम्। एवमन्तप्रान्तनीरसाहारग्रहणात्तस्य शरीरे—कण्डूः१, ज्वर२, कास३, श्वासः४, स्वरभङ्ग५, अक्षिपीडा६, उदरव्यथा७, एते सप्त रोगाः समुत्पन्नाः। एते रोगाः सप्तशतवर्षाणि यावत्तेन सोढाः। उग्र तप कुर्वतस्तस्य—आमर्शौषधिः, श्लेष्मौषधि, विप्रुडौषधि, जल्लौषधिः, सर्वौषधि, इत्यादिका अनेका लब्धय सजाता। लब्धीर्लब्ध्वाऽपि स स्वशरीरव्याधिप्रतिकार नाकरोत्।

नवनिधियां एव विद्याधर राजा वगैरह छह महिने तक फिरते रहे परन्तु उस चक्रवर्तीने उनकी तरफ आख उठाकर भी नहीं देखा।

प्रथम षष्ठभक्त करके जब वे पारणा के लिये किसी गृहस्थ के यहा गये तब वहा उन्होंने अजातक–बकरीको छाछ से पारणा किया। बाद में इसी तरह वे षष्ठभक्त करते रहे और पारणा अन्त प्रान्त नीरस आहार से करते रहे। इस प्रकार अन्त प्रान्त नीरस आहार के ग्रहण करने से उनके शरीर मे कण्डू, ज्वर, कास, श्वास, स्वरभग, अक्षिपीडा एव उदरव्यथा इत्यादि अनेक रोग उत्पन्न हो गये। इन सब रोगो को चक्रवर्तीने सातसौ वर्षतक सहन किया। तपस्या की आराधना मे किसी भी प्रकारकी त्रुटी नही आने दी प्रत्युत अधिक वीर्योल्लास से उग्र तपस्याकी आराधना करने में अपने आपको अग्रेसर किया। इस से उनको आमर्शौषधि, श्लेषमौषधि, विप्रुडोषधि, जल्लौषधि, सर्वौषधि इत्यादि अनेक प्रकारकी लब्धियाँ प्राप्त हो गई। लब्धिया प्राप्त

સે ચવૂદ, નવનિધિ અને વિદ્યાધર રાજા વગેરે છ મહિના સુધી ફરતા રહ્યા પરંતુ તેણે એમની તરફ આખ ઉઠાવીને પણ જોયુ નહીં

પ્રથમ ષષ્ઠભક્ત કરીને જ્યારે તે પારણા માટે કોઈ ગૃહસ્થને ત્યા ગયા ત્યારે ત્યા તેમણે અજાતક–બકરીની છાશથી પારણુ કર્યું આ પ્રમાણે તેઓ ષષ્ઠભક્ત કરતા રહ્યા અને પારણુ અન્તપ્રાન્ત નિરસ આહારથી કરતા રહ્યા આ પ્રકારના અન્ત પ્રાન્ત નિરસ આહારના કારણે એમના શરીરમા ખુજલી જ્વર, કાસ, શ્વાસ, સ્વરભગ, અક્ષિપીડા અને ઉદરવ્યથા એવા અનેક રોગો ઉત્પન્ન થયા આ સઘળા રોગોને ચક્રવર્તીએ સાતસો (૭૦૦) વર્ષ સુધી સહન કર્યા તપસ્યાની આરાધનામા ક્યાય કશી પણ ત્રુટી આવવા ન દીધી અને દિનપ્રતિદિન મક્કમતાપૂર્વક તપસ્યાની આરાધના કરવામા પોતાની જાતને આગ્રહી બનાવી આથી તેમને આમર્શોષધિ, શ્લેષ્મૌષધિ, વિપ્રુડૌષધિ, જલ્લૌષધિ, સર્વૌષધિ ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારની લબ્ધિઓ પ્રાપ્ત થઇ લબ્ધિઓ પ્રાપ્ત

कुमारत्वे पञ्चाशद्वर्षसहस्राणि, माण्डलिकत्वे पञ्चाशद् वर्षसहस्राणि, चक्रवर्तित्वे लक्षवर्षाणि, श्रामण्ये च लक्षवर्षाणि एव त्रिलक्षवर्षाणि सर्वमायुः परिपाल्य दीर्घतरेण पर्यायेण सिद्धो भविष्यति, इतस्तृतीयदेवलोके गत्वा ततश्च्युत्वा महाविदेहे सेत्स्यमानत्वात्। तथा चोक्तम्-स्थानाङ्गसूत्रे चतुर्थस्थानके प्रथमोद्देशे—

"अहावरा तच्चा अंतकिरिया महाकम्मपच्चायाए यावि भवइ, से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइए। जहा-दोच्चा णवर दीहेण परियाएण सिज्झइ जाव सव्वदुक्खाणमंत करेइ। जहा से सणकुमारे राया चाउरंतचक्कवट्टी तच्चा अंतकिरिया।"

॥ इति सनत्कुमारदृष्टान्तः ॥

सनत्कुमार ऋषिने कुमारकाल मे पचास (५०) हजार वर्ष, माडलिकपद मे भी पचास (५०) हजार वर्ष तथा चक्रवर्तीपद मे एक लाख वर्ष एव श्रामण्यपद में भी एक लाख वर्ष निकाले। इस प्रकार इनकी समस्त आयु तीन लाख वर्षकी थी। इस समस्त आयु का इस प्रकार भोग करके फिर वे दीर्घतर काल से सिद्धिपद के भोक्ता बनेंगे। क्यो कि यहा से तृतीय देवलोक मे जाकर वहा से चवकर महाविदेह मे जन्म लेकर मोक्ष जावेंगे। स्थानाङ्गसूत्र में यही बात कही है— "अहावरा तच्च अंतकिरिया महाकम्मपच्चाया एयावि भवइ। से णं मुंडे भवित्ता अगाराओं जाव पव्वइए। जहा दोच्चाणवर दीहेण परियाएण सिज्झइ जाव सव्व दुःखाणमंत करेइ। जहा से सणकुमारे राया चाउरंतचक्कवट्टी। तच्चा अंतकिरिया"।

॥ सनत्कुमार चक्रवर्ती की कथा समाप्त ॥

राजने नमन करी पोताने स्थाने चाल्या गया सनत्कुमार ऋषिए कुमारकाळमा पचास हजार (५००००) वर्ष, माडलीकपदमा पण पचास हजार (५००००) वर्ष तथा चक्रवर्तीपदना एक लाख (१०००००) वर्ष अने मुनिपदमा पण एक लाख (१०००००) वर्ष काढ्या आ प्रकारे तेमनी सपूर्ण आयुष्य त्रण लाख (३०० ००) वर्षनु हतु ए सघळा आयुनो आ प्रकारे भोग करीने पछीथी तेओ दिर्घतर काळने सिद्धपदने भोगवनार बनशे केम के, अहींथी त्रीजा देवलोकमा जईने त्यांथी महाविदेहमा जन्म लईने मोक्षमा जशे स्थानांगसूत्रमा पण आज वात कहेल छे-

"आहावरा तच्चा, अंतकिरिया महाकम्म पच्चाया एयावि भवइ। से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइए। जहा दोच्चाण वर दीहेण परियाएण

मुनिं दृष्ट्वा तौ पुनरपि तदेव प्रोचतुः । मुनिः पुनरपि न किञ्चिदुवाच। तत स्तृतीय वारं तौ तदेव प्रोचतुः। तदा मुनिरुवाच-भद्रौ। किं युवां शारीरिक व्याधिनिराकरणे समर्थौ, किं वा कर्मव्याधिनिराकरणे ? तौ प्रोचतुः-भदन्त ! आवां शारीरिकव्याधिनिराकरणे समर्थौ, न तु कर्मव्याधिनिराकरणे। तदा सनत्कुमारमुनिना स्वमुखात् निष्ठीवनमादाय स्वकीयैकाङ्गुलिरालेपिता। आलेप समकालमेव तस्य सर्वं शरीरं कनकवर्णं जातम्। एवं तत्प्रभावं सहनशक्तिं च विलोक्य विस्मितौ तौ देवौ तं प्रणम्य स्वस्थानं गतौ। सनत्कुमारऋषिस्तु

प्रत्युत मौनका अवलम्बन कर स्थिर रहे। मौनी हुए मुनिको देखकर फिर वही बात देवोंने कही परन्तु फिर भी ऋषिने उनकी बातका कोइ उत्तर नहीं दिया। जब उन्होंने तीसरी बार ऐसा ही कहा, तब मुनिने कहा-हे वैद्यो ! हमे पहिले आप यह बतलावें कि आप लोग शारीरिक व्याधि को दूर करने में शक्तिशालि है या कर्मव्याधि को दूर करने मे ? मुनिकी बात सुनकर वैद्य वेषधारी देवोंने कहा-महाराज ! हमलोग तो शारीरिक व्याधि को ही दूर करने मे शक्तिशाली हैं कर्मव्याधि को नही। उनकी ऐसी बात सुनकर ऋषिने अपने मुख से अमी निकाल कर उसको अपनी अंगुली पर लगाया। अंगुली पर अमीको लगाते ही वह कुष्टपीडित समस्त शरीर सुवर्णमय हो गया और सब रोग मिट गये। इस प्रकार का प्रभाव जब सनत्कुमार मुनिका प्रभाव उन देवोंने देखा तो उनकी सहनशक्ति से वे बडे ही चकित हुए और इन्द्रके वचनो पर विश्वास करते हुए मुनिराज को नमन कर अपने स्थान पर चले गये।

ફરીને સ્થિત રહ્યા મૌન બનેલા મુનિને જાણીને ફરીથી એજ વાત દેવોએ કહી, પરંતુ ઋષિએ બીજી વખત કહેવાયેલી વાતનો પણ કોઇ પ્રત્યુત્તર આપ્યો નહીં જ્યારે દેવોએ ત્રીજી વખત તેવું જ કહ્યું ત્યારે ઋષિએ કહ્યું-હે વૈદ્યો ! અમને પહેલા આપ એ બતાવો કે, આપ શારીરિક વ્યાધિને દૂર કરવામાં શક્તિશાળી છો કે કર્મવ્યાધિને દૂર કરવામાં ? ઋષિની વાતને સાંભળીને વૈદ્ય વેશધારી દેવોએ કહ્યું, મહારાજ !, અમે લોકો તો શારીરિક વ્યાધિને જ દૂર કરવા શક્તિશાળી છીએ, કર્મવ્યાધિને નહીં તેમની આવી વાત સાભળીને ઋષિએ પોતાના મુખમાથી થૂક કાઢીને તેને પોતાની એક આંગળી ઉપર લગાડયું થૂકને આંગળી ઉપર લગાડતાજ તે રોગથી પિડાતું સઘળું શરીર સુવર્ણમય થઇ ગયું અને સઘળા રોગ મટી ગયા મુનિરાજનો આ પ્રકારનો પ્રભાવ જ્યારે દેવોએ જોયો તો તેમની સહનશક્તિથી તેઓ ઘણા જ ખુશી થયા, અને ઇન્દ્રના વચનો ઉપર વિશ્વાસ [illegible] મુનિ

कुमारत्वे पञ्चाशद्वर्षसहस्राणि, माण्डलिकत्वे पञ्चाशद् वर्षसहस्राणि, चक्रवर्तित्वे लक्षवर्षाणि, श्रामण्ये च लक्षवर्षाणि एव त्रिलक्षवर्षाणि सर्वमायु' परिपाल्य दीर्घतरेण पर्यायेण सिद्धो भविष्यति, इतस्तृतीयदेवलोके गत्वा ततश्च्युत्वा महाविदेहे सेत्स्यमानत्वात्। तथा चोक्तम्—स्थानाङ्गसूत्रे चतुर्थस्थानके प्रथमोद्देशे—

"अहावरा तच्चा अंतकिरिया महाकम्मपच्चायाए यावि भवइ, से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइए। जहा—दोच्चा णवरं दीहेण परियाएण सिज्झइ जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेइ। जहा से सणकुमारे राया चाउरंतचक्कवट्टी। तच्चा अंतकिरिया।"

॥ इति सनत्कुमारदृष्टान्तः ॥

सनत्कुमार ऋषिने कुमारकाल मे पचास (५०) हजार वर्ष, माण्डलिकपद में भी पचास (५०) हजार वर्ष तथा चक्रवर्तीपद में एक लाख वर्ष एवं श्रामण्यपद में भी एक लाख वर्ष निकाले। इस प्रकार इनकी समस्त आयु तीन लाख वर्षकी थी। इस समस्त आयु का इस प्रकार भोग करके फिर वे दीर्घतर काल से सिद्धिपद के भोक्ता बनेंगे। क्यों कि यहा से तृतीय देवलोक मे जाकर वहा से चवकर महाविदेह मे जन्म लेकर मोक्ष जावेंगे। स्थानाङ्गसूत्र मे यही बात कही है—"अहावरा तच्च अंतकिरिया महाकम्मपच्चाया एयावि भवइ। से णं मुंडे भवित्ता अगाराओं जाव पव्वइए। जहा दोच्चाणवर दीहेण परियाएण सिज्झइ जाव सव्व दुःखाणमंत करेइ। जहा से सणकुमारे राया चाउरंतचक्कवट्टी। तच्चा अंतकिरिया"।

॥ सनत्कुमार चक्रवर्ती की कथा समाप्त ॥

રાજને નમન કરી પોતાને સ્થાને ચાલ્યા ગયા. સનત્કુમાર ઋષિએ કુમારકાળમા પચાસ હજાર (૫૦૦૦૦) વર્ષ, માંડલીકપદમા પણ પચાસ હજાર (૫૦૦૦૦) વર્ષ તથા ચક્રવર્તીપદના એક લાખ (૧૦૦૦૦૦) વર્ષ અને મુનિપદમા પણ એક લાખ (૧૦૦૦૦૦) વર્ષ કાઢયા. આ પ્રકારે તેમની સંપૂર્ણ આયુષ્ય ત્રણ લાખ (૩૦૦ ૦૦) વર્ષનુ હતુ એ સઘળા આયુનો આ પ્રકારે ભોગ કરીને પછાથી તેઓ દિર્ઘતર કાળને સિદ્ધપદને ભોગવનાર બનશે કેમ કે, અહીંથી ત્રીજા દેવલોકમા જઇને ત્યાથી મહાવિદેહમા જન્મ લઇને મોક્ષમા જશે સ્થાનાંગસૂત્રમા પણ આજ વાત કહેલ છે-

"आहावरा तच्चा, अंतकिरिया महाकम्म पच्चाया एयावि भवइ। से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ जाव पव्वइए। जहा दोच्चाण वर दीहेण परियाएण

मुनिं दृष्ट्वा तौ पुनरपि तदेव प्रोचतु । मुनिः पुनरपि न किञ्चिदुवाच। तत स्तृतीय वार ता तदेव प्रोचतुः। तदा मुनिरुवाच-सद्वैद्यौ। किं युवा शारीरिक व्याधिनिराकरणे समर्थौ, किं वा कर्मव्याधिनिराकरणे ? तौ प्रोचतुः-भदन्त ! आवा शारीरिकव्याधिनिराकरणे समर्थौ, न तु कर्मव्याधिनिराकरणे। तदा सनत्कुमारमुनिना स्वमुखात् निष्ठीवनमादाय स्वकायैकाङ्गुलिरालेपिता। आलेप समकालमेव तस्य सर्व शरीर कनकवर्ण जातम्। एव तत्प्रभाव सहनशक्ति च विलोक्य विस्मितौ तौ देवौ त प्रणम्य स्वस्थान गतौ। सनत्कुमारऋषिस्तु

प्रत्युत मौनका अवलम्बन कर स्थिर रहे। मौनी हुए मुनिको देख-कर फिर वही वात देवोंने कही परन्तु फिर भी ऋषिने उनकी वातका कोइ उत्तर नही दिया। जब उन्होने तीसरी बार ऐसा ही कहा, तब मुनिने कहा-हे वैद्यो! हमें पहिले आप यह बतलावें कि आप लोग शारीरिक व्याधि को दूर करने मे शक्तिशालि है या कर्मव्याधि को दूर करने में ? मुनिकी वात सुनकर वैद्य वेषधारी देवोंने कहा-महाराज! हमलोग तो शारीरिक व्याधि को ही दूर करने में शक्तिशाली हैं कर्मव्याधि को नही। उनकी ऐसी वात सुनकर ऋषिने अपने मुख से अमी निकाल कर उसको अपनी अगुली पर लगाया। अगुली पर अमीको लगाते ही वह कुष्ठपीडित समस्त शरीर सुवर्णमय हो गया और सब रोग मिट गये। इस प्रकार का प्रभाव जब सनत्कुमार मुनिका प्रभाव उन देवोंने देखा तो उनकी सहनशक्ति से वे बडे ही चकित हुए और इन्द्रके वचनो पर विश्वास करते हुए मुनिराजको नमन कर अपने स्थान पर चले गये।

કરીને સ્થિત રહ્યા મૌન બનેલા મુનિને જાણીને ફરીથી એજ વાત દેવોએ કહી, પરંતુ ઋષિએ બીજી વખત કહેવાયેલી વાતનો પણ કોઇ પ્રત્યુત્તર આપ્યો નહીં જ્યારે દેવોએ ત્રીજી વખત તેવુ જ કહ્યુ ત્યારે ઋષિએ કહ્યુ-હે વૈદ્યો! અને પહેલા આપ એ બતાવો કે, આપ શારીરિક વ્યાધિને દૂર કરવામા શક્તિશાળી છો કે કર્મવ્યાધિને દૂર કરવામા ? ઋષિની વાતને સાંભળીને વૈદ્ય વેશધારી દેવોએ કહ્યુ, મહારાજ! અમે લોકો તો શારીરિક વ્યાધિને જ દૂર કરવા શક્તિશાળી છીએ, કર્મવ્યાધિને નહીં તેમની આવી વાત સાભળીને ઋષિએ પોતાના મુખમાથી થૂક કાઢીને તેને પોતાની એક આગળી ઉપર લગાડયુ થૂકને આગળી ઉપર લગાડતાજ તે રોગથી પિડાતુ સઘળુ શરીર સુવર્ણમય થઇ ગયુ અને સઘળા રોગ મટી ગયા મુનિરાજનો આ પ્રકારનો પ્રભાવ જ્યારે દેવોએ જોયો તો તેમની સહનશક્તિથી તેઓ ઘણા જ ખુશી થયા, અને ઇન્દ્રના વચનો ઉપર વિશ્વાસ [illegible]-અને મુનિ

श्री शान्तिनाथकथा—

आसीज्जम्बूद्वीपे पूर्वमहाविदेहेषु पुष्कलावती विजये महर्द्धिका पुण्डरीकिणी नाम नगरी। तत्रासीदद्भुतपराक्रमो घनरथो नाम राजा। तस्य द्वे राज्यौ स्तः प्रीतिमती मनोरमा च। एकदा प्रीतिमत्या राज्याः कुक्षौ ग्रैवेयकच्युतो वज्रायुधजीवः समवतीर्णः। तदा सा स्वप्ने स्वमुखे प्रविशन्तममृतं वर्षन्तं गर्जन्तं मेघं ददर्श। प्रातः सुप्तोत्थिता स्वप्नवृत्तान्तं राज्ञे न्यवेदयत्। तया निवेदितो राजा स्वप्नफलमेवमुवाच—देवि! मेघ इव भुवः सन्तापहारकस्तव पुत्रो भविष्यति। तदनु सहस्रायुधजीवोऽपि ग्रैवेयकाच्च्युतो देव्या मनोरमायाः कुक्षौ समवतीर्णः। तदा तया स्वप्ने रम्यो रथो दृष्टः। साऽपि पत्ये स्वप्नवृत्तान्तं न्य

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस जम्बूद्वीप के अंदर पूर्वमहाविदेह मे पुष्पकलावतीविजय हैं, उसमें महाऋद्धिसंपन्न पुंडरीक नामकी एक नगरी है। उसका शासक अद्भुत पराक्रमशाली घनरथ नामका राजा था। इसकी दो रानियाँ थी। एकका नाम प्रीतिमती और दूसरीका नाम मनोरमा था। एक समय प्रीतिमती रानीकी कुक्षि मे ग्रैवेयक से चव कर वज्रायुध का जीव अवतरित हुआ। उस समय रानीने स्वप्न मे अपने मुख में प्रवेश करते हुए गरजते मेघको देखा। जो उस समय अमृतकी झडी लगा रहा था। रानीने प्रातः उठकर इस वृत्तान्त को राजा से जाकर कहा। राजाने उसका उत्तर इस प्रकार दिया। कहा—हे देवि! मेघकी तरह सन्तापका अपहारक पुत्र तुम्हारी कुक्षि से उत्पन्न होगा। इसी समय मनोरमाने भी स्वप्न में एक मनोरम रथ देखा। उसने भी

શ્રી શાંતિનાથ પ્રભુની કથા આ પ્રકારની છે—

આ જમ્બૂદ્વિપની અંદર પૂર્વ મહાવિદેહમાં પુષ્કલાવતી વિજય છે એમાં મહાઋદ્ધિસંપન્ન પુંડરિક નામનું એક નગર હતું. એના શાસક અદ્ભૂત પરાક્રમશાળી એવા ઘનરથ નામના રાજા હતા. જેમને બે રાણીઓ હતી. એકનું નામ પ્રીતિમતી અને બીજીનું નામ મનોરમા હતું. એક સમય પ્રીતિમતી રાણીની કૂખેથી ગ્રૈવેક ચ્યવીને વજ્રાયુધના જીવે અવતાર લીધો. આ સમયે રાણીએ સ્વપ્નામાં પોતાના મોઢામાં ગર્જતા મેઘને પ્રવેશ કરતા જોયો. કે જે એ સમયે અમૃતની ઝડીથી વરસી રહેલ હતો. રાણીએ સવારના ઉઠીને રાત્રિના સ્વપ્નાની હકીકત રાજાને સંભળાવી. રાજાએ તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે આપતાં કહ્યું કે, હે દેવી! મેઘની માફક સંતાપને દૂર કરનાર એવો પુત્ર તમારી કૂખેથી અવતરશે. આ સમયે મનોરમાએ પણ સ્વપ્નામાં એક મનોરમ એવો રથ જોયો. તેણે પણ પોતાના સ્વપ્નની વાત રાજાને કહી

तथा—

मूलम्—चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महड्ढिओ ।
संती संतिकरे लोए, पत्तो गइमणुत्तरं ॥३८॥

छाया—त्यक्त्वा भारतं वर्षं, चक्रवर्ती महर्द्धिकः ।
शान्तिः शान्तिकरो लोके, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥३८॥

टीका—'चइत्ता' इत्यादि ।

महर्द्धिकः=चतुर्दशरत्ननवनिधानादियुक्तः चक्रवर्ती=पञ्चमचक्रवर्ती लोके=त्रिभुवने शान्तिकरः=शान्तिकारकः, अनेन तीर्थङ्करत्वं सूचितम्, शान्तिः=शान्तिनाथ नामा षोडशस्तीर्थङ्करो भारतं वर्षं त्यक्त्वा=षट्खण्डऋद्धिं परित्यज्य अनुत्तरां=सर्वोत्कृष्टां सिद्धिरूपां गतिं प्राप्तः ॥३८॥

तथा—'चइत्ता' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महड्ढिओ-महर्द्धिकः) चौदह रत्न एवं नवनिधि आदि ऋद्धियों से युक्त (चक्कवट्टी-चक्रवर्ती) पंचमचक्रवर्ती (लोए संतिकरे-लोके शान्तिकरः) तथा त्रिभुवन में सर्वप्रकार से शांतिके कर्त्ता (संति-शान्तिः) ऐसे शांतिनाथ प्रभुने भी जो के सोलहवें तीर्थंकर हुए हैं (भारहं वासं-भारतं वर्षम्) षट्खंड की ऋद्धिका (चइत्ता-त्यक्त्वा) परित्याग करके (अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तरां गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट सिद्धिरूप गतिको प्राप्त किया है ।

सिज्झइ जाव सव्व दुक्खाणमंतं करेइ । जहा से सणंकुमारे राया चाउरंत चक्कवट्टी । तच्चा अंतकिरिया" ।

॥ સનત્કુમાર ચક્રવતીંની કથા સમાપ્ત ॥

તથા—"चइत्ता' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महड्ढिओ-महर्द्धिक ચૌદરત્ન અને નવવિધિ આદિ રિદ્ધિઓથી યુક્ત चक्कवट्टी-चक्रवर्ती પાંચમા ચક્રવર્તી लोए संतिकरे-लोके शान्तिकर તથા ત્રિભુવનમાં શાંતિના કરતા એવા संति-शान्ति શાંતિનાથ પ્રભુએ પણ કે જેઓ સોળમા તીર્થંકર થયા છે તેમણે भारहं वासं-भारतं वर्षम् ષટ્ખંડની રિદ્ધિનો चइत्ता-त्यक्त्वा પરિત્યાગ કરીને अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तरां गतिं प्राप्त, સર્વોત્કૃષ્ટ સિદ્ધિરૂપ ગતિને પ્રાપ્ત કરેલ છે

प्रव्राजितः। ततः कियत्कालानन्तरं केवलज्ञानं सम्प्राप्य स जिनोऽर्हन्केवली जातः। भगवान् घनरथो हि भव्यान् प्रबोधयन् भूमौ विहरति स्म।

राजा मेघरथोऽपि स्वर्गे शक्र इव समस्तां मेदिनीं शासितवान्। एकदा सिंहासने समुपविष्टस्य मेघरथस्याङ्के भयाकुलस्त्रस्तः कम्पमानो दीनः कोऽपि पारावतः समागत्य निपतितो मनुष्यवाचया वदति—राजन्! शरणं मार्गयन्नहं तवाङ्के निपतितोऽस्मि, अतोऽर्हसि भवान् मां परित्रातुम्। राज्ञा प्रोक्तम्—पारावत त्वं निर्भयो भूत्वा ममाङ्के तिष्ठ।

को एवं वज्ररथको बनाकर दीक्षा अंगीकार करली और खूब तपश्चर्या करके घातिया कर्मों को विनाश से वे केवलज्ञान प्राप्त कर अर्हन्त केवली बन गये। इधर भगवान् घनरथने भव्यजीवों को प्रतिबोधित करनेके लिये भूमण्डल पर विहार करना प्रारंभ किया। उधर मेघरथने भी स्वर्गमें शक्रकी तरह समस्त वसुधामण्डलका शासन करना प्रारंभ किया।

एक समयकी बात है कि जब मेघरथ सिंहासन पर बैठे थे उनके गोद में भयत्रस्त कोई दीनहीन कबूतर कांपता २ आकर गिर पड़ा। इस से राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ। आश्चर्यचकित राजाको देखकर कबूतरने मनुष्यवाणी द्वारा उनसे ऐसा कहा—हे राजन्! अपनी रक्षाकी याचना करता हुआ ही मैं आपकी गोदी में आकर पड़ा हूं। अतः आपका कर्तव्य है कि आप मेरी रक्षा करें। कबूतरकी इस प्रकार वाणी सुनकर राजाने उसको धैर्य बंधाते हुए कहा—हे कबूतर! तुम घबराओ नहीं—निर्भय होकर मेरी गोदी मे रहो।

રાજપાટ આપી દીક્ષા અંગીકાર કરી દીક્ષા ગ્રહણ કર્યા પછી તેમણે ખૂબ તપ કર્યું અને ઘાતીયા કર્મોનો વિનાશ કરી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું અને અર્હંત કેવલી બની ગયા આ પછી ભગવાન ઘનરથે ભવ્ય જીવોને પ્રતિબોધિત કરવા માટે ભૂમંડળ ઉપર વિહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો આ બાજુ મેઘરથે પણ ઈન્દ્રની માફક સઘળા વસુધામંડળનું શાસન કરવાનો પ્રારંભ કર્યો

એક સમયની વાત છે કે જ્યારે મેઘરથ સિંહાસન ઉપર બેઠેલા હતા ત્યારે ભયથી કંપી રહેલું એક કબૂતર તેમના ખોળામાં આવી પડયું આથી રાજાને ઘણું જ આશ્ચર્ય થયું રાજાને આશ્ચર્યચકિત જાણીને ખોળામાં પડેલા એ કબૂતરે વાણી દ્વારા એવું કહ્યું કે હે રાજન! હું મારી રક્ષાની યાચના માટે જ આપના શરણે આવેલ છું આથી આપનું કર્તવ્ય છે કે આપ મારી રક્ષા કરો કબૂતરની આ પ્રકારની વાણી સાંભળીને રાજાએ તેને ધીરજ આપતાં કહ્યું કે, હે કબૂતર! તું ગભરા નહીં નિર્ભય થઈને મારા ખોળામાં બેસી રહે અહીં તને કોઈ પ્રકારનો

वेदयत्। नृपेणोक्तम्-जात। तव पुत्रा महारथा भविष्यति। पूर्ण काले उभ अपि राज्ञ्यौ क्रमेण नयनानन्दकर शुभलक्षणधर दारक जनितवत्यौ। तत्र प्रीतिमत्याः सुतस्य मेघरथ इति नाम कृतम्, मनोरमाया सुतस्य तु वज्ररथ इति। क्रमेण तौ यौवन प्राप्तौ। तदा पिता राजकन्यकाभिः सह तयोर्विवाह कारित'। तौ प्रियाभि सह कामभोगान भुञ्जानौ सुखेन काल नयत' स्म। अन्यदा लोकान्तिकदेवैर्बोधित' श्रीघनरथो निर्निदान वार्षिक दान दिनेभ्योऽनाथेभ्य सार्धर्मिकेभ्यश्च दत्त्वा ज्येष्ठ पुत्र मेघरथ राज्ये, यौवराज्ये च वज्ररथ सस्थाप्य

इस स्वप्न को अपने पति से कहा तो इसका उत्तर उसको भी यों मिला कि तुम्हारी कुक्षि से जो पुत्र होगा वह महारथी होगा। यह स्वप्न मनोरमाने उस समय देखा था, कि जब उसके गर्भ में ग्रैवेयक से चव कर सहस्रायुध का जीव अवतरित हुआ था। गर्भका समय जब दोनों रानियों का समाप्त हुवा तब दोनोंके यहा नयनानदकारी एव शुभ लक्षणों के धारक दो पुत्र उत्पन्न हुए। प्रीतिमती के पुत्र का नाम मेघरथ था। और मनोरमा के पुत्र का नाम वज्ररथ रखा गया। क्रम क्रम से बढकर जब ये दोनों युवा हो गये तब धनरथने इनका विवाह राजकन्याओ के साथ कर दिया। दोनों पुत्र आनद के साथ कामभोगो को भोगते हुए अपना समय अतिवाहित करने लगे।

एक समयकी बात है कि घनरथ को लोकान्तिक देवोने आकर प्रतिबोधित किया तब उन्होंने निर्निदान वार्षिक दान दीन अनाथ एव सार्धर्मिक जनो के देकर तथा राज्यपद का अधिकारी ज्येष्ठपुत्र मेघरथ

તેના ઉત્તરમા પણ રાજાએ આ પ્રમાણે કહ્યુ કે તમારી કૂખેથી અવતરનાર પુત્ર એક જબ્બર મહારથી થશે આ સ્વપ્ન મનોરમાએ એવા સમયે જોયેલ હતુ કે તેના ગર્ભમા ગ્રૈવેયકથી ચ્યવીને સહસ્રાયુધના જીવનો સચાર થયો હતો ગર્ભનો સમય બન્ને રાણીઓને પૂરો થયો ત્યારે બન્નેને નયનને આનદ પમાડે તેવા શુભ લક્ષણોના ધારક પુત્રોનો જન્મ થયો પ્રીતિમતીના પુત્રનુ નામ મેઘરથ અને મનોરમાના પુત્રનુ નામ વજ્રરથ રાખવામા આવ્યુ ક્રમે ક્રમે વધીને જ્યારે એ બન્ને યુવાવસ્થાએ પહોચ્યા ત્યારે ઘનરથે તે બન્નેના લગ્ન રાજકન્યાઓની સાથે કરાવ્યા બન્ને પુત્રો કામભોગોને ભોગવતા રહીને પોતાનો સમય આનદમા વ્યતીત કરવા લાગ્યા

એક સમયની વાત છે કે રાજા ઘનરથને લોકાન્તિક દેવોએ આવીને પ્રતિબોધિત કર્યા ત્યારે તેણે નિર્નિદાન, વાર્ષિકદાન, દીન અનાથ અને સાધર્મિક જનોને દઈને રાજ્યપદના અધિકારપદે મોટા પુત્ર મેઘરથને સ્થાપી તેમજ વજ્રરથને યુવ

रक्षितुमर्हसि। किंचानेन भुक्तेन तव क्षणमात्रमेव तृप्तिः स्यात्। अस्य तु प्राणाना नाश एव स्यात्। तव द्राक्षा खर्जूरादिखाद्यैः क्षुद्व्यथामपनेतुं शक्तोऽपि। तर्हि किमर्थमिदं तुच्छमुदरं भर्तुं नरकनिगोदाद्यनन्तदुःखजनिकां घोरां प्राणहिंसां करोषि। हे देवानुप्रिय। हिंसां विमुच्य धर्ममाश्रय। येन त्वमस्मिन् लोके परलोके चोत्तमं सुखं प्राप्स्यसि। राज्ञो वचनं निशम्य लुब्धकः प्राह—राजन्। अयं कपोतो मत्तो भीतस्तव शरणमुपागतः। क्षुत्पीडापीडितोऽहमस्मि। सम्प्रत्यहं कस्य शरणं प्रपद्ये इति त्वमेव ब्रूहि। हे भूप! यथा कपोतमिमं रक्षसि,

दूसरों के भी प्राणों की रक्षा कर। दूसरी बात एक यह भी है कि इसके खाने से तुझे तो एक क्षणमात्र को ही तृप्ति होगी-परन्तु इस विचारे के प्राणों का नाश हो जावेगा। संसार में क्षुधाकी निवृत्ति के लिये पदार्थों की कमी नहीं है-द्राक्षा, खजूर आदि अच्छे २ पदार्थ मौजूद है। उनको खाकर भी तू अपनी क्षुधा की निवृत्ति जब कर सकता है तो फिर क्यों व्यर्थ में इस तुच्छ उदर को भरने के लिये नरक निगोदादिक के अनंत दुःखों को देनेवाली घोर प्राणिहिंसा करता है। हे देवानुप्रिय! मेरा तो तुझ से यही कहना कि तू इस हिंसाका परित्याग करके अहिंसारूप धर्मका आश्रय कर कि जिसके प्रभाव से तू इस लोक में और परलोक में उत्तम सुखों का भोक्ता बन सके। राजाके इस प्रकार वचन सुनकर लुब्धकने कहा—हे राजन्! यह कपोत मुझ से भयभीत होकर आपकी शरण में आया है और मैं इस समय क्षुधा से पीडित हो रहा हूं तो कहो मैं इस वख्त किसकी शरण में जाऊं? हे भूप! आप तुम जिस तरह इस कबूतरकी रक्षा करना चाह

બન બીજી એક વાત એ પણ છે કે તને તો આ કબૂતરને ખાઈ જવાથી એક ક્ષણ પૂરતી તૃપ્તિ થશે પરંતુ આ બિચારાના પ્રાણનો તો નાશ જ થઈ જવાનો સંસારમાં ભૂખની તૃપ્તિ માટે પદાર્થોનો તોટો નથી દ્રાક્ષ, ખજૂર આદિ સારા સારા પદાર્થો પુરતા પ્રમાણમાં છે અને તેને ખાઈને તું જ્યારે તારી ભૂખને સંતોષી શકે તેમ છે તો પછી શા માટે નકામો આ તુચ્છ પેટને ભરવા માટે નરક નિગોદાદિકને આપનાર એવી ઘોર પ્રાણીહિંસા કરે છે? હે દેવાનુપ્રિય! મારૂં તો તને એ કહેવાનું છે કે, તું આ હિંસાનો પરિત્યાગ કરી અહિંસારૂપ ધર્મનો આશ્રય લે કે જેના પ્રભાવથી તું આલોકમાં તેમ જ પરલોકમાં ઉત્તમ સુખોનો ભોક્તા બની શકે રાજાનું આ પ્રકારનું વચન સાંભળીને શિકારીએ કહ્યું કે, હે રાજન્! આ કબૂતર મારાથી ભયભીત થઈને આપની શરણમાં આવેલ છે અને હું આ સમયે ભૂખથી પિડાઈ રહ્યો છું તો કહો! અત્યારે હું કોનો આશ્રય લઉં? હે રાજા! તમો જે રીતે આ કબૂતરનું રક્ષણ કરવાનું ચાહી રહ્યા છો તો એજ રીતે આપ

नास्त्यत्र तव किमपि भयम्? राज्ञो वचनं निशम्य पारावतः सुखेन संस्थितः। ततः सर्पमनुगरुड इव तं पारावतमनुपरिगृहितधनुर्बाणः कोऽपि लुब्धकः समागत्य राजानमुच्चैः स्वरेण प्रोवाच–राजन्–अयं मम भक्ष्यः। अत एनं विमुञ्चतु भवान्। लुब्धकस्य वचनमाकर्ण्य राजा प्राह–लुब्धक! शरणागतममुं न कदापि परित्यक्ष्यामि। क्षत्रिया हि स्वभावत एव शरणागतवत्सला भवन्ति, अतस्ते प्राणानपि दत्त्वा शरणागतं रक्षन्ति। हे व्याध! विवेकीनरस्तवाऽपि परप्राणानपहृत्य स्वप्राणपरिपोषणं न युक्तम्। यथा तव स्वप्राणाः प्रियाः, तथाऽन्येषामपि स्वप्राणाः प्रिया भवन्ति, अतस्त्वं स्वप्राणानिव परप्राणानपि

यहां तुमको कुछ भी भय नहीं हो सकता है। इस प्रकार राजाके वचन सुनकर वह कबूतर वहां सुख से ठहर गया। सांप का पीछा जैसा गरुड करता है इसी तरह से उसका पीछा करता हुआ एक लुब्धक–शिकारी इतने में वहां आ पहुंचा और उच्च स्वर से राजासे बोला–राजन्! यह कबूतर मेरा भक्ष्य है–अतः आप इसको छोड दीजिये। लुब्धककी बात सुनकर मेघरथ राजने कहा हे लुब्धक! शरण में आये हुए कबूतर को मैं कभी भी नहीं छोड सकता हूँ। क्यों कि क्षत्रियों की यह प्राकृतिक टेव होती है कि वे अपने प्राणों को भी देकर शरणागत प्राणीकी रक्षा करते हैं। तथा हे व्याध! तेरे जैसे विवेकी जनको भी परप्राणों का अपहरण करके स्वकीय प्राणों का पोषण करना उचित नहीं है। देखो–तुझे जैसे अपने प्राण प्रिय हैं इसी तरह अन्य प्राणीओं को भी अपने प्राण प्रिय हैं। इसलिये तुझे चाहिये कि तू अपने प्राणों की जैसे रक्षा किया करता है वैसे ही

ભય નથી આ પ્રકારનું રાજાનું અભયવચન સાંભળીને તે કબૂતર ત્યાં સુખપૂર્વક શાંત બન્યું સાપની પાછળ જેમ ગરૂડ ફરે છે એજ પ્રમાણે કબૂતરની પાછળ પડેલ શિકારી આ સ્થળે આવી પહોંચ્યો અને ઉચ્ચ સ્વરથી રાજાને ઉદ્દેશીને કહેવા લાગ્યું કે હે રાજન્! આ કબૂતર મારો ભક્ષ છે, આથી આપ તેને છોડી દો. શિકારાની વાત સાંભળીને મેઘરથ રાજાએ કહ્યું કે, હે શિકારી! મારા શરણે આવેલ આ કબૂતરને હું છોડી શકું નહીં કેમકે ક્ષત્રિયોની એ પ્રકૃતિની ટેવ હોય છે કે તેઓ પોતાનો પ્રાણ આપીને પણ શરણાગત પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, તથા હે શિકારી તારા જેવા વિવેકી જનને માટે બીજાના પ્રાણનો નાશ કરીને પોતાના પ્રાણનું રક્ષણ કરવું એ વ્યાજબી નથી તને જેમ તારો પ્રાણ પ્રિય છે એવી જ રીતે બીજા પ્રાણીઓને પણ પોતાનો પ્રાણ પ્રિય હોય છે આથી તારે વિચારવું જોઈએ કે તું તારા પ્રાણની જે રીતે રક્ષા કરે છે એજ રીતે બીજાઓના પ્રાણોનો પણ રક્ષક

प्रति मन्त्रिप्रभृतयः प्राहु -देव ! अनेन तव शरीरेण समग्रा पृथिवी परिपाल्यते तच्छरीरमस्य तुच्छपक्षिणः कृते न त्यक्तुमर्हति भवान । इत्थं मन्त्रिणां वचनं निशम्य राजा तेभ्यो धर्ममाहात्म्यमुपवर्ण्य धर्मार्थं प्राणपरित्यागोऽपि श्रेयसे एव भवतीति तान् बोधितवान् । इत्युक्त्वा राजा तुलायामेकतः कपोतं संस्थाप्य द्वितीयतश्छुरिकया स्वयं स्वमांसमुत्कृत्योत्कृत्य स्थापयति । राजा यथा यथा स्वमांसमुत्कृत्योत्कृत्य तुलायां स्थापयति तथा तथा कपोतस्यापि भारोऽधिको जायते । इत्थं स्वावयवानुत्कृत्योत्कृत्य तुलायां स्थापयन् राजा क्रमेण स्वशरीरमपि तुलायां धृतवान् । तथापि कपोतस्य भारोऽधिको जातः । तदा भूपति

लिये उद्यत हुए राजा से मन्त्री आदिकोंने कहा-देव ! आप यह क्या करने को उद्यत हो रहे हैं-विचारो तो सही, इस आपके शरीर से यह समस्त पृथिवी परिपालित हो रही है इसलिये इस शरीर को इस तुच्छ पक्षीके निमित्त नष्ट करना आपको उचित नहीं है। इस प्रकार मन्त्रीजनोंके वचन सुनकर राजाने उनको धर्मका माहात्म्य समझाया और समझाकर यह कहा कि-धर्म के निमित्त किया गया अपने प्राणो का परित्याग भी कल्याण के लिये ही माना गया है। इस प्रकार कह कर राजाने तुला पर एक ओर तो उस कबूतरको रख दिया और दूसरी ओर अपने शरीर से मांस काट २ कर रखने लगा। ज्यों २ मांस शरीरसे काट २ कर उस तुला के पलडे पर रखा जाने लगा त्यों २ उस कपोत का वजन भी अधिक २ बढने लगा। अन्त मे राजाने उस तुला पर अपने समस्त शरीरको रख दिया तो भी कबूतर के भार बराबर उनके शरीरका भाग नहीं हो सका। ऐसी स्थिति जब

કહ્યુ, દેવ ! આપ આ શુ કરી રહ્યા છો ? વિચારો તો ખરા ! આપના આ શરીરથી સઘળી પૃથ્વીનુ પાલનપોષણ થઈ રહેલ છે માટે આપે આપના શરીરને આવા તુચ્છ પક્ષિના કારણે નષ્ટ કરવુ એ ઉચિત નથી મંત્રીજનોના આ પ્રકારના વચનોને સાભળીને રાજાએ તેમને ધર્મનુ મહાત્મ્ય સમજાવ્યુ, સમજાવીને એવુ કહ્યુ કે, પોતાના ધર્મને માટે સ્વેચ્છાએ કરવામા આવેલો પ્રાણનો પરિત્યાગ પણ કલ્યાણકારકજ મનાયેલ છે આ પ્રકારે કહીને રાજાએ ત્રાજવામા એક તરફ એ કબૂતરને રાખ્યુ અને સામા ત્રાજવાના પોતાના શરીરમાનુ માસ કાપી કાપીને રાખવા માડ્યુ શરીરથી કાપી કાપીને જેમ જેમ માસ ત્રાજવામા મૂકાતુ ગયુ તેમ તેમ તે કબૂતરનુ વજન પણ વધવા માડ્યુ છેવટે રાજાએ પોતાના શરીરને ત્રાજવામા રાખી દીધુ રાજાનુ સઘળુ શરીર ત્રાજવામા મુકાઈ જવા છતા પણ કબૂતરની ભાગેભાર

तथैव शरणागत मामपि रक्षितुमर्हसि । स्वस्थो जनो हि धर्माधर्मविचार कर्तुं क्षमो भवति । बुभुक्षितो जनः किं किं न पाप करोति ? इति भवता न श्रुत किम् । हे नरेन्द्र ! अन्यैर्भोज्यैर्मम तृप्तिन भवति । अह हि सद्यःहतप्राणिमासभोजनशीलो ऽस्मि । अत. क्षुधया म्रियमाणाय मह्य मम भक्ष्यमिम कपोत प्रदातुमर्हति भवान । यदि कपोत दातु नेच्छति भवान, तर्हि कपोतप्रमाण स्वमास प्रयच्छतु। इत्थ लुब्धक वचो । निशम्य राजा प्राह—लुब्धक । त्व क्षुधया मा म्रियस्व । अह हि कपोत प्रमित स्वमासमुत्कृत्य तुभ्य ददामि एव स्वमासमुत्कृत्य दातुमुद्यत भूपति

रहे हो उसी तरह शरणागत मेरी भी आप रक्षा करें । मनुष्य जब स्वस्थ होता है तभी तो इसको धर्म अधर्म का विचार आ सकता है । बुभुक्षित अवस्था मे मनुष्य सब बातें भूल जाता है। अत' इस अवस्था में प्राणी क्या क्या पाप नहीं करता है ? अर्थात् सब तरह का पाप करता हैं। आप भी तो इस बात से परिचित है। अत. हे नरेन्द्र। आप यह निश्चय समझिये कि अन्नवस्तु से मे.ी तृप्ति नहीं होनेकी—क्यों कि मे ताजे प्राणी के मास को खानेके स्वभाववाला हू । इसलिये जब आप इतने दयालु हैं तो आप क्षुधा से म्रियमाण मेरे इस भक्ष्य को दे देने की कृपा करे। यदी आप ऐसा नहीं करना चाहते है तो इसके प्रमाण में जितना मांस आवे उतना मास आप अपना हमे दे देवें। इस प्रकार लुब्धक के वचन सुनकर राजाने उस से कहा तुम क्षुधा से न मर सको इसलिये मैं इस कपोतप्रमित अपने मास को काटकरके तुझे देता हू। इस प्रकार अपने शरीर को काटकर कपोतप्रमित मास देनेके

મારી પણ શરણાગત જાણીને રક્ષા કરો ! મનુષ્ય જ્યારે સ્વસ્થ હોય છે ત્યારે તેને ધર્મ અધર્મનો વિચાર આવી શકે છે ભૂખથી પિડાતો મનુષ્ય સઘળી વાતો ભૂલી જાય છે આથી આ અવસ્થામા પ્રાણીથી જે પાપ ન થાય તેટલું ઓછુ છે આપ પણ આ વાતને જાણોજ છો આથી હે રાજેન્દ્ર ! આપ એ વાત નિશ્ચિત માનો કે, બીજી કોઇ પણ વસ્તુથી મારી ક્ષુધાની તૃપ્તિ થવાની નથી કેમકે, હું પ્રાણીના તાજા માસને ખાવાના સ્વભાવવાળો છુ આ કારણે આપ આટલા દયાળુ છો તો ક્ષુધાથી વ્યાકુળ બનેલા મારા આ ભક્ષને મને સોપી દેવાની કૃપા કરો જો આપ આ પ્રમાણે કરવા ન ઇચ્છતા હો તો તેના વજન જેટલુ માસ આપ આપના દેહથી મને કાઢી આપો આ પ્રકારનુ શકરાનુ વચન સાભળીને તેને રાજાએ કહ્યુ, તમે ભૂખથી મરી ન જાવ આ માટે હુ આ કબૂતરના વજન જેટલુ માસ મારા શરીરમાથી તમને આપુ છુ આ રીતે પોતાના શરીરને કાપીને કબૂતરના વજન જેટલુ માસ આપવા તત્પર બનેલા રાજાને મત્રી અધિકારીએ

सौधर्मेन्द्रवचनं निशम्य तदसहमानावश्रद्धानौ चावां भवद्विरुद्धं समाचरितवन्तौ। तमपराधं क्षन्तुमर्हति भवान्। सौधर्मेन्द्रवर्णितं भवद्धर्मानुरागादपि भवतो धर्मानुरागं विशिष्टतरं पश्यावः। अहो! भवतो धर्मानुरागः। भवता स्वजन्मना सफलितेयं भूः। एवं मुहुर्मुहुः स्तुत्वा तौ देवौ स्वस्थानं गतवन्तौ। इत्थं भूपतिना करुणारसवर्षणेन तीर्थङ्करनामगोत्रं समुपार्जितम्। ततो राजा धर्मध्यानादिकं कुर्वन् न्याय्येन मार्गेण पृथिवीमनुपालयन् कंचित् कालं नीतवान्।

इस प्रकार सौधर्मेन्द्र के वचन को सुनकर हम लोगों को इस बात पर श्रद्धा नहीं हुई, अतः हमने वेष परिवर्तित कर आपकी परीक्षा की तो आप वास्तव में जैसा सौधर्मेन्द्रने आपके प्रति अपना विचार प्रदर्शित किया था उससे भी विशिष्ट प्रमाणित हुए हैं। इस परीक्षण में हमारे द्वारा जो कुछ विरुद्ध आचरण हुआ है उसकी हम आप से क्षमा मागते हैं। हमें आशा है कि आप हमारे इस निमित्तके अपराध को क्षमा करेंगे। सौधर्मेन्द्र ने आपका धार्मिक अनुराग जिस रूप मे प्रकट किया है उस रूप से अधिक धार्मिक अनुराग हमने आप में पाया है। धन्य है आपके इस विशिष्टतर धर्मानुराग को। आपने अपने जन्म से इस भूमिको वास्तव मे सफल किया है इस प्रकार राजाकी पुनः २ स्तुति करके ये दोनों देव अपने स्थान पर गये। इस प्रकार करुणा रस की वर्षा से राजाने तीर्थंकर नाम गोत्र का उपार्जन किया। धर्मध्यान से अपने समयका सदुपयोग करने-

પ્રકારના સૌધર્મેન્દ્રના વચનને સાંભળીને અમોને તે વાત ઉપર શ્રદ્ધા ન થવાથી અમોએ વેશ પરિવર્તન કરીને આપની પરીક્ષા કરી આપ વાસ્તવમા જેવુ સૌધર્મેન્દ્ર તરફથી આપના વિષયમા કહેવામાં આવેલ હતુ તેનાથી પણ વધુ પ્રમાણમા આપની દૃઢતા પ્રતીતિ થયેલ છે આ પરીક્ષામા અમારા તરફથી જે કાંઈ વિરૂદ્ધ આચરણ થવા પામેલ હોય તો તેની આપની પાસે ક્ષમા માગીએ છીએ અને આશા છે કે, આપ અમારા આ અપરાધની ક્ષમા આપશો સૌધર્મેન્દ્રે આપનો ધાર્મિક અનુરાગ જે સ્વરૂપથી કહેલ છે તે રૂપથી વધુ પ્રમાણમા ધાર્મિક અનુરાગ અમોએ આપનામા જોયેલ છે ધન્ય છે આપના આ પ્રખર ધર્માનુરાગને ! આપે આપના જન્મને ખરેખર રીતે આ ભૂમિમા સફળ બનાવેલ છે આ પ્રકારે રાજાની વારવાર સ્તુતિ કરીને એ બન્ને દેવો પોતાના સ્થાન ઉપર ચાલ્યા ગયા આ પ્રકારની કરૂણારસની વર્ષાથી રાજાએ તીર્થંકર નામ ગોત્રનુ ઉપાર્જન કર્યું ધર્મ

श्चिन्तयति-धिग्माम्-स्वल्पभारं शरीरं मया समुपलब्धम्। यदि मम शरीरं महद् भविष्यत्, तदा तत्कपोतपरिरक्षणे क्षममभविष्यत्। अहो! किं करोमि, कथमेनं कपोतं रक्षयामि? इत्थं तरुणकरुणार्द्रेण चित्तेन चिन्तयतस्तस्य राज्ञो मनोगतं भावं कृतकपोतव्याधवेषौ तौ देवौ स्वावधिज्ञानेन विज्ञाय प्रकटितस्वस्वरूपौ दिव्यर्द्धिसम्पन्नौ तौ देवौ स्वदिव्यतेजोभिर्दशदिशः समुद्द्योतयन्तौ राज्ञः सर्वानवयवान् यथास्थानं संयोज्य दिव्यशरीरं दिव्यवर्णं दिव्यरूपं दिव्यलावण्यं च निर्माय राजानं दिव्यसिंहासने संस्थाप्य तच्चरणयोः प्रणिपत्य कृताञ्जली एवमुक्तवन्तौ-राजन्! 'मेघरथं नृपं धर्माच्चालयितुं सुरा अपि न समर्थाः' इति

राजाने देखी तो राजा को बडा भारी विचार आया-वे सोचने लगे कि मुझे धिक्कार है, जो मेरा यह शरीर बहुत कम वजनदार निकला है। यदि मेरा यह शरीर विशेष वजनदार होता तो ही इस कबूतर की रक्षा करने मे वह समर्थ हो सकता। अब क्या करूँ-कैसे इस कबूतर की रक्षा करूँ? इस प्रकार करुणा से आर्द्र हुए चित्त से विचार करनेवाले राजाके मनोगत भावों को कपोत एव व्याध के वेषवाले उन दोनों देवों ने अपने २ अवधिज्ञान द्वारा जानकर अपना असली स्वरूप प्रकट कर दिया। उसी समय वे दिव्यऋद्धि से सपन्न बन गये एव दिव्यकान्ति द्वारा दश दिशाओं को प्रकाशित करने लगे और वे राजा के कटे हुए शारीरिक अवयवोंको यथास्थान नियोजित करके राजाको दिव्य सिंहासन पर बैठाकर उनके चरणों पर गिर पडे तथा हाथ जोडकर राजा से कहने लगे-राजन्! "मेघरथ राजा को धर्म से विचलित करनेके लिये देव भी समर्थ नही है"

वजन न थयु आ प्रमाणेनी परिस्थति जोता राजाने घणुज आश्चर्य थयु अने विचारवा लाग्या के, मने धिक्कार छे के, मरु आ शरीर घणुज ओछा वजनवालु निकळ्यु जो मारु आ शरीर वधारे वजनदार होत तो आ बिचारा दीन कबूतरनी रक्षा करवामा हु समर्थ थई शकत हवे शु करु? कई रीते आ कबूतरनी रक्षा करु? आ प्रकारनी करुणाथी आर्द्र बनेला चित्तथी विचार करता राजाना मनोगत भावोने कबूतर अने शकराना वेशवाळा ए बन्ने देवोए पोतपोताना अवधी ज्ञानथी जाणीने पोतानु असली स्वरूप प्रगट करी दीधु आ समये तेओ दिव्य ऋधिथी सपन्न बनी गया अने दिव्य कांतिद्वारा दशे दिशाओने प्रकाशित करवा लाग्या अने तेओए राजाना कपायेला अवयवोने योग्य स्थळे गोठवीने तथा तेना शरीरमा दिव्य वर्ण दिव्यरूप दिव्यलावण्य, प्रगट करीने, राजाने दिव्य सिंहासन उपर बेसाडी तेना चरणोमा नमी पडया तथा हाथ जोडीने राजाने कहेवा लाग्या राजन्! "मेघरथ राजाने धर्मथी विचलित करवामा देव पण समर्थ नथी" आ

भ्राता सप्तशतसंख्यकैः पुत्रैश्च, सहस्रचतुष्कैः पार्थिवैश्च सह तीर्थङ्करस्य भगवतो घनरथस्य समीपे दीक्षां गृहीत्वा एकादशाङ्गान्यधीत्य सपरिवारो भूतले विहरति स्म। स हि विंशतिस्थानकानि पुनः पुनः समाराधयति। इत्थं स्थानकवासित्वं समाराध्य साधुसिंहः स मेघरथमुनिरुग्रं सिंहनिष्क्रीडितं तपः पूर्णं यावत् तप्त्वा संयमं च पालयित्वाऽनशनं कृत्वा कालमासे कालं कृत्वा सर्वार्थसिद्धे विमाने देवत्वेन समुत्पन्नः। तद्बान्धवोऽपि कियत्कालानन्तरमनशनं कृत्वा कालधर्ममासाद्य तत्रैव देवत्वेन समुत्पन्नः।

अस्मिन्नेव भारते वर्षे सर्वर्द्धिसमन्वितं पुरन्दरपुरोपमं हस्तिनापुरं नाम नगरम्। अलकाया कुबेर इव तत्रासीद् विश्वसेनो नाम नरपतिः। तस्यासीत्

के साथ तथा सातसौ पुत्रों के साथ एवं चार हजार राजाओं के साथ तीर्थंकर भगवान घनरथ के समीप दीक्षा धारण करली। तथा द्वादशाग का अध्ययन करके वे अपनी शिष्य मंडली सहित भूमण्डल पर विहार करने लगे।

मेघरथ मुनि ने बीस स्थानों की पुनःपुनः आराधना की। इस प्रकार स्थानकवासित्व की समराधना करके साधुओं मे सिंह जैसे मेघरथ मुनिने उग्रसिंह निष्क्रीडित तप पूर्णलक्षतक आचरित किया। इस प्रकार संयम की पालना एवं अनशनका आचरण करते हुए उन्होंने काल अवसर में काल करके सर्वार्थसिद्धि विमान में देव पर्यायको प्राप्त किया। मेघरथ मुनिराज के अन्य बन्धुजन भी कितनेक कालका अनशन करके कालकर सर्वार्थसिद्ध मे देव हुए।

इस भरतक्षेत्र मे समस्त प्रकारकी विभूतिओ से समन्वित एक

પોતાના સાતસો પુત્ર, અને બીજા ચાર હજાર રાજાઓની સાથે ભગવાન ઘનરથની પાસેથી દીક્ષા અંગીકાર કરી આ પછી દ્વાદશાંગનું અધ્યયન કરીને પોતાની શિષ્ય મંડળી સાથે ભૂમંડળમાં વિહાર કરવા લાગ્યા

મેઘરથ મુનિએ વિંશતિ સ્થાનોની ફરી ફરી આરાધના કરી આ પ્રમાણે સ્થાનકવાસિત્વની સમારાધના કરીને સાધુ સિંહ મેઘરથ મુનિએ ઉગ્ર સિંહ નિષ્ક્રીડીત તપ પૂર્ણલક્ષ સુધી આચર્યું આ પ્રમાણે સંયમની પાલના તેમજ અનશનનું આચરણ કરતાં કરતાં તેમણે અંતિમ સમયે કાળ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાનમાં દેવ પર્યાયને પ્રાપ્ત કરી મેઘરથ મુનિરાજના અન્ય બંધુજન પણ કેટલાક કાળનું અનશન કરીને કાળ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધમાં દેવ થયા

આ ભરતક્ષેત્રમાં સઘળા પ્રકારની વિભૂતિઓથી સમન્વિત હસ્તિનાપુર નામનું

अथैकदा तन्नगरोद्याने भगवान् घनरथो जिनः समागतः। तं समागतं निशम्य राजा स्वलघुभ्राता दृढरथेन सह तं वन्दितुं गतः। तत्र वैराग्यजननीं देशनां श्रुत्वा सजातवैराग्यो राजा गृहमागत्य स्वभ्रातरमब्रवीत्–आयुष्मन्! त्वमतद्राज्यं गृहाण। अहं प्रव्रज्यां ग्रहीतुमिच्छामि। ज्येष्ठभ्रातुर्वचनं निशम्य स प्राह–आर्य! अहमपि भवन्तमनुगन्तुमिच्छामि। नास्ति मम राज्येन प्रयोजनम्। इत्थं भ्रातुर्वचनं निशम्य स्वपुत्रं चन्द्रशेखरं राज्ये संस्थाप्य राजा मेघरथः स्व

वाले इस राजाने न्यायमार्गसे पृथिवीका पालन करते हुए जीवन का कुछ भाग आनंद के साथ व्यतीत किया।

एक समय की बात है कि नगर के उद्यान में भगवान घनरथ का आगमन हुआ। राजा को जब यह समाचार ज्ञात हुआ तब वे अपने छोटे भाई दृढरथ के साथ उनको वंदना करनेके लिये वहां आये। प्रभुकी वैराग्य जनक धार्मिक देशना का पानकर राजाको सांसारिक कार्यो से वैराग्य उद्भूत हो गया। घर आकार उन्होंने अपने छोटे भाई से कहा आयुष्मन्! अब तुम इस राज्यका संचालन करो मैं दीक्षा धारण करना चाहता हूं। इस प्रकार अपने ज्येष्ठ भ्राता के वचन सुनकर लघुभ्राता ने उनसे कहा आर्य! मै भी आपके ही मार्गका अनुसरण करना चाहता हूं। मुझे इस राज्य से कोई जरूरत नही है इस प्रकार भाई के वचन सुनकर राजा मेघरथ ने राज्यमें अपने चन्द्रशेखर नाम के पुत्र को स्थापित करके छोटे भाई

ધ્યાનથી પોતાના સમયનો સદુઉપયોગ કરવાવાળા આ રાજાએ ન્યાયમાર્ગથી પૃથ્વીનું પાલન કરીને જીવનનો કેટલોકકાળ આનંદમાં વીતાવ્યો.

એક સમયની વાત છે કે નગરના ઉદ્યાનમાં ભગવાન ઘનરથનું આગમન થયું. રાજાને જ્યારે આ સમાચાર મળ્યા ત્યારે તેઓ પોતાના નાનાભાઈ દૃઢરથની સાથે તેમને વંદના કરવા માટે ઉદ્યાનમાં પહોંચ્યા. પ્રભુની વૈરાગ્યવાળી ધાર્મીક દેશનાને શ્રવણ કરીને રાજાને સાંસારીક કાર્યોથી વૈરાગ્ય જાગૃત બન્યો. રાજભવનમાં પાછા ફર્યા પછી તેણે પોતાના નાનાભાઈ દૃઢરથને કહ્યું કે, આયુષ્યમન! હવે તમે આ રાજ્યનું સંચાલન કરો, હું દીક્ષા ગ્રહણ કરવા ચાહું છું. પોતાના મોટાભાઈના આ પ્રકારના વચનોને સાંભળીને નાનાભાઈએ તેને કહ્યું કે, આર્ય! હું પણ આપના જ માર્ગનું અનુસરણ કરવા ઇચ્છું છું. મને આ રાજ્યની જરા પણ ઇચ્છા નથી. નાનાભાઈનો આ પ્રકારનો મનોભાવ જાણી લીધા પછી રાજા મેઘરથે પોતાના ચંદ્રશેખર નામના પુત્રને રાજ્યાસને બેસાડીને નાનાભાઈની સાથે

भ्राता सप्तशतसंख्यकैः पुत्रैश्चतुः सहस्रसंख्यकैः पार्थिवैश्च सह तीर्थङ्करस्य भगवतो घनरथस्य समीपे दीक्षां गृहीत्वा एकादशाङ्गान्यधीत्य सपरिवारो भूतले विहरति स्म। स हि विंशतिस्थानकानि पुनः पुनः समाराधयति। इत्थं स्थानकवासित्वं समाराध्य साधुसिंहः स मेघरथमुनिरुग्रं सिंहनिष्क्रीडितं तपः पूर्वलक्षं यावत् तप्त्वा संयमं च पालयित्वाऽनशनं कृत्वा कालमासे कालं कृत्वा सर्वार्थसिद्धे विमाने देवत्वेन समुत्पन्नः। तद् भ्रातरोऽपि कियत्कालमनशनं कृत्वा कालधर्ममासाद्य तत्रैव देवत्वेन समुत्पन्नाः।

अस्त्यत्रैव भारते वर्षे सर्वर्द्धिसमन्वितं पुरन्दरपुरोपमं हस्तिनापुरं नाम नगरम्। अलकाया कुबेर इव तत्रासीद् विश्वसेनो नाम नरपतिः। तस्यासीत्

के साथ तथा सातसौ पुत्रों के साथ एवं चार हजार राजाओं के साथ तीर्थंकर भगवान घनरथ के समीप दीक्षा धारण करली। तथा द्वादशांग का अध्ययन करके वे अपनी शिष्य मंडली सहित भूमण्डल पर विहार करने लगे।

मेघरथ मुनि ने वीस स्थानों की पुन पुनः आराधना की। इस प्रकार स्थानक वासित्व की समराधना करके साधुओं मे सिंह जैसे मेघरथ मुनिने उग्रसिंह निष्क्रीडित तप पूर्वलक्षतक आचरित किया। इस प्रकार संयम की पालना एवं अनशनका आचरण करते हुए उन्होंने काल अवसर मे काल करके सर्वार्थसिद्धि विमान में देव पर्यायको प्राप्त किया। मेघरथ मुनिराज के अन्य बन्धुजन भी कितनेक कालका अनशन करके कालकर सर्वार्थसिद्ध मे देव हुए।

इस भरतक्षेत्र मे समस्त प्रकारकी विभूतिओं से समन्वित एक

પોતાના સાતસો પુત્ર, અને બીજા ચાર હજાર રાજાઓની સાથે ભગવાન ઘનરથની પાસેથી દીક્ષા અંગીકાર કરી આ પછી દ્વાદશાંગનું અધ્યયન કરીને પોતાની શિષ્ય મંડળી સાથે ભૂમંડળમાં વિહાર કરવા લાગ્યા.

મેઘરથ મુનિએ વિંશતિ સ્થાનોની ફરી ફરી આરાધના કરી આ પ્રમાણે સ્થાનકવાસિત્વની સમારાધના કરીને સાધુ સિંહ મેઘરથ મુનિએ ઉગ્ર સિંહ નિષ્ક્રીડીત તપ પૂર્વલક્ષ સુધી આચર્યું આ પ્રમાણે સંયમની પાલના તેમજ અનશનનું આચરણ કરતાં કરતાં તેમણે અંતિમ સમયે કાળ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાનમાં દેવ પર્યાયને પ્રાપ્ત કરી મેઘરથ મુનિરાજના અન્ય બંધુજન પણ કેટલાક કાળનું અનશન કરીને કાળ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધમાં દેવ થયા.

આ ભરતક્ષેત્રમાં સઘળા પ્રકારની વિભૂતિઓથી સમન્વિત હસ્તિનાપુર નામનું

शीलालङ्कारशालिनी सर्वगुणागाराऽचिरा नाम पट्टराज्ञी। सा हि सदोरकमुखवस्त्रिकां मुखे बद्ध्वा त्रिकालं सामायिकं करोति, उभयकालं प्रतिक्रामति। अभयदानं सुपात्रदानं च ददाति। साधर्मिकान् परिपोषयति। दीनहीनानाथान् परिरक्षति केनापि हन्यमानान् जीवान् रक्षति। धर्मं प्रभावयति। एकदा पयः फेननिभास्तरणसमलङ्कृतायां सुकोमलायां शय्यायां शयानायास्तस्याः कुक्षौ हंसः कमलवन इव सर्वार्थसिद्धच्युतो मेघरथजीवः समवतीर्णः। तदा सुखप्रसुप्ता

हस्तिनापुर नामका नगर था जो इन्द्र के पुर जैसा था। अलका में कुवेर के समान वहां का शासक विश्वसेन नामका राजा था शील रूपी अलकारों से विभूषित एव समस्त गुणोकी खान अचिरा नामकी रानी राजाकी पट्टरानी थी। यह रानी सदोरकमुखवस्त्रिका को मुख पर बांधकर त्रिकाल सामायिक किया करती थी। तथा दोनों काल प्रतिक्रमण भी करती थी। अभयदान एवं सुपात्रदान भी दिया करती थी। साधर्मी बन्धुजनोंका पोपण, दीन, हीन अनाथ व्यक्तियोंका सरक्षण एव किसी के द्वारा पीडित हुए प्राणी का भरणपोषण करना भी रानीका दैनिक कर्तव्य था। धर्मकी प्रभावना तो इससे कभी छूटती ही नहीं थी, इतनी तो यह धर्मप्राणा थी। एक समयकी बात है कि जब यह फेन के समान आस्तरण-चादर से अलकृत सुकोमल शय्यापर शयनकर रही थी तब जैसे कमलवन मे हँस अवतरित होता है उसी प्रकार सर्वार्थसिद्ध से चवकर मेघरथका जीव उस रानीकी कुक्षि मे अवतरित हुआ। इसके अवतरित होने पर

નગર કે જે, ઇન્દ્રપુરી સમાન હતુ અલકામા કુબેરની જેમ આ નગરના વિશ્વસેન નામના રાજા હતા શીલરૂપી અલકારોથી વિભૂષિત અને સઘળાગુણોની ખાણ સમાન અચિરા નામની રાજાની પટ્ટરાણી હતી આ રાણી સદોરકમુખવસ્ત્રિકા મોઢા ઉપર બાધીને ત્રિકાળ સામાયિક કરતી હતી તથા બન્ને કાળ પ્રતિક્રમણ પણ કરતી હતી અભયદાન અને સુપાત્રદાન આપતી હતી, સાધર્મી બધુજનોનુ પોષણ, દીન, હીન, અનાથ વ્યક્તિઓનુ સરક્ષણ અને કોઈના તરફથી પીડીત કરાયેલા પ્રાણીનુ ભરણપોષણ કરવુ એ પણ રાણીનુ દૈનિક કાર્ય હતુ ધર્મની પ્રભાવના તો એનાથી કદી પણ છૂટતી ન હતી એ ખૂબજ ધર્મપરાયણ હતી

એક સમયની વાત છે કે, રાણી રાત્રીના સમયે પોતાના શયનભવનમા ફુલ આચ્છાદિત મૃદુ શય્યા ઉપર સુતેલ હતી એ સમયે તેના ઉદરના ગર્ભમા સર્વાર્થ સિદ્ધથી ચ્યવીને મેઘરથના જીવે પ્રવેશ કર્યો આ સમયે રાણીને એક પછી એક

सा राज्ञी चतुर्दशमहास्वप्नानपश्यत्। प्रातः सुप्तोत्थिता सा स्वप्नवृत्तान्तं राज्ञे न्यवेदयत्। राजा प्राह—देवि! तव गर्भे सर्वज्ञः सार्वभौमो वाऽवतीर्ण इति तव स्वप्नः सूचयति। गर्भागते भगवती सर्वज्ञे शान्तिकर्मणाऽप्यशान्तं पूर्वागतं महामारीरोगादिकं स्वयमेवाशाम्यत्। सर्वज्ञस्य प्रभावात्कुरुदेशे सर्वं रोगादिकं प्रशान्तम्। सर्वत्र नूतनं नूतनं मङ्गलं समुत्पन्नम्। एवं क्रमेण पूर्णे गर्भकाले निशीथ—मध्यरात्रौ समयेऽचिरा राज्ञी शशाङ्कमिव मनोहरं स्वर्णवर्णं सुकुमारं कुमारं जनितवती। तदा त्रैलोक्येऽपि महोद्योतोऽभवत्, नारका अपि सुखिनोऽभवन्।

रानी ने उसी समय चौदह महास्वप्नोंको देखा। उसने उनस्वप्नो के देखने की बात राजा से कही, राजा ने इन स्वप्नों के फल स्वरूप म ऐसा उससे कहा कि देवि! तुम्हारे गर्भ मे या तो सर्वज्ञ अवतीर्ण हुए है या कोई सर्वभौम—सार्वभूमिका अधिपति चक्रवर्ती—अवतीर्ण हुए है। यही बात इन स्वप्नो से सूचीत होती है। भगवान् सर्वज्ञ के गर्भ मे अवतीर्ण होते ही शाति कर्म से भी अशान्त पूर्वागत महामारी रोग आदिक सब अपने आप शांत हो गये। कुरुदेश मे सर्वज्ञ के प्रभाव से रोगादिकोंकी शाति होनेके साथ २ ही सर्वत्र नवीन २ मागालिक कार्य होने लगे। रानीका गर्भ भी क्रमशः बढते २ जब पूर्ण नौमास का हो चुका तब उस अचिरा रानीने निशीथ—अर्धरात्री के समय चद्रमा जैसे उज्ज्वल वर्णवाले मनोहर एक सुकुमार बालकको जन्मदिया उसके जन्म होते ही लोकभरमे एक विशिष्ट प्रकारका उद्योत हुआ तथा नारकियोको भी सुख मिल गया। यह

એમ ચૌદ મહાસ્વપ્નો આવ્યા ત્યારે આ સ્વપ્નની વાત તેણે રાજાને કરી રાજાએ એ સ્વપ્નાઓનુ ફળસ્વરૂપ બતાવતા કહ્યુ કે, હે દેવી! તમારા ગર્ભમા કાતો કોઈ સર્વજ્ઞે પ્રવેશ કરેલ છે, અથવા તો કોઈ સાર્વભૌમ—સર્વભૂમિના અધિપતિ ચક્રવર્તીએ પ્રવેશ કરેલ છે, આથી રાણીને ખૂબજ હર્ષ થયો આ તરફ જેમ જેમ ગર્ભ પુષ્ટ થઈ રહેલ હતો તેમ તેમ રાજ્યમા શાતિનુ સામ્રાજ્ય સ્થાપવા લાગ્યુ, મહામારી આદિ રોગો પણ શાન્ત થઈ ગયા કુરુદેશમા સર્વજ્ઞના પ્રભાવના કારણે રોગાદિકની શાતિ થવાની સાથે સાથે સારા માગલિક કાર્યો ઉત્સાહભેર થવા લાગ્યા ક્રમશ વધતા વધતા પુરા નવ મહિના વીતી ચૂકયા ત્યારે રાણીએ પુત્રને જન્મ આપ્યો કે જે પૂર્ણ ચદ્રમાની કાતિથી શોભિત જણાતો હતો ઉજ્જવળ વર્ણવાળો અને મનમોહક કાતિવાળો પુત્રનો જન્મ થયાના ખબર મળતા જ લોકોમા પણ વિશિષ્ટ એવા આનદની લહેર ઉઠી ચારે તરફ પ્રકાશ જ પ્રકાશ દેખાવા લાગ્યો નારકિઓને પણ શાતિ વળી આ બધુ જ્યારે જ્યારે પ્રભુનો

शीलालङ्कारशालिनी सर्वगुणागाराऽचिरा नाम पट्टराज्ञी। सा हि सदोरकमुखवस्त्रिका मुखे बद्ध्वा त्रिकाल सामायिक करोति, उभयकाल प्रतिक्रामति। अभयदान सुपात्रदान च ददाति। साधर्मिकान परिपोषयति। दीनहीनानाथान् परिरक्षति केनापि हन्यमानान जीवान रक्षति। धर्म प्रभावयति। एकदा पय' फेन निभास्तरणसमलङ्कृताया सुकोमलाया शय्याया शयानानास्तस्याः कुक्षौ हंसः कमलवन इव सर्वार्थसिद्धच्युतो मेघरथजीव समवतीर्ण.। तदा सुप्तप्रसुप्ता

हस्तिनापुर नामका नगर था जो इन्द्र के पुर जैसा था। अलका मे कुवेर के समान वहां का शासक विश्वसेन नामका राजा था शील रूपी अलकारों से विभूषित एव समस्त गुणोंकी खान अचिरा नामकी रानी राजाकी पट्टरानी थी। यह रानी सदोरकमुखवस्त्रिका को मुख पर बांधकर त्रिकाल सामायिक किया करती थी। तथा दोनो काल प्रतिक्रमण भी करती थी। अभयदान एव सुपात्रदान भी दिया करती थी। साधर्मी बन्धुजनोंका पोषण, दीन, हीन अनाथ व्यक्तियोंका सरक्षण एव किसी के द्वारा पीडित हुए प्राणी का भरणपोषण करना भी रानीका दैनिक कर्तव्य था। धर्मकी प्रभावना तो इससे कभी छूटती, ही नहीं थी, इतनी तो यह धर्मप्राणा थी। एक समयकी बात है कि जब यह फेन के समान आस्तरण—चादर से अलकृत सुकोमल शय्यापर शयनकर रही थी तब जैसे कमलवन मे हँस अवतरित होता है उसी प्रकार सर्वार्थसिद्ध से चवकर मेघरथका जीव उस रानीकी कुक्षि मे अवतरित हुआ। इसके अवतरित होने पर

નગર કે જે, ઇન્દ્રપુરી સમાન હતુ અલકામા કુબેરની જેમ આ નગરના વિશ્વસેન નામના રાજા હતા શીલરૂપી અલકારોથી વિભૂષિત અને સઘળાગુણોની ખાણ સમાન અચિરા નામની રાજાની પટ્ટરાણી હતી આ રાણી સદોરકમુખવસ્ત્રિકા મોઢા ઉપર બાંધીને ત્રિકાળ સામાયિક કરતી હતી તથા બન્ને કાળ પ્રતિક્રમણ પણ કરતી હતી અભયદાન અને સુપાત્રદાન આપતી હતી, સાધર્મી બધુજનોનુ પોષણ, દીન, હીન, અનાથ વ્યક્તિઓનુ સરક્ષણ અને કોઈના તરફથી પીડીત થયેલા પ્રાણીનુ ભરણપોષણ કરવુ એ પણ રાણીનુ દૈનિક કાર્ય હતુ ધર્મની પ્રભાવના તો એનાથી કદી પણ છૂટતી ન હતી એ ખૂબજ ધર્મપરાયણ હતી

એક સમયની વાત છે કે, રાણી રાત્રીના સમયે પોતાના શયનભવનમા ફુલ આચ્છાદિત મૃદુ શય્યા ઉપર સુતેલ હતી એ સમયે તેના ઉદરના ગર્ભમા સર્વાર્થસિદ્ધથી ચ્યવીને મેઘરથના જીવે પ્રવેશ કર્યો આ સમયે રાણીને એક પછી એક

पक्षचन्द्र इव वर्द्धते। जगज्जनमनोहरं नयनानन्दकरं कुमारं पश्यतोर्मातापित्रो-र्निरुपमः सुखानुभवोऽभूत्। जङ्गमः कल्पद्रुमइव स शिशुर्मनोहरैः क्रमचङ्क्रमणै र्भूपगृहाङ्गणं समलङ्कृतवान्। शिशुरूपमास्थाय समागतैर्देवैः सह चलचूलाञ्चलो विभु र्मनोहरा शैशवानुरूपा पांशुक्रीडा व्यधात्। इत्थं सुखेन क्रमशो वर्द्धमानः शांति नाथ प्रभु र्यौवनं वयः समासादितवान् तदा भगवतः शरीरं चत्वारिंशद् धनुस्तुङ्गम भूत्। भगवान् हि समस्त विश्वमानन्दितवान्, स्वकीयैर्मनोहरैराचारैः। ततः पित्रा यशोमत्यादिकाभि राजकन्यकाभिः सह भगवतः शान्तिनाथस्य विवाहः कारितः। एवं क्रमेण भगवान् जन्मतः पञ्चविंशतिसहस्रवर्षाणि नीतवान्। तदा तन्मातापि-तरौ तं राज्ये संस्थाप्य स्वयं दीक्षां गृहीत्वा स्वजन्मनः साफल्यं नीतवन्तौ।

थी। माता पिता जगज्जनों मे मनोहर तथा नयनोंको आनंद विधायक पुत्र शांतिनाथ को देख २ कर निरूपम सुखका अनुभव करते थे। जगम कल्पवृक्ष के समान बालक प्रभु जब मनोहर बालचाल द्वारा राजमहल के अगण मे चलते तब यह विशेष शोभित होने लगते। बालकका रूप बनाकर आये हुए देवो के साथ प्रभु हिलती हुई शिखावाले होकर मनोहर बालोचित धूलिक्रीडा भी करते थे। इस प्रकार सुखपूर्वक क्रम से बढते हुए प्रभु ने यौवन वय प्राप्त किया। भगवान के ऊँचाई समय चालीस धनुप की थी। प्रभुने अपने सदाचारों से सब के मनको मुग्धकर रक्खा था। पिताने शान्तिनाथका विवाह यशोमती आदि राजकन्याओ के साथ कर दिया। इस प्रकार भगवान के जन्म से लेकर अभीतक जीवन के पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत हुए। माता पिताने इनको राज्य मे स्थापित करनेके लिये स्वय दीक्षा धारण करली। और इस प्रकार से अपने जन्मको उन्होने सफल बना लिया।

એવા મનોહર તથા નયન અભિરામ એવા પુત્ર શાન્તિનાથને જોઇને નિરૂપમ અનુભવ કરતા હતા. જગમ કલ્પવૃક્ષ પ્રમાણે બાળ પ્રભુ જ્યારે રાજભવનના આંગણામા પા પગલી કરતા ચાલતા થયા ત્યારે ભારે મનોહર લાગતા હતા. બાળ કના રૂપ બનાવીને આવેલ દેવોની સાથે પ્રભુ હલતી ચોટલીવાળા બનીને બાળ ઉચિત વિવિધ ક્રીડાઓ પણ કરતા હતા. આ પ્રકારથી સુખપૂર્વક ક્રમે ક્રમે વૃદ્ધિ પામતા પ્રભુ યુવાવસ્થામા આવ્યા. ભગવાનના શરીરની ઉંચાઇ આ સમયે ચાલીસ ધનુષની હતી. પ્રભુએ પોતાના સદાચારોથી સઘળાનુ મન જીતી લીધુ હતુ. પિતાએ શાંતિનાથનો વિવાહ યશોમતી આદિ રાજકન્યાઓ સાથે કર્યો. આ પ્રકારે ભગવાનના જન્મથી માંડીને યુવાવસ્થા સુધી જીવનના પચીસ હજાર (૨૫૦૦૦) વર્ષ વ્યતીત થયા. માતાપિતાએ એમને રાજ્યગાદિ ઉપર સ્થાપિત કરીને પોતાના જીવનને સફળ કરવા માટે દીક્ષા અંગીકાર કરી અને એ રીતે તેમણે પોતાના જન્મને સફળ બનાવ્યો.

इद सर्वं जिनजन्मनि भवत्येव। अथ स्वस्वासनकम्पेन जिनजन्मपरिज्ञाय षट्पञ्चाशद्दिक्कुमारिका द्रुतमागत्य सूतिकर्माणि चक्रुः। शक्रोऽपि स्वासनं कम्पमानं दृष्ट्वाऽवधिज्ञानेन जिनजन्मपरिज्ञायाष्टाह्निक महोत्सवं सर्वैः शक्रैः सह कृतवान्। भूपतिर्विश्वसेनोऽपि पुत्रजन्मना नितरां सन्तुष्टो दासीदासादिकेभ्यः प्रचुरं धनं दत्तवान्, महामहोत्सवं च कृतवान्। गर्भस्थेऽस्मिन् शिशौ मम राज्ये महामारी शान्तिरभूदिति विचार्य पित्रा शान्तिनाथ इति तस्य नाम कृतम्। स शिशुरङ्गुष्ठे शक्रनिहितममृतं प्रतिदिनं पिबन् अद्वितीयरूपतेजः श्रीः सन् सित

प्रभुके जन्म होने पर होता ही है। अपने २ आसनों के कंपित होने से छप्पन दिक्कुमारिकाएँ जिन भगवान का जन्म जानकर शीघ्र ही आकर प्रसूतिकर्म करने मे जुट गई। इन्द्रने भी अपने आसन के कंपन से अवधिज्ञान द्वारा जिनोत्पत्ति जानकर अष्टाह्निक महोत्सव समस्त इन्द्रो के साथ किया। इधर विश्वसेन राजाने भी सन्तुष्ट होकर दासीदास आदिकों के लिये मनमाना प्रचुर दान दिया तथा पुत्र जन्म की खुशी से और अनेक महोत्सवो का भी ठाठ बाध दिया। प्रभुका नाम शांतिनाथ रक्खा गया इस विचार से कि जब ये अपनी माता के गर्भ मे थे तब मेरे राज्य मे जो पहिले महामारी की बीमारी थी उसकी इनके पुण्यप्रभाव से शाति हुई थी। भगवान शातिनाथ अगुष्ठ मे शक्रनिहित अमृत का प्रतिदिन पान करते हुए शुक्लपक्ष के चंद्रमा की तरह बढने लगे। इनके रूप एव तेजकी शोभा अद्वितीय

જન્મ થાય છે ત્યારે બને છે પોતપોતાના આસનો કંપિત થવાથી છપ્પન દિક્કુમારીઓ જીનેશ્વર ભગવાનનો જન્મ સમય જાણીને ઉતાવળી ગતીથી પ્રસૂતિ કર્મ કરવામા દોડી ગઇ ઇન્દ્રે પણ પોતાના આસનના કંપવાથી અવધિજ્ઞાન દ્વારા જાણ્યુ કે પ્રભુનો જન્મ થઈ રહ્યો છે એમ જાણીને અષ્ટાન્હિક મહોત્સવ બધા દેવોની સાથે મળીને કર્યો આ બાજુ વિશ્વસેન રાજાએ પણ સંતુષ્ટ થઈને દાસદાસી આદિકોને સારૂ એવુ દાન આપ્યુ અને પુત્રજન્મની ખુશાલીમા અનેક રીતે મહોત્સવો ઉજવ્યા પુત્રનુ નામ શાતિનાથ રાખવામા આવ્યુ પ્રભુનુ નામ શાન્તિનાથ રાખવાનુ કારણ એજ કે પ્રભુના જન્મ પહેલા રાજ્યમા મહામારી–મરકી વગેરે ત્રાસ જન્ય જીવલેણ રોગચાળો ચાલતો હતો પરંતુ પ્રભુનુ ગર્ભમા આગમન થતા વ્યાપેલા રોગ શોક શાંત થયા આ કારણે જ પ્રભુનુ નામ શાતિનાથ રાખવામા આવ્યુ ભગવાન શાતિનાથ તેમના અંગુઠામા ઇંદ્રે મૂકેલા અમૃતનુ પાન કરીને શુક્લપક્ષના ચંદ્રમાની માફક વધવા–મોટા થવા લાગ્યા તેમનુ રૂપ અને તેજની શ્રી ન વર્ણવી શકાય તેવા અનુપમ હતા માતાપિતા જગતના માણસોમા અનેક

इत्थ पञ्चविंशतिसहस्रवर्षाणि गार्हस्थ्ये सुखेन रमतो भगवत. शान्तिनाथस्य शस्त्रागारे चक्ररत्न प्रादुर्भूतम् । ततश्चक्ररत्नप्रदर्शितमार्गेण भगवान् शान्तिनाथो लीलयैव षट्खण्ड भरतक्षेत्र साधयामास । इत्थ समस्त भरतक्षेत्र साधयित्वा द्वात्रिंशत्सहस्रभूपतिसेवितचरणयुगलः कृतारिशान्तिः श्रीशान्तिर्हस्तिनापुरमागत. । ततो देवैर्भूपतिभिश्च भगवतः श्रीशान्तिनाथस्य द्वादशाब्दिकश्चक्रवर्त्तित्वाभिषेकमहोत्सवः कृतः । भगवतः शान्तिनाथस्य चक्रवर्त्तिश्रिय भुञ्जानस्य पञ्चविंशतिसहस्रवर्षाणि व्यतीतानि । ततस्तीर्थं प्रवर्तयतु इति लोकान्तिकदेवैः

जब यौवन अवस्था सपन्न बन चुका तब स्वयवर विधि के अनुसार उसने अनेक राजकन्याओं के साथ विवाह किया।

इस प्रकार पुत्रादिकों से युक्त पच्चीस हजार वर्ष गृहस्थावस्था में सुखपूर्वक रहते २ व्यतीत होचुके तब उन भगवान् शांतिनाथ के शस्त्रागार मे चक्ररत्नकी उत्पत्ति हुई। इसके बलपर उन्होंने षड-खड मडित भरतक्षेत्र की विजयकी और उसमें अपना एक छत्र राज्य स्थापित किया। पश्चात् वे शातिनाथ चक्रवर्ती कि जिनके चरणोंकी सेवा मे बत्तीस हजार मुकुट बध राजा उपस्थित रहते थे और जिन्होंके बाह्य शत्रु सघ शात होचुके थे वापिस हस्तिनापुर आ गये। इसके बाद देव एव भूपतियो ने मिलकर इनका द्वादशवर्षिय चक्रवर्ती पद पर अभिषिक्त होने का महान् उत्सव किया। चक्रवर्ती की अनुपम विभूतिका भोग करते हुए इनके पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत हुए। बाद में "तीर्थकी आप प्रवृत्ति करे" इस प्रकार

ચક્રાયુધ રાખ્યુ ક્રમશ વૃદ્ધિને પામતા ચક્રાયુધ જ્યારે યૌવન અવસ્થાએ પહોચ્યા ત્યારે સ્વયવરવિધિ અનુસાર તેણે અનેક રાજકુમારીઓની સાથે વિવાહ કર્યો

આ પ્રમાણે પુત્રાદિકોથી યુકત પચીસહજાર (૨૫૦૦૦) વર્ષ સુખપૂર્વક રહેતા રહેતા વ્યતીત થઈ ગયા ત્યારે ભગવાન શાતિનાથના શસ્ત્રાગારમા ચક્રરત્નની ઉત્પત્તિ થઇ તેના બળ ઉપર તેઓએ છ ખ ડ ભરતક્ષેત્રમા વિજય પ્રાપ્ત કર્યો અને તેમા પોતાનુ એકછત્ર રાજ્ય સ્થાપત કર્યું પછીથી તે શાતિનાથ ચક્રવર્તી કે જેના ચરણોની સેવામા બત્રીસ હજાર મુગટધારી રાજા હાજર રહેતા હતા તેમજ તેઓનો બહારનો શત્રુસ ઘ શાત બની ચૂકેલ હતો વિજય પ્રાપ્ત કરીને તેઓ હસ્તિનાપુર પાછા ફર્યો આ પછી દેવ અને રાજવીગણોએ મળીને તેમનો દ્વાદશ વર્ષીય ચક્રવર્તી પદ ઉપર અભિષિક્ત થવાનો મહાન ઉત્સવ કર્યો ચક્રવર્તીની અનુપમ વિભૂતિને ભોગવતા તેમના પચીસ હજાર વર્ષ વ્યતીત થયા પછીથી "તીર્થની આપ પ્રવૃત્તિ કરો"આ પ્રમાણે લોકાન્તિક દેવોએ જ્યારે તેમને કહ્યુ

शान्तिनाथोऽपि स्वपुत्रवत्प्रजाः परिपालयति स्म। अथ सर्वार्थसिद्ध विमानात्प्रच्युतो भगवतः पूर्वजन्मनो लघुभ्राता वज्ररथजीवो यशोमतीगर्भे समुत्पन्नः तदा राज्ञी यशोमती स्वप्ने चक्रं ददर्श। साऽपि शान्तिनाथाय स्वप्न वृत्तान्तं निवेदितवती। तदा जगत्प्रभुर्भगवान् शान्तिनाथः प्राह—देवि! विश्व मण्डनस्वरूपस्तव सुतो भविष्यति। स्वामिनो वचनं निशम्य परितुष्टा यशोमती देवी सुखं सुखेन गर्भं पुपोष। पूर्णे समये सा नयनानन्दकरं सुलक्षणं दारकं सुषुवे। भगवान् शान्तिनाथस्तु स्वप्नानुसारात्तस्य दारकस्य चक्रायुधः इति नाम कृतवान्। क्रमेण प्रवर्द्धमानः स यौवनं वयः प्राप्तवान्। स हि स्वयंवरा वह्वीर्नृपतिपुत्रीः परिणीतवान्।

शांतिनाथ प्रभु भी इधर अपने पुत्रोंके समान प्रजाको परिपालन करने लगे। एक समयकी बात है कि भगवान से पूर्वजन्म के लघुभ्राता जो वज्ररथ थे और जो सर्वार्थसिद्ध विमान मे वर्तमान देव पर्याय से रह रहे थे वे वहा से चवकर इनकी धर्मपत्नी यशोमती के गर्भ मे आये। उस समय यशोमती ने स्वप्न मे चक्र देखा उसने स्वप्न अपने पतिदेव शान्तिनाथ से कहा—उत्तर मे प्रभु ने कहा कि—देवि! विश्व का मण्डन स्वरूप पुत्र तुम्हारी कुक्षि से उत्पन्न होगा। स्वप्नका फल— इस प्रकार सुनकर यशोमती बडी प्रसन्न हुई और वह अपने गर्भका शाति और आनद के साथ पालन करने मे सावधान बन गई। जब गर्भका ठीक समय समाप्त हो चुका तब उसने सुलक्षणो से सपन्न एक पुत्र को जन्म दिया। शांतिनाथ प्रभुने बालकका नाम दृष्ट स्वप्न के अनुसार चक्रायुध रक्खा। क्रमशः वृद्धिंगत होते हुए चक्रायुध

શાતિનાથ પ્રભુ પણ આ તરફ પ્રજાનુ પોતાના પુત્રોની માફક પાલન કરવા લાગ્યા એક સમયની વાત છે કે, ભગવાનના પૂર્વજન્મનો નાનો ભાઈ કે જે વજ્રરથ હતો અને જે સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાનમા વર્તમાન દેવ પર્યાયથી રહેલ હતો તે ત્યાથી ચ્યવીને તે એમની ધર્મપત્ની યશોમતિના ગર્ભમા આવ્યો આ સમયે યશોમતીએ સ્વપ્નમા ચક્ર જોયુ એ સ્વપ્નની હકીકત તેણે પોતાના પતિ શાતિ નાથને કહી ઉત્તરમા પ્રભુએ કહ્યુ કે, દેવી ! વિશ્વના મન્ડનસ્વરૂપ પુત્રનો તમારી કૂખે જન્મ થશે સ્વપ્નનુ આ પ્રમાણે ફળ સાભળીને યશોમતી ઘણી પ્રસન્ન થઈ અને તે પોતાના ગર્ભનુ શાતિ અને આનદની સાથે પાલન કરવામા સાવધાન બની ગઈ ગર્ભનો સમય જ્યારે પુરો થયો ત્યારે સુલક્ષણોથી સપન્ન એવા પુત્રને જન્મ આપ્યો શાતિતાથ પ્રભુએ પુત્રનુ નામ દેખાયેલા સ્વપ્ન અનુસાર

र्षान्ते सहस्राम्रवणे उद्याने समागतः। तत्रागत्य शुक्लध्यानमाश्रितो भगवा नुज्ज्वल केवल ज्ञान प्राप्तवान्। भगवता शान्तिनाथेन केवलज्ञाने प्राप्ते सति, सुरासुराः स्वासनकम्पेन तद्वृत्तान्त ज्ञातवन्तः। ततस्ते सर्वे समागत्य प्राकार त्रय मञ्जुल समवसरण चक्रुः। तत्र भगवान श्रीशान्तिनाथः सुरासुरनरपरिषदे देशना दातुमारेभे। तत उद्यानपालकास्त्वरित गत्वा चक्रायुधमहीभुजे भगवतः केवलज्ञानोत्पत्ति निवेदयामासुः। सोऽप्युद्यानपालकेभ्यः प्रीतिदान दत्त्वा त विसृज्य हृष्टस्तुष्टःसस्तस्मिन्नेवक्षणे सहस्राम्रवणमुद्यान समागतः। तत्र स भग

विहार करने लगे विहार करते २ ये पुनः एक वर्षके बाद उसी सहस्राम्रवन नामके उद्यान मे पधारे। वहा इनको शुक्लध्यान के आश्रय से उज्ज्वल केवलज्ञान प्राप्त हो गया। केवलज्ञान उत्पन्न होने पर सुर और असुरोंके आसन कपायमान हुए तो उन्होंने 'भगवान् को केवलज्ञान प्राप्त हो गया है' यह सब बात जानली इससे वे सबके सब भगवान के समवसरण रचनेके लिये उस उद्यान में उसी समय आ पहुँचे और आकर उन्होंने वहा समवसरणकी रचना की। जब समवसरण रचा गया तब उन प्रभुने उस देवमनुष्यों की परिषदों मे उन देव मनुष्योंको देशना देना प्रारम्भ किया। उद्यानपालनकी दृष्टि मे जब यह सब बातें देखने मे आई तो उसने शीघ्र ही जाकर महाराज चक्रायुध से भगवान् शातिनाथ के केवलज्ञान की उत्पत्ति के होनेके समाचार कहे। भगवान् को केवलज्ञान की उत्पत्ति के समाचार वनपालक के मुख से सुनकर चक्रायुध को अपार हर्ष हुआ। उसने उसी समय उद्यान पालको प्रीतिदान देकर विसर्जित किया।

કરતા કરતાં ફરીથી એક વર્ષ પછી તે સહસ્રઆમ્રવન નામના ઉદ્યાનમા પધાર્યા તેમને શુક્લધ્યાનના આશ્રયથી ઉજ્જવલ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ પ્રભુને કેવળજ્ઞાન થવાથી સુર અને અસુરોનુ આસન કપવા લાગ્યુ તેમણે જ્ઞાન મૂકીને જોયુ તો જણાયુ કે ઓહો! આતો ભગવાનને કેવળજ્ઞાન થયુ આથી તેઓ સઘળા ભગવાનનુ સમવસરણ રચવા માટે તે ઉદ્યાનમા તાત્કાલિક હાજર થયા અને ત્યાજ સમવસરણની રચના કરી જ્યારે સમવસરણ રચાઈ ગયુ ત્યારે પ્રભુએ દેવ મનુષ્યોની પરિષદામા એ દેવ મનુષ્યોને દેશના આપવાનો આરભ કર્યો ઉદ્યાનપાલને જ્યારે આ વાતની નજરોનજર ખબર પડી ત્યારે તેણે ઉતાવળે પગલે જઈને મહારાજ ચક્રાયુધને ભગવાન શાતિનાથને થયેલા કેવળજ્ઞાનના સમાચાર આપ્યા। ભગવાનને કેવળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થવાના સમાચાર ઉદ્યાનપાલકના મુખેથી સભળીને ચક્રાયુધ રાજાને અપાર હર્ષ થયો એણે એ વખતે વધાઈ પહોચાડનાર ઉદ્યાનપાલકને પ્રીતિ દાન આપીને વિદાય કર્યો અને પોતે ખુશખુશાલ થતા સહસ્રઆમ્રવનમા આવ્યા

मोक्तो भगवान् शान्तिनाथो निर्निदान वार्षिक दान दीनेभ्योऽनाथेभ्यः स्व धार्मिकेभ्यश्च ददौ। ततश्च राज्ये चक्रायुध संस्थाप्य सर्वार्थी शिबिकामारूढ सुरासुरनराधीशैर्विहितनिष्क्रमणमहोत्सवो भगवान् शान्तिनाथः सहस्राम्रवणे उद्याने गत्वा तत्र शिबिकातः अवतीर्णवान्। तत्रावतीर्य भगवान् श्रीशान्तिनाथः सहस्रराजभिः सह प्रव्रजितवान्। भगवांस्तस्मिन्काले मनःपर्ययनामक चतुर्थ ज्ञानं प्राप्तवान्। गर्भागमनादारभ्यैव तीर्थंकरस्य ज्ञानत्रय भवति। चतुर्थं ज्ञान तु दीक्षाग्रहणाव्यवहितानन्तरकाल एव भवति। इत्थ दीक्षा गृहीत्वा वायुरिवा प्रतिबद्धविहारी भगवान् शान्तिनाथो भूमण्डले विहरति। एव विहरन् स पुन

लौकान्तिक देवो में जब इनसे कहा तब इन्होंने निर्निदान वार्षिक दान, दीन, अनाथ एव साधर्मिक जनोंको दिया और राज्यमें चक्रायुध को स्थापित किया पव सर्वार्थी नामकी शिबिका पर आरूढ होकर ये सहस्राम्रवन नाम के उद्यानमें जाकर उस पालखी से उतरे। इस समय इनका निष्क्रमण महोत्सव सुरेन्द्र असुरेन्द्र एव नरेन्द्रों ने बडे ठाटबाट से किया। प्रभुने जब दीक्षा धारणकी तो इनके साथ एक हजार और राजाओंने भी दीक्षा धारणकी। दीक्षा धारण करतेही भगवान् शांतिनाथकों मनःपर्यय नामका चतुर्थज्ञान उत्पन्न हो गया। वैसे तो भगवान् को गर्भ में आने से लेकर जबतक वे दीक्षित नहीं होते तबतक मतिज्ञान, श्रुतज्ञान एव अवधिज्ञान होता ही है। परन्तु जब ये दीक्षित हो जाता है तब उसी समय चतुर्थ मनःपर्यय ज्ञान भी इनको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार शांतिनाथ भगवान दीक्षित होकर वायुकी तरह अप्रतिबद्ध विहारी बनकर भूमण्डलने

त्यारे तेओએ નિર્નિદાન, વાર્ષિકદાન દીન, અનાથ અને સાધર્મીકજનોને આપ્યુ અને રાજ્યગાદીએ ચક્રાયુધ ને સ્થાપિત કર્યો અને સર્વાર્થા નામની પાલખીમા બેસીને તેમણે સહસ્ત્રઆમ્રવન નામના ઉદ્યાનમા જઈને એ પાલખીમાથી ઉતર્યા આ સમયે તેમનો નિષ્ક્રમણ મહોત્સવ સુરેન્દ્ર અસુરેન્દ્ર અને નરેન્દ્રોએ ઘણા ઠાઠ માઠથી કર્યો પ્રભુએ જ્યારે દીક્ષા ધારણ કરી તેમની સાથે એક હજાર બીજા રાજાઓએ પણ દીક્ષા ધારણ કરી દીક્ષા ધારણ કરતા જ ભગવાન શાતિનાથને ચોથુ મન પર્યય નામનુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ એમ તો ભગવાનને ગર્ભમા આવવાથી માડીને જ્યા સુધી તેઓ દીક્ષિત નહોતા થયા ત્યા સુધી મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાન હોય જ છે પરતુ જ્યારે તેઓ દીક્ષા ધારણ કરે છે ત્યારે તે સમયે તેમને ચોથુ મન પર્યય જ્ઞાન પણ પ્રાપ્ત થાય છે આ પ્રકારે શાતિનાથ ભગવાન દીક્ષિત બનીને વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બની ને ભૂમડળમા વિહાર

र्षान्ते सहस्राम्रवणे उद्याने समागतः। तत्रागत्य शुक्लध्यानमाश्रितो भगवा नुज्ज्वलं केवलं ज्ञानं प्राप्तवान्। भगवता शान्तिनाथेन केवलज्ञाने प्राप्ते सति, सुरासुराः स्वासनकम्पेन तद्वृत्तान्तं ज्ञातवन्तः। ततस्ते सर्वे समागत्य प्राकार त्रय मञ्जुल समवसरणं चक्रुः। तत्र भगवान् श्रीशान्तिनाथः सुरासुरनरपरिषदे देशनां दातुमारेभे। तत उद्यानपालकास्त्वरितं गत्वा चक्रायुधमहीभुजे भगवतः केवलज्ञानोत्पत्तिं निवेदयामासुः। सोऽप्युद्यानपालकेभ्यः प्रीतिदानं दत्त्वा तं विसृज्य हृष्टस्तुष्टःसंस्तस्मिन्नेवक्षणे सहस्राम्रवणमुद्यानं समागतः। तत्र स भग

विहार करने लगे विहार करते २ ये पुनः एक वर्षके बाद उसी सहस्राम्रवन नामके उद्यान मे पधारे। वहां इनको शुक्लध्यान के आश्रय से उज्ज्वल केवलज्ञान प्राप्त हो गया। केवलज्ञान उत्पन्न होने पर सुर और असुरोंके आसन कपायमान हुए तो उन्होंने 'भगवान् को केवलज्ञान प्राप्त हो गया है' यह सब बात जानली इससे वे सबके सब भगवान के समवसरण रचनेके लिये उस उद्यान मे उसी समय आ पहुँचे और आकर उन्होंने वहां समवसरणकी रचना की। जब समवसरण रचा गया तब उन प्रभुने उस देवमनुष्यों की परिषदों में उन देव मनुष्योंको देशना देना प्रारम्भ किया। उद्यानपालनकी दृष्टि मे जब यह सब बातें देखने में आई तो उसने शीघ्र ही जाकर महाराज चक्रायुध से भगवान् शांतिनाथ के केवलज्ञान की उत्पत्ति के होनेके समाचार कहे। भगवान् को केवलज्ञान की उत्पत्ति के समाचार वनपालक के मुख से सुनकर चक्रायुध को अपार हर्ष हुआ। उसने उसी समय उद्यान पालको प्रीतिदान देकर विसर्जित किया।

કરતા કરતાં ફરીથી એક વર્ષ પછી તે સહસ્રઆમ્રવન નામના ઉદ્યાનમા પધાર્યા તેમને શુક્લધ્યાનના આશ્રયથી ઉજ્જવલ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ પ્રભુને કેવળજ્ઞાન થવાથી સુર અને અસુરોનુ આસન કપવા લાગ્યુ તેમણે જ્ઞાન મૂકીને જોયુ તો જણાયુ કે ઓહો! આતો ભગવાનને કેવળજ્ઞાન થયુ આથી તેઓ સઘળા ભગવાનનુ સમવસરણ રચવા માટે તે ઉદ્યાનમા તાત્કાલિક હાજર થયા અને ત્યાજ સમવસરણની રચના કરી જ્યારે સમવસરણ રચાઈ ગયુ ત્યારે પ્રભુએ દેવ મનુષ્યોની પરિષદામા એ દેવ મનુષ્યોને દેશના આપવાનો આરભ કર્યો ઉદ્યાનપાલને જ્યારે આ વાતની નજરોનજર ખબર પડી ત્યારે તેણે ઉતાવળે પગલે જઈને મહારાજ ચક્રાયુધને ભગવાન શાંતિનાથને થયેલા કેવળજ્ઞાનના સમાચાર આપ્યા ભગવાનને કેવળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થવાના સમાચાર ઉદ્યાનપાલકના મુખેથી સાભળીને ચક્રાયુધ રાજાને અપાર હર્ષ થયો એણે એ વખતે વધાઈ પહોચાડનાર ઉદ્યાનપાલકને પ્રીતિ દાન આપીને વિદાય કર્યો અને પોતે ખુશખુશાલ થતા સહસ્રઆમ્રવનમાં આવ્યા

मोक्तो भगवान् शान्तिनाथो निर्निदान वार्षिक दान दीनेभ्योऽनाथेभ्यः स्व धार्मिकेभ्यश्च ददौ। ततश्च राज्ये चक्रायुध सस्थाप्य सर्वार्थां शिबिकामारुह्य सुरासुरनराधीशैर्विहितनिष्क्रमणमहोत्सवो भगवान् शान्तिनाथः सहस्राम्रवणे उद्याने गत्वा तत्र शिबिकातः अवतीर्णवान्। तत्रावतीर्य भगवान् श्रीशान्तिनाथः सहस्रराजभिः सह प्रव्रजितवान्। भगवास्तस्मिन्काले मन पर्ययनामक चतुर्थं ज्ञानं प्राप्तवान्। गर्भागमनादारभ्यैव तीर्थंकरस्य ज्ञानत्रय भवति। चतुर्थं ज्ञान तु दीक्षाग्रहणाव्यवहितानन्तरकाल एव भवति। इत्थ दीक्षा गृहीत्वा वायुरिवा प्रतिबद्धविहारी भगवान् शान्तिनाथो भूमण्डले विहरति। एव विहरन् स पुन

लौकान्तिक देवो में जब इनसे कहा तब इन्होंने निर्निदान वार्षिक दान, दीन, अनाथ एव साधर्मिक जनोंको दिया और राज्यमें चक्रायुध को स्थापित किया एव सर्वार्था नामकी शिविका पर आरूढ होकर ये सहस्राम्रवन नाम के उद्यानमें जाकर उस पालखी से उतरे। इस समय इनका निष्क्रमण महोत्सव सुरेन्द्र असुरेन्द्र एव नरेन्द्रों ने बडे ठाटबाट से किया। प्रभुने जब दीक्षा धारणकी तो इनके साथ एक हजार और राजाओंने भी दीक्षा धारणकी। दीक्षा धारण करतेही भगवान् शातिनाथको मनःपर्यय नामका चतुर्थज्ञान उत्पन्न हो गया। वैसे तो भगवान् को गर्भ मे आने से लेकर जबतक वे दीक्षित नही होते तबतक मतिज्ञान, श्रुतज्ञान एव अवधिज्ञान होता ही है। परन्तु जब ये दीक्षित हो जाता है तब उसी समय चतुर्थ मनःपर्यय ज्ञान भी इनको प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार शातिनाथ भगवान दीक्षित होकर वायुकी तरह अप्रतिबद्ध विहारी बनकर भूमण्डलने

त्यारे तेओએ નિર્નિદાન, વાર્ષિકદાન દીન, અનાથ અને સાધર્મીકજનોને આપ્યુ અને રાજ્યગાદીએ ચક્રાયુધ ને સ્થાપિત કર્યો અને સર્વાર્થા નામની પાલખીમા બેસીને તેમણે સહસ્રઆમ્રવન નામના ઉદ્યાનમા જઈને એ પાલખીમાથી ઉતર્યા આ સમયે તેમનો નિષ્ક્રમણ મહોત્સવ સુરેન્દ્ર અસુરેન્દ્ર અરે નરેન્દ્રોએ ઘણા ઠાઠ માઠથી કર્યો પ્રભુએ જ્યારે દીક્ષા ધારણ કરી તેમની સાથે એક હજાર બીજા રાજાઓએ પણ દીક્ષા ધારણ કરી દીક્ષા ધારણ કરતા જ ભગવાન શાતિનાથને ચોથુ મન પર્યય નામનુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ એમ તો ભગવાનને ગર્ભમા આવવાથી માડીને જ્યા સુધી તેઓ દીક્ષિત નહોતા થયા ત્યા સુધી મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાન હોય જ છે પરતુ જ્યારે તેઓ દીક્ષા ધારણ કરે છે ત્યારે તે સમયે તેમને ચોથુ મન પર્યય જ્ઞાન પણ પ્રાપ્ત થાય છે આ પ્રકારે શાતિનાથ ભગવાન દીક્ષિત બનીને વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બની ને ભૂમડળમા વિહાર

तदा बहवः पुरुषाः स्त्रियश्च प्रव्रज्यामङ्गीकृतवन्तः। बहवश्च श्रावका अभवन्। एवं भगवांस्तीर्थङ्करः स्वतीर्थं प्रवर्तयामास। भगवत शान्तिनाथस्य द्वाषष्टि सहस्रसंख्यकाः श्रमणा आसन्, षट्शताधिकैकषष्टिसहस्रसंख्यकाः साध्व्य आसन्। तथा—नवतिसहस्राधिक द्विलक्षसंख्यका श्रावकाः, त्रिनवतिसहस्राधिकलक्षत्रयसंख्यका श्राविकाश्चासन्। एवं भगवतश्चतुर्विधो गुणोदधिः सङ्घोदानशीलतपोभावात्मक चतुर्भेद धर्मं प्रभावयन् समुत्पन्नः। भगवान् शान्तिनाथः पञ्चविंशतिसहस्रवर्षाणि दीक्षा परिपाल्य नवभिः शतैः साधुभि सह मासिकमनशन कृत्वा सिद्धिगतिं प्राप्तवान्। भगवतः शान्तिनाथस्य पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमित कौमार्यं, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमित माण्डलिकत्व, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमित चक्रवर्त्ति-

---

अनुसार द्वादशांगीकी रचना की। उस समय अनेक नरनारियोंने भी दीक्षा धारण करके अपने २ जीवनको सफल बनाया। इसप्रकार प्रभु शांतिनाथने धर्मतीर्थकी प्रवृत्ति की। इनके श्रमणों की संख्या बासठ ६२ हजार और साध्वियोंकी संख्या छह सौ अधिक इगसठ ६१ हजार अर्थात् इगसठ हजार छहसौ (६१६००)थी। श्रावकोंकी संख्या दोलाख नव्वे ९० हजार तथा श्राविकाओंकी संख्या तीनलाख त्राणवे ९३ हजार थी। इस तरह दान, शील, तप एव भावनाके भेद से चार भेदवाले धर्मकी प्रभावना करनेवाला यह चतुर्विध संघ प्रभुका बना। यह संघ क्या था मानों सद्गुणरूपी उदधिका एक समुदाय ही था प्रभुने दीक्षापर्याय में भी पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत किये। पश्चात् नौसो ९० साधुओंके साथ के साथ वे एक मास का अनशन कर सिद्धिगतिको प्राप्त हुए।

દ્વાદશાગીની રચના કરી તે સમયે અનેક નરનારીઓએ દીક્ષા ધારણ કરીને પોત પોતાના જીવનને સફળ બનાવ્યુ આ પ્રમાણે ભગવાન શાતિનાથે ધર્મતીર્થની પ્રવૃત્તિ કરી તેમના સાધુઓની સખ્યા બાસઠ ૬૨હજાર અને સાધ્વીઓની સખ્યા એકસઠ હજાર છસોની (૬૧૬૦૦) હતી શ્રાવકોની સખ્યા બે લાખ નેવુ હજારની હતી તેમજ શ્રાવિકાઓની સખ્યા ત્રણ લાખ ત્રાણુ હજારની હતી આ પ્રમાણે દાન, શીલ તપ, અને ભાવનાના ભેદથી ચાર ભેદવાળા એવા ધર્મની પ્રભાવના કરવાવાળો એવો પ્રભુનો આ ચતુર્વિધ સઘ બન્યો આ સઘ કેવો હતો કે, જે સદ્‌ગુણરૂપી ઉદધીનો એક સમુદાય હતો પ્રભુએ દીક્ષા પર્યાયમા પણ પચ્ચીસ હજાર વર્ષ વ્યતીત કર્યા પછીથી નવસો સાધુઓની સાથે તેઓ એક માસનુ અનશન કરી સિ તિને પામ્યા

न्त जिन नत्वा स्तुत्वा च तदुपदिष्ट धर्मं श्रुतवान । देशनान्ते चक्रायुधभूपतिर्भ वन्त जिन नत्वा प्रोवाच–भगवन् ! कारुण्यामृतसागर! भवान दिष्ट्या दृष्टः। अह मस्माद् भवसागराद् भीतोऽस्मि। मामपि दीक्षाप्रदानेनानुग्रहीतुमर्हति भवान। इत्थ राज्ञश्चक्रायुधस्य वचन निशम्य भगवान प्राह–यथासुख कुरु। इत्थ भगवताऽनुमतश्चक्रायुधः स्वात्मजे सहस्रायुधे राज्य न्यस्य एकोननवति सख्यैर्नृपै: सह भगवतोऽन्तिके दीक्षितो जातः। नवतिसख्यकान गृहीतदीक्षास्तान् भगवान् शान्तिनाथः स्वगणधरानकरोत्। अत एव भगवत: शान्तिनाथस्य नवति गणाः नवतिर्गणधरा बभूवुः। एते हि त्रिपद्या अनुसारेण द्वादशाङ्गी रचितवन्त:।

एवं स्वय हृष्टतुष्ट होकर उसी क्षण सहस्राम्रवन उद्यान में आया। वहा उसने भगवान् के द्वारा प्रदत्त धर्मदेशना का नमस्कार एव उनकी स्तुति करने के बाद खूब पान किया। जब धार्मिक देशना प्रभुकी समाप्त होचुकी तब चक्रायुध ने नमस्कार करके कहा–भगवन्! यह हमारा परम सौभाग्य है जो करुणारसके एकमात्र सागर आप के दर्शन हमको हुए हैं। मै इस भवसागर से अत्यत डरा हुआ हू अतःप्रार्थना करता हू कि–दीक्षा प्रदान करके आप हमे अनुगृहीत करें। इस प्रकार राजा चक्रयुध के वचन सुनकर भगवानने उनसे कहा–हे देवानुप्रिय जैसा तुमको रुचे वैसा करो। इस प्रकार प्रभु- द्वारा अनुमत होकर चक्रायुध ने अपने सहस्रायुध पुत्रको राज्य देकर नव्यासी ८९ राजाओंके साथ भगवान् के पास दीक्षा धारण की। भगवानने इन नव्वे ९० मुनियों को अपने गणधर बनाये। इसीलीये शातिनाथ प्रभुके नव्वे गणधर हुए है। इन गणधरोने त्रिपदी के

त्या तेमणे भगवानने विनयपूर्वक नमस्कार, वदना स्तुति करीने प्रभुनी धर्मदेशना ने साभळी प्रभुनी धर्मदेशना ज्यारे पूरी थई त्यारे चक्रायुधे नमस्कार करीने कह्यु, हे भगवान ! आ अमारु परम सौभाग्य छे के, करुणारसना सागर एवा आपना दर्शन अमोने थया हु आ भवसागरथी अत्यत डरी रह्यो छु आथी प्रार्थना करु छु के, आप दीक्षा प्रदान करीने मने साथमा ल्यो आ प्रकारे चक्रायुधनु वचन साभळीने भगवाने तेमने कह्यु, हे देवानुप्रिय ! जेम तमने ठीक लागे तेम करो आ रीते प्रभु पासेथी अनुमति मेळवीने चक्रायुधे पोताना सहस्रायुध नामना पुत्रने राज्य सोपीने नेव्यासी राजाओनी साथे भगवाननी पासे दीक्षा अगीकार करी भगवाने नेवु मुनिओने पोताना गणधर बनाव्या आथी शातिनाथ प्रभुने नेवु गणधर थया छे ए गणधरोए त्रिपदीना अनुसार

तदा बहवः पुरुषाः स्त्रियश्च प्रव्रज्यामङ्गीकृतवन्तः। बहवश्च श्रावका अभवन्। इत्थं भगवांस्तीर्थङ्करः स्वतीर्थं प्रवर्तयामास। भगवत शान्तिनाथस्य द्वाषष्टि सहस्रसंख्यकाः श्रमणा आसन्, षट्शताधिकैकषष्टिसहस्रसंख्यकाः साध्व्य आसन्। तथा-नवतिसहस्राधिक द्विलक्षसंख्यका श्रावकाः, त्रिनवतिसहस्राधिकलक्षत्रयसंख्यका श्राविकाश्चासन। एवं भगवतश्चतुर्विधो गुणोदधिः सङ्घो दानशीलतपोभावात्मकं चतुर्भेदं धर्मं प्रभावयन समुत्पन्नः। भगवान् शान्तिनाथः पञ्चविंशतिसहस्रवर्षाणि दीक्षां परिपाल्य नवभिः शतैः साधुभिः सह मासिकमनशनं कृत्वा सिद्धिगतिं प्राप्तवान। भगवतः शान्तिनाथस्य पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमितं कौमार्यं, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमितं माण्डलिकत्वं, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपरिमितं चक्रवर्त्ति-

---

अनुसार द्वादशांगीकी रचना की। उस समय अनेक नरनारियोंने भी दीक्षा धारण करके अपने २ जीवनको सफल बनाया। इसप्रकार प्रभु शांतिनाथने धर्मतीर्थकी प्रवृत्ति की। इनके श्रमणो की संख्या बासठ ६२ हजार और साध्वियोंकी संख्या छह सौ अधिक इगसठ ६१ हजार अर्थात् इगसठ हजार छहसौ (६१६००)थी। श्रावकोंकी संख्या दोलाख नव्वे ९० हजार तथा श्राविकाओंकी संख्या तीनलाख त्राणवे ९३ हजार थी। इस तरह दान, शील, तप एवं भावनाके भेद से चार भेदवाले धर्मकी प्रभावना करनेवाला यह चतुर्विध संघ प्रभुका बना। यह संघ क्या था मानो सद्गुणरूपी उदधिका एक समुदाय ही था प्रभुने दीक्षापर्याय में भी पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत किये। पश्चात् नौसो ९० साधुओंके साथ के साथ वे एक मास का अनशन कर सिद्धिगतिको प्राप्त हुए।

દ્વાદશાગીની રચના કરી તે સમયે અનેક નરનારીઓએ દીક્ષા ધારણ કરીને પોત પોતાના જીવનને સફળ બનાવ્યુ આ પ્રમાણે ભગવાન શાતિનાથે ધર્મતીર્થની પ્રવૃત્તિ કરી તેમના સાધુઓની સખ્યા બાસઠ ૬૨હજાર અને સાધ્વીઓની સખ્યા એકસઠ હજાર છસોની (૬૧૬૦૦) હતી શ્રાવકોની સખ્યા બે લાખ નેવુ હજારની હતી તેમજ શ્રાવિકાઓની સખ્યા ત્રણ લાખ ત્રાણુ હજારની હતી આ પ્રમાણે દાન, શીલ તપ, અને ભાવનાના ભેદથી ચાર ભેદવાળા એવા ધર્મની પ્રભાવના કરવાવાળો એવો પ્રભુનો આ ચતુર્વિધ સઘ બન્યો આ સઘ કેવો હતો કે, જે સદ્દગુણરૂપી ઉદધીનો એક સમુદાય હતો પ્રભુએ દીક્ષા પર્યાયમા પણ પચ્ચીસ હજાર વર્ષ વ્યતીત કર્યા પછીથી નવસો સાધુઓની સાથે તેઓ એક માસનુ અનશન કરી સિ તિને પામ્યા

र्ष, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपर्यन्त सयमित्व चासीत्। एव भगवत' सर्वमायुर्लक्ष-वर्षात्मकमभूत्। त्रिलोकसन्तापशान्तिकरस्य भगवतः श्रीशान्तिनाथस्य निर्वाण महोत्सवः सुरासुरैर्महतोत्साहेन कृतः। तत' कियत्कालानन्तर मत्युत्पन्नकेवल-ज्ञानो भगवाश्चक्रायुधोऽपि सिद्धिगतिं प्राप्तवान् ॥ इति श्रीशान्तिनाथकथा ॥

तथा—

मूलम्—इक्खागुरायवसभो, कुंन्थू नामं नरोहिवो ।
विक्खायकित्ती भयंव पत्तो गईमणुत्तरं ॥३९॥

छाया—इक्ष्वाकुराजवृषभः, कुन्थुर्नाम नराधिप ।
विख्यातकीर्तिर्भगवान्, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥३९॥

टीका—'इक्खागुराय' इत्यादि ।

इक्ष्वाकुराजवृषभः = इक्ष्वाकुवंशीयभूपेषु श्रेष्ठः कुन्थुर्नाम नराधिपः=षष्ठ श्चक्रवर्ती बभूव। स हि विख्यातकीर्तिः=विख्याता=प्रसिद्धा कीर्तिर्यस्य स तथा,

---

भगवान् का कुमारकाल पच्चीस हजार वर्षका माडलिकपद पच्चीस हजार वर्षका, चक्रवर्तीकापद पच्चीस हजार वर्षका और दीक्षापर्याय भी पच्चीस हजार वर्षकी थी। इस तरह भगवान्की कुल आयु एक लाख वर्षकी थी। भगवान् का निर्वाण महोत्सव सुर और असुरोंने मिलकर बडे ही उत्साह के साथ मनाया था। इसके द्वारा तीनों लोको में भी जीवोको हरतरह से शांति प्राप्त हुई उनके सतापोंका शमन हुआ है। भगवानके मोक्ष पधारने पर कुछकालके बाद केवलज्ञान प्रप्त करके चक्रायुध ने भी मुक्ति की प्राप्ति की ॥ ३८ ॥

॥ इस प्रकार यह शातिनाथ प्रभुका चरित्र है ॥

ભગવાનનો કુમાર કાળ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનો, માડલીક પદ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનુ, ચક્રવર્તીનુ પદ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનુ, અને દીક્ષા પર્યાય પણ પચ્ચીસ હજાર વર્ષની હતી આ પ્રમાણે ભગવાનનુ સપૂર્ણ આયુષ્ય એક લાખ વર્ષનુ હતુ ભગવાનનો નિર્વાણ મહોત્સવ સુર અને અસુરોએ મળીને ઘણા ઉત્સાહની સાથે મનાવ્યો પ્રભુના નિર્વાણકાળે ત્રણે લોકમા જીવોને દરેક પ્રકારે શાતિ પ્રાપ્ત થઈ તેમના સતાપોનુ શમન થયુ ભગવાનના મોક્ષ પધાર્યા પછી કેટલાક કાળ પછી મુની ચક્રાયુધ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી મુક્તિપદને પામ્યા ॥૩૮॥

॥ આ પ્રકારનુ શાતિનાથ પ્રભુનુ ચરિત્ર છે. ॥

भगवान=केवलज्ञान केवलदर्शनाद्यैश्वर्ययुक्तः सप्तदशस्तीर्थङ्करः अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा गतिं=मोक्षरूपा प्राप्तः ॥३९॥

अथ श्रीकुन्थुनाथकथा—

अत्र जम्बूद्वीपे प्राग्-विदेहेषु आवर्त्तविजये खड्गिपुर्यां सिंहावहो नाम नृपो बभूव। स हि संसारवैचित्र्य विलोक्य प्राप्तवैराग्योऽन्यदा विश्रुताचार्य सविधे दीक्षा गृहीतवान्। स हि विंशतिस्थानकाना समाराधनेन स्थानकवासित्व समाराध्य तीर्थंकरनामगोत्रकर्मसमुपार्जितवान्। तथा-पवित्र चारित्र

'तथा—'इक्खागु' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(इक्खागुरायवसभो-इक्ष्वाकुराजवृषभः) इक्ष्वाकुवंशीयभूपों में श्रेष्ठ (कुन्थुनाम नराहिवो-कुन्थुर्नाम नराधिपः) कुन्थुनाम के छठवें चक्रवर्ती हुए हैं (विक्खायकित्ती-विख्यातकीर्तिः) तथा वही प्रसिद्ध कीर्तिसंपन्न (भयव-भगवान्) अष्ट महाप्रातिहार्यों से सुशोभित सत्रहवें तीर्थंकर हुए हैं। इन्होंने (अणुत्तर गइ पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट सिद्धगति प्राप्त की है।

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस जबुद्वीप के अन्दर पूर्वविदेह मे एक आवर्त नामका विजय है उसमें खड्गिपुरी नामकी एक नगरी थी। वहांका शासक सिंहावह नामका राजा था। इसने ससारकी विचित्रता देखकर वैराग्यकी दृढता से किसी एक समय विश्रुताचार्य के पास दीक्षा धारणकी और बीस स्थानोंकी सम्यक् आराधना द्वारा स्थानकवासि पनेकी आराधना कर

तथा—"इक्खागु"

અન્વયાર્થ—इक्खागुरायवसभो-इक्ष्वाकुराजवृषभः ઇક્ષ્વાકુ વંશના રાજાઓમા શ્રેષ્ઠ कुन्थुनाम नराहिवो-कुन्थुर्नामनराधिपः કુન્થુ નામના છઠા ચક્રવર્તી થયેલ છે विक्खायकित्ती-विख्यातकीर्तिः તથા એજ પ્રસિદ્ધ કીર્તિસંપન્ન भयव-भगवान् સુશોભિત પ્રતિહારોથી સત્તરમા તીર્થંકર થયેલ છે તેમણે अणुत्तर गइ पत्तो-अनुत्तरा गतिं प्राप्तः સર્વોત્કૃષ્ટ સિદ્ધગતિ પ્રાપ્ત કરેલ છે

તેમની આ કથા આ પ્રમાણે છે—

આ જમ્બૂદ્વીપની અંદર પૂર્વ વિદેહમા એક આવર્ત નામનુ વિજય છે તેમા ખડ્ગિપુરી નામનુ એક નગર હતુ ત્યાનો શાસક સિંહાવહ નામનો રાજા હતો તેમણે સંસારની વિચિત્રતા જાણીને વૈરાગ્યની દૃઢતાથી કોઈ એક સમય વિશ્રુતાચાર્યની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી, અને વીસ સ્થાનોની સમ્યક્ આરાધના દ્વારા સ્થાનકવાસીપણાની આરાધના કરી તીર્થંકર નામ કર્મનુ ઉપાર્જન કર્યું પછી પવિત્ર

त्व, पञ्चविंशतिसहस्रवर्षपर्यन्त संयमित्व चासीत्। एव भगवत सर्वमायुर्लक्ष-वर्षात्मकमभूत्। त्रिलोकसन्तापशान्तिकरस्य भगवतः श्रीशान्तिनाथस्य निर्वाण महोत्सवः सुरासुरैर्महतोत्साहेन कृतः। ततः कियत्कालानन्तर मत्युत्पन्नकेवल ज्ञानो भगवाश्चक्रायुधोऽपि सिद्धिगतिं प्राप्तवान ॥ इति श्रीशान्तिनाथकथा ॥

तथा—

मूलम्—इक्खागुरायवसभो, कुन्थू नामं नरीहिवो।
विक्खायकित्ती भयवं पत्तो गईमणुत्तरं ॥३९॥

छाया—इक्ष्वाकुराजवृषभः, कुन्थुर्नाम नराधिप ।
विख्यातकीर्तिर्भगवान्, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥३९॥

टीका—'इक्खागुराय' इत्यादि।

इक्ष्वाकुराजवृषभः = इक्ष्वाकुवंशीयभूपेषु श्रेष्ठ कुन्थुर्नाम नराधिपः=षष्ठ श्चक्रवर्ती बभूव। स हि विख्यातकीर्तिः=विख्याता=प्रसिद्धा कीर्तिर्यस्य स तथा,

---

भगवान् का कुमारकाल पच्चीस हजार वर्षका मांडलिकपद पच्चीस हजार वर्षका, चक्रवर्तीकापद पच्चीस हजार वर्षका और दीक्षापर्याय भी पच्चीस हजार वर्षकी थी। इस तरह भगवान्की कुल आयु एक लाख वर्षकी थी। भगवान् का निर्वाण महोत्सव सुर और असुरोंने मिलकर बडे ही उत्साह के साथ मनाया था। इसके द्वारा तीनो लोको मे भी जीवोकों हरतरह से शाति प्राप्त हुई उनके सतापोंका शमन हुआ है। भगवानके मोक्ष पधारने पर कुछकालके बाद केवलज्ञान प्रप्त करके चक्रायुध ने भी मुक्ति की प्राप्ति की ॥ ३८ ॥

॥ इस प्रकार यह शातिनाथ प्रभुका चरित्र है ॥

ભગવાનનો કુમાર કાળ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનો, માડલીક પદ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનુ, ચક્રવર્તીનુ પદ પચ્ચીસ હજાર વર્ષનુ, અને દીક્ષા પર્યાય પણ પચ્ચીસ હજાર વર્ષની હતી આ પ્રમાણે ભગવાનનુ સપૂર્ણ આયુષ્ય એક લાખ વર્ષનુ હતુ ભગવાનનો નિર્વાણ મહોત્સવ સુર અને અસુરોએ મળીને ઘણા ઉત્સાહની સાથે મનાવ્યો પ્રભુના નિર્વાણકાળે ત્રણે લોકમા જીવોને દરેક પ્રકારે શાતિ પ્રાપ્ત થઈ તેમના સતાપોનુ શમન થયુ ભગવાનના મોક્ષ પધાર્યા પછી કેટલાક કાળ પછી મુની ચક્રાયુધ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી મુક્તિપદને પામ્યા ॥૩૮॥

॥ આ પ્રકારનુ શાતિનાથ પ્રભુનુ ચરિત્ર છે. ॥

भगवान्=केवलज्ञान केवलदर्शनाद्यैश्वर्ययुक्त. सप्तदशस्तीर्थङ्करः अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा गतिं=मोक्षरूपा प्राप्तः ॥३९॥

अथ श्रीकुन्थुनाथकथा—

अत्र जम्बूद्वीपे प्राग्-विदेहेषु आवर्त्तविजये खड्गिपुर्यां सिंहावहो नाम नृपो बभूव। स हि संसारवैचित्र्यं विलोक्य प्राप्तवैराग्योऽन्यदा विश्रुताचार्य सविधे दीक्षां गृहीतवान्। स हि विंशतिस्थानकानां समाराधनेन स्थानकवासित्वं समाराध्य तीर्थंकरनामगोत्रकर्मसमुपार्जितवान्। तथा-पवित्रं चारित्र

'तथा—'इक्खागु' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(इक्खागुरायवसभो-इक्ष्वाकुराजवृषभः) इक्ष्वाकुवंशीयनृपों में श्रेष्ठ (कुन्थुनाम नराहिवो-कुन्थुर्नाम नराधिपः) कुन्थुनाम के छठवें चक्रवर्ती हुए हैं (विक्खायकित्ती-विख्यातकीर्तिः) तथा वही प्रसिद्ध कीर्तिसंपन्न (भयवं-भगवान्) अष्ट महाप्रातिहार्यों से सुशोभित सत्रहवें तीर्थंकर हुए हैं। इन्होंने (अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट सिद्धगति प्राप्त की है।

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस जम्बुद्वीप के अन्दर पूर्वविदेह में एक आवर्त नामका विजय है उसमें खड्गिपुरी नामकी एक नगरी थी। वहांका शासक सिंहावह नामका राजा था। इसने संसारकी विचित्रता देखकर वैराग्यकी दृढता से किसी एक समय विश्रुताचार्य के पास दीक्षा धारणकी और बीस स्थानोंकी सम्यक् आराधना द्वारा स्थानकवासि पनेकी आराधना कर

તથા—"इक्खागु"

અન્વયાર્થ—इक्खागुरायवसभो-इक्ष्वाकुराजवृषभः ઇક્ષ્વાકુ વંશના રાજાઓમાં શ્રેષ્ઠ कुन्थुनाम नराहिवो-कुन्थुर्नामनराधिपः કુન્થુ નામના છઠા ચક્રવર્તી થયેલ છે विक्खायकित्ती-विख्यातकीर्तिः તથા એજ પ્રસિદ્ધ કીર્તિસંપન્ન भयवं-भगवान् સુશોભિત પ્રતિહારોથી સત્તરમા તીર્થંકર થયેલ છે તેમણે अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तरां गतिं प्राप्तः સર્વોત્કૃષ્ટ સિદ્ધગતિ પ્રાપ્ત કરેલ છે

તેમની આ કથા આ પ્રમાણે છે—

આ જમ્બૂદ્વીપની અંદર પૂર્વ વિદેહમાં એક આવર્ત નામનું વિજય છે તેમાં ખડ્ગિપુરી નામનું એક નગર હતું ત્યાંનો શાસક સિંહાવહ નામનો રાજા હતો તેમણે સંસારની વિચિત્રતા જાણીને વૈરાગ્યની દૃઢતાથી કોઈ એક સમય વિશ્રુતાચાર્યની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી, અને વીસ સ્થાનોની સમ્યક્ આરાધના દ્વારા સ્થાનકવાસીપણાની આરાધના કરી તીર્થંકર નામ કર્મનું ઉપાર્જન કર્યું પછી પવિત્ર

चिर परिपाल्यानशन कृत्वा स्वायु क्षयण सर्वार्थसिद्धे देवो भूत्वा महद्धिक.। ततश्च्युतो भारते वर्षे हस्तिनापुरे तत्पुराधीशस्य शूरस्य राज्ञो भार्यायाः श्रीदेव्याः कुक्षौ समवतीर्णः। तदा रात्री सुकोमलशय्यायां शयानया श्रीदेव्या चतुर्दश स्वप्ना दृष्टाः। स्वप्नवृत्तान्त सा स्वपतये निवेदितवती। राज्ञा प्रोक्तम् देवि! तव सुतो महाप्रभावशाली भविष्यति। राज्ञी स्वप्नफल श्रुत्वा नितरामानन्दिता सुख सुखेन गर्भं पालितवती। पूर्णे समये सा सकलजननयनानन्दकर शुभलक्षणधर स्वर्णवर्णं कुमार जनितवती। स्वासनकम्पेन तीर्थंकरजन्मवृत्तान्त परिज्ञाय षट्पञ्चाशद्दिक्कुमारिकाः समागताः। देवेन्द्रा देवैः सहाष्टाह्निक जन्ममहो

तीर्थंकर नाम कर्मका उपार्जन किया। पश्चात् पवित्र चारित्रकी चिरकालतक आराधना करके उन्होंने अतमे अनशनपूर्वक देहका विसर्जन त्याग किया। इसके प्रभावसे वे सर्वार्थसिद्ध विमान में देवकी पर्याय से उत्पन्न हुए। वहा की आयु जब समाप्त होचुकी तब ये वहां से चवकर भारतवर्षान्तगत हस्तिनापुर में वहा के राजा सूरकी धर्मपत्नी श्री देवी की कुक्षि मे पुत्ररूप से अवतरित्त हुए। गर्भ मे इनके आतेही कोमल शय्यापर सोई हुई श्री देवी ने चौदह स्वप्नोंका निरीक्षण किया एव इनका फल अपने पतिसे प्रभावशाली पुत्रकी उत्पत्ति होनेके रूपमे जानकर उसने आनद मग्न बनकर अपने गर्भकी समुचित रक्षा करने में हरतरह से सभवित उपायोंका ध्यान रखा। जब गर्भ ठीक नौमास साढे सातदिनका हो चुका तब शुभलक्षण सपन्न सुकुमार कुमार जन्मे। इनका वर्ण स्वर्णके वर्ण समान था। देखनेवालों के नेत्रोको ये विशेषरूप से आनद प्रदान करते थे। इनकी उत्पत्ति होते ही छप्पन ५६ दिक्कुमारियोंके अपने २ आसन कपायमान हुए,

ચારિત્રની ઘણા સમય સુધી આરાધના કરીને તેમણે અનશનપૂર્વક દેહનુ વિસર્જન કર્યું તેના પ્રભાવથી તેઓ સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાનમા મહારિદ્ધિવત દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થયા ત્યાનુ આયુષ્ય જ્યારે પૂર્ણ થયુ ત્યારે ત્યાથી ચ્યવીને ભારતવર્ષમા આવેલા હસ્તિનાપુરમા ત્યાના રાજા સુરની ધર્મપત્ની શ્રીદેવીની કૂખે પુત્રરૂપે અવતર્યા તેઓ જ્યારે ગર્ભવાસમા હતા ત્યારે શ્રીદેવીને રાત્રીના સમયે ચૌદ સ્વપ્ન આવ્યા આ સ્વપ્નનુ ફળ પોતાની કૂખે પ્રભાવશાળી પુત્ર હોવાનુ જાણીને તેણે આનદમગ્ન બનીને પોતાના ગર્ભની સપૂર્ણપણે સભાળ રાખવા માડી જ્યારે ગર્ભ સમય પુરેપુરા નવ માસ સાડાસાત દિવસનો થયો ત્યારે સુલક્ષણ સપન્ન સુકુમાર પુત્રનો જન્મ થયો તેમનો વર્ણ સોનાના વર્ણ જેવો હતો એમને જોઇને જોવાવાળાના નેત્રોને આનદ થતો હતો તેમનો જન્મ થતાજ છપ્પન દિકકુમારીઓના આસન

त्सवं कृतवन्त.। जन्ममहोत्सवानन्तर जनन्या स्वप्ने कुम्ये–पृथिव्या उपरि स्थिते रत्नस्तूपे मुखनिबद्धसदोरकमुखवस्त्रिको मुनिगणो दृष्टः अपि च गर्भस्थे भगवति शत्रव. कुन्थुभाव गताः, अर्थात्–सर्वे रिपव. समागत्य भगवत्पितुश्चरणे पतिताः। इति हेतोर्मातापितृभ्या तन्नाम कुन्थुरिति कृतम्। सकलसद्गुणानामाकरः स क्रमेण यौवन प्राप्तवान्। तदा पित्रा राजकन्याभिः सह तस्य विवाहः कारित'। राज्यधुराधरणक्षम त विलोक्य पिता तस्मै राज्य समर्प्य स्वय दीक्षा गृहीत्वा आत्मकल्याण साधितवान्। श्रीकुन्थुनाथोऽपि प्राज्य राज्य समुपलभ्य राज

इससे वे सवकी सव तीर्थंकरके जन्मका वृत्तान्त जानकर वहां आ पहुची। देवेन्द्रोने भी देवो के साथ २ आठ दिनतक लगानार इनके जन्म का उत्सव मनाया। इनकी माताने पृथिवी पर स्थित रत्नस्तूप के ऊपर मुनिगण को कि जिसने अपने मुखपर सदोरकमुखवस्त्रिका वाध रखी है। जन्ममहोत्सव के वाद स्वप्न मे देखा तथा भगवान् जव गर्भ मे स्थित थे–उस समय समस्त रिपु आकर भगवान् के पिताके चरणों पर झुक गये थे, इस लिये मातापिताने इनका नाम कुन्थु ऐसा रख दिया। सकल गुणोंके सागर वे भगवान् धीरे २ वढते हुए जव यौवन अवस्था को प्राप्त हुए तव पिताने राजकन्याओ के साथ उनका विवाह कर दिया। जव वे राज्यकी धुराको वहन करने मे समर्थ वन गये तव पिताने इनको राज्यका अधिपति वनाकर स्वय दीक्षा धारण करली और आत्मकल्याण के मार्गकी सिद्धि करने मे लवलीन हो गये।

કપાયમાન થયા આથી તેમણે જ્ઞાન મૂકીને જોયું તો તીર્થંકર પ્રભુને જન્મકાળ નજરે પડયો આથી તે સર્વ તાબડતોબ એ સ્થળે પહોચી ગઇ દેવેન્દ્રોએ પણ દેવોની સાથે આઠ દિવસ સુધી એકધારો જન્મમહોત્સવ મનાવ્યો જન્મમહોત્સવ પછી એમની માતાએ સ્વપ્નમા પૃથ્વી ઉપર ઉભેલા રત્નસ્તૂપના ઉપર મુનિગણો કે જેમણે પોતાના મોઢા ઉપર સદોરકમુખવસ્ત્રિકા બાધી રાખી છે તેમને જોયા, ભગવાન જ્યારે ગર્ભમા હતા એ વખતે સઘળા દુશ્મનો એમના પિતાના ચરણોમા આવી શીશ નમાવી ગયા હતા–શરણે આવ્યા હતા આ કારણે તેમના માતાપિતાએ એમનુ નામ કુન્થુ રાખ્યુ હતુ સકળ ગુણોના સાગર એ ભગવાન ધીરે ધીરે વૃદ્ધિ પામતા જ્યારે યુવાવસ્થાને પામ્યા ત્યારે પિતાએ રાજકન્યાઓની સાથે તેમનો વિવાહ કરી દીધો જ્યાર તેઓ રાજ્યધુરાને વહન કરવામા સમર્થ બન્યા ત્યારે પિતાએ તેમનો રાજ્યાભિષેક કરી પોતે દીક્ષા અગીકાર કરી, આત્મકલ્યાણના માર્ગની સિદ્ધિ કરવામા લવલીન થઇ ગયા

धर्मानुसारेण स्वप्रजा इव प्रजाः परिपालयन् कियन्त कालं व्यतीतवान्। ततः एकदा तस्यायुधागारे चक्ररत्नं समुत्पन्नम्। तन्निर्दिष्टपथेन स षट्खण्डं भरतक्षेत्रं साधितवान्। ततो दिग्विजयात्प्रतिनिवृत्तो हस्तिनापुरमागतः। तत्र तस्य देवैश्चक्रवर्तित्वेऽभिषेकः कृतः। स हि स्त्रीरत्नमिव चक्रवर्तिश्रियमप्युपभुक्तवान्। एवं राज्याद्युपभोगं कुर्वतस्तस्य बहूनि वर्षाण्यतीतानि। अथैकदा लोकान्तिकदेवैर्बोधितो भगवान् श्रीकुन्थुनाथो राज्यं विश्वप्रियनामकपुत्रे न्यस्य वर्षावधि निर्निदानं दानं दत्तवानर्थिभ्योऽनाथेभ्यः साधर्मिकेभ्यश्च।

कुन्थुनाथने प्राज्य राज्य प्राप्त कर उसका सचालन करते हुए राजधर्मके अनुसार अपनी सतति के समान प्रजाजनों का परिपालन किया। इस कार्य में उनका समय बहुत कुछ व्यतीत हुया। राज्य करते २ इनके शस्त्रागार में चक्ररत्न की जब उत्पत्ति हुई तब उनके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलकर कुन्थुनाथने षट्खडमडित भरतक्षेत्र पर अपना विजय का डका बजाते हुए एक छत्र राज्य स्थापित किया। इस तरह समस्त पृथिवी के शासक बनकर वे जब हस्तिनापुर वापिस आये तब उनका चक्रवर्तित्वपद पर देवोंने मिलकर अभिषेक किया। इन कुन्थुनाथ चक्रवर्तीने इस पृथिवी पर खूब राज्य किया। जब इस तरह राज्यादिक का पालन करते २ उनके बहुत अधिक वर्ष व्यतीत हो गये तब लोकान्तिक देवोने आकर इनको बोधित किया। लोकान्तिक देवों द्वारा प्रतिबोधित होने पर इन्होंने राज्यका भार अपने विश्वप्रियनामक पुत्र के ऊपर स्थापित करके दीन, अनाथ एव साधर्मिक जनोंको नियाणरहित दान दिया।

કુન્થુનાથે રાજ્યાસને આવતા એનુ સારી રીતે સચાલન કર્યું અને પ્રજાજનોને પોતાના પુત્રવત્ માનીને પાલન પોષણ કર્યું આ કાર્યમા તેમનો ઘણો કાળ વ્યતીત થયો રાજ્ય કરતા કરતા તેમના શસ્ત્રાગારમા જ્યારે ચક્રરત્નની ઉત્પત્તિ થઈ ત્યારે તેના સૂચિત માર્ગ ઉપર ચાલીને કુન્થુનાથે છ ખડ ભરતક્ષેત્ર ઉપર પોતાના વિજયનો ડકો વગાડીને એક છત્ર રાજ્યની સ્થાપના કરી આ પ્રમાણે સઘળી પૃથ્વીના શાસક બનીને તેઓ જ્યારે હસ્તિનાપુર પાછા ફર્યા ત્યારે ચક્રવર્તીના પદ ઉપર દેવોએ મળીને તેમનો અભિષેક કર્યો એ કુન્થુનાથ ચક્રવર્તીએ આ પૃથ્વી ઉપર ખૂબ રાજ્ય કર્યું જ્યારે આ પ્રમાણે રાજ્યાદિકનુ પાલન કરતા કરતા એમના કેટલાએ વર્ષો વ્યતીત થયા ત્યારે લોકાન્તિક દેવોએ આવીને તેમને બોધિત કર્યા લોકાન્તિક દેવોથી પ્રતિબોધિત થવાથી તેઓએ રાજ્યનો ભાર પોતાના વિશ્વપ્રિય નામના પુત્રને સુપ્રદ કરીને દીન, અનાથ, અને ધાર્મિકજનોને નિયાણ રહિત દાન કર્યું

अथ भगवान् कुन्थुनाथः शिबिकामारूढ सहस्राम्रवणं ययौ। भगवतोऽभिनिष्क्रमणमहोत्सवं देवा नरेन्द्राश्च महता महोत्सवेन संपादितवन्तः। तत्रोद्याने भगवान् सहस्रसंख्यकैर्भूपैः सह दीक्षां गृहीतवान्। तस्मिन्नेव समये भगवतो मनःपर्ययनामकं चतुर्थं ज्ञानं समुत्पन्नम्। ततो भगवान् सर्वैर्दीक्षितैः सह भारण्डपक्षीवाप्रमत्तो भुवि विहरन् षोडशवर्षानन्तरं पुनस्तत्रैवोद्याने समागतः। तत्र भगवतः केवलज्ञानमुत्पन्नम्। केवलज्ञानमासादिते भगवति स्वासनचलनेन ज्ञाततद्वृत्ताः सकला अपि देवेन्द्राः समागत्य समवसरणं चक्रुः। तत्र समवसरणे परिषदि सिंहासनस्थितःपञ्चत्रिंशद्धनुः परिमितदेहो भगवान् श्रीकुन्थुनाथः

उसके बाद ये शिबिका पर आरूढ होकर सहस्राम्रवन की ओर पधारे। इनका निष्क्रमण महोत्सव देव एवं नरेन्द्रोंने बडे भारी उत्साहके साथ मनाया। सहस्राम्रवन में पहुचकर इन्होंने एक हजार राजाओके साथ दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा ग्रहण करने पर इनको मनःपर्यय ज्ञान उत्पन्न हो गया। भारण्डपक्षी की तरह अप्रमत्त होकर प्रभु समस्त साधुओ के साथ इस भूमण्डल पर विहार करने लगे। विहार करते २ ये फिर सोलहवें वर्ष मे उसी सहस्राम्रवन मे जब पधारे तब इनको वहा पर लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न हुवा। इस प्रकार जब केवलज्ञानी बने तब अपने २ आसनो के चलायमान होने पर देवेन्द्रोंने भगवान के इस केवलज्ञान की प्राप्ति का महोत्सव खूब मनाया और समवसरणकी रचनाकी। बारह प्रकारकी परिषदा के बीच मे पेंतीस धनुषप्रमाण कायवाले प्रभु समवसरण मे विराजमान होकर

ત્યારપછી તેઓ પાલખીમા આરૂઢ થઈને સહસ્રઆમ્રવનની તરફ ગયા તેમનો નિષ્ક્રમણ મહોત્સવ દેવ અને નરેન્દ્રોએ ભારે ઉત્સાહની સાથે મનાવ્યો સહસ્ર આમ્રવનમા પહોચીને તેઓએ એક હજાર રાજાઓની સાથે દીક્ષા ધારણ કરી દીક્ષા ગ્રહણ કરવાથી તેમને મન પર્યય જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયુ, ભારન્ડ પક્ષીના માફક અપ્રમત્ત બનીને પ્રભુ સઘળા સાધુઓની સાથે આ ભૂમિ મડળ ઉપર વિહાર કરવા લાગ્યા વિહાર કરતા કરતા પછી સોળમા વર્ષે એજ સહસ્ર આમ્રવનમા જ્યારે પધાર્યા ત્યારે તેમને ત્યા લોકાલોકનુ પ્રકાશક કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ

આ પ્રકારે ભગવાન જ્યારે કેવળજ્ઞાની બન્યા ત્યારે પોતપોતાના આસનો ચલાયમાન થવાથી દેવેન્દ્રોએ ભગવાનના આ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનો મહોત્સવ ખૂબ હર્ષ પૂર્વક મનાવ્યો-અને સમવસરણની રચના કરી બાર પ્રકારની પરિષદાની વચમા પાત્રીસ ધનુષ પ્રમાણ કાયાવાળા પ્રભુએ સમવસરણમા બીરાજમાન થઈને પાત્રીસ

पञ्चत्रिंशद्गुणालङ्कृतया वाचा धर्मदेशना दत्तवान्। भगवतो धर्मदेशना श्रुत्वा बहवो जनास्तदन्तिके प्रव्रजिताः। भगवतः पञ्चत्रिंशत्संख्यका गणधरास्तावत्सं ख्यका गच्छाश्च जाताः। भगवतः सङ्घे षष्टिसहस्रसंख्यकाः साधवः षट्शताधि कषष्टिसहस्रसंख्यकाः साध्व्यः, एकोनाशीतिसहस्राधिकलक्षसंख्यकाः श्रावकाः, एकाशीतिसहस्राधिकलक्षत्रयसंख्यकाः श्राविकाश्चाभवन्। एवं चतुर्विधं सङ्घं संस्थाप्य भगवान् कुन्थुनाथः सहस्रमुनिपरिवारेण मासिकं संस्तारकं कृत्वा सिद्धिं पदं प्राप्तवान्। भगवतः पूर्णमायुः पञ्चनवतिसहस्रवर्षपरिमितम्। तत्र कौमार्यं सार्द्धसप्तशताधिकत्रयोविंशति सहस्रवर्षपरिमितम्। एवं माण्डलिकत्वं चक्रवर्त्तित्वं संयमित्वं च विज्ञेयम् ॥ इति श्रीकुन्थुनाथकथा ॥

पेंतीस गुणों से अलकृत वाणी द्वारा धर्मका उपदेश दिया। भगवान् की इस धार्मिक देशनाका पानकर अनेक भव्य प्राणियो ने उनके समीप दीक्षा लेकर अपने जन्मको सफल बनाया। भगवान के पेंतीस गणधर थे और पेंतीस ही गच्छ थे। प्रभु के संघमें साठ ६० हजार साधु, छासठ ६६ हजार साध्वियां, गुन्नासी ७९ हजार अधिक एकलाख श्रावक तथा इक्यासी ८१ हजार तीन लाख श्राविकाएँ थी। इस प्रकार चतुर्विध सघकी स्थापना करके इन कुन्थुनाथ प्रभुने एक हजार मुनियोंके साथ एक मासका सथाराकर पश्चात् सिद्धिपद को प्राप्त किया। भगवान् की पूर्ण आयु पचानवे ९५ हजार वर्षकी थी इसमे तेइस हजार सातसौ पचास २३७५० वर्ष कुमार पद पर रहे। उतने ही वर्ष माडलिक पद पर उतने ही वर्ष चक्रवर्ती पद पर एव उतने ही वर्ष सयम अवस्थामे रहे। इस प्रकार भगवानका पचानवें हजार वर्ष का सब आयु था ॥ ३९ ॥

॥ इस प्रकार कुन्थुनाथ चक्रवर्तीकी यह कथा है ॥

ગુણોથી અલકૃત વાણી દ્વારા ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો ભગવાનની આ ધાર્મિકદેશ નાનુ પાન કરી અનેક ભવ્ય પ્રાણીઓએ એમની પાસેથી દીક્ષા લઈને પોતાના જીવનને સફળ બનાવ્યુ ભગવાનના પાત્રીસ ગણધર હતા અને પાત્રીસ ગચ્છ હતા પ્રભુની સાથે સાઠ હજાર સાધુ છાસઠ હજાર સાધ્વિઓ એક લાખ અગણ્યાશી હજાર, શ્રાવક અને ત્રણ લાખ એકાશી હજાર શ્રાવિકા હતી આ પ્રકારે ચતુર્વિધ સઘની સ્થાપના કરીને કુન્થુનાથ પ્રભુએ એક હજાર મુનિઓની સાથે એક મહિનાનો સથારો કરી પાછળથી સિદ્ધી પદને પ્રાપ્ત કર્યું ભગવાન કુન્થુનાથનુ આયુષ્ય પચાણુ હજાર વર્ષનુ હતુ તેમા ત્રેવીસ હજાર સાતસો પચાસ વર્ષ કુમારપદ ઉપર, અને એટલાજ વર્ષ માડ લીકપદ ઉપર અને એટલાજ વર્ષ ચક્રવર્તી પદ ઉપર અને એટલાજ વર્ષ સયમ અવ સ્થામા રહ્યા આ પ્રમાણે ભગવાનનુ સઘળુ આયુષ્ય પચાણુ હજાર વર્ષનુ હતુ ॥૩૯॥

॥ આ પ્રકારે કુન્થુનાથ ચક્રવર્તીની આ કથા છે ॥

तथा—

मूलम्—सागरंत चइत्ता ण, भरहं नरवरीसरो ।
अरो य अरय पत्तो, पत्तो गइमणुत्तरं ॥४०॥

छाया—सागरान्तं त्यक्त्वा खलु, भारतं नरवरेश्वरः ।
अरश्च अरजः प्राप्तः, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥४०॥

टीका—'सागरंत' इत्यादि ।

नरवरेश्वरः=नराधिपः अरः=अरनामकः सप्तमश्चक्रवर्ती अरजः=वैराग्यं प्राप्तः सागरान्तं भारतं=भरतक्षेत्रं च खलु निश्चयेन त्यक्त्वा, अष्टादशस्तीर्थङ्करो भूत्वा अनुत्तरां=सर्वोत्कृष्टां गतिं=सिद्धिगतिं प्राप्तः ॥४०॥

श्रीमद्-अरनाथकथा—

आसीदिह-जम्बूद्वीपे पूर्वविदेहे वत्सनामके विजये सीमापुर्यां महापराक्रमी धनपतिर्नाम नरपतिः । स हि कदाचित्सनातवैराग्य समन्तभद्राचार्य

तथा—'सागरंत' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(नरवरीसरो-नरवरेश्वरः) नराधिप (अरो-अरः) अर नामक सप्तम चक्रवर्तीने (अरय पत्तो-अरजः प्राप्तः) वैराग्य-प्राप्त करके (सागरंत भरहं-सागरान्तं भारतम्) इस सागरान्त भरतक्षेत्रका (ण-खलु) निश्चय से (चइत्ता-त्यक्त्वा) परित्याग करके (अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तरां गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट सिद्धिगति को प्राप्त किया । ये अठारहवें तीर्थंकर हुए हैं ।-इनकी कथा इस प्रकार है—

इस जम्बूद्वीप के अन्दर पूर्वविदेह मे वत्सनामका एक विजय है । उसमें एक सीमापुरी नामकी नगरी थी । वहां का शासक धनपति नामका महा पराक्रमी राजा था । किसी समय इन्होंने वैराग्यभावकी

તથા—"सागरंत" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—नरवरीसरो નરાધિપ अरो-अरः અર નામના સાતમા ચક્રવર્તીએ अरयपत्तो-अरजः प्राप्तः વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત કરીને सागरंत भरहं-सागरान्तम् भारतम् આ સાગરાન્ત ભરતક્ષેત્રનો ण-खलु નિશ્ચયથી चइत्ता-त्यक्त्वा પરિત્યાગ કરીને अणुत्तरं गइं पत्तो-अनुत्तरां गतिं प्राप्तः સર્વોત્કૃષ્ટ સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી આ અઢારમા તીર્થંકર થયા છે એમની કથા આ પ્રમાણે છે—

આ જમ્બુદ્વીપની અંદર પૂર્વ વિદેહમાં વત્સ નામનું એક વિજય છે તેમાં સીમાપુરી નામનું નગર હતું ત્યાંના શાસક ધનપતિ નામના મહાપરાક્રમી રાજા હતા કોઇ સમય એમને વૈરાગ્યભાવની પુષ્ટિથી સમન્તભદ્રાચાર્ય નામના એક

नामकस्य मुनेः सविधे दीक्षां गृहीत्वा एकादशाङ्गान्यधीत्य विंशतिस्थानकसमाराधनेन स्थानकवासित्वं समाराधितवान्। तत्प्रभावेण स तीर्थंकरनामगोत्रकर्म समुपार्जितवान्। स हि चिरकालं तीव्रं तपस्तप्त्वा समुत्कृष्टं चारित्रं परिपाल्यान्तिमे ग्रैवेयके देवत्वेन समुत्पन्नः। ततश्च्युतो भारते वर्षे हस्तिनापुराधीशस्य राज्ञः सुदर्शनस्य देवी नाम्न्याः पट्टराज्ञ्या गर्भे समवतीर्णः। तदा राज्ञ्या चतुर्दशस्वप्ना दृष्टाः। राज्ञ्या स्वप्नवृत्तान्तः स्वपतये निवेदितः। राज्ञा प्रोक्तम्–देवि! तव सुतो महाप्रभावशाली भविष्यति। राज्ञी स्वप्नफलं श्रुत्वा सम्प्रहृष्टमानसा सुखेन गर्भं पुपोष। पूर्णे काले सा सकलजननयनानन्दकरं काञ्चनद्युति

पुष्टि से समन्तभद्राचार्य नामके किसी मुनीश्वर के पास दीक्षा अगीकार की तथा एकादशागीका पूर्णपाठी होकर विंशतिस्थानकों का समाराधना द्वारा स्थानकवासि पनेकी आराधना के प्रभावसे तीर्थंकर नाम गोत्रका उपार्जन किया। उत्कृष्ट चारित्रकी आराधना करते २ जब बहुत काल इनका व्यतीत होचुका तब आयुके अत में देहका परित्याग कर अतिम ग्रैवेयक में देवकी पर्याय से उत्पन्न हुए। जब वहाँ की स्थिति समाप्त हो गई तब ये वहीं से चवकर भारतवर्षान्तर्गत हस्तिनापुर में वहा के शासक श्री सुदर्शन राजाकी देवी नामकी पट्टरानीके गर्भ में पुत्ररूप से अवतरित हुए। इनके अवतरित होते ही रानीने रात्रिके पिछले पहर में चौदह स्वप्नोंको देखा। स्वप्नों का वृत्तान्त अपने पति से कहने पर जब उसको यह मालूम हुआ कि मेरे यहाँ जो पुत्र होगा वह विशिष्ट प्रभावशाली होगा इससे वह बडी हर्षित हुई और बडी प्रसन्नता के साथ अपने गर्भकी पुष्टि एव

मुनीश्वरनी पासे तेमणे दीक्षा अंगीकार करी दीक्षा धारण करी એકાદશાંગના પૂર્ણપાઠી થઇને વિંશતિસ્થાનકોની સમારાધના દ્વારા સ્થાનકવાસીપણાની આરાધનાના પ્રભાવથી તીર્થંકર નામ ગોત્રનું ઉપાર્જન કર્યું ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્રની આરાધના કરતા કરતા જ્યારે તેમનો ઘણો કાળ વ્યતીત થયો ત્યારે આયુના અંતમાં દેહનો પરિત્યાગ કરીને અંતિમ ગ્રૈવેયકમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા જ્યારે ત્યાંની સ્થિતિ સમાપ્ત થઇ ત્યારે ત્યાંથી ચ્યવીને ભારતવર્ષના એક ભાગમાં હસ્તિનાપુરમાં ત્યાંના શાસક શ્રી સુદર્શન રાજાની પટ્ટરાણી દેવી નામની રાણીના ગર્ભમાં પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયા ગર્ભમાં તેમના જીવે પ્રવેશ કરતાંજ રાણીએ રાત્રીના પાછલા પહોરમાં ચૌદ સ્વપ્નો જોયા સ્વપ્નોનો વૃત્તાંત પોતાના પતિને કહેવાથી જ્યારે તેને એમ લાગ્યું કે, મારી કુખેથી જે પુત્ર અવતરશે તે વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી થશે આ જાણીને એ ખૂબ જ હર્ષિત બની અને ખૂબજ પ્રસન્નતાથી પોતાના ગર્ભની સંભાળ રાખવા લાગી જ્યારે

ज्ञानत्रयधरं सुकुमारं कुमारं जनितवती। तत्र स्वासनकम्पेन तीर्थंकरस्य जन्म, परिज्ञाय षट्पञ्चाशद् दिक् कुमार्यः समागत्य प्रसूतिकर्माणि कृतवत्यः। स्वासन चलनेन शक्रादय इन्द्रा उपयोगं कृत्वा तीर्थंकरस्य जन्म परिज्ञाय तत्रागत्य देवैः महाष्टाह्निक महोत्सवं कृतवान्। राजा सुदर्शनश्च पुत्रजन्मना सम्प्रहृष्ट सर्वेभ्यो दीनेभ्योऽनाथेभ्यश्च दानं ददौ। जननी स्वप्ने रत्नाकरं दृष्टवती। तेन तस्य 'अर' इति नाम कृतम्। स हि क्रमेण यौवनं प्राप्तवान्। तस्य शरीरो च्छ्राय त्रिंशद्धनु' परिमितोऽभवत्। मातापितृभ्याम् अरनाथस्य नृपकन्यकाभिः सह विवाहः कारित ततो राजा सुदर्शनस्त राज्यधुराधरणक्षमं दृष्ट्वा तस्मिन

परिपालना करने में सावधान रहने लगी। जब गर्भका समय ठीक नौमास साढेसातदिन समाप्त हुआ तब रानीने एक नयनानन्दविधायक सुवर्णकी कान्ति जैसे महामनोहर सुकुमारको जन्म दिया। छप्पन कुमारिकाओने अपने २ आसन के कंपन से तीर्थंकर प्रभु का जन्म हुआ जाना और वहा आकर प्रसूतिकार्य किया। तथा इसी प्रकार इन्द्र अपने आसन के सचलन से 'तीर्थंकर प्रभु का जन्म हो गया है' ऐसा उपयोग के लगाने से जानकर देवों के साथ वहा आये, और आठ दिन तक लगातर अच्छी तरह से प्रभु के जन्म का खूब उत्सव मनाया। राजा सुदर्शन भी पुत्र क जन्म की खुशी मे इतने हर्षित बन गये कि बडी उदारता के साथ दीन अनाथ व्यक्तियो को दान देने लगे। माताने रत्नों का अर-आरा देखा था इसलिये उसीके अनुसार प्रभुका नाम "अर" ऐसा रखा गया। अरनाथ बढते २ जब यौवन अवस्थावाले हो गये तब मातापिताने इनको वैवाहिक सबध

ગર્ભનો સમય પુરા નવમાસ અને સાડાસાત દિવસનો પૂર્ણ થયો ત્યારે રાણીએ સુવર્ણની કાંતિ જેવા અને આંખોને આનંદ પમાડે તેવા સુમનોહર સુકુમાર પુત્રને જન્મ આપ્યો. છપ્પન દિગ્કુમારીઓના આસન કંપવાથી તેઓ તીર્થંકર પ્રભુનો જન્મ થયો જાણી તાબડતોબ ત્યા પહોચી ગઈ અને પ્રસૂતિકાર્યમા લાગી ગઈ આજ પ્રમાણે ઇન્દ્રનુ આસન પણ કંપવાથી તેઓ "તીર્થંકર" પ્રભુનો જન્મ થઈ રહ્યો છે એવુ અવધિજ્ઞાનથી જાણીને દેવોની સાથે ત્યા પહોચ્યા અને આઠ દિવસ સુધી બાળ કુમારના જન્મનો ઉત્સવ મનાવ્યો. રાજા સુદર્શન પણ પુત્રના જન્મની ખુશીથી એટલા હર્ષિત બની ગયા કે, ઘણીજ ઉદારતાની સાથે દીન, અનાથ જનોને દાન દેવા લાગ્યા. માતાએ સ્વપ્નમા રત્નોનો અર-આરા જોયા હતા આથી એજ અનુસાર પુત્રનુ અર (નાથ) એવુ નામ રાખ્યુ અરનાથ વધતા વધતા યૌવન અવસ્થાએ પહોચ્યા ત્યારે માતાપિતાએ તેમનો વૈવાહિક સબંધ અનેક રાજકન્યાઓની સાથે કર્યો ત્યારબાદ

राज्यभारं समारोप्य सपत्नीकः स्वयं सिद्धाचार्यसन्निधौ दीक्षां गृहीत्वा स्व कल्याणं साधितवान्। ईत्यादिभयेभ्यः प्रजाः परिरक्षन् भगवानरनाथो बहूनि वर्षाणि पृथिवीं शशास। अथान्यदा तस्य शस्त्रागारे चक्ररत्नं समुत्पन्नम्। तन्निर्दिष्टपथेन भगवानरनाथः समस्तं षट्खण्डं भारतं वर्षं साधितवान्। ततो देवा भगवन्तं चक्रवर्तित्वेऽभिषिक्तवन्तः। भगवानरनाथो बहूनि वर्षाणि चक्रवर्तिश्रियमुपभुक्तवान्। अथान्यदा तीर्थं प्रवर्त्तयितुं लोकान्तिकदेवैः प्रार्थितो

अनेक राजकन्याओं के साथ कर दिया। पश्चात् अरनाथ को राज्य धुरा के संचालन करने में समर्थ जब सुदर्शन राजाने जाना तो फिर उन्होंने उनके ऊपर राज्यका भार स्थापित किया। और स्वयं रानीके साथ सिद्धाचार्य के पास दीक्षा अंगीकार की। इस प्रकार दोनोंने आत्माकल्याणकी साधना करने में अपने आपको विसर्जित किया।

इस प्रकार अरनाथ प्रभुने ईति भीति आदि से अपनी प्रजाका संरक्षण करते हुए राज्य का संचालन करने लगे। इसी तरह प्रभुका बहुतसा वर्षों का समय पृथिवी का शासन करते २ अतिवाहित–व्यतीत हुवा। जब इनके शस्त्रागार में चक्ररत्न की उत्पत्ति हुई तब उन्होंने उसके द्वारा प्रदर्शित मार्ग से चलकर समस्त षट्खंडों को अपने वश में कर लिया। इस प्रकार जब षट्खंडमंडित भारतवर्ष आधीन बन चुका– तब वे वापिस अपने स्थान पर लौट आये। वहां आने पर इनका देवोंने मिलकर चक्रवर्ती पद पर अभिषेक किया। बहुत वर्षोंतक अर-नाथ प्रभुने चक्रवर्ती के वैभवका अनुभव किया। जब चक्रवर्तीपदकी

અરનાથને રાજ્યધુરાનુ સંચાલન કરવામાં સમર્થ જાણીને સુદર્શન રાજાએ તેમના હાથમાં રાજ્યનો વહીવટ સોંપી દીધો અને પોતે રાણીની સાથે સિદ્ધાચાર્યની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરી આ પ્રમાણે બન્નેએ આત્મકલ્યાણની સાધના કરવામાં પોતાની જાતને લગાડી દીધી

આ તરફ અરનાથ પ્રભુએ પોતાની પ્રજાનુ યથાયોગ્ય રીતથી પાલન કરીને રાજ્યનુ સંચાલન કરવા માંડયુ આ પ્રમાણે પ્રભુના વધારે વર્ષો પૃથ્વીનુ શાસન કરતા કરતા વ્યતીત થયા અને જ્યારે તેમના શસ્ત્રાગારમાં ચક્રરત્નની ઉત્પત્તિ થઈ ત્યારે તેઓએ તેના દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગનુ અનુસરણ કરીને પૃથ્વીના છ ખંડોને જીતી પોતાને આધિન કરી લીધા આ પ્રકારે જ્યારે છખંડ પૃથ્વીનુ સામ્રાજ્ય તેમના હાથમાં આવી ગયુ ત્યારે તેઓ હસ્તિનાપુર પાછા પહોંચી ગયા અને આ પછી દેવોએ મળીને તેમનો ચક્રવર્તી પદ ઉપર અભિષેક કર્યો ઘણા વરસો સુધી અરનાથ પ્રભુએ ચક્રવર્તી પદનો

भगवान् दीनानाथेभ्यः साधर्मिकेभ्यश्च वार्षिकं दानं दत्त्वा स्वपुत्रं सुरसेनं राज्ये संस्थाप्य शिबिकामारुह्य सहस्राम्रवणमुद्यानं जगाम। तत्र शिबिकातो ऽवतीर्य सहस्रनृपैः सह दीक्षां गृहीतवान्। सुरासुरनरैश्च भगवतो दीक्षामहोत्सवः कृतः। तदा भगवान् मनःपर्ययनामकं चतुर्थं ज्ञानमवाप्तवान्। अरनाथो भगवान् पृथिव्यां विहरन् वर्षत्रयानन्तरं भूयोऽपि तत्रैवोद्याने समाजगाम। तत्र भगवता केवलज्ञानं प्राप्तम्। शक्रादय इन्द्राः स्वासनकम्पेन भगवतः केवलज्ञानोत्पत्तिं परिज्ञाय समागत्य समवसरणं चक्रुः। तत्र समवसरणे पूर्व-

---

श्रीका अनुभव करते २ अधिक समय हो गया तब लोकान्तिक देवोंने एक दिन आकर इनसे प्रार्थना की कि—प्रभो! अब तीर्थप्रवृत्ति करने का समय आ गया है सो आप तीर्थकी प्रवृत्ति करे। इस प्रकार लोकान्तिक देवों द्वारा तीर्थकी प्रवृत्ति करने के लिये प्रार्थित हुए अरनाथ प्रभुने दीन, अनाथ एवं साधर्मिक जनोंके लिये वार्षिक दान देकर अपने पुत्र सुरसेन को राज्य पर स्थापित कर दिया और स्वयं एक शिबिका पर आरूढ होकर सहस्राम्रवन की ओर रवाना हुए। वहाँ पहुँच कर प्रभु पालखी से नीचे उतरे और एक हजार अन्य राजाओं के साथ दीक्षित हो गये। दीक्षा लेने पर प्रभुको मनःपर्ययज्ञान की प्राप्ति हो गई। पृथ्वी पर विहार करते हुए अरनाथ प्रभु तीन वर्ष के बाद फिर से जब उसी उद्यानमें आये तो उनको केवलज्ञानकी प्राप्ति हो गई। इन्द्रोंने अपने २ आसनों के कंपन से प्रभु को केवलज्ञानकी प्राप्ति जानकर समवसरण रचा। उस समवसरणमें पूर्वमुखस्थित

અનુભવ કર્યો જ્યારે ચક્રવર્તી પદની શ્રીનો અનુભવ કરતા કરતા ઘણો સમય વીતી ગયો ત્યારે લોકાંતિક દેવોએ એક દિવસ આવીને તેમને પ્રાર્થના કરી કે, હે પ્રભુ! હવે તીર્થ પ્રવૃત્તિ કરવાનો સમય આવી ગયો છે તો આપ તીર્થની પ્રવૃત્તિ કરો આ પ્રમાણે લોકાંતિક દેવો દ્વારા તીર્થની પ્રવૃત્તિ કરવા માટે પ્રાર્થના કરતાં અર નાથ પ્રભુએ દીન અનાથ અને સાધર્મિકજનોને વાર્ષિક દાન આપીને તથા પોતાના પુત્ર સુરસેનને રાજ્યગાદી સુપ્રત કરીને પોતે એક પાલખીમાં બેસીને સહસ્ત્ર આમ્રવન તરફ રવાના થયા ત્યાં પહોંચીને પ્રભુ પાલખીમાંથી નીચે ઉતર્યા અને એક હજાર બીજા રાજાઓની સાથે દીક્ષા અંગીકાર કરી દીક્ષા ધારણ કર્યા પછી પ્રભુને મન પર્યય જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઇ પૃથ્વી ઉપર વિહાર કરતા કરતા અરનાથ પ્રભુ ત્રણ વર્ષ પછી ફરીથી તે ઉદ્યાનમાં પાછા ફર્યા ત્યારે તેમને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઇ ઈન્દ્રોએ પણ પોતપોતાના આસનો કંપાયમાન થતા જોયું કે પ્રભુને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ છે તેથી તેઓએ સમવસરણની રચના કરી એ સમવસરણમાં પૂર્વ તરફ બેઠેલા પ્રભુએ

मुखस्थितो भगवान् सर्वजीवभाषापरिणामिन्या योजनगामिन्या वाण्या धर्मो
पदेश ददौ। तदन्तिके धर्ममुपश्रुत्य बहवो जनाः प्रव्रजिताः। भगवतस्त्रयस्त्रिंशद्
गणधरा अत एव त्रयस्त्रिंशद् गच्छाश्चाभवन्। भगवतोऽरनाथस्य पञ्चाशत्सह
स्राणि श्रमणा आसन्, षष्टिसहस्राणि श्रमण्य आसन्, चतुरशीतिसहस्राधिक
लक्षैकपरिमिताः श्रावका आसन्। द्वासप्ततिसहस्राधिक लक्षत्रयपरिमिता श्राविका
आसन्। इत्थं स्वपरकल्याण कर्तुं भूमौ विहरन् भगवानरनाथश्चतुर्विध सङ्घ
सस्थापितवान्। भगवान् एकविंशतिसहस्रवर्षाणि कौमार्ये, तथैव माण्डलिकत्वे,
संयमित्वे च नीतवान्। भगवतः समग्रमायुश्चतुरशीतिसहस्रवर्षपरिमितमासीत्।
निर्वाणकाले समुपस्थिते भगवान् सहस्रसाधुभिः सहानशन कृत्वा सिद्धिपद
सम्प्राप्तवान्। निर्वाणपद प्राप्ते भगवति सेन्द्रा सुरा निर्वाणमहोत्सव चक्रुः।

॥ इति अरनाथकथा ॥

प्रभुने सर्व जीवोंकी भाषा में परिणमित हुई अपनी एक योजनगामिनी
वाणी द्वारा धर्म का उपदेश दिया। प्रभुका दिव्य उपदेश सुनकर
अनेक व्यक्तियोंने विरक्त होकर वहीं पर दीक्षा धारण की। इन अर-
नाथ प्रभु के संघ में पचास हजार मुनि, साठ हजार साध्वियां, चौरासी
हजार, ८४ हजार अधिक एक लाख (१८४०००) श्रावक, एवं बहत्तर
हजार-अधिक तीन लाख ३७२००० श्राविकाए थीं। इस प्रकार स्व
पर कल्याण करने के लिये विहार करते हुए प्रभुने चतुर्विध संघकी
स्थापना की। भगवानकी समस्त आयु चौरासी ८४ हजार वर्षकी थी।
इस में कुमारकाल में इक्कीस हजार, माडलीक अवस्था मे इक्कीस हजार,
चक्रवर्ती अवस्था में एक्कीस हजार, और संयम अवस्था मे इक्कीस हजार
वर्ष व्यतीत हुए। निर्वाण प्राप्त होने का जब समय आया तब प्रभुने एक

સર્વ જીવોને પરિણમિત થયેલી પોતાની એક યોજન સુધી સભળાતી વાણી દ્વારા
ઉપદેશ કર્યો પ્રભુનો દિવ્ય ઉપદેશ સાભળીને અનેક વ્યક્તિઓએ વિરકત થઈને ત્યા
દીક્ષા ધારણ કરી, આ અરનાથ પ્રભુના સંઘમા પચાસ હજાર મુનિ સાઠ હજાર
સાધ્વિઓ, એક લાખ ચોર્યાસી હજાર શ્રાવકો અને ત્રણ લાખ બોતેર હજાર શ્રાવિ
કાઓ હતી આ પ્રમાણે પોતાનુ તેમજ બીજાનુ કલ્યાણ કરવાને માટે વિહાર કરતા
કરતા પ્રભુએ ચતુર્વિધ સંઘની સ્થાપના કરી ભગવાન અરનાથનું સમગ્ર આયુષ્ય ચોર્યાસી
હજાર વર્ષનુ હતુ આમા કુમારકાળમા એકવીસ હજાર, માંડલીકપદમા એકવીસ
હજાર, ચક્રવર્તી અવસ્થામા એકવીસ હજાર, અને સંયમ અવસ્થામા એકવીસ
હજાર વર્ષ વ્યતીત થયા નિર્વાણ પ્રાપ્તનો જ્યારે સમય આવ્યો ત્યારે પ્રભુએ

तथा—

मूलम्—चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महिड्ढिओ ।
चइत्ता उत्तमे भोगे, महापउमो तवं चरे ॥४१॥

छाया—त्यक्त्वा भारतं वर्षं, चक्रवर्ती महर्द्धिकः ।
त्यक्त्वा उत्तमान् भोगान्, महापद्मस्तपोऽचरत् ॥४१॥

टीका—'चइत्ता' इत्यादि ।

महर्द्धिकः=चतुर्दशरत्ननवनिधानादियुक्तो मुनि सुव्रतशासने महापद्मनामा नवमः चक्रवर्ती भारतं वर्षं त्यक्त्वा, तथा-उत्तमान् भोगान् त्यक्त्वा तपः अचरत् ॥४१॥

हजार साधुओं के साथ अनशन करके आयु के अन्त में सिद्धिपद प्राप्त किया। इन्द्रों एवं देवोंने मिलकर इनका निर्वाणमहोत्सव मनाया ॥४०॥

॥ इस प्रकार यह अरनाथ प्रभुकी कथा है ॥

तथा—'चइत्ता' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महड्ढिओ-महर्द्धिकः) चौदह रत्न एवं नवनिधि आदि महाऋद्धियों के अधिपति (चक्कवट्टी-चक्रवर्ती) नवमचक्रवर्ती (महापउमो-महापद्मः) महापद्मने जो मुनि सुव्रत स्वामी के शासनकाल में हुए हैं। (भारहं वासं चइत्ता-भारतं वर्षम् त्यक्त्वा) इस समस्त भारतवर्ष का परित्याग करके तथा (उत्तमे भोगे चइत्ता-उत्तमान् भोगान् त्यक्त्वा) उत्तम भोगोंका परित्याग करके (तवं चरे-तपः अचरत्) तपस्याकी आराधना की। और सकल कर्मों का क्षय करके मोक्ष पधारे ॥४१॥

એક હજાર સાધુઓના સાથે અનશન કરીને આયુષ્યના અંતમાં સિદ્ધિપદને પ્રાપ્ત કર્યું ઈન્દ્ર અને દેવોએ મળીને તેમનો નિર્વાણ મહોત્સવ મનાવ્યો ॥૪૦॥

॥ આ પ્રમાણે અરનાથ પ્રભુની આ કથા છે ॥

તથા—"चइत्ता'

અન્વયાર્થ—महड्ढिओ—महर्द्धिकः ચૌદરત્ન અને નવનિધી આદિ મહા ઋદ્ધિઓના અધિપતિ चक्कवट्टी—चक्रवर्ती નવમા ચક્રવર્તી महापउमो—महापद्मः મહાપદ્મ તેઓ મુનિ સુવ્રત સ્વામીના શાસન કાળમાં થયા છે भारहं वासं चइत्ता—भारतं वर्षम् त्यक्त्वा આ સઘળા ભારત વર્ષના પરિત્યાગ કરીને તથા उत्तमे भोगे चइत्ता—उत्तमान् भोगान् त्यक्त्वा ઉત્તમ ભોગોનો પરિત્યાગ કરીને तवं चरे—तपःअचरत् તપસ્યાની આરાધના કરી, તથા સકળ કર્મોનો ક્ષય કરીને મોક્ષમાં પધાર્યા ॥૪૧॥

अथ महापद्मकथा—

आसीदिह भरतक्षेत्रे हस्तिनापुरे इक्ष्वाकुवंशीयः पद्मोत्तरनामा नृपः। तस्यास्ते ज्वाला लक्ष्मीति द्वे भार्ये। कदाचित्सुकोमलशय्यायां शयाना ज्वालादेवी स्वप्ने सिंहं दृष्टवती। स्वप्नानुसारेण तस्या एकः पुत्रो जातः। तस्य नाम विष्णुरभूत्। अथान्यदा ज्वालादेवी पुनरपि सुकोमलशय्यायां सुखप्रसुप्ता चतुर्दश स्वप्नान् दृष्टवती। ततस्तस्या द्वितीयः पुत्रो जातः। तस्य महापद्म इति नामाभूत्। स हि शुक्लपक्षशशीव वर्द्धमानोऽनुरूपं वयः प्राप्य कलाचार्यसन्निधौ सकलाः कलाः शिक्षितवान्। पित्रा कनिष्ठोऽपि महापद्मकुमारो गुणैर्ज्येष्ठत्वाद्युवराजपदे स्थापितः। युज्यते चैतत्–विप्रेषु प्रज्ञावान्, क्षत्रियेषु जवश्च शस्यते।

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत हस्तिनापुर नामका नगर था। वहां इक्ष्वाकुवंशीय पद्मोत्तर नामके राजाका शासन था। ज्वाला एवं लक्ष्मी इस नामकी इनकी दो पटरानियां थीं। कोमल शय्या पर सोई हुई ज्वालादेवीने एक दिन स्वप्न में एक सिंह देखा। स्वप्नानुसार इसके यहां एक पुत्र हुआ। इसका नाम विष्णु रखा गया। एक दिन फिर इस तरहकी घटना घटी–जब यह अपनी कोमलातिकोमल शय्या पर सुखपूर्वक सो रही थी तब इसको चौदह स्वप्न दिखाई दिये। इन स्वप्नों के अनुसार इसके दूसरा पुत्र हुआ। इनका नाम महापद्म हुआ। महापद्मने क्रमशः द्वितीयाके चन्द्रकी तरह वर्द्धिगत होते हुए अपने अनुरूप वय प्राप्त करली और फिर कलाचार्य के पास जाकर सकल कलाओं का अभ्यास भी कर लिया। यद्यपि ये कनिष्ठ पुत्र थे तो भी इन्होंने अपने गुणों से पिताको अपनी तरफ अधिक आकृष्ट

એમની કથા આ પ્રમાણે છે—

આ ભરતક્ષેત્રમા અંતર્ગત હસ્તિનાપુર નામનુ નગર હતુ ત્યા ઈક્ષ્વાકુ વંશના પદ્મોત્તર રાજાનુ શાસન હતુ જ્વાલા અને લક્ષ્મી નામની બે પટરાણીઓ હતી જ્વાલા દેવીએ એક દિવસ કોમળ શૈયા પર સુતા સુતા સ્વપ્નામા એક સિંહ જોયો. સ્વપ્ન અનુસાર તેમની કૂખે એક પુત્ર અવતર્યો, જેનુ નામ વિષ્ણુ રાખવામા આવ્યુ આ પછી એક દિવસ એવી ઘટના બની કે, જ્યારે તે પોતાની કોમળ શય્યા ઉપર સૂતી હતી ત્યારે તેણે સ્વપ્નમાં ચૌદ સ્વપ્ન જોયા આ સ્વપ્ન અનુસાર તેને એક બીજો પુત્ર થયો. એનુ નામ મહાપદ્મ રાખવામા આવ્યુ મહાપદ્મ ક્રમશઃ બીજના ચંદ્રમાની માફક વૃદ્ધી પામવા લાગ્યા આ રીતે તેઓ યુવાવસ્થાએ પહોચ્યા અને કળાચાર્યની પાસે જઈને સઘળી કળાઓનો અભ્યાસ કર્યો જો કે તેઓ નાના પુત્ર હતા છતા પણ તેમણે પોતાના ગુણોથી પિતાને પોતાના તરફ ખૂબજ આકર્ષિત

तस्मिन्नेव काले उज्जयिन्या नगर्यां श्रीवर्मा नाम महीपति रासीत्। तस्य वितण्डावादी नमुचि नामा सचिव आसीत्। एकदा तस्या नगर्या उद्याने ग्रामानुग्राम विहरन्तो मुनिसुव्रतनाथस्य शिष्याः सुव्रताचार्याः समागताः। तान् वन्दितु नगरनिवासिनो जना उद्यानाभिमुख प्रयान्ति स्म। सौधोपरि स्थितो राजा नागरिकसमुदाय बहिर्गच्छन्त विलोक्य नमुचिमन्त्रिण पृष्टवान्–किमद्य कोऽपि महोत्सवो वर्त्तते, यदेते नागरिकाः समुदिता बहिर्गच्छन्ति? नमुचिना प्रोक्तम्–देव! अद्य बहिरुद्याने केऽपि श्रमणा समागताः सन्ति। तान्नमस्कर्तुं एते तद्भक्ता नागरजना गच्छन्ति। ततो राजा प्राह–मन्त्रिन्! अस्माभिरपि

कर लिया था। इससे पद्मोत्तर राजाने इनको युवराजपद में स्थापित कर दिया। बात भी ठीक है विप्रवर्ण में प्रभाशाली की एव क्षत्रियो में जयशाली की अधिक प्रतिष्ठा होती है। उसी समय उज्जयिनी नगरी मे श्री वर्मा नाम का राजा था। इसका नमुचि नामका एक प्रधान था। यह वितण्डावादी था। एक दिनकी बात है कि वहा उद्यान मे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए मुनि सुव्रतनाथ के शिष्य सुव्रताचार्य आये। आचार्यश्रीका आगमन सुनकर नगरनिवासी जन उनको वदना करनेके लिये उद्यानकी ओर जाने लगे। महल के ऊपर बैठे हुए राजाने जब इस तरह लोगों का जाना उद्यान की ओर देखा, तब पास मे बैठे हुए नमुचि से पूछा–आज क्या कोई उत्सव है–जो नगरनिवासी समुदायरूप में एकत्रित होकर बाहर जा रहे हैं? सुनकर नमुचिने कहा–महाराज! उत्सव तो कोई नहीं है। आज बाहर उद्यान मे कितनेक श्रमण

બનાવ્યા હતા આથી પદ્મોત્તર રાજાએ તેમને યુવરાજપદ ઉપર સ્થાપિત કર્યો વાત પણ ઠીક છે બ્રાહ્મણોમા પ્રભાશાળીની તેમજ ક્ષત્રિઓમા જયશાળીની પ્રતિષ્ઠા ઘણી યોગ્ય હોય છે આ સમયે ઉજ્જૈની નગરીમા શ્રીવર્મા નામના રાજા હતા તેમને નમુચી નામના એક પ્રધાન હતા તે વિતડાવાદી હતા એક દિવસની વાત છે કે, ત્યા ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા મુનિ સુવ્રતનાથના શિષ્ય સુવ્રતાચાર્ય પધાર્યા આચાર્યશ્રીનુ આગમન સાભળીને નગરજનો એમને વદના કરવા જવા લાગ્યા મહેલના ઉપરના ભાગમા બેઠેલા રાજાએ જ્યારે આ રીતે લોકોને ઉદ્યાનની તરફ જતા જોયા, જેથી પાસે બેઠેલા નમુચી પ્રધાનને પૂછ્યુ કે આજે શુ કોઈ ઉત્સવ છે કે જેથી નગર નિવાસીઓ ઉત્સાહથી સમુદાયરૂપમા એકત્રિત થઈને બહાર જઈ રહ્યા છે? આ સાભળીને નમુચીએ કહ્યુ કે, મહારાજ ઉત્સવતો કોઈ નથી પરતુ આજે બહાર ઉદ્યાનમા કેટલાક શ્રમણ આવેલા છે તો તેમના આ ભક્તજનો તેમને વદના

अथ महापद्मकथा—

आसीदिह भरतक्षेत्रे हस्तिनापुरे इक्ष्वाकुवंशीयः पद्मोत्तरनामा नृपः। तस्यास्ता ज्वाला लक्ष्मीति द्वे भार्ये। कदाचित्सुकोमलशय्यायां शयाना ज्वालादेवी स्वप्ने सिंहं दृष्टवती। स्वप्नानुसारेण तस्याः एकः पुत्रो जातः। तस्य नाम विष्णुरभूत्। अथान्यदा ज्वालादेवी पुनरपि सुकोमलशय्यायां सुखप्रसुप्ता चतुर्दश स्वप्नान् दृष्टवती। ततस्तस्या द्वितीयः पुत्रो जातः। तस्य महापद्म इति नामाभूत्। स हि शुक्लपक्षशशीव वर्द्धमानोऽनुरूपं वयः प्राप्य कलाचार्यसन्निधौ सकलाः कलाः शिक्षितवान्। पित्रा कनिष्ठोऽपि महापद्मकुमारो गुणैर्ज्येष्ठत्वाद्युवराजपदे स्थापितः। युज्यते चैतत्-विप्रेषु ज्ञानवान्, क्षत्रियेषु जवश्च शस्यते।

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत हस्तिनापुर नामका नगर था। वहा इक्ष्वाकुवंशीय पद्मोत्तर नामके राजाका शासन था। ज्वाला एवं लक्ष्मी इस नामकी इनकी दो पट्टरानियां थी। कोमल शय्या पर सोई हुई ज्वालादेवीने एक दिन स्वप्न में एक सिंह देखा। स्वप्नानुसार इसके यहा एक पुत्र हुआ। इसका नाम विष्णु रखा गया। एक दिन फिर इस तरहकी घटना घटी-जब यह अपनी कोमलातिकोमल शय्या पर सुखपूर्वक सो रही थी तब इसको चौदह स्वप्न दिखाई दिये। इन स्वप्नों के अनुसार इसके दूसरा पुत्र हुआ। इनका नाम महापद्म हुआ। महापद्मने क्रमशः द्वितीयाके चन्द्रकी तरह वृद्धिंगत होते हुए अपने अनुरूप वय प्राप्त करली और फिर कलाचार्य के पास जाकर सकल कलाओं का अभ्यास भी कर लिया। यद्यपि ये कनिष्ठ पुत्र थे तो भी इन्होंने अपने गुणों से पिताको अपनी तरफ अधिक आकृष्ट

એમની કથા આ પ્રમાણે છે—

આ ભરતક્ષેત્રમા અંતર્ગત હસ્તિનાપુર નામનુ નગર હતુ ત્યા ઈક્ષ્વાકુ વંશના પદ્મોત્તર રાજાનુ શાસન હતુ જ્વાલા અને લક્ષ્મી નામની બે પટરાણીઓ હતી જ્વાલા દેવીએ એક દિવસ કોમળ શૈયા પર સુતા સુતા સ્વપ્નામા એક સિંહ જોયો. સ્વપ્ન અનુસાર તેમની કૂખે એક પુત્ર અવતર્યો, જેનુ નામ વિષ્ણુ રાખવામા આવ્યુ આ પછી એક દિવસ એવી ઘટના બની કે, જ્યારે તે પોતાની કોમળ શૈયા ઉપર સૂતી હતી ત્યારે તેણે સ્વપ્નમાં ચૌદ સ્વપ્ન જોયા આ સ્વપ્ન અનુસાર તેને એક બીજો પુત્ર થયો. એનુ નામ મહાપદ્મ રાખવામા આવ્યુ મહાપદ્મ ક્રમશ બીજના ચંદ્રમાની માફક વૃદ્ધી પામવા લાગ્યા આ રીતે તેઓ યુવાવસ્થાએ પહોંચ્યા અને કળાચાર્યની પાસે જઈને સઘળી કળાઓનો અભ્યાસ કર્યો જો કે તેઓ નાના પુત્ર હતા છતાં પણ તેમણે પોતાના ગુણોથી પિતાને પોતાના તરફ ખૂબજ આકર્ષિત

तस्यैवंविधमसभ्याचारं दृष्ट्वा श्रमणाः प्रोचुः-यदि तव मुखं कण्डूयते, तदा वयं तव कण्डूमपनेष्याम एव। एवं वदत्सु गुरुषु तच्छिष्यः कश्चित्क्षुल्लकः प्रोवाच-भदन्त! तिष्ठन्तु भवन्तः, अहमेवामुं दुर्विनीतं वादे पराजेष्यामि। वदत्वयं स्वसिद्धान्तम्। क्षुल्लकमुनिवचनं निशम्य क्रोधाविष्टो नमुचिः

इस प्रकार उस दुर्मतिने उन धर्मगुरुओं की विशेष रूप से निंदा करनी प्रारंभ की उसका इस प्रकार का असभ्य व्यवहार देखकर उन श्रमणोंने इस से कहा कि-मनुष्य अपने मुख से कुछ भी कहे इसके लिये वह स्वतन्त्र है। पर दूसरों की निष्कारण निंदा करना एवं उनके साथ असभ्य व्यवहार से सामना करना यह उसके लिये बिलकुल भी उचित नहीं है। हम यह नहीं चाहते कि धार्मिक मामले को लेकर उस पर वातावरण गरम किया जाय। परन्तु आपकी प्रवृत्ति देखकर हमें यह विश्वास हो रहा है कि आपके मुख में विशेष खुजलाहट हो रही है। अतः यदि आप अपनी उस खुजलाहट को दूर ही करवाना चाहते हों तो हम उसको दूर करने के लिये कटिबद्ध हैं। जब इस प्रकार गुरुजन इस से कह रहे थे कि इतने में उन्हीं के किसी एक क्षुल्लक शिष्यने उन से बडे विनय के साथ इस प्रकार कहा कि-महाराज! आप अभी ठहरे। पहिले इस से हमे ही निपट लेनेकी आज्ञा दीजिये। जब इस दुर्विनीत की बुद्धि को हम ही योग्य मार्ग पर ला सकते हैं तब आप पूज्यों को इसके लिये कष्ट करनेकी आवश्यकता ही क्या है।

આ પ્રકારે એ દુર્મતિએ મુનિરાજોની વિશેષરૂપથી નિંદા કરવાનો પ્રારંભ કર્યો તેની આ પ્રકારની અસભ્ય વર્તણુક જોઈને શ્રમણોએ તેને કહ્યું કે મનુષ્ય પોતાના મોઢાથી કાંઈપણ કહે તેને કોઈ રોકી શકતું નથી, પરંતુ બીજાઓને વગર કારણે નીંદા કરવી અને તેમની સામે અસભ્ય વ્યવહારનું વર્તન ચલાવવું એ તેના માટે જરા પણ ઉચિત નથી અમે એવું ચાહતા નથી કે, ધાર્મિક પ્રશ્નોના કારણે વાતાવરણને ઉગ્ર બનાવવામાં આવે પરંતુ આપની પ્રવૃત્તિ જોઈને અમોને વિશ્વાસ આવી રહ્યો છે કે, આપના મુખમાં ઉગ્ર પ્રમાણુથી ખોટી ચળ લાગી રહી છે આથી આપ જો આપની એ વિનાક રણની ચળને પુરી જ કરવા ચાહતા હો તો અમો એ માટે તૈયાર જ છીએ જ્યારે આ પ્રકારે ગુરુજન તેને કહી રહ્યા હતા એટલામાં એમના કોઈ એક નાના શિષ્યે એમને ખૂબ જ વિનય કરીને કહ્યું કે, મહારાજ! આપ હમણાં રોકાઈ જાવ પહેલાં અમોને જ તેમની સાથે ચર્ચા કરી લેવાની આજ્ઞા આપો જ્યારે આ હઠાગ્રહીની બુદ્ધિને અમો જ યોગ્ય માર્ગ ઉપર લાવી શકીએ તેમ છીએ ત્યારે આપ પૂજ્યોએ આના માટે કષ્ટ ઉઠાવવાની

तद्वन्दनार्थं गन्तव्यम्। तदा नमुचिरब्रवीत्–देव अहं तान् श्रमणान् पराजेष्यामि। भवता तत्र माध्यस्थ्येन भाव्यम्। राजा तद्वचनमङ्गीकृत्य तेन सह मुनिवन्दनार्थमुद्याने गतः। तत्र गत्वा नमुचिः प्राह–यदि भवन्तो धर्मं जानन्ति तदा त विवेचयन्तु। श्रमणास्तद्वचनं श्रुत्वा 'दुष्टोऽयमिति मनसि कृत्वा ते मौनमवलम्ब्य तस्थुः। तान् मौनमवलम्ब्य स्थितान् श्रमणान् दृष्ट्वा 'गाव एते' इमेते धर्मतत्त्वं ज्ञास्यन्तीति तान् सद्गुरून् बहुशो निन्दितवान् स दुर्मतिः।

आये हुए हैं सो उनके ये भक्तजन उनको वंदना करने के लिये जा रहे हैं। राजाने कहा–मन्त्रिन्। तब तो हम लोगों को भी उनकी वंदना करने के लिये चलना चाहिये। नमुचिने प्रत्युत्तर में कहा–हां महाराज! जैसी आपकी आज्ञा। परन्तु मैं वंदना करने के अभिप्राय से नहीं चलना चाहता हूं। मैं चाहता हूँ कि चलकर उन से आपको मध्यस्थ बनाकर वाद विवाद करूं और परास्त करूं। राजाने नमुचिकी बात मानली और उसको साथ लेकर मुनि वंदना के लिये चल दिया। वहा पहूंचते ही नमुचिने मुनिराजों से बडे गर्व से फूलकर कहा कि आप लोग धर्म का वास्तविक स्वरूप जानते हैं या नहीं। यदि जानते हों तो उसका थोडा बहुत निवेचन करो। श्रमणोंने उसकी इस प्रकार की वचन की असयमितता देखकर चुप रहना ही उचित समझा। वे सब के सब उसकी बातों का कुछ भी उत्तर न देकर एकदम मौनसे बैठे रहे। जब नमुचिने उनके वचनों के उत्तर के प्रति उपेक्षावृत्ति देखी तो एकदम कषाय के आवेश में आकर कह उठा कि अरे! ये तो कोरे बैल है ये बिचारे धर्मतत्व का स्वरूप क्या जान सकते है।

કરવા માટે ત્યા જઈ રહ્યા છે રાજાએ કહ્યુ કે, પ્રધાનજી ત્યારે તે આપણે પણ તેમની વદના કરવા માટે ત્યા જવુ જોઈએ નમુચીએ પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ, હા, મહારાજ! જેવી આપની આજ્ઞા પરતુ હુ વદના કરવાના અભિપ્રાયથી ત્યા આવવા ઈચ્છતો નથી હુ ચાહુ છુ કે, ત્યા જઈને આપને મધ્યસ્થી બનાવી તેમની સાથે વાદવિવાદ કરૂ, અને એમને પરાસ્ત કરૂ રાજાએ નમુચીની વાત માની અને તેને સાથે લઈને મુનિ વદના માટે ચાલી નીકળ્યા ત્યાં પહોચતાજ નમુચીએ મુનિરાજોને ઘણા ગર્વથી ફુલાઈને કહ્યુ કે, આપ લોકો ધર્મનુ વાસ્તવિક સ્વરૂપ જાણો છો કે, નહી? જો જાણતા હોતો તેનુ થોડુ ઘણુ વિવેચન કરો શ્રમણોએ તેની આ પ્રકારના વચનની અસયમિતતા જોઈને ચૂપ રહેવાનુ જ ઉચિત માન્યુ તે સઘળાએ તેની વાતનો કશો પ્રત્યુત્તર ન આપતા મોન બેસી રહ્યા જયારે નમુચીએ તેમની પોતાના વચનો તરફ ઉપેક્ષાવૃત્તી જોઈ ત્યારે કષાયના આવેશમા આવીને કહેવા માડયુ કે, આતો કોરા બળદ છે આ બિચારા ધર્મતત્વનુ સ્વરૂપ કયાથી સમજી શકે?

निरुत्तरीकृत स नमुचिस्तेषु साधुषु महद् वैरं ववन्ध। ततः स नृपेण सह गृहमागतः। अथ मध्यरात्रे समागते क्रोधान्धः स साधून् हन्तुमुद्याने समागतः। तत्र निर्ग्रन्थभक्तया देव्या स स्तम्भितः। प्रातस्तं तथाविधं प्रेक्ष्य सकला नागरिका जनाः परं विस्मयमापन्नाः। नृपश्चापि कर्णोपकर्णिकया इमं वृत्तान्तमुपश्रुत्य तत्र समागतः। सर्वेऽपि मुनिसन्निधौ धर्मदेशनां श्रुत्वा परमप्रीतिसम्पन्ना

वेदबाह्य एव शौच रहित इस से सिद्ध होते हैं। इस प्रकार क्षुल्लकने जब नमुचि से कहा तो वह इस के प्रत्युत्तर में उत्तर नहीं दे सकने के कारण चुप तो हो गया परन्तु इन साधुओं के ऊपर उसकी कषाय की प्रबलता पहिले से और अधिक बढ गई। राजा के साथ वह वापिस अपने स्थान पर लज्जित होकर आ गया। राजा के समक्ष उत्तर न दे सकने के कारण उसको अपना अपमान विशेष खटकने लगा। अतः इसका बदला साधुओं से अवश्य २ लेना चाहिये। ऐसा उसने घर पर आते ही निश्चय कर लिया। इसी दृढ निश्चय के अनुसार वह अपने अपमान का बदला लेनेके लिये मध्यरात्रि के समय क्रोधसे अंधा होकर उन साधुओं को मारने के लिये उद्यान में आया। उसको आते ही निर्गंथो की भक्ति से ओतप्रोत हुई वहा की वनदेवीने उसको कील दिया। जब प्रातःकाल का सुनहरा समय हुआ तो सकल नागरिक जनों को, नमुचि को कीलित हुआ देखकर बडा ही अचरज हुआ। राजाके भी कान में यह बात धीरे २ पहुँच गई सो वह भी वहां आ

આ પ્રમાણે નાના શિષ્ય તરફથી નમુચિને જ્યારે કહેવામા આવ્યુ તો તે તેના પ્રત્યુત્તરમા જવાબ ન આપી શકવાથી નિરૂત્તર બની ગયો પરંતુ આ સાધુઓની ઉપર તેની કષાયની પ્રબળતા પહેલાથી પણ અધિક પ્રમાણમા વધી ગઈ રાજાની સાથે તે પોતાના સ્થાને પાછો ફર્યો રાજાની હાજરીમા પોતે ઉત્તર ન આપી શકવાના કારણે તેને પોતાનુ અપમાન વિશેષ ખટકવા લાગ્યુ આથી સાધુઓની પાસેથી તેનો બદલો અવશ્ય લેવો જોઇએ એવો નિશ્ચય તેણે પોતાને ઘેર આવીને કર્યો આ દૃઢ નિશ્ચય અનુસાર પોતાના અપમાનનો બદલો લેવા માટે મધ્યરાત્રિના સમયે ક્રોધથી આંધળો બની બનીને તે સાધુઓને મારવા માટે ઉદ્યાનમા ગયો તે ત્યા પહોચતા જ નિર્ગ્રન્થોની ભા [illegible] તપ્રોત બનેલી ત્યાની વનદેવીએ તેને બાંધી દીધો જ્યારે પ્રાતઃકાળનો સમય થયો ત્યારે નગરજનોની અવરજવર થવા લાગતા આવતાજતા લોકોએ નમુચિ મંત્રીને બંધાયેલ હાલતમા જોતા આશ્ચર્ય થયુ ધીરે ધીરે આ વાત સઘળા નગરમા પ્રસરી ગઈ અને છેવટે રાજાના કાન

प्रोवाच—अये ! यूय शौचविवर्जिता वेदबाह्याश्च स्थ । अतो यूय देशे वासयितु मनर्हाः ? अयमेव मम प्रश्नोऽस्ति । उत्तर देहि । तदा क्षुल्लकः प्रोवाच-श्रुतिषु जलकुम्भ, प्रमार्जनी, चुल्ली, कण्डनी, पेषणीचेति पञ्चसूना प्रोक्ताः । ये हि पञ्चसूना आश्रयन्ति, तएव वेदबाह्याः । एता अनाश्रयतामस्माकं नास्ति वेद बाह्यता तथा शौचविवर्जिता अपि वय न स्मः । शौच तु मैथुन तत्सवक एवाशुचिर्भवति । मैथुनविवर्जका वय कथमशुचयो भवामः ? अतो न वय शौच विवर्जिताः । प्रत्युत यूयमेव वेदबाह्याः शौचविवर्जिताश्च स्थ । एव क्षुल्लकेन

क्षुल्लक शिष्य के इस प्रकार वचन सुनकर नमुचिका सारा शरीर क्रोध के आवेश से धमधमा उठा और वह बीच ही में तमक कर कहने लगा कि आप लोग शौच से रहित एव वेदों के सिद्धान्त से बहिर्भूत हैं। अतः आप लोगो को यहा ठहरने देना सर्वथा ही अनुचित हैं। कहिये आपके पास इसका क्या उत्तर है। नमुचिकी ऐसी बात सुनकर उत्तर के रूप में क्षुल्लकजीने उस से कहा–सुनो ये पाच सूना है–जलकुभ, प्रमार्जनी, चुल्ली, कण्डनी और पेषणी। श्रुतियो में ऐसा कहा है कि–इन पाच सूनाओं का जो आश्रय करते है वे ही वेदबाह्य हैं। इनका आश्रय हमलोग तो करते नही हैं तब, हम में वेदबाह्यता कैसे आ सकती है। इसी तरह हम लोग शौचविवर्जित भी नहीं हैं। अशौच नाम मैथुनका है। जो मनुष्य इसका सेवन करते हैं वे ही शौचविवर्जित माने गये है। अत' मैथुन सेवन से रहित हमलोग अशौच कैसे हो सकते हैं। प्रत्युत आप लोग ही

જરૂરત નથી નાના શિષ્યનુ આ પ્રકારનુ વચન સાભળીને નમુચિનુ સઘળુ શરીર ક્રોધના આવેશથી ધમધમી ઉઠયુ, અને તે વચમા જ ટપકીને કહેવા લાગ્યો કે આપ લોક શૌચથી રહિત અને વેદોના સિદ્ધાતથી બહિર્મુખ છો આથી આપ લોકોને અહીંયા રહેવા દેવા એ સઘળી રીતે અનુચિત છે કહો આપની પાસે આનો શો જવાબ છે ? નમુચિની આ પ્રકારની વાત સાભળીને જવાબ આપતા નાના શિષ્યે કહ્યુ કે, સાભળો આ પાચ સૂના છે જળકુભ, પ્રમાર્જની, ચુલ્લી, કડની અને પેષણી શ્રુતિઓમા એવુ કહેલ છે કે આ પાચ સૂનાઓનો જે આશ્રય કરે છે તેજ વેદબાહ્ય છે આનો આશ્રય અમે લોકો તો કરતા જ નથી ત્યારે અમારામા વેદ બાહ્યતા કયાથી આવી શકે ? આજ રીતે અમે લોકો શૌચ વિવર્જીત પણ નથી અશૌચનુ નામ મૈથુન છે જે મનુષ્ય આનુ સેવન કરે છે તેજ શૌચ વિવર્જીત માનવામા આવ્યા છે આથી મૈથુન સેવનથી રહિત અમે લોકો અશૌચ કઇ રીતે રીતે થઇ શકીએ ? પરતુ આપ લોક જ શૌચ રહિત આનાથી સિદ્ધ થાઓ છો

निग्रहीतु न कदाऽपि शक्ता अभूवन्। सिंहवलस्यानिग्रहणाद् रुष्टो महापद्मो नमुचि मुवाच–अस्य सिंहवलस्य कमपि निग्रहोपाय जानासि ? स उवाच–जानामि तन्निग्रहोपायम्। तदा प्रमुदितेन महापद्मेन समादिष्टः स सैन्यमादाय सिंहवलस्य राज्य रुद्ध्वा युक्त्या तद्दुर्गं भङ्क्त्वा त बद्ध्वा महापद्मसन्निधौ समानीतवान्। सतुष्टो महापद्मो नमुचिं प्राह–त्वया मम महात्कार्यमनुष्ठितम्, अतः कमपि वर वृणुष्व। तदा नमुचिना प्रोक्तम्–तिष्ठतु वरो भवत्कोशे। यदा

जब इसको पकडने का मौका आता तो यह अपने दुर्ग मे छिप जाता। इस से महापद्म के सैनिकजन इसको पकडने के लिये लालायित होने पर भी पकड नहीं सकते थे। महापद्म राजा इस राजा पर विशेष रूप से रुष्ट रहा करता था।–वह चाहता था कि किसी भी तरह से यह पकडा जाय। एक दिन महापद्मने नमुचि से कहा–कहो सिंहवल को निग्रह करने का भी कोई उपाय जानते हो। हाँ! क्यों नहीं जानता हूँ–अवश्य जानता हूँ। राजाने प्रसन्न होकर तब इस से कहा तो फिर क्या देर है पकड लाओ इसको यहा पर। राजाकी आज्ञा पाते ही नमुचिने सैन्य को साथ लेकर सिंहवल के राज्य में जाकर घेरा डाल दिया और उसको सब तरफ से रोक लिया। पश्चात् किसी युक्ति से उसके दुर्ग को फोडफाडकर उसको बाध लिया और बाधकर वह महापद्म राजाके पास उसको ले आया। इस से राजा नमुचि के ऊपर बडा प्रसन्न हुआ और बोला–नमुचि! तुमने मेरा बडा भारी असाध्य कार्य साधित कर दिखाया है अतः जो तुम्हारी

જ્યારે તેનો સામનો વતો અને પકડાઈ જવાતો પ્રસગ આવતો ત્યારે પોતાના દુર્ગમા છુપાઈ જતો મહાપદ્મના સૈનિકોના અનેકવિધ પ્રયાસો છતા તે પકડી શકાતો નહીં મહાપદ્મ રાજા એ રાજા ઉપર ખૂબ ગુસ્સે રહ્યા કરતા અને ઇચ્છતા હતા કે કોઇને કોઇ ઉપાયે પણ એને પકડી લેવો એક દિવસ મહાપદ્મ રાજાએ આ વાત નમુચિ મત્રીને કહી કે, તમો સિહબલને પરાસ્ત કરવાનો કોઈ ઉપાય જાણો છો ? નમુચિએ હકારમા જવાબ આપ્યો આથી રાજાએ પ્રસન્નચિત્ત બનીને કહ્યુ કે તો પછી શા માટે વાર કરો છો ? જાઓ પકડી લો નમુચિને એટલુ જ જોઇતુ હતુ તે સૈન્યને સાથે લઈને સિહબલના રાજ્ય ઉપર ઘેરો ઘાલ્યો. અવરજવરના માર્ગો રોકી લીધા આ પછી યુક્તિથી તેના દુર્ગને તોડીફોડીને તેને પકડીને બાધી લીધો અને મહાપદ્મ રાજાની સામે લાવીને રજુ કરી દીધો આથી રાજા નમુચિ પ્રધાન ઉપર ખૂબ જ પ્રસન્ન થયા અને કહ્યુ, તમે એક ઘણુ જ મહત્વનુ

जाता'। नमुचिश्च सर्वै जनैर्निन्द्यमानो देव्या विमुक्तो नितरां लज्जामापन्नो हस्तिनापुरं गतः। तत्र युवराजेन महापद्मेन सह सङ्गतः। स पापीयानपि प्राक्पुण्यप्रभावेण महापद्मस्यामात्यो जातः।

महापद्मस्यासीत् शत्रुस्तद्राज्यसीमावर्तिराज्याधिपतिः सिंह इव प्रबलपराक्रमः सिंहबलो नाम भूपतिः। स हि महापद्मराज्ये मुहुर्मुहुः समागत्य तस्कर वृत्त्या प्रजानां धनानि बलात् गृहीत्वा स्व दुर्गं प्रविशति। महापद्मेनैकदा स

पहुँचा। पहिले तो सबने मिलकर मुनिराजो के निकट बैठकर धार्मिक देशना का श्रवण किया पश्चात् फिर वे वहां आये जहां नमुचि कीला हुआ खडा था। सबने इस स्थिति में खडे हुए नमुचिकी निंदा की। किसी भी तरह जब देवी से वह छोड दिया गया तब वह अति लज्जित होकर पीछे अपने स्थान पर चला गया। लोग भी अपने घर पर वापिस आ गये। नमुचि मंत्री उज्जयिनी से चला आया और हस्तिनापुर आकर वह युवराज महापद्म के पास रहने लगा। यद्यपि यह अतिशय पापी था तो भी पूर्वपुण्य के उदय से युवराज महापद्म का प्रधान बन गया।

महापद्म का सिंह के समान प्रबल पराक्रमशाली सिंहबल नामका एक राजा वैरी था। यह महापद्मके राज्यकी सीमा पर रहे हुए राज्यका अधिपति था। महापद्मके राज्य में बार २ प्रविष्ट होकर चोर वृत्ति द्वारा प्रजाजनो के धन का यह बलात् हरण किया करता था।

सुधी आ वात पहोंचतां राजा पण त्यां पहोंची गया. पहेलां तो सघळाओए मुनिराजोनी पासे बेसीने धार्मिक देशनानुं श्रवण कर्युं, पछीथी जे स्थळे नमुचि मंत्री बंधायेल हता त्यां सौ कोई आव्या. सघळाओए आ स्थितिमां रहेला नमुचिनी निंदा करी. आ प्रमाणे तेने सारा नगरजनोथी निंदित थयेलो जाणीने वनदेवीओए तेने मुक्त कर्यो. आथी ते लज्जित थता थतो पोताने घेर चाल्यो गयो. लोको पण पोतपोताने घेर चाल्या गया. लज्जित बनेलो नमुचि मंत्री उज्जैनी छोडीने हस्तिनापुर चाल्यो गयो अने त्यां जई युवराज महापद्मनी पासे रहेवा लाग्यो. जो के ते घणो पापी हतो तो पण पूर्वना पुण्यना प्रभावथी युवराज महापद्मे तेने प्रधानपदे स्थापित कर्यो.

महापद्म राजानो सिंहना समान प्रबळ पराक्रमशाळी सिंहबल नामनो एक राजा वेरी हतो. ते बन्ने राज्योनी सीमा एकबीजाने अडीने हती. महापद्मना राज्यमां वारंवार प्रवेशी ए चोर वृत्तिथी प्रजाजनोना धननुं ते हरण करी जतो.

निग्रहीतु न कदाऽपि शक्ता अभूवन। सिंहबलस्यानिग्रहणाद् रुष्टो महापद्मो नमुचि मुवाच-अस्य सिंहबलस्य कमपि निग्रहोपाय जानासि? स उवाच-जानामि तन्निग्रहोपायम्। तदा प्रमुदितेन महापद्मेन समादिष्टः स सैन्यमादाय सिंहबलस्य राज्य रुद्ध्वा युक्त्या तद्दुर्गं भङ्क्त्वा त बद्ध्वा महापद्मसन्निधौ समानीतवान्। सतुष्टो महापद्मो नमुचि प्राह-त्वया मम महत्कार्यमनुष्ठितम्, अतः कमपि वर वृणुष्व। तदा नमुचिना प्रोक्तम्-तिष्ठतु वरो भवत्कोशे। यदा

जब इसको पकडने का मौका आता तो यह अपने दुर्ग मे छिप जाता। इस से महापद्म के सैनिकजन इसको पकडने के लिये लालायित होने पर भी पकड नहीं सकते थे। महापद्म राजा इस राजा पर विशेष रूप से रुष्ट रहा करता था।-वह चाहता था कि किसी भी तरह से यह पकडा जाय। एक दिन महापद्मने नमुचि से कहा-कहो सिंहबल को निग्रह करने का भी कोई उपाय जानते हो। हाँ! क्यों नहीं जानता हूँ-अवश्य जानता हूँ। राजाने प्रसन्न होकर तब इस से कहा तो फिर क्या देर है पकड लाओ इसको यहा पर। राजाकी आज्ञा पाते ही नमुचिने सैन्य को साथ लेकर सिंहबल के राज्य में जाकर घेरा डाल दिया और उसको सब तरफ से रोक लिया। पश्चात् किसी युक्ति से उसके दुर्ग को फोडफाडकर उसको बाध लिया और बाधकर वह महापद्म राजाके पास उसको ले आया। इस से राजा नमुचि के ऊपर बडा प्रसन्न हुआ और बोला-नमुचि! तुमने मेरा बडा भारी असाध्य कार्य साधित कर दिखाया है अतः जो तुम्हारी

જ્યારે તેનો ગ્રામનો વતો અને પકડાઈ જવાતો પ્રસગ આવતો ત્યારે પોતાના દુર્ગમા છુપાઈ જતો મહાપદ્મના સૈનિકોના અનેકવિધ પ્રયાસો છતા તે પકડી શકાતો નહીં મહાપદ્મ રાજા એ રાજા ઉપર ખૂબ ગુસ્સે રહ્યા કરતા અને ઇચ્છતા હતા કે કોઇને કોઇ ઉપાયે પણ એને પકડી લેવો એક દિવસ મહાપદ્મ રાજાએ આ વાત નમુચિ મત્રીને કહી કે, તમો સિહબલને પરાસ્ત કરવાનો કોઈ ઉપાય જાણો છો? નમુચિએ હકારમા જવાબ આપ્યો આથી રાજાએ પ્રસન્નચિત્ત બનીને કહ્યુ કે તો પછી શા માટે વાર કરો છો? જાઓ પકડી લો નમુચિને એટલુ જ જોઇતુ હતુ તે સૈન્યને સાથે લઈને સિહબલના રાજ્ય ઉપર ઘેરો ઘાલ્યો. અવરજવરના માર્ગો રોકી લીધા આ પછી યુક્તિથી તેના દુર્ગને તોડીફોડીને તેને પકડીને બાધી લીધો અને મહાપદ્મ રાજાની સામે લાવીને રજુ કરી દીધો આથી રાજા નમુચિ પ્રધાન ઉપર ખૂબ જ પ્રસન્ન થયા અને કહ્યુ, તમે એક ઘણુ જ મહત્વનુ

प्रयोजने मत्तेऽर्थात् वदाऽहं प्रार्थयाम। महापद्मेन तद्वचनमङ्गीकृतम्। ततो निष्कण्टकं राज्यं बहुवर्षाणि परिपालितवान युवराजो महापद्म.। एकदा हस्तिनापुरे मुनि सुव्रतस्य व्रताचार्यशिष्याः परिव्राजकाश्च समकालमेव समागताः। उभयेऽपि स्वस्वाभिमता धर्मदेशना ददाति स्म। पद्मोत्तरस्य ज्येष्ठा पत्नी महापद्ममाता ज्वालादेवी जिनधर्मभक्ताऽऽसीत्, द्वितीया लक्ष्मीस्तु वैदिकधर्मपरायणा। उभे अपि सर्वोत्तमं धार्मिकयानमारुह्य स्वस्वाभिमत धर्मं श्रोतु साभिलाषे जाते।

इच्छा हो सो वर मागलो। राजाकी इस प्रकार प्रसन्नता अपने ऊपर जानकर नमुचिने राजा से कहा महाराज। अभी यह वरदान आप अपने ही कोश मे जमा रक्खें। जब कोई मेरा प्रयोजनीय अवसर आवेगा तब आप से यह वरदान पीछे लेलूगा। महापद्मने नमुचिकी यह बात मानली और अनेक वर्षोंतक निष्कंटक बने हुए राज्य का वे सचालन करने मे लग गये।

एक समयकी बात है कि हस्तिनापुर में श्री सुव्रताचार्य अपनी शिष्यमडली सहित विहार करते हुए आ पहुचे। उसी समय वहा परिव्राजक भी आये हुए थे। अपने २ धार्मिक मन्तव्यो के अनुसार दोनोंने धार्मिक देशना देना प्रारभ किया। पद्मोत्तर राजाकी ज्येष्ठ पत्नी कि जिसका नाम ज्वालादेवी था और जो महापद्मकी माता थी जिनधर्म की भक्ता थी तथा दूसरी रानी कि जिसका नाम लक्ष्मीदेवी था वह वैदिक धर्मकी भक्ता थी। दोनों रानियों के हृदय में अपने २ मान्य धर्मोंकी देशना सुनने का विचार हुआ। उस समय वहां बात

કાર્ય કરેલ છે આવા મહત્વના કાર્યનો સાધકતાના બદલામા તમારી ઇચ્છા થાય તે માગી લો રાજાને પોતાના ઉપર આ રીતે પ્રસન્નચિત્ત જાણીને નમુચિએ રાજાને કહ્યુ, મહારાજ! જ્યારે જરૂરત જણાશે ત્યારે આપના તરફથી આપવામા આવેલ વરદાનને હુ અવશ્ય માગી લઈશ મહાપદ્મ રાજાએ નમુચિની એ વાતને સ્વીકારી આ પછી નિષ્કટક બનીને પોતાના રાજ્યના સચાલન કાર્યમા તે લાગી રહ્યા

એક સમયની વાત છે કે સુવ્રતાચાર્ય પોતાની શિષ્યમડળી સાથે વિહાર કરતા કરતા હસ્તિનાપુર આવી પહોચ્યા એ સમયે ત્યા પરિવ્રાજક પણ આવેલા હતા પોતપોતાના ધાર્મિક મતવ્યો અનુસાર બન્નેએ ધાર્મિક દેશના આપવાનો પ્રારભ કર્યો પદ્મોત્તર રાજાની મોટી રાણી કે જેનુ નામ જવાલાદેવી હતુ અને જે મહાપદ્મની માતા હતી અને જિનધર્મની ભક્ત હતી, તથા બીજી રાણી કે જેનુ નામ લક્ષ્મીદેવી હતુ જે વૈદિક ધર્મને માનનાર હતી બન્ને રાણીઓના હૃદય પોતપોતાના માન્ય એવા ધર્મોની દેશના સાભળવાનો વિચાર આવ્યો આ સમયે રાજ્યમાં

यानमेकमेवासीत्। ज्वालादेवी प्रतिज्ञामकरोदहं तद्यानमारुह्य जिनधर्मं श्रोतुं गमिष्यामि, नोचेदनशनं करिष्यामि। लक्ष्मीरपि तथैव प्रतिज्ञातवती। उभयो राज्यो एवं विवादं श्रुत्वा, राजा पद्मोत्तरः उभे अपि धार्मिकरथविषये प्रतिषिद्धवान्। तदा युवराजो महापद्म स्वमातुरभिलापमपूरितं दृष्ट्वा तद्दुःखेन नितरां दुःखितः एवमचिन्तयत्–अहो! मादृशेऽपि सुते मातुः स्पृहा न पूर्णा। प्रत्युत कृपणस्य धनं यथा भूमौ विलीयते, तथैव मनसि विलीना। यो हि

एक ही था। ज्वालादेवीने प्रतिज्ञा की कि मै इसी यान में बैठ कर जिनधर्म की देशना सुनने जाऊँगी, नहीं तो अनशन कर दूंगी इसी तरह लक्ष्मीदेवी के हृदय मे भी वैदिक धर्मकी देशना सुनने का विचार उत्पन्न हुआ तो उसने भी यही चाहा कि मै इसी यान मे सवार होकर वैदिक धर्मकी देशना सुनने जाऊगी नहीं तो मै भी अनशन पर उतर जाऊगी। इस प्रकार दोनों रानियों का परस्पर विवाद सुनकर राजा पद्मोत्तरने यह कह दिया कि इस रथ पर सवार होकर कोई भी धार्मिक देशना सुनने नहीं जायगा। महापद्म पुत्र अपनी माता ज्वाला-देवीकी अभिलापा अपूरित देखकर उसके दुःख से अतिशय दुःखित होकर इस प्रकार विचार करने लगा कि यह बडे आश्चर्यकी बात है कि मेरे जैसे पुत्रके होने पर भी मेरी माताकी अभिलापा पूर्ण नहीं हो सकी है। जैसे कृपण का धन गडा हुआ ही भूमि मे विलीन हो जाता है इसी प्रकार मेरी माताकी भी अभिलापा भीतर ही भीतर

એક જ રથ હતો જ્વાલાદેવીએ પ્રતિજ્ઞા કરી કે હુ આજ રથમા બેસીને જિન ધર્મની દેશના સાભળવા જઇશ નહીં તો અનશન કરીશ આવી રીતે લક્ષ્મીદેવીના દિલમા પણ વૈદિક ધર્મની દેશના સાભળવા જવાનો વિચાર થયો અને એણે પણ નક્કી કર્યું કે, આ રથમા બેસીને જ હુ વૈદિક ધર્મની દેશના સાભળવા જઈશ, નહીંતર અનશન કરીશ આ પ્રમાણે બન્ને રાણીઓનો પરસ્પર વિવાદ સાભળીને રાજાપદ્મોત્તરે એવુ કહી દીધુ કે એ રથ ઉપર બેસીને કોઇ પણ ધર્મિક દેશના સાભળવા ન જાય મહાપદ્મ પુત્રે પોતાની માતા જ્વાલાદેવીની અભિલાષ પૂરી ન થતી જોઇને તે દુખથી અતિશય દુખી થઇને એવો વિચાર કરવા લાગ્યો કે એ ઘણા આશ્ચર્યની વાત છે કે મારા જેવો પુત્ર હોવા છતા પણ મારી માતાની અભિલાષા પૂર્ણ થઈ શકતી નથી જે રીતે કૃપણનુ ધન જમીનમા દટાયેલુ રહીને આખરે અદશ્ય બને છે આજ પ્રમાણે મારી માતાની અભિલાષા પણ તના

शक्तोऽपि मातुर्मनोरथान् न पूरयति, स कथङ्कारं सुपुत्रगणनायां स्थानं प्राप्स्यति ? पित्राऽपि मम मातुर्वैशिष्ट्यं न रक्षितम्। अतो मयाऽत्र न स्थातव्यम्। इति विचार्य निशि प्रसुप्ते समस्ते लोके एकाकी गृहान्निष्क्रम्य परिभ्रमन्नरण्यान्तर्वर्त्ति तापसाश्रमं गतः। तत्र तापसैः सत्कृतः स सुखेन तत्र स्थितः।

इतश्च चम्पापुरी कालनामकेन राज्ञाऽवरुद्धा। तदधीशो जनमेजयः स्वसैन्यपरिवृतस्तेन सह युध्यमानः पराभूतः। ततः स पलाय्य क्वापि गतः। शत्रुसैनिका दुर्गमध्ये प्रविष्टाः। नगरे महान् कोलाहलो जातः। सर्वेऽपि पला

विलीन हो गई है। शक्त होकर भी जो पुत्र अपनी माताके मनोरथों को पूरित नहीं करता है वह कैसे सुपुत्रों की गणना में स्थान प्राप्त कर सकता है। पिताने भी मेरी माता के वैशिष्ट्य की रक्षा नहीं की। इसलिये अब मुझे यहां नहीं रहना चाहिये। इस प्रकार विचार कर यह जब सब सो गये तब रात्रि मे अकेला ही घर से निकलकर इधर-उधर घूमता हुआ जगल में रहे हुए तपस्वियों के आश्रम में पहुँच गया। वहा तपस्वियोंने उसका खूब सत्कार किया। इस प्रकार तपस्वियों से सत्कृत होकर वह वहा ही आनद के साथ रहने लगा।

इधर चंपापुरी को किसी कालनामके राजाने आकर घेर लिया। जब वहां के अधिपति जनमेजय को यह समाचार मिला तो उसने अपनी सेनाको साथमें लेकर उसके साथ युद्ध किया परन्तु हार गया। इस से वह वहा से पलायन कर किसी अज्ञात स्थान मे जाकर छिप गया। शत्रु सैनिक किलेके भीतर प्रविष्ट हो गये। इस से नगर-

અંતરમાં દબાયેલી જ રહી છે શક્તિશાળી હોવા છતાં પણ જે પુત્ર પોતાની માતાના મનોરથોને પૂરા કરી શકતો નથી, તે સુપુત્રોની ગણનામાં પોતાનું સ્થાન કઈ રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે ? પિતાએ પણ મારી માતાના મોટાપણાની રક્ષા ન કરી આ કારણે હવે મારે અહીં ન રહેવું જોઈએ આ પ્રકારનો વિચાર કરી• જ્યારે રાજમહેલમાં સઘળા સૂઈ ગયા ત્યારે રાત્રે એકલો ઘરથી બહાર નીકળીને અહીં તહીં ભટકીને જંગલમાં રહેતા તપસ્વીઓના આશ્રમમાં પહોંચી ગયો. ત્યાં તપસ્વીઓએ તેનો સારો સત્કાર કર્યો આ પ્રકારે તપસ્વીઓનો સત્કાર પામીને એ ત્યાં જ આનંદથી રહેવા લાગ્યો.

આ તરફ ચંપાપુરીને કાળ નામના કોઈ રાજાએ ઘેરી લીધી જ્યારે ત્યાંના અધિપતિ જનમેજયને આ સમાચાર મળ્યા ત્યારે તે પોતાની સેનાને સાથમાં લઈને તેની સાથે યુદ્ધ કર્યું પરંતુ તેઓ હારી ગયા આથી એ પલાયન થઈ કોઈ અજ્ઞાત સ્થાને જઈને છુપાઈ ગયો. શત્રુ સૈનિકો કિલ્લાની અંદર દાખલ થયા આથી નગરમાં મહાન

यितुमितस्ततो धावन्ति स्म। राज्ञोऽन्तः पुरस्थाः सर्वा अपि महिलास्त्रातार मन्तरा व्याकुलता गता। स्वप्राणानादाय सर्वा अपीतस्तत पलायिताः। राज्ञो जनमेजयस्य महिषी नागवत्यपि स्वपुत्र्यामदनावल्या सह पलायिता तापसाश्रमे समागता कुलपतिना समाश्वासिता सा तत्रैव स्थिता। तत्र महापद्ममदनावल्यो• परस्परमनुरागो जात'। उभयोरुभयस्मिन्ननुरागः प्रवृद्धः। इय वार्ताऽऽश्रमस्थितैर्जनैर्ज्ञाता। नागवती स्वपुत्रीं मदनावलीमुवाच–पुत्रि! त्व 'चक्रवर्तिनोऽग्रमहिषी भवित्री' ति नैमित्तिकवचन कथ विस्मृताऽसि। यत्र कुत्राऽपि त्वयानुरागो न कर्तव्यः। तापसेनापि–परस्परानुरक्तावेतौ कदाचिद् विवाह

भर में महान् कोलाहल मच गया। सब लोग इधर से उधर भागने लगे। राजाकी समस्त अन्तःपुरस्थ महिलाएँ त्राता (रक्षक) के विना आकुलव्याकुल होने लगीं। तथा जिन से जहा भागते बना वे वहा अपने २ प्राणों को लेकर भाग गई। राजा जनमेजय की पट्टरानी नागवती भी अपनी पुत्री मदनावली के साथ भागती हुई उन्हीं तापसों के आश्रम में आ पहुँची। कुलपतिने उसको धैर्य बधाया। सो वह वहीं पर रहने लगी। रहते २ महापद्म और मदनावली में परस्पर अनुराग हो गया। और यह बढ भी गया। जब यह बात आश्रमके जनोंको ज्ञात हो गई तो नागवतीने महापद्म को सामान्य राजपुत्र समझकर मदनावली से कहा–पुत्रि! तू चक्रवर्ती की पट्टरानी होगी। यह नैमित्तिक के वचन क्या तुझे याद नहीं है? इसलिये मैं तुझे समझाती हू कि तू जहातहा अनुराग मत कर। कुलपतिने भी महापद्म से ऐसा जानकर कि ये दोनों "परस्पर में अनुरक्त हैं अतः कभी न कभी ये

કોલાહલ મચી ગયો. સઘળા લોકો અહીંતહીં નાસભાગ કરવા લાગ્યા રાજાના અ ત પુરની મહિલાઓ રક્ષણુ વગર આકુળવ્યાકુળ થવા લાગી અને જેનાથી ભાગવાનુ શક્ય બન્યુ તેઓ જ્યા ત્યા પોતાના પ્રાણોની રક્ષા ખાતર ભાગી છૂટી રાજા જનમેજયની પટ્ટરાણી નાગવતી પણ પોતાની પુત્રી મદનાવલીની સાથે ભાગીને એ તપસ્વીઓના આશ્રમમા આવી પહોચી કુળપતિએ તેમને ધીરજ આપી આથી તે ત્યા રહેવા લાગી રહેતા રહેતા મહાપદ્મ અને મદનાવલીમા પરસ્પર અનુરાગ થઈ ગયો અને તે ખૂબ આગળ વધ્યો જ્યારે આ વાત આશ્રમવાસીઓની જાણમા આવી ગઈ ત્યારે નાગવતીએ મહાપદ્મને સામાન્ય રાજપુત્ર સમજીને મદનાવલીને કહ્યુ, હે પુત્રી! તુ ચક્રવર્તીની પટ્ટરાણી થઈશ એવુ જોશીનુ વચન શુ તને યાદ નથી? આ કારણે હુ તને સમજાવુ છુ કે જ્યા ત્યા પોતાની વૃત્તિઓને ન જવા દેતા સ્થિર બનાવ કુલપતિએ પણ આ વાત જાણીને કે, આ બન્ને પરસ્પરના

शक्तोऽपि मातुर्मनोरथान् न पूरयति, स कथङ्कार सुपुत्रगणनामध्ये स्थान प्राप्स्यति ? पित्राऽपि मम मातुर्वैशिष्ट्य न रक्षितम् । अतो मयाऽत्र न स्थातव्यम् । इति विचार्य निशि प्रसुप्ते समस्ते लोके एकाकी गृहान्निष्क्रम्य परिभ्रमन्नरण्यान्तर्वर्त्ति तापसाश्रम गत. । तत्र तापसै. सत्कृत' स सुखेन तत्र स्थितः ।

इतश्च चम्पापुरी कालनामकेन राज्ञाऽवरुद्धा । तदधीशो जनमेजयः स्वसैन्यपरिवृतस्तेन सह युध्यमान पराभूतः । ततः स पलाय्य क्वापि गतः । शत्रुसैनिका दुर्गमध्ये प्रविष्टा. । नगरे महान् कोलाहलो जात । सर्वेऽपि पला

विलीन हो गई है। शक्त होकर भी जो पुत्र अपनी माताके मनोरथों को पूरित नहीं करता है वह कैसे सुपुत्रों की गणना में स्थान प्राप्त कर सकता है। पिताने भी मेरी माता के वैशिष्ट्य की रक्षा नहीं की। इसलिये अब मुझे यहा नहीं रहना चाहिये। इस प्रकार विचार कर यह जब सब सो गये तब रात्रि मे अकेला ही घर से निकलकर इधर-उधर घूमता हुआ जगल में रहे हुए तपस्वियों के आश्रम में पहुँच गया। वहा तपस्वियोंने उसका खूब सत्कार किया। इस प्रकार तपस्वियों से सत्कृत होकर वह यहा ही आनद के साथ रहने लगा।

इधर चंपापुरी को किसी कालनामके राजाने आकर घेर लिया। जब वहां के अधिपति जनमेजय को यह समाचार मिला तो उसने अपनी सेनाको साथमें लेकर उसके साथ युद्ध किया परन्तु हार गया। इस से वह वहा से पलायन कर किसी अज्ञात स्थान मे जाकर छिप गया। शत्रु सैनिक किलेके भीतर प्रविष्ट हो गये। इस से नगर-

અ તરમા દગયેલી જ રહી છે શક્તિશાળી હોવા છતા પણ જે પુત્ર પોતાની માતાના મનોરથોને પૂરા કરી શકતો નથી, તે સુપુત્રોની ગણનામા પોતાનુ સ્થાન કઈ રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે? પિતાએ પણ મારી માતાના મોટાપણાની રક્ષા ન કરી આ કારણે હવે મારે અહીં ન રહેવુ જોઇએ આ પ્રકારનો વિચાર કરી• જ્યારે રાજમહેલમા સઘળા સૂઈ ગયા ત્યારે રાત્રે એકલો ઘરથી બહાર નીકળીને અહા તહીં ભટકીને જ ગલમા રહેતા તપસ્વીઓના આશ્રમમા પહોચી ગયો ત્યા તપસ્વીઓએ તેનો સારો સત્કાર કર્યો આ પ્રકારે તપસ્વીઓનો સત્કાર પામીને એ ત્યા જ આનદથી રહેવા લાગ્યો

આ તરફ ચ પાપુરીને કાળ નામના કોઇ રાજાએ ઘેરી લીધી જ્યારે ત્યાના અધિપતિ જનમેજયને આ સમાચાર મળ્યા ત્યારે તે પોતાની સેનાને સાથમા લઇને તેની સાથે યુદ્ધ કર્યુ પર તુ તેઓ હારી ગયા આથી એ પલાયન થઈ કોઈ અજ્ઞાત સ્થાને જઇને છુપાઇ ગયો શત્રુ સૈનિકો કિલ્લાની અ દર દાખલ થયા આથી નગરમા મહાન

गतः। तं हस्तिनं दृष्ट्वा भीतभीताः सर्वा अपि यापितशीत्कारं कृत्वाऽत्युच्चैरुक्तवत्यः—यः कश्चिदत्र वीरो भवेत् सोऽस्मान् रक्षतु। तासां वचनं श्रुत्वा महापद्मकुमारो हस्तिनं तर्जितवान्। ततो हस्ती प्रत्यावृत्य महापद्माभिमुखं समायातः। तमायान्तं दृष्ट्वा कुमारः स्वकीयमुत्तरीयं तदभिमुखं प्रक्षिप्तवान्। क्रोधान्धो हस्ती चापि तदुत्तरीयकमेव मर्त्यं मन्यमानस्तत्र दन्तैश्चरणैश्च प्राहरत्। कोलाहलं श्रुत्वा सर्वेऽपि पौरजनाः समवेताः। राजा महासेनोऽपि सामन्तमन्त्रिभिः सह समागतः। राजा महासेनो महापद्मकुमारमवोचत्—हे कुमार!

नगर में तोफान मचाता हुआ उसी उद्यान की ओर आ निकला। हस्ति को आया देखकर समस्त महिलामंडल भय से विह्वल हो उठा और अनिष्ट की आशंका से एकदम घबराकर चिल्लाने लगा। चिल्लाती हुई उन विचारी महिलाओंने फिर ऐसा भी कहा कि अरे! यदि कोई यहां पर वीर पुरुष होवे तो हमारी रक्षा करे। इस प्रकार उन स्त्रियों के वचन सुनकर महापद्मकुमार उस हस्ति को तर्जित करने लगा। हाथी लौटकर महापद्मकुमारके सन्मुख हो गया। अपनी ओर हाथी को आता हुआ देखकर महापद्मने अपने उत्तरीय वस्त्र को उसकी तरफ फेंक दिया। उस फेंक गये उत्तरीय वस्त्र को ही उस क्रोधान्ध गजने मनुष्य जानकर उस पर दन्त एवं चरणों का प्रहार करना प्रारम्भ किया। कोलाहल को सुनकर समस्त पुरवासीजन भी वहां एकत्रित हो गये। महासेन राजा भी अपने मंत्रियों सहित वहां आ पहूँचा।

મહાવતને મારીને નગરમાં તોફાન મચાવતો તે ઉદ્યાન તરફ પહોંચ્યો. હાથીને પોતાના તરફ આવતો જોઈને સઘળી મહિલાઓ ભયથી વિહ્વળ બની ગઈ અને અનિષ્ટની આશંકાથી ગભરાઈને ચીસો પાડવા લાગી ચીસો પાડતી એ બિચારી મહિલાઓએ એવું પણ કહ્યું કે, અરે! જો કોઈ વીર પુરુષ હોય તો તે અમારી રક્ષા કરે આ પ્રમાણે સ્ત્રીઓના વચનોને સાંભળીને ત્યાં આવી પહોંચેલ મહાપદ્મ કુમાર એ હાથીને મહાત કરવા દોડી આવ્યો. હાથી પાછો ફરીને મહાપદ્મકુમારની સામે થઈ ગયો. પોતાની સામે હાથીને આવતો જોઈને મહાપદ્મકુમારે પોતાનું ઉત્તરીય વસ્ત્ર હાથીની સામે ફેંક્યું ફેંકાયેલા એ ઉત્તરીય વસ્ત્રને જ ક્રોધમાં અંધ બનેલા ગજરાજે મનુષ્ય જાણીને એના ઉપર દાંત તેમજ પગના પ્રહારો કરવા માંડ્યા. કોલાહલને સાંભળીને સઘળા પુરવાસી જનો પણ એકત્રિત થઈ ગયા. હવે મહાસેન રાજા પણ પોતાના મંત્રીની સાથે ત્યાં આવી પહોંચ્યા. આવીને તેમણે મહા

करिष्यतइति विचिन्त्य महापद्मः प्रोक्तः-कुमार ! त्वयाऽन्यत्र कुत्राऽपि गन्तव्यम्। कुलपतेर्वचनं निशम्य महापद्म कुमारस्तस्मिन्नेव समये ततः प्रचलितः। स हि मदनावलिवियोगेन नितरां दुःखितः। सोऽचिन्तयत्-इयं हि भाविचक्रवर्तिनः पत्नी भविष्यतीति नैमित्तिकेनोक्तम्। अत इयं ममैव पट्टमहिषी भविष्यति। परन्तु कदा चक्रादिरत्नं समुत्पत्स्यते। अहं हि समुत्पन्नचक्रादिरत्नः षट्खण्डं भरतक्षेत्रं साधयित्वा कदा मदनावलीं परिणेष्यामि। इत्येवं विचिन्तयन् महापद्मः क्रमेण सिन्धुनन्दनपुरं नाम नगरं गतः। तत्र तस्मिन्दिने कोऽपि महोत्सव आसीत्। सर्वा अपि नगरयोषित उद्यानं समवेता आसन्। तासां तुमुलं श्रुत्वा महासेननृपस्य मुख्यहस्ती मदोन्मत्तो भूत्वाऽऽलानस्तम्भमुत्पाट्य हस्तिपकं व्यापाद्य नगरे परिभ्रमन्नुद्यानसमीपे समा

विवाह करेंगे। कहा-"कुमार! तुम यहां से कहीं अन्यत्र चले जाओ" कुलपति के इस प्रकार वचन सुनकर महापद्म शीघ्र ही उसी समय वहां से चल दिये। परन्तु मदनावली का वियोग इनको अत्यन्त दुःखित कर रहा था। चलते २ महापद्मने विचार किया-मदनावली जब भावी चक्रवर्ती की पट्टपत्नी होनेवाली है ऐसा नैमित्तिकने कहा है तो यह निश्चित है कि यह मेरी ही पट्टमहिषी होगी? परन्तु चक्रादिरत्न कब उत्पन्न होंगे और मैं कब षट्खंड भरतक्षेत्र का साधन करके मदनावली को परणूंगा। इस प्रकार विचार करते हुए महापद्मकुमार सिन्धुनन्दन नामक एक नगर मे आ पहुँचे। यहां उस दिन कोई विशेष उत्सव था सो नगरकी समस्त महिलाएँ बगीचे मे जुडी हुई थी। इन महिलाओं का तुमुल नाद सुनकर महासेन नृपका प्रधान हाथी मदोन्मत्त होकर आलानस्तंभ को उखाड करके एव महावत को मार करके

પ્રેમમા છે અને એ કારણે ક્યારેકને ક્યારેક લગ્ન કરી લેશે આથી તેમણે કુમારને પોતાની પાસે બોલાવીને કહ્યુ, કુમાર ! તમો અહીથી કોઈ બીજા સ્થળે ચાલ્યા જાવ કુલપતિનુ આ પ્રકારનુ વચન સાભળીને મહાપદ્મ એજ સમયે ત્યાથી ચાલી નીકળ્યો પરતુ મદનાવલીનો વિયોગ તેને બહુ જ દુખી કરી રહેલ હતો ચાલતા ચાલતા મહાપદ્મે વિચાર કર્યો કે મદનાવલી જ્યારે ભાવી ચક્રવર્તીની પટરાણી થનાર છે એવુ જોષ જોનારે કહેલ છે તેથી એ નિશ્ચિત છે કે તે મારી પટરાણી થવાની પરતુ ચક્રાદિ રત્ન ક્યારે ઉત્પન્ન થશે અને હુ ક્યારે છ ખડ પૃથ્વીને જીતીને મદનાવલીને પરણવાનો ? આ પ્રકારનો વિચાર કરીને મહાપદ્મ કુમાર સિધુનદન નામના એક નગરમા પહોચ્યો ત્યા તે દિવસે કોઈ વિશેષ ઉત્સવ હતો સઘળી સ્ત્રીઓ બગીચામા આવેલ હતી આ મહિલાઓનો જબ્બર અવાજ સાભળીને મહાસેન રાજાનો ખાસ હાથી મદોન્મત્ત બનીને, આલાનસ્તભ ઉખેડીને તથા

म भर्ता न भविष्यति, तदाऽहं प्राणान् परित्यक्ष्यामि, इति तदध्यवसितं श्रुत्वा तत्पित्रोरनुज्ञयाऽहं त्वामपहृत्य गच्छामि। अतो न भवान् मां हन्तुमर्हति। दीनाया तस्यामनुकम्पनीय भवता। इति तस्या वचनमुपश्रुत्य सजातानुरागस्तामुवाच—नय मां त्वरितम्। ततः सा वेगवती विद्याधरी स्वविद्याप्रभावेण तं त्वरितमेव विद्याधरराजसन्निधौ नीतवती। विद्याधरराजोऽपि कमनी

त्यंत अनुरक्त बन गई और कहने लगी कि यदि यह मेरा भर्ता नहीं बनता है तो यह निश्चित है कि मैं इसके वियोग में प्राणों से भी हाथ धो बैठूं। जब उसका यह अध्यवसाय उसके मातापिता को मालूम हुआ तो उन्होंने मुझ से कहा कि तुम से जैसे भी हो सके उस व्यक्ति को यहां पर ले आओ। यदि तुम इसको हरण करके भी ला सकती हो तो ले आओ परन्तु लाने में देरी नहीं करो। इस लिये मैं आपको हरण कर वहां लेजा रही हूं इसलिये मुझे आप न मारें।

इस प्रकार उस विद्याधारी के वचन सुनकर कुमार को भी उस कन्या के ऊपर अतिशय अनुराग जागृत हो गया। पश्चात् विद्याधरी से बोले—तू जितनी जल्दी मुझे लेजा सकती हो उतनी ही जल्दी वहां ले चल। कुमारकी इस प्रकार बात सुनकर वह विद्याधरी अपनी विद्याके प्रभाव से बहुत ही त्वरीत गति से उनको ले चली और शीघ्रातिशीघ्र वह विद्याधराधिपति इन्द्रधनु के समीप पहुँच गई। कुमार को ज्यों ही विद्याधराधिपतिने अपार रूपराशि विशिष्ट देखा

ગઇ અને કહેવા લાગી કે, જો આ પુરુષ મારા પતિ નહીં બને તો મારો એ નિશ્ચય છે કે એના વિયોગમાં હું મારા પ્રાણ આપી દઇશ જ્યારે તેની આ પરિસ્થિતિ તેના માતાપિતાના જાણમાં આવી ત્યારે તેમણે મને કહ્યું કે જે રીતે બની શકે તે રીતે તું તેને અહીં લઈ આવ જો તું તેનું હરણ કરીને લાવી શકતી હોય તો તે પ્રમાણે લઇ આવ પરંતુ લાવવામાં ઢીલ ન કર આ કારણે હું આપનું હરણ કરીને ત્યાં લઇ જાઉં છું, આ કારણે આપ મને મારો નહીં

આ પ્રકારના એ વિદ્યાધરીના વચન સાંભળીને કુમારને પણ તે કન્યા ઉપર અનુરાગ જાગૃત થયો આ પછી વિદ્યાધરીને તેણે કહ્યું કે, તું જેટલી ઝડપથી મને ત્યાં જઇ શકતી હો એટલી ઝડપથી ત્યાં લઇ જા કુમારની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને એ વિદ્યાધરી પોતાની વિદ્યાના પ્રભાવથી એકદમ ઝડપી ગતિથી તેને લઈને જલદીથી વિદ્યાધરોના અધિપતિ ઇન્દ્રધનુની પાસે આવી પહોંચી વિદ્યાધરોના અધિપતિએ અત્યંત રૂપરાશી વિશિષ્ટ કુમારને જોઈને તેનું મન

मा कुरु ! आवेदयामि हरणकारणम्, इत्युक्त्वा सा हरणकारण कथयितुमारब्धवती-कुमार ! वैताढ्यपर्वते सुरोदय नामास्ति पुरम्। तत्रेन्द्रधनु नामको नामास्ति विद्याधराधिपतिः। तस्यास्ति श्रीकान्तानाम सकलगुणसमलङ्कृता भार्या। अस्ति तयोः पुत्री जयचन्द्रा नाम। सा हि सम्प्राप्तयौवनाऽपि कमपि पुरुष नाभिलषति। ततस्तत्पित्रोराज्ञयाऽह भरतक्षेत्रवासिना नृपाणा चित्र प्रतिलेख्य तस्यै प्रदर्शितवती। सा तेष्वपि न कमपि काङ्क्षति। ततो मया तव चित्र पटे समालेख्य तस्यै प्रदर्शितम्। तव चित्र दृष्ट्वा सा त्वयि अत्यन्तमनुरक्ता मामुक्तवती-यद्य

यदि नहीं बतलावेगी तो एक मुष्टि के प्रहार से तेरा प्राण निकाल दूगा। इस प्रकार जब कुमारने कहा तब विद्याधरी बोली-कुमार! क्रोध करनेकी जरूरत नहीं है। हरण करने का कारण क्या है यह मैं तुम्हे बतलाती हू सो सुनो, वह इस प्रकार है—

वैताढ्य पर्वत पर सूरोदय नामका एक पुर है। वहां का अधिपति एक विद्याधर है। इसका नाम इन्द्रधनु है। इसकी भार्या का नाम श्रीकान्ता हे। यह श्रीकान्ता स्त्रियोचित समस्त गुणों से अलकृत है। इनकी एक पुत्री हैं जिसका नाम जयचन्द्रा है। यह इस समय यौवन अवस्था मे जा रही है। फिर भी यह किसी भी पुरुष में अभिलाषावाली नहीं बन रही है। इस प्रकार की इसकी परिस्थिति देखकर उसके मातापिताने मुझ से कहा कि तुम भरतक्षेत्र के नृपों के चित्रों का आलेखन कर उसको दिखलाओ। सो मैंने ऐसा भी किया परन्तु फिर भी वह किसीकी भी चाहना नहीं करती है अन्त मे मैने ज्यों ही आपका चित्रपट उसको दिखलाया। तो उसको देखकर वह आपमे

નાખીશ આ પ્રકારે જ્યારે કુમારે કહ્યુ ત્યારે વિદ્યાધરી બોલી, હે કુમાર! ક્રોધ કરવાની કોઈ જરૂરત નથી આપનુ હરણ કરવાનુ કારણ શુ છે તે હુ આપને બતાવુ છુ તે સાભળ તે આ પ્રમાણે છે—

વૈતાઢ્ય પર્વત ઉપર સુરોદય નામનુ એક નગર છે તેના અધિપતિ એક વિદ્યાધર છે તેમનુ નામ ઈન્દ્રધનુ છે તેમની સ્ત્રીનુ નામ શ્રીકાન્તા છે આ શ્રીકાન્તા સ્ત્રિયોચિત બધા ગુણોથી અલકૃત છે તેને એક પુત્રી છે જેનુ નામ ચદ્રા છે આ વખતે તે યુવાવસ્થામા છે છતા પણ કોઈ પુરુષમા તે અભિલાષ વાળી થઈ નથી આ પ્રમાણેની તેની પરિસ્થિતિ જોઈને તેમના માતાપિતાએ મને કહ્યુ કે, તુ ભરતક્ષેત્રના રાજવીઓના ચિત્રો દોરીને તેને બતાવ આથી મે એ પ્રમાણે કર્યું, છતા પણ તે પૈકી કોઈની પણ ચાહના કરતી નથી અતમા મે જ્યારે તેને આપનુ ચિત્ર બતાવ્યુ તો એને જોઈને તે આપનામા અત્યત અનુરક્ત બની

'म भर्त्ता न भविष्यति, तदाऽहं प्राणान् परित्यक्ष्यामि, इति तदध्यवसितं श्रुत्वा तत्पित्रोरनुज्ञयाऽहं त्वामपहृत्य गच्छामि। अतो न भवान् मां हन्तुमर्हति। दीनाया तस्यामनुकम्पनीय भवता। इति तस्या वचनमुपश्रुत्य सञ्जातानुरागस्तामुवाच-नय मां त्वरितम्। तत सा वेगवती विद्याधरी स्वविद्याप्रभावेण तं त्वरितमेव विद्याधरराजसन्निधौ नीतवती। विद्याधरराजोऽपि रमनी

त्यन्त अनुरक्त बन गई और कहने लगी कि यदि यह मेरा भर्त्ता नहीं बनता है तो यह निश्चित है कि मैं इसके वियोग में प्राणों से भी हाथ धो बैठूं। जब उसका यह अध्यवसाय उसके मातापिता को मालूम हुआ तो उन्होंने मुझ से कहा कि तुम से जैसे भी हो सके उस व्यक्ति को यहां पर ले आओ। यदि तुम इसको हरण करके भी ला सकती हो तो ले आओ परन्तु लाने में देरी नहीं करो। इस लिये मैं आपको हरण कर यहां लेजा रही हूं इसलिये मुझे आप न मारे।

इस प्रकार उस विद्याधारी के वचन सुनकर कुमार को भी उस कन्या के ऊपर अतिशय अनुराग जागृत हो गया। पश्चात विद्याधरी से बोले-तू जितनी जल्दी मुझे लेजा सकती हो उतनी ही जल्दी वहां ले चल। कुमारकी इस प्रकार बात सुनकर वह विद्याधरी अपनी विद्याके प्रभाव से बहुत ही त्वरीत गति से उनको ले चली और शीघ्रातिशीघ्र वह विद्याधराधिपति इन्द्रधनु के समीप पहुँच गई। कुमार को ज्यों ही विद्याधराधिपतिने अपार रूपराशि विशिष्ट देखा

ગઇ અને કહેવા લાગી કે, જો આ પુરુષ મારા પતિ નહીં બને તો મારો એ નિશ્ચય છે કે એના વિયોગમાં હું મારા પ્રાણ આપી દઈશ જ્યારે તેની આ પરિસ્થિતિ તેના માતાપિતાના જાણમાં આવી ત્યારે તેમણે મને કહ્યું કે જે રીતે બની શકે તે રીતે તું તેને અહીં લઈ આવ જો તું તેનું હરણ કરીને લાવી શકતી હોય તો તે પ્રમાણે લઇ આવ પરંતુ લાવવામાં ઢીલ ન કર આ કારણે હું આપનું હરણ કરીને ત્યાં લઇ જાઉં છું, આ કારણે આપ મને મારો નહીં

આ પ્રકારના એ વિદ્યાધરીના વચન સાંભળીને કુમારને પણ તે કન્યા ઉપર અનુરાગ જાગૃત થયો આ પછી વિદ્યાધરીને તેણે કહ્યું કે, તું જેટલી ઝડપથી મને ત્યાં જઈ શકતી હો એટલી ઝડપથી ત્યાં લઇ જા કુમારની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને એ વિદ્યાધરી પોતાની વિદ્યાના પ્રભાવથી એકદમ ઝડપી ગતિથી તેને લઈને જલદીથી વિદ્યાધરોના અધિપતિ ઈન્દ્રધનુની પાસે આવી પહોંચી વિદ્યાધરોના અધિપતિએ અત્યંત રૂપરાશી વિશિષ્ટ કુમારને જોઈને તેનું મન

मा कुरु। आवेदयामि हरणकारणम्, इत्युक्त्वा सा हरणकारणं कथयितुमारब्धवती-कुमार! वैताढ्यपर्वते सूरोदयं नामास्ति पुरम्। तत्रेन्द्रधनु सनकोनामास्ति विद्याधराधिपतिः। तस्यास्ति श्रीकान्तानाम सकलगुणसमलङ्कृता भार्या। अस्ति तया, पुत्री जयचन्द्रा नाम। सा हि सम्प्राप्तयौवनाऽपि कमपि पुरुषं नाभिलषति। ततस्तत्पित्रोराज्ञयाऽहं भरतक्षेत्रवासिनां नृपाणां चित्र प्रतिलेख्य तस्यै प्रदर्शित वती। सा तेष्वपि न कमपि काङ्क्षति। ततो मया तव चित्र पटे समालेख्य तस्यै प्रदर्शितम्। तव चित्र दृष्ट्वा सा त्वयि अत्यन्तमनुरक्ता मामुक्तवती-यत्र

यदि नही बतलावेगी तो एक मुष्टि के प्रहार से तेरे प्राण निकाल दूगा। इस प्रकार जब कुमारने कहा तब विद्याधरी बोली-कुमार! क्रोध करनेकी जरूरत नहीं है। हरण करने का कारण क्या है यह मैं तुम्हे बतलाती हूँ सो सुनो, वह इस प्रकार है—

वैताढ्य पर्वत पर सूरोदय नामका एक पुर है। वहाँ का अधिपति एक विद्याधर है। इसका नाम इन्द्रधनु है। इसकी भार्या का नाम श्रीकान्ता हे। यह श्रीकान्ता स्त्रियोचित समस्त गुणों से अलकृत है। इनकी एक पुत्री हैं जिसका नाम जयचन्द्रा है। यह इस समय यौवन अवस्था में जा रही है। फिर भी यह किसी भी पुरुष में अभि-लापावाली नही बन रही है। इस प्रकार की इसकी परिस्थिति देखकर उसके मातापिताने मुझ से कहा कि तुम भरतक्षेत्र के नृपों के चित्रों का आलेखन कर उसको दिखलाओ। सो मैने ऐसा भी किया परन्तु फिर भी वह किसीकी भी चाहना नही करती है अन्त मे मैने ज्यों ही आपका चित्रपट उसको दिखलाया। तो उसको देखकर वह आप में

નાખીશ આ પ્રકારે જ્યારે કુમારે કહ્યુ ત્યારે વિદ્યાધરી બોલી, હે કુમાર! ક્રોધ કરવાની કોઈ જરૂરત નથી આપનુ હરણ કરવાનુ કારણ શુ છે તે હુ આપને બતાવુ છુ તે સાભળ તે આ પ્રમાણે છે—

વતાઢય પર્વત ઉપર સુરોદય નામનુ એક નગર છે તેના અધિપતિ એક વિદ્યાધર છે તેમનુ નામ ઇન્દ્રધનુ છે તેમની સ્રીનુ નામ શ્રીકાન્તા છે આ શ્રીકાન્તા સ્રિયોચિત બધા ગુણોથી અલકૃત છે તેને એક પુત્રી છે જેનુ નામ ચદ્રા છે આ વખતે તે યુવાવસ્થામા છે છતા પણ કોઈ પુરુષમા તે અભિલાષવાળી થઈ નથી આ પ્રમાણેની તેની પરિસ્થિતિ જોઇને તેમના માતાપિતાએ મને કહ્યુ કે, તુ ભરતક્ષેત્રના રાજવીઓના ચિત્રો દોરીને તેને બતાવ આથી મે એ પ્રમાણે કર્યું, છતા પણ તે પૈકી કોઈની પણ ચાહના કરતી નથી અતમા મે જ્યારે તેને આપનુ ચિત્ર બતાવ્યુ તો એને જોઇને તે આપનામા અત્યત અનુરક્ત બની

ग्राधरसैनिका इतस्ततः प्रक्षिप्ताः। महापद्मस्य पराक्रममसहमाना हतावशिष्टा
ि पुसैनिका दिक्षु विदिक्षु पलायिताः। स्वसैनिकान् पलायितान् दृष्ट्वा गङ्गाधर
महीधरौ पलायितौ। महापद्मकुमारस्य विजयो जातः। ततोऽसौकुमारः स्वनगर-
मागत । ततः समुत्पन्न चक्रादिरत्नो महापद्मकुमार. षट्खण्ड समस्त भरतखण्ड
साधयति स्म। परन्तु मदनावलीं विना सर्वा चक्रिश्रिय निष्फला मनुते स्म।
तत एकदा क्रीडापरवश' स परिभ्रमन् तस्मिन्नेव तापसाश्रमे गतः। तमागत
वीक्ष्य तापसास्तस्य सत्कार कृतवन्त । तस्मिन्नेवावसरे राजा जनमेजयोऽपि
समागतः स्वपुत्री मदनावलीं महापद्मकुमारेण सह विवाहितवान्। ततः पद्म-

द्वारा जलदावलि–मेघमाला इतस्ततः प्रक्षिप्त हो जाती है तथा हता
वशिष्ट जो सैनिक जन थे वे भी जब दिशा एव विदिशाओं की ओर
भाग चुके तब महापद्म को विशिष्ट पराक्रमशाली जानकर गंगाधर एव
महीधर विद्याधर भी युद्धभूमि से भाग गये। इस प्रकार महापद्मकुमार
जीतकर इन्द्रधनु के पास आ गया। विजयश्रीके लाभ से इन्द्रधनुने
खूब विजयोत्सव मनाया। पश्चात् कुछ दिनोंतक कुमार वहीं पर ठहरे।
वहीं इनके शस्त्रागार मे चक्र आदि रत्नो की उत्पत्ति हो गई–उस से
इन्होंने षट्खड भरतक्षेत्र पर अपनी विजयकी ध्वजा फहराई। परन्तु
इतना सब कुछ होने पर भी एक मदनावलीके विना कुमारने उस
चक्रवर्ती विभूति को निष्फल ही माना। किसी समय ये महापद्म चक्र
वर्ती कौतुक वश यों हि घूमते घामते उसी तपस्वियो के आश्रम मे
जा पहुँचे। चक्रवर्ती को आया हुआ जानकर तपस्वियोने इनका खूब
आदरसत्कार किया। इसी समय जनमेजय राजा भी वहा आ पहुँचा।

જળવાદળી જેવી રીતે આમતેમ વિખરાઇ જાય છે તથા જે સૈનિકો તદ્દન હતાશ
બની ગયા હતા તેઓ યુદ્ધભૂમિ છોડીને આડાઅવળા ભાગવા માડયા, ત્યારે મહા
પદ્મને ખૂબ જ પરાક્રમી જાણીને ગગાધર અને મહિધર વિદ્યાધર પણ યુદ્ધભૂમિમાથી
ભાગી છૂટયા આ પ્રકારે મહાપદ્મકુમાર જીતીને ઈન્દ્રધનુની પાસે જઈ પહોચ્યો.
વિજયના લાભથી ઈન્દ્રધનુએ ખુબ વિજયઉત્સવ મનાવ્યો. પછી કેટલોક સમય
કુમાર ત્યા જ રહ્યો ત્યા તેના શસ્ત્રાગારમા ચક્ર આદિ રત્નોની ઉત્પત્તિ થઇ આથી
તેમણે છ ખડ ભરતક્ષેત્ર ઉપર પોતાના વિજયની ધજા ફરકાવી આટલુ સઘળુ
હોવા છતા પણ એક મદનાવલી સિવાય કુમારને તે ચક્રવર્તીનો વૈભવ સાવ ફિક્કો
લાગતો હતો. કોઈ સમયે તે મહાપદ્મ ચક્રવર્તી કૌતુકવશ આમ તેમ ઘૂમતા ઘૂમતા
એ તપસ્વીના આશ્રમમા જઈ પહોચ્યા ચક્રવર્તીને આવેલ જાણીને તપસ્વીઓએ
તેમનુ ખૂબ સ્વાગત કર્યું. આ સમયે જનમેજય રાજા પણ ત્યા આવી પહોચ્યાં

याकृतिं तं दृष्ट्वा नितरामानन्दितः विद्याधरराजेन शुभे मुहूर्ते कुमारेण सा स्वकन्या जयचन्द्रा विवाहिता। जयचन्द्राया विवाहवृत्तान्तं समुपलभ्य तया सह स्वविवाहमभिलषन्तौ गङ्गाधरमहीधरनामानौ विद्याधरौ युद्धोद्यमं कृत्वा सुरोदयपुरं परितोऽवरुद्धवन्तौ। ततो विद्याधरचमूवृतो महापद्मोऽपि गङ्गाधरमहीधरसैन्येन सह योद्धुं नगरान्निर्गतः। रणे युध्यमानस्य महापद्मस्य संमुखं रथी अश्वारोही निषादी (हस्त्यारोही) पदातिर्वा कोऽपि स्थातुं न शक्तः। यथा दक्षिणानिलेन जलदावलिरितस्ततः प्रक्षिप्यते तथैव महापद्मेन विरुद्धाविं

तो उसका मन अत्यन्त हर्षित हो गया। शुभ मुहूर्त देखकर कुमारके साथ इन्द्रधनुने अपनी कन्या जयचन्द्रा का विवाह भी आनंद के साथ कर दिया। जब यह समाचार गंगाधर और महीधर नाके दो विद्याधरों को मालूम हुआ तो उन्होंने आकर युद्ध करनेके अभिप्राय से उस सुरोदयपुरको घेर लिया। क्यों कि ये चाहते थे कि जयचन्द्राका विवाह हम लोगोंके साथ हो जाय। परन्तु ऐसा नहीं हुआ-अतः इन लोगोंने ऐसा किया। महापद्म भी विद्याधर सैनिकों से परिवृत होकर युद्धस्थल में आ पहुँचा और गंगाधर एवं महीधर विद्याधरो का सैन्य के साथ युद्ध करने को तैयार हो गया। दोनों तरफ से युद्ध प्रारंभ हुआ। परंतु महापद्म के समक्ष उस समय न रथी ही टिक सके और न अश्वारोही न निषादी (हस्त्यारोही) न पदाति ही। कोई भी प्रतिपक्षी जन जब उसका किसी भी प्रकार से साम्हना नहीं कर सके किन्तु वे ऐसे प्रक्षिप्त हो गये जैसे दक्षिण के पवन के

घणुं જ હર્ષિત થઈ ગયું શુભ મુહૂર્ત જોઈને કુમારની સાથે પોતાની કન્યા જયચંદ્રાનો વિવાહ આનંદની સાથે કરી દીધો જ્યારે આ સમાચાર ગંગાધર અને મહિધર નામના બે વિદ્યાધરોને માલુમ પડયા ત્યારે તેઓએ આવીને યુદ્ધ કરવાની ઇચ્છાથી સુરોદયપુરને ઘેરો ઘાલ્યો કારણ કે એ બન્નેની ઇચ્છા એવી હતી કે, જયચંદ્રાનો વિવાહ પોતાની સાથે થાય, પરંતુ તેવું બન્યું નહીં આથી આ લોકોએ યુદ્ધ કરવા માટે સુરોદયપુરને ઘેરી લીધું મહાપદ્મકુમાર પણ વિદ્યાધર સૈનિકોને સાથે લઈને યુદ્ધસ્થાન ઉપર પહોંચ્યો અને ગંગાધર તથા મહિધર વિદ્યાધરોના સૈન્યની સામે યુદ્ધ કરવા તત્પર બન્યા બન્ને બાજુથી યુદ્ધનો પ્રારંભ થયો, પરંતુ મહાપદ્મની સામે ન કોઈ રથી ટકી શક્યો કે ન કોઈ અશ્વારોહિ, નિષાદિ (હાથી દળ સૈન્ય) કે પદાતિ પ્રતિપક્ષનો કોઈ પણ માણસ જ્યારે કોઈ પણ પ્રકારથી તેનો સામનો કરી શક્યો નહીં પરંતુ તે એવા દબાઈ ગયા કે દક્ષિણના પવનને કારણે

त्तौ। पद्मोत्तर मुनिरपि केवलज्ञान प्राप्य क्रमेण कैवल्य प्राप्तवान्। महातपा विष्णुकुमारमुनिरपि स्वतप प्रभावेणानेका लब्धीर्लब्धवान्। स हि स्वर्णाचल इवोत्तुङ्ग, सुपर्णवद् व्योमगामी, सुर इव बहुरूपः कन्दर्प इव रूपवान्, इत्याद्यनेकावस्थावान् भवितु शक्तिसपन्नो जात। परन्तु स न कदाचिदपि स्वलब्धि प्रयोगमकरोत्। यतो मुनयो हेतु विना न कदाचिदपि लब्धिप्रयोग कुर्वन्ति।

एकदा वर्षाकाले समुपागत सयमातिशयसयुता सुव्रताचार्या वर्षाकाल यापयितु हस्तिनापुरे समस्थिता. तदा नमुचि स्ववैर विशोधनार्थं चक्रवर्तिन

देवी भी अपने पुत्र को जैन धर्म की प्रभावना करने मे परायण देखकर परम सतुष्ट हुइ। पद्मोत्तर मुनिने केवलज्ञान प्राप्त कर मुक्तिका लाभ कर लिया। विष्णुकुमार मुनिको भी तपश्चर्या के प्रभाव से अनेक लब्धियो का लाभ हो गया। लब्धियो की प्राप्ति से वे सुमेरु पर्वत के समान उत्तुङ्ग हो सकते थे। गरुड के समान आकाश मे गमन कर सकते थे। देवो के समान विविध रूप बना सकते थे तथा कन्दर्प के समान विशिष्टरूप सपन्न बन सकते थे। इस प्रकार की उन में लब्धियों के प्रभाव से शक्ति आ चुकी थी। परन्तु उनको कभी भी अपनी इन लब्धियों के प्रयोग करनेका अवसर ही नही मिला था। अतः वे लब्धिया उन मे लब्धिरूप से ही विद्यमान थीं। कारण कि जैनमुनि विना कारण के कभी भी लब्धियों का प्रयोग नही करते है।

एक समयकी बात है—वर्षाकाल आने पर सयमातिशयसपन्न सुव्रताचार्य वर्षाकाल व्यतीत करनेके लिये हस्तिनापुर में पधारे। उस

દેવી પણ પોતાના પુત્રને જૈનધર્મની પ્રભાવના કરવામા પરાયણ જાણીને પરમ સતોષી બની પદ્મોત્તર મુનિએ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી મુક્તિનો લાભ કરી લીધો વિષ્ણુકુમાર મુનિને પણ તપશ્ચર્યાના પ્રભાવથી અનેક લબ્ધિઓની પ્રાપ્તિથી તેઓ સુમેરૂ પર્વતની સમાન ઉત્તુગ થઈ શકતા હતા, ગરૂડની માફક આકાશમા ગમન કરી શકતા હતા, દેવોની સમાન વિવિધરૂપ બનાવી શકતા હતા તથા કદર્પના સમાન વિશિષ્ઠ રૂપ સપન્ન બની શકતા હતા લબ્ધિઓના પ્રતાપથી તેમનામા આ પ્રકારની શક્તિ આવી હતી પરતુ તેને કદી પણ પોતાની આ લબ્ધિઓનો પ્રયોગ કરવાનો અવસર મળ્યો ન હતો આથી એ લબ્ધિઓ તેમનામા લબ્ધિ રૂપથી જ વિદ્યમાન હતી કારણ કે જૈનમુનિ વગર કારણે કદી પણ લબ્ધિઓનો પ્રયોગ કરતા નથી

એક સમયની વાત છે કે વર્ષાકાળ આવવાથી સયમ અતિશય સપન્ન સુવ્રતાચાર્ય વર્ષાકાળ વ્યતીત કરવા માટે હસ્તિનાપુરમા પધાર્યા આ સમયે નમુચિએ

कुमारः समग्रचक्रवर्त्तिश्रिया समन्वितः स्वपुरं गतः। तत्र भून्यस्तशिराः स पितरौ प्रणतवान्। पितरावपि पुत्र तस्य तादृशीं श्रिय च दृष्ट्वा परमानन्द भाजौ सपन्नौ। तस्मिन्नेव काले भगवतो मुनिसुव्रतस्य शिष्याः सुव्रताचार्या' ग्रामानुग्राम विहरन्तो हस्तिनापुरे समागताः। राजा पद्मोत्तरो मुनीनामागमन श्रुत्वा स्त्रीपुत्रादिपरिवारसहितो मुनीना वन्दनार्थं गतः। तत्र मुनीन् वन्दित्वा मोहान्धकारनाशिनीं देशना श्रुतवान्। देशनाश्रवणानन्तरं पद्मोत्तरनृपा ज्येष्ठ पुत्रेण विष्णुकुमारेण सह सुव्रताचार्यं समीपे प्रव्रजितः। ततः प्राप्तराज्यो महापद्मश्चक्रवर्ती भूमण्डले सर्वत्र जैनधर्मस्य समुन्नतिं चकार। चक्रवर्त्ति-माता ज्वाला देव्यपि जैनधर्मोन्नतिपरायण स्वपुत्र दृष्ट्वा परमानन्द प्राप्त

सो, इसने भी अपनी पुत्री इस मदनावली का महापद्मकुमार के साथ आनदपूर्वक विवाह कर दिया। बाद में पद्मकुमार समग्र चक्रवर्तीकी विभूति को साथ में लेकर अपने घर पर वापिस आ गया। आकर इसने अपने मातापिताके चरणों में विनयावनत होकर प्रणाम किया। मातापिता पुत्रकी ऐसी असाधारण विभूति देखकर बहुत ही खुश हुए। बाद मे निश्चिन्त होकर पद्मोत्तर राजाने मुनिसुव्रत भगवान के शिष्य सुव्रताचार्य के पास जो उस समय ग्रामानुग्राम विहार करते हुए हस्तिनापुर मे आये हुए थे, और ये उनका आगमन सुनकर वदना करने के लिये स्त्री पुत्र आदि परिवार सहित गये हुए थे। इनकी धर्मदेशना सुनकर अपने ज्येष्ठ पुत्र विष्णुकुमार के साथ दीक्षा अगीकार करली। इसके पश्चात् महापद्म चक्रवर्तीने इस भूमण्डल पर जैनधर्मकी अच्छी तरह से प्रभावना की। चक्रवर्ती की माता ज्वाला

તેમણે પોતાની પુત્રી મદનાવલીનો વિવાહ ઘણાજ આનદ સાથે મહાપદ્મકુમાર ચક્રવર્તીની સાથે કરી આપ્યો. આ પછી મહાપદ્મ ચક્રવર્તી પોતાની સમગ્ર વિભૂતિ સાથે પોતાની હસ્તિનાપુર નગરીમા જઈ પહોચ્યા ત્યા પહોચીને તેણે પોતાના માત પિતાના ચરણોમા વિનયપૂર્વક પ્રણામ કર્યા માતાપિતા પુત્રની આવી અસાધારણ વિભૂતિ જાણીને ઘણાજ ખુશ થયા આ બાજુ મુનિ સુવ્રત ભગવાનના શિષ્ય સુવ્રતાચાર્યના કે જેઓ આ સમયે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા હસ્તિનાપુર આવી પહોંચ્યા હતા તેમનુ આગમન જાણીને રાજા પદ્મોત્તરના રાણી પુત્રાદિ સહિત વદના કરવા માટે ગયા હત તેમની ધર્મદેશના સાભળીને પોતાના મોટા પુત્ર વિષ્ણુકુમાર સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી ત્યારબાદ મહાપદ્મ ચક્રવર્તીએ આ ભૂમિ મડળ ઉપર જૈનધર્મની સારી રીત પ્રભાવના કરી ચક્રવર્તીની માતા જ્વાલા

समागता। जैनसाधवो मा वर्द्धापयितु न समागता इति मात्सर्यात्मवदन् सो नार्यस्तेषा तदेव छिद्र पुरस्कृत्य तान् सुव्रताचार्यान् समाहूए मोवाच-यो यदा राजा भवति, स तदा लिङ्गिभिरभिगम्यते। यतस्तपोवनानि राजरक्ष्याणि भवन्ति अतो राजा तपस्विभिरभिगम्यते, इत्येषा लोकस्थिति. परन्तु यूय मर्यादाविकला मम निन्दका. स्थ, अत एव यूय न समागता। अतो युष्मा-

उसे वधाई देने के लिये आये। साधुसत भी आये। नहीं आये तो एक जैन मुनि ही नहीं आये। जब इस प्रकार की उसने जैनमुनियों द्वारा अपनी वर्द्धापने क्रिया मे शुभ समति नहीं देखी तो वह इस बहाने उनके प्रति अधिक मात्सर्यभाव रखनेवाला बन गया। और जैनसाधुओं का यही एक प्रबल छिद्र-अपराध है जो मेरे लिये इस अवसर पर वे वधाई देने नहीं आये हैं, इस प्रकार जनता मे इसका प्रचार कर उसने इसी अपराध से सुव्रताचार्य आदि मुनिजनों को बुलाया और कहने लगा-आप लोग बिलकुल लोक व्यवहार से अनभिज्ञ एव उद्दड हैं-क्या तुमको नहीं मालूम है कि राज्यपद पर मेरा अभिषेक राजाने कर दिया है। यह तुम लोगोंको ध्यान होना चाहिये था कि जब कोई नवीन राजा होता है तो उसको वधाई देने के लिये साधुसत भी आया करते है। क्यों की उनके तपोवनोकी रक्षा का भार राजा पर रहता है। अतः राजा के प्रति सन्मान प्रदर्शित करना यह तपस्वियों का भी एक कर्तव्य है। परन्तु आप लोगोंने इस लौकिक कर्तव्य का पालन नहीं किया अत' हमको यह बात

न आव्या तो એક જૈન મુનિજ ન આવ્યા જ્યારે આ પ્રકારે જૈનમુનિઓની પોતાના વૃદ્ધિપણાની ક્રિયામા શુભ સમતિ ન જોઈ ત્યારે તે આ બહાન થી તેમના તરફ વધારે ઈર્ષાળુ બન્યો. જૈનસાધુઓનો આ એક પ્રબળ અપરાધ છે કે આ અવસર ઉપર તેઓ વધાઈ આપવા આવ્યા નથી આ પ્રકારનો જનતામા પ્રચાર કરી આ અપરાધ માટે તેણે સુવ્રતાચાર્ય આદિ મુનિજનોને બોલાવ્યા અને કહેવા લાગ્યો આપ લોકો વ્યવહારથી બિલકુલ અનભિજ્ઞ અને ઉદ્દડ છો તમોને શુ એ ખબર નથી કે રાજ્યપદ ઉપર રાજાએ મારો અભિષેક કરેલ છે ? તમોએ એ ધ્યાનમા રાખવુ જોઈએ કે જ્યારે કોઈ નવો રાજા થાય છે ત્યારે તેને વધાઈ આપવા માટે સાધુસતો પણ જાય છે કેમકે તેમના તપોવનની રક્ષાનો ભાર રાજા ઉપર રહે છે, આથી રાજાના તરફ સન્માન પ્રદર્શિત કરવુ એ તપસ્વીઓનુ પણ કર્તવ્ય છે પરતુ આપ લોકોએ એ લૌકિક કર્તવ્યનુ પાલન કરેલ નથી આથી મને એ વાત નિશ્ચિત થઇ ચૂકી છે કે તમો સઘળા મારા એક પ્રકારના નિદક છો આ

विज्ञापितवान्—स्वामिन् ! भवता मम यो वरः पूर्व दत्तस्तं वरं ददातु, चक्रवर्ती प्राह—हे नमुचे ! यथाकाम वृणुष्व वरम् । इत्थं राज्ञा प्रोक्तो दुराशयः स प्रोवाच—स्वामिन् ! अहं यज्ञ कर्तुमिच्छामि । अतः प्रार्थये—यज्ञसमाप्ति यावदेतद्देशाधिपत्यं मम देहि । सत्यप्रतिज्ञो राजा महापद्मोऽपि नमुचिं सिंहासने समुपवेश्य स्वयमन्तःपुरे संस्थितः । राज्याधिपत्यं समाप्य बक इव कूटधीर्नमुचिरपि नगराद् बहिर्यज्ञपाटके गत्वा मायया यज्ञकर्मणि दीक्षितो जातः । राज्येऽभिषिक्तं त नमुचिं वर्धापयितुं निखिलाः प्रजा जैनमुनिवर्जाः सकला लिङ्गिनोऽपि

समय नमुचिने अपने वैरका बदला लेने के विचार से चक्रवर्ती से निवेदन किया—स्वामीन् ! आपने जो वर मुझे पहिले दिया हुआ है उसकी अब मुझे आवश्यकता है सो आप उसको देने की कृपा कीजिये, नमुचिकी बात सुनकर चक्रवर्तीने कहा—ठीक है, जो तुम्हारी इच्छा हो सो मागलो—उसकी पूर्ति करदी जावेगी ! तब नमुचिने कहा—महाराज ! मै यज्ञ करने चाहता हू । अब आपसे प्रार्थना है कि आप जबतक यज्ञकी समाप्ति न हो जाय तबतक इस देशका आधिपत्य मुझे प्रदान कर दें । सत्यप्रतिज्ञ चक्रवर्तीने नमुचिकी इस बात से सहमत होकर उसको राजसिंहासन पर स्थापित कर दिया और आप स्वय अन्तःपुरमे जाकर रहने लगा । राज्याधिपत्य पाकर बककी तरह कूट नीति सपन्न नमुचि भी नगर से बाहर यज्ञशाला मे जाकर मायाचारी से यज्ञकर्म मे नियुक्त हो गया । नगरनिवासियोंने जब यह बात सुनी कि नमुचि राज्य में अभिषिक्त हो गये हैं तब ये सब के सब

પોતાના વેરનો બદલો લેવાના વિચારથી ચક્રવર્તીને નિવેદન કર્યું, સ્વામિન્ ! આપે જે વરદાન મને પહેલા આપેલ છે તેની આજે મારે આવશ્યકતા છે, તો આપ મને તે આપવાની કૃપા કરો. નમુચિની વાત સાભળીને ચક્રવર્તીએ કહ્યુ ઠીક છે જે તમારી ઇચ્છા હોય તે માગી લો એ વરદાન પૂરૂ કરવામા આવશે ત્યારે નમુચિએ કહ્યુ, મહારાજ ! હુ યજ્ઞ કરવા ચાહુ છુ આથી આપને પ્રાર્થના છે કે આપ જ્યા સુધી યજ્ઞની સમાપ્તિ ન થાય ત્યા સુધી આ દેશનુ આધિપત્ય મને પ્રદાન કરી દો સત્યપ્રતિજ્ઞ ચક્રવર્તીએ નમુચિની આ વાતને સ્વીકારી તેને રાજ્ય સિહાસન ઉપર સ્થાપિત કરી દીધો અને આપ પોતે અતપુરમા ચાલ્યા ગયા રાજ્યનુ આધિપત્ય પામીને બગલાની માફક કૂટનીતિ સપન્ન નમુચિ પણ નગરની બહાર યજ્ઞશાળામા જઈને માયાચારીથી યજ્ઞકર્મમા નિયુક્ત બની ગયો નગરનિવાસીઓએ જ્યારે આ વાત સાભળી કે નમુચિને રાજ્યગાદી સુપ્રદ કરવામા આવેલ છે ત્યારે તે સઘળા તેને વધાઈ આપવા માટે આવ્યા સાધુસત પણ આવ્યા,

-नहुजल्पितैरलम्। सप्ताहोपरि मम राज्ये युष्माकं मध्ये यदि कोऽपि स्थास्यति, तदाऽहं चौरमिव तं घातयिष्यामि ततः सर्वे मुनयः स्वस्थानमागत्य परस्परं विचारणां चक्रुः-अयं नमुचिर्जिनधर्मद्रोही सप्ताहमात्रमेव अत्रोद्याने स्थातुमाज्ञापयति। सम्प्रति वर्षाकालः समागतः। अतोऽत्र कः प्रतीकारः? इति सर्वैर्विचारणीयम्। तस्मिन् समये एकः साधुः प्रोक्तवान्-यो हि सुदुस्तपं तपः षष्टिवर्षशतानि तेपे, स विष्णुकुमारऋषिः सम्प्रति मेरुतुंग नामकपर्वते वर्तते। स हि

सर्वथा बहिष्कृत जान है। इस प्रकार सुव्रताचार्य के वचन सुनकर दुर्बुद्धि नमुचिने उन से कहा-अब न हम अधिक कहना चाहते हैं। और न तुम से कुछ सुनना ही चाहते हैं। अन्तिम आदेश हमारा अब तुम लोगों के लिये केवल एक यही है कि सात दिन के भीतर २ तुम सब यहां से बाहर चले जाओ-मेरे राज्य में जो कोई तुम में से ठहरेगा तो मैं उसको चोर मानकर फाँसी पर लटका दूंगा। नमुचि की इस प्रकार कठोर बातचीत सुनकर सब के सब मुनिराजोंने अपने स्थान पर आकर विचार किया-देखो, यह नमुचि जिनधर्म से द्रोह रखता है। तथा सात दिन तक ही यहां पर हम लोगों को ठहरने की आज्ञा देता है। ऐसी स्थिति मे जब कि वर्षाकाल आ चुका है, क्या उपाय करना चाहिये। यह बात सुनकर उन में से एक साधुने कहा-सुनो, मे इसका उपाय कहता हूं, वह इस प्रकार है-

छहसौ (६००) वर्षतक सुदुस्तर तपकी आराधना करनेवाले विष्णुकुमार मुनिराज इस समय मेरुतुंग पर्वत उपर विराजमान है। उनका

ळीने દુર્બુદ્ધિ નમુચિએ કહ્યુ કે હવે હુ કાંઇ વધારે કહેવા ચાહતો નથી તેમ તમારૂં કાંઈ પણ સાંભળવા ચાહતો નથી મારો તમારા લોકો માટે અંતિમ આદેશ એકજ છે કે સાત દિવસની અંદર તમો સઘળા આ રાજ્યની હદ છોડીને ચાલ્યા જાવ મારા રાજ્યમા તમારામાથી જે કોઈ પણ રહેશે તો હુ તેને ચોર સમજીને ફાંસી ઉપર લટકાવી દઈશ નમુચિની આ પ્રકારની કઠોર વાતચીતને સાભળીને સઘળા મુનિરાજો પોતાના સ્થાને આવીને વિચાર કરવા લાગ્યા કે જુઓ! આ નમુચિ જૈનધર્મની સામે દ્વેષ રાખે છે તથા સાત દિવસ સુધીની આપણા લોકોને રહેવાની આજ્ઞા આપે છે આવી સ્થિતિમા વર્ષાકાળ આવી ચૂકેલ હોવાથી શો ઉપાય કરવો? આ વાત સાંભળીને તેમાના એક સાધુએ કહ્યુ સાભળો, હુ એનો ઉપાય કહુ છુ તે આ પ્રકારનો છે

છસો વર્ષ સુધી આકરા તપની આરાધના કરવાવાળા વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ આ સમયે મેરૂતુંગ પર્વત ઉપર બિરાજમાન છે એમનો અને અહીંના મહાપદ્મ

भिर्मम राज्ये न कस्यचिदपि स्थेयम्। गच्छत यूयमितोऽन्यत्र! यदि युष्माकं मध्ये कश्चिदपि मम राज्ये स्थास्यति, स मम वध्यो भविष्यति। लोकराजविरोधिनो युष्मान् यः संवासयिष्यति, सोऽपि मम वध्यो भविष्यति। तद्वचनं श्रुत्वाऽऽचार्याः प्रोचुः-राजन्! कस्यापि राज्ञो वर्द्धापना कर्त्तुं न कल्पतेऽस्माकम्। अत एव वयं नागतास्तवाभिषेके। तव निन्दा चाऽपि न क्वाऽपि कृताऽस्माभिः। वयं तु न कस्याऽपि निन्दां कुर्मः। कस्यापि निन्दाकरणं न कल्पते साधूनाम्। सुव्रताचार्यवचनं श्रुत्वा स दुर्बुद्धिर्नमुचिः प्रोवाच

निश्चित हो जाती है कि तुम सब हमारे एक प्रकार से अपराधी हो। इसलिये इस गुरुतर अपराध का दंड तुम्हारे लिये एक ही है कि तुम में से कोई भी हमारे राज्य के भीतर न रहे। यदि कोई इस आज्ञा का भंग करेगा तो वह मृत्युदंड का भोक्ता बनेगा। तथा लोक एवं राज के विरोधी तुम लोगों को जो भी कोई व्यक्ति अपने यहां आश्रय देगा उसको भी मृत्युदंड भुगतना पडेगा। इस प्रकार नमुचिके वचन सुनकर आचार्यदेवने कहा-राजन! हम लोगों का यह आचार नही है कि हम किसी को वधाई देने जावें। क्यों कि यह बात मुनिमार्ग से बाह्य है। यही कारण है कि हम लोग इस उत्सव पर सम्मिलित नही हुए। हम लोग सब जीवोंके प्रति माध्यस्थ्य भाव रखा करते हैं यही हमारा सनातन सिद्धांत है। यदि हमने आपको वधाई नही दी है तो आपकी कहीं पर हम लोगोने निन्दा भी नहीं कि है। निन्दा करना तथा स्तुति करना यह जैनसाधुओं के आचार्यमार्ग से

કારણે એ ગુરૂત્તર અપરાધનો દંડ તમારા માટે એક જ છે કે તમારામાંથી કોઈ પણ અમારા રાજ્યની અંદર ન રહે જે કોઈ તેનો ભંગ કરશે તો તેને મોતની સજા કરવામાં આવશે તથા લોક અને રાજ્યના વિરોધી એવા તમો લોકોને જે કોઈ પણ વ્યક્તિ આશ્રય આપશે તેને પણ મોતની સજા કરવામાં આવશે, આ પ્રકારના નમુચિના વચનોને સાંભળીને આચાર્યદેવે કહ્યુ, રાજન્! અમારા લોકો માટે એ બરોબર નથી કે અમે કોઈને પણ વધાઈ દેવા જઈએ કેમકે એ વાત મુનિમાર્ગથી વિરૂદ્ધની છે, આજ કારણને લઈ અમે લોકો આ ઉત્સવમાં સંમિલિત ન થયા અમે લોકો સઘળા જીવોના તરફ સમાન ભાવ રાખીએ છીએ એવો અમારો સનાતન સિદ્ધાંત છે જોકે, અમોએ તમોને વધાઈ નથી આપી તેમ આપની કોઈ જગ્યાએ નિંદા પણ નથી કરી નિંદા કરવી કે સ્તુતિ કરવી એ જૈન સાધુઓના આચાર માર્ગથી તદ્દન વિરૂદ્ધનો માર્ગ છે આ પ્રકારના સુવ્રતાચાર્યના વચને સાંભ

वर्षासु कथमेषसमागच्छेत्। एवं विचारयन्तं विष्णुकुमारमुनिं प्रणम्य स मुनिः सर्वं वृत्तान्तं न्यवेदयत्। ततो विष्णुमुनिस्तमादाय सत्वरमेव हस्तिनापुरे समागतः। ततो गुरून् प्रणम्य बहुभिर्मुनिभिः सह स नमुचिसमीपे गतः। सर्वेऽपि नृपा विष्णुमुनिं नमस्कृतवन्तः। नमुचिस्तु तं न नमस्कृतवान्। तत्र विष्णुमुनिना धर्मदेशना प्रारब्धा। धर्मदेशनासमये स नमुचिमुवाच-सम्प्रति वर्षाकालो वर्तते, अतो वर्षाकालावधि मुनयोऽत्रैव नगरे तिष्ठन्तु। एते हि स्वत एवैकत्र स्थाने बहुकालं यावन्न तिष्ठन्ति। वर्षासु भूर्भूरिजन्तुसंकुला भवति।

उपस्थित हुआ है-नहीं तो वर्षाकाल मे इस मुनिके आनेकी आवश्यकता क्या थी। विष्णुकुमार मुनिराज जब इस प्रकारका विचार कर रहे थे कि इतने में वह मुनि उनके पास जा पहुँचा और उनको प्रणाम कर उसने आद्योपात समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। सुनकर विष्णुकुमार मुनिराज उसी समय उसको साथ लेकर हस्तिनापुर आ गये। आकर उन्होंने सब से पहिले गुरुओं को नमस्कार किया। पश्चात् वे मुनियोंको साथ में लेकर नमुचि के पास गये। वहा जितने भी राजा उपस्थित थे उन सबने उनको नमस्कार किया। वहा विष्णुकुमारने धर्मकी देशना दी। धर्मकी देशना जिस समय वहा हो रही थी-उस समय वहा नमुचि भी उपस्थित था। मुनिराजने नमुचि से कहा-देखो इस समय वर्षाकाल चल रहा है। अतः वर्षाकाल की समाप्ति तक ये समस्त मुनिमडली यही पर रहे। यह स्वय भी एक स्थान पर बहुत समय तक नही ठहरते है। सिर्फ वर्षाकाल मे ही चार महीने

આવશ્યકતા હોય જ નહીં વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ આ પ્રકારનો વિચાર કરતા હતા એટલામા એ મુનિ તેમની પાસે જઈ પહોચ્યા અને તેમને પ્રણામ કરી, અથથી ઇતી સુધીનો સઘળો વૃત્તાત તેમને કહી સભળાવ્યો સાભળીને વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ એ મુનિને સાથે લઈને તુરત જ હસ્તિનાપુર જવા ઉપડયા હસ્તિનાપુર પહોચતાની સાથે જ તેમણે સહુ પ્રથમ ગુરૂઓને નમસ્કાર કર્યા પછીથી તેઓ મુનિઓને સાથે લઈને નમુચિની પાસે ગયા ત્યા જેટલા રાજાઓ ઉપસ્થિત હતા તે સઘળાએ તેમને નમસ્કાર કર્યા એ સ્થળે વિષ્ણુકુમારે ધર્મની દેશના આપી ધર્મની દેશના જે સમયે ત્યા ચાલી રહેલ હતી એ વખતે ત્યા નમુચિ પણ હાજર હતો તેને જોઇને મુનિરાજે નમુચીને કહ્યુ, જુઓ! આ સમયે વર્ષાકાળ ચાલી રહેલ છે આથી વર્ષાકાળની સમાપ્તિ સુધી આ સઘળી મુનિમડળી અહીયા રહે, તેઓ પોતે પણ એક જ સ્થળે ઘણો વખત સુધી રહેતા નથી ફક્ત વર્ષાકાળના ચાર મહિના જ એક સ્થાને

पद्मस्याग्रजोऽवर्त्तते । मन्ये तद्वचनादेव शान्तिमाप्स्यति । अस्मासु यः कश्चित्तत्र गन्तु लब्धिमान् भवेत्, स तत्र गच्छतु । तदैको मुनिराह—अहं तत्र गन्तु शक्तोऽस्मि, न पुनरागन्तुम् । तद्वचनं श्रुत्वा सुव्रताचार्याः प्रोचुः—त्वं तत्र गच्छ । विष्णुकुमारमुनिरेव त्वामानेष्यति । इत्थं सुव्रताचार्यवचनं श्रुत्वा स मुनि र्विहग इव विहायसा गन्तु प्रवृत्तः । स हि क्षणमात्रसमयेनैव विष्णुकुमारमुनि सन्निधौ समागतः समागतं तं मुनिं निरीक्ष्य विष्णुकुमारमुनिश्चिन्तितवान्—अवश्यमेव महदावश्यकं संघकार्यमुपस्थितम् । अत एवायं मुनिः समायातः, अन्यथा

और यहा के महापद्म राजाका सबध है—महापद्म राजा के वे बडे भ्राता हैं। उनके कहने से यह शांत हो जायगा। अब रही वहा तक पहुचने की बात—सो कोई हम लोगों के बीचमें लब्धिसपन्न हो वह वहा पर जावे। इस विचारधारा को सुनकर उन में एक मुनिराजने कहा—मुझ में ऐसी लब्धि तो है कि मैं उसके प्रभाव से वहा तक जा सकता हु—परन्तु फिर वहा से वापिस आनेकी लब्धि न होने से यहा पीछे वापिस नहीं आ सकता हू। साधुकी वचन सुनकर सुव्रताचार्यने कहा—कोई चिन्ता की बात नहीं है—तुम यहा से चले जाओ—पीछे विष्णुकुमार मुनिराज ही तुमको यहा पर ले आवेंगे। इस प्रकार आचार्य महाराज का आदेश पाकर वह मुनि पक्षीकी तरह आकाशमार्गसे उडा और उडते २ एक क्षणमात्र मे मेरुतुग नामक पर्वत के उपर विष्णुकुमार मुनिराजके पास जा पहुँचा। विष्णुकुमार मुनिराजने इस नवीन आये हुए मुनिको देखकर विचार किया—अवश्य ही कोई सघका आवश्यकीय कार्य

રાજાનો સબધ છે તેઓ મહાપદ્મ રાજાના મોટાભાઈ છે તેમના કહેવાથી આ શાત બની જશે હવે ફક્ત રહી ત્યા સુધી પહોચવાની વાત જો આપણા માથી જે કોઈ લબ્ધિસપન્ન હોય એ ત્યા જાય આ વિચારધારાને સાભળીને એક બ જા મુનિરાજે કહ્યુ, મારામા એવી લબ્ધિ તો છે કે એના પ્રભાવથી હુ ત્યા પહોચી શકુ છુ, પરતુ ત્યાથી પાછા આવવાની લબ્ધિ ન હે વાથી અહીં પાછો ફરી શકુ તેમ નથી સાધુની વાત સાભળીને સુવ્રતાચાર્યે કહ્યુ, કોઈ ચિતાની વાત નથી તમો અહીથી જાઓ પછી વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ તમોને અહીં લઈ આવશે આ પ્રમાણે આચાર્ય મહારાજનો આદેશ મેળવીને તે મુનિ પક્ષીની માફક આકાશ માર્ગેથી ઉડયા અને ઉડતા ઉડતા એક જ ક્ષણમા મેરૂતુગ નામના પર્વત ઉપર વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ પાસે પહોચી ગયા વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજે આ નવીન આવેલા મુનિને જોઈને વિચાર કર્યો કે સઘનુ કોઈ આવશ્યક કાર્ય જરૂર ઉપસ્થિત થયુ છે, નહી તો વર્ષાકાળમા આ મુનિને આવવાની

कुत्राऽपिगच्छत यूयम्। यदि वः प्राणाः प्रियाः। ततो रुष्टो विष्णुमुनिराह-पदत्रयमपि स्थानं देहि, तत्रैव सर्वे मुनयो निवासं करिष्यन्ति। ततो नमुचिः प्रोक्तवान्-दत्तं युष्मभ्यं पदत्रयं स्थानम्। किन्तु तस्माद् बहिर्यः स्थास्यति, सोऽवश्यमेव मृत्युदण्डं प्राप्स्यति। इत्थं नमुचिवचनं श्रुत्वा कोपाविष्टो विष्णुमुनिं वैक्रियलब्ध्या प्रवर्द्धितुमारेभे। मुकुटकुण्डलमालायुक्तः शङ्खचक्रगदापद्मधारी कल्पान्तपवनोपमान् स्फारान् फूत्कारान् मुञ्चन्, स्वचरणाघातैरखिलामपि मेदिनीं कम्पयन्, पयोराशीनुच्छालयन्, शैलशृङ्गाणि पातयन्, धात्रीफलसमूहवन्नक्षत्रचक्रं दूरी

दूसरे राज्य में चले जाओ। यदि अपनी कुशलता मनाना चाहते हो तो। नमुचि की बात सुनकर विष्णुकुमार को कुछ क्रोध सा आ गया-उन्होंने उससे कहा ठीक है-तुम अब ऐसा करो कि ३ पैर जमीन दे दो-उसी में सब मुनि ठहर जावेंगे। इस बातको सुनते ही नमुचिने कहा अच्छा दिया तीन पैर स्थान ठहरने को। परन्तु इसके बाहर जो मुनि रहेगा वह मृत्युदंडका पात्र होगा बोलो यह बात मंजूर है। तब उसकी बात प्रमाण करते हुए विष्णुकुमारने अपने शरीर कों विक्रिया ऋद्धि से बढाना प्रारंभ कर दिया। बढते २ इनका शरीर उत्तुंग पर्वत जैसा उत्तुंग हो गया। उस अवस्था मे मुकुट, कुंडल, माला तथा शंख, चक्र, गदा एवं पद्मको धारण किये हुए उन मुनिराज ने कल्पान्तकालकी प्रबल वायुके समान स्फार फूत्कारो को छोडते हुए अपने चरणोंकी आघातों द्वारा समस्त भूमण्डल को कंपित कर दिया। समुद्रो को उछाल दिया। शैलों के शिखरों को निचे गिरा दिया। आवले

પોતાની કુશળતા ચાહતા હો તો વહેલામાં વહેલી તકે મારા રાજ્યની હદમાંથી અન્ય સ્થળે ચાલ્યા જાવ નમુચિની વાત સાંભળીને વિષ્ણુકુમાર મુનિને ક્રોધનો અંશ આવી ગયો તેઓએ તેને કહ્યુ, ઠીક છે તમે હવે એવું કરો કે, ત્રણ પગલા જમીન આપો જેમા સઘળા મુનિ રોકાઇ જશે આ વાતને સાંભળતાજ નમુચિએ એનો સ્વીકાર કર્યો, અને કહ્યુ કે, આ ત્રણ પગલા જમીનની બહાર જે મુનિ રહેશે તેને ઠાર કરવામા આવશે કહો આ વાત તમને મંજુર છે? નમુચિની એ વાતને મંજુર કરીને વિષ્ણુકુમારે પોતાના શરીરને વિક્રિયા ઋદ્ધિથી વધારવાનો પ્રારંભ કરી દીધો તેમનુ શરીર ઉંચા પર્વતના જેવુ ઉત્તુંગ થઈ ગયુ આ અવસ્થામા મુગટ, કુંડળ, માળા, તથા શંખ ચક્ર, ગદા અને પદ્મને ધારણ કરેલા એવા એ મુનિરાજે પ્રલયકાળના પ્રબળ વાયુ સમાન સુસવાટા કરતા પોતાના ચરણોના આઘાતો દ્વારા સઘળા ભૂમંડળે કંપાયમાન બનાવી દીધુ સમુદ્રો ઉછળવા લાગ્યા, શિખરો ઉપરના પત્થરો

अत एवैते वर्षाकाले विहार न कुर्वन्ति। अस्मिन् महापुर वर्षास्वेते वसे युस्तर्हि तव का हानिः ? कथमेतान साधून् निर्वासयसि ? इति विष्णुमुनि-वचन श्रुत्वा क्रुद्धो नमुचि. प्राह–अल पुनरुक्तिभिः। यदि पञ्चदिवसानन्तर युष्माक मध्ये कश्चिदपि दृष्टिपथमारोक्ष्यति, स निग्रहणीयो भविष्यति। विष्णु कुमारमुनिः प्रोवाच–एते महर्षयः पुरोद्याने वसन्तु। तेन का हानिस्तव ? तत क्रुद्धो नमुचि' प्रोवाच आस्तामुद्यान पुर वा। एते पाखण्डिपाशैः श्वेतभिक्षु-भिर्मम राज्ये न कुत्रापि स्थातव्यम्। तस्मान्मम राज्य झटिति मुक्त्वाऽन्यत्र

एकत्र ठहरने का शास्त्र में आदेश है–अतः उसीके अनुसार ये सब यहा ठहरे है, कारण कि इस समय पृथ्वी अनेक सूक्ष्म जन्तुओं से सकुल रहती है। इसी लिये वर्षाकाल में मुनियोंका विहार निषिद्ध हैं। इस आपके नगर में ये वर्षाकाल मे रहें तो आपको इसमें क्या आपत्ति है ? आप क्यों इनको यहा नहीं ठहरन दना चाहते हो। इस प्रकार मुनिराज विष्णुकुमार के वचन सुनकर नमुचि ने कुपित होकर इनसे कहा–ज्यादा वार २ कहनेकी जरूरत नहीं है। यदि पाच दिनोंके बाद आप लोगों मे से कोइ भी जो मुझे यहा दिखलाई पड जायगा तो वह निग्रहणीय होगा। इस प्रकार नमुचि का बात सुनकर विष्णु कुमार ने पुन' उससे कहा–ये महर्षिजन हैं यदि नगर के उद्यान में ठहरे रहें तो इसमें आपकी क्या हानि हैं ?। सुनते ही इस बातको नमुचि अधिक कुपित होकर कहने लगा। नगर व बगीचा की तो महाराज। बात अभी दूर है–ये तो पाखण्डिपाश श्वेतभिक्षु मेरे राज्यभर में भी कही पर नही ठहर सकते है। अत'तुम सब जल्दी से जल्दी कहीं

એકત્ર રહેવાનો આદેશ છે આથી તે અનુસાર આ સઘળા મુનિઓ અહીં રોકાયેલ છે કારણ કે આ સમયે પૃથ્વી અનેક સુક્ષ્મ જીવજતુઓથી ઉભરાયેલી રહે છે આ મુનિયો વર્ષાકાળના ચાર મહિના આપના નગરમા રહે તો એથી આપને શુ આપત્તિ છે ? આપ આમને શા માટે અહીં રોકાવા નથી દેતા ? આ પ્રકારનુ મુનિરાજ વિષ્ણુ કુમારનુ વચન સાભળીને નમુચીએ ક્રોધિત બનીને તેમને કહ્યુ, વાર વાર વધુ કહેવાની જરૂરત નથી જોકે, પાચ દિવસ પછી આપ લોકોમાથી કોઇપણ સાધુ અહીં જોવામા આવશે તો તેને પકડી લેવામા આવશે આ પ્રકારની નમુચીની વાત સાભળીને વિષ્ણુકુમારે ફરીથી તેનેકહ્યુ, આ મહર્ષિજન છે જો તેઓ નગરની બહારના ઉદ્યાનમા રોકાય તો તેમા શુ હરકત છે ? સાભળતાજ આથી વધુ ક્રોધના આવેશમા આવીને નમુચિ કહેવા લાગ્યો કે, નગર કે, બગીચાની વાત તો દૂર રહી પરતુ આ પાખડી સફેદ સાધુઓ મારા રાજ્યભરમા ક્યાય પણ રહી શકતા નથી આથી તમો સઘળા સાધુ ... તમારી

पदायकस्य पापिनोऽस्य मन्त्रिणोऽपराधेन प्राणसन्देहमारूढं भुवनत्रयं त्रायस्व। एवमन्येऽपि देवा असुरास्तथाऽखिलः संघोऽपि तं मुनिं विविधैर्वाक्यैरुच्चैः स्वरेण सान्त्वयितुं प्रवृत्ताः ततो विष्णुमुनिश्चरणपतितान् देवासुरादीन् दृष्ट्वा व्यचिन्तयत्- इमे देवासुरादयः सर्वे भीताः अतो मया स्वस्य रूपस्योपसंहारः कर्तव्यः। इति विचार्य स्वलब्धिप्रभावेण प्रवर्द्धितं स्वशरीरं संहृत्य स पूर्वावस्थो जातः। इतः प्रभृति विष्णुमुने स्त्रिविक्रम इति नाम प्रसिद्धम्। ततो दयासागरेण

कहा-महात्मन्। यद्यपि इस अधम मंत्री ने ही मुनिराजों की आशातना की है परन्तु इस पापी के इस पापसे आज समस्त संसार को जीने के लाले पड रहे हैं। प्रत्येक प्राणी प्राणोंकी रक्षा होने के सन्देह में पड गया है। अतः हे नाथ! आप त्रिभुवन की रक्षा करें। इसी तरह से उन मुनिराजोंकी अनुनय विनय उस समय उपस्थित सुर और असुरोंने भी कीतथा समस्त संघ ने भी की। विविध वाक्योंद्वारा उच्चस्वर से अपने कों शांतकरने में प्रवृत्त हुए उन सबको ओधे मुँह चरण पतित देखकर विष्णुकुमार मुनिराजने विचार किया-इस समय ये सब के सब भयभीत हो चुके हैं, अतः मुझे अपने इस विकृत स्वरूप का उपसंहार कर लेना चाहिये। ऐसा विचार करते ही उनका वह शरीर प्रकृतिस्थ हो गया। इसी कारण उस समय से लेकर विष्णुकुमार का दूसरा नाम त्रिविक्रम प्रसिद्ध कोटि में आया है। इसके बाद जब कि वे विष्णुकुमार मुनिराज प्रकृतिस्थ बन चुके और

મહાત્મન! જો કે, આ અધમ મંત્રીએ મુનિઓની અશાતના કરી છે પરંતુ આ પાપીના એ પાપથી આ સંસારમાં વસનારાઓને માટે મહાભય જાગી પડેલ છે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાના પ્રાણોની રક્ષા કરવાની ફીકરમાં પડી ગયેલ છે એથી હે નાથ! આપ ત્રિભુવનની રક્ષા કરો આજ પ્રમાણે તે મુનિરાજની ત્યાં ઉભેલા દેવ અને દાનવોએ પણ વિનંતી કરી તેમ સમસ્ત સંઘે પણ વિનંતી કરી વિવિધ વાક્યો દ્વારા ઉચ્ચ સ્વરથી પોતાને શાંત કરવામાં પ્રવૃત્ત થયેલા આ સઘળાને પોતાના ચરણોમાં ઉંધા પડી નમન કરી રહેલા જોઈને વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજે વિચાર કર્યો કે, આ સમયે બધા ભયભીત બની ચૂકેલ છે જેથી મારે આ વૈક્રિય શરીરને સંકેલી લેવું જોઈએ આ પ્રકારનો વિચાર કરવાથી તેમનું શરીર હતું તેવું બની ગયું આ કારણે એ સમયથી લઈને વિષ્ણુકુમારનું બીજું નામ ત્રિવિક્રમ પ્રસિદ્ધ થયેલ છે આ પછી જ્યારે વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજ ફરીથી મૂળ સ્વરૂપમાં આવી ગયા અને

कुर्वन्, विविधैः रूपैर्देवदानवान् क्षोभयन्, प्रवर्द्धमानाऽपरिमितशक्तिः विष्णुमुनि उत्तु पर्वत इव उत्तुङ्गो बभूव। ततो निखिलमगज्जये शक्तिमान् विष्णुमुनिः प्रथमचरण चूलहेमपर्वते द्वितीय जम्बू द्वीपस्य जगत्युपरिस्थापितवान् तृतीय चरणस्थापनाय नमुचि पृच्छति-नमुचे ब्रूहि यत्राऽस्ति तत्र तृतीय स्थान, यत्र चरण पुन. स्थापयिष्यामि। ततः प्रवर्धितशरीर विष्णुमुनि विलोक्य महता भयेन कम्पितगात्रो नमुचिरा क्रन्दन् वदति-मुने! मम शिरसि चरण निधेहि। तदानीमेव महापद्मचक्रवर्ती ऽन्तः-पुरे ज्ञातवृत्तान्त' शङ्कातङ्काकुलस्तत्र समागत्य भूमितलनिलम्मौलिस्त मण-म्यैवमब्रवीत्-महात्मन्! अयममत्रिणाऽनेन मुनीनामाशातना कृता, स्वपरसन्ता

के समान नक्षत्रचक्र को दूर कर दिया। अपने विविधरूपों द्वारा देव एव दानवों को क्षुभित कर दिया। इतनी प्रबल विशिष्टशक्ति का सचय उनके उस शरीर में हो गया। इस तरह समस्त जगत को विजित करने में शक्तिसपन्न बने हुए उन विष्णुकुमार मुनिराजने तीन पैर जमीन को नापना जब प्रारम्भ किया तो प्रथम चरण चूलहेम पर्वत पर और द्वितीय चरण जम्बुद्वीप की जगती पर रख रक अब तृतीय स्थान ऐसा नहीं बचा कि जिसमें तृतीय चरण रखा जा सके। तब तृतीय चरण रखनेके लिये उन्होंने नमुचि से पूछा-कहो हे-नमुचि! बतलाओ यह तृतीय चरण अब कहा रखा जावे। पूछते ही वह हक्का बक्का सा हो गया और सहसा बोल उठा हे मुने! मेरे मस्तक पर तृतीय चरण आप रखें। इस प्रकार वह कह ही रहा था कि इसी समय महापद्म चक्रवर्ती अन्त.पुर से सब वृत्तात जानकर वहापर आ पहुँचे। उन्होंने बडा ही विनय के साथ मुनिराज के चरणों मे नमस्कार किया और

અડવા લાગ્યા, નક્ષત્ર ચક્રોને આબળાની માફક દૂર કરી દીધા અને પોતાના વિવિધ રૂપો દ્વારા દેવ દાનવોને ક્ષુભિત કરી દીધા આ પ્રકારની પ્રબળ વિશિષ્ટ શક્તિનો સચય તેમના શરીરમા થઈ ગયો આ પ્રમાણે સમસ્ત જગતનો વિજય કરવામા શક્તિ સપન્ન બનેલ આ વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજે ત્રણ પગલામા જમીનને માપવાનો જ્યારે પ્રારભ કર્યો ત્યારે તેના બે ચરણોમા જ પૂર્વ સમુદ્ર અને અપૂર્વ સમુદ્ર સમાઈ ગયા હવે ત્રીજુ સ્થાન એવુ રહ્યુ નહી કે, જ્યા ત્રીજુ પગલુ રાખી શકે ત્યારે ત્રીજુ પગલુ મૂકવા માટે નમુચિને કહ્યુ કે, હે નમુચિ! હવે બતાવો કે ત્રીજુ પગલુ ક્યા રાખુ? પૂછતાજ નમુચિ આકુળવ્યાકુળ બની ગયો અને કહ્યુ કે, હે મુનિ! મારા મસ્તક ઉપર ત્રીજો પગ આપ રાખો આ પ્રમાણે તે કહી રહ્યો હતો ત્યારે એ સમયે મહાપદ્મ ચક્રવર્તી અતપુરમા આ સઘળો વૃત્તાન્ત સાભળીને ત્યા આવી પહોચ્યા તેઓએ ખૂબ વિનયથી મુનિરાજના ચરણોમા વદન કરીને કહ્યુ,

तथा—

मूलम्—एगच्छत्तं पसाहित्ता, महीं माणनिसूरणो ।
हरिसेणो मणुस्सिंदो, पत्तो गइमणुत्तरं ॥४२॥

छाया—एकच्छत्रा प्रसाध्य, महीं माननिषूदनः ।
हरिषेणो मनुष्येन्द्रः, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥४२॥

टीका—माननिषूदनः=दृप्तारिदलदर्पमर्दन मनुष्येन्द्रः=एकविंशतितम नमि नामक तीर्थंकरे विद्यमाने दशमश्चक्रवर्तीहरिषेणः=हरिषेणनामकः, महीं पृथिवीम्, एकच्छत्राम्=एकं छत्रं राजचिह्नं यस्या सा एकच्छत्रा ताम्, अविद्यमानाऽपरनृपामित्यर्थः। प्रसाध्य=कृत्वा दीक्षा गृहीत्वा अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा मोक्षरूपा गतिं प्राप्तः ॥४२॥

अथ हरिषेणकथा—

आसीद् भरतक्षेत्रे काम्पिल्यपुरे महाहरिनामको नृपः। तस्यासीन्मेरा नाम महिषी। सा हि एकदा कोमलशय्यायां शयाना चतुर्दश स्वप्नान् दृष्टवती।

तथा—'एगच्छत्त' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(माणनिसूरणो-माननिषूदनः) मदोन्मत्त शत्रुओंके मान का मर्दन करनेवाला (मणुस्सिंदो-मनुष्येन्द्रः) इक्कीसवें-तीर्थंकर की मौजूदगी में विद्यमान हरिषेण नामके दश वें चक्रवर्तीने (महीं-महीम्) इस पृथ्वी को (एगच्छत्त-एकच्छत्रा कृत्वा) पूर्णरूप से अपने आधीन करके पश्चात् (अणुत्तर गइम् पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट मोक्षरूप गतिको प्राप्त किया

इनकी कथा इस प्रकार है—

इस भरत क्षेत्र के अन्दर काम्पिल्यपुर मे महाहरि नामका राजा था। उसकी मेरा नामकी एक महिषी थी। उसने रात्री मे अपनी

तथा—"एगच्छत्त" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—माणनिसूरणो-माननिषूदनः મદોન્મત શત્રુઓના અહંકારનું મર્દન કરવાવાળા मणुस्सिंदो-मनुष्येन्द्रः એકવીસમા તીર્થંકરના વખતમાં થયેલા હરિષેણ નામના દસમા ચક્રવર્તીએ महीं-महिं પૃથ્વીને एगच्छत्त-एकच्छत्र પૂર્ણપણે પોતાના આધીન કરીને अणुत्तर गइम् पत्तो-अनुत्तरा गतिं प्राप्तः સર્વોત્કૃષ્ટ મોક્ષ ગતિને પ્રાપ્ત કરી

એમની કથા આ પ્રમાણે છે—

આ ભરતક્ષેત્રની અંદર કાંપિલ્યપુરમાં મહાહરિ નામના રાજા રાજ્ય કરતા હતા તેને મેરા નામની પટરાણી હતી તે રાત્રીના વખતે પોતાની સુકોમળ શૈયા પર

विष्णुमहामुनिना मुक्तो नमुचिरपराधिना निर्गमितः। अथ विष्णुमुनिः सङ्घकार्यं विधाय आलोचनां कृत्वा चिरकालपर्यन्तं सुदुश्चरं तपस्तप्तवान्। ततः समुत्पन्नकेवलज्ञानः स परमानन्दास्पदं माप्तवान्, इति वृद्धा वदन्ति।

अथ चक्रवर्ती महापद्मोऽपि चिरं चक्रवर्त्तिश्रियं समुपभुज्य पश्चात् सुव्रताचार्यसन्निधौ प्रव्रज्यां गृहीतवान्। गृहीतप्रव्रज्यो महापद्ममुनिर्दशवर्षसहस्राणि तीव्रं तपस्तप्तवान्। विंशतिधनुः समुन्नतः स महापद्मस्त्रिंशत्सहस्रवर्षायुष्कोऽभूत्। स महापद्मस्तीव्रैस्तपोभिर्घनघातिकर्माणि विनाश्य केवलज्ञानं समाप्य सिद्धिगतिं प्राप्तवान्।

॥ इति महापद्मचक्रवर्त्तिकथा ॥

अत्यंत दया के समुद्र होने से जब उनके द्वारा उस दुष्ट पापी नमुची की भी रक्षा हो गई तब चक्रवर्तीने "ऐसे पापीका राज्य मे रहना उचित नहीं है" इस विचार से उसको अपने देश से बाहिर निकाल दिया। इस तरह सबका कार्य सुसंपादित करके सब आलोचना द्वारा शुद्ध होकर के उन विष्णुकुमार मुनिराजने चिरकाल पर्यंत सुदुश्चर तपोंको तपा और केवलज्ञान प्राप्त कर अन्तमे मुक्तिको प्राप्त किया। महापद्म चक्रवर्तीने भी बहुत कालतक चक्रवर्तिपदकी विभूतिका भोग करके पश्चात सुव्रताचार्य के पास जिनदीक्षा धारण की। दस हजार वर्षतक महान् तपोंकी आराधना की। तथा वे घनघाति कर्मोंके नष्ट होजाने पर केवलज्ञानी बने। तदनन्तर वे अघातिक कर्मोंके विनाश से मुक्ति प्राप्त किये। इनके शरीर की ऊंचाइ बीस धनुष थी तथा समस्त इनकी आयु तीस हजार वर्षकी थी ॥४१॥

અત્યંત દયાના સમુદ્ર હોવાથી જ્યારે તેમના દ્વારા તે દુષ્ટ પાપી નમુચિની પણ રક્ષા થઈ ત્યારે ચક્રવર્તીએ "આ પાપીનું રાજ્યમાં રહેવું ઉચિત નથી" આવા વિચારથી તેને દેશનિકાલ કરી દીધો. આ પ્રમાણે સઘના કાર્યને સુસંપાદિત કરીને અને આલોચના દ્વારા શુદ્ધ થઈને તે વિષ્ણુકુમાર મુનિરાજે ચિરકાળ પર્યંત ખૂબજ અઘરા એવા તપોને તપીને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી અંતે મુક્તિને પામ્યા. મહાપદ્મ ચક્રવર્તીએ પણ ખૂબ લાંબા સમય સુધી ચક્રવર્તી પદની વિભૂતિનો ઉપભોગ કરીને પાછળથી સુવ્રતાચાર્યની પાસેથી જીન દીક્ષા અંગીકાર કરી દસ હજાર વર્ષ સુધી મહાન તપોની આરાધના કરી તથા આથી તેમના ઘનઘાતીયા કર્મોનો નાશ થઈ જવાથી કેવળજ્ઞાની બન્યા. ત્યાર પછી તે અઘાતીયા કર્મોના વિનાશથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી. એમના શરીરની ઉંચાઈ વીસ ધનુષની હતી તથા તેમનું કુલ આયુષ્ય ત્રીસ હજાર વર્ષનું હતું ॥૪૧॥

युक्त विलोक्य, लघुकर्मतया संसाराद्विरक्तिमापन्नश्चिन्तितवान्-पूर्वभवसुकृत प्रभावेण मयाऽस्मिन् भवे ईदृशी समृद्धिः समाप्ता। अत उचित मम पुनरपि परलोकहितावह धर्म कर्तुम्। उक्त चापि—

मासैरष्टभि रक्षावा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ, वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुख यथा ॥१॥

अन्वयः—अष्टभिर्मासैस्तथा कार्यं, यथा वर्षासु सुख स्यात्। अह्ना तथा कार्यं यथा रात्रौ सुख स्यात्। पूर्वेण वयसा तथा कार्यं, यथा वार्धक्ये सुख स्यात् इति।

पर विराजे हुए थे। तब इन्होने शरत्कालीन निर्मल चन्द्रमा को कुछ ही काल के बाद राहु से ग्रसित देखा। देखते ही लघुकर्मी होने से ससार से इनका चित्त विरक्त हो गया। इन्होंने विचार किया-मुझे पूर्व भव में समुपार्जित पुण्य के प्रभाव से इस भव मे इतनी विशिष्ट समृद्धि प्राप्त हुइ है। अतः मेरे लिये अब यही बात उचित है कि मैं परलोक में हितावह धर्मका ही शरण लू। कहा भी है—

"मासैरष्टभिरह्ना वा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुख यथा" ॥१॥

आठ महिनों में इस जीवको ऐसा काम करना चाहिये कि जिसके प्रभाव से इसको वर्षाकाल के चार महिनों में सुख मिलता रहे। तथा दिन में ऐसा कर्तव्य करते रहना चाहिये कि जिस से इसको रात्रि में सुख मिलता रहे। तथा पूर्ववय में भी ऐसा काम करते रहना चाहिये कि जिस से वृद्धावस्था सुखशाति से व्यतीत होती रहे। तथा—

પેતાના મહેલની અટારીમા બેઠેલ હતા ત્યારે તેમણે શરદકાળના નિર્મળ ચદ્રમાને થોડા સમય પછી રાહુથી ઘેરાયેલ જોયો જોતા જ લઘુકર્મી હોવાથી સસારથી તેમનુ ચિત્ત વિરક્ત બની ગયુ તેઓએ વિચાર કર્યો મને પૂર્વોપાર્જીત વિશિષ્ટ એવા સત્કાર્યોના પ્રભાવથી આ મનુષ્ય જન્મમા આટલી વિશિષ્ટ સમૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થયેલ છે આથી મારામાટે હવે એજ ઉચિત છે કે, હુ પરલોકમા હિતાવહ એવા એક માત્ર ધર્મનુ જ શરણુ લઉ કહ્યુ પણ છે—

"मासैरष्टभिरह्ना वा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुख यथा" ॥१॥

આઠ મહિનામા આ જીવે એવુ કામ કરવુ જોઇએ કે, જેના પ્રભાવથી તેને વર્ષા કાળના ચાર મહિનામા સુખ મળતુ રહે તથા દિવસમા એવુ કર્તવ્ય કરતા રહેવુ જોઇએ કે, જેનાથી તેને રાત્રીમા સુખ મળતુ રહે તથા પૂર્વવયમા પણ એવુ કામ કરતા રહેવુ જોઈએ કે, જેનાથી વૃદ્ધાવસ્થા સુખશાંતિથી વ્યતીત થતી રહે

स्वप्नदर्शनानन्तर धृतगर्भा सा सम्प्राप्ते समये सर्वाङ्गसुन्दर कुमार जनितवती मातापितृभ्या तन्नाम हरिषेण इति कृतम्। स हि शुक्लपक्ष शशीव प्रवर्द्धमान सकलकलासु पारङ्गतोऽभूत्। समासतारुण्यः पञ्चदशधनुरुन्नतः स पितुः प्राप्य राज्य सम्राप्य स्वप्रजा इव प्रजाः परिपालयन् कतिचिद् वर्षाणि व्यतीतवान्। तत एकदा तस्य शस्त्रागारे चक्ररत्न समुत्पन्नम्। तदनुगामी भूत्वा हरिषेणो नृपः षट्खण्ड भरतक्षेत्र साधितवान्। एव क्रमेण समुत्पन्नचतुर्दशरत्नो हरिषेण चक्रवर्ती षट्खण्डा पृथिवीं परिपालयन् बहूनि वर्षाणि व्यतिक्रान्तवान्। एव सुखेन तिष्ठन् चक्रवर्ती हरिषेणो शारद निर्मल पूर्णचन्द्र स्वल्पेनैव कालेन राहूपराग

कोमल शय्यापर सोई हुई चौदह स्वप्नोंको देखा। बाद मे उसके एक सर्वाङ्ग पूर्ण सुकुमार बालकका जन्म हुआ जिनका नाम हरिषेण रखा गया। शुक्लपक्ष मे जिस प्रकार चन्द्रमा की वृद्धि होती है उसी तरह प्रतिदिन बढते हुए यह बालक अपने समय पर सकल कलाओं मे पारगत हो गये। जब ये युवावस्था सपन्न हो गये तब पिता द्वारा प्रदत्त प्राज्य का इन्होने बहुत ही बुद्धिमानी एव न्यायनीतिके अनु सार सचालन किया। अपनी सतान के समान प्रजाका हरतरह से इन्होंने लालनपालन एव सरक्षण करते हुए कितनेक वर्ष व्यतीत किये। इनके शरीरकी ऊचाई पन्द्रह धनुष्य थी। एक दिन इनके शस्त्रागार में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। उसके प्रभाव से इन्होंने समस्त छह खडवाले भरतक्षेत्र पर अपना पूर्ण प्रभुत्व स्थापित किया। चक्र-वर्ती पदका भोग करते हुए इनके कितनेक वर्ष व्यतीत हुए। एक दिनकी बात है कि जब चक्रवर्ती आनद से अपने प्रासाद की छत

सुतेली हती त्यारे तेणे चौद स्वप्न जोया आ पछी तेने એક सर्वांग सुदर कुमारनो जन्म थयो जेनु नाम हरिषेण राखवामा आव्यु शुक्ल पक्षमा जे रीते चद्रमानी वृद्धि थाय छे एवी रीते प्रतिदिवस वधता वधता ए बाळक पोताना योग्य समये सकळ कळाओमा पारगत बनी गया ज्यारे तेओ युवावस्था सपन्न थया त्यारे महाहरि राजाए राज्यनो सघळो कारोबार तेमने सुप्रत करी दई राज्यासने बिराजमान कर्या पिताए सोपेला राज्यनो सुदररीते वहीवट करीने तेमज लोकोनु पोतना सतान समान हरेक रीते पालन पोषण करीने तथा सरक्षण करीने केटलाक वर्षो व्यतीत कर्या तेमना शरीरनी उचाई पदर धनुष्यनी हती એક दिवस तेमना शस्त्रागारमा चक्ररत्ननी उत्पत्ति थई तेना प्रभावथी तेमणे छ खड भरत क्षेत्र पर पोतानु पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर्यु चक्रवर्ती पदने भोगवता तेमना केटलाक वर्ष व्यतीत थया એક दिवसनी वात छे के, ज्यारे चक्रवर्ती आनदथी

युक्त विलोक्य, लघुकर्मतया संसाराद्विरक्तिमापन्नश्चिन्तितवान्-पूर्वभवसुकृत प्रभावेण मयाऽस्मिन् भवे ईदृशी समृद्धिः समाप्ता। अतः उचितं मम पुनरपि परलोकहितावहं धर्मं कर्तुम्। उक्तं चापि—

मासैरष्टभि रह्नावा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ, वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुखं यथा ॥१॥

अन्वयः—अष्टभिर्मासैस्तथा कार्यं, यथा वर्षासु सुखं स्यात्। अह्ना तथा कार्यं यथा रात्रौ सुखं स्यात्। पूर्वेण वयसा तथा कार्यं, यथा वार्धक्ये सुखं स्यात् इति।

पर विराजे हुए थे। तब इन्होंने शरत्कालीन निर्मल चन्द्रमा को कुछ ही काल के बाद राहु से ग्रसित देखा। देखते ही लघुकर्मी होने से संसार से इनका चित्त विरक्त हो गया। इन्होंने विचार किया-मुझे पूर्व भव में समुपार्जित पुण्य के प्रभाव से इस भव में इतनी विशिष्ट समृद्धि प्राप्त हुई है। अतः मेरे लिये अब यही बात उचित है कि मैं परलोक में हितावह धर्मका ही शरण लूं। कहा भी है—

"मासैरष्टभिरह्ना वा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुखं यथा" ॥१॥

आठ महिनों में इस जीवको ऐसा काम करना चाहिये कि जिसके प्रभाव से इसको वर्षाकाल के चार महिनों में सुख मिलता रहे। तथा दिन में ऐसा कर्तव्य करते रहना चाहिये कि जिस से इसको रात्रि में सुख मिलता रहे। तथा पूर्ववय में भी ऐसा काम करते रहना चाहिये कि जिस से वृद्धावस्था सुखशांति से व्यतीत होती रहे। तथा—

પોતાના મહેલની અટારીમા બેઠેલ હતા ત્યારે તેમણે શરદ્કાળના નિર્મળ ચંદ્રમાને થોડા સમય પછી રાહુથી ઘેરાયેલ જોયો. જોતા જ લઘુકર્મી હોવાથી સંસારથી તેમનુ ચિત્ત વિરક્ત બની ગયુ તેઓએ વિચાર કર્યો અને પૂર્વોપાર્જીત વિશિષ્ટ એવા સત્કાર્યોના પ્રભાવથી આ મનુષ્ય જન્મમા આટલી વિશિષ્ટ સમૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થયેલ છે આથી મારામાટે હવે એજ ઉચિત છે કે, હુ પરલોકમા હિતાવહ એવા એક માત્ર ધર્મનુ જ શરણુ લઉ કહ્યુ પણ છે—

"मासैरष्टभिरह्ना वा, पूर्वेण वयसा तथा।
कार्यं वर्षासु रात्रौ वा, वार्द्धक्ये स्यात्सुखं यथा" ॥१॥

આઠ મહિનામા આ જીવે એવુ કામ કરવુ જોઈએ કે, જેના પ્રભાવથી તેને વર્ષા કાળના ચાર મહિનામા સુખ મળતુ રહે તથા દિવસમા એવુ કર્તવ્ય કરતા રહેવુ જોઈએ કે, જેનાથી તેને રાત્રીમા સુખ મળતુ રહે તથા પૂર્વવયમા પણ એવુ કામ કરતા રહેવુ જોઈએ કે, જેનાથી વૃદ્ધાવસ્થા સુખશાંતિથી વ્યતીત થતી રહે

आजन्म तत्तु कर्तव्यं, नरैर्विमलमानसैः ।
येन लोके परे नित्यं सुखं स्यात्परमं ध्रुवम् ॥१॥ इति ।

एवमादिविचार्य चक्रवर्ती हरिषेणो पुत्रं विमलसेनं राज्ये संस्थाप्य सुभद्राचार्य समीपे दीक्षां गृहीत्वा चारित्रं सम्यक् परिपाल्य केवलज्ञानमासाद्य सिद्धिगतिं प्राप्तः। हरिषेणस्य सर्वमायुर्दशसहस्रवर्षपरिमितमभूत् । ॥ इति हरिषेणकथा ॥

तथा—

मूलम्—अन्निओ रायसहस्सेहिं, सुपरिच्चाई दमंचरे ।
जयनामो जिणक्खायं, पत्तो गइमणुत्तरं ॥४३॥

छाया—अन्वितो राजसहस्रैः, सुपरित्यागी दममचरत् ।
जयनामा जिनाख्यातं, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥४३॥

टीका—'अन्निओ' इत्यादि ।

नमिशासने जयनामा एकादशश्चक्रवर्ती जिनाख्यात=जिनोक्त श्रुतचारि

"आजन्म तत्तु कर्तव्य नरैः विमलमानसैः ।
येन लोके परे नित्य, सुख स्यात्परम ध्रुवम्" ॥

निर्मल मनवाले मनुष्यों को चाहिये कि वे आजन्म ऐसा कर्तव्य करें कि जिस से परलोक मे भि नित्य और ध्रुवसुख मिले। इत्यादि रूप से विचार कर हरिषेण चक्रवर्तीने अपने पुत्र विमलसेन को राज्य में स्थापित कर सुभद्राचार्य के समीप दीक्षा अगीकार करली। चारित्र की सम्यक्रीति से परीपालना करते हुए चक्रवर्तीने केवलज्ञान का लाभ कर बाद में अवशिष्ट कर्मों का भी विनाश कर मुक्ति प्राप्त करली। इन हरिषेण की आयु कुल दस हजार वर्ष की थी ॥४२॥

तथा—

"आजन्म तत्तु कर्तव्य, नरै विमलमानसैः ।
येन लोके परे नित्य, सुख स्यात्परम ध्रुवम्" ॥

નિર્મળ મનવાળા મનુષ્ય માટે એ જરૂરી છે કે, તે આ જન્મમા એવુ કર્તવ્ય કરે કે, જેનાથી પરલોકમા નિત્ય અને ધ્રુવસુખ મળે આ પ્રમાણે વિચાર કરી હરિષેણ ચક્રવર્તીએ પોતાના પુત્ર વિમળસેનને રાજગાદી સુપ્રત કરીને સુભદ્રાચાર્યની પાસેથી દીક્ષા અગિકાર કરી ચારિત્રનુ સમ્યક્ રીતિથી પરિપાલન કરીને ચક્રવર્તીએ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું આ પછીથી બાકી રહેલા કર્મોનો પણ વિનાશ કરી મુક્તિપદ મેળવ્યુ આ હરિષેણ ચક્રવર્તીનુ આયુષ્ય એકદર દસ હજાર વર્ષનુ હતુ ॥ ૪૨ ॥

गात्मक धर्मं श्रुत्वा राजसहस्रैरन्वितः=युक्तः सुपरित्यागी=राज्यसुतदारादिपरित्यागशीलः सन् जैनीं दीक्षा गृहीत्वाद् मम्=इन्द्रियोपशमम् अचरत्=कृतवान्। ततोऽनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा मोक्षाख्या गतिं प्राप्त' ॥४३।

अथ जयचक्रवर्तिकथा

आसीदत्र भरतक्षेत्रे सकलसम्पद्गृहे राजगृहे नगरे यश' सुधासमुद्रः समुद्रविजयो नाम नृपः। तस्यासील्लावण्य तारुण्यपरिपूर्णा शीलालङ्कारालङ्कृता शालिधान्यगुणावलीना वम (क्षेत्र) भूता वप्रा नाम पट्टमहिषी। सा कदाचित्सुको-

---

तथा—'अन्निओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—नमिनाथ के शासन में (जयनामो-जयनामा) जयनामक ग्यारहवें चक्रवर्तीने (जिणक्खाय-जिनाख्यातम्) जिनेन्द्र प्रतिपादित श्रुतचारित्ररूप धर्मका श्रवणकर (रायसहस्सेहिं अन्निओ-राजसहस्रै अन्वितः) हजार राजाओं के साथ (सुपरिचाइ-सुपरित्यागी) राज्य, सुत, दारा आदिका परित्याग करके जिनदीक्षा को अंगीकार किया और (दम चरे-दमम् अचरत्) इन्द्रियों को उपशमित किया। इस से (अणुत्तर गइम् पत्तो-अनुत्तराम गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट गति मोक्ष को प्राप्त हुए। इनकी कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत राजगृह नामका नगर था। वहां का वैभव देखकर ऐसा ज्ञात होता था कि मानो सकल सपत्तियों का यह एक घर ही है। इसके शासक यशरूपी सुधा का समुद्र समुद्रविजय नामके राजा थे। इनकी वप्रा नामकी पट्टरानी थी। यह लावण्य

તથા—"अन्निओ" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—નમીનાથના શાસનકાળમા जयनामो-जयनाम જય નામના અગીયારમા ચક્રવર્તીએ जिणक्खाय-जिनाख्यातम् જીનેન્દ્ર પ્રતિપાદિત શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મનુ શ્રવણ કરી रायसहस्सेहिं अन्निओ-राजसहस्रै. अन्वित' હજાર રાજાઓની સાથે सुपरिचाइ-सुपरित्यागी રાજ્ય, સુત દારા, આદિનો પરિત્યાગ કરીને જીનદીક્ષાને અગિકાર કર્યો અને दम चरे-दमम् अचरत् ઇન્દ્રિયો ઉપર કાબુ મેળવી તેનાથી તેઓ अणुत्तर गइम् पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्त સર્વોત્કૃષ્ટ ગતિ એટલે મોક્ષને પ્રાપ્ત કર્યું

તેમની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભરતક્ષેત્રમા રાજગૃહ નામનુ એક નગર હતુ ત્યાનો વૈભવ જોતા એવુ જણાતુ હતુ કે, સઘળી સપત્તિઓનુ એ જાણે ઘર જ હોય ત્યાના શાસક યશરૂપી સુધાનો સમુદ્ર એવા સમુદ્રવિજય નામના રાજા હતા તેમને વપ્રા નામની પટ્ટરાણી

मलाया शय्यायां शयाना चतुर्दशस्वप्नान् दृष्टवती। तया स्वप्ना भर्त्रे निवेदिताः। राजा समुद्रविजयः प्राह-प्रिये! तव महाप्रतापी पुत्रो भविष्यति। ततः समाप्ते काले सा जननयनानन्दकरमेकं पुत्रं प्रसूतवती। पितृभ्यां "जय" इति तन्नाम कृतम्। स हि क्रमेण यौवनमारूढवान्। तस्य शरीरं द्वादशधनुः परिमित मासीत्। राज्यधुराधरणक्षमं सुतं विलोक्य पिता तस्मै राज्यभारं समर्प्य स्वयं सम्भूतिविजयाचार्य समीपे दीक्षां गृहीत्वा स्वकल्याणं साधितवान्। सम्प्राप्त

एवं तारुण्य से परिपूर्ण तथा शीलरूप अलंकारों से अलकृत थी। गुणावलि रूपशालि धान्यकी उत्पत्ति के लिये यह वप्रक्षेत्र जैसी थी। यह किसी समय अत्यंत कोमल शय्या पर सो रही थी कि रात्रि के पिछले पहर में इसने चौदह स्वप्न देखे। स्वप्नो का यथावत् वृत्तान्त अपने पति से निवेदित करने के पश्चात् इसको उन्हीं के द्वारा ज्ञात हुआ कि-"मेरे महाप्रतापी पुत्र होगा" इसको सुनकर रानीको अपार हर्ष हुआ। उसने अपने गर्भकी पुष्टि एवं रक्षा करने में कोई कमी नहीं रखी। जब गर्भ ठीक नौ माह साढेसात दिनों का पूर्ण एवं परिपुष्ट हो चुका तब योग्य समय मे वप्राने एक पुत्ररत्नको जन्म दिया। मातापिता को इनके जन्म से बहुत ज्यादा हर्ष हुआ। उन्होंने इनका नाम जय रक्खा। जय जब युवा हो गया तब राजकन्याओंके साथ उनका विवाह कर दिया। इनके शरीरकी ऊचाई बारह धनुषकी थी। पिताने इसको राज्य की धुराधारण करने में समर्थ जब देखा

હતી તે લાવણ્ય અને તારૂણ્યથી પરિપૂર્ણ તથા શીલરૂપ અલંકારોથી અલંકૃત હતી ગુણાવળીરૂપ શાળીધાન્યની ઉત્પત્તિ માટે તે વપ્રક્ષેત્ર જેવી હતી તે એક સમય રાત્રીના વખતે પોતાના રાજભવનમા કોમળ એવી શૈયા ઉપર સૂતેલી હતી ત્યારે તેણે રાત્રીના પાછલા પહોરમા ચૌદ સ્વપ્ના જોયા સ્વપ્નોનુ યથાવત વૃત્તાત પોતાના પતિને નિવેદન કરીને પછીથી તેમની પાસેથી જાણવા મળ્યુ કે, 'મને મહાપ્રતાપી પુત્ર થશે" આ સાભળીને રાણીને અપાર હર્ષ થયો. તેણે પોતાના ગર્ભની રક્ષા તેમજ પુષ્ટી કરવામા જરા પણ કચાસ ન રાખી જ્યારે ગર્ભ પૂરા નવ માસ અને સાડાસાત દિવસનો પૂર્ણ અને પરિપકવ થઈ ચૂકયો ત્યારે યોગ્ય સમયે વપ્રાએ એક પુત્રને જન્મ આપ્યો માતા પિતાને તેના જન્મથી હર્ષ થયો તેઓએ તેનુ નામ જય રાખ્યુ જય જ્યારે યુવાન થયો ત્યારે રાજકન્યાઓની સાથે એમનો વિવાહ કરી આપ્યો તેના શરીરની ઉચાઇ બાર ધનુષ્યની હતી પિતાએ રાજ્યધુરાનુ વહન કરવાની તેનામા સંપૂર્ણ શક્તિ જાણી ત્યારે તેઓએ

राज्यस्य जयस्य चक्ररत्नादीनिचतुर्दशरत्नानि समुत्पन्नानि। ततश्चक्ररत्न प्रदर्शितपथेन षट्खण्ड भरतक्षेत्र प्रसाध्य जयश्चक्रवर्तित्व समासवान्। चक्रवर्ति-श्रिय समुपभुजानस्य चक्रवर्तिनो जयस्य बहूनि वर्षाणि व्यतीतानि। इत्थ चक्रवर्तिश्रिय समुपभुञ्जानो जयचक्रवर्ति कदाचिद् विलोक्य रमणीय सध्याराग मल्पेनैवकालेन विलीन ससारोद्विग्नो भोगेभ्यो विरक्तमानस एव चिन्ततवान्।

(मालिनी छद)

" सुचिरमपि उषित्वा, स्यात्प्रियैर्विप्रयोगः,
सुचिरमपि चरित्वा नास्ति भोगेषु तृप्तिः।
सुचिरमपि सुपुष्ट याति नाश शरीर,
सुचिरमपि विचिन्त्यो धर्म एक' सहायः ॥ इति ॥

तब उन्होंने इनको राज्य में स्थापित कर आप स्वयं संभूति विजयाचार्य के पास मुनिदीक्षा लेकर आत्मकल्याण करने की सिद्धि में लग गये। जय के शस्त्रागार मे राज्यप्राप्ति से बाद चौदह रत्नोंकी उत्पत्ति हुई। चक्ररत्न द्वारा प्रदर्शित मार्गके अनुसार चलकर जय समस्त भरत-क्षेत्रको अपने अधीन करके चक्रवर्ती के पद पर विराजमान हो गये। चक्रवर्ती पदकी विभूति भोगते २ जयके जब अनेक वर्ष निकल चुके तब एक समय रमणीय सध्याराग को कुछ क्षणबाद विलीन होते देखकर उनके चित्त में वैराग्य भाव जागृत हो गया। उन्होंने विचारा—

"सुचिरमपि उषित्वा स्वात्प्रियैर्विप्रयोगः,
सुचिरमपि चरित्वा नास्ति भोगेषु तृप्तिः।
सुचिरमपि सुपुष्ट याति नाश शरीरम्,
सुचिरमपि विचिन्त्यो धर्म एकः सहायः" ॥१॥ इति।

તેને રાજ્યગાદી સુપ્રત કરીને પોતે સભૂતિ વિજયાચાર્યની પાસેથી દીક્ષા લીધી અને આત્મકલ્યાણ કરવાની સિદ્ધિમા લાગી ગયા જયના શસ્ત્રાગારમા રાજ્યની પ્રાપ્તિ પછી ચૌદ રત્નોની ઉત્પત્તિ થઇ ચક્રરત્ન દ્વારા પ્રદર્શિત માર્ગ અનુસાર ચાલીને જયે સઘળા ભરતક્ષેત્રને પોતાના આધિન કરીને ચક્રવર્તીના પદ ઉપર બીરાજમાન થયા ચક્રવર્તી પદની વિભૂતિ ભોગવતા ભોગવતા જયના જ્યારે અનેક વર્ષ વીતિ ચૂક્યા ત્યાર એક સમયે રમણીય સધ્યાકાળના થોડા સમય પછી સધ્યાના એ રગોને વિલીન થયેલા જોતા તેના ચિત્તમા વૈરાગ્યભાવ જાગૃત થઇ ગયો તેમણે વિચાર્યું—

"सुचिर मपि. उषित्वा, स्यात्प्रियैर्विप्रयोगः,
सुचिर मपि चरित्वा, नास्ति भोगेषु तृप्ति ।
सुचिर मपि सुपुष्टं, याति नाश शरीरम्,
सुचिर मपि विचिन्त्यो, धर्म एक, सहायः" ॥१॥

एवं विचार्य वैराग्यमापन्नो जयचक्रवर्ती विजय पुत्रं राज्ये संस्थाप्य विजयभद्राचार्य समीपे प्रव्रज्यां गृहीत्वाऽत्यन्तमुग्रं तपस्तप्तवान्। एवमुग्रतपोऽग्निनैः कर्मेन्धनान् भस्मीकृत्य केवलज्ञानं सम्प्राप्य जयमुनिर्मोक्षं प्राप्तवान्। जयमुनेः सर्वमायुस्त्रिसहस्रवर्षपरिमितमासीत्।

॥ इति जयचक्रवर्तीकथा ॥

द्वादशसु चक्रवर्त्तिषु सुभूमब्रह्मदत्तौ सप्तमनरके गतौ, मघवसनत्कुमारौ सनत्कुमारे तृतीयदेवलोके गतौ, शेषा अष्टौ मोक्षं गताः, उक्तञ्च—

"अट्ठेव गया मुक्खं सुहुमो बंभो य सत्तमिं पुढविं।
मघव सणंकुमारो, सणकुमारं गया कप्पं" ॥१॥ इति।

तथा—

मूलम्—दसण्णरज्जं मुइयं, चइत्ताणं मुंणी चरे।
दसण्णभद्दो णिक्खंतो, सक्खं सक्केणं चोइओ ॥४४॥

छाया—दशार्णराज्यं मुदितं, त्यक्त्वा खलु मुनि श्चरत्।
दशार्णभद्रो निष्क्रान्तः, साक्षात् शक्रेण नोदितः ॥४४॥

इस प्रकार विचार कर संसार शरीर एवं भोगों से वैराग्य को प्राप्त हुए जयचक्रवर्तीने पुत्रको राज्य पर स्थापित करके विजयभद्राचार्य के समीप दीक्षा धारण करली और खूब कठिन से कठिन तपस्या का आराधन करना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार उग्र तपस्यारूपी अग्नि द्वारा कालान्तर में घातिया कर्मरूपी ईंधन को भस्मसात् करके उन्होंने केवलज्ञानकी प्राप्ति कर पश्चात् अवशिष्ट अघातिक कर्मों को भी नष्ट कर मुक्ति प्राप्त करली। इनकी समस्त आयुका प्रमाण तीन हजार वर्ष का था ॥४३॥

આ પ્રકારનો વિચાર કરી, સંસાર, શરીર, અને ભોગોથી વૈરાગ્ય આવી જતા ચક્રવર્તીએ પુત્રને રાજગાદી ઉપર સ્થાપિત કરીને વિજયભદ્રાચાર્યની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરી અને ખૂબજ કઠીન એવા તપોનું આરાધન કરવાનો પ્રારંભ કર્યો આ પ્રકારથી ઉગ્ર તપસ્યારૂપ અગ્નિથી કાલાન્તરમાં ઘાતીયા કર્મરૂપી ઇંધણને ભસ્મિભૂત બનાવીને તેઓએ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરીને પછીથી બાકી રહેલા અઘાતીયા કર્મોનો પણ નાશ કરીને મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી તેમના સઘળા આયુષ્યનું પ્રમાણ ત્રણ હજાર વર્ષનું હતું ॥ ૪૩ ॥

टीका—'दसण्णरज्ज' इत्यादि ।

साक्षात् शक्रेण नोदित =अधिकसम्पदर्शनेन धर्मं प्रति प्रेरितो दशार्णभद्रो नाम राजा मुदित=समृद्धिमत् दशार्णराज्य=दशार्णदेशराज्य त्यक्त्वा निष्क्रान्त = प्रव्रज्या गृहीतवान् । ततो मुनिः स दशार्णभद्रोऽप्रतिबद्धतयाऽचरत्=भूमौ व्यहरत् । 'ण' इति वाक्यालङ्कारे ॥४४॥

अथ श्री दशार्णभद्रकथा—

आसीद् दशार्णदेशे दशार्णपुरसंज्ञके पुरे भद्राणाम् (कल्याणानाम्) आकरो दशार्णभद्रो नाम राजा । स राजा मानसे राजहंस इव सज्जनमानसे वसतिस्म । स राजा जिनोक्तधर्मपरायण आसीत् । तस्य रूपयौवनलावण्यसम्पन्ना

तथा 'दसण्णरज्ज' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(सक्खं सक्केण चोइओ-साक्षात् शक्रेण नोदितः) अधिक संपत्ति के दिखाने से धर्मके प्रति प्रेरित किये गये (दसण्णभद्दो-दशार्णभद्रः) दशार्णभद्र नामके राजा (मुइयं दसण्णरज्जं चइत्ता-मुदितं दशार्णराज्यं त्यक्त्वा) समृद्धिशाली दशार्णदेश के राज्य का परित्याग करके (णिक्खतो-निष्क्रान्तः) दीक्षा अंगीकार करते हुए (मुणी चरे-मुनिःअचरत्) मुनि अवस्था मे रहकर इस पृथिवीमंडलके अप्रतिबद्ध विहारी बने ।

इनकी कथा इस प्रकार से है—

दशार्ण देशमें दशार्णपुर नामका एकपुर था । इसका शासक कल्याणों का आश्रयभूत दशार्णभद्र राजा था । मानसरोवरमे हंसोकी तरह वे राजा सज्जनोंके मानसमे निवास करते थे । जिनधर्मकी आराधना करने में इनका

તથા—"दसण्णरज्ज" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सक्खं सक्केण चोइओ-साक्षात् शक्रेण नोदित અધિક સંપત્તિના બતાવવાથી ધર્મ તરફ પ્રેરિત કરવામા આવેલા दसण्णभद्दो-दशार्णभद्रः દશાર્ણભદ્ર નામના રાજાએ मुइयं दसण्णरज्जं चइत्ता-मुदितं दशार्णराज्यं त्यक्त्वा સમૃદ્ધિશાળી એવા દશાર્ણ દેશના રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને णिक्खतो-निष्क्रान्तः દીક્ષા અંગિકાર કરી અને मुणी चरे-मुनिः अचरत् મુનિ અવસ્થામા રહીને આ પૃથ્વી મંડળમા અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બન્યા

એમની કથા આ પ્રકારની છે—

દશાર્ણદેશમા દશાર્ણપુર નામનુ એક પુર હતુ એના શાસક કલ્યાણોના આશ્રયભૂત દશાર્ણભદ્ર રાજા હતા માનસરોવરમા હંસોની માફક તે રાજા સજ્જનોના માનસમા નિવાસ કરતા હતા જીનધર્મની આરાધના કરવામા એમનુ અંત

पञ्चशतमितास्तस्य राज्य आसन्। समुद्रस्य व्याप्तसमस्ताऽपि तस्य सेना चारित्र धारिणी मर्यादां न लङ्घितवती। स राजाऽन्यान्नृपान् जेतुं शक्तोऽपि नाजयत्।

तस्मिन्नेव समये विराटदेशे धनधान्यसम्भृत धान्यपुरं नाम नगरमासीत्। तत्रासीद् धनधान्यसमृद्धस्य धनमित्रनाम्नो ग्राममुख्यस्य पुत्रो वसुमित्र नामा। तस्यासीद् रूपलावण्यसम्पन्ना कुड्मला नाम कुल्टा भार्या। सा स्वामिनि बहिर्गते केनाऽपि नगररक्षकेण सह नित्यं रमते स्म। अन्यदा तस्मिन् नगरे नटाः समागताः। ते हि नाटकं कृतवन्तः। तेषु एकस्तरुणो नटो

अन्तःकरण अधिक आसक्त रहा करता था। इनके पाचसौं रानिया थीं। रूप, यौवन एव लावण्य से सपन्न थी। समुद्र के जलकी तरह उनकी सेना यद्यपि समस्त भूमण्डल को व्याप्त करने में समर्थ थी तौ भी मर्यादा का वह कभी भी उल्लघन नहीं करती थी। यद्यपि राजा में इतनी अधिक सामर्थ्य थी कि वे अन्य राजाओंको आक्रात कर अपने आधीन बना सकते थे-परतु फिर भी उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया।

इसी समय में विराट देश मे धनधान्य से सभृत धान्यपुर नामका एक नगर था। वहा जन, धन, धान्य से परिपूर्ण धनमित्र नामके एक ग्राम के मुखिया का वसुमित्र नामका पुत्र था। इसकी भार्याका नाम कुड्मला था। यह रूपलावण्य से भरपूर थी। परतु चारित्र से बिलकुल पतित-कुलटा थी जब इसका पति वसुमित्र घर से बाहर किसी गाँवको चला जाता तो यहा के किसी नगर रक्षक में अनुरक्त होती थी। किसी एक समय वहा बहुत से नटलोग आये हुए थे। उन्होने वहा नाटक किया। उसमे एक तरुण नट स्त्रीका वेष लेकर

કરણુ ઘણુ આસક્ત રહ્યા કરતુ હતુ તેમને પાચસો રાણીઓ હતી રૂપ, યૌવન અને લાવણ્યવાળી હતી સમુદ્રના જળની માફક તેની સેના સમસ્ત ભૂમડળને વ્યાપ્ત કરી દેવામા સમર્થ હતી તો પણુ તે કદી મર્યાદાનુ ઉલઘન કરતી ન હતી જો કે, રાજામા એવી અધિક સામર્થ્ય શક્તિ હતી, કે બીજા રાજાઓ ઉપર આક્રમણુ કરીને તેમને પોતાના આધિન બનાવી શકે તો પણુ તેમણે એવુ કદી પણુ કરેલ ન હતુ

આ સમયે વિરાટ દેશમા ધન ધાન્યથી પરિપૂર્ણ ધનમિત્ર નામના ગામડાના એક મુખીનો વસુમિત્ર નામનો પુત્ર હતો તેની પત્નિનુ નામ કુડ્મલા હતુ, તે રૂપલાવણ્યથી ભરપૂર હતી પરતુ ચારિત્રમા તદ્દન ઉતરતી કોટીની હતી જ્યારે તેનો પતિ વસુમિત્ર ઘેરથી બહાર કોઇ ગામ જતો ત્યારે તે કોઈ નગર રક્ષકમા અનુરક્ત રહેતી હતી કોઈ એક સમયે ત્યા ઘણા નટલોક આવ્યા હતા તેઓએ ત્યા નાટક કર્યું તેની અદર એક તરૂણ નટ સ્ત્રીનો વેશ લઈને નાચ્યા તેને જોઈને

स्य स्त्रीवेषं कृत्वा नृत्यति स्म। अयं पुरुष इति विज्ञाय सा कुलटा तस्मिन्ननुरक्ता। कुलटाया हि परनरस्येव न कोऽपि प्रतिबन्धो भवति। तस्मिन्नत्यन्तानुरक्ता सा कुलटा तं नटं स्वगृहे समानीतवती। तदर्थं पायसपाकं कृतवती। यावत्स नटो भोक्तुं प्रवर्तते तावद् नगररक्षकः (कोटवाल) समागत्य 'द्वारमुद्घाटय' इत्युक्तवान्। ततः सा कुलटा व्याकुलिता शनैस्तं नटमुवाच त्वमस्मिंस्तिलकोष्ठागारे गत्वा कोणे तिष्ठ। इत्थं तया प्रोक्तो नटस्तत्र गत्वा कोणे स्थितः। ततस्तया द्वारमुद्घाटितम्। द्वारे उद्घाटिते धूलिधूसरिताङ्गो नगररक्षकोऽन्तरागत्य 'कस्य कृते पायसा पूर्णमिदं स्थालमस्ति' इति तामुवाच। साऽपि मायया-

नाचा था। उसको देखते ही कुड्मला उसपर अनुरक्त हो गई। क्यों कि उसने अनुमान-से यह जान लिया था कि यह स्त्री नहीं है किन्तु स्त्री के वेष मे यह एक तरुण नट है। कुलटाने उसको अपने घर पर बुलाया और उसके लिये खीर का भोजन बनाया। और उसके सामने थाल मे खीर परोसकर रख दी। नट यह खाने की तयारी कर ही रहा था कि इतने मे कोटवालने आकार कहा किवाड खोलो। कोटवाल की आवाज सुनते ही कुड्मला घबडा गई और धीरे से उस नट से कहने लगी-तुम इस तिलके कोष्टागार मे जाकर एक तरफ छिप जाओ। नट शीघ्र ही तिलके कोठागार मे जाकर एक ओर छिप गया। कुड्मलाने इतने मे किवाड खोल दिया। किवाड के खुलते ही नगररक्षक=कोटवाल भीतर आ गया-आते ही उसने वह खीर का परोसा हुआ थाल देखा। देखकर उसने कुड्मला से पूछा यह थाल किसके लिये परोसा हुआ रखा है उसने शीघ्र ही कुटिलता

કુડ્મલા તેના ઉપર આસક્ત થઈ ગઈ કારણ કે, તેણીએ અનુમાનથી એવું જાણી લીધું કે, આ સ્ત્રી નથી પરંતુ સ્ત્રીના વેશમાં તરુણ નટ છે આથી તેણે તેને પોતાના ઘર ઉપર બોલાવ્યો અને તેના માટે ખીરનું ભોજન બનાવ્યું અને તેની સામે થાળીમાં એ ખીર પીરસીને રાખી દીધી નટ આ ખાવાની તયારી કરી રહ્યો હતો. એવામાં કોટવાળે આવીને કહ્યું કે, કમાડ ખોલો કોટવાળનો અવાજ સાંભળીને કુડ્મલા ગભરાઈ ગઈ અને ધીરેથી તે નટને કહેવા લાગી કે, તું તેલના કોઠામાં જઈને એક તરફ છુપાઇ જા નટ તરતજ તેલના કોઠારમાં જઈને એક બાજુ છુપાઇ ગયો કુડ્મલાએ એ પછી કમાડ ખોલ્યું કમાડ ખુલતાં નગરરક્ષક અંદર આવ્યો આવતાં જ તેણે તે ખીરથી પીરસેલા થાળને જોયો આથી તેણે કુડ્મલાને પૂછ્યું કે, આ થાળ કોના માટે પીરસી રાખ્યો છે? એટલે

पञ्चशतसंख्यका राज्य आसन्। वसुन्धरा व्याप्तिसमर्थाऽपि तस्य सेना वारिधेरिव मर्यादां न लङ्घितवती। स राजाऽन्यान्नृपान् जेतुं शक्तोऽपि नारब्धवान्।

तस्मिन्नेव समये विराटदेशे धनधान्यसंभृतं धान्यपुरं नाम नगरमासीत्। तत्रासीद् धनधान्यसमृद्धस्य धनमित्रनाम्नो ग्राममुख्यस्य पुत्रो वसुमित्र नामा। तस्यासीद् रूपलावण्यसम्पन्ना कुड्मला नाम कुल्टा भार्या। सा स्वामिनि बहिर्गते केनाऽपि नगररक्षकेण सह नित्यं रमते स्म। अथैकदा तस्मिन् नगरे नटाः समागताः। ते हि नाटकं कृतवन्त। तेषु एकस्तरुणो नटो

अन्तःकरण अधिक आसक्त रहा करता था। इनके पांचसौ रानियां थीं। रूप, यौवन एवं लावण्य से संपन्न थीं। समुद्र के जलकी तरह उनकी सेना यद्यपि समस्त भूमण्डल को व्याप्त करने में समर्थ थी तो भी मर्यादा का वह कभी भी उल्लंघन नहीं करती थी। यद्यपि राजा में इतनी अधिक सामर्थ्य थी कि वे अन्य राजाओंको आक्रांत कर अपने आधीन बना सकते थे-परंतु फिर भी उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया।

इसी समय में विराट देश मे धनधान्य से संभृत धान्यपुर नामका एक नगर था। वहां जन, धन, धान्य से परिपूर्ण धनमित्र नामके एक ग्राम के मुखिया का वसुमित्र नामका पुत्र था। इसकी भार्याका नाम कुड्मला था। यह रूपलावण्य से भरपूर थी। परंतु चारित्र से बिलकुल पतित-कुलटा थी जब इसका पति वसुमित्र घर से बाहर किसी गांवको चला जाता तो यहा के किसी नगर रक्षक मे अनुरक्त होती थी। किसी एक समय वहां बहुत से नटलोग आये हुए थे। उन्होंने वहां नाटक किया। उसमे एक तरुण नट स्त्रीका वेष लेकर

करणु घणु आसक्त रह्या करतु हतु तेमने पांचसो राणीओ हती रूप, यौवन अने लावण्यवाळी हती समुद्रना जळनी माफक तेनी सेना समस्त भूमंडळने व्याप्त करी देवामा समर्थ हती तो पण ते कदी मर्यादानु उल्लंघन करती न हती जो के, राजामा एवी अधिक सामर्थ्य शक्ति हती, के बीजा राजाओ उपर आक्रमण करीने तेमने पोताना आधिन बनावी शके तो पण तेमणे एवु कदी पण करेल न हतु

आ समये विराट देशमा धन धान्यथी परिपूर्ण धनमित्र नामना गामडाना एक मुखीनो वसुमित्र नामनो पुत्र हतो तेनी पत्नितु नाम कुड्मला हतु, ते रूपलावण्यथी भरपूर हती परन्तु चारित्रमा तद्दन उतरती कोटीनी हती ज्यारे तेनो पति वसुमित्र घेरथी बहार कोइ गाम जतो त्यारे ते कोई नगर रक्षकमा अनुरक्त रहेती हती कोइ एक समये त्या घणा नटलोक आव्या हता तेओए त्या नाटक कर्युं तेनी अंदर एक तरुण नट स्त्रीनो वेश लईने नाच्यो तेने जोईने

त्प्राणनाथस्य ममागमनमभूत्। सोऽब्रवीत्-अये। कार्यवशान्ममान्यत्र गन्तव्य मस्ति अतोऽहमिद पायस भोक्ष्ये। सा प्राह-अद्याष्टमी वर्तते, अस्नात कथ भोक्ष्यसे। स प्राह स्नाताया त्वयि स्नात एवाहम्। साऽब्रवीत्-वय शैवा., स्नानमन्तरेण भोजनमस्माकमनुचितम्। एव तया प्रोक्तोऽपि तत्पतिर्वसुमित्रो बलाद् भोक्तु प्रवृत्त । इतस्तिलकोष्ठागारकोणस्थितोनटोऽपि बुभुक्षितश्चिन्तयति-अह बुभुक्षितोऽस्मि, अतोऽत्रस्थास्तिलानेव भुञ्जे। इति विचिन्त्य तिलान हस्ताभ्या

उसने उत्तर दिया मैं भूखी हो रही हू सो मैंने थाल परोस कर ज्यों ही खानेका विचार किया कि इतने मे आपने दरवाजा खोलने की आवाज दी सो उसको ज्योंका त्यों छोडकर आपके लिये दरवाजा खोलने चली आई, अतः यह यों ही परोसा हुआ रखा है। पत्नी की वात सुनकर वसुमित्र ने कहा कि-प्रिये। मुझे कार्यवश अभी दूसरी जगह जाना अत मैं ही इसको खा लेता हू। सुनते ही उसकुल्टाने कहा-नाथ! आज तो अष्टमी है। आप विना स्नान किये कैसे खावोगे। सुनकर वसुमित्र ने कहाकि मुझे स्नान करनेकी क्या आवश्यकता है? तूने तो स्नान कर लिया है। तूने स्नान कर लिया तो समझले कि मैंने ही स्नान कर लिया है। पतिकी वात सुनकर पश्चात् कुड्मला बोली कि हमलोग शैव हैं। शैवोंको स्नान किये विना भोजन करना उचित नहीं है। इस तरह पत्नी के कहने पर भी वसुमित्र ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया और जबर्दस्ती खाने को बैठ गया।

उधर तिलके कोष्ठागार में एक कोने मे छिपे हुए नटने विचार किया कि "मैं इस समय विशेष बुभुक्षित (भूखा) हू-अत' यहा पर

કે હુ ભૂખી હતી અને થાળ પીરસી ત્યા જમવાનો વિચાર કર્યો ત્યા આપે દરવાજો ખોલવાનો અવાજ દીધો જેથી આને જેમની તેમ છોડી ને આપના માટે દરવાજો ખોલવા ચાલી આવી જેથી આ ખીર પીરસેલી પડી છે પત્નિની વાત સાભળીને વસુમિત્રે કહ્યુ, પ્રિયે! મારે કાર્યવશાત બીજી જગ્યાએ જવાનુ છે જેથી હુ જ તે ખાઈ લઉ છુ આ સાભળીને તે કુડુમાએ કહ્યુ, નાથ! આજ તો અષ્ટમી છે તો સ્નાન કર્યા વગર આપ કેમ ખાશો તે સાભળીને વસુમિત્રે કહ્યુ મારે સ્નાન કરવાની શુ આવશ્યકતા છે? તે સ્નાન તો કર્યું છે તે માની લે કે, મે સ્નાન કર્યું છે પતિની વાત સાભળીને કુડ્મલા પછીથી બોલી કે, આપણે તો શૈવધર્મી છીએ શૈવોએ સ્નાન કર્યા વગર ભોજન કરવુ ઉચિત નથી આ તરફ પત્નિના કહેવા પર વસુમિત્રે જરાય ધ્યાન આપ્યુ નહી અને જબરજસ્તીથી ખાવા બેસી ગયો

બીજી તરફ તેલના કોઠારના એક ખુણામા છુપાયેલા નટે વિચાર કર્યો કે "આ વખતે હુ ખૂબ ભૂખ્યો થયો છુ જેથી અહી ભરેલા તલને ખાઇને મારી ભૂખને

ऽब्रवीत्-बुभुक्षिताऽस्मि, अतो भोक्तुमुपविष्टा तावत्तव भवत्समागमनमभूत्। स प्राह-अयि! तिष्ठ-त्वम्, अहमत्यन्तं बुभुक्षितोऽस्मि। इत्युक्त्वा प्राभरक्षो यावदद् भोक्तुमासने समुपविष्टस्तावत्पतिरागत्य ब्रवीति-प्रिये द्वारमुद्घाटयेति। ततो नगररक्षकस्तामुवाच-सम्प्रत्यहं क्व यामि? तत स कुण्डाऽब्रवीत्-अस्मिंस्तिलकोष्ठागारेऽनाति दूरे गत्वैव तिष्ठ। कोणे न गन्तव्यम् तत्र हि सर्पस्तिष्ठति। सोऽपितिलकोष्ठागारे तथैव स्थित.। ततस्तया द्वारमुद्घाटितम्। सरलाशयस्तस्याः पतिरन्तरागत्य पायसा पूर्णं स्थालं दृष्ट्वाऽब्रवीदिदं पायसस्थालं किमर्थं सभृतम्। सा प्राह-अहमत्यन्तं बुभुक्षिता भोक्तुमुपविष्टाऽऽसम्, ताव

से उत्तर दिया-कि मैं भूखी थी सो खाने को बैठ ही रही थी कि इतने मे आप आ गये-अत.थाल परोसा ही रह गया और आपके लिये किवाड खोलने चली आई। ऐसा सुनकर नगर रक्षकने कहा-तुम पीछे से खा लेना-मैं इस समय अधिक भूखा हो रहा हू-सो तुमसे पहिले मैं ही इसको खा लेता हू। ऐसा कहकर जब खाने को बैठ रहा था कि इतने में उसका पति वसुमित्र ने आकर अवाजदी कि किवाड खोलो। उसके पति का आगमन जानकर नगररक्षकने कहा कि कहो अब मैं कहा जाऊ-सुनते ही कुडमला ने उससे कहा कि आप ईस तिलके कोष्ठागार मे दूर न जाकर पास ही एक तरफ छिप जाओ, कोने मे मत छिपना। वहा सर्प रहता है। जाते ही कुडमला ने अपने पतिके लिये किवाड खोल दिये। पति भीतर आ गया। भोले भाले उस विचारेने खीर के इस परोसे हुए थाल को ज्यों ही देखा तो पूछने लगा कि खीर का थाल किसके लिये परोसा हुआ है? तब

तरतज कुटीलताथी જવાબ આપ્યો કે, હુ ભૂખી હતી જેથી ખાવા માટે બેસતી હતી ત્યા આપ આવ્યા જેથી થાળ પીરસેલો રહેલ છે અને મારે આપના માટે કમાડ ખોલવા આવવુ પડ્યુ આ સાભળીને નગરરક્ષકે કહ્યુ તુ પાછળથી ખાઈ લેજે આ વખતે હુ ખૂબ ભૂખ્યો થયો છુ જેથી તારી પહેલા હુ ખાઇ લઉ છુ આમ કહીને જ્યારે તે ખાવા બેસવાની તૈયારી કરતો હતો તેવ મા તેનો પતિ વસુદેવ આવ્યો અને અવાજ દીધો કે, કમાડ ખોલો તેના પતિનુ અચાનક આગમન જાણીને નગરરક્ષકે કહ્યું કે કહો હવે કયા જાઉ? આ સાભળીને કુડમાલાએ કહ્યું કે આપ તેલના કોઠારમા દૂર ન જતા પાસે જ એક તરફ છુપાઈ જાવ ખૂણામા છુપા તા નહી કારણ કે, ત્યા સર્પ રહે છે ત્યારપછી જઇને કુડમલાએ પોતાના પતિને માટે કમાડ ખોલ્યુ પતિ અદર આવ્યો, ભોળા એવા તે બીચારાએ ખીરથી પીરસેલા થાળને જોઇને કહ્યુ કે, ખીરનો થાળ કોના માટે પીરસ્યો છે? ત્યારે તેણે જવાબ દીધો

त्प्राणनाथस्य ममागमनमभूत्। सोऽब्रवीत्-अये। कार्यवशान्ममान्यत्र गन्तव्य मस्ति अतोऽहमिदं पायसं भोक्ष्ये। सा प्राह-अद्याष्टमी वर्तते, अस्नातः कथं भोक्ष्यसे। स प्राह स्नातायां त्वयि स्नात एवाहम्। साऽब्रवीत्-वयं शैवाः, स्नानमन्तरेण भोजनमस्माकमनुचितम्। एवं तया प्रोक्तोऽपि तत्पतिर्वसुमित्रो बलाद् भोक्तुं प्रवृत्तः। इतस्तिलकोष्ठागारकोणस्थितोनटोऽपि बुभुक्षितश्चिन्तयति-अहं बुभुक्षितोऽस्मि, अतोऽत्रस्थास्तिलानेव भुञ्जे। इति विचिन्त्य तिलान् हस्ताभ्यां

उसने उत्तर दिया मैं भूखी हो रही हूं सो मैंने थाल परोस कर ज्यों ही खानेका विचार किया कि इतने मे आपने दरवाजा खोलने की आवाज दी सो उसको ज्योंका त्यों छोडकर आपके लिये दरवाजा खोलने चली आई, अतः यह यों ही परोसा हुआ रखा है। पत्नी की बात सुनकर वसुमित्र ने कहा कि-प्रिये। मुझे कार्यवश अभी दूसरी जगह जाना अतः मैं ही इसको खा लेता हूं। सुनते ही उसकुलटाने कहा-नाथ! आज तो अष्टमी है। आप विना स्नान किये कैसे खावोगे। सुनकर वसुमित्र ने कहाकि मुझे स्नान करनेकी क्या आवश्यकता है? तूने तो स्नान कर लिया है। तूने स्नान कर लिया तो समझले कि मैंने ही स्नान कर लिया है। पतिकी बात सुनकर पश्चात् कुड्मला बोली कि हमलोग शैव हैं। शैवोंको स्नान किये विना भोजन करना उचित नहीं है। इस तरह पत्नी के कहने पर भी वसुमित्र ने कुछ भी ध्यान नहीं दिया और जबर्दस्ती खाने को बैठ गया।

उधर तिलके कोष्ठागार मे एक कोने मे छिपे हुए नटने विचार किया कि "मैं इस समय विशेष बुभुक्षित (भूखा) हू-अतः यहा पर

કે હુ ભૂખી હતી અને થાળ પીરસી જયા જમવાનો વિચાર કર્યો ત્યા આપે દરવાજો ખોલવાનો અવાજ દીધો જેથી આને જેમની તેમ છોડી ને આપના માટે દરવાજો ખોલવા ચાલી આવી જેથી આ ખીર પીરસેલી પડી છે પત્નિની વાત સાભળીને વસુમિત્રે કહ્યુ, પ્રિયે! મારે કાર્યવશાત બીજી જગ્યાએ જવાનુ છે જેથી હુજ તે ખાઈ લઉ છુ આ સાભળીને તે કુડ્મલાએ કહ્યુ, નાથ! આજ તો અષ્ટમી છે તો સ્નાન કર્યા વગર આપ કેમ ખાશો તે સાભળીને વસુમિત્રે કહ્યુ મારે સ્નાન કરવાની શુ આવશ્યકતા છે? તે સ્નાન તો કર્યું છે તે માની લે કે, મે સ્નાન કર્યું છે પતિની વાત સાભળીને કુડ્મલા પછીથી બોલી કે, આપણે તો શૈવધર્મી છીએ શૈવોએ સ્નાન કર્યા વગર ભોજન કરવુ ઉચિત નથી આ તરફ પત્નિના કહેવા પર વસુમિત્રે જરાય ધ્યાન આપ્યુ નહી અને જબરજસ્તીથી ખાવા બેસી ગયો

બીજી તરફ તેલના કોઠારના એક ખુણામા છુપાયેલા નટે વિચાર કર્યો કે "આ વખતે હુ ખૂબ ભૂખ્યો થયો છુ જેથી અહી ભરેલા તલને ખાઇને મારી ભૂખને

ऽब्रवीत्-बुभुक्षिताऽस्मि, अतो भोक्तुमुपविष्टा तावत्तव भवत्समागमनमभूत्। स प्राह-अयि! तिष्ठ-त्वम्, अहमत्यन्त बुभुक्षितोऽस्मि। इत्युक्त्वा प्रागसौ ग्लाधारद् भोक्तुमासने समुपविष्टस्तावत्तत्पतिरागत्य ब्रवीति-मियं द्वारमुद्घाटयेति। ततो नगररक्षकस्तामुवाच-सम्प्रत्यह क्व यामि? ततः स कुण्डाऽब्रवीत्-अस्मिन्तिलकोष्ठागारेऽनाति दूरे गत्वैव तिष्ठ। कोणे न गन्तव्यम् तत्र हि सर्पस्तिष्ठति। सोऽपितिलकाष्ठागारे तथैव स्थितः। ततस्तया द्वारमुद्घाटितम्। सत्त्वाशयस्तस्याः पतिरन्तरागत्य पायसा पूर्णं स्थालं दृष्ट्वाऽब्रवीदिद पायस स्थाले किमर्थं सभृतम्। सा प्राह-अहमत्यन्त बुभुक्षिता भोक्तुमुपविष्टाऽऽसम्, ताव

से उत्तर दिया-कि मैं भूखी थी सो खाने को बैठ ही रही थी कि इतने मे आप आ गये-अतः थाल परोसा ही रह गया और आपके लिये किवाड खोलने चली आई। ऐसा सुनकर नगर रक्षकने कहा-तुम पीछे से खा लेना-मैं इस समय अधिक भूखा हो रहा हू-सो तुमसे पहिले मै ही इसको खा लेता हू। ऐसा कहकर जब खाने को बैठ रहा था कि इतने में उसका पति वसुमित्र ने आकर अवाजदी कि किवाड खोलो। उसके पति का आगमन जानकर नगररक्षकने कहा कि कहो अव मै कहा जाऊ-सुनते ही कुडमला ने उससे कहा कि आप ईस तिलके कोष्ठागार मे दूर न जाकर पास ही एक तरफ छिप जाओ, कोने में मत छिपना। वहा सर्प रहता है। जाते ही कुड्मला ने अपने पतिके लिये किवाड खोल दिये। पति भीतर आ गया। भोले भाले उस विचारेने खीर के इस परोसे हुए थाल को ज्यों ही देखा तो पूछने लगा कि खीर का थाल किसके लिये परोसा हुआ है? तब

તરતજ કુટીલનાથી જવાબ આપ્યો કે, હુ ભૂખી હતી જેથી ખાવા માટે બેસતી હતી ત્યા આપ આવ્યા જેથી થાળ પીરસેલો રહેલ છે અને મારે આપના માટે કમાડ ખોલવા આવવુ પડ્યુ આ સાભળીને નગરરક્ષકે કહ્યુ તુ પાછળથી ખાઈ લેજે આ વખતે હુ ખૂબ ભૂખ્યો થયો છુ જેથી તારી પહેલા હુ ખાઇ લઉ છુ આમ કહીને જ્યારે તે ખાવા બેસવાની તૈયારી કરતો હતો તેવ મા તેનો પતિ વસુદેવ આવ્યો અને અવાજ દીધો કે, કમાડ ખોલો તેના પતિનુ અચાનક આગમન જાણીને નગરરક્ષકે કહ્યું કે કહો હવે કયા જાઉ? આ સાભળીને કુડ્માલાએ કહ્યુ કે આપ તેલના કોઠારમા દૂર ન જતા પાસે જ એક તરફ છુપાઈ જાવ ખૂણામા છુપાતા નહી કારણ કે, ત્યા સર્પ રહે છે ત્યારપછી જઈને કુડ્મલાએ પોતાના પતિને માટે કમાડ ખોલ્યુ પતિ અદર આવ્યો, ભોળા એવા તે બીચારાએ ખીરથી પીરસેલા થાળને જોઈને કહ્યુ કે, ખીરનો થાળ કોના માટે પીરસ્યો છે? ત્યારે તેણે એ જવાબ દીધો

रुष्टौ गृहाद विनिष्क्रान्तौ। तच्छ्रुत्वा सरलमति स नितरामनुनय्य पत्नीं पृष्टवान्। एतौ कथं पुनर्मम गृहे समागमिष्यतः? तदा सा कुल्टा 'यद्ययं परदेशं गच्छेत्तदाऽहं स्वेच्छया वर्तिष्ये। इति विचार्य ध्यानं कुर्वन्तीव प्राह—यदि स्वव्यवसायेन प्रचुरं धनमर्जयित्वा पार्वतीशङ्करौ पूजयेस्तदा तौ स्वगृहे पुनरपि निवसिष्यतः। पत्न्या वचनं यथार्थं मत्वा स वित्तमुपार्जयितुं दशार्णदेशे गतः। तत्र गत्वा स कस्यापि क्षेत्रे कार्यं कुर्वन् दश गद्याणकान स्वर्णमुपार्जितवान्। तद्धनमल्पं मन्यमानः स यद्यपि परितुष्टो न जातः, तथापि गृहगमनोत्कण्ठया गृहं प्रति प्रचलितः। स याह्नं कस्यापि वृक्षस्याधस्ताच्छायायां विश्रामं कर्तुं

ठहरा लिया था सो आज आपने विना स्नान के जो भोजन कर लिया है उससे ये रुष्ट होकर इस घर से भाग गये हैं। इस बातको सुनकर पश्चात्ताप करके उस भोलेभाले वसुमित्रने कहा—प्रिये! अब ये पुनःअपने घर मे वापिस कैसे आवेंगे?। पत्नी ने यह विचारकर कि "यदि यह परदेश चला जावेगा तो मै आनद के साथ मनमानी करूंगी" पति से कहा यदि तुम व्यवसाय से प्रचुर धन कमाकर पार्वती शकर की पूजा करो तो हां ये दोनो पुनः अपने घरमे रहने के लिये वापिस आसकते है? पत्नी की ऐसी बात सुनकर वसुमित्र दशार्ण देश मे जाकर किसी के क्षेत्र मे कार्य करने लग गया। उससे उसने दश गद्याणक प्रमाण सुवर्ण उपार्जित किया—यद्यपि यह धन बहुत ही कम था, इससे उसको सतोप नहीं हुआ तो भी उसको घर पर पहुँचने की उत्कठा ने आकुलित कर दिया, इससे वह अपने घरकी तरफ चल पडा। मध्याह्नकाल मे जब यह किसी वृक्ष की छाया मे

સ્નાન કર્યા વગર ભોજન કર્યું તેથી ખીજાઈને આપણે ત્યાથી ચાલી ગયેલ છે આ વાત સાભળીને પશ્ચાત્તાપ કરતા તે ભોળા વસુમિત્રે કહ્યુ, પ્રિયે! હવે તે ફરીથી આપણા ઘરમા કેમ પાછા આવે? પત્નિએ એવો વિચાર કર્યો કે જો ' આ પરદેશ ચાલ્યો જાય તો હુ આનદપૂર્વક મન માન્યુ કરૂ " આવુ વિચારીને પતિને કહ્યુ કે, તમે ધધામાથી ખૂબ ધન કમાઈને શકર પાર્વતીની પૂજા કરો તો એ બન્ને ફરીથી આપણા ઘરમા રહેવા માટે આવે પત્નિની આવી વાત સાભળીને વસુમિત્ર દશાર્ણ દેશમા જઈને કોઈ એક ક્ષેત્રમા ધધો કરવા લાગી ગયો તેમાથી તેણે દશ ગદિયાણા પ્રમાણ સોનુ પેદા કર્યું જો કે તે ધન ઘણુજ થોડુ હતુ આથી તેને સતોષ ન થયો તો પણ તેને ઘેર પહોચવાની ભારે ઉત્કઠાથી વ્યાકુળ બનાવી દીધો આથી તે પોતાના ઘરના તરફ નીકળી પડ્યો મધ્યાન્હ કાળમા જ્યારે તે કોઈ ઝાડની છાયામા વિશ્રામ

सघृत्य कृत्कृत्य च भक्तुमारब्ध। तत्कृत फूत्कार श्रुत्वा ग्रामरक्षकश्चिन्तितवान कोणे फणी फूत्कार कुरुते, अतोऽशनासक्ते गृहपतौ मध्यमस्मया निर्गमिष्यामि । इति विचार्य भोजनासक्ते गृहपतौ नगररक्षकस्तिलकोष्ठागारात् पलायितः। तदनु नटोऽपि 'समयोऽयं पलायनस्य' इति विचार्य पलायित. । गृहपतिः स्त्रीपुरुषौ निर्यान्तौ वीक्ष्य पत्नीं पृष्टवान्—कावेतौ गच्छत ? तत. सा कुट्मला पतिं प्रोक्तवती—निरन्तरसेवया मद्गृहे समागतौ पार्वतीशङ्करौ । त्वयाऽद्यनातेन मुक्तम् । अत एतौ

जो तिल भरे हुए रखे हैं उन्हे ही क्यो न खाकर अपनी भूख शान्त करूँ" ऐसा विचार कर उसने उन तिलोंको मसल २ कर फूक फूक २ कर खाना प्रारम्भ कर दिया। उसकी इस फुंकारको सुनकर ग्राम रक्षक -कोटवालने विचार किया-कुड्मलाने जो कोने में सर्पके रहनेकि बात कही है वह बिलकुल सत्य है-क्यों कि कोने में सर्पका फूत्कार सुनाई दे रहा है कहीं यह निकलकर जो मुझे काट खावेगा तो मैं अकालमें ही मर जाऊगा-अत:जब घर का मालिक खाने में तल्लीन हो रहा है तो ऐसी स्थिति मे मुझे छिपकर यहा से निकल जाने मे ही फायदा है। तो ऐसा विचार करके वह कोटवाल उसतिल के कोष्ठागार से छिपकर भाग गया। नटने भी "यह समय-भागने का है" ऐसा ही विचार किया। सो वह भी छुपकर यहा से भाग गया। पतिने जब स्त्री पुरुषोंको इस तरह घर से बाहिर निकलते हुए देखा तो उसने कुड्मला से पूछा ये दोनो घर से कौन निकले हैं। तब कुड्मलाने कहा नाथ! मैंने निरन्तर सेवा करने से घर मे पार्वती और शकर को

શા માટે શાન્ત ન કરૂં" આવો વિચાર કરીને તેણે તલને મસળીને તેમજ ફુંકીને ખાવાનો પ્રારંભ કર્યો તેનો આ ફુંકાર સાંભળીને ગ્રામરક્ષકે વિચાર કર્યો કે, કુડ્મલાએ ખૂણામાં સર્પ હોવાની જે વાત કરેલ હતી તે ખરેખર સત્ય જ છે કારણ કે ખૂણામાંથી સર્પનો ફુંકાર સંભળાઈ રહ્યો છે કદાચ તે નીકળીને જો મને કરડશે તો મારૂં અકાળ મરણ થશે જેથી જ્યારે ઘરનો માલીક ખાવામાં તલ્લીન થઈ ગયો છે એવી સ્થિતિમાં છુપાઈને અહીંથી નીકળી જવામાં હરકત જેવું નથી આવો વિચાર કરીને તે નગરરક્ષક તે તેલના કોઠારમાંથી છુપાઈને નાસી છુટયો. નટે પણ "આ સમય ભાગવાનો છે" એવો વિચાર કર્યો જેથી તે પણ છુપાઈને ભાગી ગયો. વટ્ટમિત્રે જ્યારે સ્ત્રી પુરૂષને આ પ્રમાણે ઘરમાંથી બહાર નીકળતા જોયા તો તેણે કુડ્મલાને પૂછયું કે, ઘરમાંથી આ બે કોણ નીકળ્યા ? ત્યારે કુડ્મલાએ કહ્યું, નાથ! મેં નિરંતર સેવા કરવાને માટે ઘરમાં શંકર પાર્વતીને રોકી લીધા હતા પરંતુ આજે આપે

रुष्टौ गृहाद् विनिष्क्रान्तौ। तच्छ्रुत्वा सरलमतिः स नितरामनुतप्य पत्नीं पृष्टवान्। एतौ कथं पुनर्मम गृहे समागमिष्यतः ? तदा सा कुल्टा 'यद्ययं परदेशं गच्छेत्तदाऽहं स्वेच्छया वर्तिष्ये। इति विचार्य ध्यानं कुर्वन्तीव माह-यदि स्वव्यवसायेन प्रचुरं धनमर्जयित्वा पार्वतीशङ्करौ पूजयेस्तदा तौ स्वगृहे पुनरपि निवत्स्यतः। पत्न्या वचनं यथार्थं मत्वा स वित्तमुपार्जयितुं दशार्णदेशे गतः। तत्र गत्वा स कस्यापि क्षेत्रे कार्यं कुर्वन् दश गद्याणकान् स्वर्णमुपार्जितवान्। तद्धनमल्पं मन्यमानः स यद्यपि परितुष्टो न जातः, तथापि गृहगमनोत्कण्ठया गृहं प्रति प्रचलितः। स मध्याह्ने कस्यापि वृक्षस्याधस्ताच्छायायां विश्रामं कर्तुं

ठहरा लिया था सो आज आपने विना स्नान के जो भोजन कर लिया है उससे ये रुष्ट होकर इस घर से भाग गये हैं। इस बातको सुनकर पश्चात्ताप करके उस भोलेभाले वसुमित्रने कहा-प्रिये ! अब ये पुनःअपने घर मे वापिस कैसे आवेंगे ? । पत्नी ने यह विचारकर कि "यदि यह परदेश चला जावेगा तो मै आनद के साथ मनमानी करूंगी" पति से कहा यदि तुम व्यवसाय से प्रचुर धन कमाकर पार्वती शकर की पूजा करो तो हां ये दोनो पुनः अपने घरमे रहने के लिये वापिस आसकते है? पत्नी की ऐसी बात सुनकर वसुमित्र दशार्ण देश मे जाकर किसी के क्षेत्र मे कार्य करने लग गया। उससे उसने दश गद्याणक प्रमाण सुवर्ण उपार्जित किया-यद्यपि यह धन बहुत ही कम था, इससे उसको सतोष नहीं हुआ तो भी उसको घर पर पहुँचने की उत्कठा ने आकुलित कर दिया, इससे वह अपने घरकी तरफ चल पडा। मध्याह्नकाल मे जब यह किसी वृक्ष की छाया मे

स्नान कर्या वगर भोजन कर्युं तेथी खीजाईने आपणे त्याथी चाली गयेल छे आ वात सांभळीने पश्चात्ताप करता ते भोळा वसुमित्रे कह्यु, प्रिये ! हवे ते फरीथी आपणा घरमा केम पाछा आवे? पत्निए एवो विचार कर्यो के जो 'आ परदेश चाल्यो जाय तो हु आनंदपूर्वक मन मान्यु करु " आवु विचारीने पतिने कह्यु के, तमे धधामाथी खूब धन कमाईने शकर पार्वतीनी पूजा करो तो ए बन्ने फरीथी आपणा घरमा रहेवा माटे आवे पत्निनी आवी वात सांभळीने वसुमित्र दशार्ण देशमा जईने कोई एक क्षेत्रमा धधो करवा लागी गयो तेमाथी तेणे दश गदियाणा प्रमाणु सोनु पेदा कर्युं जो के ते धन घणुज थोडु हतु आथी तेने सतोष न थयो तो पण तेने घेर पहोचवानी भारे उत्कठाथी व्याकुळ बनावी दीधो आथी ते पोताना घरना तरफ नीकळी पडयो मध्यान्ह काळमा ज्यारे ते कोई झाडनी छायामा विश्राम

सघृत्य फूत्कृत्य च भोक्तुं प्रवृत्तः। तत्कृतं फूत्कारं श्रुत्वा ग्रामरक्षकश्चिन्तितवान् कोणे फणी फूत्कारं कुरुते, अतोऽशनासक्ते गृहपतौ मन्दं मन्दं निर्गमिष्यामि। इति विचार्य भोजनासक्ते गृहपतौ नगररक्षकस्तिलकोष्ठागारात् पलायितः। तदनु नटोऽपि 'समयोऽयं पलायनस्य' इति विचार्य पलायितः। गृहपतिः स्त्रीपुरुषौ निर्यान्तौ वीक्ष्य पत्नीं पृष्टवान्-कावेतौ गच्छतः? ततः सा दुष्टा पतिं मोहयन्ती-निरन्तरसेवया स्वगृहे समागतौ पार्वतीशङ्करौ। त्वयाऽद्यनातेन मुक्तम्। अत एतौ

जो तिल भरे हुए रखे हैं उन्हें ही क्यों न खाकर अपनी भूख शांत करूँ" ऐसा विचार कर उसने उन तिलों को मसल २ कर एवं फूंक २ कर खाना प्रारंभ कर दिया। उसकी इस फूत्कार को सुनकर ग्राम रक्षक -कोटवालने विचार किया-कुड्मलाने जो कोने में सर्पके रहनेकि बात कही है वह बिलकुल सत्य है-क्यों कि कोने में सर्पका फूत्कार सुनाई दे रहा है कहीं यह निकलकर जो मुझे काट खायेगा तो मैं अकाल में ही मर जाऊंगा-अतः जब घर का मालिक खाने में तल्लीन हो रहा है तो ऐसी स्थिति मे मुझे छिपकर यहां से निकल जाने मे ही फायदा है। तो ऐसा विचार करके वह कोटवाल उसतिल के कोष्ठागार से छिपकर भाग गया। नटने भी "यह समय-भागने का है" ऐसा ही विचार किया। सो वह भी छुपकर यहां से भाग गया। पतिने जब स्त्री पुरुषोंको इस तरह घर से बाहिर निकलते हुए देखा तो उसने कुड्मला से पूछा ये दोनों घर से कौन निकले हैं। तब कुड्मलाने कहा नाथ! मैंने निरन्तर सेवा करने से घर में पार्वती और शंकर को

શા માટે શાન્ત ન કરૂં" આવો વિચાર કરીને તેણે તલને મસળીને તેમજ ફુંકીને ખાવાનો પ્રારંભ કર્યો તેનો આ ફુંકાર સાંભળીને ગ્રામરક્ષકે વિચાર કર્યો કે, કુડ્મલાએ ખૂણામાં સર્પ હોવાની જે વાત કરેલ હતી તે ખરેખર સત્ય જ છે કારણ કે ખૂણામાંથી સર્પનો ફુંફાર સંભળાઈ રહ્યો છે કદાચ તે નીકળીને જો મને કરડશે તો મારૂં અકાળ મરણ થશે જેથી જ્યારે ઘરનો માલીક ખાવામાં તલ્લીન થઈ ગયો છે એવી સ્થિતિમાં છુપાઈને અહીંથી નીકળી જવામાં હરકત જેવું નથી આવો વિચાર કરીને તે નગરરક્ષક તે તેલના કોઠારમાંથી છુપાઈને નાસી છુટયો નટે પણ "આ સમય ભાગવાનો છે" એવો વિચાર કર્યો જેથી તે પણ છુપાઈને ભાગી ગયો વસુમિત્રે જ્યારે સ્ત્રી પુરૂષને આ પ્રમાણે ઘરમાંથી બહાર નીકળતા જોયા તો તેણે કુડ્મલાને પૂછયું કે, ઘરમાંથી આ બે કોણ નીકળ્યા? ત્યારે કુડ્મલાએ કહ્યું, નાથ! મેં નિરંતર સેવા કરવાને માટે ઘરમાં શંકર પાર્વતીને રોકી લીધા હતા પરંતુ આજે આપે

सत्यपि वित्ते तदुपार्ज्य स्वदेवार्चनं कर्तुमिच्छति। दृश्यते बहुधा यत् विद्वानपि व्यसने द्रव्यं व्ययीकरोति। मुग्धोऽप्यसौ धर्मार्थं धनमर्जयितुं क्लिश्यति। अतो दृढ धर्मणोऽस्य कमपि प्रत्युपकारं करोमि। यदि चरमतीर्थंकरो भगवान् महावीरोऽत्र समवसरेत्, तदाहमप्युत्कृष्ट भावेन तस्यप्रभोः पर्युपासनां कुर्याम्। एवं विचिन्तयति भूपे तदश्वपदचिह्नमनुसृत्य सैनिका अपि तत्र समागताः। ततो

है। इसका स्वधर्म के प्रति अनुराग कितना है जो धनके नहीं होने पर भी उसके उपार्जन से अपने देवताकी अर्चना करने के लिये यह लालसावाला बन रहा है। संसार में प्रायःअभीतक ऐसा ही देखने में आता है कि विद्वान् होने पर भी लोग उपार्जित निज द्रव्यका व्यसन आदि के सेवन करने मे अपव्यय कर दिया करते है। परतु यह यद्यपि मुग्ध है तो भी धनका इस प्रकार से दुरुपयोग करनेके लिये उपार्जन करनेकी भावनावाला प्रतीत नहीं हो रहा है प्रत्युत-धर्म करनेके लिये ही धन कमानेकी भावना रख रहा है। और इस लिये यह उसके उपार्जन करने में क्लेशों का सामना कर रहा है। तो ऐसे दृढ धर्मीका मुझ से कुछ प्रत्युपकार हो जाय तो सब से अच्छी बात है। ऐसा भी विचार किया कि जब चरम-तीर्थंकर महावीर प्रभु यहा आवेंगे तब मैं भी उनकी उत्कृष्ट भावना से पर्युपासना करूँगा। राजा जब इस प्रकारकी अपनी विचारधारा मे एकतान हो रहे थे कि इतने में अश्वके पदचिह्नोका अनुसरण करते २ उनके सैनिकजन भी

ધન ન હોવા છતા તેના ઉપાર્જનથી પોતાના દેવતાની અર્ચના કરવા માટે લાલસા વાળો બની રહેલ છે સસારમા ખરેખર એવુ જ જોવામા આવે છે કે વિદ્વાન હોવા છતા પણ લોક ઉપાર્જીત દ્રવ્યનુ વ્યસન આદિના સેવન કરવામાં ખોટી રીતે ઉપયોગ કરે છે પરતુ આ જો કે મુગ્ધ છે છતા પણ ધનનો આ પ્રકારથી ખોટા ઉપયોગ કરવા માટે ઉપાર્જન કરવાની ભાવના વાળો દેખાતો નથી ખરેખર ધર્મ કરવાના માટે જ ધન કમાવાની ભાવના આ રાખી રહેલ છે અને એના માટે જ એનુ ઉપાર્જન કરવામા દુખોનો સામનો કરી રહેલ છે તો આવા દૃઢ ધર્મીનુ મારાથી કાઈક સારૂ થાય તો એ ઘણી જ સારી વાત છે આવો વિચાર કરી પછીથી એવો વિચાર કર્યો કે, જ્યારે ચરમ તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુ અહી આવશે ત્યારે હુ પણ તેમની ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી પર્યુપાસના કરીશ રાજા આ પ્રકારની વિચારધારામા જ્યારે એકતાન બની રહેલ હતા એટલામા અશ્વના પગલાને જોતા જોતા તેમના

समुपविष्टः । तस्मिन्नेव समये वक्रशिक्षितेनाश्वेनापहृतस्तृषार्तो दशार्णभूपोऽपि तत्रैव समागतः । अथ रमणीयाकृतिकः कोऽपि सत्पुरुष इति विचिन्त्य स वसुमित्र स्तस्मै राज्ञे जलं पातुं ददाति । राजाऽपि पीत्वा तुरगात्पर्याणं समुत्तार्य वृक्ष च्छायायां विश्रमितुमुपविष्टः । क्षणं विश्रम्य राजा तं पृच्छति-कस्त्वं कस्मा त्समागतः? वसुमित्रेण सर्वं वृत्तं राज्ञे निवेदितम् । विदिततद्वृत्तान्तो राजा मनस्येव चिन्तयति-अवश्यमस्य पत्नी दुश्चरित्रा । तयाऽयं सरलाशयो वञ्चितः । तथाऽप्यस्य स्वदेवे स्वधर्मे च दृढा श्रद्धा वीक्ष्य विस्मितोऽस्मि । योऽमाव-

विश्राम करने के लिये बैठ गया था कि इसी समय वहाँ पर वक्र शिक्षित अश्व के द्वारा अपहृत होकर तृषार्त दशार्ण राजा भी आ पहुँचे । आकृति से राजा सत्पुरुष जानकर वसुमित्र ने जल लाकर उनको पिलाया । जल पीकर राजा घोडेपर से पर्याण-पलाण वगैरह-उतारकर उसी वृक्षकी छाया में एक तरफ उनको बिछाकर विश्राम करनेके लिये बैठ गये । क्षणभर विश्राम ले चुकने के बाद राजाने वसुमित्र से पूछा-तुम कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? राजा से पूछे जाने पर वसुमित्र ने अपना समस्त वृत्तान्त निवेदित कर दिया। राजा जब उसके वृत्तान्त से परिचित हुए तब सोचने लगे कि अवश्य ही इसकी पत्नी दुश्चरित्रा है । इसीलिये उसने इस सरल परिणामी व्यक्तिको इस रूप से ठगा है। परन्तु यह कितना भला मनुष्य है जो इसरूप से ठगा जाने पर भी अपने देव एवं धर्मकी श्रद्धा मे दृढ बना हुआ है । इसकी यह श्रद्धा तो मुझे आश्चर्यचकित कर रही

કરવા માટે બેઠેલ હતો તે સમયે ત્યાં ખૂબજ દોડથી કુદતા ચાલનારા ઘોડાથી અપહૃત થયેલ અને તૃષાતુર બનેલ એવા દશાર્ણરાજા પણ આવી પહોંચ્યો. આકૃતિથી રાજાને સત્પુરૂષ જાણીને વસુમિત્રે પાણી લાવીને તેને પાયું જળ પીને રાજા ઘોડા ઉપરથી પલાણ વગેરે ઉતારી તેને બીછાવીને તે છાયામાં વિશ્રામ કરવા માટે બેઠા ક્ષણભર વિશ્રામ લીધા બાદ રાજાએ વસુમિત્રને પૂછયું, તમે કોણ છો? કયાંથી આવી રહ્યા છો? રાજના પૂછવાથી વસુમિત્રે પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત તેને કહી સંભળાવ્યો. રાજા જ્યારે તેના વૃત્તાન્તથી પરિચિત થયા ત્યારે તેણે વિચાર્યું કે, અવશ્ય આની પત્નિ દુશ્ચરીત્રવાળી છે આથી તેણે આ સરળ સ્વભાવવાળા માણસને તેને આ રીતે ઠગેલ છે પરંતુ આ કેટલો ભલો મનુષ્ય છે કે, તે આ રીતે ઠગાવા છતાં પણ પોતાના દેવ અને ધર્મની શ્રદ્ધામાં દૃઢ બની રહે છે? તેની આ શ્રદ્ધા મને આશ્ચર્યચકિત બનાવી રહેલ છે તેનો સ્વધર્મ પ્રત્યે કેટલો અનુરાગ છે જે

सत्यपि वित्ते तदुपार्ज्य स्वदेवार्चनं कर्तुमिच्छति। दृश्यते बहुधा यत् विद्वानपि व्यसने द्रव्यं व्ययीकरोति। मुग्धोऽप्यसौ धर्मार्थं धनमर्जयितुं क्लिश्यति। अतो दृढ धर्मणोऽस्य कमपि प्रत्युपकारं करोमि। यदि चरमतीर्थंकरो भगवान् महावीरोऽत्र समवसरेत्, तदाहमप्युत्कृष्ट भावेन तस्यप्रभो' पर्युपासना कुर्याम्। एवं विचिन्तयति भूपे तदश्वपदचिह्नमनुसृत्य सैनिका अपि तत्र समागता। ततो

है। इसका स्वधर्म के प्रति अनुराग कितना है जो धनके नहीं होने पर भी उसके उपार्जन से अपने देवताकी अर्चना करने के लिये यह लालसावाला बन रहा है। संसार मे प्रायःअभीतक ऐसा ही देखने मे आता है कि विद्वान् होने पर भी लोंग उपार्जित निज द्रव्यका व्यसन आदि के सेवन करने मे अपव्यय कर दिया करते है। परंतु यह यद्यपि मुग्ध है तो भी धनका इस प्रकार से दुरुपयोग करनेके लिये उपार्जन करनेकी भावनावाला प्रतीत नहीं हो रहा है प्रत्युत–धर्म करनेके लिये ही धन कमानेकी भावना रख रहा है। और इस लिये यह उसके उपार्जन करने मे क्लेशों का सामना कर रहा है। तो ऐसे दृढ धर्मीका मुझ से कुछ प्रत्युपकार हो जाय तो सब से अच्छी बात है। ऐसा भी विचार किया कि जब चरम–तीर्थंकर महावीर प्रभु यहा आवेंगे तब मैं भी उनकी उत्कृष्ट भावना से पर्युपासना करूँगा। राजा जब इस प्रकारकी अपनी विचारधारा मे एकतान हो रहे थे कि इतने मे अश्वके पदचिह्नोका अनुसरण करते २ उनके सैनिकजन भी

ધન ન હોવા છતા તેના ઉપાર્જનથી પોતાના દેવતાની અર્ચના કરવા માટે લાલસા વાળો બની રહેલ છે સંસારમા ખરેખર એવું જ જોવામા આવે છે કે વિદ્વાન હોવા છતા પણ લોક ઉપાર્જીત દ્રવ્યનુ વ્યસન આદિના સેવન કરવામા ખોટી રીતે ઉપયોગ કરે છે પરંતુ આ જો કે મુગ્ધ છે છતા પણ ધનનો આ પ્રકારથી ખોટા ઉપયોગ કરવા માટે ઉપાર્જન કરવાની ભાવના વાળો દેખાતો નથી ખરેખર ધર્મ કરવાના માટે જ ધન કમાવાની ભાવના આ રાખી રહેલ છે અને એના માટે જ એનુ ઉપાર્જન કરવામા દુખોનો સામનો કરી રહેલ છે તો આવા દૃઢ ધર્મીનુ મારાથી કાંઈક સારૂ થાય તો એ ઘણી જ સારી વાત છે આવો વિચાર કરી પછીથી એવો વિચાર કર્યો કે, જ્યારે ચરમ તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુ અહીં આવશે ત્યારે હુ પણ તેમની ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી પર્યુપાસના કરીશ રાજા આ પ્રકારની વિચારધારામા જ્યારે એકતાન બની રહેલ હતા એટલામા અશ્વના પગલાને જોતા જોતા તેમના

प्रभातकाले कृतनित्यकृत्यश्चन्दनचर्चितदेहो देवदूष्यद्वयं दधत् भासुरभूषणभूषित तनुः पूर्णेन्दुनिभनातपत्रेण विराजमानशरीरः श्वेतचामरैर्वीज्यमानोऽहं तथा जिनं वन्दिष्ये, यथा पूर्वं न कोऽपि त वन्दितवान । इति मनसि चिन्तयन् नृपो दशार्णभद्रो महागजमारूढवान् । ततो भास्वरभूषणभूषितसर्वाङ्गाः सामन्ता अपि स्वस्वगजमारुह्य सामानिका देवाः शक्रमिव राजानं परितः परिवेष्ट्य स्थिताः । तदनु राज्ञा पादाङ्गुष्ठेन प्रेरितो गजो शनैर्गन्तु प्रवृत्तः । तदा मणि

गया। उस समय नगर स्वर्ग के जैसा सुन्दर प्रतीत होने लगा। दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही राजाने अपना समस्त नित्य कृत्य समाप्त कर चन्दन से देहको चर्चित किया एवं देवदूष्य दो वस्त्रों को धारण कर फिर आभूषणों को यथास्थान पहिरा। पश्चात् गजराज पर चढ कर प्रभुको वंदना करने के लिये चले। इसी तरह से प्रभुको वंदना करने के लिये चलने का उसने पहिले से ही संकल्प कर लिया था। राजा जब गज पर चढ कर प्रभुवंदनाके लिये जा रहा था तब उनके माथे पर पूर्णचंद्रमंडल जैसा छत्र धरा हुआ शोभित हो रहा था। तथा श्वेतचारचामर उनकी आजूबाजू ढोरे जा रहे थे। सामन्तजन भी पूर्ण सजधज होकर अपने २ हाथी पर बैठकर राजा के साथ २ चले जा रहे थे। उस समय देखनेवालों को ऐसा ज्ञात होता था कि मानो सामानिक देवों से परिवृत इन्द्र ही जा रहा है। हाथीका सचालन राजा स्वयं कर रहा था। राजा के पादांगुष्ठ के द्वारा प्रेरित होकर

રને પણ ધજા પતાકા આદિદ્વારા શણગારાવ્યું આ સમયે નગર સ્વર્ગ જેવું સુંદર દેખાવા લાગ્યું બીજા દહાડાનો પ્રાતઃકાળ થતાં જ રાજા પોતાનું સમસ્ત પ્રાતઃકર્મ પુરૂં કરી, ચંદનથી દેહને લેપી અને દેવદૂષ્ય બે વસ્ત્રોને ધારણ કરી પછી આભૂષણોને યથાસ્થાન પહેર્યાં ત્યાર બાદ હાથી ઉપર સવારી કરી પ્રભુને વંદના કરવા માટે ચાલ્યા આ પ્રમાણે પ્રભુને વંદના કરવા જવાનો તેણે પહેલેથી જ સંકલ્પ કરેલ હતો રાજા જ્યારે હાથી ઉપર સવારી કરીને પ્રભુ વંદના માટે જઈ રહ્યા હતા ત્યારે તેના માથા ઉપર પૂર્ણચંદ્ર મંડળ જેવું ધરાયેલું શ્વેતછત્ર સુશોભિત લાગતું હતું તથા આજુબાજુથી ચાર ધોળા ચમર ઢોળાઈ રહ્યા હતા સામંતજન પણ સંપૂર્ણ પણે સજ્જ થઈને પોતપોતાના હાથી ઉપર બેસીને, રાજાની સાથે સાથે જઈ રહ્યા હતા તે સમયે, જોનારાઓને એમ લાગતું હતું કે, જાણે સામાનીક દેવોથી પરિવૃત ઈંદ્ર જ જઈ રહેલ છે, હાથીનું સંચાલન રાજા સ્વયં કરી રહેલ હતા રાજાના પગની આંગળીઓથી, પ્રેરીત બનીને હાથી તેમની ઈચ્છા ...

मण्डनमण्डिता अष्टादशसहस्रसंख्यका गजाः चलायमानपर्वता इव प्रचलिता तदनु भूरिभूषणभूषिताश्चतुर्विंशतिलक्षसंख्यकाः स्तुरगास्तथा सयोजितशोभनाश्वा सूर्यरथसदृशा एकविंशतिसहस्रसंख्यका रथाः, एव नानाविधशस्त्रधारिणः सकलविपत्तिवारिणः कोटिशः सैनिकाश्च प्रचलिताः। पञ्चशतराज्ञीभिः समन्विताः पञ्चशतशिबिकाः शिबिकावाहकैर्नीयमानाः सदेवीकविमानवत् शोभन्ते स्म। किङ्किणीभिर्मधुरं शब्दायमाना अभ्रलिहाः पञ्चवर्णाः षोडशसहस्रसंख्यका ध्वजाश्चापि शोभन्ते स्म। तस्मिन् समये वंशीवीणामृदङ्गकांस्यतालादिविविधवाद्यै

उनकी इच्छानुसार धीरे २ चल रहा था। साथ मे अठारह हजार हाथी और भी थे। जो मणियो के मडनो से मडित थे। इनके चलने से ऐसा प्रतीत होता था कि मानों ये जगम पर्वत ही चले जा रहे हैं। इनके पीछे भूरिभूषणों से भूषित चौवीस (२४) लाख घोडे तथा सूर्यके रथके समान इक्कीस हजार रथ कि जिन में उत्तमोत्तम शृगारित घोडे जुते हुए चल रहे थे। इनके पीछे २ नाना शास्त्रों को धारण किये हुए एव सकल विपत्तियों के निवारक कोटिशः सैनिक जन चले जा रहे थे। साथ में पाचसौ रानिया भी शिबिका के आरूढ होकर चल रही थी। शिबिकाएँ शिबिकावाहकजन अपने २ कधो पर उठा कर लेजा रहे थे। जैसे देवियों से अधिष्ठित विमान अपनी सुन्दरता से अनुपम लगता है उसी प्रकार ये शिबिकाएँ भी इन रानियों द्वारा अधिष्ठित होनेकी वजह से विशेषरूप से सुन्दरता का घर बनी हुई थी। किंकिणियों के मधुर शब्दों से वाचालित पचवर्णवाली सोलह

ચાલી રહેલ હતો સાથે બીજા પણ અઢાર હજાર હાથી હતા જે મણી વગેરેથી શણગારાયેલ હતા તેમના ચાલવાથી એવુ લાગતુ હતુ કે જાણે જગમ પર્વત જ ચાલીને જઈ રહેલ છે એમની પાછળ નાના પ્રકારના શણગારથી સજાયેલા ચોવીસ લાખ ઘોડા તથા સૂર્યના રથની માફક એકવીસ હજાર રથ કે જેમા ઉત્તમમા ઉત્તમ શણગારેલા ઘોડા જોડવામા આવેલ હતા તેમની પાછળ પાછળ અનેક પ્રકારના શસ્ત્રોને ધારણ કરેલા અને સઘળી વિપત્તિઓનુ નિવારણ કરવાવાળા એવા કરોડો સૈનિકો ચાલી રહેલ હતા સાથે પાચસો રાણીઓ પણ પાલખીમા આરૂઢ થઈને જઈ રહેલ હતી પાલખીઓને ઉપાડનારાઓ પોતપોતાની કાંધો ઉપર ઉઠાવીને જઈ રહ્યા હતા જેમ દેવીઓથી અધિષ્ઠિત વિમાન પોતાની સુદરતાથી અનુપમ લાગે છે તેવી રીતે આ પાલખીઓ પણ તે રાણીઓના તેમા બેસવાથી વિશેષ સુદર દેખાઈ રહી હતી ઘુઘરીઓના મધુરા શબ્દથી ગુજતી પાચવર્ણવાળી સોળ હજાર ધજાઓ

सप्तशतान गजान विकुर्वितवान। तेषु प्रत्येकगजस्य द्वादशाधिकपञ्चशत सङ्ख्यकानि मुखानि, मुखे मुखे प्रति अष्टौ अष्टौ दन्तान प्रतिदन्तमष्टावष्टौ मनोहारिणीः पुष्करिणीश्च विकुर्वितवान प्रत्येकपुष्करिण्यामष्टौ अष्टौ लक्षपत्र पद्मानि विकुर्वितवान। तेषु दलेषु प्रत्येकदले द्वात्रिंशद्विधनाटक कुर्वतो नटान, प्रत्येक कमलकर्णिकाया चतुर्मुख प्रासाद च विकुर्वितवान। तत्र प्रत्येक प्रासा देऽष्टमहिषीभि सह स्थित. शक्रेन्द्रो द्वात्रिंशद्विध नाटक पश्यन आसीत्। एवविधैश्वर्यसम्पन्न' शक्रेन्द्र आकाशादवतीर्य भगवन्त जिन प्रदक्षिणीकृत्य वन्दित्वा कृताञ्जलिः सन भगवत्समीपे समुपविष्ट। तदा नृपो दशार्णभद्र एतादृशैश्वर्यसयुक्त कृतभगवद्वन्दन समुपविष्ट शक्रेन्द्र विलोक्य मनस्येव चिन्त

वैक्रियशक्ति द्वारा उसी समय तयार कर दिया। इन में प्रत्येक गजके पाचसौबारह (५१२) मुख, एक २ मुखमें आठ आठ दात, एक एक दांत मे आठ आठ मनोहर पुष्कर, एव प्रत्येक पुष्कर म एक एक लाख पत्तेवाले आठ २ कमल इन्द्रने विकुर्वित किये। प्रत्येक पत्तोंमें वत्तीस प्रकार के नाटक को करनेवाले नटो को, एव कमलों की प्रत्येक कर्णिका में चार मुखवाले प्रासाद भी इन्द्रने दिखलाए। तथा प्रत्येक प्रासाद में आठ आठ इन्द्रानियों के साथ बैठकर इन्द्र वत्तीस प्रकारके नाटकों को देख रहे है ऐसा भी इन्द्रने वहा विकुर्वित किया। इस प्रकार के आश्चर्यसे सपन्न होकर वह शक्रेन्द्र आकाश से नीचे उतरे और प्रभु को तीन प्रदक्षिणा देकर पश्चात् वदना करके हाथ जोडकर उनके समीप बैठ गये। राजा ने जब इस प्रकार की विभूति से विशिष्ट राजेन्द्रको भगवानको वदना करते हुए देखा तो मनमे विचार किया मै कितना अज्ञानी

वैक्रिय शक्ति द्वारा उत्पन्न कर्या आमा दरेक हाथीना पाचसो बार ५१२ मोढा एक एक मोढामा आठ आठ दात, एक एक दातमा आठ आठ मनोहर पुष्कर अने प्रत्येक पुष्करमा एक एक लाख पत्तावाळा आठ आठ कमळ इन्द्रे उपजाव्या प्रत्येक पत्तामा बत्रीस प्रकारना नाटकने करवावाळा नटोने, अने कमळोनी प्रत्येक कर्णि कामा चार दरवाजावाळा प्रासाद पण इन्द्रे बनाव्या तथा प्रत्येक प्रासादमा आठ आठ इन्द्राणीओनी साथे बेसीने इन्द्र बत्रीस प्रकारना नाटकोने जोई रह्या छे, एवु पण इन्द्रे त्या बताव्यु आ प्रकारना ऐश्वर्यथी स पन्न बनीने ते इन्द्र आकाशथी नीचे उतर्या अने प्रभुने त्रण प्रदक्षिणा करी पछीथी व दना करी हाथ जोडी तेमनी सामे बेसी गया राजाए ज्यारे आ प्रकारनी विभूतिथी विशिष्ट इन्द्रने भगवानने व दना करता

यति धिङमाम्। तुच्छतया स्वसम्पन्नो दर्पः कृतः। अस्य सम्पदामग्रे मम सम्पत्तेः का गणना? सूर्यप्रभाया पुरतः खद्योतस्य प्रभा कियती? तुच्छस्वभावा एव प्राणिनः पङ्किलजलस्थदर्दुरवत् स्वसम्पदं गर्वं कुर्वन्ति। इयं च श्रीरनेनापि धर्मप्रभावेणैव लब्धा। धर्मं विना यदि सम्पत्तिर्भवेत्तदा सर्वेऽपि सम्पत्तिभाजो भवेयुः। अतः प्रकृष्टसम्पत्तसमाप्तौ प्रकृष्टं धर्माचरणमेव कारणम्। तस्माद् विषादं परित्यज्य सकलश्रेयोमूलं निर्मलं धर्ममेवाहमाश्रयिष्ये। इत्थं विमृश्य धृतवैराग्यो दशार्णभद्रो राजा भगवत्समीपे समागत्य वन्दित्वा सविनयं

हूं जो मुजे इस तुच्छ संपत्ति पर अभिमान जगा। मुजे धिक्कार है। इनकी संपत्ति के आगे मेरी इस सम्पत्ति की क्या गणना है। सच है सूर्यकी प्रभा के समक्ष खद्योत (आग्या) की प्रभाकी क्या कीमत हो सकती है। जो प्राणी तुच्छ हुवा करते हैं वेही कीचडवाले जलमें रहे हुए मैढककी तरह अपनी संपत्तिको ही बहुत भारी समझते हैं और उसके गर्वसे फूले रहते हैं। धर्मके प्रभावसे ही प्राणियों को संपत्तिकी प्राप्ति होती है मुझे भी जो यह संपत्ति प्राप्त हुई है उसमें भी धर्मका ही कारण है! विना धर्म के संपत्ति नहीं मिला करती है। यदि मिलती तो फिर संसारमें कोईभी निर्धन नही रहता। इससे यह निश्चित बात है कि प्रकृष्ट संपत्तिकी प्राप्ति में प्रकृष्ट धर्माचरण ही कारण है। इसलिये विषाद का परित्याग करके सकल श्रेयोंका मूल कारण एक धर्मका ही मुझे आश्रय ग्रहण करना चाहिये।

इस प्रकार अच्छी तरह विचार करने पर राजा को संसार

જોયા તો મનમા વિચાર કર્યો કે, હુ કેટલો અજ્ઞાની છુ, જે મને આ તુચ્છ સંપત્તિ પર અભિમાન જાગ્યુ મને ધિક્કાર છે આમની સંપત્તિની સામે મારી આ સંપત્તિની શુ ગણના છે? સાચુ છે કે, સૂર્યના તેજ પાસે આગીયાનુ તેજ શી વીસાતમા? જે પ્રાણી તુચ્છ હોય છે તેજ કિચડવાળા પાણીમા રહેલા દેડકાની માફક પોતાની સંપત્તિને જ ઘણી ભારે સમજે છે, અને તેના ગર્વમા ફુલાઇ રહે છે, ધર્મના પ્રભાવથી જ પ્રાણીઓને સંપત્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે મને પણ જે આ સંપત્તિ પ્રાપ્ત થઈ છે તેમા પણ ધર્મનો પ્રભાવ કારણ ભૂત છે ધર્મ વગર સંપત્તિ મળી શકતી નથી, અને જો મળે તો પછી સંસારમા કોઇ નિર્ધન રહે જ નહીં આથી એ નિશ્ચિત વાત છે કે, પ્રકૃષ્ટ સંપત્તિની પ્રાપ્તિમા પ્રકૃષ્ટ ધર્માચરણ જ કારણ છે વિષાદનો પરિત્યાગ કરી સઘળા શ્રેયનુ મૂળ કારણ એક ધર્મનો જ મારે આશ્રય કરવો જોઈએ

આ પ્રકારનો સારી રીતે વિચાર કરવાથી રાજાને સંસાર, શરીર, અને ભોગોથી

मिदमवादीत्–भगवन्। भवोद्विग्नं मां दीक्षादानेनानुगृहाण। इत्युक्त्वा कृतलोचनं व्रतार्थिनं तं पार्थिवं विश्ववत्सलो वीरप्रभुः स्वयं प्रव्रज्यां ग्राहयति स्म। तेन सह तामसुरपपुत्रो वसुमित्रोऽपि प्रव्रज्यां गृहीतवान्। युज्यते चैतत्-सत्पुरुषाणां सङ्गो हि सकलकल्याणकरो भवति। ततो गृहीतदीक्षं दशार्णभद्र राजर्षिं शक्र एवमवादीत्–हे मुने! धन्योऽसि भवान्! येन भवता ईदृशी समुत्कृष्टाऽपि सम्पत् झटिति परित्यक्ता। हे सत्यप्रतिज्ञ! एवं विधं प्राज्यं साम्राज्यं परित्यज्य संयमं स्वीकुर्वता भवता स्वप्रतिज्ञा सत्या कृता। सर्वं साम्राज्यं परित्यज्य दीक्षां स्वीकृत्य भवताऽभूतपूर्वोऽर्हतः सेवा कृता। अहं तु द्रव्यत

शरीर एवं भोगोंसे वैराग्य भाव जागृत हो गया। उसी वैराग्यभाव में मग्न हुए वह दशार्णभद्र राजा भगवान के समीप पहुंचे और वंदना करके कहने लगे कि–भगवान! भवोद्विग्न इस प्राणीको दीक्षादान से अनुगृहीत कीजिये। इस प्रकार व्रतार्थी उन राजाको अपने हाथों से केशोंका लुंचन करते देखकर विश्वैकवत्सल वीर प्रभुने दीक्षा दे दी। उसीके साथ वसुमित्रने भी दीक्षा अंगीकार करली। सच है सत्पुरुषोंका संग सकल कल्याणों का कारक हुआ करता है। इन्द्रने जब यह देखा कि दशार्णभद्र राजा राजऋषि बन चुके हैं तब राजासे इन्द्रने कहा—हे मुने! आपको धन्य है। कि आपने इतनी उत्कृष्ट विभूति एक ही क्षणमें झटिति परित्यक्त करदी है। हे सत्य प्रतिज्ञ महात्मन् इस प्रकार के प्राज्य राज्यका परित्याग कर के संयमको स्वीकार करने वाले आपने अपनी प्रतिज्ञा सत्य करके दिखला दी है और इसीसे आपके हृदयमें

वैराग्यभाव जागृत थयो तेना वैराग्यभावना मग्न बनेला ओ दशार्णभद्र राजा भगवाननी पासे पहोंच्या अने वंदना करीने कहेवा लाग्या के, भगवान! भव उद्वीग्न एवा आ प्राणीने दीक्षा दान आपीने अनुगृहित करो. आ प्रमाणे व्रतार्थी ए राजाए पोताना हाथथी केशोनुं लोचन करवा मांड्युं आ प्रमाणे पोताना हाथथी केशोनुं लोचन करता राजाने विश्वना वत्सल एवा वीर प्रभुओ तेने दीक्षा आपी एनी साथे ज विश्वमित्रे पण दीक्षा अंगीकार करी लीधी साचुं छे के, सत्यपुरुषोनो संग सकल कल्याणोने आपनार बनी जाय छे. इन्द्रे ज्यारे आ जोयुं के दशार्णभद्र राजा ऋषि बनी चूकेल छे त्यारे इन्द्रे राजाने कह्युं के, हे मुनि! आपने धन्य छे के, आपे आटली उत्कृष्ट विभूतिनो जलदीथी त्याग करी दीधो छे हे सत्य प्रतिज्ञ महात्मन्! आ प्रमाणे मेळवेला राज्यनो परित्याग करीने संयमनो स्वीकार करवावाळा आपे पोतानी प्रतिज्ञा साची करी बतावी छे अने

एवाऽर्हतः सेवा कर्तुं समर्थो न तु भावत । भवता तु भावत सेवा कृता । अतो भवताऽहं पराजितोऽस्मि । मम भूयसी शक्तिरस्ति, तथाऽपि दीक्षाग्रहणे नास्ति मम शक्तिः । इत्थं दशार्णभद्रमुनिं स्तुत्वा भगवन्तं जिनं प्रणम्य शक्रेन्द्रः स्वर्लोकं गतवान् दशार्णभद्रमहामुनिरपि उग्रं तपस्तप्त्वा सकलकर्मक्षयान्मुक्तिपुरीं गतः ।

॥ इति श्रीदशार्णभद्रकथा ॥

अर्हंत प्रभुकी भक्ति कितनी सुदृढ है, एव अभूतपूर्व है तथा किस तरहकी अभूतपूर्व सेवा आपने अर्हंत प्रभुकी की है। यह बात निश्चित हो जाती है मै तो द्रव्य से ही अर्हंत प्रभुकी सेवा करने मे समर्थ हू तब कि आपने तो भावसेभी उनकी सेवा करने म समर्थ अपने आपको बनालिया है अत इस आपकी भावसेवाको महत्त्वशा. धन्य वाद है। इस भाव सेवासे मै आपके समक्ष कुछ भी शक्ति शाली नहीं ह सदा आपसे नीचा ही हू। अत. आपके सामने अपने आपको मै पराजित मानता हू। यद्यपि मुझमें बडी भारी शक्ति रही हुई है परन्तु दीक्षा धारण करने योग्य शक्ति इस पर्याय मे नहीं है। इस प्रकार दशार्णभद्र मुनि की स्तुति एव अर्हंत वीर-प्रभुको वदना करके शक्रेन्द्र अपने स्थान स्वर्गलोक में वापिस चले गये। उधर दशार्णभद्र मुनिने भी उग्र तपस्या की आराधना करते हुए सकल कर्मोंका समूल उन्मूलन कर मुक्तिकी प्राप्ति की ॥ ४४ ॥

એથી જ આપના હુ યમા અહૅત પ્રભુની ભક્તિ કેટલી સુદૃઢ છે, તથા અભૂતપૂર્વ છે અને કયા પ્રકારની અદભૂત સેવા આપે અર્હંત પ્રભુની કરી છે એ વાત નિશ્ચિત થાય છે હુ તો દ્રવ્યથી જ અર્હંત પ્રભુની સેવા કરવામા સમર્થ છુ જ્યારે આપે તો ભાવથી પણ તેમની સેવા કરવામા પોતાની જાતને સમર્થ બનાવી છે આથી આપની એ ભાવસેવાને ધન્યવાદ છે આ ભાવસેવાથી હુ આપની સામે કાંઈ પણ શક્તિશાળી નથી, સ । આપથી નીચોજ છુ , એથી આપની સામે હુ મારી જાતને પરાજીત માનુ છુ જો કે, મારામા ઘણી જ વિશાળ શક્તિ રહેલ છે પરતુ દીક્ષા ધારણ કરવાની શક્તિ આ પર્યાયમા મારામા નથી, આ પ્રકારે દશાર્ણભદ્ર મુનિની સ્તુતિ અને અર્હંત વીર પ્રભુને વદના કરીને ઇન્દ્ર પોતાના સ્થાન ઉપર ચાલ્યા ગયા આ તરફ દશાર્ણભદ્ર મુનિએ પણ ઉગ્ર તપસ્યા કરી, આરાધના કરતા કરતા સઘળા કર્મોનુ સમુળુ ઉન્મુલન કરી મુક્તિ પદને પામ્યા ॥ ૪૪ ॥

तथा—

मूलम्—नमी नमेइ अप्पाणं, सक्खं सक्केणं चोइओ ।
चइऊण गेहं वेदेही, सामण्णे पज्जुवट्ठिओ ॥४५॥

छाया—नमि नमयति आत्मानं, साक्षात् शक्रेण नोदितः ।
त्यक्त्वा गेहं वैदेहः, श्रामण्ये पर्युपस्थितः ॥४५॥

टीका—'नमी' इत्यादि ।

नमि=नमि नामा वैदेही=विदेह देशोत्पन्नो राजा गेह=गृहं त्यक्त्वा श्रामण्ये=साधुधर्मे पर्युपस्थितः, चारित्रानुष्ठान मत्युद्यतोऽभूदित्यर्थः । स नमि मुनिः साक्षात् ब्राह्मणरूपधरेण शक्रेण नोदितः=प्रेरितः-ज्ञानचर्चाया परीक्षितः सन् आत्मानं नमयति=न्यायमार्गे स्थापयति स्म । ततः कर्मरहितो जात इत्यर्थः ॥४५॥

तथा—'नमी नमेइ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(नमी-नमिः) नमि नामके राजाने (वैदेही-वैदेहः) जो विदेह देशमे उत्पन्न हुए थे (गेहं-गृहम्) गृहका (चइउण-त्यक्त्वा) त्याग करके (सामण्णे पज्जुवट्ठिओ-श्रामण्ये पर्युपस्थितः) चारित्र धर्म के अनुष्ठान करने मे अपने आपको उद्यत किया था। यद्यपि उनकी (सक्खं सक्केण चोइओ-साक्षात् शक्रेण नोदितः) साक्षात् ब्राह्मण रूपधारी इन्द्रने ज्ञानचर्या में परीक्षा की थी तौ भी उन्होने (अप्पाणं नमेइ-आत्मानं नमयति) न्याय मार्ग मे ही अपनी आत्माको झुकायाथा-स्थापित किया था, इसीलिये वह कर्मरज से रहित बन गये। इनकी कथा पीछे नौवे अध्यन मे आ चुकी है अतः वहासे देख लेवें ॥ ४५ ॥

તથા— "नमी-नमेइ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—नमि-नमि નમી નામના રાજા કે જે वैदेही-वैदेह વિદેહ દેશમા ઉત્પન્ન થયેલ હતા गेह-गृहम् તે ગૃહનો चइउण-त्यक्त्वा ત્યાગ કરીને समणे पज्जुवट्ठिओ-श्रामण्येपर्युपस्थित ચારિત્ર ધર્મનુ અનુષ્ઠાન કરવામા એકરૂપ બન્યા હતા જો કે, એમની सक्खं सक्केण चोइओ-साक्षात् शक्रेण नोदितः સાક્ષાત બ્રાહ્મણરૂપધારી ઇન્દ્રે જ્ઞાનચર્યામા પરીક્ષા કરી હતી તો પણ તેમણે अप्पाणं नमेइ-आत्मानं नमयति ન્યાયમાર્ગમા જ પોતાના આત્માને ઝુકાવેલ હતો-સ્થાપિત કરેલ હતો -આથી તે કર્મરજથી રહિત બની ગયા તેની કથા પાછલા નવમા અધ્યયનમા વર્ણવાઈ ચૂકેલ છે આથી ત્યાથી જોઈ લેવી ॥ ૪૫ ॥

सम्प्रति द्वाभ्यां गाथाभ्यां चतुर्णां प्रत्येकबुद्धानामेकसमयेसिद्धानां नामान्याह—

मूलम्—करकंडू कलिंगेसु, पंचालेसु यं दुम्मुंहो।
नमी रायां विदेहेसुं, गंधारेसु यं नग्गंई ॥४६॥
एएं नरिंद वंसहा, निक्खंता जिणसांसणे।
पुंत्ते रंज्जे ठवेऊंण, सामंण्णे पज्जुवेट्टिया ॥४७॥

छाया—करकण्डूः कलिङ्गेषु, पञ्चालेषु च द्विमुखः।
नमी राजा विदेहेषु, गन्धारेषु च नगगतिः ॥४६॥
एते नरेन्द्रवृषभाः, निष्क्रान्ता जिनशासने।
पुत्रान् राज्ये स्थापयित्वा, श्रामण्ये पर्युपस्थिताः ॥४७॥

टीका—'करकडू' इत्यादि।

कलिङ्गेषु करकडू नामा नृप आसीत्। पञ्चालेषु च द्विमुखो विदेहेषु नमि राजा, गन्धारेषु नगगतिर्नाम राजा। एते चत्वारोऽपि नरेन्द्रवृषभाः=नरेन्द्रश्रेष्ठाः पुत्रान् विजयवैजयन्त-जयन्ता-ऽपराजित नामकान् राज्ये संस्थाप्य

अब दो गाथाओं द्वारा सूत्रकार चार प्रत्येक बुद्धोंके जो कि एक ही समय में सिद्ध हुए हैं उनके नाम प्रदर्शित करते हैं—'करकडू' इत्यादि।

अन्वयार्थ (कलिंगेसु-कलिङ्गेषु) कलिङ्ग देशमें (करकंडू-करकण्डूः) करकडू नामका राजा था (य पंचालेसु दुम्मुहो-च पञ्चालेषु द्विमुखः) पंचालमें द्विमुख (विदेहेसु नमी विदेहेषु-नमिः) विदेह में नमि तथा (गंधारेसु नग्गई-गन्धारेषु नगगतिः) गंधार देशमें नगगति। (एए नरिंद वसहा-एते नरेन्द्र-वृषभाः) इन चारों उत्तम राजाओंने (पुत्ते रज्जे ठवेऊण-पुत्रान् राज्ये स्थापयित्वा) अपने २ विजय वैजयन्त जयन्त एवं अपराजित नाम के पुत्रोंको

હવે બે ગાથાઓ દ્વારા સૂત્રકાર ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધોને જેઓ એકજ સમયમાં સિદ્ધ બનેલ છે એમના નામ પ્રદર્શિત કરે છે—"करकडू" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—कलिंगेसु-कलिङ्गेषु કાલિંગ દેશમાં करकंडू-करकण्डुः કરકંડૂ નામના રાજા હતા. य पंचालेसु दुम्मुहो-च पञ्चालेषु द्विमुख પંચાલમાં દ્વિમુખ विदेहेसु नमी-विदेहेषु नमी વિદેહમાં નમી, તથા गंधारेसु नग्गई-गंधारेषु नगगति ગાંધાર દેશમાં નગપતિ एए नरिंद वसहा-एते नरेन्द्रवृषभाः આ ચારે ઉત્તમ રાજાઓએ पुत्ते रज्जे ठवेउण-पुत्रान् राज्ये स्थापयित्वा પોતપોતાના વિજય વૈજન્ત જયંત અને અપરાજીત નામના પુત્રોને રાજ્યગાદી સોંપીને जिणसा-

जिनशासने=जिनेन्द्र प्ररूपित धर्मे निष्क्रान्ताः=प्रव्रजिता , निर्ग्रन्थ च श्रामण्य =चारित्रे पर्युपस्थिताः=उद्यता अभूवन् । करकण्डू द्विमुख नमि नग्गतिनामान श्चत्वारोऽपि राजानो जिनशासने प्रव्रज्य चारित्र सम्यक्परिपालयन्तो भवभ्रमणा द्विरता सिद्धिगतिं प्राप्ता इति भाव ॥४६ ४७॥

चतुर्षु प्रत्येकबुद्धेषु तृतीयस्य नमिराजर्षेः कथा नवमाध्ययने गता, अत्र करकण्डू द्विमुख नभोगतीना कथा क्रमशो निगद्यते—

॥ अथ करकण्डूराजकथा ॥

आसीदत्र भरतक्षेत्रे कलिङ्गदेशे चम्पानगर्यां प्रबलपराक्रमो गुणरत्नाना मुदधि दधिवाहनो नाम राजा । तस्य राज्ञः शीलादिगुणसमलङ्कृता चेटकराज दुहिता पद्मावती नामासीत्पट्टमहिषी । सा हि नृपेण सह विविधान् भोगान भुञ्जाना क्रमेण गर्भवती जाता । तस्या राज्या एव दोहदो जात.यदह कृत

राज्यमे स्थापित करके (जिणसासने-जिनशासने) जिनेन्द्र प्रभु द्वारा प्ररूपित धर्ममे (निक्खता-निष्क्रान्ता) प्रव्रजित हुए-(सामण्ण पज्जु वट्ठिया-श्रामण्य पर्युपस्थिता.) और चारित्रकी आराधना से मुक्ति प्राप्त की।

इन चार प्रत्येक बुद्धोंमेंसे तृतीय नमि राजऋषि की कथा तो नवम अध्ययन मे कही जा चुकी है। केवल करकण्डू द्विमुख तथा नगगति की कथा कहनी बाकी है सो उनमें प्रथम करकण्डू की कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत कलिङ्ग नामका एक देश है। उसमें चपा नामकी नगरी थी। उसका अधिपति दधिवाहन नामका राजा थे। यह गुणरूपी रत्नो के समुद्र एव विशिष्ट पराक्रम शाली थे। इनकी पट्टरानी का नाम पद्मावती था। यह चेटक राजा की पुत्री थी।

सने-जिनशासने જીનેન્દ્ર પ્રભુદ્વારા સ્થાપિત ધર્મમા निक्खता-निष्क्रान्त સ્થાપિત બન્યા—દીક્ષા અંગિકાર કરી અને सामण्णे पज्जुवट्ठिया-श्रामण्य पर्युपस्थिता ચારિત્રની આરાધનાથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી

આ ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધોમાથી ત્રીજા નમિરાજ ઋષિની કથા તો નવમા અધ્યય નમા કહેવાઈ ગયેલ છે આમાના કરકન્ડુ, દ્વિમુખ અને નવગતિની કથા કહેવાની બાકી છે તો આમા પ્રથમ કરકન્ડુની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભારતક્ષેત્રનીઅંદર કલિંગ નામનો દેશ છે આમા ચંપા નામની નગરી હતી એના અધિપતિ દધિવાહન નામના રાજા હતા તે ગુણરૂપ રત્નોના સમુદ્ર અને વિશિષ્ઠ પરાક્રમશાળી હતા તેમની પટ્ટરાણીનુ નામ પદ્માવતિ હતુ તે ચેટક

भूषणा धारितच्छत्रा पट्टहस्तिस्कन्धमारूढाऽऽरामे विहरामि। परन्तु सा लज्जया दोहदं राज्ञे न निवेदितवती। अतोऽपूर्णदोहदा सा कृष्णपक्षेन्दुवत् कृशतामुपगता। राजा दधिवाहनः स्वप्रियां पद्मावतीं दिनानुदिनं कृशतामुपगच्छन्तीं विलोक्य तत्कारणं पृष्टवान्। ततः सा स्वदोहदं राजानं कथंकथमपि निवेदितवती। तस्या दोहदं पूरयितुं राजा तया सह जयकुञ्जरमारुह्य स्वयं तदुपरि पूर्णेन्दुसुन्दरं छत्रं दधानः पौरजनैः सानन्दं प्रेक्ष्यमाणः सैनिकैः समनुगम्य

पद्मावती शीलादिक सद्गुणो से विभूषित होने के कारण पति दधिवाहन राजा को विशेषरूप से प्रिय थी। राजा के साथ अपने पुण्य के फल को भोगती हुई पद्मावती सुखपूर्वक काल को व्यतीत करती थी। कालान्तर मे उसने गर्भ धारण किया। उस के प्रभाव से रानी के इस प्रकार का दोहला उत्पन्न हुआ कि मैं विविध वेष विभूषणो से अलकृत होकर पट्टहस्ति के स्कंध पर बैठ छत्र धराती हुई उद्यान मे घूमूँ। परन्तु लज्जा के मारे रानी इस अपने दोहले को राजा से नही कह सकी, इससे कृष्णपक्ष की चन्द्रकला की तरह वह अनिष्पन्न दोहला होने की वजह से धीरे २ कृश होती गई। राजा ने जब रानी को कृश होती हुई देखा तो उन्हो ने 'इस कृशता का कारण क्या है' इस बात को जानने के लिये रानी से पूछा। रानी ने जैसे तैसे 'अपना दोहद ही इसका कारण है' यह बात राजा से कही। राजा ने इसके दोहद की पूर्ति के लिये स्वयं राजा अपनी इस रानी के साथ "जयकुंवर" हाथी पर सवार होकर बगीचे मे पहुँचे। बगीचे

રાજાની પુત્રી હતી. પદ્માવતી શીલઆદિ સદ્ગુણોથી વિભૂષિત હોવાના કારણે પતિ દધીવાહન રાજાને વિશેષ રૂપથી પ્રિય હતી. રાજાની સાથે પોતાના પુણ્ય ફળને ભોગવી રહેલી પદ્માવતી સુખપૂર્વક કાળને વ્યતિત કરતી હતી. કાળાંતરે એને ગર્ભ રહ્યો. ગર્ભના પ્રભાવથી રાણીને એ પ્રકારનો ભાવ દોહદ ઉત્પન્ન થયો કે, હું વિવિધ રૂપ વિશેષણોથી અલંકૃત બની પટ્ટહાથીના સ્કંધ ઉપર બેસીને ઉદ્યાનમાં ફરૂં. પરંતુ લજ્જાના કારણે રાણી પોતાના આ ભાવને રાજાની સમક્ષ પ્રગટ કરી ન શકી. આથી પોતાનામાં જાગેલો ભાવ પૂરો ન થવાના કારણે કૃષ્ણ પક્ષની ચંદ્ર કળાની માફક તે ધીરે ધીરે સુકાવા લાગી. રાજાએ જ્યારે રાણીના દેહને આ રીતે સુકાતો જોયો ત્યારે તેણે "આ કૃષતાનું કારણ શું છે?" એ જાણવા માટે રાણીને પૂછ્યું, રાણીએ જેમ તેમ "પોતાનો ભાવજ એનું કારણ છે" આવી વાત રાજાને કહી. રાજાએ એના ભાવની પૂર્તિ માટે રાજા પોતે પોતાની આ રાણીની સાથે "જય કુંવર" હાથી ઉપર સવાર થઈને બગીચામાં પહોંચ્યા. બગીચાની શોભા આ સમયે વધા

जिनशासने=जिनेन्द्र प्ररूपित धर्मे निष्क्रान्ता:=प्रव्रजिता', निष्क्रम्य च श्रामण्य =चारित्रे पर्युपस्थिता:=आगता अभूवन्। करकण्डू द्विमुख नमि नग्गतिनामान श्चत्वारोऽपि राजानो जिनशासने प्रव्रज्य चारित्रं सम्यक्परिपालयन्तो भवभ्रमणा द्विरता' सिद्धिगतिं प्राप्ता इति भाव: ॥४६ ४७॥

चतुर्षु प्रत्येकबुद्धेषु तृतीयस्य नमिराजर्षे: कथा नवमाध्ययने गता, अत्र करकण्डू द्विमुख नग्गतीना कथा क्रमशो निरूप्यते—

॥ अथ करकण्डूराजकथा ॥

आसीदत्र भरतक्षेत्रे कलिङ्गदेशे चम्पानगर्या प्रबलपराक्रमो गुणरत्नाना मुदधि र्दधिवाहनो नाम राजा। तस्य राज्ञ: शीलादिगुणसमलङ्कृता चेटकराज दुहिता पद्मावती नामासीत्पट्टमहिषी। सा हि नृपेण सह विविधान् भोगान् भुञ्जाना क्रमेण गर्भवती जाता। तदा राज्ञ्या एव दोहदो जात यदहं कृत

राज्यमें स्थापित करके (जिणसासने-जिनशासने) जिनेन्द्र प्रभु द्वारा प्ररूपित धर्ममें (निक्खता-निष्क्रान्ता.) प्रव्रजित हुए-(सामण्णे पज्जुवट्ठिया-श्रामण्य पर्युपस्थिता) और चारित्रकी आराधना से मुक्ति प्राप्त की।

इन चार प्रत्येक बुद्धोंमेंसे तृतीय नमि राजऋषि की कथा तो नवम अध्ययन मे कही जा चुकी है। केवल करकण्डू द्विमुख तथा नग्गति की कथा कहनी बाकी है सो उनमें प्रथम करकण्डू की कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत कलिङ्ग नामका एक देश है। उसमे चंपा नामकी नगरी थी। उसका अधिपति दधिवाहन नामका राजा थे। यह गुणरूपी रत्नो के समुद्र एव विशिष्ट पराक्रम शाली थे। इनकी पट्टरानी का नाम पद्मावती था। यह चेटक राजा की पुत्री थी।

सने-जिनशासने જીનેન્દ્ર પ્રભુદ્વારા સ્થાપિત ધર્મમા निक्खता-निष्क्रान्ता. સ્થાપિત બન્યા—દીક્ષા અંગિકાર કરી અને सामण्णे पज्जुवट्ठिया-श्रामण्य पर्युपस्थिता' ચારિત્રની આરાધનાથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી

આ ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધોમાથી ત્રીજા નમિરાજ ઋષિની કથા તો નવમા અધ્યયનમા કહેવાઈ ગયેલ છે આમાના કરકન્ડુ, દ્વિમુખ અને નવગતિની કથા કહેવાની બાકી છે તો આમા પ્રથમ કરકન્ડુની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભારતક્ષેત્રનીઅંદર કલિંગ નામનો દેશ છે આમા ચંપા નામની નગરી હતી એના અધિપતિ દધિવાહન નામના રાજા હતા તે ગુણરૂપ રત્નોના સમુદ્ર અને વિશિષ્ઠ પરાક્રમશાળી હતા તેમની પટ્ટરાણીનુ નામ પદ્માવતિ હતુ તે ચેટક

वटशाखाऽवलम्बनीया, अहमप्यवलम्बिष्ये। तत आवां सुखेन स्वपुरीं गमिष्यावः। एवं वदति नृपे हस्ती वटवृक्षस्याधस्तात् समागतः। नृपस्तच्छाखामालम्बितवान्। परन्तु राज्ञी यावद्वटशाखां ग्रहीतुमुद्यता भवति, तावद् हस्ती निःसृतः। हस्ती तामादायाग्रे प्रचलितः। समवलम्बितवटशाखो नृपस्ततोऽवतीर्य गजापहृतां स्वनागप्रियामपश्यन् तद्विरहजनितेनदुःखेन प्रपीडितहृदय एवं विलापमकरोत् अयि कान्ते। तवैकाकिन्या भयङ्करे वने का दशा भविष्यति? कदा पुनस्त्वं मिलिष्यति? अहो। अमुना रिपुरूपेण करिणा वञ्चिताऽस्मि। हा प्रिये। दावा

तुम उसके नीचे पहुँचने ही उसकी शाखा पकड लेना मैं भी पकड लूगा। इससे हम तुम दोनों इस हाथी की स्वच्छद गति से सुरक्षित होकर आनदपूर्वक अपने नगर मे पहुच जावेंगे। राजा इस प्रकार रानी को समझा रहे थे कि इतने म वह हाथी उस वटवृक्ष के नीचे आ पहुँचा। आते ही राजा ने उसकी शाखा पकड ली परतु रानी ने ज्यो ही उसके पकडने का प्रयास किया कि इतने म ही वह गज वहा से आगे की ओर निकल गया। रानी अकेली अब गज पर बैठी रह गई। हाथी अब अदृश्य हो गया तब वटवृक्ष से नीचे उतरे हुए राजा ने अपनी रानी के विरह मे दु खित होकर विलाप करना प्रारम्भ किया, विलाप करते २ उन्होंने कहा—हे रानी! भयकर वन में पहुँचकर अकेली तेरी वहा क्या दशा होगी? अब तुझ से कैसे मिलना हो सकेगा। हाय २ इस हाथी रूपी वैरी ने तो मुझे ठगकर मेरे घरका ही सत्यानाश कर दिया। हे रानी! कहो तो सही—मैं

પસાર થશે તો તમો તેની નીચે લટકતી વટવૃક્ષની ડાળીને પકડી લેજો હુ પણ પકડી લઇશ આથી આપણે આ હાથીની સ્વચ્છદ ગતિથી સુરક્ષિત બની આનદ પૂર્વક આપણા નગરમા પહોચી જઇશુ રાજા આ પ્રકારે રાણીને સમજાવી રહ્યા હતા કે, એટલામા જ તે હાથી એ વટવૃક્ષની નીચે આવી પહોચ્યો પહોચતા જ રાજાએ તેની ડાળીને પકડી લીધી પર તુ રાણીએ જ્યા ડાળીને પકડવાનો પ્રયાસ કર્યો કે, એટલામા તે ગજરાજ ત્યાથી આગળ નીકળી ગયો આથી રાણી એકલી જ હાથી ઉપર રહી ગઈ હાથી જ્યારે દૂર નીકળી ગયો ત્યારે વટવૃક્ષથી નીચે ઉતરેલા રાજાએ પોતાની રાણીના વિરહમા દુ ખી બની વિલાપ કરવા માડયો વિલાપ કરતા રાજાએ કહ્યુ, હે રાણી! ભયકર વનમા પહોચીને તારી એકલીની ત્યા શુ દશા થશે? હુવે હુ તને કઈ રીતે મળી શકીશ? હાય હાય! આ હાથીરૂપી વેરીએ મને ઠગીને મારા ઘરનુ સત્યાનાશ વાળી દીધુ હે રાણી! કહો તો ખરા કે, હુ આ દવાગ્નિના

मानः वर्षर्तोरागमनेनातिरमणीयमाराममागतः । तत्र गजः समागत नवीन मेघवर्षितजलसम्पर्कसमुत्पन्न घ्राणेन्द्रियतृप्तिकर भूमेर्गन्धं समाघ्राय विन्ध्याचलाटवीं स्मरन् स गजो भयङ्करकान्तारं प्रत्यधावत । बहुसुभटैर्निवार्यमाणोऽपि स गजः कदाग्रहात् शठ इव गमनान्नप्रतिनिवृत्तः । एवमसफलगजनिवर्तनोपायेषु राजभटेषु पश्यत्सु स गजो राजानं राज्ञीं च समादाय निर्जने वने प्रविष्टः । राजा तत्र वने दूरस्थितमेकं वटवृक्षं निरीक्ष्य राज्ञीं प्रोक्तवान् अयं गजो वटवृक्षस्याधःस्थितेन मार्गेण गमिष्यति । समायाते वटवृक्षे त्वया

की शोभा इस समय वर्षा ऋतु के आगमन से अति रमणीय हो रही थी। राजा ने चलते समय रानी के ऊपर स्वयं अपने हाथों से पूर्णचन्द्र समान रम्य छत्र धरा था। साथ मे सैनिक जन भी चलते थे। पुरवासियों ने भी हर्ष मनाया। बगीचे में पहुँचते ही हाथी वर्षा के नवीन जल से समन्वित भूमि को घ्राणेन्द्रिय के तृप्ति कारक सुगधी को सूघते ही विंध्याचल की स्मृति आजाने से उसी तरफ इन दोनों को लेकर भाग गया। अनेक योद्धाओं ने उस हाथी को इस उद्दडता से निवारित करने का काफी प्रयत्न भी किया तो भी कदाग्रह से शठ को तरह वह अपनी इस गमनरूप उद्दडता में निवृत्त नहीं हुआ। पीछे लौटाने की क्रिया मे असफल बने हुए उन योद्धाओं के देखते २ ही वह गजराज राजा रानी को लेकर एक भयकर अटवी में चला गया। राजा ने वहा दूर से एक वटवृक्ष को देखकर रानी से कहा देखो यह गज इस वटवृक्ष के नीचे के मार्ग से जावेगा सो

ઋતુના આગમનથી અતિ રમણીય દીસતી રાજાએ ચાલતી વખતે રાણીના ઉપર પોતે પોતાના હાથોથી પૂર્ણ ચન્દ્ર જેવુ રમણીય છત્ર ધરી રાખેલ હતુ સાથમા સૈનિકજનો પણ ચાલતા હતા પુરવાસીઓએ પણ હર્ષ મનાવ્યો બગીચામા પહોચતા જ હાથી વર્ષાના નવીન જળથી ભીંજાયેલી ભૂમિમાથી આવતી તૃપ્તિકારક સુગધને ઘ્રાણેન્દ્રિય દ્વારા સુઘતા જ તેનામા વિંધ્યાચળની સ્મૃતિ જાગી જતા તે તરફ એ બન્નેને લઈને ભાગ્યો અનેક યોદ્ધાઓએ તે હાથીની આ ઉદ્દડતાનુ નિવારણ કરવાનો ઘણો પ્રયત્ન કર્યો તો પણ હઠાગ્રહથી શઠની માફક તે પોતાની એ ગમનરૂપ ઉદ્દડતાથી અટકયો નહીં પાછા ફેરવવાની ક્રિયામા અસફળ બનેલા એ યોદ્ધાઓના જોતા જોતામા જ તો તે ગજરાજ રાજા રાણીને લઈને એક ભયકર જગલમા પહોચી ગયો રાજાએ દૂરથી આવી રહેલા એક વટવૃક્ષને જોઈને રાણીને કહ્યુ જુઓ! આ હાથી પેલા સામે દેખાતા વટવૃક્ષની નીચે થઈને

वटशाखाऽवलम्बनीया, अहमप्यवलम्बिष्ये। तत आवां सुखेन स्वपुरीं गमिष्यावः। एवं वदति नृपे हस्ती वटवृक्षस्याधस्तात् समागतः। नृपस्तच्छाखामालम्बितवान्। परन्तु राज्ञी यावद्वटशाखा ग्रहीतुमुद्यता भवति, तावद् हस्ती निःसृतः। हस्ती तामादायाग्रे प्रचलितः। समवलम्बितवटशाखो नृपस्ततोऽवतीर्य गजापहृतां स्वानुगप्रियामपश्यन् तद्विरहजनितेनदुःखेन प्रपीडितहृदयः एवं विलापमकरोत् अयि कान्ते। त्वैकाकिन्या भयङ्करे वने का दशा भविष्यति? कदा पुनस्त्वं मिलिष्यति? अहो! अमुना रिपुरूपेण करिणा वञ्चितोऽस्मि! हा प्रिये! हाऽहं

तुम उसके नीचे पहुँचते ही उसकी शाखा पकड लेना मैं भी पकड लूंगा। इससे हम तुम दोनों इस हाथी की स्वच्छंद गति से सुरक्षित होकर आनन्दपूर्वक अपने नगर में पहुंच जावेंगे। राजा इस प्रकार रानी को समझा रहे थे कि इतने में वह हाथी उस वटवृक्ष के नीचे आ पहुँचा। आते ही राजा ने उसकी शाखा पकड ली परन्तु रानी ने ज्यों ही उसके पकडने का प्रयास किया कि इतने में ही वह गज वहां से आगे की ओर निकल गया। रानी अकेली अब गज पर बैठी रह गई। हाथी अब अदृश्य हो गया तब वटवृक्ष से नीचे उतरे हुए राजा ने अपनी रानी के विरह में दुःखित होकर विलाप करना प्रारम्भ किया, विलाप करते २ उन्होंने कहा—हे रानी! भयंकर वन में पहुँचकर अकेली तेरी वहां क्या दशा होगी? अब तुझ से कैसे मिलना हो सकेगा। हाय २ इस हाथी रूपी वैरी ने तो मुझे ठगकर मेरे घरका ही सत्यानाश कर दिया। हे रानी! कहो तो सही—मैं

પસાર થશે તો તમો તેની નીચે લટકતી વટવૃક્ષની ડાળીને પકડી લેજો હું પણ પકડી લઈશ આથી આપણે આ હાથીની સ્વચ્છંદ ગતિથી સુરક્ષિત બની આનંદ પૂર્વક આપણા નગરમાં પહોંચી જઈશું રાજા આ પ્રકારે રાણીને સમજાવી રહ્યા હતા કે, એટલામાં જ તે હાથી એ વટવૃક્ષની નીચે આવી પહોંચ્યો પહોંચતા જ રાજાએ તેની ડાળીને પકડી લીધી પરંતુ રાણીએ જ્યાં ડાળીને પકડવાનો પ્રયાસ કર્યો કે, એટલામાં તે ગજરાજ ત્યાંથી આગળ નીકળી ગયો આથી રાણી એકલી જ હાથી ઉપર રહી ગઈ હાથી જ્યારે દૂર નીકળી ગયો ત્યારે વટવૃક્ષથી નીચે ઉતરેલા રાજાએ પોતાની રાણીના વિરહમાં દુઃખી બની વિલાપ કરવા માંડયો વિલાપ કરતા રાજાએ કહ્યું, હે રાણી! ભયંકર વનમાં પહોંચીને તારી એકલીની ત્યાં શું દશા થશે? હવે હું તને કઈ રીતે મળી શકીશ? હાય હાય! આ હાથીરૂપી વેરીએ મને ઠગીને મારા ઘરનું સત્યાનાશ વાળી દીધું હે રાણી! કહો તો ખરા કે, હું આ દવાગ્નિના

दवाग्निरिव दुःसहं ममाभूतपूर्वं त्वद्वियोगजनितं दुःखं कथं सहिष्ये। इदं त्वद्वियोगजनितं दुःखं घटे समुद्र इव मम हृदये न माति। सम्प्रत्यहं किं करोमि? क्व गच्छामि? स्वदुःखं कस्मै निवेदयामि? इत्यादि विलपन् दुःखसमाक्रान्तचित्तो राजा गजचरणन्यासानुसारेण चम्पापुर्यां समागतः।

इतश्च गजः पद्मावतीमादाय सिंहव्याघ्रादिभयङ्करप्राणिगणसङ्कुले महारण्ये समागतः। पिपासाकुलः स करी तत्रैकस्मिन् सरोवरे प्रविष्टः। यथा ऐरावतः समुद्रे क्रीडति, तथैव स तस्मिन् सरोवरे क्रीडति। एवं क्रीडापरे तस्मिन् गजे सा राज्ञी तस्य पृष्ठात् महागिरेः मृगीव शनैरवतीर्य हंसीव सरोवरं तीर्त्वा तटप्रदेशे समागता। तत्र भयप्रदं महारण्यं परितः पश्यन्ती यूथभ्रष्ट

तेरे इस दवाग्नि के समान दुःसह अभूतपूर्व वियोगजनित दुःख को कैसे अब सहन कर सकूंगा। घट में जैसे समुद्र नहीं समा सकता है उसी प्रकार हे रानी! तेरा यह वियोग दुःख मेरे हृदय में नहीं समा रहा है। अब इस समय मैं क्या करूँ-कहाँ जाऊँ-किससे अपनी इस विपत्ति की कथा कहूं। इस प्रकार विलाप करते २ राजा वहां से हाथी के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए पीछा चंपापुरी ही वापिस लौट आये।

उधर हाथी पद्मावती को लेकर सिंह, व्याघ्र आदि भयंकर प्राणियों से समाकुल महारण्य में जा पहुँचा। वहां एक सरोवर था। उसमें पानी पीने के लिये यह उतरा। जब यह पानी पी चुका तो समुद्र में एरावत की तरह वह उसी में क्रीडा करने लग गया। क्रीडा में विशेष मग्न इसके होने पर महापर्वत से मृगी की तरह रानी उसके उपर से धीरे से उतर गई। और सरोवर से तैर कर तट पर आ

જેવા દુસહ અભૂતપૂર્વ તમારા વિયોગના દુખને કઇ રીતે સહન કરી શકીશ? ઘટમા જે રીતે સમુદ્ર સમાઈ શકતો નથી તે પ્રકારથી હે રાણી! તારૂ આ વિયોગ દુખ મારા હૃદયમા સમાતુ નથી હવે આ સમયે હુ શુ કરૂ? કયા જાઉ? કોને મારી આવી વિપત્તિની કથા કરૂ? આ પ્રમાણે વિલાપ કરતા કરતા તે રાજા ત્યાથી હાથીના પગલાને જોતા જોતા ચપાપુરીમાં પાછા ફર્યો

આ તરફ હાથી પદ્માવતીને લઈને સિહ, વાઘ, આદિ ભયકર પ્રાણીઓથી ભરેલા મહા અરણ્યમા પહોચ્યો ત્યા એક સરોવર હતુ તેમા પાણી પીવા માટે તે ઉતર્યો જ્યારે તે પાણી પી ચુકયો ત્યારે સમુદ્રમા ઐરાવતની માફક તે એ સરોવરમા ક્રીડા કરવા લાગ્યો ક્રીડામાં વિશેષ મગ્ન થઈ જવાથી, [illegible] ઉપ

मृगीव भयविह्वला सा राज्ञी उच्चै रुदितवती। राज्या रुदितशब्द श्रुत्वा तस्या दुःखेन दुःखिता पक्षिणोऽप्युच्चैरुदितवन्त'। ततः कथचित् किंचिद् धैर्यमवलम्ब्य पश्चात्सा एव चिन्तितवती–स्वकृतकर्मवशादव प्राणिनः सुख दुःखान्यनुभवन्ति। ममापीयमापत्ति. पूर्वकृतदुष्कृतवशादेव समापतिता। अतिचिक्कणोऽय कर्म मलो रोदनजलैरपनेतु न शक्यते। अतो मया रोदन न कर्तव्यम्। इदमरण्य सिंह व्याघ्रादिश्वापदसमाकुलमस्ति। अत्र मरणाद्यापत्तेराशङ्काऽपि वर्तते। अतः

गई। यूथ से भ्रष्ट मृगी की तरह अशरण बनी हुई इसने वहा ज्यों ही चारो ओर अपनी दृष्टि फैलाई कि इसको जगल के सिवाय और कुछ नहीं दिखाई पडा। भय से विह्वल होकर यह जोर २ से रोने लगी। वहा के पक्षियो ने ज्यो ही इसका रोना सुना तो वे विचारे भी इसके दुःख से दुःखित होकर इसी के साथ रोने लग गये। रानी ने विचारा कि–अब यहा रोने से काम नहीं चलेगा। फिर कुछ धैर्य धारण कर उसने विचार किया कि–अपने २ कर्मो के अनुसार ही प्रत्येक प्राणी सुख और दुःख भोगा करता है। मुझे भी जो इस आपत्ति का सामना करना पडा है उसमे भी मेरा पूर्वोपार्जित अशुभ दुष्कर्म ही कारण है। इस रोदनरूप जल के द्वारा अति चिक्कण इस कर्मरूप रजका अपनयन नहीं हो सकता है। अत' यहा रोना व्यर्थ है। यह जगल सिंह, व्याघ्र आदि श्वापदो से समाकुल है। यहा सुरक्षित होकर ठहरने मे भी आशका है। क्यों कि इन जीवो के

રથી ઉતરની મૃગલીની માફક ધીરે ધીરે તેના ઉપરથી ઉતરી ગઈ અને જળમા તરતી તરની તે કિનારા ઉપર પહોચી ગઈ પોતાના જુથથી જુદી પડેલી મૃગલીની માફક અશરણ બનેલી રાણીએ જ્યારે ચારે બાજુ પોતાની દૃષ્ટિ ફેરવી તો તેને જ ગલના સિવાય કશુ પણ નજરે ન પડયુ આ કારણે ભયથી વિહ્વળ બની તે જોર જોરથી એકદમ રોવા લાગી ત્યાના પક્ષીઓએ જ્યારે તેનુ આવુ રૂદન સાભળ્યુ તો તેઓ બિચારા પણ તેના દુ ખથી દુ ખિત બની તેની સાથે રોવા લાગ્યા રાણીએ વિચાર્યું કે હવે અહી રોવાથી કોઈ અર્થ સરવાનો નથી પછી તેણે ધૈર્ય ધારણ કરીને વિચાર્યું કે, પોતપોતાના કર્મ અનુસાર જ પ્રત્યેક પ્રાણી સુખ અને દુ ખને ભોગવે છે મારે પણ જે આ આપત્તિનો સામનો કરવો પડયો છે તેમા મારૂ પૂર્વોપાર્જીત અશુભ દુષ્કર્મ જ કારણરૂપ છે આ રૂદનરૂપ જળથી અતિ ચીકણા આ કર્મરૂપ રજનુ અપનયન થઇ શકવાનુ નથી આથી અહીં રોવુ વ્યર્થ છે આ જ ગલ સિહ, વાઘ આદિ હિસક પશુઓથી ભરેલુ છે અહીં સુરક્ષિત થઇને રહેવાની પણ શકયતા નથી કેમકે આ હિસક વૃત્તિના જીવોથી

प्रमाद पारतन्त्र्य कदापि न कर्तव्यम्। इति विचार्य कृतचतुःशरणा शुद्धा-
शया सा राज्ञी सर्वान् जीवान् क्षमयित्वा, स्वपूर्वकृतपापं निन्दित्वा,
अरण्यनिस्तरणावधिकं साकारानशनं कृत्वा पञ्चपरमेष्ठिनो नमस्कृत्य च,
दिङ्मूढत्वात् स्वनगरस्य मार्गमजानती शीघ्रमेकदिशमुद्दिश्य गन्तुं प्रवृत्ता।
एवमेकाकिनी गच्छन्ती पद्मावती भीममार्गमतिक्रम्य तत्र कञ्चिदेकं तापसम्
पश्यत्। तं तापसं दृष्ट्वा पद्मावती महोदधौ भग्नप्रवहणोऽन्यं प्रवहणमागत-
मुपलभ्य यथानन्दमनुभवति, तथानन्दमनुभवितवती। कृतप्रणामा तां स

द्वारा मरण का भय प्रतिक्षण बना हुआ है। इसलिये बुद्धिमानों से कुछ इस विषय में प्रयत्न करना चाहिये। प्रमाद से काम बिगड जाता है। इस प्रकार सोच समझकर रानी समस्त जीवों को क्षमा पना कर चार शरणों को अंगीकार करके शुद्ध आशयसंपन्न बन गई और पूर्वकृत पापों की निंदा करके "अरण्य से जबतक मैं मेरा निस्तरण नहीं होगा तबतक मैं साकार अनशन से रहूंगी" इस प्रकार का नियम लेकर और पञ्चपरमेष्ठियों को नमस्कार कर वह वहां से दिग्मूढ होने की वजह से अपने नगर के मार्ग को नहीं जानती हुई भी किसी एक दिशाकी ओर शीघ्र ही चली। चलते २ जब यह जंगल का बहुत कुछ मार्ग तय कर चुकी तब इसको एक तापस दिखलाई पडा, उसको देखते ही जैसे कोई भग्न प्रवहणवाला नाव व्यक्ति अन्य प्रवहण को आता हुआ देखकर आनंद का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार इसको भी आनंदका अनुभव होने लगा। प्रणाम करने पर इससे उस ताप

મરણનો ભય પ્રતિક્ષણ રહેલો જ છે માટે આ બાબતમાં બુદ્ધિથી કામ લેવું જોઈએ પ્રમાદથી કામ બગડી જાય છે આ પ્રમાણે ખૂબ વિચાર કરીને રાણીએ સઘળા જીવોની ક્ષમાપના કરી ચાર શરણાનો અંગિકાર કરી શુદ્ધ આશય સંપન્ન બની ગઈ અને પૂર્વકૃત પાપોની નિંદા કરીને "જંગલમાંથી જ્યાં સુધી મારો છુટકારો નહીં થાય ત્યાં સુધી હું સાકાર અનશનથી રહીશ" આ પ્રકારનો નિયમ લઈને અને પંચપરમેષ્ઠીને નમસ્કાર કરીને તે ત્યાંથી દિગ્મૂઢ હોવાના કારણથી પોતાના નગરના મારગને ન જાણતી હોવા છતાં કોઈ એક દિશાની તરફ ઝડપથી ચાલવા લાગી ચાલતા ચાલતા જ્યારે તે એ જંગલનો ઘણો એવો ભાગ ઓળંગી ચૂકી ત્યારે તેને એક તાપસ દૃષ્ટિએ પડયા તેને જોતાં જ જેમ કોઈ તુટી પડેલા દિલનો માણસ બીજાને પોતાની તરફ આવતો જોઈને આનંદિત બને છે આ જ પ્રકારે એ રાણીને પણ આનંદનો અનુભવ થવા લાગ્યો પ્રણામ કરવાથી તેને એ

तापसः पृष्टवान्-पुत्रि ! त्वं काऽसि ? कथमिहैकाकिनी समायाताऽसि ? ततः सा प्राह-महाभाग ! मां राजश्चेटकस्य पुत्रीं चम्पाधीशस्य दधिवाहनस्य वधूं पद्मावतीं जानातु। अहं मदोन्मत्तेन गजेनात्रानीताऽस्मि। इत्यादि सकलं स्ववृत्तान्तं तापसाय निवेदितवती। तदनु तापसः प्राह-पुत्रि ! अहं तव पितुः राजश्चेटकस्य मित्रमस्मि। अतस्त्वं भयं शोकं च मा कुर्याः। इत्युक्त्वा स तापसश्रेष्ठः पक्वफलादिभिस्तस्या आतिथ्यमकरोत्। ततः स तापसः तां सहादाय वनान्तप्रदेशावधि समागत्य प्रोवाच भद्रे ! इदं पुरोवर्ति दन्तपुरनामकं पुरं विद्यते सद्योहलकृष्टायां भूमौ न मे गन्तुं कल्पते। अतः इतोऽग्रे त्वं निर्भयागच्छ।

सने पूछा कि पुत्रि ! तुम कौन हो ? और क्यों यहां अकेली आई हुई हो ? तापसकी इस बातको सुनकर रानीने उससे अपना सब हाल कहा कि-मैं राजा चेटककी पुत्री हूं और चपापुरी के राजा दधिवाहनकी रानी हूं। मेरा नाम पद्मावती है। मुझे एक मदोन्मत्त गज यहां पर हरकर ले आया है। तापसने जब पद्मावती के मुख से इस प्रकार का हालचाल सुना तब उसने उससे धैर्य बधाते हुए कहा-पुत्री ! अब तू चिन्ता भय एवं शोक मत कर। मैं तेरे पिता चेटक का मित्र हूं। इस प्रकार कहकर उस तापसने पद्मावतीका पके फलादिकों द्वारा अतिथि सत्कार किया। पश्चात् वह उसको साथ लेकर आगे चला और चलते २ उस जंगलको पार कराकर उससे बोला-भद्रे ! देखो यह साम्हने भद्रपुर नामका नगर दिखता है सो तुम इसमें होकर अब निर्भय रीति से आगे चली जाना। मैं तुम्हारे साथ चलता-परन्तु इस समय भूमि हलोंसे जोती जा रही है अतः

તાપસે પૂછયું કે હે પુત્રી ! તમે કોણ છો, અને અહીં એકલાં શા માટે આવી છો ? તાપસના આ વાતને સાંભળીને રાણીએ તેને પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો કે હું રાજા ચેટકની પુત્રી છું અને ચંપાપુરીના રાજા દધિવાહનની પત્ની છું મારૂં નામ પદ્માવતી છે મને એક મદોન્મત્ત હાથી ઉપાડીને અહીં લઈ આવેલ છે તાપસે જ્યારે પદ્માવતીના મોઢેથી આ પ્રકારની હકીકત સાંભળી ત્યારે તેને ધૈર્ય આપતાં કહ્યું કે, પુત્રી ! હવે તું ચિંતા, ભય અને શોક ન કર હું તારા પિતા ચેટકનો મિત્ર છું આ પ્રમાણે કહીને તે તપસ્વીએ પદ્માવતીનો પાકાં ફળો આદિથી સત્કાર કર્યો, પછીથી તે તેને સાથે લઈને આગળ ચાલ્યો અને ચાલતાં ચાલતાં જંગલને વટાવ્યા બાદ તે બોલ્યા હે ભદ્રે ! આ સામું દેખાય તે ભદ્રપુર નગર છે એટલે તેમાં જઈને હવે તું નિર્ભયતાથી વહેજે હું તારી સાથે આવત પરંતુ આ સમયે જમીનમાં હળ ચાલી રહેલ છે-ચાતુર્માસ છે, જેથી તેની

प्रमादं परित्यज्य किमपि प्रयतितव्यम्। इति विचार्य सा चतुःशरणा मग
जाता सा राज्ञी सर्वान् जीवान् क्षमयित्वा, स्वपूर्वकृतपापं, निन्दित्वा,
अरण्यनिस्तरणावधिक साकारानशनं कृत्वा पञ्चपरमेष्ठिनो नमस्कृत्य च,
दिङ्मूढत्वात् स्वनगरस्य मार्गमजानती शीघ्रमेकदिशमुद्दिश्य गन्तुं प्रवृत्ता।
एकाकिनी गच्छन्ती प्रभावती दीर्घमार्गमतिक्रम्य तत्र कमिदेकं तापसं
पश्यत्। तं तापसं दृष्ट्वा प्रभावती महोदधौ भग्नप्रवहणोऽन्य प्रवहणमागत
मुपलभ्य यथानन्दमनुभवति, तथैवानन्दमनुभवितवती। कृतप्रणामा तां स

द्वारा मरण का भय प्रतिक्षण बना हुआ है। इसलिये बुद्धिमानी से कुछ इस विषय मे प्रयत्न करना चाहिये। प्रमाद से काम बिगड जाता है। इस प्रकार सोच समझकर रानी समस्त जीवो को क्षमा पना कर चार शरणो को अंगीकार करके शुद्ध आशयसपन्न बन गई और पूर्वकृत पापों की निंदा करके "अरण्य से जबतक मैं मेरा निस्तरण नही होगा तबतक मैं साकार अनशन से रहूगी" इस प्रकारका नियम लेकर और पचपरमेष्ठियो को नमस्कार कर वह वहा से दिग्मूढ होने की वजह से अपने नगर के मार्ग को नही जानती हुई भी किसी एक दिशाकी और शीघ्र ही चली। चलते २ जब यह जगल का बहुत कुछ मार्ग तय कर चुकी तब इसको एक तापस दिखलाई पडा, उसको देखते ही जैसे कोई भग्न प्रवहणवाला नाव व्यक्ति अन्य प्रवहण को आता हुआ देखकर आनद का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार इसको भी आनदका अनुभव होने लगा। प्रणाम करने पर इससे उस ताप

મરણનો ભય પ્રતિક્ષણ રહેલો જ છે માટે આ બાબતમા બુદ્ધિથી કામ લેવુ જોઇએ પ્રમાદથી કામ બગડી જાય છે આ પ્રમાણે ખૂબ વિચાર કરીને રાણીએ સઘળા જીવોની ક્ષમાપના કરી ચાર શરણાનો અગિકાર કરી, શુદ્ધ આશય સપન્ન બની ગઇ અને પૂર્વકૃત પાપોની નિંદા કરીને "જગલમાથી જ્યા સુધી મારો છુટકારો નહીં થાય ત્યા સુધી હુ સાકાર અનશનથી રહીશ" આ પ્રકારનો નિયમ લઇને અને પચપરમેષ્ઠીને નમસ્કાર કરીને તે ત્યાથી દિગ્મૂઢ હોવાના કારણથી પોતાના નગરના મારગને ન જાણતી હોવા છતા કોઇ એક દિશાની તરફ ઝડપથી ચાલવા લાગી ચાલતા ચાલતા જ્યારે તે એ જગલનો ઘણો એવો ભાગ ઓળગી ચૂકી ત્યારે તેને એક તાપસ દૃષ્ટિએ પડયા તેને જોતા જ જેમ કોઇ તુટી પડેલા દિલનો માણસ બીજાને પોતાની તરફ આવતો જોઇને આનદિત બને છે આ જ પ્રકારે એ રાણીને પણ આનદનો અનુભવ થવા લાગ્યો પ્રણામ કરવાથી તેને એ

तापसः पृष्टवान्-पुत्रि ! त्वं काऽसि ? कथमिहैकाकिनी समायाताऽसि ? ततः सा प्राह-महाभाग ! मां राजश्रेष्ठस्य पुत्रीं चम्पाधीशस्य दधिवाहनस्य वधूं पद्मावतीं जानातु। अहं मदोन्मत्तेन गजेनात्रानीताऽस्मि। इत्यादि सकलं स्ववृत्तान्तं तापसाय निवेदितवती। तदनु तापसः प्राह-पुत्रि ! अहं तव पितू राजश्रेष्ठ कस्य मित्रमस्मि। अतस्त्वं भयं शोकं च मा कुर्याः। इत्युक्त्वा स तापसश्रेष्ठः पक्वफलादिभिस्तस्या आतिथ्यमकरोत्। ततः स तापसः तां सहादाय वनान्त प्रदेशावधि समागत्य प्रोवाच भद्रे ! इह पुरोवर्ति दन्तपुरनामकं पुरं विद्यते सद्योहलकृष्टायां भूमौ न मे गन्तुं कल्पते। अत इतोऽग्रे त्वं निर्भयागच्छ।

सने पूछा कि पुत्रि ! तुम कौन हो ? और क्यों यहां अकेली आई हुई हो ? तापसकी इस बातको सुनकर रानीने उससे अपना सब हाल कहा कि-मैं राजा चेटककी पुत्री हूं और चंपापुरी के राजा दधिवाहनकी रानी हूं। मेरा नाम पद्मावती है। मुझे एक मदोन्मत्त गज यहां पर हरकर ले आया है। तापसने जब पद्मावती के मुख से इस प्रकार का हालचाल सुना तब उसने उससे धैर्य बधाते हुए कहा-पुत्री ! अब तू चिन्ता भय एवं शोक मत कर। मैं तेरे पिता चेटक का मित्र हूं। इस प्रकार कहकर उस तापसने पद्मावतीका पक्के फलादिकों द्वारा अतिथि सत्कार किया। पश्चात् वह उसको साथ लेकर आगे चला और चलते २ उस जंगलको पार कराकर उससे बोला- भद्रे ! देखो यह साम्हने भद्रपुर नामका नगर दिखता है सो तुम इस मे होकर अब निर्भय रीति से आगे चली जाना। मैं तुम्हारे साथ चलता-परंतु इस समय भूमि हलो से जोती जा रही है अतः

તાપસે પૂછ્યું કે, હે પુત્રી ! તમે કોણ છો, અને અહીં એકલાં શા માટે આવી છો ? તાપસના આ વાતને સાંભળીને રાણીએ તેને પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો કે હું રાજા ચેટકની પુત્રી છું અને ચંપાપુરીના રાજા દધિવાહનની પત્ની છું મારૂં નામ પદ્માવતી છે મને એક મદોન્મત્ત હાથી ઉપાડીને અહીં લઈ આવેલ છે તાપસે જ્યારે પદ્માવતીના મોઢેથી આ પ્રકારની હકીકત સાંભળી ત્યારે તેને ધૈર્ય આપતાં કહ્યું કે, પુત્રી ! હવે તું ચિંતા, ભય અને શોક ન કર હું તારા પિતા ચેટકનો મિત્ર છું આ પ્રમાણે કહીને તે તપસ્વીએ પદ્માવતીનો પાકાં ફળો આદિથી સત્કાર કર્યો, પછીથી તે તેને સાથે લઈને આગળ ચાલ્યો અને ચાલતાં ચાલતાં જંગલને વટાવ્યા બાદ તે બોલ્યા હે ભદ્રે ! આ સામું દેખાય તે ભદ્રપુર નગર છે એટલે તેમાં જઈને હવે તું નિર્ભયતાથી વહેજે હું તારી સાથે આવત પરંતુ આ સમયે જમીનમાં હળ ચાલી રહેલ છે-ચાતુર્માસ છે, જેથી તેના

प्रमादं परित्यज्य किमपि प्रयतितव्यम्। इति विचार्य सा चन्द्रलेखा महादेवी सा राज्ञी सकलान् जीवान् क्षमयित्वा, स्मृत्वा पूर्वकृतपापं, निन्दित्वा, अरण्यनिस्तरणावधिकं साकारानशनं कृत्वा पञ्चपरमेष्ठिनो नमस्कृत्य च, दिङ्मूढत्वात् स्वनगरस्य मार्गमजानती यां कांचिद्दिशमुद्दिश्य सत्वरं गन्तुं प्रवृत्ता। एवंविधा गच्छन्ती पद्मावती दीर्घमार्गमतिक्रम्य तत्र कञ्चिदेकं तापसमपश्यत्। तं तापसं दृष्ट्वा पद्मावती महोदधौ भग्नप्रवहणोऽन्यं प्रवहणमागतमुपलभ्य यथाऽऽनन्दमनुभवति, तथैवाऽऽनन्दमनुभवितवती। कृतप्रणामा तां स

द्वारा मरण का भय प्रतिक्षण बना हुआ है। इसलिये बुद्धिमानों से कुछ उस विषय में प्रयत्न करना चाहिये। प्रमाद से काम बिगड जाता है। इस प्रकार सोच समझकर रानी समस्त जीवों को क्षमापना कर चार शरणों को अंगीकार करके शुद्ध आशयसंपन्न बन गई और पूर्वकृत पापों की निंदा करके "अरण्य से जबतक मैं मेरा निस्तरण नहीं होगा तबतक मैं साकार अनशन से रहूंगी" इस प्रकार का नियम लेकर और पंचपरमेष्ठियों को नमस्कार कर वह वहां से दिग्मूढ होने की वजह से अपने नगर के मार्ग को नहीं जानती हुई भी किसी एक दिशा की ओर शीघ्र ही चली। चलते २ जब यह जंगल का बहुत कुछ मार्ग तय कर चुकी तब इसको एक तापस दिखलाई पडा, उसको देखते ही जैसे कोई भग्न प्रवहणवाला नाव व्यक्ति अन्य प्रवहण को आता हुआ देखकर आनंद का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार इसको भी आनंद का अनुभव होने लगा। प्रणाम करने पर इससे उस ताप

મરણનો ભય પ્રતિક્ષણ રહેલો જ છે માટે આ બાબતમાં બુદ્ધિથી કામ લેવું જોઈએ પ્રમાદથી કામ બગડી જાય છે આ પ્રમાણે ખૂબ વિચાર કરીને રાણીએ સઘળા જીવોની ક્ષમાપના કરી ચાર શરણાનો અંગિકાર કરી, શુદ્ધ આશય સંપન્ન બની ગઈ અને પૂર્વકૃત પાપોની નિંદા કરીને "જંગલમાંથી જ્યાં સુધી મારો છુટકારો નહીં થાય ત્યાં સુધી હું સાકાર અનશનથી રહીશ" આ પ્રકારનો નિયમ લઈને અને પંચપરમેષ્ઠીને નમસ્કાર કરીને તે ત્યાંથી દિગ્મૂઢ હોવાના કારણથી પોતાના નગરના મારગને ન જાણતી હોવા છતાં કોઈ એક દિશાની તરફ ઝડપથી ચાલવા લાગી ચાલતાં ચાલતાં જ્યારે તે એ જંગલનો ઘણો એવો ભાગ ઓળંગી ચૂકી ત્યારે તેને એક તાપસ દૃષ્ટિએ પડયા તેને જોતાં જ જેમ કોઈ તુટી પડેલા દિલનો માણસ બીજાને પોતાની તરફ આવતો જોઈને આનંદિત બને છે આ જ પ્રકારે એ રાણીને પણ આનંદનો અનુભવ થવા લાગ્યો પ્રણામ કરવાથી તેને એ

तापसः पृष्टवान्–पुत्रि! त्वं काऽसि? कथमिहैकाकिनी समायाताऽसि? ततः सा प्राह–महाभाग! मां राजश्रेष्ठचेटकस्य पुत्रीं चम्पाधीशस्य दधिवाहनस्य वधूं पद्मावतीं जानातु। अहं मदोन्मत्तेन गजेनात्रानीताऽस्मि। इत्यादि सकलं स्ववृत्तान्तं तापसाय निवेदितवती। तदनु तापसः प्राह–पुत्रि! अहं तव पितुः राजश्रेष्ठ कस्य मित्रमस्मि। अतस्त्वं भयं शोकं च मा कुर्याः। इत्युक्त्वा स तापसश्रेष्ठः पत्रफलादिभिस्तस्या आतिथ्यमकरोत्। ततः स तापसः तां सहादाय वनान्त प्रदेशादधि समागत्य प्रोवाच भद्रे! इदं पुरोवर्ति दन्तपुरनामकं पुरं विद्यते सद्योहलकृष्टायां भूमौ न मे गन्तुं कल्पते। अतः इतोऽग्रे त्वं निर्भयागच्छ।

सने पूछा कि पुत्रि! तुम कौन हो? और क्यों यहां अकेली आई हुई हो? तापसकी इस बातको सुनकर रानीने उससे अपना सब हाल कहा कि–मैं राजा चेटककी पुत्री हूं और चंपापुरी के राजा दधिवाहनकी रानी हूं। मेरा नाम पद्मावती है। मुझे एक मदोन्मत्त गज यहां पर हरकर ले आया है। तापसने जब पद्मावती के मुख से इस प्रकार का हालचाल सुना तब उसने उससे धैर्य बधाते हुए कहा–पुत्री! अब तू चिन्ता भय एवं शोक मत कर। मैं तेरे पिता चेटक का मित्र हूं। इस प्रकार कहकर उस तापसने पद्मावतीका पके फला दिकों द्वारा अतिथि सत्कार किया। पश्चात् वह उसको साथ लेकर आगे चला और चलते २ उस जंगलको पार कराकर उससे बोला–भद्रे! देखो यह साम्हने भद्रपुर नामका नगर दिखता है सो तुम इसमें होकर अब निर्भय रीति से आगे चली जाना। मैं तुम्हारे साथ चलता–परंतु इस समय भूमि हलो से जोती जा रही है अतः

તાપસે પૂછયું કે, હે પુત્રી! તમે કોણ છો, અને અહીં એકલા શા માટે આવી છો? તાપસના આ વાતને સાંભળીને રાણીએ તેને પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો કે હું રાજા ચેટકની પુત્રી છું અને ચંપાપુરીના રાજા દધિવાહનની પત્ની છું મારૂં નામ પદ્માવતી છે મને એક મદોન્મત્ત હાથી ઉપાડીને અહીં લઈ આવેલ છે તાપસે જ્યારે પદ્માવતીના મોઢેથી આ પ્રકારની હકીકત સાંભળી ત્યારે તેને ધૈર્ય આપતાં કહ્યું કે, પુત્રી! હવે તું ચિંતા, ભય અને શોક ન કર હું તારા પિતા ચેટકનો મિત્ર છું આ પ્રમાણે કહીને તે તપસ્વીએ પદ્માવતીનો પાકાં ફળો આદિથી સત્કાર કર્યો, પછીથી તે તેને સાથે લઈને આગળ ચાલ્યો અને ચાલતાં ચાલતાં જંગલને વટાવ્યા બાદ તે બોલ્યા હે ભદ્રે! આ સામું દેખાય તે ભદ્રપુર નગર છે એટલે તેમાં જઈને હવે તું નિર્ભયતાથી જેજે હું તારી સાથે આવત પરંતુ આ સમયે જમીનમાં હળ ચાલી રહેલ છે–ચાતુર્માસ છે, જેથી તેના

प्रमाद पारवश्य क्रमपि प्रयातव्यम्। इति विचार्य तत्र चतुर्गरणा मद्दा शया सा राज्ञी सर्वजीवान् क्षामयित्वा, स्मृतपूर्वकृतपापा, निन्दित्वा, अरण्यनिस्तरणावधिक साकारानशनं कृत्वा पञ्चपरमेष्ठिनो नमस्कृत्य च, दिङ्मूढत्वात् स्वनगरस्य मार्गमजानती काश्चिदेकां दिशमुद्दिश्य त्वरितं गन्तुं प्रवृत्ता। एवंकारिणी गच्छन्ती पद्मावती भूरिमार्गमतिक्रम्य तत्र कश्चिदेकं तापसम् पश्यत्। तं तापसं दृष्ट्वा पद्मावती महोदधौ भग्नप्रवहणोऽन्य प्रवहणमागत मुपलभ्य यथानन्दमनुभवति, तथैवानन्दमनुभवितवती। कृतप्रणामा तां स

द्वारा मरण का भय प्रतिक्षण बना हुआ है। इसलिये बुद्धिमानों से कुछ इस विषय में प्रयत्न करना चाहिये। प्रमाद से काम बिगड जाता है। इस प्रकार सोच समझकर रानी समस्त जीवों को क्षमापना कर चार शरणों को अंगीकार करके शुद्ध आशयसंपन्न बन गई और पूर्वकृत पापों की निंदा करके "अरण्य से जबतक मैं मेरा निस्तरण नहीं होगा तबतक मैं साकार अनशन से रहूंगी" इस प्रकारका नियम लेकर और पञ्चपरमेष्ठियों को नमस्कार कर वह वहां से दिग्मूढ होने की वजह से अपने नगर के मार्ग को नहीं जानती हुई भी किसी एक दिशारी और शीघ्र ही चली। चलते २ जब यह जंगल का बहुत कुछ मार्ग तय कर चुकी तब इसको एक तापस दिखलाई पडा, उसको देखते ही जैसे कोई भग्न प्रवहणवाला नाव व्यक्ति अन्य प्रवहण को आता हुआ देखकर आनंद का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार इसको भी आनंदका अनुभव होने लगा। प्रणाम करने पर इससे उस ताप

મરણનો ભય પ્રતિક્ષણ રહેલો જ છે માટે આ બાબતમા બુદ્ધિથી કામ લેવુ જોઈએ પ્રમાદથી કામ બગડી જાય છે આ પ્રમાણે ખૂબ વિચાર કરીને રાણીએ સઘળા જીવોની ક્ષમાપના કરી ચાર શરણાનો અગિકાર કરી, શુદ્ધ આશય સપન્ન બની ગઇ અને પૂર્વકૃત પાપોની નિંદા કરીને "જગલમાથી જ્યા સુધી મારો છુટકારો નહીં થાય ત્યા સુધી હુ સાકાર અનશનથી રહીશ" આ પ્રકારનો નિયમ લઈને અને પચપરમેષ્ઠીને નમસ્કાર કરીને તે ત્યાથી દિગ્મૂઢ હેવાના કારણથી પોતાના નગરના મારગને ન જાણતી હોવા છતા કોઇ એક દિશાની તરફ ઝડપથી ચાલવા લાગી ચાલતા ચાલતા જ્યારે તે એ જગલનો ઘણો એવો ભાગ ઓળગી ચૂકી ત્યારે તેને એક તાપસ દૃષ્ટિએ પડ્યા તેને જોતા જ જેમ કોઇ તુટી પડેલા જહાજનો માણસ બીજાને પોતાની તરફ આવતો જોઇને આનદિત બને છે આ જ પ્રકારે એ રાણીને પણ આનદનો અનુભવ થવા લાગ્યો પ્રણામ કરવાથી તેને એ

तापसः पृष्टवान्-पुत्रि ! त्वं काऽसि ? कथमिहैकाकिनी समायाताऽसि ? ततः सा प्राह-महाभाग ! मां राजश्चेटकस्य पुत्रीं चम्पाधीशस्य दधिवाहनस्य वधूं पद्मावतीं जानातु। अहं मदोन्मत्तेन गजेनात्रानीताऽस्मि। इत्यादि सकलं स्ववृत्तान्तं तापसाय निवेदितवती। तदनु तापसः प्राह-पुत्रि ! अहं तव पितू राज्ञश्चेटकस्य मित्रमस्मि। अतस्त्वं भयं शोकं च मा कुर्याः। इत्युक्त्वा स तापसश्रेष्ठः पक्वफलादिभिस्तस्या आतिथ्यमकरोत्। ततः स तापसः तां सहादाय वनान्तप्रदेशादपि समागत्य प्रोवाच भद्रे ! इदं पुरोवर्ति दन्तपुरनामकं पुरं विद्यते सद्योहलकृष्टायां भूमौ न मे गन्तुं कल्पते। अतः इतोऽग्रेत्वं निर्भयागच्छ।

सने पूछा कि पुत्रि ! तुम कौन हो ? और क्यों यहां अकेली आई हुई हो ? तापसकी इस बातको सुनकर रानीने उस से अपना सब हाल कहा कि-मैं राजा चेटककी पुत्री हूं और चंपापुरी के राजा दधिवाहनकी रानी हूं। मेरा नाम पद्मावती है। मुझे एक मदोन्मत्त गज यहां पर हरकर ले आया है। तापसने जब पद्मावती के मुख से इस प्रकार का हालचाल सुना तब उसने उससे धैर्य बंधाते हुए कहा-पुत्री ! अब तू चिन्ता भय एवं शोक मत कर। मैं तेरे पिता चेटक का मित्र हूं। इस प्रकार कहकर उस तापसने पद्मावतीका पक्के फलादिको द्वारा अतिथि सत्कार किया। पश्चात् वह उसको साथ लेकर आगे चला और चलते २ उस जंगलको पार कराकर उससे बोला-भद्रे ! देखो यह साम्हने भद्रपुर नामका नगर दिखता है सो तुम इस में होकर अब निर्भय रीति से आगे चली जाना। मैं तुम्हारे साथ चलता-परन्तु इस समय भूमि हलो से जोती जा रही है अतः

તાપસે પૂછ્યુ કે, હે પુત્રી ! તમે કોણ છો, અને અહીં એકલા શા માટે આવી છો ? તાપસની આ વાતને સાંભળીને રાણીએ તેને પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો કે હું રાજા ચેટકની પુત્રી છું અને ચંપાપુરીના રાજા દધિવાહનની પત્ની છું મારૂ નામ પદ્માવતી છે મને એક મદોન્મત્ત હાથી ઉપાડીને અહીં લઈ આવેલ છે તાપસે જ્યારે પદ્માવતીના મોઢેથી આ પ્રકારની હકીકત સાંભળી ત્યારે તેને ધૈર્ય આપતાં કહ્યું કે, પુત્રી ! હવે તું ચિંતા, ભય અને શોક ન કર હું તારા પિતા ચેટકનો મિત્ર છું આ પ્રમાણે કહીને તે તપસ્વીએ પદ્માવતીનો પાકાં ફળો આપીને સત્કાર કર્યો, પછીથી તે તેને સાથે લઈને આગળ ચાલ્યો અને ચાલતાં ચાલતાં જંગલને વટાવ્યા બાદ તે બોલ્યા હે ભદ્રે ! આ સામું દેખાય તે ભદ્રપુર નગર છે એટલે તેમાં જઈને હવે તું નિર્ભયતાથી રહેજે હું તારી સાથે આવત પરંતુ આ સમયે જમીનમાં હળ ચાલી રહેલ છે-ચાતુર્માસ છે, જેથી તેના

प्रमादं परित्यज्य किमपि प्रयतितव्यम्। इति विचार्य कृत नमस्कारा सती तथा सा राज्ञी सकलान् जीवान् क्षमयित्वा, स्वपूर्वकृतपापं, निन्दित्वा, अरण्यनिस्तरणावधिकं साकारानशनं कृत्वा पञ्चपरमेष्ठिनो नमस्कृत्य च, दिङ्मूढत्वात् स्वनगरस्य मार्गमजानती शीघ्रमेकां दिशमुद्दिश्य ततस्तस्माद् गन्तुं प्रवृत्ता। एवमेकाकिनी गच्छन्ती पद्मावती दीर्घमार्गमतिक्रम्य तत्र कमप्येकं तापसम् पश्यत्। तं तापसं दृष्ट्वा पद्मावती यथोदधौ भग्नप्रवहणोऽन्यं प्रवहणमागतमुपलभ्य यथानन्दमनुभवति, तथाऽऽनन्दमनुभवितवती। कृतप्रणामा तां स

द्वारा मरण का भय प्रतिक्षण बना हुआ है। इसलिये बुद्धिमानों से कुछ इस विषय में प्रयत्न करना चाहिये। प्रमाद से काम बिगड जाता है। इस प्रकार सोच समझकर रानी समस्त जीवों को क्षमापना कर चार शरणों को अंगीकार करके शुद्ध आशयसंपन्न बन गई और पूर्वकृत पापों की निंदा करके "अरण्य से जबतक मेरा निस्तरण नहीं होगा तबतक मैं साकार अनशन से रहूंगी" इस प्रकार का नियम लेकर और पंचपरमेष्ठियों को नमस्कार कर वह वहां से दिग्मूढ होने की वजह से अपने नगर के मार्ग को नहीं जानती हुई भी किसी एक दिशाकी ओर शीघ्र ही चली। चलते २ जब वह जंगल का बहुत कुछ मार्ग तय कर चुकी तब इसको एक तापस दिखलाई पडा, उसको देखते ही जैसे कोई भग्न प्रवहणवाला नाव व्यक्ति अन्य प्रवहण को आता हुआ देखकर आनंद का अनुभव करने लगता है उसी प्रकार इसको भी आनंदका अनुभव होने लगा। प्रणाम करने पर इससे उस ताप

મરણનો ભય પ્રતિક્ષણ રહેલો જ છે માટે આ બાબતમાં બુદ્ધિથી કામ લેવું જોઈએ પ્રમાદથી કામ બગડી જાય છે આ પ્રમાણે ખૂબ વિચાર કરીને રાણીએ સઘળા જીવોની ક્ષમાપના કરી ચાર શરણાનો અંગિકાર કરી, શુદ્ધ આશય સંપન્ન બની ગઈ અને પૂર્વકૃત પાપોની નિંદા કરીને "જંગલમાંથી જ્યાં સુધી મારો છુટકારો નહીં થાય ત્યાં સુધી હું સાકાર અનશનથી રહીશ" આ પ્રકારનો નિયમ લઈને અને પંચપરમેષ્ટીને નમસ્કાર કરીને તે ત્યાંથી દિગ્મૂઢ હોવાના કારણથી પોતાના નગરના મારગને ન જાણતી હોવા છતાં કોઈ એક દિશાની તરફ ઝડપથી ચાલવા લાગી ચાલતાં ચાલતાં જ્યારે તે એ જંગલનો ઘણો એવો ભાગ ઓળંગી ચૂકી ત્યારે તેને એક તાપસ દૃષ્ટિએ પડયા તેને જોતાં જ જેમ કોઈ તુટી પડેલા દિલનો માણસ બીજાને પોતાની તરફ આવતો જોઈને આનંદિત બને છે આ જ પ્રકારે એ રાણીને પણ આનંદનો અનુભવ થવા લાગ્યો પ્રણામ કરવાથી તેને એ

कार्यो भवति। किंच वातो धूतध्वजप्रान्तवच्चञ्चले धनधान्यादिरूपैश्वर्ये चञ्चले प्रियजनसंगमे च किंचिदपि सुखं नास्ति प्राणिनाम्। जन्ममृत्युजराव्याधिशोक दुःस्थित्यादि संकुलेऽस्मिन् संसारे प्राणिनां प्रायो दुःखमेव भवति। विषया-द्युपभोगजनितं यत्किमपीह सुखं तदपि परिणामविरसत्वाद् दुःखमेव। यत संसारो निरन्तरदुःखसाम्प्रमतो विवेकिनो जना मोक्षमार्गमेव प्रतिपद्यन्ते। इति तस्या देशनां श्रुत्वा सा पद्मावती वैराग्यवासितान्तःकरणा दीक्षां गृहीतुमुद्यता। ततः प्रवर्तिन्या पृष्टाऽपि सा 'एतां मा दीक्षां न दास्यन्तीति

कर्मों का विपाक ही ऐसा है। यह देवताओं को भी चक्कर मे डालकर उनको मूढ बना देता है। इसका कोई उपाय नही है। पवन से प्रेरित ध्वजा के प्रान्तभाग की तरह चचल यह धन धान्यादि रूप ऐश्वर्य है। प्रियजनोका सगम भी सदा स्थायी नही है। और न इनके समागम मे ही कुछ सुख है। यह ससार जन्मजरा एव मरण आदि भय कर उपद्रवो से सकुल बना हुआ है। फिर भला इस मे रहनेवाले प्राणियो को दुःख के सिवाय सुख मिल ही कैसे सकता है। विषया दिको के उपभोग से जिसको ससारियोने सुख मान रखा हैं वह भी वास्तव मे सुख नहीं है-परिणाम मे विरस होने से वहतो एक दुःख का ही प्रकार करते है। जो निरन्तर दुःखोका स्थान है। उसी का नाम तो ससार है। इसी लिये विवेकी जन मोक्षमार्ग को अपनाते है। और इसको छोडने का प्रयास करते है। इस प्रकार उस प्रवर्तिनी की धर्मदेशना का पान कर पद्मावती का मन वैराग्य से वासित हो जाने के कारण दीक्षा ग्रहण करने के लिये उद्यत हो गयी। प्रवर्तिनीने उससे

કરા કર્મોનો વિપાકજ એવો હોય છે કે, જે દેવતાઓને પણ ચક્કરમા નાખીને તેમને મૂઢ બનાવી દે છે તેનો કોઈ ઉપાય નથી પવનથી પ્રેરિત ધજાનો જેમ ઉપલો ભાગ હોય છે તેની માફક આ ધન ધાન્યાદિરૂપ ઐશ્વર્ય ચચળ છે પ્રિયજનનો સગમ પણ સદા સ્થાયી નથી અને સમાગમમા કોઈ સુખ પણ નથી આ સસાર જન્મ, જરા અને મરણ આદિ ભયકર એવા ઉપદ્રવોથી ભરાયેલો છે તો પછી ભલા એમા રહેવાવાળા પ્રાણીઓને દુખના સિવાય સુખ ક્યાથી મળી શકે ? વિષય આદિના ઉપભોગથી જેને સસારીઓ સુખ માની રહ્યા છે તે વાસ્તવમા સુખ નથી પરિણામમા વિરસ હોવાથી તે તો એક દુખનો પ્રકારજ છે જે નિરતર દુખોનુ સ્થાન છે, તેનુ નામ જ સસાર છે આ માટે વિવેકી જન મોક્ષ માર્ગને અપનાવે છે અને તેને છોડવાનો પ્રયાસ કરે છે આ પ્રમાણે સાધ્વીજીની ધર્મદેશનાનુ પાન કરીને પદ્મવતીનુ મન વૈરાગ્યથી ભરપૂર થઈ જવાના કારણે દીક્ષા ગ્રહણ કરવાને માટે તે તૈયાર થઇ ગઇ સાધ્વીજીએ તેને ગર્ભ હોવાની વાત

अनेन पथा गच्छन्तो त्वं दन्तपुरे गमिष्यसि । तत्पुरस्य राजा दन्तवक्त्रोऽस्ति । ततः त्वया चम्पायां गन्तव्यम् । एवं पद्मावतीमुक्त्वा स तापसस्ततो निवृत्त । पद्मावत्यपि तापसाभिहितपथेन दन्तपुरे समागता । तत्र सा सुगुप्तव्रतायाः प्रवर्तिन्याः समीपे समागता । त्रिकृत्वः कृतवन्दना पद्मावतीं प्रवर्तिनी पृष्टवती श्राविके ! त्वं कुतः समागताऽसि ? । ततः सा गर्भं विना सर्वं वृत्तान्त निवेदितवती । ततः स्वानुभूतदुःखस्मरणेन संजातमन्युदुःखा तां राज्ञीं प्रवर्तिनी प्रोवाच-राज्ञि ! खेदं मा कुथाः । कर्मणां परिणामो हि सुरैरप्यपति

उस में होकर चलना मेरे आचार से बाह्य है । इसी मार्ग से जाने ? तुमको एक दन्तपुर नगर मिलेगा, उसका अधिपति दन्तवक्र है । वहा से तुम फिर चंपापुरी में अच्छी तरह चली जाओगी । फिर आगे कोई भय नहीं है । इस प्रकार पद्मावती को गन्तव्य स्थान का पूरा ठिकाना दिखलाकर वह तापस वहा से लौट गया । पद्मावती इस प्रकार तपस्वी द्वारा निर्दिष्ट मार्ग से चलकर दन्तपुर आ पहुँची । वहा पर उस समय सुगुप्तव्रता साध्वी ठहरी हुई थीं । वह उनके पास गई । वहा जाकर उसने उसको तीनवार वंदना की । साध्वीजीने पद्मावती से पूछा-श्राविके ! तुम इस समय कहा से आ रही हो । अपने गर्भकी बात छिपाकर पद्मावती अपना समस्त वृत्तान्त साध्वीजी से कहने लगी । कहते २ उसको पूर्वानुभूत दुःखोका स्मरण हो आता तो वह बीच २ मे रोने लग जाती । रानीकी इस प्रकार स्थिति जान कर प्रवर्तिनीजीने उस से कहा-राज्ञि ! तुम अब खेद मत करो ।

અંદરથી ચાલવું તે મારા આચારથી વિરૂદ્ધનું છે આ માર્ગે જતાં જતાં તને દંતપુર નામનું નગર મળશે તેના અધિપતિ દંતવક્ર છે ત્યાંથી તું ફરી ચંપા નગરીમાં સારી રીતે પહોંચી શકીશ ત્યાંથી આગળ કોઈ ભય નથી આ પ્રમાણે પદ્માવતીને જવાના સ્થાનનાં પુરાં ઠેકાણાં બતાવીને તે તાપસ પાછા ફરી ગયા પદ્માવતી આ પ્રમાણે તપસ્વીએ બતાવવામાં આવેલા માર્ગે ચાલીને દંતપુર પહોંચી આ સમયે ત્યાં સુગુપ્તવ્રતા સાધ્વિ પધારેલાં હતાં તે તેની પાસે ગઈ ત્યાં જઈને તેણે સાધ્વીજીની ત્રણ વાર વંદના કરી સાધ્વીજીએ પદ્માવતીને પૂછ્યું, હે શ્રાવિકે, તું આ સમયે ક્યાંથી આવી રહી છો ? પોતાના ગર્ભની વાત છુપાવીને પદ્માવતીએ પોતાનો સઘળો વૃત્તાંત સાધ્વીજીને કહેવા માંડ્યો કહેતાં કહેતાં જ્યારે તેને પૂર્વે અનુભવેલાં દુઃખોનું સ્મરણ થતું તો વચમાં વચમાં તે રડવા લાગી જતી રાણીની આ પ્રકારની સ્થિતિ જાણીને પ્રવર્તિનીજીએ તેને કહ્યું, રાણી ! હવે તમો ખેદ ન

द्रष्टुं तत्र स्थातुं च सा प्रेमार्द्रलोचनेन बालं विलोकयन्ती प्रच्छन्नतया तत्र संस्थिता। तस्मिन्नेव समये कश्चिन्निरपत्य श्वपचस्तत्रागत्य तं गृहीत्वा स्वगृहे नीत्वा पत्न्यै दत्तवान। स तस्य नाम 'अवकर्णक.' इति कृतवान। साध्वी पद्मावती उपाश्रये समागता।

बालस्तु तस्य श्वपचस्य गृहे पङ्के पद्ममिव निरन्तरं वर्द्धते स्म। तस्य बालकस्य देहे जन्मत एव रूक्षकण्डूरासीत्। अतः स कण्डूयनप्रियोऽभूत्। स बालश्चाण्डालबालकैः सह क्रीडन्नेव ब्रवीति–अहं युष्माकं राजा, अतो यूयं मह्यं करमर्पयत। बाला' कथयन्ति–किंते करमर्पयामि ? स प्रचण्डकण्डूयुक्तो बाल

देखने के लिये तथा उपद्रव से उसकी रक्षा करने के लिये वह वहीं पर एक ओर छिपकर खडी रही और छिपी २ बडे ही प्रेमके साथ उस नवजात शिशु की और देखती रही। इसी बीच में वहा एक संतानरहित चाडाल आया और उसको उठाकर ले गया। घर जाकर उसने उस बच्चे को अपनी स्त्रीको सौंप दिया। चाडालने उसका नाम अवकर्णक रखा। बाद में साध्वी पद्मावती भी उपाश्रय मे आ गई।

पङ्क मे जिस प्रकार पङ्कज–कमल बढता है उसी प्रकार अवकर्णक भी उस चाडाल के यहा पालित पोपित होता हुआ निरन्तर बढने लगा। बालक के शरीर में जन्म से ही रूक्षकण्डू थी इसलिये उसको कण्डूयन–खुजाना–बहुत ही प्रिय लगता था। जब यह चाडाल बालकोंके साथ खेलता तो उनसे यह कहता कि मैं तुम्हारा राजा–हू तुम सब मुझे कर–टेक्स दो। उसकी इस बात से बालक उससे कहने लगते–कहो हम सब तुमको क्या कर देवें ? तब वह उनसे कहता

એ વાત જાણવાને માટે તથા ઉપદ્રવથી તેની રક્ષા કરવાના માટે તે પોતે એ સ્થળે એક બાજુ છુપાઈને ઉભી રહી અને છુપાએલી હાલતમા ખૂબ પ્રેમપૂર્વક નવા જન્મેલા બાળકને જોતી રહી એવામા એક નીર્વંશી ચાડાલ ત્યા આવ્યો અને બાળકને લઈને ચાલ્યો ગયો ઘેર જઈને તેણે તે બાળક પોતાની સ્ત્રીને સોપી દીધુ આ બધુ જોઈને પછીથી સાધ્વી પદ્માવતી પણ ઉપાશ્રયમા ચાલી ગઈ ચડાલે તેનુ નામ અવકર્ણક રાખ્યુ

કાદવમા જે પ્રકારે પકજ-કમળ વધે છે તે પ્રમાણે અવકર્ણક પણ તે ચડાળને ત્યા પાલણપોષણ પામીને નિરતર વધવા લાગ્યો બાળકના શરીરમા જન્મતાની સાથે જ રૂક્ષકડૂનો રોગ હતો આ કારણે તેને ખજવાળવાનુ ઘણુ જ પ્રિય લાગતુ હતુ જ્યારે તે બાળક ચડાલ બાળકોની સાથે ખેલતો ત્યારે તેમને એ કહેતો કે હુ તમારો રાજા છુ તમે મને કર આપો એની એ વાત ઉપરથી બાળકો તેને કહેતા કે કહો અમે તમને શુ કર આપીએ ? ત્યારે તે તેમને કહેતો કે તમે બધા

भिया गर्भवार्ता न कथितवती। ततः प्रवर्तिनी तस्यै दीक्षामदात्। दीक्षा ग्रहणानन्तर सा साध्व्याचारं सम्यक् परिपालयन्ती कतिचिन्मासान् व्यतीत वती। तावता कालेन पुष्टो गर्भः सा दीर्घोदरिणी जाता। ततस्ता साध्व्यो गर्भकारणं पृष्टवत्यः। ततः सा सविनयं कथयति–'भवत्यो मम दीक्षां न दास्यन्ति' इति भिया गर्भवार्ता मया सगोपिता इति। तदनु सा प्रवर्तिनी शय्यातरं तद् गर्भवृत्तं ज्ञापितवती। सम्प्राप्ते काले सा राज्ञी रोहणाचलभूमिर्मणिमिव पुत्र रत्नं प्रसूता। ततः सा तं बालं श्मशाने मुक्तवती। बालं को गृह्णातीति द्रष्टुम्,

गर्भ होनेकी बात पूछी भी परन्तु उसने इस भय से कि यदि इनको गर्भकी बात ज्ञात हो जावेगी तो ये मुझे दीक्षा नहीं देगी ऐसा समझ कर उसने गर्भकी बात नहीं कही। प्रवर्तिनीने उसीको दीक्षा दे दी। दीक्षा देनेके बाद जब पद्मावती के सम्यक् रीति से साध्व्याचार पालन करते २ दिन व्यतीत होने लगे पर दिनोंके व्यतीत होने के साथ २ गर्भ भी जब बढ़ने लगा तब साध्वियों को इसकी गर्भिणी होनेकी बात मालूम पडी। उन्होंने उससे गर्भका कारण पूछा। प्रत्युत्तर मे उसने विनयपूर्वक साध्वीजी से कह दिया कि–"आप लोग मुझे गर्भ सपन्न जानकर दीक्षा नहीं देंगी" इस भय से मैंने आप से गर्भकी बात छिपाली थी। प्रवर्तिनीने किसी शय्यातर को उसके गर्भके समाचार अवगत करा दिये। प्रसूतिका जब ठीक समय आया तब रानीने रोहणाचलकी भूमि जैसे मणि को उत्पन्न करती है, एक पुत्र-रत्न को उत्पन्न किया। पुत्र के होते ही उसने उसको श्मशान मे छोड दीया। तथा स्वय बालक को कौन ले जाता है, इस बात को

પૂછી પરંતુ તેણીએ એવા ભયથી કે, જો ગર્ભની વાતની તેમને જાણ થઈ જશે તો મને દીક્ષા નહીં આપે એવું સમજીને તેણે ગર્ભની વાત કરી નહીં સાધ્વીજીએ તેને દીક્ષા આપી દીધી પછી પદ્માવતીના સમ્યક્ રીતિથી સાધ્વી આચાર પાલન કરતા કરતા દિવસ જવા લાગ્યા અને દિવસોના વ્યતીત થવાથી સાથે સાથે ગર્ભ પણ વધવા લાગ્યો ત્યારે સાધ્વીઓને પદ્માવતિ ગર્ભિણી હોવાની વાત જાણવા મળી તેમણે તેને ગર્ભનું કારણ પૂછ્યું પ્રત્યુત્તરમા તેણે વિનય પૂર્વક સાધ્વીજીને કહ્યું કે, "આપ લોક મને ગર્ભ સંપન્ન જાણીને દીક્ષા નહીં આપો" એવા ભયથી મે આપનાથી મારા ગર્ભની વાત છુપાવી હતી સાધ્વી એ કોઈ સુયાણીને તેના ગર્ભના સમાચાર કહેવરાવ્યા પ્રસુતિનો જ્યારે ઠીક સમય આવ્યો ત્યારે રાણીએ રોહણાચળની ભૂમિ જેમ મણીને ઉત્પન્ન કરે છે તેમ એક પુત્ર રત્નને જન્મ આપ્યો પુત્રનો જન્મ થતાની સાથે જ તેને સ્મશાનમા છોડી દીધો અને એ બાળકને કોણ લઈ જાય છે

परो द्विजश्च श्रुतवान। ततोऽसौद्विजः प्रच्छन्नवृत्त्या भूमौ चतुरङ्गुलप्रमाणं खनित्वा तं वंशदण्डं छित्त्वा गृहीतवान्। द्विजेन गृहीतं दण्डं दृष्ट्वा कोपारुण लोचनः स करकण्डूस्तस्य हस्तात् बलाद्दण्डमादत्तवान्। द्विजोऽपि न्यायालय तं नीत्वा गतः प्रोक्तवांश्च न्यायाधीशम्-अनेन मम दण्डो बलाद् गृहीतः। करकण्डूः प्रोक्तवान्-मम श्मशानेऽय दण्डः समुत्पन्नः। अत्र ममाधिकारोऽस्ति। अतो मया गृहीतम्। ततो विप्रेण प्रोक्तम्-अनेन दण्डेन मम प्रयोजनमस्ति।

के दडको जो कोई ग्रहण करेगा वह राजा होगा। मुनिके इन वचनों को समीपस्थ निकुज (बासके झुड)के अतर्वर्ती करकण्डूने एव एककिसी ब्राह्मणने सुन लिया। सुनते ही उस ब्राह्मणने गुप चुप चतुरगुल प्रमाण भूमि खोदकर उसवश दड को निकाल लिया और लेकर चला। ज्यो ही दड को ले जाते हुए करकडूकुमारने देखा तो वह उसके ऊपर क्रुद्ध हो गया और जबर्दस्ती उसके हाथमें से वह दड छुडालिया। द्विजने उस करकडू पर आयोग (मुकदमा) कर दिया। कचहरीमें जाकर उसने कहाकि-इसने मेरे हाथमें से जबर्दस्ती दड छीन लिया है। इसके उत्तर में करकडू ने कहा-कि जिस दडको मैंने इसके हाथ में से छुडाया है वह दड मेरे द्वारा सुरक्षित श्मशान मे उत्पन्न हुआ है, अत' इस पर मेरा अधिकार है इसका नही-अपने अधिकार की वस्तु लेने मे दोषित साबित करनेकी क्या इसको आवश्यकता है। उल्टा दडका भागी इसको ही बनना पडता है जो इसने मेरी वस्तुको मुझसे विना पूछे ले लिया है। इसीके बीच ब्राह्मणने उससे कहाकि-मुझे

બની જાય મુનિના આ વચનોને પાસની નિકુજમા ઉભેલા કરકન્ડૂ અને કોઈ એક બ્રાહ્મણે સાભળી લીધી સાભળતા જ એ બ્રાહ્મણે છુપચુપ ચાર આગળ પ્રમાણ ભૂમિ ખોદીને તે વાસના દડને કાઢી લીધો અને તેને લઈને ચાલવા લાગ્યો જ્યારે એ દડને લઈ જતા બ્રાહ્મણને કરકન્ડૂએ જોયો ત્યારે તે તેના ઉપર ક્રોધાયમાન બની ગયા અને જબરદસ્તીથી તેના હાથમાથી તે દડ પડાવી લીધો બ્રાહ્મણે કરકન્ડૂ ઉપર દાવો કર્યો કચેરીમા જઈને તેણે કહ્યુ કે, આણે મારા હાથ માથી જબરદસ્તીથી દડ છીનવી લીધો છે તેના ઉત્તરમા કરકન્ડૂએ કહ્યુ કે જે દડ મે તેના હાથમાથી છોડાવી લીધો છે તે દડ મારાથી રક્ષણ કરવામા આવતા સ્મશાન ભૂમિમા ઉત્પન્ન થયેલ છે જેથી તેના ઉપર મારો અધિકાર છે, તેનો નહી પોતાના અધિકારની વસ્તુ લેવામા દોષિત કરવનો એનો શુ અધિકાર છે। ઉલ્ટા દડના ભોગી તો એણે બનવુ પડશે કારણ કે, મારી વસ્તુને મને પૂછ્યા વિવાય તેણે લઇ લીધી છે વચ્ચે બોલીને બ્રાહ્મણે તેને કહ્યુ કે, મને આ દડનુ તાત્પર્ય

माह-यूय मा सातिशय कण्डूयानम्, अनेनैव करेण युष्माकं तुष्टो भविष्यामि। नास्त्यन्येन करेण मे प्रयोजनम्। ततः सर्वे चाण्डालबालकास्त कण्डूयन्ति स्म। बालका हि कण्डूयनप्रियत्वात्तस्य करकण्डुरिति नाम कृतवन्तः। गुण क्रियादिभि र्नवीनमपि नाम जायते। ततः किंचित्समीदृत्वमापन्नः करकण्डूपर नामा सोऽवकर्णकः श्मशानरक्षणे तत्परोऽभूत्। चाण्डालकुले हि इदमेव कार्यं प्रतिष्ठितं गण्यते। एकदा तस्मिन् श्मशाने ध्यान कर्तुं द्वौ गुरुशिष्यौ मुनी समागतौ। तत्रैको दण्डलक्षणज्ञो मुनिर्वंशमेकं दृष्ट्वा सहवर्तिनं शिष्यं त दर्शयन्नि दमब्रवीत्-भूमिष्ठ चतुरङ्गुलभाग सहितस्यास्य वंशस्य दण्ड यो ग्रहीष्यति स राजा भविष्यति। मुनेरिद वचन समीपस्थ निकुञ्जान्तर्वर्ती करकण्डू, कश्चिद्

कि बस तुम सब मुझे खूब खुजलाते रहो यही तुमारा मुझे टेक्स देना है। मैं इसी टेक्स प्राप्ति से तुम सबों पर तुष्ट हो जाऊँगा। उसकी इस प्रकार बात सुनकर सब बालक मिलकर उसको खुजलाने लगते। इसी लिये बालकोंने कण्डूयन प्रिय होनेसे उसका नाम करकण्डू रख दिया। गुण क्रिया आदिकों के निमित्त से नाम भी परिवर्तित हो जाता है और उसके स्थान में दूसरा नाम पड जाता है। बढते २ जब करकण्डू प्रौढावस्था संपन्न बन गया, तब वह श्मशानकी रखवाली करने में लग गया। क्यों कि चाडालकुल में यही कार्य प्रतिष्ठित गिना जाता है। एकदिनकी बात है कि उस श्मशान म दो मुनिराज गुरुशिष्य ध्यान करने के लिये आये। उनमे गुरु दड लक्षणों के ज्ञाता थे सो उन्होंने एक बासको देखकर अपने सहवर्ती शिष्य से उसको दिख लाते हुए कहा कि-भूमि मे रहे हुए चतुरगुलभाग सहित इस बश

મને ખૂબ ખજવાળતા રહો ફક્ત આ જ કર તમારે મને આપવાનો છે અને એથી હુ તમારા ઉપર સતુષ્ટ રહીશ તેની આ વાત સાભળીને સઘળા બાળકો મળીને તેને ખજવાળતા આથી બાળકોમા કન્ડૂયન પ્રિય હોવાથી તેનુ નામ કરકન્ડૂ રાખી દીધુ ગુણ ક્રિયા આદિના નિમિત્તથી નામ પણ ફરી જાય છે અને એની જગ્યાએ બીજુ નામ પડે છે મોટો થતા થતા કરકન્ડૂ પ્રૌઢ અવસ્થાએ પહોચ્યો ત્યારે તે સ્મશાનની રખેવાળી કરવામા લાગી ગયો કેમ કે, ચડાલ કોમમા આ કામ પ્રતિષ્ઠિત મનાય છે એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે આ સ્મશાનમા બે મુનિરાજ-ગુરૂ શિષ્ય ધ્યાન કરવા માટે આવ્યા આમા ગુરૂ દડના લક્ષણોના જ્ઞાતા હતા તેમણે એક વાસને જોઇને પોતાની સાથેના શિષ્યને તે બતાવીને કહ્યુ કે, ભૂમિમા રહેલ આ ચતુર અગુલ ભાગ સહિત વાસના દડને જે કોઈ ગ્રહણ કરે તો તે રાજા

कण्डूमातापितरौ करकण्डुं गृहीत्वा ग्रामं त्यक्त्वाऽन्यत्र गतौ। ते त्रयोऽपि क्रमेण काञ्चनपुरे समागताः। तत्र पुराद् बहिस्ते रात्रौ सुप्ताः। तस्मिन् समये निरपत्यस्तन्नगराधिपतिर्मृतः। निःस्वामिकं राज्यं विलोक्य मन्त्रिणो विचारितवन्तः- राजगजः शुण्डया मालामादाय यं कमपि परिधापयेत्, सोऽस्य राज्यस्य राजा भवतु। इत्थं विचार्य शुण्डागृहीतमालं सैनिकैरनुगम्यमानं महागजं विसर्जितवन्तः। स महागजः शुण्डया मालामादाय परिभ्रमन् सुप्तस्य तस्य मातङ्गदारकस्य कण्ठे

उससे ले लूगा। ब्राह्मणो के इस विचारको करकण्डूकी माताने जिस किसी तरह सुन लिया, सो वह और उसके पति ये दोनों करकण्डू को लेकर वहाँ से दूसरे गाँव को चल दिये। चलते २ ये तीनों ही काचनपुर में आ पहूँचे। रात्रिका समय हो चुका था सो ये गाँव के बाहर ही सो गये। इसी बीचमें उस गाँवका राजा विना पुत्र के ही मर गया था। सो मंत्रियों ने विचार किया कि इस समय राज्य अस्वामिक है अतःस्वामी की तलास के लिये राजगजको शुण्ड में माला देकर छोडा जाय-वह जिस के गले में इस मालाको डाल देवे-वही व्यक्ति इस राज्यका राजा बना दिया जायगा। इस प्रकार विचार कर उन लोगोंने पट्टहस्ति को उसकी शुण्ड में माला दे कर छोड दिया। साथ में उसके अनेक योद्धों को भी जानेका आदेश दे दिया। यह हस्ती योधो से परिवृत होता हुआ माला को शुण्डादण्ड में दबाकर इधर-उधर फिरने लगा-फिरते २ वह उसी स्थान पर जा पहुँचा कि जहा पर वह चाडाल बालक सो रहा था। हाथीने माला उस सुप्त चांडाल

કન્ડૂની માતાએ જ્યારે બ્રાહ્મણના આ વિચારને બીજા પાસેથી સાભાળી લીધે ત્યારે તેના પતિની સાથે કરકન્ડૂને લઈને ત્યાથી બીજા ગામે ચાલી નીકળ્યા ચાલતા ચાલતા તેઓ કાચનપુરમા પહોચ્યા રાત્રીનો સમય હોવાથી તે ગામ બહાર સુઈ રહ્યા આ સમયે એ ગામનો રાજા અપુત્ર ગુજરી ગયો આથી મંત્રીઓએ વિચાર કર્યો કે, આ વખતે રાજ્યનો કોઈ સ્વામી નથી માટે સ્વામીની શોધ માટે રાજ્યના હાથીની સૂઢમા માળા આપીને તેને છુટો મુકવો તે જેના ગળામા માળા નાખે તેને આ રાજ્યનો માલીક બનાવવામ આવે આવો વિચાર કરીને મુખ્ય હાથીની સૂઢમા માળા દઈને તેને છુટો મુકી દીધો આ હાથીની સાથે યોદ્ધાઓને જવાની આજ્ઞા કરી રાજ્યનો એ મુખ્ય હાથી યોદ્ધાઓની સાથે પોતાની સુઢમા માળા લઈને અહી તહી ફરવા માડયો, ફરતા ફરતા જ્યા ચાડાળ બાળક સૂતો હતો ત્યા આવી પહોચ્યો. ત્યા સૂતેલા એ ચાડાળ બાળકના ગળામા તેણે માળા પહેરાવી દીધી સુલક્ષણ એવા

अस्य स्थानेऽन्यं दण्डं तुभ्यं ददामि। ततः का हानिस्तव। एवं विप्रेणोक्तोऽपि स दण्डं दातुं नोद्यतस्तदा न्यायाधीशः प्रोक्तवान्-कथं त्वमस्मै दण्डं न ददासि? तदा सोऽब्रवीत्-अस्य दण्डस्य प्रभावेणाहं नृपो भविष्यामि। तर्हि भवन्त एव कथयन्तु-किमेवंविधो दण्डः कस्मैचिद् दीयते। तदा न्यायाधीशो विहस्याब्रवीत्-यदा त्वं राजा भवेस्तदैकं ग्राममस्मै ब्राह्मणाय दातव्यम्। स न्यायाधीशवचनं तथेति प्रतिपद्य दण्डमादाय स्वगृहमागतः। स द्विजोऽपि स्वगृहं समागत्य स्वजातीयानेवमब्रवीत्-चाण्डालबालको बलान्मम दण्डं गृहीतवान्। अतः कथंचित्तं हत्वा दण्डं मया गृह्णीयम्। ब्राह्मणानामिमं विचारं कथंचिदवगम्य कर-

इस दंड से कुछ तात्पर्य है सो मैं तुमको इस दंड के स्थान में दूसरा दंड देता हूं यह दंड तुम मुझे देदो-इस में तुम्हारी हानि ही क्या है। जब ब्राह्मणने इस तरह से कहा तो भी करकण्डूने उसकी बात नहीं मानी। तब न्यायाधीशने कहा हे करकण्डू! क्या बात है जो तुम इसको बदले में भी दंड नहीं दे रहे हो? तब करकण्डूने न्यायाधीश से कहा-सुनिये मैं इस दंडके प्रभाव से राजा बनूंगा, अतः आप स्वयं विचारें कि फिर मैं ऐसे उपयोगी दंडकों किसी दूसरे को कैसे दे दूं। करकण्डूकी बात सुनकर न्यायाधीशको हँसी आ गई, उन्होंने कहा खैर-जब तुम राजा हो जाओगे तब एक ग्राम इस ब्राह्मण को दे देना। इस प्रकार करकण्डू न्यायाधीश के बचनकों प्रमाण मानकर और दंड को साथ मे लेकर अपने घर पर आ गया। द्विजने भी घर पर आकर अपने सजातीयों से ऐसा कहा-कि-देखो-चांडाल के बालकने बलपूर्वक मेरा दंड छीन लिया है, अतः मैं उसको जैसे भी बनेगा वैसे मारकर उस दंडको

છે માટે આ દંડને બદલે હું તને બીજો દંડ આપું અને આ દંડ તું મને આપી દે આમાં તને કયું નુકશાન છે? જ્યારે બ્રાહ્મણે આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે કરકન્ડૂએ તેની વાતને માની નહીં ત્યારે ન્યાયાધીશે કહ્યું, કરકન્ડૂ એવી કઈ વાત છે કે, તું એને બદલીમાં દંડ આપતો નથી? ત્યારે કરકન્ડૂએ ન્યાયાધીશને કહ્યું સાંભળો! હું આ દંડના પ્રભાવથી રાજા બનીશ આથી આપજ વિચારો કે, આવો ઉપયોગી દંડ કોઇ બીજાને આપી દે ખરો! કરકન્ડૂની વાત સાંભળીને ન્યાયાધીશને હસવું આવી ગયું અને તેણે કહ્યું ખેર! જ્યારે તું રાજા બની જાય ત્યારે આ બ્રાહ્મણને એક ગામ આપી દેજે આ પ્રમાણે કરકન્ડૂ ન્યાયાધીશના વચનને માન્ય કરીને એ દંડ લઈ પોતાને ઘેર પહોંચ્યો બ્રાહ્મણે પણ પોતાને ઘેર જઈને પોતાના જાતભાઈ ઓને એવું કહ્યું કે, જુઓ! ચાંડાલના બાળકે બળપૂર્વક મારો દંડ આંચકી લીધો છે જેથી હું જેમ બનશે તેમ તેને મારીને પણ એ દંડ પાછો લઈ આવીશ કર

कण्डूमातापितरौ करकण्डु गृहीत्वा ग्राम त्यक्त्वाऽन्यत्र गतौ। त त्रयोऽपि क्रमेण काञ्चनपुरे समागताः। तत्र पुराद् बहिस्ते रात्रौ सुप्ताः। तस्मिन् समये निर पत्यस्तन्नगराधिपतिर्मृत.। निःस्वामिक राज्य विलोक्य मन्त्रिणो विचारितवन्तः- राजगजः शुण्डया मालामादाय य कमपि परिधापयेत्, सोऽस्य राज्यस्य राजा भवतु। इत्थ विचार्य शुण्डागृहीतमाल भैनिकैरनुगम्यमान महागज विसर्जितवन्तः। स महागज. शुण्डया मालामादाय परिभ्रमन सुप्तस्य तस्य मातङ्गदारकस्य कण्ठे

उससे ले लूगा। ब्राह्मणो के इस विचारको करकण्डूकी माताने जिस किसी तरह सुन लिया, सो वह और उसके पति ये दोनों करकण्डू को लेकर वहाँ से दूसरे गाँव को चल दिये। चलते २ ये तीनों ही काचनपुर में आ पहूँचे! रात्रिका समय हो चुका था सो ये गाँव के बाहर ही सो गये। इसी बीचमें उस गाँवका राजा बिना पुत्र के ही मर गया था। सो मन्त्रीयों ने विचार किया कि इस समय राज्य अस्वामिक है अत स्वामी की तलाश क लिए राजगजको शुण्ड में माला देकर छोडा जाय-वह जिस के गले में इस मालाको डाल देवे-वही व्यक्ति इस राज्यका राजा बनादिया जायगा। इस प्रकार विचार कर उन लोगोंने पट्टहस्ति को उसकी शुण्ड में माला दे कर छोड दिया। साथ में उसके अनेक योद्धो को भी जानेका आदेश दे दिया। यह हस्ती योधो से परिवृत होता हुआ माला को शुण्डादण्ड मे दबाकर इधर-उधर फिरने लगा-फिरते २ वह उसी स्थान पर जा पहुँचा कि जहा पर वह चाडाल बालक सो रहा था। हाथीने माला उस सुप्त चाँडाल

કન્ડૂની માતાએ જ્યારે બ્રાહ્મણના આ વિચારને બીજા પાસેથી સાભળી લીધે ત્યારે તેના પતિના સાથે કરકન્ડૂને લઈને ત્યાથી બીજા ગામે ચાલી નીકળ્યા ચાલતા ચાલતા તેઓ કાચનપુરમા પહોચ્યા રાત્રીનો સમય હોવાથી તે ગામ બહાર સુઈ રહ્યા આ સમયે એ ગામનો રાજા અપુત્ર ગુજરી ગયો આથી મ ત્રીઓએ વિચાર કર્યો કે, આ વખતે રાજ્યનો કોઈ સ્વામી નથી માટે સ્વામીની શોધ માટે રાજ્યના હાથીની સૂઢમા માળા આપીને તેને છુટો મુકવો તે જેના ગળામા માળા નાખે તેને આ રાજ્યનો માલીક બનાવવામ આવે આવો વિચાર કરીને મુખ્ય હાથીની સૂઢમા માળા દઈને તેને છુટો મુકી દીધો આ હાથીની સાથે યોદ્ધાઓને જવાની આજ્ઞા કરી રાજ્યનો એ મુખ્ય હાથી યોદ્ધાઓની સાથે પોતાની સુઢમા માળા લઈને અહી તહી ફરવા માડયો, ફરતા ફરતા જ્યા ચાડાળ બાળક સૂતો હતો ત્યા આવી પહોચ્યો ત્યા સૂતેલા એ ચાડાળ બાળકના ગળામા તેણે માળા પહેરાવી દીધી સુલક્ષણ એના

अस्य स्थानेऽन्यं दण्डं तुभ्यं ददामि। ततः का हानिस्तव। एवं विभणितोऽपि स दण्डं दातुं नोद्यतस्तदा न्यायाधीशः प्रोक्तवान्-कथं द्विजायास्मै दण्डं न ददासि? तदा सोऽवदत्-अस्य दण्डस्य प्रभावेणाहं नृपो भविष्यामि। तर्हि भवन्त एव कथयन्तु-कीदृशोऽयं दण्डः कस्मैचिद् दीयते। तदा न्यायाधीशो विहस्याब्रवीत्-यदा त्वं राजा भवेस्तदैको ग्रामस्त्वयाऽस्मै विप्राय दातव्यः। स न्यायाधीशवचनं तथेति प्रतिपद्य दण्डमादाय स्वगृहमागतः। स द्विजोऽपि स्वस्थानमागत्य स्वजातीयानेवमब्रवीत्-चाण्डालबालकेन बलान्मम दण्डं गृहीतवान्। अतः कथंचित् तं हत्वा दण्डं स्वयं गृह्णीमः। ब्राह्मणानामिमं विचारं कथंचिदवगम्य कर

इस दंड से कुछ तात्पर्य है सो मैं तुमको इस दंड के स्थान में दूसरा दंड देता हूं यह दंड तुम मुझे देदो-इस में तुम्हारी हानि भी क्या है। जब ब्राह्मणने इस तरह से कहा तो भी करकण्डूने उसकी बात नहीं मानी। तब न्यायाधीशने कहा हे करकण्डु! क्या बात है जो तुम इसको बदले में भी दंड नहीं दे रहे हो? तब करकण्डूने न्यायाधीश से कहा-सुनिये मैं इस दंडके प्रभाव से राजा बनूंगा, अतः आप स्वयं विचारें कि फिर मैं ऐसे उपयोगी दंडकों किसी दूसरे को कैसे दे दूं। करकण्डूकी बात सुनकर न्यायाधीशको हँसी आ गई, उन्होंने कहा खैर-जब तुम राजा हो जाओगे तब एक ग्राम इस ब्राह्मण को दे देना। इस प्रकार करकण्डू न्यायाधीश के बचनकों प्रमाण मानकर और दंड को साथ मे ले कर अपने घर पर आ गया। द्विजने भी घर पर आकर अपने सजातीयों से ऐसा कहा-कि-देखो-चांडाल के बालकने बलपूर्वक मेरा दंड छीन लिया है, अतः मै उसको जैसे भी बनेगा वैसे मारकर उस दंडको

છે માટે આ દંડને બદલે હું તને બીજો દંડ આપું અને આ દંડ તું મને આપી દે આમાં તને કયું નુકશાન છે? જ્યારે બ્રાહ્મણે આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે કરકન્ડૂએ તેની વાતને માની નહીં ત્યારે ન્યાયાધીશે કહ્યું, કરકન્ડૂ એવી કઇ વાત છે કે, તું એને બદલીમાં દંડ આપતો નથી? ત્યારે કરકન્ડૂએ ન્યાયાધીશને કહ્યું સાંભળો! હું આ દંડના પ્રભાવથી રાજા બનીશ આથી આપજ વિચારો કે, આવો ઉપયોગી દંડ કોઇ બીજાને આપી દે ખરો! કરકન્ડૂની વાત સાંભળીને ન્યાયાધીશને હસવું આવી ગયું અને તેણે કહ્યું ખેર! જ્યારે તું રાજા બની જાય ત્યારે આ બ્રાહ્મણને એક ગામ આપી દેજે આ પ્રમાણે કરકન્ડૂ ન્યાયાધીશનાં વચનને માન્ય કરીને એ દંડ લઈ પોતાને ઘેર પહોંચ્યો. બ્રાહ્મણે પણ પોતાને ઘેર જઈને પોતાના જાતભાઈ ઓને એવું કહ્યું કે, જુઓ! ચાંડાલના બાળકે બળપૂર્વક મારો દંડ આંચકી લીધો છે જેથી હું જેમ બનશે તેમ તેને મારીને પણ એ દંડ પાછો લઇ આવીશ કર

करकण्डूस्तान् ब्राह्मणानुवाच-भो ब्राह्मणाः! यूय मा 'मातङ्ग' इति कृत्वाऽपि क्षिप्तवन्तः। अतस्तदपराधविशुद्ध्यर्थं वाटधानकवास्तव्याः सर्वेऽपि चाण्डाला युष्माभिः संस्कृत्य ब्राह्मणाः कार्याः। यतो जातिव्यवस्था संस्काराधीना। इति करकण्डूवचनं श्रुत्वा भीता ब्राह्मणास्तान् चाण्डालान् संस्कृत्य ब्राह्मणान् कृतवन्तः। इत्थं करकण्डुः सर्वानपि चाण्डालान् ब्राह्मणानकरोत्। उक्तंच—

"दधिवाहनपुत्रेण, राज्ञा च करकण्डूना।
वाटधानकवास्तव्याश्चाण्डाला ब्राह्मणाः कृताः॥ इति॥

तं प्राप्तराज्यं श्रुत्वा स दण्डच्छेदी ब्राह्मणः समागत्य प्रोक्तवान्-स्वप्रतिज्ञामनुस्मृत्य भवता मह्यमेको ग्रामो दातव्यः स प्राह—कं ग्रामं तुभ्यं ददामि। तदा

आदि जनोंने मिलकर अच्छी तरह से उसका राजाके पद पर अभिषेक किया। तब करकण्डूने उन ब्राह्मणों से कहा—भो ब्राह्मणों! आप लोगोंने जो मेरा मातंग समझकर तिरस्कार किया है, उसके प्रायश्चित्त रूप में अब आप लोग वाटधानक के रहनेवाले जो मातंग हैं उन सब को शुद्ध कर ब्राह्मणवर्ण में स्थापित कर लें। क्यों कि जातिव्यवस्था संस्काराधीन है। करकंडू के इस प्रकार वचन सुनकर उन ब्राह्मणोंने राजा के भय से उन चांडालको शुद्धि करके ब्राह्मण बना लिया। यही बात—

"दधिवाहनपुत्रेण, राज्ञा च करकण्डूना।
वाटधानकवास्तव्याश्चाण्डाला ब्राह्मणाः कृता" इति॥

इस श्लोक द्वारा कही गई है। जब "करकण्डू राजाके पद पर अभिषिक्त हो चुका है" यह बात उस पहिले के दण्डच्छेदी ब्राह्मणने सुनी तो आकर उसने करकण्डू से कहा—राजन्! आप अपनी प्रतिज्ञात

આપીને તેને વધાઈ આપી આ પછી કરકન્ડુના નગરમા વાજતે ગાજતે પ્રવેશ કરાવ્યો સચિવ સામંત વગેરેએ મળીને સારી રીતે તેનો રાજાના પદ ઉપર અભિષેક કર્યો ત્યારે કરકન્ડુએ તે બ્રાહ્મણોને કહ્યુ કે, હે બ્રાહ્મણો! આપ લોકોએ મારો માતંગ સમજીને જે તિરસ્કાર કરેલ છે તેના પ્રાયશ્ચિત્ત રૂપમા આપલોક વાટધાનકના રહેવાવાળા જે સઘળા માતંગ છે બધાને શુદ્ધ કરીને બ્રાહ્મણ વર્ણમા સ્થાપિત કરી દો કારણ કે, જાતિ અવસ્થા સંસ્કાર આધિન છે કરકન્ડુના આ વચનોને સાભળીને રાજાના ભયથી તે ચાડાલોની શુદ્ધિ કરી તેમને બ્રાહ્મણ બનાવી દીધા આ વાત—

"दधिवाहनपुत्रेण, राज्ञा च करकण्डूना।
वाटधानकवास्तव्या, श्चाडाला ब्राह्मणा कृताः॥ इति।

આ શ્લોકથી કહેવામા આવેલ છે જ્યારે "કરકન્ડૂ રાજાના પદ ઉપર સ્થાપિત કરાઈ ચૂકેલ છે" આ વાત પહેલાના દંડચ્છેદિ બ્રાહ્મણે સાભળી તો આવીને તેણે કરકન્ડૂને કહ્યુ, રાજન્! આપ આપની પ્રતિજ્ઞાવાળી વાતને યાદ કરીને મને એક

माला निक्षिप्तवान् । सुलक्षणं श्रेष्ठं तं बालं विलोक्य राजानुयायिनो लोकास्तूर्य निर्घोषमिश्रितं जयजयेति शब्दं कृतवन्तः । महाघोषापहृतनिद्रास्ते त्रयोऽपि जृम्भां कुर्वन्तः समुत्थिताः । ततस्ते सैनिकास्तं बालं हस्तिनः स्कन्धे समारोप्य तत्पितरौ च रथे संस्थाप्य महता तूर्यघोषेण सह नगरं प्रति प्रस्थिताः । तदा तन्नगरवासिनो ब्राह्मणाः अयं मातङ्गो राजा भवितु-नार्हतीति वदन्तस्तं मातङ्गदारकं परितोऽवरुद्धयन्तः । तदाऽसौ तं दण्डं गृहीत्वा ब्राह्मणानदर्शयत् । अग्निमिव प्रज्वलन्तं तं दण्डं दृष्ट्वा भीतभीता ब्राह्मणास्तं स्तुत्याऽऽशीर्वादैः सवर्द्धितवन्तः । ततो नगरे प्रविष्टः स करकण्डूः सचिवसामन्तादिभिरभिषिक्तः । अथ

बालकके गलेमे पहिरा दी। सुलक्षण एवं श्रेष्ठ उस बालक को देखकर राजानुयायीजनोंने उसी समय तूर्य निर्घोषमिश्रित जय २ शब्दोंका उच्चारण करना प्रारभ किया। इस जयकार के हल्ले से वे तीनोंके तीनों जाग गये। और जिंभाई लेते हुए उठे। सैनिकोंने उस बालकको हाथीके स्कध पर चढा करके तथा उसके माता पिता को रथ मे बैठा करके बाजोंकी गूडगडाहट के साथ वहा से नगरकी तरफ चले। उस समय नगर निवासी ब्राह्मणोने "वेषादि से यह चाडाल बालक है यह जानकर यह चाडाल का बालक राजा होने के योग्य नहीं है। इस प्रकार कहकर उसका विरोध प्रदर्शित किया और आकर वे सबके सब उसको चारो तरफ से घेरकर खडे हो गये। जब करकण्डूने इस दृश्य को देखा तो उसने उस दड को उठाकर उनको दिखलाया। ब्राह्मणोंने अग्नि के समान जाज्वल्यमान उस दडको देखते ही भयभीत होकर उसकी स्तुति की एव आशीर्वाद देकर उसको बधाई दी। इसके बाद करकण्डू का नगर में गाजेबाजे के साथ प्रवेश कराया गया और सचिव सामन्त

श्रेष्ठ બાળકને જોઇને હાથીની સાથેના સૈનિકોએ આ સમયે વાજાઓ વગાડી જયજયકાર કરવાનું શરૂ કરી દીધું આ જયજયકાર સાંભળીને ત્રણે જણા જાગી ઉઠયા અને બેબાકળા જેવા બની ગયા સૈનિકોએ તે બાળકને હાથીના ઉપર બેસાડી દીધો તથા તેના માતાપિતાને રથમાં બેસાડીને વાજાઓના ગડગડાટની સાથે નગર તરફ લઈને ચાલ્યા આ સમયે નગર નિવાસી બ્રાહ્મણોએ વેષ આદિથી આ ચાંડાલ છે તેમ જાણીને "આ ચાંડાલ બાળક રાજા થવાને યોગ્ય નથી" એ પ્રમાણે કહીને તેનો વિરોધ પ્રદર્શિત કર્યો અને આવીને બધા તેને ચારે તરફથી ઘેરીને ઉભા રહી ગયા જ્યારે કરકન્ડૂએ આ દૃશ્યને જોયું ત્યારે તેણે તે દંડને ઉંચો કરીને ત્યાં દેખાડયો બ્રાહ્મણો અગ્નિ સમાન જાજવલ્યમાન એ દંડને જોઇને તેની સ્તુતિ કરી અને આશીર્વાદ

इद कार्यं ध्रुव कार्यं, नात्र कार्या विचारणा ।
मूल्यावाप्तौ विमर्शो हि, व्यर्थ एवेति मङ्गलम् ॥४॥ इति ।

इम लेख लिखित्वा स तेन पत्रेण सह त ब्राह्मण दधिवाहननृपसमीपे प्रेषितवान्। विप्रोऽपि लेखमादाय चम्पापुरी गत्वा दधिवाहनभूपतये प्रदत्तवान्। स तत्पत्र पठित्वा कोपारुणलोचनो भृकुटाकुटिलाननो दधिवाहन एवमुवाच–

इद कार्यं ध्रुव कार्यं, नात्र कार्या विचारणा ।
मूल्यावाप्तौ विमर्शो हि व्यर्थ एवेति मङ्गलम्" ॥४॥

भावार्थ—इन श्लोकों का अर्थ इस प्रकार है–काञ्चनपुर से महीपति करकण्डूका चम्पापुराधीश श्री दधिवाहन के प्रति यह निवेदन है कि यहां श्री जिनेन्द्रदेव के प्रभाव से सर्व प्रकार से कुशलता है। आप अपने शरीरादिककी कुशलता के समाचार दें। विशेष इस ब्राह्मणको आप इसकी इच्छानुसार कोई एक ग्राम देनेकी कृपा करें। मै उसके बदले में आपको आप जैसा चाहेंगे वैसा ग्राम व नगर दे दूगा। मुझे पूर्ण आशा है कि यह कार्य आपके द्वारा विना किसी विचारके शीघ्र ही सपादित होगा। क्यों कि उस गाम के बदलेमे कोई दूसरा ग्राम अथवा नगर देने रूप मूल्य देने पर विचार किस बातका।

करकण्डूने इस प्रकार का पत्र लिखकर उस ब्राह्मण को देकर दधिवाहन के पास भेज दिया। पत्र लेकर जब ब्राह्मण दधिवाहन के पास पहुँचा तो दधिवाहन के उस पत्र को बाचते ही आंखों से खून

इद कार्यं ध्रुव कार्यं नात्र कार्या विचारणा ।
मूल्यावाप्तौ विमर्शोहि व्यर्थ एवेति मङ्गलम् ॥४॥

ભાવાર્થ—આ શ્લોકોનો આ પ્રકારનો ભાવાર્થ થાય છે–કંચનપુરના મહિપતી કરકન્ડુનુ ચપાપુરાધશ શ્રી દધિવાહનના તરફ એવુ નિવેદન છે કે, અહીયા શ્રી જીનેન્દ્ર દેવના પ્રભાવથી બધા પ્રકારની કુશળતા છે, આપ આપના શરીરાદિકની કુશળતાના સમાચાર લખશો વિશેષમા આ બ્રાહ્મણને આપ એની ઈચ્છા અનુસાર એક ગામ આપવાની કૃપા કરશો તેના બદલામા આપ જેવુ ઇચ્છશો તેવુ ગામ એક હુ આપને આપીશ મને સપૂર્ણ આશા છે કે આપ આ કાર્ય કોઇ પણ જાતનોવિચાર કર્યા સિવાય તુરત જ પુરૂ કરશો, કારણ કે, તે ગામના બદલામા હુ કોઇ બીજુ ગામ અથવા નગર આપવા રૂપ મૂલ્ય દેવા તત્પર છુ

કરકન્ડૂએ આ પ્રમાણે પત્ર લખીને તે બ્રાહ્મણને આપીને રાજા દધિવાહન પાસે મોકલ્યો, પત્ર લઈને તે બ્રાહ્મણ દધિવાહનની પાસે પહોચ્યો ત્યારે દધિવાહને તે પત્ર વાચતા જ તેની આખો લાલચોળ બની ગઈ, ભ્રકુટી એકદમ વાકી બની ગઇ, અને

ब्राह्मणेनोक्तम् ।—राजन् ! मम गृहं चम्पायां वर्तते । अतस्तद्देशे एव मम ग्राम दाप्य । ततः स करकण्डू नरेन्द्रो चम्पाधीश्वर दधिवाहनभूपाय पत्रं लिखितवान, तद्यथा—

"स्वस्ति श्रीकाञ्चनपुरात् करकण्डूर्महीपतिः ।
समापते नृप चम्पाधीश श्री दधिवाहनम् ॥१॥
श्रीजिनेन्द्रप्रभावेण, कल्याणमिह विद्यते ।
श्रीमद्भिरपि तद् ज्ञाप्य, स्वशरीरादि गोचरम् ॥२॥
किं चास्मै ब्राह्मणायैको, ग्रामो देयः समीहितः ।
दास्ये ते रुचित ग्राम नगर वा तदास्पदे ॥३॥

बातको याद कर मुझे एक ग्राम देनेकी कृपा करें। ब्राह्मणकी बात सुनकर करकण्डु राजाने उससे कहा–बोलो, तुम कौनसा ग्राम चाहते हो। ब्राह्मणने कहा–राजन्! आपको तो यह ज्ञात ही है कि मेरा घर चंपा में है। इस लिये उसी तरफ ही ग्राम दिला दिया जाय तो अच्छा होगा। ब्राह्मण के इस कथन से सहमत होकर करकण्डुने चंपा नरेश दधिवाहन को इस प्रकार एक पत्र लिखा—

"स्वस्ति श्री काचनपुरात, करकण्डूर्महीपतिः ।
सभापते नृप चंपाधीश, श्री दधिवाहनम् ॥१॥
श्री जिनेन्द्रप्रभावेण, कल्याणमिह विद्यते ।
श्रीमद्भिरपि तद्ज्ञाप्य, स्वशरीरादिगोचरम् ॥२॥
किं चास्मै ब्राह्मणायैको, ग्रामो देयः समीहितः ।
दास्ये ते रुचिर ग्राम, नगर वा तदास्पदे ॥३॥

ગામ આપવાની કૃપા કરો બ્રાહ્મણની વાત સાંભળીને કરકન્ડૂ રાજાએ એને કહ્યું કે, બોલો તમે કયું ગામ ઇચ્છો છો? બ્રાહ્મણે કહ્યું કે રાજન ! આપને ખબર તો છે, કે, મારૂ ઘર ચંપામાં છે અર્થાત એ તરફ એક ગામડું આપવામાં આવે તો સારૂ થાય બ્રાહ્મણનું વચન સાંભળીને કરકડૂએ ચંપા નરેશ દધિવાહનને આ પ્રમાણે એક પત્ર લખ્યો —

"स्वस्तिश्री काचन पुरात, करकण्डूर्महीपति ।
सभापते नृप चपा, धीश श्री दधिवाहनम् ॥१॥
श्री जीनेन्द्र प्रभावेण, कल्याणमिह विधते ।
श्रीमद्भिरपि तद् ज्ञाप्य, स्वशरीरादि गोचरम् ॥२॥
किंचास्मै ब्राह्मणायैको, ग्रामो देय समीहित ।
दास्ये ते रुचिर ग्राम, नगर वा तदास्पदे ॥३॥

चम्पापुरीसमीपे समागत्य ता समन्तोऽवरुद्धवान। दधिवाहनोऽपि स्वपुरामवरुध्य स्थितेन करकण्डूनृपेण सह योद्धुं स्वसैनिकान् सनद्धवान। तत उभयो सैनिकाः युद्धाय सज्जिभूता। तयोर्युद्धवृत्तान्तं साध्वी पद्मावती समुपश्रुत्य एवमचिन्तयत्-अज्ञानेन एतौ पितापुत्रौ संग्रामं कुरुत। अत्र संग्रामे बहवः प्राणिनो मारयिष्यन्ति। तद्दोषभागिनौ एतौ पितापुत्रौ भविष्यत। अतो हिंसाजनितपापपङ्कादेतौ समुद्धारयामि। एवं विचार्य प्रवर्तिनीमापृच्छ्य महासती पद्मावती करकण्डू-समीपे समुपस्थिता। तां महासतीं समुपस्थितां विलोक्य करकण्डूनृपः स्वासना-दुत्थाय भक्त्या प्रणामं कृतवान। ततो महासती रहसि तमेवमब्रवीत्-अहं तव

दधिवाहन के साथ संग्राम करने के लिये करकण्डू राजा अपने नगर से बाहिर निकलकर चंपापुरीकी ओर चला। चंपापुरी के समीप पहुंचकर उसने उस नगर को चारों ओर से घेर लिया। जब दधिवाहनने अपनी नगरी की ऐसी स्थिति सुनी तो वह भी अपनी पुरी को घेर ठहरे हुए करकण्डू के साथ युद्ध करने के लिये अपने सैनिकों को तयार करने लगा। जब सैनिकजन सब तैयार हो चुके तब दोनों तरफ से घमासान युद्ध प्रारंभ होनेकी तयारी हो गयी। जब युद्ध के समाचार पद्मावती साध्वी को मालूम पडे तब उसने विचार किया-देखो ये दोनों पितापुत्र अज्ञान से युद्ध करने में लगे हुए हैं-व्यर्थ मे इसमे अनेक प्राणी दोनों तरफ से मरेंगे इसका दोष इन दोनो को भोगना पडेगा-इसलिये मैं इन दोनों का इस हिंसाजनित पापपंक से उद्धार करूं तो अच्छा है। इस प्रकार विचार कर पद्मावती साध्वी अपनी प्रवर्तिनी से आज्ञा लेकर करकण्डु के पास गई। उस महासती साध्वी को देखते ही करकण्डूने अपने सिंहा-

તૈયાર થઈ ચૂકી ત્યારે દધિવાહનની સામે સંગ્રામ કરવા માટે કરકન્ડુ રાજા પોતાના નગરથી બહાર નીકળીને ચંપાનગરની તરફ ચાલ્યા ચંપાપુરીની પાસે પહોંચીને તેણે તે નગરીને ચારે બાજુથી ઘેરો ઘાલ્યો. જ્યારે દધિવાહને પોતાના નગરની આવી સ્થિતિ જાણી ત્યારે તે પોતાની નગરીને ઘેરીને પડેલા કરકન્ડુની સામે યુદ્ધ કરવા માટે પોતાના સૈનિકોને તૈયાર કરવા લાગ્યા ત્યારે બધાળા સૈનિકો તૈયાર થઈ ગયા ત્યારે બન્ને તરફથી યુદ્ધનું ઘમસાણ મચી ગયું જ્યારે આ યુદ્ધના સમાચાર પદ્માવતી સાધ્વીને મળ્યા ત્યારે તેણે વિચાર કર્યો કે, બન્ને પિતા પુત્ર અજ્ઞાનથી યુદ્ધ કરવા લાગી ગયા છે આથી વ્યર્થમાં બન્ને તરફથી અનેક પ્રાણી મરશે તેનો દોષ એ બન્નેએ ભોગવવો પડશે આથી એ બન્નેનું હું આવું હિંસાજનક પાપ દૂર કરું તો સારૂ થાય આ પ્રકારનો વિચાર કરીને પદ્માવતી સાધ્વી પોતાના ગુરૂણીજીની આજ્ઞા લઈ કરકન્ડુની પાસે પહોંચ્યા આ મહાસતી સાધ્વીજીને જોતા જ કરકન્ડુએ

भरे। तेन मातङ्गेन स्वजातिरपि विस्मृता ? भवादृशस्य या हि ममोपरि लेख लिखति - अस्पृश्येन तेन स्पृष्टमिम लेख स्पृष्ट्वाऽहमशुचिता गतोऽस्मि। अथवा अज्ञानात् किं न जायते ? रे विप्र ! त्वमितः शीघ्रमपसर। नो चेत् मम क्रोधाग्नौ शलभो भविष्यसि। इत्थं दधिवाहनेनाक्तः स विप्र• करकण्डू भूपतिसमीपे गत्वा सर्वं वृत्तान्तं न्यवेदयत्। दधिवाहनव्यवहार श्रुत्वा क्रुद्ध• करकण्डू राजा स्वसैन्य सन्नह्य दधिवाहनेन सह संग्राम कर्तुं स्वपुरान्निर्गत

बरसने लगा। भ्रकुटी एकदम टेढी हो गई। कहने लगा, अरे! उस मातग के बच्चेने तो अपनी जाति भी भुला दी है जो उस अपनी जाति को भी नहीं जाननेवालेने मेरे पास इस प्रकार का पत्र लिखकर भेजा है। अस्पृश्य के द्वारा लिखे गये इस अपवित्र पत्र को छूकर मै स्वय अपवित्र हो गया हूं। अथवा अज्ञान से ही यह कार्य हुआ है इसलिये इस में अशुचिताजन्य कोई भी दोष मुझे लागू नहीं होता है। ऐसा विचार कर फिर दधिवाहनने उसी क्रोध के आवेश में उस ब्राह्मण से कहा–विप्र ! तुम यहा से शीघ्र चले जाओ नहीं तो मेरी क्रोधाग्नि मे तुझे शलभ (पतग) सम बन जाना पडेगा। जब इस प्रकार दधिवाहनने कहा तो वह ब्राह्मण वहा से चलकर करकण्डु राजा के पास पहुंचा और दधिवाहनने जो कुछ कहा था। वह सब कह दिया। ब्राह्मण के मुख से दधिवाहन के व्यवहार को सुनकर करकण्डू बहुत अधिक क्रुद्ध हुआ और उसने उसी समय अपनी सेनाको युद्ध के लिये तैयार होने का आदेश दे दिया। जब सेना तैयार हो चुकी तब

કહેવા માંડયું અરે! આ માતગનો બાળક તો, પોતાની જાતજ ભૂલી ગયો છે આ પ્રકારે પોતાની જાતને ભૂલી જનારા એણે મારી પાસે આ પ્રમાણે પત્ર લખીને મોકલેલ છે અસ્પૃશ્યના તરફથી લખવામા આવેલા આ અપવિત્ર પત્રને હાથમા લઇને હુ પોતે અપવિત્ર બની ગયેલ છુ અથવા અજ્ઞાનથી જ આમ બનેલ છે, આથી તેમા અશુચિના જન્ય કોઇ પણ દોષ મને લાગતો નથી આવો વિચાર કરી દધિવાહને એ ક્રોધના આવેશમા તે બ્રાહ્મણને કહ્યુ કે—વિપ્ર ! તમો અહીથી સત્વર ચાલ્યા જાવ, નહિતર મારા ક્રોધાગ્નિમા તમારે ભોગ બનવુ પડશે જ્યારે આ પ્રમાણે દધિવાહને કહ્યુ તો બ્રાહ્મણ ત્યાંથી ચાલીને કરકન્ડૂ રાજાની પાસે પહોચ્યો અને દધિવાહને જે કાઇ કહ્યુ હતુ તે સઘળુ તેને કહી સભળાવ્યુ બ્રાહ્મણના મુખેથી દધિવાહનના વ્યવહારને સાંભળીને કરકન્ડુ ઘણો જ ક્રોધિત થયો અને એ સમયે તેણે પોતાની સેનાને યુદ્ધ કરવા તૈયાર થવાનો આદેશ આપી દીધો જ્યારે સેના

गत्वा चम्पापुरीम ध्यमार्गेण राजभवनमगात्। तां चेटयः परिचित्य स सम्भ्रम प्रणम्य प्रोचु-मातः! दिष्ट्याऽद्य भवत्या दर्शनं जातम्। इयत्कालावधि कुत्र स्थिता? कथं चिराद्दर्शनं दत्तम्? कुतश्च साध्वीना व्रतमङ्गीकृतम्? इत्युक्त्वा ता मुक्तकण्ठं मुहुर्मुहूरोदितवत्य। इष्टदर्शने हि जीर्णमपि दुःखं नूतनं भवति। तत कोलाहलं श्रुत्वा राजा दधिवाहनोऽपि तत्रायातः। धृतसाध्वी वेषां स्वप्राणप्रियां दृष्ट्वा राजा ता प्रणम्य प्रोवाच-कान्ते गर्भ? तत सा प्राह-राजन्। अयमेव स गर्भ, येनेय पुरी परिवेष्टिता। तथोक्तो राजा

जब पद्मावतीने उसकी यह दशा देखी तो वह वहां से शीघ्र ही चंपापुरी के मध्यमार्ग से चलकर राजभवन पहुँची पहुँचते ही उसको दासियोंने पहिचान लिया। बडे आदर से उन सबने उसको प्रणाम किया और कहने लगी-हे माता। आज तुम्हारे दर्शन हमें बडे भाग्य से हुए हैं। इतने दिनोंतक आप कहा पर रहीं। किस कारण से आपने इस साध्वीयों के व्रत को धारण किया है? इस प्रकार कहती २ वे सब की सब धार २ रोने लगी। यह बात सच है कि इष्ट व्यक्तियों के दर्शन होने पर पुराना दुःख भी नूतन जैसा हो जाया करता है। जब रोनेका कोलाहल राजमहल मे इस प्रकार हुआ तो उसको सुनकर दधिवाहन भी वहां आ पहुँचा। आते ही साध्वी के वेष मे उसने पद्मावती को देखा-देखकर प्रणाम करके वे बोले हे देवी! तुम्हारा वह गर्भ कहा है? राजाकी बात सुनकर पद्मावती साध्वीने कहा कि मेरा वह गर्भ यही है जो आज आपकी नगरी को

જ્યારે પદ્માવતીએ તેની આ સ્થિતિ જાણી ત્યારે તે ત્યાથી ઝડપથી ચંપાપુરીના મધ્ય માર્ગથી ચાલીને રાજભવનમા પહોચી ત્યા પહોચતા જ દાસીઓએ તેને ઓળખી લીધી ઘણાજ આદરથી સહુએ તેમને પ્રણામ કર્યા અને કહેવા લાગ્યા કે, હે માતા! આજે અમોને તમારા દર્શન ઘણાજ ભાગ્યથી થયા છે આટલા સમય સુધી આપ કયા રહ્યા હતા? કયા કારણથી આપે આ સાધ્વીના વ્રતને ધારણ કરેલ છે? આ પ્રમાણે કહેતા કહેતા રાજભવનની એ સઘળી દાસીઓ રોવા લાગી આ વાત સાચી છે કે, પોતાનુ ભલુ કરનાર વ્યક્તિના દર્શનથી જુનામા જુનુ દુ ખ પણ નવા જેવુ બની જાય છે જ્યારે રોવાનો કોલાહલ રાજમહેલમા થવા લાગ્યો ત્યારે રાજા દધિવાહન પણ આ કોલાહલને સાભળીને ત્યા આવી પહોચ્યા, આવતાની સાથેજ તેમણે સાધ્વીના વેશમા પદ્માવતીને જોઈ, જોતાની સાથે જ પ્રણામ કરીને તે બોલ્યા હે દેવી! તમારો એ ગર્ભ કયા છે? રાજાની વાતને સાભળીને પદ્માવતી સાધ્વીએ કહ્યુ કે,

माता दधिवाहनश्च तव पिता। पित्रा सह युद्धं न शोभते तव। कुलीना हि गुरूणां विनयं कदाचिदपि न लुम्पन्ति। एवं महासतीवचनं श्रुत्वा स मातापितरौ पृष्टवान्–अहं युवयोरौरसः पुत्रोऽथवा पालितः? तौ प्रोचतुः–त्वं स्मशाने समुपलब्ध आवयोः पालितः पुत्रोऽसि। ततः पद्मावती वाक्ये समुत्पन्नविश्वासोऽपि स दर्पाद् युद्धकर्मणो न विरतः। तदा महासती पद्मावती त्वरितया

सन से उठकर प्रणाम किया। साध्वीने एकान्त पाकर उस से कहा मैं तुम्हारी माता और दधिवाहन राजा तुम्हारे पिता हैं। तुम्हारा पिताके साथ युद्ध करना अच्छा नहीं है। जो कुलीन पुरुष होते हैं वे अपने गुरुजनोंके सामने अविनीत नहीं होते हैं–उनका वे हर हालत में विनय ही करते हैं। इस प्रकार इस महासती साध्वी के वचन सुनकर करकण्डू अपने मातंगजातीय मातापिता से पूछने लगा कि यह तो आपलोग बतलावें कि मैं आपका औरस पुत्र हूं कि पालित पुत्र हूं। सुनकर उन लोगोंने कहा बेटा! हम क्या कहें–तुम हमें श्मशान में मिले थे–इसलिये इस अवस्था में तुम हमारे पालित ही पुत्र हो, औरस पुत्र नहीं। इस प्रकार अपना वृत्तान्त मातंग जातीयमातापिता से जानकर उसको उस महासती पद्मावती साध्वी के वचनों में यद्यपि विश्वास जम गया तो भी वह अहंकार से युद्धकार्य से विरत नहीं हुआ।

પોતાના સિંહાસનથી ઉઠીને પ્રણામ કર્યા સાધ્વીએ એકાન્ત મેળવીને તેને કહ્યું કે હું તમારી માતા છું અને દધિવાહન રાજા તમારા પિતા છે તમારા પિતાની સાથે યુદ્ધ કરવું તમારા માટે યોગ્ય નથી જે કુલિન પુરૂષ હોય છે તે, પોતાના ગુરૂ જનોની સામે અવિનીત થતા નથી એમનો તે ગમે તેવી સ્થિતિમાં પણ વિનય જ કરે છે આ પ્રકારનું એવું મહાસતી સાધ્વી વચન સાભળીને કરકન્ડૂ પોતાના માતંગ જાતિય માતા પિતાને પૂછવા લાગ્યો કે આપ લોકો બતાવો કે હું આપનો ઓરસ પુત્ર છું કે પાલક પુત્ર છું ? તે સાભળીને તે લોકોએ કહ્યું, બેટા ! અમે શું કહીયે ? તું અમોને સ્મશાનમાથી મળેલ હતો આથી આવી અવસ્થામા તું અમારો પાલિત પુત્ર જ છે ઓરસ પુત્ર નથી આ પ્રકારનું પોતાનું વૃત્તાંત માતંગ જાતિય માતા પિતા પાસેથી જાણીને તેને મહાસતી સાધ્વી પદ્માવતી સાધ્વીના વચનોમા જો કે વિશ્વાસ થઈ ગયો હોવા છતા પણ અહંકારને લઈને યુદ્ધ કાર્યથી પાછો ન હટયો

स्याग्रवर्तुलोत्तुङ्गशृङ्गस्तारुण्यमासादितवान्। तथाभूतं तं वृषभं नृपोऽन्यैर्वृषभैः सहायोधयत्। परन्तु न कोऽपि तं जेतुं शक्तिमान् जातः। अथ राजा करकण्डू राज्यकर्मव्यापृतोऽवकाशाभावात्कतिचिद् वर्षाणि गोकुले न गतः। एकदा लब्धावकाशो राजा गोकुले गतवान्। तत्र स जराजीर्णशरीरं पतितदशनं हीनबलं वत्सैः सपीड्यमानं कृशाङ्गमेकं वृषभं विलोकितवान्। ततो राजा गोपालं पृष्टवान्-स महाबलो बलीवर्दः क्वाऽऽस्ते? गोपालः प्राह-देव! अयं जरातुरो वृषभः स एव। गोपालवचनं निशम्य शुभाशयमभ्यासीनो नृपो विचारमकरोत्

था कि कुछ कहते नहीं बनता था। तीक्ष्ण अग्रभागवाले दोनों शृंग उसके गोल एवं ऊँचे थे। जब राजा इस बैलको दूसरे बैलोंके साथ लडवाता तो इसके सामने एक भी बैल नहीं ठहरता था। राज्य-कर्म में व्यस्त होनेकी वजह से कहते हैं कि राजा को कितनेक वर्षों-तक उस गोशाला का निरीक्षण करने का समय नहीं मिला। एक दिन किसी भी तरह से समय निकालकर जब राजाने उस गोशाला का निरीक्षण किया तो उसकी दृष्टि एक ऐसे बैल पर पडी जो जरा से जर्जरित शरीर होकर दांतो से विहीन मुखवाला बना हुआ था। शक्ति का अंश जिस मे लेश भी नहीं था। कौए जिसको परेशान कर रहे थे। शरीर एकदम जिसका कृश हो गया था-हड्डियों का ढाचा ही जिस मे अवशेष था। इसको देखकर राजा को उस पहिले के बलिष्ठ बैलकी स्मृति हो आई-सो उसने गोवाल से पूछा वह पहिले का बलिष्ठ बैल कहां है। राजाको प्रत्युत्तर देते हुए उसने कहा देव! यही तो वह बैल है। गवाल के वचन सुनकर शुभाशयवर्ती राजाने विचार

જણાતી હતી તેના શીંગ લાંબા ગોળ અને ઉંચા હતા જ્યારે રાજા એ બળદને બીજા બળદોની સાથે લડાવતો ત્યારે તેની સામે એક પણ બળદ ટકી શકતો નહીં રાજ્યકાર્યમાં ખૂબ જ ગુંથાયેલ હોવાના કારણે રાજાને કેટલાક વર્ષો સુધી ગૌશાળાનું નિરીક્ષણ કરવાનો સમય મળ્યો નહીં એક દિવસે ગમે તે રીતે સમય મેળવીને જ્યારે રાજાએ ગૌશાળાનું નિરીક્ષણ કર્યું ત્યારે તેની દૃષ્ટિ એક એવા બળદ ઉપર પડી કે, જે વૃદ્ધાવસ્થાને કારણે જર્જરિત બની ગયેલ હતો અને તેના દાંત પણ પડી ગયા હતા, શક્તિનો સમૂળગો અભાવ જણાતો હતો, બગાઈઓ જેના ઉપર થોકબંધ જામી પડી હતી, શરીર સાવ કૃશ બની ગયું હતું, ફક્ત હાડકાંનો માળખો જ દેખાતો હતો તેને જોઈને પહેલાના બલિષ્ઠ બળદની સ્મૃતિ રાજાને થઈ આવી જેથી તેણે ગોવાળને પૂછયું કે, અગાઉનો બલિષ્ટ બળદ કયાં છે? રાજાને પ્રત્યુત્તર આપતાં તે ગોવાળે કહ્યું કે, દેવ! આ એજ બળદ છે ગોવાળના આ

चैकदा जलदात्यये गतो गाः पश्यन् वत्सांश्च निरीक्षमाणः एकं वत्सकं गङ्गाजलाप्लुत हिमगिरेः शृङ्गमिव शुभ्रं दृष्ट्वा तस्मिन् जातप्रेमा गोपालमेवमुवाच- अस्य मातुः पयोऽस्मै एव देयम्। अस्य माता न कदाचिदपि दोह्या। किंचिद् वृद्धिं गतोऽयमन्यासामपि धेनूनां पयः पाययितव्यः। गोपालोऽपि दुर्विलङ्घ्यया राजाज्ञया तथैवाकरोत्। अथ वर्द्धमानः स वत्सः स्वशुभ्रशरीरशोभया शशिप्रभया सह स्पर्धमानः मांसोपचयादलक्षितास्थिर्महापराक्रमः समुन्नतस्कन्धो

से उत्तम उत्तम गायें मगवाकर उनको अपनी गोशाला में रखता था। एक दिन राजा वर्षाकाल के बाद उस गोशाला में गया हुआ था। वहां उसने गायों, वृषभों एवं बच्चों को देखते समय एक ऐसे बच्चे को देखा जो गंगाजल से आप्लुत हिमगिरि के शिखर समान शुभ्र था। देखते ही राजा का उसमें विशेष प्रेम हो गया सो गवाल से उन्होंने कहा-देखो इसकी माताका दूध मत निकाला करो, सबका सब इसको ही पीने दिया करो। तथा जब यह कुछ बडा हो जाय तब दूसरी गायोंका भी दूध दुहकर इसको पिलाना शुरू कर देना। इस प्रकार राजाकी आज्ञानुसार गवालने वैसा ही किया। इस तरह बढते २ जब यह बच्चा पूर्ण जवान बन चुका तब इसकी शुभ्र शारीरिक शोभा के आगे चन्द्रप्रभा भी फीकी लगने लगी। मास के उपचय से इनकी एक भी हड्डि देखने मे नहीं आती थी। अपार बल ही इस मे भरा हुआ प्रतीत होता था। स्कध भी इसका इतने अधिक उन्नत और पुष्ट

न्तरमांथी सारी जातनी गायो मंगावीने पोतानी गौशाळामां राखी अने तेनु भलीभांतिथी पालन पोषण करवामा आवतु अवारनवार राजा गौशाळामा जता अने गायोनी देखरेख राखता एक समय वर्षाकाळनी पछी राजा गौशाळामा गयेला त्या तेणे सर्वांग सुंदर अने शुभ्र एवा एक वृषभने जोई तेना तरफ तेने खूब ज वहाल उपज्यु आथी गोपाळने बोलावीने तेणे कह्यु के आ वाछडानी मानु दूध न काढता एने ज पीवा देवु अने एनी मा दूध आपती बंध थाय त्यारे बीजी गायोने दोहीने तेनु दूध आने पावु तथा एनी योग्य देखभाळ राखवी राजाना हुकमनो अमल गोपाळे एज प्रमाणे कर्यो जेथी वधता वधता ए बच्चु ज्यारे पूर्ण जुवान बन्यु त्यारे तेनी शुभ्र शरीरिक शोभानी आगळ चंद्र पण झांखो लागे तेवु तेनु रूप खीली नीकळ्यु शरीर उपर मांसनो खूब ज भरावो थई गयो के जेथी करीने तेनु एक पण हाडकु क्यांय देखातु नहीं एनामा अपार एवु बळ भरायु हतु तेनी कांध पण विशाळ अने उन्नत गिरीशृंग जेवी

जनाना चन्द्रदर्शनेऽप्यादरो नासीत्, तस्य दर्शनमशुचिदर्शनवज्जुगुप्सामुत्पादयति। प्राणिना हि वयोरूप बलविभुत्वविभवादिक सर्व पताकाञ्चलवच्चञ्चलम्। इद यद्यपि प्रत्यक्षमेव, तथापि मोहवशाल्लोका विवेक न प्राप्नुवन्ति। तस्मान्मोहमपनीय स्वजन्मन. साफल्य सम्पादनीयम्। इद च वीतरागधर्मादेव सभवति, तस्मात्स एव धर्मो मया सम्यगाराधनीय' एव विचार्य पर वैराग्यमापन्न' प्राग्भवसस्कारो दयात्स्वयमेव प्रतिबुद्धो राजा राज्य तृणवत्परित्यज्य स्वय लोच कृत्वा शासन

दर्शन मे भी अरुचि हो जाया करती थी, आज उसी को देखना जी को नहीं भाता है। अशुचि पदार्थ के दर्शन की तरह इसको देखने मे घृणा उत्पन्न करता है। इससे यह बात ध्रुव सत्य है कि प्राणियों का वय, रूप, बल, विभुत्व एव विभव आदि सब पताका के समान चचल है। यह सब बातें प्रतिदिन लोगों के सामने यद्यपि होती रहती हैं फिर भी मोह के वश से लोगो को विवेक जागृत नही होता है इसी से वे इन से कुछ भी शिक्षा प्राप्त नही कर सकते हैं। इसलिये मोह को हटाकर इस नरजन्म की सफलता सपादन करने मे ही श्रेय रहा हुआ है। अत. वही कर्तव्य है। यह सब वीतराग प्रभु के धर्म से ही जीव को प्राप्त हो सकता है। इसलिये उसकी ही हमे आराधना करनी चाहिये।

इस प्रकार के विचार से राजा को परम वैराग्यभाव जागृत हो गया। परभव के सस्कारों के उदय से अपने आप प्रतिबुद्ध बने हुए इस राजाने राज्य का तृण के समान परित्याग करके और स्वय केश-

---

જોઈને જોવાવાળાને એકવાર ચદ્રમાને જોવાની પણ અરૂચી થતી આજ એને જોવાનુ પણ કોઈને સારૂ લાગતુ નથી અશુચિ પદાર્થના દર્શનની માફક તેને જોવામા ઘૃણા થાય છે આથી આ વાત ધ્રુવ સત્ય છે કે, પ્રાણીઓનુ વય રૂપ બળ, વિભૂત્વ, આદિ સઘળુ પતાકાની માફક ચચળ છે આ સઘળી વાતો દરરોજ લોકોની સામે જો કે બન્યા જ કરે છે તો પણ મોહથી વશ બનેલા લોકોમા વિવેક જાગૃત થતો નથી જેથી તેનાથી તે કોઈ પણ જાતની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી આથી મોહને હટાવીને આ માનવજન્મની સફળતા કરવામા જ શ્રેય સમાયેલુ છે એજ એક માત્ર કર્તવ્ય છે, આ સઘળુ વીતરાગ પ્રભુના ધર્મની જીવને પ્રાપ્ત થઈ શકે છે જેથી તેમની મારે આરાધના કરવી જોઈએ

આ પ્રકારના વિચારથી પરમ વૈરાગ્યભાવ ઉત્પન્ન થયો પરભવના સસ્કારોના ઉદયથી પોતે પોતાની મેળે જ પ્રતિબુદ્ધ થયેલા આ રાજાએ રાજ્યનો તણખલાની જેમ ત્યાગ કરી દઈને પોતાની મેળે જ કેશોનુ લોચન કરીને શાશનદેવ તરફથી

अहो ! सर्वे भावा अनित्याः । नास्ति किंचिदत्र संसारे नित्यम् । योऽयं वृषभ स्वपराक्रमेण सर्वानपि वृषभानतिशेतेस्म, यस्य हुम्भारवेण धनुष्टङ्कारवेण पक्षिण इव बलवन्तोऽपि वृषभा द्रुततरं पलायिताः स एवाय वृद्धावस्थाजनित श्वासाधिक्येन घर्घरेणेन्द्र कम्पमानौष्ठो गतदृष्टिर्नष्टपराक्रम पदात्पदमपि गन्तुमसमर्थ सम्प्रति काकचञ्चुभिर्व्यथामसहाय सहते । यस्य रूप पश्यता

किया—अहा ! यह कितने अचरजकी बात है जो इतने बलिष्ट बैल की भी ऐसी दयनीय दशा बन गई है। सच है—संसार में सभी पदार्थ अनित्य हैं शाश्वत यहां कोई नहीं है। जो अपने पराक्रम से समस्त बलीवर्दों को जीत लेता था, जिसके बराबरी का यहां एक भी बैल नहीं था। जिसकी आवाज से समस्त बैल धनुष की टंकार से पक्षीकी तरह पूछ उठाकर भाग जाते थे। आज उसी बैलकी यह क्या दशा हो गई है? विचारा वृद्धावस्था से अत्यंत जर्जरितकाय बना हुआ है। श्वासकी अधिकता से निकले हुए घर्घर शब्द से इसके दोनों ओष्ठ काप रहे हैं। दृष्टि इसकी एक तरह से नष्टसी हो गई है। पराक्रम सर्वथा लुप्त हो गया है। चलनेकी शक्ति तो इतनी क्षीण हो चुकी है जो यह एक पैर भी नहीं भर सकता है। कौए पहिले जिसकी तरफ देखने तक का भी साहस नहीं कर सकते थे वे ही आज इस के ऊपर बैठकर अपनी नुकीली चोंचों द्वारा चोंथकर व्यथित कर रहे हैं। जिसके नेत्र सतर्पक रूपको देखकर देखनेवालों को एकबार चन्द्र

પ્રકારના વચન સાભળીને શુભઆશયવર્તી રાજાએ વિચાર કર્યો, અહા ! આ કેવી અચરજની વાત છે કે આ બલિષ્ટ બળદની આજે આવી દયાજનક સ્થિતિ બની ગઈ એ ખરૂ છે કે સ સારમા બધા પદાર્થ અનિત્ય છે આ સ સારમા કોઈ પણ વસ્તુ શાશ્વત નથી જે વૃષભ પોતાના પરાક્રમથી સઘળા બળવાન બળદોને હરાવતો હતો તેની બરોબરીનો અહીં એક પણ બળદ ન હતો જેનો અવાજ સાભળીને ધનુષ્યનો ટકાર સાભળીને જેમ પક્ષીઓ કૂદી ઉઠે તે પ્રમાણે સઘળા બળદો પૂછડુ ઉચુ કરીન ભાગવા માડતા હતા આજે તે બળદની આવી કરૂણાજનક હાલત થઈ ગયેલ છે બિચારો વૃદ્ધાવસ્થાથી જર્જરિત કાયાવાળો બની ગયેલ છે, શ્વાસની અધિકતાથી ઘરઘર શબ્દના કારણે તેના બને હોઠ કાપી રહ્યા છે તેની એક તરફની દૃષ્ટિ પણ નાશ પામેલ છે પરાક્રમ તો સ પૂર્ણપણે લુપ્ત બની ગયેલ છે ચાલવાની શક્તિ એટલી બધી ક્ષીણ થઈ ગયેલ છે કે એક ડગલુ પણ તે ભરી શકતો નથી પહેલા આનો સામે કાગડા જવાની પણ હિ મત કરતા ન હતા તે આજે તેના ઉપર બેસીને તેને ફોલીને તેના માસને ચુથી રહ્યા છે જેના નેત્રને ઠારે ્ રૂપને

एकदाऽऽस्थानमण्डपे सिंहासनस्थितो राजा देशान्तरादागत दूत कौतुकात् पृष्टवान्–त्वयाऽनेकराज्यानि दृष्टानि। कथय, तेषु किं वैशिष्ट्यमस्ति, यन्मम राज्ये नास्ति। दूतेनोक्तम्–राजन्। भवद्राज्ये चित्रशाला नास्ति। तद्वचन श्रुत्वा राजा गृहनिर्माणकलाभिज्ञान् शिल्पिनः समाहूय प्रोवाच युष्माभिर्मे मार्थेऽभूतपूर्वा चित्रशाला करणीया ? तेऽपि 'आदेश प्रमाणम्' इत्युक्त्वा शुभे दिने चित्रशालानिर्माणेच्छया भुव खात कर्त्तुं प्रारेभिरे। खात खनद्भिस्तै. पञ्चमदिवसे तस्माद् भूतलात् तेजसा भासमान रत्नमय मुकुट लब्धम्। तत शिल्पिनस्तद्वृत्तान्त राज्ञे निवेदितवन्त । राजाऽपि परिवारेण सह सहर्षस्त

भोगते हुए अपना समय आनद के साथ व्यतीत करते थे। एक समय की बात है कि आस्थानमडप में बैठे हुए राजाने देशान्तर से आये हुए एक दूत से कौतुक के साथ पूछा–तुमने तो अनेक राज्य देखे हे कहो उनमे ऐसी क्या विशिष्टता देखी हें जो मेरे राज्य मे तुमको दिखलाई न पडती हो। राजाकी बात सुनकर दूतने कहा–महाराज! आपके राज्य मे चित्र-शाला नहीं है। दूतकी बात सुनकर राजाने गृह निर्माण मे विशेष अभिज्ञ शिल्पियों को बुलवाकर उन से कहा–आपलोग मेरे लिये एक अभूतपूर्व चित्रशाला निर्मित करे। शिल्पियोंने राजाकी आज्ञा प्रमाण कर चित्र शाला बनाने का कार्य प्रारभ किया। सब से पहिले उन्होंने नीव खोदी। पाचवे दिन उन लोगों को तेज से चमकता हुआ एक रत्नमय मुकुट वहा मिला। यह बात शिल्पियोने राजा से प्रकट की। राजाने भी बडे

આનદ વીવિતાવતા હતા એક સમયની વત છે ક, જ્યારે અસ્થાનમડપમા બેઠેલા રાજાએ દેશાતરથી આવેલા એક દૂતને કૌતુકની સાથે પૂછ્યુ, તમોએ તો અનેક રાજ્ય જોયા છે તો કહો! એમા કઇ વિશિષ્ટતા જોઈ કે, જે મારા રાજ્યમા તમારા જોવામા આવતી ન હોય રાજાની વાત સાભળીને દૂતે કહ્યુ, મહારાજ! આપના રાજ્યમા ચિત્રશાળા નથી દૂતની વાત સાભળીને રાજાએ ગૃહનિર્માણમા અત્યત જાણકાર એવા શિલ્પિઓને બોલાવીને તેમને કહ્યુ, તમે લોકો મારા માટે એક સર્વાગ સુદર એવી ચિત્રશાળા તૈયાર કરો રાજાની આજ્ઞાને માનીને શિલ્પિઓએ ચિત્રશાળા બનાવવાનો પ્રારભ કર્યો સહુથી પહેલા તેમણે પાયો ખોદ્યો આ કામ પાચ દિવસ સુધી ચાલ્યુ પાચમા દિવસે તેમને ત્યાથી તેજથી ચમકતા રત્નમય મુગટ ખોદકામમા મળ્યો આ વાત શિલ્પિઓએ રાજાની પાસે જઈને કહી રાજાએ અત્યત હર્ષથી સપરિવાર આવીને તે મુગટને લીધો અને શિલ્પિ

देवसमर्पितं सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणादिकं साधुवेषं परिधाय प्रव्रजितः। प्रव्रज्यामादाय प्रतिबुद्धजीवी प्रत्येकबुद्धः करकण्डूरप्रतिबद्धविहारेण भूमण्डले विहरन् उग्रं तपश्चरन् अन्तेऽनशनं कृत्वा सिद्धिं गतः। उक्तं च करकण्डूनृपविषयेऽन्यत्रापि-

"श्वेतं सुजातं सुविभक्तशृङ्गं, गोष्ठाङ्गणे वीक्ष्य वृषं जरार्त्तम्।
ऋद्धिं च वृद्धिं च समीक्ष्य बोधात्कलिङ्गराजर्षिरवाप धर्मम् ॥१॥

॥ इति करकण्डूनृपकथा ॥

अथ द्विमुखराजकथा—

आसीत्पञ्चालदेशे काम्पिल्यपुरे जयवर्माभिधो राजा। तस्यासीद् गुणमाला नाम महिषी। नृपस्तया सह विविधान् भोगान् भुञ्जानो विहरति।

लुञ्चन करके शासनदेव द्वारा समर्पित सदोरकमुखवस्त्रिका एवं रजोहरण आदि को ग्रहण कर मुनिवेष धारण कर लिया। दीक्षा लेकर प्रतिबुद्धजीवी प्रत्येक प्रतिबुद्ध करकण्डू राजाने अप्रतिबद्ध विहारी बन कर उग्र तपस्या की आराधना से अन्त में समाधिमरण कर सिद्धि गति को प्राप्त कर लिया। इनके विषय में कही गई यही बात अन्यत्र इस प्रकार कही गई है।

"श्वेतं सुजातं सुविभक्तशृङ्गं, गोष्ठाङ्गणे वीक्ष्य वृषं जरार्त्तम्।
ऋद्धिं च वृद्धिं च समीक्ष्य बोधात्, कलिङ्गराजर्षिरवाप धर्मम्" ॥१॥

॥ यह करकण्डूराजाकी कथा हुई ॥

द्विमुख राजकथा इस प्रकार है—

पाचालदेश में काम्पिल्यपुर में जयवर्मा नामका राजा था। इनकी पट्टरानीका नाम गुणमाला था। राजा और रानी अपने पुण्यफल को

આપવામા આવેલ સદોરકમુખવસ્ત્રિકા અને રજોહરણ વગેરેને ગ્રહણ કરીને મુનિ વેશ ધારણ કર્યો દીક્ષા લઈને પ્રતિબુદ્ધ જીવી પ્રત્યેક પ્રતિબુદ્ધ કરકન્ડૂ રાજાએ અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બનીને ઉગ્ર તપસ્યાની આરાધનાથી અતમા સમાધિમરણ કરીને સિદ્ધ ગતિને પામ્યા એમ ન વિષયમા કહેવાયેલી આ વાત બીજા સ્થળે આ પ્રમાણે કહેવામા આવેલ છે

"શ્વેતં સુજાતં સુવિભક્તશૃઙ્ગં ગોષ્ઠાઙ્ગણે વીક્ષ્ય વૃષં જરાર્ત્તમ્।
ઋદ્ધિં ચ વૃદ્ધિં ચ સમીક્ષ્ય બોધાત્ કલિઙ્ગરાજર્ષિરવાપ ધર્મમ્" ॥૧॥

॥ આ કરકન્ડૂ રાજાની કથા થઈ ॥

દ્વિમુખ રાજાની કથા આ પ્રમાણે છે—

પાચાલ દેશમા કામ્પિલ્યપુરમા જયવર્મા નામે એક રાજા હતા તેની પટ્ટરાણીનુ નામ ગુણમાલા હતુ રાજા અને રાણી પોતાના પુણ્યફળને ભોગવીને પોતાનો સમય

विचित्र चित्ररचना विस्मापित जगत्त्रयीं स्वां दर्शयितुं देवानाह्वयन्तीव दृश्यते स्म। अथ शुभदिवसे स भूपालस्तस्यां चित्रशालायां प्रविश्य तं दिव्यमुकुटं सिंहासने समुपविष्टः। मुकुटे शिरसि धृते राजा तत्प्रभावेण द्विमुखो दृश्यते। अतः स द्विमुख इति नाम्ना जगति प्रसिद्धिं गतः। अथ तस्य द्विमुखस्य राज्ञः पुत्रवत्प्रजाः परिपालयतो बहूनि वर्षाणि व्यतीतानि। अत्रान्तरे तस्य सप्त पुत्रा जाताः। ततो राज्ञी गुणमाला चिन्तितवती–सुतेष्वेतेषु सत्स्वपि कुलद्वय कीर्त्तिकरीमेकां पुत्रीं विना मम जन्म निरर्थकमिव प्रतिभाति। एवं पुत्रीनि-

पवनद्वारा चलायमान होती तो उस समय यही बात मन में आती थी कि मानों यह चित्रशाला की जिसने अपनी विचित्र चित्ररचना से जगत्त्रय को भी विस्मित कर दिया है अपने को दिखाने के लिये देवों को ही बुला रही है। इस प्रकार सर्वाङ्गरूप से पूर्ण सुशोभित उस चित्रशाला मे राजाका सिंहासन स्थापित किया। राजा उस मिले हुए मुकुट को माथे पर बांधकर वहां उस पर बैठते थे। उस मुकुट का यह प्रभाव था कि उससे देखनेवालोंकी नजर में वे राजा दो मुख-वाले दिखलाई पडते थे। इसलिये लोगों में "द्विमुख" इस नाम से उनकी प्रसिद्धि हो गई। द्विमुख राजा अपनी प्रजाका पालनपोषण अपने पुत्र के समान ही किया करते थे। इस तरह आनन्द के साथ प्रजाका संरक्षण करते २ इन राजा का अनेक वर्षों का समय निकाला। इनके सात पुत्र थे। परंतु पुत्री एक भी नहीं थी। इस स्थिति से राजाकी रानी गुणमाला विशेष चिन्तित रहती थी। उसने विचार किया कि–इन सात पुत्रों के होने पर भी कुलद्वय की कीर्ति को अखंड रखने

તે પવનથી ઉડતી હતી ત્યારે એવી વાત મનમા આવતી હતી કે આ ચિત્રશાળાની રચના જોવાથી જગતભરને વિસ્મય બનાવી દીધેલ છે તેને જોવા માટે તે દેવોને બોલાવી રહેલ છે આ પ્રમાણે સર્વાંગ રૂપથી પૂર્ણ સુશોભિત એવી એ ચિત્રશાળામા રાજાનુ સિંહાસન ગોઠવવામા આવ્યુ રાજા ખોદકામમા મળેલા મુગટને પહેરીને તેની ઉપર બેસતા હતા આ મુગટના પ્રભાવથી તેને જોવાવાળાની નજરમા તે રાજા બે મોઢાવાળો–દ્વિમુખી દેખાતો હતો આ કારણે લોકોમા "દ્વિમુખ" આ નામથી એની પ્રસિદ્ધિ થઈ દ્વિમુખ રાજા પોતાની પ્રજાનુ પાલણપોષણ પુત્રવત્ કરતા હતા આ પ્રમાણે આનંદની સાથે પ્રજાનુ સંરક્ષણ કરતા કરતા એ રાજાનો અનેક વર્ષોનો સમય નીકળી ગયો તેમને સાત પુત્રો હતા, પરંતુ એક પણ પુત્રી ન હતી આથી રાજાની રાણી ગુણમાલા વિશેષ ચિંતિત રહેતી હતી એણે વિચાર કર્યો કે, પોતાને સાત પુત્રો હોવા છતા પણ કુળદ્વયની કીર્તિને અખંડ રાખવા-

आगत्य तन्मुकुटं गृहीतवान् । तांश्च वसनादिप्रदानेन सत्कृतवान् । ततः कियत्कालानन्तरं चित्रशाला निष्पन्ना । सा चित्रशाला भित्तिन्यस्तमणिगणैर्नित्यालोका देवीभिरिव विविधमाणिक्यपुत्तलिकाभिरधिष्ठिता देवविमानवत् सर्वशोभा सम्पन्ना जाता । इन्द्रधनुः सदृशमाणिक्यतोरणैर्विराजमाना पञ्चवर्णमणिरचितकुट्टिमतला सा चित्रशाला "मत्तोऽपि सुधर्मासभा रम्या किम् ?" इति वीक्षितुमिव रत्ननेत्रैः स्वशिखरशिरः समुत्थापयन्तीव प्रतिभाति । सा पुनश्चलायमानैर्ध्वजै

हर्ष से सपरिवार आकर उस मुकुट को ले लिया । शिल्पियों का राजाने वस्त्रादिक द्वारा खूब सत्कार किया । धीरे २ चित्रशाला भी निर्मित हो चुकी । भित्ति में जड़े हुए मणिगणों से वह चित्रशाला प्रकाशित होने लगी । दैवी जैसि विविध माणिक्य पुत्तलिकाओं से अधिष्ठित हुई वह देवविमान की तरह सर्व प्रकारकी शोभा का अनुपम धाम बन गई । इस में जो तोरण लगाये गये थे वे माणिक्यों से निर्मित हुए थे, अतः उनकी कान्ति से ऐसा ज्ञान होता कि मानों इन्द्रधनुष से ही यह शोभित हो रही है । इसका कुट्टिमतल–आंगण पंचवर्ण के मणियों से बनाया गया था । इसके ऊपर जो शिखर बनाये गये थे वे बहुत ही ऊँचे थे । उनमें रत्न जड़े हुए थे । सो ऐसा ज्ञान होता था कि "सुधर्मासभा क्या मुझ से भी अधिक रम्य है" मानों इस बातकी जाच करने के ही लिये उसने अपने मस्तक को ऊँची किया है । यहां मस्तक के स्थानापन्न शिखर और उन में लगे हुए रत्न नेत्र के स्थानापन्न जानना चाहिये । शिखरों पर जो ध्वजाएँ लगाई गई थी वे जब

ओने वस्त्रादिक वगेरेथी सत्कार्यो धीरे धीरे चित्रशाळा तैयार थई गई भींतमां जडेला मणीगणोथी ए चित्रशाळा खूब प्रकाशित देखावा लागी देवी जेवी विविध माणीक्य पुतळीओथी अधिष्ठित करवामा आवेली ए चित्रशाळा देवविमानना अनुपम धाम सरखी बनी गई तेमा जे तोरण लगाडवामा आवेल हता ते मणीओना हता आथी तेना प्रकाशने कारणे ते ईन्द्र धनुषथी पण ते अति शोभायमान लागती हती तेनु कुट्टिम तळ–आगणु पाच वर्णना मणिओथी बनाववामा आवेल हतु तेना उपर जे शिखर बनाववामा आवेला ते खूब उंचा हता तेमा रत्नो जडेला हता तेनाथी एम लागतु हतु के "सुधर्मासभा शु माराथी पण अधिक सुदर छे ?" मानो के आ वातनी तपास करवा माटे तेणे पोताना मस्तकने उन्नत बनावेल छे त्या मस्तकना स्थानापन्नरूप शिखर अने तेमा लागेला रत्नोने नेत्रना स्थानापन्नरूप जाणवा जोईए शिखरो उपर जे धजाओ लगाववामा आवी हती

स ततः प्रत्यागतः स्वस्वामिनं चण्डप्रद्योतं प्रोक्तवान्–देव! काम्पिल्यनाथेन जयवर्मणा मुकुटम् समुपलब्धम्। यत्प्रभावात्स द्विमुख इव दृश्यते। अतस्तत्प्रजाभिः स सम्प्रति द्विमुख इति नाम्ना व्यपदिश्यते। दूतवचनं श्रुत्वा तस्मिन् मुकुटे जातलोभश्चण्डप्रद्योतः कंचित् वाक्चतुरं दूतं द्विमुखनृपसमीपे प्रेषितवान्। स दूतः काम्पिल्यपुरे समागत्य चित्रशालायां सिंहासने समुपविष्टं मस्तके स्थितमुकुटप्रभावेण द्विमुखतां गतं तं द्विमुखं राजानं प्रणिपत्य प्राह–राजन्! उज्जयिनीनाथः प्रचण्डप्रतापः श्रीमान् चण्डप्रद्योतो भवन्तं ब्रवीति–त्वत्समीपे मुख

सुनने में आया। जब वह अपना कार्य समाप्त कर वापिस उज्जयिनी में गया तब उसने वहां अपने स्वामी से इस जयवर्मा राजा के मिले मुकुट के प्रभाव की बात कही–दूतने कहा देव! काम्पिल्य राजा जयवर्मा को एक मुकुट मिला है सो वह उसके प्रभाव से दो मुखवाले लोगों को दिखलाई पडते हैं। इसीलिये उनके प्रजाजनोंने उसका 'द्विमुख' ऐसा नाम प्रसिद्ध कर रखा है। दूत के द्वारा इस समाचार को सुनकर चण्डप्रद्योतन के मन में उस मुकुट को लेनेका लोभ जागृत हुआ। उसने उसी समय एक चतुर दूतको बुलवाया और उसको अपना हार्दिक अभिप्राय समझाकर जयवर्मा के पास भेजा। वहां से चलकर वह दूत काम्पिल्य नगर मे आकर चित्रशाला में सिंहासन पर बैठे हुए राजा के पास पहुँचा। उसने वहां राजाको मस्तक पर रखे हुए मुकुट के प्रभाव से दो मुखवाला देखा। देखते ही झुककर प्रणाम करते हुए उसने जयवर्मा राजा से कहा–राजन्! उज्जयिनी के नाथ श्रीमान् चण्ड-

મુગટના પ્રભાવની વાત સાભળવામા આવી જ્યારે તે પોતાનુ કામ પૂરૂ કરીને પાછો ઉજ્જયિની ગયો ત્યારે તેણે ત્યા પોતાના રાજાને જયવર્મા રાજાને મળેલા મુગટના પ્રભાવની વાત કરી દૂતે કહ્યુ કે દેવ! કામ્પિલ્યનગરના રાજા જયવર્માને એક મુગટ મળેલ છે આ મુગટને ધારણ કરવાથી તે લોકોની નજરમા બે મોઢાવાળો દેખાય છે આ કારણે તેના પ્રજાજનોમા તે દ્વિમુખ એ નામે જાહેર છે દૂતની પાસેથી આ સમાચારને સાભળીને ચડપ્રદ્યોતનના મનમા એ મુગટને હાથ કરવાનો લોભ જાગ્યો તેણે એ વખતે એક ચતુર દૂતને બોલાવ્યો અને તેને પોતાના હૃદયની વાત સમજાવીને તેને જયવર્માની પાસે મોકલ્યો ત્યાથી ચાલીને તે દૂત કામ્પિલ્યનગરમા આવીને ચિત્રશાળામા સિંહાસન ઉપર બેઠેલા રાજાની પાસે પહોચ્યો. તેણે ત્યા રાજાને મસ્તક ઉપર રાખેલા મુગટના પ્રભાવથી બે મુખવાળા જોયા જોતા જ તેણે પ્રણામ કરીને જયવર્મા રાજાને કહ્યુ, રાજન્! ઉજ્જયીનીના રાજા ચડપ્રદ્યોતન રાજાએ આપની પાસે એવા પ્રકારનો સદેશો મોકલ્યો છે કે, જે આપના

मित्त चिन्तयन्ती राणी मनोरमाख्या पुत्री प्रसूतवती। राजा द्विमुखस्तज्जन्म महोत्सवं महता समारोहेण कृतवान्। राज्ञा मदनमञ्जरीति तन्नामकृतम्। नन्दने कल्पलतेव पितुर्निकेतने वर्द्धमाना सा क्रमेण जगन्मनोहर रूपलावण्य सुशीलतादिगुणसमलङ्कृत यौवन प्राप्तवती। आदर्शादिषु सङ्क्रान्तात्स्वीयप्रति बिम्बादन्यत्र तद्रूपस्य तुलना कुत्रापि नासीत्।

तस्मिन्नेव समये उज्जयिन्यां चण्डप्रद्योतो नामासीद् राजा। तस्य दूतः केनापिकार्येण काम्पिल्यनगरं समागतः। तत्र तेन जयवर्मसम्बन्धमुकुटप्रभावः श्रुतः।

वाली पुत्री तो मेरे यहा एक भी नहीं हुई है। पुत्रीके विना मेरे इन पुत्रों की एव मेरी कोई शोभा नहीं हुई है। इस प्रकार का उसका विचार हुआ ही था कि कालान्तर म रानी के एक सर्वांग सुन्दरी पुत्री भी हुई। राजाने पुत्रीके जन्म का महोत्सव बडे समारोह के साथ मनाया। मदनमंजरी पुत्री का नाम रखा गया। नन्दनवन मे कल्पलता के समान पिता के घर मे क्रमश वृद्धिगत होती हुई मदनमजरीने जगत के मन को हरण करनेवाली रूप, लावण्य, सुशीलता आदि गुणसपत्ति से अलकृत युवावस्था को प्राप्त किया। उसके रूपकी तुलना दर्पण आदि में सक्रान्त उसके प्रतिबिम्ब के सिवाय अन्यत्र कही पर भी देखने में नहीं आती थी, इतनी तो वह सुन्दर थी।

जिस समयकी यह बात है उस समय उज्जयिनी नगर मे चण्ड प्रद्योतन नामका राजा राज्य करता था। किसी कार्यवश उसका एक दूत काम्पिल्यनगर में आया हुआ था। उसको वहा पर लोगो के मुख से जयवर्मा, (द्विमुख) राजाके उस मिले हुए मुकुटका प्रभाव

વાળી પુત્રી તો મારે ત્યા નથી પુત્રીને વિના મારા આ પુત્રોની અને મારી કોઇ શોભા નથી આ પ્રકારનો એના મનમા વિચાર હતો જ ત્યારે સમયના જતા તેને એક સર્વાગ સુદર પુત્રીનો જન્મ થયો રાજાએ પુત્રીના જન્મનો મહોત્સવ ખૂબ ધામધુમથી મનાવ્યો ,પુત્રીનુ નામ મદનમજરી રાખવામા આવ્યુ નદનવનમા કલ્પ લતાની માફક તે પિતાના ઘરમા ક્રમશ મોટી થવા લાગી, અને વધતા વધતા મનને હરણ કરે તેવા રૂપલાવણ્યવાળી,, સુશીલતા આદિ ગુણસપત્તિથી અલકૃત યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત બની એના રૂપની બરોબરી કરી શકે તેવી કોઇ સુદરી દેખાતી ન હતી, આટલી તો એ સુદર લાગતી હતી

જે સમયની આ વાત છે,એ સમયે ઉજ્જયીની નગરીમા ચડપ્રદ્યોતન નામના રાજા રાજ્ય કરતા હતા કોઇ કામને લઇને તેમનો દૂત કામ્પિલ્યનગરમા આવ્યો હતો એને ત્યાના લોકોના મોઢેથી જયવર્મા રાજાને–દ્વિમુખ રાજાને - મળેલા એ

दितवान्। ततः स कोपाविष्टश्चण्डप्रद्योतो द्विमुखेन सह योद्धुं गन्तुकामो भेरीं वादितवान्। तदनु स स्वबलैश्चलां चालयन्निव पञ्चाल प्रति प्रस्थितः। तत्सैन्ये मेघगर्जितैरिव बृंहितैः सर्वादिशः पूरयन्तो, धारासारैरिव मदवारिभिर्महीतल सिञ्चन्तो, विद्युल्लताभिरिव स्वर्णादिभूषणैर्विराजिता लक्षद्वयसंख्यका गजा अम्बरे-ऽम्बुदा इव रेजुः। स्वगतितिरस्कृतवायुवेगाः पञ्चाशत्सहस्रसंख्यकास्तुरगा तत्सेना व्यभूषयन्। नानाविधशस्त्रास्त्रसभृता सुजातीयैरश्वैरुह्यमाना विंशतिशत

यह सब बात चण्डप्रद्योतन से कह दी। सुनते ही चण्डप्रद्योतन क्रोध के आवेश मे आ गया और शीघ्र ही उसने द्विमुखके साथ युद्ध करने की भावना से भेरी बजवादी। भेरीका शब्द सुनकर सैन्य एक-त्रित हो गये। चण्डप्रद्योतन सैन्यको लेकर पृथ्वी को कंपित करता हुआ पाञ्चाल देशकी ओर चला। उसकी सेनामें २ लाख हाथी थे। वे मेघगर्जना के समान गुलगुलाहट शब्दो द्वारा समस्त दिशाओं को व्याप्त करते हुए चल रहे थे। उस समय उनके मेघधाराके समान बर सनेवाले मदजलोसे महीतल कीचडमय बन गया था। ये सबके सब गज विद्युल्लताके समान स्वर्ण आदिके विभूषणो से चमकतेथे। सो देखने वालोंको ऐसा प्रतीत होने लगताथा, कि मानो आकाशमे मेघ ही मेघ एकत्रित हुए हैं। सेनामे अपनी गतिसे वायुकी गतिको तिरस्कृत करने वाला पचास हजार घोडों का समूह था। अनेक प्रकारके शस्त्रोंसे भरे हुए बीस हजार रथ थे। जिनके जातिमान् अश्व जुडे

ઉજ્જયીની પહોચીને સઘળી વાત ચડપ્રદ્યોતનને કહી સભળાવી સાભળતા જ ચડપ્રદ્યોતન ક્રોધના આવેશમા આવી ગયો અને તરત જ તેણે દ્વિમુખની સાથે યુદ્ધ કરવા માટેનુ રણશીગુ ફુકાવ્યુ રણશીગનો શબ્દ સાભળીને સૈન્ય એકત્રિત થઈ ગયુ રાજા ચડપ્રદ્યોતન સૈન્ય લઈને પૃથ્વીને કપાવતો કપાવતો પાચાલ દેશની તરફ ચાલ્યો તેની સાથે બે લાખ હાથી હતા તે સઘળા મેઘગર્જનાની સાફક ગડગડાટના શબ્દો દ્વારા સઘળી દિશાઓને વ્યાપ્ત કરતા ચાલી રહેલ હતા તે સમયે તેના મેઘધારા સમાન વરસતા મદજળોથી પૃથ્વી કિચડમય બની ગયેલ હતી એ સઘળા હાથીઓ વિદ્યુતલતા સમાન સોનાના આભૂષણોથી ચમકતા હતા એ જોનારને એવુ પ્રતીત થતુ હતુ કે, જાણે આકાશમા મેઘોનુ એક સાથે મિલન થયેલ છે સેનામા પોતાની ગતિથી વાયુની ગતિને પણ નમળી કરવાવાળો પચાસ હજાર ઘોડેસ્વારોનો સમૂહ હતો અનેક પ્રકારના શસ્ત્રઅસ્ત્રોથી ભરેલા વીસહજાર રથ હતા જેને જાતિમાન અશ્વ જોડેલ હતા સાત કરોડ મહાનશક્તિશાળી એવા પાયદળ સૈનિકો હતા આવી વિશાળ સેનાથી સજ્જ થઈને ચડપ્રદ્યોતન રાજા થોડા

द्वयकर मुकुटरत्नमस्ति, तन्मह्यमर्पय। नो चेद् युद्धाय सन्नद्धो भव इति। दूत मुखादित चण्डप्रद्योतसन्देशं श्रुत्वा द्विमुख नृपोऽब्रवीति-तव राजा मदभीष्टं यदि मह्यमर्पयेत, तदाऽहमपि मुकुटरत्न तव भूपाय समर्पयिष्यामि। दूत प्राह-राजन्! कथयन्तु स्वाभीष्टितम्' राजा प्राह-तव स्वामी स्वराज्यसारभूतम् नलगिरिनामक गन्धहस्तिनम् १, अग्निभीरुनामक रथोत्तम २, शिवाभिधा राज्ञीं ३, सन्देशहारक लोहजङ्घ ४ च ददातु। अहमपि स्वराज्यसार मुकुट तव राज्ञे प्रदास्यामि। ततो दूत उज्जयिनीं गत्वा द्विमुखोक्तं सर्वं चण्डप्रद्योताय निव

प्रद्योतन राजाने आपके पास इस प्रकारका सदेश भेजा है कि जो तुम्हारे पास दो मुख प्रदर्शित करनेवाला मुकुट है वह तुम मुझे दे दो। यदि इस मे जरा भी आनाकानी करोगे तो फिर युद्धके सिवाय और कोई उपाय नहीं रहेगा। दूतके मुख से चण्डप्रद्योतन के इस सन्देश को सुनकर द्विमुख राजाने उस से कहा कि-यदि तुम्हारा राजा मुझे मेरी अभिलषित वस्तु देने को तैयार हो जाय तो मै उसको इस मुकुट रत्नको दे सकता हू। द्विमुखकी बात सुनकर दूतने कहा-राजन! आप कहें वह अभिलषित वस्तु क्या है? राजाने कहा सुनो-१ उसके राज्य का सारभूत अनलगिरि नामका गन्ध हाथी, २ अग्निभीरु नामक उत्तम रथ, ३ शिवा नामकी रानी, और ४ लोहजघादूत। ये चार बाते उसके राज्यकी मुझे अभिलषित हैं। सो वह यदि इन चारों को मुझे दे सकता हो तो मै भी अपने राज्य के-सारभूत इस मुकुट को उसको दे सकता हू। द्विमुख राजाकी ऐसी अटपटी बात सुनकर दूतने जाकर

પાસે બે મુખપ્રદર્શિત કરવાવાળો જે મુગટ છે તે મને આપો જો તેમા જરાપણ આનાકાની કરશો તો તેમા યુદ્ધના સિવાય બીજો કોઇ ઉપાય નથી દૂતના મોઢેથી ચડપ્રદ્યોતનના આ સદેશાને સાભળીને દ્વિમુખ રાજાએ તેને કહ્યુ કે, જો તમારો રાજા હુ ઇચ્છુ તે વસ્તુ મને આપવા તૈયાર થાય તો હુ તેને આ મુગટરત્ન આપી શકુ છુ દ્વિમુખની વાત સાભળીને દૂતે કહ્યુ, રાજન્! આપ કહો, તે ઇચ્છિત વસ્તુ કઇ છે? રાજાએ કહ્યુ, સાભળો, ૧ તેના રાજ્યના રત્નરૂપ અનલગિરિ નામનો ગન્ધ હાથી, ૨ અગ્નિભિરૂ નામનો ઉત્તમ રથ, ૩ શિવા નામની રાણી, ૪ લોહજઘા દૂત આ ચારે ચીજો તેના રાજ્યની મને ખૂબ પસદ છે જો તે આ ચારે ચીજો મને આપી શકે તો હુ પણ મારા રાજ્યના સારભૂત એવા આ મુગટને તેને આપી શકુ છુ દ્વિમુખ રાજાની આવી અટપટી વાત સાભળીને તે દૂતે પાછા

दितवान । ततः स कोपावेशचण्डप्रद्योतो द्विमुखेन सह योद्धुं गन्तुकामो भेरीं वादितवान् । तदनु स स्वबलैश्चलां चालयन्निव पञ्चाल प्रति प्रस्थितः । तत्सैन्ये मेघगर्जितैरिव बृंहितैः सर्वादिशः पूरयन्तो, धारामदैरिव मदवारिभिर्महीतलं सिञ्चन्तो, विद्युल्लताभिरिव स्वर्णादिभूषणैर्विराजिता लक्षद्वयसंख्यका गजा अम्बरेऽम्बुदा इव विरेजुः । स्वगतितिरस्कृतवायुवेगाः पञ्चाशत्सहस्रसंख्यकास्तुरगा तत्सेना व्यभूषयन । नानाविधशस्त्रास्त्रसभृता सुजातीयैरश्वैरुह्यमाना विंशतिशत

यह सब बात चण्डप्रद्योतन से कह दी। सुनते हि चंडप्रद्योतन क्रोध के आवेश मे आ गया और शीघ्र ही उसने द्विमुखके साथ युद्ध करने की भावना से भेरी बजवादी। भेरीका शब्द सुनकर सैन्य एकत्रित हो गये। चण्डप्रद्योतन सैन्यको लेकर पृथ्वी को कंपित करता हुआ पाञ्चाल देशकी ओर चला। उसकी सेनामे २ लाख हाथी थे। वे मेघगर्जना के समान गुलगुलाहट शब्दो द्वारा समस्त दिशाओं को व्याप्त करते हुए चल रहे थे। उस समय उनके मेघधाराके समान बरसनेवाले मदजलोसे महीतल कीचडमय बन गया था। ये सबके सब गज विद्युल्लताके समान स्वर्ण आदिके विभूषणों से चमकतेथे। सो देखने वालोंको ऐसा प्रतीत होने लगताथा, कि मानो आकाशमे मेघ ही मेघ एकत्रित हुए है। सेनामे अपनी गतिसे वायुकी गतिको तिरस्कृत करने वाला पचास हजार घोडों का समूह था।अनेक प्रकारके शस्त्रोंसे भरे हुए बीस हजार रथ थे। जिनके जातिमान् अश्व जुडे

ઉજ્જયીની પહોચીને સઘળી વાત ચડપ્રદ્યોતનને કહી સભળાવી સાભળતા જ ચડપ્રદ્યોતન ક્રોધના આવેશમા આવી ગયો અને તરત જ તેણે દ્વિમુખની સામે યુદ્ધ કરવા માટેનુ રણશીંગુ ફુકાવ્યુ રણશીંગનો શબ્દ સાભળીને સૈન્ય એકત્રિત થઈ ગયુ રાજા ચડપ્રદ્યોતન સૈન્ય લઈને પૃથ્વીને કપાવતો કપાવતો પાચાલ દેશની તરફ ચાલ્યો તેની સાથે બે લાખ હાથી હતા તે સઘળા મેઘગર્જનાની માફક ગડગડાટના શબ્દો દ્વારા સઘળી દિશાઓને વ્યાપ્ત કરતા ચાલી રહેલ હતા તે સમયે તેના મેઘધારા સમાન વરસતા મદજળોથી પૃથ્વી કિચડમય બની ગયેલ હતી આ સઘળા હાથીઓ વિદ્યુતલતા સમાન સોનાના આભૂષણોથી ચમકતા હતા એ જોનારને એવુ પ્રતીત થતુ હતુ કે, જાણે આકાશમા મેઘોનુ એક સાથે મિલન થયેલ છે સેનામા પોતાની ગતિથી વાયુની ગતિને પણ નમળી કરવાવાળો પચાસ હજાર ઘોડેસ્વારોનો સમૂહ હતો અનેક પ્રકારના શસ્ત્રઅસ્ત્રોથી ભરેલા વીસહજાર રથ હતા જેને જાતિમાન અશ્વ જોડેલ હતા સાત કરોડ મહાનશક્તિશાળી એવા પાયદળ સૈનિકો હતા આવી વિશાળ સેનાથી સજ્જ થઈને ચડપ્રદ્યોતન ગ ન થે ડા

सज्जिता रथाः, सप्तकोटिपदातिगणा आसन्। एतादृशसेनया सन्नद्ध चण्डप्रद्योतो नृपः सततप्रयाणैः पञ्चालदेशसमीपं समागतः। दूतैस्तमायान्तं श्रुत्वा द्विमुखनृपोऽपि तद्द्विगुणसैन्यैः सह स्वचतुःपुत्रैरन्वितश्चण्डप्रद्योतेन सह योद्धुं स्व नगरान्निर्गतः। पञ्चालदेशसीमायां तयोर्भयङ्कर युद्धमभूत्। तत्र युद्धे चण्डप्रद्योतस्य सर्वे सैनिका विनष्टाः। ततः स रणक्षेत्रात्पलायितः। पलायमानं तं द्विमुखः शशकमिव गृहीत्वा क्रोशबन्धनेन बबन्ध। तं गृहीत्वा द्विमुखो नृप ऊर्ध्व-पताकं निजं पुरं प्राविशत्। तत्र बन्दिभिः पौरैश्च स्तुतः स स्वभवनमागतः।

हुए थे। सात करोड विशिष्ट बलशाली पदाति थे। इतनी विशाल सेना से सज्जित होकर चण्डप्रद्योतन राजा चलते २ कुछेक दिनोंमें पाचाल देशके समीप आ पहुँचा।

द्विमुख राजाको दूतोंसे जब इसके आनेका समाचार मालूम हुआ तब वे भी द्विगुणित सेनासे सजधजकर अपने चार पुत्रोंके साथ चण्डप्रद्योतन से युद्ध करने के लिये अपने नगरसे निकले। दोनोंका पाचालकी सीमा में जमकर भयङ्कर युद्ध प्रारंभ हो गया। द्विमुख के सैनिकोंने अंतमें चण्डप्रद्योतन के समस्त सैनिकों को अस्त व्यस्त कर दिये इससे वे युद्धभूमिको छोडकर भाग गये। कितनेक नष्ट हो गये। जब चण्डप्रद्योतनने अपनेको असहाय देखा तो वह भी अंतमें अपने प्राणोंको लेकर वहासे भाग गया। परन्तु द्विमुखने उसका पीछा नहीं छोडा। ससले की तरह भागते हुए उसको पकड कर द्विमुख राजाने उसको क्रोशबन्धनसे बाध दिया। इस तरह चंडप्रद्योतनको बाध कर और अपनेही साथ में लेकर द्विमुख राजा पताकाओंसे सुसज्जित

સમયમાં પાંચાલ દેશની પાસે આવી પહોંચ્યા. દ્વિમુખ રાજાને દૂતો દ્વારા એમના આવવાના સમાચાર મળ્યા ત્યારે તે પણ બમણી સેનાથી સજ્જ થઈને પોતાના ચાર પુત્રોની સાથે ચંડપ્રદ્યોતન સાથે યુદ્ધ કરવા માટે પોતાના નગરથી નીકળ્યો. બન્ને સેનાઓ પાંચાલની સરહદ ઉપર સામસામે આવી ગઈ. પ્રચંડ યુદ્ધ જામી પડ્યું. દ્વિમુખના સૈનિકોએ અંતે ચંડપ્રદ્યોતના સઘળા સૈનિકોને અસ્તવ્યસ્ત બનાવી દીધા. આથી તેઓ યુદ્ધભૂમિને છોડીને ભાગી ગયા. કેટલાકનો નાશ થયો. જ્યારે ચંડપ્રદ્યોતે પોતાને અસહાય જોયો ત્યારે તે પણ અંતે પોતાના પ્રાણને બચાવવા ત્યાંથી નાસી છૂટ્યો. પરંતુ દ્વિમુખે તેનો પીછો છોડ્યો નહીં. સસલાની માફક ભાગી રહેલા તે રાજાને દ્વિમુખ રાજાએ પકડી લીધો અને તેને બંદીવાન બનાવી દીધો. આ પ્રમાણે ચંડપ્રદ્યોતનને બાંધીને એને પોતાની સાથે લઈને દ્વિમુખ

ततश्चण्डप्रद्योतस्य चरणद्वये निगडं निधाप्य तं कारागारे न्यवासयत्। समुपशान्तकोपो द्विमुखभूपो विचारितवान्-अयं नृपो दैवाद्दुर्दशा म... दुःखं मा माप्नोतु इति विचार्य निर्बन्धनं कृत्वा कारागारान्निःसार्य ...। भोजनादिना तं सत्कृतवान्। यदा द्विमुखो भूपतिः सभायां ...सनस्थे समुपविशति, तदा स्वसिंहासनस्यार्द्धभागे चण्डप्रद्योतमपि सादरमुपवेशयति।

अथैकदा चण्डप्रद्योतो द्विमुखस्य सुतां मदनमञ्जरीं विलोक्य तस्या... न्नगाढानुरागं सृष्टे सार तां सारङ्गलोचनां चिन्तयन् रात्रौ निद्रां न ...

किये गये अपने नगरमें प्रविष्ट हुए। उस समय वन्दी गव ...वा- योंने इनकी खूब स्तुतिकी सबके द्वारा प्रशंसित होते हुए वे द्वि... राजा पीछे महलमें आये। वहां उन्होंने चण्डप्रद्योतन के दोनो पैरो बेडिया पहिरा दि और कारागार में बन्ध करवा दिया। जैसा र धी... जब द्विमुख राजाका कोप शांत होने लगा तब उसको विचार लगा कि यद्यपि चडप्रद्योतन राजा दैवदुर्विपाकसे ही इस दुर्द... प्राप्त हुआ है परन्तु फिर भी मेरी तर्फसे अब इसको कष्ट नहीं ...। चाहिये, इस प्रकार के सुन्दर विचारों से द्विमुख राजाने उसको ब... रहित करके कारागार से भी मुक्त कर दिया और विविध प्रका... भोजनादि सामग्री से उसका यथेष्ट सत्कार भी करने लगा, तथा ... समय वह अपनी सभामें सिंहासन पर बैठता उस समय भी ... अपनेअपने साथ ही आधे सिंहासन पर बडे आदर से बैठा लेत...

एक दिन चडप्रद्योतनने द्विमुख राजाकी सृष्टिकी ... पु...

મેળવીને પોતાના નગરમા પ્રવેશ્યા આ સમયે શહેરને શણગારમા આવેલ આ યુદ્ધમા મળેલા વિજયને કારણે પુરવાસીઓએ તેમજ બદીજનોએ તેમની સ્તુતિ કરી સઘળા તરફથી પ્રશસા મેળવેલ એ દ્વિમુખ રાજા પછી મહેલમા ... ત્યા તેઓએ ચડપ્રદ્યોતના બન્ને પગોમા બેડીઓ પહેરાવી દીધી, અને કારાગાર પૂરી દીધો ધીરે ધીરે જ્યારે દ્વિમુખ રાજાનો ક્રોધ શાત થવા લાગ્યો ત્યારે તે વિચાર આવવા લાગ્યો કે ભલે આ ચડપ્રદ્યોતન રાજા દૈવદુર્વિપાકથી જ આ દુ... શાને પામ્યો છે, પરતુ મારા તરફથી હવે તેને કોઈ પ્રકારનુ દુખ થવુ ન જોઈ... આ પ્રકારના સુદર વિચારથી દ્વિમુખ રાજાએ તેને બધનરહિત કરીને કારાગારમા મુક્ત કરી દીધો, અને વિવિધ પ્રકારની ભોજન સામગ્રીથી તેનો સત્કાર ... લાગ્યો, તથા જે સમયે તે પોતાની સભામા સિહાસન ઉપર બેસતો ત્યારે પણ તેને પોતાની સાથે જ અર્ધો સિહાસન ઉપર ઘણા જ આદરની સાથે બેસાડતો

એક દિવસ ચડપ્રદ્યોતનને દ્વિમુખ રાજાની પુત્રી મદનમજરી કે જેના ને...

सव्यका रथाः, मत्त्लाः सप्तकोटिपदातयश्च आसन्। एवंविधसेनया सन्नद्ध श्चण्डप्रद्योतो नृप सततप्रयाणैः पञ्चालदेशसमीपं समागतः। दूतैस्तमायान्त श्रुत्वा द्विमुखनृपोऽपि तद्द्विगुणसैन्यैः सह स्वसप्तपुत्रैरन्वितश्चण्डप्रद्योतेन सह योद्धु स्व नगरान्निर्गतः। पञ्चालदेशसीमायां तयोर्भयङ्कर युद्धमभूत्। तत्र युद्धे चण्ड-प्रद्योतस्य सर्वे सैनिका विनष्टा। ततः स रणक्षेत्रात्पलायित.। पलायमान त द्विमुखः शशकग्राह गृहीत्वाक्रोशबन्ध बबन्ध। त गृहीत्वा द्विमुखो नृप ऊर्ध्व-पताक निज पुर प्राविशत्। तत्र बन्दिभि' पौरैश्च स्तुत' स स्वभवनमागत।

हुए थे। सात करोड विशिष्ट बलशाली पदाति थे। इतनी विशाल सेना से सज्जित होकर चण्डप्रद्योतन राजा चलते २ कितनेक दिनोंमें पाचाल देशके समीप आ पहुँचा।

द्विमुख राजाको दूतोंसे जब इसके आनेका समाचार मालूम हुआ तब वे भी द्विगुणित सेनासे सजधजकर अपने सात पुत्रोंके साथ चण्डप्रद्योतन से युद्ध करने के लिये अपने नगरसे निकले। दोनोंका पाचालकी सीमा में जमकर भयकर युद्ध प्रारभ हो गया। द्विमुख के सैनिकोंने अतमें चण्डप्रद्योतन के समस्त सैनिकों को अस्त व्यस्तकर दिये इससे वे युद्धभूमिको छोडकर भाग गये। कितनेक नष्ट हो गये। जब चण्डप्रद्योतनने अपनेको असहाय देखा तो वह भी अतमे अपने प्राणोंको लेकर वहासे भाग गया। परन्तु द्विमुखने उसका पीछा नही छोडा। ससले की तरह भागते हुए उसको पकड कर द्विमुख राजाने उसको क्रोशबन्धनसे बाध दिया। इस तरह चडप्रद्योतनको बाध कर और अपनेही साथ में लेकर द्विमुख राजा पताकाओंसे सुसज्जित

સમયમા પાચાલ દેશની પાસે આવી પહોચ્યા દ્વિમુખ રાજાને દૂતો દ્વારા એમના આવવાના સમાચાર મળ્યા ત્યારે તે પણ બમણી સેનાથી સજ્જ થઈને પોતાના ચાર પુત્રોની સાથે ચડપ્રદ્યોતન સાથે યુદ્ધ કરવા માટે પોતાના નગરથી નીકળ્યા બન્ને સેનાઓ પાચાલની સરહદ ઉપર સામસામે આવી ગઇ પ્રચડ યુદ્ધ જામી પડ્યુ દ્વિમુખના સૈનિકોએ અતે ચડપ્રદ્યોતના સઘળા સૈનિકોને અસ્તવ્યસ્ત બનાવી દીધા આથી તેઓ યુદ્ધભૂમિને છોડીને ભાગી ગયા કેટલાકનો નાશ થયો જ્યારે ચડપ્રદ્યોતે પોતાને અસહાય જોયો ત્યારે તે પણ અતે પોતાના પ્રાણને બચાવવા ત્યાથી નાસી છૂટયો પરતુ દ્વિમુખે તેનો પિછો છોડયો નહીં સસલાની માફક ભાગી રહેલા તે રાજાને દ્વિમુખ રાજાએ પકડી લીધો અને તેને બદીવાન બનાવી દીધો આ પ્રમાણે ચડપ્રદ્યોતનને બાધીને એને પોતાની સાથે લઇને દ્વિમુખ રાજા વિજય

ततश्चण्डप्रद्योतस्य चरणद्वये निगड निधाप्य त कारागारे न्यवासयत्। तत समुपशान्तकोपो द्विमुखभूपो विचारितवान्-अय नृपो दैवाददुर्दशा प्राप्तोऽपि दुख मा प्राप्नोतु इति विचार्य निर्बन्धन कृत्वा कारागारान्निःसार्य विविध भोजनादिना त सत्कृतवान्। यदा द्विमुखो भूपति सभाया सिंहासनस्योपरि समुपविशति, तदा स्वसिंहासनस्यार्द्धभागे चण्डप्रद्योतमपि सादरमुपवेशयति।

अथैकदा चण्डप्रद्योतो द्विमुखस्य सुता मदनमञ्जरी विलोक्य तस्या समुत्पन्नगाढानुराग सृष्टे सार ता सारङ्गलोचना चिन्तयन् रात्रौ निद्रा न प्राप्तवान्।

किये गये अपने नगरमें प्रविष्ट हुए। उस समय बन्दी एव पुरवासियोंने इनकी खूब स्तुतिकी सबके द्वारा प्रशसित होते हुए वे द्विमुख राजा पीछे महलमें आये। वहा उन्होने चण्डप्रद्योतन के दोनो पैरो मे बेडिया पहिरा दि और कारागार मे बन्द करवा दिया। जैसा २ धीरे २ जब द्विमुख राजाका कोप शात होने लगा तब उसको विचार आने लगा कि यद्यपि चडप्रद्योतन राजा दैवदुर्विपाकसे ही इस दुर्दशाको प्राप्त हुआ है परन्तु फिर भी मेरी तर्फसे अब इसको कष्ट नहीं होना चाहिये, इस प्रकार के सुन्दर विचारों से द्विमुख राजाने उसको बधन रहित करके कारागार से भी मुक्त कर दिया और विविध प्रकारकी भोजनादि सामग्री से उसका यथेष्ट सत्कार भी करने लगा, तथा जिस समय वह अपनी सभामे सिंहासन पर बैठता उस समय भी वह अपनेअपने साथ ही आधे सिंहासन पर बडे आदर से बैठा लेता।

एक दिन चडप्रद्योतनने द्विमुख राजाकी सृष्टिकी सारभूतपुत्री

મેળવીને પોતાના નગરમા પ્રવેશ્યા આ સમયે શહેરને શણગારમા આવેલ હતુ આ યુદ્ધમા મળેલા વિજયને કારણે પુરવાસીઓએ તેમજ બદીજનોએ તેમની ખૂબ સ્તુતિ કરી સઘળા તરફથી પ્રશસા મેળવેલ એ દ્વિમુખ રાજા પછી મહેલમા ગયા ત્યા તેઓએ ચડપ્રદ્યોતના બન્ને પગોમા બેડીઓ પહેરાવી દીધી, અને કારાગારમા પૂરી દીધો ધીરે ધીરે જ્યારે દ્વિમુખ રાજાનો કોપ શાત થવા લાગ્યો ત્યારે તેને વિચાર આવવા લાગ્યો કે ભલે આ ચડપ્રદ્યોતન રાજા દૈવદુર્વિપાકથી જ આ દુર્દશાને પામ્યો છે, પરતુ મારા તરફથી હવે તેને કોઈ પ્રકારનુ દુખ થવુ ન જોઈએ આ પ્રકારના સુદર વિચારથી દ્વિમુખ રાજાએ તેને બધનરહિત કરીને કારાગારમાથી મુક્ત કરી દીધો, અને વિવિધ પ્રકારની ભોજન સામગ્રીથી તેનો સત્કાર કરવા લાગ્યો, તથા જે સમયે તે પોતાની સભામા સિહાસન ઉપર બેસતો ત્યારે પણ તે તેને પોતાની સાથે જ અર્ધો સિહાસન ઉપર ઘણા જ આદરની સાથે બેસાડતા

એક દિવસ ચડપ્રદ્યોતનને દ્વિમુખ રાજાની પુત્રી મદનમજરી કે જેના નેત્રો

प्रात' सभायामागत विषण्णमानस चण्डप्रद्योत दृष्ट्वा द्विमुखोऽब्रवीत्–राजन ! अद्य किं भवतो रोगजा काऽपि पीडा वर्तते ? अन्यथा हेमन्तेऽब्जमिव तवानन कथ म्लान भवेत्। एव द्विमुखेन पृष्टोऽपि चण्डप्रद्योतो यदा न किमपि वदति, तदा राजा द्विमुखो व्याकुलो भूत्वा सशपथमिम्मब्रवीत्–राजन। प्रत्युत्तर देहि, निवेदय निजा व्यथाम्। अनुत्तरणे त्वयि कथ तव व्याधेः प्रतीकारो भवि ष्यति। तत स दीर्घं निःश्वस्य लज्जा विहाय एवमुक्तवान्–राजन ? न मा

मदनमजरी को कि जिसके नेत्र मृगी के नेत्र जैसे थे देखा और देखते ही उसमे इसका अनुराग जागृत हुआ कि उसके आवेग से उसको रात्रीमे निद्रातक भी नहीं आई। उसकी वह रात्रि मदन-मजरीके विषयमे विचार करते २ ही समाप्त हो गई जब प्रातःकाल हुआ और चडप्रद्योतन राजसभा में उपस्थित हुआ तब द्विमुख राजाने दु खितदिल इसको देखकर पूछा–हे राजन्! क्या बात है क्या आज आपका स्वास्थ्य ठीक नही है ? जो आज आपका हेमन्त मे कमल की तरह मुखम्लान मालूम पड रहा हे ?। द्विमुख की इस बात का जब चडप्रद्योतनने कोई उत्तर नही दीया तब व्याकुल होकर द्विमुखने उससे शपथपूर्वक इस प्रकार कहा–हे राजन ! जो हमने पूछा है उसका उत्तर दो जो भी कोई कष्ट आपको हो रहा हो वह साफ २ कहो–सकोच करनेकी जरूरत नही है। क्यो कि जबतक हमको आपकी चिन्ताका कारण ज्ञात नही होगा–तबतक हम उसका प्रतीकार भी कैसे कर सकेंगे। द्विमुख की इस प्रकार की प्रेमभरी सी बात को सुनकर चड

મૃગલીના નેત્રો જેવા હતા એને જોતા જ તેનો એનામા એવો અનુરાગ જાગૃત થયો કે, તેના આવેશથી રાત્રિમા તેને નિદ્રા પણ ન આવી એની એ રાત્રિ મદન મજરીના વિષયમા વિચાર કરતા કરતા જ પૂરી થઈ જ્યારે સવાર થયુ અને ચડ પ્રદ્યોતન રાજસભામા ઉપસ્થિત થયો ત્યારે દ્વિમુખ રાજાએ એના ચહેરા ઉપરના દુ ખના ચિન્હો જોવાથી પૂછ્યુ હે રાજન્! શુ વાત છે, શુ આજે આપનુ સ્વાસ્થ્ય બરોબર નથી ? આપનુ મુખ હેમતમા કમળની માફક મ્લાન માલુમ પડી રહ્યુ છે, દ્વિમુખની આ વાતનો ચડપ્રદ્યોતને કાઈ ઉત્તર ન આપ્યો ત્યારે વ્યાકુળ બનીને દ્વિમુખે તેને સોગન દઈને કહ્યુ હે રાજન્! મે જે પૂછેલ છે તેનો ઉત્તર આપો આપને જે કાઈ કષ્ટ થઈ રહેલ હોય તે સાફ સાફ કહો સકોચ પામવાની કાઈ જરૂર નથી કેમ, જ્યા સુધી અમોને આપની ચિતાનુ કારણ જાણવા નહીં મળે ત્યા સુધી અમો તેનો ઉપાય પણ કઈ રીતે કરી શકીએ ? દ્વિમુખની આ પ્રકારની પ્રેમપૂર્વકની વાતને સાભળીને ચડપ્રદ્યોતને 'હાય' આ પ્રકારે બોલીને

कोऽपि व्याधिर्बाधते। तर्हि ममेय दशा कथं सजाता ? इति भवता हृदये कौतूहलं भविष्यति ? अतोऽह लज्जां विहाय ब्रवीमि। व्यतीते दिवसे भवत्कन्यां मदनमञ्जरीं दृष्ट्वा तस्यां सजातदृढानुरागाऽहमेतादृशीमवस्थां प्राप्तोऽस्मि। अतोऽहं त्वं भवान् मदनमञ्जरीप्रदानेन मम मानसीं व्यथां शमयितुम्। तद् वचनं श्रुत्वा राजा द्विमुखो मनसि चिन्तितवान्-अयं हि मम कन्यायाः सर्वथा योग्योवरोऽस्ति, अतो मत्कन्याभिलाषिणेऽस्मै यदि मया कन्या दीयेत, तर्हि का हानि ? इति विचिन्त्य राजा द्विमुख शुभ दिवसे महता महोत्सवेन चण्डप्रद्योताय स्वां कन्यां मदनमञ्जरीं दत्तवान्। यौतुके च प्रचुरहयगजा

प्रद्योतनने 'हाव' ऐसा बोलकर तथा लज्जाको छोडकर इस प्रकार कहा-राजन् ! मुझे कोई रुष्ट नहीं है। फिर भी मेरी इस दशाका कारण क्या है यह जो आपको जानने का कौतुहल हो रहा है उसको मैं विना किसि सकोच के आपके सामने कह देता हू सो आप सुनें-कल दिन मैने आपकी पुत्री मदनमजरी को देखा-सो देखते ही मेरा उसमें अनुराग दृढ बन गया है। इसी कारण से मेरी यह दशा हुई है। इसलिये आपसे निवेदन है कि आप मदनमजरी के प्रदान से मेरी इस मानसिक चिन्ता को शात करने की कृपा करे। चडप्रद्योतन के इस कथन को सुनकर द्विमुखने विचार किया कि क्या हर्ज है यह मदनमजरी क योग्य वर है ही अतः जब यह मदनमजरी को चाह रहा है तब इसको मदनमजरी देने में मुझे कोई बाधा नही है। इस प्रकार शोच विचार कर राजा द्विमुखने शुभ मुहूर्त मे अपनी कन्या मदनमजरी का बडे उत्सव से चडप्रद्योतन के साथ विवाह कर दीया।

તથા લજ્જાને છોડીને આ પ્રકારે કહ્યુ, રાજન્! મને કોઈ કષ્ટ નથી, છતા પણ મારી આ દશાનુ કારણ શુ છે એ જાણવાનુ આપને કુતૂહલ થઇ રહેલ છે જે હુ કોઇ પણ પ્રકારનો મનમા સકોચ ન રાખતા આપની સમક્ષ જાહેર કરૂ છુ તેને આપ સાભળો ગઇ કાલે મે આપની પુત્રી મદનમજરીને જોઇ, તેને જોતા જ મારો તેનામા અનુરાગ દૃઢ બની ગયેલ છે આ કારણથી મારી આ દશા થયેલ છે આથી આપને નિવેદન કરૂ છુ કે, આપ મદનમજરી મને આપીને મારી આ માનસિક ચિતાને દૂર કરવાની કૃપા કરો ચડપ્રદ્યોતનના આ વાકયોને સાભળીને દ્વિમુખે વિચાર કર્યો કે, શુ હરકત છે? મદનમજરીને યોગ્ય વર આ છે જ આથી જ્યારે તે મદનમજરીને ચાહે છે ત્યારે તેને મદનમજરી આપવામા મને કોઈ વાધો નથી આ પ્રકારનો મનમા વિચાર કરીને રાજા દ્વિમુખે શુભ મુહૂર્તમા પોતાની કન્યા મદનમજરીનુ ઘણા જ ઉત્સવની સાથે ચડપ્રદ્યોતનની સાથે લગ્ન કરી દીધુ હવે

दिक मणिमाणिक्यादि विविधरत्न विजित तद्राज्य च तस्मै दत्तवान। राजा चण्डप्रद्योतोऽपि ता प्राप्य आत्मान धन्य मन्यमानो द्विमुखेन विसृष्टः स्व प्रियया मदनमञ्जर्या सह सहर्ष स्वपुरीमुज्जयिनी गत।

अथैकदा इन्द्रमहोत्सवे समुपस्थिते राजा द्विमुखो नागरिकान जनान् इन्द्रध्वजसस्थापनाय समादिष्टवान। राज्ञ आदेश प्राप्य पौरजना यद्धकिङ्किणी माल मालावलिसमलकृत मणिमाणिक्यादिविभूपित चीवरवरैर्वेष्टितदण्ड प्रशस्त-ध्वजपटयुक्तम् इन्द्रध्वज मङ्गलपाठपूर्वक द्रुतमूर्ध्वीकृतवन्तः। तत्र केचिद् मधुर स्वरेण तस्य पुरतो गायन्ति, केचिद्वाद्यानि वादयन्तो नृत्यन्ति। केचिद्

दहेजमें प्रचुर मात्रा में हाथी, घोडा आदि तथा मणिमाणिक्य आदि विविध रत्न एव लिया हुआ उसका ही राज्य द्विमुखने उसको दे दीया। इस प्रकार चँडप्रद्योतन राजा द्विमुख राजा द्वारा दी गई मदन-मजरी की प्राप्ति से अपने आपको विशेष भाग्यशाली समझते हुए वहा से विदा होकर और इस नई वधु को साथ में लेकर आनन्द-पूर्वक उज्जयिनी मे आ गये।

एक समय इन्द्रमहोत्सव के उपस्थित होने पर राजा द्विमुखने नगरनिवासियों को इन्द्रध्वज के सस्थापन के लिये आदेश दिया। राजाका आदेश पाकर नागरिकोंने शीघ्र ही मंगल पाठपूर्वक इन्द्रध्वजको ऊपर तान दिया। उस मे नागरिकोंने किकिणियो की माला बाधी थी। पुष्पों की माला से उसको खूब सजाया था। मणिमाणिक्य आदि से उसको अच्छी तरह विभूपित किया था। ध्वज के दडको सुन्दर वस्त्रों से वेष्टित कर उस में वह इन्द्रध्वज पिरोया गया था। ध्वजका

જમા મોટા પ્રમાણમા હાથી, ઘોડા આદિ તથા મણી માણેક આદિ રત્ન અને તેનુ મેળવેલ રાજ્ય પણ દ્વિમુખે તેને આપી દીધુ આ પ્રકારે ચડપ્રદ્યોતન રાજા દ્વિમુખ રાજા તરફથી આપવામા આવેલ મદનમજરીની પ્રાપ્તિથી પોતાની જાતને વિશેષ ભાગ્યશાળી માનીને ત્યાથી વિદાય થઇને નવી રાણીની સાથે આનદપૂર્વક ઉજ્જયીનમા જઇ પહોચ્યા

એક સમય ઇન્દ્ર મહોત્સવના પ્રસગે રાજા દ્વિમુખે નગરના નિવાસીઓને ઇન્દ્રધ્વજના સસ્થાપન અર્થે આદેશ આપ્યો રાજાનો આદેશ મળતા નાગરીકોએ ઝડપથી મગળપાઠ સાથે ઇન્દ્રધ્વજને હવમા લહેરાવ્યો એ ધ્વજમા નાગરીકોએ ઘુઘરીઓની માળાઓ બાધી હતી, પુષ્પોના માળાઓથી તેની સજાવટ કરી હતી મણિમાણેક આદિથી તેને સુદર રીતે શણગારેલ હતો ધ્વજવદનના દડને સુદર વસ્ત્રોથી આચ્છાદિત કરીને તેના ઉપર ઇન્દ્રધ્વજ ફરકાવવામા આવ્યો હતો ધ્વજનુ

दीनेभ्योऽनाथेभ्यश्च दान प्रयच्छन्ति। केचित् कर्पूरमिश्रकुङ्कुमजलाच्छोटनपूर्वक परस्पर सुरभीणि चूर्णानि निक्षिपन्ति। एव महोत्सवे षट्दिवसा व्यतीताः। सप्तमे दिवसे पूर्णिमा तिथिः समागता। तस्मिन्दिवसे राजा द्विमुखोऽपि समागत्य तमिन्द्रध्वज विलोक्य हर्षितो जातः। ततः पूर्णे महोत्सवे नागरिका जना निज निज वस्त्राभूषणादिकमादाय काष्ठशेष तमिन्द्रध्वज भूमौ निपात्य स्वगृह गताः। अथ द्वितीये दिवसे द्विमुखनृप केनापि कार्येण बहिर्गतो धूलिधूसर

वस्त्र भी बहुमूल्य था। जब इस तरह का इन्द्रध्वज खडा कर दिया गया तब कितनेक नगरनिवासियोने उसके नीचे बडे ही रसीले स्वरो मे हर्षोत्फुल्ल होकर गानेनाचने एव बजाने का कार्यक्रम चालु कर दिया। कितनेकोंने दीन, अनाथों को दान वितरण करना प्रारभ किया तथा कितनेक जनोंने कर्पूरमिश्रित कुकुमजल को छिडकते हुए परस्पर मे सुगधी चूर्णोंकी मुठी भर २ ऊपर डालना शुरू किया। इस प्रकार आनदमय उत्सव से छह दिन लोगों के बडे हर्ष के साथ समाप्त हो गये। परन्तु जब सातवां दिन प्रारभ हुआ तो इस दिन पूर्णिमा थी। इसलिये इस दिन द्विमुख राजाने भी आ कर इस उत्सवकी शोभा मे वृद्धि की। इन्द्रध्वज को देखकर राजाको भी अपार हर्ष हुआ। उत्सव की समाप्ति होने पर समस्त नागरिक जन अपने २ वस्त्राभूषणादिको को ले ले कर तथा काष्ठशेष उस इन्द्रध्वज को भूमि मे डालकर अपने २ घर पर आ गये। दूसरे दिन द्विमुख राजा किसी कार्यवश बाहर

वस्त्र पण बहु मुल्यवान हतु आ प्रकारे ज्यारे ध्वजनु रोपण करवामा आव्यु त्यारे केटलाक नगरनिवासीओए ए ध्वजना नीचे घणा ज रसीला स्वरोथी हर्षावेशमा आवी जई गावा नाचवा माड्यु केटलाकोए दीन अनाथोने दान आपवा माड्यु केटलाक जनोए कपुर मिश्रित कुमकुम जळने छाटीने तेम ज परस्परमा सुगधी चुर्णोनी मुठीओ भरीने छाटवा माड्यु आ प्रकारनो आनदमय छ दिवस लोकोए घणा हर्षथी उजव्यो, परतु ज्यारे सातमा दिवसनो प्रारभ थयो त्यारे आ दिवसे पूर्णिमा होवाथी द्विमुख राजाए पण ते उत्सवमा भाग लईने उत्सवने खूब ज देदिप्यमान बनाव्यो इन्द्रध्वजने जोईने राजाने पण अपार हर्ष थयो उत्सवनी समाप्ति थता सघळा नागरिक जनो पोतपोताना वस्त्रादिकने लईने तथा दड सहित ए ईन्द्रध्वजने भूमिमा पधरावीने पोतपोताना घेर पहोची गया बीजा दिवसे द्विमुख राजा कोई कारणवशात् बहार गया त्यारे तेमणे ए ईन्द्रध्वजने धुळमा

कुस्थानसंस्थितं बालकैराक्रम्यमाणं तं ध्वजं दृष्ट्वा मनस्यचिन्तयत्-यो गतेऽहनि सर्वलोकाह्लादक आसीत्, स एव इन्द्रध्वजोऽधुना एवं विधां विडम्बनां प्राप्नोति। अहो श्रियः क्षणिकत्वम्। श्रीर्हि सिन्धुपूरवदायाति याति च अतोऽस्या विद्युच्चञ्चलाया श्रिया समासक्तिर्न शोभते सुधियाम्। तस्मादहमपि विडम्बनाप्राया-मिमां राज्यसम्पदं परित्यज्य निःश्रेयसकरीं शिवसाम्राज्यसम्पदं श्रयिष्ये इति विचार्य ममत्वबुद्धिं दूरीकृत्य स्वहस्तेन लोचं कृत्वा देवसमर्पितं सदोरक

गया तो उसने उस इन्द्रध्वज को धूलि से धूसरित एवं कुस्थान में पडा हुआ देखा तथा ऐसा भी देखा कि उसको बालकवृन्द इधरउधर घसीट रहे हैं। इन्द्रध्वजकी इस प्रकारकी स्थिति देखकर राजा के मन में विचार आया कि देखो तो सही जो कल समस्त मनुष्यो के मन के आनंद का कारण बना हुआ था वही इन्द्रध्वज इस समय इस प्रकारकी विडम्बना को प्राप्त हो रहा है। देखो भाग्योदय की क्षणिकता। यह नदीके पूरकी तरह आती है और चली जाती है। अथवा लक्ष्मीका भी विश्वास नहीं है कि यह सदा स्थायी ही बनी रहेगी। यह तो विजली के समान चचल है। इसलिये विजली के समान चचल इस लक्ष्मी मे आसक्ति बुद्धिमानों को शोभा नहीं देती है। जब यह बात हैं फिर मैं क्यों विडम्बनाप्राय इस राज्य सम्पत्ति की आसक्ति में पडा रहूं, क्यों न इसका परित्याग करके एकान्तत श्रेयस्कारिणी शिवसाम्राज्य लक्ष्मी का आश्रय करूँ। ऐसा विचार करके राजाने पर-पदार्थों में जो ममत्व बुद्धिथी उसका परित्याग कर दिया-और वैरा-

રગદે ળાતા તેમ જ ખરાબ સ્થાનમા પડેલો જોયો અને નાના નાના બાળકો તેને જમીન ઉપર આમતેમ ઘસડી રહ્યા હતા ઇન્દ્રધ્વજની આ પ્રકારની સ્થિતિ જોઇને રાજાના મનમા વિચાર આવ્યો કે, ગઈ કાલ સુધી મનુષ્યોના મનના ઉત્સાહનુ કારણ હતો એજ ઇન્દ્રધ્વજ આજે આ પ્રકારની વિટબણાને પ્રાપ્ત કરી રહેલ છે જુઓ! અભ્યુદયની ક્ષણિકતા એ અભ્યુદય નદીના પૂરની માફક આવે છે અને ચાલી જાય છે આવી જ રીતે લક્ષ્મીના પણ કોઈ વિશ્વાસ નથી કે તે સદાને માટે સ્થાયી બની રહે એ તો વિજળીના સમાન ચચળ છે, આથી વિજળીના જેવી ચચળ એ લક્ષ્મીમા આસક્તિ રાખવી એ બુદ્ધિમાનો માટે બરોબર નથી જ્યારે આમ વાત છે તો પછી હુ વિટબનાવાળી આ રાજ્યસપત્તિની આસક્તિમા શા માટે પડયો રહુ? એનો પરિત્યાગ કરીને હુ એકાન્તત શ્રેયસ્કારીણી શિવસામ્રાજ્ય લક્ષ્મીના આશ્રય કેમ ન કરૂ? આવો વિચાર કરીને રાજાએ પરપદાર્થોમા જે મમત્વબુદ્ધિ હતી તેનો પરિત્યાગ કરી દીધો આ પ્રમાણે તેને વૈરાગ્યની જાગૃતિ થવાથી પોતાના હાથેથી પોતાના

मुखवस्त्रिका रजोहरणादिरूप साधुवेष परिधाय प्रत्येकबुद्धो द्विमुखमुनिर्भूम्याम प्रतिबद्धविहारेण विहरन् वीतरागधर्मं प्रचारयन्नन्ते सिद्धगतिं प्राप्तवान् ।

उक्त च—

वीक्ष्यादृत पौरजनै. सुरेश, ध्वज च लुप्त पतित परेऽह्नि ।
भूतिं त्वभूतिं द्विमुखो निरीक्ष्य, बुद्ध प्रपेद जिनराजनधर्मम् ॥ इति ।

॥ द्वितीयप्रत्येक बुद्धकथा ॥

अथ नगगतिराजकथा

आसीदत्र भरतक्षेत्रे गान्धारदेशे पुण्ड्रवर्धन नगरम् । तत्रासीत् सिंहरथो नाम राजा । एकदा तस्मै राज्ञे उत्तरापथात् कोऽपि शोभनौ द्वौ तुरगौ प्राभृतौ कृतवान् । तयो परीक्षार्थमेकोपरि राजा स्वयमारूढोऽपरोपरि अन्यो जनोऽधि-

---

ग्यभाव की जागृति होजाने से अपने ही हाथो द्वारा केशों का लुचन कर डाला तथा देवों द्वारा दी गई सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरण आदि रूप साधुका वेष धारण कर प्रत्येक बुद्ध बने हुए द्विमुख मुनिराजने अप्रतिबद्ध विहार करते हुए वीतराग धर्मका प्रचार किया । बाद मे अन्त में सिद्धिगति की प्राप्ति की । कहा भी है—

"वीक्ष्यादृत पौरजनै सुरेशः, ध्वज च लुप्त पतित्र परेऽह्नि ।
भूत त्वभूतिं द्विमुखो निरीक्ष्य, बुद्ध' प्रपेदे जिनराजधर्मम्" ॥१॥

नगगति राजाकी कथा इस प्रकार है—

भरतक्षेत्र के गान्धार देश में एक पुड्रवर्धन नामका नगर था । वहा सिंहरथ नामके राजा का राज्य था । एक समयकी बात हैं कि उस राजा को उत्तरापथ (उत्तर भारत) से किसी व्यक्तिने दो सुन्दर घोडे भेटरूपमे प्रदान किये । उनकी परीक्षा करने के लिये एक घोडे

કેશનુ લોચન કરીને તથા દેવો તરફથી આપવામા આવેલી સદોરકમુખવસ્ત્રિકા અને રજોહરણ આદિરૂપ સાધુનો વેશ ધારણ કરીને પ્રત્યેક બુધ બનેલા દ્વિમુખ મુનિરાજે અપ્રતિબદ્ધ વિહાર કરતા કરતા વીતરાગ ધર્મનો પ્રચાર કર્યો અને અતકાળે સિદ્ધિ ગતિને પામ્યા કહ્યુ પણ છે—

"વીક્ષ્યાદૃત પૌરજનૈ. સુરેશ', ધ્વજ ચ લુપ્ત પતિત પરેઽહ્નિ ।
ભૂર્તિ ત્વભૂર્તિ દ્વિમુખો નિરીક્ષ્ય, બુદ્ધ પ્રપેદે જીનરાજધર્મમ્" ॥૧॥

નગગતિ રાજાની કથા આ પ્રકારની છે—

ભરતક્ષેત્રના ગાધાર દેશમા એક પુડવર્ધન નામનુ નગર હતુ ત્યા સિંહરથ નામના રાજા રાજ્ય કરતા હતા એક સમયની વાત છે કે, તે રાજાને ઉત્તરભાગ તરફથી કોઈ એક વ્યક્તિએ બે સુદર એવા ઘોડા ભેટ તરીકે આપ્યા તે ઘોડાઓની

रूढः। राजा तेन सहाऽन्यैरश्वारोहिभिः परिवृतो नगराद् निर्गतः। यस्मिन्नश्वे राजा समारूढः स वक्रशिक्षित आसीत्। गतिपरीक्षणार्थं राज्ञा कशाघातेन सोऽश्वः प्रेरितः। ततः स पवनवेगवदतित्वरया गत्या प्रचलितः। राजा तं स्तम्भयितुं यथा यथा वल्गामाकर्षति, तथा तथा सोऽश्वः पवनादपि वेगवत्तरो भवति। एवं महावेगेन गच्छन् सोऽश्वो द्वादशयोजनानि गतः। यथा नदीपूरस्तरुं नीत्वा महोदधौ नयति, एवमेव सोऽश्वो नृपं महारण्ये नीतवान्। मुहुर्मुहुर्वल्गाऽऽकर्षणेनाऽप्ययं तुरगो न स्थातुमिच्छति, इति विचार्य खिन्नः क्षितिपतिर्वल्गा

पर राजा तथा दूसरे घोडे पर अन्य कोई दूसरा व्यक्ति सवार हुआ। राजा उस से तथा अन्य अश्वरोहियों से परिवृत होकर नगर से बाहिर गया। जिसपर राजा चढे हुए थे वह घोडा वक्रशिक्षित था। इसकी चाल कैसी है इस बात की परीक्षा के लिये राजाने उसको एक चाबुक मार दिया-वह चाबुक के लगते ही पवनवेग से दौडने लगा। थाभने के लिये राजा ज्यों २ इसकी लगाम खिंचता त्यों २ वह घोडा और अधिक वेगशाली बनकर पवन के जैसी तीव्रतर गति से चलने लगता। इस तरह महावेगवती गति से चलते २ वह बारह योजन निकल गया। जिस प्रकार नदी का वेग अपने में बहाकर वृक्ष को महासागर मे पहुँचा देता है उसी प्रकार अश्वने राजा को भी एक महाभयकर अरण्य में पहुँचा दिया। जब राजाने यह देखा कि लगाम खेंचने पर भी घोडा ठहरने का नाम नहीं लेता हैं, प्रत्युत अधिक वेगशाली बन जाता है

પરીક્ષા કરવા માટે એક ઘોડા ઉપર રાજા પોતે તેમજ બીજા ઘોડા ઉપર એક બીજી વ્યક્તિ બેઠી રાજા તથા તેમના સાથીદાર આ પ્રમાણે એ બન્ને ઘોડાઓ ઉપર સવારી કરીને બીજા ઘોડેસ્વારો સાથે નગરની બહાર નીકળ્યા જે ઘોડા ઉપર રાજાએ સ્વારી કરેલ હતી તે ઘોડો ખૂબ તોફાની હતો તેની ચાલ કેવી છે તે જોવાના ઉદ્દેશથી રાજાએ એ ઘોડાને એક ચાબુક લગાવ્યો ચાબુક લાગતા જ એ ઘોડો પવન વેગથી દોડવા લાગ્યો એને રોકવા માટે તેની લગામને રાજા જેમ જેમ ખેચતા તેમ તેમ તે ઘોડો ખૂબ જ વેગથી દોડવા માડતો આ પ્રમાણે મહાવેગવતી ગતિથી ચાલતા ચાલતા તે બાર જોજન નીકળી ગયો જે પ્રમાણે નદીનો વેગ કિનારા ઉપરના વૃક્ષને પોતાના પ્રવાહમા ખેચીને મહાસાગરમા પહોચડી દે છે એજ રીતે આ ઘોડાએ પણ રાજાને એક મહાભયકર એવા અરણ્યમા પહોચાડી દીધો જ્યારે રાજાએ જોયુ કે, ઘોડો લગામ ખેચવાથી રોકાતો નથી અને વધુ વેગવાળો બની

मुक्तवान्। ततस्तत्क्षणमेव स तत्रैव संस्थितः। अयमश्वो वक्रशिक्षित इति मनसि निश्चित्य तत्पृष्ठादवतीर्य तं कस्मिंश्चिद् द्रुमे बद्ध्वा वन्यफलेन क्षुधामपनीय रात्रिवासार्थं निराबाधं स्थानं द्रष्टुं गिरिशिखरमारूढवान्। स तत्र दर्शनीयं सप्तभूमं प्रासादं ददर्श। तदभ्यन्तरे प्रविश्य रूपलावण्यतारुण्यैरतिशोभा तिरस्कुर्वतीं हरिणेक्षणां कामपि कन्यां दृष्टवान्। साऽपि तं दृष्ट्वा ससम्भ्रममुत्थाय स्वजनागमनेन प्रहृष्टवदना तस्मै वरासनं ददौ। तां दृष्ट्वा तस्यां सञ्जातानुरागो राजाऽपि तन्मुखे निरुद्धदृष्टिरासने समुपविष्टः।

तो उसने खेदभरे मन से उसकी लगाम बिलकुल ढीली कर दी। लगाम ढीली करते ही वह वहीं पर ठहर गया। उसके ठहरते ही राजा "यह वक्र शिक्षित है" ऐसा मन में निश्चित कर उसके ऊपर से उतर गया और एक वृक्ष के नीचे उसको बांधकर क्षुधाकी निवृत्ति के लिये वन्यफलों की तलाश में इधर उधर देखने लगा-वन्यफल मिलते ही उनसे उसने अपनी क्षुधाकी शान्ति की। तथा रात्रिवास के लिये निराबाध स्थान की तलाश करने को वह वहीं के गिरिशिखर पर चढा तो क्या देखता है कि सामने एक सात खंड का मकान खडा हुआ है। उसको देखते ही वह उसके भीतर प्रविष्ट हुआ। वहां उसने एक कन्याको जो रूप, लावण्य एवं तारुण्य से रति की शोभा को भी तिरस्कृत करती थी तथा मृगी की चितवन के समान जिसकी चितवन थी देखा। कन्याने भी इसको देखा। देखते ही कन्याने प्रसन्न होकर बैठने के लिये एक उत्तम आसन दिया। राजा वहीं पर उसीके सामने उस में अनुराग विशिष्ट होकर उस आसन पर बैठ गये।

જાય છે આથી તેણે ખેદ ભરેલા મનથી તેની લગામ બીલકુલ ઢીલી મૂકી દીધી લગામ ઢીલો થતા જ ઘોડો એકદમ ઉભો રહી ગયો ઘોડો રોકાઈ જતા રાજા "આ ઘોડો વક્રગતિવાળો છે" એવો મનથી નિશ્ચય કરી તેના ઉપરથી ઉતરી ગયો અને એક વૃક્ષની નીચે તેને બાંધીને પોતાને કકડીને લાગેલી ભૂખને સંતોષવા વનફળની શોધમા અહીં તહીં જોવા લાગ્યો વનફળ મળતાજ તેણે પોતાની ક્ષુધાની શાંતિ કરી તથા રાત્રી નિવાસ માટે ભયરહિત સ્થાનની તપાસ માટે તે તેના ગિરિશિખર ઉપર ચડયો ત્યા તેણે જોયુ તો એક સાત માળનુ મકાન તેના જોવામા આવ્યુ એને જોતા જ તેણે એના અંદર પ્રવેશ કર્યો ત્યા એક કન્યા કે જે રૂપ, લાવણ્ય અને તારૂણ્યથી રતિની શોભાને પણ ઝાંખી પાડે તેવી દેખાતી હતી, તથા મૃગલીના આંખો જેવી ચપળ જેની આંખો હતી તેને જોઈ, કન્યાએ પણ રાજાને જોયો રાજાને જોતા જ તે કન્યાએ તેને બેસવા માટે એક ઉત્તમ આસન આપ્યુ રાજા ત્યા તેની સામે તેનામા અનુરાગ વિશિષ્ટ બનીને એ આસન ઉપર બેસી ગયો થોડી વિશ્રાંત

ततः कियत्कालानन्तरं राजा प्राह–सुभगे ! का त्वम् ? कथं चास्मिन् निर्जने वने एकाकिनी निवससि ? एवं राज्ञा पृष्टा सा सोत्कण्ठमेवमब्रवीत्–सुभग ! त्वं पूर्वं भवनस्थवेदिकायां मया विवाहं कुरु। तदनु स्वस्थतामुपगताऽहमात्मनः सर्वं वृत्तान्तं कथयिष्ये। कर्णरसायनं तद्वचनमाकर्ण्य सरसं भोजनमुपलभ्य बुभुक्षुरिव धराधिपो नितरां प्रमोदमुपगतः। ततस्तत्कथनानुसारेण राजा सन्ध्यासमये वेदिकायां तया सह गान्धर्वविवाहमकरोत्। निशाऽवसाने प्रातःकालिक कृत्यं विधाय सुखोपविष्टं राजानं सा स्ववृत्तान्तं कथयितुं प्रवृत्ता। सा प्राह–

आसीदत्र भरतक्षेत्रे धनधान्यादि समृद्धं क्षितिप्रतिष्ठितपुरं नामकं नगरम्। तत्रासीद् जितशत्रुर्नाम राजा। स चैकदा चित्रशालां कारयित्वा सर्वान् चित्र

कुछेक क्षणों बाद राजाने उस से कहा–हे सुभगे। तुम कौन हो और क्यो इस निर्जन वन में अकेली रह रही हो। राजाने जब ऐसा पूछा तो उसने बडी उत्कंठा से युक्त होकर ऐसा कहा–हे सुभग ! पहिले तुम इस भवन की वेदिका मे मेरे साथ विवाह कर लो, पश्चात् स्वस्थ होकर मै अपना समस्त वृत्तान्त तुम से कहूंगी। कर्णरसायनरूप उसके इस, प्रकार वचन सुनकर राजा सरस भोजन की प्राप्ति से बुभुक्षुकी तरह अत्यंत पुलकित हुआ। सध्या के समय उसीके कहने के अनुसार राजाने वेदिका मे उसके साथ गान्धर्व विधि से विवाह कर लियो। फिर रात्रि के अवसान होने पर प्राभातिक कृत्यों से निवट कर सुखोपविष्ट राजा से उस कन्याने अपना वृत्तान्त इस प्रकार कहना प्रारंभ किया—

इस भरतक्षेत्र मे धनधान्यादि से समृद्ध क्षितिप्रतिष्ठित नामका एक नगर था। वहां जितशत्रु नामका राजा था। उन्होंने एक दिन

પછી રાજાએ તેને પૂછ્યુ, હે સુભગે ! તમો કોણુ છો, અને આ નિર્જન વનમા એકલી શા માટે રહો છો ? રાજાએ જ્યારે આ પ્રકારથી પૂછ્યુ, ત્યારે તેણે ઘણીજ ઉત્કંઠાથી એવુ કહ્યુ કે, હે સુભગ ! પહેલા તમો આ ભવનની વેદિકામા મારી સાથે લગ્ન કરી લો, પછી સ્વસ્થ ચિત્તે હુ મારૂ સઘળુ વૃત્તાંત તમોને કહી સભળાવીશ કર્ણપ્રિય એવા એના આ પ્રકારના વચન સાભળીને રાજાએ સુદર ભોજનની પ્રાપ્તિથી ભુભુક્ષુની માફક અત્યત હર્ષિત થઈને સધ્યા સમયે તેના કહેવા પ્રમાણે તે કન્યા સાથે ગાધર્વ વિધિથી લગ્ન કરી લીધુ ત્યારબાદ રાત્રીનો સમયવીત્યા પછી પ્રાત કાળના કામોથી નિવૃત્ત થઇને રાજાની સાથે ખનો ઉપભોગ પામેલી એ કન્યાએ પોતાનુ વૃત્તાત આ પ્રમાણે કહેવાની શરૂઆત કરી —

આ ભરતક્ષેત્રમા ધનધાન્યાદિકથી સમૃદ્ધ એવુ ક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિત નામનુ એક નગર હતુ એ નગરનુ આધિપત્ય જીતશત્રુ નામના રાજવીનુ હતુ તેમણે એક દિવસ

करानाहूय प्रोक्तवान्-युष्माकं यावन्ति गृहाणि सन्ति, तावद्भिर्भागैः सम विभज्यास्याश्चित्रशालाया भित्ति शोभनैश्चित्रैश्चित्रणीया। राज्ञो वचन श्रुत्वा सर्वे चित्रकराः "आदेश' प्रमाणम्" इत्युक्त्वा तेषां यावन्तो गृहाः आसन् तावद्भिर्भागै श्चित्रशालाभित्तीर्विभज्य चित्राणी रचयितु प्रवृत्ताः। तेषा राजदेय करश्चित्रनिर्माणमेवासीत्। तेषु चित्राङ्गदो नामैको निष्पुत्रश्चित्रकर आसीत्। स एकाकी एव स्वविभागमासा चित्रशालाभित्ति चित्रयति। प्रतिदिवस भोजनसमये रूपयौवनचातुर्यकलासमन्विता कनकमञ्जरी नाम तत्पुत्री तदर्थं भक्तमादाय चित्रशालाया

चित्रशाला बनवाकर उन समस्त शिल्पियों को अपने पास बुलवाकर ऐसा कहा कि देखो तुम लोगों के जितने घर हैं उतने ही विभाग इस चित्रशाला की भिति के करलो फिर एक एक भाग बाँटकर शोभन चित्रों से आप लोग चित्रित करो। राजा के इस प्रकार वचन सुनकर उन समस्त चित्रकारोंने कहा कि-राजन्! जैसी आपकी आज्ञा है उसी प्रकार काम हो जायेगा। ऐसा कहकर उन लोगोंने जितने उनके घर थे उतने ही भागों से चित्रशाला की भित्ति को विभक्तकर उन मे चित्ररचना करना प्रारंभ किया। इन चित्र बनाना ही राजा का कर था। इन चित्रकारों में चित्राङ्गद नामका एक चित्रकार था उसके कोई पुत्र नहीं था। उसके हिस्से मे भित्तिका जितना भी विभाग चित्रित करने में आया था वह अकेला ही उसको चित्रित करने में लगा रहता था। उसकी एक लडकी थी जिसका नाम कनकमजरी था यह रूप, यौवन, कला एव चातुर्य से युक्त थी। वह प्रतिदिन इसके लिये भोजन

ચિત્રશાળા બનાવને અને એ ચિત્રશાળાને બનાવનારા સઘળા શિલ્પીઓને પોતની પાસે બોલાવ કહ્યુ કે, જુઓ! તમારા લોકોના જેટલા ઘર છે એટલો જ વિભાગ આ ચિત્રશાળાની ભીતો ઉપર આલેખો પછી એકએક ભાગ વહેચી લઈને તેને શોભાયુક્ત ચિત્રોથી તેને શણગારો. રાજાના આ પ્રકારના વચનને સાભળીને એ સઘળા ચિત્રકારોએ કહ્યુ કે, મહારાજ! આપની આજ્ઞા પ્રમાણે સઘળુ કાર્ય યથાયોગ્ય સ્વરૂપમા થઈ જશે એવુ કહીને એ લોકોએ પોતાના જેટલા ઘરો હતા એટલા ભાગોથી ચિત્રશાળાની ભીતને વિભક્ત કરી અને તેમા ચિત્ર ચવાનો પ્રારભ કર્યો આ ચિત્રકારોના ઉપર ચિત્ર બનાવવા એ રાજાનો કર હતો એ ચિત્રકારોમા ચિત્રાગદ નામનો એક ચિત્રકાર હતો જેને કોઈ પુત્ર ન હતો, તેના ભાગે ભીત ઉપર ચિત્રકામનો જેટલો ભાગ આવેલ હતો તે ભાગ ચિત્રિત કરવામા તે એકલોજ લાગી રહેલો હતો તેને એક પુત્રી હતી જેનુ નામ કનકમજરી હતુ તે રૂપ યૌવન, કળા અને ચાતુર્યથી યુક્ત હતી તે રોજ ભોજન લઈને પોતના પિતા માટે ચિત્ર

मायाति। तदागमनानन्तरं स चित्रकरः शौचार्थं बहिर्याति। एकदा पितुर्थं भक्तमादाय राजमार्गेण समागच्छन्ती सा गिरिवाहिनीनदीपूरजिष्णुना वेगेनाश्वं वाहयन्तं राजानं दृष्टवती। सा तं कमपि साधारणं पुरुषं मन्यमाना तुरगखुराघातभयेन राजपथपार्श्वप्रदेशेन द्रुतगत्या चित्रशालायामागता। भक्तहस्ता स्वपुत्रीमागतां विलोक्य स चित्रकरः शौचार्थं बहिर्गतः। ततस्तत्र स्थिता सा चित्रकारपुत्री कूर्चिकामादाय विविधैर्वर्णकैः कुट्टिमतले यथास्थितमेकं मयूरपिच्छं लिखितवती। अत्रान्तरे राजा जितशत्रुश्चित्रशालां द्रष्टुं समागतः। स हि कुट्टि

लेकर चित्रशाला मे आती थी। इसके आने के बाद ही वह चित्रकार शौचक्रिया आदि के लिये बाहर जाता। एक दिनकी बात है कि जब कनकमजरी भोजन लेकर राजमार्ग से होकर आ रही थी तब उसने बडे ही वेग से घोडे को दौडाते हुए राजा को देखा। घोडा इतने वेग से दौड रहा था कि वह उस समय गिरिनदी के पूर को भी परास्त कर देता था। घोडे को दोडानेवाले उन व्यक्ति को उस कन्याने कोई साधारण व्यक्ति समझा था। 'मैं घोडेकी फेंट मे न आजाऊँ' इस भय से राजपथ के पासवाले प्रदेश से जल्दी २ चलकर चित्रशाला मे आगई। भोजन लाकर आई हुई अपनी पुत्री को देखकर चित्रकार उसी समय शौच के लिये बाहर चला गया। उसके बाहर जाते ही कनकमजरीने कूर्चिका लेकर अनेक-वर्णों से उस कुट्टिमतल पर यथास्थित-हूबहू-एक मयूरपिच्छको अंकित किया। उसी अवसर में वहां पर जितशत्रु राजा भी उस चित्रशाला को देखने के लिये आ पहूँचे। उन्होंने ज्यो

શાળામા જતી તેના આવ્યા પછી જ ને ચિત્રકાર શૌચક્રિયા આદિના માટે બહાર જતો એક દિવસની વાત છે કે જ્યારે કનકમજરી ભોજન લઈને રસ્તેથી આવતી હતી ત્યારે તેણે ઘણા વેગથી ઘોડાને દોડાવી રહેલા એક રાજાને જોયા ઘોડો એટલા વેગથી દોડી રહ્યો હતો કે, ડુગરાળ નદીના પુરનો વેગ પણ તેનાથી ઓછો જણાતો હતો ઘોડાને દોડાવી રહેલ વ્યક્તિને પેલી કન્યાએ કોઇ સાધારણ વ્યક્તિ માનેલ હતી "હુ ઘોડાની અડફેટમા ન આવી જાઉ" આવો વિચાર કરીને તે રાજમાર્ગનો રસ્તો છોડી દઈને એક ગલીમા થઈને ચિત્રશાળામા પહોચી ગઇ ભોજન લઈને આવેલી પોતાની પુત્રીને જોઇને ચિત્રકાર શૌચ આદિ કાર્ય માટે બહાર ચાલ્યો ગયો એના બહાર જવા પછી કનકમજરીએ હાથમા પીછી લઇને અનેક પ્રકારે એ ભીત ઉપર હુબહુ એક મોરલોના ચિત્રને અકિત કર્યું આ સમયે જીતશત્રુ રાજા પણ ચિત્રશાળામા ચિત્રોને જોવા માટે આવી પહોચ્યો તેણે આવતાની સાથેજ એ ભીત

मतले कनकमञ्जर्या चित्रित मयूरपिच्छं वास्तविकं मन्वानस्तदादातुं करं निक्षिप्तवान्। परन्तु अयथार्थत्वात्तस्य तद्ग्राह्यं करे नागत, प्रत्युत तस्य नखभङ्गो जातः। उचितमेवैतत् तत्त्वमजानता प्रवृत्तिर्हि निष्फलैव भवति। राजा जितशत्रुरविज्ञजनोचितस्वचेष्टया लज्जित इतस्ततो वीक्षते स्म। तदा चित्रकरपुत्री कनकमञ्जरी राजानमजानती सविलासं विहस्येदमाह मञ्चको हि त्रिभिश्चरणैः सुस्थितो न भवति। तस्य चतुर्थं चरणमन्वेषयन्त्या मम भवान चतुर्थो मूर्खो मिलित। चतुरतासवलित तद्वचन श्रुत्वा राजा प्राह–ते त्रयो मूर्खा के?

हो उस कुट्टिमतल पर अकित उस मयूरपिच्छ को देखा तो उसको यह सचा मयूरपिच्छ पडा हुआ जानकर उसको उठाने के लिये जोर से हाथ बढाया। परन्तु चित्ररूप होने से वह राजा के हाथ मे नहीं आया। प्रत्युत (उल्टा) राजा का नख टूट गया। ठीक बात भी हैं–तत्त्व को नहीं जाननेवालों की प्रवृत्ति निष्फल ही हुआ करती है। राजा को अपनी इस अल्पज्ञ जनोचित चेष्टा से बडी लज्जा आई। तथा इस चेष्टा में लगे हुए मुझ को किसीने देख तो नहीं लिया है इस अभिप्राय से प्रेरित होकर उसने इधर उधर देखा। उस समय इस चेष्टा में लगे हुए राजा को कनकमजरीने देख लिया था सो वह चकित हुए राजा से इस अभिप्राय से कि यह राजा नहीं है कोई साधारण व्यक्ति है हसकर कहने लगी–पलग तीन पायों से टिक नही सकता है अत उसके चतुर्थ पायेकी खोज करनेवाली मुझे आप चौथे मूर्ख मिल गये हैं। इस प्रकार चतुराई युक्त उसके वचन सुनकर राजा

ઉપર ચિતરવામા આવેલ મોરના ચિત્રને જોયુ તો તેણે ખરેખર મયુર (મોર)ને જાણીને તેને ઉપાડવા માટે પોતના હાથને આગળ લબાવ્યો. પરતુ તે ચિત્રરૂપ હોવાથી રાજાના હાથમા કશુ આવ્યુ નહી અને રાજાની આગળીના નખન ઇજા પહોચી વાત પણ બરોબર હતી તત્વને ન જાણવાવાળી વ્યકિતની પ્રવૃત્તિની નિષ્ફળ જ જાય છે રાજાને પોતાની આ પ્રકારની ચેષ્ટાને કારણે ભારે લજ્જા ઉત્પન્ન થઈ તથા આ ચેષ્ટથી મને કોઇએ જોયો તા નહી હોય? આવા અભિપ્રાયથી તે ભયભીત બનીને ચારે તરફ જોના લગ્યો તે સમયે આ પ્રકાની ચેષ્ટામા ગુથાયેલા રાજાને કનકમજરીએ જોઈ લીધો હતો આથી તે ચકિત થઇને એવા અભિપ્રાય ઉપર આવી ગઈ કે, આ કોઈ રાજા નથી પરતુ સાધારણ વ્યકિત છે, એથી હસીને કહેવા લાગી કે, પલગ ત્રણ પાયાથી કદી બરોબર ટકી શકતો નથી આથી તેના ચોથા પાયાના શોધ કરવાવાળી મને આપ ચોથા મુરખ મળી ગયા છો આ પ્રકારના ચતુરાઇ ભરેલા એના વચનને સાભળીને રાજાએ કહ્યુ કે, ત્રણ મુરખ કોણ છે?

कथं चाहं चतुर्थो मूर्खः? सा प्राह–अहं वृद्धचित्रकारस्य चित्राङ्गदस्य दुहिता कनकमञ्जरी अद्य पितुरर्थे भक्तमानयन्ती राजमार्गे कमप्यश्ववाहकं महतावेगेनाश्वं वाहयन्तमपश्यम्। स मूर्खो मम मते प्रथमश्चरणः। यतो राजमार्गो बालस्त्रीवृद्धादिसंकुलो भवति। तत्र बुद्धिमन्तो जना वेगेनाश्वं न वाहयन्ति। स निर्दयस्तु तथापि वेगेनाश्वं वाहयति। अतः स मूर्खो मञ्चकस्य प्रथमश्चरण। द्वितीयश्चरणस्तु परवेदनानभिज्ञो राजा जितशत्रुः। यो हि चित्रकरगृहानुसारेण चित्रशालाभित्तीर्विभज्य चित्रशाला चित्रयितुं चित्रकरानादिष्टवान्। अन्यचित्रकर-

कहने लगा वे तीन मूर्ख कौन हैं और मै चौथा मूर्ख कैसे हूं। कनकमंजरीने इस के प्रत्युत्तर में कहा–सुनो मै चित्रकार वृद्ध चित्रांगद की पुत्री हूं मेरा नाम कनकमंजरी है। आज पिताके लिये जब मै भोजन लेकर आ रही थी, तब मैंने राजमार्गमे एक अश्ववाहक को बडे वेगसे घोडा दौडाते हुए देखा उसको मै प्रथम नंबरका मूर्ख मानती हूं। क्यों कि राजमार्ग बाल, स्त्री, वृद्ध आदिसे संकुल बना रहता है। बुद्धिमान् जन उसमें वेगपूर्वक घोडे को नहीं दौडाते हैं। क्यों की इस स्थितिमें दुर्घटना घटित होनेकी संभावना रहा करती है। जो निर्दय एवं मूर्ख होते हैं वे ही ऐसे मार्गमे वेगसे घोडेको दौडाते है। इसलिये मैंने ऐसे व्यक्तिको पलंगका प्रथम चरण माना है। तथा द्वितीय चरण यहाका राजा जितशत्रु है जो दूसरेकी वेदनाको बिलकुल नही समजता है। अरे! देखो तो सही चित्रकारो के गृहके अनुसार चित्रशाला की भित्तिको विभक्त करके उसने उस चित्रशालाको चित्रित करने के

અને ચોથો મુરખ હુ કઇ રીતે? કનકમંજરીએ તેના પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ સાભળો! હુ વૃદ્ધ ચિત્રકાર ચિત્રાંગદની પુત્રી છુ મારૂ નામ કનકમંજરી છે આજ પિતાના માટે ભોજન લઇને હુ અહી આવી રહી હતી ત્યારે મે, રાજમાર્ગ ઉપર એક ઘોડેસ્વારને ઘણા વેગથી ઘોડાને દોડાવતા જોયો, તેને હુ પહેલા નબરનો મૂર્ખ માનુ છુ કેમકે, રાજમાર્ગ સ્ત્રીઓ, બાળકો, વૃદ્ધો વગેરેથી ઉભરાયેલો જ હોય છે બુદ્ધિમાન માણસ આવા રાહદારીના જાહેર રસ્તા ઉપર ઘોડાને કદી વેગથી દોડાવતા નથી કેમકે, આવી સ્થિતિમા અકસ્માત થવાનો ભય રહે છે જે, નિર્દય અને મુરખ હોય છે તે જ આવા રાજમાર્ગ ઉપર ઘોડાને વેગથી દોડાવે છે આ કારણે મે આવા માણસને પલગનો પ્રથમ પાયો માનેલ છે અને બીજો પાયો અહીંનો રાજા જીતશત્રુ છે જે બીજાઓની વેદનાને બીલકુલ સમજતો નથી જુઓ તો ખરા! ચિત્રકારોના ઘરોની માફક આ ચિત્રશાળાની ભીંતને શોભિત બનાવવાનો તેણે

गृहेषु प्रत्येकंगृहेऽनेक चित्रकरा' सन्ति। मम तातस्तु निष्पुत्रो दुःस्थो वृद्धश्च वर्तते। तस्मात्प्यन्यै' सह सम भाग प्रकल्पयन् मृढो राजा मम मते मञ्चकस्य द्वितीयश्चरण। तृतीयस्तु मम पिता वर्तते। स हि वेतन विना चित्रशाला चित्रयन पूर्वोपार्जित सर्वं भुक्तवान। अनर्जयतो भुज्यमान वित्त कियच्चिर स्थास्यति। अथ च यत्किंचिदपि भोजनमादायागताया मयि स-शौचादिक्रिया कर्तुं गच्छति न तु पूर्वम्। ततश्च तद्भोजन शीतल विरस च भवति। सञ्च

लिये चित्रकारों को आदेश दिया है। सो उसका यह आदेश समझदारी से सर्वथा रिक्त है, कारण कि अन्य चित्रकारोंके घरमे तो प्रत्येक घरमें अनेक चित्रकार हैं परन्तु मेरा पिता जो कि अपुत्र एव निर्धन है इस समय इस काम के योग्य नहीं है। कारण कि उसकी अवस्था जरा से जर्जरित बनी हुई है-फिर भी इस बात का विचार न करके राजाने अन्य चित्रकारों के साथ कल्पित सम भाग को चित्रित करने का उसको काम सौंपा है। इसलिये मैं राजा को पलग का दूसरा पाया मानती हू। तीसरा पाया मेरी दृष्टिमे मेरा पिता है, जो वेतन के विना चित्रशाला को चित्रित करते २ पूर्वोपार्जित समस्त द्रव्य को खाये जाता है। नहीं उपार्जन करनेवाले का द्रव्य कहा तक काम देगा? दूसरे जो कुछ भी रूखा सुखा भोजन घर पर होता है उसको ही मैं लेकर जब यहां आ जाती हू तब तो यह शौचादिकसे निवृत्त होने के लिये खडा होता है इसके पहिले नही। अतः जबतक यह शौचादि से निवृत्त हो कर आता है तबतक लाया गया वह भोजन भी सर्वथा

આદેશ આપેલ છે તેનો એ આદેશ સમજદારીથી તદન ઉલ્ટો છે કારણ કે, બીજા ચિત્રકારોના ઘરમા તો ઘણા ચિત્રકામ કરનારા માણસો છે પરતુ મારા પિતા કે, જે અપુત્ર અને નિર્ધન છે, વૃદ્ધાવસ્થાને લઈ આ કામને માટે યોગ્ય નથી કારણ કે, વૃદ્ધાવસ્થાથી તેમનુ શરીર તદ્દન નબળુ બની ગયેલ છે છતા પણ આ વાતનો વિચાર ન કરીને રાજાએ બીજા ચિત્રકારોની સાથે તેને તેના ભાગે આવતા ભાગને ચિતરવાનુ કામ સોપેલ છે આ માટે રાજાને પલગનો બીજો પાયો માનુ છુ ત્રીજો પાયો મારી દૃષ્ટિમા મારા પિતા છે જે વગર વેતને ચિત્રશાળાને ચિતરતા ચિતરતા પૂર્વોપાર્જીત જે કાંઈ દ્રવ્ય છે તેને ખાઈ રહેલ છે ઉપાર્જન કરી ન શકનારનુ દ્રવ્ય કયા સુધી કામ આપવાનુ છે? લુખુ સુકુ જે કાંઈ ખાવાનુ ઘરમા હોય છે તે લઈને જ્યારે હુ અહી આવુ છુ ત્યારે જ તે ચિત્રનુ કામ મૂકીને શૌચાદિ માટે ઉઠે છે જ્યા સુધી તે શૌચાદિથી નિવૃત્ત થઈને આવે છે ત્યા સુધીમા લાવવામા આવેલુ ભોજન ઠડુ થઈ જાય છે ઠડુ ભોજન રસ વગરનુ બની

कथं चाहं चतुर्थो मूर्खः? सा आह—अहं वृद्धचित्रकारस्य चित्राङ्गदस्य दुहिता कनकमञ्जरी अद्य पितुरर्थे भक्तमानयन्ती राजमार्गे एकमश्ववाहकं महतावेगेनाश्वं वाहयन्तमपश्यम्। स मूर्खो मम मते प्रथमश्चरणः। यतो राजमार्गो बालस्त्रीवृद्धादिसङ्कुलो भवति। तत्र बुद्धिमन्तो जना वेगेनाश्वं न वाहयन्ति। स निर्दयस्तु तत्रापि वेगेनाश्वं वाहयति। अतः स मूर्खो मञ्चकस्य प्रथमश्चरणः। द्वितीयश्चरणस्तु परवेदनानभिज्ञो राजा जितशत्रुः। यो हि चित्रकरगृहानुसारेण चित्रशालाभित्तीर्विभज्य चित्रशालां चित्रयितुं चित्रकरानादिष्टवान्। अन्यांश्चित्रकर-

कहने लगा वे तीन मूर्ख कौन हैं और मै चौथा मूर्ख कैसे हूं। कनकमजरीने इस के प्रत्युत्तर में कहा—सुनो मैं चित्रकार वृद्ध चित्रागद की पुत्री हूं मेरा नाम कनकमजरी है। आज पिताके लिये जब मैं भोजन लेकर आ रही थी, तब मैंने राजमार्गमे एक अश्ववाहक को बडे वेगसे घोडा दौडाते हुए देखा उसको मैं प्रथम नबरका मूर्ख मानती हूं। क्यों कि राजमार्ग बाल, स्त्री, वृद्ध आदिसे सकुल बना रहता है। बुद्धिमान् जन उसमें वेगपूर्वक घोडे को नहीं दौडाते है। क्यों की इस स्थितिमें दुर्घटना घटित होनेकी सभावना रहा करती है। जो निर्दय एव मूर्ख होते हैं वे ही ऐसे मार्गमे वेगसे घोडेको दौडाते है। इसलिये मैंने ऐसे व्यक्तिको पलगका प्रथम चरण माना है। तथा द्वितीय चरण यहाका राजा जितशत्रु है जो दूसरेकी वेदनाको बिलकुल नही समजता है। अरे! देखो तो सही चित्रकारो के गृहके अनुसार चित्रशाला की भित्तिको विभक्त करके उसने उस चित्रशालाको चित्रित करने के

અને ચોથો મુરખ હું કઇ રીતે? કનકમંજરીએ તેના પ્રત્યુત્તરમાં કહ્યું સાભળો! હું વૃદ્ધ ચિત્રકાર ચિત્રાંગદની પુત્રી છું મારૂં નામ કનકમંજરી છે આજ પિતાના માટે ભોજન લઇને હું અહીં આવી રહી હતી ત્યારે મે, રાજમાર્ગ ઉપર એક ઘોડેસ્વારને ઘણા વેગથી ઘોડાને દોડાવતા જોયો, તેને હું પહેલા નબરનો મૂર્ખ માનું છું કેમકે, રાજમાર્ગ સ્ત્રીઓ, બાળકો, વૃદ્ધો વગેરેથી ઉભરાયેલો જ હોય છે બુદ્ધિમાન માણસ આવા રાહદારીના જાહેર રસ્તા ઉપર ઘોડાને કદી વેગથી દોડાવતા નથી કેમકે, આવી સ્થિતિમાં અકસ્માત થવાનો ભય રહે છે જે નિર્દય અને મુરખ હોય છે તે જ આવા રાજમાર્ગ ઉપર ઘોડાને વેગથી દોડાવે છે આ કારણે મે આવા માણસને પલંગનો પ્રથમ પાયો માનેલ છે અને બીજો પાયો અહીંના રાજા જીતશત્રુ છે જે બીજાઓની વેદનાને બીલકુલ સમજતો નથી જુઓ તો ખરા! ચિત્રકારોના ઘરોની માફક આ, ચિત્રશાળાની ભીતને શોભિત બનાવવાનો તેણે

मम मते मञ्चकस्य चतुर्थचरण. । तद्वचन श्रुत्वा राजा प्राह—वस्तुतोऽह मञ्चकस्य चतुर्थचरणः । ततो भूपतिस्तस्या वचनचातुर्यं बुद्धि रूप लावण्य च सर्वोत्कृष्ट दृष्ट्वा मनसि चिन्तितवान्—अस्याः पाणिग्रहण करिष्यामि, इति । इत्थ तामव चिन्तयन् राजा स्वगृह गत' । साऽपि पितर भोजयित्वा स्वगृह गता । तस्या गताया राजा जितशत्रु' श्रीगुप्ताभिध स्वसचिव स्वार्थे कनकमञ्जरी प्रार्थयितु चित्रकारचित्राङ्गदस्य समीपे प्रेषितवान । स हि चित्राङ्गदसमीपे समागत्य राज्ञोऽर्थे तत्पुत्रीं कनकमञ्जरीं प्रार्थितवान् । तत स प्राह—मन्त्रिन् । मम पुत्रीं नृप. प्रार्थयते इति ममाहोभाग्यम् । किन्तु निर्धनोऽह कथ विवाहोत्सव राज्ञः समुचित

अतः इस प्रकार का कुछ भी निर्णय न करके आपने इसको उठानेकी चेष्टा की है इसलिये मेरी दृष्टिमें आप पलगके चौथे पाये के मूरख सानित हुए हैं। इस प्रकार राजाने उसकी बातका ढग देखकर विचार करते हुए आपको उसके सामने पलगका चौथा पाया मानना पडा। इसके बाद राजाने पुनः विचार किया कि जब वह इतनी चतुर रूपवती एव विदुषी है तथा लावण्य से भरी हुई देहवाली है तो इसके साथ वैवाहिक सबध अवश्य करना चाहिये। इस तरह सब प्रकारसे विचार करता हुआ राजा ज्यों ही घर पहुँचा कि इतने मे वह भी पिता को भोजन कराकर अपने घर वापिस चली गई। घर पहुँच कर राजाने श्री गुप्त नामके अपने मत्री को अपने लिये उसकी कन्या कनकमजरी की याचना निमित्त चित्रकार चित्राङ्गदके समिप भेजा। सचिवने चित्रकार के पास आ कर राजा के लिये उसकी कन्या कनकमजरी की याचना की। मत्री की बात सुनकर चित्रकारने कहा मत्रीन ! मेरी पुत्री के साथ राजा वैवाहिक सबध करना चाहता है यह मेरा सौभाग्य है किन्तु

કાંઈ પણ નિર્ણય ન કરતા તેને ઉઠાવવાની આપે ચેષ્ટા કરી આ દૃષ્ટિએ મારી નજરમા આપ પલગના ચોથા પાયા છો આ પ્રકારની એની વાત સાભળીને રાજાએ એની વાતનો સ્વીકાર કરવો પડયો આ પછી રાજાએ એવો વિચાર કર્યો કે, જ્યારે આ એટલી ચતુર અને લાવણ્યથી યુક્ત વિદુષિ છે તો તેની સાથે વૈવાહીક સબધ જરૂરથી કરવો જોઈએ આ પ્રમાણે સઘળી રીતે વિચાર કરીને રાજા પોતાના મહેલે ગયા અને આ તરફ કનકમજરી પણ એના પિતાને ભોજન કરાવીને પોતાને ઘેર પહોચી ગઇ પોતાના મહેલમા પહોચીને રાજાએ પોતાના સચિવ કે જેનુ નામ શ્રી ગુપ્ત હતુ તેને ચિત્રાગદ ચિત્રકારની પાસે તેની કન્યા માટે માગુ લઈને મોકલ્યો સચિવે ચિત્રકાર પાસે જઈને રાજાના માટે તેની કન્યા કનકમજરીની યાચના કરી મત્રીની માગણી સાભળીને ચિત્રકારે કહ્યુ, હે મત્રિવર ! મારી પુત્રીની સાથે રાજા વિવાહીક સબધ કરવા માગે છે એ મારૂ સૌભાગ્ય છે પરતુ આપે એ

मपि शीतल सद् विरस भवति, तर्हि कदन्नस्य कथैव का? अतो भोजन शीतली कृत्य भुञ्जानो मूर्खो मम पिता मम मते मञ्चकस्य तृतीयश्चरण. । चतुर्थस्तु भवानेव। यतोऽत्र मयूराणा कदाऽप्यागमन न भवति। तदा तत्पिच्छपातस्य सभावनैव नास्ति। अथचेदत्र केनाप्यानीत भवेत्तथापि तद्रोमस्फुरणादिना पूर्व तन्निर्णय. कर्तव्य। पश्चात्तद्ग्रहणार्थे प्रयतितव्यम्। तन्निर्णयमकुर्वन भवान्

ठडा हो जाता है। ठडा भोजन विरस बन जाता है—चाहे वह उत्तम भी भोजन क्यों न हो। फिरतो यह रूखा सूखा ठहरा-इसको ठडा होने पर विरस होने में देर हि कितनी लगती है। अतः गर्म भोजन को भी ठडा करके खाने वाले मेरा पिता भी दृष्टिमें पलग का तीसरा पाया है। तथा उस पलग के चौथा पाया आप है। कारण कि चित्रित मयूर पिच्छ को सच्चा समझकर जो आपने उठानेकी क्रिया की उस समय आपने इतना तकभी विचार नहीं किया कि यहा पर जब मयूर ही नहीं आ सकता है तो उसका पिच्छ सच्चे रूपमे यहा कैसे सभवित हो सकता है। कारण कि जब वह यहा आवे तब उसका पिच्छ यहा गिरे। यदि यहां सभावना की जावे कि वह मयूर—यहाँ नहीं आवे-भले ना आवे—परन्तु उसके पिच्छकों कोई दूसरा भी तो यहा लाकर रख सकता है—सो यह बात मानी जा सकती है—परन्तु जिस चित्रित मयूर पिच्छको आपने सच्चा समझकर उठानेकी—चेष्टा की उस समय यह तो आपको देखलेना चाहिये था कि क्या उसके रोम स्फुरित हो रहे है?।

જાય છે એ ભલેને ઉત્તમ ભોજન હોય છતા પણ તે સ્વાદ વગરનુ અને રૂક્ષ બની જાય છે ઠડુ બનેલુ એ ભોજન પણ વિરસ જ બની જાય તેમા નવાઈ શી? આથી ગરમ ભોજનને ઠડુ કરીને ખાનાર એવા મારા પિતા પણ પલગનો ત્રીજો પાયો છે એ પલગનો ચોથો પાયો આપ છો કારણ કે, ચિતરેલા મયૂરના પીછાને સાચા માનીને ઉપાડવાની ક્રિયા કરી તે સમયે આપે એટલો પણ વિચાર ન કર્યો કે મોર અહિ આવી શકતો નથી તો તેના પીંછા સાચારૂપમા અહી કઇ રીતે આવી શકે? કારણ કે, જ્યારે મોર આવે તો જ એના પીંછાં અહી પડે જો એવી સભાવના કરવામા આવે કે મોર અહી ન આવે—ભલે ન આવે પરતુ તેના પીંછાને તો કોઇ આ સ્થળે જરૂરથી લાવી શકે છે આથી એ વાત માની શકાય છે પરતુ જે ચિત્રાયેલા મયુર પીછાને સાચુ માની આપે ઉપાડવાની ચેષ્ટા કરી એ વખતે આપે એટલુ તો જોવુ જોઇતુ હતુ કે, તેના રૂવાડા ફરકે છે કે નહી? આવો

कथयितु प्रेरये.। साऽपि 'तथेति' स्वीकृतवती। ततः सा तया दास्या सह राज्ञः शयनगृहे समागता। राजा तदनु तत्र समागत । कनकमञ्जरी अभ्युत्थानादिना त सत्कृतवती। राजा च स्वशयने प्रसुप्तः। तदा मदनिका कनकमञ्जरीं प्रोवाच—स्वामिनि ! कौतुककारिणीं कामपि कथा कथय। सा प्राह—राज्ञि निद्रा गते कथयिष्यामि। तद् राजा चिन्तयति—अस्यावचनचातुरी समुत्कृष्टा। अस्यावचने श्रूयमाणे द्राक्षाऽप्यमधुरायते। तस्मादनया वक्ष्यमाणमाख्यानमहमपि श्रोष्यामि, इति विचिन्त्य राजाऽलीकनिद्रया सुप्तः। अथ मदनिका ता प्राह—देवि ! सुप्तो राजा, सम्प्रति कथयाख्यानम्। तत' कनकमञ्जरी प्राह—मदनिके ! 'सान्न-

के लिये प्रेरित करना। दासीने कहा ठीक है जैसा आप कहती हो वैसा ही करूंगी। कनकमजरि के पहुँचने के बाद ही राजा भी आ गये। आते ही राजा का कनकमजरीने उठकर खूब सत्कार किया। आते ही जब वह अपने पलग पर सो गये। उस समय मदनिकाने कनकमजरी से कहा स्वामिनी ! कौतुक कारिणी कोई कथा कहो। उसकी बात सुनकर कनकमजरी बोली—राजा को सो जाने दो तब कहूँगी। राजाने जैसे ही बात सुनी तो विचार किया, कनकमजरीकी वचनचातुरी तो बडी ही भली मालूम देती है—जो इसके वचनको एकबार भी सुन लेता है उसके लिये द्राक्षा भी मीठी नही जचती। इसलिये यह जो कुछ भी आख्यान करना चाहती है उसको अवश्य सुनना चाहिये। ऐसा विचार कर राजा उस समय सोनेका बहाना करके सो गये। जब मदनिकाने देखा कि राजा सो गये हैं तो उसने कनकमजरी से कहा—

રાજા સુઈ જાય તે સમયે તુ કથા કહેવા માટે મને ઉત્સાહિત બનાવજે દાસીએ એની વાતનો સ્વીકાર કર્યો કનકમજરીના પહોચતા રાજા પણ શયનગૃહમાં પહોચી ગયો, કનકમજરીએ ઉઠીને રાજાનો સત્કાર કર્યો રાજા આવીને જ્યારે તે પોતાના પલગ ઉપર સુઇ ગયા તે વખતે મદનિકાએ કનકમજરીને કહ્યુ, સ્વામિની ! કૌતુક ઉપજાવે તેવી કોઇ કથા કહો, તેની વાત સાભળીને કનકમજરી બોલી, રાજાને સુઈ જવાદો, એ પછી કહીશ રાજાએ આ વાત સાભળી એટલે વિચાર કર્યો કનકમજરીની વચન ચાતુરી તો ઘણીજ સારી માલુમ પડે છે જે એના વચનને એક વખત સાભળી લે છે એને દ્રાક્ષ પણ મીઠી લાગતી નથી આ કારણે એ જે વાત કહેવા માગે છે તેને જરૂરથી સાભળવા જોઇએ આવો નિશ્ચય કરી રાજા સુવાનુ બહાનુ કરીને ચુપચુપ પલગમા પડી રહ્યા જ્યારે મદનિકાએ રાજા સુઇ ગયા છે તેવુ જાણ્યુ ત્યારે કનકમજરીને કહ્યુ દેવી ! રાજાજી સુઈ ગયા

सत्कार च कारयिष्यामि? निर्धनानामुदरपूर्त्तिरपि कष्टेन भवति, सचिवोऽपि तद्वाक्यमाकर्ण्य राज्ञे सर्वं न्यवेदयत्। राजा तस्य चित्रकारस्य गृहं धनधान्य-हिरण्यादिभिः पूरितवान्। शुभे दिवसे महता महोत्सवेन तया सह विवाहमकरोत्। स्वगृहागतायै तस्यै प्रासाद दासीदासादि परिवार च ददौ। तस्य राज्ञो येऽन्यो राज्य आसन। स्व स्ववारानुसारेण एकैका राज्ञी राज्ञः शयनगृहे गच्छति। तस्मिन् दिने राज्ञा स्वशयनगृहे शयनार्थं कनकमञ्जरी समादिष्टा। सा मदनिकाभिधाना स्वदासीं प्राह-हले! यदा राजा प्रस्वप्यात्, तदा त्व मा कथा

आपको मालुम होना चाहिये कि मै एक निर्धन व्यक्ति हूँ सो विवाह का उत्सव तथा राजाके समुचित्त सत्कार कैसे कर सकूगा। आजकल तो प्रायः निर्धनोंकी उदरपूर्ति भी बडी कठिनता से होती है। सुनकर सचिव ने इन तमाम बातोंको आ कर राजा से कहा। राजाने चित्रकार का घर धनधान्य एव सुवर्ण आदि से भर दिया-जिसकी उसके यहा कमी थी राजाने उसकी सबकी सब तरह से पूर्ति कर दी। किसी भी वस्तु की उसके यहा कमी नहीं रहने दी। अब क्या था चित्रकार ने इस परिस्थिति से-प्रसन्न होकर कनकमजरी का विवाह राजाके साथ बडे ही उत्सवपूर्वक शुभवेला मे कर दिया। उसके घर आते ही राजाने उसके लिये प्रासाद और दासी दास आदि सबका समुचित प्रबध कर दिया। जिस दीन जितशत्रु कनकमजरीको विवाहित करके घर पर लाया था उस दिन राजाके शयनगृह मे जानेका उसी का बारा था। अपनी मदनिका दासी से उसने पहिले ही ऐसा कह दिया था कि-हे सखि! जिस समय राजा सो जावें उस समय तुम मुझे कथा कहने

જાણવુ જોઈએ કે, હુ એક નિર્ધન વ્યક્તિ છુ આ કારણે હુ વિવાહનો ઉત્સવ અને રાજાનો સત્કાર કઈ રીતે કરી શકુ? આજકાલ તો નિર્ધનોની ઉદરપૂર્તિ પણ ઘણી કઠિનતાથી થાય છે આ સાભળીને મ ત્રીએ તમામ વાત આવીને રાજાને કહી રાજાએ ચિત્રકારનુ ઘર ધન ધાન્ય અને સુવર્ણ આદિથી ભરાવી દીધુ જેની તેને ત્યા કમીના હતી તે સઘળી વસ્તુઓ રાજાએ તેને ત્યા પહોચાડી દીધી કોઈ પણ વસ્તુની તેને ત્યા કમીના ન રહી, પછી બાકી શુ હતુ? ચિત્રકારે આથી પ્રસન્ન બનીને કનકમ જરીની સાથે વિવાહ કરીને રાજાએ તેના માટે અલગ મહેલ તથા દાસ દાસી આદિનો પ્રબ ધ કરી દીધો જે દિવસે રાજા જીતશત્રુ કનકમ જરીને પરણીને પોતાને ત્યાં લઈ આવેલ એ દિવસે રાજાના શયનગૃહમા જવાનો તેનો વારો હતો પોતાની મદનિકા નામની દાસીને તેણે પહેલેથીજ કહી રાખેલ હતુ કે હે સખી! જે સમયે

तस्मादधुनैवास्या रहस्यमेना पृच्छामि। तिष्ठतु तावत्। यद्यहं रहस्यं पृच्छामि तदेयं मां मूर्खं कथयिष्यति। अर्धकथिता कथा तु वल्लभतरा भवति। अतः आगामिनी दिवसेऽप्यस्या एव वारकं दास्यामि। येनार्द्धश्रुता वार्ता स्वयमेव पूर्णा भविष्यति, कौतूहलं च पूर्णं भविष्यति। तत आगामिनि दिवसेऽपि तस्या एव वारं ददौ भूपतिः। तस्यामपि रात्रावलीकनिद्रां गते भूपतौ मदनिका प्राह-स्वामिनि! गतरात्रिपृष्टायाः शेषभागमापूर्य पुनरन्यां कामपि कथां कथय। सा प्राह-चतुर्हस्तो देवो हस्तचतुष्टययुक्तो नारायणो ज्ञेयः। न तु मानेन चतुर्हस्तः।

मन्दिरमें चार हाथकी मूर्ति कैसे समा सकती है। अतः अभी ही इसका रहस्य जान लेना चाहिये। परन्तु मैं जो इससे इस बात को पूछता हूं तो यह मुझे मूर्ख समझेगी। इस लिये क्या जरूरत है पूछनेकी। यह स्वतः ही कल इसको अपने आप स्पष्ट कर देगी। जबतक कथा अधूरी रहा करती है तबतक वह बडी ही प्रिय लगती रहती है। इसलिये इस कथाकी समाप्ति निमित्त कल भी मैं इसको ही यहां पर आनेका अवसर दूंगा। इस प्रकार के विचार से राजाने दूसरे दिन भी उसको वहीं पर आनेका आदेश दे दिया। रात्रि होने पर मदनिका सहित कनकमंजरी वहां पर पहिले से आ गई बादमें राजा भी आया। कथा सुनने के अभिप्राय से राजा निद्रा का मिस बनाकर सो गया। जब यह हालत मदनिकाने देखी तो उसने कनकमंजरी से कहा-देवि! राजाजी सो चुके हैं अब आप अपनी कलकी कथा समाप्त कर और कोई दूसरी कथा सुनायें। कनकमंजरीने कहा ठीक है-कलजो तुमने यह शंका की थी कि

કે, એક હાથના મંદિરમાં ચાર હાથની મૂર્તિ કઈ રીતે સમાઈ શકે ? આથી અત્યારે જ આનું રહસ્ય જાણી લેવું જોઈએ પરંતુ હું જો તેને આ વાત પૂછીશ તો તે મને મૂર્ખ જ માનશે, આથી એ પૂછવું બરોબર નથી અત્યારે એ સ્વયં પોતે જ એને સ્પષ્ટ કરશે. જ્યાં સુધી વાર્તા અધુરી હોય છે ત્યાં સુધી તે પ્રિય લાગે છે આ કારણે એ કથાની સમાપ્તિ નિમિત્તે હું કાલે પણ તેને અહીં આવવાનો અવસર આપીશ. આ પ્રકારના વિચારથી રાજાએ બીજે દિવસે પણ પોતાના શયન ભુવનમાં એને આવવાનો આદેશ આપ્યો. રાત થતાં મદનમંજરી પોતાની દાસી મદનિકાની સાથે પહેલાંથી જ ત્યાં આવી પહોંચી. આ પછી રાજા આવ્યા પરંતુ વાર્તા સાંભળવાની અભિલાષાથી સુઈ જવાનું બહાનું કરીને તે પોતાના પલંગમાં ચુપચુપ પડી ગયા. જ્યારે આ સ્થિતિ મદનિકાએ જોઈ ત્યારે તેણે કહ્યું કે, દેવી! રાજા સુઈ ગયા છે માટે હવે આપ ગઈ કાલની અધુરી વાર્તા આજે ચાલુ કરો અને બીજી પણ કથા સંભળાવો. કનકમંજરીએ કહ્યું ઠીક છે. કાલે તે જે શંકા કરેલ હતી કે

धाना भूत्वा शृणु, कथां कथयामि'। इत्युक्त्वा कनकमञ्जरी कथां कथयितुमारेभे- 'आसीद् वसन्तपुरे वरुणो नाम श्रेष्ठी। स हि एकहस्तोच्छ्रायमेकं पाषाणमयं देवमन्दिरं निर्मापितवान्। तत्र चतुर्हस्तं देवं स्थापितवान्। इति।' इदमाख्यानं श्रुत्वा मदनिका प्राह-देवि! एकहस्ते देवमन्दिरे चतुर्हस्तो देवः कथं मायादिति संशयो मम हृदये वर्तते। अतस्तं छिन्धि। सा प्राह-अहमधुना श्रान्ताऽस्मि। निद्रा मां बाधते। आगामिन्यां रात्रौ कथयिष्यामि। एवं तस्यावचनं श्रुत्वा मदनिका स्वगृहं गता। अथ कनकमञ्जरी यथोचितस्थानं प्रसुप्ता। इतश्च राजा मनस्यचिन्तयत्-इयं वार्ता कथं सङ्गच्छते? इति तु न बुद्धिपथमारोहति।

देवि! राजाजी सो चुके हैं अब आप अपनी कथा प्रारंभ कीजिये। कनकमंजरी ने कहा-अच्छा सावधान हो कर सुनो मैं कहती हूं—

कथा इस प्रकारकी है—

वसन्तपुरमे वरुण नामका एक शेठ रहता था। उसने एक हाथ ऊँचा पत्थर का देवमंदिर बनवाया। उसमें उसने चार हाथ की देवमूर्ति रखी। बीचमें मदनिका उसकी इस बातको सुनकर कह उठी देवि! एक हाथ प्रमाण वाले मंदिर मे चार हाथकी देवमूर्ति कैसे समा सकति है? आप मेरे इस संशयको पहले दूर करदें बाद में आगे कथा चलावें। मदनिकाकी बात सुनकर कनकमंजरीने कहा एकतो मैं इस समय थकी हुई हूँ दूसरे निद्रा भी मुझे सता रही है-अतः अवशिष्ट कथा अब कल समाप्त करुंगी-आज यहीं तक रहने दो। मदनिका कनकमंजरीकी बात मानकर सोने के लीये अपने यथोचित स्थान पर चली गई। इधर राजाने विचार किया-मदनिकाकी बात ठीक है कि एक हाथ के

હવે આપ આપની વાતનો પ્રારંભ કરો. કનકમંજરીએ કહ્યુ, સારૂં સાવધાન થઈને સાંભળ હું કહું છું એ કથા આ પ્રકારની છે—

વસંતપુરમાં વરૂણ નામનો એક શેઠ રહેતો હતો. તેણે એક હાથ ઉંચા પત્થરનું દેવમંદિર બનાવ્યું તેમાં તેણે ચાર હાથની દેવમૂર્તિ નાખી, એની આ વાતને સાંભળીને મદનિકા વચ્ચેજ બોલી ઉઠી દેવી! એક હાથ પ્રમાણવાળા મંદિરમાં ચાર હાથની દેવમૂર્તિ કઈ રીતે સમાઈ શકે? આપ મારા આ સંશયનું પહેલાં સમાધાન કરાને પછીથી વાર્તાને આગળ વધારો. મદનિકાની એ વાતને સાંભળીને કનકમંજરીએ કહ્યુ એક તો હું આ સમયે થાકેલી છું બીજું મને નિદ્રા પણ સતાવી રહેલ છે આથી બાકીની કથા હવે કાલે સમાપ્ત કરીશ આજ અહીં સુધીજ રહેવા દો. મદનિકા કનકમંજરીની વાત સાંભળીને સુવા માટે પોતાના સ્થાન ઉપર ચાલી ગઈ. આ તરફ રાજાએ વિચાર કર્યો કે, મદનિકાની વાત તો ઠીક છે કારણ

सह राज्ञः शयनगृहे समागता । राजा तथैव प्रसुप्तः । तदा मदनिका प्राह- स्वामिनि ! अवशिष्टा कथा कथयित्वा पुनरन्यां कामपि कथां कथय । तत सा प्राह तरुः तत्रास्याधस्तात् छायाऽऽसीत्, नतूपरि । अथान्यां कथां कथयामि सावधानतया शृणु, 'आसीत् कस्मिंश्चिद् ग्रामे कोऽप्युष्ट्रपालकः' । तस्य चैको महाकाय उष्ट्रश्चरन् वनस्याभ्यन्तरे गतः । स प्रचुरफलपुष्पसमन्वित मेकं बब्बूलवृक्षमद्राक्षीत् । तं दृष्ट्वा तत्पत्रभक्षणेच्छया स मुहुर्मुहुर्ग्रीवा प्रसार-

सो ऐसा ही किया। जब तृतीय रात्रिमें मदनिका सहित कनकमजरी और बाद में राजा महल मे आ पहुचे। उस समय भी राजा अपने पलग पर उसी कपट् निद्रा में सो गये, तब मदनिकाने राजा के सोते ही कनकमजरी को कथा कहने के लिये प्रेरित किया सबसे पहिले कनक-मजरीने कल की कथा में उठाई गई मदनिकाके सदेह की निवृत्ति इस प्रकारसे-कल जो शाख शाखा सपन्न अशोकवृक्ष को छाया विहीन बतलाया गया था सो उसका तात्पर्य इस प्रकारका जानना चाहिये कि उस वृक्ष के नीचे ही छायाथी उसके ऊपर नही। अब मै तीसरी कथा कहती हू सो सावधान होकर सुन—

किसी एक ग्राम में कोइ एक उष्टपालक-(रबारी) रहता था। एक उसका उट चरते २ वनमें पहुच गया। वहा उसकी दृष्टिमें प्रचुर फल पुष्प से समन्वित एक बबूल का वृक्ष दिखलाई पडा। उसके देखते ही ऊटकी इच्छा उसको खानेकी हो गई। वह वहा पहुँचा और उसके पत्रादिकों को खाने के लिये उसने बार २ अपनी गर्दन ऊँची की

આ ત્રીજી રાત્રે મદનિકા અને પ્રથમ કનકમંજરી અને મદનિકા રાજાના શયનગૃહમા પહોચ્યા ત્યારપછી થોડાવારે રાજા પણ પહોચી ગયા, પરતુ વાર્તા અને તેના ભેદને જાણવાની અભિલાષાથી રાજાએ આગલા દિવસોની જેમ નિદ્રાનુ ખોટુ બહાનુ કરી પલગમા લબાવ્યુ રાજાને સુઈ ગયેલા, જાણીને મદનિકાએ બત વેલા સદેહના ખુલાસો આ પ્રમાણે કર્યો કાલે જે અશોક વૃક્ષની છાયા વગરના રો ડાળીઓ બતાવેલ હતી તો તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રકારે જાણવુ કે વૃક્ષની નાચેજ છાયા હતી ઉપર નહી હવે હુ ત્રીજી કથા કહુ છુ તેને સાવધાનીથી સાભળ

કોઈ એક ગામમા એક રબારી રહેતો હતો તેનુ એક ઉટ ચરતા ચરતા વનમા પહોચી ગયુ ત્યા તેની દૃષ્ટિમા ફળફૂલથી લચીપચી રહેલ એક બાવળનુ ઝાડ જોયુ એને જોતા જ ઉટની ઈચ્છા તેને ખાવાની થઈ તે ત્યા પહોચ્યુ અને તેના ફળફુલને ખાવા માટે તેણે વારવાર પોતાની ગરદન ઉંચી કરી પરતુ તે તેને

अथान्या कथा कथयामि, सावधानतया शृणु-'आसीत् कस्मिंश्चिन्महावने महानेको रक्ताशोकद्रुम । तस्य शतशाखा आसन्। परन्तु तस्य च्छाया नासीत् इति।' मदनिका प्राह-शतशाखान्वितस्य वृक्षस्यापिच्छाया नाभूदिति तु महदाश्चर्यम्। अतोऽस्याः कथायास्तत्त्वं कथय। सा प्राह-अधुना निद्रा आयाति। आगामि दिवसे कथयिष्यामि। राजाऽपि कथावशेषं श्रोतुकामस्तृतीयेऽप्यह्नि तस्या एव वारकं ददौ। तस्यामपि रात्रौ राज्ञी कनकमञ्जरी दास्या मदनिकया

एक हाथ मदिरम चार हाथ वाली देव मूर्ति कैसे समा गई सो उसका तात्पर्य यह है कि उस मदिरमें चार हाथों वाला देव जो नारायण है वह रक्खा गया ऐसा जानना चाहिये। अब मैं दूसरी कथा कहती हू सुनो—

किसी एक महावनमें एक महान् लाल अशोकका पेड था। उसकी सौ शाखाएँ थीं। परतु उसकी छाया नही थी। मदनिकाने फिर बीचमे टोककर पूछा स्वामिन्! यह बाततो समझ में नही आती है कि सौ शाखाएँ से युक्त होने पर भी उस अशोक वृक्ष की छाया नहीं पडती थी। आप तो वडे अचरजकी बात सुनाती हैं। कृपाकर इस बात को भी स्पष्ट करदें तभी आगे कथा चलावे-कनकमजरीने इसके समाधान निमित्त केवल इतना ही कहा कि मदनिके! मुझे अब निद्रा आ रही है सो कल इसका समाधान करूगी आज नहीं-आज तो यह कथा यही पर रहने दो। कथा को सुनकर राजा को भी मदनिका की तरह कुतूहल बना रहा-अत कथावशेषको सुननेकी अभिलाषा से राजाने तृतीय दिवस

એક હાથના મ દિરમા ચાર હાથની મૂર્તિ કઇ રીતે સમાઈ તો તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે આ મ દિરમા ચાર હાથવાળા જે નારાયણ છે તેનુ સ્થાપન કરવામા આવ્યુ હતુ તેમ જાણવુ જોઇએ હવે હુ બીજી કથા કહુ છુ તેને સાભળો—

કોઇ એક મહાવનમા લાલ અશોકનુ મોટુ એવુ વૃક્ષ હતુ એને સો ડાળીઓ હતી પરતુ એને છાયા ન હતી મદનિકાએ ફરીથી વચમા બોલતા કહ્યુ, સ્વામિની! એતો સમજમા નથી આવતુ કેમકે સો જેટલી ડાળીયો હોવા છતા પણ એ અશોક વૃક્ષની છાયા ન પડે એ કેમ બની શકે? આપ તો ઘણુજ અચરજની વાત સભળાવો છો કૃપા કરીને આ વાતને પણ સ્પષ્ટ કરી દો અને પછીજ કથાને આગળ વધારો આથી મદનમ જરીએ કહ્યુ, મદનિકા હવે મને નિદ્રા આવી રહી છે જેથી કાલે તારા સ શયનુ સમાધાન કરીશ આજે તો આ કથા અહી જ પૂરી કરીએ આ પ્રમાણે કનકમ જરીએ વાતને અધુરી રાખતા રાજાના મનમા પણ ભારે કુતુહલ રહ્યુ અને એ રીતે ત્રીજા દિવસે પણ પોતાના શયનભુવનનો કનકમ જરીનો વારો રાખવામ

त्वमसुप्ते राज्ञि मदनिकया पूर्ववत्पृष्टा कनकमञ्जरी प्राह—स हि बब्बूलकः कूपे-ऽभवत्। अत उष्ट्रस्तत्पत्रं भोक्तुं समर्थो नाभूत्, तदुपरि लिण्मूत्रं च सुखेना करोत्। अथापरा कथा कथयामि सावधानतया शृणु–'आसीन्मगधदेशे पाटलिपुत्रके नाम्नि नगरेऽरिमर्दनो नाम राजा। तेन स्वराज्योपद्रवकारिणौ द्वौ चौरौ निगृहीतौ। राजा दयालुरासीत्। अतो वध्यावपि तौ न मारितवान्। किन्तु तौ मञ्जूषायां निधाय नद्यां प्रवाहितवान्। नद्यां प्रवहन्तीं तां मञ्जूषां

फिर मदनिकाको साथ लेकर कनकमंजरी वहां आगई। और राजा भी आकर कपट नींद से सो गये, राजा के सो जाने पर कनकमंजरी से मदनिकाने कथा कहने के लिये कहा–कलकी शंकाका उत्तर देते हुए कनकमंजरीने कथा कहना प्रारम्भ किया–पहिले उसने मदनिका की शंकाका उत्तर इस प्रकार दिया कि उटके मुंह मे उस बबूल वृक्षका एक भी पत्ता जो नहीं आ सका इसका कारण केवल यही था कि वह बबूल कुएमें उत्पन्न हुआ था–वहांतक परिश्रम करने पर भी ऊँटकी गरदन नहीं पहुँच सकी। नीचा होने से उस पर मलमूत्र किया जा सकता है दूसरी कथा जो उसने कही वह इस प्रकार है—

मगधदेश के अन्तर्गत पाटलीपुत्र नामका एक नगर था वहां अरिमर्दन नामका राजा राज्य करता था। उन्होंने अपने राज्य में उपद्रव करनेवाले दो चोरों को पकडा। राजा दयालु था इसलिये मारने योग्य होने पर भी राजाने उन दोनों चोरों को नहीं मारा। किन्तु पेटीमें बंद करके

દિવસ પણ આવ્યો. ચોથે દિવસે મદનિકાને સાથે લઈને રાત્રીનો સમય થતા કનકમંજરી શયન ભવનમા પહોચી ગઇ અને રાજા પણ ત્યા આવીને હમેશની માફક કપટ નિદ્રા ધારણ કરીને સુઈ ગયો. રાજાના સુવા પછી મદનિકાએ કનકમંજરીને કથા કહેવા માટે કહ્યુ આગલા દહાડાની શંકાનો ઉત્તર આપતા કનકમંજરીએ કથાની શરૂઆત કરતા કહ્યુ કે, ઉંટના મોઢામા તે બાવળનુ ઝાડનુ એક પણ પાંદડુ ન આવ્યુ તેનુ કારણ એ હતુ કે તે બાવળનુ ઝાડ કુવામા ઉગેલુ હતુ તેથી પરિશ્રમ કરવા છતા પણ ઉંટની ગરદન ત્યા પહોચી શકી નહી નીચુ હોવાથી તેના ઉપર મળમૂત્રની ક્રિયા થઇ શકી હતી, આ પછી તેણે બીજી કથા કહેવાનુ શરૂ કર્યું જે આ પ્રમાણે છે—

મગધની અંદર પાટલીપુત્ર નામનુ નગર હતુ ત્યા અરિમર્દન નામનો રાજા રાજ્ય કરતો હતો, તેણે પોતાના રાજ્યમા ઉપદ્રવ કરવાવાળા બે ચોરોને પકડયા રાજા દયાળુ હતો એટલે મારવાને યોગ્ય હોવા છતા એ બન્ને ચોરોને માર્યા નહી

यति। परन्तु तस्य तरोरेकमपि पत्र तस्य मुखे नायातम्। ततो जातकोप स उष्ट्रस्तस्य तरोरुपरि लिण्मूत्र कृतवान्। युज्यते चैतत् कृपण प्रति को न कोप करोति। इति। ततो मदनिका ता माह—स्वामिनि! उष्ट्रो महता प्रयत्ने नापि यस्य पत्र स्प्रष्टु समर्थो नाभवत्। स तदुपरि लिण्मूत्र पारत्यजेदिति कथ सगच्छते। इति मम मनसि महान् सन्देहः। अतो ममामु सन्देह दूरीकुरु। कनकमञ्जरी माह सम्प्रति मा निद्रा बाधते। आगामिनि दिवसे एतदुत्तर दास्यामि। इति तद्वचन श्रुत्वा मदनिका स्वगृह गता। राजा च तदुत्तर-श्रवणेच्छया चतुर्थेऽपि दिने तस्या एव वारक ददौ। तस्यामपि रात्रौ पूर्वव

परन्तु उसका एक पत्ता भी उसके मुह मे नहीं आया। इससे उस ऊँटको बडा क्रोध आया और उसने उस वृक्षके उपर लिंडे और मूत्र कर दिया। ठीक ही है कि कृपण पर कौन नहीं अप्रसन्न होता है? अर्थात् सब कोई अप्रसन्न ही रहते हैं। इस कथा को सुनकर मदनिकाके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा—उसने कहा स्वामिनि! जब अति परिश्रम करने पर भी ऊँटको उस बबूल वृक्षका एक पत्र भि मुँहमें नहीं आया—तब उसने क्रोध में आ कर उसपर लिंडे औरमूत्र करदिया यह बात कैसे मानी जा सकती है? जरा इसको समझा दीजिये। कनकमजरीने प्रति-दिनकी भांति उसने यही कह दिया कि इसका उत्तर कल दूगी—आज अभी आराम करने को जी चाह रहा है। इस प्रकार कनकमजरी के वचन सुनकर मदनिका अपने स्थान पर आकर सो गई। राजाने इस मदनिका के प्रश्नका उत्तर सुननेकी अभिलाषा से कनकमजरी को चतुर्थ दिन भी उसी महलमें रहने के लिये कह दिया। चौथे दिन—

પહેચી શક્યુ નહીં આથી તે ઉટ ઘણુ જ ક્રોધે ભરાયુ અને તેણે તે વૃક્ષની ઉપર લીંડાને મૂત્ર કરી દીધુ વાત તો ખરી છે કે, કૃપણુ ઉપર કોણુ અપ્રસન્ન ન થાય? ખરેખર બધા જ અપ્રસન્ન જ રહે છે આ કથા સાભળીને મદનિકાના આશ્ચર્યનુ ઠેકાણુ ન રહ્યુ તેણે કહ્યુ સ્વામીની! જ્યારે અતિ પરિશ્રમ કરવા છતા પણુ ઉટને તે બાવળના વૃક્ષનુ એક પણુ પાદડુ ખાવા ન મળ્યુ ત્યારે તેણે ક્રોધમા આવીને તેના ઉપર લીડાને મૂત્ર કરી દીધુ આ વાતને કઈ રીતે માની શકાય? આ વાતને સ્પષ્ટતાથી સમજાવી દો કનકમ જરીએ દરરોજની માફક આવતી કાલે ઉત્તર આપીશ તેવુ કહી દીધુ અને આરામ કરવાની ઈચ્છા છે તેવુ જણાવ્યુ કનકમ જરીના આ પ્રમાણેના કહેવાથી મદનિકા પોતાના સ્થાને જઈને સુઇ ગઇ રાજાએ પણુ મદનિકાના પ્રશ્નનો ઉત્તર સાભળવાના આશયથી કનકમ જરીને પોતાના શયનાગાર માટે ચોથો

वानासीदनेन चतुर्थदिनं ज्ञातम्। अथान्यां कथां कथयामि-'आसीत्कलिङ्ग देशे चम्पापुर्यां बलवाहनो नाम राजा। तस्यानेकाः पत्न्य आसन्। तासु एका तस्यासीत्परमवल्लभा। यथाऽन्या राज्ञ्यो न जानीयुस्तथा स भूमिगृहस्थितैः स्वर्णकारैस्तदर्थमाभूषणानि अकारयत्। एकदा भूमिगृहस्थितान् स्वर्णकारान् कौतुकात् कोऽपि पृष्टवान्-सम्प्रति कः कालः? तेष्वेकः प्राह-सम्प्रति रात्रिः

रपट निद्रा से अपने पलंग पर सो गये, और मदनिकाने कनकमंजरी से कथा कहने के लिये कहा-कलकी कही गई कथा का उत्तर देते हुए कनकमंजरीने अपनी कथा प्रारंभ की-उत्तर उसने इस प्रकारका दिया कि जिस मनुष्यने यह जाना था, कि मुझे इसमें बंद हुए आज चौथा दिन है सो उसको तिजारी आती थी-इससे उसने जान लिया कि मुझे आज तृतीय ज्वर नहीं आया है कल आकर उतर गया है अतः आज चतुर्थ दिन है फिर आगे कथा उसने इस प्रकार कही—

कलिङ्ग देशमें चंपापुरी के अंदर बलवाहन नामका एक राजा रहते थे। उनके अनेक रानियां थी। उनमें एक रानी उन राजाको अधिक प्रिय थी। राजाने उसके लिये इस प्रकार गुप्तरूप से सुवर्ण के आभूषण बनवाना प्रारंभ किये कि जिससे अन्यरानियों को बनानेकी खबर न लग सके। वास्तविक बात यह थी कि राजाने भूमिगृहमें सुवर्णकारों को बैठा दिये थे। एकदिनकी बात है कि भूमिगृह मे बैठे हुए स्वर्णकारों से कौतुकवश किसी ने पूछा कि इस समय दिन है या रात्रि

પાછા થઈ પહોંચ્યા અને વાતનો ભેદ સાંભળવાની અભિલાષાથી રોજની પ્રમાણે સુવાનો ઢોંગ કરીને પલંગમાં પડી રહ્યા. આ પછી રાજાને સુઈ ગયેલા જાણીને મદનિકાએ કનકમંજરીને વાત આગળ ચલાવવા કહ્યું. ગઈ કાલની અધુરી વાતનો પ્રત્યુત્તર આપવાની નેમથી મદનમંજરીએ શરૂઆત કરી અને ઉત્તર આ પ્રમાણે આપ્યો કે, જે માણસે આ જાણ્યું હતું કે પેટીમાં બંધ થયાને આજે ચોથો દિવસ છે એને તરીયો તાવ આવતો હતો. આનાથી તેણે જાણી લીધું કે, મને આજે તરીયો તાવ આવેલ નથી કાલે આવીને ઉતરી ગયેલ છે. આથી આજે ચોથો દિવસ છે. આ પછી તેણે બીજી કથા કહેવાનો પ્રારંભ કર્યો જે આ પ્રમાણે છે,—

કલીંગ દેશમાં ચંપાપુરી નગરીમાં બળવાહન નામના એક રાજા રહેતા હતા. તેને અનેક રાણીઓ હતી. આમાની એક રાણી રાજાને ખૂબજ પ્રિય હતી. રાજાએ તેના માટે ખાનગી રીતેથી સુવર્ણના આભૂષણો બનાવરાવ્યા કે જેવી જેની બીજી રાણીઓને ખબર ન પડે. વાસ્તવિક વાત એ હતી કે, રાજાએ જમીનની અંદરના ભોંયરામાં સોનીઓને બસાડયા હતા. એક દિવસની વાત છે કે જ્યારે સોનીઓને કૌતુકવશાત

वीक्ष्य नरास्ता तटप्रदेशे समानीय समुद्घाटितवन्त.। ते तत्र स्थित चौर द्वय निष्काम्य पृष्टवन्त –अत्र स्थितयोर्युवयो. कति दिवसा व्यतीताः? तयो रेकस्तानवादीत्–अद्य चतुर्थं दिनमस्ति। इति।' तच्छ्रुत्वा मदनिका प्राह–स्वामिनि! मञ्जुषा स्थितेन तेन चतुर्थे दिन कथ ज्ञातम्? सा प्राह–अधुना मा निद्रा समायाति, आगामिनी दिवसे कथयिष्यामि। ततो मदनिका स्वगृह गता। कथा श्रोतुकामो राजा पञ्चमे दिवसेऽपि तस्या एव वारक दत्तौ। तद्रात्रावपि कपटनिद्रया प्रसुप्ते नृपे मदनिकया पृष्टा सा प्राह–'स तृतीयज्वर

उनको उसने नदी मे बहा दिया। अन्य गाममें नदी के तटपर खडे हुए मनुष्योंने जब बहती हुई पेटीको देखा तो उन्होंने उसको नदी मे बाहर निकाल कर ज्यों ही खोला कि उसमें उनको दो चोर दिखलाई दिये। चोरोंको पेटीसे बहार करके उन्होंने उनसे पूछा तुम लोगों को इसमें बद हुए कितने दिन गये गये ह? यह सुनकर एक चोर ने कहा हमको इसमें बध हुए आज चौथा दिन है। इस बातको सुनकर मदनिका ने कनकमंजरी से, कहा–स्वामिनि! जब वे चोर पेटीमे बद थे तो उनको यह बात कैसे मालूम पडी कि हमको इस में बद हुए आज चार दिन हो चुके है। कनकमजरीने इसका उत्तर कलके उपर छोड दिया है और जाकर सो गई–मदनिका भी चली गई। राजाने इस कथा का उत्तर सुनने के अभिप्राय से कनकमजरी को पाचवे दिनभी इसी महल में रहने के लिये कहा। रात्री होने पर मदनिका सहित कनक-मजरी महल मे आयी और राजा भी आया। राजातो प्रतिदिनकी भाति-

પરતુ એક પેટીમા બધ કરીને નદીમા તે પેટી વહેતી મૂકી દીધી બીજા ગામમા નદીના કિનારે ઉભેલા માણસોએ નદીમા તરતી આવતી પેટીને જોઈ ત્યારે તેને નદીમાથી બહાર કાઢીને ખોલી તો બન્ને ચોર દેખાયા ચોરોને પેટીમાથી બહાર કાઢીને તેમને પૂછયુ કે, તમને આ પેટીમા પુર્યાને કેટલા દિવસ થયા આ સાભળીને એક ચોરે જવાબ દીધો આજે ચોથો દિવસ છે આ વાત સાભળીને મદનિકાએ કનકમજરીએ પૂછયુ, સ્વામીની! જ્યારે બન્ને ચોર પેટીમા બધ હતા તો એમને એ વાત કેમ માલુમ પડી કે, પેટીમા પુરાયાને ચાર દિવસ થઈ ચૂકયા છે? કનક મજરીએ તેનો ઉત્તર બીજે દિવસે આપવાનુ કહીને પઠીથી જઈને સુઈ ગઈ આથી મદનિકા પણ પોતાના સ્થાને જઈને સુઈ ગઈ રાજાએ પણ આ કથાનો ઉત્તર સાભળવા માટે પાચમા દિવસે પણ કનકમજરીને પોતાના શયનભવનમા આવવાનુ કહ્યુ રાત્રીના સમયે મદનિકા સાથે કનકમજરી શયનભવનમા પહોચી રાજા પણ

मु (तरान । राजाऽपि तस्यामनुद्घाटितामेव तन्मध्यस्थान सर्वानलङ्कारानपश्यत । इति । ततो मदनिका माह-अनुद्घाटिताया पेटिकाया राजाऽलङ्कारान् कथ मपश्यत ? राज्ञी माह-आगामिनी दिवसे कथयिष्यामि । अधुना तु मा निद्रा बाधते । ततो मदनिका स्वगृहं गता । राज्ञा सप्तमेऽपि दिवसे तस्या एवावसरो दत्त. । रात्रौ पूर्ववद् व्याजेन निद्रामुपगते नरनाथे मदनिकया पृष्टा राज्ञो कनकमञ्जरी माह-'पेटिका हि स्वच्छस्फटिकनिर्मिताऽसीदत पिहितामपि तस्या

नामका राजा था। राजाको किसीने नजराने मे भूषण से भरी हुई एक बिना छेदकी पेटी भेट की। राजाने उस पेटीको विना खोले ही उसमे रक्खे हुए समस्त अलकारों को देखलिया। कनकमजरी के द्वारा कही गई इस आश्चर्य कारक बातको सुनकर मदनिकाने कहा-स्वामिनि ! विना पेटी को खोले राजाने उसमे रखे हुए आभूषणों को कैसे देख लिया ? कनकमजरीने कहा-तेरी शकाका उत्तर कल दूगी-अभी मुझे निद्रा सता रही है। ऐसा कह कर कनकमजरी तो सो गई और मदनिका भी अपने स्थान पर चली गई। राजाने उसको सातवें दिन भी वही रहनेको कहा। फिर सातवें दिन भी कनकमजरी मदनिका के साथ वहा आगई और राजाभी आकर कपट-नीद मे सो गया। पहेले दिनकी शका का समाधान मदनिका ने पूछा, तब कनकमजरीने इस प्रकार समाधान किया-राजाने जो पेटी खोले बिना ही उसके भीतर रहे हुए आभूषणों को अच्छी तरह देखलिया-इससे यही ज्ञात होता है कि वह पेटी स्फटिकमणी की बनी-हुईथी-अत. स्वच्छ होने

રાજા હતા રાજાને કોઈએ નજરાણામા આભૂષણોથી ભરેલી એક પેકબધ પેટી ભેટ કરી રાજાએ તે પેટીને ખોલ્યા વિના જ તેમા રહેલ દરેક અલકારોને જોઈ લીધા કનકમજરીએ કહેલી આ આશ્ચર્યજનક વાતને સાભળીને મદનિકાએ કહ્યુ સ્વામીનિ ! પેટી ખોલ્યા વિના તેની અદર રખાયેલા આભૂષણોને રાજાએ કઈ રીતે જોઇ લીધા ? કનકમજરીએ કહ્યુ તારી આ વાતનો ઉત્તર કાલે આપીશ અત્યારે તો મને ઊંઘ આવે છે, એમ કહીને કનકમજરી સૂઈ ગઈ અને મદનિકા પણ પોતાના સ્થાને સ્થાને ચાલી ગઇ રાજાએ ફરીથી સાતમે દિવસે પણ તેને પોતાના શયનગૃહમા આવવાનુ કહ્યુ સાતમા દિવસે રાત્રીનો સમય થતા કનકમજરી મદનિકાની સાથે શયન ગૃહમા પહોચી રાજા પણ વાતને જાણવાના આશયથી આવીને કપટનિદ્રાથી સૂઇ ગયો, ગઈ કાલની શકાના સમાધાન માટે મદનિકાએ પૂછ્યુ, ત્યારે કનકમજરીએ કહ્યુ, રાજાએ પેટીને ખોલ્યા વગર જ અદર રહેલા આભૂષણોને સારી રીતે જોઈ લીધા એવો અમ જણાય છે કે, તે પેટી સ્ફટિક મણીની બનેલી હતી જેથી સ્વચ્છ

स्तीति।' इदं श्रुत्वा मदनिका प्राह–भूमिगृहाभ्यन्तरस्थितेन तेन कथं ज्ञातं यदधुना रात्रिरस्तीति? ततः कनकमञ्जरी तां प्राह–अधुना निद्रा समाकुलाऽस्मि, आगामिनि दिवसे कथयिष्यामि। कथावशिष्टभाग श्रोतुकामेन राज्ञा षष्ठे दिवसेऽपि तस्या एवावसरो दत्तः। ततस्तस्यां रात्रावपि निद्राव्याजमुपागते राज्ञि मदनिकया प्रेरिता राज्ञी कनकमञ्जरी प्राह–'तेषु स्वर्णकारेषु स रात्र्यन्ध आसीदतस्तेन रात्रिर्ज्ञाता।

अथापरा कथा कथयामि, शृणु–'आसीत्सौवीरदेशे सिन्धुपुरं नामकं नगरम्। तत्रासीत् सुद्युम्नो नाम राजा। तस्मै कोऽपि भूषणसम्भृता निश्छिद्रा पेटिका

है? उनमें से एक ने कहा इस समय रात्रि है। इस बात को सुनकर मदनिकाने कहा कि भूमिगृह के भीतर रहे हुए उस सुवर्णकारने यह बात कैसे जानली कि इस समय रात्रि है। पूछी हुई बातका कलके उपर उत्तर देना कहकर कनकमजरी निद्रावश सो गई। मदनिका भी अपने स्थान पर आकर सो गई। इसका उत्तर सुनने की इच्छा से राजाने कनकमजरी को छठवें दिन भी उसी महल में सोनेका अवसर दिया। रात्रि होते ही कनकमजरी मदनिका सहित महल में आगई और राजा भी आकर सो गया। कलकी शकाका उत्तर देनेके लिये उसने मदनिका से कहा कि जिस व्यक्तिने भूमिगृह में रहेते हुए भी "रात्री है" ऐसा जाना वह राति अधा था। कनकमजरीने इसके बाद एक दूसरी कथा कही जो इस प्रकार है—

सौवीर देश में सिन्धुपुर नामका एक नगर था। वहां सुद्युम्न

કે ઇને પૂછયુ કે અત્યારે દિવસ છે કે રાત છે? આમાથી એકે કહ્યુ કે રાત્રી છે આ વાત સાભળીને મદનિકાએ કહ્યુ, ભૂમિની અદર રહેલ આ સોનીએ કઈ રીતે જાણ્યુ કે, આ સમય દિવસને બદલે રાત્રીનો છે? પૂછવામા આવેલ એ વાતનો કાલે ઉત્તર આપવાનુ કહીને કનકમજરી સુવા ચાલી ગઈ અને મદનિકા પણ પોતાના સ્થાને જઈને સુઈ ગઇ આનો ઉત્તર સાભળવાની ઈચ્છાથી રાજાએ કનકમજરીને છઠે દિવસે પણ પોતાના શયનગૃહમા આવવાનો અવસર આપ્યો રાત્રી થતા જ કનકમજરી મદનિકા સાથે પહોચી ગઈ રાજા પણ આવીને સુઇ ગયા આગલા દિવસની શકાનો ઉત્તર મદનિકાને આપતા કનકમજરીએ કહ્યુ કે, જે માણસે ભૂમિગૃહમા રહેતા હોવા છતા પણ "રાત્રી છે" એમ જાણ્યુ તે રતાધળો હતો, કનકમજરીએ આ પછી એક બીજી કથા કહી તે આ પ્રમાણે છે—

સૌવીર દેશમા સિધુપુર નામનુ એક નગર હતુ જ્યા સુદ્યુમ્ન નામના એક

मा कुरु, ऋद्धिगौरव मा कदापि विधेहि, सम्पद प्राप्तोऽपि निजा पूर्वामवस्था मा विस्मर। एते त्रपुमया अलङ्कारा जीर्णानि वसनानि च तव सन्ति। अन्यत् सर्व तु नृपस्य वर्तते। अतो रे जीव! गर्वमपहाय शान्तमना भव। यथा एतासा सपदा सुचिर भोक्ता भविष्यसि। अन्यथा तु राजा गले हस्त दत्वा दुःखिताङ्गीं शुनीमिव त्वा निष्कासयिष्यतीति। तस्यास्तच्चेष्टित दृष्ट्वा तद्द्वेषिण्योऽपरा राज्य एकदा रहसि स्थित राजानमुक्तवत्य'-नाथ! यद्यपि भवानस्मासु नि.स्नेहो जात, तथापि पति देवता वय त्वा विघ्नाद् रक्षामः। इतिमिषा सा हि प्रत्यह किञ्चिद्

नकर अकेले अपने आपको उच्चस्वर से इस प्रकार समझाने लगी- रे जीव! तू अभिमान मतकर। ऋद्धि का गौरव भूलकर भी कभी मतकर सपत्तिको पाकरके भी अपनी पहीलेकी अवस्था मत भूल। ये कथीर के आभरण एव जीर्णवस्त्र ही तेरे हैं। इनके सिवाय और सब राजा का है। इसलिये हे आत्मन! गर्वका परित्याग कर शातचित्त हो कि जिससे इन सम्पत्तियों का तू सुचिर काल तक भोक्ता बना रहे। नही तो राजा गला पकडकर गलिताङ्गी कुत्ती के समान तुझे यहा से बाहर निकाल देगा। इस प्रकारकी कनकमजरी की चेष्टा देखकर उससे विद्वेप रखनेवाली रानियों ने एक समय एकान्त में रहे हुए राजा से कहा-नाथ? यद्यपि आपका हमलोगों के प्रति स्नेह नही रहा है तो भी हमारे देवता तो आपही ह, पतिको हम देवता का स्थान प्रदान करने वाली हैं, अतः हम लोगों का कर्तव्य है कि हम आपकी विघ्न से

ઉચ્ચસ્વરથી આ પ્રકારે સમજાવતા હતી રે જીવ! તુ અભિમાન ન કર કદી પણ ભૂલાને રિદ્ધિનુ અભિમાન ન કરી શ - પત્તિને મેળવવા છતા પણ તુ તારી પહેલાની અવસ્થાને કદી ન ભૂલ આ કથીરના આભરણો અને જીર્ણ એવા વસ્ત્રો જ તારા છે આ સવાયનુ બીજુ બધુ રાજાનુ છે માટે હે આત્મા! ગર્વનો પરિત્યાગ કરી શાત ચિત્તવાળો થા, કે જેથી તુ આ સપત્તિને લાબા કાળ સુધી ભોગવી શક નહિતર રાજા તને ગળેલા અગવાળા કુતરાની માફક તારુ ગળુ પકડીને બહાર કાઢી મૂકશે આ પ્રકારની મદનમજરીની ચેષ્ટા જોઈને એના તરફ દ્વેષ રાખવાવાળી રાણીઓએ એક સમય એકાન્તમા બેઠેલા રાજાને કહ્યુ,-નાથ! જો કે, હવે આપને અમારા તરફ નેમ રહ્યો નથી, છતા આપ અમારા દેવજ છો આથી દેવના સ્થાને પતિને માનનારી એવી અમો સવનુ કર્તવ્ય છે કે, અમો આપનુ વિઘ્ન સમયે રક્ષણ કરીએ આપે જેને રહુશ્રી પ્રિયરાણી - બેઠ

राजा तन्स्थानलङ्कारान् द्रष्टुं समर्थोऽभूत्। इति।' एवं विविधविचित्राख्यानैः सा षण्मासान् यावद्राजानं व्यामोह्य अन्यासां पूर्वोत्पन्नानां राज्ञीनां वारकं स्वयं गृहीतवती। राजाऽपि तस्यामेव भृशमनुरक्तः स नृपाङ्गनानां अन्यस्या राज्ञी कुशलमपि नो पृच्छति। ततस्ताः कुपितास्तस्याश्छिद्रान्वेषणपरायणा जाताः। ता हि परस्परमेवमूचुः—नूनं भूपस्तया वशीकृतः। अतः कुलीना अस्मान् परिहाय स तस्यामेवानुरक्तोऽस्ति। अस्माभिः सह विस्मृत्यापि भाषणं न करोति। इति। सा चित्रकारपुत्री प्रतिदिवसं मध्याह्नकाले भूमिगृहे स्थित्वा पितृदत्तानि वस्त्राभरणानि परिधाय एकाकिनी स्वमात्मानमुच्चैरेवमबोधयत्—रे जीव! मद

से उसके भीतर के समस्त आभूषण राजाको स्पष्ट दिखलाई दिये होंगे। इस प्रकार के विचित्र आख्यानों से उसने ६ महीने का समय व्यतीत कर दिया। राजा उसके इन आख्यानों से बडे प्रसन्न होते हुए अन्य रानियों की कुशलता भी नहीं पूछते थे। इससे वे सब की सब रानिया अप्रसन्न होती हुई राजाकी अत्यन्त प्रिय बनी हुई इस कनकमंजरी के छिद्रान्वेषण करनेका अवसर देखने लगी। सबने एकमत हो कर इस प्रकार का बदला लेना ही अच्छा समझा। सबने मिलकर विचार किया कि निश्चय से इसने राजाको वशमें कर लिया है, इसी लिये हमारी जैसी कुलीन नारियों का परित्याग कर राजा उसी एक चित्रकार की पुत्रीमे अनुरक्त हो गया है, और हमसे भूलकर के भी बात चीत नहीं करना चाहता है।

उधर चित्रकारकी पुत्री कनकमंजरी भूमिगृह मे बैठकर मध्याह्न काल के समय प्रतिदिन पिता द्वारा प्रदत्त वस्त्र एवं आभरणोंको पहि-

હોવાને કારણે તેની અંદર રહેલા આભુષણો રાજાને સ્પષ્ટ દેખાતા હતા. આ પ્રમાણે વિચિત્ર આખ્યાનો દ્વારા તેણે છ મહિનાનો સમય વ્યતીત કરી દીધો. રાજા તેની આ પ્રકારની વાતોથી ખૂબજ પ્રસન્ન થયો. બીજી રાણીઓની કુશળતા પણ રાજાએ આ સમય દરમ્યાન ન પૂછી આથી રાજાને અપ્રિય બનેલી એવી બધી રાણીઓ મદનમંજરીની કુથલી કરવામા તેમજ તેની ઝીણામા ઝીણી નબળી કડી શોધવાના કામમા લાગી ગઈ. સઘળી રાણીઓએ એક સાથે મળીને એનો બદલો લેવાનો નિશ્ચય કર્યો. એકઠી મળીને બધી રાણીઓએ વિચાર કર્યો કે, ચોક્કસ આણે રાજાને વશ કરી લીધો છે. આથી અમારા જેવી કુલીન સ્ત્રીઓનો ત્યાગ કરીને રાજા એક ચિત્રકારની પુત્રીમા અનુરક્ત થઈ ગયેલ છે, અને અમારી સાથે વાતચીત પણ કરતો નથી.

આ તરફ ચિત્રકારની પુત્રી કનકમંજરી ભૂમિગૃહમા બેસીને મધ્યાહ્ન કાળના સમયે પિતા તરફથી આપવામા આવેલા આભૂષણોને પહેરીને રોજ પોતાનીજાતને

मानापमानेसमत्वं च दृष्ट्वा मम मनोऽस्यां सातिशयं प्रमोदति। साधारणा हि स्वल्पमपि सम्पदं प्राप्य मदोन्मत्ता भवन्ति। अहो! इयं तु मद्दत्तां राज्य सम्पदं प्राप्यापि मदं न करोति। अस्यास्तु सर्वे गुणा एव सन्ति। तथाप्येता सपत्न्यो मात्सर्यादस्या दोषमेव पश्यन्ति। उक्तंचापि—

''"जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवम्,
शूरे निर्घृणता ऋजौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे।
तत्को नाम गुणो भवेत्स गुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः॥ इति'

देखो तो सही इसकी बुद्धि कैसी शुभ है? इसका विवेक एवं निपुणता तथा मान और अपमानमें समता देखकर मेरा मन इसमें बहुत अधिक अनुरागयुक्त बनकर प्रसन्न हो जाता है। जब कि साधारण जन स्वल्प भी विभूति को पाकर मदोन्मत्त हो जाया करते हैं तब यह मेरे द्वारा प्रदत्त राज्यविभूति को प्राप्त करके भी आश्चर्य है थोडा सा भी अभिमान नहीं करती है। इसमे तो जितनी भी बाते हैं वे सब गुणरूप ही हैं। परन्तु दुःख है उन इसकी सपत्नियों की बुद्धि पर जो मात्सर्य से इसमे दोष ही देखती हैं। कहा भी है—

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवम्,
शूरे निर्घृणता ऋजौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे,
तत्को नाम गुणो भवेत्स गुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः॥१॥

લાગ્યા કે, જુઓ તો ખરા! આની બુદ્ધિ કેવી શુભ છે, આનો વિવેક અને નિપુણતા તથા માન અને અપમાનમાં સમતા જોઇને મારૂં મન એનામાં અધિક અનુરાગયુક્ત બની જાય છે જ્યારે સાધારણ માનવી થોડી પણ વિભૂતિ મળતા મદોન્મત્ત બની જાય છે ત્યારે આ તો મારા તરફથી આપનામાં આવેલ રાજ્ય સંપત્તિ ને પ્રાપ્ત કરવા છતાં પણ આશ્ચર્ય છે કે, જરા સરખું પણ અભિમાન કરતી નથી આ તો સંપૂર્ણ ગુણની ખાણ જ છે પરંતુ દુઃખની વાત છે કે, આ બધી રાણીઓ આના તરફ વિના કારણ જ ઇર્ષા કર્યા કરે છે અને એનામાં દોષજ જોયા કરે છે કહ્યું પણ છે—

जाड्यं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवम्,
शूरे निर्घृणता ऋजौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे,
तत्को नाम गुणो भवेत्स गुणिनां यो दुर्जनैर्नाङ्कितः॥१॥

वशीकरण कुरुते। अहो! तया वशीकृतो भवान न तत् फश्चिदपि जानाति। 'सा किं करोति' इति राज्ञा पृष्टास्ताः प्राहुः—सा हि प्रतिदिनम मध्याह्ने भूमि गृहे स्थित्वा द्वार पिधाय मलिनवस्त्राणि त्रपुमयाभरणानि च परिधाय किमपि गुणगुणायते। तासा वचन श्रुत्वा नृप प्रच्छन्नो भूत्वा तस्याश्चेष्टित वीक्षितु तद् गृहे स्थितः। तत्र ता पूर्वावस्थमात्मान प्रबोधयन्तीं दृष्ट्वा नितरा तुष्टो भूपो मनस्यचिन्तयत्—अहो। अस्याः कीदृश् शुभामतिर्वर्तते। अस्या विवेकित्व उत्तम

रक्षा करती रहें। आप जिसको सब से प्यारी मान रहे हो वह कनकमजरी प्रतिदिन आपको वशमें करने के लिये कुछ न कुछ किया ही करती है। आपको इस बात का पता नहीं है। कारण कि उसने आपको अपने वशमें कर लिया है। उनकी इस प्रकार बात सुनकर "वह क्या करती है" इस तरह से राजाने उनसे ज्यों ही पूछा तो वे कहने लगी—वह प्रतिदिन मध्याह्नकाल मे भूमिगृह के भीतर छुपकर और उसका दरवाजा बद करके पहिले तो मलिन वस्त्रों को पहिरती है, पश्चात् कथीर के आभूषणों को धारण कर न मालूम क्या२ गुणगुण करती रहती है। इस प्रकार उन रानियों के वचन सुनकर राजाने उसकी जांच करनी प्रारभ की। राजा भूमिगृह मे जाकर छिप गया और इसी अवस्थामे वह उनकी सभी चेष्टाएँ देखने लगा। उसने देखा 'कि' कनकमजरी पहिले की तरह अपने आपको प्रतिबोधित करती है। ऐसा देखकर राजा उस-पर और अधिक प्रसन्न हुआ। मनमे इसने विचार किया—अहो!

છે તે કનકમ જરી આપને વશ કરવા માટે રોજ કાંઈકને કંઈક કર્યા જ કરે છે આપને એ વાતનો ખ્યાલ પણ નથી કારણ કે, તેણીએ આપને પોતાના વશમા કરી રાખેલ છે રાણીઓની આ જાતની વાત સાભળીને રાજાએ "એ શુ કરે છે?" આ પ્રમાણે રાણીઓને પૂછ્યુ ત્યારે તે કહેવા લાગી કે, તે રોજ બપોરમા સમયે ભુમિગૃહની અદર છૂપાઈને, એનો દરવાજો બધ કરીને પહેલા તો મેલા કપડા પહેરે છે, પછી તે કથીરના આભૂષણોને પહેરીને મનમા કાંઈક ગણગણાટ કરતી રહે છે આ પ્રકારના રાણીઓના ઈર્ષાળુ વચનો સાભળીને રાજાએ એ વાતની તપાસ કરવાનુ શરૂ કર્યું તે ભુમિગૃહની અદર જઈને છૂપાઈ ગયો, અને કનકમજરીની સર્વે ચેષ્ટાઓને ધ્યાન પૂર્વક જોવા લાગ્યો તેણે જોયુ તો કનકમજરી પહેલાની માફક પોતાની જાતને પ્રતિબોધિત કરી રહેલ હોવાનુ તેને જણાયુ આથી, રાજાનો તેના ઉપર ખૂબજ વધુ પ્રમાણમા સ્નેહ વધ્યો અને મનમા ને મનમા તે વિચારવા

माला राज्ञी कुक्षौ पुत्रीत्वेन समुत्पन्ना। तस्या कनकमाला इति नाम कृतम्। रूपाढ्यां प्राप्तयौवनां तां विलोक्य मोहितो वासवनामा विद्याधरस्तां हृत्वाऽस्मिन् पर्वते समानीतवान्। विद्यया सद्योनिर्मितेऽस्मिन् प्रासादे तां विमुच्य विवाहार्थं वेदिकां विधाय यावत्तया सह विवाहं कर्तुमिच्छति, तावत्तस्याः कनकतेजोनामा ज्येष्ठ भ्राता तां गवेषयन् क्रुधा ज्वलन् अत्रागत्य युद्धार्थं तं विद्याधरमाहूतवान्। ततो विद्याबलसम्पन्नौ तुल्यपराक्रमौ तौ युद्धं कर्तुं प्रवृत्तौ। अन्योऽन्यं शस्त्रास्त्रप्रहारेण जर्जरितशरीरौ तावुभावपि मरणं प्राप्तौ। ततो भ्रातृमरणशोकेन परमाकुला कनकमाला भृशं रुरोद। सा हि तयोर्मरणनिमित्तं स्वमा

तोरणपुर में दृढशक्ति नाम राजा थी गुणमाला रानी से पुत्रीरूप मे अवतरित हुई। माता पिताने इसका नाम कनकमाला रखा। यह विशिष्ट रूपराशि संपन्न थी। जब यह युवावस्थाको प्राप्त हुई तो इसको सर्वाङ्गसुन्दर देख कर वासव नामक कोई विद्याधर हरण करके इस पर्वत पर ले आया। उसने विद्याके प्रभाव से यहीं पर एक बडा ही सुन्दर महल बनाकर ज्यों ही विवाह के निमित्त वेदिका तयार की इतने मे इसका उस-का कनक तेज नामका ज्येष्ठ भ्राता उसकी खोज करता हुआ क्रुद्ध हो कर यहां आ पहुँचा। उसने उस विद्याधर को युद्ध के लिये आमन्त्रित किया। दोनों ही परस्पर मे युद्ध करने लगे। विद्या एवं बल मे कोई कम न था, इसलिये लडते २ दोनो ही मर गये। इन दोनो का शरीर शस्त्र एवं अस्त्रो के प्रहारो से बिलकुल क्षत विक्षत बनचुका था। जब कनकमाला को यह खबर मिली कि मेरा भाइ मर गया

દ્દઢ શક્તિ નામના રાજાની ગુણમાળા રાણીની કૂખે પુત્રી રૂપે અવતરી માતા પિતાએ એનુ નામ કનકમાળા રાખ્યુ, એ ખૂબજ સ્વરૂપવાન હતી જ્યારે તે યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈ ત્યારે એ સર્વાંગસુંદર રૂપસુંદરીને જોઇને વાસવ નામનો વિદ્યાધર તેનુ હરણ કરી ગયો હરણ કરીને તેને આ પર્વત ઉપર લઈ આવ્યો તેણે વિદ્યાના પ્રભાવથી આ સ્થળે એક સુંદર મહેલ બનાવ્યો આ પછી એ વિદ્યાધરે કનકમાળા સાથે લગ્ન કરવા વેદિકા બનાવી પરંતુ એટલામા એ કનકમાળાનો કનકતેજ નામનો મોટોભાઇ તેને શોધતો શોધતો ત્યાં આવી પહોચ્યો, તેઓ બન્નેએ સામ સામે યુદ્ધ કર્યું, વિદ્યા અને બળમા બન્નેમાથી કોઇ ઓછુ ન હતુ આથી લડતા લડતા બન્નેનુ મૃત્યુ થયુ એ બન્નેના શરીર શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોના પ્રહારોથી તર્દન ચારણી જેવા બની ગયા હતા કનકમાળાને પોતાના ભાઇના મૃત્યુની જાણ થઈ ત્યારે તે ખૂબ વિલાપ કરવા લાગી અને એ બન્નેના મૃત્યુનુ કારણ પોતે જ છે

एवं विचार्य भूपतिस्तां पट्टराज्ञीं चकार। युक्तमेतत्-जनो हि गुणैर्महत्त्वमाप्नोति न तु कुलादिभिः। एकदा भूपतिर्विमलचन्द्राचार्यसमीपे कनकमञ्जर्या सह श्रावकधर्मं स्वीकृतवान् एवं भूपतिना सह बहुतरं कालं क्रमात्परिसमाप्य चित्रकारपुत्री कनकमञ्जरी मृत्वा देवलोकं गता। धर्माराधका हि स्वर्गं एव गच्छन्ति। ततः सा तच्च्युता वैताढ्यतोरणपुरे दृढशक्तिनाम्नो महिपतेर्गृह-

दुर्जनों का तो यह स्वभाव ही होता है कि वे जो लज्जाशील व्यक्ति होता है उसको मूर्ख, तथा व्रत में रुचि रखनेवाले को कपटी, शुचि व्यक्ति को धूर्त, शूरवीर को निर्दय, सरल को बुद्धू, प्रिय बोलने वाले को दीन, तेजस्वी को अभिमानी, वक्ता को वावदूक (बकवादी) एवं स्थिर को अशक्त मानते है। भला! ऐसा कौनसा गुणिजनों का गुण अछूता बचा है जो इन दुर्जन लोगोंने कलङ्कित नहीं किया हो।

ऐसा विचार कर राजाने उस कनकमजरीको पटरानी बना दिया। सच है गुणोंकी ही प्रतिष्ठा होती है कुलादिक की नहीं। एक दिनकी बात है राजा और कनकमजरी विमलचन्द्राचार्य को वदना करने के लिये गये। वहा दोनोंने श्रावकधर्म को स्वीकार किया। दोनोंने श्रावक धर्म को बहुत कालतक सम्यक् रीति से पाला। अन्त में चित्रकार की पुत्री कनकमजरी इसके प्रभाव से मरकर देवलोक मे उत्पन्न हुई। धर्मके आराधक वैमानिक देव ही होते हैं। वहा से चवकर फिर वह वैताढ्य

દુર્જનોનો તો એ સ્વભાવ જ હોય છે કે તેઓ જે લજ્જાવાન વ્યક્તિ હોય છે એને મૂર્ખ, તથા વ્રતમા રૂચિ રાખનાર વ્યક્તિને કપટી, નિષ્કપટ વ્યક્તિને ધૂર્ત, શૂરવીરને નિર્દય, સીધી સાદી વ્યક્તિને કમ અક્કલ, સદા પ્રિય બોલનાર વ્યક્તિને પામર, તેજસ્વીને અભિમાની, વક્તાને બકવાદ કરનાર તેમજ સ્થિરને અશક્ત માને છે ભલા ગુણી જનનો એવો કયો ગુણ છે કે જેને દુર્જન લોકોએ કલંકિત ન કર્યો હોય

આ રીતે વિચારીને રાજાએ કનકમજરીને પટ્ટરાણી બનાવી દીધી એ વાત સત્ય જ છે કે, ગુણોની જ પ્રતિષ્ઠા થાય છે, કુળાદિકની નહી એક દિવસની વાત છે કે, રાજા અને કનકમજરી મુનિ વિમલચન્દ્રાચાર્યને વદના કરવા માટે ગયા ત્યા તેમણે બન્નેએ શ્રાવક ધર્મનો સ્વીકાર કર્યો આ પછી તેમણે શ્રાવક ધર્મને ઘણા કાળ સુધી સારી રીતે પાળ્યો અતે ચિત્રકારની પુત્રી કનકમજરી ધર્મના પ્રભાવથી મરીને દેવલોકમા ઉત્પન્ન થઈ ધર્મનુ આરાધન કરનાર વૈમાનિક દેવ જ થાય છે ત્યાનુ આયુષ્ય પૂરૂ કરીને ત્યાથી ચવીને વૈતાઢ્ય તોરણપુરમા

संसारे नास्ति किमपि स्थिरं वस्तु। सर्वं हि क्षणभङ्गुरम्। अतो दुःखाढ्येऽत्र संसारे विवेकिना को रागः? सर्वं परित्यज्य धर्म एवाश्रयणीयः। स एव जन्मान्तरेऽपि सहगामी। दारपुत्रादयस्तु न सहगामिनः। इत्येवं विचार्य वैराग्य मापन्नो विद्याधरराजो दृढशक्तिः स्वयं लोचं कृत्वा शासनदेवताप्रदत्तं सदोरक-मुखवस्त्रिकारजोहरणादिकं मुनिवेषं धृत्वा प्रव्रजितः। ततो मायां परिहृत्य स देवः कनकमालया सह तं मुनिं वन्दितवान्। कनकमाला च भ्रातुर्वधवृत्तान्तं

नित्य नहीं है। जो कुछ भी हम देखते हैं वह सब अस्थिर एवं क्षणभंगुर है। इसलिये जब दुःखाकीर्ण इस संसार में विवेकियों को अनुराग करने जैसी कोई बात नहीं है तब भलाई जीव की इसी में है कि वह इस समस्त क्षणभंगुर पदार्थों का परित्याग कर एक मात्र धर्मका आश्रय करे कारण कि चलाचल इस संसार मे एक धर्म ही स्थिर है। जीवके साथ ये कोई भी संयोगी पदार्थ परभव मे जानेवाले नहीं है। यदि साथ जानेवाला है तो वह एक धर्म ही है"। इस प्रकार के विचार में एकतान बने हुए विद्याधराधीश दृढशक्तिने अपना लोच स्वयं ही करके एवं शासनदेवता द्वारा प्रदत्त सदोरकमुखवस्त्रिका एव रजोहरण आदि मुनिका वेष लेकर दीक्षा धारण करली। इस प्रकार दृढशक्ति के मुनि होते ही उस देवने अपनी देवशक्ति को समेटकर कनकमाला के साथ उसमुनि को वंदना की। कनकमालाने भी मुनिको अपने भाईके मरण का समस्त वृत्तान्त यथावत् कह सुनाया। सुनकर

અનિત્ય અને ક્ષણભંગુર છે. આ કારણે દુઃખથી ભરેલા આ સંસારમાં વિવેકીજનોએ અનુરાગ કરવો ન જોઇએ. એમાંજ જીવની ભલાઈ છે. આથી આ સઘળા ક્ષણભંગુર પદાર્થોનો પરિત્યાગ કરી એક માત્ર ધર્મનો જ આશ્રય કરવો જોઈએ. કારણ કે, "ચલવિચલ એવા આ સંસારમાં જો કોઇ સ્થિર હોય તો તે એક માત્ર ધર્મ જ છે. જીવની સાથે કોઈ પણ સંયોગી પદાર્થ પરભવમાં જઇ શકતો નથી. પરંતુ જો સાથે જઇ શકે તેવું કાંઇ હોય તો તે એક માત્ર ધર્મ જ છે." આ પ્રકારના વિચારમાં એકરૂપ બની ગયેલા વિદ્યાધરાધીશ દૃઢશક્તિ રાજાએ પોતાના હાથથી જ પોતાના વાળોનું લુંચન કર્યું અને શાસન દેવતા તરફથી આપવામાં આવેલ દોરાવાળી મુખ વસ્ત્રિકા અને રજોહરણ આદિ મુનિનો વેશ લઇને દીક્ષા ધારણ કરી. આ પ્રકારે દૃઢશક્તિએ મુનિવેશનો અંગિકાર કરતા જ એ દેવે પોતાની દેવશક્તિને સમેટી લીધી. આથી કનકમાલા જાગૃત બની. જાગૃત થઇને તેણે મુનિને વંદના કરી ઉપરાંત ભાઇના મૃત્યુની સઘળી હકીકત કહી સંભળાવી. આ વાત સાંભળીને મુનિરાજે કહ્યું કે,

स्मान बहुशा निनिन्द। तस्मिन्नवसरे कश्चिद् व्यन्तरो देवः समागत्य ता प्रेम्णा प्राह—वत्से ! त्वं मम पुत्र्यसि। खेदं मा कुरु। ततस्तस्मिन्नेव तत्र तत्तातस्तामन्वेषयन् समागतः। तमायातं दृष्ट्वा स व्यन्तरो देवः स्वप्रभावेण तां कनकमालां मृतामिवाकरोत्। अथ दृढशक्तिः पुत्रीं पुत्रं च मृतं दृष्ट्वा मनस्येवं चिन्तयन्—नूनं परस्परप्रहारेणैतौ कनकतेजोवासवौ मृतौ, म्रियमाणेन वासवेन कनकमाला मारितेति। ततो मृतांस्तान्। निरीक्षमाणस्य तस्य हृदये संसारानित्यत्वविषये विचारः समुत्पन्नः। अहो ! संसारस्यानित्यता। अस्मिन्

है तब उसने बहुत अधिक विलाप किया। इन दोनोंकी मृत्युका कारण अपने को मानकर कनकमाला ने अपनी बहुत अधिक निंदा की इसी समय कहते हैं कि वहां पर एक व्यन्तर देव आया और उसने कनकमाला से बडे ही प्रेम के साथ कहा—वत्से तुम मेरी पुत्री हो। यह समय तुम्हारे खेद करनेका नहीं है। जब व्यन्तरदेव इस तरह से कनकमाला को समझा रहा था कि इतने में ही उसका पिताभी उसकी तलाश करता हुआ वहां आ पहुँचा। पिताको देखते ही व्यन्तर देवने अपने प्रभावसे कनकमाला को मृततुल्य बना दिया। दृढशक्तिने ज्यों ही यह सब देखा अर्थात् पुत्र को वासवको एवं कनकमाला पुत्रीको मरे हुए देखे तो उसके मनमें विचार आया कि निश्चय से वासव और कनकतेज परस्पर के प्रहार से ही परलोक पहुँचे है। तथा मालूम पडता है कनकमालाको वासवने पहिले से मार दियाहै। इस प्रकार की विचारधारा मे प्रवाहित हुए दृढशक्तिको उसी क्षणसंसार की अनित्यता के विषयमे विचार जागृत हो गया—वह सोचने लगा—'देखो संसार की अनित्यता इस मे कोई भी पदार्थ

એમ માનીને કનકમાળા પોતાની જાતને ખૂબજ નિંદવા લાગી એજ સમયે એક વ્યતરદેવ એ સ્થળે આવી પહોચ્યો અને તેણે કનકમાળાને ઘણાજ પ્રેમથી કહ્યુ કે, તુ મારી પુત્રી છો બનતવા કાળ બની નેજ રહે છે એનો ખેદ કરવો વૃથા છે, વ્યતરદેવ આ પ્રકારે તેને સાત્વન આપી રહ્યા હતા એજ સમયે તેની શોધ ખોળ માટે નિકળેલ તેના પિતા પણ ત્યા આવી પહોચ્યા, આથી વ્યતરદેવે પોતાની શકિતના પ્રભાવથી કનકમાળાને મરી ગઈ હોય તેમ બનાવી દીધી દૃઢશકિત રાજાએ આ બધુ જોયુ, પોતાના પુત્ર અને પુત્રીને તેમજ વિદ્યાધરને મરેલી હાલતમા જોયા ત્યારે તેણે મનમા વિચાર કર્યો કે, ખરેખર વાસવ અને કનકતેજ પરસ્પરના પ્રહારોથી જ પરલોકમા પહોચેલ છે, પરંતુ વાસવે કનકમાળાને તો પહેલેથી જ તેણે મારી નાખેલ છે આ પ્રકારનો વિચાર ધારાથી રાજા દૃઢશકિતના દિલમા એકાએક આ સંસાર પ્રત્યે વૈરાગ્ય જાગી ઉઠયો આથી તે વિચારવા લાગ્યા કે, જુઓ ? આ સંસારની અનિત્યતા આમા કોઈ પણ પદાર્થ નિત્ય નથી જે દેખાય છે એ બધુ

पुत्री। तस्मिन्नेव क्षणे भवन्तमागतं वीक्ष्य मया चिन्तितं यद्-भवानिमां गृहीत्वा गमिष्यति। तदा ममानया सह वियोगो भविष्यतीति। ततोऽहमिमां मायया शवरूपां कृत्वा त्वां दर्शितवान्। अतो हे मुने! क्षन्तव्यो ममापराधः। इति व्यन्तरवचनं श्रुत्वा मुनिः प्राह-भो देव! मम प्रव्रज्याग्रहणे साहाय्यमेव त्वया कृतम्। अतस्त्वमुपकारकोऽसि। त्वत्प्रसादादेव संसारपङ्कादुद्धृतोऽस्मि। एवम भिधाय दृढशक्तिविद्याधरमुनिर्विहारं कृतवान्। तदा कनकमालाऽप्यात्मनो जन्मा

मैंने ज्यों ही इसको दुःखित देखा तो समझाया और धैर्य बधाया- इसको देखते ही जब मेरा चित्त सहजस्नेह से इस में करुणा से आर्द्र हो गया तो मैंने इसका उपयोग देकर विचार किया-उससे मुझे पता पडा कि यह तो मेरी पूर्वभवकी पुत्री है। इसी समय आप भी यहां आ पहुँचे अब आपको देखते ही मैंने इसको अपनी देवशक्ति द्वारा इस विचार से कि आप इसको लेकर अपने स्थान पर चले जावेंगे, तब मुझे इसका वियोग सह्य नहीं होगा इस लिये इसको मैंने मृततुल्य बनाकर आपको दिखलाया। अतः हे मुनिराज! आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें। इस प्रकार व्यन्तरदेव के वचन सुनकर मुनिने कहा-हे देव! मुझे तो आपने दीक्षा ग्रहण में सहायता ही की है, इसलिये आप मेरे उपकारी हैं। आपके प्रसाद से ही मैं इस संसार कीचड से पार हो सका हूं! इस प्रकार कहकर दृढशक्ति विद्याधर मुनिराज वहां से विहार कर गये। कनकमालाने भी देव के मुख से

આ સમયે મે જ્યારે તેને દુખી હાલતમા જોઇ ત્યારે તેની પાસે આવીને તેને ધીરજ આપી વળી આને જોતા જ જ્યારે મારા ચિત્તમા સ્નેહ જાગૃત બન્યો ત્યારે મે જ્ઞાનના ઉપયોગથી વિચાર કર્યો ત્યારે મને જણાયુ કે, આતો મારી પૂર્વ ભવની પુત્રી છે આ સમયે આપ પણ અહીં આવી પહોચ્યા આપને આવતા જોઇને મને મનમા વિચાર આવ્યો કે, આપ આને લઇને અહીંથી ચાલ્યા જશો આથી મારાથી એનો વિયોગ સહી શકાશે નહીં આવુ વિચારીને મે મારી દેવીશક્તિથી તેણીને મરણ પામેલી હાલતમા તમોને બતાવી હતી માટે હે મુનિરાજ! આપ મારા એ અપરાધની મને ક્ષમા આપો આ પ્રકારના વ્યંતરદેવના વચન સાભળીને મુનિરાજે કહ્યુ- હે દેવ! મને તો આપે દીક્ષા ગ્રહણ કરવામા સહાયતા કરેલ છે આ કારણે આપે તો મારા ઉપર ભારે ઉપકાર કર્યો છે આપનાથી જ તો હુ આ અપાર સંસાર સાગરના કાદવથી પાર થઇ શક્યો છુ આ પ્રમાણે કહીને દૃઢશક્તિ વિદ્યાધર મુનિરાજ ત્યાથી વિહાર કરી ગયા કનકમાળાએ પણ દેવના મુખેથી પૂર્વભવનો વૃત્તાંત સાભ

तस्मै निवेदितवती। ततो मुनिः प्राह-मयानु शवत्रयं दृष्टम्। ततो व्यन्तरो देवः प्राह-मुने! मया मायामभावेण तत्र शवत्रयं दर्शितम्। तन्नु मुनिः प्राह-कथं त्वया दर्शितम्। अथ देवः प्राह-मुने! शृणु तत्कारणम्। इयं कनकमाला माग्भवे क्षितिप्रतिष्ठितपुरवासिनश्चित्राङ्गदनाम्नश्चित्रकारस्य कनकमञ्जरी नाम दुहिताऽऽसीत्। तां तत्पुराधिपतिर्जितशत्रुर्नाम राजा परिणीतवान्। सा ऽन्यदा परमश्राविका जाता। मरणसमये पञ्चनमस्कारादिकं कृत्वा मृता सा देवलोके समुत्पन्ना। ततश्च्युता तत्र पुत्री जाता। स वृद्धचित्रकरो मृत्वा व्यन्तरदेवो जातः। सोऽहमेवास्मि। अहमधुनाऽत्रागत इमां दृष्ट्वा सद्जन्मस्नेहेनास्यां मार्द्रचित्तो जातः। तत उपयोगं दत्त्वा मया ज्ञातं-यदियं मम जन्मान्तरीया

मुनिराजने कहा-मैंने तो यहा अभी २ तीन मुर्दे देखे हैं। यह मुनि राज की बात सुनकर व्यन्तरदेवने कहा-हे मुने। मैंने देवशक्ति के प्रभाव से आपको तीन मुर्दे दिखलाये है। 'तुमने कैसे दिखलाये' इस प्रकार मुनिके पूछने पर व्यन्तरदेवने कहा-हे मुनिराज। इसका कारण मैं तुम से कहता हू सो सुनो-यह कनकमाला पहिले भव में क्षिति-प्रतिष्ठितपुर के निवासी चित्राङ्गद नामक चित्रकार की लडकी थी। इसका नाम कनकमजरी था। इसका विवाह् वहा के राजा जितशत्रु के साथ हुआ था। इसने वहा श्रावक के व्रतों का अच्छी तरह् से पालन किया था इसलिये परमश्राविका बन गई थी। मरण समय मे पचनमस्कार मत्रकी प्राप्ति से यह देवलोक मे उत्पन्न हुई। फिर वहा से चवकर अब आपकी पुत्री हुई है। इसका पूर्वभव का पिता वृद्ध चित्रकार भी मरकर व्यन्तरदेव हुआ है और वह मैं हू। इस समय वह समझकर

મે તો હમણા જ ત્રણ મડદા જોયા હતા મુનીરાજની આ વાત સાભળીને તે વ્યતર દેવે કહ્યુ કે, હે મુનિ! દૈવી શક્તિના પ્રભાવથી આપને મે ત્રણ મડદા બતાવેલ છે તમોએ કઈ રીતે બતાવ્યા' આ પ્રકારે મુનિના પૂછનાથી વ્યતરદેવે કહ્યુ કે, હે મુનિ! આનુ કારણ હુ તમને કહુ છુ તે સાભળો આ કનકમાળા પહેલા ભવમા ક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિતપુરના રહેવાસી ચિત્રાગદ નામના ચિત્રકારની પુત્રી હતી એનુ નામ કનકમજરી હતુ એનો વિવાહ ત્યાના રાજા જીતશત્રુની સાથે થયો હતો, ત્યા તેણે શ્રાવકના વ્રતોનુ સારી રીતે પાલન કર્યું જેથી તે પરમ શ્રાવિકા બની ગઈ મરણ સમયે પાચ નમસ્કાર મત્રના આરાધનથી એ દેવલોકમા ઉત્પન્ન થઈ અને ત્યાથી ચ્યવીન તે આપને ત્યા પુત્રી રૂપે અવતરેલ છે એનો પૂર્વભવનો પિતા કે જે વૃદ્ધ ચિત્રકાર હતો તે મરીને વ્યન્તરદેવ થયેલ છે અને તે હુ છુ

कारी भूत्वा तव सान्निधौ स्थास्यामि'। इत्युक्त्वा स देव सपरिवार कनक मालासमीपे स्थितवान्। हे स्वामिन्! सा कनकमालाऽहमेवास्मि। स मम पिता देवस्तु किञ्चित्कार्यवशाद् गतदिवसे मेरु गत ततो मत्पुण्याकृष्टो-मन्मनो नयनाम्भोजविकासनविभाकरस्त्वमपराह्णे इह समायात.। त्वां वीक्ष्य तातागमन प्रतीक्षितुमप्यसमर्थया मयाऽऽत्मा त्वदधीनीकृत.। स्ववृत्तान्तो मया तुभ्य निवेदित ।

इत्थ तद्वचन श्रुत्वा सिंहरथनृपोऽपि जातिस्मरणज्ञानवान् जात । अत्रान्तरे सुरवधूभि. सयुत. स सुरोऽपि तत्रागत.। राजा सिंहरथस्तमुच्चैरभि

तेरे पास नवनक यहां रहूंगा। इस तरह कहकर वह देव परिवार सहित यहीं पर ठहरा हुआ है। इस तरह–हे नाथ! जिस कनकमालाके विषय में मैंने आपसे कहा है वह कनकमाला मै ही हू तथा वह पिता का जीव देव कल ही यहा से कुछ कार्यवश सुमेरु पर्वत पर गया हुआ । इधर उसका जाना हुआ कि अपराह्ण काल मे मेरे पुण्य द्वारा आकृष्ट होकर मन और नयनरूपी कमल को विकसित करनेवाले आपका इधर आना हो गया। अब तो आपके दर्शन करके तातके आगमनकी प्रतीक्षा करने मे भी असमर्थ बनी हुई मैने अपने आपको आपके आधीन कर दिया है। यही मेरा वृत्तान्त है जो मैने आपसे निवेदित किया है।

इस प्रकार कनकमालाके वचन सुनकर के सिंहरथको भी जाति-स्मरण हो गया तथा इसी समय देवियों से समन्वित वह देव भी वहा आ पहुँचा। उसके आते ही सिंहरथने उसका खूब अच्छी तरह आदरसत्कार किया।

વશ વર્તી થઇને તારી પાસે ત્યા સુધી રહીશ આ પ્રમાણે કહીને તે દેવ પરિવાર સાથે અહી રોકાયેલ છે આ પ્રમાણે હે નાથ! જે કનકમાળાના વિષયમા મે આપને કહ્યુ, તે કનકમાળા હુ જ છુ અને એ પિતાનો જીવ ગઇ કાલે જ અહીથી કોઇ કારણ વશાત્ સુમેરૂ પર્વત ઉપર ગયેલ છે એક તરફથી એમનુ જવાનુ થયુ ત્યારે બીજી તરફથી મારા પૂર્વપુણ્યના ઉદયથી આપનુ અહી આગમન થયેલ છે આથી આપના દર્શન કરીને હુ મારા એ દેવ પિતાના આગમનની પ્રતીક્ષા કરવાનુ પણ ભૂલી ગઈ છુ મે મારી જાતને આપના ચરણમા અર્પણ કરી દીધી છે આ મારૂ વૃત્તાત છે જેનુ મે આપની સમક્ષ નિવેદન કર્યુ છે

આ પ્રકારના કનકમાળાના વચન સાભળીને સિહરથને પણ જાતિસ્મરણ જ્ઞાન થઇ આવ્યુ અને એજ સમયે દેવીઓને સાથે લઈને એ દેવ પણ એ સ્થળે આવી પહોચ્યા એમના આવતા જ સિહરથે ભારે વિનય પૂર્વક તેમને અભિવદન કર્યું

न्तरीय वृत्तान्तं श्रुत्वा सद्यः संजातजातिस्मृतिर्निजं प्राग्भवं दृष्टवती। सा तस्मिन् देवे-अयं मम पिता' इति बुद्ध्याऽत्यन्तस्नेहवती जाता। एकदा सा तं देवं पृष्टवती-तात! मम पतिः को भविष्यति? ततः सोऽवधिज्ञानेन ज्ञात्वा ताम् अवीत्-पुत्रि! तवजन्मान्तरीयः पतिर्जितशत्रुर्देवलोकाच्च्युतो दृढसिंहनाम्ना राज्ञः पुत्रत्वेन समुत्पन्नः। तस्य 'सिंहरथेति' नाम अस्ति। तद्वचनं श्रुत्वा कनकमाला तं देवं प्राह-तात! तेन जन्मान्तरीयपतिना सह मम मिलनं कदा भविष्यति? तदा स देवस्तामेवमुवाच-'पुत्रि! अश्वापहृतः स ते प्रियोऽत्र समागमिष्यति। अतस्त्वमुद्वेगं विहाय इह यथासुखं तिष्ठ। अहं च त्वदादेश

पूर्वभवका वृत्तान्त सुनकर जातिस्मृति हो जाने से अपने पूर्वभव स्पष्टरूप से देख लिये। और "यह मेरा पूर्वभवका पिता है" इस विचार से वह उस देवमें अत्यन्त स्नेहवती बन गई। एक समय उसने उस देव से पूछा तात! मेरा पति कौन होगा। अवधिज्ञान से विचार कर देवने उससे कहा पुत्रि! तुम्हारे जन्मान्तर का पति जितशत्रु ही तुम्हारा पति होगा। वह जितशत्रु मरकर देवलोक मे रहा, फिर वहा से आकर अब दृढसिंह राजा के वहा पुत्र हुआ है और उसका वहा नाम सिंहरथ पडा है। इस प्रकार देव के वचन सुनकर कनकमालाने पुनः देव से पूछा कि तात! उसके साथ मेरा मिलाप कब होगा? तब देवने कहा-बेटी! वह तेरा जन्मान्तरीय पति यहा घोडे द्वारा अपहृत होकर आनेवाला ही है अतः उद्वेग का परित्याग कर तू आनदपूर्वक यहा ही रह। मै भी आज्ञावशवर्ती होकर

जीने જાતિસ્મૃતિ થઈ આવવાથી પોતાના પૂર્વભવને સ્પષ્ટરૂપથી જોઈ લીધો અને "આ મારા પૂર્વભવના પિતા છે" આ વિચારથી તે એ દેવમા અત્યત સ્નેહ ધરાવનાર બની ગઈ એક સમય તેણે દેવને પૂછયુ તાત! મારા પતિ કોણ બનશે? અવધિજ્ઞાનથી વિચાર કરીને દેવે તેને કહ્યુ કે, પુત્રિ! તમારા પૂર્વભવના પતિ જીતશત્રુ જ તમારા પતિ થશે તે જીતશત્રુ રાજા મરીને દેવલોકમા ગયા ત્યાથી ચવીને હવે તે દૃઢસિહ રાજાને ત્યા પુત્રરૂપે અવતરેલ છે અને તેનુ નામ ત્યા સિહરથ રાખવામા આવેલ છે આ પ્રકારના દેવના વચન સાભળી કનકમાળાએ ફરીથી દેવને પૂછયુ કે, હે તાત! તેમની સાથે મારો મેળાપ કયારે થશે? ત્યારે દેવે કહ્યુ કે, પુત્રિ! એ તારા પૂર્વભવના પતિ અહી ઘોડાથી અપહૃત થઈને આવવાના છે આથી તુ ઉદ્વેગને તજી દઈને અહી આનદપૂર્વક રહે અને હુ પણ આજ્ઞા

सुता मन. प्रसाद नो प्राप्स्यति। अतस्त्वया तथा कार्यं यथेय मम सुता एकाकिनी नो भवेत्। अन्यथा मम वियोगेनेय प्रचुर कष्टमनुभविष्यति। एव मुक्त्वा सपरिवार' स देवो गत.। ततो राजा नगगतिस्तस्या धृतिहेतोस्त-स्मिन्नगे नव्य नगर निर्मापयति। लोकाश्च प्रलोभ्य तत्र निवासयति। तदनु तस्य गिरेरधस्ताद् बहून ग्रामान् निवासयति। स राजा न्यायेन राज्य पाल-यन् मानुष्यकान् कामभोगान भुञ्जान' श्रावकधर्ममनुपालयन् त्रिवर्गं साधितवान्।

अथान्यदा कार्त्तिकमासस्य पूर्णिमाया तिथौ राजा राजपाटिकार्थं चतु-र्विधसैन्यैः सह नगराद् बहिर्निर्गत। तदा स ताम्रवर्णैः पल्लवै सुशोभित

पडेगा। इसलिये आप से मेरा एक मात्र यही कहना है कि आप इस मेरी पुत्री को यहा अकेली नही छोडना। यह आपके साथ यद्यपि आना चाहे तो आ सकती है, परन्तु इस स्थान के सिवाय अन्यत्र इसका मन मुदित नही रह सकेगा, इसलिये इसका रहना यही श्रेय-स्कर है। अतः आप से ऐसा मुझे कहना पडा है। यदि आप इसको यहा अकेली छोड देगें तो यह मेरे विना प्रचुर कष्टों को भोगेगी। इस प्रकार कहकर वह देव अपने निज परिवार को साथ लेकर वहा से चला गया।

"कनकमाला को पिता के वियोग से दुःखका अनुभव न हो" इस विचार से नगगतिने वहीं पर उसकी प्रसन्नता निमित्त एक नवीन नगर वसाया, और उस मे लोगों को नाना प्रकार के प्रलोभन दिये। नगगतिने न्याय नीति से राज्य का परिपालन करते हुए धर्म, अर्थ, काम के साधन मे नीतियुक्त रहे। एक दिन राजा कार्तिक मास की

સમય સુધી રહેવુ પડશે આથી આપને મારૂ એ કહેવાનુ છે કે, આપ મારી આ પુત્રીને અહીં એકલી મુકીને ન જાવ એ આપની સાથે આવવા ચાહે તો આજે જ આવી શકે છે, પર તુ આ સ્થાન સિવાય તેનુ મન કોઈ પણ સ્થળે આન દમા રહી શકે તેમ નથી આ કારણે તેનુ આ સ્થળે જ રહેવુ ઠીક છે પર તુ જો આપ તેને આ સ્થળે એકલીજ છોડી જશો તો એને મારા વગર ભારે આઘાત પહોચશે આ પ્રમાણે કહીને તે દેવ પોતાના પરિવારને સાથે લઈને ત્યાથી ચાલ્યા ગયા

"કનકમાળાને પિતાના વિયોગથી દુ ખનો આઘાત ન લાગે' આ વિચારથી નગગતિ રાજાએ ત્યા તેની પ્રસન્નતા માટે એક નવુ નગર વસાવ્યુ લોકોને અનેક પ્રકારના પ્રલોભનો આપીને તેણે ત્યા વસાવ્યા નગગતિ રાજાએ રાજ્યનુ સારી રીતે પરિપાલન કરતા કરતા ત્રિવર્ગના સાધનમા કોઈ પ્રકારની કમીના ન રાખી એક દિવસ રાજા પોતાની સેનાને સાથે લઈ કાર્તિક મહીનાની પુનમના દિવસે નગરની

तुर्युगवत् कथंचिदतिवाह्य, पञ्चमे दिवसे तद्वियोगव्यथामसहमानो नभोमार्गेण तस्मिन्नेव पर्वते प्रियासमीपे समागतः। तत्र कतिचिद् दिनानि स्थित्वा पुनः स्वपुरे समागतः। एवं पुनः पुनर्नगे गतिं कुर्वाणं राजानं लोकाः 'नगगति' इतिनाम्ना व्यपदिष्टवन्तः।

अथान्यदा कनकमालया सविधे गतं राजानं स व्यन्तरदेवः प्रोवाच– राजन्! स्वस्वामिसुरपतेरादेशादहमधुनाऽस्मात्स्थानादन्यत्र गमिष्यामि। यद्यप्येनां विहाय नाहं गन्तुमुत्सहे। तथापि प्रभोरादेशस्य दुर्लङ्घ्यत्वान्नाहमत्र स्थातुं शक्तोऽस्मि। तत्र मम बहुकालक्षेपो भविष्यति। अस्मात्स्थानादन्यत्र मम

दिन समाप्त किये। उनको ये चार दिन यहां कनकमाला के बिना चार युग जैसे लगते रहे। ज्यों ही पंचम दिन प्रारंभ हुआ कि राजा कनकमाला की याद से आकृष्ट होकर वह शीघ्र ही आकाश मार्ग से चलकर उसी पर्वत पर उसके पास जा पहूँचे। वियोग की व्यथा शांत कर वह वहां कुछ दिनों और रहे। पश्चात् अपने नगर वापिस आ गये। इस प्रकार वे बार २ उस पर्वत पर आते जाते रहे। अतः पर्वत पर बार २ आने जाने के कारण लोगोंने उनका नाम नगगति रख लिया और इसी नाम से वह प्रसिद्ध हो गये।

एक दिन उस व्यन्तरदेवने कनकमाला के पास आये हुए राजा से कहा–राजन्! अपने स्वामी इन्द्र के आदेश से अब मैं इस समय यहां से जाना चाहता हूँ, यद्यपि मेरा जी कनकमाला को नहीं छोडना चाहता है तो भी स्वामी का आदेश दुर्लङ्घ्य होने से मैं अब नहीं रह सकूंगा। जहां मैं जाऊंगा वहां मुझे बहुत समयतक ठहरना

સતત ચાર દિવસ સુધી તેણે એકધારૂ રાજકાર્યમાં જ ચિત્તને પરોવી રાખ્યું. પાંચમાં દિવસે રાજાને કનકમાળાની યાદી આવી ગઈ અને તે આથી વ્યાકુળ બનીને તુરતજ આકાશ માર્ગેથી ચાલીને એ પર્વતની પાસે પહોંચ્યા. અને કનકમાળાને મળ્યા તેમજ વિયોગની વ્યથાને શાંત કરવા થોડા દિવસ તે ત્યાં રહ્યા. એ પછી પાછા પોતાના નગરમાં આવી ગયા. આ પ્રમાણે અવાર નવાર એ પર્વત ઉપર અવર જવર થતી રહી. તેના આ પ્રકારના અવરજવરના કારણે લોકોએ તેનું નામ નગગતિ રાખી દીધું અને એજ નામથી પ્રસિદ્ધ થયા.

એક દિવસ એ વ્યન્તર દેવે કનકમાળાની પાસે આવેલા એ રાજાને કહ્યું–રાજન્! મારા સ્વામી ઇન્દ્રના આદેશથી હવે હું અહીંથી જવા ચાહું છું, જો કે મારો જીવ કનકમાળાને છોડવા ચાહતો નથી તો પણ સ્વામીના આદેશથી હું બંધાયેલો છું જેથી હવે હું અહીં રહી શકું તેમ નથી. જ્યાં હું જઈશ ત્યાં મારે ઘણો

महकारतरोस्य सर्वं पत्रपुष्पादिक गृहीतम्। अत एवाय तरुर्नि श्रीको जात । यथा तस्करैर्गृहीत सर्वस्वो धनिको नि श्रीको भवति। तद्वचनमाकर्ण्य राजा चिन्तितवान्–अहो। श्रियश्चञ्चलत्वम्। योऽय सहकारतरु' स्वशोभया जनाना मनासि समाकृष्टवान, स एवाय क्षणान्नि.श्रीको जात.। यदेव पूर्वं तोष जनयति, तदेव क्षणान्तरे तद्विपरीत भाव जनयति, यथा शान्तिसमये भोजनम्। यथा हि बुद्बुदाटोपः सन्ध्यारागश्च स्थिरो न भवति, तथैव सर्वा अपि सम्पदो न स्थिरा इति तु निश्चितम्। यो मूढधीर्मोहेन सम्पद स्थिरा जानाति, मन्ये स मन्द. विद्युल्लतामपि शाश्वती जानाति। अत. क्षणभङ्गुरयाऽनया राजसम्पत्या

आपने ज्यो ही इसकी मजरी तोडी सो तोडते हुए आपको देखकर समस्त सैनिकोंने आपका अनुकरण किया, और सबने एक ही साथ इसके पत्र पुष्पादिको को तोड २ कर इसको इस स्थिति मे पहुँचा दिया। यह अब चोरों द्वारा लूटे गये धनवाले की तरह बिलकुल श्री–शोभा विहीन बन गया है। इस तरह मन्त्रीके वचन सुनकर राजाने विचार किया देखो श्री–शोभा की चचलता। जो आम्रवृक्ष कुछ समय पहिले अपनी शोभा से जनो के मनका आकर्षक बना हुआ था, वही इस समय नि श्रीक–शोभा रहित होने से लोगों के मनकी विरक्तिका कारण बन रहा है। जिस प्रकार पानीका बुद्बुद अथवा सन्ध्याराग स्थिर नही होता है, उसी प्रकार ससार के समस्त पदार्थ एव सम्पत्तियाँ स्थिर नही है। जो इनको स्थिर मानता है वह अज्ञानी है। यदि सम्पत्तिया आदि पदार्थ स्थिर मानी जावे तो फिर बिजली के चमत्कार को भी स्थिर मानने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिये। परन्तु ऐसा नही है। अतः समस्त ही जगत के पदार्थ अस्थिर एव विनाशशील हैं तब इनसे या राज्य सपत्ति से मुझे अब कोई काम नही है।

કહ્યુ–સ્વામિન્! આપે પ્રથમ વૃક્ષના મોરને તોડયો આથી આપને આ રીતે તોડતા જોઈને સૈનિકોએ પણ આપનુ અનુકરણ કર્યુ સઘળાએ મળીને તેના પુષ્પ પત્ર આદિ તોડીને તેને આ સ્થિતિએ પહોચાડેલ છે ચોરો દ્વારા લુટાયેલા ધનનો માફક એ બિલકુલ શ્રી શોભા વગરનુ બની ગયેલ છે આ પ્રકારના મત્રીના વચન સાભળીને રાજાએ વિચાર કર્યો કે, જુઓ! શ્રી–શોભાની ચચળતા જે આમ્રવૃક્ષ થોડાજ સમય પહેલા પોતાની શોભાથી માણસોના મનને આકર્ષી રહેલ હતુ તેજ વૃક્ષ અત્યારે શોભા વગરનુ બની જવાથી લોકોને એના તરફ જોવાનુ મન પણ થતુ નથી જેમ પાણીના પરપોટા અને સધ્યાનો રગ સ્થિર હોતા નથી આજ પ્રમાણે સસારના સઘળા પદાર્થો અસ્થિર અને વિનાશશીલ છે આથી આવી વિનાશશીલ રાજ્ય સપત્તિનુ હવે મારે કઇ કામ નથી અસ્થિરની સાથે કરવમા આવેલ પ્રીતિ વ્યય

मञ्जरीपुञ्जेन पिञ्जरित सत्फल छत्राकारमेक सहकारतरु ददर्श। तदनु राजा नगरगतिर्मङ्गलार्थ मनोहरस्य तस्याम्रवृक्षस्यैका मञ्जरीं गृहीतवान। ततः सर्वे सैनिकास्तस्य पत्रपल्लवमञ्जरीर्गृहीत्वा त सहकार दारुशेष कृतवन्त.। राजा च उद्यान गत्वा कियत्क्षणानन्तर ततः प्रतिनिवृत्तो मन्त्रिण पृष्टवान्-मन्त्रिन्। स कमनीय. सहकारतरु. क्वास्ते? ततो मन्त्री काष्ठशेष त सहकारतरु राजान दर्शयति। राजा पृच्छति-अयमेतादृशः कथ सजातः? मन्त्री प्राह-स्वामिन! पूर्वं भवताऽस्य तरोरेका मञ्जरी गृहीता। तदनु सर्वे सैनिकैर्भवन्तमनुकृत्य

पूर्णिमा के दिन चतुर्विध सैन्य को साथ में लेकर नगर से बाहर गये हुए थे। उन्होंने वहा एक आम्रवृक्ष देखा जो ताम्रवर्ण जैसे पल्लवों से सुशोभित एव मजरीपुञ्ज से पीला हो रहा था। यह देखने में छत्ता जैसा गोलाकार लगता था। राजाने मगलार्थ मनोहर उस आम्र वृक्ष की एक मजरी तोडली। इसको देखकर साथ के समस्त सैनिकोंने भी मजरी पत्ते आदि तोड २ कर उस वृक्षको बिलकुल निखन्ना-ठूठा बना दिया। राजा जब बगीचे से वापिस लौटे और उस हरेभरे आम्र-वृक्ष को निखन्ना-ठूठेरूप मे देखा तो उन्होंने उसी समय मत्री से पूछा-हे मत्रिन्। यह कमनीय आम्रका वृक्ष यहा इस समय नही दिखता है कहा गया। पहिले यहीं तो उसको देखा था। राजा की बात सुनकर मत्रीने कहा-महाराज! देखिये वही आम्रवृक्ष यह है। इस समय यह खाली ठूठरूप ही रह गया है। राजाने पुन मत्री से पूछा-इसकी यह दुर्दशा कैसे हो गई है? उत्तर देते हुए मत्रीने कहा-स्वामिन्। पहिले

બહાર ગયેલ હતા ત્યા તેમણે એક આબાનુ વૃક્ષ જોયુ જે ત્રાબાના રગના પાદડાથી શોભાયમાન અને મોરના આવવાથી પીળુ દેખાઇ રહ્યુ હતુ એ જોવામા છત્રી જેવા ગોળાકારનુ દેખાતુ હતુ રાજાએ ઉલ્લાસિત મનથી એ વૃક્ષના મોરની એક શાખા તોડી રાજાએ મોરની શાખા તોડી એ જોઈને સાથેના સૈનિકોએ પણ તેનુ અનુકરણ કરવા માડયુ તે ત્યા સુધી કે, તેનો મોર અનેપાદડા બધુ ય તોડાઈ ગયુ અને ઝાડને ઠૂઠૂ બનાવી દીધુ રાજા જ્યારે બગીચામા જઇને પાછા ફર્યા ત્યારે તેણે તે આમ્રવૃક્ષના ઠૂઠાને જોયુ ત્યારે તેણે મત્રીને પૂછયુ કે, હે રાજન્! એ ખીલેલુ આબાનુ વૃક્ષ જે અહીં હતુ તે કયા ગયુ? રાજાની વાત સાભળીને મત્રીએ કહ્યુ-મહારાજ! જુઓ આ સામે દેખાય છે એજ એ આબાનુ ઝાડ છે રાજાએ ફરીથી મત્રીને પૂછયુ-આની આવી દુર્દશા કઇ રીતે થઇ? ઉત્તર આપતા મત્રીએ

तथा—

मूलम्—सोवीररायवसहो, चइत्ताणं मुणी चरे।
उद्दायणो पव्वईओ पत्तो गइमणुत्तरं ॥४८॥

छाया—सौवीरराजवृषभः त्यक्त्वा खलु मुनिश्चरन्।
उदायनः प्रव्रजितः, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥४८॥

टीका—'सोवीर' इत्यादि।

सौवीरराजवृषभ'-सौवीरस्य=सौवीरदेशस्य राजा-सौवीरराजः, स चासौ वृषभ इव इति समासः, सौवीरराज्यधुराधरणसमर्थ इत्यर्थः, एतादृशो वीतभयपत्तनाधीशो राजा उदायनः सर्वं राज्यं त्यक्त्वा प्रव्रजितो मुनिरुदायनः उग्रं तपश्चरन् अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा मोक्षरूपा गतिं प्राप्तः ॥४८॥

॥ अथ उदायनराजर्षिकथा ॥

आसीदत्र भरतक्षेत्रे सिन्धुसौवीर देशे वीतभयनामकं पत्तनम्। तत्रासी दुदायननामा पुण्यभागी राजा। स हि शौर्यौदार्यधैर्यादिभिः सहजैर्गुणैः सम

तथा—'सोवीररायवसहो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सोवीररायवसहो-सौवीरराजवृषभः) सौवीरदेश के सर्वोत्तम राजा (उद्दायणो-उदायनः) उदायनने (चईत्ताण-त्यक्त्वा) समस्त राज्य का परित्याग करके (पव्वइओ-प्रव्रजितः) मुनिदीक्षा अंगीकार की और उसी (मुणीचरे-मुनि चरन्) मुनि अवस्था मे रहते हुए उन्होंने (अणुत्तरा गइ पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट गति मुक्ति को प्राप्त किया।

उदायन राजर्षि की कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र मे सिन्धु सौवीर नामका एक देश है, उस में वीतभय नामका एक पत्तन था। उसका राजा उदायन थे। ये राजा

तथा—"सोवीररायवसहो" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—सोवीररायवसहो-सौवीरराजवृषभ સૌવીર દેશના સર્વોત્તમ રાજા उद्दायणो-उदायन ઉદાયને चइत्ताण-त्यक्त्वा સઘળા રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને કરીને पव्वइओ-प्रव्रजित મુનિદીક્ષા અંગીકાર કરી અને मुणीचरे-मुनि अचरत એજ મુનિ અવસ્થામાં રહેતા રહેતા તેમણે સર્વોત્કૃષ્ટ એવી ગતિ મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી

ઉદાયન રાજર્ષિની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભરત ક્ષેત્રના સિંધુ સૌવિર નામનો એક દેશ છે તેમાં વીતભય નામનું એક પટ્ટણ હતું તેના ઉદાયન નામે રાજા હતા એ રાજા ખૂબ જ પુણ્યશાળી હતા

नास्ति मे प्रयोजनम्। एवं विमृश्य सजातवैराग्यश्चतुर्थः प्रत्येकबुद्धो नग गति स्वहस्तेन लोचं कृत्वा शासनदेवतादत्त सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिकं साधुवेषं परिधृत्य पृथिव्यामप्रतिबद्धविहारेण विहरमाणोऽन्ते सिद्धिगतिं प्राप्तः।

॥ इति नगगतिराजकथा ॥

करकण्डू–द्विमुख–नमि–नगगति नामानश्चत्वारोऽपि प्रत्येक बुद्धाः महा शुक्रनामके सप्तमदेवलोके पुष्पोत्तरविमाने उत्कृष्ट–सप्तदशसागरोपमाणि सहैवो षित्वा ततः सहैवच्युताः सहैव गृहीतदीक्षाः क्रमेण सहैव मोक्षं समासादयन्।

॥ इति चतुः प्रत्येकबुद्धकथा समाप्ता ॥

अस्थिर से की गई प्रीति स्वयं अस्थिरता का कारण होती है। इसलिये इन सब से ममत्व का परिहार करने मे ही आत्मा का श्रेय है। ऐसा विचार कर राजा को अपने आप वैराग्यभाव जागृत हो गया। और उसी समय उन्होंने अपने हाथोंसे शिर के बालोंका लोच करके शासन देवता द्वारा दिये गये सदोरकमुखवस्त्रिका एवं रजोहरण आदि रूप मुनिका वेष धारण कर अप्रतिबद्ध विहार करना प्रारंभ किया। अन्त में समाधि मरण से प्राणोंका परित्याग कर नगगति मुनिराज ने सिद्धिगति को भी प्राप्त कर लिया। इस प्रकार यह चतुर्थ प्रत्येक बुद्ध नगगति की कथा है।

करकण्डू, द्विमुख, नमि और नगगति ये चारों ही प्रत्येक बुद्ध महाशुक्र नामके सप्तम देव लोक मे पुष्पोत्तर विमान मे उत्कृष्ट सतरह सागरकी स्थिति लेकर साथ २ ही उत्पन्न हुए साथ २ ही वहांसे चले और साथ २ ही मुनि दिक्षा लेकर एक साथ ही मोक्ष गये ॥ ४७॥

અસ્થિરતાનુ કારણુ હોય છે આથી એ સઘળાનો પરિત્યાગ કરવો તેમા જ આત્માનુ શ્રેય છે આવો વિચાર કરવાથી રાજાને પોતાના મનથીજ વૈરાગ્ય જાગી ગયો અને એજ વખતે એમણે પોતાના હાથથી માથાના વાળનો લોચ કરીને શાસન દેવે આપેલ દોરાવાળી મુખવસ્ત્રિકા અને રજોહરણ આદિ મુનિવેષ ધારણ કરી અપ્રતિબદ્ધ વિહાર કરવાનો પ્રારભ કર્યો અતે તેમણે સમાધિમરણથી દેહનો પરિત્યાગ કરી નગગતિ મુનિરાજે સિદ્ધ ગતિને પ્રાપ્ત કરી આ પ્રમાણે આ ચોથા પ્રત્યેક બુદ્ધ નગતિની કથા છે

કરકણ્ડૂ દ્વિમુખ, નમિ અને નગગતિ એ ચારેય પ્રત્યેક બુદ્ધ મહાશુક્ર નામના સાતમા દેવલોકમા પુષ્પોત્તર વિમાનમા ઉત્કૃષ્ટ સત્તર સાગરનીસ્થિતિવાળા બનીને સાથે સાથેજ ત્યા ઉત્પન્ન થયા અને સાથે સાથે જ ત્યાથી ચવીને સાથે સાથે જ દીક્ષા લઈને એક સાથે જ મોક્ષમા ગયા ॥ ૪૭ ॥

तथा—

मूलम्—सोवीररायवसहो, चइत्ताण मुणी चरे।
उद्दायणो पव्वइओ, पत्तो गइमणुत्तरं ॥४८॥

छाया—सौवीरराजवृषभः त्यक्त्वा खलु मुनिश्चरन्।
उदायनः प्रव्रजितः, प्राप्तो गतिमनुत्तराम् ॥४८॥

टीका—'सोवीर' इत्यादि।

सौवीरराजवृषभः-सौवीरस्य=सौवीरदेशस्य राजा-सौवीरराजः, स चासौ वृषभ इव इति समासः, सौवीरराज्यधुराधरणसमर्थ इत्यर्थः, एतादृशो वीतभयपत्तनाधीशो राजा उदायनः सर्वं राज्यं त्यक्त्वा प्रव्रजितो मुनिरुदायन उग्रं तपश्चरन् अनुत्तरां=सर्वोत्कृष्टां मोक्षरूपां गतिं प्राप्तः ॥४८॥

॥ अथ उदायनराजर्षिकथा ॥

आसीदत्र भरतक्षेत्रे सिन्धुसौवीर देशे वीतभयनामकं पत्तनम्। तत्रासीदुदायननामा पुण्यशाली राजा। स हि शौर्यौदार्यधैर्यादिभिः सहजैर्गुणैः सम

तथा—'सोवीररायवसहो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सोवीररायवसहो-सौवीरराजवृषभः) सौवीरदेश के सर्वोत्तम राजा (उद्दायणो-उदायनः) उदायनने (चईत्ताण-त्यक्त्वा) समस्त राज्य का परित्याग करके (पव्वइओ-प्रव्रजितः) मुनिदीक्षा अंगीकार की और उसी (मुणीचरे-मुनिः चरन्) मुनि अवस्था मे रहते हुए उन्होंने (अणुत्तरा गइ पत्तो-अनुत्तराम् गतिं प्राप्तः) सर्वोत्कृष्ट गति मुक्ति को प्राप्त किया।

उदायन राजर्षि की कथा इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र मे सिन्धु सौवीर नामका एक देश है, उस में वीतभय नामका एक पत्तन था। उसका राजा उदायन थे। ये राजा

तथा—"सोवीररायवसहो" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—सोवीरराय वसहो-सौवीरराजवृषभः સૌવીર દેશના સર્વોત્તમ રાજા उदायणो-उदायनः ઉદાયને चइत्तण-त्यक्त्वा સઘળા રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને કરીને पव्वइओ-प्रव्रजित મુનિદીક્ષા અંગીકાર કરી અને मुणीचरे-मुनि अचरत् એજ મુનિ અવસ્થામાં રહેતા રહેતા તેમણે સર્વોત્કૃષ્ટ એની ગતિ મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી

ઉદાયન રાજર્ષિની કથા આ પ્રકારની છે—

આ ભરત ક્ષેત્રના સિંધુ સૌવિર નામનો એક દેશ છે તેમાં વીતભય નામનું એક પટ્ટણ હતું તેના ઉદાયન નામે રાજા હતા એ રાજા ખૂબ જ પુણ્યશાળી હતા

नास्ति मे प्रयोजनम्। एवं विमृश्य समजातवैराग्यभावनुरथतुर्थः प्रत्येकबुद्धो नग गतिः स्वहस्तेन लोचं कृत्वा शासनदेवतादत्त सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिकं साधुवेषं परिधृत्य पृथिव्यामप्रतिबद्धविहारेण विहरमाणोऽन्ते सिद्धिगतिं प्राप्तः।

॥ इति नगगतिराजकथा ॥

करकण्डू-द्विमुख-नमि-नगगति नामानश्चत्वारोऽपि प्रत्येक बुद्धाः महाशुक्रनामके सप्तमदेवलोके पुष्पोत्तरविमाने उत्कृष्ट-सप्तदशसागरोपमाणि सहैवो षित्वा तत सहैवच्युता सहैव गृहीतदीक्षाः क्रमेण सहैव मोक्ष समासादयन्।

॥ इति चतुः प्रत्येकबुद्धकथा समाप्ता ॥

अस्थिर से की गई प्रीति स्वयं अस्थिरता का कारण होती है। इसलिये इन सब से ममत्व का परिहार करने में ही आत्मा का श्रेय है। ऐसा विचार कर राजा को अपने आप वैराग्यभाव जागृत हो गया। और उसी समय उन्होंने अपने हाथोंसे शिर के बालोंका लोच करके शासन देवता द्वारा दिये गये सदोरकमुखवस्त्रिका एव रजोहरण आदि रूप मुनिका वेष धारण कर अप्रतिबद्ध विहार करना प्रारंभ किया। अन्त में समाधि मरण से प्राणोंका परित्याग कर नगगति मुनिराज ने सिद्धिगति को भी प्राप्त कर लिया। इस प्रकार यह चतुर्थ प्रत्येक बुद्ध नगगति की कथा है।

करकण्डू, द्विमुख, नमि और नगगति ये चारों ही प्रत्येक बुद्ध महाशुक्र नामके सप्तम देव लोक में पुष्पोत्तर विमान मे उत्कृष्ट सतरह सागरकी स्थिति लेकर साथ २ ही उत्पन्न हुए साथ २ ही वहांसे चले और साथ २ ही मुनि दिक्षा लेकर एक साथ ही मोक्ष गये ॥ ४७ ॥

અસ્થિરતાનું કારણ હોય છે આથી એ સઘળાનો પરિત્યાગ કરવો તેમાં જ આત્માનું શ્રેય છે આવો વિચાર કરવાથી રાજાને પોતાના મનથીજ વૈરાગ્ય જાગી ગયો અને એજ વખતે એમણે પોતાના હાથથી માથાના વાળનો લોચ કરીને શાસન દેવે આપેલ દોરાવાળી મુખવસ્ત્રિકા અને રજોહરણ આદિ મુનિવેષ ધારણ કરી અપ્રતિબદ્ધ વિહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો અંતે તેમણે સમાધિમરણથી દેહનો પરિત્યાગ કરી નગગતિ મુનિરાજે સિદ્ધ ગતિને પ્રાપ્ત કરી આ પ્રમાણે આ ચોથા પ્રત્યેક બુદ્ધ નગતિની કથા છે

કરકણ્ડૂ દ્વિમુખ, નમિ અને નગગતિ એ ચારેય પ્રત્યેક બુદ્ધ મહાશુક્ર નામના સાતમા દેવલોકમાં પુષ્પોત્તર વિમાનમાં ઉત્કૃષ્ટ સત્તર સાગરનીસ્થિતિવાળા બનીને સાથે સાથેજ ત્યાં ઉત્પન્ન થયા અને સાથે સાથે જ ત્યાથી ચવીને સાથે સાથે જ દીક્ષા લઈને એક સાથે જ મોક્ષમાં ગયા ॥ ૪૭ ॥

तत्पित्रादिभ्य'=पञ्चशतसुवर्णमुद्रा दत्त्वा ता परिणयति। इत्य स पञ्चशतकन्या परिणीतवान्। तथापि स तृप्ति न प्रयाति। स्त्रीधनायुष्कभोज्येषु जनाः प्राय-स्तृप्तिं न यन्ति। एताः स्त्रिय केनापि स" मा गच्छन्तु इति विचार्य एक-स्तम्भे गृहे ता सर्वा अपि मस्थापितवान्।

तस्मिन्नेव काले समुद्रमध्यस्थिते पञ्चशैलाख्यद्वीपे विद्युन्मालिनामको महर्द्धिको व्यन्तरदेव आसीत्। तस्यास्ता हासाप्रहासाभिधेये द्वे देव्यौ। एकदा ताभ्या सह कुत्रापि व्रजन् स्वायु क्षयान्मार्ग मच्युत। ततस्ते उभे अपि देव्यौ

वैवाहिक सबध करने की इच्छा कर लेना और उसके पिता आदि को पाच सौ ५०० सुवर्ण मुद्राएँ प्रदान कर उसको परण लेता था। इस प्रकार उसने पाचसौ ५०० कन्याओं के साथ अपना विवाह कर लिया। परन्तु फिरभी कामभोगों से उसको तृप्ति नही हुई। सच है इस ससार मे स्त्री, धन, भोजन एव जीवन से प्राय किसी भी प्राणी को तृप्ति नही होती है। उसने उन समस्त स्त्रियो को एक ही घरमे इस अभिप्राय से " कि ये कही किसी के साथ चली न जावें " रक्खा था।

जिस समय की यह कथा है उसी समय मे समुद्र के मध्य म रहे हुए पचशैल नाम के द्वीप में विद्युन्माली नामका कोई एक विशिष्ट ऋद्धि का धारी व्यन्तरदेव रहता था। हासा एव प्रहासा नाम की इसकी दो देविया थीं। एक दिन यह इन्ही देवियों के साथ कहीजा रहा था सो मार्ग मे ही अपनी आयु के क्षय हो जाने से मर-

કરવાની ઇચ્છા કરી લેતો અને એ કન્યાના પિતા વગેરેને ૫૦૦ સુવર્ણમુદ્રાઓ આપીને એ તેની સાથે લગ્ન કરી લેતો આ પ્રમાણે એણે ૫૦૦ પાચસો કન્યાઓ સાથે પોતાના લગ્ન કરેલ હતા છતા તેની કામ ભોગોથી તૃપ્તી થઈ ન હતી ખરૂ જ છે આ સસારમા સ્ત્રી, ધન, ભોજન અને જીવન આ સઘળાથી કોઇ પણ પ્રાણીને તૃપ્તી થતી નથી તેણે એ સઘળી સ્ત્રીઓને એક સ્તભવાળા એક જ ઘરમા રાખેલ હતી આનુ કારણ એ હતુ કે 'એ કોઈની સાથે રખેને ક્યાંય ચાલી ન જાય' આવા અભિપ્રાયથી આ વ્યવસ્થા તેણે કરેલ હતી

જે સમયની આ વાત છે એ સમયે સમુદ્રની મધ્યમા આવેલા પચશૈલ નામના દ્વિપમા વિદ્યુન્માલી નામના કોઈ એક વિશિષ્ટ રિદ્ધિવાળા વ્યન્તરદેવ રહેતા હતા હાસા અને પ્રહાસા નામની એને બે દેવીઓ હતી એક દિવસ એ આ બન્ને દેવીઓની સાથે કોઈ સ્થળે જઈ રહેલ હતા ત્યારે માર્ગમા જ એનુ આયુષ્ય પૂરૂ

न्वितो वीतभयादीनि त्रिषष्ट्यधिकत्रिशतसंख्यकानि पुराणि, सिन्धुसौवीरमुख्यांश्च षोडशदेशान् पालयन्, महासेनादिभिर्बद्धमुकुटैर्दशभिर्वीरनृपैः सेवितः स्वराज्यश्रिया ऽपरः शक्र इव शुशुभे। तस्य राज्ञः पट्टमहिषीजैनधर्मपरायणा चेटकराज दुहिता प्रभावती नाम आसीत्। नृपस्य प्रभावती कुक्षिजातोऽभीचि नामा पुत्र आसीत्। उदायननृपस्य भगिनीसुत केशी आसीत्। अभीचिस्तु युवराजोऽभूत्।

आसीत् तस्मिन्नेव समये चम्पापुर्यां धनधान्यादिसमृद्धो रमणीजनासक्तचित्तः कुमारनन्दी नाम सुवर्णकारः। स यत्र कुत्राऽपि सुरूपा कन्या पश्यति,

बहुत ही पुण्यशाली थे। शौर्य औदार्य एव धैर्य आदि स्वाभाविक गुणों से युक्त ये उदायन राजा वीतभय आदि तीनसौ तिसठ (३६३) पुरो का तथा सिन्धु सौवीर जैसे मुख्य सोलह १६ देशों के पालक थे। महासेन आदि दस मुकुट बध वीर राजाओ द्वारा सदा सेवित हुए थे राजा अपनी राज्यश्री से ऐसे शोभित होते थे कि मानों दूसरा इन्द्र ही है। इनकी पट्टरानीका नाम प्रभावती था। यह जैनधर्मकी उपासिका थी। चेडाराजा की यह पुत्री थी। इसकी कुक्षिसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसका नाम अभीचि था। उदायन का एक भानजा था जिसका नाम केशी था। राजाने अभीचिको युवराज बना दिया था। उसी समय मे चपापुरी मे धनधान्यादिक मे समृद्ध एक सुवर्णकार रहता था। इसका नाम कुमार नदी था। स्त्रीयो मे यह सदा आसक्त चित्त बना रहता था। जहा कहा भी इसको अच्छी रूपवाली कन्या दिखलाई देती कि वह उसी-समय उसके साथ

શૌર્ય, ઔદાર્ય અને ધર્મ આદિ સ્વભાવિક ગુણોથી સમન્વિત એ રાજા વીતભય આદિ ત્રણસો ત્રેસઠ ૩૬૩ પુરોના તથા સિધુ સૌવીર જેવા મુખ્ય સોળ ૧૬ દેશોના અધિપતિ હતા મહાસેન આદિ દસ મુગટબધ વીર રાજાઓ ઉપર એમનુ આધિપત્ય હતુ એવા એ ઉદાયન રાજા પોતાની રાજ્યશ્રીથી એવા શોભતા હતા કે, જાણે બીજા ઈન્દ્ર જ કેમ ન હોય! એમની પટ્ટરાણીનુ નામ પ્રભાવતી હતુ જે જૈનધર્મની ઉપાસક હતી અને ચેટક રાજાની એ પુત્રી હતી પ્રભાવતી રાણીના ઉદરથી એક પુત્ર ઉત્પન્ન થયો જેનુ નામ અભીચિ હતુ રાજા ઉદાયનને એક ભાણેજ હતો જેનુ નામ કેશી હતુ રાજાએ અભીચિને યુવરાજ પદે સ્થાપિત કર્યો હતો

એ સમયે ચ પાપુરીમા ધન ધાન્યાદિકથી સમૃદ્ધ એવો એક સોની રહેતો હતો જેનુ નામ કુમારનદી હતુ સ્ત્રિયોમા એને ખૂબ જ આસક્તિ હતી જ્યા જ્યા એની નજરે સારી રૂપવતી કન્યા જોવામા આવતી કે તે એની સાથે વૈવાહિક સ બ ધ

सुवर्णकारोऽपि तदासक्तचित्ततया तयोर्दिशं प्रेक्षमाणश्चिरकालं स्थाणुवदत्रैव संस्थितः। ततस्तद्गतचित्तश्चिन्तयति-हासाप्रहासे विना ममेदं विश्वं दृष्टिहीनस्येव शून्यमिवाभाति। रत्नाभं तद्रूपं वीक्ष्य काचमणि तुल्यास्वितासु रमणीषु को नाम निपुणो रमेत। तस्मान्मया तदर्थे यतितव्यम्। एवं विचार्य स सुवर्णकारो राजकुले गत्वा प्रचुरं धनं दत्त्वा एवं डिण्डिममघोषयत्-य कश्चित्कु

जो पञ्चशैल पर्वत पर है वहा आवें। इस तरह उसको अपना पता देकर वे दोनों देवियां बिजली की तरह वहीं पर अदृश्य हो गई। सुवर्णकार इस दृश्य को देखकर उनमें आसक्त चित्त होने की वजह से बहुत समय तक वहीं पर स्थाणु की तरह निश्चल खड़ा २ जिस दिशामें ये अदृश्य हुई थी उसी दिशाको ओर देखता रहा। फिर बाद मे इसको विचार आया-कि अब मुझे यह संसार हासा प्रहासा देवियों के बिना अन्धे की तरह शून्य जैसा ही नजर आ रहा है। अहा! कितना आनंदप्रद उनका रूप था, उस रूपराशिके आगे तो इन रमणियों की कोई कीमत नहीं है। रत्नके सामने जिस प्रकार काच मणियों मे निपुण जनको संतोष नहीं होता है, उसी प्रकार इस अनुपम रूप राशी के सामने मुझे इन रमणियों मे संतोष होनेका नहीं है। इसलिये इस रूप के नये मार्ग मे मुझे भ्रमण करने का सौभाग्य जैसे भी प्राप्त हो सके उस प्रकारका प्रयत्न करना चाहिये। इस तरह विचार कर उस सुवर्णकार ने शीघ्र ही राजकुल मे जा कर वहा प्रचुर धन दिया और कहा कि आप इस प्रकार की घोषणा

જે સમુદ્રની વચમા આવેલા પંચશૈલ પર્વત ઉપર છે, ત્યાં આવો, આ પ્રમાણે કહીને એ બન્ને દેવીઓ વિજળીની માફક ત્યાથી અંતર્ધાન બની ગઈ એની એ બન્નેમા ખૂબજ આસક્ત બની ગયેલ હોવાથી ઘણા સમય સુધી એ જે દિશા તરફ અંતર્ધાન થઈ હતી તે તરફ લાકડાના ઠૂઠાની જેમ હલ્યા ચલ્યા વગર ઉભો ઉભો જોતો રહ્યો, આ પછી તેને વિચાર થયો કે, હવે મને આ સંસાર એ હાસા અને પ્રહાસા દેવીઓના વગર આંધળાની માફક શૂન્ય જેવોજ દેખાય છે અહા! કેવુ આનંદપ્રદ એનુ રૂપ હતુ! એ રૂપરાશીની સામે તો આ રમણીઓની કોઈ કિંમત નથી, રત્નની સામે જે રીતે કાચના ટુકડાથી સમજદાર મનુષ્યને સંતોષ વળતો નથી એજ પ્રમાણે એ અનુપમ રૂપ ગર્વિતની સામે મને આ રમણીઓની જરા સરખી પણ કિંમત લાગતી નથી આ કારણે રૂપના નવા માર્ગમા મારે માટે ભ્રમણ કરવાનુ સૌભાગ્ય જે રીતે પ્રાપ્ત થઈ શકે એ પ્રકારે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ આ પ્રકારનો વિચાર કરીને તે સોની રાજ દરબારમા પહોચ્યો રાજાની સામે તેણે ઘણી સુવર્ણમુદ્રાઓ ભેટ મૂકી અને કહ્યુ કે, આપ નગરભરના એવી ઘોષણા કરાવી દયો કે, " જે કોઈ

चिन्तातुरे एव चिन्तितवत्यौ-कमपि स्त्रीलोलुपजनं प्रलोभयावो य आवयोः पतिर्भवेत्। इति विचिन्त्य भूमण्डले भ्रमन्तीभ्यां ताभ्यां चम्पायां स सुवर्णकारो दृष्टः। अयमावयोर्योग्योऽस्तीत्यवधार्य तस्मै परममनोहरं स्वरूपं दर्शितवत्यौ। तयोः परममनोहरं रूपं पश्यंस्तत्रासक्तचित्तः स सुवर्णकारः 'के युवाम्' इति ते देव्यौ पृष्टवान्। ततस्ते विलासिन्यौ सविलासं प्रोक्तवत्यौ-आवां हासाप्रहासाख्ये महर्द्धिके देव्यौ। तत्र चेदस्माभिः सह मिलनेच्छा भवेत्तदा त्वया पञ्चशैलपर्वते समागन्तव्यम्, इत्युक्त्वा ते विद्युल्लतावत्तिरोहिते जाते। स

गया। यह देखकर उन देवियों ने चिन्तातुर होकर ऐसा विचार किया कि-चलो अब किसी स्त्री लोलुप मनुष्य को अपने वश में करें जो हम लोगों का पति बन सके। इस प्रकार के विचार से उन-दोनों देवियोने भूमण्डल भर में भ्रमण करना प्रारंभ किया। घूमती २ वे चंपापुरी नगरी में आई, और आते ही उन्होंने उस कामी सुवर्ण कार को देखा। देखते ही उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि यह हमारा पति होने के लायक है। इस प्रकार के निश्चय से उन दोनों ने ही उसको अपना परम मनोहर रूप दिखलाया। सुवर्णकार भी उस परम मनोहर रूपको देखकर उस तरफ मुग्ध बन गया और उनसे कहने लगा कि-कहो आप लोग कौन है? सुवर्णकार के इस प्रश्न को सुनकर उन दोनों विलासिनी देवियोंने विलास पूर्वक कहा कि हम लोग हासा और प्रहासा नामकी दो महर्द्धिक देवियां हैं। यदि आपकी हमसे मिलनेकी इच्छा होवे तो आप हमारे निवासस्थान पर

થઈ જવાથી તેનું મૃત્યુ થયું આથી એ બન્ને દેવીઓ ખૂબજ ચિંતાતુર બની અને પછીથી એવો વિચાર કર્યો કે, ચાલો હવે કોઈ વિષયલોલુપી મનુષ્યને આપણા વશમાં કરીએ કે જે આપણો પતિ બની શકે આ પ્રકારનો વિચાર કરીને એ બન્ને દેવીઓએ ભૂમંડળ ઉપર ભ્રમણ કરવાનો પ્રારંભ કર્યો ફરતાં ફરતાં તે ચંપાપુરી નગરીમાં પહોંચી અને ત્યાં પહોંચતાંજ તેમણે એ કામી સોનીને જોયો તેને જોતાં જ એવો વિચાર કર્યો કે, આ અમારો પતિ થવા લાયક છે, આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને તે બન્નેએ તેને પોતાનું પરમ મનોહર રૂપ બતાવ્યું સોનીએ મનોહર રૂપને જોઈને એના તરફ મુગ્ધ બની ગયો, અને તે એને કહેવા લાગ્યો કે-કહો ! તમો કોણ છો ? સોનીના એ પ્રશ્નને સાંભળીને એ બન્ને વિલાસિની દેવીઓએ કહ્યું કે, અમે બન્ને હાસા અને પ્રહાસા નામની બે મહર્દ્ધિક દેવીઓ છીએ, જો તમારી અમોને મળવાની ઇચ્છા હોય તો તમે અમારા નિવાસસ્થાન ઉપર કે

सुवर्णकारोऽपि तदासक्तचित्ततया तामेव दिश प्रेक्षमाणश्चिरकाल स्थाणुवत्तत्रैव सस्थितः। ततस्तद्गतचित्तश्चिन्तयति-हासाप्रहासे विना ममेद विश्व दृष्टि हीनस्येव शून्यमिवाभाति। रत्नाभ तद्रूप वीक्ष्य काचमणि तुल्यास्वेतासु रमणीषु को नाम निपुणो रमेत। तस्मान्मया तदर्थं यतितव्यम्। एव विचार्य स सुवर्णकारो राजकुले गत्वा प्रचुर धन दत्त्वा एव डिण्डिममघोषयत्-य: कश्चित्कु

जो पचशैल पर्वत पर है वहा आवें। इस तरह उसको अपना पता देकर वे दोनो देवियां विजली की तरह वही पर अदृश्य हो गई। सुवर्णकार इस दृश्य को देखकर उनमे आसक्त चित्त होने की वजह से बहुत समय तक वहीपर स्थाणु की तरह निश्चल खडा २ जिस दिशामें वे अदृश्य हुई थी उसी दिशाकी ओर देखता रहा। फिर बाद में इसको विचार आया-कि अब मुझे यह ससार हासा प्रहासा देवियों के विना अन्धे की तरह शून्य जैसा ही नजर आ रहा है। अहा! कितना आनदप्रद उनका रूप था, इस रूपराशिके आगे तो इन रमणियों की कोई कीमत नही है। रत्नके सामने जिस प्रकार काच मणियों मे निपुण जनको सतोष नही होता है, उसी प्रकार इस अनुपम रूप राशी के सामने मुझे इन रमणियों मे सतोष होनेका नही है। इसलिये इस रूप के नये मार्ग मे मुझे भ्रमण करने का सौभाग्य जैसे भी प्राप्त हो सके उस प्रकारका प्रयत्न करना चाहिये। इस तरह विचार कर उस सुवर्णकार ने शीघ्र ही राजकुल मे जा कर वहा प्रचुर धन दिया और कहा कि आप इस प्रकार की घोषणा

જે સમુદ્રની વચમા આવેલ પચશૈલ પર્વત ઉપર છે, ત્યાં આવો, આ પ્રમાણે કહીને એ બન્ને દેવીઓ વિજળીની માફક ત્યાથી અતર્ધ્યાન બની ગઇ, સોની એ બન્નેમા ખૂબજ આસકત બની ગયેલ હોવાથી ઘણા સમય સુધી એ જે દિશા તરફ અતર્ધાન થઈ હતી તે તરફ લાકડાના ઠુઠાની જેમ હલ્યા ચલ્યા વગર ઉભો ઉભો જોતો રહ્યો, આ પછી તેને વિચાર થયો કે, હવે મને આ સસાર એ હાસા અને પ્રહાસા દેવીઓના વગર આધળાની માફક શૂન્ય જેવોજ દેખાય છે અહા! કેવુ આનદપ્રદ એનુ રૂપ હતુ! એ રૂપ રાશીની સામે તો આ રમણીઓની કોઇ કિમત નથી, રત્નની સામે જે રીતે કાચના ટુકડાથી સમજદાર મનુષ્યને સતોષ થતો નથી એજ પ્રમાણે એ અનુપમ રૂપ ગર્વિતની સામે મને આ રમણીઓની જરા સરખી પણ કિમત લાગતી નથી આ કારણે રૂપના નવા માર્ગમા મારે માટે ભ્રમણ કરવાનુ સૌભાગ્ય જે રીતે પ્રાપ્ત થઈ શકે એ પ્રકારે પ્રયત્ન કરવો જોઇએ આ પ્રકારનો વિચાર કરીને તે સોની રાજ દરબારમા પહોચ્યો. રાજાની સામે તેણે ઘણી સુવર્ણમુદ્રાઓ ભેટ મૂકી અને કહ્યુ કે, આપ નગરભરના એવી ઘોષણા કરાવી દયો કે, "જે કોઇ

चिन्तातुरे एव चिन्तितवत्यौ-कमपि स्त्रीलोलुपं जनं प्रलोभयावो य आवयोः पतिर्भवेत्। इति विचिन्त्य भूमण्डले भ्रमन्तीभ्यां ताभ्यां चम्पायां स सुवर्णकारो दृष्टः। अयमावयोर्योग्योऽस्तीत्यवधार्य तस्मै परममनोहरं स्वरूपं दर्शितवत्यौ। तयोः परममनोहरं रूपं पश्यंस्तत्रासक्तचित्तः स सुवर्णकारः 'के युवाम्' इति ते देव्यौ पृष्टवान्। ततस्ते विलासिन्यौ सविलासं प्रोक्तवत्यौ-आवां हासा महासाख्ये महर्द्धिके देव्यौ। तत्र चेदस्माभिः सह मिलनेच्छा भवेत्तदा त्वया पञ्चशैलपर्वते समागन्तव्यम्, इत्युक्त्वा ते विद्युल्लतावत्तिरोहिते जाते। स

गया। यह देखकर उन देवियों ने चिन्तातुर होकर ऐसा विचार किया कि-चलो अब किसी स्त्री लोलुप मनुष्य को अपने वश में करें जो हम लोगो का पति बन सके। इस प्रकार के विचार से उन-दोनों देवियोंने भूमण्डल भर में भ्रमण करना प्रारंभ किया। घूमती २ वे चंपापुरी नगरी मे आई, और आते ही उन्होंने उस कामी सुवर्ण कार को देखा। देखते ही उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि यह हमारा पति होने के लायक है। इस प्रकार के निश्चय से उन दोनों ने ही उसको अपना परम मनोहर रूप दिखलाया। सुवर्णकार भी उस परम मनोहर रूपको देखकर उस तरफ मुग्ध बन गया और उनसे कहने लगा कि-कहों आप लोग कौन हैं? सुवर्णकार के इस प्रश्न को सुनकर उन दोनों विलासिनी देवियोंने विलास पूर्वक कहा कि हम लोग हासा और प्रहासा नामकी दो महर्द्धिक देवियां है। यदि आपकी हमसे मिलनेकी इच्छा होवे तो आप हमारे निवासस्थान पर

થઇ જવાથી તેનું મૃત્યુ થયું આથી એ બન્ને દેવીઓ ખૂબજ ચિંતાતુર બની અને પછીથી એવો વિચાર કર્યો કે, ચાલો હવે કોઇ વિષયલોલુપી મનુષ્યને આપણા વશમાં કરીએ કે જે આપણો પતિ બની શકે આ પ્રકારનો વિચાર કરીને એ બન્ને દેવીઓએ ભૂમંડળ ઉપર ભ્રમણ કરવાનો આરંભ કર્યો ફરતાં ફરતાં તે ચંપાપુરી નગરીમાં પહોંચી અને ત્યાં પહોંચતાજ તેમણે એ કામી સોનીને જોયો. તેને જોતાં જ એવો વિચાર કર્યો કે, આ અમારો પતિ થવા લાયક છે, આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને તે બન્નેએ તેને પોતાનું પરમ મનોહર રૂપ બતાવ્યું સોનીએ મનોહર રૂપને જોઈને એના તરફ મુગ્ધ બની ગયો, અને તે એને કહેવા લાગ્યો કે-કહો! તમો કોણ છો? સોનીનો એ પ્રશ્નને સાંભળીને એ બન્ને વિલાસિની દેવીઓએ કહ્યું કે, અમે બન્ને હાસા અને પ્રહાસા નામની બે મહર્દ્ધિક દેવીઓ છીએ, જો તમારી અમોને મળવાની ઇચ્છા હોય તો તમે અમારા નિવાસસ્થાન ઉપર કે

स नाविकः प्राह-अयं तटस्थगिरिमूलप्रदेशजो वटः श्याम इव दृश्यते। तत्रे दमावयोर्यानमधोगतमाऽऽवर्ते निमङ्क्ष्यति। अतो यदा नौका वटवृक्षस्याधो गच्छेत्तदात्वया समुत्प्लुत्य वटवृक्षशाखा समवलम्बनीया। अन्यमार्गाभावादनेनैव मार्गेण समागतोऽस्मि। तस्मिन गिरौ रात्रौ भारण्डपक्षिणः समागत्य निवसन्ति। दिवसे ते आहारार्थं पञ्चशैलद्वीपं गच्छन्ति। ते हि द्विमुखा त्रिचरणाश्च भवन्ति। त्वं तेषु कस्यचिदेकस्य भारण्डपक्षिणो मध्यमचरणे वस्त्रेण स्वशरीरमाबध्य गच्छेः वृद्धत्वाद् वृक्षशाखा ग्रहीतुमशमस्य मम तु नाशो

कहा हा कुछ काली सी चीज दिखती है। तब नाविक ने कहा-देखो यह तट पर रहे हुए गिरि के मूल प्रदेश में उगा हुआ वट का वृक्ष (बड का पेड) है, जो दूरी की वजह से काला सा दिखलाई पडता है। सो ध्यान रखना जब हमारी यह नौका इससे नीचे जावेगी तब आवर्त (जल के भवर) मे फँस जावेगी, अतः नौका ज्यों ही इसके नीचे पहूँचे कि तुम उछलकर वटवृक्ष की शाखा पकड लेना। पकडते ही तुम उसपर लटक जाओगे-यहीं से तुम को पचशैल का मार्ग हाथ आवेगा। कारण कि रात्रि में यहा पर्वतपर भारण्डपक्षी आते हैं, और यहीं पर निवास करते हैं। प्रातः होते ही वे आहार के अन्वेषण में पचशैल द्वीप मे चले जाते है। भारण्डपक्षियों की पहिंचान यह है कि उनके मुख तो दो होते है तथा चरण तीन। तुम उन भारण्डपक्षियों मे से किसी एक भारण्डपक्षी के चरण में वस्त्र से अपने शरीर को जकड देना इस तरह उनके साथ उडकर तुम पचशैल द्वीप मे पहुँच जाओगे।

હા કાઈક કાળી ચીજ દેખાય છે ત્યારે નાવિકે, આ સમુદ્રના કિનારા ઉપર પર્વતના મૂળ પ્રદેશમા ઉગેલુ એ વડનુ વૃક્ષ છે જે છેટેથી કાળુ દેખાય છે તમો હવે એ ધ્યાનમા રાખજો કે, જ્યારે આ નૌકા એ ઝાડની નીચેથી પસાર થઈને આગળ વધશે એટલે આવર્તમા ફસાઇ જશે આથી નૌકા જ્યારે ઝાડની નીચે પહોચે કે, તરતજ તમો ઠેકડો મારીને એ વડલાની ડાળને પકડી લેજો અને એ ઝાડ ઉપર ચડી જજો અહીથી તમને પચશૈલ પર્વતનો માર્ગ હાથ લાગી જશે રાત્રીના વખતે અહી પર્વત ઉપર ભારડ પક્ષી આવે છે અને રાતના રહે છે સવાર થતાજ તે આહારની શોધમા પચશૈલ પર્વત ઉપર પહોચે છે ભારડ પક્ષીઓની ઓળખાણ એ પ્રકારની છે કે, એને બે મોઢા હોય છે અને ત્રણ પગ હોય છે તમે એ ભારડપક્ષીઓમાથી કોઇ એક ભારડપક્ષીના પગને વસ્ત્રથી તમારા શરીરને સાથે બાધી લેશો આ પ્રમાણે કરવાથી એ પક્ષીની સાથે ઉડીને તમો પચશૈલ દ્વિપમા પહોચી જશો હુ પણ તમારી સાથે ચાલત પરતુ મારી વૃદ્ધાવસ્થા હોવાથી મારામા

मारनन्दिनं सुवर्णकारं द्रुतं पञ्चशैलद्वीपे नेष्यति। तस्मै स सुवर्णकारः कोटिं सुवर्णमुद्रा दास्यतीति। डिण्डिमघोषं श्रुत्वा कश्चिद् वृद्धो नाविको जीविते निःस्पृहः समुद्यतस्तं पञ्चशैलद्वीपं नेतुम्। सुवर्णकारस्तस्मै कोटिसुवर्णमुद्रा ददौ। नाविकस्ता मुद्राः स्वपुत्रेभ्यो दत्त्वा नावं सज्जीकृत्य परिपूर्णं शम्बलमादाय सुवर्णकारेण सह नौकायां समुपविष्टः। स नावं क्षेपयन् कियद्भिर्दिनैः समुद्रे विप्रकृष्टं पन्थानं समतिक्रम्य कष्टजनके समुद्रप्रदेशे समागतः। ततः स नाविकः कुमारनन्दिनं पृष्टवान् किमपि पश्यसि पुरस्तात्? स प्राह-पश्यामि श्यामं किमपि! ततः

नगर भरमें करवाई कि "जो कोई व्यक्ति कुमार नंदी सुवर्णकार को शिघ्र ही पचशैल पर्वत पर पहुँचा देगा, उसके लिये वह एक कोटि सुवर्णमुद्रा प्रदान करेगा"। इस प्रकारकी जब घोषणा नगर में करवाई जा रही थी तब इसको सुनकर एक वृद्ध नाविक ने अपने जीवन से निस्पृह बनकर उसको पचशैल पर पहुचाने का वचन दिया, सुवर्णकार ने भी उसको घोषणा के अनुसार एक कोटी सुवर्ण मुद्राएँ प्रदान करदी। नाविक ने अब अपनी नौकाको सज्जित करना प्रारंभ किया। जब नौका अच्छी तरह सुसज्जित हो चुकी तब नाविक ने उन एक कोटी सुवर्णमुद्राओं को अपने पुत्रों को दे कर उनके रास्ते के योग्य शम्बल-भाते की तैयारी करवाई। जब परिपूर्ण पाथेय-भाता तैयार हो चुका तब सुवर्णकार को नौका मे बैठा, कर वह नाविक वहासे चला। चलते २ यह कितनेक दिनोंमे बहुत दूर तक पहुँच गया। जब ये दोनों चलते २ समुद्र के ऐसे प्रदेश मे जा पहूँचे जो विशेष विकट था तब नाविक ने सुवर्णकार से कहा-क्या कुछ आगे दिखाता है। सुवर्णकारने

व्यक्ति कुमारनंदी सोनीने झडपथी पचशैल पर्वत उपर पहोचाडशे तेने ए एक करोड सुवर्णमुद्राओ आपशे" राजाए आ प्रकारनी घोषणा करवानो आदेश आप्यो ए घोषणा नगरमा थई रहा हती त्यारे तेन एक वृद्ध नाविके पोताना जीवनना भोगे पण तेने पचशैल पर्वत उपर पहोचाडवानु वचन आप्युं, सोनीए पण तेने घोषणा अनुसार एक करोड सुवर्णमुद्राओ आपी नाविके आ पछी पोतनी नौकाने तैयार करवानु शरू कर्युं ज्यारे नौका संपूर्णपणे तैयार थई चूकी त्यारे ए नाविके पोताना पुत्रोने ए सुवर्णमुद्राओ आपीने रस्ताना भाता माटेनी योग्य व्यवस्था करवानु सूचव्यु ज्यारे भाता वगेरेनी संपूर्ण तैयारी थई गई त्यारे सोनीने नौकामा बेसाडीने ए नाविक चाली नीकळ्यो चालता चालता केटलाक दिवसे ते घणे दूर नीकळी गया अने आगळ वधवानो रस्तो ज्यारे विकट आव्यो त्यारे ते नाविके सोनीने कह्यु-शु आगळ काइ देखाय छे? सोनीये कह्युं,

तस्मात्त्व स्वगृह गत्वा स्वकीय धन दीनादिभ्यो दत्त्वा वह्निप्रवेशादिकष्ट कृत्वा ऽस्य द्वीपस्य श्रिया सहावयो: पतिर्भव। तयोर्वचन निशम्य स सुवर्णकार: प्राह–अह तत्र कथ गमिष्यामीति। तदा ते स्मरपरवश त सुवर्णकार चम्पा पुर्या नीतवत्यौ। त दृष्ट्वा नागरिकजना पृष्टवन्त:–त्व पञ्चशैलद्वीपात् कथमागत ? किंच तत्र चित्रम् ? तदा "कहासापहासे ?" इत्येव पुन: पुन: स

अपने समस्त द्रव्य को दीनादिक जनो को देकर अग्नि मे प्रवेश करो–तब कही तुम इस द्वीप की श्री के साथ २ हमारे पति बन सकते हो। देखो कान जबतक वेधजन्य दुःखका अनुभव नही करता तबतक वह सोने की सगति प्राप्त नही कर सकता है। तथा सुवर्ण भी जब तक दाहादिक के कष्ट को प्राप्त नही हो लेता है तबतक वह भी मणि के साथ सयुक्त नही होता है। इसलिये आप को जो हमारे साथ सयोग करनेकी अभिलाषा हो तो आप हमारे निमित्त इतना कष्ट अवश्य सहन करो। तभी जाकर हमारा आपका सयोग हो सकता है। अन्यथा नही। देवियोंके इस प्रकार वचन सुनकर स्वर्णकार ने उनसे कहा कि अब मै वापिस घर पर कैसे जा सकता हू। तब इस प्रकार स्वर्णकार की परवशता का ध्यानकर कामाधीन बनी हुई उन दोनो देवियो ने उसको अपने घर पर वापिस पहुँचा दिया। चपापुरी मे जब स्वर्णकार पहुँचा तो वहा के लोगोंने उसको देखकर उससे पूछा कि तुम पचशैल द्वीप से वापिस कैसे आ गये। वहा के समाचार सुनाओ। वहा क्या विचित्रता देखी ? जब नागरिकोने ऐसा कहा तब उनसे

જાવ અને ત્યા જઈ પોતાનુ સઘળુ દ્રવ્ય દીન અનાથોને વહેચી દઈને અગ્નિમા પ્રવેશ કરો. આમ કરનાથી તમો આ દ્વીપની શ્રીની સાથો સાથ અમારા પતિ બની શકશો જુઓ કાન જ્યાસુધી વિધાવાની વેદનાને સહન નથી કરતા ત્યા સુધી તેને સોનાની સગત પ્રાપ્ત થતી નથી તથા સોનુ પણ જ્યા સુધી અગ્નિના કષ્ટને સહન કરતુ નથી ત્યા સુધી તેને મણીની સગત મળી શકતી નથી આ માટે આપને જો અમારી સાથે સગત કરવાની અભિલાષા હોય તો આપ અમારા નિમિત્તે આટલુ કષ્ટ અવશ્ય સહન કરો ત્યારે જ તમારો અને અમારો સયોગ બની શકે તેમ છે એ સિવાય નહી દેવીઓના આ પ્રકારના વચન સાભળીને સોનીએ કહ્યુ કે, હવે હુ ઘેર પાછો કઈ રીતે જઈ શકુ ? આથી સોનીની પરવશતાનુ ધ્યાન કરીને કામાધીન બનેલી એ બન્ને દેવીઓએ તે સોનીને એના ઘેર પહોચતો કરી દીધો સોનીને ચપાપુરીમા પાછો આવેલો જોઈને લોકોએ તેને પૂછ્યુ કે, પચશૈલ દ્વિપથી તમે પાછા કેમ આવી ગયા ? ત્યાના સમાચાર સભળાવો ત્યા શુ વિચિત્રતા જોઈ ?

ऽवश्यभावी। यतो वटवृक्षात् पुरत इय नौका महावर्ते पतिष्यति। तत्र नौकया सह जले निमग्नोऽहं मरिष्याम्येव। एवं वदति वृद्धे स वटवृक्षः समागतः। स्वर्णकार उत्प्लुत्य वटवृक्षशाखामवलम्बितवान। वृद्धस्तु आवर्ते निमग्नो मृतः। नाविकोक्तप्रकारेण स स्वर्णकारः पञ्चशैलद्वीपं गतः। भोगोत्सुके स्वसमीपं समागतं तं स्वर्णकारं हासाप्रहासे प्रोक्तवत्यौ-न शक्नोषि त्वमनेन मानुषशरीरेण अस्माभिः सह निवासं कर्तुम्। अतोऽस्मदर्थे कुरु किंचित्कष्टम्। तेदुक्तं खमनु भूयैव कर्णोऽपि भूषा लभते, सुवर्णमपि दाहादिकष्ट प्राप्य मणिभिः संयुज्यते।

मैं भी तुम्हारे साथ चलता परंतु मेरी अवस्था इस समय वृद्ध है अतः इतनी शक्ति नहीं है कि उछलकर वटवृक्षकी डाल पकडकर लटक सकू। मैं तो इसी नौका के साथ २ ही यहा पर नष्ट हो जऊँगा-क्यो कि इसके आगे मेरी नौका गई कि वह नियम से महावर्त्त में फँसी और मै मरा। इस प्रकार वृद्ध नाविक उससे इस प्रकार की बात-चीत करता २ आगे बढ ही रहा था कि इतने में वह वटवृक्ष आ गया। स्वर्णकार ने शीघ्र ही उछलकर उसकी शाखा पकडली। वृद्ध ज्यो ही आगे बढा कि वह भँवर मे फँसकर मर गया। और स्वर्णकार नाविक के द्वारा बतलाए गये मार्ग पर चलकर अपने यथेष्ट स्थान पंचशैल द्वीप मे जा पहुँचा। भोग म उत्सुक हो कर अपने समीप आये हुए स्वर्णकार को देखकर हासा और प्रहासा ने उससे कहा-तुम इस मानुष शरीर से तो हमारे साथ रह नही सकते हो इसलिये ऐसा करो कि यहा से तुम अब फिर अपने घर पर वापिस जाओ, वहा पर

એટલી શક્તિ રહેલ નથી કે હુ કૂદકો મારીને વડલાની ડાળને પકડી શકુ હુ તો આ નૌકાની સાથે અહીં જ ખલાસ થઈ જવાનો છુ કેમકે એ વડલાના વૃક્ષથી જ્યા નૌકા આગળ વધશે કે તે નિયમથી મહાવર્તમા ફસાઇ જવાની અને મારૂ મૃત્યુ થવાનુ જ આ પ્રમાણે વૃદ્ધ નાવિક તેની સાથે વાતચીત કરી રહેલ હતો અને નૌકા આગળ વધી રહેલ હતી ત્યા વડલાનુ વૃક્ષ આવી ગયુ સોનીએ ઝડપથી કૂદીને એની ડાળને પકડી લીધી આ તરફ નૌકા જ્યારે થોડી આગળ વધી કે, તે સમુદ્રના વમળમા સપડાઇ ગઇ નાવિક અને નૌકા બન્ને એથી નષ્ટ થયા વડલાની ડાળને પકડીને ઉપર ચડી ગયેલ સોની વૃદ્ધનાવિકે બતાવેલા રસ્તે ચાલી નીકળ્યો અને એની સૂચના પ્રમાણે વર્તવાથી પોતાના ઇચ્છિત સ્થાન પંચશૈલ દ્વિપમા પહોચી ગયો ભોગમા ઉત્સુકતા ધરાવના એ સોનીને પોતાની પાસે આવી પહોચેલ જોઈને હાસા અને પ્રહાસાએ તેને કહ્યુ-તમો આ મનુષ્યના શરીરથી તો અમારી સાથે રહી શકો તેવુ નથી આથી એવુ કરો કે, અહીંથી તમો પોતાના ઘેર પાછા

र्थिने मोक्ष ददाति। एवं मित्रेणोपदिष्टोऽपि स मोहात्तद्वाक्यं नामन्यत। ततः स स्वदेहं छागगोमयपुञ्जगन्छाद्य वह्निं सधुक्ष्य मृतः। अकामनिर्जरया स विद्युन्माल्निामा व्यन्तरदेवो जातः। एवमिङ्गिनीमरणेन मृतं कुमारनन्दिनं दृष्ट्वा वैराग्यं प्राप्तो नागिल एवं चिन्तितवान् अहो! सुलभेनोपायेन प्राप्येऽपि भोगादौ मूढा व्यर्थमेव क्लिश्यन्ति, चतुर्वर्गदायिनं जिनधर्मं नो प्रपद्यन्ते। अहो मूढता जनानाम् एवं विचिन्त्य स श्रावकः सुभद्राचार्यसमीपे दीक्षां गृहीत्वा साधुधर्मं सम्यगनुपाल्य मृत्यु

के लिये काम, स्वर्गार्थी के लिये स्वर्ग एवं मोक्षार्थी के लिये मोक्ष देने वाला है। इस तरह मित्र के समझाने पर भी मोह से उसने उसकी बात नहीं मानी और वह बकरी की लींडियोंका तथा छाणों-कंडोंका पुंज बनाकर उसको जलाकर उस अग्नि मे कूद पडा। अग्नि ने उसको देखते २ भस्मसात कर दिया? इस तरह अकाम निर्जरा के प्रभाव से वह मरकर विद्युन्माली नामका व्यन्तरदेव हो गया। इंगिनी मरण से मरे हुए अपने मित्र कुमार नंदी को देखकर नागिल के चित्त में संसार से उदासीनता जागृत हो उठी-उसने विचार किया-देखो यह कितने आश्चर्यकी बात है जो सुलभ उपायों द्वारा प्राप्य भी भोगादिककी प्राप्ति निमित्त तो मूढ जन रातदिन दुःखी होते रहते है परंतु चतुर्वर्ग प्रदायी जिनधर्मकी शरण अंगीकार करने तैयार नहीं होते है। इस मूढता का भी कहीं कोई ठीकाना है। इस प्रकार विचारकर नागिल श्रावकने सुभद्राचार्य के पास जाकर दीक्षा

કામ, સ્વર્ગાર્થીના માટે સ્વર્ગ, અને મોક્ષાર્થીને માટે મોક્ષને આપનાર છે આ પ્રકારે મિત્રના સમજાવવા છતાં પણ મોહથી તેણે એની વાતને ન માની અને આખરે બકરીની લીંડીઓનો તથા છાણાનો ઢગલો કરી તેને સળગાવીને એ અગ્નિમાં એ કૂદી પડયો. અગ્નિએ તેને જોત જોતામાં બાળીને ખાખ કરી નાખ્યો. આ રીતે એ અકામ નિર્જરાના પ્રભાવથી મરીને વિદ્યુન્માલી નામનો વ્યંતર દેવ થઇ ગયો. અગ્નિ મરણથી મરેલા પોતાના મિત્ર કુમારનંદીને જોઇને નાગિલના ચિત્તમાં સંસાર પ્રત્યે ઉદાસિનતા આવી ગઈ અને તેણે વિચાર કર્યો કે, જુઓ કેટલા આશ્ચર્યની વાત છે કે, જે સુલભ ઉપાયોથી મળી શકે છે તેવા ભોગાદિકની પ્રાપ્તિના અર્થે મૂઢ માણસો રાત દિવસ દુઃખી થયા કરે છે પરંતુ ચતુર્વર્ગ પ્રદાયી જીનધર્મનું શરણુ અંગિકાર કરવા તૈયાર થતા નથી! આવા મૂઢોનું પણ ક્યાય કોઇ ઠેકાણુ છે? આવા પ્રકારનો વિચાર કરીને નાગિલ શ્રાવકે સુભદ્રાચાર્યની પાસે જઇને દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી

माह–अग्नौ प्रविश्य म्रियमाणं तं सुवर्णकारं दृष्ट्वा तस्य मित्रं नागिल नामकं श्रावकः प्राह–भो मित्र! त्वं परमबुद्धिमानसि। तथापि किं कुपुरुषोचितं कर्म कर्तुमुद्युक्तोऽसि। यथा सिंहस्य तृणाशनं कर्तुं न युज्यते, तथैव भवताऽप्येवं मरणं न युज्यते। किं च इमं मानुषं भवं सुदुर्लभं प्राप्य यः कश्चित् तुच्छ भोगसुखार्थमिमं हारयति, मन्ये स वैडूर्यमणिमूल्येन काचं क्रीणाति। यदि च त्वं कामसुखमेव वाञ्छसि, तथापि त्वं कल्पवृक्षवत्सकलाभीष्टदायिनं जिनधर्मं प्रतिपद्यस्व। एष धर्मो धनार्थिने धनं, कामार्थिने कामं, स्वर्गार्थिने स्वर्गं, मोक्षा

वह "हासा प्रहासा!" कहा है इस प्रकार ही बार २ कहने लगा। और अग्नि मे प्रविष्ट होकर मरने तक को भी तैयार हो गया। जब इस प्रकार की उसकी स्थिति उसके मित्र नागिल नामके श्रावक ने देखी तो वह उससे कहने लगा कि मित्र! तुम तो स्वयं परम बुद्धिमान् हो फिर यह कुपुरुषोचित कर्म करने के लिये क्यों तयार हो रहे हो? जिस प्रकार सिंह के लिये तृण का भक्षण करना उचित नहीं माना जाता है उसी प्रकार आप जैसे बुद्धिमान् व्यक्ति का इस प्रकार का मरण अच्छा नहीं होता है। देखो मित्र! यह मनुष्यभव बडे पुण्य के उदय से प्राप्त होता है। इसको पाकर भी जो प्राणी तुच्छ भोग सुखों के निमित्त इसको गँवा देता है, मैं मानता हूं वह वैडूर्यमणि को वेंचकर काचको खरीदता है। तुमको यदि कामसुख कि ही वाञ्छा होवे तो तुम कल्पवृक्ष की तरह सकल अभीष्टदायक जिनधर्म की शरण क्यो नही अगीकार करते। यह धर्म धनार्थी के लिये धन कामार्थी

જ્યારે લોકોએ આ પ્રમાણે પૂછ્યુ ત્યારે તે એમને 'હાસા પ્રહાસા" કયા છે? આ પ્રમાણે વારવાર કહેવા લાગ્યો અને અગ્નિમા પ્રવેશ કરીને મરવા માટે પણ તૈયાર થઈ ગયો જ્યારે આ પ્રકારની એની સ્થિતિ એના નાગિલ નામના શ્રાવક મિત્રે જોઈ ત્યારે એ તેને કહેવા લાગ્યો કે, મિત્ર! તમે પોતેજ બુદ્ધિમાન છો તો પછી આવુ કુપુરૂષોચિત કામ કરવા કેમ તૈયાર થયા છો? જેમ સિંહના માટે ઘાસનુ ભક્ષણ કરવુ ઉચિત નથી મનાતુ એજ પ્રમાણે આપના જેવી બુદ્ધિમાન વ્યક્તિનુ આ પ્રકારનુ મરણ બરોબર નથી જુઓ મિત્ર! આ મનુષ્યભવ પુન્યના ભારે ઉદયથી મળે છે આને મેળવીને પણ જે મનુષ્ય તુચ્છ ભોગ સુખોના નિમિત્તે આને ખોઈ બેસે છે તે વૈડૂર્ય મણીને વેચીને કાચને ખરીદે છે તમોને જો કામ સુખની જ ઇચ્છા હોય તો તમે કલ્પવૃક્ષની માફક સઘળા સુખોને આપનાર જીન ધર્મનુ શરણુ કેમ નથી સ્વીકારતા? આ ધર્મ ધનની ઇચ્છા કરનારને ધન, કામની ઇચ્છા કરનારને

र्थिने मोक्ष ददाति। एवं मित्रेणोपदिष्टोऽपि स मोहात्तद्वाक्यं नामन्यत। ततः स स्वदेहं छागगोमयपुञ्जेनाच्छाद्य वह्निं संधुक्ष्य मृतः। अकामनिर्जरया स विद्युन्मालिनामा व्यन्तरदेवो जातः। एवमग्निनीमरणेन मृतं कुमारनन्दिनं दृष्ट्वा वैराग्यं प्राप्तो नागिल एवं चिन्तितवान् अहो! सुलभेनोपायेन प्राप्येऽपि भोगादौ मूढा व्यर्थमेव क्लिश्यन्ति, चतुर्वर्गदायिनं जिनधर्मं नो प्रपद्यन्ते। अहो मूढता जानानाम् एवं विचिन्त्य स श्रावकः सुभद्राचार्यसमीपे दीक्षां गृहीत्वा साधुधर्मं सम्यगनुपाल्य मृत्यु

के लिये काम, स्वर्गार्थी के लिये स्वर्ग एवं मोक्षार्थी के लिये मोक्ष देने वाला है। इस तरह मित्र के समझाने पर भी मोह से उसने उसकी बात नहीं मानी और वह बकरी की लींडियोंका तथा छाणों-कंडोका पुंज बनाकर उसको जलाकर उस अग्नि मे कूद पडा। अग्नि ने उसको देखते २ भस्मसात् कर दिया। इस तरह अकाम निर्जरा के प्रभाव से वह मरकर विद्युन्माली नामका व्यन्तरदेव हो गया। इंगिनी मरण से मरे हुए अपने मित्र कुमार नंदी को देखकर नागिल के चित्त में संसार से उदासीनता जागृत हो उठी-उसने विचार किया-देखो यह कितने आश्चर्यकी बात है जो सुलभ उपायों द्वारा प्राप्य भी भोगादिककी प्राप्ति निमित्त तो मूढ जन रातदिन दुःखी होते रहते हैं परंतु चतुर्वर्ग प्रदायी जिनधर्मकी शरण अंगीकार करने तैयार नहीं होते है। इस मूढता का भी कहीं कोइ ठीकाना है। इस प्रकार विचारकर नागिल श्रावकने सुभद्राचार्य के पास जाकर दीक्षा

કામ, સ્વર્ગાર્થીના માટે સ્વર્ગ, અને મોક્ષાર્થીને માટે મોક્ષને આપનાર છે આ પ્રકારે મિત્રના સમજાવવા છતા પણ મોહથી તેણે એની વાતને ન માની અને આખરે બકરીની લીંડીઓનો તથા છાણાનો ઢગલો કરી તેને સળગાવીને એ અગ્નિમા એ કૂદી પડયો. અગ્નિએ તેને જોત જોતામા બાળીને ખાખ કરી નાખ્યો આ રીતે એ અકામ નિર્જરાના પ્રભાવથી મરીને વિદ્યુન્માલી નામનો વ્યંતર દેવ થઇ ગયો અગ્નિ મરણથી મરેલા પોતાના મિત્ર કુમારનંદીને જોઇને નાગિલના ચિત્તમા સંસાર પ્રત્યે ઉદાસિનતા આવી ગઈ અને તેણે વિચાર કર્યો કે, જુઓ કેટલા આશ્ચર્યની વાત છે કે, જે સુલભ ઉપાયોથી મળી શકે છે તેવા ભોગાદિકની પ્રાપ્તિના અર્થે મૂઢ માણસો રાત દિવસ દુઃખી થયા કરે છે પરંતુ ચતુર્વર્ગ પ્રદાયી જીનધર્મનુ શરણુ અંગિકાર કરવા તૈયાર થતા નથી! આવા મૂઢોનુ પણ કયાય કોઇ ઠેકાણુ છે? આવા પ્રકારનો વિચાર કરીને નાગિલ શ્રાવકે સુભદ્રાચાર્યના પાસે જઇને દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી

प्राप्तोऽच्युतदेवलोके देवत्वेन समुत्पन्नः। तत्र सोऽवधिज्ञानेन पूर्वजन्मनः स्वमित्र दृष्टवान्। ततः स तं पूर्वभवमित्रं प्रतिबोधयितुकाम परमभास्वररूपवधानम् तदन्तिके समागत । तं समागत वीक्ष्य तत्तेजोऽसहमानोऽसौ विद्युन्माली देवः पलायितः। ततः श्रावकदेवः स्वतेजः संहृत्य त प्रोक्तवान्-किं मां जानासि? ततो विद्युन्माली देवः प्राह-शक्रादिकान् देवान् को न जानाति! तद्वचनं श्रुत्वा स श्रावकदेवः स्वं प्राग्भवस्वरूप प्रदर्श्य तमेवमवादीत्-अहं तव पूर्वजन्मसुहृत् नागि

धारण करली। साधुधर्मकी सम्यग् परिपालना के प्रभाव से जब वह अन्त मे समाधिमरणपूर्वक मरा तो बारह वें देवलोक अच्युतस्वर्ग मे देव हो गया। वहा उत्पन्न होकर उसने अवधिज्ञान द्वारा अपने मित्र की परिस्थिति जानकर उसको सबोधित करनेका विचार किया। वह परम देदीप्यमान रूपको लेकर मित्र के पास आया। मित्र ने ज्यो ही इस नवीन व्यक्ति को अपने पास आया हुआ देखा तो बडे अचभे मे पडा और उसके तेज को नही सह सकने के कारण वह विद्युन्माली देव वहासे भागने लगा। जब इस देवने उसको भागते हुए देखा तो शीघ्र ही अपने तेजको सकुचित कर लिया और उससे कहने लगा अरे तुम कहाँ भगे जा रहे हो-क्या मुझे नही जानते हो? तब विद्युन्माली ने उसकी बात सुनकर कहा-शक्रादिक देवों को कौन नही जानता है। श्रावक के जीव देव ने जब यह देखा कि यह आश्वस्त बनचुका है तब अपने पूर्वभव का स्वरूप प्रकट कर वह उससे कहने लगा-

સાધુ ધર્મના સમ્યક્ પરિપાલનના પ્રભાવથી જ્યારે તે અતકાળે સમાધીમરણ પૂર્વક મર્યો ત્યારે બારમા દેવલોક અચ્યુત સ્વર્ગમા દેવ થયા ત્યા ઉત્પન્ન થઈને અવધિજ્ઞાનથી પોતાના મિત્રની પરિસ્થિતિ જાણીને તેને સબોધિત કરવાનો વિચાર કર્યો તે પરમ દેદિપ્યમાન રૂપ લઇને તેના મિત્રની પાસે પહોચ્યા મિત્રે જ્યારે આ નવીન વ્યક્તિને પોતાની પાસે આવેલ જોઇ ત્યારે અત્યત અચબામા પડી ગયો તેના તેજને સહન નહી કરી શકવાથી તે વિદ્યુન્માલી દેવ ત્યાથી ભાગવા લાગ્યો જ્યારે તે દેવે તેને ભાગતો જોયો કે તરતજ પોતાના તેજને સકુચિત કરી લીધુ અને તેને કહેવા લાગ્યા કે, અરે! તુ કયા ભાગે છે? શુ મને નથી ઓળખતો? ત્યારે વિદ્યુન્માલીએ તેની વાત સાભળીને કહ્યુ-શક્રાદિક દેવોને કોણ નથી જાણતુ શ્રાવકના જીવ દેવે જ્યારે એ જોયુ કે, તે અસ્વસ્થ બની ચૂકયો છે ત્યારે પોતાના આગલા ભવનુ સ્વરૂપ પ્રગટ કરીને તેને કહેવા માડયુ કે, હુ તારા પૂર્વભવનો મિત્ર નાગિલ

लोऽस्मि। तत्र भो! भवता बालमृत्युना म्रियमाणं दृष्ट्वा निर्वेदवैराग्यमापन्नोऽहं तस्मिन्नेव काले प्रव्रज्या गृहीतवान्। मया निषिद्धोऽपि बालमृत्युना यत्त्वं मृत, अतो दुर्गतिदेवो भूत्वा समुत्पन्न। यदि त्वमपि जिनप्रोक्त धर्ममाश्रयिष्यस्तदाऽहमिव देवलोकलक्ष्मीमभोक्ष्यथा। इत्थं तद्वचनं श्रुत्वा प्रबुद्धो विद्युन्माली देव प्राह-गतस्यानुशोचने किम्? सम्प्रति किमप्युपायं कथय, येनाहं परलोके शुभं लभेय। तत श्रावक देव प्राह-लोके यथा जिनधर्मप्रचारो भवे

मैं तुम्हारा पूर्वभव का मित्र नागिल श्रावक हूं। भोगोंकी कामना के वश होकर जब तुम को बालमरण से मरता हुआ मैंने देखा तो मुझे इस स्थितिने एकदम परिवर्तित कर दिया। मैंने उसी समय संसार से विरक्त बनकर दीक्षा धारण करली। और व्रतों के विशुद्ध पालन करनेसे अन्त में समाधिमरण द्वारा प्राणोंका विसर्जन कर मैं अच्युत स्वर्गका देव हुआ हूं। तुम को याद होना चाहिये के मैंने उस समय जब कि तुम बालमरण द्वारा अपने प्राणोंकी आहुति दे रहे थे, कितना समझाया था। परन्तु तुमने मेरी एक बात भी नहीं मानी थी। इसी का यह प्रभाव है कि तुम मर कर व्यन्तरदेव हुए हो। यदि तुम भी जिनेन्द्रोक्त धर्मका आश्रय करते तो मेरी जैसी स्थिति के भोक्ता बन जाते। इस प्रकार अच्युत स्वर्गीय देव के वचन सुन प्रबुद्ध हुए विद्युन्माली देवने उनसे कहा कि अब जो कुछ हो गया सो हो गया-उसका विचार करने से क्या लाभ, अब तो आप हमको कुछ ऐसा मार्ग बताओ कि जिसपर चलने से परलोग मे मेरा कल्याण होवे। विद्युन्माली की इस

શ્રાવક છુ ભોગાની કામનાને વશ થઈને જ્યારે તને બાળમરણથી મરતો જોયો ત્યારે એ સ્થિતિએ મારામા એકદમ પરિવર્તન આણ્યુ મે તેજ સમયે સસારથી વિરકત થઈએ દીક્ષા અગીકાર કરી, અને વ્રતોનુ વિશુદ્ધ પાલન કરવાથી અતકાળે સમાધી મરણદ્વારા દેહનો ત્યાગ કરીને હુ અચ્યુત સ્વર્ગનો દેવ બનેલ છુ તને યાદ હોવુ જોઈએ કે, જ્યારે બાળમરણ દ્વારા તારા પ્રાણોની તુ આહુતી આપી રહ્યો હતો ત્યારે મે તને કેટલો સમજાવ્યો હતો પરતુ તે મારી એક વાત પણ માનેલ ન હતી એનોજ આ પ્રભાવ છે કે, તુ મરીને વ્યતરદેવ બનેલ છો, જો તે જીનેદ્રે કહેલ ધર્મનો આશ્રય સ્વીકાર્યો હોત તો મારા જેવી સ્થિતિને ભોગવનાર બની જાત અચ્યુત સ્વર્ગીય દેવના આ પ્રકારના વચન સાભળીને પ્રબુદ્ધ થયેલા વિદ્યુન્માલી દેવે કહ્યુ કે, હવે જે થયુ તે થયુ તેનો વિચાર કરવાથી શુ લાભ! હવે તો આપ મને એવો રસ્તો બતાવો કે, જેના ઉપર ચાલવાથી પરલોકમા મારૂ કલ્યાણ થાય વિદ્યુન્માલીની આ પ્રકારની વાત સાભળીને નાગિલ શ્રાવકના જીવ દેવે

तथा कुरु। तव कल्याणं भविष्यति। इत्युक्त्वा स श्रावकदेवस्ततोऽन्तर्हितः। ततो विद्युन्माली देवश्चिन्तयति-कथं मया जैनधर्मप्रचारः कर्तव्यः? अत्र क उपायः समवलम्बनीयः? एवं चिन्तयतस्तन्मनसि प्रत्यभूत् यद् राजा हि कारस्य कारणमुच्यते, प्रजास्तु राजानमनुवर्तन्ते, यथा राजा भवति तथैव प्रजा अपि भवन्ति। अतः कोऽपि प्रभावशाली राजाधिराजः श्रावकधर्मे समानेतव्यः, यं दृष्ट्वाऽपरेऽपि राजानः श्रावका भवेयुस्तदनु तत्तद्राजजना अपि श्रावका भवेयुः। परन्तु एतादृशः को वर्तते? इति विचिन्त्य उपयोगं दत्त्वा तत्रोग्यं वीतभयपत्तनाधिपतिं तापसभक्तमुदायनं ददर्श। ततः स चन्दनकाष्ठनिर्मितायामेकस्यां मञ्जूषायां

प्रकार बात सुनकर नागिल श्रावक के जीव देवने उससे कहा—सुनो तुम ऐसा उपाय करो कि जिससे जिन धर्मका प्रचार होवे। इसीसे तुम्हारा परलोक में कल्याण होगा। इस प्रकार समझा बुझा कर वह देव अन्तर्हित हो गया।

उसके अन्तर्हित होने पर विद्युन्माली ने विचार किया—मैं किन उपायोंद्वारा जिनधर्मका प्रचार करूँ—कौनसा ऐसा उपाय है कि जिसके अवलम्बन करने से जैनधर्मका प्रचार हो सकता है। इस प्रकार विचार करते २ उसके मन में आया कि इसका कारण राजा हो सकता है। क्यों कि 'जैसा राजा होता है वैसी ही उसकी प्रजा बन जाती है' यह नीति है। इसलिये इसके लिये किसी प्रभावशाली राजा को श्रावक बनाना चाहिये कि जिसको देखकर अन्य राजाजन एवं उनके प्रजाजन भी श्रावक हो सकें ऐसा विचार कर उसने अपने उपयोग के प्रभाव से वीतभय पट्टणके अधिपति तापसभक्त उदायन को जाना। उसको

તેને કહ્યું—સાંભળો. તમો એવો ઉપાય કરો કે જેનાથી જીન ધર્મનો પ્રચાર થાય આનાથી તમારૂં પરલોકમાં કલ્યાણ થશે આ પ્રમાણે સમજાવીને તે દેવ અંતર્ધ્યાન થઈ ગયા.

એ દેવના અંતર્ધ્યાન થવા પછી વિદ્યુન્માલીએ વિચાર કર્યો કે, હું કયા ઉપાયોથી જીન ધર્મનો પ્રચાર કરૂં? એવો કયો ઉપાય છે કે, જેનું અવલંબન કરવાથી જૈનધર્મનો પ્રચાર થઈ શકે? આ પ્રમાણે વિચાર કરતાં કરતાં તેના મનમાં આવ્યું કે તેનું કારણ રાજા હોઈ શકે છે કારણ કે, "જેવા રાજા હોય છે તેવી તેની પ્રજા બની જાય છે" આ નીતિ છે આ કારણે કોઈ પ્રભાવશાળી રાજાને શ્રાવક બનાવવો જોઈએ કે તેને જોઈને બીજા રાજાઓ અને તેના પ્રજાજનો પણ શ્રાવક બની જાય એવો વિચાર કરીને તેણે પોતાના ઉપયોગના પ્રભાવથી વીતભય પાટણના અધિપતિ તાપસ ભકત ઉદાયનને જાણ્યા, તેને શ્રાવક બનાવવા માટે તેણે આ

सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणादिकं साधुवेषं निधाय तां समन्तात्सम्पुटितवान्। ततः स उत्पातवशात् समुद्रे षण्मासं यावदितस्ततो भ्राम्यत् परित्यक्तजीविताशैः सांयात्रिकजनैरधिष्ठितमेकं प्रवहणमपश्यत्। तद्दृष्ट्वा स स्वप्रभावेण समुत्पातं प्रशमय्य प्रत्यक्षो भूत्वा तां दारुपेटिकां सांयात्रिकेभ्यो दत्वा एवमवदत्-इयं दारुपेटिका युष्माभिर्वीतभयपत्तनाधीशाय राज्ञे उदायनाय देया।

श्रावक बनाने के लिये उसने इस प्रकार उपाय किया-पहिले चन्दन-काष्ट की उसने एक मंजूषा बनाई उसमें सदोरकमुखवस्त्रिका एवं रजोहरण आदिरूप मुनि के वेष को स्थापित किया पश्चात् उसको सब तरफ से बंद कर दिया। इतने में एक घटना इस प्रकार इसके देखने मे आई कि समुद्र मे छहमास तक उत्पात के वश से एक यान इधर उधर चक्कर काट रहा है उसमे बैठे हुए सब लोगोंने अपने २ जीवन की आशा भी छोड दी है। सब के सब उसमे जितने भी यात्रीजन थे वे अपने जीवन की घडिया ही गिन रहे हैं। किस समय यान उलट जाय और जीवन समाप्त हो जाय यह नहीं कहा जा सकता था। इस घटना को देखकर विद्युन्माली ने उसी समय अपने प्रभाव से उत्पातको शांत कर दिया। उत्पात शांत हो जाने से सबको अपार हर्ष हुआ। व्यन्तरदेवने उत्पात-शांत होते ही आप प्रत्यक्ष प्रकट हो गया। उन लोगोने उसकी खूब स्तुति की। अन्त मे विद्युन्माली ने इस अपनी पेटी को देकर ऐसा उनसे कहा कि देखो मेरी यह दारू पेटी है-सो तुम लोग इसको ले जाकर वीतभय पट्टण के अधीश

પ્રમાણે ઉપાય કર્યો—પહેલા ચંદનના લાકડાની એક પેટી બનાવી અને તેની અંદર સદોરકમુખવસ્ત્રિકા અને રજોહરણ આદિરૂપ મુનિના વેશને તેમા રાખી દીધો પછી તેને બધી બાજુથી બાંધ કરી દીધી એવામા એક ઘટના તેના જોવામા આવી કે સમુદ્રમા છ મહિનાથી ઉત્પાતના કારણે એક વહાણ આમ તેમ ચક્રાવો લઇ રહ્યુ છે તેની અંદર બેઠેલા સઘળા જીવોએ પોતાના જીવનની આશા છોડી દીધી છે તેની અંદર જેટલા યાત્રીઓ હતા તે સઘળા પોતાના જીવનની ઘડિઓ ગણી રહ્યા હતા ક્યારે તે વહાણ ઉંધુ વળી જાય અને જીવન સમાપ્ત થઇ જાય તે કોઇ જાણતુ ન હતુ આ ઘટનાને જોઇને વિદ્યુન્માલીએ પોતાના પ્રભાવથી ઉત્પાતને શાંત કરી દીધો ઉત્પાત શાંત થવાથી બધાને ખૂબ હર્ષ થયો વ્યંતરદેવે ઉત્પાત શાંત થતા જ પોતાની જાતને પ્રત્યક્ષ પ્રગટ કરી દીધી તે લોકોએ તેની ખૂબ સ્તુતી કરી અંતમા વિદ્યુન્માલીએ પોતાની પેટી તેમને દઇને તેમને કહ્યુ કે, જુઓ આ મારી લાકડાની પેટી છે તેથી તમે લોકો તેને લઇ જઇને વીતભય પાટણના રાજા ઉદાયનને તે આપજો અને

वक्तव्यश्च स मद्वाक्यात् यदत्र दारुपेटिकायां प्रव्रज्योपकरणमस्ति। यस्य सम्प्रदायस्य प्रव्रज्योपकरणमिदं तत्सम्प्रदायप्रवर्तकनामग्रहणपूर्वकं चेत् कुठाराघातो ऽत्र भवेत्तदैवेयं दारुपेटिका प्रस्फुटिष्यति। अन्यथा कुठारः कुण्ठो भविष्यति। यन्नामप्रभावेण पेटिकाभेदो भवेत्, स एव श्रेष्ठो देवः, तदुपदिष्टो धर्मएव सम्यग्धर्मः, स एव भवता चरितव्य' इति। भोः सांयात्रिकाः युष्मत्-षाण्मासिकोत्पातहर्तुमेतावत्कार्यं युष्माभिः कर्तव्यम्। इदं विद्युन्मालीवचनं तैः सांयात्रिकैः प्रसन्नतया प्रतिपन्नम्। स व्यन्तरदेवस्ततोऽन्तर्हित। ते सांयात्रिका अपि

उदायन राजा को दे देना। और मेरी तर्फसे ऐसा कहना कि इसमें प्रव्रज्या के उपकरण हैं सो ये जिस सम्प्रदाय के हैं उस सम्प्रदाय के प्रवर्तक का नाम लेकर यदि इस पर कुठार का आघात किया जायगा तो ही यह खुलेगी नहीं तो इस पर पडते ही कुठार स्वयं कुंठित हो जायगा। अतः जिसके नामके प्रभाव से यह पेटी खुल जाय उसको ही सच्चा श्रेष्ठ देव जानना चाहिये। और उसके द्वारा प्ररूपित धर्म ही सच्चा धर्म है और वही तुम्हारे द्वारा पालन करने योग्य है। इस प्रकार उस विद्युन्माली ने राजा को अपना संदेश दिया और साथ मे यह भी कह दिया कि मुझे पूर्ण आशा है कि आप लोग अवश्य छै मास के इस उपद्रव को शांत करने के उपलक्ष्य मेरे इस संदेश को राजा-तक पहुँचा ने मे प्रमाद नही करेंगे। इस विद्युन्माली के संदेश को सुनकर उनलोगो ने पेटीको राजातक पहुँचाने मे उस देवको विश्वास दिलाया और कहा कि आप विश्वास रखें हम इस आपके दिये हुए

આપાવતા તેને એ કહેજો કે તેમા પ્રવ્રજ્યાના ઉપકરણ છે એ જે સપ્રદાયના છે એ સપ્રદાયના પ્રવર્તકનુ નામ લઈને જો આના ઉપર કુહાડાનો આઘાત કરવામા આવશે તો જ એ ખુલશે નહીં અને તેના ઉપર પડનાર કુહાડો પોતેજ બુઠો થઈ જશે જેથી જેના નામના પ્રભાવથી આ પેટી ખૂલી જાય તેને સાચા શ્રેષ્ઠ દેવ માનવા અને એમનો પ્રવર્તાવેલો ધર્મ જ સાચો ધમ છે અને તે તમારે પાલન કરવા યોગ્ય છે આ પ્રકારે તે વિદ્યુન્માલી દેવે રાજાને પોતાનો સદેશો મોકલાવ્યો સાથમા એવુ પણ કહ્યુ કે, મને પૂરેપૂરી આશા છે કે, છ મહિનાના આ ઉપદ્રવને શાન્ત કરવાના ઉપલક્ષ્યમા મારો આ સદેશો રાજાને પહોચાડવામા તમો પ્રમાદ નહીં કરો વિદ્યુન્માલીનો આ સદેશો સાભળીને તે સઘળા લોકોએ પેટીને રાજા સુધી પહોચાડવાના તે દેવને વિશ્વાસ દીધો અને કહ્યુ કે, આપ વિશ્વાસ રાખો કે આપે દીધેલો આ

र तटमासाद्य वीतभयपत्तने समागत्य विद्युन्मालिदेवसन्देशकथनपूर्वकं तां दारुपेटिकां राज्ञे उदायनाय दत्तवन्तः। ततस्तं वृत्तान्तं श्रुत्वा ब्राह्मणास्तत्र समागताः। तेष्वेके एवमब्रुवन्-यो हि संसारं सृजति, स्वसृष्टान् सर्वप्रथमो त्पन्नान् ऋषीन् वेदानुपदिशति। एतादृशस्य देवस्वामिनो ब्रह्मणः सम्प्रदाया नुगतो वेषोऽत्रास्ति। तस्मादियं दारुपेटिका भेदमुपयातु, इत्युक्त्वा ते तत्र दारु पेटिकोपरि कुठाराघातं कृतवन्तः। परन्तु विस्मृते शास्त्रे यथा पण्डितस्य बुद्धिः कुण्ठिता भवति, तथैव कुठारोऽपि कुण्ठितो जातः। ततः केऽपि एवमुक्तवन्तः- यो युगान्ते निजोदरे समग्रं जगद् धत्ते, विश्वद्रुहो दैत्यांश्च हन्ति, तस्य ब्रह्मा

संदेशको राजातक अवश्य पहुँचा देवेंगे। उन लोगों द्वारा इस प्रकार स्वीकृत किये जाने पर वह देव वहां से अन्तर्हित हो गया।

वे नौका जन समुद्र तटपर निर्विघ्नरूप में आ पहुँचे। और वहां से चलकर वीतभय पट्टन में जाकर विद्युन्माली देव द्वारा कहे गये संदेशको कहते हुए उस दारुपेटी को उनलोगोंने महाराजा उदायन को दे दिया। आज यह पेटी खोली जायगी इस वृत्तान्त को सुनकर वहां बहुत से ब्राह्मण आकर उपस्थित हो गये। और उनमें से कितनेक ऐसा कहने लगे "जो इस संसार का स्रष्टा है तथा स्वसृष्ट वेदों का जो सर्व प्रथम ऋषियों को उपदेश देता है, ऐसे उस देवाधिदेव ब्रह्मा का सम्प्रदायानुगत वेष इस पेटी में है। उसीके नाम लेनेसे यह पेटी खुलजाये" ऐसा कह कर ज्यों ही उन लोगोंने उस पर कुठार की आघात किया कि उसी समय वह कुठार विस्मृतशास्त्र में जैसे पंडित की बुद्धि कुंठित हो जाती है उसी तरह कुंठित हो गया। कितनेक ऐसा कहने लगे-"जो

સંદેશો રાજા સુધી અવશ્ય પહોંચાડીશું તે લોકો તરફથી આ પ્રમાણે સ્વીકાર કરાયા પછી એ દેવ ત્યાંથી અંતર્ધ્યાન થઈ ગયા.

એ નૌકાના પ્રવાસીઓ આ પછી સમુદ્રના કિનારે નિર્વિઘ્ને પહોંચી ગયા અને ત્યાંથી ચાલીને વીતભય પાટણમાં જઈને વિદ્યુન્માલીદેવે આપેલા સંદેશાને કહીને તે દારૂ-પેટીને તે લોકોએ રાજા ઉદાયનને આપી. આજે આ પેટીને ખોલવામાં આવશે આ વૃત્તાંતને સાંભળીને ત્યાં ઘણા બ્રાહ્મણો આવી પહોંચ્યા અને તેમાંથી કેટલાક એમ કહેવા લાગ્યા "જે આ સંસારના સૃષ્ટા છે તથા સ્વસૃષ્ટ વેદોનો જે સર્વ પ્રથમ ઋષિઓને ઉપદેશ આપે છે એવા તે દેવાધિદેવ બ્રહ્માના સંપ્રદાયાનુગત વેશ આ પેટીમાં છે તેમનું નામ લેવાથી આ પેટી ખુલી જાય" એવું કહીને જ્યારે તે લોકોએ તેના ઉપર કુહાડાનો આઘાત કર્યો કે તે સમયે તે કુહાડો શાસ્ત્રના ભૂલી જવાથી જેમ પંડિતની બુદ્ધિ કુંઠિત બની જાય તે પ્રમાણે બુઠ્ઠો થઈ ગયો, કેટલાક એમ કહેવા લાગ્યા "જે યુગના અંતમાં પેટની અંદર સઘળા

ण्डरक्षकस्य विष्णो' सम्प्रदायानुगतो वेषोऽत्राऽस्ति । तस्मादिय दारुपेटिका भेद-मुपयातु, इत्युक्त्वा ते तत्र कुठाराघात कुर्वन्ति। किन्तु यथा नदी प्रवाहे वह्ने शक्तिर्विनाशमुपयाति तथैव तस्य कुठारस्य शक्तिस्तत्र विनष्टा । ततोऽपरे निशित कुठारमादायैवमूचु.-यो देवदेवो विश्वयोनिरयोनिजो महादेवोऽस्ति यस्यांशौ विधिविष्णुस्त., तस्य सकलकारणभूतस्य भगवतः शिवस्य सम्प्रदायानुगतो वेषो ऽत्रास्ति, तस्मादिय दारुपेटिका भेदमुपयातु, इत्युक्त्वा तत्र कुठाराघात कृतवन्त. । परन्तु यथा सिंहपुच्छेन गिरितटो न भिद्यते, तथैव सा पेटिकाऽपि नाभिद्यत।

युगान्त में अपने उदर के भीतर समग्र विश्वको धारण करता है तथा विश्वद्रोही राक्षसों का जो नाश करता है उस ब्रह्माण्डरक्षक विष्णु का सम्प्रदायानुगत वेप इस में है, अत' उन्हीं के नाम लेने से यह पेटी खुल जावेगी" ऐसा कहकर ज्यों ही उन लोगोंने विष्णु का नाम लेकर उस पेटी पर कुठार का आघात किया तो उस पर उसकी शक्ति ऐसी कुठित हो गई कि जिस प्रकार नदी के प्रवाह मे अग्नि की शक्ति कुठित हो जाती है। पश्चात् कितनेक जन तीक्ष्ण कुठार को लेकर ऐसा कहने लगे कि "जो देवों का भी देव है तथा विश्वयोनि एव अयोनिज है ऐसे सकल कारणभूत महादेव का सम्प्रदायानुगत वेप इस मे है, इन्ही महादेव के अशभूत ब्रह्मा और विष्णु हैं, अत. इनके नामके प्रभाव से यह पेटी उघड जाओ" ऐसा कहकर ज्यों ही उस पर उन लोगोंने कुठार का आघात किया तो जिस प्रकार सिंह की पूछ से गिरितट भेदित नही होता है उसी तरह वह पेटी भी उस से भेदित नहीं हुई।

વિશ્વને ધારણ કરે છે તથા વિશ્વદ્રોહી રાક્ષસોને જે નાશ કરે છે તે બ્રહ્માડ રક્ષક વિષ્ણુ સ પ્રદાય અનુગત વેશ આમા છે માટે તેમનુ નામ લેવાથી આ પેટી ખૂલી જશે આવુ કહીને જ્યારે તે લોકોએ વિષ્ણુનુ નામ લઈને તે ઉપર કુહાડાનો ઘા કર્યો ત્યારે તેની શકિત એવી બુઠ્ઠિ થઇ ગઈ કે જે પ્રકારે નદીના પ્રવાહમા અગ્નિની શકિત હરાઈ જાય તે પછીથી કેટલાક માણસોએ તીક્ષ્ણ કુહાડાને લઈને એ પ્રમાણે કહેવા લાગ્યા કે, "જે દેવોના પણ દેવ છે તથા વિશ્વયોની અને અયોનીજ છે એવા સકળ કારણભૂત મહાદેવના સ પ્રદાય અનુગત વેશ આમા છે તેથી એ મહાદેવના અ શભૂત બ્રહ્મા અને વિષ્ણુ છે જેથી તેમના નામના પ્રભાવથી આ પેટી ઉઘડી જાવ " એવુ કહીને જ્યારે તેના પર તે લોકોએ કુહાડાનો આઘાત કર્યો ત્યારે જે પ્રકારે સિ હની પુ છડીથી ગિરિતટ ભેદાતો નથી તે પ્રમાણે તે પેટી પણ તેનાથી

ततः सर्वे परमविस्मयं गताः। तस्मिन् समये इमं वृत्तान्तं श्रुत्वा राज्ञी प्रभावत्यपि तत्र समागता। साऽपि कुठारं स्वहस्ते समादाय सुधोपमामिमां रम्यां वाणीमुवाच-गतरागद्वेषमोहविकारः प्राप्तसंसारपारावारपारः सकलभव्याधारः सर्वदेवाधिदेवः सर्वज्ञो यो जिनोऽस्ति, तस्मै नमोऽस्तु, अत्र तत्सम्प्रदायानुगतो वेषोऽस्ति। तस्मादियं मत्कुठाराघातेन भेदमुपयातु। इत्युक्त्वा सा परशुना तां दारुपेटिकां यावत्स्पृशति, तावत्तत्कुठारस्पर्शमात्रेणैव सा पेटिका सहस्रकिरणकिरणसम्पर्केण कमलमिव स्वयमेव विकसिता। ततः सर्वे तदभ्यन्तरे सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणादिकं साधुवेषं दृष्ट्वा परमविस्मयमापन्नाः। राज्ञी प्रभावती

इस से लोगों को बडा भारी आश्चर्य हुआ। इस वृत्तान्त को ज्यों ही रानी प्रभावतीने सुना तो वह भी वहां आ पहुँची। उसने अपने हाथ में कुठार लेकर ऐसी अमृतोपम वाणी से कहा कि-"जो राग द्वेष एवं मोह आदि विकारों से सर्वथा रहित है तथा इस संसाररूप समुद्र का पार जिन्होंने प्राप्त कर लिया है, जो सकलभव्य प्राणियों के एकमात्र आधारभूत है तथा सर्व देवों के भी जो अधिक देव हैं सर्वज्ञ एवं जिन हैं उनको मेरा नमस्कार है और उन्हीं का सम्प्रदायानुगत वेष इस मे है। उन्हीं के पुण्य नामस्मरण से यह पेटी खुल जावे" ऐसा कहकर ज्यों ही उसने परशु से उस दारुपेटी का स्पर्श किया तो इतने मे ही उस कुठार के स्पर्शमात्र से ही वह दारुपेटी सूर्य की किरणों के स्पर्श से जैसे कमल खिल जाता है उसी प्रकार खुल गई। उसके खुलते ही सबने यह देखकर परम आश्चर्य किया कि-इसके भीतर तो सदोरक मुखवस्त्रिका एवं रजोहरण आदि मुनिवेष है। रानी प्रभावती को

तूटी नही આથી લોકોમા ભારે આશ્ચર્ય થયુ આ વૃત્તાંત જ્યારે રાણી પ્રભાવતીએ સાભળ્યુ ત્યારે તે ત્યા આવી પહોચી તેણે પોતાના હાથમા કુહાડાને લઇને એવી અમૃતોપમ વાણીથી કહ્યુ કે, ' જે રાગ દ્વેષ અને મોહ આદિ વિકારે થી સર્વથા રહિત છે તથા આ સંસારરૂપ સમુદ્રને જેઓ પાર કરી ગયા છે, જે સઘળા ભવ્ય પ્રાણીઓના એક માત્ર આધારભૂત છે તથા સર્વ દેવોના પણ અધિદેવ છે સર્વજ્ઞ અને જીન છે તેમને મારા નમસ્કાર એમના જ સંપ્રદાય અનુગત વેશ આમાછે તેમના પુણ્ય નામ સ્મરણથી આ પેટી ઉઘડી જાય ' એમ કહીને જ્યારે તેણે કુહાડીનો એ દારૂ પેટીને સ્પર્શ કરાવ્યો. એટલામા જ તે કુહાડોના સ્પર્શ માત્રથી સૂર્યના કિરણના સ્પર્શ માત્રથી જેમ કમળ ખૂલી જાય છે તેમ તે ઉઘડી ગઇ તે ખુલતા જે સઘળાને ઘણુ જ આશ્ચર્ય થયુ કે, તેની અંદર તો સદોરકમુખવસ્ત્રિકા

तु कमप्यनिर्वचनीयमानन्द प्राप्नवती। उदायननृपस्तु तदारभ्यैव जिनदेवं महान्तममन्यत। तस्य जिनदेवे दृढतरा भक्तिः समजाता। स जैनधर्मप्रचाराय कृतोद्यमोऽभूत्। पत्युरिमां जैनधर्मानुरक्ततां दृष्ट्वा प्रभावती नितरामानन्दं प्राप्नवती। एकदा राज्ञी प्रभावती सामायिकं कर्तुमुद्यता। सा स्वां सदोरक मुखवस्त्रिकां जीर्णशीर्णां निरीक्ष्य चेटीं प्राह-दासि ! मम सदोरकमुखवस्त्रिका जीर्णशीर्णा समजाता, अतो नूतनां निर्माय मह्यं देहि। ततो दासी रक्तां सदोरकमुखवस्त्रिकां राज्ञ्यै ददौ। रक्तवर्णां मुखवस्त्रिकां दृष्ट्वा राज्ञी प्राह-'दासि ! सामायिके धर्मकार्ये रक्तवस्त्रस्योपयोगो न भवति, तथापि त्वमेव कृतवती' गच्छापरां

इस समय जो अपूर्व आनद हुआ वह वचनातीत है। उदायन राजाने उसी समय से जिनदेव को सचा देव मानना प्रारम्भ किया। और उसी मे उनकी दृढतर भक्ति जागृत हो गई। राजाने हरतरह से जिन धर्मके प्रचार करने मे ही अपना समस्त पुरुषार्थ लगाया। इस तरह पति को जिनधर्म की आराधना करने एव उसके प्रचार करने मे तत्पर देखकर रानी प्रभावती को अपार आनद होने लगा।

एक दिन जब कि रानी प्रभावती सामायिक करने को उद्यत हो रही थी अपनी जीर्ण शीर्ण सदोरक मुँहपत्ति को देखकर दासीसे कहने लगी-दासि ! मेरी यह सदोरक मुहपत्ति जूनी पुरानी हो गई है इस लिये आज नवीन लाकर मुझे दो। दासीने यह बात सुनकर रानीको रक्त सदोरकमुँहपत्ति लाकर दे दी। रानीने जब यह देखा तो वह उससे बोली-दासी ! सामायिक जैसे धर्मकार्य मे लाल वस्त्रका उपयोग नही किया जाता है-फिर भी तूने ऐसा किया। जा, दूसरी

અને રજોહરણ આદિ મુનિવેશ છે રાણી પ્રભાવતીને એ સમયે જે અપૂર્વ આનદ થયો જે વચનાતીત છે ઉદાયન રાજાએ તે સમયથી જીનદેવને સાચા દેવ માનવાની શરૂઆત કરી દીધી અને તેમા દૃઢતર ભક્તિ જાગૃત થઈ રાજાએ દરેક રીતે જીન ધર્મનો પ્રચાર કરવામા પોતાની સઘળી શક્તિઓ ખર્ચવા માડી આ પ્રમાણે પતિને જીનધર્મની આરાધના કરવામા અને તેનો પ્રચાર કરવામા તત્પર જોઈને રાણી પ્રભાવતીને અપાર આનદ થવા લાગ્યો

એક દિવસ જ્યારે રાણી પ્રભાવતી સામાયિક કરવાને તૈયાર થઈ રહેલ હતી ત્યારે પોતાની જીર્ણશીર્ણ સદોરક મુહપત્તિને જોઇને દાસીને કહેવા લાગી-દાસી ! મારી આ સદોરક મુહપત્તિ જીર્ણશીર્ણ થઈ ગયેલ છે આથી આજે નવી મુહપત્તિ લાવીને મને આપો દાસીએ એ વાત સાભળીને રાણીને રક્ત સદોરક મુહપત્તિ લાવીને આપી રાણીએ જ્યારે તેને જોઇ ત્યારે તેણે એને કહ્યુ-દાસી ! સામાયિક જેવા ધર્મ કાર્યમા રક્ત વસ્ત્રનો ઉપયોગ કરવામા આવતો નથી છતા પણ તે

श्रुत्वा मुखवस्त्रिकामानय' इत्यभिदधाना करेण तां सन्नाडितवती। भवितव्यता वशात् प्रभावत्या. करसङ्घट्टनक्षणे एव सा भूमौ पतिता मृता च। तां मृतां दृष्ट्वा रानी प्रभावती सातिशयखेदखिन्ना जाता। सा मनस्येव चिन्तितवती— निरपराधैषा दासी मद्धस्तसङ्घट्टनेन पतिता मृता च। अतो मम व्रतं खण्डितं जातम्। खण्डितव्रताया मम जीवितेनालम्? विवेकिनो हि व्रतभङ्गे जीवितमपि मुञ्चन्ति, अतोऽनशनं कृत्वा स्वपापप्रायश्चित्तं करिष्ये। इति विचिन्त्य राज्ञी स्वाभिप्रायं स्वपतये राज्ञे उदायनाय विज्ञापितवती। राजा प्राह—देवि! मम जीवितं त्वद्वशम्! त्वां विनाऽहं क्षणमपि जीवितुं नोत्सहे! अतोऽस्माद

मुखवस्त्रिका ला। ऐसा कहकर रानी प्रभावतीने दासी को हाथ से धक्का दिया। भवितव्यतावश रानी के हाथ लगते ही वह गिर पडी और उसके प्राणपखेरू उड गये। दासी की यह दशा देखकर प्रभावती बहुत दुखित हुई। उसके मन में उस समय ऐसा विचार आया कि इस निरपराध दासी की विराधना मेरे द्वारा हुई है, इस से मैंने अपने व्रत को खंडित किया है। संसार मे व्रतखंडित व्यक्तियों का जीवन किसी कामका नहीं रहता है अतः मुझे अब जीने से क्या लाभ? क्यों कि जो विवेकी होते है वे व्रतभग होने पर अपने जीवन का भी परित्याग कर दिया करते है। इसलिये मैं अनशन करके अपने इस पाप का प्रायश्चित्त करूं इसी में अब मेरी भलाई है। इस प्रकार विचार कर रानीने अपने इस अभिप्राय को राजा उदायन से कहा—सुन कर राजाने कहा—देवि! यह तो तुम जानती हो कि मेरा जीवन तुम्हारे ही आधीन है, तुम नहीं हो तो मैं एक क्षण भी जीवित नही रह

આમ કર્યું જા, બીજી મુખવસ્ત્રિકા લઈ આવ આવું કહીને રાણી પ્રભાવતીએ દાસીને હાથથી ધક્કો માર્યો બનવા કાળે રાણીના હાથનો ધક્કો લાગવાથી તે પડી ગઈ અને તેનું પ્રાણ પખેરૂ ઉડી ગયું દાસીની આ દશા જોઈને રાણી પ્રભાવતી ખૂબજ દુખી થઈ આ સમયે તેના મનમા એવો વિચાર આવ્યો કે, આ નિરપરાધી દાસીની હત્યા મારાથી થઈ છે તેથી મે મારા વ્રતને ખડિત કર્યું છે સંસારમા વ્રત ખડિત વ્યક્તિઓનું જીવન કોઈ કામનું રહેતુ નથી જેથી હવે મારે જીવવાથી શું લાભ? કારણ કે, જે વિવેકીહોય છે તે વ્રતભગ થવાથી પોતાના જીવનનો પરિત્યાગ કરી દે છે આથી હુ અનશન કરીને મારા પાપનું પ્રાયશ્ચિત્ત કરૂ એમા જ મારી ભલાઈ છે આ પ્રમાણે વિચાર કરીને રાણીએ પોતાનો અભિપ્રાય રાજા ઉદાયનને કહ્યો આ સાભળીને રાજાએ કહ્યુ દેવી! એ તો તુ જાણે છે કે મારૂ જીવન તારે આધીન છે તુ નહ હો તો હુ એક ક્ષણ પણ જીવિત રહી શકુ નહી એવી

तु कमप्यनिर्वचनीयमानन्दं प्राप्तवती। उदायननृपस्तु तदारभ्य जिनदेवं महान्तममन्यत। तस्य जिनदेवे दृढतरा भक्तिः समजाता। स जैनधर्मप्रचाराय कृतोद्यमोऽभूत्। पत्युरिमां जैनधर्मानुरक्ततां दृष्ट्वा प्रभावती नितरामानन्दमाप्तवती। एकदा राज्ञी प्रभावती सामायिकं कर्तुमुद्यता। सा स्व सदोरक मुखवस्त्रिकां जीर्णशीर्णां निरीक्ष्य चेटीं प्राह—दासि! मम सदोरकमुखवस्त्रिका जीर्णशीर्णा संजाता, अतो नूतनां निर्माय मह्यं देहि। ततो दासी रक्तां सदोरकमुखवस्त्रिकां राज्ञ्यै ददौ। रक्तवर्णां मुखवस्त्रिकां दृष्ट्वा राज्ञी प्राह—'दासि! सामायिके धर्मकार्ये रक्तवस्त्रस्योपयोगो न भवति, तथापि त्वमेवं कृतवती' गच्छापरां

इस समय जो अपूर्व आनद हुआ वह वचनातीत है। उदायन राजाने उसी समय से जिनदेव को सच्चा देव मानना प्रारम्भ किया। और उसी मे उनकी दृढतर भक्ति जागृत हो गई। राजाने हरतरह से जिन धर्मके प्रचार करने मे ही अपना समस्त पुरुषार्थ लगाया। इस तरह पति को जिनधर्म की आराधना करने एव उसके प्रचार करने में तत्पर देखकर रानी प्रभावती को अपार आनद होने लगा।

एक दिन जब कि रानी प्रभावती सामायिक करने को उद्यत हो रही थी अपनी जीर्ण शीर्ण सदोरक मुँहपत्ति को देखकर दासीसे कहने लगी—दासि! मेरी यह सदोरक मुहपत्ति जूनी पुरानी हो गई है इस लिये आज नवीन लाकर मुझे दो। दासीने यह बात सुनकर रानीको रक्त सदोरकमुँहपत्ति लाकर दे दी। रानीने जब यह देखा तो वह उससे बोली—दासी! सामायिक जैसे धर्मकार्य मे लाल वस्त्रका उपयोग नही किया जाता है—फिर भी तूने ऐसा किया। जा, दूसरी

અને સ્નેહકરણ અહિં મુનિવેશ છે રાણી પ્રભાવતીને એ સમયે જે અપૂર્વ આનદ થયો જે વચનતીત છે ઉદાયન રાજાએ તે સમયથી જીનદેવને સાચા દેવ માનવાની શરૂઆત કરી દીધી અને તેમા દઢતર ભક્તિ જાગૃત થઈ રાજાએ દરેક રીતે જીન ધર્મનો પ્રચાર કરવામા પોતાની સઘળી શક્તિઓ ખર્ચવા માડી આ પ્રમાણે પતિને જીનધર્મની આરાધના કરવામા અને તેનો પ્રચાર કરવામા તત્પર જોઈને રાણી પ્રભાવતીને અપાર આનદ થવા લાગ્યો

એક દિવસ જ્યારે રાણી પ્રભાવતી સામાયિક કરવાને તૈયાર થઈ રહેલ હતી ત્યારે પોતાની જીર્ણશીર્ણ સદોરક મુહપત્તિને જોઇને દાસીને કહેવા લાગી-દાસી! મારી આ સદોરક મુહપત્તિ જીર્ણશીર્ણ થઈ ગયેલ છે આથી આજે નવી મુહપત્તિ લાવીને મને આપો દાસીએ એ વાત સાભળીને રાણીને રક્ત સદોરક મુહપત્તિ લાવીને આપી રાણીએ જ્યારે તેને જોઇ ત્યારે તેણે એને કહ્યુ—દાસી! સામાયિક જેવા ધર્મ કાર્યમા રક્ત વસ્ત્રનો ઉપયોગ કરવામા આવતો નથી છતા પણ તે

शुद्धा मुखवस्त्रिकामानय' इत्यभिदधाना करेण तां सवट्टितवती। भवितव्यता वशात् प्रभावत्या: करसवट्टनक्षणे एव सा भूमौ पतिता मृता च। तां मृतां दृष्ट्वा राज्ञी प्रभावती सातिशयखेदखिन्ना जाता। सा मनस्येव चिन्तितवती-निरपराधैषा दासी मदहस्तसवट्टनेन पतिता मृता च। अतो मम व्रतं खण्डितं जातम्। खण्डितव्रताया मम जीवितेनालम्? विवेकिनो हि व्रतभङ्गे जीवितमपि भञ्जन्ति, अतोऽनशनं कृत्वा स्वपापप्रायश्चित्तं करिष्ये। इति विचिन्त्य राज्ञी स्वाभिप्रायं स्वपतये राजे उदायनाय विज्ञापितवती। राजा प्राह-देवि! मम जीवितं त्वदधीनम्! त्वां विनाऽहं क्षणमपि जीवितुं नोत्सहे। अतोऽस्माद

मुखवस्त्रिका ला। ऐसा कहकर रानी प्रभावतीने दासी को हाथ से धक्का दिया। भवितव्यतावश रानी के हाथ लगते ही वह गिर पडी और उसके प्राणपखेरू उड गये। दासी की यह दशा देखकर प्रभावती बहुत दुःखित हुई। उसके मन में उस समय ऐसा विचार आया कि इस निरपराध दासी की विराधना मेरे द्वारा हुई है, इस से मैंने अपने व्रत को खंडित किया है। संसार में व्रतखंडित व्यक्तियों का जीवन किसी कामका नहीं रहता है अतः मुझे अब जीने से क्या लाभ? क्यों कि जो विवेकी होते हैं वे व्रतभंग होने पर अपने जीवन का भी परित्याग कर दिया करते हैं। इसलिये मैं अनशन करके अपने इस पाप का प्रायश्चित्त करूं इसी में अब मेरी भलाई है। इस प्रकार विचार कर रानीने अपने इस अभिप्राय को राजा उदायन से कहा-सुन कर राजाने कहा-देवि! यह तो तुम जानती हो कि मेरा जीवन तुम्हारे ही आधीन है, तुम नहीं हो तो मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह

આમ કર્યું જા, બીજી મુખવસ્ત્રિકા લઈ આવ આવું કહીને રાણી પ્રભાવતીએ દાસીને હાથથી ધક્કો માર્યો બનવા કાળે રાણીના હાથનો ધક્કો લાગવાથી તે પડી ગઈ અને તેનું પ્રાણ પંખેરૂ ઉડી ગયું દાસીની આ દશા જોઈને રાણી પ્રભાવતી ખૂબજ દુઃખી થઈ આ સમયે તેના મનમાં એવો વિચાર આવ્યો કે, આ નિરપરાધી દાસીની હત્યા મારાથી થઈ છે તેથી મેં મારા વ્રતને ખંડિત કર્યું છે સંસારમાં વ્રત ખંડિત વ્યક્તિઓનું જીવન કોઈ કામનું રહેતું નથી જેથી હવે મારે જીવવાથી શું લાભ? કારણ કે, જે વિવેકીહોય છે તે વ્રતભંગ થવાથી પોતાના જીવનનો પરિત્યાગ કરી દે છે આથી હું અનશન કરીને મારા પાપનું પ્રયશ્ચિત્ત કરૂં એમાં જ મારી ભલાઈ છે આ પ્રમાણે વિચાર કરીને રાણીએ પોતાનો અભિપ્રાય રાજા ઉદાયનને કહ્યો આ સાંભળીને રાજાએ કહ્યું દેવી! એ તો તું જાણે છે કે મારૂં જીવન તારે આધીન છે તું નહીં હો તો હું એક ક્ષણ પણ જીવિત રહી શકું નહીં એવી

नशनव्रताद् विरम। ततो राज्ञी संसारानित्यत्वादिपरिबोधनेन राजानं कथमपि स्वाभिप्रायानुकूलं कृतवती। ततो राजा प्राह–देवि! त्वं यदि देवत्वं प्राप्ता मां चेदार्हतं धर्मं प्रतिबोधयस्तदाऽहं त्वामनशनं कर्तुमनुमोदयामि। राज्ञी राज्ञो वचनं प्रतिपद्य भक्तं प्रत्याख्याय स्वर्गं गता। स्वर्गप्राप्तिस्तु जैनधर्मस्यानुषङ्गिकं फलम्। देवलोकगता राज्ञी देवत्वं प्राप्ता। ततः सा देवी स्वप्ने राजानं जैनधर्मस्य विशिष्टतां वारं वारं बोधयति। तथापि राजा तापसभक्तिं न परित्यजति। दृष्टिरागस्तु नीलीराग इव प्राणिनां दुर्मोचो भवति। ततो राज्ञी देवी ताप

सकता है, ऐसी स्थिति मे इस अनशनव्रत से तुम को कोई लाभ नहीं है। रानीने जब राजा को अपने प्रतिकूल देखा तो उसने राजा के लिये ससार की अनित्यता समझाबुझाकर अपने अनुकूल बना लिया। राजा जब अनुकूल बन गया तब रानीने अनशनव्रत प्रारम्भ करना चाहा। परन्तु राजाने उस रानी से पुनः ऐसा कहा–मै तुम्हारे इस व्रत की अनुमोदना तभी कर सकूंगा कि जब तुम देवपर्याय प्राप्त कर मुझे आर्हत धर्म मे प्रतिबोधित करने की प्रतिज्ञा करोगी। रानीने राजा के वचन मान लिये और चतुर्विध आहार का प्रत्याख्यान किया। उस अनशन व्रतकी आराधना के प्रभाव से मरकर वह देवलोक मे पहुच गई। देवलोक की प्राप्ति जीवोकों जैनधर्म की आराधना का आनुषंगिक फल जानना चाहिये। रानी जब स्वर्गलोक में जाकर देवी की पर्याय से उत्पन्न हो गई तब उसने राजाको स्वप्न मे जैनधर्मकी विशिष्टता वार २ समझाई– परन्तु राजाके हृदय मे जो तापसों के प्रति भक्तिथी

સ્થિતિમા આ અનશન વ્રતથી તને કોઇ લાભ નથી. રાણીએ જ્યારે રાજાને પોતાનાથી પ્રતિકૂળ જોયા ત્યારે રાજાને અનેક રીતે સસારની અનિત્યતા સમજાવી પોને અનુકૂળ બનાવી લીધા રાજા જ્યારે અનુકૂળ બની ગયા ત્યારે રાણીએ અનશનવ્રત ધારણ કરવાનો વિચાર કર્યો પરતુ રાજાએ ફરીથી રાણીને એ પ્રમાણે કહ્યુ–દેવી હુ તમારા આ વ્રતની અનુમોદના ત્યારે કરી શકુ કે, જ્યારે તુ દેવ પર્યાય પ્રાપ્ત કરીને મને આર્હત ધર્મમા પ્રતિબોધિત કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરે રાણીએ રાજાનુ વચન માની લીધુ અને ચતુર્વિધ આહારનુ પ્રત્યાખ્યાન કર્યું એ અનશન વ્રતની આરાધનાના પ્રભાવથી મરીને તે સ્વર્ગમા પહોચી ગઈ સ્વર્ગની પ્રાપ્તિ જીવો માટે જૈનધર્મની આરાધનના આનુષગિક ફળરૂપ માનવી જોઈએ રાણી જ્યારે સ્વર્ગ લોકમા જઈને દેવીના પર્યાયથી ઉત્પન્ન થઈ ત્યારે તેણીએ રાજાને સ્વપ્નમા જૈનધર્મની વિશિષ્ટતા વારવાર સમજાવી પરતુ રાજાના હૃદયમા તપસ્વીઓ

सेभ्यो राज्ञोऽनुरागं परिहर्तुमन्यदा तापसरूपेण समागत्य राज्ञे बहून्यमृतमय-फलानि ददौ। राजा तान्यास्वाद्य जातानन्दस्तं प्राह-तापस! ईदृशानि फलानि कुत्रोत्पद्यन्ते? तापसः प्राह-राजन्! इतोऽतिदूरेऽस्माकमाश्रमे जनदुर्लभानि बहूनि फलानि सन्ति। राजाऽपि फलास्वादनलोलुपस्तेन सह तस्याश्रमे गन्तुमुद्यतः। ततः सा देवी स्वमायाप्रभावेण तापसाश्रमं तापसांश्च परिकल्प्य राज्ञा सह तत्राऽऽगता। ते देवीकल्पिततापसाः प्राहु - अरे! कस्त्वम्। कथमि-हाऽऽयातः?' इत्येव क्रुधा रुन्ता राजानं हन्तुमुद्यताः। 'एते सर्वेऽपि तापसा

वह कम नहीं हुई। सच है प्राणियोंका दृष्टिराग नीलीराग के समान दुर्मोच हुआ करता है। इस देवीने एक समय तपस्वियों से राजाका अनुराग हटानेके निमित्त स्वयं तापसका रूप लेकर राजाके लिये बहुत से अमृतमय फलों को ला कर दिया। राजाने उनको ज्योंही चखा तो उनको बहुत ही उनका स्वाद आनन्दप्रद प्रतीत हुआ उनको खा कर वह बहुत अधिक हर्षित होकर उस आये हुये तापस से कहने लगे-तपस्विन्। कहो तो सही ऐसे फल कहां उत्पन्न होते हैं। सुनकर तापस ने कहा राजन्। यहां से थोडी ही दूर पर हमारे आश्रममें ये जन दुर्लभ फल बहुत से है। राजानें ज्यों ही यह बात सुनी तो वह उन फलों की चाहना से आकृष्ट हो कर उस तापस के साथ २ उसके आश्रम पहुँचे। उसके पहिले उस देवीरूप तापसने अपनी देवशक्ति के प्रभाव से तापसाश्रम एवं तपस्वियों को वहां बनाया था। सो वे राजा उसके साथ ज्यों ही आश्रम मे पहुँचे कि उन देवी कल्पित ताप-सोंने उससे कहा-"अरे! तुम कौन हो और क्यों यहां पर आये

तरફ જે ભક્તિ હતી તે ઓછી ન થઈ ખરૂ છે કે, પ્રાણીઓનો દૃષ્ટિરાગની નીલી રાગની માફક દુર્મોચ હોય છે આ દેવીએ એક સમય તપસ્વીઓમાંથી રાજાનો અનુરાગ દૂર કરવા માટે પોતે જ તાપસનું રૂપ લઈને રાજાને માટે ઘણાજ અમૃતમય ફળો લાવી। આપ્યા રાજાએ જ્યારે તેને ચાખ્યા તો તેને તેનો સ્વાદ એકદમ આનંદપ્રદ લાગ્યો એને ખાઈને તે ઘણા જ ખુશી થઈને તે આવેલા તપસ્વીને કહેવા લાગ્યા તપસ્વીન! કહો તો ખરા કે, આવા ફળ ક્યાં ઉત્પન્ન થાય છે, સાંભળીને તાપસે કહ્યુ-રાજન્! અહિંથી થોડે દૂર અમારા આશ્રમમાં આવા જન દુર્લભ ફળ ઘણાજ છે રાજાએ જ્યારે આ વાત સાંભળી ત્યારે એ ફળોની ચાહનાથી આકૃષ્ટ થઈને તે તાપસના આશ્રમે ગયા આના પહેલા એ દેવીરૂપ તાપસે પોતાના દૈવીશક્તિના પ્રભાવથી તાપસ આશ્રમ અને તપસ્વીઓને ત્યાં બનાવ્યા હતા જ્યારે તે રાજાની સાથે આશ્રમે પહોંચ્યા ત્યારે તે દેવી કલ્પિત તાપસોએ તેને કહ્યુ-" અરે! તમે કોણ છો, અને

नशनव्रताद् विरम। ततो राज्ञी संसारानित्यत्वादिप्रतिबोधनेन राजानं कथमपि स्वाभिप्रायानुकूलं कृतवती। ततो राजा प्राह–देवि! त्वं देवत्वं प्राप्य मां चेदार्हतं धर्मं प्रतिबोधयेस्तदाऽहं त्वामनशनं कर्तुमनुमोदयामि। राज्ञी राज्ञो वचनं प्रतिपद्य भक्तं प्रत्याख्याय स्वर्लोकं गता। स्वर्गप्राप्तिस्तु जैनधर्मस्यानुषङ्गिकं फलम्। देवलोकगता राज्ञी देवत्वं प्राप्ता। ततः सा देवी स्वप्ने राजानं जैनधर्मस्य विशिष्टतां वारं वारं बोधयति। तथापि राजा तापसभक्तिं न परित्यजति। दृष्टिरागस्तु नीलीराग इव प्राणिना दुर्मोचो भवति। ततो राज्ञी देवी ताप

सकता है, ऐसी स्थिति मे इस अनशनव्रत से तुम को कोई लाभ नहीं है। रानीने जब राजा को अपने प्रतिकूल देखा तो उसने राजा के लिये संसार की अनित्यता समझासुझाकर अपने अनुकूल बना लिया। राजा जब अनुकूल बन गया तब रानीने अनशनव्रत प्रारंभ करना चाहा। परंतु राजाने उस रानी से पुनः ऐसा कहा–मैं तुम्हारे इस व्रत की अनुमोदना तभी कर सकूंगा कि जब तुम देवपर्याय प्राप्त कर मुझे आर्हत धर्म मे प्रतिबोधित करने की प्रतिज्ञा करोगी। रानीने राजा के वचन मान लिये और चतुर्विध आहार का प्रत्याख्यान किया। उस अनशन व्रतकी आराधना के प्रभाव से मरकर वह देवलोक मे पहुंच गई। देवलोक की प्राप्ति जीवोंको जैनधर्म की आराधना का आनुषंगिक फल जानना चाहिये। रानी जब स्वर्गलोक मे जाकर देवी की पर्याय से उत्पन्न हो गई तब उसने राजाको स्वप्न मे जैनधर्मकी विशिष्टता बार २ समझाई– परंतु राजाके हृदय मे जो तापसों के प्रति भक्तिथी

સ્થિતિમા આ અનશન વ્રતથી તને કોઇ લાભ નથી. રાણીએ જ્યારે રાજાને પોતાનાથી પ્રતિકૂળ જોયા ત્યારે રાજાને અનેક રીતે સંસારની અનિત્યતા સમજાવી પોતાને અનુકૂળ બનાવી લીધા રાજા જ્યારે અનુકૂળ બની ગયા ત્યારે રાણીએ અનશનવ્રત ધારણ કરવાનો વિચાર કર્યો પરંતુ રાજાએ ફરીથી રાણીને એ પ્રમાણે કહ્યુ–દેવી હું તમારા આ વ્રતની અનુમોદના ત્યારે કરી શકું કે, જ્યારે તું દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરીને મને આર્હત ધર્મમા પ્રતિબોધિત કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરે રાણીએ રાજાનું વચન માની લીધું અને ચતુર્વિધ આહારનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યું એ અનશન વ્રતની આરાધનાના પ્રભાવથી મરીને તે સ્વર્ગમા પહોંચી ગઈ સ્વર્ગની પ્રાપ્તિ જીવો માટે જૈનધર્મની આરાધનના આનુષંગિક ફળરૂપ માનવી જોઈએ રાણી જ્યારે સ્વર્ગ લોકમા જઈને દેવીના પર્યાયથી ઉત્પન્ન થઈ ત્યારે તેણીએ રાજાને સ્વપ્નમા જૈનધર્મની વિશિષ્ટતા વારવાર સમજાવી પરંતુ રાજાના હૃદયમા તપસ્વીઓ

न्त । ततः प्रतिबुद्धो राजा श्रावकधर्मं प्रतिपन्नः । प्रभाते मेघगर्जितवद् देवानामुपायो निष्फलो न भवति। ततो देवी स्वरूपेण प्रादुर्भूय राजानं धर्मे स्थिरीकृत्य स्वर्गं गता। भूपे श्रावकधर्मे सम्यक् स्वीकृते तद्वशगा राजानस्तदनु सर्वेऽपि जना श्रावका जाताः।

एकदा विद्याधरः कश्चित् श्रावको वैराग्यं प्राप्तो भगवन्तं महावीरं वन्दितुं समागच्छन् वीतभयपत्तने राज्ञो गृहे समागतः। स तत्र रोगग्रस्तो जातः। राज्ञ आसीदेका कुब्जा दासी। सा तं श्रावकं स्वपितरमिव शुश्रूषितवती। तस्याः

से जैनधर्मका उपदेश सुनाया। उपदेश सुनकर राजा प्रतिबुद्ध हो गया और उसने वहीं पर श्रावक धर्म अगीकार कर लिया। सच है प्रभात में मेघकी गर्जना के समान देवोंका उपाय निष्फल नहीं होता है इसके बाद वह देवी राजा को इस प्रकार जैनधर्म मे स्थिरकर एव अपना स्वरूप प्रकट कर अपने स्थान पर चली गई। इस प्रकार राजा के श्रावक धर्म मे दृढ हो जाने पर उसके अनुयायी राजा तथा समस्त प्रजाने श्रावक धर्मको स्वीकार कर लिया।

एक समय की बात है कि कोई विद्याधर श्रावक वैराग्य-भावना से वासितान्तःकरण हो कर भगवान् महावीर प्रभु को वन्दना निमित्त आ रहा था। सो उसको रास्ते मे वीतभयपत्तन भी आया। वह वहा आकर राजा के घर उतर गया। कर्म सयोग की बात है कि वह वहा आते ही बीमार पड गया। राजाकी एक दासी थी जिसका नाम कुब्जा था। उसने उस श्रावक की सेवा अपने पिता के जैसी की।

તેવા અમૃતતુલ્ય વચનોથી જૈનધર્મનો ઉપદેશ સભળાવ્યો ઉપદેશ સાંભળીને રાજા પ્રતિબુદ્ધ થઈ ગયા તેમણે ત્યાને ત્યાજ શ્રાવક ધર્મને અગિકાર કરી લીધો પ્રભાતમા મેઘની ગર્જના જેવો દેવોનો ઉપાય નિષ્ફળ થતો નથી આ પછી એ દેવી રાજાને જૈનધર્મમા સ્થિર કરીને અને પોતાનુ સ્વરૂપ પ્રગટ કરીને પોતાના સ્થાને ચાલી ગયા આ પ્રકારે રાજા શ્રાવક ધર્મમા દૃઢ થઈ જવાથી તેમના અનુયાયી બીજા રાજા તથા તેમની સઘળી પ્રજાએ શ્રાવક ધર્મનો સ્વીકાર કરી લીધો

એક સમયની વાત છે કે, કોઇ વિદ્યાધર શ્રાવક વૈરાગ્ય ભાવનાથી વાસિત અત કરણવાળો બનીને ભગવાન મહાવીર પ્રભુની વદના કરવા માટે આવી રહેલ હતો ચાલતા ચાલતા રસ્તામા તેને વીતભય પાટણ આવ્યુ તે ત્યા આવીને રાજાનો મહેમાન થયો. કર્મ સજોગે તે ત્યા પહોચતાજ માદો પડયો રાજાની એક દાસી હતી જેનુ નામ કુબ્જા હતુ તેણે એ શ્રાવકની સેવા પોતાના પિતાની માફક

दुष्टा भवन्ति, नैते सम्तवस्यापि योग्याः सन्ति' इति विचारयन राजा तेषां भयात्ततो द्रुत पलायित.। ते तापसा अपि तत्पृष्ठतोऽन्वधावन। पलायमान' स राजा वने मुनीन् दृष्ट्वा महता स्वरेण प्रोवाच-पूज्याः! एभ्यः पापकारिभ्यस्तापसेभ्यो मा रक्षन्तु शरणागतम्। ततो मुनयः प्रोचुः-राजन! मा भैषी' नास्ति तेऽत्र किमपि भयम्। ततस्ते देवी-मायाकल्पित तापसास्ततो निवृत्ता.। ते मुनयो विगतभय त वीतभयपत्तनाधीश कर्णप्रियैरमृतमयैर्वाक्यैर्जैनधर्ममुपदिष्ट

हुए हो?" इस प्रकार क्रोधावेश से बोलते हुए वे लोग राजाको मारने के लिये तैयार हो गये। राजाने ज्यो ही उनका ऐसा व्यवहार देखा तो सोचने लगा कि ये सब तापस दुष्ट लोग है। इनका सस्तव-परिचय करना योग्य नहीं है इस प्रकार के विचार से वह वहाँसे शीघ्र ही भय त्रस्त हो कर अपने नगरकी तरफ भाग गये। उनको भागते हुए देखकर तापस भी उसके पीछे २ दौडे। भागते हुए राजाको उस वनमें कितनेक मुनि दिखलाइ पडे सो राजाने बडे जोरसे चिल्ला कर उनसे कहा कि महाराज! आप लोग इन पापकारी तापसों से मुझे बचाइये-मै आपकी शरण में आया हू। राजाकी बात सुनकर मुनियोंने कहा राजन्! डरोमत। अब जब तुम हमारी शरण में आचुके हों तो किसी भी प्रकार का तुमकों यहा भय नही है। इस प्रकार जब उनमुनियोंने कहा तो वे देवी कल्पित समस्त तापसजन उसका पीछा करने से वही से लौट गये। मुनियों ने शरण मे आये हुवे इस वीतभय पत्तनाधीशको कर्णप्रिय एवं अमृतोपम वचनों

અહીં શા માટે આવ્યા છો?" આ પ્રમાણે ક્રોધાવેશથી બોલતા બોલતા તે લોકો રાજાને મારવા માટે તૈયાર થઇ ગયા રાજાએ જ્યારે તેમનો આવો વહેવાર જોયો ત્યારે મનમા વિચાર્યું કે, સઘળા તાપસ લોકો દુષ્ટ છે એમની સાથે પરિચય રાખવો યોગ્ય નથી આ પ્રકાર ા વિચારથી ભયભીત બનીને તે પોતાના નગરની તરફ ભાગવા માંડયો, તેને ભાગતો જોઈને તાપસો પણ તેની પાછળ પાછળ દોડયા દોડતા એ રાજાને તે જગલમા કેટલાક મુનિ નજરે પડયા જેથી રાજાએ ઘણા જોરથી રાડો પાડીને કહ્યું મહારાજ! આપ લોકો મને આ પાપકારી તાપસોથી બચાવો હું આપની શરણુમા આવેલ છુ રાજાની વાત સાભળીને મુનિઓએ કહ્યું-રાજન! ગભરાવ નહી હવે જ્યારે તમો અમારી શરણુમા આવી ચૂકયા છો તો, કોઇ પણ પ્રકારનો તમારા માટે ભય નથી આ પ્રમાણે જ્યારે તે મુનિઓએ રાજાને કહ્યું તો, એ દેવીએ પોતાના પ્રભાવથી ઉત્પન્ન કરેલા તાપસો ત્યાથી પાછા વળી ગયા મુનિઓના શરણુમા આવેલા આ વીતભય પાટણના અધીશ્વરને કર્ણોને પ્રિય લાગે

गन्धेत्तदाऽह तेन सहैवाऽऽगमिष्यामि, नान्यथा। तद्वचन श्रुत्वा दूतोऽवन्ती मागत्य राज्ञे चण्डप्रद्योताय सर्वं न्यवेदयत्। सोऽप्यनलगिरिं हस्तिनमारुह्य रात्रौ वीतभयपत्तने समागत्य गुप्तरूपेण सुवर्णगुलिकया सह मिलित। सुवर्णगुलि काऽप्यनलगिरिमारुह्य गुप्तरीत्या चण्डप्रद्योतेन सहोज्जयिनी गता। स गन्ध द्विपोऽनलगिरिर्निशाया वीतभयपत्तने विण्मूत्रमकरोत्। तद्गन्धप्रभावेण तत्रत्या' सर्वे गजा निर्मदा जाता'। स गन्धद्विपो यस्या दिशि गतस्ता दिश प्रति ते सर्वे गजा उत्तम्भशुण्डा व्यात्तमुखा स्तब्धकर्णा विलोकयन्त सस्थिता।

पुरुषके पास पहिले से अपने आप नहीं जाती है-अत यदि चण्ड-प्रद्योतन राजा यहा आवें तो मैं उनके साथ आजाऊँगी अन्यथा नहीं। इस प्रकार सुवर्णगुलिका के वचन सुनकर दूत पीछा अवन्ति लौट आया-ओर चण्टप्रद्योतन राजा से सुवर्णगुलिका ने जो कुछ कहा था सब कह दिया। चण्डप्रद्योतन दूत के द्वारा सुवर्णगुलिका का अभिप्राय जानकर अवन्ति से चला। वह अपने गधहस्ती अनलगिरि हाथी पर सवार हो कर अवन्ति से चला था। सो चलते २ वह रात्रि मे गुप्तरीति से वीतभय पत्तन आ पहुँचा। वहा आते ही वह सुवर्णगुलिका से गुप्त रूप से मिला। राजा उसको हाथी पर बैठा कर उज्जयिनी ले आया। अनलगिरि हाथी वीतभय पत्तन मे आया था तब वहा उसने मलमूत्र भी किया। सो उसकी गन्ध को सूघते ही वहां के समस्त हाथी मदरहित हो गये। तथा यह गधहस्ती जिस दिशा की ओर गया था उसी ही दिशा की ओर वे सब हाथी शुडा दड को ऊँचे कर मुह फाड-

પોતાની મેળે જતી નથી આથી જો ચડપ્રદ્યોતન રાજા અહી આવે તો હુ તેની સાથે આવુ એ સીવાય નહી આ પ્રકારનુ સુવર્ણગુલીકાનુ કહેવાનુ સાભળીને દૂત પાછો અવતી ચાલી ગયો અને ચડપ્રદ્યોતન રાજાને સુવર્ણગુલીકાએ જે કાઈ કહ્યુ હતુ તે સઘળુ કહ્યુ ચડપ્રદ્યોતન દૂત સાથે આવેલા સુવર્ણગુલીકાના પ્રત્યુત્તરને સાભળીને અવતિથી તે પોતાના ગધ હસ્તી અનલગિરી હાથી ઉપર સવાર થઈને ચાલ્યો ચાલતા ચાલતા રાત્રીના સમયે ગુપ્ત રીતે તે વીતભય પાટણ પહોચ્યો ત્યા આવતાજ તે સુવર્ણગુલીકાને ગુપ્ત રીતે મળ્યો રાજા તેને હાથી ઉપર બેસાડીને ઉજ્જયીની લઈ ગયો અનલગિરી હાથી વીતભય પાટણમા આવેલ હતો ત્યારે તેણે ત્યા મળમૂત્ર કરેલુ તેની ગધને સુઘતાજ ત્યાના સઘળા હાથીઓ મદ વગરના થઈ ગયા અને ગધ હસ્તી જે દિશામા ગયો એજ દિશા તરફ સઘળા હાથી સુઢને ઉચી કરીને મોઢુ ફાડી રાખીને જોતા જોતા ઉભા હતા

शुश्रूषया स श्रावकः स्वास्थ्यमुपागतः। तस्य विद्याधरश्रावकस्य समीपे सकलाभीष्टप्रदायि गुटिकाशतमासीत्। स तस्यै सर्वा गुटिका ददौ। स्वयं च प्रव्रज्याग्रहीतुकामो भगवतोऽन्तिके प्रचलितः। सा कुब्जा दासी तासु गुटिकास्वेकां गुटिकां गृहीत्वा 'अहं स्वर्णवर्णा भवेयम्' इति ध्यायन्ती तां गुटिकां भुक्तवती। तत्समकालमेव सा सुवर्णवर्णा जाता। तस्याः 'सुवर्णगुलिका' इति नाम जातम्। ततः सर्वत्र प्रसृतामिमां वार्त्तां श्रुत्वा चण्डप्रद्योतभूपस्तामानेतुं स्वदूतं प्रेषितवान्। दूतो वीतभयपत्तने समागत्य सुवर्णगुलिकामेवमवदत्—अहमवन्तीशेन चण्डप्रद्योतेन त्वत्समीपे प्रेषितः। त्वं मया सहावन्तीमागच्छ। दूतवचनं श्रुत्वा सुवर्णगुलिका प्राह—कामिनी हि अदृष्टपूर्वं पुरुषं न स्वयमभ्येति। अतो यदि चण्डप्रद्योत इहा

इससे वह श्रावक स्वस्थ हो गया। इस विद्याधर श्रावक के पास सौ गोलिया थी जिनसे सकल अभीष्ट की सिद्धि होती थी। सो इस श्रावक ने ये समस्त ही गोलिया उस कुब्जा दासीको दे दी। और प्रव्रज्या ग्रहण करने के लिये स्वयं भगवान् के पास चला गया। कुब्जा दासीने इन गोलियों में से एक गोली "मै स्वर्णवर्ण जैसी हो जाऊँ" इस मनोरथ से खा ली—सो वह उसी समय सुवर्ण जैसी हो गई। सुवर्ण गुलिका इसका नाम भी पड गया। कुछकाल निकलने पर सर्वत्र फैली हुई इस बातको सुनकर चण्डप्रद्योतनने उसको लाने के लिये अपना एक दूत भेजा। दूतने वीतभय पत्तन मे आकर सुवर्णगुलिका से कहा मैं अवन्तीश चण्डप्रद्योतन के द्वारा भेजा हुआ तुम्हारे पास आया हू—सो तुम मेरे साथ अवन्ती पधारो। इस प्रकार दूत के वचन सुनकर सुवर्ण गुलिका ने कहा—यह नीति है कि कामिनी अदृष्ट पूर्व

કરી આથી એની માંદગી ચાલી ગઇ આ વિદ્યાધર શ્રાવકની પાસે એકસો ગોળીઓ હતી જેનાથી સઘળા અભીષ્ટની સિદ્ધિઓ થતી હતી એ શ્રાવકે એ સઘળી ગોળિયો એ કુબ્જા દાસીને આપી દીધી અને પ્રવજ્યા ગ્રહણ કરવા માટે તે પોતે ભગવાનની પાસે ચાલ્યા ગયા કુબ્જા દાસીએ એ ગોળીયોમાંથી એક ગોળી "હું સોનાના વર્ણ જેવી બની જાઉં" એવા અભિપ્રાયથી ખાધી તો તે એજ વખતે સોનાના જેવા રંગવાળી બની ગઇ અને તેથી સુવર્ણગુલીકા એવું એનું નામ પણ પડ ગયું થોડોક કાળ વીત્યા પછી ચારે બાજુએ ફેલાયેલી એ વાતને સાભળીને ચંડપ્રોદ્યતને તેને બોલાવવા માટે પોતાના દૂતને મોકલ્યો એ દૂતે વીતભય પાટણમા આવીને સુવર્ણ ગુલીકાને કહ્યું,—કે હું અવંતિ નરેશ ચંડ પ્રદ્યોતન તરફથી તમારી પાસે આવેલ છું જેથી તમો મારી સાથે અવંતિ ચાલો આ પ્રકારનું દૂતનું વચન સાભળીને સુવર્ણ ગુલીકાએ કહ્યું, કે—આ નીતિ છે કે, કોઇ સ્ત્રી પહેલા નહીં જોયેલ પુરૂષની પાસે

चरणचिह्नानि स्वनगरस्थितान्यवलोक्य राज्ञः समीपे समागत्य तद्वृत्तान्तं निवेदितवन्तः। ततो राजा उदायनो राजपुरुषानाज्ञापितवान्-प्रेक्षध्वं यूयं, कथं चण्डप्रद्योतोऽत्र समागतः। तस्मिन् समये कञ्चुकी समागत्य प्राह-स्वामिन्! सुवर्णगुलिका न दृश्यते। ततो राजा निश्चयमकरोत्-नूनं सुवर्णगुलिकामपहर्तुमेव चण्डप्रद्योतोऽत्र समागतः। ततस्तद्गर्हितकर्मणा तस्मिन् सञ्जातकोपो राजा चण्डप्रद्योतस्यान्तिके दूतं प्रेषितवान्, उक्तवांश्च तं दूतं स्वसन्देशं कथयितुम्। दूतोऽपि अवन्तीनगरे चण्डप्रद्योतसन्निधौ गत्वा प्राह-राजन्! यस्य पराक्रमाग्नौ शत्रवः शलभतामापन्नाः स उदायनभूपो भवन्तं मम मुखेन वदति-'त्वं चौरं इव समागत्य मम दासीमपहृत्य पलायितः। चौरो हि नृपस्य

जब यह बात वे राजा से कह रहे थे कि इतने मे ही नगरनिवासिजनोंने अपने नगर मे उसके चरण चिह्नो को देखकर उसका आना राजा से जाहिर किया। राजा इस बात से परिचित हो कर राजपुरुषों से कहने लगे-देखो-चण्डप्रद्योतन यहा कैसे आया। उसी समय कचुकी ने आ कर राजा को खबर दी कि महाराज! सुवर्णगुलिका नही दिखती है। यह समाचार सुनते ही राजको निश्चय हो गया कि अवश्य ही सुवर्णगुलिका को हरण करने के लिये चण्डप्रद्योतन यहा आया होगा। इस प्रकार विचार कर और उसके इसगर्हित कृत्य से कुपित हो कर राजाने उसी समय चण्डप्रद्योतन के पास समाचार दे कर अपना एक दूत भेजा। दूतने वहा जाकर चण्डप्रद्योतन से कहा-राजन्। जिसकी पराक्रमाग्नि मे शत्रुजन शलभ (पतग) की दशाको प्राप्त हो जाते हैं उस उदायन राजाने मेरे द्वारा आप के पास यह सदेश भेजा है-कि तुमने

ने राजाने कही रह्या हता के, એટલામાજ નગર નિવાસીઓએ પોતાના નગરમા તેના પગલાને જોઈને તે હાથીનુ આવવુ રાજા પાસે જાહેર કર્યું રાજા આ વાતથી જાણકાર બનીને પોતાના રાજપુરૂષોને કહેવા માડયા-જુઓ ચડપ્રદ્યોતન અહી કેવી રીતે આવ્યો? આ સમયે રાજમહેલની એક દાસીએ આવીને રાજાને ખબર આપી કે મહારાજ! સુવર્ણગુલીકા દેખાતી નથી એ સમાચાર સાભળતાજ રાજાના દિલમા નક્કી થઈ ગયુ કે, અવશ્ય સુવર્ણગુલીકાનુ હરણ કરવા માટેજ ચડપ્રદ્યોતન અહી આવેલ હશે આ પ્રકારનો વિચાર કરીને તેના આવા નિંદિત કૃત્યથી ક્રોધિત બનીને રાજાએ તે સમયે પોતાના એક દૂતને સમાચાર પહોચાડવા ચડપ્રદ્યોતન પાસે મોકલ્યો. દૂતે ત્યા જઈને ચડપ્રદ્યોતનને કહ્યુ-રાજન્! જેના પરાક્રમથી ભલભલા શત્રુઓ તેનાથી દબાઇને શરણાધીન બનેલ છે તેવા મહાપ્રતિભાશાળી ઉદાયન રાજાએ મને સદેશો પહોચાડવા આપની પાસે મોકલેલ છે કે, તમે અમારા નગરમા ચોરની

प्रभाते हस्तिपका वीतमदान तान गजान अजानिव पौरुषहीनान दृष्ट्वा सम्भ्रान्ता राज्ञः समीपे समागत्य सर्वं वृत्तान्तं निवेदितवन्तः। ततस्तदैव राजा हस्तिवैद्यान् हस्तिनां चिकित्सार्थं हस्तिशालायां प्रेषितवान। हस्तिवैद्याः चिकित्सां कृत्वा तान् गजान नीरोगान कृतवन्त। ततस्ते हस्तिवैद्या राज्ञः समीपे समागत्यैवमुक्तवन्तः—स्वामिन ! गन्धद्विपविण्मूत्रगन्धमाघ्राय भवदीया गजा निर्मदा जाताः। अन्यथा तु एवंविधरोगस्य सम्भावनैव नास्ति। गन्धद्विपस्तु चण्डप्रद्योतस्यैवास्ति, मन्ये स रात्रौ समागतः। राजाज्ञया लोका अनलगिरि

कर देखते हुए खडे थे। प्रातःकाल होते ही जब महावतोंने इस दृश्य को देखा अर्थात हाथियों को निर्मद बकरों के समान पौरुषहीन देखा तो सम्भ्रान्त हो कर वे राजा के पास दौडे गये और यह सब समाचार उन्होने राजा से सुनाया। राजाने ज्यों ही हाथियों की इस प्रकारकी दयाजनक स्थिति सुनी तो उसने शीघ्र ही हस्तिशाला में हाथियों की चिकित्सा करने वाले वैद्योंको उन हाथीयों की चिकित्सा करने के निमित्त भेज दिया। उन्होंने जाकर बडी सावधानी से चिकित्सा करके उनको नीरोग बना दिया। पश्चात राजा के पास जाकर उन्होंने इस प्रकार कहा—महाराज ! ये सब आपके हाथी गंध हाथी के मलमूत्र की गंधको सूंघने से ही निर्मद हुए है। नहीं तो इस प्रकार के रोग से ग्रसित हो जानेकी तो इनमें सम्भावना ही नहीं हो सकती है। गंधहस्तीका अधिपति इस समय यदि कोई है तो वह एक चण्डप्रद्योतन राजाही हैं। मालूम पडता है वह हस्ती यहा रात्रि में आया है।

સવાર થતાંજ મહાવતોએ જ્યારે આ દેખાવને જોયો અને હાથીઓને મદવગરના બકરીના જેવા જોયા ત્યારે સભ્રાંત બનીને રાજાની પાસે દોડી ગયા અને આ સઘળા સમાચાર તેમણે રાજાને સંભળાવ્યા. રાજાએ જ્યારે હાથીઓની આવા પ્રકારની દયામય સ્થિતિ સાંભળી તો તેમણે તુરતજ હાથીઓની ચિકિત્સા કરવાવાળા વૈદોને હાથીઓની ચિકિત્સા કરવા માટે મોકલી આપ્યા. તેઓએ ત્યાં પહોંચીને ઘણીજ સાવધાનીથી ચિકિત્સા કરીને તે હાથીને મૂળ સ્થિતિમાં લાવી દીધા. પછીથી રાજા પાસે જઈને તેમણે એ પ્રમાણે કહ્યું—મહારાજ ! આપના આ સઘળા હાથી ગંધહાથીના મળમૂત્રની ગંધને સુંઘવાથીજ નિર્મદ થયા છે. આ સિવાય આવા રોગથી સંડાઇ જવાની કોઇ પણ સંભાવના રહેતી નથી. ગંધહસ્તીના અધિપતિ જો આ સમયે કોઇ પણ હોય તો તે એક ચંડપ્રદ્યોત રાજાજ છે. ખબર પડે છે કે, તેમનો એ હાથી રાત્રીના વખતે અહીંયા આવેલ છે. જ્યારે આવી વાત તે વૈદરાજે

चेत्स युद्धाय सन्नद्धो भूत्वा समागमिष्यति, तर्हि मृत्युमाप्स्यति। चण्डप्रद्योतस्य सन्देशमादाय स दूतो वीतभयपत्तने समागत्य उदायननृप प्राह–स्वामिन्! चण्ड प्रद्योतोऽपि भवता सह योद्धुमुद्यतोऽस्ति। स स्वकृतमन्याय न्यायमेव मनुते। अत. स्वामिना तस्य दर्पोऽपहरणीय एव। इतवचन श्रुत्वा राजा सद्य एव युद्धभेरी वादयितु सेनापतिमाज्ञाप्य स्वानुयायिनो दश राज्ञ' स्व स्वसैन्य सन्नद्ध समादिष्टवान्। ततो राजा उदायनो ज्येष्ठे मासि ससैन्यैर्बद्धमुकुटैर्दशभी राजभि

वह मेरा सामना कर सके। क्या उसको नहीं मालुम है कि मेरे गंध-हाथी के सामने पर्वत भी नही ठहर सकता है तो फिर उदायन के मामूली हाथियों का तो क्या सामर्थ्य है, जो उसके सामने ठहर सकें। फिर भी यदि उसको युद्ध करने की खुजलाहट हो रही हे तो इसके लिये सादर आमन्त्रण है। याद रखना वह यहा से जीता नही जा सकेगा–नियम से मरेगा। इस प्रकार चण्डप्रद्योतन के सदेश को सुनकर दूत वापिस वीतभयपत्तन आया और उदायननृप से जो कुछ चण्डप्रद्योतनने कहा था अक्षरश सब कह दिया। तथा यह भी उसने कहा–महाराज। चण्डप्रद्योतन तो आप के साथ युद्ध करने को तैयार हो रहा है–वह अपने न्याय को भी अन्याय की ही तुला पर तौल रहा है। अतः ऐसे अन्यायी व्यक्ति का निग्रह अवश्य करना चाहिये। दूत की बात सुनकर राजाने शीघ्रही युद्धकी घोषणा करवा दी। तथा यह भी सेनापति को आदेश दे दिया कि हमारे अनुयायी जो दश राजा है उनको भी यह सन्देश पहुचा दो ताकि वे भी अपनी सेना सहित सनद्ध होकर हमारी सहायता के लिये तयार रहे।

છે કે, તે મારો સામનો કરી શકે? શુ તેને ખબર નથી કે, મારા ગધહાથીની સામે પર્વત પણ રોકી શકતો નથી તો પછી ઉદાયનના મામુલી હાથીઓનુ તો શુ સામર્થ્ય છે કે, જે એની સામે ટક્કર લઇ શકે? છતા પણ જો તેને યુદ્ધ કરવાની ઉમ્મીદ થઇ રહી હોય તો તેને માટે મારૂ આમત્રણ છે યાદ રાખજો કે તે અહીંથી જીવતો જઈ શકશે નહી નિયમથી મૃત્યુના અતિથિ બનીને જ પાછા જશે આ પ્રકારના ચડપ્રદ્યોતનના સદેશાને સાભળીને દૂત વીતભય પાટણ પાછો ફર્યો અને ઉદાયન રાજાને અક્ષરશ જે કાઇ ચડપ્રદ્યોતને કહ્યુ હતુ તે કહી સભળાવ્યુ તથા એ પણ કહી દીધુ કે, મહારાજ ચડપ્રદ્યોતન આપની સાથે યુદ્ધ કરવા માટે તૈયાર થઇ રહેલ છે તે પોતાના અન્યાયને પણ ન્યાયનીજ તુલા ઉપર તોળી રહેલ છે આથી એવી અન્યાયી વ્યક્તિનો મદ અવશ્ય ઉતારવો જોઇએ દૂતની વાત સાભળીને તુરતજ રાજાએ યુદ્ધની ઘોષણા કરાવી દીધી સેનાપતિને એવો પણ આદેશ આપ્યો કે, આપણા અનુયાયી જે દસ રાજા છે તેને પણ આ સદેશો પહોચાડી દો જેથી તેઓ પણ પોતાની સેનાને સાથે લઇને આપણી સહાયતા માટે

दण्डनीयो भवति। निर्लज्जस्त्वमपि मम दण्डनीयोऽसि। अतस्त्वा निग्रहीतुमहं तव नगरमवरोधयिष्यामि। त्वं योद्धुं सन्नद्धो भव। इति दूतमुखादुदायनभूपस्य सन्देशं श्रुत्वा परमक्रुद्धश्चण्डप्रद्योतः प्राह–दूत! राजा हि यस्य कस्य चिदपि रत्नं हरति। तस्मादुदायनभूपस्य दासीरत्नं हरतो मम नास्ति काऽपि लज्जा। उदायनो राजा मया सह योद्धुं वृथैव यतते। स मां जेतुं नास्ति समर्थः। मम गन्धद्विपस्य पुरतः पर्वतोऽपि स्थातुं न शक्तः। किं पुनर्वराक उदायनः। तथापि

चोर की तरह आकर जो मेरी सुवर्णगुलिका दासीका हरण किया है वह ठीक नही किया है। इसका परिणाम बहुत बुरा आवेगा। जो चोर हुआ करते हैं नीति के अनुसार वे दण्डनीय होते हैं। तुम भी इसी तरह के चोर हो। अतः जब तुम निर्लज्ज बनकर इस कृत्य मे प्रवृत्त हुए हो तो फिर क्यों नहीं तुमको दंडित किया जाय। इन्हीं सब विचारों से मैं तुम्हारा निग्रह करने के लिये तुम्हारे नगर का अवरोध करूंगा। इसलिये तुम लडाई के लिये तयार हो जाओ। इस प्रकार दूत के मुखसे उदायन राजा के समाचार सुनकर चण्डप्रद्योतनने क्रोध में आकर दूत से कहा–दूत! क्यातुम नहीं जानते हो कि जो समर्थ राजा हुआ करते हैं वे चाहे जिस किसी का भी रत्न हरण कर सकते हैं। इसमें लज्जाकी कौन सी बात है। मैने भी ऐसा ही किया है। अतः उदायन राजा के दासी रत्न को हरण करने वाले मेरे को निर्लज्ज बताना यह उचित नही है। रही युद्ध करने की बात–सो जाकर उनसे कह दो कि पर्वत से माथा मारने वालेका ही माथा फटता है पर्वत का कुछ नही बिगडता। विचारे उदायन मे कहा ऐसी शक्ति है जो

માફક આવીને મારી સુવર્ણગુલીકા દાસીનુ હરણ કરી ગયેલ છો તે કામ સારૂ નથી કર્યું, એનુ પરિણામ ખૂબજ ખરાબ આવશે જે ચોર હોય છે તે નીતિ અનુસાર દંડને પાત્ર જ હોય છે તમો નિર્લજ્જ બનીને આવા કૃત્યમા પ્રવૃત્ત થયા છો તો પછી તમોને દંડ શા માટે આપવામા ન આવે? આ સઘળા વિચારોથી હું તમોને શિક્ષા આપવા માટે તમારા નગર ઉપર ચડાઇ કરીશ આથી તમો લડાઇ માટે તેયાર રહેશો આ પ્રકારના ઉદાયન રાજાએ મોકલેલા સમાચાર દૂતના મોઢેથી સાભળીને ચંડપ્રદ્યોતન રાજાએ ક્રોધમા આવીને દૂતને કહ્યુ દૂત! શુ તમો જાણતા નથી કે, જે રાજા સમર્થ હોય છે તે, ચાહે તેના રત્નનુ હરણ કરી શકે છે તેમા લજ્જાની કોઇ વાત નથી મે એવુ જ કરેલ છે આથી ઉદાયન રાજાના દાસી રત્નને હરણ કરવાવાળા મને નિર્લજ્જ બતાવવો એ ઉચિત નથી હવે રહી યુદ્ધ કરવાની વાત તો જઇને તેમને કહી દો કે પર્વત સાથે માથુ ટકરાવનારનુ જ માથુ ફૂટે છે પર્વતનુ કાંઇ બગડતુ નથી બિચારા ઉદાયનમા એવી કઇ શકિત

पृच्छय स्वस्थानं गता। राजा तु क्रमेणोज्जयिनीसमीपे समागत्य सीमाप्रदेशे शिबिरनिवेशं कृतवान्। ततो राजा मनस्येव विचारयति—अस्मिन् संग्रामे उभयपक्षीयाः सैनिका व्यर्थमेव मरिष्यन्ति। अतश्चण्डप्रद्योतस्य मम च युद्धं भवतु। इति विचार्य राजा उदायनो दूतमुखेन चण्डप्रद्योतं सन्दिष्टवान्—राजन्! निरपराधानां सैनिकानां विनाशोऽनुचितः। अत आवयोरेव युद्धं भवतु। रथ तुरग हस्तिन वाऽऽस्थाय पदातिर्वा भूत्वा यथा युद्धं तव रोचेत, तथा मामपि सन्दिश।

तब देवी राजा से पूछकर अपने स्थान पर चली गई। चलते २ राजा उज्जयिनी के पास आ पहुँचा। उसने बाहिर ही अपने तम्बू खडे करवा दिये। राजाने उस समय विचार किया—इस संग्राम में दोनों तरफ से योद्धाओं का व्यर्थ में ही विध्वंस होगा अतः उचित तो यही है कि मेरा और चंडप्रद्योतन का ही युद्ध क्यों न हो जाय? इस प्रकार के विचार से राजा उदायनने चंडप्रद्योतन के पास अपना एक दूत यह संदेश देकर भेज दिया। दूतने चण्डप्रद्योतन के पास पहुँचकर उदायन का यह संदेश कि—"निरपराध सैनिकों का विनाश सर्वथा अनुचित है अतः हम तुम दोनो का ही युद्ध हो जाय तो ठीक है" सुना दिया। तथा साथमें यह भी कहा कि—महाराज! उदायन राजाने यह भी पूछवाया है कि—आप रथ पर, घोडे पर, या हाथी पर चढ कर युद्ध करना चाहते है या पैदल ही रह कर? जैसा आपको रूचे वैसा ही आप करे। परन्तु इसकी खबर हमको अवश्य पहुचा देवें ताकि

પોતાના સ્થાન ઉપર ચલી ગઈ ચાલતા ચાલતા રાજા ઉજ્જયીની પાસે પહોંચી ગયા અને પોતાના તંબુ ત્યાં ઉભા કરાવી દીધા રાજાએ એ સમયે વિચાર કર્યો કે આ સંગ્રામમાં બન્ને તરફના યોદ્ધાઓનો વ્યર્થમાં જ વિધ્વંસ થશે આથી ઉચિત તો એ છે કે, મારૂ અને ચંડપ્રદ્યોતનનું જ સામ સામુ યુદ્ધ શા માટે ન થાય? આ પ્રકારના નિશ્ચયથી રાજા ઉદાયને પોતાના એક દૂતને રાજા ચંડપ્રદ્યોતનની પાસે સંદેશો લઈને મોકલ્યો, દૂત રાજા ઉદાયનનો સંદેશો લઈને રાજા ચંડપ્રદ્યોતન પાસે પહોંચ્યો અને રાજા ઉદાયનનો સંદેશો સંભળાવ્યો કે "નિરપરાધી સૈનિકોનો વિનાશ સર્વથા અનુચિત છે આથી હું અને તમો બન્નેનું જ યુદ્ધ થાય તે ઠીક છે" આમ કહી દીધું તથા સાથે એવું પણ કહ્યું કે, મહારાજ ઉદાયન રાજાએ એવું પણ પૂછાવ્યું છે કે, આપ રથ ઉપર, ઘોડા ઉપર કે હાથી ઉપર ચડીને યુદ્ધ કરવા ચાહો છો અથવા તો ભૂમિ ઉપર રહીને? જેવું આપને ઠીક લાગે તેવું આપ કરો પરંતુ આના ખબર અમને અવશ્ય અવશ્ય મોકલાવજો જેથી અમો

स्वसैन्यैश्च सहावन्तीं प्रति प्रचलितः। प्रस्थितैः सैन्यैः समस्ता भूतदुद्धतरजोभिश्च सकला दिशो व्याप्ताः। एवं सैनिकैः सह गच्छन् उदायनो मरुभूमौ समागतः। तत्र दुर्लभजलप्रदेशे राज्ञः सैनिका जलमप्राप्य मूर्च्छिता बभूवुः। तदा राजा प्रभावतीदेवीं स्मृतवान्। सा देवी तत्क्षणं तत्र समागता। ज्ञातवृत्तान्ता सा देवी अगाधजलपूरितैः पुष्करैः सुशोभितं पुष्करत्रयं निर्मितवती। राज्ञः सैनिकाः शीतलं जलं पीत्वा स्वस्थाः सञ्जाताः। अन्नं विना कथञ्चित्प्राणा धारयितुं शक्याः, जलं विना तु न कथञ्चिदपि शक्याः। तदा देवी राजानमा-

---

इस प्रकार सब उचित व्यवस्था करके राजा उदायन ज्येष्ठ के महीने मे ससैन्य मुकुटबद्ध उन दश राजाओं को तथा अपनी सैन्य को साथ लेकर अवन्ती (उज्जैन) की ओर चल दिया। उदायन के प्रस्थित इस सैन्य से एवं इनके चलने से उडी हुई धूलि से उस समय समस्त दिशाएँ व्याप्त बन गई थी। इस प्रकार आडंबर के साथ चलकर उदायन राजा कितनेक पडावों के बाद मरुभूमि मे आ पहुँचे। वहां पानी की कमी होने से दुर्लभ जलप्रदेश मे राजा के कितनेक सैनिक जलके नही मिलने से जब मूर्च्छित हो गये तब राजाने उसी समय प्रभावती देवीका स्मरण किया। उसने आकर वहाँ अगाध जल से लबालब भरे तथा कमलों से सुशोभित तीन जलाशयों की रचना कर दी। राजाके सैनिकोंने खूब इन मे मनमाना शीतल जलका पान किया। और स्वस्थ होकर फिर वे आगे चले। अन्नके विना तो किसी तरह प्राणी जीवित रह सकता है परन्तु पानी के विना नही। जब राजाकी यह चिन्ता शांत हो गई

તયાર રહે આ પ્રકારની બધી ઉચિત વ્યવસ્થા કરીને રાજા ઉદાયન જેઠ મહીનામા સૈન્ય સહિત મુગટ બધ તે દસ રાજાઓને તથા પોતાના સૈન્યને સાથે લઈ અવતીની તરફ ચાલી નીકળ્યા ઉદાયનના ચાલતા એ સૈન્યથી ઉડેલી ધૂળથી ચારે દિશાઓ ધૂળથી ઘેરાઇ ગઇ હતી આ પ્રમાણે ભારે આડબર સાથે ચાલીને ઉદાયન રાજા કેટલેક સ્થળે દગમજલ મુકામ કરીને મરૂભૂમિમા જઈ પહોચ્યા ત્યા પાણીની ખેચ હોવાને કારણે એ પ્રદેશમા પાણી મળવુ દુર્લભ હોવાથી રાજાના કેટલાક સૈનિકો પાણી ન મળવાથી જ્યારે મૂર્છિત બની ગયા ત્યારે રાજાએ તે સમયે પ્રભાવતી દેવીનુ સ્મરણ કર્યું આથી તેણે ત્યા આવીને અગાધ જળથી છલોછલ ભરેલા તથા કમળોથી સુશોભિત ત્રણ જળાશયોની રચના કરી દીધી, રાજાના સૈનિકોએ જળાશયોમા મન માન્યુ જળપાન કર્યું અને સ્વસ્થ થઇને પછી તે આગળ ચાલ્યા અન્નના વગર તો પ્રાણી કોઈરીતે જીવી શકે છે પરતુ પાણી વગર જીવી શકાતુ નથી જ્યારે રાજાની એ ચિતા શાત થઇ ત્યારે દેવી ને

स्वरथं मण्डलाकारेण पर्यभ्रामयत्। चण्डप्रद्योतस्तु स्वहस्तिनं तमनु धावयति। चण्डप्रद्योतस्य गन्धहस्ती यं यं चरणं समुत्थापयति, राजा उदायनः स्वनिशितैः शरैः तं तं विध्यति। एवं राजा उदायनेन विद्धचरणः स हस्ती व्याकुलो भूत्वा पलायितः। ततो राजा उदायनो हस्तिपृष्ठस्थितं चण्डप्रद्योतं युक्त्या पाशेन गृहीत्वा भूमौ निपात्य प्रतप्तलोहशलाकया तन्मस्तके 'अयं दासीपतिः' इत्य क्षराणि लेखितवान्। ततस्तं गृहीत्वा काष्ठपिञ्जरे निधाय स्वदेशं प्रति प्रचलितः। तदा वर्षाकालः समागतः। मार्गाः सर्वतो जलपूरैरापूरिताः। ततो राजा

कुशलता नहीं है। इस प्रकार कहते हुए उदायन राजाने अपने रथ को मंडलाकार घूमाया। चण्डप्रद्योतनने भी अपने हाथी को उसके पीछे २ दौडाया। जैसे २ हाथी दौडने के लिये पैरों को उठाने लगा-तैसे २ ही उदायनने अपने तीक्ष्ण शरों द्वारा उसके उन २ चरणों को वेधना प्रारंभ किया। इस प्रकार चरणों मे विद्ध होकर वह गजराज आकुल व्याकुल बनकर युद्धस्थल से भाग गया। हाथी को भागते हुए देखकर उदायन ने हाथी की पीठपर बैठे हुए चंडप्रद्योतन को युक्ति द्वारा पाश डालकर नीचे गिरा लिया और प्रतप्तलोह की शलाका से उसके मस्तक पर यह दासीपति है" इस प्रकार के अक्षरों का अंकन कर दिया। बाद मे काष्ठ निर्मित पिंजरे मे उसको बंद कर और साथ मे लेकर वे अपने देश को रवाना हो गये। चलते २ बीच ही म वर्षाकाल लग गया और मार्ग चारों तरफ से जल से व्याप्त बन गया। राजा उदायनने जब इस प्रकार की मार्ग की स्थिति देखी तो उन्होंने एक जगह

કુશળતા નથી આ પ્રમાણે કહીને ઉદાયન રાજાએ પોતાના રથને મંડલાકાર ફેરવ્યો. ચંડપ્રદ્યોતને પણ પોતાના હાથીને એની પાછળ પાછળ દોડાવ્યો. જેમ જેમ હાથી દોડવા માટે પગને ઉપાડવા લાગ્યો તેમ તેમ ઉદાયને પોતાના તીક્ષ્ણ તીરો દ્વારા એના એ પગલાનું વેધન કરવાનું શરૂ કર્યું આ પ્રમાણે ચરણોથી ઘાયલ બનેલ એ ગજરાજ આકુળ વ્યાકુળ થઈને યુદ્ધ ભૂમીને છોડીને ભાગવા માંડયો. હાથીને ભાગતો જોઇને ઉદાયને હાથીની પીઠ ઉપર બેઠેલા ચંડપ્રદ્યોતનને યુક્તિથી પાશ નાખીને નીચે પછાડી દીધો અને પછી અગ્નિમાં તપાવેલા લોઢાના સળીયાથી તેના મસ્તક ઉપર "આ દાસી પતિ છે" આ પ્રકારના અક્ષરોને અંકિત કરાવી દીધા. પછીથી લાકડાના એક પાંજરામાં તેને બંધ કરીને તેને સાથે લઈને પોતાના દેશ તરફ રવાના થઇ ગયા ચાલતા ચાલતા રસ્તામાં વર્ષાઋતુનો પ્રારંભ થઇ ગયો અને રસ્તાઓ ચારે તરફથી જળથી ભરાઈ ગયા હતા રાજા ઉદાયને જ્યારે આ પ્રકારની સ્થિતિ જોઈ ત્યારે તેણે પોતાના સૈન્યને નગરના એક ભાગમાં સ્થાપિત કરી દીધું

उदायनवचनं दूतमुखान्निशम्य चण्डप्रद्योतः सन्दिष्टवान् अहं रथमास्थाय युद्धं करिष्यामि। ततो द्वितीयदिवसे राजा उदायनो युद्धसज्जो रथमास्थाय युद्धक्षेत्रे समागतः। परन्तु कुटिलमतिश्चण्डप्रद्योतो मनस्यचिन्तयत्-रथमास्थाय उदायनेन सह युद्धं कुर्वतो नास्ति मम जयाशा, इति विचार्य स कपटी चण्डप्रद्योतो ऽनलगिरिं हस्तिनमारुह्य युद्धक्षेत्रे समागतः। तथाविधं तं युद्धक्षेत्रे समागतं विलोक्य राजा उदायनः प्राह-अरे मृषावादिन्! प्रतिज्ञाभ्रष्टोऽसि, यतस्त्वं रथं विमुच्य हस्तिनमारुह्य समागतोऽसि, तथापि तव नास्ति कुशलम्, इत्युक्त्वा राजा

मैं भी उसी रूपमें युद्धस्थलमें उपस्थित हो जाऊ। इस प्रकार दूत के मुख से उदायन राजाका अभिप्राय जानकर चण्डप्रद्योतनने कहा-हे दूत! तुम जाकर अपने राजा से कह दो कि मैं रथ पर बैठकर ही युद्ध करूंगा। दूतने आकर चण्डप्रद्योतन के इस समाचारको उदायन से कहा। दूसरे दिन राजा उदायन युद्ध के लिये तयार हो गया और रथ पर बैठकर युद्धक्षेत्रमें उपस्थित हो गये। परन्तु कुटिलमति चण्डप्रद्योतनने विचार किया कि यदि मैं रथ पर बैठकर जो उदायन के साथ युद्ध करने जाता हूं तो मुझे जय प्राप्त होना सर्वथा असभव है। अतः अनलगिरि हाथी पर चढकर ही युद्ध करना उचित होगा, इस प्रकार विचार कर चण्डप्रद्योतन अनिलगिरि हाथी पर चढकर रणांगणमें आ पहुंचा। इस प्रकार युद्धस्थलमें चण्डप्रद्योतन को आया हुआ देखकर उदायनने कहा-अरे मृषावादिन्! तुम प्रतिज्ञाभ्रष्ट क्यों हो रहे हो? जो रथको छोडकर हाथी पर आये हो? फिर भी याद रखो, तुम्हारी

પણ એ પ્રમાણે યુદ્ધ સ્થાન ઉપર પહોચીએ ઉદાયન રાજાના દૂતના મોઢેથી આવા પ્રકારનો સંદેશો સાંભળીને ચંડપ્રદ્યોતને કહ્યું-હે દૂત! તમો જઈને તમારા રાજાને કહી દો કે હું રથમાં બેસીને જ યુદ્ધ કરીશ દૂતે ચંડપ્રદ્યોતનના આ સમાચાર રાજા ઉદાયનને કહી સંભળાવ્યા બીજે દિવસે રાજા ઉદાયન યુદ્ધ માટે તૈયાર થયા અને રથ ઉપર બેસીને યુદ્ધ ભૂમિ ઉપર જઈ પહોચ્યા પરંતુ કુટિલમતિ ચંડપ્રદ્યોતને વિચાર કર્યો કે જો હું રાજા ઉદાયનની સામે રથમાં બેસી યુદ્ધ કરવા જાઉં તો મારો વિજય થવો અસંભવ છે આથી અનલગિરિ હાથી ઉપર ચડીને જ યુદ્ધ કરવુ ઉચિત છે આવા પ્રકારનો વિચાર કરી ચંડપ્રદ્યોતન અનિલગિરિ હાથી ઉપર બેસીને યુદ્ધ ભૂમી ઉપર પહોચ્યો આ પ્રમાણે ચંડપ્રદ્યોતનને યુદ્ધ ભૂમી ઉપર આવેલ જોઈને ઉદાયને કહ્યુ-અરે જુઠુ બોલનારા! તમો પ્રતિજ્ઞા ભ્રષ્ટ કેમ થઈ રહ્યા છો! જે રથને છોડીને હાથી ઉપર ચડીને આવ્યા છો છતા પણ યાદ રાખો કે તમારી

ऽद्य म्रियते। अन्यस्मिन् दिने तु सरस भोजन मामपृष्ट्वैवानैषी', कथमद्य पृच्छसि। सूपकार प्राह—राजन्! अद्यास्ति सावत्सरिको दिवस! तस्मात्सपरिवारो राजा उदायन. पौषध करोति। अत एव पृच्छामि। ततो राजा चण्डप्रद्योतः प्राह—देवानुप्रिय! शोभन त्वया कृतम्, यदह सावत्सरिकपर्व विज्ञापित'। अहमपि श्रावकपुत्रोऽस्मि। अतोऽद्य पौषध करिष्ये। सूपकारस्तद्वचन राजा उदायनाय न्यवेदयत्। राजा प्राह—अथ यादृश श्रावकस्तमह जानामि।

जरूरत थी। अभीतक तो मुझे विना पूछे ही सरस भोजन इन लोगोंने खानेको दिया है। फिर आज ये "आप क्या खावेंगे" इस प्रश्न के पूछने का कारण कैसा? चण्डप्रद्योतन जब इस प्रकार के विचार मे मग्न हो रहा था—तब उसी समय रसोइयेने इस प्रश्न करनेका स्पष्टीकरण करते हुए कहा—आज आप से इस लिये पूछा जा रहा है कि आज सवत्सरी का दिन है इस लिये राजाने सपरिवार पौषध किया है। राजा चण्डप्रद्योतनने ज्यों ही यह बात सुनी तो उसको बडी प्रसन्नता हुई, कहने लगा—देवानुप्रिय! तुमने आज अच्छा किया जो मुझे सावत्सरिक पर्व होने के समाचार दिये। मैं भी श्रावक का पुत्र हू इस लिये आज पौषध करूगा। रसोइयेने चण्डप्रद्योतन के इस कथन को सुनकर उदायन राजा से निवेदन किया कि महाराज! आज चण्ड प्रद्योतनने भी पौषध किया है। क्यों कि उनका ऐसा कहना है कि मै भी श्रावक हू। रसोइये की इस बात को सुनकर उदायनने कहा—

કરવાની આજે શુ જરૂર હતી? આજ સુધી તો મને પૂછયા વગર આ લોકો મને ખાવા માટે સારામા સારૂ ભોજન આપતા હતા તો પછી આજે "આપ શુ ખાશો?" આ પ્રશ્ન પૂછવાનુ કારણ શુ? ચડપ્રદ્યોતન જ્યારે આ પ્રકારના વિચારમા મગ્ન હતો ત્યારે તે સમયે આ પ્રશ્નનુ સ્પષ્ટીકરણ કરતા રસોઈયાએ કહ્યુ–આજે આપને એ ખાતર પૂછવામા આવે છે કે આજે સવત્સરીનો દિવસ છે એટલા માટે રાજાએ સપરિવાર પોષધ કરેલ છે રાજા ચડપ્રદ્યોતને આ વાત સાભળી ત્યારે તેને ઘણીજ પ્રસન્નતા થઈ અને કહેવા લાગ્યા કે, દેવાનુપ્રિય! આજે તે ઘણુ જ સારૂ કર્યુ છે કે, આજે સવત્સરી પર્વ હોવાના સમાચાર મને આપ્યા હુ પણ શ્રાવકનો પુત્ર છુ, જેથી હુ પણ આજે પોષધ કરીશ રસોઈયાએ ચડપ્રદ્યોતનનુ આમ કહેવુ સાભળીને ઉદાયન રાજાને નિવેદન કરતા કહ્યુ કે, મહારાજ! આજે ચડપ્રદ્યોતને પણ પોષધ કરેલ છે કારણમા તેમનુ એવુ કહેવાનુ છે કે, હુ પણ શ્રાવક છુ રસોઈયાની વાત સાભળીને ઉદાયને કહ્યુ, હુ જાણુ છુ, કે એ શ્રાવક છે પરતુ માયારૂપ આ

उदायनो नगराकारं स्कन्धावारं न्यवेशयत्, धूलिप्राकारं निर्माप्य स्वानुयायिनो दशभूपान् रक्षार्थं नियुक्तवान्। तत्र वाणिज्यार्थं बहवो वणिजोऽपि न्यवसन्। दशभी राजभी रक्षितत्वात्तीकास्तन्निवेश दशपुरमितिनाम्ना व्यपदिष्टाः। राजा उदायनो भोजनादिना चण्डप्रद्योतं स्वतुल्यमरक्षत।

अथान्यदा पर्युषणपर्वसु सांवत्सरिको दिवस समागतः। राजा उदायनः पौषधमकरोत्। सूपकारस्तदाज्ञया चण्डप्रद्योतं पृष्टवान्–राजन्! किमद्य भोक्ष्यते भवान्? सोऽचिन्तयत्–नूनमद्य मां विषदानेन मारयिष्यति। नोचेदकृतपूर्वोऽयं प्रश्नोऽद्य कथं क्रियते? इति चिन्तयित्वा स सूपकारमुवाच–अकृतपूर्वोऽयं प्रश्नो

अपने सैनिक को नगर के आकार में स्थापित कर दिया, अर्थात सैन्य को विभक्त कर नगर के आकार मे बसा दिया। तथा वहीं पर धूलि का प्राकार खडा करवाकर दश राजाओं को रक्षा के लिये नियुक्त कर दिया। बहुत से वणिकजन भी व्यापार के निमित्त इस मे आकर बस गये। इस नगर का नाम दश राजाओं द्वारा रक्षित होने की वजह से दशपुर पड गया। राजा उदायनने साथ मे लाये हुए चण्डप्रद्योतन का आदरसत्कार करने मे कोई कमी नहीं रखी, अपने तुल्य ही उसकी रक्षा की।

एक दिन पर्युषणपर्व म संवत्सरी के दिन राजा उदायनने पौषध किया। तब रसोइयेने उदायन की आज्ञा से चण्डप्रद्योतन से पूछा–राजन्। आज आप क्या खावेंगे? रसोइयेके इस प्रश्न को सुनकर चण्डप्रद्योतनने मन मे विचार किया–आज निश्चय से ये लोग मुझे विष देकर मार डालना चाहते हैं। नहीं तो इस प्रश्न के करने की आज क्या

અર્થાત સૈન્યને અલગ અલગ સ્થળોએ નગરમા વસાવી દીધુ અને એ સ્થળે માટીથી એક મકાન તૈયાર કરાવીને દસ રાજાઓને એના રક્ષણ માટે નિયુકત કર્યા આ પ્રકારે સૈન્યોના વસવાટથી વેપાર માટે કેટલાક વેપારીઓ પણ ત્યા આવીને વસ્યા આ નગરનુ નામ દસ રાજાઓના રક્ષણ તળે રખાયેલ હોવાથી દસપુર એવુ પડ્યુ રાજા ઉદાયને પોતાની સાથે પકડીને લાવેલા ચડપ્રદ્યોતનનો આદર સત્કાર સારી રીતે કરવામા કોઇ જાતની ઉણપ ન રાખી, તેમ જ પોતાની માફક તેની રક્ષા કરી

એક દિવસે પર્યુષણ પર્વથા સવત્સરીના દિવસે રાજા ઉદાયને પોષધ કર્યું ત્યારે રસોયાએ ઉદાયનની આજ્ઞાથી ચડપ્રદ્યોતનને પૂછ્યુ -રાજન્! આજે આપ શુ જમશો? રસોયાનો આવો પ્રશ્ન સાભળીને ચડપ્રદ્યોતને મનમા વિચાર કર્યો, આજે નિશ્ચયથી ઝેર આપીને આ લોકો મને મારી નાખવા ચાહે છે નહીતર આવો પ્રશ્ન

वर्षासु व्यतीतासु स चण्डप्रद्योतेन सह सपरिवारो वीतभयपत्तने समागतः। राजा तस्मै स्वकन्यां दत्तवान्, यौतुके विजित तद्राज्य च तस्मै समर्पितवान्। तप्तशलाकालिखिताक्षराणि समाच्छादयितुं पट्ट च दत्तवान्। तत आरभ्य राजानः शिरसि पट्टमपि बद्धुमारब्धाः। ततः पूर्व तु मुकुटधारणस्यैव प्रथाऽऽसीत्। राज्ञा उदायनेनानुमतश्चण्डप्रद्योत उदायन पुत्र्या सह स्वराजधान्यामुज्जयिन्यां गतः।

अथान्यदा राजा उदायनः पौषधं कृत्वा पौषधशालायां स्थितः। तस्यां रात्रौ धर्मजागरिकां जाग्रदेवमचिन्तयत्—ते नगर ग्रामाकर द्रोणमुखादयो धन्याः,

लिया। दूसरे दिन उदायनने चण्डप्रद्योतन के साथ पारणा किया। जब वर्षाकाल व्यतीत हो गया तब उदायन राजा प्रद्योतन के साथ २ ही सपरिवार वीतभयपत्तन में आये और अपनी कन्याका विवाह चण्डप्रद्योतन के साथ करदिया। दहेजमे उदायनने उसको उसका जीता हुआ राज्य दे दिया और भाल पर तप्तशलाका से अंकित किये गये अक्षरों को अच्छादित करने के निमित्त पट्ट—पगडी भी—दिया। इसीसे राजा लोग मस्तक पर—पगडी बाधने लग गये। इसके पहिले तो मुकुट ही ये लोक बाधा करते थे। कुछदिनो के बाद चण्डप्रद्योतनने उज्जयिनी जानेके लिये राजा उदायन से कहा तब उदायनने जानेके लिये उसको आज्ञा देदी। अतः वह उदायनकी पुत्री के साथ आनन्द पूर्वक अपनी राजधानी उज्जयिनी वापिस आ गया।

एक दिन राजा उदायन पौषध करके पौषधशाला में ही रहे। वहाँ रात्रीमे धर्म जागरणा से जगते हुए उन्होने ऐसा विचार किया वे नगर, ग्राम, आकर एवं द्रोणमुख आदिवाले जनपद धन्य है कि

લીધા બીજે દિવસે ઉદાયને ચડપ્રદ્યોતનની સાથે પારણું કર્યું જ્યારે વર્ષાકાળ પુરો થઈ ગયો ત્યારે ઉદાયન ચડપ્રદ્યોતનની સાથે વીતભય પાટણમા આવ્યા અને પોતાની કન્યાનો વિવાહ ચડપ્રદ્યોતનની સાથે કરી દીધો દહેજમા ઉદાયને તેનુ જીતેલુ રાજ્ય આપી દીધુ અને કપાળ ઉપર લોઢાની સળીથી અંકિત કરેલ અક્ષરોને ઢાંકી રાખવા નિમિત્તે પાઘડી બધાવી આથી રાજાઓ માથા ઉપર પાઘડી બાધવા લાગ્યા. આનાં પહેલા તો રાજાઓ માથા ઉપર મુકુટ ધારણ કરતા હતા કેટલાક દિવસો પછી ચંડપ્રદ્યોતને ઉજ્જયની જવા માટે ઉદાયનને કહ્યુ, ત્યારે ઉદાયને તેને જવાની આજ્ઞા આપી આથી રાજા ઉદાયનની પુત્રીની સાથે પોતાની રાજધાનીમા પાછો આવી ગયો.

એક દિવસ રાજા ઉદાયન પોષધ કરવા માટે પોષધશાળામા રહ્યા ત્યા રાત્રીના વખતે ધર્મ જાગરણથી જાગતા રહીને એવો વિચાર કર્યો કે, જે નગર, ગ્રામ, આકર

परन्तु मायाश्रावकेऽप्यस्मिन् बद्धे मम पर्युषणा शुद्धा न भविष्यति। अतोऽस्य बन्धनं मोचनीयम्। इति विचार्य राजा उदायनश्चण्डप्रद्योतं बन्धनान्मुक्तवान्। तेन सह सपरिवारः पौषधं कृतवान्। तस्मिन् दिने रहसि कोऽपि चण्डप्रद्योत मेवमब्रवीत्-अद्य भवतो बन्धनमोचनस्यावसरोऽस्ति। सायंकाले राजा भवन्तं क्षमयितुं यदाऽऽगच्छेत्तदा भवता वाच्यम्-यदि भवान् मां स्वतन्त्रं कुर्यात्, तदाऽहं भवन्तं क्षमयामि इति। चण्डप्रद्योतोऽपि तथैव कृतवान्। राजा उदायनः साम्वत्सरिकप्रतिक्रमणं कृत्वा क्षमापणावसरे चण्डप्रद्योतं क्षमापयति। तदा चण्डप्रद्योतः कथयति-यदि भवान् मां मोचयेत्तदाऽहं भवन्तं क्षमेय। उदायनेन तथैव कृतम्। द्वितीयदिवसे उदायनश्चण्डप्रद्योतेन सह पारणां कृतवान्।

मैं जानता हू जैसा यह श्रावक है। परंतु मायारूप इस श्रावक के बधे रहेने पर मेरा पर्युषण शुद्ध नहीं होगा इसलिये इसको बधन से मुक्त कर देना चाहिये। ऐसा सोचकर उदायनने चण्डप्रद्योतन को बधन से मुक्त कर दिया। और उसी के साथ सपरिवार पौषध किया। चण्डप्रद्योतन से उसी दिन किसीने एकान्त मे ऐसा कहा कि देखो आज सवत्सरी का दिन है इसलिये ही आपकी बधन से मुक्ति हुई है अतः राजा जब आपके पास सायकाल में क्षमापना करने के लिय आवे तब आप उस से ऐसा कहना कि-"यदि तुम मुझे सर्वथा बधन रहित कर दो तब ही मैं आप से क्षमापना कर सकता हू"। चण्डप्रद्योतनने ऐसा ही किया। राजा जब सावत्सरीक प्रतिक्रमण करके चण्ड-प्रद्योतन से क्षमापना करने लगा, तब चण्डप्रद्योतनने कहा कि यदि आप मुझे सर्वथा बधनरहित कर दें तो ही मै क्षमापना कर सकता हू। उदायनने चण्डप्रद्योतन के प्रस्ताव को बडे हर्ष के साथ स्वीकार कर

આ શ્રાવક બધાયેલ રહેવાથી મારૂ આજનુ પર્યુષણ શુદ્ધ નહી રહે જેથી એને બધનમુક્ત કરી દેવો જોઈએ એવો વિચાર કરીને ઉદાયને ચડપ્રદ્યોતનને બધન મુક્ત કરી દીધો, અને તેની સાથે સપરિવાર પોષધ કર્યું ચડપ્રોદ્યતનને કોઈએ કહી દીધુ કે, જુઓ આજે સવત્સરીનો દિવસ છે જેથી આપને બધન મુક્ત કરવામા આવેલ છે જેથી જ્યારે રાજા આપની પાસે સાજના વખતે ક્ષમાપના કરવા આવે ત્યારે તેને આ પ્રમાણે કહેજો કે, "જો તમો મને સપૂર્ણ પણે મુક્ત કરી દો તો હુ આપની સાથે ક્ષમાપના કરી શકુ" ચડતેદ્યોતને આ પ્રમાણે કર્યું રાજા જ્યારે સાવત્સરિક પ્રતિક્રમણ કરીને ચડપ્રદ્યોતનની ક્ષમાપના કરવા લાગ્યા ત્યારે ચડ પ્રદ્યોતને કહ્યુ કે, જો આપ મને સપૂર્ણ બધાન મુક્ત કરી દેતા હો તો ક્ષમાપના કરી શકુ ઉદાયને ચડપ્રદ્યોતનના આ પ્રસ્તાવનો ઘણાજ હર્ષ સાથે સ્વીકાર કરી

गत्वैवमचिन्तयत्-यदि स्वपुत्रायाभिजिते राज्यं ददामि, तदाऽसौ तत्र मूर्च्छितो न शक्ष्यत्यात्मकल्याणं साधयितुम्। ततः स जन्मपरम्पराभिर्बद्धो बहुकालपर्यन्तं भवे भ्रमिष्यति। तस्मादिदं राज्यं पुत्राय नो दास्यामि! इति स्वपुत्राय निवेद्य राजा केशिनामकं स्वभागिनेयं राज्ये संस्थाप्य केशिना कृतदीक्षोत्सवो राजा उदायनो भगवतोऽन्तिके प्रव्रज्यां गृहीतवान्। गृहीतप्रव्रज्यो मुनिरुदायनोऽतिदुष्करैर्मासोपवासरूपैस्तपोभिः कर्मणां कायस्य च शोषणं कुर्वन् विहरतिस्म। पारणास्वन्तप्रान्ताहारमाहरतस्तस्य शरीरे रोगः समुद्भूतः। तं रोगं

उदायन! शुभकार्य मे विलम्ब नहीं करना चाहिये। प्रभुके इस आदेशको पा कर उदायन घर पर आये और विचार करने लगे कि-यदि मैं पुत्र अभिजित को राज्य देता हूं तो वह इसमें मूर्च्छित हो जावेगा -अतः आत्मकल्याण से विमुख बनकर वह इस संसार मे बहुत कालतक जन्म मरण ही करता रहेगा-इसलिये पुत्रको न देकर यह राज्य भागिनेय-भानेज को देना चाहिये। इस प्रकार के विचार को अपने पुत्र अभिजित के समक्ष प्रकट करते हुए उदायनने राज्य पर केशी नामके भागिनेय-भानेजको स्थापित कर दिया। और स्वयं जाकर वीर प्रभुके पास दीक्षा धारण करली। उदायन का दीक्षा महोत्सव केशी ने किया। राजा उदायनने मुनि हो कर अतिदुष्कर मासोपवासरूप तपो द्वारा कर्मों का एवं शरीरका शोषण करते हुए विचरने लगे। जिन दिन पारणा का दिन होता था उस दिन वे अन्त प्रान्त आहार ले ते थे। इसलिये उनके शरीरको रोगोने घेर लिया।

પ્રભુએ કહ્યું-ઉદાયન! શુભકાર્યમાં વિલંબ કરવો ન જોઈએ પ્રભુનો એ આદેશ મળતાં ઉદાયન પોતાના મહેલમાં આવ્યો અને વિચારવા લાગ્યો કે, જો હું પુત્ર અભિજીતને રાજ્ય સોંપું તો તે તેમાં આસક્ત બની જશે અને એ કારણે આત્મકલ્યાણથી વિમુખ બની તે આ સંસારમાં ઘણાકાળ સુધી જન્મ મરણના ચક્કરમાં ફસાયેલો રહેશે આ કારણે પુત્રને રાજ્ય ન આપતાં આ રાજ્ય ભાણેજને આપી દેવું જોઈએ આ પ્રકારનો વિચાર પોતાના પુત્ર અભિજીત સમક્ષ પ્રગટ કરીને ઉદાયને રાજ્યગાદી પોતાના કેશી નામના ભાણેજને સુપ્રદ્ર કરી અને પોતે વીર પ્રભુની પાસે જઈને દીક્ષા અંગીકાર કરી ઉદાયનનો દીક્ષા મહોત્સવ કેશીએ કર્યો રાજા ઉદાયને મુની બનીને અતિ દુષ્કર એવા માસ ઉપવાસરૂપ તપેદ્વારા કર્મોનું અને શરીરનું શોષણ કરતા કરતા વિચરવા માંડ્યું જે દિવસે પારણાનો દિવસ થતો હતો તે દિવસે તેઓ અન્તપ્રાન્ત આહાર લેતા હતા આથી એમના શરીરને રોગોએ ઘેરી લીધું રોગોને શાન્ત કરવા માટે ગ્રામાનુગ્રામ

यत्र जगद्गुरुर्भगवान् वर्द्धमानस्वामी विहरति। ते च नृपादयोऽपि धन्या ये भगवतोऽमृतमयीं वाणीं श्रुत्वा प्रव्रजन्ति, श्रावकधर्मं वा स्वीकुर्वन्ति। तदेव वीरप्रभुः स्वचरणकमलाभ्यामिदं वीतभयपुरं पवित्रयेत्तदाऽहं तदन्तिके दीक्षां गृहीत्वा स्वजन्मनः साफल्यं कुर्याम्। भगवान् महावीरोऽपि तच्चिन्तितं ज्ञात्वा चम्पापुरीतः प्रचलितो वीतभयपत्तनोद्याने समवसृतः। भगवन्तं समागतं श्रुत्वा राजा उदायनो भगवतः समीपे समागत्य तं प्रणम्य तदुपदिष्टं धर्मं च श्रुत्वा न्यवेदयत्–भदन्त! राज्यं पुत्राय दत्त्वा भवदन्तिके प्रव्रजितुं यावदागच्छामि, कृपापरायणैर्भवद्भिस्तावदिहैव स्थातव्यम्। भगवानाह–देवानुप्रिय! अस्मिन् शुभे कर्मणि विलम्बं मा कृथाः। ततो राजा उदायनो भगवन्तं जिनं नत्वा स्वगृहं

जिनमें जगद्गुरु वर्धमान स्वामी विहार करते हैं। तथा वे नृपादिक भी धन्य हैं जो प्रभुकी अमृतमयी वाणी सुनकर दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं। अथवा श्रावकके व्रत लेते हैं। यदि वीर प्रभुका आगमन इस वीत-भय–पत्तन नगर में हो जाय तो मैं भी उनसे दीक्षा ग्रहण कर अपने जन्मको सफल बनालूं। भगवान् महावीर प्रभुने उदायन के इस विचार को अपने ज्ञान द्वारा जानकर चम्पापुरी से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरते हुए वे वीतभयपत्तन के उद्यानमें आ पहुँचे। जब उदायन को प्रभुका आगमन ज्ञात हुआ तो वे भगवान के समीप आये और वंदना एवं पर्युपासना कर बैठ गये। प्रभुने धर्मका उपदेश दिया–उसको सुनकर उदायनने प्रभु से निवेदन किया–भदन्त! जबतक मैं पुत्रको राज्य देकर आपके पास दीक्षित होने के लिये आता हूं तबतक दया-कर आप यहीं पर विराजें रहें। उदायन की बात सुनकर प्रभुने कहा

અને દ્રોણુ આદિવાળા માણસો ધન્ય છે કે, જ્યાં જગતગુરૂ વર્ધમાન સ્વામી વિહાર કરે છે તથા એ નૃપાદિકને પણ ધન્ય છે કે, જે પ્રભુની અમૃતમય વાણી સાભળીને દીક્ષા ગ્રહણ કરે છે અગર તો શ્રાવકનુ વ્રત લ્યે છે જો વીર પ્રભુનુ આગમન આ વીતભય પાટણમા થઈ જાય તો હુ પણ તેમની પાસેથી દીક્ષા ગ્રહણ કરીને મારૂ જીવન સફળ કરી લઉં ભગવાન મહાવીર પ્રભુએ ઉદાયનના આ વિચારને પોતાના જ્ઞાન દ્વારા જાણીને ચંપાપુરીથી વિહાર કરી ગ્રામાનુગ્રામ વિચરણ કરતા કરતા વીતભય પાટણના ઉદ્યાનમા આવી પહોચ્યા જ્યારે ઉદાયનને પ્રભુના આગમનના ખબર મળ્યા ત્યારે તે ભગવાનની પાસે આવીને વદના અને પર્યુપાસના કરીને બેસી ગયા પ્રભુએ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો આ સાભળીને ઉદાયને ભગવાનને નિવેદન કર્યું,– ભગવાન! જ્યાસુધી હુ મારા પુત્રને રાજ્યાસન સુપ્રદ કરીને દીક્ષા લેવા માટે આપની પાસે આવુ ત્યાસુધી આપ અહીં જ બીરાજમાન રહો ઉદાયનની વાત સાભળીને

प्राप्तस्मै राज्य मा ददातु। प्राप्त राज्य न हि कोऽपि राज्यदायकाय पुनरर्पयति। केशीप्राह-किमत्र कर्तव्यम्? ते प्रोचु-एव राजाज्ञा घोषणीया-यः कश्चिदुदायनमुनये आवास दास्यति स दण्डनीयो भविष्यति। इमा राजाज्ञा च य उदायनमुनये निवेदयिष्यति, सोऽपि दण्डनीयो भविष्यति। तथापि चेत्तस्मै कोऽपि निर्भीक आवास दद्यात्तदाऽसौ मुनिः ससम्मान स्वोद्याने भवता समानेतव्य, विषमिश्रौषधिदानेन मारणीयश्च। भवतो राज्य निष्कण्टक भविष्यति।

भी बलात् राज्य छीन लिया करते हैं। इसलिये पीछे राज्य देना इसमे आपकी शोभा नहीं है। भला ससार में भी ऐसा कोई है कि जो प्राप्त राज्यको पीछे दे देता हो! केशीने कहा-तो बताओ इस विषय में क्या करना चाहिये। अपना मत्र फलित देख कर (अपनी विचारधारा राजाने स्वीकृत कर ली ऐसा जानकर) उन दुष्टोंने कहा-आज ही इस प्रकार-की राज घोषणा करवा दिजिये कि-जो कोई भी उदायन मुनिको रहने को स्थान देगा वह राजाका अपराधी माना जायेगा और दण्डनीय होगा। तथा इस राजाज्ञा को जो व्यक्ति मुनि तक पहुँचायगा वह भी दण्डका भागी होगा। यदि मान लिया जाय कि कोई निर्भीक व्यक्ति इस राजाज्ञा की पर्वाह न करके उनको स्थान दे भी दे तो ऐसी स्थिति मे आपको चाहिये कि आप उनको सन्मान सहित अपने उद्यानमे ले जावें। और वहा विषमिश्रित आहार के दान से वहीं पर मार डालें।

રાજ્ય પાછુ આપવુ તેમા આપની શોભા નથી ભલા સસારમા એવો કોઇ છે કે, જે પોતાને મળેલુ રાજ્ય પાછુ આપી દે? કેશીએ કહ્યુ કે, તો બતાવો આ વિષયમા શુ કરવુ જોઈએ? દુષ્ટોએ પોતાનો પાસો બરોબર પડેલો જોઇને એટલે કે પોતાની વિચારધારા રાજાએ સ્વીકારી લીધી છે તેમ જાણીને કહ્યુ કે, આજેજ એવા પ્રકારની રાજઘોષણા કરાવી દો કે, જે કોઇ ઉદાયન મુનિને રહેવા માટે સ્થાન આપશે તે રાજાનો અપરાધી ગણાશે અને દડને પાત્ર બનશે તેમજ આ રાજઆજ્ઞા જે મુનિ સુધી પહોચાડશે તે પણ દડને પાત્ર થશે જો માની લેવામા આવે કે કોઇ નિર્ભય વ્યક્તિ આ રાજઆજ્ઞાની પરવા ન કરતા તેમને સ્થાન આપી પણ દે તો તેવી સ્થિતિમા આપે એવુ કરવુ જોઈએ કે, આપ તેમને સન્માન સાથે આપના ઉદ્યાનમા લઈ આવો અને ત્યા વિષ મેળવેલા આહારના દાનથી તેમને મારી નાખવા

प्रशमयितुम् उदायनमुनिर्ग्रामानुग्रामं विहरन् वीतभयपत्तनं प्रत्यगमत्। उदायनमुनिर्वीतभयपत्तने समायातीति वृत्तान्तं श्रुत्वा निष्कारणवैरिणा दुष्टामात्या केशिनृपमेवमूचु'-स्वामिन्। भवन्मातुल. परिषहान् सोढुमशक्तो राज्यं लिप्सुरत्र समागत.। तस्माद् भवान् तस्य विश्वासं कर्तुं नार्हति। केशीमाह-राज्यं तु तस्यैवास्ति। स चेत्तद् गृह्णाति, गृह्णातु, किं तेन मम। धनस्वामी चेत् स्थापितं धनं गृह्णाति, तत्र वणिक् पुत्रस्य कोपो वृथा। दुष्टमन्त्रिण प्रोचु'-स्वामिन्! नायं क्षत्रियाणां धर्म'। क्षत्रिया हि जनकादपि प्रसह्य राज्यं गृह्णन्ति। अत'

रोगोंको शांत करने के लिये ग्रामानुग्राम विहार करने वाले मुनिराज उदायनने वीतभयपत्तन की ओर विहार किया जब लोगों को यह खबर हुई कि उदायन मुनि वीतभयपत्तन पधार रहे हैं तो निष्कारण वैरी दुष्ट मन्त्रियोंने केशी नृप से ऐसा कहा कि-महाराज! आपके मामाजी उदायन मुनि परीषहों को सहन करने मे असमर्थ होकर अब राज्यकी लालसा से यहां पधार रहे हैं। इसलिये उनके यहा आने पर आप उनका विश्वास नहीं करना। मन्त्रियोंकी यह बात सुनकर केशी राजाने कहा-भाई! राज्य तो उन्हीका है यदि वे इसको लेना चाहते हैं तो ले लेवें इसमें मुझे कोइ हानि नहीं है। धन स्वामी यदि अपने स्थापित धनको पीछा वापिस मागता है, तो इसमें वणिग पुत्र का कुपित होना मूर्खता है। सुनकर दुष्ट-मन्त्रियोंने कहा स्वामिन्! यह वणिक जनोंके बात तो है नहीं-यह तो क्षत्रियों की है-क्षत्रियोंका यह धर्म नहीं है कि वे प्राप्त राज्य को वापिस पुन लौटादें। क्षत्रिय तो अपने पितासे

વિહાર કરવાવાળા મુનિરાજ ઉદાયને વીતભય પાટણ તરફ વિહાર કર્યો જ્યારે લોકોને આ ખબર મળ્યા કે ઉદાયન મુનિ વીતભય પધારી રહ્યા છે તો કારણ વગરના વેરી દુષ્ટ મંત્રીઓએ કેશી રાજાને એવું કહ્યું કે, મહારાજ! આપના મામા ઉદાયન મુની પરીષહને સહન કરવામાં અસમર્થ બનનાથી તેઓ હવે રાજ્યની લાલસાથી અહીં પધારી રહ્યા છે આથી એમના અહીં આવવાથી આપ તેમનો વિશ્વાસ કરશો નહીં મંત્રીઓની આ વાતને સાંભળીને કેશી રાજાએ કહ્યું, ભાઇ! રાજ્ય તો એમનું જ છે જો તેઓ લેવા ઇચ્છે તો લઈ લે આમાં મને કોઈ વાંધો નથી ધન સ્વામી પોતાના મૂકેલા-સોંપેલા ધનને જો પાછું માગે તો વણિક પુત્રને ક્રોધ કરવો તે મૂર્ખતા છે આવું સાંભળીને દુષ્ટ મંત્રીઓએ કહ્યું, સ્વામીન્! આ વણિક જનોની વાત નથી આ વાત તો ક્ષત્રિયોની છે ક્ષત્રિયોનો એ ધર્મ નથી કે, પોતાને મળેલા રાજ્યને તે પાછું આપી દે ક્ષત્રિય તો પોતાના પિતાની પાસેથી પણ બળાત્કારે રાજ્ય આંચકી લે છે આથી

नूनं केशी मम विषमिश्रौषधिं दापितवान्। अस्तु! इदं शरीरं तु विनश्वरमेव। एतदर्थं का चिन्ता? इति चिन्तयित्वा समतारससागरः स मुनिः क्षपकश्रेणी मारुह्य शुभेन परिणामेन प्रशस्ताध्यवसायेन, केवलज्ञानमासाद्य मोक्षं गतः। तस्मिन् मुक्तिं गते तस्य भक्ता काऽपि देवी तन्मृत्युकारणं विज्ञाय तस्य शय्यातरं कुम्भकारं सिनपल्ली ग्रामे स्थापयित्वा रोषेण पांशून् वर्षयित्वा तस्य नगरस्य विध्वंसमकरोत्। देवीकृतपांशुवृष्ट्या केशिभूपो दुष्टामात्याः सर्वे पुरवासिनो लोकाश्च मृताः। सा देवी सिनपल्लीग्रामं स्वदिव्या शक्त्या कुम्भकारस्य नाम्ना कुम्भकारपुरं निर्मितवती।

इस मुनिराजने विचार किया कि–निश्चय से मुझे केशी राजाने विषमिश्रित ओषधि वैद्यों द्वारा दिलवाई है। अस्तु भले दिलवाई हो इसकी क्या चिन्ता है, कारण कि यह शरीर तो विनश्वर ही है। इस से आत्माका कुछ बिगाड नहीं हो सकता। इसप्रकारकी पवित्र विचार धारा से उदायन मुनि क्षपक श्रेणी पर आरूढ हो गये। उन्होंने उसी समय शुभ परिणाम रूप प्रशस्त अध्यवसाय के प्रभावसे केवलज्ञान अवस्था प्राप्त कर मुक्ति को प्राप्त कर ली। उदायन मुनिराज के मोक्ष चले जाने पर उनकी भक्ता किसीदेवीने उनकी मृत्यु का कारण जानकर उस शय्यातर कुंभकार को उस नगर से हटाकर एक सिनपल्लीग्राम में बसादिया। पश्चात् उसनगर को धूलिकी वर्षा करके विध्वस्त कर दिया। केशी राजा उसके दुष्ट अमात्य तथा समस्त पुरवासियों में से कोई भी जीवित नहीं बचा। देवीने अपनी शक्ति द्वारा कुंभकार के नाम से सिनपल्ली ग्राम को कुंभकारपुर के नाम से बसादिया।

વ્યાકુળતા જાગી પડી આથી તેમના મનમા નિશ્ચય થયો કે, મને વૈદો દ્વારા વિષ મિશ્રિત ઔષધીઓ આપવામા આવેલ છે ભલે અપાવેલ હોય એની શી ચિંતા છે આ શરીર તો વિનશ્વર જ છે આથી મારૂ કાંઈ બગડવાનુ નથી આવા પ્રકારની પવિત્ર વિચારધારાથી ઉદાયનમુનિ ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરૂઢ થયા તેમણે તે સમયે સુપરિણામરૂપ પ્રશસ્ત અધ્યવસાયના પ્રભાવથી કેવળ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી મુક્તિપદને પામ્યા ઉદાયન મુનિના મોક્ષ ચાલ્યા જવાથી તેમની ભક્ત એવી કોઈ દેવીએ તેમના મૃત્યુનુ કારણુ જાણીને એ આશ્રય આપનાર કુંભારને એ નગરથી બહાર કરીને સીનપલ્લી નામના એક ગામમા વસાવી દીધો પછીથી એ નગરને ધૂળને વરસાદ કરીને તેનો નાશ કરી દીધો, કેશી રાજા કે તેના દુષ્ટ મંત્રીઓ તથા સઘળા પુરવાસીઓમાથી કોઈ પણ જીવતુ ન બચ્યુ પછીથી દેવીએ પોતાની શક્તિ દ્વારા કુંભારના નામથી સીનપલ્લી ગામને કુંભકારપુરના નામથી વસાવી દીધુ

ततो मुनिरुदायनो वीतभयपत्तने समागत.। न कोऽपि तस्मै आवास मदात्। एको निर्भीकः कुम्भकारस्तस्मै कुम्भनिर्माणशालामावासार्थं ददौ। स तत्र स्थितः तत. केशी दुष्टामात्यैः सह तत्र समागतः। मुनिं प्रणम्यैवमुक्तवान्-भदन्त! भवान् रुग्णोऽस्ति। इयं कुम्भनिर्माणशाला नास्ति भवद्योग्या। अतो भवान् उद्याने समवसरतु। रोगविनाशार्थं राजवैद्यस्यौषधिमासेवतु। तथैव रोगशान्तिर्भविष्यति। तत्प्रार्थना स्वीकृत्य मुनिरुदायन उद्याने समवसृत.। केशी च राजवैद्येन तस्मै विषमिश्रौषधि दापितवान्। मुनिरुदायनस्तामौषधिं पीतवान्। औषधिपानानन्तरं शरीरे विषव्याप्त्या व्याकुल. स उदायनमुनिरेवं चिन्तितवान्-

इधर विहार करते २ मुनिराज उदायन वीतभयपत्तन में आ पहुँचे। परन्तु किसीने भी उनको स्थान नहीं दिया। एक वहां कुभार था-जिसने उनको अपनी कुंभ निर्माणशालामें ठहरने को स्थान दिया था। केशी को जब यह बात मालूम पडी तब वह दुष्ट अमात्यों के साथ वहां आया और मुनिराज को नमस्कार कर इस प्रकार कहने लगा-भदन्त! आप रुग्ण हैं यह कुंभनिर्माणशाला आपके ठहरने के योग्य नहीं है इसलिये अच्छा हो आप जो उद्यान में पधारें तो। वहीं पर रोग का निदान करवा कर उसकी राज्य वैद्यों द्वारा औषधि भी हो जावेगी। इससे रोग भी आपका शांत हो जावेगा। केशीकी इस प्रार्थनाको सुनकर मुनिराज उदायन उद्यान में जा कर ठहर गये। केशी ने उनके इलाजमे विषमिश्रित औषधि वैद्यों द्वारा दिलवाई मुनि उदायन ने उस औषधिको पी लिया। परतु उसके पीते ही उनके शरीर भर में विषकी व्याप्ति से अधिक आकुलता बढगई-इससे आकुल व्याकुल

આ તરફ વિહાર કરતા કરતા મુનિરાજ ઉદાયન પણ વીતભય પાટણમા આવી પહોચ્યા પરતુ કોઈએ પણ તેમને સ્થાન ન આપ્યુ ત્યા એક કુભાર હતો તેણે તેમને પોતાની વાસણ બનાવવાની કોઢમા સ્થાન આપ્યુ કેશીને જ્યારે આ વાતની ખબર પડી ત્યારે તે દુષ્ટ મત્રીઓ સાથે ત્યા આવ્યો અને નમસ્કાર કરીને કહેવા લાગ્યો ભદન્ત! આપ રોગી છો, આ કુભારની કોઢ આપને રહેવા યોગ્ય નથી આથી આપ ઉદ્યાનમા પધારીને ત્યા નિવાસ કરો તો સારૂ થાય ત્યા આપના રોગનુ નિદાન કરાવીને રાજવૈદ્યો દ્વારા ઔષધિ વગેરેની વ્યવસ્થા પણ કરવામા આવશે આનાથી આપનો રોગ પણ શાન્ત થઈ જશે કેશીની આ પ્રાર્થનાને સાભળીને મુનિરાજ ઉદાયન ઉદ્યાનમા જઈને રોકાયા કેશીએ તેમના રોગના ઈલાજમા વૈદ્યો મારફત વિષભેળવેલી ઔષધીઓ અપાવી મુનિ ઉદાયને એ ઔષધીઓને પી લીધી પરતુ તે પીતાની સાથેજ વિષથી તેમના શરીરમા ભારે આકુળ

भूत. सोऽभीचिकुमार' स्वपुरादद्रुत निर्गत्य चम्पापुर्या स्वमातृष्वस्रीयस्य कूणिकस्य समीपे समागत । कूणिकोऽपि भ्रातरमागत वीक्ष्य ससम्मान त स्व गृहेऽरक्षत् । स तस्मै विपुला लक्ष्मीं प्रदत्तवान् । अभिजित् सुखेन तत्रातिष्ठत् । स श्रावकधर्म सुचिर यथावत्परिपालितवान । परन्तु पितृकृत स्वापमान स्मरन् तस्मिन् वैर त्यक्तु समर्थो नाभूत् । सोऽभिजित्कुमार. श्रावकधर्म बहूनि वर्षाणि परिपाल्य पितृवैरमनालोच्य पाक्षिकमनशन कृत्वा मृतः पल्योपमायुर्महर्द्धिकोऽसुरदेवो भूत्वा समुत्पन्न । ततश्च्युतोऽय महाविदेहक्षेत्रे समुत्पद्य सिद्धिं प्राप्स्यति ।

॥ इति श्रीमदुदायनराजर्षिकथा ॥

और वहा से शीघ्र ही निकलकर वह अपनी मौसी के पुत्र कूणिक के पास चपापुरी आ गया । कूणिक ने ज्यो ही अपने भाईको आया हुआ देखा तो उसने उसका खूब आदर सत्कार किया और हरतरह से उसकी सहायता करनेका दृढ सकल्प भी किया । कूणिक ने अभिजित को विपुल सम्पत्ति देते हुए श्रावक धर्म की आराधना करने मे उसको खूब मदद पहुँचाई । अभिजित भी सुखपूर्वक वहा रहकर श्रावक धर्मकी यथावत् आराधना करने लगा । बहुत कालतक श्रावक धर्मकी आराधना करने पर भी अभिजितके हृदयसे पितृकृत अपमानका दुःख नही निकला । बार २ उसको अपने पिता द्वारा हुए अपमान की ही विशेष याद आती रही । इसलिये श्रावक धर्मकीसुचिर कालतक आराधना करने पर भी राज न मिलने से पिताके साथ वैर की आलोचना न करने के कारण से जब वह पाक्षिक अनशन करके मरा तो स्वर्ग मे पल्योपम आयुका धारक महर्द्धिक देव हुआ । वहा से चवकर फिर यह मोक्ष जायगा ॥ ४८ ॥

બની ગયુ તે ત્યાથી ઝડપથી નીકળીને પોતાની માસીના પુત્ર કૂણીકની પાસે ચપાપૂરી પહોચી ગયો કૂણીકે તેને પોતાને ત્યા આવેલ જોઈને તેનો ભારે આદરસત્કાર કર્યો, અને દરેક રીતે તેને સહાયતા કરવાનો પણ દૃઢ નિશ્ચય કર્યો કૂણીકે અભિજીતને વિપુલ સપત્તિ આપીને શ્રાવક ધર્મની આરાધના કરવામા તેને ખૂબ મદદ પહોચાડી અભિજીત પણ ત્યા સુખપૂર્વક રહીને શ્રાવક ધર્મની યથાવત્ આરાધના કરવા લાગ્યો ઘણા સમય સુધી શ્રાવક ધર્મની આરાધના કરવા છતા અભિજીતના દિલમાથી પિતાએ આચરણમા મુકેલ વાતનુ દુ:ખ ન મટયુ વારવાર તેને પિતા તરફથી કરાયેલા અપમાનની યાદ આવતી હતી આથી શ્રાવક ધર્મની લાબા સમય સુધી આરાધના કરવા છતા પણ પિતાના કૃત્ય અગેના વેરની આલોચના ન કરવાના કારણે જ્યારે તે પાક્ષિક અનશન કરીને મર્યો ત્યારે સ્વર્ગમા પલ્યોપમ આયુષ્યવાળા મહર્ધિક દેવ થયા ત્યા થી ચવીને તે મોક્ષમા જશે ॥ ૪૮ ॥

उदायनपुत्रोऽभिजित्तु पित्रा राज्ये केशिनि स्थापिते नितान्तदुःखित एवमचिन्तयत्-प्रभावतीकुक्षिसम्भवे नयज्ञे भक्तिमत्यपि मयि तनये स्थितेऽपि कथमपि मम पिता स्वभागिनेयाय केशिने महाराज्यं ददौ, तत्तद्योग्यं नाभूत्। भागिनेयो हि स्वगृहे स्वामित्वेन न स्थापयितव्य इति तु जडा अपि जानन्ति। निजाङ्गजं मां परित्यज्य भागिनेयाय राज्यमर्पयतो मम पितुः किं कोऽपि निवारको नाभूत्। अस्तु! मम पिता प्रभुरस्ति, स यथाकामं प्रवर्त्तताम्। परन्तु उदायनसूनोर्मम केशिनः सेवनमत्यन्तानुचितम्। इत्थमनुतप्य दुःखाभि

इधर उदायन पुत्र अभिजित ने जब यह देखा कि पिताने राज्य मे केशी को स्थापित कर दिया है तो उसने नितान्त चिन्तित हो कर इस प्रकार विचार किया-मैं प्रभावती की कुक्षि से उत्पन्न हुआ हूँ उदायन का नीतिमार्गी तथा विवेकशाली एवं उनकी भक्ति करनेवाला पुत्र हूं। फिर भी मेरे रहते हुए जो पिता ने भागिनेय-भानेज केशी को राज्य दिया है वह उन्हो ने अच्छा नहीं किया। जडपुरुष भी यह बात जानते है कि भागिनेय-भानेज को अपने घर का अधिकारी नहीं बनाया जाता है। जब मेरे पिता ने ऐसा काम किया तो क्या उस समय उनको इस बात से निवारण करनेवाला कोई नहीं हुआ होगा। अस्तु-मुझे अब इस विचार से क्या काम-क्यों कि वे अधिकारी हैं जैसी भी वे प्रवृत्ति करना चाहें कर सकते है। परन्तु उदायन का पुत्र हू अत केशी राजाकी सेवा करना मेरे लिये अत्यन्त अनुचित है। इस प्रकार के अनेक सकल्प विकल्पों से अभिजित का चित्त उत्तप्त बन गया

આ તરફ ઉદાયન પુત્ર અભિજીતે જ્યારે જાણ્યુ કે પિતાએ રાજગાદી ઉપર કેશીને સ્થાપિત કરી દીધેલ છે ત્યારે તેણે ભારે ચિંતાગ્રસ્ત બનીને એવા પ્રકારનો વિચાર કર્યો કે, હુ પ્રભાવતીના ઉદરથી ઉત્પન્ન થયેલ છુ ઉદાયનનો -નીતિમાર્ગી અને વિવેકશાળી તથા તેમની ભક્તિ કરવાવાળો પુત્ર છુ છતા પણ મારી હયાતિ હોવા છતા જે પિતાએ ભાણેજ કેશીને રાજ્ય આપ્યુ તે તેમણે ઠીક કર્યું નથી જડ પુરુષ પણ એ વાત જાણે છે કે, ભાણેજને પોતાના ઘરનો અધિકારી બનાવવામા આવતો નથી જ્યારે મારા પિતાએ આવુ કામ કર્યું તો શુ તેમને આથી અટકાવનાર-રોકનાર કોઇ નહી હોય ? જે થયુ તે થયુ, હવે મારે આવો વિચાર કરવો નકામો છે કેમકે તેઓ અધિકારી છે, જે પ્રમાણે કરવા ચાહે તે પ્રમાણે તેઓ કરી શકે છે પરતુ હુ ઉદાયનનો પુત્ર છુ જેથી કેશી રાજાની સેવા કરવી એ મારે માટે ઉચિત નથી આ પ્રકારના અનેક સકલ્પ વિકલ્પોથી અભિજીતનુ ચિત્ત વ્યગ્ર

॥ अथ काशीराजनन्दनबलदेवकथा ॥

आसीद् वाराणस्याम् नगर्याम् अष्टादशतीर्थकरतीर्थशासनेऽग्निशिखो नाम राजा। आस्तां तस्य जयन्ती शेषवती नाम्न्यौ द्वे महिष्यौ। तत्र जयन्ती देवी नन्दन नाम सप्तम बलदेवमसूत, शेषवती च दत्ताख्य सप्तम वासुदेवम्। क्रमेण प्रवर्द्धमानौ तौ तारुण्यमुपागतौ। अनयोः शरीरोच्छ्राय षड्विंशति धनु प्रमाणो बभूव। पित्रा दत्तराज्यो दत्तो नन्दनानुगतोऽर्द्धभरत साधितवान्। अर्द्ध-भरतसाम्राज्यश्रियमुपभुञ्जानो दत्तः षट्पञ्चाशत्सहस्रवर्षाण्यायुः परिसमाप्य पञ्च मनरकपृथिव्यां समुत्पन्नः। नन्दनस्तु प्रव्रज्यां गृहीत्वा क्रमेण समुत्पन्नकेवल-ज्ञानः पञ्चषष्टिसहस्रवर्षाणि आयुः परिसमाप्य मोक्ष गतः।

॥ इति काशीराजनन्दनबलदेवकथा ॥

पट्टरानियां थीं। जयन्ती से नंदन नामके सप्तम बलदेव एवं शेषवती से दत्त नामके सप्तम वासुदेव इस प्रकार दो पुत्र हुए। क्रम क्रम से वृद्धिगत होते हुए ये दोनों तरुण अवस्था को प्राप्त हुए। इन दोनों के शरीर की ऊँचाई छाईस छाईस २६ धनुषथी। पिता से राज्य प्राप्त कर दत्तने अपने छोटे भाइ नन्दन को साथ लेकर भरतखंड के तीन खंडों को अपने आधीन कर लिया। छप्पन ५६ हजार वर्षकी अपनी आयु दत्तने अर्धचक्रवर्ती की लक्ष्मी को भोगने भोगने में ही समाप्त की। अन्त में वह तो मर कर पंचम नरक में पहुंचा तथा नंदनने दीक्षा लेकर केवलज्ञान प्राप्त करके पैंसठ ६५ हजार वर्षकी अपनी आयु समाप्त हो जाने पर मुक्ति श्री के लाभ से अपने जीवन को सफल बनाया ॥ ४९ ॥

જયંતિથી નંદન નામના સાતમા બળદેવ અને શેષવતીથી સાતમા દત્ત નામના વાસુદેવ આ પ્રમાણે બે પુત્રો થયા ક્રમે ક્રમે વધીને એ બન્ને તરૂણ અવસ્થાએ પહોંચ્યા એ બન્નેના શરીરની ઉંચાઇ છવ્વીસ ધનુષની હતી પિતાના રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરી દત્તે પોતાના નાનાભાઇ નંદનને સાથે લઇને ભરતખંડના ત્રણ ખંડોને પોતાના કબજે કરી લીધા છપ્પન હજાર વર્ષનું આયુષ્ય દત્તે અર્ધ ચક્રવર્તીની લક્ષ્મીને ભોગવવામાં જ પૂર્ણ કર્યું અંતે તે મરીને પાંચમી નર્કમાં પહોંચ્યો. જ્યારે નંદને દીક્ષા લઈને કેવળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું પાસઠ હજાર વર્ષનું આયુષ્ય પૂર્ણ થતાં મુક્તિ શ્રીના લાભથી પોતાના જીવનને સફળ બનાવ્યું ॥ ૪૯ ॥

तथा—

मूलम्—तहेव कासीराया, सेओसच्चपरक्कमे ।
कामभोगे परिच्चज्ज, पहणे कम्ममहावणं ॥४९॥

छाया—तथैव काशीराजः, श्रेयः सत्यपराक्रमः ।
कामभोगान् परित्यज्य, प्राहन् कर्ममहावनम् ॥४९॥

टीका—'तहेव' इत्यादि ।

हे संयतमुने ! तथैव=तेन प्रकारेणैव पूर्वोक्त भरतादिनृपतिवदेवेत्यर्थः, श्रेयः सत्यपराक्रमः—श्रेयसि प्रशस्ये—कल्याणकारके सत्ये=संयमे पराक्रमः=सामर्थ्यं यस्यासौ तथा काशीराजः=काशीमण्डलाधिपतिः नन्दनो नाम सप्तमो बलदेवः कामभोगान्=कामौ—शब्द रूपलक्षणौ, भोगाः=गन्धरसस्पर्शलक्षणास्तान् परित्यज्य= विहाय कर्ममहावनम्=कर्मैव अतिगहनतया महावनं तत् प्राहन्=उन्मूलितवान् ॥४९॥

तथा—'तहेव कासी राया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे संयतमुने ! (तहेव-तथैव) पूर्वोक्त इन भरत आदि राजाओं की तरह (सेओ सच्च परक्कमे-श्रेयः सत्यपराक्रमः) कल्याण कारक संयम में पराक्रमशाली (कासीराया-काशीराजः) काशी राजाने कि जिनका नाम नंदन था और जो सातवें बलदेव थे (कामभोगे परिच्चज्ज-कामभोगान्-परित्यज्य) काम शब्द रूप भोगों-गंध रस स्पर्श -का परित्याग करके (कम्म महावण पहणे-कर्ममहावनम् प्राहन्) कर्म रूप महावन को उन्मूलित किया है । इनकी कथा इस प्रकार है—

बनारस नगरी में अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ के शासन में अग्निशिख नामका एक राजा था । जयन्ती और शेषवती नामकी इनकी दो

तथा—"तहेव कासी राया" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે સંયત મુનિ ! तहेव-तथैव આગળના એ ભરત રાજા વગેરે રાજાઓની માફક सेओ सच्चपरक्कमे श्रेयः सत्यपराक्रम કલ્યાણને કરવા વાળા સંયમમાં પરાક્રમશાળી कासीराया-काशीराजः કાશી રાજાએ કે, જેમનું નામ નંદન અને જે સાતમા બળદેવ હતા कामभोगे परिच्चज्ज-कामभोगान् परित्यज्य કામ શબ્દ, રૂપ ભોગ, ગંધ, રસ, સ્પર્શનો પરિત્યાગ કરીને कम्ममहावणं पहणे-कर्ममहावनम् प्राहन् જેમણે કર્મરૂપ મહાવનનો નાશ કરેલ છે તેની કથા આ પ્રકારની છે—

બનારસ નગરીમાં અઢારમા તીર્થંકર અરનાથના શાસનમાં અગ્નિશિખ નામના એક રાજા હતા જયંતિ અને શેષવતી નામની એમને બે રાણીઓ હતી

ग्रा विजयनामा द्वितीयो बलदेव आसीत्। स द्विसप्ततिलक्षवर्षाण्यायु परिसमाप्य मृते स्वकनिष्ठभ्रातरि द्विपृष्ठवासुदेवे प्रव्रज्या गृहीतवान्। गृहीतप्रव्रज्य· स श्रामण्य सम्यक् परिपाल्य सम्प्राप्तकेवल पञ्चसप्ततिलक्षवर्षाणि सर्वमायु· परिसमाप्य मुक्ति गत·। विजयद्विपृष्ठयो· सप्तति धनूषि शरीरमानमासीत्।

॥ इति विजयराजकथा ॥

तथा—

मूलम्—तहेवुग्ग तव किच्चा, अव्वक्खित्तेण चेयसा।
महब्बलो रायरिसी, आदाय सिरसा सिरिं ॥५१॥

छाया—तथैवोग्र तप कृत्वा, अव्यक्षिप्तेन चेतसा।
महाबलो राजऋषि·, आदाय शिरसा श्रियम् ॥५१॥

टीका—'तहेवुग्ग' इत्यादि।

तथैव महाबलो नाम राजऋषि· श्रिय=सयमरूपा भावश्रिय शिरसा

राज नाम के राजा था। इनकी पट्टरानी का नाम सुभद्रा था। इसकी कुक्षि से द्विपृष्ट और विजय दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। उनमें द्विपृष्ठ वासुदेव थे और विजय बलदेव थे। विजय बलदेव की आयु पचहत्तर ७५ लाख वर्षकी थी। द्विपृष्ठ वासुदेव की जब मृत्यु हो गई-तब विजय बलदेवने दीक्षा धारण करली और श्रामण्यपर्याय की सम्यक् पालना से केवलज्ञान प्राप्त कर पचहत्तर ७५ लाख वर्ष प्रमाण अपनी समस्त आयु समाप्त करके अन्त मे मोक्ष प्राप्त किया। द्विपृष्ठ की आयु बहत्तर ७२ लाख वर्ष की थी। इन दोनो के शरीर की ऊँचाई सात धनुष थी ॥५०॥

तथा—'तहेवुग्ग' इत्यादि'

अन्वयार्थ—(तहेव-तथैव) इसी तरह (महब्बलो रायरिसी-महा

એક રાજા હતા એની પટરાણીનુ નામ સુભદ્રા હતુ તેમની કૂખેથી દ્વિપૃષ્ટ અને વિજય નામના બે પુત્રો થયા, તેમા દ્વિપૃષ્ટ વાસુદેવ હતા અને વિજય બળદેવ હતા વિજય બળદેવનુ આયુષ્ય ૫ચોતેરલાખ વર્ષનુ હતુ દ્વિપૃષ્ટ વાસુદેવ જ્યારે મૃત્યુ પામ્યા ત્યારે વિજય બળદેવે દીક્ષા ધારણ કરી અને શ્રામણ્ય પર્યાયની સમ્યક્ પાલનાથી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી ૫ચોતેર લાખ વર્ષ પ્રમાણ પોતાનુ સઘળુ આયુષ્ય પૂર્ણ કરીને અતે મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી દ્વિપૃષ્ટનુ આયુષ્ય ૫ચોતેર લાખ વર્ષનુ હતુ એ બન્નેના શરીરની ઉચાઈ સાત સાત ધનુષ્યની હતી ॥ ૫૦ ॥

તથા—"तहेवुग्ग" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—तहेव-तथैव આજ પ્રમાણે महब्बलो रायरिसी-महाबलः राज-

तथा—

मूलम्—तहेवं विजंओ रांया, आणंट्ठाकित्ति पव्वंएं ।
रज्जं तुं गुणंसमिद्धं पयंहित्तु महायंसो ॥५०॥

छाया—तथैव विजयो राजा, आनष्टाकीर्त्तिः प्राव्राजीत् ।
राज्य तु गुणसमृद्धं, प्रहाय महायशाः ॥५०॥

टीका—'तहेव' इत्यादि ।

तथैव=तेन प्रकारेणैव आनष्टाकीर्तिः=आ=समन्तान्नष्टा अकीर्त्तिः यस्य स तथा, अत एव महायशाः=विस्तृतकीर्त्तिः विजयो राजा=विजयो नाम द्वितीयो बलदेवो गुणसमृद्धं गुणैः=स्वाम्यमात्यसुहृत्कोश राष्ट्रदुर्गबलैः सप्तभी राज्याङ्गैः समृद्ध तु=अपि राज्य प्रहाय=परित्यज्य प्राव्राजीत=प्रव्रज्या गृहीतवान् 'आणट्ठाकित्ति' इति लुप्तप्रथमान्त पदम् ॥५०॥

अथ विजयराजकथा

आसीत् द्वारावत्या नगर्यां द्वादशतीर्थकरवासुपूज्यशासने ब्रह्मराजनामको नृपः । तस्यासीत् सुभद्राभिधेया महिषी । तस्याः कुक्षिसम्भवो द्विपृष्ठवासुदेवो

तथा 'तहेव विजओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तहेव-तथैव) इसी प्रकार से (आनट्ठा कित्ति-आनष्टकीर्ति) अकीर्ति से रहित अतएव (महायसो-महायशाः) महायशसपन्न (विजओराया-विजयो राजा) विजय नामके द्वितीय बलदेवने (गुणसमिद्ध रज्ज पहाय-गुणसमृद्धम् राज्य प्रहाय) स्वामी, अमात्य, सुहृत्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग एव बल इन सात राज्यांगों से समृद्ध राज्यका परित्याग करके (पव्वए-प्राव्राजीत्) दीक्षा अगीकार की।

विजय राजकी कथा इस प्रकारकी है—

द्वारकानगरी में बारह वें तीर्थंकर वासुपूज्य के शासन मे ब्रह्म

તથા—"तहेव विजओ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—तहेव-तथैव આ પ્રકારે आनट्ठा कित्ति-आनष्टाकीर्ति અપકીર્તિથી રહિત અને महाजसो-महायशाः મહાયશ સંપન્ન विजयो राया-विजओ राया વિજય નામના બીજા બળદેવે गुणसमिद्ध रज्ज पहाय-गुणसमृद्ध राज्य प्रहाय સ્વામી, અમાત્ય, સુહૃત, કોષ, રાષ્ટ્ર, દુર્ગ અને બળ આ સાત રાજ્યાંગોથી સમૃદ્ધ રાજ્યનો પરિત્યાગ કરીને पव्वए-प्राव्राजीत् દીક્ષા અંગિકાર કરી

વિજય રાજાની કથા આ પ્રકારની છે—

દ્વારકા નગરીમાં બારમા તીર્થંકર વાસુપૂજ્યના શાસનમાં બ્રહ્મરાજ નામના

भद्रोऽयं शत्रून् पराजित्य निष्कण्टकं राज्यं करिष्यति। राज्ञो वचनं श्रुत्वा राज्ञी प्रभावती महता हर्षेण गर्भं सयत्नं पुपोष। अथ समाप्ते काले सा शुभलक्षण लक्षितमेकं दारकं प्रसूतवती। राजा च महता समारोहेण तज्जन्ममहोत्सवं कृतवान्। तस्य शिशो 'महाबलः' इति नाम कृतवान्। स शिशुः पञ्चाभिर्धात्रीभिर्लाल्यमानः शिशुत्वमपनीय क्रमेण तारुण्ये पदं निहितवान्। एतदभ्यन्तरे सकलाचार्यात्सकला कला• स्वायत्तीकृतवान्। तदनु तन्मातापितरौ महता महोत्सवे नैकस्मिन्नेव दिवसे समाहृता दिशा श्रिय इवाष्टौ राजकन्यास्तं परि

का राज्य करता है उसी प्रकार तुम से उत्पन्न होने वाला पुत्र भी शत्रुओं को परास्त कर सर्वोपरि होकर निष्कंटक राज्य करेगा। इस प्रकार पति के मीठे वचनों को सुनकर प्रभावती रानी अपने गर्भ की बडे ही आनद के साथ प्रयत्नपूर्वक रक्षा करने लगी। गर्भ की पुष्टि होते २ जब नौ मास साढे सात दिन व्यतीत हो चुके तब प्रभावती ने प्रसूति के समय शुभ लक्षण युक्त एक पुत्ररत्नको जन्म दिया, राजाने बडे ही समारोह के साथ पुत्ररत्नका उत्सव मनाया। पुत्र का नाम महाबल रखा गया। लालनपालन के लिये राजाने पाच धायोंकी देखरेख में महाबल को रख दिया। धायमाताओं के द्वारा बडे ही प्रेम से लालित पालित होता हुआ महाबल क्रमशः युवा हुवा। इस अवस्था मे उसने कलाचार्य से समस्त कलाओंका अभ्यास कर लिया। जब महाबल सब प्रकार से योग्य बन गया तब माता पिता ने भिन्न २ दिशाओं से आई हुई उनकी श्री जैसी आठ कन्याओ

કરે છે આ પ્રમાણે તમારી કૂખે ઉત્પન્ન થનાર પુત્ર પણ શત્રુઓને પરાસ્ત કરી સર્વોપરી બનીને નિષ્કંટ રાજ કરશે આ પ્રકારના પતિના મીઠા વચનોને સાભળીને પ્રભાવતી રાણી પોતાના ગર્ભનુ ઘણાજ આનદની સાથે રક્ષણ કરવા લાગી. ગર્ભની પુષ્ટી થતા થતા જ્યારે નવ માસ સાડાસાત દિવસ પૂરા થયા ત્યારે પ્રભાવતીએ પ્રસૂતિના સમયે શુભ લક્ષણ યુકત એવા એક પુત્રનો જન્મ આપ્યો, રાજાએ ઘણાજ સમારોહ સાથે પુત્ર જન્મનો ઉત્સવ ઉજવ્યો પુત્રનુ નામ મહાબલ રાખવામા આવ્યુ લાલન પાલન માટે રાજાએ પાચ ધાવની દેખરેખ નીચે મહાબળને રાખ્યો ધાવ માતાઓ તરફથી ઘણાજ પ્રેમપૂર્વક તેનુ લાલન પાલન કરવામા આવ્યુ, વધતા વધતા મહાબલ ક્રમશ યુવાવસ્થાએ પહોચ્યો એ સમય દરમ્યાન તેણે કલાચાર્યો પાસેથી વિવિધ પ્રકારની કળાઓ શીખી લીધી આ રીતે જ્યારે મહાબલ સઘળી રીતે યોગ્ય થયો ત્યારે માતા પિતાએ જૂદા જૂદા રાજ્યોની આઠ કન્યાઓ સાથે તેનુ

आदाय=अत्यादरेण हृदीत्यर्थः, अथवा सिरसा=शिरःप्रधानेन-जीवितनिरपेक्ष्येण आदाय अन्याक्षिप्तेन=चाञ्चल्यवर्जितेन चेतसा उग्रं तपः कृत्वा तृतीयभवे मुक्तिं गतः ॥५१॥

अथ महाबलकथा

आसीदत्र भरतक्षेत्रे हस्तिनापुरे नगरेऽतुल्यबलयुक्तो बलो नाम राजा। तस्य शीलप्रभावती नाम महिषी। एकदा सा सुकोमलायां शय्यायां शयाना स्वप्ने सिंहं दृष्टवती। तया निवेदितस्वप्नवृत्तान्तो भूपतिस्तां प्रोवाच-देवि! यथा सिंहो वने स्वपराक्रमेण मृगादिपशून् पराजित्य वनराज्यं करोति तथैव त्वत्स

बलः राजऋषि) महाबल नामके राजऋषि ने (सिरिं सिरसा आदाय-श्रियं शिरसा आदाय) सयम रूप श्री को शिर से-बडे आदर भाव से-धारण करके (अन्नक्खित्तेण चेयसा-अन्याक्षिप्तेन चेतसा) चचलतावर्जित एकाग्रता से (उग्गं तवं किच्चा-उग्रं तपः कृत्वा) उग्रतपस्या करके तृतीयभव मे मुक्ति लाभ किया है।

महाबल की कथा इस प्रकार है—

भरत क्षेत्र के अन्तर्गत हस्तिनापुर नगर मे पहिले अतुलबल-सपन्न एक बल नामके राजा रहते थे। इनकी पट्टरानी का नाम प्रभावती था। एक दिन रानी ने सुकोमल शय्यापर सोती हुई स्वप्न मे सिंह को देखा। प्राभातिक क्रियाओं से निवृत्ति पाकर वह अपने पति के पास पहुँची और रात्रि में देखे हुए इस स्वप्न को कह कर इसका क्या फल है ऐसा उनसे पूछा। राजा ने स्वप्नफल इस प्रकार कहा-देवि! जिस प्रकार सिंह वन मे मृग आदि पशुओं को जीतकर वन

ऋषिः મહાબલ નામના રાજર્ષિએ सिरिं सिरसा आदाय-श्रीयं शिरसा आदाय શ્રીને પોતાના મસ્તક ઉપર ઘણાજ આદર ભાવ સાથે ધારણ કરી अन्नक्खित्तेण चेयसा-अव्याक्षिप्तेन चेतसा ચચલતા વર્જીત ચિત્તની એકાગ્રતાથી उग्गं तवं किच्चा-उग्रं तपः कृत्वा ઉગ્ર તપસ્યા કરીને ત્રીજા ભવમા મુક્તિનો લાભ કરેલ છે મહાબલની કથા આ પ્રકારની છે—

ભરત ક્ષેત્રની અદર આવેલા હસ્તિનાપુર નગરમા આગળ અતુલ એવા બળશાળી એક બલ નામના રાજા હતા તેની સ્ત્રીનુ નામ પ્રભાવતી હતુ તે એક દિવસ પોતાની સુકોમળ શૈયા ઉપર રાત્રે સુતી હતી ત્યારે તેણે સ્વપ્નામા એક સિહને જોયો. સવારની ક્રિયાઓથી નિવૃત થઈને તે પોતાના પતિની પાસે પહોચી અને રાત્રીમા જોયેલા સ્વપ્નની વાત કહીને તે સ્વપ્નના ફળને પૂછયુ રાજાએ સ્વપ્નના ફળને એ પ્રમાણે કહ્યુ, દેવી! જે પ્રમાણે સિહ મૃગ આદિ પશુઓને જીતીને વનનુ રાજ

गृहीतु यावदागच्छामि तावत् कृपापरायणेन भवताऽत्रैव स्थेयम्। तद्वचनं श्रुत्वा धर्मघोषाचार्यः प्राह–युक्तमेतत् त्वादृशस्य। परमत्र कर्मणि कालक्षेपो न कर्त्तव्यः। ततः स गृहं गत्वा मातापितरौ नत्वा प्राह–हे तात! हे मातः! अद्याहं धर्मघोषाचार्यसन्निधौ धर्मं श्रुत्वा तत्रानुरक्तो भवदाज्ञया तदन्तिके दीक्षां ग्रहीतुमिच्छामि। युक्तमत्र ममैतत् प्रतिभाति। यतः को ह्येतादृशो भविष्यति, यो जलधौ ब्रुडन् प्रवहणं समाप्यापि नाधिरोहेत्। इत्थं महाबलवचनं निशम्य तन्माता

जितने समय में वापिस आता हूँ उतने समय तक कृपाकर आप यहीं पर विराजे रहें। इस प्रकार महाबल की बात को सुनकर प्रत्युत्तर में आचार्य महाराजने कहा ठीक है–तुम्हारे जैसे भाग्यशालियों के लिये यह उचित ही है–परन्तु वत्स! इस शुभ कार्य में कालक्षेप नहीं करना चाहिये। इस प्रकार आचार्य महाराज की उक्ति सुनकर महाबल घर पर आया और वहां माता पिता से नमस्कार कर कहने लगा–हे तात! हे मात! आज मैंने श्री धर्मघोष आचार्य के पास धार्मिक देशना का पान किया है, सो सुनकर मेरा अन्तःकरण इस संसार से भयभीत बन गया है। मैं चाहता हूं कि आप की आज्ञा से मैं उनके पास दीक्षा धारण करूँ। इसी लिये मैं पूछने आया हूं आप मुझे इस विषय में आज्ञा प्रदान कर कृतार्थ करेंगे ऐसी पूर्ण आशा है। भला संसार में ऐसा कौन प्राज्ञ प्राणी होगा जो संसार समुद्रमें डूबता हुआ भी प्रवहण–नावको पाकर उसका आश्रय ग्रहण न करेगा। इस प्रकार महाबल के वचन

લઈને પાછો ફરૂં ત્યાં સુધી આપ કૃપા કરી અહીંયા બિરાજી રહો. મહાબલની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને આચાર્ય મહારાજે કહ્યું–ઠીક છે તમારા જેવા ભાગ્યશાળીઓ માટે એ ઉચિત જ છે પરંતુ વત્સ! આવા શુભ કાર્યમાં કાળક્ષેપ ન કરવો જોઈએ. આ પ્રકારની આચાર્ય મહારાજની અનુમતી મળતાં મહાબળ પોતાના નિવાસ સ્થાને ગયો અને ત્યાં પહોંચીને માતાપિતાને નમસ્કાર કરી કહેવા લાગ્યો– હે તાત! હે માતા! આજે મેં શ્રી ધર્મઘોષ આચાર્યની પાસેથી ધર્મદેશનાનું પાન કરેલ છે અને સાંભળતાંજ મારૂં અંતઃકરણ આ સંસારથી ભયભીત બની ગયેલ છે. મારી ઇચ્છા છે કે હું આપની આજ્ઞાથી તેમની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરૂં. એ પૂછવા માટે જ હું આપની પાસે આવેલ છું. આપ મને આ વિષયમાં આજ્ઞા આપીને કૃતાર્થ કરો એવી સંપૂર્ણ આશા છે, ભલા સંસારમાં એવો કયો પ્રાણી હશે કે જે સંસારસમુદ્રમાં ડૂબતો હોય ત્યારે નાવ મળી જતાં તેનો આશ્રય ગ્રહણ ન કરે? આ પ્રકારના પુત્રના વચન સાંભળીને તેની માતા પ્રભાવતી એ સમયે

णायितवन्तौ। तथा च प्रचुरं धनमेताभ्यो दत्तम्, यदेतासां सप्तमकुलपर्यन्तं दातुं भोक्तुं च पर्याप्तं भवेत्। महाबलश्च ताभिः सह सुखेन कालं यापयति। तस्मिन्नवसरे पञ्चशतसाधुभिर्युक्तो विमलनाथ प्रभोर्वंशोत्पन्नो धर्मघोषाचार्यस्तस्मिन्नगरे समवसृतः। तमागतं श्रुत्वाऽतिशयप्रसन्नः श्रीमान् महाबलस्तत्समीपे गत्वा तं प्रणम्य कर्ममलविशुद्धिकरं तदुपदिष्टं धर्मं श्रुत्वा मन्दभाग्यसुदुर्लभं वैराग्यं प्राप्तवान्। ततो महाबलः श्री धर्मघोषाचार्यं प्रणम्य विज्ञापितवान्—भदन्त! भवदुपदिष्टो धर्मो मह्यं रोचते। अतोऽहं मातापितरौ पृष्ट्वा दीक्षा

के साथ उसका विवाह कर दिया। लड़कियोंके मातापिताओंने महाबल को इतना दहेज दिया कि जो सात पीढी तक भी समाप्त नहीं हो सके। इन स्त्रियों के साथ महाबल सांसारिक सुखों को भोगता हुआ अपना समय व्यतीत करने लगा। एक समय नगर में पांचसो मुनियों से युक्त धर्मघोष नामके आचार्य महाराज पधारे। ये विमलनाथ प्रभुके वंशज थे। आचार्य महाराज का आगमन सुनकर प्रसन्नवदन महाबल उनको वंदना करने के लिये जहां वे ठहरे हुए थे वहां पहुँचा। उनको वंदन कर महाबल ने उनके मुखारविन्द से धर्म देशना का ज्यों ही पान किया कि कर्ममल से विशुद्धि करनेवाले इस धर्मश्रवण के प्रभाव से उसको मन्दभाग्य प्राणियों को दुर्लभ ऐसा वैराग्यभाव जागृत हो गया। वैराग्यभाव की जागृति होने पर महाबलने आचार्य महाराज से नमस्कार कर निवेदन किया—प्रभो! आपके द्वारा उपदिष्ट धर्म मुझे रुचा है अतः मैं मातापिता से पूछकर दीक्षा ग्रहण करने के लिये

લગ્ન કર્યું કન્યાઓના માતાપિતાએ તેમને એટલું દહેજ આપ્યું કે જે તેની સાત પેઢી સુધી પહોંચી શકે પોતાની એ આઠ સ્ત્રિઓ સાથે મહાબલ સાંસારિક સુખોને ભોગવી પોતાનો સમય વ્યતીત કરવા લાગ્યો એક સમયે નગરમાં પાંચસો મુનિઓની સાથે ધર્મઘોષ નામના આચાર્ય મહારાજ પધાર્યા જેઓ વિમલનાથ પ્રભુના વંશજ હતા આચાર્ય મહારાજનું આગમન સાંભળીને પ્રસન્ન ચિત્તથી મહાબલ તેમને વંદના કરવા ગયો આચાર્યશ્રી પાંચસો મુનિઓની સાથે જ્યાં રોકાયેલ હતા એ સ્થળે પહોંચીને મહાબલે તેમને વંદના કરી, તેમ જ તેમના મુખારવિંદથી ધર્મદેશનાનું જ્યારે પાન કર્યું કે કર્મબળની વિશુદ્ધિ કરવાવાળા આ ધર્મદેશનાના પ્રભાવથી મંદભાગ્ય પ્રાણીઓને દુર્લભ એવો વૈરાગ્યભાવ તેનામાં જાગૃત થયો વૈરાગ્યભાવ જાગૃત થવાથી મહાબલે આચાર્ય મહારાજને નમસ્કાર કરી નિવેદન કર્યું કે પ્રભુ! આપે આપેલો ધર્મનો ઉપદેશ મને રૂચ્યો છે આથી હું મારા માતાપિતાની આજ્ઞા

भोगान्यानि भुक्त्वा वार्द्धके प्रव्रज्या गृहीतव्या'। कुमार प्राह–मातः! अशुचि पूर्णे मलाविले रोगाढ्ये कारागारे इव असारेऽस्मिन्–शरीरे नृणां किं सुखमस्ति? किं च–अङ्गसामर्थ्ये सत्येव व्रतं युक्तम्, वार्द्धके तु शरीरे शक्तिराहित्येनानिच्छयाऽपि व्रतं भवति। माता प्राह–पुत्र रमणीगुणभूषिताभिरामिरष्टाभिर्वधूभिः सह भोगान् भुङ्क्ष्व' साम्प्रतं दीक्षायाः किं प्रयोजनम्? कुमार प्राह–मातः! क्लेशमायैर्बालिशजनसेवितैर्दुःखानुबन्धिभिर्विषफलोपमैर्भोगैर्नास्ति

सुकुमार काय उनको सहन कैसे कर सकेगा इसलिये उचित यही है कि अभी तो तुम घर में ही रह कर सुख भोगो पश्चात् वृद्धावस्था मे दीक्षा ले लेना। माताकी इस बात को सुनकर कुमार ने उससे कहा–हे माता! यह शरीर अशुचि स्वरूप है अशुचि से भरा हुआ तथा मल से मलिन है। रोगों का यह घर है। अत: कारागार (जेलखाना) के समान असार इस शरीर मे मनुष्यों को सुखदायी वस्तु ही कौन सी है। ज्ञानियों का तो यही आदेश है कि जबतक शरीरमे सामर्थ्य बना हुआ है, तभीतक व्रतोंकी आराधना होती है। बुढापे में ऐसी आराधना नही होती है, क्यों कि उस अवस्था में जब शरीर सामर्थ्य रहित हो जाता है तब मुश्किल से व्रत पाले जाते ह। इस प्रकार महाबल का कथन सुनकर माताने भोगों को भोगने का प्रलोभन प्रकट कर कहा–पुत्र! रमणीगुणो से विभूपित इन आठ वधूओ के साथ अभी तो तुम भोगों को भोगो–इस समय तुमको दीक्षा से क्या काम है।

તુ એને કઇ રીતે સહન કરી શકીશ? આ કારણે એજ ઉચિત છે કે, હમણા તો તુ ઘરમા રહીને સુખોને ભોગવ પછી વૃદ્ધાવસ્થામા દીક્ષા લઈ લેજે માતાની આવા પ્રકારની વાતને સાભળીને કુમારે કહ્યુ–હે માતા! આ શરીર અશુચિથી ભરેલુ તથા મળથી મલીન છે રોગોનુ આ ઘર છે એથી કારાગારના જેવા અસાર આ શરીરમા મનુષ્યોને સુખદાયી એવી કઈ વસ્તુ છે? જ્ઞાનીઓનો તો એજ આદેશ છે કે, જ્યા સુધી શરીરમા સામર્થ્ય હોય છે ત્યા સુધી જ વ્રતોની આરાધના થઇ શકે છે બુઢાપામા એવી આરાધના થઈ શકતી નથી કારણ કે, એવી અવસ્થામા જ્યારે શરીર સામર્થ્ય વગરનુ બની જાય છે આથી એ અવસ્થામા વ્રતોનુ પાલન મહામુશ્કેલીથી થાય છે આ પ્રકારનુ કહેવાનુ સાભળીને માતાએ તેની સામે ભોગોને ભોગવવાનુ પ્રલોભન રજુ કરતા કહ્યુ–પુત્ર! રમણી ગુણોથી વિભૂષિત એવી એ આઠ કુળવધૂઓની સાથે હમણા તો તમો ભોગોને ભોગવો આ સમયે તમારે દીક્ષાથી શુ કામ છે?

प्रभावती मूर्च्छिता भूमौ निपतिता। अथ शीतलोपचारैः कथञ्चित्स्वस्था सा रुदती पुत्रमेवमवदत्-वत्स! त्वद्वियोगं सोढुं न शक्नोमि। अतो यावदहं जीवामि तावत्त्वं गृहे एव तिष्ठ, पश्चात्परिव्रजेः। मातुर्वचनं श्रुत्वा महाबलः प्राह-मातः! सर्वे संयोगाः स्वप्नसन्निभाः, प्राणाश्च तृणाग्रजलबिन्दुचञ्चलाः। तन्न जानामि कः पूर्वं गमिष्यति, कश्च पश्चात्। तस्मादद्यैवानुज्ञां कुरुत प्रव्रज्याग्रहणार्थम्। माता प्राह-वत्स! तवायं कायः सुकुमारः, परीषहान् सोढुमसमर्थः। तस्मात्त्वं

सुनकर माता प्रभावती उसी समय मूर्च्छित हो कर जमीन पर गिर पडी शीतलोपचार से जब वह स्वस्थ हुई तो रोती हुई पुत्रसे इस प्रकार बोली-बेटा! मैं तुम्हारे वियोगको कभी भी सहन नहीं कर सकती हूं अतः जबतक हमलोग जीवित हैं तबतक तुम घर में ही रहो, पश्चात् दिक्षित हो जाना। माता के इस प्रकार प्रेम भरे वचनों को सुनकर महाबलने उससे कहा हे जननी! क्या तुम नहीं जानती हो कि संसार के ये जितने भी संयोग हैं वे सब स्वप्न के जैसे हैं तथा जीवन भी तृणाग्रपतित जल बिन्दु के समान चंचल है जब इस प्रकार की यहां की स्थिति है तो फिर यह कौन जान सकता है कि पहिले कौन मरेगा और पश्चात् कौन। इसलिये ममता का परित्याग कर आज ही आज्ञा दो ताकि मैं दीक्षा धारण कर इस अवशिष्ट जीवन को सफल कर सकूं। महाबल की इस प्रकार की बात सुनकर माता ने पुनः उससे कहा-वत्स! यह तेरा शरीर विशेष सुकुमार है और दीक्षा में अनेक प्रकार के परीषह और उपसर्गों का सामना करना पडता है सो यह

મૂર્છિત થઈને પડી ગઈ શીતલોપચારથી જ્યારે તે સ્વસ્થ થઈ ત્યારે રોતા રોતા પુત્રને આ પ્રમાણે કહેવા લાગી-બેટા! હું તમારા વિયોગને જરા સરખોએ સહન કરી શકીશ નહીં આથી જ્યાસુધી અમો જીવીત છીએ ત્યાં સુધી તમો અમારી આંખો સામે રહો પછીથી દીક્ષા અંગીકાર કરજો માતાના આવા પ્રેમભર્યા વચનોને સાંભળીને મહાબળે તેમને કહ્યું-હે જનની! શું તમો જાણતા નથી કે, આ સંસારના જેટલા પણ સંયોગ છે એ સઘળા સ્વપ્ન જેવા છે, તથા જીવન પણ ઘાસ ઉપર ચોટેલા ઝાકળના બિંદુની માફક ચંચલ છે જ્યારે આ પ્રકારની અહીં સ્થિતિ છે ત્યારે પછી એ કોણ જાણી શકે કે, પહેલા કોણ મરી જવાનું છે, અને પછીથી કોણ મરવાનું છે આ કારણે મમતાનો પરિત્યાગ કરી આજે જ આજ્ઞા આપો કે જેથી હું દીક્ષા ધારણ કરી આ બાકીના જીવનને સફળ બનાવી શકું મહાબળની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને તેની માતાએ ફરીથી તેને કહ્યું-વત્સ! આ તારૂં શરીર ખૂબ જ સુકુમાર છે અને દીક્ષામાં તો અનેક પ્રકારના પરીષહ તથા ઉપસર્ગોનો સામનો કરવો પડે છે આવી સુકુમાર કાયાથી

भवति, अनन्तशिवसुखद, स धर्म एव वास्तविक धनम्। तद्विपरीत तु विडम्बनाप्रायमेव। तथाविधे धने को विवेकवाननुरज्येत? माता प्राह–वत्स! व्रत हि वह्निशिखापानवद् दुष्करम्। सुकुमारस्त्व कथ तदाचरिष्यसि? कुमार सस्मित प्राह–मात.! किमिदमुच्यते? कातरा नरा हि व्रत दुष्कर मन्यन्ते। धीरास्तु प्राणा नविष्यपी कृत्य व्रत पालयन्ति। परलोकार्थिना

द्वारा इसका एक क्षणभर मे विनाश भी हो सकता है। अत. इस क्षण स्थायी (अस्थीर) द्रव्य के भोगने का प्रलोभन दिखलाना हे माता! किसी तरह भी उचित नही माना जा सकता है। धर्म के सेवन से जिस प्रकार जीव को परलोक मे सुखकी प्राप्ति होती है तथा धर्म जीव के साथ परलोक में जैसे जाता हे उस प्रकार धन से कुछ नही होता है। अत. धर्म के सामने धनकी कोई कीमत नही है और न धन से जीवका अनन्त शिवसुख प्राप्त होता है, यह तो धर्म के सेवन से ही मिलता है, अत यदि विचार कर देखा जाय तो धर्मही सर्वोत्तम धन है–यह अचेतन द्रव्य नही है। यह तो सब एक प्रकार की विडम्बना ही है।

पुत्रकी ऐसी बातें सुनकर माताने कहा–बेटा! जिस व्रतो की आराधना के निमित्त तुम यह सब कुछ छोड रहे हो उन व्रतो की आराधना सुलभ नही है वह तो अग्नि शिखा के पान की तरह दुष्कर है। ऐसे दुष्कर व्रतो को बेटा! इस सुकुमार शरीर से तुम कैसे आचरित कर सकोगे?।

જાય છે આથી આ ક્ષણભગુર એવા દ્રવ્યને ભોગવવાનુ પ્રલોભન બનાવવુ એ હે માતા! કોઇ રીતે ઉચિત માની શકતુ નથી ધર્મના સેવનથી જે પ્રકારની જીવને પરલોકમા સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે તથા ધર્મ જીવની સાથે જે રીતે પરલોકમા જઇ શકે છે એ રીતે ધન કાંઈ પણ ઉપયોગી બનતુ નથી આથી ધર્મની સામે ધનની કાઇ પણ કીમત નથી તેમ ધનથી જીવને અનત શિવસુખ પણ મળતુ નથી એતો ધર્મના સેવનથી જ મળે છે આથી જો વિચાર કરીને જોવામા આવે તો ધર્મ એજ સર્વોત્તમ ધન છે આ અચેતન દ્રવ્ય ધન નથી એ તો એક પ્રકારની વિટબણા જ છે

પુત્રની આવી વાતો સાભળીને માતાએ કહ્યુ–બેટા! જીન વ્રતોની આરાધના સુલભ નથી એતો અગ્નિની જ્વાળાઓના આસ્વાદ જેવી દુષ્કર છે એવા દુષ્કર વ્રતોને બેટા! આ સુકુમાર શરીરથી કઇ રીતે તમો પાળી શકશો?

માતાની આ પ્રકારની વાતને સાભળીને કુમારને થોડુ હસવુ આવ્યુ તેણે

मे प्रयोजनम्। किञ्च-मोक्षप्रदमिदं मानुषं जन्म वराटिकाकृते रत्नमिव भोग कृते कः सुकृती हारयेत्? मातामाह-वत्स! क्रमागतमिदं द्रव्यजातं तव पुण्य फलं तवाग्रे समुपस्थितम्। एतदुपभुङ्क्ष्व। अलं प्रव्रजितेन। कुमार आह-मातः! धनं तु गोत्रिभिश्चौरैरग्निना राज्ञा च क्षणेनापहियते। एवं विधेन भयप्रदेन धनेन मां किं प्रलोभयसि? किं च यो धर्मः परलोकेऽपि सहगामी

कुमार ने इसके प्रत्युत्तर में कहा-माता इन विष जैसे विषयों से मुझे अब कोई काम नहीं रहा है तो मुझे इस समय-क्लेशसाध्य एव बाल अज्ञानी जनों के योग्य ही प्रतीत हो रहे हैं। तथा इनसे दुःखा नुबन्ध के सिवाय और कुछ जीवों के पल्ले नहीं पडता है। कौन ऐसा भाग्य हीन होगा-जो इन मनुष्य जन्मको वराटिका-कोडी की प्राप्ति के लिये रत्न की तरह भोगोंकी प्राप्ति निमित्त नष्ट भ्रष्ट कर देगा। हे माता! यदि तुम ऐसा कहो कि दीक्षा से क्या लाभ है? क्रमागत यह द्रव्य समूह तुम्हारे पुण्य का फल है जो तुम्हारे सामने उपस्थित है उसको बताने की जरूरत नहीं है अतः इसको भोगकर आनन्द करो-व्यर्थ तपस्या के चक्कर मे क्यो पडते हो? सो हे माता! ऐसा कहना भी उचित नही मालूम पडता है। क्यों कि जो धन हमको पुण्य के फल रूपमें मिला है-वह इसी रूप में सदा कायम बना रहेगा-यह नही माना जा सकता है, क्यो की द्रव्य के नष्ट होने के कई मार्ग होते हैं-चौर इसको चुरा सकते है। सबधीजन इसका बटवारा करा सकते है। राजा उसको अपहृत (छीन सकता) कर सकता है। तथा अग्नि

कुमारे એના પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ-માતા! આ વિષ જેવા વિષયોથી મને હવે કાઈ કામ રહ્યુ નથી એ તો મને આ સમયે દુખને આપનાર અને બાલ અજ્ઞાનીના જેવા જ દેખાઈ રહેલ છે એમા દુખના બધન સીવાય બીજુ કાઈ જીવોના ફાળે આવતુ નથી કેણ એવો ભાગ્યહીન હશે કે, જે આ મનુષ્ય જન્મને કોડીની પ્રાપ્તિના માટે રત્નની માફક ભોગોની પ્રાપ્તિના નિમિત્ત નષ્ટ-ભ્રષ્ટ બનાવી દેશે? હે માતા! કદાચ તમે એવુ કહો કે, દીક્ષાથી શુ લાભ છે? ક્રમાગત આ દ્રવ્ય સમૂહ તમારા પુણ્યનુ ફળ છે, જે તમારી સામે ઉપસ્થિત છે એને બતાવવાની જરૂરત નથી આથી એને ભોગવીને આનદ કરો વ્યર્થ તપસ્યાના ચક્કરમા શા માટે પડો છો? તો હે માતા! એમ કહેવુ પણ ઉચિત નથી કેમકે, જે ધન આપણને પુણ્યના ફળ રૂપમા મળેલ છે તે આજ રૂપમા સદા કાયમને માટે બન્યુ રહેશે એ માની શકાતુ નથી કેમકે, દ્રવ્યનો નાશ થવાના ઘણા રસ્તા છે ચોર લોકો એને ચોરી જાય છે, કુટુબીજનોમા એના ભાગ પડી જાય છે, રાજા એને આચકી લ્યે છે, તથા અગ્નિથી એનો ક્ષણભરમા વિના ... થઈ

वारिभिस्तमभिषिक्तवान। ततो ज्योत्स्नावच्छुभ्रे श्रीचन्दनद्रवै सल्लिप्तगात्र पयः फेनोपमे अदृश्ये द्वे देवदुष्ये परिदधानः, देदीप्यमानैर्माणिक्यमण्डनै. शुभ्रेण च्छत्रेण च राजमान. वेल्लत्कल्लोलल्लोलाभ्या चामराभ्या च वीज्यमानः स सहस्रजनवाह्या शिबिकामारुह्य धर्मघोषाचार्यसन्निधे प्रचलितः। तदनु चतुरङ्गबलान्वितः प्रभावतीसहितो राजा बलः प्रचलितः। तदा भेरीप्रभृतितूर्याणा घनगर्जितानुकारी नादः केलिकेकिनामकाण्डताण्डवारम्भमजनयत्। पौरजनाः-'अहो।

जब यह दीक्षा लेने के लिये घर से निकल कर धर्मघोष आचार्य के पास जाने को उद्यत हुवा। तब राजाने बडे ठाटबाट से उसको विदा करने का समारंभ रचा। उसमे सर्व प्रथम राजाने स्वय अपने हाथों से पवित्र जल द्वारा इस को स्नान कराया और चद्र चादनी के समान चदनपक से उसके शरीर को अच्छी तरह लिप्त किया। पश्चात् दूध के फेन समान उज्ज्वल दो देवदूष्य वस्त्रों को धारण करने वाले महाबल कुमार के शरीर पर उन्हों ने देदीप्यमान माणिक्य के आभूषण पहिराये। इस प्रकार कुमार को तयार कर सहस्रजन वाह्य शिबिका-पालखी मे उसको ला कर उन्होंने बैठा दिया। उस समय नौकरों ने उसके ऊपर सफेद छत्र ताना और चामर ढोलने वालोंने उसके ऊपर कल्लोल (पानी के तरग) जैसे चचल चामरों को ढोलना प्रारभ किया। कुमार उस शिबिका मे बैठकर आगे बढने लगा और पीछे से चतुरग बल सहित बल राजा प्रभावती सहित चलने लगा। कहते हैं कि इस समय जो भेरी आदि तूर्यों का शब्द हुआ था वह घनकी गर्जना को अनुकरण करता था। अतः

જ્યારે તે દીક્ષા લેવા માટે ઘેરથી નીકળીને ધર્મઘોષ આચાર્ય પાસે જવા તૈયાર થયા ત્યારે રાજાએ ઘણા જ ઠાઠથી તેને વિદાય આપવાનો સમારભ રચ્યો. આમા સહુ પ્રથમ રાજાએ પોતાના હાથે પવિત્ર જળથી તેને સ્નાન કરાવ્યુ, અને ચદ્રની ચાદનીની માફક ચદનપકથી એના શરીરને સારી રીતે લેપન કર્યું પછીથી દૂધના ફીણ જેવા ઉજળા બે વસ્ત્રને ધારણ કરવાવાળા મહાબલ કુમારના શરીર ઉપર તેમણે દેદીપ્યમાન માણેકના આભૂષણો પહેરાવ્યા આ પ્રમાણે કુમારને તૈયાર કરી પાલખીમા તેને લાવીને બેસાડી દીધા તે સમયે નોકરોએ તેના ઉપર સફેદછત્ર ધર્યું ચામર ઢોળવાવાળાઓએ તેના ઉપર કલ્લોલ જેવા ચચળ ચામરોને ઢોળવાનો પ્રારભ કર્યો કુમાર એ શિબિકા-પાલખીમાં બેસીને આગળ વધવા લાગ્યા પાછળ ચતુરગ બળ સાથે બળરાજા પ્રભાવતી સાથે ચાલવા લાગ્યા કહે છે કે, એ સમયે ભેરીના તથા વાદ્યોના જે શબ્દો નીકળતા હતા તે મેઘ ગર્જનાનુ અનુકરણ કરતા હતા આથી એને સાભળીને ક્રીડા

तेषां व्रतं नास्ति दुष्करम्। तस्मात् हे पूज्याः! यूयं मां व्रताय विसृजत। सज्जना हि धर्मं कर्तुमुद्यतं परमपि जनं समुत्साहयन्ति, आत्मजं तु सुतरामेव। अतो मां व्रतार्थमादिशत? तस्यैवं दृढनिश्चयं दृष्ट्वा तस्मात् तं वैराग्यात्प्रकम्पयितुमक्षमौ पितरौ कथंचित् व्रतार्थमन्वमन्येताम्। ततो राजा शुचि

माताकी इस प्रकारकी बात सुनकर कुमार को कुछ हँसी सी आगई, उसने कहा हे माता! यह तुम क्या कह रही हो। व्रतों को दुष्कर जो कायर जन होते हैं वे ही मानते हैं,-धीरजो प्राणों को भी अर्पण कर व्रतोंकी पालना किया करते हैं। जो इस बात को चाहते हैं कि हमारा परलोक सुन्दर एवं मौलिक बने वे व्रतों को-दुष्कर ही नहीं समजते हैं। इसलिये हे पूज्य माता जी! आप मुझे व्रतों की आराधना करने के लिये छोडदो। सज्जनो का यह काम है कि वे धर्म करने मे उद्यत दूसरे जनको भी जब सहायता पहुँचाते हैं तो फिर हम तो तुम्हारे पुत्र हैं, हम को इस विषय में सहायता करना आपका स्वाभाविक कर्तव्य है। इसलिये आप हमें प्रेम से व्रतों के पालन करने की समति प्रदान करो यही हमारा आपसे अनुरोध है।

पुत्र का इस प्रकार दृढ निश्चय जानकर तथा वैराग्य से उस को मोडने मे अपने आपको असमर्थ देखकर माता पिता ने उस तत्त्वज्ञ के लिये बडी मुश्किल से व्रतों की आराधना करने की शुभ समति दे दी।

કહ્યુ-હે માતા! આ તમો શુ કહી રહ્યા છો? વ્રતોને દુષ્કર તો કાયર જનો જ માને છે ધીર મનુષ્યો તો પ્રાણોને પણ અર્પણ કરીને વ્રતોનુ પાલન કરતા હોય છે જેઓ એ વાતને ચાહતા હોય છે કે, અમારો પરલોક સુદર તેમજ મૌલિક બને તે વ્રતોને દુષ્કર સમજતા નથી આ માટે હે પૂજ્ય માતાજી! આપ મને વ્રતોથી આરાધના કરવા માટે છુટો મૂકી દો સજ્જનોનુ એ કામ છે કે, તેઓ ધર્મ કરવામા ઉત્સાહિત બનેલા એવા બીજા માણસને પણ સહાયતા પહોચાડે છે, તો પછી હુ તો તમારો પુત્ર છુ મને આ વિષયમા સહાયતા કરવી એ આપનુ સ્વાભાવિક કર્તવ્ય છે આ માટે આપ મને પ્રેમથી વ્રતોનુ પાલન કરવાની સમતિ પ્રદાન કરો આવી આપને મારી પ્રાર્થના છે

પુત્રનો આ પ્રકારનો દૃઢ નિશ્ચય જાણીને તથા વૈરાગ્યથી તેને પાછો વાળવાનુ પોતાનામા અસામર્થ્ય જોઇને માતાપિતાએ એ તત્વજ્ઞને ઘણી મુશ્કેલીથી વ્રતોની આરાધના કરવાની શુભ સમતિ આપી

ऐशानी दिशं गत्वा विकारानिव सर्वानलङ्कारान् मुक्तवान्। ततस्तन्माता प्रभा-वती छिन्नमुक्तामालानि पतन्मुक्तातुल्यान्यश्रूणि मुञ्चती तानलङ्कारान्गृह्णती तमेव मुक्तवती-वत्स! त्व कदाचिदपि धर्मकृत्ये प्रमादी मा भूः, गुरुवच सन्मव-मिव सर्वदा समाराधये । इत्थं राज्ञी प्रभावती पुत्र सन्दिष्टवती। ततो राजा तया सह धर्मघोषाचार्यं प्रणम्य चतुरङ्गसैन्यैः सह प्रतिनिवृत्त.। तत' कुमारः स्वहस्तेन पञ्चमुष्टिक लोच कृत्वा धर्मघोषाचार्यान् भक्त्या प्रणम्य चेत्थ विज्ञा-पितवान्-भदन्त' भवार्णवे मज्जतो ममोत्तरणाय दीक्षारूपा नाव ददातु। ततो

महाबल कुमारने ईशान दिशा की तरफ जाकर विकारो की तरह समस्त अलकारों को शरीर पर से उतार दिया। महाबल के द्वारा उतारे गये इन आभूषणो को जब महाबल की माता प्रभावती ने अपने खोले मे लिये तो उसकी आखो से सहसा छिन्न-टूटी हुई मुक्ता की माला से गिरने वाले मोतियो के जैसे आसू गिरने लगे। धैर्य बांधकर उस माताने महाबल से कहा-वत्स' तुम कभी भी धर्मकृत्य मे प्रमादी मत होना। सच्चे मित्र के वचनो की तरह सर्वदा गुरुदेव के वचनोका आदर करना और उन्ही के अनुसार चलते रहना। इस प्रकार महाबल को समजा कर रानी प्रभावती अपने पति के साथ आचार्य को नमन कर वहा से वापिस लौट आई। महाबल ने पचमुष्टि लोच करके आचार्य महाराज से नमन पूर्वक इस प्रकार निवेदन किया भदन्त' ससार सागर मे डूबने वाले मेरे लिये आप पार होने के निमित्त दीक्षारूप नाव का सहारा प्रदान करें। इस प्रकार महाबल के निवेदन करने पर

પછીથી મહાબલ કુમારે ઈશાન દિશા તરફ જઈને વિકારોની માફક સઘળા અલ કારોને શરીર ઉપરથી ઉતારી નાખ્યા મહાબલે ઉતારેલા એ આભૂષણોને તેની માતા પ્રભાવતીએ જ્યારે પોતાના ખોળામા લીધા ત્યારે તેની આખોમાથી એ ટમ મોતીની તૂટેલી માળાથી વિખરેલા મોતીઓની જેમ ટપક ટપક આસુ પડવા લાગ્યા ધૈર્ય ધારણ કરીને તેણે મહાબલને કહ્યુ કે, હે વત્સ' તમો ધર્મકાર્યમા કદી પણ પ્રમાદી બનશો નહી સાચા મિત્રના વચનોની માફક ગુરૂદેવના વચનોનો સદા સર્વદા આદર કરજો અને એમના કહ્યા મુજબ ચાલજો આ પ્રકારે મહાબલને સમજાવીને રાણી પ્રભાવતી પોતાના પતિની સાથે આચાર્યશ્રીને વદન કરીને રાજ ભવન તરફ પાછી વળી મહાબલે પચમુષ્ટિ લોચ કર્યા પછી આચાર્ય મહારાજને નમન કરીને આ પ્રમાણે નિવેદન કર્યું ભદન્ત' સસાર સાગરમા ડૂબવાવાળા મને તેમાથી પાર ઉતરવા માટે દીક્ષારૂપી નાવનો સહારો આપો આ પ્રકારે મહાબલે નિવેદન કર

अग योवनेऽपि राज्यलक्ष्मीं त्यक्त्वा प्रव्रज्याभिमुखोऽयम्, अतोऽयं धन्य' कृतार्थश्चास्ति' इत्येवमुच्चैस्स्तुवन्तः। शिबिकारोहणानन्तरं कुमारश्चिन्तामणिरिवार्थिभ्योऽभीप्सितं दानं ददानः पुरान्निर्गत्य धर्मघोषाचार्यचरणपरिपूतोद्याने समागत'। तत. स शिबिकाया अवतीर्य, मातापितरौ च पुरस्कृत्य धर्मघोषाचार्यसमीपे समुपस्थिताः। ततस्तन्मातापितरौ धर्मघोषाचार्यं सम्यग् वन्दित्वा-भदन्त! अयं मस्माकं प्रिय. पुत्रो विरक्तो भवन्तिके दीक्षां गृह्णाति, आवाभ्यां तस्मै शिक्षा भवते दीयते। तत. आचार्येण तद्वचनं स्वीकृतम्। तदनु महाबल

उसको सुनकर मीडामयूरों ने अकाल में ही नृत्य करना आरंभ कर दिया था। तथा "धन्य है इसको जो यौवन अवस्था म भी राज्य लक्ष्मी का परित्याग कर यह दीक्षा लेने जा रहा है—बड़ा भाग्यशाली है यह" इस प्रकार पुरवासीजन उसकी स्तुति करने मे लगे हुए थे। कुमारने शिबिका पर आरोहण करने के अनन्तर ही याचक जनों को चिन्तामणि जैसे बनकर खूब यथेच्छ दान देना प्रारंभ किया इस प्रकार ठाटबाट के साथ—कुमार धर्मघोपाचार्य के चरणों से पवित्रित उद्यान मे जा पहुँचा। उद्यान मे आते ही वह पालखी पर से नीचे उतरा और मातापिता को आगे कर के वह धर्मघोष आचार्य के पास आया। आचार्य महाराज को वदना करके बलराजा और प्रभावती रानी ने उनसे इस प्रकार कहा—भदन्त! यह हमारा प्रिय पुत्र महाबल कुमार विरक्त होकर आप के पास दीक्षा धारण करना चाहता है इस लिये हम इसको आज्ञा दे चुके ह इसलिये इसको आप दीक्षा दीजिये। राजा और रानी की इस बात को सुनकर आचार्य श्री ने उसको मान लिया। पश्चात्

મયૂરોએ અકાળે જ નૃત્ય કરવાનો આરંભ કરી દીધો હતો તથા "ધન્ય છે તેને કે જેણે યુવાવસ્થામા પણ રાજ્ય લક્ષ્મીનો પરિત્યાગ કરી આ દીક્ષા લેવા જઇ રહેલ છે ઘણો જ એ ભાગ્યશાળી છે" આ પ્રકારની પુરવાસી જનો એની સ્તુતિ કરવા લાગી ગયા કુમારે પાલખીમા બેસતા પહેલા યાચક જનોને ચિંતામણી જેવા બનીને ખુબ દાન આપવા માંડયુ આ પ્રમાણે ઠાઠમાઠની સાથે ધર્મઘોષ આચાર્યના ચરણેથી પવિત્ર થયેલા એ ઉદ્યાનમા આવી પહોચતા જ તે પાલખીમાથી નીચે ઉતર્યા અને માતા પિતાને આગળ કરીને તે ધર્મઘોષ આચાર્યની પાસે પહોચ્યા આચાર્ય મહારાજને વદના કરીને બલરાજા અને પ્રભાવતી રાણીએ આ પ્રમાણે કહ્યુ ભદન્ત! આ અમારો પ્રિય પુત્ર મહાબલ કુમાર વિરકત બનીને આપની પાસે દીક્ષા લેવા ચાહે છે આ માટે અમો એને આજ્ઞા આપી ચૂકયા છીએ આથી આપ એને દીક્ષા આપો રાજા અને રાણીની આ વાતને સાભળીને આચાર્યશ્રીએ એનો સ્વીકાર કર્યો

ऐशानीं दिशं गत्वा विकारानिव सर्वानलङ्कारान् मुक्तवान्। ततस्तन्माता प्रभावती छिन्नमुक्तामालानि पतन्मुक्तातुल्यान्यश्रूणि मुञ्चती तानलङ्कारान्गृह्णती तमेव मुक्तवती-वत्स! त्वं कदाचिदपि धर्मकृत्ये प्रमादी मा भूः, गुरुवच सन्मन्त्र मिव सर्वदा समाराधयेः। इत्थं राज्ञी प्रभावती पुत्रं सन्दिष्टवती। ततो राजा तया सह धर्मघोषाचार्यं प्रणम्य चतुरङ्गसैन्यैः सह प्रतिनिवृत्तः। ततः कुमारः स्वहस्तेन पञ्चमुष्टिकं लोचं कृत्वा धर्मघोषाचार्यान् भक्त्या प्रणम्य चेत्थं विज्ञापितवान्-भदन्त! भवार्णवे मज्जतो ममोत्तरणाय दीक्षारूपां नावं ददातु। ततो

महाबल कुमारने ईशान दिशा की तरफ जाकर विकारों की तरह समस्त अलकारों को शरीर पर से उतार दिया। महाबल के द्वारा उतारे गये उन आभूषणों को जब महाबल की माता प्रभावती ने अपने खोले मे लिये तो उसकी आखो से सहसा छिन्न-टूटी हुई मुक्ता की माला से गिरने वाले मोतियों के जैसे आसू गिरने लगे। धैर्य बांधकर उस माताने महाबल से कहा-वत्स! तुम कभी भी धर्मकृत्य मे प्रमादी मत होना। सच्चे मित्र के वचनो की तरह सर्वदा गुरुदेव के वचनोंका आदर करना और उन्हीं के अनुसार चलते रहना। इस प्रकार महाबल को समजा कर रानी प्रभावती अपने पति के साथ आचार्य को नमन कर वहा से वापिस लौट आई। महाबल ने पचमुष्टि लोच करके आचार्य महाराज से नमन पूर्वक इस प्रकार निवेदन किया भदन्त! ससार सागर मे डूबने वाले मेरे लिये आप पार होने के निमित्त दीक्षारूप नाव का सहारा प्रदान करें। इस प्रकार महाबल के निवेदन करने पर

પછીથી મહાબલ કુમારે ઈશાન દિશા તરફ જઈને વિકારોની માફક સઘળા અલકારોને શરીર ઉપરથી ઉતારી નાખ્યા મહાબલે ઉતારેલા એ આભૂષણોને તેની માતા પ્રભાવતીએ જ્યારે પોતાના ખોળામા લીધા ત્યારે તેની આખોમાથી એ દમ મોતીની તૂટેલી માળાથી નિખરેલા મોતીઓની જેમ ટપ ટપ આસુ પડવા લાગ્યા ધૈર્ય ધારણ કરીને તેણે મહાબલને કહ્યુ કે, હે વત્સ! તમો ધર્મકાર્યમા કદી પણ પ્રમાદી બનશો નહી સાચા મિત્રના વચનોની માફક ગુરૂદેવના વચનોનો સદા સર્વદા આદર કરજો અને એમના કહ્યા મુજબ ચાલજો આ પ્રકારે મહાબલને સમજાવીને રાણી પ્રભાવતી પોતાના પતિની સાથે આચાર્યશ્રીને વદન કરીને રાજભવન તરફ પાછી વળી મહાબલે પચમુષ્ટિ લોચ કર્યા પછી આચાર્ય મહારાજને નમન કરીને આ પ્રમાણે નિવેદન કર્યું ભદન્ત! સસાર સાગરમા ડૂબવાવાળા મને તેમાથી પાર ઉતરવા માટે દીક્ષારૂપી નાવનો સહારો આપો આ પ્રકારે મહાબલે નિવેદન કર

धर्मघोषाचार्यस्तं दीक्षितवान्। दीक्षितस्तीक्ष्णबुद्धिः स महाबलमुनिस्तीव्रं व्रतं पालयन् चतुर्दशापि पूर्वाण्यधीतवान्। अत्युग्रं तपस्तपन् स द्वादशवर्षाणि साध्वाचारं सम्यक् परिपाल्य मासिकमनशनं कृत्वा केवली भूत्वा सिद्धिगत इति।

॥ इति महाबलकथा ॥

एवं क्षत्रिय राजर्षिर्महापुरुषदृष्टान्तैर्ज्ञानपूर्वक क्रियाफलमुपदर्श्य साम्प्रतमुपदेष्टुमाह—

मूलम्—कहं धीरे अहे ऊहिं, उम्मत्तो व्व महिं चरे।
एए विसेसमादाय, सूरा दढपरक्कमा ॥५२॥

छाया—कथं धीरोऽहेतुभिरुन्मत्त इव महीं चरेत्।
एते विशेषमादाय, शूरा दृढपराक्रमाः ॥५२॥

टीका—'कहं' इत्यादि।

धीरः=प्रज्ञावान् अहेतुभिः=मिथ्यात्वकारणभूतैः क्रियावाद्यादिकल्पित कुहे-

---

आचार्य महाराजने उसको दीक्षा देदी। दीक्षित हो कर महाबल मुनिराजने तीव्र तपो को तपते हुए चौदह १४ पूर्वो का अध्ययन कर लिया। इस प्रकार अत्युग्र तपस्या करते हुए महाबल मुनिराजने बारह वर्ष तक निर्विघ्न रीति से साधु के आचार का पालन किया। पश्चात् अन्त में एक मास का अनशन कर के इन्होंने केवली होकर सिद्धिगति को प्राप्त किया ॥५१॥

इस प्रकार क्षत्रिय राजऋषि ने महापुरुषों के दृष्टान्तो द्वारा ज्ञान पूर्वक क्रिया के फल को प्रकट कर फिर क्या कहा सो इस गाथा द्वारा कहा जाता है—

'कह धीरे' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(धीरे-धीर') प्रज्ञासम्पन्न होकर भी जो (उम्मत्तोव्व-

---

વથી આચાર્ય મહારાજે તેને દીક્ષા આપી. દીક્ષિત થઈને મહાબલ મુનિરાજે ઘોર એવુ તપ તપીને ચૌદ પૂર્વોનો અભ્યાસ કર્યો. આ પ્રમાણે અતિ ઉગ્ર એવી તપસ્યા કરતા કરતા મહાબલ મુનિરાજે બાર વર્ષ સુધી નિર્વિઘ્ન રીતે સાધુના આચારનુ પાલન કર્યું. પછીથી અંતમા એક માસનુ અનશન કરીને તેઓએ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી. ॥ ૫૧ ॥

આ પ્રમાણે ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ મહાપુરુષોના દૃષ્ટાંતો દ્વારા જ્ઞાનપૂર્વક ક્રિયાના ફળને પ્રગટ કરીને પછી શુ કહ્યુ, તે આ ગાથા દ્વારા કહેવામા આવે છે—
"કહ ધીરે" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—धीरे-धीर પ્રજ્ઞા સંપન્ન થઈને પણ જે उम्मत्तोव्व-उन्मत्तइव

तुभिः=उन्मत्त इव=ग्रहगृहीत इव तत्त्वापलपनेनाल्जाल्भापितया मही=भुव कथ=केन प्रकारेण चरेद्=विहरेत्, नैव विहरेदित्यर्थ । कुत इत्याह–यस्मात्कारणात् एते=पूर्वोक्ताः शूरा =संयमग्रहणे शूरा, तत्परिपालने च दृढपराक्रमा भरतादयो विशेष=मिथ्यादर्शनेभ्यो जैनदर्शनस्य वैशिष्ट्यम् आदाय=गृहीत्वा ज्ञात्वेति यावत् एतज्जिनशासनमेवाश्रितवन्तः। तस्माद् धीरेण सज्जनेन च त्वयाऽत्रैव मनोयोगो देय इति ॥५२॥

किं च—

मूलम्—अच्चतंनियाणखमा, सच्चा मे भासिया वई ।
अतरिसु तरंतेगे, तरिस्संति अणागया ॥५३॥

छाया—अत्यन्त निदानक्षमा, सत्या मया भाषिता वाक् ।
अतरन् तरन्त्येके, तरिष्यन्ति अनागताः ॥५३॥

टीका—'अच्चत' इत्यादि ।

अत्यन्तनिदानक्षमा=निदाने=कर्ममलशोधने अत्यन्तम्=अतिशयेन क्षमा=

उन्मत्त इव) उन्मत्त की तरह (अहेऊहिं–अहेतुभि) खोटी २ युक्तियों द्वारा तत्त्वों का अपलाप करता है एव निरर्थक बकता रहता है वह साधु (मही कह चरे–मही कथ चरेत्) पृथिवी पर निर्विघ्नरीति से कैसे विहार कर सकता है। अर्थात् नहीं कर सकता है। (ए ए–एते) ये पूर्वोक्त भरत आदि (विसेसमादाय–विशेषम् आदाय) मिथ्यादर्शन से जैनदर्शन की विशिष्टता जान कर ही तो (सूरा–शूराः) सयम के ग्रहण करने मे शूरवीर होते हुए उस के परिपालन करने में (दढपरक्कमा–दृढपराक्रमाः) दृढपराक्रमशाली बने है ॥ ५२ ॥

और भी—'अच्चत०' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अच्चत नियाणखमा–अत्यत निदान क्षमा) कर्ममल के

ઉન્મત્તની માફક अहेऊहिं–अहेतुभिः ખોટી ખોટી યુક્તિઓ દ્વારા તત્વોનો અપલાપ કરે છે અને નિરર્થક બકતા રહે છે તે સાધુ महिं कहचरे–मही कथ चरेत् પૃથ્વી ઉપર નિર્વિઘ્ને કઈ રીતે વિહાર કરી શકે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી ए ए–एते એ પૂર્વોક્ત ભરત આદિએ विसेसमादाय–विशेषम् आदाय મિથ્યા દર્શનનો ત્યાગ કરી જૈન દર્શનની વિશિષ્ટતા જાણીને सुरा–शूरा સંયમને ગ્રહણ કરવામાં શૂરવીરતા ધારણ કરીને તેનું પરિપાલન કરવામાં दढ परक्कमा–दृढ पराक्रमा. દૃઢ પરાક્રમશાળી બનેલ છે ॥ ૫૨ ॥

વળી પણ—"अच्चत' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अच्चत नियाणखमा–अत्यतनिदानक्षमा' કર્મમળનું શોધન

धर्मघोषाचार्यस्तं दीक्षितवान्। दीक्षितस्तीक्ष्णबुद्धिः स महाबलमुनिस्तीव्र व्रत पालयन् चतुर्दशापि पूर्वाण्यधीतवान्। अत्युग्रं तपस्तपन् स द्वादशवर्षाणि साध्वाचारं सम्यक् परिपाल्य मासिकमनशनं कृत्वा केवली भूत्वा सिद्धिगतः इति।

॥ इति महाबलकथा ॥

अथ क्षत्रिय राजर्षिर्महापुरुषदृष्टान्तैर्ज्ञानपूर्वकं क्रियाफलमुपदर्श्य सांप्रतमुपदेष्टुमाह—

मूलम्—कहं धीरे अहे ऊहिं, उम्मत्तो व्व महिं चरे।
एए विसेसमादाय, सूरा दढपरक्कमा ॥५२॥

छाया—कथं धीरोऽहेतुभिरुन्मत्त इव महीं चरेत्।
एते विशेषमादाय, शूरा दृढपराक्रमाः ॥५२॥

टीका—'कह' इत्यादि।

धीरः=प्रज्ञावान् अहेतुभिः=मिथ्यात्वकारणभूतैः क्रियावाद्यादिकल्पितकुहे-

आचार्य महाराजने उसको दीक्षा देदी। दीक्षित हो कर महाबल मुनिराजने तीव्र तपों को तपते हुए चौदह १४ पूर्वों का अध्ययन कर लिया। इस प्रकार अत्युग्र तपस्या करते हुए महाबल मुनिराजने बारह वर्ष तक निर्विघ्न रीति से साधु के आचार का पालन किया। पश्चात् अन्त में एक मास का अनशन कर के इन्होंने केवली होकर सिद्धिगति को प्राप्त किया ॥५१॥

इस प्रकार क्षत्रिय राजऋषि ने महापुरुषों के दृष्टान्तो द्वारा ज्ञान-पूर्वक क्रिया के फल को प्रकट कर फिर क्या कहा सो इस गाथा द्वारा कहा जाता है—

'कह धीरे' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(धीरे-धीरः) प्रज्ञासंपन्न होकर भी जो (उम्मत्तोव्व-

વથી આચાર્ય મહારાજે તેને દીક્ષા આપી દીક્ષિત થઈને મહાબલ મુનિરાજે ઘોર એવું તપ તપીને ચૌદ પૂર્વોનો અભ્યાસ કર્યો આ પ્રમાણે અતિ ઉગ્ર એવી તપસ્યા કરતા કરતા મહાબલ મુનિરાજે બાર વર્ષ સુધી નિર્વિઘ્ન રીતે સાધુના આચારનું પાલન કર્યું પછીથી અંતમાં એક માસનું અનશન કરીને તેઓએ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી ॥ ૫૧ ॥

આ પ્રમાણે ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ મહાપુરૂષોના દષ્ટાંતો દ્વારા જ્ઞાનપૂર્વક ક્રિયાના ફળને પ્રગટ કરીને પછી શું કહ્યું, તે આ ગાથા દ્વારા કહેવામાં આવે છે—
"कह धीरे" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—धीरे-धीर પ્રજ્ઞા સંપન્ન થઇને પણ જે उम्मत्तोव्व-उन्मत्तइव

तुभिः=उन्मत्त इव=ग्रहगृहीत इव तत्त्वापलपनेनालजालभाषितया मही=भुव कथ =केन प्रकारेण चरेद्=विहरेत्, नैव विहरेदित्यर्थ । कुत इत्याह–यस्मा त्कारणात् एते=पूर्वोक्ता॰ शूराः=सयमग्रहणे शूरा, तत्परिपालने च दृढपरा क्रमा भरतादयो विशेष=मिथ्यादर्शनेभ्यो जैनदर्शनस्य वैशिष्ट्यम् आदाय= गृहीत्वा ज्ञात्वेति यावत् एतज्जिनशासनमेवाश्रितवन्तः। तस्माद् धीरेण सज्जनेन च त्वयाऽप्यत्रैव मनोयोगो देय इति ॥५२॥

किं च—

मूलम्—अच्चतंनियाणखमा, सच्चा मे भासियाँ वँई ।
अतंरिसु तरतेगे, तरिस्संति अणागया ॥५३॥

छाया—अत्यन्त निदानक्षमा, सत्या मया भाषिता वाक् ।
अतरन् तरन्त्येके, तरिष्यन्ति अनागता॰ ॥५३॥

टीका—'अच्चत' इत्यादि ।

अत्यन्तनिदानक्षमा=निदाने=कर्ममलशोधने अत्यन्तम्=अतिशयेन क्षमा=

उन्मत्त इव) उन्मत्तकी तरह (अहेऊहि–अहेतुभि) खोटी २ युक्तियों द्वारा तत्त्वों का अपलाप करता है एव निरर्थक बकता रहता है वह साधु (मही कह चरे–महीं कथ चरेत्) पृथिवी पर निर्विघ्नरीति से कैसे विहार कर सकता है। अर्थात् नही कर सकता है। (ए ए–एते) ये पूर्वोक्त भरत आदि (विसेसमादाय–विशेषम् आदाय) मिथ्यादर्शन से जैनदर्शन की विशिष्टता ज्ञान कर ही तो (सूरा–सूराः) सयम के ग्रहण करने मे शूरवीर होते हुए उस के परिपालन करने में (दढपरक्कमा– दृढपराक्रमा॰) दृढपराक्रमशाली बने है ॥ ५२ ॥

और भी—'अच्चत॰' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अच्चत नियाणक्खमा–अत्यत निदान क्षमाः) कर्ममल के

ઉન્મત્તની માફક अहेऊहिं–अहेतुभिः ખોટી ખોટી યુક્તિઓ દ્વારા તત્વોનો અપ-લાપ કરે છે અને નિરર્થક બકતા રહે છે તે સાધુ महिं कहचरे–मही कथ चरेत् પૃથ્વી ઉપર નિર્વિઘ્ને કઈ રીતે વિહાર કરી શકે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી ए ए–एते એ પૂર્વોકત ભરત આદિએ विसेसमादाय–विशेषम् आदाय મિથ્યા દર્શનનો ત્યાગ કરી જૈન દર્શનની વિશિષ્ટતા જાણીને सुरा–शूरा સયમને ગ્રહણ કરવામા શૂરવીર તા ધારણ કરીને તેનુ પરિપાલન કરવામા दढ परकमा–दृढ पराक्रमाः દૃઢ પરાક્રમ શાળી બનેલ છે ॥ ૫૨ ॥

વળી પણ—"अचत' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अचत नियाणखमा–अत्यतनिदानक्षमाः કર્મમળનુ શોધન

धर्मघोषाचार्यस्तं दीक्षितवान्। दीक्षितस्तीक्ष्णबुद्धिः स महाबलमुनिस्तीव्र व्रत पालयन् चतुर्दशापि पूर्वाण्यधीतवान्। अत्युग्रं तपस्तपन् स द्वादशवर्षाणि साध्वाचारं सम्यक् परिपाल्य मासिकमनशनं कृत्वा केवली भूत्वा सिद्धिगतः इति।

॥ इति महाबलकथा ॥

इत्थं क्षत्रिय राजर्षिर्महापुरुषदृष्टान्तैर्ज्ञानपूर्वकक्रियाफलमुपदर्श्य साम्प्रतमुपदेष्टुमाह—

मूलम्—कहं धीरे अहेऊहिं, उम्मत्तो व्व महिं चरे।
एए विसेसमादाय, सूरा दढपरक्कमा ॥५२॥

छाया—कथं धीरोऽहेतुभिरुन्मत्त इव महीं चरत्।
एते विशेषमादाय, शूरा दृढपराक्रमाः ॥५२॥

टीका—'कह' इत्यादि।

धीरः=प्रज्ञावान् अहेतुभिः=मिथ्यात्वकारणभूतैः क्रियावाद्यादिकल्पितकुहे

आचार्य महाराजने उसको दीक्षा देदी। दीक्षित हो कर महाबल मुनिराजने तीव्र तपों को तपते हुए चौदह १४ पूर्वो का अध्ययन कर लिया। इस प्रकार अत्युग्र तपस्या करते हुए महाबल मुनिराजने बारह वर्ष तक निर्विघ्न रीति से साधु के आचार का पालन किया। पश्चात् अन्त में एक मास का अनशन कर के इन्होंने केवली होकर सिद्धिगति को प्राप्त किया ॥५१॥

इस प्रकार क्षत्रिय राजऋषि ने महापुरुषों के दृष्टान्तों द्वारा ज्ञानपूर्वक क्रिया के फल को प्रकट कर फिर क्या कहा सो इस गाथा द्वारा कहा जाता है—

'कह धीरे' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(धीरे-धीरः) प्रज्ञासंपन्न होकर भी जो (उम्मत्तोव्व-

વથી આચાર્ય મહારાજે તેને દીક્ષા આપી. દીક્ષિત થઈને મહાબલ મુનીરાજે ઘોર એવું તપ તપીને ચૌદ પૂર્વોનો અભ્યાસ કર્યો. આ પ્રમાણે અતિ ઉગ્ર એવી તપસ્યા કરતા કરતા મહાબલ મુનિરાજે બાર વર્ષ સુધી નિર્વિઘ્ન રીતે સાધુના આચારનું પાલન કર્યું. પછીથી અંતમાં એક માસનું અનશન કરીને તેઓએ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી ॥ ૫૧ ॥

આ પ્રમાણે ક્ષત્રિય રાજર્ષિએ મહાપુરૂષોના દૃષ્ટાંતો દ્વારા જ્ઞાનપૂર્વક ક્રિયાના ફળને પ્રગટ કરીને પછી શું કહ્યું, તે આ ગાથા દ્વારા કહેવામાં આવે છે—
"कह धीरे" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—धीरे-धीर પ્રજ્ઞા સંપન્ન થઈને પણ જે उम्मत्तोव्व-उन्मत्तइव

तुभिः आत्मानं=स्वं कथं पर्यावासयेत्—आत्मानं कथमहेत्वादिभावितं कुर्यात्न कथमपि कुर्यादित्यर्थः । कुहेत्वभावितस्यात्मनः किं फलम् ? इत्याह 'सव्वसंग' इत्यादि कुहेत्वभावितात्मा हि सर्वसङ्गविनिर्मुक्तः=सजन्ति=कर्मणा सश्लिष्टा भवन्ति जन्तव एभिरिति सङ्गाः—द्रव्यतो धनादयः भावतो मिथ्यात्वरूपा एत एव क्रियावादादाः, सर्वे च ते सङ्गाः सर्वसङ्गास्तेभ्यो विनिर्मुक्तो रहितः सन् नीरजाः= कर्मरजोरहितो भूत्वा सिद्धो भवति। अनेन अहेतुपरिहारस्य कर्मादिसङ्गराहित्य पूर्वकं सिद्धत्वरूपं फलमुक्तम्। 'इति ब्रवीमि' अस्यार्थः पूर्ववद्बोध्यः ।५४।

इतिश्री–विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषा
कलित–ललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थ
निर्मापक–वादिमानमर्दक–शाहूछत्रपति–कोल्हापुर–
राजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हा
पुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैन-
धर्मदिवाकर–पूज्य श्री घासीलालव्रतिविर
चितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शि
न्याख्यायां व्याख्यायां सयतीया
ख्यमष्टादशमध्ययनं सम्पूर्णम्।

अहेतुभिः) मिथ्यात्व के कारणभूत क्रियावादी आदि द्वारा कल्पित कुहेतुओं द्वारा (अत्ताणं कह परियावसे–आत्मानं कथं पर्यावासयेत्) अपने आपको कैसे भावित कर सकता है किन्तु नहीं। इसी लिये ऐसी आत्मा (सव्वसंगविणिम्मुक्को–सर्वसंगविनिर्मुक्त) सर्वसंग से– द्रव्य के अपेक्षा धनादिक परिग्रह से तथा भाव की अपेक्षा मिथ्यात्वरूप इन क्रियावाद आदिकों से–रहित होता हुआ (नीरए–नीरजा) कर्मरज

મિથ્યાત્વના કારણભૂત ક્રિયાવાદી આદી દ્વારા કલ્પિત કુહેતુઓથી अत्ताणं कह परियावसे–आत्मानं कथ पर्यावासयेत् પોતે પોતાને કઇ રીતે ભાવિત કરી શકે છે ?–કદી નહીં આ કારણે આવી એવો આત્મા सव्वसंगविणिम्मुक्को–सर्वसंगविनिर्मुक्त' સર્વ સંગથી દ્રવ્યની અપેક્ષા ધનાદિકના પરિગ્રહથી તથા ભાવની અપેક્ષા મિથ્યાત્વરૂપ આ ક્રિયાવાદ આદિકોથી રહીત બનીને नीरए–नीरजा કર્મરજથી રહીત

समर्था, यद्वा-निदानैः=कारणैः=सद्धेतुभिः अत्यन्त क्षमा=युक्ता 'जिनशासनमेवा श्रयणीयमित्येव रूपा सत्यावाग् मया भाषिता=उक्ता। इमा वाचमङ्गीकृत्य बहवः अतरन्=संसारसागरं तीर्णवन्तः, एके=अपरे केचित् महापुरुषाः सम्प्रत्यपि तरन्ति संसारसागरम्। तथा-अनागताः=भाविनोऽपि संसारसागरं तरिष्यन्ति ॥५३॥

यतश्चैवमतः—

मूलम्—कह धीरे अहेऊहिं अत्ताणं परियावसे।
सव्वसंगविणिम्मुक्को, सिद्धे भवइ नीरए त्ति बेमि ॥५४॥

इति संजइज्जं समत्तं ॥१८॥

छाया—कथं धीरः अहेतुभिः, आत्मानं पर्यावासयेत्।
सर्वसङ्गविनिर्मुक्तः, सिद्धो भवति नीरजा इति ब्रवीमि ॥५४॥

टीका—'कह' इत्यादि।

धीरः=प्रज्ञावान् अहेतुभिः=मिथ्यात्वकारणभूतैः क्रियादिवादिकल्पितकुहे-

शोधन करने मे अत्यंत समर्थ-अथवा-समीचीन हेतुओं से युक्त "जिन शासन ही आश्रयणीय है" ऐसी यह (सच्चावई-सत्यावाग्) सत्यवाणी ही (मे भासिया-मया भाषिता) मै ने कही है। सो इस वाणी को स्वीकार कर के ही बहुत से प्राणी (अतरिंसु-अतरन) पहिले इस संसारसागर से पार हुए हैं (एगे-एके) कितनेक अभी भी (तरंति तरन्ति) पार हो रहे हैं और (अणागया-अनागताः) कितनेक भाग्य शाली महापुरुष (तरिस्संति-तरिष्यन्ति) भविष्य मे पार होंगे ॥५३॥

अतः—'कह धीरे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(धीरे-धीरः) जो प्रज्ञाशाली आत्मा है वह (अहेऊहिं

કરવામા ઘણુ જ સમર્થ અથવા સમિચીન હેતુઓથી યુક્ત "જીન શાસન જ આશ્રય કરવા યોગ્ય છે" એવી આ सच्चावाई-सत्यावाग् સત્ય વાણી જ मे भासिया-मया भाषिता મે કહેલ છે તો આ વાણીનો સ્વીકાર કરીને જ, પહેલા આ સંસાર સાગરથી ઘણા પ્રાણીઓ अतरिंसु-अतरन् પાર થયા છે एगे-एके કેટલાક આજે પણ तरति-तरन्ति પાર થઈ રહ્યા છે, અને अणागया-अनाताः કેટલાક ભાગ્ય શાળી પુરૂષ तरिस्सति-तरिष्यन्ति ભવિષ્યમા પાર થશે ॥ ૫૩ ॥

અત —"कह धीरे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—धीरे-धीर જે પ્રજ્ઞાશાળી આત્મા છે તે अहेऊहिं-अहेतुभि

॥ अथ एकोनविंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते ॥

व्याख्यातमष्टादशमध्ययनम्, सम्प्रत्येकोनविंशतितमं मृगापुत्राख्यमारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः। पूर्वस्मिन्नध्ययने भोगर्द्धित्यागः प्रोक्तः। भोगर्द्धित्यागादेव श्रामण्यमुपजायते। श्रामण्यं चाप्रतिकर्मतया प्रशस्यतरं भवतीत्यप्रतिकर्मता इहाध्ययने वक्ष्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्य अस्याध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—सुग्गीवे नयरे रम्मे, काणणुज्जाणसोहिए।
राया बलभद्देत्ति, मिया तस्सग्गमाहिसी ॥१॥

छाया—सुग्रीवे नगरे रम्ये, काननोद्यानशोभिते।
राजा च बलभद्र इति, मृगा तस्याग्रमहिषी ॥१॥

उन्नीसवां अध्ययन का प्रारंभ

अठारवें अध्ययन का व्याख्यान हो चुका, अब उन्नीसवें अध्ययन का व्याख्यान प्रारंभ होता है। इस अध्ययनका नाम मृगापुत्रक है। इसका संबंध गत अठारहवें अध्ययन के साथ है, और वह इस प्रकार से है-वहां भोगर्द्धि का त्याग करते हुए यह प्रकट किया है कि श्रामण्य इस भोग ऋद्धि के त्याग से ही होता है। तथा इस मे जो प्रशस्यता अति प्रशस्तपना आता है वह रोगादि अवस्था मे चिकित्सा नहीं करने रूप अप्रतिकर्मता से आता है। इसलिये इस अध्ययन मे उसी अप्रति कर्मता का कथन मृगापुत्र को ले कर किया जायगा। इसलिये यहां मृगापुत्र के चरित्र को कहते है—'सुग्गीवे' इत्यादि

ઓગણીસમા અધ્યયનનો પ્રારંભ—

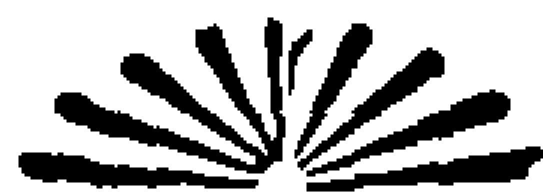
અઢારમું અધ્યયન આગળ કહેવાઈ ગયું, હવે ઓગણીસમા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે આ ઓગણીસમા અધ્યયનનું નામ મૃગાપુત્રક છે આ અધ્યયનનો સંબંધ આગલા અઢારમા અધ્યયનની સાથે આ પ્રકારનો છે—ત્યાં ભોગ ઋદ્ધિનો ત્યાગ બતાવતાં એવું કહેવામાં આવેલ છે કે, શ્રામણ્ય આ ભોગ ઋદ્ધિના ત્યાગથી જ મેળવી શકાય છે, વળી આ ત્યાગમાં જે પ્રશસ્યતા—અતિપ્રશસ્તપણું આવે છે તે રોગાદિ અવસ્થામાં ચિકિત્સા ન કરાવવા રૂપ અપ્રતિકર્મતાથી આવે છે, માટે જ આ અધ્યયનમાં એ જ અપ્રતિકર્મતાનું કથન મૃગાપુત્રનો અધિકાર લઈને કરવામાં આવે છે આ કારણે અહીં મૃગાપુત્રના ચારિત્રને કહે છે—"सुग्गीवे" ઈત્યાદિ।

से रहित बन जाता है और (सिद्धे भवइ-सिद्धो भवति) वह सिद्ध हो जाता है। इस गाथा द्वारा सूत्रकार ने अहेतु परिहार का फल आदि से रहित हो कर आत्मा को सिद्धस्वरूप फल की प्राप्ति होना कहा है। "त्ति बेमि-इति ब्रवीमि" इन पदों का अर्थ पहिले अध्ययनों मे कहा जा चुका है ॥ ५४ ॥

॥ यह अठारहवें अध्यायन का हिन्दि अनुवाद संपूर्ण हुआ ॥

બની જાય છે અને સિદ્ધે ભવઇ-સિદ્ધો ભવતિ અતે તે સિદ્ધ બની જાય છે આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકારે અહેતુ પરિહારનુ ફળ કર્મમળ આદિથી રહિત થઇને આત્માને સિદ્ધસ્વરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ થવાનુ બતાવેલ છે ત્તિ બેમિ-ઇતિ બ્રવીમિ આ પદોના અર્થ આગળના અધ્યયનમા કહેવાઇ ગયેલ છે ॥ ૫૫ ॥

શ્રી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના અઢારમા અધ્યયનનો આ ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સંપૂર્ણ થયો ॥ ૧૮ ॥



॥ अथ एकोनविंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते ॥

व्याख्यातमष्टादशमध्ययनम्, सम्प्रत्येकोनविंशतितमं मृगापुत्राख्यमारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः। पूर्वस्मिन्नध्ययने भोगर्द्धित्याग उक्तः। भोगर्द्धित्यागादेव श्रामण्यमुपजायते। श्रामण्यं चाप्रतिकर्मतया प्रशस्यतरं भवतीत्यप्रतिकर्मता इहाध्ययने वक्ष्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्य अस्याध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—सुग्गीवे नयरे रम्मे, काणणुज्जाणसोहिए।
रोया य बलभद्दित्ति, मिया तस्सग्गमाहिसी ॥१॥

छाया—सुग्रीवे नगरे रम्ये, काननोद्यानशोभिते।
राजा च बलभद्र इति, मृगा तस्याग्रमहिषी ॥१॥

उन्नीसवां अध्ययन का प्रारम्भ

अठारवें अध्ययन का व्याख्यान हो चुका, अब उन्नीसवें अध्ययन का व्याख्यान प्रारम्भ होता है। इस अध्ययनका नाम मृगापुत्रक है। इसका संबंध गत अठारहवें अध्ययन के साथ है, और वह इस प्रकार से है-वहां भोगर्द्धि का त्याग करते हुए यह प्रकट किया है कि श्रामण्य इस भोग ऋद्धि के त्याग से ही होता है। तथा इस मे जो प्रशस्यता अति प्रशस्तपना आता है वह रोगादि अवस्था मे चिकित्सा नहीं करने रूप अप्रतिकर्मता से आता है। इसलिये इस अध्ययन मे उसी अप्रति कर्मता का कथन मृगापुत्र को ले कर किया जायगा। इसलिये यहां मृगापुत्र के चरित्र को कहते है—'सुग्गीवे' इत्यादि

ઓગણીસમા અધ્યયનનો પ્રારભ—

અઢારમુ અધ્યયન આગળ કહેવાઈ ગયુ, હવે ઓગણીસમા અધ્યયનનો પ્રારભ થાય છે આ ઓગણીસમા અધ્યયનનુ નામ મૃગાપુત્રક છે આ અધ્યયનનો સબધ આગલા અઢારમા અધ્યયનની સાથે આ પ્રકારનો છે—ત્યા ભોગ ઋદ્ધિનો ત્યાગ બતાવતા એવુ કહેવામા આવેલ છે કે, શ્રામણ્ય આ ભોગ ઋદ્ધિના ત્યાગથી જ મેળવી શકાય છે, વળી આ ત્યાગમા જે પ્રશસ્યતા—અતિપ્રશસ્તપણુ આવે છે તે રોગાદિ અવસ્થામા ચિકિત્સા ન કરાવવા રૂપ અપ્રતિકર્મતાથી આવે છે, માટે જ આ અધ્યયનમા એ જ અપ્રતિકર્મતાનુ કથન મૃગાપુત્રનો અધિકાર લઈને કરવામા આવે છે આ કારણે અહી મૃગાપુત્રના ચારિત્રને કહે છે—"सुग्गिवे" ઈત્યાદિ।

टीका—'सुग्गीवे' इत्यादि ।

काननोद्यानशोभिते-काननानि=वृक्षाश्रयाणि वनानि, तथा उद्यानानि=क्रीडावनानि, तैरुपशोभित, तस्मिन, अत एव रम्ये=मनोरमे सुग्रीवे नाम्नि नगर वलभद्र इति नाम राजाऽऽसीत्, तस्य मृगा नाम अग्रमहिषी=पट्टरानी आसीत् ॥१॥

मूलम्—तेसिं पुत्ते वलसिरी, मियापुत्तेत्तिं विस्सुए ।
अम्मापिऊण दइए, जुवराया दमीसरे ॥२॥

छाया—तयोः पुत्रो बलश्री मृगापुत्र इति विश्रुत ।
अम्बापित्रोर्दयितो, युवराजो दमीश्वरः ॥२॥

टीका—'तेसिं पुत्त' इत्यादि ।

तयोः=मृगाबलभद्रयोः पुत्रो बलश्री=मातापितृकृत नाम्ना बलश्रीः, लोके तु मृगापुत्र इति नाम्ना विश्रुत=प्रसिद्ध', अम्बापित्रोर्दयित=प्रिय, युवराज'=यौवराज्यपदेऽभिषिक्त. दमीश्वर'-जन्मतो हि वशीकृतेन्द्रियत्वेन 'दमीश्वर' इति लोके प्रसिद्धश्चासीत् ॥२॥

अन्वयार्थ—(काणणुज्जाणसोहिये-काननोद्यानशोभिते) वन एव उद्यान से सुशोभित (सुग्गीवे-सुग्रीवे) सुग्रीव नाम के (रम्मे नयरे-रम्ये नगरे) मनोरम नगरमे (बलभद्देत्तिराया-बलभद्र इतिराजा) बलभद्र इस नामके एक राजा थे। (तस्सग्गमाहिसी-तस्य अग्रमहिषी) उनकी पटरानी का नाम (मिया-मृगा) मृगा था ॥ १ ॥

'तेसिं' इत्यादि

अन्वयार्थ- (तेसिं-तयो.) इन के (पुत्ते-पुत्र) पुत्र (बलसिरी बलश्री) बलश्री नाम के थे। जो लोक में (मियापुत्तत्ति विस्सुए-मृगापुत्र इति विश्रुत.) मृगापुत्र इसनाम से प्रसिद्ध थे। यह (अम्मापिऊण-अम्बापित्रो) माता पिताको (दइए-दयित) अत्यत प्रिय-लाडले थे। उन्होने इनको

અન્વયાર્થ—काणणुज्जाणसोहिये-काननोद्यानशोभिते વન અને ઉદ્યાનથી સુશોભિત सुग्गीवे-सुग्रीवे સુગ્રીવ નામના रम्मे नयरे-रम्ये नगरे મનોરમ્ય નગરમાં बलभद्देत्तिराया-बलभद्र इतिराजा બલભદ્ર નામનો એક રાજા હતો. तस्सग्गमाहिसी-तस्य अग्रमहिषी તેની પટરાણીનુ નામ मिया-मृगा મૃગા હતુ ॥ १ ॥

'तेसिं' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—तेसिं-तयो તેનો पुत्ते-पुत्र પુત્ર बलसिरि-बलश्री બલશ્રી નામનો હતો, કે જે લોકોમા मियापुत्तेत्ति विस्सुए-मृगा पुत्र इति विश्रुत' મૃગા પુત્રના નામથી જાણીતો હતો. એ મૃગાપુત્ર अम्मा पिऊण-अम्बापित्रो માતા પિતાને दयिए-

मूलम्--नदंणे सो उ पासाए, कीलँए सह इत्थिंहि।
देवे दोगुंदगे चेवँ, निच्चं मुइयमाणसे ॥३॥

छाया—नन्दने स तु प्रासादे, क्रीडति सह स्त्रीभिः।
देवो दौगुन्दुक इव, नित्य मुदितमानस ॥३॥

टीका—'नदणे' इत्यादि।

मुदितमानसः=हृष्टचित्तः स मृगापुत्रो नन्दने=नन्दननामक वास्तुशास्त्रोक्त विशिष्टलक्षणोपेते प्रासादे दौगुन्दुकः=त्रायस्त्रिंशो देव इव स्त्रीभिः सह नित्य क्रीडति। 'तु' शब्द. पूरणे ॥३॥

मूलम्--मणिरयणंकुट्टिमतले, पासायालोयणे ठिँओ।
आलोएँइ नयरस्स, चउक्कं तिगचच्चरे ॥४॥

छाया--मणिरत्नकुट्टिमतले, प्रासादालोकने स्थित.।
आलोकयति नगरस्य, चतुष्क त्रिक चत्वराणि ॥४॥

(जुवराया-युवराजः) युवराज बना दिया था। (दमीसरे-दमीश्वरः) जन्म से ही वह इन्द्रियों को अत्यन्त दमन करने वाले होने से लोग इनको दमीश्वर कहते थे ॥ २ ॥

'नदणे' इत्यादि

अन्वयार्थ—(मुइयमाणसे-मुदितमानसः) प्रसन्नचित्त हो कर यह युवराज (नदणे पासाए-नन्दने प्रासादे) नन्दन नाम के राजमहल में (दोगुदगे देवेव्व-दौगुन्दुक देव इव) त्रायस्त्रिंश देव की तरह (इत्थिहिं सह कीलए-स्त्रीभिः सह नित्य क्रीडति) स्त्रियों के साथ नित्य क्रीडा किया करते थे ॥ ३ ॥

—दयित અત્યંત પ્રિય લાડીલો હતો માતા પિતાએ એને जुवराया—युवराजः યુવરાજપદ સ્થાપિત કર્યો दमीसरे—दमीश्वरः જન્મથીજ એ ઇન્દ્રિયોનું ખૂબ જ દમન કરનાર હોવાથી લોકો તેને દમીશ્વર પણ કહેતા હતા ॥ ૨ ॥

"नदणे" ઈત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—मुइयमाणसे—मुदितमानसः પ્રસન્નચિત્ત બનીને એ યુવરાજ नदणे पासाए—नन्दने प्रासादे નન્દન નામના રાજમહેલમાં दोगुदगे देवेव्व—दोगुन्दुक देवइव ત્રાયસ્ત્રિંશ દેવની માફક इत्थिहिं सह कीलए—स्त्रिभिः सह नित्य क्रीडति સ્ત્રિઓની સાથે નિત્ય ક્રીડા કરતો હતો ॥ ૩ ॥

टीका—'सुग्गीवे' इत्यादि ।

काननोद्यानशोभिते-काननानि=वृहद्वृक्षाश्रयाणि वनानि, तथा उद्यानानि=क्रीडावनानि, तैरुपशोभित, तस्मिन, अत एव रम्ये=मनोरमे सुग्रीवे नाम्नि नगरे बलभद्र इति नाम राजाऽऽसीत्, तस्य मृगा नाम अग्रमहिषी=पट्टरानी आसीत् ॥१॥

मूलम्— तेसिं पुत्ते बलसिरी, मियापुत्तेत्ति विस्सुए ।
अम्मापिऊण दइए, जुवराया दमीसरे ॥२॥

छाया—तयोः पुत्रो बलश्री मृगापुत्र इति विश्रुतः ।
अम्बापित्रोर्दयितो, युवराजो दमीश्वरः ॥२॥

टीका—'तेसिं पुत्त' इत्यादि ।

तयोः=मृगाबलभद्रयोः पुत्रो 'बलश्री'=मातापितृकृतनाम्ना 'बलश्री', लोके तु मृगापुत्र इति नाम्ना विश्रुत =प्रसिद्ध , अम्बापित्रोर्दयित =प्रिय , युवराज =यौवराज्यपदेऽभिषिक्त' दमीश्वर –जन्मतो हि वशीकृतेन्द्रियत्वेन 'दमीश्वर ' इति लोके प्रसिद्धश्चासीत् ॥२॥

अन्वयार्थ—(काणणुज्जाणसोहिये–काननोद्यानशोभिते) वन एवं उद्यान से सुशोभित (सुग्गीवे–सुग्रीवे) सुग्रीव नाम के (रम्मे नयरे–रम्ये नगरे) मनोरम नगरमें (बलभद्देत्तिराया–बलभद्र इतिराजा) बलभद्र इस नामके एक राजा थे। (तस्सग्गमाहिसी–तस्य अग्रमहिषी) उनकी पट्टरानी का नाम (मिया–मृगा) मृगा था ॥ १ ॥

'तेसिं' इत्यादि

अन्वयार्थ- (तेसिं–तयो) इन के (पुत्ते–पुत्र) पुत्र (बलसिरी बलश्री.) बलश्री नाम के थे। जो लोक मे (मियापुत्तेत्ति विस्सुए–मृगापुत्र इति विश्रुत) मृगापुत्र इसनाम से प्रसिद्ध थे। यह (अम्मापिऊण–अम्बापित्रो) माता पिताको (दइए–दयित॰) अत्यत प्रिय–लाडले थे। उन्होने इनको

અન્વયાર્થ—काणणुज्जाणसोहिये–काननोद्यानशोभिते વન અને ઉદ્યાનથી સુશોભિત सुग्गीवे–सुग्रीवे સુગ્રીવ નામના रम्मे नयरे–रम्ये नगरे મનોરમ્ય નગરમાં बलभद्देत्तिराया–बलभद्र इतिराजा બલભદ્ર નામના એક રાજા હતા. तस्सग्गमाहिसी–तस्य अग्रमहिषी તેની પટરાણીનું નામ मिया–मृगा મૃગા હતું ॥ १ ॥

'तेसिं'' ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—तेसिं–तयो તેના पुत्ते–पुत्र, પુત્ર बलसिरि–बलश्री બલશ્રી નામના હતા, કે જે લોકોમાં मियापुत्तेत्ति विस्सुए–मृगा पुत्र इति विश्रुत મૃગા પુત્રના નામથી જાણીતા હતા. એ મૃગાપુત્ર अम्मा पिऊण–अम्बापित्रो માતા પિતાને दयिए–

द्वादशविधम्, नियमो द्रव्याद्यभिग्रहलक्षणः, संयमः=सावद्यविरमणलक्षणः सप्तदशविधस्तेषां धरं=धारकम्, अत एव शीलाढ्यम्-शीलेन=अष्टादशशीलाङ्गसहस्रलक्षणेन आढ्यं=परिपूर्णम्, तत एव च-गुणाकरम्=गुणानां ज्ञानादीनामाकर इव आकरस्तं ज्ञानादिगुणरत्नाकरमित्यर्थः, एतादृशं सदोरकमुखवस्त्रिकानिबद्धमुखं श्रमणसंयतं=श्रमणश्चासौ संयतश्चेति श्रमणसंयतस्तं, निरतिचारचारित्रवन्तं मुनिं, तत्र-चतुष्कत्रिक चत्वरेषु अतिक्रामन्तम्=आगच्छन्तं पश्यति। श्रमणमात्रोक्तौ शाक्यादिसाधूनां ग्रहणं स्यात्, अतस्तन्निवृत्त्यर्थं श्रमणसंयत इत्युक्तम् ॥५॥

मूलम्--तं पासइ मियापुत्ते, दिट्ठीए अणिमेसाए।
कहिं मन्नेरिसं रूवं, दिट्ठपुव्वमए पुरा ॥६॥

छाया--तं पश्यति मृगापुत्रो, दृष्ट्या अनिमेषया।
क मन्ये ईदृशं रूपं, दृष्टपूर्वं मया पुरा ॥६॥

-तवो नियमसंयमधरम्) अनशन आदि बारह प्रकार के तपों को तपने वाले, अभिग्रह रूप नियम को पालन करने वाले तथा सावद्य विरमणरूप सत्रह प्रकार के संयम को धारण करने वाले तथा (सीलड्ढ-शीलाढ्यम्) अठारह हजार शीलांग रथको धारण करने वाले इसीलिये (गुण आगरम्-गुणाकरम्) ज्ञानादिक गुणों के आकर-खान स्वरूप ऐसे (समणसंजय-श्रमणसंयतम्) श्रमणसंयत को अर्थात् परीषह उपसर्गों को सहन करने वाले होने से श्रमण, वायुकाय की यतना के लिये मुख पर दोरा सहित मुखवस्त्रिका बांधे हुए होने से संयत ऐसे मुनि को (तत्थ-तत्र) चतुष्क, (चार पार्श्ववाले) त्रिक, (तीन रस्ते) एवं चत्वर (चार रस्ते पर (अइच्छंतं-अतिक्रामन्तम्) आते हुए (पासइ-पश्यति) देखा ॥५॥

तवो नियमसंजमधरम् અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપોને આચરવાવાળા તથા સાવદ્ય વિરમણરૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમને ધારણ કરવાવાળા, તથા સીલડ્ઢ-શીલાઢ્યમ્ અઢાર હજાર શીલાંગ રથને ધારણ કરવાવાળા, એજ કારણથી ગુણઆગરમ્-ગુણાકરમ્ જ્ઞાનાદિક ગુણોની ઉંડી ખાણ સ્વરૂપ એવા સમણસંજય-શ્રમણસંયતમ્ શ્રમણ સંયતને અર્થાત્ પરીષહ ઉપસર્ગોને સહન કરવાવાળા હોવાથી શ્રમણ વાયુ કાયના રક્ષણને માટે મોઢા ઉપર દોરા સહિત મુખવસ્ત્રિકા બાંધેલ હોવાથી સંયત એવા મુનિને તત્થ-તત્ર ચતુષ્ક, ત્રિક, અને ચત્વર પર અઇચ્છંતે-અતિક્રામન્તમ્ આવતા તેણે પાસઇ-પશ્યતિ જોયા ॥ ૫ ॥

टीका--'मणिरयण' इत्यादि ।

अन्यदा स मृगापुत्रो मणिरत्नकुट्टिमतले=मणिभिश्चन्द्रकान्तादिभिः रत्नैः= कर्केतनादिभिश्च निर्मितं कुट्टिमतलं=भूमितलं यत्र तत्तथा तस्मिन्, चन्द्रकान्तादिमणि कर्केतनादिरत्ननिबद्धभूमिके, प्रासादालोकने=आलोक्यन्ते दिशोऽस्मिन् स्थितैरित्यालोकनं=गवाक्षः, प्रासादस्यालोकनं प्रासादालोकनं, तस्मिन् प्रासादगवाक्षे स्थितो नगरस्य चतुष्क त्रिक चत्वराणि मार्गरूप स्थानानि आलोकयति=पश्यति ॥४॥

ततो यदभूत्तदाह--

मूलम्--अह तत्थ अइच्छंतं, पासई समणसंजयं ।

तवनियमसंजमधरं, सीलड्ढं गुणआगरं ॥५॥

छाया--अथ तत्रातिक्रामन्तं, पश्यति श्रमणसंयतम् ।

तपो नियमसंयमधरं, शीलाढ्यं गुणाकरम् ॥५॥

टीका--'अह' इत्यादि ।

अथ=अनन्तरं स मृगापुत्रो युवराजः तपोनियमसंयमधरं=तपोऽनशनादि

'मणिरयण०' इत्यादि

अन्वयार्थ--एक दिन की बात है कि मृगापुत्र (मणिरयण कुट्टिमतले-मणिरत्न कुट्टिमतले) चन्द्रकान्त आदि मणियों एवं कर्केतन आदि रत्नों से निबद्ध भूमिवाले (पासायालोयणे-प्रासादालोकने) महल के गोखमे (ठिओ-स्थितः) बैठे हुए (नयरस्स चउक्कतिगचच्चरे-नगरस्य चतुष्क त्रिकचत्वराणि) अपने नगर के चतुष्क-चोहट्टो,-तिगट्टो-जहां तीन रास्ते मिलते हों एवं चत्वरो-जहां अनेक रास्ते मिलते हो उनको (आलोएइ-आलोकयति) देख रहे थे ॥ ४ ॥

उस समय क्या हुआ सो कहते है--'अह' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(अह-अथ) इसके बाद उन्होंने (तवनियमसंजमधर

"मणिरयण" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—એક દિવસની વાત છે કે, મૃગાપુત્ર मणिरयणकुट्टिमतले-मणिरत्नकुट्टिमतले ચન્દ્રકાન્ત આદિ મણીઓથી અને અને કર્કેતન આદિ રત્નોથી મઢવામાં આવેલ ભૂમિવાળા पासायालोयणे-प्रासादालोकने મહેલની બારીમાં ठिओ-स्थित બેસીને પોતાના नयरस्स चउक्कतिगचच्चरे-नगरस्य चतुष्कत्रिक चत्वराणि નગરના જૂદાજૂદા ચોક તેમ જ બજારોને, ચાર રસ્તા, ત્રણ રસ્તા જ્યાં મળતા હતા એવા સ્થળોનું आलोएइ-आलोकयति અવલોકન કરી રહેલ હતો ॥ ૪ ॥

એ સમયે શું બન્યુ તેને કહે છે—"अह" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—अह-अथ આ સઘળું જોયા પછી તેણે ...

अध्यवसाने=अन्तःकरणपरिणामे जाते जातिस्मरणं समुत्पन्नम्। अय भावः- पूर्वं सम्मुखं समागच्छतः सदोरकमुखवस्त्रिकाविनिबद्धमुखम् साधोर्दर्शनं जातम्, साधुदर्शनादात्मनः सम्यक्त्वपरिणामो जातः। ततो मया क्वापीदृशं रूपं दृष्टमिति चिन्तनेन मूर्च्छा संजाता। मूर्च्छया च जातिस्मरणमभूदिति ॥७॥

मूलम्—जाइसरणे समुप्पंण्णे मियापुत्ते महिड्डिए।
सरेइ पोराणियं जाइं, सामण्णं चं पुराकयं ॥८॥

छाया—जातिस्मरणे समुत्पन्ने, मृगापुत्रो महर्द्धिकः।
स्मरति पौराणिकीं जातिं, श्रामण्यं च पुराकृतम् ॥८॥

टीका—'जाइसरणे' इत्यादि।

जातिस्मरणे समुत्पन्ने महर्द्धिकः=राजलक्ष्मीयुक्तो मृगापुत्रः पौराणिकीं=

वसाने) क्षायोपशमिक भाववर्ती अन्तःकरण परिणाम होने पर (जाइसरणं समुप्पन्नं-जातिस्मरणं समुत्पन्नम्) जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। इसका भाव इस प्रकार है-सर्व प्रथम मृगापुत्र ने आते हुए मुख पर सदोरकमुखवस्त्रिका बांधे हुए मुनिको देखा। उनको देखते ही आत्मा में सम्यक्त्व परिणाम उदभूत् हुआ और उससे "मैंने ऐसा रूप कहीं पर पहिले देखा है" इस प्रकार से मूर्च्छा परिणति हुई, पश्चात उसी मूर्च्छा मे जातिस्मरण ज्ञान हो गया ॥ ७ ॥

'जाइसरणे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जाइसरणे समुप्पन्ने-जातिस्मरणे समुत्पन्ने) जाति स्मरण नामक मतिज्ञान के उत्पन्न होने पर (महड्डिए मियापुत्ते-महर्द्धिक मृगापुत्र) राज्य लक्ष्मी रूप महती ऋद्धि से संपन्न मृगापुत्र को

અંતઃકરણ પરિણામ થવાથી તેને जाइसरणं समुप्पन्नं-जातिस्मरणं समुत्पन्नं જાતિ સ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું. તેનો ભાવ આ પ્રકારનો છે સહુ પ્રથમ મૃગાપુત્રે મોઢા ઉપર સદોરકમુખવસ્ત્રિકા ધારણ કરેલા મુનિને આવતા જોયા તેમને જોતાં જ તેના આત્મામાં સમ્યક્ પરિણામ ઉદ્ભવ્યું. એનાથી "મેં આવું રૂપ ક્યાંક પહેલાં જોયેલ છે" એવી વિચારસરણી એ ઉદ્ભવ્યો. વિચાર કરતાં મૂર્છાની પરિણતિ થઈ અને પરિણામે તેને જાતિ સ્મરણ જ્ઞાન થયું ॥ ૭ ॥

"जाइ सरणे" ઇત્યાદિ,

અન્વયાર્થ—जाइसरणे समुप्पन्ने-जातिस्मरणे समुत्पन्ने જાતિ સ્મરણ નામનું મતિજ્ઞાન થવાથી महड्डिए मियापुत्ते-महर्द्धिकः मृगापुत्रः રાજ્ય લક્ષ્મીરૂપ મોટી ઋદ્ધિ સંપન્ન મૃગાપુત્રને पोराणियं जाइं-पौराणिकं जातिं પોતાના પૂર્વજન્મ

टीका—'त पासइ' इत्यादि ।

स मृगापुत्रो युवराजः अनिमेषया=निमेषरहितया दृष्ट्या तं संयतं पश्यति । स चिन्तयति-मन्ये ईदृशं रूप मया पुरा=पूर्वस्मिन् काले क्वापि दृष्टपूर्वमिति ॥६॥

मूलम्—साहुस्स दरिसणे तस्स, अज्झवसाणम्मि सोहणे ।
मोहं गयस्स संतस्स, जाईसरणं समुप्पन्नं ॥७॥

छाया—साधोर्दर्शने तस्य, अध्यवसाने शोभने ।
मोहं गतस्य सतो, जातिस्मरणं समुत्पन्नम् ॥७॥

टीका—'साहुस्स' इत्यादि ।

साधोः=संयतस्य, दर्शने सति मोहं='क्वेदृशं रूपं दृष्टम्' इतिचिन्तनेन मूर्छां गतस्य=प्राप्तस्य सतस्तस्य मृगापुत्रस्य शोभने=क्षायोपशमिकाभाववर्तिनि

'त पासइ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(मियापुत्ते-मृगापुत्र) मृगापुत्रने (अणिमेसाए दिट्ठीए-अनिमेषया दृष्ट्या) निमेष रहित दृष्टि से (तं पासइ-तं पश्यति) उस संयत को देखा और विचार किया कि (मन्ने-मन्ये) मैं मानता हूं (मए-मया) मैंने (इरिसं रूवं-ईदृशं रूपम्) ऐसा रूप (पुरा-पुरा) पहिले (दिट्ठपुव्वं-दृष्टपूर्वम्) कहीं देखा है ॥ ६ ॥

'साहुस्स' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(साहुस्स दरिसणे-साधो दर्शने सति) साधुके दर्शन होते ही (मोहं गयस्स-मोहं गतस्य) "कहां पर-ऐसा रूप देखा है" इस प्रकार के विचार से मूर्च्छा को प्राप्त हुए (संतस्स-सतः) सज्जन उन (मियापुत्तस्स-मृगापुत्रस्य) मृगापुत्र को (सोहणे अज्झवसाणम्मि-शोभने अध्य-

"त पासइ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—मियापुत्ते-मृगापुत्रः મૃગા પુત્રે अनिमेसाए दिट्ठीए-अनिमेषया दृष्ट्या અનિમેષ દૃષ્ટિથી तं पासइ-तं पश्यति એ સંયતને જોયા અને વિચાર કર્યો કે, मन्ने-मन्ये મને લાગે છે કે, मए-मया મેં इरिसं रूवं-ईदृशं रूपम् આવું સ્વરૂપ વેષ पुरा-पुरा પહેલાં दिट्ठपुव्वं-दृष्टपूर्वम् કોઈક સ્થળે જોયું છે ॥ ६ ॥

"साहुस्स" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—साहुस्स दरिसणे-साधोर्दर्शने સાધુને જોતાંજ मोहंगयस्स-मोहं गतस्य "આવું રૂપ-વેષ મેં ક્યાંક જોયેલ છે" આ પ્રકારનો વિચાર કરતાં કરતાં તેને મૂર્છા આવી ગઈ संतस्स-सतः સજ્જન એવા એ मियापुत्तस्स-मृगापुत्रस्य મૃગા પુત્રને सोहणे अज्झवसाणम्मि-शोभने अध्यवसाने ક્ષાયોપશમિક ભાવવર્તી

यदत्रोक्तं तद् दर्शयति--

मूलम्--

सुयाणि मे पञ्च महव्वयाणि, नरएसु दुक्खं च तिरिक्खजोणिसु ।
निव्विण्णकामोम्हि महण्णवाओ, अणुजाणेह पव्वइस्सामि अम्मो ! १०

छाया--श्रुतानि मया पञ्च महाव्रतानि, नरकेषु दुःखं च तिर्यग्योनिषु ।
निर्विण्णकामोऽस्मि महार्णवात्, अनुजानीत प्रव्रजिष्यामि अम्ब ॥१०॥

टीका--'सुयाणी' इत्यादि ।

हे अम्ब=हे मातः ! मया जन्मान्तरे पञ्च=पञ्चसंख्यकानि महाव्रतानि=प्राणातिपातविरमणादीनि श्रुतानि । तथा नरकेषु तिर्यग्योनिषु उपलक्षणत्वाद्-देवमनुष्यभवयोश्च यद् दुःखं तदपि श्रुतम् । अतोऽहं महार्णवात् महार्णवो महासमुद्र इव महार्णवः संसारस्तस्मात्, निर्विण्णकामः=प्रतिनिवृत्ताभिलाषोऽस्मि । अतोऽहं प्रव्रजिष्यामि । तस्मान्मां प्रव्रज्यार्थं यूयमनुजानीत=अनुज्ञापयत । यद्वा-

---

विषयों की ओरसे चित्त में विरक्ति छागई और संजम के प्रति अनुराग भाव बढ गया तब वे माता पिता के पास जा कर कहने लगे ॥ ९ ॥

'सुयाणिमे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(-अम्मो-अम्ब) हे माता (मे-मया) मैंने जन्मान्तर मे (पंच-महव्वयाणि-पञ्चमहाव्रतानि) पांच प्राणतिपात विरमण आदिक महाव्रत सुने हैं । तथा (नरएसु तिरिक्ख जोणिसु दुक्ख-नरकेषु तिर्यग्योनिषु-दुःखम्) नरक गति एवं तिर्यग्गति मे-उपलक्षण से देव एवं मनुष्यगति में जो दुःख हैं वे भी सुने हैं । इसलिये (महण्णवा सो निव्विण्ण कामोम्हि-महार्णवात् निर्विण्णकामः-अस्मि) इस संसार रूपी महा समुद्र से मैं विरक्त हो गया हूं । सो (पव्वइस्सामि-प्रव्रजिष्यामि) दीक्षा-लेना

તરફ ચિત્તમાં વિરક્તી આવી ગઇ અને સંયમના તરફ અનુરાગભાવ વધી ગયો આથી તે માતાપિતાની પાસે જઇને કહેવા લાગ્યો ॥ ૯ ॥

મૃગપુત્રે પોતાના માતાપિતાને જે કહ્યું તેને કહે છે—"सुयाणिमे" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—अम्मो-अम्ब હે માતા ! मे-मया મેં જન્માન્તરમાં पंचमहव्वयाणि-पञ्चमहाव्रतानि પાંચ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિક મહાવ્રતોને સાંભળેલ છે તથા नरएसु तिरिक्खजोणिसु दुक्ख-नरकेषु तिर्यग्योनिषु दुक्ख નરક ગતિ અને તિર્યંચ ગતિમાં-ઉપલક્ષણથી દેવ અને મનુષ્ય ગતિમાં જે દુઃખ છે તેને પણ સાંભળેલ છે આ માટે महण्णवाओ निव्विण्णकामोम्हि-महार्णवात् निर्विण्णकामः अस्मि આ સંસારથી હું વિરકત થઇ ગયો છું અને એ કારણે હું पव्वजिस्सामि-प्रव्र-

पुरातनीं जातिं=जन्म, च=पुनः पुराकृत=पूर्वभवाचरित श्रामण्यं=चरणं च स्मरति ॥८॥

समुत्पन्नजातिस्मरणो मृगापुत्रो यत्कृतवांस्तदुच्यते—

मूलम्—विसएसु अरज्जंतो, रज्जंतो संजमम्मि यं ।

अम्मापियरं उवागम्म, इमं वयणमब्बवी ॥९॥

छाया—विषयेषु अरज्यन्, रज्यन् संयमे च ।

अम्मापितरावुपागम्य, इदं वचनमब्रवीत् ॥९॥

टीका—'विसएसु' इत्यादि ।

स मृगापुत्रो युवराजो विषयेषु=मनोज्ञशब्दादिषु अरज्यन्=आत्मपरिणतिमकुर्वन्, च=पुनः संयमे सप्तदशविधे रज्यन्=आत्मपरिणतिं संयोजयन् अम्मापितरौ उपागम्य=मातापित्रोः समीपे समागत्य इदं=वक्ष्यमाणं वचनमब्रवीत्। 'अम्मापियरं' इत्यत्र प्राकृतत्वादेकवचनम् ॥९॥

(पोराणिय जाइ-पौराणिकीं जातिं) अपने पूर्वजन्म की स्मृति हो आई। अर्थात् जातिस्मरण ज्ञान से पूर्व जन्म को देखा तथा (पुराकय सामण्ण च-पुराकृतम् श्रामण्य च) पूर्वभव में पालित चारित्र की (सरइ-स्मरति) स्मृति हो आई ॥ ८ ॥

जातिस्मरण ज्ञान होने पर मृगा पुत्रने जो किया सो कहते हैं—

'विसएसु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(विसएसु-विषयेषु) विषयों से (अरज्जंतो-अरज्यन्) विरक्त होकर एवं (संजमम्मि य रज्जंतो-संयमे च रज्यन्) सत्रह प्रकार के संजम में आत्म परिणति को अनुरक्त कर मृगापुत्रने (अम्मापियरं उवागम्म-अम्बापितरौ उपागम्य) माता पिता के पास आकर (इमं वयणमब्बवी-इदं वचनं अब्रवीत्) इस प्रकार कहा।

भावार्थ—पूर्वभव की याद आने से मृगापुत्र को मनोज्ञ शब्दादिक

नी स्मृति थई तथा पुराकय सामण्ण च-पुराकृत श्रमण्य च पूर्वभवमां पोते पाळेला चारित्रनी सरइ-स्मरति तेने स्मृति थई आवी ॥ ८ ॥

जातिस्मरण ज्ञानथवाथी मृगापुत्रे जे कर्युं तेने कहे छे—" विसएसु " इत्यादि

अन्वयार्थ— विसएसु-विषयेषु विषयोथी अरज्जंतो-अरज्यन् विरक्त बनीने तेमज संजमम्मि य रज्जंतो-संयमे च रज्यन् सत्तर प्रकारना संयममां आत्म परिणतीने अनुरक्त करी मृगापुत्रे अम्मापियरं उवागम्म-अम्बापितरौ उपगम्य मातापितानी पासे आवीने इमं वयणमब्बवी-इदं वचन अब्रवीत् आ प्रकारथी कह्युं—

भावार्थ—पूर्वभवनी याद आववाथी मृगापुत्रने मनोज्ञ शब्दादिक विषयोनी

कटुकोऽनिष्टो विपाकः=परिणामो येषां ते तथा, परिणामेऽनिष्टदायकाः, तथा-अनुबन्धदुःखावहाः-अनुबन्धं=सातत्येन संलग्नं यद् दुःखं तदावहन्ति=प्रापयन्ति ये ते तथा, निरन्तरनरकनिगोधाद्यनन्तदुःखदायकाः, एवंरूपा भोगाः=कामभोगा मया भुक्ताः। अयं भावः-विषफलं हि उपभोगसमये मधुरं भवति, परिणामे कटुकविपाकं जनयति, मारणान्तिकं दुःखमुत्पादयति। भोगा अप्येवं विधाः। ते भोगा मया भुक्ताः अत एव तान् परित्यक्तुमिच्छामीति ॥११॥

निषेध करते हुए मृगापुत्र कहते हैं—'अम्मताय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अम्मताय-अम्बा तातौ) हे माता पिताजी! (विसफलोवमा-विषफलोपमाः) विषवृक्ष के फल समान आपातरमणीय अर्थात् भोगते समय अच्छे लगने वाले (पच्छा-पश्चात्) पीछे (कडुगविवागा-कटुकविपाकाः) अनिष्ट फल को देने वाले ऐसे ये (अणुबन्धदुहावहा-अनुबंधदुःखावहा.) अर्थात् परंपरासे नरक निगोद आदि के दुःख दाता (भोगा-भोगाः) काम भोग (मए-मया) मैंने (भुत्ता-भुक्ता.) खूब भोग लिये है। अब इनके भोगने की इच्छा ही नहीं होती है।

भावार्थ—विषफल-किम्पाकफल जैसे खाते समय मधुर लगता है परन्तु परिणाम मे कटुक फल का दाता होता है उसी प्रकार भोगते समय आनंद प्रदान करने वाले ये कामभोग भी विपाक मे कडवा फल देने वाले हैं। अतः उनके परित्याग करने को ही मेरा जी चाह रहा है ॥ ११ ॥

અન્વયાર્થ—अम्मताय-अम्बातातौ હે માતા પિતાજી! विसफलोवमा-विषफलोपमाः વિષ ફળના જેવા-પ્રથમ દૃષ્ટિએ આપાત રમણીય અર્થાત ભોગવતી વખતે સારા લાગનાર પરંતુ पच्छा-पश्चात् પાછળથી कडुग विवागा-कटुकविपाका. અનિષ્ટ ફળને આપવાવાળા એવા એ अणुबंधदुहावहा-अनुबंधदुःखावहा નિરંતર નરક નિગોદ આદિના દુઃખોને આપનાર भोगा-भोगा' એવા કામ ભોગો मए-मया મે ખૂબ भुत्ता-भुक्ता ભોગવ્યા છે હવે એ ભોગોને ભોગવવાની મારી જરાપણ ઈચ્છા થતી જ નથી

ભાવાર્થ—વિષફળ-કિંપાક ફળ, કે જે ખાતી વખતે ખૂબજ સ્વાદિષ્ટ લાગે છે પરંતુ પરિણામે એ મીઠા ફળને આપનાર જ હોય છે આજ પ્રમાણે ભોગવતી વખતે આનંદપ્રદ લાગનારા આ કામભોગ પણ વિપાકમા માઠા ફળને આપવાવાળા છે આથી એનો પરિત્યાગ કરવાની જ મારી ઈચ્છા છે ॥ ૧૧ ॥

निर्विण्ण कामः=कामेभ्यो मनोज्ञशब्दादिभ्यो निर्विण्णो विरक्तोऽहं महार्णवात्=महार्णवं संसारं परित्यज्य, 'त्यक्त्वोऽपेऽप्र पक्षमो' प्रव्रजिष्यामि=मोक्षप्रदायिनीं जैनदीक्षां ग्रहीष्यामि। अतो मां प्रव्रज्या ग्रहणे यूयमनुमन्यध्वम्। यो हि भविष्यद् दुःखं न जानाति, जानन् वा तत्प्रतीकारं न जानाति, स कदाचि दित्थमेवासीत्। अहं तूभयथाऽपि विज्ञ इति कथं न दुःखप्रतीकारोपायभूतां महानन्तात्मिकां प्रव्रज्यां स्वीकरिष्ये इति भावार्थः ॥१०॥

यदि मातापितरौ भोगरूपनिमन्त्रयेतामतस्तन्निषेधार्थमाह—

मूलम्—अम्मताय! मेए भोगा, भुत्ता विसफलोवमा।
पच्छा कडुयविवागा, अणुबन्धदुहावहा ॥११॥

छाया—अम्मातातौ! मया भोगा, भुक्ता विषफलोपमाः।
पश्चात्कटुकविपाका, अनुबन्धदुःखावहाः ॥११॥

टीका—'अम्मताय' इत्यादि।

हे अम्बापितरौ! विषफलोपमाः-विष=विषवृक्षस्तस्य फलेन उपमा=सादृश्यं येषां ते तथा, आपातमधुरविषफलतुल्याः, पश्चात्=अनन्तरं कटुकविपाकाः=

चाहता हूं। इसलिये आप लोग मुझे (अणुजाणह-अनुजानीत) इसके लिये आज्ञा प्रदान करें।

भावार्थ—मृगापुत्रने कहा हे माता मैं चतुर्गति रूप इस संसार समुद्र के दुःखों से भी परिचित हूं तथा उनकी निवृत्ति के उपाय से भी। अतः मेरी इच्छा इस संसारमें अब रहने की नहीं होती है। मैं इस से निकलना चाहता हूं। अतः मैं चाहता हूं कि आप लोग इस के लिये मुझे आज्ञा प्रदान करें ॥ १० ॥

मातापिता के भोगों के लिये उपनिमंत्रण करने पर भोगों का

जिष्यामि दीक्षा लेवा चाहु छु माटे आप सौ मने अणुजाणह-अनुजानीत ए माटे आज्ञा आपो.

भावार्थ—मृगापुत्रे कह्युं के, हे माता! चतुर्गतिरूप आ संसारना दुःखेथी हुं सारी रीते परिचित छुं तथा तेनी निवृत्तिना उपायथी पण परिचित छुं आथी मारी ईच्छा हवे आ संसारमा रहेवानी नथी हुं एमाथी नीकळवा ईच्छु छुं आथी हुं विनंती करूं छुं के, आप लोको आ माटे मने आज्ञा आपो ॥१०॥

माता पिताए भोगोना माटे आग्रह करवाथी भोगोनो निषेध करीने मृगा पुत्र कहे छे—"अम्मताय" ईत्यादि।

तस्मात्—

मूलम्—असासंए सरीरंमि, रंइ नोवंलभांमहं ।
पच्छा पुरां यं चइयंव्वे, फेणवुव्वुंयसन्निभे ॥१३॥

छाया—अशाश्वते शरीरे, रतिं नोपलभेऽहम् ।
पश्चात्पुरा च त्यक्तव्ये, फेनबुद्बुदसन्निभे ॥१३॥

टीका—'असासए' इत्यादि ।

अशाश्वते=अनित्ये, अतएव-पश्चात्=भुक्तभोगावस्थाया वार्द्धकादौ, पुरा च=अभुक्तभोगावस्थाया बाल्यादौ वा, यद्वा-पश्चात्=यथास्थितस्यायुः-क्षयोत्तर कालम्,

भावार्थ—विषयभोग तो तब ही अच्छे एव सुहावने लगते है कि जब शरीर मे शाति एव आनद हो। परतु विचार करने पर हे माता! वह पता चलता है कि इस शरीर मे ऐसा कुछ भी नही है। यह तो स्वभावतः जन्म जरा एवं मरण के दुःखो से तथा धनहानि, अनिष्ट सयोग, इष्ट वियोग से सदा व्यथित (दुखित) बना हुआ जीव का इसमे शाश्वतिक अवस्था भी नही है। स्वतः यह शरीर भी अपवित्र एव शुक्र शोणितरूप अपवित्र कारणों से उत्पन्न हुवा है। इस तरह नि.सार इस शरीर मे विषयभोग अपनी सारता कैसे प्रथित (प्राप्त) कर सकते है ॥ १२ ॥

इसलीये—'असासए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(असासए-अशाश्वते) अनित्य अतएव (पच्छा पुरा य चइयव्व-पश्चात् पुराच त्यक्तव्ये) भुक्तभोगावस्था मे वृद्ध अवस्था

ભાવાર્થ—વિષયભોગ તો ત્યારે જ સારા અને સુદર લાગે છે કે, જ્યારે શરીરમા શાતિ અને આનદ હોય પરતુ વિચાર કરવાથી હે માતા! એવુ જાણી શકાયુ છે કે, આ શરીરમા એવુ કાઈ પણ નથી આ તો સ્વભાવથી જ જન્મ, જરા અને મરણના દુખોથી તથા ધનહાની, અનિષ્ટ સયોગ તેમજ ઈષ્ટ વિયોગથી સદા વ્યથિત છે જીવની તેમ શાશ્વતિક અવસ્થા પણ નથી આ શરીર જાતે પણ અપવિત્ર અને શુક્ર તથા લોહીરૂપ અપવિત્ર કારણોથી જ ઉત્પન્ન થયેલ છે આ પ્રમાણે નિ સાર એવા આ શરીરમા વિષયભોગ પોતાની સારતા કઈ રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે છે? ॥ ૧૨ ॥

આ માટે—"असासए" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—असासए—अशाश्वते અનિત્ય અને पच्छा पुराय चइयव्वे—पश्चात् पुरा च त्यक्तव्ये ભોગોને ભોગવવાની અવસ્થામા વૃદ્ધાવસ્થામા તથા અભુક્ત ભોગા

किञ्च—

मूलम्—इमं सरीरं अणिच्चं, असुइं असुइसंभवं ।
असासयावासमिणं, दुक्खकेसाणभायणं ॥१२॥

छाया—इदं शरीरमनित्यम्, अशुचि अशुचिसम्भवम् ।
अशाश्वतावासमिदं, दुःखक्लेशानां भाजनम् ॥१२॥

टीका—'इमं' इत्यादि ।

हे अम्ब ! हे तात ! इदं शरीरम् अनित्यम्=अशाश्वतम्, अशुचि=स्वभावा देवापवित्रम्, तथा अशुचिसम्भवम्=अशुचिभ्यां=शुक्रशोणिताभ्यां सम्भव उत्पत्ति र्यस्य तत्तादृशं चास्ति। तथा-इदं शरीरम् अशाश्वतावासम्=अशाश्वतः=अनित्यः आवासः=स्थितिर्जीवस्य यस्मिंस्तत्तथा, जीवस्यानित्यनिवासस्थानं, दुःखक्लेशानाम् दुःखानि=जन्मजरामृत्युप्रभृतीनि, क्लेशाः=धनहानि स्वजनवियोगादयस्तेषाम्, यद्वा -दुःखम्=अशातं तद्धेतवो ये क्लेशाः=रोगादयस्तेषां भाजनं=स्थानं चास्ति। पुनः 'इदम्' इत्युपादानं शरीरस्यातीवासारत्वप्रदर्शनार्थम् ॥१२॥

फिर भी—'इमं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(इमं सरीरं अणिच्चं-इदं शरीरं अनित्यम्) यह शरीर अनित्य (असुइ-अशुचि) स्वभावतः अपवित्र एवं (असुइसंभवं-अशुचिसंभवम्) अशुचि-मलमूत्र आदि पदार्थों से उत्पन्न हुआ है। तथा इसमें जीव की स्थिति अल्पकाल तक ही रहने वाली है इसलिये यह (असासयावासम्-अशाश्वतावासम्) अशाश्वतावास-अल्पकाल तक ही टिकनेवाले हैं। एवं (दुक्खकेसाण भायणम्-दुःखक्लेशानाम् भाजनम्) जन्म-जरा-मरण आदि दुःखों का तथा धनहानि, स्वजन वियोग आदि क्लेशों का स्थान है।

છતા પણ—"इमं" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—इमं सरीरं अणिच्चं-इदं शरीरं अनित्यम् આ શરીર અનિત્ય, असुइ-अशुचि સ્વભાવથી અપવિત્ર અને असुइसंभव-अशुचिसंभवम् મળમૂત્ર આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ છે આમા જીવની સ્થિતિ અલ્પકાળ સુધી જ રહેવાવાળી હોય છે આ કારણે असासयावासम्-अशाश्वतावासम् આ અશાશ્વતાવાસ-અલ્પકાળ સુધીજ ટકવાવાળો વળી જન્મ, જરા, મરણ આદિ दुक्खकेसाण भायणम्-दुःखक्लेशानाम् भाजनम् ખોનુ તથા ધન હાની સ્વજન વિયોગ, આદિ કલેશોનુ સ્થાન છે

तस्मात्—

मूलम्—असासए सरीरंमि, रइं नोवलभामहं ।
पच्छा पुरा य चइयव्वे, फेणबुब्बुयसन्निभे ॥१३॥

छाया—अशाश्वते शरीरे, रतिं नोपलभेऽहम् ।
पश्चात्पुरा च त्यक्तव्ये, फेनबुद्बुदसन्निभे ॥१३॥

टीका—'असासए' इत्यादि ।

अशाश्वते=अनित्ये, अतएव-पश्चात्=भुक्तभोगावस्थाया वार्द्धकादौ, पुरा च=अभुक्तभोगावस्थाया बाल्यादौ वा, यद्वा-पश्चात्=यथास्थितायुः-क्षयोत्तर कालम्,

भावार्थ—विषयभोग तो तब ही अच्छे एव सुहावने लगते है कि जब शरीर मे शाति एव आनद हो। परतु विचार करने पर हे माता! यह पता चलता है कि इस शरीर मे ऐसा कुछ भी नही है। यह तो स्वभावतः जन्म जरा एव मरण के दुःखों से तथा धनहानि, अनिष्ट सयोग, इष्ट वियोग से सदा व्यथित (दुखित) बना हुआ जीव का इसमें शाश्वतिक अवस्था भी नही है। स्वत यह शरीर भी अपवित्र एव शुक्र शोणितरूप अपवित्र कारणों से उत्पन्न हुवा है। इस तरह निःसार इस शरीर मे विषयभोग अपनी सारता कैसे प्रर्पित (प्राप्त) कर सकते है ॥ १२ ॥

इसलीये—'असासए' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(असासए-अशाश्वते) अनित्य अतएव (पच्छा पुरा य चइयव्व-पश्चात् पुराच त्यक्तव्ये) भुक्तभोगावस्था मे वृद्ध अवस्था

ભાવાર્થ—વિષયભોગ તો ત્યારે જ સારા અને સુદર લાગે છે કે, જ્યારે શરીરમા શાતિ અને આનદ હોય પરતુ વિચાર કરવાથી હે માતા! એવુ જાણી શકાયુ છે કે, આ શરીરમા એવુ કાઇ પણ નથી આ તો સ્વભાવથી જ જન્મ, જરા અને મરણના દુઃખોથી તથા ધનહાની, અનિષ્ટ સયોગ તેમજ ઇષ્ટ વિયોગથી સદા વ્યથિત છે જીવની તેમ શાશ્વતિક અવસ્થા પણ નથી આ શરીર જાતે પણ અપવિત્ર અને શુક્ર તથા લોહીરૂપ અપવિત્ર કારણોથી જ ઉત્પન્ન થયેલ છે આ પ્રમાણે નિસાર એવા આ શરીરમા વિષયભોગ પોતાની સારતા કઈ રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે છે? ॥ ૧૨ ॥

આ માટે—"असासए" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—असासए-अशाश्वते અનિત્ય અને पच्छा पुराय चइयव्वे-पश्चात् पुरा च त्यक्तव्ये ભોગોને ભોગવવાની અવસ્થામા વૃદ્ધાવસ્થામા તથા અભુક્ત ભોગા

पुरा च=वर्षशतमीतीतमप्राणात् पूर्वं वा त्यक्तव्ये=अवश्यत्याज्ये, फेनबुद्बुदसन्निभे =फेनबुद्बुदतुल्ये, अस्मिन शरीरे अहं रतिम्=आनन्दं नोपलभे=न प्राप्नोमि। "फेन बुद्बुदसन्निभे" इत्यनेन बाल्यादिसर्वावस्थासु मरण भवत्येवेति ध्वनितम् ॥१३॥

एवं भोगनिमन्त्रणपरिहारमभिधाय सम्प्रति मृगापुत्रः संसारनिर्वेदस्य हेतुमाह—

मूलम्—माणुसत्ते असारम्मि, वाहीरोगाण आलए।
जरामरणघत्थम्मि, खणं पि नं रमामहं ॥१४॥

में तथा अभुक्तभोगावस्था में—बाल्य आदि अवस्था में अथवा पश्चात् —यथास्थिति वाली आयुकी समाप्ति के बाद में तथा पुरा—सौ वर्ष से पहिले भी (चइयव्वे—त्यक्तव्ये) अवश्य त्याज्य तथा (फेणबुब्बुयसन्निभे-फेन बुद्बुदसन्निभे) पानी के बुद्बुद के समान इस (सरीरंमि-शरीरे) शरीर म (अहं रइं नोवलभामि-अहं रतिं न उपलभे) मुझे कोइ आनद उपलब्ध नहीं होता है।

भावार्थ—मृगापुत्र ने मातापिता से यह भी कहा कि जब यह शरीर अनित्य एव पानी के बुद्बुद् समान शीघ्र ही विनष्ट हो जाने वाला है। तथा यह भी कोई निश्चय नहीं है कि जीव को जितनी आयु का बध हुआ है वह उसको उतनी ही भोगकर समाप्त करेगा इस के पहिले वह शरीर का परित्याग नहीं करेगा। अथवा भुक्तभोगावस्था के बाद ही इसका मरण होगा अभुक्त भोगावस्था मे नहीं, तब ऐसी स्थिति म आप ही कहो आनद मानने के लिये यहा जगह ही कहाँ है ॥ १३ ॥

वस्थामा, બાલ્ય આદિ અવસ્થામા અથવા પછીથી આયુષ્યના પૂરા થયા પછીથી, તથા પૂરા સો વર્ષના પહેલા પણ ખરેખર चइयव्वे—त्यक्तव्ये ત્યજવા યોગ્ય તેમજ फेणवुब्बुय सन्निभे—फेनबुद्बुदसन्निभे પાણીના પરપોટા જેવા આ सरीरंमि शरीरे શરીરમા अहं रइं नोवलभामि—अहं रतिं न उपलभे મને કોઈ જાતનો આનદ દેખાતો નથી

ભાવાર્થ—મૃગાપુત્રે માતા પિતાને એ પણ કહ્યુ કે, જ્યારે આ શરીર પાણીના પરપોટાની જેમ જલદીથી નાશ થઈ જનાર એવુ અનિત્ય છે વળી એવો પણ કોઈ નિશ્ચય નથી કે, જીવને જેટલા આયુષ્યનો બધ થયેલ છે તે એટલુ ભોગવીને સમાપ્ત કરશે તેના પહેલા આ શરીરનો પરિત્યાગ કરશે નહી અથવા ભુકત ભોગાવસ્થા પછીજ તેનુ મરણ થશે—અભુકત ભોગાવસ્થામા નહી એવી સ્થિતિમા આપજ કહો કે, આનદ માનવા માટે અહીં જગ્યાજ કયા છે

छाया--मानुषत्वे असारे, व्याधिरोगाणामालये ।
जरामरणग्रस्ते, क्षणमपि न रमेऽहम् ॥१४॥

टीका--'माणुसत्ते' इत्यादि।

असारे=सारवर्जिते व्याधिरोगाणाम्-व्याधयः=कुष्ठशूलादयः, रोगाः= ज्वरादयस्तेषामालये=गृहे जरामरणग्रस्ते=जरसा=वार्द्धकेन मरणेन=मृत्युना च ग्रस्ते=गृहितेऽस्मिन् मानुषत्वे=मनुष्यभवे क्षणमपि नाहं रमे=सुखं न प्राप्नोमि ॥१४॥

इत्थं मनुष्यभवस्यानुभूयमानत्वेन निर्वेदहेतुत्वमभिधाय सम्प्रति चतुर्गति-रूपस्यापि संसारस्य निर्वेदहेतुत्वमाह--

मूलम्--जम्मं दुक्खं जरा दुक्खं, रोगा यं मरणाणि य ।
अहो दुक्खो हुं संसारो, जत्थ कीसंति जंतुणो ॥१५॥

छाया--जन्म दुःखं जरा दुःखं, रोगाश्च मरणानि च ।
अहो दुःखो हु संसारो, यत्र क्लिश्यन्ति जन्तवः ॥१५॥

इस प्रकार भोग निमन्त्रणा के परिहार को कहकर अब मनुष्य भव को वैराग्य का कारण कहते हैं—'माणुसत्ते' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(असारम्मि-असारे) कदली वृक्ष के समान निःसार तथा (वाहीरोगाणआलए-व्याधिरोगाणामालये) कुष्ठ, शूल आदि व्याधियो एवं ज्वर आदि रोगों के घररूप तथा (जरामरणघत्थम्मि-जरामरणग्रस्ते) जरा एवं मरण से ग्रस्त हुए (माणुसत्ते-मानुष्यत्वे) इस मनुष्यभव में (खणंपि अहं न रमामि-क्षणम् अपि अहं न रमे) मुझे तो एक क्षण मात्र भी सुख नहीं दिखता है ॥ १४ ॥

इस प्रकार मनुष्यभव के अनुभव से मनुष्यत्व को वैराग्य का कारण कहकर अब संसार को वैराग्य का कारण कहते हैं—

આ પ્રકારે ભોગ નિમંત્રણાના પરિહારને કહીને હવે મનુષ્યત્વના વૈરાગ્યના કારણને કહે છે—"माणुसत्ते" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—असारम्मि-असारे કેળના વૃક્ષની માફક નિઃસાર તથા वाहीरोगाणआलए-व्याधिरोगाणामालये કોઢ, શૂળ આદિ વ્યાધિઓ અને જ્વર આદિ રોગોના ઘરરૂપ તથા जरामरणघत्थम्मि-जरामरणग्रस्ते જરા અને મરણથી ગ્રસ્ત બનેલા माणुसत्ते-मानुषत्वे આ મનુષ્ય ભવમાં खणंपि अहं न रमामि-क्षणं अपि अहं न रमे મને તો એક ક્ષણ માત્ર પણ સુખ દેખાતું નથી ॥ ૧૪ ॥

આ પ્રકારે મનુષ્ય ભવના અનુભવથી મનુષ્યત્વના વૈરાગ્યનું કારણ કહીને હવે

टीका—'जम्म' इत्यादि ।

जन्म दुःखं=दुःखहेतुर्वर्तते, जन्मकालेऽपरिमितदुःखस्यानुभवात्, तथा जरा=वार्धक्यं च दुःखं=दुःखं हेतुः । उक्तं च—

गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः,
दृष्टिर्भ्राम्यति रूपमप्युपहतं वक्त्रं च लालायते ।
वाक्यं नैव करोति बान्धवजनः पत्नी न शुश्रूषते,
धिक्कष्टं जरयाभिभूतपुरुषं पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥ इति ।

'जम्म' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जम्म दुक्खं-जन्म दुःखम्) जन्म, दुःख का कारण होने से स्वयं दुःखरूप है (जरा दुक्खं-जरा दुःखम्) जराभी दुःख का कारण होने से दुःखस्वरूप है, कहा भी है—

"गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः,
दृष्टि भ्राम्यति रूपमप्युपहतं वक्त्रं च लालायते ।
वाक्यं नैव करोति बान्धवजनः पत्नी न शुश्रूषते,
धिक्कष्टं जरयाऽभिभूतपुरुषं पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥ १ ॥

देखो जब वृद्धावस्था का समय आ जाता है तब जब शरीर में झिल्लियां पड जाती हैं, चाल बढगी हो जाती है, दांत गिर जाते हैं आँखो की ज्योति बहुत कम हो जाती है, रूप विरूप हो जाता है मुँह से लार बहने लगती है, स्वजन भी उस समय ठीक तरह बात-

---

संसारना वैराग्यनुं कारण कहे छे—"जम्म" इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जम्म दुक्ख-जन्म दुःखम् जन्म ए दुःखनुं कारण होवाथी स्वयं दुःखरूप छे जरादुक्ख-जरा दुःखम् जरा पण दुःखनुं कारण होवाथी ते पण दुःख स्वरूप छे कह्युं पण छे—

" गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः ।
दृष्टिर्भ्राम्यति रूपमप्युपहतं वक्त्रं च लालायते ।
वाक्यं नैव करोति बान्धवजनः पत्नी न शुश्रूषते,
धिक्कष्टं जरयाऽभिभूतपुरुषं पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥१॥ "

जुओ-ज्यारे वृद्धावस्थानो समय आवे छे त्यारे शरीरमां करचलीओ पडी जाय छे चालवानी स्थिति ए ढंगी बनी जाय छे, दांत पडी जाय छे, आंखोनी चमक घणीज ओछी थइ जाय छे, रूप विरूप थई जाय छे, मोढामांथी लाळ पडवा मांडे छे स्वजनो पण आवा समये पासे बेसीने सारी रीते वातचित करता नथी

तथा-रोगाश्च=ज्वरादयोऽपि दु ख-तथा-मरणानि च दुःख। अहो! इति खेदे, अहो! यत्र=गतिचतुष्टयात्मके यस्मिन् ससारे जन्तव एव क्लिश्य न्ते=क्लेश माप्नुवन्ति, स ससारो हु=निश्चयेन दु.ख.=नितान्तदुःखात्मकः ॥१५॥

किं च--

मूलम्--खित्त वत्थु हिरण्ण चं, पुत्तदार चं बंधवे।
चइत्ताणं इम दे ह, गतव्वमवसस्स मे ॥१६॥

छाया--क्षेत्र वास्तु हिरण्य च, पुत्रदार च बान्धवान्।
त्यक्त्वा खलु इम देह, गन्तव्यमवशस्य मे ॥१६॥

टीका--'खित्त' इत्यादि।

हे मातापितरौ! क्षेत्र वास्तु=गृहहट्टादिकम्, च=पुनः हिरण्य=सुवर्ण, तथा-पुत्रदार=पुत्राश्च दाराश्चेति समाहारद्वन्द्वः। च=पुन बान्धवान्=भ्रातृन्

चीत नही करते है अधिक क्या कहा जाय-अपने जीवन के सुख दुःखकी साथी अपनी पत्नी भी सेवा शुश्रूषा करना छोड देती है। अरे! और तो क्या औरस-सगा-पुत्र भी अपमान करने लग जाता है। इन दुःखों के अतिरिक्त (रोगा-रोगा) रोग भी इस अवस्था मे ज्यादा सताया करते है अतः ये भी दुःख ही है। (मरणाणि-मरणानि) मरण भी एक दुःख है। इस से यह निश्चित है कि (ससारो हु दुक्ख-ससारो हु दुःखम्) यह चतुर्गति रूप ससारसर्वथा दुःख ही है। (जत्थ-यत्र) जिस मे (जतुणो कीसति-जन्तवः क्लिश्यन्ति) प्रत्येक जीव दुःख ही पाते रहते है। अर्थात यह चतुर्गतिरूप ससार स्वय एक दुःख है। इसमे रहने वाला कोई भी प्राणी सुख नही पाता है। इसमे जन्म, जरा मरण एव रोग ये सब दु.ख हि दुःख है ॥ १५ ॥

વધારે શુ કહેવામા આવે, પોતાના જીવનની સુખદુ ખની સાથી એવી પોતાની પત્ની પણ સેવા સુશ્રૂષા કરવાનુ છોડી દે છે અરે! વધારે તો શુ પોતાનો ઔરસ -સગો પુત્ર પણ અપમાન કરવા લાગી જાય છે આવા દુ ખો ઉપરાત રોગા-રોગાઃ રોગ પણ આવી અવસ્થામા વધારે સતાવ્યા કરે છે આથી એ પણ દુ ખ જ છે. મરણાણિ-મરણાનિ મરણ પણ એક દુ ખ છે આથી એ વાત તો નિશ્ચિત છે કે આ ચતુર્ગતિરૂપ સ સાર સ પૂર્ણ દુ ખમય જ છે જત્થ-યત્ર જેમા જતુણો કીસતિ-જન્તવ. ક્લિશ્યન્તિ પ્રત્યેક જીવ દુ ખજ ભોગવ્યા કરે છે અર્થાત્-આ ચતુર્ગતિરૂપ સ સાર પોતે જ એક દુ ખ છે આમા રહેનાર કોઈ પણ પ્રાણી સુખને પામતા નથી આમા જન્મ, જરા, મરણ, અને રોગ, આ સઘળા દુ ખજ દુ ખ છે ॥ ૧૫ ॥

टीका—'जम्म' इत्यादि ।

जन्म दुःखं=दुःखहेतुर्वर्तते, जन्मकालेऽपरिमितदुःखस्यानुभवात्, तथा जरा=वार्धक्यं च दुःखं=दुःख हेतुः । उक्त च—

गात्र संकुचित गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः,
दृष्टिर्भ्राम्यति रूपमप्युपहत वक्त्र च लालायते ।
वाक्य नैव करोति बान्धवजनः पत्नी न शुश्रूषते,
धिक्कष्ट जरयाभिभूतपुरुष पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥ इति ।

'जम्म' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जम्म दुक्ख-जन्म दुःखम्) जन्म, दुःख का कारण होने से स्वय दुःखरूप है (जरा दुक्ख-जरा दुःखम) जराभी दुःख का कारण होने से दुःखस्वरूप है, कहा भी है—

"गात्र सकुचित गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलि,
दृष्टि भ्राम्यति रूपमप्युपहत वक्त्र च लालायते ।
वाक्य नैव करोति बान्धवजन पत्नी न शुश्रूषते,
धिक्कष्ट जरयाऽभिभूतपुरुष पुत्रोऽप्यवज्ञायते ॥ १ ॥

देखो जब वृद्धावस्था का समय आ जाता है तब जब शरीर मे झिल्लियाँ पड जाती हैं, चाल वढगी हो जाती है, दात गिर जाते है आँखो की ज्योति बहुत कम हो जाती है, रूप विरूप हो जाता है मुँह से लार बहने लगती है, स्वजन भी उस समय ठीक तरह बात-

---

સસારના વૈરાગ્યનુ કારણ કહે છે—"जम्म" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—जम्म दुक्ख-जन्म दुःखम् જન્મ એ દુખનુ કારણ હોવાથી સ્વય દુખરૂપ છે जरादुक्ख-जरा दुःखम् જરા પણ દુખનુ કારણ હોવાથી તે પણ દુખ સ્વરૂપ છે કહ્યુ પણ છે—

" गात्र सकुचित गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः ।
दृष्टिर्भ्राम्यति रूपमप्युपहत वक्त्र च लालायते ।
वाक्य नैव करोति बान्धवजनः पत्नी न शुश्रूषते,
धिकष्ट जरयाऽभिभूतपुरुष पुत्रोप्यवज्ञायते ॥१॥ "

જુઓ-જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થાનો સમય આવે છે ત્યારે-શરીરમા કરચલીઓ પડી જાય છે ચાલવાની સ્થિતિ એ ઢગી બની જાય છે, દાત પડી જાય છે, આંખોની ચમક ઘણીજ ઓછી થઇ જાય છે, રૂપ વિરૂપ થઈ જાય છે, મોઢામાથી લાળ પડવા માડે છે સ્વજનો પણ આવા સમયે પાસે બેસીને સારી રીતે વાતચિત કરતા નથી

परिणामः सुन्दरः=शोभनो न भवति। एवमेव भुक्ताना भोगाना=मनोज्ञशब्दा दीना परिणामः सुन्दरो न भवति ॥१७॥

एव भोगादीनामसारतामुक्त्वा दृष्टान्तेन स्वाशय प्रकाशयन्नाह--

मूलम्--अद्धाणं जों महत तुं, अपाहेओ पवज्जई ।
गच्छंतो सों दुही होई, छुहातण्हाहि पीडिओ ॥१८॥

छाया--अध्वान यो महान्त तु, अपाथेय' प्रपद्यते ।
गच्छन स दुःखी भवति, क्षुत्तृष्णाभ्या पीडितः ॥१८॥

टीका--'अद्धाणं' इत्यादि--

यस्तु पुरुष अपाथेयः=पाथेयवर्जितः शम्बलरहितः सन् महान्तम्-ध्वान= दीर्घमार्गं प्रपद्यते=गच्छति। तत्र दीर्घे मार्गे गच्छन् स क्षुत्तृष्णाभ्या=क्षुद्= बुभुक्षा, तृष्णा=पिपासा ताभ्या पीडितः=व्यथितः सन् दुःखी भवति ॥१८॥

'जहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(जहा किंपागफलाणं-यथा किम्पाकफलाना) जिस प्रकार भुक्त किंपाक फलोंका (परिणामो न सुदरो-परिणामो न सुन्दरः) -परिणाम सुन्दर नहीं होता है-किन्तु प्राण हारी ही होता है (एव भुत्ताणभोगाण परिणामो न सुदरो-एव भुक्ताना भोगाना परिणामो न सुन्दरः) उसी प्रकार भुक्त भोगोंका परिणाम भी नरक निगोदादिक दुःखों का देनेवाला होने से सुन्दर नहीं होता है ॥ १७ ॥

भोगादिकों की असारता कहकर अब दृष्टान्त से अपना आशय प्रकट करते है--'अद्धाण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(जो-यः) जो पुरुष (अपाहेओ-अपाथेय') विना कलेवा -भाता के (महत अद्धाण पवज्जइ-महान्त अध्वान-प्रपद्यते) बहुत लम्बे

અન્વયાર્થ—जहा किंपागफलाण-यथा किंपाकफलाना જે પ્રકારે ઝેરી ફળોનુ परिणामो न सुदरो-परिणामो न सुन्दर. પરિણામ સુદર નથી હોતુ, પરતુ પ્રાણનો નાશ કરનાર જ હોય છે एव भुत्ताणभोगाण परिणामो न सुदरो-एव भुक्ताना भोगाना परिणामो न सुन्दरः એ પ્રમાણે ભોગવેલા ભોગોનુ પરિણામ પણ નરક નિગોદ આદિ દુ ખોને દેવાવાળુ હોવાથી સુદર નથી હોતુ ॥ ૧૭ ॥

ભોગ આદિકોની અસારતાને કહીને હવે દૃષ્ટાતથી પોતાના આશયને પ્રગટ કરે છે--"अद्धाण" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जो-यो જે પુરૂષ પોતાની સાથે अपाहेओ-अपाथेयः ભાતુ લીધા વગર महत अद्धाण पवज्जइ-महान्त अध्वान प्रपद्यते ઘણા લાબા માર્ગે જવા માટે

विहाय, तथा-इम देह च त्यक्त्वा अवशस्य=परवशस्य मे=मम खलु=अवश्यं गन्तव्यम्। 'खेत' इत्यादिना इष्टवियोग उक्तः, 'अवसस्स' इत्यनेन अमर त्व च प्रोक्तम् ॥१६॥

भोगपरिणाममाह—

मूलम्—जहा किंपागफलाणं, परिणामो न सुंदरो।
एवं भुत्ताण भोगाणं, परिणामो न सुंदरो ॥१७॥

छाया—यथा किम्पाकफलाना, परिणामो न सुन्दरः।
एव भुक्ताना भोगाना, परिणामो न सुन्दरः ॥१७॥

टीका—'जहा' इत्यादि।

यथा=येन प्रकारेण किम्पाकफलाना=किम्पाकनामकापातमधुर विषफलाना

फीर भी—'खित्त'-इत्यादि।

अन्वयार्थ—(खित्त वत्थु हिरण्ण च पुत्तदार च बंधवे इम देह ण चइत्ता-क्षेत्र वास्तु हिरण्य च पुत्रदार च बान्धवान् इम देह खलु त्यक्त्वा) क्षेत्र, वास्तु-गृह-महल आदि, हिरण्य-सुवर्ण, पुत्र, दारा बान्धव, इन सब को तथा इस शरीर को छोडकर (अवसस्स मे गन्तव्वम्-अवशस्य मे गन्तव्यम्) कर्माधीन बने हुए मुझे यहा से अवश्य जानाहै रहना नहीं है। "जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु." यह सिद्धान्त है। अत हे, मात तात! तुम क्यों मुझे इस ससार में फँसाने की चेष्टा करते हो। मेरा उद्धार जैसे भी हो सके ऐसा प्रयत्न करो ॥१६॥

अब दृष्टान्त के साथ भोगों के परिणाम को कहते हैं—

છતા પણ—"खित्त" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—खित्त वत्थु हिरण्ण च पुत्तदार च बन्धवे इम देह ण चइत्ता-क्षेत्र वास्तु हिरण्य च पुत्रदार च बान्धवान् इम देह खलु त्यक्त्वा ક્ષેત્ર, વાસ્તુ-ગૃહ, મહેલ આદિ હિરણ્ય સુવર્ણ, પુત્ર, દારા, બાન્ધવ, આ સઘળાને તથા આ શરીરને છોડીને अवसस्स मे गन्तव्वम्-अवशस्य मे गन्तव्यम् કર્માધીન બનેલ એવો હું અહીંથી જનાર છુ, રહેનાર નથી जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः "-જે જન્મ્યા છે તેનુ ચોકકસ મૃત્યુ છે આ સિદ્ધાન્ત છે માટે હે માતા પિતા! તમે મને શા માટે આ સસારમા ફસાવવાની ચેષ્ટા કરો છો મારો ઉદ્ધાર જે રીતે થઇ શકે, તેવો પ્રયત્ન કરો ॥ ૧૬ ॥

હવે દૃષ્ટાતની સાથે ભોગોના પરિણામને કહે છે—"जहा" ઇત્યા૦।

परिणामः सुन्दरः=शोभनो न भवति। एवमेव भुक्ताना भोगाना=मनोज्ञशब्दा- दीना परिणामः सुन्दरो न भवति ॥१७॥

एव भोगादीनामसारतामुक्त्वा दृष्टान्तेन स्वाशय प्रकाशयन्नाह—

मूलम्—अद्धाणं जो महंत तु, अपाहेओ पवज्जई।
गच्छंतो सो दुही होई, छुहातण्हाहि पीडिओ ॥१८॥

छाया—अध्वान यो महान्त तु, अपाथेयः प्रपद्यते।
गच्छन् स दुःखी भवति, क्षुत्तृष्णाभ्या पीडितः ॥१८॥

टीका—'अद्धाणं' इत्यादि—

यस्तु पुरुषः अपाथेयः=पाथेयवर्जितः शम्बलरहितः सन् महान्तम-ध्वान= दीर्घमार्गं प्रपद्यते=गच्छति। तत्र दीर्घे मार्गे गच्छन् स क्षुत्तृष्णाभ्या=क्षुद्= बुभुक्षा, तृष्णा=पिपासा ताभ्या पीडितः=व्यथितः सन् दुःखी भवति ॥१८॥

'जहा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जहा किंपागफलाणं—यथा किम्पाकफलाना) जिस प्रकार भुक्त किंपाक फलोंका (परिणामो न सुदरो—परिणामो न सुन्दरः) —परिणाम सुन्दर नहीं होता है—किन्तु प्राण हारी ही होता है (एव भुत्ताणभोगाण परिणामो न सुदरो—एव भुक्ताना भोगाना परिणामो न सुन्दरः) उसी प्रकार भुक्त भोगोंका परिणाम भी नरक निगोदादिक दुःखों का देनेवाला होने से सुन्दर नहीं होता है ॥ १७ ॥

भोगादिकों की असारता कहकर अब दृष्टान्त से अपना आशय प्रकट करते है—'अद्धाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जो—यः) जो पुरुष (अपाहेओ—अपाथेयः) विना कलेवा —भाता के (महत अद्धाण पवज्जइ—महान्त अध्वान—प्रपद्यते) बहुत लम्बे

અન્વયાર્થ—जहा किंपागफलाण—यथा किंपाकफलाना જે પ્રકારે ઝેરી ફળોનુ परिणामो न सुदरो—परिणामो न सुन्दर પરિણામ સુદર નથી હોતુ, પરતુ પ્રાણનો નાશ કરનાર જ હોય છે एव भुत्ताणभोगाण परिणामो न सुदरो—एव भुक्ताना भोगाना परिणामो न सुन्दरः એ પ્રમાણે ભોગવેલા ભોગોનુ પરિણામ પણ નરક નિગોદ આદિ દુખોને દેવાવાળુ હોવાથી સુદર નથી હોતુ ॥ ૧૭ ॥

ભોગ આદિકોની અસારતાને કહીને હવે દષ્ટાતથી પોતાના આશયને પ્રગટ કરે છે—"अद्धाण" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जो—यो જે પુરૂષ પોતાની સાથે अपाहेओ—अपाथेयः ભાતુ લીધા વગર महत अद्धाण पवज्जइ—महान्त अध्वान प्रपद्यते ઘણા લાબા માર્ગે જવા માટે

दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकमाह—

मूलम्—एवं धम्मं अकाऊण, जो गच्छइ परं भवं।
गच्छंतो सो दुही होइ, वाहिरोगेहिं पीडिए ॥१९॥

छाया—एवं धर्ममकृत्वा, यो गच्छति परं भवम्।
गच्छन् स दुःखी भवति, व्याधिरोगैः पीडितः ॥१९॥

टीका—'एवं' इत्यादि।

एवम्=अपाथेयपुरुषवद् यो जीवो धर्मम् अकृत्वा परं भवं=परलोकं गच्छति। गच्छन् स व्याधिरोगैः—व्याधयः=कुष्ठादयः, रोगाः=ज्वरादयस्तैः पीडितो व्यथितः सन् दुःखी भवति ॥१९॥

मार्ग को पार करने के लिये घरसे निकलता है वह (गच्छंतो-गच्छन्) जबतक अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच जाता तबतक चलते २ बीच में ही (छुहा तण्हाहि पीडिओ-क्षुत्तृष्णाभ्यां पीडितः) भूख और प्यास से व्यथित होकर (दुही होइ-दुःखी भवति) दुःखी होता रहता है ॥१८॥

अब इसी को दार्ष्टान्तिक से बताते हैं—'एव धम्मं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(एव-एव) इसी प्रकार जो प्राणी (धम्मं अकाऊण-धर्मं अकृत्वा) धर्मको नहीं करके (परं भवं गच्छई-परं भवं गच्छति) परभव की ओर प्रयाण करता है वह जबतक मुक्ति अवस्था को प्राप्त नहीं कर लेता है तबतक (गच्छंतो सो दुही-गच्छन् स दुःखी भवति) इस संसार में भ्रमण करते २ हरएक गति में दुःखित ही होता रहता है। वह कहीं (वाहिरोगेहिं पीडिए-व्याधिरोगैः पीडितः) व्याधि से दुःखित होता है तो कहीं आधि (मानसिक चिन्ता) से और कहीं

घेरथी બહાર નીકળે છે તે गच्छंतो-गच्छन् પોતાના જવાના સ્થાન ઉપર જ્યાંસુધી પહોંચતો નથી ત્યાં સુધી ચાલતાં ચાલતાં વચમાં જ छुहा तण्हाहि पीडिओ-क्षुत्तृष्णाभ्यां पीडित ભૂખ અને તરસથી પીડિત થઈ दुही होइ-दुःखी भवति દુઃખથી વ્યથિત થાય છે ॥૧૮॥

હવે તેને દૃષ્ટાંતિકથી સમજાવે છે—"एव धम्मं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—एव-एव આ પ્રકારે જે પ્રાણી धम्मं अकाऊण-धर्मं अकृत्वा ધર્મને નહીં આચરતાં परं भवं गच्छई-परं भवं गच्छति જ્યારે પરભવ તરફ પ્રયાણ કરે છે તે જ્યાં સુધી મુક્તિ અવસ્થાને નથી પામતો ત્યાં સુધી गच्छंतो सो दुही होइ-गच्छन् स दुःखी भवति આ સંસારમાં ભ્રમણ કરતાં કરતાં દરેક ગતિમાં દુઃખિત રહ્યા કરે છે તે ક્યારેક वाहिरोगेहिं पीडिए-व्याधिरोगैः पीडित વ્યાધિથી દુઃખિત થાય છે, તો ક્યારેક માનસિક ચિંતા આદિથી, અને ક્યારેક રોગ આદિથી,

पुनर्दृष्टान्तमाह—

मूलम्—अद्धाणं जो महंतं तु, सपाहिज्जो पवज्जई ।
गच्छंते से सुही होई, छुहातण्हाविवज्जिओ ॥२०॥

छाया—अध्वानं यो महान्तं तु, सपाथेयः प्रपद्यते ।
गच्छन् स सुखी भवति, क्षुत्तृष्णाविवर्जितः ॥२०॥

टीका—'अद्धाणं' इत्यादि ।

यस्तु पुनः सपाथेयः=पाथेयमस्ति'—स शम्बलः सन् महान्तम्=अध्वानं प्रपद्यते=गच्छति । गच्छन् स क्षुत्तृष्णाविवर्जितः सन् सुखी भवति ॥२०॥

रोगादिकों से। यद्यपि देवगति में रोग नहीं है फिर भी मानसिक दुःखों से भी दुःखित बने रहते है। तिर्यञ्चगति मे तथा मनुष्यगति मे व्याधि और रोग प्रत्यक्ष प्रतीत होते हैं। नरकों मे दस प्रकार की वेदना जन्य दुःख शास्त्रों मे वर्णित है ही ॥ १९ ॥

फिर दृष्टान्त कहते हैं—'अद्धाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जो-यः) जो प्राणी (सपाहिज्जो-सपाथेयः) पाथेय-कलेवा-सहित होकर (अद्धाण पवज्जइ-अध्वान प्रपद्यते) लम्बे मार्ग को पार करता है (से-स') वह गच्छंते-गच्छन्) चलते २ कभी भी (छुहा तण्हा विवज्जिओ-क्षुत्तृष्णा विवर्जित) क्षुधा एव तृष्णाकी पीडा को प्राप्त नहीं होता है। इस तरह (सुही होइ-सुखी भवति) वह सुखपूर्वक इष्ट स्थान पर पहुँच कर आनंदित होता है।

भावार्थ—"पास मे तोसा तो मंजिल का भरोसा" इस कहावत के अनुसार जो मनुष्य घर से कलेवा-भाता बांधकर दूसरी जगह

દુઃખી રહ્યા કરે છે દેવગતિમા રોગ નથી તો પણ માનસિક દુઃખોથી તો દુઃખિત બનેલા રહે છે, તિર્યંચ ગતિમા તથા મનુષ્ય ગતિમા, વ્યાધિ અને રોગપ્રત્યક્ષ દેખાય છે નરકોમા દસ પ્રકારના વેદનાજન્ય દુઃખો શાસ્ત્રોમા વર્ણવેલ છે ॥ ૧૯ ॥

પછી દૃષ્ટાંત કહે છે—"अद्धाण" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—जो-य જે પ્રાણી सपाहिज्जो-सपाथेय ભાતાને સાથે લઈ अद्धाण पवज्जइ-अध्वान प्रपद्यते લાબા માર્ગને પાર કરે છે से-स તે गच्छंते-गच्छन् ચાલતા ચાલતા કોઈ પણ સ્થળે छुहा तण्हा विवज्जिओ-क्षुत्तृष्णाविवर्जित. ભૂખ અને તરસની પિડાને ભોગવતો નથી આ પ્રમાણે તે सुही होइ-सुखी भवति સુખ પૂર્વક પોતાના ધારેલા સ્થળે પહોચીને આનંદ પામે છે

ભાવાર્થ—' પાસે જો હોય ભાતુ તો સફરમા જાય ગાતુ ' આ કહેવત અનુસાર

दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकमाह—

मूलम्—एवं धम्मं अकाऊण, जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छंतो सो दुही होइ, वाहिरोगेहिं पीडिओ ॥१९॥

छाया—एवं धर्ममकृत्वा, यो गच्छति परं भवम् ।
गच्छन् स दुःखी भवति, व्याधिरोगैः पीडितः ॥१९॥

टीका—'एवं' इत्यादि ।

एवम्=अपाथेयपुरुषवद् यो जीवो धर्मम् अकृत्वा परं भवं=परलोकं गच्छति । गच्छन् स व्याधिरोगैः—व्याधयः=कुष्ठादयः, रोगाः=ज्वरादयस्तैः पीडितो व्यथितः सन् दुःखी भवति ॥१९॥

मार्ग को पार करने के लिये घरसे निकलता है वह (गच्छंतो-गच्छन्) जबतक अपने गन्तव्य स्थान पर नहीं पहुँच जाता तबतक चलते २ बीच में ही (छुहा तण्हाहि पीडिओ-क्षुत्तृष्णाभ्यां पीडितः) भूख और प्यास से व्यथित होकर (दुही होइ-दुःखी भवति) दुःखी होता रहता है ॥१८॥

अब इसी को दार्ष्टान्तिक से घटाते हैं—'एवं धम्मं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(एवं-एवं) इसी प्रकार जो प्राणी (धम्मं अकाऊण-धर्मं अकृत्वा) धर्मको नहीं करके (परं भवं गच्छई-परं भवं गच्छति) परभव की ओर प्रयाण करताहै वह जबतक मुक्ति अवस्था को प्राप्त नहीं कर लेता है तबतक (गच्छंतो सो दुही-गच्छन् स दुःखी भवति) इस संसार में भ्रमण करते २ हरएक गति में दुःखित ही होता रहता है। वह कहीं (वाहिरोगेहिं पीडिए-व्याधिरोगैः पीडितः) व्याधि से दुःखित होता है तो कहीं आधि (मानसिक चिंता) से और कहीं

ઘેરથી બહાર નીકળે છે તે गच्छंतो-गच्छन् પોતાના જવાના સ્થાન ઉપર જ્યાંસુધી પહોંચતો નથી ત્યાં સુધી ચાલતા ચાલતા વચમાં જ छुहा तण्हाहि पीडिओ-क्षुत्तृष्णाभ्यां पीडितः ભૂખ અને તરસથી પીડિત થઇ दुही होइ-दुःखी भवति દુઃખથી વ્યથિત થાય છે ॥૧૮॥

હવે તેને દૃષ્ટાંતિકથી સમજાવે છે—"एवं धम्मं" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—एवं-एवं આ પ્રકારે જે પ્રાણી धम्मं अकाऊण-धर्मं अकृत्वा ધર્મને નહીં આચરતા परं भवं गच्छई-परं भवं गच्छति જ્યારે પરભવ તરફ પ્રયાણ કરે છે તે જ્યાં સુધી મુક્તિ અવસ્થાને નથી પામતો ત્યાં સુધી गच्छंतो सो दुही होइ-गच्छन् स दुःखी भवति આ સંસારમાં ભ્રમણ કરતાં કરતાં દરેક ગતિમાં દુઃખિત રહ્યા કરે છે તે ક્યારેક वाहिरोगेहिं पीडिए-व्याधिरोगैः पीडितः વ્યાધિથી દુઃખિત થાય છે, તો ક્યારેક માનસિક ચિંતા આદિથી, અને ક્યારેક રોગ આદિથી,

नास्तिवेदना=असातरूपा यस्य स तथा, असातवेदनारहित• स जीवः सुखी भवति। आभिर्गाथाभिर्धर्मकरणाकरणयोर्गुणदोषदर्शनाद् धर्मकरणाभिप्राय प्रकटितः ॥२१॥

सुखकारितया धर्म एव कर्तव्य इति पूर्वोक्तमाशय द्रढीकर्तुं पुनर्दृष्टान्तमाह—

मूलम्—जहा गेहे पलित्तमि, तस्स गेहस्स जो पहू।
सारभंडाइ नीणेइ, असारं अवउज्झइ ॥२२॥

छाया—यथा गेहे प्रदीप्ते, तस्य गेहस्य यः प्रभुः।
सारभाण्डानि निष्कासयति, असारम् अपोज्झति ॥२२॥

टीका—'जहा' इत्यादि।

हे पितरौ! यथा गेहे प्रदीप्ते=प्रज्वलिते–तस्य गृहस्य यः प्रभुः=

सात वेदनरूप सुख का भोगने वाला होता है। इन गाथाओं द्वारा सूत्रकार ने धर्म करने मे तथा धर्म नहीं करने में गुण और दोषों के प्रदर्शन से यह बात पुष्ट की है कि धर्म करना ही श्रेयस्कर है।

भावार्थ—असातावेदनी का नाम दुःख और सातावेदनी का नाम सुख है। जीव जब धर्म की शीतल छत्रच्छाया का सहारा पा लेता है तब वह सावद्य व्यापारों के करने से रहित हो जाता है। इस तरह पापकर्म से रहित होता हुआ वह जीव जब परलोक जाता है तब उसको परलोक मे सातवेदन रूप सुखका ही अनुभव होता है। इस तरह वह सुखी बन जाता है ॥ २१ ॥

इसी आशय को सूत्रकार दृष्टान्त द्वारा दृढ करते हैं—'जहा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जहा-यथा) जैसे (गेहे पलित्त-गेहे प्रदीप्ते) घर में आग

થાય છે આ ગાથાઓ દ્વારા સૂત્રકારે ધર્મ કરવાના તથા ધર્મ ન કરવાના ગુણ અને દોષોના પ્રદર્શનથી એ વાતને પુષ્ટ કરી છે કે, ધર્મ કરવો એજ શ્રેયસ્કર છે

ભાવાર્થ—અસાતા વેદનનુ નામ દુઃખ અને સાતા વેદનનુ નામ સુખ છે જીવ જ્યારે ધર્મની શીતલ છત્ર છાયાનો આશરો મેળવી લ્યે છે ત્યારે તે સાવદ્ય વ્યાપારો કરવાથી રહિત થઈ જાય છે આ રીતે પાપકર્મથી રહિત બનેલો એ જીવ જ્યારે પરલોકમા જાય છે ત્યારે તેને પરલોકમા સાતા વેદનરૂપ સુખનો જ અનુભવ થાય છે આ રીતે એ સુખી બની જાય છે ॥ ૨૧ ॥

એજ આશયને સૂત્રકાર દૃષ્ટાંત દ્વારા દૃઢ કરે છે—"जहा" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जहा-यथा જેમ गेहे पलित्तमि-गेहे प्रदीप्ते ઘરમા આગ લાગે

दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकमाह—

मूलम्—एवं धम्मपि काऊणं, जो गच्छइ परं भवं ।
गच्छंतो सो सुही होइ, अप्पकम्मे अवेयणे ॥२१॥

छाया—एवं धर्ममपि कृत्वा, यो गच्छति परं भवम् ।
गच्छन् स सुखी भवति, अल्पकर्मा अवेदनः ॥२१॥

टीका—'एवं' इत्यादि ।

एवम्=सपाथेयपुरुषवत् यो जीवो धर्मं=सावद्यव्यापारवर्जनरूपम् कृत्वा=चरित्वा परं भवं गच्छति । 'अपि' शब्दः पूरणे परभवं गच्छन् अल्पकर्मा=पापकर्मरहितः, 'अल्प' शब्दोऽत्राभावार्थकः, 'कर्म' शब्दः पापकर्मपरः, अवेदनः=

जाने को निकलता है तो पास में खाने पीने की यथोचित सामग्री की वजह से उसको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती है और अपने इष्ट स्थान पर आनंद से मार्ग को पार करता हुआ पहुँच जाता है। यह व्यवहार में स्पष्टरीति से देखा जाता है ॥ २० ॥

अब इसी पर दार्ष्टान्तिक कहते हैं—'एवं धम्मपि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(एवं-एवम्) इसी तरह (जो-यः) जो प्राणी (धम्म-धर्मम्) सावद्यव्यापार परिवर्जनरूप धर्म (काऊण-कृत्वा) पास में करके (परभव गच्छइ-परं भवं गच्छति) परलोक जाता है (सो सः) वह पर भव को जाने वाला जीव (अप्प कम्मे-अल्पकर्मा) पाप कर्म रहित हो कर (अवेयणे-अवेदनः)असातवेदनरूप दुःख से रहित हो जाता है और इस तरह वह (सुही होइ-सुखी भवति) सुखी बन जाता है-

જે માણસ ઘેરથી ભાતુ બાંધીને બીજે ગામ જવા માટે નીકળે છે તે સાથે ખાવા પીવાની જરૂરત પુરતી સાધન સામગ્રી હોવાના કારણથી તેને ખાવા પીવાની કોઈ પણ જાતની ચિંતા થતી નથી અને પોતાના ધારેલા સ્થળે-આનંદથી માર્ગને પૂરો કરીને પહોચી જાય છે આ વાત તો વ્યવહારમા સ્પષ્ટ રીતે દેખાય છે ॥ ૨૦ ॥

હવે આના ઉપર દાર્ષ્ટાંતિક કહે છે—"एवं धम्मपि", ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—एवं-एवम् આજ રીતે जो-यः જે પ્રાણી धम्म-धर्मम् સાવદ્ય વ્યાપારના પરિવર્જનરૂપ ધર્મ काऊण-कृत्वा સાથે લઈને परभव गच्छइ-परभवं गच्छति પરલોકમા જાય છે सो-स એ પરભવમા જનાર જીવ अप्पकम्मे-अल्पकर्मा પાપકર્મ રહિત થઈને अवेयणे-अवेदन અસાતા-વેદનરૂપ દુ ખથી રહિત બને છે એ રીતે તે सुही होइ-सुखी भवति સુખી બને છ સાતા વેદનરૂપ સુખ

अथ भाव' यथा प्रज्वलितगृहाद् गृहपतिरसार तृणादिक वस्तु परित्यज्य, सारभाण्ड रत्नादिवस्तुजात निष्कासयति। तथैवाहमपि धर्मसाहाय्येन जरा-मरणव्याकुलि तादस्मात् ससारादसाररूपकामभोगादीन् परित्यज्य सारभाण्ड रूपमात्मानमुद्धरिष्यामीति ॥२३॥

एव तेनोक्ते पितरौ यदुक्तवन्तौ तद त्रिंशत्या गाथाभिः प्रोच्यते--

मूलम्--ते बित अम्मापियरो, सामन्न पुत्त! दुच्चर।
गुणाणं तु सहस्साइं, धारेयव्वाइं भिक्खुणा ॥२४॥

छाया--तमब्रूतामम्बापितरौ, श्रामण्य पुत्र! दुश्चरम्।
गुणाना तु सहस्राणि, धारयितव्यानि भिक्षुणा ॥२४॥

टीका--'त बिंत' इत्यादि।

त=मृगापुत्रम् अम्बापितरौ अब्रूताम्=उक्तवन्तौ, किमब्रूताम्? हे पुत्र!

भावार्थ--बुद्धिमान घरका स्वामी वही प्रशसा योग्य माना गया है जो घर में काबू से बाहिर आग लगने पर उसमें से अपनी कीमती चीजों को बाहर निकाल लेता है और असार का परित्याग कर देता है इसी तरह जब इस सारे ससार मे हे मात तात! जरा और मरणकी आग लग रही है-तब मोक्षाभिलाषी का भी यही कर्तव्य है कि वह अपने शरीर से आपका उद्धार कर लेवे। अतः मैं आपसे आज्ञा चाहता हू कि आप लोग मुझे इस लिये आज्ञा प्रदान करें। मै भी असार काम-भोगादिकों का परित्याग कर धर्मकी सहायता से सारभूत आत्मा का उद्धार करना चाहता हू ॥ २३ ॥

इस प्रकार मृगापुत्र के वचन सुनकर मातापिता ने जो कुछ कहा

ભાવાર્થ—બુદ્ધિમાન ઘરનો સ્વામી પ્રશસા યોગ્ય તો એજ મનાય છે કે, જે ઘરમા બે કાબુ આગ લાગવાથી એમાથી પોતાની કીમતી ચીજોને બહાર કાઢી લ્યે છે અને અસાર વસ્તુઓનો પરિત્યાગ કરી દે છે આજ પ્રમાણે આ સઘળા સસારમા હે માતા પિતા! વૃદ્ધાવસ્થા અને મરણની આગ લાગી રહી છે ત્યારે મોક્ષના અભિલાષીનુ એજ કર્તવ્ય છે કે, તે પોતાના શરીરથી પોતાનો ઉદ્ધાર કરી લ્યે આથી હુ આપની પાસેથી આજ્ઞા માગુ છુ કે, આપ લોક મને આના માટે આજ્ઞા પ્રદાન કરો હુ પણ અસાર કામ ભોગાદિકોનો પરિત્યાગ કરી ધર્મની સહાયતાથી સારભૂત આત્માનો ઉદ્ધાર કરવા ચાહુ છુ ॥ ૨૩ ॥

આ પ્રકારનુ મૃગાપુત્રનુ વચન સાભળી માતા પિતાએ જે કાઇ કહ્યુ તે વીસ

स्वामी स प्रज्वलिताद् गृहात् सारभाण्डानि=महामूल्यवस्त्राभरणादीनि निष्कासयति, तथा असार=जीर्णवस्त्रादिकम् अपोज्झति=परित्यजति ॥२२॥

दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकमाह—

मूलम्—एवं लोए पलित्तमि, जराए मरणेण यं ।
अप्पाणं तारइस्सामि, तुब्भेहिं अणुमन्निओ ॥२३॥

छाया—एवं लोके प्रदीप्ते, जरया मरणेन च ।
आत्मानं तारयिष्यामि, युष्माभिरनुमतः ॥२३॥

एवम्=उपर्युक्तदृष्टान्तवत्, जरया=वार्द्धकेन मरणेन=मृत्युना च प्रदीप्ते-प्रदीप्तः प्रज्वलित इव प्रदीप्तस्तस्मिंस्तथा, अत्यन्तव्याकुलीभूतेऽस्मिन् लोके=संसारेऽहमपि युष्माभिरनुमतः=आज्ञापितः सन् आत्मानं तारयिष्यामि ।

लगजाने पर (तस्स गेहस्स जो पहू-तस्य गेहस्य यः प्रभुः) उस घरका जो स्वामी होता है वह (सार भंडाइ नीणेइ-सारभाण्डानि निष्कासयति) महामूल्य वस्त्रादिक तथा आभरणादिक कीमती चीजोंको निकाल लेता है—तथा (असार अवज्झइ-असार अपोज्झति) असार वस्तुओंका परित्याग कर देता है ॥ २२ ॥

अब इसी का दार्ष्टान्तिक कहते हैं—'एवं लोए' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(एवं-एवं) इसी तरह (जराए मरणेण-जरया मरणेन) जरा एवं मरण से लोए पलित्तमि-लोके प्रदीप्ते) यह सारा संसार जल रहा है सो ऐसी स्थिति वाले इस लोक मे से (अप्पाणं-आत्मानम्) मैं भी अपने आपको (तुब्भेहिं अणुमन्निओ तारइस्सामि-युष्माभि अनुमतः तारयिष्यामि) आपके द्वारा आज्ञापित होकर बाहर निकाल लूंगा।

છે ત્યારે तस्स गेहस्स जो पहू-तस्य गेहस्य यः प्रभु એ ઘરનો જે સ્વામી હોય છે તે सारभंडाइ नीणेइ-सारभाण्डानि निष्कासयति કીમતી વસ્ત્રાદિક તથા આભરણ આદિ કીમતી ચીજોને સૌ પ્રથમ કાઢી લે છે તથા असार अवज्झइ-असार अपोज्झति અસાર વસ્તુઓનો પરિત્યાગ કરી દે છે ॥ ૨૨ ॥

હવે એનુ જ દાર્ષ્ટાંતિક કહે છે—"एवं लोए" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—एवं-एवम् આજ રીતે जराए मरणेण-जरया मरणेन જરા અને મરણથી लोए पलित्तमि-लोके प्रदीप्ते આ સઘળો સંસાર સળગી રહ્યો છે, તો એવી સ્થિતિવાળા આ લોકમા હુ પણ अप्पाणं-आत्मानम् મારી જાતને तुब्भेहिं अणुमन्निओ तारइस्सामि-युष्माभि अनुमत तारयिष्यामि આપની આજ્ઞા મળતા બહાર કાઢવા માગુ છુ

मूलम्—समता सर्वभूतेषु, शत्रुमित्रेषु वा जगति ।
प्राणातिपातविरतिः, यावज्जीवं दुष्करम् ॥२५॥

टीका—'समया' इत्यादि ।

भिक्षुणा जगति=संसारे सर्वभूतेषु=एकेन्द्रियादिसर्वप्राणिषु, वा=पुनः शत्रुमित्रेषु=अपकार्युपकारिषु च समता=रागद्वेषापरिधानतस्तुल्यता कर्तव्या। अनेन सामायिकमुक्तम्। तथा प्राणातिपातविरतिः=प्रथममहाव्रतरूपा च कर्तव्या। एतत्सर्वं यावज्जीवं दुष्करम्। अनेन प्रथममहाव्रतस्य दुष्करत्वं सूचितम् ॥२५॥

'समया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(भिक्खुणा-भिक्षुणा) भिक्षु का कर्तव्य है कि वह (जगे-जगति) जबतक इस संसारमें विचरण करता है अर्थात्-भिक्षु पर्याय में रहता है तबतक उसको (सव्वभूएसु सत्तुमित्तेसु य-सर्वभूतेषु शत्रुमित्रेषु च) एकेंद्रियादिक समस्त जीवों पर तथा शत्रुमित्र पर समता भाव रखना पडता है-रागद्वेष नहीं करना पड़ता है, तथा उसको पाणाइवायविरई-प्राणातिपातविरतिः) प्रथम महाव्रतरूप जो प्राणातिपात विरमण है उसका पूरा पालन करना पडता है। (जावज्जीवाइ दुक्कर-यावज्जीव दुष्करम्) यह सब तुमसे जाव जीव दुष्कर है।

भावार्थ—आगे चलकर मातापिता ने मृगापुत्र को यह भी समझाया कि देखो श्रामण्य-चारित्रकी शोभा समस्त संसारी जीवों पर चाहे वे अपने शत्रु हों चाहे मित्र हो समता भाव रखने से ही है तथा प्राणाति-

"समया" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—વળી भिक्खुणा-भिक्षुणा ભિક્ષુનું કર્તવ્ય છે કે, તે जगे-जगति જ્યાં સુધી આ સંસારમાં વિચરણ કરે છે, અર્થાત ભિક્ષુ પર્યાયમાં રહે છે ત્યાં સુધી તેણે सव्वभूएसु सत्तुमित्तेसु य-सर्वभूतेषु शत्रुमित्रेषु च એકેન્દ્રિય આદિ જીવો ઉપર તેમજ સઘળા જીવો ઉપર તથા શત્રુ મિત્ર ઉપર સમતા ભાવ રાખવો પડે છે રાગદ્વેષ ન રાખવો જોઇએ તથા તેણે पाणाइवायविरई-प्राणातिपातविरतिः પ્રથમ મહાવ્રતરૂપ જે પ્રાણાતિપાત વિરમણ છે તેનું પુરેપુરૂં પાલન કરવું પડે છે जावज्जीवाइ दुक्कर-यावज्जीव दुष्करम् એ સઘળું તમારાથી આ જીવનભર પાલન કરવું ઘણું જ દુષ્કર છે

ભાવાર્થ—આગળ ચાલીને માતા પિતાએ મૃગાપુત્રને એ પણ સમજાવ્યું કે, જો શ્રામણ્ય-ચારિત્રની શોભા તો સઘળા સંસારી જીવો ઉપર ચાહે તો તે શત્રુ હોય કે મિત્ર હોય એ દરેકના ઉપર સમતાભાવ રાખવામાં જ છે વળી પ્રાણાતિપાત

भिक्षुणा=साधुना गुणाना=श्रामण्योपकारक शीलाङ्गाना सहस्राणि धारयितव्यानि= आत्मनि स्थापयितव्यानि तु=एव भवन्ति। श्रमणो हि शीलाङ्गरूप सहस्रगुणान् आत्मनि स्थापयत्येव। अन्यथा श्रामण्यमेव न सभवति। यत एवमत' श्रामण्य साधुत्व दुश्चरम्=दुःखेनाचरणीयम् ॥२४॥

साम्प्रत प्रथममहाव्रतस्य दुष्करतामाह—

मूलम्—समया सव्वभूएसु, सत्तुमित्तेसु वा जगे'
पाणाइवायविरई, जावज्जीवाइ दुक्करं ॥२५॥

वह तीस गाथाओं द्वारा यहा प्रकट किया जाता है—'जं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अम्मापियरो-अम्बा पितरौ) मातापिताने (तं-तम्)-मृगा पुत्र से (बिंत-अब्रूताम्) कहा (पुत्त-पुत्र) हे पुत्र (सामन्न दुच्चरम्-श्रामण्य दुश्चरम्) यह श्रामण्य-साधुपना दुश्चर है, क्यों की (भिक्खुणा गुणाण सहस्साइ धारेयव्वाई-भिक्षुणा गुणाना सहस्राणि धारयितव्यानि) साधु को इस अवस्था में इस श्रामण्य के उपकारक शीलाङ्गो के सहस्रों को धारण करना पडता है। इनके विना श्रामण्य बन नहीं सकता है।

भावार्थ— मृगापुत्र को श्रामण्य की दुश्चरता बतलाने के निमित्त उसके माताने कहा कि बेटा! जबतक अठार हजार शील के भेद नहीं पाले जाते हैं तबतक श्रामण्य नही पल सकता है। तुम इनको पाल सकोगें कि नही इसमें हमको सदेह है, अत' घर पर ही रहो और कामभोगों को भोगो-इस श्रामण्य-साधुपने के चक्कर मे मत पडो॥ २४ ॥

ગાથાઓ દ્વારા અહી પ્રગટ કરવામા આવે છે—'जं' ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—अम्मापियरो-अम्बापितरौ માતા પિતાએ तं-तम् તે મૃગાપુત્રને बिंत-अब्रूताम् કહ્યુ-पुत्त-पुत्र હે પુત્ર! सामण्ण दुच्चरम्-श्रमण्य दुश्चरम् એ શ્રામણ્ય -સાધુપણુ ઘણુ જ દુષ્કર છે કેમકે, भिक्खुणा गुणाण सहस्साइ धारेयव्वाइ-भिक्षुणा गुणाना सहस्राणि धारयितव्यानि સાધુએ એ અવસ્થામા શ્રામણ્યના ઉપકારક શીલાગોના સહસ્રોને ધારણ કરવા પડે છે એના સીવાય શ્રામણ્ય બની શકાતુ નથી

ભાવાર્થ—મૃગાપુત્રને શ્રામણ્યની દુશ્ચરતા બતાવવાના નિમિત્તે માતા પિતાએ કહ્યુ, કે બેટા! જ્યા સુધી અઢાર હજાર શીલના ભેદ નથી પળાતા ત્યા સુધી શ્રામણ્યને પાળી શકાતુ નથી તમો એને પાળી શકશો કે કેમ એમા અમોને પૂરો [illegible] છે માટે તમે ઘેર જ રહો અને કામભોગોને ભોગવો આ શ્રમણ્ય સાધુપણાના ચક્કરમા ન પડો ॥ ૨૪ ॥

अयं भाव.—निद्रादिप्रमादयुक्तो मृषावाद विवर्जयितु न शक्नोति, अत. साधुना सर्वदा निद्रादिप्रमादो वर्जनीयः। प्रमादरहितोऽपि अनुपयुक्ता हित सत्य वक्तु न शक्नोति, अतः साधुना सर्वदा उपयोगवताचाऽपि भवितव्यम्। सर्वदा प्रमादराहित्यमुपयुक्तत्व च परमदुष्करम्। अनेन द्वितीयव्रतस्य दुष्करत्व सूचितम् ॥२६॥

तृतीयमहाव्रतस्य दुष्करतामाह—

मूलम्—दंतसोहणमाइस्स, अदिन्नस्स विवज्जणम्।
अणवज्जेसणिज्जस्स, गेण्हणा अवि दुक्करम् ॥२७॥

छाया—दन्तशोधनादेरदत्तस्य विवर्जनम्।
अनवद्यैषणीयस्य, ग्रहणमपि दुष्करम् ॥२७॥

टीका—'दंतसोहण' इत्यादि।

हे पुत्र ! साधवोऽदत्तस्य दन्तशोधनादेरपि वस्तुनो यावज्जीव विवर्जन कुर्वन्ति। अदत्त शलाकामात्रमपि साधुभिर्न ग्राह्यमिति भाव। अपि=पुनः दत्तस्यापि अनवद्यैषणीयस्यैव—अनवद्य—निर्दूषणम् अचित्त प्रासुक चेति, एषणीय=

असमर्थ रहता है तथा प्रमाद रहित होने पर भी यदि अनुपयुक्त उपयोग से शून्य है—तो ऐसी स्थिति मे वह हित सत्य नहीं बोल सकता है। इसलिये उसको प्रमाद का परिवर्जन की जीवनपर्यन्त खास आवश्यकता है। परन्तु ये सब नियम यावज्जीव (दुक्करम्—दुष्करम्) दुष्कर—कठिन है। इससे महाव्रत की दुष्करता प्रकट की है ॥ २६ ॥

फिर—'दंतसोहणमाइस्स' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! अदिन्नस्स दंतसोहणमाइस्स विवज्जणं—अदत्तस्य दन्तशोधनादे विवर्जनम्) मुनिराज कभी भी विना दिये दांत कुचरने की सली भी नहीं लेते हैं। तथा दिये हुए भी (अणवज्जे-

रहित होवा छता पण जे—अनुपयुक्त उपयोगथी शून्य छे—ते आवी स्थितिमा पण सत्य बोली शकता नथी आ माटे तेने प्रमादना परिवर्जननी अने उपयुक्त रहेवानी जीवन पर्यंत खास जरूरत छे परंतु आ सघळा नियम जीदगी सुधी पाळवा घणा ज दुक्करम्—दुष्करम् कठीन छे आथी बीजा महाव्रतनी दुष्करता प्रगट करवामा आवी छे ॥ २६ ॥

पछी—"दंतसोहणमाइस्स" इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! अदिन्नस्स दंतसोहणमाइस्स विवज्जणम्—अदत्तस्य दन्तशोधनादे विवर्जनम् मुनिराज कदी पण आप्या वगर दात खोतरवा माटे सळी

द्वितीयमहाव्रतस्य दुष्करतामाह—

मूलम्—निच्चकालऽप्पमत्तेण, मुसावायंविवज्जणं।
भासियव्वं हियं सच्चं, निच्चाउत्तेण दुक्करम् ॥२६॥

छाया—नित्यकालाप्रमत्तेन, मृषावादविवर्जनम्।
भाषितव्यं हितं सत्यं, नित्यायुक्तेन दुष्करम् ॥२६॥

टीका—'निच्चकाल' इत्यादि।

नित्यकालाप्रमत्तेन-नित्यकालम्-अप्रमत्तः=प्रमादवर्जितो नित्यकालाप्रमत्तस्तेन तथा, सर्वदा निद्रादिप्रमादरहितेन, तथा नित्यायुक्तेन=सर्वदोपयोगवता भिक्षुणा मृषावादविवर्जनं=मृषाभाषणपरित्यागो यावज्जीवं कर्तव्यम्, हितं सत्यं च यावज्जीवं भाषितव्यम्। एतत् दुष्करम्=दुःखेनाचरणीयम्।

पात विरमण भी श्रामण्य का एक मनोहर सर्व श्रेष्ठ भूषण है, सो तुम से उसका यावज्जीव पालन होना मुश्किल है, इसलिये इस श्रामण्य के फेर में मत पड़ो ॥ २५ ॥

'निच्चकाल०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—तथा-भिक्षुको (निच्चकालाप्पमत्तेण निच्चाउत्तेण-नित्यकालाप्रमत्तेन नित्यायुक्तेन) नित्यकाल-सदा-निद्रा आदि प्रमाद से रहित एवं उपयोग सहित होना चाहिये, तभी जाकर वह (मुसावाय विवज्जणं हियं सच्चं भासियव्वं-मृषावादविवर्जनम्-हितं सत्यं भाषितव्यम्) मृषावाद का त्याग और हितकारक सत्य भाषा बोल सकता है। यह सब कर्तव्य उसका यावज्जीवतक का है। क्यों कि जो साधु निद्रा आदि प्रमाद पतित होता है वह मृषावाद का परिवर्जन करने में सर्वथा

વિરમણ-પણ શ્રામણ્યનું એક સર્વશ્રેષ્ઠ એવું મનોહર ભૂષણ છે એનું તમારાથી જીંદગી સુધી પાલન થવું મુશ્કેલ છે એથી આ શ્રામણ્યના ચક્કરમાં ન પડો ॥ ૨૫ ॥

"निच्चकाल" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—વળી ભિક્ષુએ निच्चकालाप्पमत्तेण निच्चाउत्तेण-नित्यकालाप्रमत्तेन नित्यायुक्तेन નિત્યકાળ-સદા નિદ્રા આદિ પ્રમાદોથી રહિત અને ઉપયોગ સહિત રહેવું જોઈએ ત્યારે જ તે मुसावायविवज्जण-हियं सच्चं भासियव्वं-मृषावादविवर्जनम् हितं सत्यं भाषितव्यम् મૃષાવાદનો ત્યાગ અને હિતકારક સત્યને બોલી શકે છે આ સઘળું કર્તવ્ય જીવનભર માટેનું છે. જે સાધુ નિદ્રા આદિ પ્રમાદોથી પતિત થાય છે તે મૃષાવાદનું પરિવર્જન કરવામાં સદા અસમર્થ રહે છે વળી પ્રમાદ

तथा-उग्र=घोर ब्रह्म=नववाटिकाविशुद्ध ब्रह्मचर्यनामकं महाव्रतं च यावज्जीवं धारयितव्यम्। एतत् कामभोगरसज्ञेन कामौ=शब्दरूपलक्षणौ, भोगाः=गन्ध-रसस्पर्शलक्षणास्तेषां रसज्ञेन=तत्सुखानुभविना त्वया सुदुष्करम्-दुराराध्यम्। यो हि कामभोगरसानभिज्ञः सोऽनुभवाभावादेतदनायासेन यावज्जीवं पालयितुं शक्नोति। परन्तु तदभिज्ञेन त्वयैतत्सुदुष्करमिति भावः। अनेन चतुर्थमहाव्रतस्य दुष्करत्वं सूचितम् ॥२८॥

पञ्चममहाव्रतस्य दुष्करतामाह--

मूलम्--धणधन्नपेसवग्गेसु, परिग्गहविवज्जणं ।
सव्वारंभपरिच्चाओ, निम्ममत्तं सुदुक्करम् ॥२९॥

छाया--धनधान्यप्रेष्यवर्गेषु, परिग्रहविवर्जनम् ।
सर्वारम्भपरित्यागो, निर्ममत्वं सुदुष्करम् ॥२९॥

टीका--'धणधन्न' इत्यादि ।

हे पुत्र ! साधुना धनधान्यप्रेष्यवर्गेषु=धन=हिरण्यसुवर्णादि, धान्य=शालि-

---

अब्रह्मचर्यस्य विरति') अब्रह्म का त्याग करना होता है तथा (उग्गं महव्वयं बंभं धारेयव्वं-उग्रं महाव्रतं ब्रह्मधारयितव्यम्) घोर-नववाड से विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करना होता है। यह व्रत (कामभोगरसन्नुणा सुदुक्करं-कामभोगरसज्ञेन दुष्करम्) काम-शब्दरूप तथा भोग-गंधरस एवं स्पर्श के रस से परिचित हुए तुम्हारे द्वारा दुराराध्य है। जो काम भोग रस से अनभिज्ञ है वह भले ही इसको अनायास यावज्जीव पाल सकता है परंतु जो इस रसका रसिया बन चुका है उस से इस का सब बाड से पालन होना दुष्कर है इस से बेटा इस व्यर्थ के चक्कर मे तुम मत फँसो इस में चौथे महाव्रत की दुष्करता कही है। ॥ २८ ॥

विरतिः અબ્રહ્મચર્યનો ત્યાગ કરવાનો હોય છે વળી, उग्गं महव्वयं बंभं धारेयव्वं-उग्रं महाव्रतं ब्रह्मधारयितव्यम् ઘોર-નવવાડથી વિશુદ્ધ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરવાનું હોય છે આ વ્રત कामभोगरसन्नुणा सुदुक्करं-कामभोगरसज्ञेन दुष्करम् કામ--શબ્દરૂપ તથા ભોગ, ગંધ રસ અને સ્પર્શના રસથી પરિચિત બનેલ તમારાથી થઈ શકશે નહીં જે કામભોગ રસથી અજાણ છે તે તો ભલી ભાતિથી એને અનાયાસે જીંદગીભર પાળી શકે પરંતુ જે આ રસના રસિયા બની ચૂક્યા છે તેનાથી તેનું સઘળી રીતે પાલન કરવું મુશ્કેલ છે માટે હે બેટા! વ્યર્થમાં એ ચક્કરમાં તું ન ફસાઈશ આમાં ચોથા મહાવ્રતની દુષ્કરતા બતાવવામાં આવેલ છે ॥ २८ ॥

द्विचत्वारिंशद्दोषरहितम्, अनयोः समाहारद्वन्द्वः, तस्य तथोक्तस्यैव पिण्डस्य साधवो यावज्जीवं ग्रहणं कुर्वन्ति। एतदाचरणं तव दुष्करं=दुरनुचरम्। अनेन तृतीयमहाव्रतस्य दुष्करत्वं भणितम् ॥२७॥

चतुर्थमहाव्रतस्य दुष्करतामाह—

मूलम्—विरई अबंभचेरस्स, कामभोगरसन्नुणा।
उग्गं महव्वयं बंभं, धारेयव्वं सुदुक्करम् ॥२८॥

छाया—विरतिरब्रह्मचर्यस्य, कामभोगरसज्ञेन।
उग्रं महाव्रतं ब्रह्म, धारयितव्यं सुदुष्करम् ॥२८॥

टीका—'विरई' इत्यादि।

हे पुत्र! साधुना अब्रह्मचर्यस्य=मैथुनस्य यावज्जीवं विरतिः कर्तव्या,

सणिज्जस्स गेह्णणा-अनवद्यैषणीयस्य ग्रहणम्) अनवद्य-निर्दोष अचित्त प्रासुक तथा बयालीस दोषों से रहित एषणीय पिण्ड को ही वे ग्रहण करते हैं, सो हे बेटा! (दुक्करम्-दुष्करम्) यह भी तुम से यावज्जीव निभना दुष्कर-मुश्किल है।

भावार्थ—साधु की जितनी भी महाव्रतादि रूप क्रियाएँ हैं, वे सब उनकी यावज्जीव है, जब वे अदत्त एक शलाका तकभी नहीं ले सकते है तथा दत्त भी अनवद्य एव एषणीय ही ग्रहण करते हैं तब यह सब तुम से दुष्कर है। इससे तृतीय महाव्रत मे दुष्करता कही गई है॥ २७ ॥

'विरई' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र! साधु को यावज्जीव (अबभचेरस्स विरई-

પણ લેતા નથી વળી અપાયેલ છતા પણ અણવજ્જેસણિજ્જસ્સ ગેહ્ણણા-અનવદ્યૈષણીયસ્ય ગ્રહણમ્ અનવદ્ય-નિર્દોષ અચિત પ્રાસુક તથા બેતાલીસ દોષોથી રહિત એષણીય પીંડને જ તેઓ ગ્રહણ કરે છે તો હે બેટા! આ પણ તમારાથી જીંદગીભર નીભાવવુ દુક્કરમ્-દુષ્કરમ્ દુષ્કર-મુશ્કેલ છે

ભાવાર્થ—સાધુની જેટલી પણ મહાવ્રતાદિરૂપ ક્રિયાઓ છે તે સઘળી તેના માટે જીવનભર માટેની છે આથી જ્યારે તે અદત્ત એક સળીને પણ લઈ શકતા નથી તથા અપાયેલ પણ અનવદ્ય અને એષણીય જ ગ્રહણ કરે છે ત્યારે આ સઘળુ તમારા માટે દુષ્કર છે આથી ત્રીજા મહાવ્રતની દુષ્કરતા બતાવવામા આવેલ છે ॥ ૨૭॥

"વિરઈ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર! સાધુએ જીંદગીભર અબભચેરસ્સ વિરઈ-અબ્રહ્મચર્યસ્ય

रात्रिभोजनपरिहारस्य दुष्करतामाह—

मूलम्—चउव्विहे वि आहारे, राईभोयणवज्जणा।
सन्निहीसंचओ चेव, वज्जेयव्वो सुदुक्करं ॥३०॥

छाया—चतुर्विधेऽपि आहारे, रात्रिभोजनवर्जनम्
सन्निधिसंचयश्चैव, वर्जयितव्यः सुदुष्करम् ॥३०॥

टीका—'चउव्विहे वि' इत्यादि।

हे पुत्र ! साधुना अशनपानखाद्यस्वाद्यरूपे चतुर्विधेऽपि आहारे रात्रिभोजनवर्जनं कर्तव्यम्। साधवो रात्रौ चतुर्विधमप्याहारं न भुञ्जते इति भावः। च=पुनः साधुना सन्निधिसंचयः-सन्निधीयते=नरकादिषु स्थाप्यते आत्माऽनेनेति सन्निधिः घृतगुडादेरुचितकालातिक्रमणेन स्थापनम्, स चासौ संचयश्चेति, सोऽपि यावज्जीवं वर्जयितव्य एव। एतत्सुदुष्करं त्वादृशेन। अनेन षष्ठव्रतस्य दुष्करत्वं सूचितम् ॥३०॥

है। परन्तु तुम राजपुत्र हो-सो यह सब तुम से यावज्जीव कैसे निभ सकेगा? अतः इस चारित्र पद के चाकचिक्य मे न पडकर मेरी बात मानो अपने घर पर ही रहो ॥२९॥

छठे रात्रिभोजन के विषय मे कहते हैं-'चउव्विहे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! साधु अवस्था मे साधु के लिये (चउव्विहे वि आहारे राईभोयणवज्जणा-चतुर्विधेऽपि आहारे रात्रिभोजनवर्जनम) चतुर्विध आहार के विषय मे रात्रिभोजन का यावज्जीव त्याग करदेना पडता है। तथा (सन्निहीसंचओ चेव वज्जेयव्वो सुदुक्करम्-सन्निधिसंचयश्चैव वर्जयितव्यः सुदुष्करम्) घृत, गुड आदिका संग्रह करना यह भी यावज्जीव छोड दिया जाता है। यह सब बाते मुझे बेटा!

પ્રકારની ભાવના છોડી દેવી પડે છે પરંતુ તમે તો રાજપુત્ર છો તો પછી આ સઘળી વાતો તમારાથી કઈ રીતે પાળી શકાશે? માટે શ્રામણ્ય પદના ચકાવામાં ન પડતા અમારી વાતને માનીને આપણે ઘેર જ રહો. ॥ ૨૯ ॥

છઠ્ઠા રાત્રી ભોજનના વિષયમા કહે છે—"चउव्विहे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર! સાધુ અવસ્થામા સાધુ માટે चउव्विहे वि आहारे राईभोयणवज्जणा—चतुर्विधेऽपि आहारे रात्रिभोजनवर्जनम् ચતુર્વિધ આહારના વિષયમા રાત્રિભોજનનો જીદગીપર્યંત ત્યાગ કરવો પડે છે તથા सन्निहीसंचओ चेव वज्जेयव्वे सुदुक्करम्—सन्निधिसंचयश्चैव वर्जयितव्यः सुदुष्करम् ઘી, ગોળ આદિને સંઘરી રાખવુ એ પણ તેમને જીદગીભરની મનાઈ છે આ સઘળી વાતોથી અમોને

गोधूमादि, प्रेष्यवर्गः=दासीदासवर्गः, तेषु-धनधान्यप्रेष्यवर्गविषये इत्यर्थः, परिग्रहविवर्जनम्-परिग्रहस्य=संग्रहस्य विवर्जनं यावज्जीवं वर्जनम्। साधवो धनधान्यप्रेष्यवर्गाणां संग्रहं यावज्जीवं नैव कुर्वन्तीति भावः। तथा-सर्वारम्भपरित्यागः-सर्वे ये आरम्भाः=द्रव्याद्युपार्जनरूपाः सावद्यव्यापारास्तेषां परित्यागश्च यावज्जीवं कर्तव्यः। अनेन निराकाङ्क्षत्वमुक्तम्। तथा सर्वत्र निर्ममत्वम्=ममेति भावराहित्यं च यावज्जीवं धारयितव्यम्। एतत्सर्वं सुदुष्करम्=आचरितुमशक्यम्। अनेन पञ्चममहाव्रतस्य सुदुष्करत्वं सूचितम् ॥२९॥

किं च—'धणधन्न०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र! साधु (धणधन्नपेसवग्गेसु-धनधान्यप्रेष्यवर्गेषु) धन, धान्य एवं प्रेष्य-दासी, दास आदिके विषय में (परिग्गहविवज्जण-परिग्रहविवर्जनम्) संग्रह करनेका परित्याग यावज्जीव कर देता है। तथा (सव्वारंभपरिच्चाओ-सर्वारंभपरित्यागः) द्रव्यादिक की उपार्जनरूप आरंभ का भी वह त्यागी होता है एवं (निम्ममत्त-निर्ममत्वम्) उसको किसी भी वस्तु में कहीं पर भी 'यह मेरी है' इस प्रकार का भाव नहीं करना चाहिये। सो यह सब (सुदक्करम्-सुदुष्करम्) तुम्हारे से बेटा! यावज्जीव नहीं सध सकता है। यह मार्ग बहुत ही कठीनतम है। इस गाथा द्वारा पंचममहाव्रत की दुष्करता प्रकट की है।

भावार्थ—मातापिताने मृगापुत्र को यह भी समझाया कि बेटा! साधु अवस्था मे साधुको यावज्जीव धन, धान्य, दासी, दास आदिका एवं समस्त आरंभ का परित्याग करदेना पडता है। तथा किसी भी ठिकाने उसको 'यह मेरा है' इस प्रकार का भाव को छोड देना पडता

વળી પણ—"धणधन्ना" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર! સાધુ धणधन्नपेसवग्गेसु-धनधान्यप्रेष्यवर्गेषु ધન ધાન્ય અને દાસી, દાસ આદિના વિષયમા परिग्गहविवज्जणा-परिग्रहविवर्जनम् સંગ્રહ કરવાનો ત્યાગ જીંદગીભર કરી દેવો પડે છે વળી सव्वारंभपरिच्चाओ-सर्वारंभपरित्यागः દ્રવ્યાદિકના ઉપાર્જરૂપ આરંભનો પણ તે ત્યાગી હોય છે, તેમ જ કોઈ निम्ममत्त-निर्ममत्व કોઈ પણ વસ્તુમા "આ મારી છે" આ પ્રકારનો ભાવ કરાતો નથી માટે હે પુત્ર! આ સઘળુ सुदुकरम्-सुदुष्करम् તમારાથી જીંદગીપર્યંત સાધી શકાવાનુ નથી આ માર્ગ ઘણો જ કઠીન છે આ ગાથા દ્વારા પાચમા મહાવ્રતની દુષ્કરતા પ્રગટ કરવામા આવેલ છે

ભાવાર્થ—માતાપિતાએ મૃગાપુત્રને એ પણ સમજાવ્યુ કે, હે બેટા! સાધુ અવસ્થામા સાધુએ જીંદગીભર ધન, ધાન્ય, દાસ, દાસી આદિનો તેમ જ સઘળા આરંભનો પરિત્યાગ કરી દેવો પડે છે વળી કોઈ પણ ઠેકાણે "આ મારૂ છે" આ

=दुःख हेतुः शय्या वसतिश्च । तृणस्पर्शाः=संस्तारके तृणस्पर्शजनितपरीषहाः । तथा-जल्लमेव च=मलपरीषहश्च ॥३१॥

उक्त व्रतों की दुष्करता कह कर अब परीषहों के सहन करने की दुष्करता को कहते हैं—'छुहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(छुहा तण्हा य सीउण्हं दंसमसगवेयणा अक्कोसा दुक्खसेज्जा य तणफासा जल्लमेव य-क्षुधा तृष्णा शीतोष्ण दंशमशक-वेदना आक्रोशा दुःखशय्या तृणस्पर्शा जल्ल एव च) क्षुधा परीषह, तृषा परीषह, शीतोष्ण परिषह दंशमशकपरीषह, आक्रोशपरीषह, दुःखशय्या-परीषह, तृणस्पर्शपरीषह, तथा मलपरीषह, । क्षुधा के दुःखको सहन करना क्षुधापरीषह है । प्यास के दुःखको समता से सहन करना तृषापरीषह है । शर्दी गर्मी की पीडा को सहन करना शीतोष्ण परीषह है । दंशमशक जीवो के काटने आदि से होनेवाले दुःखको सहन करना दंशमशकवेदनापरीषह है । दुर्वचनों को शांति से सहन करना आक्रोश परीषह है । नीची उंची जमीन मे उठने बैठने आदि के दुःख को सहन करना दुःखशय्या परीषह है। संस्तारक (शय्या) मे तृण स्पर्श जनित दुःख को सहन करना तृणस्पर्शपरीषह है । शरीर पर जमे हुए मैल के दुःखको सहन करना जल्लपरीषह है ॥३१॥

છએ વ્રતોની દુષ્કરતા કહીને હવે પરીષહોને સહન કરવાની દુષ્કરતાને કહે છે—"छुहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—छुहा तण्हाय सीउण्ह दसमसगवेयणा-क्षुधा तृष्णा शीतोष्ण दंशमशकवेदना ક્ષુધા પરીષહ, તૃષ્ણા પરીષહ, દંશ-મચ્છર પરીષહ, अक्कोसा दुक्ख सेज्जा य तणफासा जल्लमेव य-आक्रोशा दुःखशय्या तृणस्पर्शा जल्ल एव આક્રોશ પરીષહ, દુઃખશય્યા પરીષહ, તૃણસ્પર્શ પરીષહ તથા મળ પરીષહ ભૂખના દુઃખને સહન કરવુ તે ક્ષુધા પરીષહ છે તરસના દુઃખને સમતાપૂર્વક સહન કરવુ તે તૃષા પરીષહ શરદી અને ગરમીની પીડાને સહન કરવી તે શીતોષ્ણ પરીષહ છે ડાંસ-મચ્છર વગેરે જીવોના કરડવાથી જે દુઃખ સહન કરવુ પડે છે તેને દંશમશકવેદના પરીષહ કહે છે દુર્વચનોને શાંતિપૂર્વક સહન કરવા તે આક્રોશ પરીષહ છે નીચી ઊંચી જમીનમા બેસવુ, ઉઠવુ આદિ દુઃખને સહન કરવુ તે દુઃખશય્યા પરીષહ છે સંસ્તારકમા તૃણસ્પર્શથી ઉત્પન્ન થનારા દુઃખને સહન કરવુ તે તૃણસ્પર્શ પરીષહ છે શરીર ઉપર જામેલા મેલના દુઃખને સહન કરવુ તે જલ્લ પરીષહ છે ॥૩૧॥

एवं पञ्चमपि व्रतानां दुष्करतामभिधाय सम्प्रति परीषहसहनदुष्करतां गाथाद्वयेन प्रोच्यते—

मूलम्—छुहा तण्हा य सीउण्हं, दंसमसगवेयणा ।
अक्कोसा दुक्खसेज्जा य, तणफासा जल्लमेव य ॥३१॥
तालणा तज्जणा चेव, वहबंधपरीसहा ।
दुक्खं भिक्खायरिया, जायणा य अलाभया ॥३२॥

छाया—क्षुधा तृष्णा च शीतोष्णं, दंशमशकवेदना ।
आक्रोशा दुःखशय्या च, तृणस्पर्शा जल्लमेव च ॥३१॥
ताडना तर्जना चैव, वधबन्धपरीषहौ ।
दुःखं भिक्षाचर्या, याचना च अलाभता ॥३२॥

टीका—'छुहा' इत्यादि ।

क्षुधा तृष्णा च, शीतोष्णं, तथा-दंशमशकवेदना=दंशमशककृतदशनजनित दुःखानुभवरूपा । आक्रोशाः=दुर्वचनादिरूपा । दुःखशय्या=विषमोन्नतत्वाद् दुःखा

तुम से पालना कठीन लगता है। इस से षष्ठव्रत में दुष्करता कही है।

भावार्थ—रात्रिभोजन त्यागरूप जो छठा व्रत है वह भी बेटा! तुम से नहीं सध सकता है। क्यों कि इसमे चारों प्रकार के आहार का जीवनपर्यन्त साधु को त्याग करदेना होता है। तथा वह रात्रिमे घृत गुडादिक का भी संचय नहीं कर सकता है। यावज्जीव इसका भी उसको त्याग करदेना होता है। अतः तुम से यह व्रत कैसे पालित होगा, अर्थात् पालित होना अत्यंत मुश्किल है। हे बेटा! मुझे बडा संदेह है ॥३०॥

લાગે છે કે, હે બેટા! તમારાથી આમાનું કશું પણ પાળી શકાશે નહીં આમાં છઠ્ઠા વ્રતની દુષ્કરતા બતાવવામાં આવેલ છે

ભાવાર્થ—રાત્રિભોજનના ત્યાગરૂપ જે છઠ્ઠું વ્રત છે તે પણ બેટા! તમારાથી પાળી શકાય તેમ નથી કારણ કે તેમાં ચારે પ્રકારના આહારનો સાધુએ જીવનપર્યંત ત્યાગ કરી દેવાનો હોય છે વળી તે રાત્રિના સમયમાં ઘી, ગોળ આદિ વસ્તુઓ રાખી શકતા નથી જીંદગીપર્યંત તેનો પણ ત્યાગ કરી દેવો પડે છે આથી હે બેટા! આ વ્રત તમારાથી કઇ રીતે પાળી શકાશે તેનો અમોને ભારે સંદેહ છે ॥ ૩૦ ॥

=दुःख हेतुः शय्या वसतिश्च । तृणस्पर्शाः=संस्तारके तृणस्पर्शजनितपरीषहाः । तथा-जल्लमेव च=मलपरीषहश्च ॥३१॥

अहीं व्रतों की दुष्करता कह कर अब परीषहों के सहन करने की दुष्करता को कहते हैं—'छुहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(छुहा तण्हा य सीउण्हं दंसमसगवेयणा अक्कोसा दुक्खसेज्जाय तणफासा जल्लमेव य-क्षुधा तृष्णा शीतोष्णं दंशमशकवेदना आक्रोशा दुःखशय्या तृणस्पर्शा जल्ल एव च) क्षुधा परीषह, तृषापरीषह, शीतोष्ण परिषह दंशमशकपरीषह, आक्रोशपरीषह, दुःखशय्यापरीषह, तृणस्पर्शपरीषह, तथा मलपरीषह, । क्षुधा के दुःखको सहन करना क्षुधापरीषह है । प्यास के दुःखको समता से सहन करना तृषापरीषह है । शर्दी गर्मी की पीडा को सहन करना शीतोष्ण परीषह है । दंशमशक जीवों के काटने आदि से होनेवाले दुःखको सहन करना दंशमशकवेदनापरीषह है । दुर्वचनों को शांति से सहन करना आक्रोश परीषह है । नीची उची जमीन मे उठने बैठने आदि के दुःख को सहन करना दुःखशय्या परीषह है। संस्तारक (शय्या) में तृण स्पर्श जनित दुःख को सहन करना तृणस्पर्शपरीषह है । शरीर पर जमे हुए मैल के दुःखको सहन करना जल्लपरीषह है ॥३१॥

છઆે વ્રતોની દુષ્કરતા કહીને હવે પરીષહોને સહન કરવાની દુષ્કરતાને કહે છે—"छुहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—छुहा तण्हाय सीउण्हं दसमसगवेयणा—क्षुधा तृष्णा शीतोष्ण दंशमशकवेदना ક્ષુધા પરીષહ, તૃષ્ણા પરીષહ, દંશ-મચ્છર પરીષહ, अक्कोसा दुक्ख सेज्जा य तणफासा जल्लमेव य–आक्रोशा दुःखशय्या तृणस्पर्शा जल्ल एव આક્રોશ પરીષહ, દુઃખશય્યા પરીષહ, તૃણસ્પર્શ પરીષહ તથા મળ પરીષહ ભૂખના દુઃખને સહન કરવું તે ક્ષુધા પરીષહ છે તરસના દુઃખને સમતાપૂર્વક સહન કરવું તે તૃષા પરીષહ શરદી અને ગરમીની પીડાને સહન કરવી તે શીતોષ્ણ પરીષહ છે ડાંસ-મચ્છર વગેરે જીવોના કરડવાથી જે દુઃખ સહન કરવું પડે છે તેને દંશમશકવેદના પરીષહ કહે છે દુર્વચનોને શાંતિપૂર્વક સહન કરવા તે આક્રોશ પરીષહ છે નીચી ઊંચી જમીનમાં બેસવું, ઉઠવું આદિ દુઃખને સહન કરવું તે દુઃખશય્યા પરીષહ છે સંસ્તારકમાં તૃણસ્પર્શથી ઉત્પન્ન થનારા દુઃખને સહન કરવું તે તૃણસ્પર્શ પરીષહ છે શરીર ઉપર જામેલા મેલના દુઃખને સહન કરવું તે જલ્લ પરીષહ છે ॥૩૧॥

तथा—'तालणा' इत्यादि ।

ताडना=चपेटाद्याघातरूपा, तर्जना=अङ्गुलिभ्रमणभ्रूक्षेपादिरूपा । तथा-वधबन्धपरीषहौ वधो लकुटादिप्रहारः, बन्धः=रज्ज्वादिभिर्हस्तादीनां बन्धनं, तावेव परिषहौ, वधबन्धपरीषहौ। तथा-भिक्षाचर्या=भिक्षार्थपरिभ्रमणरूपा। तथा-याचना, च=पुनः याचनायां कृतायामपि अलाभता=अप्राप्तिरूपा । उपलक्षणत्वादन्यसकलपरीषहाश्च । एते सर्वे 'दुःख' मिति दुःखरूपा भवन्ति । आवृत्त्या दुःखशब्दस्य सर्वत्रान्वयः कर्तव्यः । 'अलाभता' इत्यत्र स्वार्थिकस्तल् । यद्वा-कृतबहुव्रीहेरलाभशब्दात्तल् ॥३२॥

तथा—'तालणा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तालणा तज्जणा चेव वहबंध परीसहा-ताडना तर्जना चैव वधबंध परीषहौ) ताडना-तर्जना, वध, बंध (भिक्खायरिया जायणा अलाभता दुक्ख-भिक्षाचर्या याचना अलाभता) भिक्षाचर्या, याचना एवं अलाभता ये सब दुःखरूप हैं। थप्पड आदि मारने का नाम ताडना है। अंगुलि द्वारा संकेत करते हुए कुत्सित वचनों द्वारा अपमानित करना तर्जना है। लकडी आदि द्वारा आघात करने का नाम वध है। रज्जु आदि द्वारा हाथ आदि के बांधने का नाम बंध है।

भावार्थ—मृगापुत्र से मातापिता यह कह रहे हैं कि बेटा! साधुचर्या इसलिये भी कठिन है कि उस में साधु ताडित होने पर कभी भी उसका प्रतिकार नहीं कर सकता है। उसको चाहे भी कोई जैसे चाहे वैसे मार सकता है। हरएक कोई डांट डपट कर सकता है। रस्सी आदि द्वारा उसके हाथ पैर भी बांध सकता है। ये सब दुःख

તથા—"तालणा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—भिक्खायरिया जायणा अलाभता दुक्ख-भिक्षाचर्या याचना अलाभता दुःख ભિક્ષાચર્યા, યાચના અને અલાભતા એ સઘળા દુઃખરૂપ છે तालणा तज्जणा चेव वहवध परीसहा-ताडना तर्जश्चैव वधवन्ध परीषहौ થપ્પડ વગેરેનું મારવું એનું નામ તાડના છે આંગળીથી સંકેત કરીને કુત્સિત વચનોથી અપમાનિત કરવું તે તર્જના છે, લાકડી વગેરેથી આઘાત પહોચાડવો તેનું નામ વધ છે, દોરી વગેરેથી હાથ વગેરેને બાંધવા તેનું નામ બંધ છે

ભાવાર્થ—મૃગાપુત્રને માતાપિતા આમ કહી રહ્યા હતા કે બેટા! સાધુચર્યા એટલા માટે કઠણ છે કે જેમાં સાધુ મારવા છતાં પણ તેનો પ્રતિકાર કરી શકતા નથી તેમને કોઈ પણ ચાહે તે પ્રકારે મારી શકે છે હરકોઈ એને ધાકધમકી આપી શકે છે દોરડાથી તેના હાથપગ બાંધી શકે છે આ સઘળા દુઃખ આવી પડતાં સાધુએ સમતાપૂર્વક સહન કરવાં જોઈએ, નહીં તો તે સાધુ નથી જો થોડી

पुनरपि श्रामण्यदुष्करतां प्रदर्शयति—

मूलम्—कावोया जा इमा वित्ती, केसलोओ य दारुणो।
दुक्खं बंभव्वयं घोरं धारेउं अमहप्पणा ॥३३॥

छाया—कापोती या इय वृत्तिः, केशलोचश्च दारुणः।
दुःखं ब्रह्मव्रतं घोरं, धारयितुममहात्मना ॥३३॥

टीका—'कावोया' इत्यादि।

साधूनां या इयं वृत्तिः=संयम यात्रा निर्वहणोपायरूपा सा कापोती=कपोताः—पक्षि विशेषास्तेषामिय कापोती, कापोती—इव कापोती, कपोतवृत्तितुल्या। यथा कपोता नित्यशङ्किताः स्वाहारग्रहणे प्रवर्त्तन्ते, कृताहारास्ते द्वितीय दिवसार्थं न किमपि संगृह्णन्ति। यावतोदरपूर्तिर्भवति, तावदेव गृह्णन्ति। एवमेव साधवोऽप्येषणादोषेभ्यो नित्य शङ्कमाना आहारग्रहणे प्रवर्त्तन्ते। आहार

है। इनको समतापूर्वक साधु को सहन करना चाहिये। नहीं तो वह साधु नहीं है। यदि थोडी देरके लिये मान लिया जाय कि ये बातें साधुअवस्था में सब के साथ घटित नहीं हो सकती हैं तो भी भिक्षा-चर्या तो सबको करनी ही पडती है। यह क्या कम दुःखकी बात है? इसी तरह याचना करना तथा याचना करने पर भी मांगी हुई वस्तु नहीं मिलना यह तो और भी अधिक कष्ट है। अतः बेटा! इस साधु बनने के आग्रह को छोड दो। इसके होने में बडे दुःख है ॥३२॥

फिर भी श्रामण्य की दुष्करता दिखलाते हैं—'कावोया' इत्यादि।

अन्वयार्थ—साधुजनों की (जा—या) जो (इमा—इयम्) यह संयम-यात्रा के निर्वहन के उपायरूप (कावोया—कापोती) कापोती (वित्ती—वृत्ति) वृत्ति है यह बडी दारुण है। तथा (केसलोओय दारुणो—केशलोचश्च दारुण)

વાર માટે એમ માની લેવામાં આવે કે આવી બધી વાતો સાધુઅવસ્થામાં સઘળાને બનતી નથી, પરંતુ ભિક્ષાચર્યા તો બધાએ કરવી જ પડે છે એ શું ઓછા દુઃખની વાત છે? આ પ્રમાણે યાચના કરવી અને યાચના કરવા છતાં પણ માગેલી વસ્તુ ન મળે તે અતિ દુઃખદ છે, માટે હે બેટા! આ સાધુ બનવાના આગ્રહને છોડી દે કારણ કે સાધુ બનવામાં ભારે દુઃખ છે ॥ ૩૨ ॥

છતાં પણ શ્રામણ્યની દુષ્કરતા બતાવે છે—"कावोया" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—સાધુજનોની जा—या જે इमा—इयम् આ સંયમયાત્રાના નિર્વાહના ઉપાયરૂપ कावोयावित्ती—कापोतीवृत्ति કાપોતિ વૃત્તિ છે તે ખૂબ કઠીન છે તથા केसलोओय दारुणो—केशलोचश्च दारुण. વાળોને—કેશને ઉખેડવા

कृत्वा निमित्ति संग्रह न कुर्वन्ति । सा गतिरनुसरन्दन दारुणा, दारयति विदा रयति कातरमनांसि या सा दारुणा=भयङ्करा । च=पुन -केशलोच =केशोत्पाटन दारुण =भयङ्कर. । उपलक्षण चैतत्-उचितसमयप्रतिलेखना स्वाध्याय ध्याना नियतवासादि समस्तोत्तरगुणानाम् । च=पुन अमहात्मना=अस्थिरात्मना कात रेण घोर ब्रह्मव्रत=ब्रह्मचर्यव्रत धारयितु=पालयितु दुःखम्=दुष्करम् । पूर्वमुक्तस्य ब्रह्मचर्यस्य पुनरभिधानमतिदुष्करत्वख्यापनार्थम् । 'दारुण' शब्दस्यावृत्त्येन्द्रि विपर्यासेनान्वय. ॥३३॥

केशों का उखाडना यह भी बहुत दारुण है। इसी तरह उभयकाल भण्डोपकरण की प्रतिलेखना करना, स्वाध्याय करना, ध्यान करना, अनियतवास होना यह सब दारुण-कठिन है। तथा (अमहप्पणा घोर बभन्वय धारेउ दुक्ख-अमहात्मना घोर ब्रह्मव्रत धारयितु दु.खम) कायर जन द्वारा घोर ब्रह्मचर्यव्रत का आराधन करना भी बडा ही कठिन है।

भावार्थ—जिस प्रकार कबूतर शंकितचित्त होकर अपने आहार की खोज मे निकलते हैं और जब उनको जितना भी आहार मिल जाता है उसको खा पीकर कलकी चिन्ता से रहित हो जाते है तथा दूसरे दिनके लिये उसका संग्रह नहीं करते है। जितनी आवश्यकता होती है उसी प्रमाण ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार साधु भी एषणा दोषों से शंकितचित्त होकर आहार के ग्रहण मे प्रवृत्त होते हैं। जितना भी जो अपने उदरपूर्ति के निमित्त मिल जाता है उसको खा पीकर अपने कर्तव्य मे लग जाते है। कलकी चिन्ता नहीं रखते और न उसका संग्रह भी कलके लिये करते है। तथा इस अवस्था म साधुको

એ પણ ખૂબ જ કઠણ છે આ પ્રમાણે યોગ્ય સમયે પ્રતિલેખન કરવુ, સ્વાધ્યાય કરવુ, ધ્યાન કરવુ, અનિયતવાસ કરવો એ સઘળુ કઠણ છે अमहप्पणा घोर वभव्वय धारेउ दुक्ख-अमहात्मना घोर ब्रह्मव्रत धारयितु दु खम् કાયર જનો માટે ઘોર બ્રહ્મચર્યવ્રતનુ આરાધન કરવુ એ પણ ખૂબ જ કઠણ છે

ભાવાર્થ—જે પ્રમાણે કબૂતર શકિત મનથી પોતાના આહારની શોધમા નીકળે છે અને જ્યારે તેને થોડોઘણો આહાર મળે છે તે ખાઇ પીઇને કાલની ચિતાથી એ મુક્ત બની જાય છે તથા બીજા દિવસના આહાર માટે પણ તેનો સગ્રહ કરતા નથી જેટલી આવશ્યકતા હોય છે એટલા જ પ્રમાણમા તે ખાય છે આ પ્રમાણે એષણ દોષોથી શકિત ચિત્ત થઇને આહાર ગ્રહણ કરવામા સાધુ પ્રવૃત્ત થાય છે પોતાના ઉદરની પૂર્તિના નિમિત્તે જેટલુ પણ મળે છે એને ખાઇપીને તે પોતાના કર્તવ્યમા લાગી જાય છે, કાલની ચિતા રાખતા નથી તેમ જ કાલ માટે સગ્રહ

एवं षण्णां व्रतानां दुष्करतां परीषहसहनदुष्करतां चाभिधाय स्वरक्तव्यमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—सुहोइओ तुमं पुत्ता, सुकुमालो सुमज्जिओ।
न हुंसि पहू तुमं पुत्ता!, सामण्णमणुपालिउं ॥३४॥

छाया—सुखोचितस्त्वं पुत्र!, सुकुमारः सुमज्जितः।
न भवसि प्रभुस्त्वं पुत्र!, श्रामण्यमनुपालयितुम् ॥३४॥

टीका—'सुहोइओ' इत्यादि।

हे पुत्र! त्वं सुखोचितः—सुखं=सातं तस्य उचितो=योग्योऽसि, सुकुमारः सुकोमलः, सुमज्जितः=सुस्नपितः, उपलक्षणत्वात्—सकलनेपथ्यभूषितश्चासि। अतो हे पुत्र! त्वं श्रामण्यं=पूर्वोक्तगुणरूपं चारित्रमनुपालयितुं प्रभुः समर्थो न भवसि=

अपने केशों का लोच भी करना पडता है। ब्रह्मचर्यव्रत की आराधना करनी पडती है। बेटा! ये सब वृत्तियां तुम से आचरित जन्मभर नहीं हो सकती है। क्यों कि ये सब बडी दारुण है। अतः घर पर ही रहो ॥३३॥

छह व्रतोंकी तथा परीषह सहन करने की दुष्करता को दिखलाकर उपसंहार करते हुए मृगापुत्र के मातापिता अपना कर्तव्य कहते हैं—

'सुहोइओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पुत्ता–हे पुत्र!) हे पुत्र! (तुमं सुहोइओ–त्वं सुखोचित) तुम तो सुख भोगने के लायक हो। कारण कि (सुकुमालो–सुकुमार) तुम सुकुमार हो। (सुमज्जिओ–सुमज्जित) तुमको मैंने अच्छी तरह से स्नान, गंध, लेपन एवं आभूषण आदि से सुसंस्कृत कर पाला पोसा है। (पुत्ता तुमं सामण्णमणुपालिउं पहू न हुंसि—

પણ કરતા નથી આ અવસ્થામાં સાધુએ પોતાના વાળનો લોચ કરે છે, બ્રહ્મચર્ય વ્રતની આરાધના કરવી પડે છે બેટા! આ સઘળી વૃત્તિઓ તારાથી જન્મભર આચરી શકાશે નહીં કારણ કે, તે ખુબ જ કઠણ છે, માટે ઘેર જ રહો ॥ ૩૩ ॥

છએ વ્રતોનો તથા પરીષહ સહન કરવાની દુષ્કરતા બતાવીને ઉપસંહાર કરતા મૃગાપુત્રના માતાપિતા પોતાના અભિપ્રાયને કહે છે—"सुहोइओ" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—પુત્તા–પુત્ર હે પુત્ર! तुमं सुहोइओ–त्वं सुखोचित તારી ઉંમર સુખ ભોગવવાને લાયક છે, કારણ કે, તું सुकुमालो–सुकुमार સુકુમાર છે તને મેં सुमज्जिओ–सुमज्जित સારી રીતે સ્નાન, ગંધ, લેપન વગેરેથી તથા આભૂષણ વગેરેથી સુસજ્જીત કરીને પાળેલ પોષેલ છે पुत्ता तुमं समण्णमणुपालिउं पहु न

नास्ति। यो हि सुखोचितः सुकुमारः सुखोचित आदियुक्तस्तत्र श्रामण्यमनुपालयितुं समर्थो भवितुं नार्हतीति भावः ॥३४॥

असमर्थतामेव दृष्टान्तैः समर्थयन्नाह—

मूलम्—जावज्जीवमविस्सामो, गुणाणं तु महब्भरो।
गरुओ लोहभारोव्व, जो पुत्ता! होइ दुव्वहो ॥३५॥

छाया—यावज्जीवमविश्रामो, गुणानां तु महाभरः।
गुरुको लोहभार इव, यः पुत्र! भवति दुर्वहः ॥३५॥

टीका—'जावज्जीव' इत्यादि।

हे पुत्र! चारित्रसम्बन्धिनां गुणानां=मूलोत्तरगुणानां तु यो महाभरः=महाभारः स लोहभार इव गुरुको=गरिष्ठः, तथा-यावज्जीवम् अविश्रामः=नास्ति विश्रामो यस्मिन् स तथा, अत एव दुर्वहः=दुःखेन वोढव्यो भवति।

भो पुत्र! त्वं श्रामण्यमनुपालयितुम् प्रभुः न भवसि) अतः तुम पूर्वोक्तगुणवाले इस श्रामण्य पद को पालन करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हो। जो सुखोचित सुकुमार एवं सुमज्जित नहीं होता, हे पुत्र! वही इस श्रामण्यपदको कदाचित् पाल सकता है। तुम्हारे जैसे लाडले राजकुमार नहीं ॥३४॥

अब चारित्र पालनेकि असमर्थता को दृष्टान्तों से कहते हैं—

'जावज्जीव' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पुत्ता-पुत्र) हे पुत्र! (गुणाण-गुणानाम्) चारित्र संबधी मूलगुणों एवं उत्तरगुणों का भार कोई मामूली भार नहीं है यह तो (महब्भरो-महाभार) बहुत भारी भार है। (लोहभारोव्व गरुओ-लोहभार इव गुरुक) लोहेका जैसा भार बहुत भारी होता है ऐसा

हुसी—हे पुत्र त्वं श्रमण्यमनुपालयितु प्रभु न भवसि આથી તુ આગળ કહેલા ગુણવાળા આ શ્રામણ્ય પદનુ પાલન કરવાને માટે સમર્થ થઈ શકીશ નહીં જે સુખમાં ઉછરેલ સુકુમાર અને સુમજ્જીત નથી હોતા તે શ્રામણ્યપદને કદાચિત પાળી શકે છે પરતુ હે બેટા! તારા જેવા લાડીલા રાજકુમાર નજ પાળી શકે ॥ ૩૪॥

હવે ચારિત્રપાલનની અસમર્થતાને દૃષ્ટાતથી કહે છે—"जावज्जीव" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—पुत्ते-पुत्र હે પુત્ર! गुणाण-गुणानाम् ચારિત્ર સબધી મૂળ ગુણો અને ઉત્તર ગુણોનો ભાર તે કોઈ મામુલી ભાર નથી महब्भरो-महाभार ઘણોજ ભારે ભાર છે लोहभारोव्व गरुओ-लौहभार इव गुरुक લોઢાનો ભાર જેમ ખૂબ

अय भावः—अन्यो गुरुभारो यदा वोढु न शक्यते, तदा त भार कचित् प्रदेशे विमुच्य विश्रामो गृह्यते। किन्तु चारित्रगुणभारमेकवार गृहीत्वा न कदापि मोचनीयो भवति। स तु यावज्जीव धारणियो भवति। त्व तु सुखोचितः सुकुमार, सुमज्जितश्चासि। अत एव त्व चारित्रसम्बन्धिमूलोत्तरगुणमहाभार नैव वोढु शक्नोषीति ।३५॥

किं च—

मूलम्--आगासे गगसोओव्वं, पडिसोओव्व दुत्तरो।
वाहाहि सागरो चेव, तरियव्वो गुणोदही ॥३६॥

छाया--आकाशे गङ्गास्रोत इव, प्रतिस्रोत इव दुस्तर'।
बाहुभ्यां सागर इव, तरीतव्यो गुणोदधिः ॥३६॥

भारी है। इसीलिये (दुव्वहो होइ–दुर्वहः भवति) यह दुर्वह है। इसको उठानेवाले व्यक्ति के लिये कभी भी (अविस्सामो–अविश्रामः) विश्राम नहीं मिल सकता है, अर्थात् इस भारको जावज्जीव उठाना पडता है।

भावार्थ—लोहेका जैसा भार बहुत भारी होता है उसी प्रकार इस चारित्र का भार है। इसको उठानेवाले व्यक्तिको कभी भी विश्रान्ति नही मिलती है। तथा लौकिक भार जब उठानेवाले को व्यथित कर देता है तब वह उसको उतार कर विश्राम भी ले सकता है। किन्तु इस चारित्र गुणके लोकोत्तर भार को एक बार अगीकार किया कि फिर इसको उतारा नही जाता है। यावज्जीव ही यह धारण करने योग्य होता है। अतः जब तुम सुखोचित सुकुमार एव सुमज्जित हो तब कहो तो सही बेटा! तुम इसको यावज्जीव कैसे उठा सकोगे? ॥३५॥

भारे હોય છે તે પ્રમાણેનો આ ભાર ભારે છે આથી તે दुव्वहो होइ–दुर्वह' भवति વહન ન થઈ શકે તેવો છે તેને ઉપાડવાવાળી વ્યક્તિના માટે કદી પણ अविस्सामो –अविश्राम' વિશ્રામ મળી શકતો નથી અર્થાત્ આ ભારને જીવનપર્યંત ઉઠાવવો પડે છે

ભાવાર્થ—લોઢાનો ભાર જેમ ઘણો જ ભારે હોય છે તેજ પ્રકારનો ચરિત્રનો ભાર છે તેને ઉપાડવાવાળી વ્યક્તિને કયારેય પણ વિશ્રાંતિ મળતી નથી લૌકિક ભાર જ્યારે ઉઠાવવાવાળાને વ્યથિત કરી દે છે ત્યારે તે તેને ઉતારીને વિશ્રામ પણ લઈ શકે છે પરંતુ આ ચારિત્રગુણના લોકોત્તર ભારનો એક વખત અંગિકાર કર્યા પછી તેને પાછો ઉતારી શકાતો નથી તે જીવનપર્યંત ધારણ કરવાને માટે જ હોય છે માટે જ્યારે તું સુખોચિત સુકુમાર અને સુમજ્જીત છે ત્યારે કહો તો બેટા! તમો એ ભારને જીંદગીપર્યંત કઈ રીતે ઉઠાવી શકશો? ॥ ૩૫ ॥

टीका—'आगासे' इत्यादि।

हे पुत्र! अयं गुणोदधिः—गुणाः=ज्ञानादयस्त एव उदधिः=समुद्रो दुस्तरत्वाद् गुणोदधिः=गुणसमुद्रः आकाशे गङ्गास्रोत इव=आकाशगामिन्या गङ्गायाः स्रोत इव दुस्तरः। लोकरूढ्येदमुक्तम्। तथा—अन्यनदीनां प्रतिस्रोत इव=प्रतिकूलधारेव दुस्तरः। तथा—बाहुभ्यां सागर इव तरीतव्योऽयं गुणमहोदधिः। यथा—बाहुभ्यां समुद्रो दुस्तरः, तथा गुणोदधिरपि दुस्तरः। वाङ्मनःकायनियन्त्रणस्य दुःशक्यत्वाद् गुणोदधितरणं दुष्करमिति सूत्राशयः ॥३६॥

किंच—'आगासे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र! (गुणोदही—गुणोदधिः) गुणोदधि—ज्ञानादिक गुणरूप समुद्र (आगासे गंगसोओव्व—आकाशे गंगास्रोत इव) आकाशगामी गंगा के प्रवाह समान दुस्तर है। अथवा (पडिसोओव्व दुत्तरो—प्रतिस्रोत इव दुस्तरः) प्रतिकूल स्रोत के समान तैरना अशक्य है। अथवा (बाहाहिं सागरो चेव तरियव्वो—बाहुभ्यां सागर इव तरीतव्यः) बाहुओं द्वारा जैसे सागर पार करना सर्वथा अशक्य है उसी प्रकार मनवचन एवं काय का नियंत्रण दुःशक्य होने से गुणोदधि का तरण भी तुम्हारे द्वारा सर्वथा असंभव है।

भावार्थ—मातापिता समझाते हुए मृगापुत्र से कह रहे हैं कि बेटा! जिस प्रकार आकाशगामी गंगा का प्रवाह अथवा प्रतिकूल नदी का प्रबल प्रवाह तरा नहीं जा सकता है, और न समुद्र ही बाहुओं द्वारा पार किया जा सकता है उसी प्रकार यह गुणोदधि भी तुम्हारे द्वारा पूर्णरूप से पालित नहीं हो सकता है—पार नहीं किया जा सकता है (आकाश गंगा लौकिक उदाहरण है) ॥३६॥

કિંચ—"आगासे" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર! આ गुणोदही—गुणोदधि ગુણોદધિ-જ્ઞાનાદિક ગુણરૂપ સમુદ્ર आगासे गंगसोओव्व—आकाशे गंगास्रोत इव આકાશગામી ગંગાના પ્રવાહની માફક દુસ્તર છે અથવા पडिसोओव्व दुत्तरो—प्रतिस्रोत इव दुस्तर પ્રતિકુળ સ્રોતની માફક તરવું અશક્ય છે આ પ્રમાણે बाहुहिं सागरो चेव तरियव्वो—बाहुभ्यां सागर इव तरीतव्य બાહુઓથી આવા સમુદ્રને પાર કરવાનું સંપૂર્ણત અશક્ય છે આ પ્રમાણે મનવચન અને કાયાનું નિયંત્રણ કરવું સર્વથા અશક્ય છે આ ગુણોદધિને તરવું પણ તમારા માટે સર્વથા અસંભવ છે

ભાવાર્થ—માતાપિતા સમજાવતા મૃગાપુત્રને કહી રહેલ છે કે, બેટા! જે પ્રમાણે આકાશગામી ગંગાનો પ્રવાહ અથવા પ્રતિકુળ નદીનો પ્રબળ પ્રવાહ તરી શકાતો નથી અને ન તો સમુદ્ર પણ બાહુઓથી પાર કરી શકાય છે આ પ્રમાણે આ ગુણોદધિ પણ તારાથી પૂર્ણપણે પાળી શકાય તેમ નથી-પાર કરી શકાય તેમ નથી ॥૩૬॥

तथा—

मूलम्—वालुयाकवले चेवं, निरस्साए उ संजमे ।
असिधारागमणं चेवं, दुक्करं चरिउं तवो ॥३७॥

छाया— वालुका कवल इव, निरास्वादस्तु संयमः ।
असिधारागमनमिव दुष्करं चरितुं तपः ॥३७॥

टीका—'वालुयाकवले' इत्यादि ।

हे पुत्र ! संयमः=प्राणातिपातविरमणादिरूपः सप्तदशविधः संयमस्तु वालुकाकवल इव निरास्वादः=स्वादवर्जितः=नीरसोऽस्ति । तथा—असिधारागमनमिव= असिः=खड्गस्तस्य धारा=निशिताग्रभागस्तदुपरि गमनं यथा दुष्करं तथैव—तपः= अनशनादिद्वादशविधं चरितुं दुष्करम् ॥३७॥

तथा—'वालुया कवले' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! (संजमे-संयमः) संयम प्राणातिपात विरमण आदिरूप सत्रह प्रकार का संयम (वालुआकवले चेव निरस्साए-वालुकाकवल इव निरास्वादः) वालुका के कवल की तरह स्वादवर्जित है—सर्वथा नीरस है । तथा (असिधारागमणं चेव तवो चरिउं दुक्कर-असिधारागमनमिव तपः चरितुं दुष्करम्) तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलना जैसे दुष्कर है वैसे ही अनशन आदि बारह प्रकार के तपों का तपना भी दुष्कर है ।

भावार्थ—वालुका का कवल सर्वथा जैसे स्वादरहित होता है वैसे ही यह संयम है । एवं अनशन आदि बारह प्रकार के तपों का तपना ऐसा दुष्कर है जैसा दुष्कर तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलना होता है । अतः हे बेटा ! संयम मत लो ॥३७॥

તથા—"वालुया कवले" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર ! संजमे—संयमः સંયમ-પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ રૂપ સત્તર પ્રકારના સંયમ वालुआ कवले चेव निरस्साए—वालुका कवल इव निरास्वादः રેતીના કોળીયાની માફક સ્વાદવર્જીત છે-સર્વથા નીરસ છે તથા તલવારની તીક્ષ્ણ ધાર ઉપર ચાલવા જેવું असिधारागमणं चेव तवो चरिउं दुक्कर—असिधारागमनमिव तपः चरितुं दुष्करम् દુષ્કર છે, એવી જ રીતે અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપોને તપવા એ પણ દુષ્કર છે

ભાવાર્થ—રેતીનો કોળીઓ સર્વથા જેમ સ્વાદ રહિત હોય છે તેવો જ આ સંયમ છે અને અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપોને તપવા એવા દુષ્કર છે, જાણે કે તલવારની દુષ્કર તીક્ષ્ણ ધાર ઉપર ચાલવાનું હોય છે આથી હે બેટા ! સાધુ થવાનું છોડી દો ॥ ૩૭ ॥

तथा—

मूलम्—अहिवेगंतदिट्ठीए, चरित्ते पुत्ते! दुच्चरे।
जवा लोहमया चेवं, चावेयंव्वा सुदुक्करं ॥३८॥

छाया—अहिरिवैकान्तदृष्ट्या, चारित्र पुत्र! दुश्चरम्।
यवा लोहमया इव, चर्वितव्याः सुदुष्करम् ॥३८॥

टीका—'अहि' इत्यादि।

हे पुत्र! साधुः अहिरिव=सर्प इव एकान्तदृष्ट्या चरेत्। अय भावः- यथा सर्प एकान्तदृष्टया=अनन्याक्षिप्तया दृशा मार्गे चरति, तथैव साधुरपि एकान्त दृष्ट्या=अनन्याक्षिप्तया बुद्ध्या चारित्रमार्गे चरेदिति। परन्तु विषयेभ्यो मनसो दुर्निवारत्वादिद चारित्र दुश्चरम्=दुःखेनाचरणीयम्। किं च-इव=यथा लोहमया =लोहनिर्मिता यवाश्चर्वयितव्या दुष्कराः, तथैवेद चारित्र सुदुष्करम्=सुदुश्चरम्। लोहमययवचर्वणवत् चारित्र सुदुष्करमिति भाव ॥३८॥

फिर सुनो—'अहिवेगतदिट्ठीए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र! (अहिवेगतदिट्ठीए—अहिरिव एकान्त दृष्ट्या साधुः मार्गे चरेत्) सर्प जिस प्रकार अपने चलने योग्य मार्ग पर इधर उधर दृष्टि डालकर नहीं चलता है किन्तु उसी एक अपने उसी मार्ग पर दृष्टि जमा कर चलता है उसी तरह साधुका भी यही मार्ग है कि वह भी चारित्र मार्ग पर चलता हुआ इधर उधर न देखकर उसी ओर लक्ष्य लगाकर चलता रहे परन्तु यह चलना रूप (चरित्ते—चारित्रम्) चारित्र (दुक्कर—दुष्करम्) दुष्कर है। क्यों कि मन का विषयों से हटाना बहुत कठिन काम है। तथा (चेव—इव) जैसे (लोहमया जवा—लौहमया यवाः) लौहमय यवा (चावेयन्वा—चर्वितव्याः) चबाना दुष्कर है उसी प्रकार चारित्र भी दुष्कर है।

ફરી સાભળો—"अहिवेगतदिट्ठीए" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—પુત્ર! अहिवेगतदिट्ठीए—अहिरिव एकान्त दृष्टया સર્પ જે પ્રકારે પોતાના ચાલવાના માર્ગથી આડીઅવળી દૃષ્ટિ ફેરવીને ચાલતો નથી, પરંતુ પોતે જે તરફ જાય છે એ તરફ જ સીધી દૃષ્ટિ રાખીને જ ચાલે છે આજ પ્રમાણે સાધુનો પણ એજ માર્ગ છે કે, તે પણ ચારિત્ર માર્ગ ઉપર ચાલતા આડું અવળું ન જોતા એ તરફ જ લક્ષ રાખીને ચાલતા રહે છે પરંતુ આ ચાલવા રૂપ चरित्ते—चारित्रम् ચારિત્ર दुक्कर—दुष्करम् દુષ્કર છે કેમકે મનનું વિષયોથી હટાવવું ઘણું જ કઠણ કામ છે વળી જેમ लोहमया जवा—लौहमया यवा લોઢાના ચણાને चावेयव्वा—चर्वितव्या ચાવવા એ દુષ્કર છે એજ પ્રમાણે ચારિત્ર પાળવું પણ દુષ્કર છે

किं च—

मूलम्—जहा अग्गिसिहा दित्ता, पाउं होइ सुदुक्करा ।
तह दुक्करं करेउं जे, तारुण्णे समणत्तणं ॥३९॥

छाया—यथा अग्निशिखा दीप्ता, पातु भवति सुदुष्करा ।
तथा दुष्करं कर्तुं यत्, तारुण्ये श्रमणत्वम् ॥३९॥

टीका—'जहा' इत्यादि ।

हे पुत्र ! यथा दीप्ता=प्रज्वलिता अग्निशिखा=अग्निज्वाला पातु=पान कर्तुं सुदुष्करा भवति । तथैव तारुण्ये=यौवने श्रमणत्वं=चारित्रं कर्तुं=पालयितु

भावार्थ—चारित्र आराधक पुरुष का यही एक कर्तव्य है कि वह अपने चारित्र की सभाल मे ही अपने जीवन को खपा देवे। इसी लक्ष्य की सिद्धि मे वह अपने को विसर्जित कर देवे। व्यर्थ के झझटों में न पडे। उसकी दृष्टि सर्प की दृष्टि के समान ही अपने लक्ष्य पर स्थिर-अटूट रहनी चाहिये। क्यों कि चारित्र लौहे के चने हैं। इनका मोमके दातो से चबाना जैसे आसान काम नहीं है उसी प्रकार चारित्र का पालना भी आसान काम नही है। अतः बेटा ! हमारी बात मानो-और घर पर ही आनद से रहो ॥३८॥

और भी—'जहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! (जहा-यथा) जैसे (दित्ता-दीप्ता) प्रज्वलित (अग्गिसिहा-अग्निशिखा) अग्नि की ज्वाला (पाउ सुदुक्करा होइ-पातु सुदुष्करा भवति) पीना अत्यन्त दुष्कर है (तह-तथा) उसी प्रकार (तारुण्णे

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધક પુરુષનુ એ જ કર્તવ્ય છે કે તે પોતાના ચારિત્રની સભાળમા જ પોતાના જીવનને ખપાવી દે આજ લક્ષ્યની સિદ્ધિમા તે પોતાને વિસર્જીત કરી દે વ્યર્થ વાતોમા એ પડતા નથી એમની દૃષ્ટિ સર્પની દૃષ્ટિની જેમ પોતાના લક્ષ્ય ઉપર સ્થિર-અતૂટ રહેવી જોઇએ, કેમકે ચારિત્ર એ લોઢાના ચણા ચાવવા જેવુ છે એને ચાવવાનુ કામ જેમ સરળ કામ નથી એજ પ્રમાણે ચારિત્રનુ પાલન કરવુ એ પણ સરળ કામ નથી માટે બેટા ! અમારી વાત સમજો, માનો અને ઘેર રહીને આનદ કરો ॥ ૩૮ ॥

વળી પણ—"जहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર ! जहा-यथा જેમ दित्ता-दीप्ता પ્રજવલિત अग्गिसिहा-अग्नि शिखा અગ્નિની જવાળાને पाउ सुदुकरा होइ-पातु सुदुष्करा भवति પીવી એ

दुष्कर भवति। अग्निशिखापानवत् तारुण्ये चारित्रपरिपालन कर्तुं दुष्करमिति भावः। 'जे' शब्दः पूरणे ॥३९॥

किं च—

मूलम्—जहा दुक्खं भरेउं जे, होइ वायस्स कुत्थलो।
तहा दुक्खं करेउ जे, कीवेणं समणत्तणं ॥४०॥

छाया—यथा दुःख भर्तुं यद्, भवति वातेन कुत्थलः।
तथा दुःखं कर्तुं यद्, क्लीबेन श्रमणत्वम् ॥४०॥

टीका—'जहा' इत्यादि।

हे पुत्र ! यथा कुत्थलः=वस्त्रादिमय 'कोथला' इति प्रसिद्धो वातेन=वायुना भर्तुं दुःख=दुःशकम् असाध्य भवति। तथा-क्लीबेन=कातरेण-निःसत्त्वेन

-तारुण्ये) यौवन में (समणत्तण करेउ दुक्कर-श्रमणत्व कर्तुं दुष्करम्) चारित्र का पालन भी बहुत ही कठिन है।

भावार्थ—चाहे जितना भी समझदार एवं शक्तिशाली मनुष्य क्यों न हो वह दीप्त अग्निशिखा का पान नहीं कर सकता है। इसी तरह पुत्र! जवानी अवस्था मे भी चारित्र का निर्दोष पालन नहीं हो सकता है। अत इस चारित्र पालन के बखेडे छोडो इसी मे भलाई है ॥३९॥

फिर भी—

'जहादुक्ख' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र ! (जहा-यथा) जैसे (कुत्थलो-कुत्थलः) कोथला को (वायस्स भरेउ दुक्ख-वातेन भर्तुं दुःखम्) वायु से भरना असाध्य है-अशक्य है (तहा-तथा) उसी तरह (कीवेण समणत्तण करेउ दुक्ख-क्लीबेन श्रमणत्व कर्तुं दुःखम्) कायर मनुष्य द्वारा चारित्र पालन

અત્યંત દુષ્કર છે तह-तथा એજ પ્રમાણે तारुण्णे-तारुण्ये યૌવનમાં समणत्तण करेउ दुक्कर-श्रमणत्व कर्तुं दुष्करम् ચારિત્રનું પાલન પણ ખૂબ જ કઠણ છે

ભાવાર્થ—ચાહે ગમે તેવો સમજદાર તેમ જ શક્તિશાળી માણસ કેમ ન હોય, પરંતુ તે જે રીતે પ્રજ્વલિત અગ્નિશિખાનું પાન કરી શકતો નથી એજ પ્રમાણે હે પુત્ર! યૌવન અવસ્થામાં ચારિત્રનું નિર્દોષ પાલન પણ થઈ શકતું નથી માટે ડાહ્યો થા અને આ ચારિત્રપાલનના સ્વપ્ન સેવવાનું છોડ એમાં જ તારી ભલાઈ છે ॥૩૯॥

વળી પણ—"जहा दुक्ख" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે પુત્ર जहा-यथा જેવી રીતે कुत्थलो-कुत्थलः કોથળાને वायस्स भरेउ दुक्ख-वातेन भर्तुं दुःखं વાયુથી ભરવો અસાધ્ય છે—અશક્ય છે तहा-तथा એજ પ્રમાણે कीवेण समणत्तण करेउ दुक्ख-क्लीबेन श्रमणत्व कर्तुं

श्रमणत्व=चारित्र कर्त्तुं=पालयितु दु खम्=दुःशकम्–अशक्य भवति। सुकुमारत्वात् सुखोपचितत्वाच्च त्वया नि सत्त्वेन चारित्र पालयितुमशक्यमिति भाव•। 'कुत्थ-लोऽत्र वस्त्रमय एव ग्राह्य•। चर्ममयस्य तु वायुना सुखेन पूरयितु शक्यत्वात्। अत्र 'जे' इय पूरणार्थकम् ॥४०॥

किं च—

मूलम्—जहा तुलाए तोलेउं, दुक्करो मंदरो गिरी।
तहा निहुय निस्संक, दुक्करं समणत्तण ॥४१॥

छाया—यथा तुलया तोलयितुं दुष्करो मन्दरो गिरि•।
तथा निभृत निःशङ्क, दुष्कर श्रमणत्वम् ॥४१॥

टीका—'जहा' इत्यादि।

हे पुत्र! यथा मन्दरो गिरि•=मन्दरः पर्वत तुलया तोलयितु दुष्कर।

करना भी अशक्य है। यहाँ कोथला वस्त्रमय ही ग्रहण किया गया है चर्ममय नहीं। क्यों कि वह तो वायु से पूरित हो जाता है।

भावार्थ—जिस प्रकार वस्त्र का कोथला वायु से पूरित नहीं होता है उसी तरह नि.सत्त्व व्यक्ति द्वारा चारित्र भी पालित नहीं हो सकता है। अत बेटा! जब तुम सुखोचित, सुकुमार एव सुसज्जित हो तो इस से तुम में इतनी शक्ति कहा जो चारित्र का आजीवन पालन कर सको। इसलिये सजम मत लो ॥४०॥

फिर भी—'जहा तुलाए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे पुत्र! (जहा-यथा) जैसे (तुलाए-तुलया) तराजू

दु खम् કાયર મનુષ્ય માટે ચારિત્રનુ પાલન કરવુ પણ અશક્ય છે અહીં કોથળો વસ્ત્રમય જ ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે ચામડાનો કે અન્યનો નહીં, કેમકે તેનામા તો વાયુ ભરી શકાય છે

ભાવાર્થ—જે પ્રમાણે વસ્ત્રના કોથળામા વાયુને પૂરી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે નિ સત્વ વ્યક્તિથી પણ ચારિત્રનુ પાલન થઈ શકતુ નથી આથી હે બેટા! જ્યારે તમો સુખોચિત, સુકુમાર અને સુમજ્જીત છો તો તમારામા એટલી શક્તિ ક્યાથી હોઇ શકે કે, જેથી તમો ચારિત્રનુ આ જીવન પાલન કરી શકો? આ માટે સયમ લેવાનુ માંડી વાળો ॥ ૪૦ ॥

વળી પણ—"जहा तुलाए" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ– હે પુત્ર! जहा–यथा જે રીતે तुलाए–तुलया ત્રાજવાથી मदरो

तथा-निभृत=निश्चल=विषयाभिलाषादिभिरक्षोभ्य, निःशङ्क=शरीरादिनिरपेक्ष श ङ्काख्यसम्यक्त्वातिचाररहित वा श्रमणत्व=साधुत्व दुष्करम्। 'निहुय' इति लुप्तप्रथमान्त पदम् ॥४१॥

अपर च--

मूलम्--जहा भुजाहि तरिउं, दुक्करो रयणायरो ।
तहा अणुवसतेणं, दुक्करो दमसागरो ॥४२॥

छाया--यथा भुजाभ्या तरितु, दुष्करो रत्नाकर. ।
तथा अनुपशान्तेन, दुष्करो दमसागर. ॥४२॥

टीका--'जहा' इत्यादि ।

हे पुत्र! यथा रत्नाकर=समुद्रो भुजाभ्या तरीतु दुष्करः। तथा-अनुपशान्तेन=उत्कटकषाययुक्तेन पुरुषेण दमसागरः=उपशमसमुद्रस्तरितु दुष्करः। इह उपशम प्राधान्यख्यापनार्थं समुद्रेणोपमीयते। पूर्वत्र तु गुणोदधिरित्यनेन सकलगुणानां ग्रहणम्। अतो न पौनरुक्त्यम् ॥४२॥

द्वारा (मदरो गिरि तोलेउ दुक्करो-मन्दर. गिरि' तोलयितु दुष्कर') मेरु पर्वत का तोलना अशक्य है (तहा-तथा) उसी प्रकार (निहुय-निभृतम्) निश्चल-विषयाभिलापा से अक्षोभ्य तथा (निस्सक-नि शक) शरीरादिक निरपेक्ष अथवा शका नाम के अतिचार से रहित (समणत्तण-श्रमणत्वम्) साधुपना भी (दुकर-दुष्करम्) दुष्कर है ॥४१॥

तथा--'जहा भुजाहिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(जहा रयणायरो भुजाहिं तरिउ दुक्करो-यथा रत्नाकरः भुजाभ्या तरितु दुष्कर) जिस तरह समुद्र का भुजाओं द्वारा पार करना अशक्य है। (तहा अणुवसतेण दमसागरो दुक्करो-तथा अनुपशान्तेन दमसागरः दुष्कर.) उसी तरह उत्कट कषाययुक्त प्राणी द्वारा

गिरि तोलेउ दुकरो-मन्दर गिरिः तोलयितु दुष्कर मेरु पर्वतने तोळवो ए अशक्य छे तहा-तथा एज प्रमाणे निहुय-निभृतम् निश्चल-विषयाभिलाषथी अक्षोभ्य तथा निस्सक-नि'शक शरीरादिक निरपेक्ष अथवा शका नामना अतिचारथी रहित समणत्तण-श्रमणत्व साधुपणु पणु खूब ज दुकर-दुष्करम् दुष्कर छे ॥४१॥

तथा--''जहा भुजाहिं' इत्यादि

अन्वयार्थ--जहा रयणायरो भुजाहिं तरिउ दुकरो-यथा रत्नाकर. भुजाभ्या तरितु दुष्कर जे रीते भुजाओथी समुद्रने पार करवो अशक्य छे तहा अणुवसतेण दमसागरो दुकरो-तथा अनुपशान्तेन दमसागरः दुष्कर. एज रीते उत्कृष्ट कषाय

यत एव तस्मात्--

मूलम्--भुंज माणुस्सए भोए, पचलक्खणए तुमं ।
भुत्तभोगी तओ जाया ! पच्छा धम्मं चरिस्ससि ॥४३॥

छाया--भुङ्क्ष्व मानुष्यकान् भोगान, पञ्चलक्षणकान त्वम् ।
भुक्तभोगी ततो जात !, पश्चाद् धर्मं चरिष्यसि ॥४३॥

टीका--'भुंज' इत्यादि ।

हे जात !=हे पुत्र ! त्व पञ्चलक्षणकान=शब्दरूपगन्धरसस्पर्शरूपान् मानुष्यकान्-मनुष्यसम्बन्धिनो भोगान् भुङ्क्ष्व । ततः=तदनन्तर भुक्तभोगी=भुक्ता भोगा भुक्तभोगास्ते सन्त्यस्येति तथा, भुक्तसमस्तभोगस्त्व पश्चाद्=वार्द्धके धर्मं=चारित्र चरिष्यसि=पालयिष्यसि ॥४३॥

उपशमरूप समुद्र पार करना मुश्किल है। पहिले गुणोदधिपद द्वारा समस्त गुणोंका ग्रहण किया गया है यहां सिर्फ एक उपशम गुणका ही ग्रहण किया है, सो यह सब मे प्रधान है, इस बात को प्रगट करने के लिये ग्रहण किया है ॥४२॥

इस प्रकार दृष्टान्त देकर चारित्र की दुष्करता कहकर अब भोगों के लिये निमत्रित करते है-'भुंज' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--इस लिये जब यह बात है तो (जाया !-जात !) हे पुत्र ! (तुम-त्वम्) तुम (पचलक्खणए माणुस्सए भोए भुंज-पचलक्षणकान् मानुष्यकान् भोगान भुङ्क्ष्व) शब्द, रूप, गध, रस एव स्पर्शरूप मनुष्य सबधी भोगों को भोगो (तओ भुत्तभोगी-ततः भुक्त भोगी) बाद मे भुक्तभोगी होकर (पच्छा-पश्चात्) वृद्धावस्था मे (धम्म चरिस्ससि -धर्मं चरिष्यसि) चारित्र की आराधना करना ॥४३॥

युक्त प्राणी द्वारा ઉપશમરૂપ સમુદ્રને પાર કરવો મુશ્કેલ છે પહેલા ગુણોદધિપદ દ્વારા સઘળા ગુણોનુ ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે અહીં ફક્ત એક ઉપશમ ગુણનુ કે જે સહુમા પ્રધાન છે આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે ગ્રહણ કરાયેલ છે ॥૪૨॥

આ પ્રકારે દૃષ્ટાત આપીને ચારિત્રની દુષ્કરતા બતાવીને હવે ભોગોના ઉપભોગ માટે આગ્રહ કરે છે--"भुंज" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ— જ્યારે આમ વાત છે ત્યારે जाया-जात હે પુત્ર ! तुम-त्वम् તમે पचलक्खणए माणुस्सए भोए भुंज-पचलक्षणकान् मानुष्यकान् भोगान् भुङ्क्ष्व શબ્દ, રૂપ, ગધ, રસ અને સ્પર્શરૂપ મનુષ્ય સબધી ભોગોને ભોગવો तओ भुत्त भोगी-तत भुक्तभोगी અને પછીથી ભુક્તિભોગી થઇને पच्छा-पश्चात् વૃદ્ધાવસ્થામા धम्म चरिस्ससि-धर्मं चरिष्यसि ચારિત્રની આરાધના કરજો ॥ ૪૩ ॥

एवं मातापित्रोर्वचनं निशम्य मृगापुत्रेण इत आरभ्य 'सव्वभवेसु अस्साया' इति चतुःसप्ततितमगाथापर्यन्ताभिरेकत्रिंशद्गाथाभिर्यदुक्तं तदाह--

मूलम्--सो' बिंतें अम्मापियरो, एवमेयं जहाफुडं ।
इहं लोगे' निप्पिवासस्स, नत्थि किंचि वि दुक्करं ॥४४॥

छाया--सब्रूते अम्मापितरौ, एवमेतद् यथास्फुटम् ।
इह लोके निष्पिपासस्य, नास्ति किंचिदपि दुष्करम् ॥४४॥

टीका--'सो बिंत' इत्यादि ।

स मृगापुत्रः अम्बापितरौ ब्रूते-हे मातपितरौ ! यद् भवद्भ्याम् एवं= पूर्वोक्तप्रकारेण चारित्रपरिपालनस्य दुष्करत्वमुक्तम् । एतद्=भवदुक्तं यथास्फुटम्=स्फुटं सत्यमनतिक्रम्य स्थितम् । भवदुक्तं सत्यमित्यर्थः । किन्तु इह लोके निष्पिपासस्य=निःस्पृहस्य किंचिदपि कार्यं दुष्करं नास्ति ॥४४॥

मातापिता के इस प्रकार वचन को सुनकर मृगापुत्रने प्रत्युत्तर रूप में क्या कहा-यह बात अब यहां (४४ वीं गाथा से लेकर चोहत्तर ७४ वी गाथा 'सव्वभवेसु' तक इकतीस गाथाओं से स्पष्ट की जाती है--

'सोबिंत' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(सो अम्मापियरो बिंत-स' अम्बापितरौ ब्रूते) मृगापुत्रने मातापिता से कहा कि-हे मातापिता ! जो आप लोगोंने (एव-एवम्) पूर्वोक्त प्रकार से चारित्र का पालन दुष्कर कहा है सो (एय जहाफुड-एतत् यथा स्फुटम्) यह आपका कथन सत्य है । परन्तु (निप्पिवासस्स-निष्पिपासस्य) जो निस्पृह है उनको (इहलोगे-इहलोके) इस लोक मे (किंचिवि दुक्कर नत्थि-किञ्चिदपि दुष्कर नास्ति) कुछ भी दुष्कर नहीं है ॥४४॥

માતાપિતાના આ પ્રકારના વચનને સાભળીને મૃગાપુત્રે પ્રત્યુત્તર રૂપે શુ કહ્યુ ? આ વાતને હવે અહીં ચૂવાળીસમી ગાથાથી ચૂમોતેરમી ગાથા 'सव्वभवेसु' સુધી એકત્રીસ ગાથાઓથી સ્પષ્ટ કરવામા આવે છે—

"सोबिंत" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सो अम्मापियरो बिंत अम्बापितरौ ब्रूते મૃગાપુત્રે માતાપિતાને કહ્યુ કે, હે માતાપિતા ! આપલોકોએ एव-एवम् પૂર્વોક્ત પ્રકારથી ચારિત્રનુ પાલન દુષ્કર બતાવેલ છે તે एय जहाफुडम्-एतत् यथास्फुटम् એ આપનુ કહેલુ સત્ય છે પરંતુ निप्पिवासस्स-निष्पिपासस्य જેઓ નિસ્પૃહ છે એને માટે इहलोगे-इहलोके આ લોકમા किंचिवि दुक्करनत्थि-किञ्चिदपि दुष्करम् नास्ति આ લોકમા કાંઈ પણ દુષ્કર નથી ॥ ૪૪ ॥

निःस्पृहताहेतुमाह—

मूलम्—सारीरमाणसो चेव, वेयणाओ अणतसो ।
मए सोढाओ भीमाओ, असइ दुक्खभयाणि य ॥४५॥

छाया—शारीरमानस्यश्चैव, वेदना अनन्तशः ।
मया सोढा भीमा, असकृद् दुःखभयानि च ॥४५॥

टीका—'सारीरमाणसा' इत्यादि ।

हे अम्बापितरौ ! मया च पूर्वभवेषु शारीरमानस्यः=शरीरमानसयोर्भवाः शारीरमानस्यः=शरीरमनःसम्बन्धिन्यो भीमाः=रौद्रा वेदनाः=असातरूपा अनन्तशः=अनन्तवार सोढाः=अनुभूताः । च=पुनः असकृद्=अनेकवार दुःखभयानि =दुःखोत्पादकानि राजादिजनितानि भयानि सोढानि=अनुभूतानि ॥४५॥

किं च—

मूलम्—जरामरणकंतारे, चाउरंते भयागरे ।
मए सोढाणि भीमाणि, जम्माणि मरणाणि य ॥४६॥

छाया—जरामरणकान्तारे, चातुरन्ते भयाकरे ।
मया सोढानि भीमानि, जन्मानि मरणानि च ॥४६॥

निःस्पृहताका हेतु कहते हैं—'सारीरमाणसा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मातापिता ! पुनर्भव के सिद्धान्तानुसार (मए-मया) मैंने पूर्वभवों में (सारीरमाणसा-शारीरमानसाः) शारीरिक एवं मानसिक (अणतसो-अनन्तशः) अनन्त प्रकार की (भीमाओ-भीमाः भयंकर रौद्र (वेयणाओ-वेदना) वेदनाएँ (सोढाओ-सोढा.) सही है, तथा (असइ-असकृत्) अनेकवार (दुक्खभयाणि-दुःखभयानि) दुःखोत्पादक राजादिक द्वारा दिये गये भयों को भी सहन किया है ॥४५॥

निःस्पृहतानो हेतु कहेवामा आवे छे—"सारीरमाणसा" इत्यादि

अन्वयार्थ—हे मातापिता ! पूर्वभवना सिद्धांत अनुसार मए-मया मे पूर्वभवोमा सारीरमाणसा-शारीरमानसः शारीरिक अने मानसिक अणतसो-अनन्तशः अनत प्रकारनी भीमाओ-भीमा' भयकर रौद्र वेयणाओ-वेदनाः वेदनाओ सोढाओ-सोढा' सही छे तथा असइ-असकृत् अनेकवार राजा तरफथी आपवामा आवेला दुक्ख भयाणि-दुःख भयानि दु ख उत्पादकभयोने पण सहन करेल छे ॥४५॥

टीका--हे अम्बापितरौ ! जरामरणकान्तारे=जरामरणरूप कान्तार दुर्गममार्गो यस्मिन् स जरामरणकान्तारस्तस्मिन्, जरामरणरूपदुर्गममार्गयुक्ते अत एव भयाकरे=भयजनिरूपे चातुरन्ते=चत्वारो देव मनुष्यतिर्यङ्नरकरूपा भवा अन्ता अवयवा यस्य च चतुरन्त, स एव चातुरन्तस्तस्मिन् ससारे मया भीमानि=अतिदुःखजनकत्वेन भयङ्कराणि जन्मानि मरणानि च सोढानि ॥४६॥

यत्र सोढा शारीरिकवेदना मानसिकवेदना सोढा तम्प्रतितदुच्यते--

मूलम्--जहा इहं अगणी उण्हो, इत्तो अणंतगुणो तहिं ।
नरएसु वेयणा उण्हा, असाया वेइया मए ॥४७॥

छाया--यथा इहाग्निरुष्णः, इतोऽनन्तगुणस्तत्र ।
नरकेषु वेदना उष्णा, असाता वेदिता मया ॥४७॥

यथा इह=अस्मिन् ससारे अग्निरुष्णोऽस्ति, इतोऽस्मादपि अनन्तगुण उष्णोऽग्निस्तत्र=नरकेषु अस्ति, येषु नरकेष्वहमुत्पन्न.। तेषु नरकेषु मया

और भी--'जरामरणकन्तारे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--तथा हे माततात ! (जरामरण कन्तारे-जरामरण कान्तारे) जरा एव मरणरूप कान्तार-अटवी युक्त तथा (भयागरे-भयाकरे) भय की खानरूप विशिष्ट ऐसे (चाउरते चातुरन्ते) चतुर्गतिरूप ससार मे (मए-मया) मैने (भीमाणि-भीमानि) अति दु खजनक होने से भयकर (जम्माणि मरणाणि य-जम्माणि मरणानि च) अनेक जन्म एव मरणों को (सोढाणि-सोढानि) सहन किया है ॥४६॥

फिर भी--'जहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(जहा-यथा) जैसे (इह-इह) इस ससार मे (अगणी-अग्नि.) अग्नि (उण्हो-उष्ण) उष्णगुण सपन्न है (इत्तो अणतगुणो तहिं-

---

વધુમા--" जरामरणकतारे " ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--હે માતતાત ! जरामरणकतारे-जरामरणकान्तारे વૃદ્ધાવસ્થા તથા મરણરૂપ ભયકર એવા જ ગલમા તથા भयागरे-भयाकरे ભયરૂપ ખાણથી વિશિષ્ટ એવા चाउरते-चातुरन्ते ચતુર્ગતિરૂપ સ સારમા मए-मया મે અતિ દુ ખ જનક भीमाणि-भीमानि ભયકર जम्माणि मरणाणि य-जन्मानि मरणानि च જન્મ અને મરણો सोढाणि-सोढानि સહન કરેલ છે ॥ ૪૬ ॥

વધુમા--"जहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--जहा-यथा જે રીતે इह-इह આ સ સારમા अगणि-अग्नि અગ્નિ उण्हो-उष्ण ઉષ્ણ ગુણુસ પન્ન છે इत्तो अणतगुणो तहिं-इत अनन्तगुण. तत्र

असाता=दुःखरूपा उष्णा वेदना वेदिताः=अनुभूताः। नरकेषु बादराग्नेर भावात् पृथिव्या एव तादृशः स्पर्शो ज्ञेयः ॥४७॥

किं च--

मूलम्--जहा इहं इमं सीयं, एत्तोऽणंतगुणे तहिं।
नरएसु वेयणा सीया, असाया वेइया मए ॥४८॥

छाया--यथा इह इदं शीतम्, इतोऽनन्तगुणं तत्र।
नरकेषु वेदनाः शीता, असाता वेदिता मया ॥४८॥

टीका--'जहा' इत्यादि।

यथा इह=अस्मिन् संसारे इदम्=अनुभूयमानं पौषमाघमासादिसंभवं शीतं भवति। इतोऽपि अनन्तगुणं शीतं तत्र नरकेषु भवति। येषु नरकेष्वहमुत्पन्नः। तेषु नरकेषु मया असाता=दुःखरूपा शीता वेदना वेदिता=अनुभूता ॥४८॥

इतः अनन्तगुणः तत्र) इस से भी अनन्त उष्णगुणवाली अग्नि उन नरकों मे है कि जिन मे मै उत्पन्न हो चुका हूं। उन नरकों मे (मए-मया) मैने (असाया-असाताः) दुःखरूप (उण्हा वेयणा वेइया-उष्णाः वेदना वेदिता) इन उष्ण वेदनाओं को भोगा है। नरकों में बादर अग्नि नहीं है किन्तु वहां की पृथिवी का ही ऐसा स्पर्श है ॥४७॥

तथा--'जहा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(जहा-यथा) जैसा (इह-इह) इस संसार मे (इमं-इदम्) यह अनुभूयमान पौष माघ मास की ठंडी पडती है (एत्तोऽणंत-गुणे तहिं-इतः अनंतगुणं तत्र) इस से भी अनंतगुणी ठंड उन नरकों मे है कि जिन मे मै उत्पन्न हो चुका हूं। (नरएसु-नरकेषु) उन नरकों मे

એનાથી પણ અનન્તગણા ઉષ્ણ ગુણવાળી અગ્નિ નરકોમા છે કે જ્યા હું અગાઉના જન્મોમા ઉત્પન્ન થઈ ચૂકયો છુ આ નરકોમા मए-मया મે असाया-असाता. દુ ખરૂપ उण्हा वेयणा वेइया-उष्णा वेदना वेदिता' એ ઉષ્ણ વેદનાઓને ભોગવી છે નરકોમા બાદર અગ્નિ નથી હોતો પરંતુ તેની પૃથ્વીનો સ્પર્શ જ ઉષ્ણ હોય છે ॥૪૭॥

તથા--"जहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--जहा-यथा જે રીતે इह-इह આ સંસારમા इम-इदम् અનુભવી શકાય તેવી પોષ અને મહા મહિનાની ઠંડી પડે છે एत्तोणंतगुणे तहिं इतः अनन्तगुण तत्र આનાથી પણ અનંતગણી ઠંડી એ નરકોમા છે કે જ્યા હું અગાઉ ઉત્પન્ન થઈ ચૂક્યો છુ नरएसु-नरकेषु એ નરકોમા असाया सीया वेयणा

किं च—

मूलम्—कंदंतो कंदुकुमीसु, उड्ढपाओ अहोसिरो।

हुआसिणे जलंतम्मि, पक्कपुव्वो अणंतसो ॥४९॥

छाया—क्रन्दन् कन्दुकुम्भीषु, ऊर्ध्वपादः अधः शिरा। हुताशने ज्वलति, पक्वपूर्वः अनन्तशः ॥४९॥

टीका—'कंदंतो' इत्यादि।

हे मातपितरौ! ऊर्ध्वपादः=ऊर्ध्वचरण, अधः शिराः=अधोमस्तकः मल ममानोऽहं क्रन्दन्=रुदन् कन्दुकुम्भीषु=कन्दुः='कराही' इति ख्याता भाजन

(असाया सीया वेयणा मए वेइया-असाता शीता. वेदना मया वेदिताः) यह शीत वेदना मैंने सहन की है।

इन ४४, ४५, ४६, ४७, ४८ न की गाथाओं का भाव केवल इतना ही है कि जो सस्पृह है-उनको ही सब कुछ कठिन है-तथा दुःख है। निस्पृहों को न कुछ कठिन है और दुःख ही है। शारीरिक एवं मानसिक वेदनाओं का अनुभव इस ही पर्याय मे नवीनरूप से करने में नही आयगा-यह तो कईवार किया जा चुका है। नरकों में यहा से भी अनत गुणित उष्ण वेदनाओं का तथा शीत वेदनाओं का अनुभव किया है। फिर आप लोग हमको भय किस बात का प्रदर्शित करते है ॥४८॥

फिर भी—'कदंतो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माताताल! (उड्ढपाओ अहो सिरो-उर्ध्वपादः अध शिराः) ऊंचे पैर एवं नीचे शिर होकर मैने (कदंतो-क्रन्दन्) रोता

मए वेइया-असाताः शीताः वेदनाः मया वेदिताः આવી અસહ્ય એવી શીત વેદનાને પણ મે સહન કરી છે

આ ૪૪, ૪૫, ૪૬, ૪૭ અને ૪૮ મી ગાથાઓનો ભાવ કેવળ એટલો જ છે કે, જે સસ્પૃહ છે તેને જ બધુ કઠણુ છે તથા દુ ખરૂપ છે નિસ્પૃહિને ન કાંઈ કઠણુ છે, ન કાંઈ દુ ખરૂપ છે શારીરિક અને માનસિક વેદનાઓનો અનુભવ આ પર્યાયમા નવીનરૂપથી કરવ મા નથી આવતો એ તો કઈવાર કરી ચૂકયો છે નરકોમા અહીંના કરતા અન તગણી ઉષ્ણુ વેદનાઓનો તથા ઠ ડીની વેદનાઓનો અનુભવ કરેલ છે તો પછી આપલોકો કઇ વાતનો ભય મને કહી બતાવો છો? ॥૪૮॥

છતા પણુ—"कदंतो" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા! उड्ढपाओ अहोसिरा—ऊर्ध्वपाद अधः शिरा· ઊંચે પગ અને નીચે માથુ રાખીને મે कदंतो-क्रन्दन् રોતા રોતા कदुकुमीसु—

विशेषा, कुम्भ्य =पात्राविशेषा, अनयोः कर्मधारय, तासु तथोक्तासु, लोहादिमयीपु पाकभाजनविशेषासु ज्वलति=देदीप्यमाने हुताशने=देवमायाकृते वह्नौ च अनन्तशोऽन्तवार पक्वपूर्व =पूर्वपक्व पूर्वभवेपु पक्वः ॥४९॥

अन्यच्च--

मूलम्--महादवग्गिसंकासे, मरुम्मि वइरवालुए ।
कलबवालुयाए य, दड्ढपुव्वो अणंतसो ॥५०॥

छाया--महादवाग्निसकाशे, मरौ वज्रवालुके ।
कदम्बवालुकाया च, दग्धपूर्वोऽनन्तश ॥५०॥

टीका--'महादवग्गि' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! अह महादवाग्निसकाशे=अतिदाहकत्वेन महादवाग्नितुल्ये मरौ=मरुप्रदेशस्थितवालुकापुञ्जसदृश इत्यर्थ । इह तात्स्थ्यात् तद्व्यपदेश

हुआ (कदुकुभीसु-कदुकुभीपु) लोहमय वडे २ कडाहों में तथा कुम्भियों मे (हुआसिणे जलतम्मि-हुताशने ज्वलति) अग्नि के प्रज्वलित होने पर (अणतसो-अनन्तशः) अनतवार (पक्कपुव्वो-पक्वपूर्व) पूर्वभवो मे जल चुका हू । पक चुका हू ।

भावार्थ--वर्तमान की वेदनाओ को कहकर हे माततात ! आप मुझे क्यों भयभीत कर रहे है । पहिले भवो मे इस मेरे जीवने अनन्तवार कुम्भियों एव कदुओं में जाज्वल्यमान अग्नि के होने पर पकनेकी अपार वेदनाओं का अनुभव किया है ॥४९॥

फिर भी--'महादवग्गि सकासे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे माततात ! मै (महादवग्गिसकासे-महादवाग्नि सकाशे) महादवाग्नि तुल्य तथा मरुप्रदेश स्थित वालुका के पुज के सदृश

कदुकुभीपु લોઢાની મોટી મોટી કડાઇઓમા તથા કુભીઓમા हुआसणे जलतम्मि-हुताशने ज्वलति અગ્નિથી પ્રજ્વલિત થઇને अणतसो-अनन्तश અનતવાર पक्कपुव्वो-पक्वपूर्व પૂર્વભવમા બળી ચૂકયો છુ --શેકાઇ ચૂકયો છુ

ભાવાર્થ--વર્તમાનની વેદનાઓને બતાવીને હે માતાપિતા ! મને શા માટે ભયભીત કરી રહ્યા છો ? આગલા ભવોમા મારા આ જીવે અનતવાર કુભિયો અને કડાઇઓમા ભડકે બળતા અગ્નિમા શેકાવાની અપાર વેદનાઓનો અનુભવ કર્યો છે ॥૪૯॥

છતા પણ--"महादवग्गिसकासे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--હે માતાપિતા ! મે महादवग्गिसकासे-महादवाग्निसकाशे મહા દવ અગ્નિ તુલ્ય તથા મરૂ પ્રદેશમા રહેલ રેતીના પુજની જેવી वइरवालुए-वज्र

किं च—

मूलम्—कंदंतो कंदुकुंभीसु, उड्ढपाओ अहोसिरो ।
हुआसणे जलंतम्मि, पक्कपुव्वो अणंतसो ॥४९॥

छाया—क्रन्दन् कन्दुकुम्भीषु, ऊर्ध्वपादः अधः शिराः ।
हुताशने ज्वलति, पक्वपूर्वः अनन्तशः ॥४९॥

टीका—'कंदंतो' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! ऊर्ध्वपादः=ऊर्ध्वचरणः, अधः शिराः=अधोमस्तकः सन्
म्रममानोऽहं क्रन्दन्=रुदन् कन्दुकुम्भीषु=कन्दवः='कराही' इति ख्याता भाजन

(असाया सीया वेयणा मए वेइया-असाता शीता वेदनाः मया वेदिताः)
यह शीत वेदना मैंने सहन की है।

इन ४४, ४५, ४६, ४७, ४८ नं की गाथाओं का भाव केवल इतना ही है कि जो सस्पृह है-उनको ही सब कुछ कठिन है-तथा दुःख है। निस्पृहों को न कुछ कठिन है और दुःख ही है। शारीरिक एवं मानसिक वेदनाओं का अनुभव इस ही पर्याय में नवीनरूप से करने में नहीं आयगा-यह तो कईबार किया जा चुका है। नरकों में यहां से भी अनंत गुणित उष्ण वेदनाओं का तथा शीत वेदनाओं का अनुभव किया है। फिर आप लोग हमको भय किस बात का प्रदर्शित करते हैं ॥४८॥

फिर भी—'कंदंतो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मातातात ! (उड्ढपाओ अहो सिरो-ऊर्ध्वपादः अधः शिराः) ऊंचे पैर एवं नीचे शिर होकर मैंने (कंदंतो-क्रन्दन्) रोना

मए वेइया-असाता. शीताः वेदनाः मया वेदिताः આવી અસહ્ય એવી શીત વેદનાને પણ મેં સહન કરી છે

આ ૪૪, ૪૫, ૪૬, ૪૭ અને ૪૮ મી ગાથાઓનો ભાવ કેવળ એટલો જ છે કે, જે સસ્પૃહ છે તેને જ બધુ કઠણ છે તથા દુઃખરૂપ છે નિસ્પૃહિને ન કાંઈ કઠણ છે, ન કાંઈ દુઃખરૂપ છે શારીરિક અને માનસિક વેદનાઓનો અનુભવ આ પર્યાયમા નવીનરૂપથી કરવામા નથી આવતો એ તો કંઈકવાર કરી ચૂકયો છે નરકોમા અહીંના કરતા અનંતગણી ઉષ્ણ વેદનાઓનો તથા ઠંડીની વેદનાઓનો અનુભવ કરેલ છે તો પછી આપલોકો કઇ વાતનો ભય મને કહી બતાવો છો? ॥૪૮॥

છતા પણ—"कंदंतो" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! उड्ढपाओ अहोसिरा-ऊर्ध्वपादः अधः शिराः ઉંચે પગ અને નીચે માથુ રાખીને મેં कंदंतो-क्रन्दन् રોતા રોતા कंदुकुंभीसु-

विशेषा. कुम्भ्य =पात्राविशेषा., अनयो' कर्मधारय., तासु तथोक्तासु, लोहादिमयीपु पाकभाजनविशेषासु ज्वलति=देदीप्यमाने हुताशने=देवमायाकृते वह्नौ च अनन्तशोऽन्तवार पक्वपूर्व =पूर्वपक्व पूर्वभवेषु पक्वः ॥४९॥

अन्यच्च--

मूलम्--महादवग्गिसंकासे, मरुम्मिँ वइरवालुए ।
कलंबवालुयाए य, दड्ढपुव्वो अणंतसो ॥५०॥

छाया--महादवाग्निसकाशे, मरौ वज्रवालुके ।
कदम्बवालुकाया च, दग्धपूर्वोऽनन्तश. ॥५०॥

टीका--'महादवग्गि' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! अह महादवाग्निसकाशे=अतिदाहकत्वेन महादवाग्नितुल्ये मरौ=मरुप्रदेशस्थितवालुकापुञ्जसदृश इत्यर्थ. । इह तात्स्थ्यात् तद्व्यपदेश

हुआ (कदुकुभीसु-कन्दुकुभीषु) लोहमय बडे २ कडाहों में तथा कुम्भियों में (हुआसिणे जलतम्मि-हुताशने ज्वलति) अग्नि के प्रज्वलित होने पर (अणतसो-अनन्तशः) अनतवार (पक्कपुव्वो-पक्वपूर्व') पूर्वभवो में जल चुका हू। पक चुका हू।

भावार्थ--वर्तमान की वेदनाओं को कहकर हे माततात ! आप मुझे क्यों भयभीत कर रहे है। पहिले भवो मे इस मेरे जीवने अनन्तवार कुम्भियों एव कदुओं में जाज्वल्यमान अग्नि के होने पर पकने की अपार वेदनाओं का अनुभव किया है ॥४९॥

फिर भी--'महादवग्गि सकासे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे माततात ! मैं (महादवग्गिसकासे-महादवाग्नि सकाशे) महादवाग्नि तुल्य तथा मरुप्रदेश स्थित वालुका के पुज के सदृश

कदुकुभीषु લોઢાની મોટી મોટી કડાઇઓમા તથા કુભીઓમા हुआसणे जलतम्मि-हुताशने ज्वलति અગ્નિથી પ્રજ્વલિત થઇને अणतसो-अनन्तश અનતવાર पक्कपुव्वो-पक्वपूर्व, પૂર્વભવમા બળી ચૂક્યો છુ --શેકાઇ ચૂકયો છુ

ભાવાર્થ--વર્તમાનની વેદનાઓને બતાવીને હે માતાપિતા ! મને શા માટે ભયભીત કરી રહ્યા છો ? આગલા ભવોમા મારા આ જીવે અનતવાર કુભિયો અને કડાઇઓમા ભડકે બળતા અગ્નિમા શેકાવાની અપાર વેદનાઓનો અનુભવ કર્યો છે ॥૪૯॥

છતા પણ--"महादवग्गिसकासे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--હે માતાપિતા ! મે महादवग्गिसकासे-महादवाग्निसकाशे મહા દવ અગ્નિ તુલ્ય તથા મરૂ પ્રદેશમા રહેલ રેતીના પુજની જેવી वइरवालुए-वज्र

समयादन्तर्भूतोऽस्मार्थत्वात्। वज्रवालुके=वज्रवालुकानदीपुलिने, तथा-कदम्बवालु-
कायाम्=अतिप्रतप्तायां कदम्बवालुकानद्यामतिप्रतप्ते तत्पुलिने च अनन्तवार दग्ध
पूर्व =पूर्वंदग्धो दग्धपूर्वः-पूर्वभवेषु दग्धः। अय भावः-यथा चणकादि धान्यानि
'भाड' इति भाषाप्रसिद्धे भ्राष्ट्रे भृज्यन्ते, तथा-ऽहमपि प्रतप्ते नरकान्तर्वर्तिनि
मरुप्रदेशस्थित वालुकापुञ्जतुल्ये वज्रवालुका नदीपुलिने, प्रतप्ताया कदम्बवालु-
काया नद्या प्रतप्ते तत्पुलिने च पूर्वभवेषु अनन्तवार भृष्ट इति ॥५०॥

अपर च--

मूलम्—रसंतो कंदुकुंभीसु, उड्ढं बद्धो अबंधवो।
करवत्तकरकयाईहिं, छिन्नपुव्वो अणंतसो ॥५१॥

छाया—रसन् कन्दुकुम्भीषु, ऊर्ध्वं बद्धः अबान्धवः।
करपत्रक्रकचादिभिः, छिन्नपूर्वः अनन्तशः ॥५१॥

टीका—'रसंतो' इत्यादि।

हे मातापितरौ! अधः स्थितासु कन्दुकुम्भीसु=प्रतप्यमानतैलादिसभृतासु

ऐसे (वइरवालुए-वज्रवालुके) वज्रवालुका नामकी नदी के (कलबवालुयाए-कदम्बवालुकायाम्) तथा प्रतप्त कदंबवालुका नदीमें (अणंतसो-अनन्तशः) अनतवार (दड्ढपुव्वो-दग्धपूर्वः) पहिले भवों मे जल चुका हूं।

भावार्थ—मृगापुत्र वर्तमानकाल के प्रदर्शित भयों से अपने को निर्भय बतलाते हुए यह प्रकट कर रहा है कि हे माततात! मुझे आपके द्वारा प्रदर्शित भयो की इस लिये पर्वाह नही है कि मैने इस से भी अधिक कष्ट नरकों मे सहन किये हे। वहा की अत्यत जाज्वल्यमान वज्रवालुका नदी मे तथा कदम्बवालुकानदी मे अनतवार मै पहिले भवो मे जलता हुआ ही यहा आया हू ॥५०॥

वालुके વજ્રવાલુકા નામની નદીના તથા कलंबवालुयाए-कदम्बवालुकायाम् ખૂબ તપેલ કદંબવાલુકા નદીમા अणंतसो-अनन्तशः અનંતવાર दड्ढपुव्वो-दग्धपूर्वः આગલા ભવમા શેકાઈ ચૂકયો છુ

ભાવાર્થ--પોતે અગાઉ ભોગવી ચૂકેલી નરકની યાતનાની અપેક્ષાએ મૃગાપુત્ર વર્તમાનકાળમા સાધુજીવનમા અનુભવવા પડતા ભયોથી પોતાને નિર્ભય બતાવીને કહે છે કે, હે માતાપિતા! આપે મને બતાવેલ સાધુજીવન દરમ્યાન સહન કરવા પડતા ભયોની એટલા માટે પરવા નથી કે મે આનાથી પણ અધિક કષ્ટ નરકોમા સહન કર્યા છે. ત્યાની અત્યંત જાજ્વલ્યમાન વજ્રવાલુકા નદીમા તથા કદંબવાલુકા નદીમા

परमाधार्मिकैर्देवैः ऊर्ध्वं वृक्षशाखायां 'माऽयं पलायताम्' इति बुद्ध्या बद्धः, अबान्धवः=बन्धुमित्रादिरहितो रसन्=क्रन्दन् अहं करपत्र क्रकचादिभिः शस्त्रैरनन्तशः छिन्नपूर्वः=पूर्वभवेषु छिन्नः। अयं भावः—परमाधार्मिका देवाः पूर्वभवेषु क्रन्दन्तमबान्धवं मां वृक्षशाखायां बद्ध्वा करपत्रक्रकचादिभिर्ममाङ्गोपाङ्गानि अनन्तवारं छित्वा वृक्षशाखाऽधः स्थितासु कन्दुकुम्भीषु पचन्तिस्म। लघुकाष्ठविदारणोपकरणं 'क्रकच' इत्युच्यते। तदेव बृहत् 'करपत्रम्' इत्युच्यते।५१॥

तथा—'रसतो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माततात! अत्यंत तपे हुए तैल से भरी हुई अधः स्थित (कुंदु कुंभीसु—कन्दुकुम्भीषु) कंदु कुंभियों में परमाधार्मिक देवों द्वारा (उड्ढबद्धो—ऊर्ध्वं बद्धः) "यह भग न जाय" इस अभिप्राय से ऊँचे वृक्ष की शाखा पर में बांधकर (करवत्तकरकयाईहिं छिन्नपुव्वो—करपत्रक्रकचादिभिः छिन्नपूर्वः) करपत्र एवं क्रकच—करोत—आदि शस्त्रों से पहिले भवों में छिन्नभिन्न किया हूं। (रसतो—रसन्) मैं उस समय दुःख के मारे बहुत रोया परन्तु (अबंधुवो—अबान्धवः) वहां मेरी किसी भी बंधुने सहायता नहीं की।

भावार्थ—नरकों में परमाधार्मिक देव पहिले तो नवीन नैरयिक को वृक्ष के शाखा में बांधकर करपत्र एवं क्रकच से चीरते हैं और फिर उसको तप्त तैल से संभृत कंदुकुंभियों में जो उसी वृक्षके नीचे रहती हैं पकाते हैं। नैरयिक जीव उस समय बुरी तरह चिल्लाता है ऐसी स्थिति में वहां कोई भी बांधव उसकी सहायता करने को नहीं

તથા- "रसतो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--હે માતાપિતા અત્યંત ઉકળતા તેલથી ભરેલી कुंदु कुंभीसु—कन्दु कुम्भीषु અધઃ સ્થિત કંદુ કુંભિઓમાં પરમાધાર્મિક દેવો દ્વારા उड्ढबद्धो—ऊर्ध्वं बद्धः "એને આ ભાગી ન જાય" એ આશયથી ઉંચા વૃક્ષની ડાળી ઉપર મને બાંધીને करवत्त करकयाईहिं—करपत्र क्रकचादिभिः छिन्नपूर्वो કરપત્ર અને ક્રકચ કરવત આદિ શસ્ત્રોથી મારા આગલા ભવોમાં છિન્નભિન્ન કરાયો હતો रसतो—रसन् એ દુઃખથી હું ખૂબ રોયો પરંતુ अबंधुवो—अबान्धवः ત્યાં કોઇ બંધુ મારી સહાયતા માટે ન આવ્યો-તે દુઃખ મેં એકલાએ જ ભોગવ્યું

ભાવાર્થ- નરકોમાં પરમાધાર્મિક દેવ પહેલાં તો નવીન નરયિકને-નરકમાં આવનાર જીવને વૃક્ષની ડાળીએ બાંધીને કરવતથી વહેરે છે અને પછી ઉકળતા તેલથી ભરેલ કંદુકુંભિઓ કે જે વૃક્ષની નીચે હોય છે તેમાં તળે છે નૈરયિક જીવ એ સમયે ચીસાચીસ કરની રાડો પાડે છે પરંતુ એવી કરૂણ સ્થિતિમાં ત્યાં કોઇ પણ બાંધવ તેની

किं च—

मूलम्—अइतिक्खकंटयाइण्णे, तुंगे सिंबलिपायवे।
खेवियो पास बद्धेणं, कड्ढोकड्ढाहिं दुक्करं ॥५२॥

छाया—अतितीक्ष्णकण्टकाकीर्णे, तुङ्गे शाल्मलिपादपे।
क्षेपितः पाशबद्धः खलु, कृष्टापकृष्टैर्दुष्करम् ॥५२॥

टीका—'अइतिक्ख' इत्यादि।

हे मातापितरौ! पूर्वभवेषु अतितीक्ष्णकण्टकाकीर्णे=अतितीक्ष्णानि यानि कण्टकानि तैराकीर्णे=व्याप्ते तुङ्गे=अत्युच्चे, शाल्मलिपादपे=शाल्मलिवृक्षे पाश

पहुँचता है। बिचारा अकेला ही दुःख भोगा करता है। मेरी भी हे माततात! यह हालत पूर्वभवों मे अनतवार हुई है। फिर इन वर्तमान के दुःखों से डरने की कौनसी चिन्ता है? ॥५१॥

और भी—'अइतिक्ख०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माततात! पूर्वभवों मे (अइतिक्खकटयाइण्णे तुगे सिंबलिपायवे—अतितीक्ष्णकटकाकीर्णे तुगे शाल्मलिपादपे) अति तीक्ष्ण कटकों से आकीर्ण तथा अत्यत ऊचे शाल्मलि वृक्ष पर मुझे (पासबद्धे—पाशबद्धः) पाश द्वारा जकडकर परमाधार्मिक देवोंने (दुक्करम्—दुःसहम्) बडी बुरी तरह (कड्ढोकड्ढाहिं—कृष्टापकृष्टैः) खींचातानी करके (खेविओ—क्षेपितः) फेंका है।

भावार्थ—नरकों मे उन परमाधार्मिक देवोंने मेरी हे माततात! पूर्वभवों में बडी दुर्दशा की है। नूकीले कांटोवाले ऊचे २ शाल्मलि

સહાયતા કરવા પહોંચતો નથી બિચારો એકલો જ દુઃખ ભોગવ્યા જ કરે છે મારી પણ હે માત પિતા! પૂર્વભવમા આવી હાલત અનેક વખત થયેલ છે, તો પછી વર્તમાન કાળમાં સાધુજીવનના આવા મામુલી દુઃખોથી ડરવાની ચિંતા શા માટે કરવી? ॥૫૧॥

અને પણ—'अइ तिक्ख' ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા! અત્યંત પૂર્વભવોમા अइतिक्खकटयाइण्णे तुगे सिंबलिपायवे—अतितीक्ष्णकटकाकीर्णे तुगे शाल्मलि पादपे તીક્ષ્ણ કાંટાઓથી ભરેલા તથા અત્યંત ઉંચા શાલ્મલી વૃક્ષ ઉપર મને पासबद्धे—पाशबद्ध દોરીથી બાંધીને પરમાધાર્મિક દેવોએ दुक्करम्—दुःसहम् ખૂબ બુરી રીતે कड्ढोकड्ढाहिं—कृष्टापकृष्टैः ખેંચાખેંચ કરીને ફેંકી દીધેલ હતો

ભાવાર્થ—નરકોમા આ પરમાધાર્મિક દેવોએ હે માતાપિતા! મારા પૂર્વભવમા ખૂબ જ દુર્દશા કરેલ છે ખૂબ જ ધારવાળા કાંટાથી ભરેલા ઉંચા ઉંચા

वृक्षोऽहं परमाधार्मिककृतै कूटपरकूटैः=कर्षणापकर्षणैः दुष्कर-दुःसहं यथा स्यात् तथा क्षेपितः खलु ॥५२॥

किं च—

मूलम्—महाजंतेसु उच्छू वा, आरसंतो सुभेरवं ।
पीलिओम्मि सकम्मेहिं, पावकम्मो अणंतसो ॥५३॥

छाया—महायन्त्रेषु इक्षुरिव, आरसन् सुभैरवम् ।
पीडितोऽस्मि स्वकर्मभिः, पापकर्मा अनन्तशः ॥५३॥

टीका—'महाजंतेसु' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! पूर्वभवेषु पापकर्मा=पापकर्मानुष्ठानकारी सुभैरवम्=अत्यन्तभयङ्करं यथा स्यात्तथा-आरसन्=आक्रन्दं कुर्वन्नहं महायन्त्रेषु=पापिना

वृक्ष पर मुझे उन लोगोंने बडी ही निर्दयता से पाशों मे बाधकर खीचातानी करते हुए फेंका है ॥५२॥

और भी—'महाजंतेसु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! पूर्वभवों मे (पावकम्मा-पापकर्मा) कृत पापकर्म के उदयाधीन मैं (अणंतसो-अनन्तशः) अनंतबार (उच्छूवा-इक्षुरिव) गन्नें के समान (महाजंतेसु-महायन्त्रेषु) पापियों को निष्पीडित करने के लिये निर्मित यन्त्रो में (सुभेरव आरसंतो-सुभैरव आरसन्) बडी बुरी तरह से चिल्लाते चिल्लाते हुए (सकम्मेहिं-स्वकर्मभि) पूर्वोपार्जित दुष्कर्मों के निमित्त से (पीलिओम्मि-पीडितोऽस्मि) पीडित किया गया हूं ।

भावार्थ—हे माततात ! जिस प्रकार महायन्त्रो में इक्षु पेले जाते है उसी प्रकार मे उन यन्त्रों मे एक बार नही अनंतबार पेला गया हूं ।

શાલ્મલી વૃક્ષ ઉપર મને એ લોકોએ ખૂબ નિર્દયતાથી દોરડાઓથી બાંધીને ખેંચા ખેંચ કરીને ફેંક્યો હતો ॥ ૫૨ ॥

વળી પણ—"महाजंतेसु" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! पावकम्मो-पापकर्मा પૂર્વભવમાં કરેલાં કર્મોના ઉદયથી હું अणंतसो-अनन्तशः અનેકવાર उच्छूवा-इक्षुरिव શેરડીની માફક महाजंतेसु-महायन्त्रेषु પાપીઓને નિષ્પીડિત કરવાને માટે તૈયાર કરેલ યંત્રોમાં सुभेरव आरसंतो-सुभैरव आरसन् ખૂબ ખરાબ રીતે રાડો પાડતા પાડતા सकम्मेहिं-स्वकर्मभिः પૂર્વોપાર્જીત દુષ્કર્મોના નિમિત્તથી पीलिओम्मि-पीडितोऽस्मि પીલાયેલ છું

ભાવાર્થ—હે માતાપિતા ! જે પ્રમાણે મોટા યંત્રોમાં શેરડીને પીલવામાં આવે છે તે પ્રકારે નરકમાં હું આવી જાતના યંત્રોમાં એકવાર નહિ પણ અનેકવાર

किं च—

मूलम्—अइतिक्खकंटयाइण्णे, तुगें सिंबलिपायवे ।
खेवियों पासबद्धेणं, कड्ढोकड्ढाहिं दुक्करं ॥५२॥

छाया—अतितीक्ष्णकण्टकाकीर्णे, तुङ्गे शाल्मलिपादपे ।
क्षेपितः पाशबद्धः खलु, कृष्टापकृष्टैर्दुष्करम् ॥५२॥

टीका—'अइतिक्ख' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! पूर्वभवेषु अतितीक्ष्णकण्टकाकीर्णे=अतितीक्ष्णानि यानि कण्टकानि तैराकीर्णे=व्याप्ते तुङ्गे=अत्युच्चे, शाल्मलिपादपे=शाल्मलिवृक्ष पाश

पहुँचता है। बिचारा अकेला ही दुःख भोगा करता है। मेरी भी हे माततात। यह हालत पूर्वभवों मे अनतबार हुई है। फिर इन वर्तमान के दुःखों से डरने की कौनसी चिन्ता है? ॥५१॥

और भी—'अइतिक्ख०' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माततात! पूर्वभवों मे (अइतिक्खकंटयाइण्णे तुगे सिंबलिपायवे-अतितीक्ष्णकण्टकाकीर्णे तुगे शाल्मलिपादपे) अति तीक्ष्ण कंटकों से आकीर्ण तथा अत्यत ऊचे शाल्मलि वृक्ष पर मुझे (पासबद्धे-पाशबद्धः) पाश द्वारा जकडकर परमाधार्मिक देवोने (दुक्करम्-दुःसहम्) बडी बुरी तरह (कड्ढोकड्ढाहिं-कृष्टापकृष्टै) खींचातानी करके (खेविओ-क्षेपित.) फेंका है।

भावार्थ—नरको मे उन परमाधार्मिक देवोंने मेरी हे माततात! पूर्वभवो मे बडी दुर्दशा की है। नूकीले काटोंवाले ऊचे२ शाल्मलि

સહાયતા કરવા પહોચતો નથી બિચારો એકલો જ દુ ખ ભોગવ્યા જ કરે છે મારી પણ હે માત પિતા! પૂર્વભવમા આવી હાલત અનેક વખત થયેલ છે, તો પછી વર્તમાન કાળમાં સાધુજીવનના આવા મામુલી દુ ખોથી ડરવાની ચિંતા શા માટે કરવી? ॥૫૧॥

અને પણ—'अइ तिक्ख' ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા! અત્યત પૂર્વભવોમા अइतिक्खकंटयाइण्णे तुगे सिंबलिपायवे—अतितीक्ष्णकटकाकीर्णे तुगे शाल्मलि पादपे તીક્ષ્ણ કાટાઓથી ભરેલા તથા અત્યત ઉચા શાલ્મલી વૃક્ષ ઉપર મને पासबद्धे—पाशबद्ध દોરીથી બાધીને પરમાધાર્મિક દેવોએ दुक्करम्—दु सहम् ખૂબ બુરી રીતે कड्ढोकड्ढाहिं—कृष्टापकृष्टै ખેચાખેચ કરીને ફેકી દીધેલ હતો

ભાવાર્થ—નરકોમા આ પરમાધાર્મિક દેવોએ હે માતાપિતા! મારા પૂર્વભવમા ખૂબ જ દુર્દશા કરેલ છે ખૂબ જ ધારવાળા કાટાથી ભરેલા ઉચામા ઉચા

बद्धोऽहं परमाधार्मिककृतैः कृपणवत्कृष्टैः=कर्षणाकर्षणैः दुष्कर-दुःसहं यथा स्यात् तथा क्षेपितः खलु ॥५२॥

किं च—

मूलम्--महाजंतेसु उच्छू वा, आरसंतो सुभेरवं ।
पीलिओम्मि सकम्मेहि, पावकम्मो अणंतसो ॥५३॥

छाया--महायन्त्रेषु इक्षुरिव, आरसन् सुभैरवम् ।
पीडितोऽस्मि स्वकर्मभिः, पापकर्मा अनन्तशः ॥५३॥

टीका—'महाजतेसु' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! पूर्वभवेषु पापकर्मा=पापकर्मानुष्ठानकारी सुभैरवम्=अत्यन्तभयङ्करं यथा स्यात्तथा-आरसन्=आक्रन्दं कुर्वन्नहं महायन्त्रेषु=पापिना

वृक्ष पर मुझे उन लोगोंने बडी ही निर्दयता से पाशों मे बांधकर खीचातानी करते हुए फेंका है ॥५२॥

और भी—'महाजतेसु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मातातात । पूर्वभवों मे (पावकम्मा-पापकर्मा) कृत पापकर्म के उदयाधीन मैं (अणतसो-अनन्तशः) अनतवार (उच्छूवा-इक्षुरिव) गन्नें के समान (महाजतेसु-महायन्त्रेषु) पापियों को निष्पीडित करने के लिये निर्मित यत्रो मे (सुभेरव आरसतो-सुभैरव आरसन्) बडी बुरी तरह से चिल्लाते चिल्लाते हुए 'सकम्मेहिं-स्वकर्मभि.) पूर्वोपार्जित दुष्कर्मों के निमित्त से (पीलिओम्मि-पीडितोऽस्मि) पीडित किया गया हू ।

भावार्थ—हे माततात ! जिस प्रकार महायत्रों मे इक्षु पेले जाते है उसी प्रकार मे उन यत्रों मे एक बार नहीं अनतबार पेला गया ह ।

શાલ્મલી વૃક્ષ ઉપર મને એ લોકોએ ખૂબ નિર્દયતાથી દોરડાઓથી બાધીને ખેચા ખેચ કરીને ફેકયો હતો ॥ ૫૨ ॥

વળી પણ—"महाजतेसु" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! पावकम्मो-पापकर्मा પૂર્વભવમા કરેલા કર્મોના ઉદયથી હુ अणतसो-अनन्तशः અનેકવાર उच्छूवा-इक्षुरिव શેરડીની માફક महाजतेसु-महायन्त्रेषु પાપીઓને નિષ્પીડિત કરવાને માટે તૈયાર કરેલ યત્રોમા सुभेरव आरसतो-सुभैरव आरसन् ખુબ ખરાબ રીતે રાડો પાડતા પાડતા सकम्मेहिं-स्वकर्मभि' પૂર્વોપાર્જીત દુષ્કર્મોના નિમિત્તથી पीलिओम्मि-पीडितोऽस्मि પીલાયેલ છુ

ભાવાર્થ—હે માતાપિતા ! જે પ્રમાણે મોટા યત્રોમા શેરડીને પીલવામા આવે છે તે પ્રકારે નરકમા હુ આવી જાતના યત્રોમા એકવાર નહિ પણ અનેકવાર

निष्पीडनार्थं निर्मितेषु महायन्त्रेषु इक्षुरिव स्वकर्मभिः=स्वकृतकर्मणा कन्दन् अनन्तशः अनन्तवार पीडितः=निष्पीडितोऽस्मि । 'गा' शब्दस्यार्थश्च ॥५३॥

किं च—

मूलम्—कूयंतो कोलसुणयेहिं, सामेहि सवलेहि य ।
पाडिओ फालिओ छिन्नो, विप्फुं तो अणेगसो ॥५४॥

छाया—कूजन् कोलशुनकैः, श्यामैः शबलैश्च ।
पातितः स्फाटितश्छिन्नो, विस्फुरन्ननेकशः ॥५४॥

टीका—'कूयतो' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! पूर्वभवेषु कोलशुनकैः=शूकरश्वानरूपधरैः श्यामैः=श्यामाभिधानैः, शबलैः=शबलाभिधानैश्च परमाधार्मिकदेवैः कूजन्=भयवशादाक्रन्दन्,

मैं उनके समक्ष रोया भी चिल्लाया भी परन्तु मुझ पर वहां दया करनेवाला कोई नहीं था। पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मों के निमित्त मेरी ऐसी दुर्दशा हुई थी ॥५३॥

तथा—'कूयतो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! पूर्वभवों में (कोल सुणयेहिं-कौलशुनकैः) शूकर तथा श्वान के रूपों को धारण करनेवाले (सामेहिं-श्यामैः) श्याम तथा (सवलेहि-शबलैः) शवल नामके परमाधार्मिक देवोने (कूयतो-कूजन्) भयवश रोते हुए तथा (विस्फुरतो-विस्फुरन्) इधर उधर भागते हुए मुझे (अणेगसो-अनेकशः) अनेकवार (भुवि पाडिओ-भुवि पातित) जमीन पर पटका (फालिओ-स्फाटितः) जीर्णवस्त्र की तरह फाडा तथा (छिन्नो-छिन्नः) वृक्ष की तरह काटा है।

પીલવામા આવેલ છુ હુ તેમની સમક્ષ રોયો છુ, રાડો પાડી છે, પરતુ મારા ઉપર ત્યા દયા કરવાવાળુ કોઇ ન હતુ પૂર્વોપાર્જીત અશુભ કર્મોના નિમિત્તથી મારી એવી દશા ત્યા થઇ હતી ॥ ૫૩ ॥

તથ—"कूयतो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! પૂર્વભવમા कोलसुणयेहिं—कोल्शूनकैः સૂવર તથા કૂતરાના રૂપ ધારણ કરવાવાળા सामेहिं—श्यामैः શ્યામ તથા सवलेहि—शबलैः સબળ નામના પરમાધાર્મિક દેવોએ कूयतो-कूजन् ભયથી રોતા અને विस्फुरतो-विस्फुरन् આમતેમ ભાગતા એવા મને अणेगसो—अनेकश: અનેક भुविपाडिओ—भूविपातित જમીન ઉપર પછાડીને फालिओ—स्फाटितः જીર્ણ વસ્ત્રની માફક ફાડ્યો છે તથા छिन्नो—छिन्न વૃક્ષની માફક કાપેલ છે

विस्फुरन्=इतस्ततश्चलन् अहम् अनेकशः=बहुवारं भुवि पातितः, जीर्णवस्त्रवत् पाटित, वृक्षवत् छिन्नः=छेदितश्च ।५४॥

किं च—

मूलम्—असीहि अयसीवण्णाहि, भल्लीहि पट्टिसेहि यं ।
छिन्नो भिन्नो विभिन्नो यं, उववण्णो पावकम्मुणा ॥५५॥

छाया—असिभिरतसीवर्णैः, भल्लीभिः पट्टिशैश्च ।
छिन्नो भिन्नो विभिन्नश्च, उपपन्नः पापकर्मणा ॥५५॥

टीका—'असीहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके पापकर्मणा=पापकर्मप्रभावेण उपपन्नः=उत्पन्नोऽहम् परमाधार्मिकैः अतसीवर्णैः=अतसीवत्कृष्णवर्णैरसिभिः=खड्गैः, छिन्नः=छेदित,

---

भावार्थ - मृगापुत्रने मातापिता से दुःखों को भोगने के सिलसिले मे यह कहा कि मैं पूर्वभवों मे भोगे गये दुःखों को और कहांतक सुनाऊं। नरकों मे श्याम और शबल जाति के परमाधार्मिक देवोंने जो मेरी दुर्दशा की वह मैं ही जानता हूं। उन लोगोने भय से कांपते हुए मुझे अनेकवार तो जमीन पर पटका तथा पटककर मेरे शरीर को जीर्णवस्त्र की तरह दो टुकडे किये और फिर वृक्ष की तरह मुझे काटा ॥५४॥

फिर भी—'असीहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरक मे (पावकम्मुणा-पापकर्मणा) पापकर्म के उदय से (उववण्णो-उपपन्न) उत्पन्न हुआ मैं परमाधार्मिक देवों द्वारा (अयसी वण्णाहिं असिहिं-अतसीवर्णैः असिभिः) अलसी के पुष्प समान कृष्णवर्णवाली तलवारों से (छिन्नो-छिन्न) छेदित किया गया हूं-तथा (भल्लिहिं-भल्लीभिः) भालाओं से (भिन्नो-भिन्न)

ભાવાર્થ—મૃગાપુત્રે માતાપિતાને દુઃખ ભોગવવાની બાબતમાં આમ કહ્યું કે, મેં પૂર્વભવોમાં ભોગવેલ દુઃખોને વધારે ક્યાં સુધી સંભળાવું ? નરકોમાં શ્યામ અને સબળ જાતિના પરમાધાર્મિક દેવોએ જે મારી દુર્દશા કરી છે તેને હું જાણું છું. તે લોકોએ ભયથી કાંપી રહેલા એવા મને અનેક વખત જમીન ઉપર પછાડીને તથા જમીન ઉપર પછડાયેલા મારા શરીરને જુના વસ્ત્રની માફક ચીરી નાખ્યું અને ઝાડની માફક મને છેદી નાખ્યો ॥૫૪॥

વળી પણ—"असीहिं" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! નરકમાં पावकम्मुणा-पापकर्मणा પાપકર્મના ઉદયથી उववण्णो-उपपन्न ઉત્પન્ન થયેલ હું પરમાધાર્મિક દેવો દ્વારા अयसीवण्णाहिं असिहिं-अतसीवर्णैः असिभिः અળશીના ફૂલના જેવી કાળા રંગવાળી તલવારોથી छिन्नो-छिन्न છેદાયો છું તથા भल्लेहिं-भल्लैः ભાલાઓથી भिन्नो-भिन्नः

निष्पीडनार्थं निर्मितेषु महायन्त्रेषु इक्षुरिव स्वकर्मभिः=स्वकृतकर्मणा फलेन अनन्तशः अनन्तवार पीडितः=निष्पीडितोऽस्मि । 'वा' शब्दस्त्वार्थकः ॥५३॥

किं च—

मूलम्—कूयंतो कोलसुणयेहिं, सामेहि सबलेहि यं ।
पाडिओ फालिओ छिन्नो, विप्फुरंतो अणेगसो ॥५४॥

छाया—कूजन् कोलशुनकैः, श्यामैः शबलैश्च ।
पातितः स्फाटितश्छिन्नो, विस्फुरन्ननेकशः ॥५४॥

टीका—'कूयतो' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! पूर्वभवेषु कोलशुनकैः=शूकरश्वानरूपधरैः श्यामैः=श्यामाभिधानैः, शबलैः=शबलाभिधानैश्च परमाधार्मिकदेवैः कूजन्=भयवशादाक्रन्दन,

मैं उनके समक्ष रोया भी चिल्लाया भी परन्तु मुझ पर वहां दया करनेवाला कोई नहीं था। पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मों के निमित्त मेरी ऐसी दुर्दशा हुई थी ॥५३॥

तथा—'कूयतो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! पूर्वभवों में (कोल सुणयेहिं-कोलशुनकैः) शूकर तथा श्वान के रूपों को धारण करनेवाले (सामेहिं-श्यामैः) श्याम तथा (सबलेहि-शबलैः) शबल नामके परमाधार्मिक देवोंने (कूयतो-कूजन्) भयवश रोते हुए तथा (विस्फुरतो-विस्फुरन्) इधर उधर भागते हुए मुझे (अणेगसो-अनेकशः) अनेकवार (भुवि पाडिओ-भुवि पातित) जमीन पर पटका (फालिओ-स्फाटितः) जीर्णवस्त्र की तरह फाडा तथा (छिन्नो-छिन्नः) वृक्ष की तरह काटा है।

પીલવામા આવેલ છુ હુ તેમની સમક્ષ રોયો છુ, રાડો પાડી છે, પરંતુ મારા ઉપર ત્યા દયા કરવાવાળુ કોઈ ન હતુ પૂર્વોપાર્જીત અશુભ કર્મોના નિમિત્તથી મારી એવી દશા ત્યા થઈ હતી ॥ ૫૩ ॥

તથ—"कूयतो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! પૂર્વભવમા कोलसुणयेहिं-कोलशूनकै સૂવર તથા કૂતરાના રૂપ ધારણ કરવાવાળા सामेहिं-श्यामै શ્યામ તથા सबलेहि-शबलै સબળ નામના પરમાધાર્મિક દેવોએ कूयतो-कूजन् ભયથી રોતા અને विस्फुरतो-विस्फुरन् આમતેમ ભાગતા એવા મને अणेगसो-अनेकश. અનેક भुविपाडिओ-भूविपातित જમીન ઉપર પછાડીને फालिओ-स्फाटित. જીર્ણ વસ્ત્રની માફક ફાડ્યો છે તથા छिन्नो-छिन्न વૃક્ષની માફક કાપેલ છે

इव मर्मस्थाने यष्टिमुष्टयाद्याघातैः पातित'। अथ भाव'-परमाधार्मिका देवा 'अयं मा पलायताम्' इति धिया युगकीलकयुक्ते प्रतप्ते लोहमये दुर्वहे रथे मामायोज्य तोत्रयोक्त्रै' त दुर्वह लोहरथ कर्षयितु प्रेरयन। पुनश्च मर्मस्थाने यष्टिमुष्टयाद्याघातैर्मा गवयमिवपातितवन्त इति ॥५६॥

किं च--

मूलम्--हुयासणे जलनम्मि, चियासु महिसो विव ।
दड्ढो पक्को यं अवसो, पावकम्मेहि पाविओ ॥५७॥

छाया--हुताशने ज्वलति, चितासु महिष इव ।
दग्धः पक्वश्च अवश', पापकर्मभि प्रवृत्त ॥५७॥

नाथको खेंचा। तथा जब इतने पर भी मैं नहीं चला तो उन्होंने यष्टि एव मुष्टि से मुझे खूब पीटा और (रोज्झो वा पाडिओ-रोज्झ इव पातित) मार २ कर रोझ जानवर की तरह मुझे जमीन पर पटक दिया।

भावार्थ—नरको में प्राप्त होकर सर्वथा पराधीन बने हुए मुझको परमाधार्मिक देवोंने लोह के गुरुतर रथ को खेंचने के लिये उस मे पहिले तो जोत दिया पर जब वह रथ मुझ से नहीं खिंचा गया तो उन लोगोंने मुझे उसको खेंचने के निमित्त चाबुक से खूब पीटा और मेरी नाथको भरसक ताना। इतने पर भी जब मैं नहीं चल सका तो उन्होंने यष्टिमुष्टि आदि द्वारा मुझे मर्मस्थानों म खूब मारा और मारपीट कर फिर मुझे उन लोगोंने रोझकी तरह जमीन पर पटक दिया ॥५६॥

ખૂબ ફટકાર્યો હતો અને મારી નાથને ખૂબ ખેંચેલ હતી એમ છતા પણ જ્યારે હુ એ રથને ખેંચી ન શકતો તો તેઓએ ગડદાપાટુથી મને ખૂબ માર્યો હતો વળી ખૂબ रोज्झोवा पाडिओ–रोज्झइव पातित મારી મારીને રોઝ જાનવરની માફક જમીન પર ફેંકી દીધો હતો

ભાવાર્થ—નરકોને પ્રાપ્ત કરીને સપૂર્ણપણે પરાધીન બનેલા એવા મને પરમાધાર્મિક દેવોએ લોઢાના ખૂબ ભારે રથને ખેંચવાને માટે પહેલા તો મને એમા જોતરી દીધેલ પરંતુ જ્યારે રથ મારાથી ન ખેંચાયો ત્યારે તે લોકોએ મને તે રથ ખેંચવા માટે તે ચાબુકથી ખૂબ ફટકાર્યો હતો અને મારી નાથને ખૂબ ખેંચી હતી એમ છતા પણ જ્યારે હુ ન ચલી શક્યો ત્યારે ગડદાપટુથી તે લોકોએ મને મારા મર્મ સ્થાનોમા ખૂબ માર માર્યો અને મારીપીટીને પછી તે લોકોએ રોઝની માફક જમીન ઉપર ફેંકી દીધો ॥ ૫૬ ॥

भल्लीभिः='भाला' इति प्रसिद्धैः शस्त्रैः भिन्नः=मारित'। च=पुनः पट्टिशैश्च=ः विशेषैः विभिन्न.=सूक्ष्मखण्डीकृतश ॥५५॥

तथा च—

मूलम्--अवसो लोहरहे जुत्तो, जलते समिलाजुए ।
चोइओ तोत्तजोत्तेहिं, रोज्झो वा जह पाडिओ ॥५६॥

छाया—अवशो लौहरथे युक्तो, ज्वलति शम्यायुते ।
नोदितस्तोत्रयोक्त्रैः, रोज्झ इव पातितः ॥५६॥

टीका—'अवसो' इत्यादि ।

हे अम्बा पितरौ ! नरकेषु अवशः=पराधीनोऽहं परमाधार्मिकदेवैः शम्या युते=शम्या=युगरन्ध्रक्षेपणीयकीलिका तया युते=युक्ते ज्वलति=अग्निवद् देदीप्यमाने प्रतप्ते लौहरथे=लोहमयदुर्वहरथे युक्त'=योजित', तत' परमाधार्मिकदेवैः रथकर्षणार्थं तोत्र योक्त्रैः-तोत्राणि=प्राजनानि=वृषभादिप्रेरणदण्डा., योक्त्राणि= नासाप्रोतगलबद्धरज्ज्वादीनि तैर्नोदितः=प्रेरित , वा=पुनरहं तैर्देवै रोज्झो यथा=गवय

विदारित किया गया हूं तथा (पट्टिसेहिय-पट्टिशैश्च) शस्त्रविशेषों से (विभिन्नो-विभिन्न') सूक्ष्म टुकडे २ रूप मे किया गया हूं ॥५५॥

तथा—'अवसो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरकों में (अवसो-अवश) सर्वथा पराधीन बना हुआ मैं परमाधार्मिक देवों द्वारा (समिलाजुए जलते लोहरहे जुत्तो-शम्यायुते ज्वलति लौहरथे युक्त) युगरन्ध्र मे क्षेपणीय कीलिका से युक्त तथा अग्नि के समान देदीप्यमान ऐसे प्रतप्त लौहरथ मे जोता गया हूं। तथा (तोत्त जोत्तेहिं-तोत्र योक्त्रै,) उस रथ को खेंचने के लिये उन लोगोंने मुझे तोत्र-चाबुको से खूब पीटा एव मेरी

વિધાયો છુ તથા पट्टिसेहिय-पट्टिशैश्च અવનવા શસ્ત્રોથી મારા विभिन्नो-विभिन्नः નાના નાના ટુકડા કરાયા હતા ॥ ૫૫ ॥

તથા—"अवसो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! નરકોમા अवसो-अवश સર્વથા પરાધીન બનેલ એવો હુ પરમાધાર્મિક દેવો દ્વારા समिलाजुए जलते लोहरहे जुत्तो-श्यामायुते ज्वलति लोहरथे युक्त યુગરન્ધ્રમા ક્ષેપણીય ચુકોવાળા તથા અગ્નિની માફક દેદિપ્યમાન અને ખૂબ તપેલા એવા લોઢાના રથમા જોતરવામા આવ્યો હતો તથા तोत्तजोत्तेहिं-तोत्रयोक्त्रै. એ રથને ખેચવાને માટે એ લોકોએ મને ચાબુકોથી

अपर च--

मूलम्--बला संडासतुंडेहिं, लोहतुंडेहि पक्खिभि ।
विलुत्तो विलवतोऽहं, ढकगिद्धेहिऽणंतसो ॥५८॥

छाया--बलात् सन्दशतुण्डै, लोहतुण्डैः पक्षिभिः ।
विलुप्तो विलपन्नहं, ढङ्कगृद्धैरनन्तशः ॥५८॥

टीका--'बला' इत्यादि ।

हे अम्बापितरौ ! नरके सन्दशतुण्डै=सन्दशाकार तुण्ड=मुख येषा ते तथा तै, सन्दशाकारमुखै, लोहतुण्डै =लोहवत्कठोरमुखै. ढङ्कगृद्धै.=ढङ्कगृद्धनामकै. पक्षिभिर्विलपन्=विलाप कुर्वन्नह बलाद्=हठात् अनन्तश अनन्तवार विलुप्त = विच्छिन्नः। नरकेषु पक्षिणो वैक्रियाएव। तत्र पक्षिणामभावात् ॥५८॥

एव कदर्थ्यमानस्य पिपासाया सजाताया यदभूत्तदुच्यते--

मूलम्--तण्हा किलंतो धावंतो, पत्तो वेयरणिं नइं ।
जलं पाहंति चिंततो, खुरधाराहि विवाइओ ॥५९॥

अपर च--'बला' इत्यादि ।

हे माततात ! नरक में (संडासतुंडेहिं-सन्दशतुण्डै.) सडासीके आकार समान मुखवाले तथा (लोहतुण्डेहिं-लौहतुण्डै) लोह के समान कठोर मुखवाले ऐसे (ढकगिद्धेहि-ढङ्कगृद्धै) ढकगृद्ध नामक पक्षियो द्वारा (विलवतोऽहं-विलपन् अहम्) विलाप करता हुआ मै (अणतसो-अनन्तश) अनतवार (विलुत्तो-विलुप्त) छिन्नभिन्न किया गया हू। नरको मे पक्षी नही होते है। नारकी ही स्वय वैक्रियशक्ति से पक्षी जैसे बन जाते है ॥५८॥

બીજુ પણ—"बला" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! संडास तुंडेहिं—सन्दश तुण्डै સાણસીના આકાર જેવા મોઢાવાળા તથા लोहतुण्डेहिं—लौहतुण्डै લોઢાના જેવા કઠોર મોઢાવાળા એવા ढक गिद्धेहि—ढङ्क गृद्धै ઢકગૃદ્ધ નામના પક્ષીઓ દ્વારા विलवतोऽहं—विलपन् अहम् વિલાપ કરી રહેલ એવો હુ अणतसो—अनतश અનતવાર विलुत्तो—विलुप्तः છિન્ન ભિન્ન કરાયેલ છુ નરકોમા પક્ષી હોતા નથી નારકી જ સ્વય વૈક્રિય શક્તિથી પક્ષી જેવા બની જાય છે ॥ ૫૮ ॥

टीका—'हुयासणे' इत्यादि।

हे अम्बापितरौ! नरके पापकर्मभिः प्रवृत्तः=परिवेष्टितोऽवशः=परतन्त्रोऽहं परमाधार्मिकदेवैर्वैक्रियशक्त्या रचितासु चितासु ज्वलति हुताशने=वह्नौ महिष इव दग्धः=भस्मसात्कृतः, पक्वः=वृन्ताकवद् भटित्रीकृतश्च। अयं भावः—यथाऽत्र पापिनो जना महिषं बन्धनादिनाऽवशीकृत्य वह्नौ भस्मसात् कुर्वन्ति, वृन्ताकवद् भटित्रीकुर्वन्ति च। तथैव पापकर्मभारवशवर्ती सा परमाधार्मिकदेवा नरके वैक्रिय शक्त्या विरचितप्रज्वलितचिताग्नौ दग्धवन्तः पक्ववन्तश्चेति ॥५७॥

किं च—'हुयासणे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे मातताते! नरक मे (पावकम्मेहिं पाविओ-पाप कर्मभिः प्रवृत्तः) पापकर्मों द्वारा घिरकर (अवसो-अवशः) परतन्त्र हुए मुझको परमाधार्मिक देवोंने (चियासु-चितासु) अपनी वैक्रियशक्ति से रचित चिताओं में (जलतम्मि हुयासणे-ज्वलति हुताशने) प्रदीप्त अग्नि में (महिसो विव-महिष इव) भैसेकी तरह (दड्ढो पक्को-दग्धः पक्व) पहिले तो खूब सेका और बाद मे बेंगनकी तरह मेरा भर्ता बनाया।

भावार्थ—जैसे पापीजन महिषको बंधन आदि द्वारा परतंत्र कर अग्नि में डाल देते हैं और पीछे उसको वृन्ताक की तरह सेकते हैं उसी तरह पूर्वोपार्जित पापकर्म द्वारा जकडा जाकर नरक मे प्राप्त हुए मेरे जीवको भी पहिले परमाधार्मिक देवोंने अपनी शक्ति से रचित चिताओं मे डालकर खूब भूजा है। खूब उसका भर्त्ता बनाया है ॥५७॥

परंतु—"हुयासणे" इत्यादि

અન્વયાર્થ—હે માત પિતા ! નરકમા पावकम्मेहिं पाविओ-पापकर्मभिः प्रवृत्त અને પાપકર્મોથી ઘેરાયેલા એવા अवसो-अवश परતંત્ર બનેલા એવા મને પરમાધાર્મિક દેવોએ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી બનાવેલી चियासु-चितासु ચિતાઓમા जलतम्मि हुयासणे-ज्वलति हुताशने ભડભડ બળતા અગ્નિમા महिसोविव-महिषइव ભેંસના માફક दड्ढो पक्को-दग्ध, पक्व પહેલા તો ખુબ શેકયો અને પછી રીંગણાની માફક મારૂ ભડથું બનાવ્યુ

ભાવાર્થ—જે પ્રમાણે પાપી લોકો પાડાને બંધન વગેરેથી પરતંત્ર બનાવીને અગ્નિમા ફેંકી દે છે અને પછી તેને રીંગણાની માફક શેકે છે એજ પ્રમાણે પૂર્વોપાર્જીત કરેલા પાપકર્મો દ્વારા જકડાઈને નરકને પ્રાપ્ત કરેલા એવા મારા શરીરને પહેલા તો પરમાધાર્મિક દેવોએ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી બનાવેલી ચિતાઓમા ખબ શેકયો અને તેનુ ભડથું બનાવ્યુ ॥ ૫૭ ॥

अपरं च--

मूलम्--बला संडासतुंडेहिं, लोहतुंडेहि पक्खिभि ।
विलुत्तो विलवतोऽहं, ढंकगिद्धेहिऽणंतसो ॥५८॥

छाया=-बलात् सन्दशतुण्डैः, लोहतुण्डैः पक्षिभिः ।
विलुप्तो विलपन्नहं, ढङ्कगृद्धैरनन्तशः ॥५८॥

टीका--'बला' इत्यादि ।

हे अम्बापितरौ ! नरके सन्दशतुण्डैः=सन्दशाकारं तुण्डं=मुखं येषां ते तथा तैः, सन्दशाकारमुखैः, लोहतुण्डैः=लोहवत्कठोरमुखैः, ढङ्कगृद्धैः=ढङ्कगृद्धनामकैः पक्षिभिर्विलपन्=विलापं कुर्वन्नहं बलाद्=हठात् अनन्तशः अनन्तवारं विलुप्तः= विच्छिन्नः। नरकेषु पक्षिणो वैक्रियाएव। तत्र पक्षिणामभावात् ॥५८॥

एवं कदर्थ्यमानस्य पिपासायां संजातायां यद्भूतदुच्यते--

मूलम्--तण्हा किलंतो धावंतो, पत्तो वेयरणिं नइं ।
जलं पाहंति चिंततो, खुरधाराहिं विवाइओ ॥५९॥

अपरं च--'बला' इत्यादि ।

हे माततात ! नरक में (संडासतुंडेहिं-सन्दशतुण्डैः) संडासीके आकार समान मुखवाले तथा (लोहतुण्डेहिं-लौहतुण्डैः) लोह के समान कठोर मुखवाले ऐसे (ढंकगिद्धेहिं-ढङ्कगृद्धैः) ढंकगृद्ध नामक पक्षियो द्वारा (विलवतोऽहं-विलपन् अहम्) विलाप करता हुआ मै (अणंतसो-अनन्तशः) अनंतवार (विलुत्तो-विलुप्त) छिन्नभिन्न किया गया हूं। नरकों मे पक्षी नही होते हैं। नारकी ही स्वयं वैक्रियशक्ति से पक्षी जैसे बन जाते है ॥५८॥

बीजुं पणु—"बला" इत्यादि

अन्वयार्थ—हे मातापिता ! संडास तुंडेहिं—सन्दश तुण्डैः. साणुसीना आकार जेवा मोढावाळा तथा लोहतुण्डेहिं—लौहतुण्डैः लोढाना जेवा कठोर मोढावाळा एवा ढंक गिद्धेहिं—ढङ्क गृद्धैः ढंकगृद्ध नामना पक्षीओ द्वारा विलवतोऽहं—विलपन् अहम् विलाप करी रहेल एवो हुं अणंतसो—अनन्तशः अनंतवार विलुत्तो—विलुप्तः छिन्न भिन्न करायेल छुं नरकोमां पक्षी होता नथी नारकी ज स्वयं वैक्रिय शकितथी पक्षी जेवा बनी जाय छे ॥ ५८ ॥

छाया—तृष्णया क्लाम्यन् धावन्, प्राप्तो वैतरणीं नदीम् ।
जलं पिबामीति चिन्तयन्, क्षुरधाराभिर्व्यापादितः ॥५९॥

टीका—'तण्हा' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके तृष्णया=पिपासया क्लाम्यन्=खिद्यमानो धावन् =इतस्ततो भ्राम्यन्नहं वैतरणीं=वैतरणी नाम्नीं नदीं प्राप्तः=वैतरणी नदी तटं समागतः । तत्र जलं पिबामीति चिन्तयन्=ध्यायन्नहं क्षुरधाराभिः=क्षुरधारा तुल्याभिर्वैतरणीजलोर्मिभिर्व्यापादितः=हतः । अयं भावः—नरके कदर्थितोऽहं पिपासाकुलितस्तदुपशमनार्थं जलं गवेषयन् वैतरणीनदीतटे समागतः । तत्र यावज्जलं पातुं प्रवृत्तस्तावत्क्षुरधारातुल्यैर्वैतरणीजलकल्लोलैरहं हत इति । वैतरणीनद्याजलं हि क्षुरधाराप्रायं गलच्छेदकमस्तीति विज्ञेयम् ॥५९॥

इस प्रकार कदर्थित होने से प्यास लगने पर जो हुआ सो कहते हैं—
'तण्हा किलन्तो इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! इस प्रकार कदर्थित होने पर मुझे प्यास सताती थी तब (तण्हा किलतो–तृष्णया क्लाम्यन्) इस प्यास से खेद-खिन्न हुआ मैं (धावतो–धावन्) पानी की तलाश में इतस्ततः दोडता–और (वेयरणिं नइं पत्तो–वैतरणीं नदीं प्राप्तः) वैतरणी नामकी नदी को देखकर उस पर प्यास बुझाने के लिये जा पहुचता। वहा पहुचते ही ज्यों ही मैं (जलं पाहंति चिंततो–जलं पिबामीति चिन्तयन्) पानी पीने की चाहना करता कि इतने मे ही (खुर धाराहिं विवाइओ–क्षुरधाराभिः व्यापादितः) क्षुरा की धारा समान तीक्ष्ण उसकी लहरों द्वारा मेरा चूर चूर कर दिया जाता था। इस नदीका जल क्षुराकी धाराके समान गले को फाडनेवाला है ॥५९॥

આ પ્રમાણે કદર્થિત થવાથી તરસ લાગવાથી શુ થયુ તેને કહે છે—
"तण्हा किलतो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! આ પ્રકારે કદર્થિત થવાથી જ્યારે મને ખૂબ જ તરસ લાગી ત્યારે तण्हा किलतो–तृष्णया क्लाम्यन् તરસથી ખેદખિન્ન થયેલો હુ धावतो–धावन् પાણી શોધવા માટે અહી તહી દોડતો અને वेयरणिं नइं पत्तो–वैतरणिं नदीं प्राप्त વૈતરણી નામના નદીને જોઇને તરસ શાન્ત કરવા ત્યા જઇ પહોચ્યો. जलं पाहंति चिंततो–जलं पिबामीति चिन्तयन् પાણી પીવાની તયારી કરતો હતો કે એટલામા खुर धाराहिं विवाइओ–क्षुरधाराभिः व्यापादित છરાની ધાર જેવી એની તીક્ષ્ણ લહેરોથી મારો ચુરેચુરો કરી નાખવામા આવતો. આ નદીનુ પાણી છરાની ધારના જેવુ ગળાને ચીરી નાખે તેવુ હોય છે ॥ ૫૯ ॥

किं च—

मूलम्—उण्हाभितत्तो संपत्तो, असिपत्तं महावणं ।
असिपत्तेहिं पडंतेहिं, छिन्नपुव्वो अणेगसो ॥६०॥

छाया—उष्णाभितप्तः सम्प्राप्तः, असिपत्रं महावनम् ।
असिपत्रैः पतद्भि-श्छिन्नपूर्वः अनेकशः ॥६०॥

टीका—'उण्हाभितत्तो' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके उष्णाभितप्तः—उष्णेन=वज्रवालुकादि सम्बन्धिना तापेन अभि=अभितः—समन्तात्तप्तोऽहं छायार्थी असिपत्रम्—असि=खड्ग, भेदकतया तत्सदृशानि पत्राणि यस्मिंस्तत्तथाभूतं महावनम् सम्प्राप्तः । तत्रासिपत्र महावने पतद्भिरसिपत्रैः=खड्गतीक्ष्णैः पत्रैरनेकशः=अनन्तवारं छिन्नपूर्वः=पूर्वं छिन्नः—छेदितः ॥६०॥

किं च—

मूलम्—मुग्गरेहिं मुसंढीहिं, सूलेहिं मुसलेहि य ।
गयासं भग्गगत्तेहिं पत्तं दुक्खमणंतसो ॥६१॥

किं च—'उण्हाभितत्तो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरक मे जब मैं (उण्हाभितत्तो—उष्णाभितप्तः) गर्मी से अत्यंत संतप्त हो जाता तब छाया का अभिलाषी होकर (असिपत्तं महावणं संपत्तो—असिपत्रं महावनं सम्प्राप्तः) असि के समान तीक्ष्ण नुकीले पत्ते वाले महावन मे जाकर ज्योंही पहुँचता कि वहां (पडतेहिं—पतद्भिः) गिरते हुए उन (असिपत्तेहिं—असिपत्रैः) असि पत्रों द्वारा (अणेगसो—अनेकशः) अनेक प्रकार से (छिन्नपुव्वो—छिन्न पूर्वः) मैं पहिले भवों मे छेदित कर दिया जाता था ॥६०॥

किंच—'उण्हाभितत्तो'' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમાં જ્યારે હું उण्हाभितत्तो—उष्णाभितप्त ગરમીથી અત્યંત અકળાઈ ગયો ત્યારે છાયાની શોધમાં असिपत्त महावण संपत्तो—असिपत्र महावन सम्प्रात તલવારની ધાર જેવા તીક્ષ્ણ પાંદડાં વાળા વૃક્ષોના મહાવનમાં જઈ પહોંચ્યો, જ્યારે હું ત્યાં પહોંચતો કે ત્યાં पडतेहिं—पतद्भि ઝાડ પરથીખરતા તીક્ષ્ણ असिपत्तेहिं—असिपत्रैः પાંદડાઓથી अणेगसो—अनेकश: અનેક પ્રકારે छिन्नपुव्वो—छिन्नपूर्वं આગલા ભવોમાં હું છેદાયો હતો ॥ ૬૦ ॥

छाया—मुद्गरैर्मुसण्ढीभिः, शूलैर्मुसलैश्च ।
गताश भग्नगात्रेण, प्राप्तं दुःखमनन्तशः ॥६१॥

टीका—'मुग्गरेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके मुद्गरैः=लोहमयैर्मुद्गरैः, मुसण्ढीभिः=चपेटाभिधानैः शस्त्रविशेषैः शूलैः, मुसलैश्च हत्वा परमाधार्मिकैर्भग्नगात्रेण=मुद्गरादिप्रहारेण भग्नम्=आमर्दितं गात्रं यस्य स भग्नगात्रस्तेन मया गताश=गता=नष्टा आशा परित्राणविषया यस्मिंस्तत्तथाभूतं दुःखम् अनन्तशः=अनन्तवारं प्राप्तम् ।
'भग्गगत्तेहिं' इत्यत्रार्षत्वाद्बहुवचने बहुवचनम् ॥६१॥

तथा च—

मूलम्—खुरेहि तिक्खधाराहिं, छुरियाहि कप्पणीहि य ।
कप्पिओ फालिओ छिन्नो, उक्कित्तो य अणेगसो ॥६२॥

छाया—क्षुरैस्तीक्ष्णधाराभिः, क्षुरिकाभिः कल्पनीभिश्च ।
कल्पितः पाटितश्छिन्नः, उत्कीर्णश्च अनेकशः ॥६२॥

किंच—'मुग्गरेहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे तात ! नरकमें (मुग्गरेहिं मुसढीहिं सूलेहिं मुसलेहिय-मुद्गरैः मुसढिभिः शूलैः मुसलैश्च) लोहमय मुद्गरों द्वारा, मुसढियो-लपेटा नामक शस्त्र विशेषों द्वारा शूलों एवं मुसलो द्वारा जब परमाधार्मिक देव मुझ पर प्रहार करते थे तब मैं (भग्गगत्तेहिं-भग्नगात्रेण) भग्न शरीर होकर (गयास-गताशम्) अपने जीवन की-अथवा परित्राणकी आशा छोड देता था-और (अणतसो दुक्खम् पत्त-अनन्तशः दुक्खम् प्राप्तम्) अनंत दुःखों को प्राप्त होता था। वहां इस अवस्था मे मेरा कोई भी सहायक नहीं था ॥ ६१ ॥

કિંચ— "मुग्गरेहिं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમાં मुग्गरेहिं मुसढेहिं सूलेहिं मुसलेहिय-मुद्गरैः मुसढीभिः शूलैः मुसलैश्च લોઢાના મુદ્ગળોથી, લપડાકથી વિશેષથી-શૂળ અને મુશળોથી જ્યારે પરમાધાર્મિક દેવો મારા ઉપર પ્રહાર કરતા હતા ત્યારે भग्गगत्तेहिं-भग्नगात्रेण ભગ્ન શરીર બનીને गयास-गताशम् પોતાના જીવનની અથવા પરિત્રાણની આશા છોડી દેતો હતો અને अणतसो दुक्खम् पत्त-अनन्तशः दुःखम् प्राप्तम् અનંત દુઃખોને પ્રાપ્ત કરતો હતો ત્યાં એવી અવસ્થામાં મારો કોઈ સહાયક ન હતો, ॥ ૬૧ ॥

टीका—'खुरेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरकेऽहम् अनेकश =अनन्तवार कल्पनीभि =कर्त्तरीभि कल्पित =खण्डखण्डित, पाटित =ऊर्ध्वं द्विधा कृत तीक्ष्णधाराभि क्षुरिकाभि छिन्न =कर्त्तरीव तिर्यक् खण्डित, च=पुन क्षुरै उत्कृत्त =अपनीतचर्माचाभूवम् ॥६२॥

किं च—

मूलम्—पासेहि कूडजालेहि, मिओ वा अवसो अहं ।
वाहिओ बद्धरुद्धो य बहुसो चेव विवाइओ ॥६३॥

छाया—पाशै कूटजालै, मृग इवावशोऽहम् ।
वाहितो बद्धरुद्धश्च, बहुशश्चैव विपादित ॥६३।

टीका—'पासेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरकेऽहं परमाधार्मिकैर्देवै पाशै =बन्धनै कूटजालैश्च-मृग बन्धनार्थं निर्मितर्जालै मृग इव वाहित =विप्रलब्ध, तथा-बद्धरुद्धश्च=बद्धो-

—तथा—'खुरेहिं' इत्यादि ॥

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरकमे मै (अणेगसो-अनेकशः) अनन्त वार (कप्पणीहिय-कल्पनीभि) कैचियों से (कप्पिओ-कल्पित) काटा गया हू। (फालिओ-पाटित) वस्त्र की तरह फाडा गया हू। (तिक्ख-धाराहिं खुरेहिं-तीक्ष्णधाराभि क्षुरै) तीक्ष्णधार वाली छुरियो द्वारा (छिन्नो -छिन्न) छिन्नभिन्न किया गया हू तथा और तो क्या (छुरियाहि-छुरिकाभि) क्षुरों उस्तरो द्वारा (उक्कित्तो-उत्कृत) मेरा चमडा भी मुझ से काट२ कर अलग किया गया था ॥ ६२ ॥

फिर भी— 'पासे हिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरकमें (अह-अहम्) मुझे परमाधार्मिक

तथा— "खुरेहिं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમા હુ अणेगसो-अनेकश. અનેક વાર कप्पणीहिय-कल्पनीभि' કાતરથી कप्पिओ-कल्पित' કપાયો છુ અને फालिओ -पाटितः વસ્ત્રની માફક ચિરાયો છુ तिक्खधाराहिं खुरेहिं-तीक्ष्णधाराभि क्षुरैः' તીક્ષ્ણધારવાળી છરીઓથી छिन्नो-छिन्न, છિન્ન ભિન્ન કરાયેલ છુ તથા વધારે તો શુ કહુ પરતુ छुरियाहिं-क्षुरिकाभि છરાઓ અને અસ્ત્રાઓ દ્વારા उक्कित्तो-उत्कृतः મારી ચામડી કાપી કાપીને મારાથી જુદી કરાઈ છે ॥ ૬૨ ॥

છતા પણ— "पासेहिं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમા अह-अहम् પરમાધાર્મિક દેવોએ

छाया—मुद्गरैर्मुसण्ढीभिः, शूलैर्मुसलैश्च ।
गताशं भग्नगात्रेण, प्राप्तं दुःखमनन्तशः ॥६१॥

टीका—'मुग्गरेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके मुद्गरैः=लोहमयैर्मुद्गरैः, मुसण्ढीभिः=लपेटाभिधानैः शस्त्रविशेषैः शूलैः, मुसलैश्च कृत्वा परमाधार्मिकैर्भग्नगात्रेण=मुद्गरादिप्रहारेण भग्नम्=आमर्दितं गात्रं यस्य स भग्नगात्रस्तेन मया गताशं=गता=नष्टा आशा परित्राणविषया यस्मिंस्तत्तथाभूतं दुःखम् अनन्तशः=अनन्तवारं प्राप्तम् । 'भग्गगत्तेहिं' इत्यत्रार्षत्वाद्बहुत्वे बहुत्वम् ॥६१॥

तथा च—

मूलम्—खुरेहि तिक्खधाराहिं, छुरियाहि कप्पणीहि य ।
कप्पिओ फालिओ छिन्नो, उक्कित्तो यं अणेगसो ॥६२॥

छाया—क्षुरैस्तीक्ष्णधाराभिः, क्षुरिकाभिः कल्पनीभिश्च ।
कल्पितः पाटितश्छिन्नः, उत्कीर्णश्च अनेकशः ॥६२॥

किंच—'मुग्गरेहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे तात ! नरकमें (मुग्गरेहिं मुसढीहिं सूलेहिं मुसलेहिय-मुद्गरैः मुसढिभिः शूलैः मुसलैश्च) लोहमय मुद्गरों द्वारा, मुसढियों-लपेटा नामक शस्त्र विशेषों द्वारा शूलों एवं मुसलों द्वारा जब परमाधार्मिक देव मुझ पर प्रहार करते थे तब मैं (भग्गगत्तेहिं-भग्नगात्रेण) भग्न शरीर होकर (गयास-गताशम्) अपने जीवन की-अथवा परित्राणकी आशा छोड देता था-और (अणतसो दुक्खम् पत्त-अनन्तशः दुक्खम् प्राप्तम्) अनंत दुःखों को प्राप्त होता था। वहां इस अवस्था मे मेरा कोई भी सहायक नहीं था ॥ ६१ ॥

કિંચ— "मुग्गरेहिं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમા मुग्गरेहिं मुसढेहिं सूलेहिं मुसलेहिय-मुद्गरैः मुसढीभिः शूलैः मुसलैश्च લોઢાના મુગ્દળોથી, લપડાકથી વિશેષથી-શૂળ અને મુશળોથી જ્યારે પરમાધામિક દેવો મારા ઉપર પ્રહાર કરતા હતા ત્યારે भग्गगत्तेहिं-भग्नगात्रेण ભગ્ન શરીર બનીને गयास-गताशम् પોતાના જીવનની અથવા પરિત્રાણુની આશા છોડી દેતો હતો અને अणतसो दुक्खम् पत्त-अनन्तशः दुःखम् प्राप्तम् અનંત દુખોને પ્રાપ્ત કરતો હતો ત્યા એવી અવસ્થામા મારો કોઇ સહાયક ન હતો, ॥ ६१ ॥

अपर च—

मूलम्—गलेहि मगरजालेहि, मच्छो वा अवसो अहं ।
उल्लिओ फालिओ गहिओ, मारिओ यं अणतसो ॥६४॥

छाया—गलैर्मकरजालै मत्स्य इवावशोऽहम् ।
उल्लिखित पाटितो गृहितो, मारितश्च अनन्तश ॥६४॥

टीका—'गलेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके गलै=परमार्मिकविरचितैर्बडिशै, मकरजालै= मकरा=मकररूपधारिण परमाधार्मिका, जालानि तैर्विरचितानि तै, अवशो ऽह मत्स्य इव अनन्तशः=अनन्तवारम् उल्लिखितः पाटितः गृहीत, मारितश्च । अय भाव'—नरके परमाधार्मिका देवा अवश मा मत्स्यमिव अनन्तवार बडिशै- र्भेदितवन्त', मकररूपधरास्ते मा पाटितवन्त स्वनिर्मितैर्जालै मा गृहीतवन्तः, भेदन पाटन ग्रहणे मा मारितवन्तश्च ॥ ६४ ॥

मेरे शरीर के टुकडे कर दिये फिर भी इस अभागे की अकाल मृत्यु वश न होने से मौत नही हुई ॥ ६३ ॥

फिर—'गलेहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मात तात ! नरकमे (गलेहिं मगरजालेहिं-गलैः मकरजालै') गलों-बडिशों से-मछलियों को पकडने के लिये एक प्रकार के कांटों से-मकररूप धारक परमाधार्मिक देवों द्वारा विरचित जालों से (मच्छोवा अवसो-मत्स्य इवावश') मत्स्यकी तरह पराधीन हुआ मैं (अणतसो-अनतश)अनतवार (उल्लिहिओ-उल्लिखित) भेदित किया गया हू (फालिओ-पाटितः) फाडा गया हू(गहिओ-गृहीत) पकडा गया हू तथा (मारिओ-मारितः) मारा गया हू ।

અનેકવાર તે દેવોએ મારા શરીરના ટુકડે ટુકડા કરી નાખ્યા છતા પણ આ અભાગિનુ અકાળ મૃત્યુ પણ ન થયુ-મોત ન આવ્યુ ॥ ૬૩ ॥

વળી—"गलेहिं" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! નરકમા गलेहिं मगरजालेहिं-गलै' मकरजालै ગલથી-માછલીને પકડવાને માટેના એક પ્રકારના કાંટાથી માછલીનુ રૂપ ધારણ કરવા- વાળા પરમાધાર્મિક દેવોએ બનાવેલ જાળોથી मच्छो वा अवसो-मत्स्य इवावश' માછલાની માફક પરાધીન બનેલ એવો હુ अणतसो अनन्तशः અનેકવાર उल्लिहिओ -उल्लिखित છેદાયેલો છુ फालिओ-पाटितः ફડાયેલ છુ गहीओ-गृहीत. પકડાયેલ છુ, અને मारिओ-मारित. મરાયેલ છુ

वन्धनेन रुद्धो-वृत्ति प्रचारनिषेधनेन, च=पुनः अवश=पराधीनोऽहं तैः परमा धार्मिकदेवै बहुश एव=बहुवारमेव विपादितः=विनाशितः ॥६३॥

देवोंने (पासेहिं कूडजालेहिं-पाशैः कूटजालैः) उस समय बन्धन एवं कूट-जालों से (वाहिओ-वाहितः) खूब ठगा था। तथा बन्धन से बांध कर (वद्धरुद्धो-बद्धरुद्धः) उन्होंने मुझे एक तरफ डाल दिया था, और इस तरह मेरा हलना चलना भी रोक दिया गया था। ऐसी स्थिति में मैं (मिओ वा अवसो-मृग इव अवशः) मृगकी तरह सर्वथा पराधीन हो कर (बहुसो चेव- बहुशः एव) बहुतवार ही उन देवों द्वारा (विवाइओ-विपादितः) विनष्ट किया गया था।

भावार्थ—माता पिता को अपने दुःख की कथा सुनाने के सिल-सिले में मृगापुत्र उनसे कह रहा है कि हे माततात! इनपरमा धार्मिक देवोंने मेरी नरक में पूर्वभवों में बडी दुर्दशा की थी-जिस प्रकार मृगको कोई व्याध पहिले पास एवं कूटबन्धनों से ठग लेता है, पश्चात् वह उसको उनके द्वारा जकड कर फिर उसके साथ अपनी मनमानी करता है ठीक यही हालत मेरी उन दुष्ट देवोंने की है। उन्होंने पहिले तो मुझे बंधनों से ठगा, पश्चात् जब मैं निर्भय बन चुका तब उन्होंने मुझे जाल में फंसा लिया। इस तरह मेरी इस स्थिति से उन्होंने खूब अपनी मनमानी मेरे साथ वर्ती। यहा तक कि अनेक बार उन देवों ने

એ સમયે पासेहिं कूडजालेहिं-पाशैः कूटजालैः મને બધન અને કૂટ જાળોથી वाहिओ-वाहित ખૂબ ળાકયો હતો તથા બધન બાધીને बद्धरुद्धो-बद्ध रुद्ध' તેઓએ એક તરફ ફેકી દીધો હતો અને આ રીતે મારૂ હલનચલન પણ અટકાવી દીધેલ એવી સ્થિતિમા હુ मिओवा अवसो-मृग इवअवश. મૃગલાની માફક સાવ પરાધીન બનીને बहुसो चेव-बहुशः एव એ દેવોને ઘણીવાર વીનવતો હતો

ભાવાર્થ—માતાપિતાને પોતાના દુખની કથા સભળાવવાના ઉદ્દેશથી મૃગાપુત્ર એમને કહે છે કે હે માતાપિતા! એ પરમાધાર્મિક દેવોએ પૂર્વભવમા નરકમા મારી ખૂબ જ દુર્દશા કરી હતી જે પ્રમાણે મૃગને કોઇ પારધી પહેલા પાશ તેમ જ કૂટબધનથી ઠગી લે છે પછીથી તે તેને તે દ્વારા જકડીને તેની સાથે પોતાનુ મનમાન્યુ કરે છે એજ પ્રમાણે આ દુષ્ટ દેવોએ મારી હાલત કરી હતી તેઓએ પહેલા તો મને બધનથી ઠગ્યો પછી જ્યારે હુ નિર્ભય બની ચૂકયો ત્યારે તેમણે મને જાળમા ફસાવી દીધો અને એ રીતે મારી એવી સ્થિતિમા તેઓએ પોતાને મન ફાવ્યુ તે રીતે મારી સાથે વર્તન કર્યું તે એટલે સુધી કે

अपर च—

मूलम्—गलेहि मगरजालेहि, मच्छो वा अवसो अहं ।
उल्लिओ फालिओ गहिओ, मारिओ य अणतसो ॥६४॥

छाया—गलैर्मकरजालैः मत्स्य इवावशोऽहम् ।
उल्लिखित पाटितो गृहितो, मारितश्च अनन्तशः ॥६४॥

टीका—'गलेहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके गलैः=परधार्मिकविरचितैर्बडिशैः, मकरजालैः=मकरा=मकररूपधारिण परमाधार्मिका, जालानि तैर्विरचितानि तैः, अवशोऽहं मत्स्य इव अनन्तशः=अनन्तवारम् उल्लिखित पाटित गृहीत, मारितश्च । अय भावः—नरके परमाधार्मिका देवा अवश मा मत्स्यमिव अनन्तवार बडिशैः भेदितवन्त, मकररूपधरास्ते मा पाटितवन्त, स्वनिर्मितैर्जालैः माः गृहीतवन्तः, भेदन पाटन ग्रहणै मां मारितवन्तश्च ॥ ६४ ॥

मेरे शरीर के टुकडे कर दिये फिर भी इस अभागे की अकाल मृत्यु वश न होने से मौत नही हुई ॥ ६३ ॥

फिर—'गलेहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मात तात ! नरकमे (गलेहिं मगरजालेहिं—गलैः मकरजालैः) गलों—बडिशों से—मछलियों को पकडने के लिये एक प्रकार के कांटों से—मकररूप धारक परमाधार्मिक देवों द्वारा विरचित जालों से (मच्छोवा अवसो—मत्स्य इवावशः) मत्स्यकी तरह पराधीन हुआ मैं (अणतसो—अनतशः) अनतवार (उल्लिहिओ—उल्लिखित) भेदित किया गया हू (फालिओ—पाटित) फाडा गया हू (गहिओ—गृहीत) पकडा गया हू तथा (मारिओ—मारितः) मारा गया हू ।

અનેકવાર તે દેવોએ મારા શરીરના ટુકડે ટુકડા કરી નાખ્યા છતા પણ આ અભાગિનુ અકાળ મૃત્યુ પણ ન થયુ—મોત ન આવ્યુ ॥ ૬૩ ॥

વળી—"गलेहिं" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! નરકમા गलेहिं मगरजालेहिं—गलैः मकरजालैः ગલથી—માછલીને પકડવાને માટેના એક પ્રકારના કાટાથી માછલીનુ રૂપ ધારણ કરનારા પરમાધાર્મિક દેવોએ બનાવેલ જાળોથી मच्छो वा अवसो—मत्स्य इवावशः માછલાની માફક પરાધીન બનેલ એવો હુ अणतसो अनन्तशः અનેકવાર उल्लिहिओ—उल्लिखित ભેદાયેલો છુ फालिओ—पाटितः ફડાયેલ છુ गहिओ—गृहीत पकडायेल છુ, અને मारिओ—मारितः મરાયેલ છુ

बन्धनेन रुद्धो-रुद्धः प्रचारनिरोधनेन, च=पुन अवशः=पराधीनोऽहं तं परमा धार्मिकदेवैः बहुशः एव=बहुवारमेव विपादितः=विनाशितः ॥६३॥

देवोंने (पासेहिं कूडजालेहिं-पाशैः कूटजालैः) उस समय बन्धन एवं कूट-जालों से (वाहिओ-वाहितः) खूब ठगा था। तथा बंधन में बांध कर (बद्धरुद्धो-बद्धरुद्धः) उन्होंने मुझे एक तरफ डाल दिया था, और इस तरह मेरा हलना चलना भी रोक दिया गया था। ऐसी स्थिति में मैं (मिओ वा अवसो-मृग इव अवशः) मृगकी तरह सर्वथा पराधीन हो कर (बहुसो चेव- बहुशः एव) बहुतवार ही उन देवों द्वारा (विवाइओ-विपादित) विनष्ट किया गया था।

भावार्थ—माता पिता को अपने दुःख की कथा सुनाने के सिल-सिले में मृगापुत्र उनसे कह रहा है कि हे माततात! उनपरमा धार्मिक देवोंने मेरी नरक में पूर्वभवों में बडी दुर्दशा की थी-जिस प्रकार मृगको कोई व्याध पहिले पाश एवं कूटबंधनों से ठग लेता है, पश्चात वह उसको उनके द्वारा जकड कर फिर उसके साथ अपनी मनमानी करता है ठीक यही हालत मेरी उन दुष्ट देवोंने की है। उन्होंने पहिले तो मुझे बंधनों से ठगा, पश्चात् जब मैं निर्भय बन चुका तब उन्होंने मुझे जाल में फंसा लिया। इस तरह मेरी इस स्थिति से उन्होंने खूब अपनी मनमानी मेरे साथ वर्ती। यहा तक कि अनेक बार उन देवों ने

એ સમયે पासेहिं कूडजालेहिं-पाशैः कूटजालैः મને બંધન અને કૂટ જાળોથી वाहिओ-वाहित ખૂબ બાકયો હતો તથા બંધન બાંધીને बद्धरुद्धो-बद्धरुद्ध તેઓએ એક તરફ ફેંકી દીધો હતો અને આ રીતે મારૂ હલનચલન પણ અટકાવી દીધેલ એવી સ્થિતિમાં હું मिओवा अवसो-मृग इवअवशः મૃગલાની માફક સાવ પરાધીન બનીને बहुसो चेव-बहुशः एव એ દેવોને ઘણીવાર વીનવતો હતો

ભાવાર્થ—માતાપિતાને પોતાના દુખની કથા સંભળાવવાના ઉદ્દેશથી મૃગાપુત્ર એમને કહે છે કે હે માતાપિતા! એ પરમાધાર્મિક દેવોએ પૂર્વભવમાં નરકમાં મારી ખૂબ જ દુર્દશા કરી હતી જે પ્રમાણે મૃગને કોઈ પારધી પહેલા પાશ તેમ જ કૂટબંધનથી ઠગી લે છે પછીથી તે તેને તે દ્વારા જકડીને તેની સાથે પોતાનું મનમાન્યું કરે છે એજ પ્રમાણે આ દુષ્ટ દેવોએ મારી હાલત કરી હતી તેઓએ પહેલા તો મને બંધનથી ઠગ્યો પછી જ્યારે હું નિર્ભય બની ચૂક્યો ત્યારે તેમણે મને જાળમાં ફસાવી દીધો અને એ રીતે મારી એવી સ્થિતિમાં તેઓએ પોતાને મન ફાવ્યું તે રીતે મારી સાથે વર્તન કર્યું તે એટલે સુધી કે

गृह्णन्ति, जालैर्वा बध्नन्ति, शिरीषनिर्यासलेपनैर्वा श्लेषयन्ति, ततो मारयन्ति। तथैव परमाधार्मिका नरके मामनन्तवारान् वैक्रियविरचितैः श्येनादि-पक्षिभिरगृह्णन् जालैरबध्नन्, लेप्यद्रव्यैश्च समश्लेषयन्। पुनर्मारितवन्तश्चेति ॥६५॥

किं च--

मूलम्—कुहाड फरसुमाईहिं, वड्ढईहिं दुमो विव।
कुट्टिओ फालिओ छिन्नो, तच्छिओ य अणंतसो ॥६६॥

छाया--कुठारपरश्वादिभिः वर्द्धकिभिर्द्रुम इव।
कुट्टितः पाटित श्छिन्नः, तक्षितश्च अनन्तशः ॥६६॥

ग्रहण किया गया हूं बांधा गया हूं तथा चिपकाया गया हूं (मारिओ-मारितः) तथा मारा भी गया हूं

भावार्थ—जिस प्रकार लुब्धक इसलोक मे श्येन-बाज आदि पक्षियों की सहायता से पक्षियों को पकड लिया करते है-अथवा जाल द्वारा उनको बांध लिया करते है तथा चिपकाने वाले लेपद्वारा उनको जोड दिया करते है और पश्चात् मार देते है, इसी तरह परमाधार्मिक-देव अपनी वैक्रिय शक्ति से नरक मे इस जीवको श्येन-बाज आदि का रूप बनाकर पकड लेते है, तथा उसको जाल से बाध लेते है एव लेप्यद्रव्य से उसको चिपका देते है और पीछे से फिर उसको मार देते हैं। सो हे मात तात! मेरी भी वहा इन देवोंने यही दशा की है। सो एक बार नहीं किन्तु अनतवार की है ॥ ६५ ॥

બાંધે છે અને ચોટાડનાના ગુદર જેવા ચીકણા લેપથી એને ચોંટાડી દે છે, मारिओ-मारित' પછી મારી નાખે છે એજ પ્રમાણે હુ પકડાયો છુ, બધાયો છુ ચોટાડાયો છુ અને મરાયો છુ

ભાવાર્થ--જે પ્રકારે લુબ્ધક (શિકારી) આ લોકમા શિકારીઓ બાજ પક્ષીયોની સહાયતાથી પક્ષીઓને પકડી લે છે અથવા જાળથી તેને બાંધી લે છે, તથા ચોટાડવા વાળો લેપ ચોપડીને તેને ચોટાડી દે છે અને પાછળથી મારી નાખે છે એજ પ્રમાણે પરમાધાર્મિક દેવ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી નરકમા આ જીવને બાજ વગેરેના રૂપ બનાવીને પકડી લે છે તથા તેને જાળમા બાંધી લે છે અને લેપ્ય દ્રવ્યથી તેને ચોંટાડી દે છે અને પછીથી તેને મારી નાખે છે જેથી હે માતા પિતા! મારી પણ એ દેવોએ ત્યા એવી હાલત કરી હતી અને તે એકવાર નહી પણ અનેકવાર કરી હતી ॥૬૫॥

पुनश्च—

मूलम्—विदसंएहिं जालेहिं, लिप्पाहिं सउणो विव ।
गहियो लग्गो य बद्धो य मारिओ य अणंतसो ॥६५॥

छाया—विदंशकैः जालैः, लेप्यैः शकुन इव ।
गृहीतो लग्नश्च बद्धश्च, मारितश्च अनन्तशः ॥६५॥

टीका—'विदसएहिं' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! अहं नरके अनन्तशः=अनन्तवारं शकुनइव=पक्षीव विदंशकैः—वीन्=पक्षिणो दशन्तीति विदंशकाः श्येनादयस्तैः, परमाधार्मिकैर्वैक्रियशक्त्या विरचितैः श्येनादिभिर्गृहीतः, च=पुनः जालैः=तैर्वैक्रियशक्त्या निर्मितैर्जालैर्बद्धः, च=पुनः लेप्यैः=लेपद्रव्यैः लग्नः=श्लेषितः । ततस्तैः परमाधार्मिकदेवैर्मारितश्च । अयं भावः—यथा लोके लुब्धकाः श्येनादिपक्षिसाहाय्येन पक्षिण

भावार्थ—जिस प्रकार मच्छीमार यहां जाल एवं वसी से मछलिया पकड लेते हैं और उनको मारकर खा जाते हैं, इसी प्रकार परमाधार्मिक देवोंने भी नरक में मेरी इसी प्रकार की दुर्दशा की है। मुझे उन्होंने पकड कर काटा है चीरा है और मारा है ॥ ६४ ॥

औरभी—'विदसएहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मात तात ! मै (अणंतसो–अनन्तशः) अनन्तवार नरक मे (सउणो विव–शकुनइव) पक्षी की तरह (विदसएहिं जालेहिं लिप्पाहिं–विदशकैः जालैः लेप्यैः) विदंशकोंसे–पक्षीयोंको पकडनेवाले श्येन–बाज पक्षियो से तथा लेप्यों से (गहिओ बद्धो य लग्गो य–गृहित बद्धः लग्नश्च)

ભાવાર્થ—જે પ્રકારે માછીમાર અહીંયા જાળ અને વાસથી માછલીઓને પકડી લે છે ત્યારબાદ તેને મારીને ખાઇ જાય છે એ પ્રમાણે પરમાધાર્મિક દેવોએ પણ નરકમા મારી એવી દુર્દશા કરી હતી મને તેઓએ પકડીને કાપેલ છે, ચીરેલ છે, અને મારેલ છે ॥૬૪॥

વળી પણ—"विदसएहिं" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! હુ अणंतसो–अनन्तशः અનેક વખત નરકોમા सउणोविव–शकुन इव પક્ષીઓની માફક विदसएहिं जालेहिं लिप्पाहिं–विदशकै जालै लेप्यै વિદશકોથી, પક્ષીઓને પકડવાવાળા શિકારીઓ બાજ પક્ષીઓની, મદદથી પકડે છે અથવા જાળદ્વારા તેને गहियो बद्धोय लग्गोय–गृहित• बद्ध• लग्नश्च

अनन्तशः अनन्तवारम् परमाधार्मिकैश्चपेटामुष्ट्यादिभिः ताडितः=आहतः, कुट्टितः=छिन्नः, भिन्नः=खण्डीकृतः, चूर्णितः=संपिष्टश्च ॥६७॥

किं च—

मूलम्—तत्ताइ तवलोहाइ, तउआणि सीसगाणि य ।
पाइओ कलंकलताइं, आरसतो सुभेरवम् ॥६८॥

छाया—तप्तानि ताम्रलोहानि, त्रपुकाणि सीसकानि च ।
पायितः कलकलायमानानि, आरसन् सुभैरवम् ॥६८॥

टीका—'तत्ताइ' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके परमाधार्मिकैः तप्तानि कलकलायमानानि=अति क्वाथतः कलकलशब्दं कुर्वन्ति, ताम्रलोहानि=ताम्रलोहद्रवान्, त्रपुकाणि=त्रपुद्रवान् सीसकानि=सीसकद्रवान्, सुभैरवम्=अत्यन्त भयङ्करम् आरसन्=आक्रन्दन् अहं पायितः तप्तताम्रादीनी वैक्रियाणि पृथिव्यनुभावभूतानि वा विज्ञेयानि ॥६८॥

आदिकी चोट द्वारा लोहे को पीटता है उसी प्रकार (अनतसो ताडिओ कुट्टिओ भिन्नो चुन्निओय—अनन्तशः ताडितः कुट्टितः भिन्नश्चूर्णितश्च) परमाधार्मिक देवों ने भी मेरी इस प्रकार की दुर्दशा नरकों में अनन्तवार की है। उन्होंने वहां मुझे ताडित किया कूटा-पीटा-खंड २ किया तथा मेरा चूर्ण भी किया ॥ ६७ ॥

किंच— 'तत्ताइ इत्यादि ।

अन्वयार्थ— हे माततात (तत्ताइ कलकलताइ तवलोहाइ—तप्तानि कलकलायमानानि ताम्रलोहानि) नरकमें परमाधार्मिक देवोंने तप्त तथा कलकलायमान उबलते हुए ताम्र तथा लोहे के द्रव-पानी को (तउआणि सीसगणि य—त्रपुकानि सीसकानि च) त्रपु-राग के पानी को सीसे के पानी

છે તે પ્રમાણે અનતસો તાડિઓ કુટ્ટિઓ ભિન્નો ચુન્નિઓ ય—અનન્તશઃ તાડિતઃ—કુટ્ટિતઃ ભિન્નશ્ચૂર્ણિતશ્ચ પરમાધાર્મિક દેવોએ પણ મારી આ પ્રમાણેની દુર્દશા નરકમાં અનેકવાર કરી છે તેઓએ મને ત્યાં માર્યો છે, પીટ્યો છે, મારા ટુકડે ટુકડા કર્યા છે, અને મારો ચૂરો પણ કર્યો છે ॥૬૭॥

કિંચ—"તત્તાઇ" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! તત્તાઇ કલકલતાઇ તવલોહાઇ-તપ્તાનિ કલકલાયમાનાનિ તામ્રલોહાનિ નરકમાં પરમાધાર્મિક દેવોએ તપેલા તથા ઉકળતા એવા તાંબા અને લોઢાના પાણીને, તઉઆણિ સીસગાણિ ય—ત્રપુકાનિ સીસકાનિ ચ ત્રપુ રાગના પાણીને, સીસાના પાણીને, સુભેરવ—સુભૈરવમ્ ભયંકર આરસતો—આરસન્

टीका—'कुहाउ' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! वर्द्धकिभिः=कुठारपरश्वादिभिः द्रुमइव=वृक्ष इव नरके परमाधार्मिकदेवैः कुठारपरश्वादिभिः द्रुमइवाहम् अनन्तशः=अनन्तवार कुट्टित =सूक्ष्म सूक्ष्म खण्डितः, पाटित =द्विधा कृत =छेदितः, तक्षित =छोलितश्च ॥६६॥

अन्यच्च—

मूलम्—चवेडमुट्ठिमाईहि कुमारेहिं अयं पिव ।
ताडिओ कुट्टिओ भिन्नो, चुण्णिओ यं अणंतसो ॥६७॥

छाया– चपेटामुष्ट्यादिभि', कुमारैरय इव ।
ताडितः कुट्टितो भिन्न-श्चूर्णितश्च अनन्तशः ॥६७॥

टीका—'चवेड' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! कुमारैः=लोहकारैर्घनादिना अयः=लोह इव नरकेऽहम्

तथा—'कुहाउ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जिस प्रकार इस लोक मे (वड्ढईहिं कुहाउपरसुमाईहि दुमोविव-वर्द्धकिभि कुठारपरश्वादिभिः द्रुमइव) बढई (सुतार) कुठार आदि शस्त्रो द्वारा वृक्ष आदिकाष्ठो को (अणतसो कुट्टिओ फालिओ छिन्नो तच्छिओय-कुट्टितः पाटितः छिन्न. तक्षितश्च) सूक्ष्म २ टुकडे रूप मे कर देता है—चीर देताहै छेद देता है और छोल देता है इसी प्रकार नरको मे उन परमाधार्मिक देवोने मेरी भी यही दशा अनन्त वार कि है ॥६६॥

फिर—'चवेड' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! जिस प्रकार (कुमारेहिं अय पिव चवेड मुट्ठिमाईहिं-कुमारैरय इव चपेटा मुष्टयादिभि) कुमार-लुहार घन

तथा—"कुहाउ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—જે પ્રમાણે આ લોકમા वड्ढ ईहिं कुहाउपरसुमाईहिं दुमोविव वर्द्धकिभि कुठारपरश्वादिभिः द्रुमइव સુતાર મોટા કુહાડા આદિ શસ્ત્રોથી વૃક્ષ અને લાકડાને अणतसो कुट्टिओ फालिओ छिन्नो तच्छिओ य-कुट्टित पाटित. छिन्न तक्षितश्च નના ટુકડાના રૂપમા કરી નાખે છે ચીરિ નાખે છે, છેદી નાખે છે, અને છોલી નાખે છે આજ પ્રમાણે નરકમા પણ એ પરમાધાર્મિક દેવોએ મારી એવી દશા અનતવાર કરેલ છે ॥૬૬॥

ફરી—"चवेड" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! જેવી રીતે कुमारेहिं अय पिव चवेड मुट्ठि माईहिं-कुमारैरयइव चपेटामुष्ट्यादिभि કુમાર, લુહાર ઘણ લઈને લોઢાને ટીપે

मांसानि पक्त्वा अग्निवर्णानि=उष्णतयाऽग्निवत्तप्तानि तानि स्वमांसान्यहम् अनेकश =अनेकवारम् खादितोऽस्मि ॥६९॥

किं च—

मूलम्—तुहं पिया सुरा सीहू, मेरओ य महूणि य।
पाइओ मि जलंतीओ, वसाओ रुहिराणि य ॥७०॥

छाया—तव प्रिया सुरा सीधु, मैरेयश्च मधूनि च।
पायितोऽस्मि ज्वलन्तीः, वसा रुधिराणि च ॥७०॥

टीका—'तुह' इत्यादि।

हे मातापितरौ! परमाधार्मिकैः 'तव प्राग्भवे सुरा=चन्द्रहासाभिधान मद्य प्रियाऽऽसीत्, सीधुः=तालवृक्ष निर्यासः (ताडी) प्रिय आसीत्, मैरेयः= पिष्टोद्भव मद्य च प्रियमासीत्, मधूनि=पुष्पोद्भवानि मद्यानि च प्रियाणि आसन' इति स्मारयित्वाऽहम् अत्युष्णतया ज्वलन्तीः वसाः=मेदांसि, ज्वलन्ति रुधिराणि च पायितोऽस्मि। 'जलंतीओ' इत्यस्यावृत्तिं कृत्वा लिङ्गविपरिणामेन 'रुहिराणि' इत्यस्यापि विशेषणत्वम् ॥७०॥

(अग्गिवण्णाइं-अग्निवर्णानि) पका करके खूब गरमा गरम (अणेगसो खाइओमि-अनेकश खादितोऽस्मि) मुझे खिलाया है। सो एक बार नहीं किन्तु अनेक बार ॥ ६९ ॥

किंच—'तुह' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे मात तात! उन परमाधार्मिक देवोंने नरक मे मुझे (तुह सुरा मेरओय महूणिय पिया-तव सुरा सीधु मैरेयश्च मधूनिच प्रिया) इस बातकी स्मृति करवा कर खूब गरम २ सुरा चन्द्रहास नामका मद्य-सीधु- तालवृक्षकी ताडी, मैरेय-पिष्टोद्भव मद्य, मधु- पुष्पोद्भव मद्य ये अनेक प्रकार की शराब अनेकबार (पाइओ-पायितः)

अग्निवर्णानि પકાવીને મને ખૂબ ગરમા ગરમ अणेगसो खाइओमि—अनेकश. खादितोस्मि ખવરાવ્યુ હતુ અને તે એક વખત નહી પરતુ અનેક વખત ॥६९॥

કિંચ—"तुह" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા! પરમાધાર્મિક દેવોએ નરકમા મને तुह सुरा मेरओ य महूणि य पिया—तव सुरा सीधुः मैरेयश्च प्रिया એ વાતની સ્મૃતિ કરાવીને ખૂબ ગરમાગરમ સુરા ચદ્રહાસ નામનુ મદ્ય, તાડ વૃક્ષની તાડી, મૈરેય,—પિષ્ટોદ્ભવ મદ્ય, મધુ—પુષ્પોમાથી તૈયાર કરવામા આવેલુ મદ્ય, એવી અનેકપ્રકારની શરાબ મને અનેકવાર पाइओ—पायितः પીવરાવેલ છે તથા जलतीओ वसाओ रुहिराणि य—

किं च—

मूलम्—तुहं पियांइ मंसाइं, खंडाइं सोल्लगाणि यं ।
खाइओमि समंसाइं, अग्गिवण्णाइऽणेगसो ॥६९॥

छाया—तव प्रियाणि मांसानि, खण्डानि शूल्यकृतानि च ।
खादितोऽस्मि स्वमांसानि, अग्निवर्णान्यनेकशः ॥६९॥

टीका—'तुह' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! परमाधार्मिकैः 'रे नारक ! तव मांसमये खण्डानि=खण्डरूपाणि शूल्यकृतानि=शूले समारोप्य पक्वानि च मांसानि प्रियाणि आसन्' इति स्मारयित्वा मम शरीरान्मांसान्युत्कृत्य खण्डरूपाणि शूल्यकृतानि च तानि

को (सुभेरवम-सुभैरवम्) भयकर (आरसतो-आरसन्) रुदन करनेवाले मुझे (पायिओ-पायित.) पिलाया है। नरको में नारकियों को पानी की जगह लौहा तथा रांगा एव शीशा आदि पिघलाकर परमाधार्मिक देव पिलाते ह। यही दशा मृगापुत्र कहता है कि मेरी भी वहा हुई है ॥ ६८ ॥

तथा—'तुह' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मात तात। उन परमाधार्मिक देवोंने ऐसा कह कर मुझे मांस खिलाया है कि हे नारक तुझे पहिले भवमें (खडाइ-खण्डानि) खडरूप तथा (सोल्लाणि य-शूलाकृतानि च) शूलपर पिरोकर पकाया गया (मसाइ-मांसानि) मांस (पियाइ-प्रियाणि) बहुत प्रिय था सो अब यहा पर भी उसी तरहका मांस तू खा, इस तरह स्मरण करवा कर उन लोगो ने (समसाइ-स्वमांसानि) मेरे शरीर से मांस को काट कर और उसको टुकडे रूप मे कर पश्चात शूल पर पिरोकर

રુદન કરનારા એવા મને पाइओ-पायित પીવરાવ્યુ છે નરકમા નારકીઓને પાણીની જગાએ ઉકળતુ લોઢુ, રાગા, અને સીસુ પીવરાવીને પરમાધામિક દેવો પીડે છે મૃગા પુત્ર કહે છે કે આ દશા મારી ત્યા થયેલ હતી ॥૬૮॥

તથા—"तुह" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! એ પરમાધાર્મિક દેવોએ મને એવુ કહીને માસ ખવડાવ્યુ છે કે હે નારક ! તને પહેલા ભવમા खडाइ-खण्डानि ખડ રૂપ તથા सोल्लाणि य-शूलाकृतानि च શૂળ ઉપર પરોવીને પકાવેલ मसाइ-मांसानि માસ पियाइ-प्रियाणि ઘણુ જ પ્રિય હતુ જેથી હવે અહીયા પણ આજ પ્રકારનુ માસ ખા આ પ્રમાણે સ્મરણ કરાવીને તે લોકોએ समसाइ-स्वमांसानि મારા શરીરમાનુ માસ કાપીને અને તેના ટુકડા બનાવીને શૂળ ઉપર ચઢાવી પછી તેને अग्गिवण्णाइ=

किं च—

मूलम्—तिव्वचंडप्पगाढाओ, घोराओ अइदुस्सहा ।
महाभयाओ भीमाओ, नरएसु वेइया मया ॥७२॥

छाया—तीव्रचण्डप्रगाढा, घोरा अतिदुःसहा ।
महाभया भीमा, नरकेषु वेदिता मया ॥७२॥

टीका—'तिव्व' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! तीव्रचण्डप्रगाढा=तीव्राः—रसानुभावाधिक्यात्, चण्डाः=उत्कटाः—वक्रमशक्यत्वात्, प्रगाढाः=गुरुस्थितिका, एवा कर्मधारय, अतएव घोरा=रौद्राः—श्रूयमाणा अपि शरीर कम्पकारिण्य, अतएव—अति दुःसहा=अत्यन्तदुःसहा, तथा—महाभया—महाभयस्थानरूपा, अतएव—भीमा=श्रूयमाणा अपि भयप्रदा वेदना नरकेषु मया अनुभूता । यद्वा—तीव्रादय एकार्थका एव शब्दा अत्यन्तभयोत्पादनाय पृथक् पृथगुक्ता । प्रस्तावाद् वेदना शब्दस्याध्याहार ॥७२॥

भावार्थ—नरककी वक्तव्यता का उपसंहार करता हुआ मृगापुत्र कह रहा है कि हे मात तात ! इस प्रकार मैने वेदनाओं को अनन्तबार भोगा है ॥ ७१ ॥

तथा—'तिव्वचंडप्प गाढाओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मात तात ! (तिव्वचंडप्पगाढाओ—तीव्रचण्डप्रगाढा) रसानुभाव की अधिकता वाली होने से तीव्र, वक्तु अशक्य होने से चण्ड, एव गुरु स्थिति वाली होने से प्रगाढ इसीलिये (घोराओ—घोरा) रौद्र—जिनको सुनते ही शरीर में कंपी छूटती है ऐसी, तथा (अइदुस्सहा—अतिदुःसहा) अत्यन्त दुःसह एव (महाभयाओ भीमाओ—महाभया भीमा) महाभयोत्पादक—अथवा महाभयकी स्थान रूप तथा भीम—

ભાવાર્થ—નરકની વક્તવ્યતાનો ઉપસંહાર કરી રહેલા મૃગાપુત્ર કહે છે કે, હે માતાપિતા ! આ પ્રમાણે મેં નરકની વેદનાઓને અનેકવાર ભોગવી છે ॥૭૧॥

તથા— "तिव्वचंडप्पगाढाओ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે માતાપિતા ! तिव्वचंडप्पगाढाओ—तीव्रचण्डप्रगाढा રસાનુભાવની અધિકતા વાળી હોવાથી તીવ્ર, વક્તુમ અશક્ય હોવાથી ચંડ અને ભારે હોવાના કારણથી પ્રગાઢ એવા घोराओ—घोरा રૌદ્ર જેને સાંભળતા શરીરમાંથી કંપારી છુટે છે એવી તથા अइदुस्सहा—अतिदुस्सहा અત્યંત દુઃસહ અને महाभयाओ भीमाओ—महाभयाभीमा મહા ભયોત્પાદક અથવા મહાન ભયના સ્થાન રૂપ તથા

नरकदुःखतामुपसंहरन् गाथाद्वयमाह—

मूलम्—निच्चं भीएण तत्थेण, दुहिएणं वहिएण य ।
परमा दुहसबद्धा, वेयणा वेइया मए ॥७१॥

छाया—नित्यं भीतेन त्रस्तेन, दुःखितेन व्यथितेन च ।
परमा दुःखसंबद्धाः, वेदना वेदिता मया ॥७१॥

टीका—'निच्च' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! नरके नित्य=सर्वदा भीतेन-भययुक्तेन त्रस्तेन=उद्विग्नेन अतएव दुःखितेन=सजातविविधदुःखेन च=पुनः व्यथितेन=कम्पमान सर्वाङ्गोपाङ्गतया चलितेन च मया दुःखसबद्धाः परमाः=उत्कृष्टा वेदना अनन्तवार वेदिता=अनुभूताः । वेदना सुखसबद्धाऽपि भवति, तन्निराकरणार्थ 'दुहसबद्धा' इति विशेषणमुक्तम् ॥७१॥

पिलाई है तथा (जलतीओवसाओ रुहिराणि य-ज्वलन्तीः वसा रुधिराणि च) गरम २ वसा-चर्बी एव रुधिर भी अनेकवार (पाइओ-पायितः) पिलाया है कि हे नारक ! तुझे ये सब चीजें पूर्वभव मे बडी प्रिय थीं ॥७०॥

अब नरक के दुःखोंका उपसहार करते है—'निच्च' इत्यादि

अन्वयार्थ—हे माततात ! नरकमे (नित्यम्-निच्च) सर्वदा (भीएण-भीतेन) भययुक्त तथा (तत्थेण-त्रस्तेन) उद्विग्न इसी लिये (दुहिएण-दुःखितेन) दुःखित एव (वहिएण-व्यथितेन) व्यथित हुए (मए-मया) मैने (दुहसबद्धा-दुःख सबद्धा) दुःखों से सबद्ध (परमा-परमा) उत्कृष्ट (वेयणा-वेदना) वेदनाएँ अनतवार (वेइया-वेदिता) अनुभवित की हैं।

ज्वलन्तीःवसा रुधिराणि च ગરમા ગરમ ચરબી અને લોહી પણ અનેકવાર पाइओ-पायित पीवरावेल छे के हे नारक ! तने पूर्वभवमा आ बधी चीजो घणी प्रिय हती ॥ ७० ॥

હવે નરકના દુ ખોનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે—"निच्च" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! નરકમા निच्च-नित्य હમેશા भीएण-भीतेन ભયવાળા તથા तत्थेण-त्रस्तेन ઉદ્વિગ્ન એ કારણથી दुहिएण-दुःखितेन દુ ખિત અને વ્યથિત બનેલા मए-मया એવા મે दुहसबद्धा-दुक्खसबद्धा દુ ખોના સબધરૂપ परमा-परमा' અનેક પ્રકારની वेयणा-वेदना' વેદનાઓ અનેકવાર वेइया-वेदिता અનુભવ કરેલ છે

टीका--'सव्वभवेसु'

हे मातापितरौ ! मया सर्वभवेषु=देवादिसर्वगतिषु असाता=दुःखरूपा वेदना वेदिता=अनुभूता । यत्=यस्मात्कारणात् देवादिसर्वगतिषु निमेषान्तरमात्रमपि= निमेषः अक्षिमीलनं तस्य अन्तरं=व्यवधानं-यावता कालेनासौ भूत्वा पुनर्भवति -तन्मात्रमपि कालं साता=सुखरूपा वेदना नास्ति । वस्तुतो वैषयिकसुखं दुःखमेव, ईर्ष्याद्यनेकदुःखानुविद्धत्वात् परिणामदारुणत्वाच्च । अयमाशय -अहं कस्यामपि गतौ कदाचिदपि सुखीनाभूवम्, अतः स्वात्मानं सुखोपचितं सुकुमारं कथ-

ये वेदनाएँ सबगति में भोगी है सो कहते हैं—'सव्वभवेसु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे मात तात (मए-मया) मैने इन दुःख रूप (वेयणा-वेदना) वेदनाओ को नरक में ही भोगा हो सो बात नही है किन्तु (सव्वभवेसु-सर्वभवेषु) प्रत्येक गतिमें इन (असाया-असाता) दुःखरूप (वेयणा वेइया-वेदना वेदिता.) वेदनाओं को भोगा है । क्यों कि देवादिक गतिओ मे (निमेसतर मित्तपि-निमेषान्तरमात्रमपि) एक निमेष मात्र भी (साता वेयणा नत्थि-साता वेदना नास्ति) सुख का वेदन नहीं है। यद्यपि इन गतियों में-देवादिक गतियों में वैषयिक सुख है परन्तु विचार करने पर यह निश्चित हो जाता है कि वह सुख नही है किन्तु वह तो एक दुःखका ही प्रकार है। क्यों कि उसमें ईर्ष्याआदि अनेक दुःखों की अनुविद्धता है । तथा वह परिणाम मे दारुण है। कहने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि हे माततात ! मैने किसी गति मे कभीभी सुख के दर्शन नही किये है। इसलिये मै अपनी आत्मा को सुकुमार-

એ વેદનાઓ સઘળી ગતીમા ભોગવેલ છે તેને કહે છે—"सव्वभवेसु" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! મે આ मए-मया દુખરૂપ वेयणा-वेदना વેદનાઓને નરકમા જ ભોગવી છે એવુ નથી પરતુ सव्वभवेसु-सर्वभवेषु પ્રત્યેક ગતિમા આ असाया-असाता દુખરૂપ वेयणा वेइया-वेदना वेदिता વેદનાઓને ભોગવેલ છે કેમકે, દેવાદિક ગતિઓમા निमेसतरमित्तपि-निमेषान्तरमात्रमपि એક નિમેષ માત્ર પણ साया वेयणा नत्थि-शाता वेदना नास्ति સુખનુ વેદન નથી જોકે આગતિઓમા-દેવાદિક ગતિઓમા વૈષયિક સુખ છે પરતુ વિચાર કરનાથી એ નિશ્ચિત થાય છે કે, એ સુખ નથી પરતુ તે તો દુખનો એક પ્રકાર જ છે કેમ કે, તેમા ઇર્ષ્યા આદિ અનેક દુખોની ખાણ છે તથા તે પરિણામમાં દારૂણ છે કહેવાનુ તાત્પર્ય ફક્ત એટલુ જ છે કે, હે માતા પિતા ! મે કોઈ ગતિમા કદી પણ સુખનુ દર્શન કરેલ નથી આથી હુ મારા આત્માને સુકુમાર અને સુખોપચિત

कीदृश पुनस्तासां तीव्रादित्वमित्यादि—

मूलम्—जारिसा माणुसे लोए, ताया दीसंति वेयणा ।
एत्तो अणंतगुणिआ, नरएसुं दुक्खवेयणा ॥७३॥

छाया—यादृश्या मानुषे लोके, तात दृश्यन्ते वेदना ।
इतोऽनन्तगुणिताः, नरकेषु दुःखवेदनाः ॥७३॥

टीका—'जारिसा' इत्यादि ।

हे तात ! मानुषे लोके यादृश्यो वेदना दृश्यन्ते, इतोऽपि=एताभ्यो वेदनाभ्योऽपि अनन्तगुणिताः दुःखवेदना नरकेषु भवन्ति ॥७३॥

न च नरकेष्वेव वेदना मयाऽनुभूता, अपि तु सर्वास्वपि गतिष्वनुभूताः ? इत्याह—

मूलम्—सव्वभवेसु असाया, वेयणा वेइया मए ।
निमेसंतरमित्तंपि, जं साया नत्थि वेयणा ॥७४॥

छाया—सर्वभवेषु असाता, वेदना वेदिता मया ।
निमेषान्तरमात्रमपि, यत् साता नास्ति वेदना ॥७४॥

जिनके सुनने से भय लगता है ऐसी वेदनाओं को (मया-मया) मैं ने (नरएसु-नरकेषु) नरकों में (वेइया-वेदिता) भोगा है ॥ ७२ ॥

उन वेदनाओंकी तीव्रताका वर्णन करते हैं—'जारिसो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(ताया-तात) हे मात तात !) (माणुसे लोए-मानुषे लोके) मनुष्यलोक मे (जारिसा-यादृश्या) जिस प्रकारकी (वेयणा-वेदना) वेदनाएँ देखने मे या भोगने मे आती है (एत्तो-इत) इनसे भी (अणतगुणिया-अनतगुणिता) अनतगुणित (दुक्ख वेयणा नरएसु-दुःखवेदनाः नरकेषु) दुःखवेदनाएँ मैने नरको मे भोगी हैं ॥ ७३ ॥

ભીમ જેને સાભળવાથી ભય લાગે છે એવી વેદનાઓ मए-मया મે नरएसु नरकेषु નરકમા वेइया-वेदिता' ભોગવી છે ॥ ૭૨ ॥

આ વેદનાઓની તીવ્રતાનુ વર્ણન કરે છે—"जारिसो" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—ताया-तात હે માતા પિતા ! माणुसे लोए-मानुषे लोके મનુષ્ય લોકમા जारिसा-यादृश्या જે પ્રકારની वेयणा-वेदना વેદનાઓ જોવામા અને ભોગવવામા આવે છે एत्तो-इत તેનાથી પણ अणत गुणिया-अनत गुणिता' અનેકગણી दुक्ख वेयणा नरएसु-दु ख वेदना नरकेषु દુ ખ વેદનાઓ મે નરકોમા ભોગવી છે ॥ ૭૩ ॥

टीका—'सव्वभवेसु'

हे मातापितरौ ! मया सर्वभवेषु=देवादिसर्वगतिषु असाता=दुःखरूपा वेदना वेदिता=अनुभूता । यत्=यस्मात्कारणात् देवादिसर्वगतिषु निमेषान्तरमात्रमपि निमेषः अक्षिमीलन तस्य अन्तर=व्यवधान–यावता कालेनासौ भूत्वा पुनर्भवति –तन्मात्रमपि काल साता=सुखरूपा वेदना नास्ति । वस्तुतो वैषयिकसुख दुःखमेव, ईर्ष्याद्यनेकदुःखानुविद्धत्वात् परिणामदारुणत्वाच्च । अयमाशय –अह १९ मपि गतौ कदाचिदपि सुखीनाभूवम्, अत. स्वात्मान सुखोपचित सुकुमार ॥

ये वेदनाएँ सब गति में भोगी है सो कहते हैं—'सव्वभवेसु' इत्यादि

अन्वयार्थ—हे मात तात (मए–मया) मैने इन दुःख रूप (वेयणा वेदना) वेदनाओं को नरक में ही भोगा हो सो बात नहीं है (सव्वभवेसु–सर्वभवेषु) प्रत्येक गतिमें इन (असाया–असाता) दुःखरूप (वेयणा वेइया–वेदना वेदिताः) वेदनाओं को भोगा है। क्यों कि देवादिक गतिओ मे (निमेसतर मित्तपि–निमेषान्तरमात्रमपि) एक निमेष मात्र भी (साता वेयणा नत्थि–साता वेदना नास्ति) सुख का वेदन नहीं है। यद्यपि इन गतियों में–देवादिक गतियों में वैषयिक सुख है परन्तु विचार करने पर यह निश्चित हो जाता है कि वह सुख नहीं है किन्तु वह तो एक दुःखका ही प्रकार है। क्यों कि उसमें ईर्ष्याआदि अनेक दुःखों की अनुविद्धता है। तथा वह परिणाम मे दारुण है। कहने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि हे माततात ! मैंने किसी गति मे कभीभी सुख के दर्शन नहीं किये है। इसलिये मैं अपनी आत्मा को सुकुमार–

એ વેદનાઓ સઘળી ગતીમા ભોગવેલ છે તેને કહે છે—"सव्वभवेसु" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! મે આ मए–मया દુ ખરૂપ वेयणा–वेदना વેદનાઓને નરકમા જ ભોગવી છે એવુ નથી પરતુ सव्वभवेसु–सर्वभवेषु પ્રત્યેક ગતિમા આ असाया–असाता દુ ખરૂપ वेयणा वेइया–वेदना वेदिता વેદનાઓને ભોગવેલ છે કેમકે, દેવાદિક ગતિઓમા निमेसतरमित्तपि–निमेषान्तरमात्रमपि એક નિમેષ માત્ર પણ साया वेयणा नत्थि–शाता वेदना नास्ति સુખનુ વેદન નથી જોકે આગતિઓમા–દેવાદિક ગતિઓમા વૈષયિક સુખ છે પરતુ વિચાર કરવાથી એ નિશ્ચિત થાય છે કે, એ સુખ નથી પરતુ તે તો દુ ખનો એક પ્રકાર જ છે કેમ કે, તેમા ઇર્ષ્યા આદિ અનેક દુ ખોની ખાણ છે તથા તે પરિણામમાં દારૂણ છે કહેવાનુ તાત્પર્ય ફક્ત એટલુ જ છે કે, હે માતા પિતા ! મે કોઈ ગતિમા કદી પણ સુખનુ દર્શન કરેલ નથી આથી હુ મારા આત્માને સુકુમાર અને સુખોપચિત

मह मन्येय। येन मया नरकेष्वत्युष्णशीतादयो महावेदना अनन्तवारमनुभूताः, तस्य मम महाव्रतपालन क्षुदादि सहन वा कथ दुष्करम्? किंतु नैव दुष्करम्। तस्मात्प्रव्रज्यैव मया ग्रहीतव्येति ॥७४॥

एवमुक्त्वा विरते मृगापुत्रे मातापितरौ यदुक्तवन्तौ तदाह—

मूलम्—तं बिंत अम्मापिअरो, छदेण पुत्त! पव्वया।
नवर पुण सामण्णे, दुक्ख निप्पडिकम्मया ॥७५॥

छाया—त ब्रूतोऽम्बापितरौ, छन्देन पुत्र! प्रव्रज!
नवर पुनः श्रामण्ये, दुःख निष्प्रतिकर्मता ॥७५।

टीका—'त बिंत' इत्यादि।

अम्बापितरौ त=मृगापुत्र कुमार ब्रूतः—हे पुत्र! छन्देन=यथारुचि प्रव्रज=प्रव्रज्यां गृहाण। नवर=विशेषस्तु पुनरयमस्ति यत् श्रामण्ये चारित्रे निष्प्रति

एव सुखोपचित कैसे मानू। जब मैंने अनतवार नरकों मे अति उष्ण शीतादिक की दु ख वेदनाओं को भोगा है तब उनके आगे महाव्रतों का पालन, करना और क्षुधादिक की वेदनाओं को सहना कौनसी गिनती है। इनके पालन मे उनकी अपेक्षा कोई दुष्करता नहीं है। इसलिये मैं दीक्षा अवश्य २ धारण करूँगा ॥७४॥

ऐसा कहने पर मातापिताने क्या कहा सो कहते हैं—'त बिंत' इत्यादि

अन्वयार्थ—मृगापुत्र के इस प्रकार कथन को सुनकर तथा उसकी हार्दिक दृढता जानकर (अम्मापिअरो-अम्बापितरौ) मातापिता ने (त-तम्) उससे (बिंत ब्रूत) कहा (पुत्त-पुत्र) हे बेटा! (छदेण पव्वया-छन्देन प्रव्रज) तुम रुचि के अनुसार दीक्षा ले सकते हो। हमको इसमे कोई बाधा नही है। (नवर-नवरम्) परन्तु एक बात है कि (सामण्णे-

---

કઇ રીતે માનુ ? જ્યારે મે અનતવાર નરકોમા અતિ ઉષ્ણ શીતાદિકની દુ ખ વેદનાઓને ભોગવેલ છે ત્યારે એની આગળ મહાવ્રતોની પાલના કરવી અને ક્ષુધાદિકની વેદનાઓને સહેવી કઈજ હીસાબમા નથી એના પાલનમા તેની અપેક્ષાએ કોઈ દુષ્કરતા નથી આ કારણે હુ દીક્ષા અવશ્ય અવશ્ય ધારણ કરીશ ॥ ૭૪ ॥

આવુ કહેવાથી માતા પિતાએ શુ કહ્યુ તેને કહે છે—"त बिंत" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—મૃગાપુત્રના આ પ્રકારના વચનને સાભળીને તથા એની હાર્દિક દૃઢતાને જાણીને अम्मापिअरो-मातापितरौ માતા પિતાએ त-तम् તેને बिंत-ब्रूत કહ્યુ-पुत्त-पुत्र छदेण पव्वया-छन्देन प्रव्रज તમારી રૂચી અનુસાર દીક્ષા લઈ શકો છો અમારો એમા કોઈ પ્રકારનો વાધો નથી नवर-नवरम् પરતુ એક વાત છે કે,

कर्मता-प्रतिकर्म=रोगप्रतीकारः, निर्गत प्रतिकर्म यस्मात्स निष्प्रतिकर्मा=जिनकल्पीश्रमण, स्थविरकल्पिकस्य तु निरवद्य प्रतिकर्मविहितमेव, तस्य भावस्तत्ता, रोगप्रतीकाराभाव इत्यर्थः दुःखम्=दुःखहेतु ॥७५॥

इत्थ मातापितृभ्यामुक्ते मृगापुत्रः प्राह-

मूलम्—सो बिंत अम्मापियरो, एवमेयं जहाफुडं ।
परिकम्मं को कुणइ, अरण्णे मियपक्खिणं ? ७६॥

छाया—सब्रूतेऽम्बापितरौ, एवमेतत् यथास्फुटम् ।
परिकर्म कः करोति, अरण्ये मृगपक्षिणाम् ॥७६॥

टीका—'स बिंत' इत्यादि ।

स मृगापुत्रोऽम्बापितरौ ब्रूते=कथयति-हे मातापितरौ ! यद् भवद्भ्या म् एव=पूर्वोक्तप्रकारेण निष्प्रतिकर्मतया दुःखरूपत्वमुक्तम्, एतद्=भवदुक्त यथा स्फुट=सत्यम् । परन्तु भवद्भ्यामिद विचारणीय यद् अरण्ये=अटव्या मृगपक्षिणा

श्रामण्ये) इस चारित्र में (निप्पडिकम्मया दुक्ख-निष्प्रतिकर्मता दुःखम्) निष्प्रतिकर्मता दुःख है। अर्थात् जिन कल्पी श्रमण रोग का प्रतीकार-दवा आदिका उपयोग नहीं कर सकता है। स्थविरकल्पी तो निरवद्य प्रतिकर्म कर सकता है अत जिनकल्प अवस्था में निष्प्रतिकर्मता-रोग-प्रतिकाराभाव-यह दुःखका हेतु है ॥ ७५ ॥

मातापिता के ऐसा कहने पर मृगापुत्र कहते हैं—'सो बिंत' इत्यादि।

अन्वयार्थ—मातापिताकी इस बातको सुनकर (सो अम्मापियरो बिंत-सः अम्बापितरौ ब्रूते) मृगापुत्र ने उनसे कहा की जो आपने (एवं-एवम्) पूर्वोक्त प्रकार से निष्प्रतिकर्मता में दुःखरूपता प्रदर्शित की है सो (एय-एतत्) यह आपका कहना (जहाफुड-यथास्फुटम्) बिलकुल

सामण्णे-श्रामण्ये આ ચારિત્રમા निप्पडिकम्मया दुक्ख-निष्प्रतिकर्मता दु खम् નિષ્પ્રતિકર્મતા દુ ખ છે-અર્થાત્ જીનકલ્પીશ્રમણ રોગના પ્રતિકાર માટે-દવા આદિનો ઉપયોગ કરી શકતા નથી સ્થવિરકલ્પી તો નિરવદ્ય પ્રતિકર્મ કરી શકે છે આથી જીનકલ્પ અવસ્થામા નિષ્પ્રતિકર્મતા-રોગ પ્રતિકારાભાવ-એ દુ ખનો હેતુ છે ॥ ૭૫ ॥

માતા પિતાનુ આ પ્રકારનુ કહેવુ સાભળીને મૃગાપુત્ર કહે છે-"सो बिंत" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—માતા પિતાની આ વાતને સાભળીને सो अम्मापियरो बिंत-सः अम्बापितरौ ब्रूते મૃગાપુત્રે એમને કહ્યુ કે, આપે જે एव-एवम् પૂર્વોક્ત પ્રકારથી નિષ્પ્રતિકર્મતામા દુ ખરૂપતા પ્રગટ કરી છે તો આપનુ एय-एतत् એ કહેવુ जहा फुडम्-यथा स्फुटम् બીલકુલ સત્ય છે પર તુ આપ એ વાતનો પણ વિચાર

पक्षिणा च परिकर्म=रोगोत्पत्तौ तत्मतीकार कः करोति ? न कोऽपि करोतीत्यर्थः। यथाऽरण्ये मृगपक्षिणा न कोऽपि परिकर्म करोति, तथाऽपि ते जीवन्ति च विचरन्ति च। अतो नास्ति निष्प्रतिकर्मताया दुःखहेतुत्वम् ॥७६॥

यस्मादेव तस्मात्—

मूलम्—एगभूएँ अरण्णे वा, जहा उँ चरई मिगे।
एवं, धम्मं चरिस्सामि, सजमेण तवेण यं ॥७७॥

छाया—एकभूत अरण्ये वा, यथा तु चरति मृग'।
एव धर्मं चरिष्यामि, सयमेन तपसा च ।७७॥

टीका—'एगभूए' इत्यादि।

हे मातापितरौ ! अरण्ये=अटव्या यथा तु=यथैव मृग. एकभूत'=एकाकी सन् चरति, एवम्=अनेन प्रकारेणैव अहमपि सयमेन=पृथ्वीकायादि सप्तदश विधसयमेन, तपसा=अनशनादिना द्वादशविधेन च धर्मं=श्रुतचारित्रलक्षण चरि-

सत्य है। परन्तु आप इस बात का भी तो विचार करे कि—(अरण्णे मियपक्खिण को परिकम्म कुणइ—अरण्ये मृगपक्षिणा कः परिकर्म करोति) अटवी म रहने वाले मृग और पक्षिओंका प्रतिकर्म—रोगकी उत्पत्ति में दवा का उपचार कौन करता है अर्थात् कोई नही करता है ॥ ७६ ॥

जब ऐसा है तो—'एग भूए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जहा—यथा) जिस प्रकार (अरण्णे—अरण्ये) जगलमे मिगे—मृगः) एकाकी (एगभूए—एकभूत') एकाकी स्वतत्र—निरपेक्ष होकर (चरई—चरति) विचरण करता है, (एव—एवम्) ईसी प्रकार हे मात तात ! मैं भी सत्रह प्रकार (सजमेण तवेण य—सयमेन तपसा च) अनशन आदि बारह प्रकार के तप से अपने आत्मा को भावित करता हुआ

કરે। છે, अरण्णे मियपक्खिण को परिकम्म कुणइ—अरण्ये मृगपक्षिणा क. परिकर्म करोति અટવીમા રહેવાવાળા મૃગ અને પક્ષીઓના પ્રતિકર્મ-રોગની ઉત્પત્તિમા દવાનો ઉપચાર કોણ કરે છે? અર્થાત્ કોઈ કરતા નથી ॥ ૭૬ ॥

જ્યારે એવુ છે તો—"एगभूए" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जहा—यथा જે રીતે अरण्णे—अरण्ये જગલમા मिगे—मृग મૃગ एगभूए—एकभूत એકાકી સ્વતત્ર-નિરપેક્ષ થઈને चरई—चरति વિચરણ કરે છે एव—एवम् આ પ્રમાણે હે માતા પિતા ! હુ પણ સત્તર પ્રકારના सजमेण—तवेण य—सयमेन तपसा च સયમની તથા અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપથી પોતાના

ष्यामि=श्रुतचारित्रलक्षणधर्मं विचरिष्यामीत्यर्थः। 'वा' शब्दः, पूरणे। 'तु' शब्दोऽवधारणे ॥७७॥

किं च—

मूलम्—जया मियस्स आयंको, महारण्णम्मि जायई।
अच्छंतं रुक्खमूलम्मि कोणं ताहे तिगिच्छई ॥७८॥

छाया—यदा मृगस्य आतङ्को, महारण्ये जायते।
आसीनं वृक्षमूले, कस्तं तदा चिकित्सते ॥७८॥

टीका—'जया' इत्यादि।

यदा महारण्ये=महाटव्यां मृगस्य आतङ्को=रोगो जायते, तदा वृक्षमूले आसीनं तं मृगं कश्चिकित्सते=औषधोपदेशेन नीरोगं कः करोति, न कोऽपीत्यर्थः। ७८॥

किं च—

मूलम्—को वा से ओसहं देइ, को वा से पुच्छई सुहं।
को वा से भत्तपाणं वा, आहरित्तु पणामए ७९॥

(धम्मं चरिस्सामि-धर्मं चरिष्यामि) श्रुतचारित्ररूप धर्म का आचरण करूंगा। मुझे इस धर्मके सेवन में किसी सहायककी अपेक्षा नहीं है ॥७७॥

इस पर दृष्टान्त कहते हैं—'जया' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माततात! मैं आपसे पूछताहूं कि (जया-यदा) जिस समय महारण्य में विचरने वाले (मियस्स-मृगस्य) मृग को कोई (आयंको-आतङ्को) रोग हो जाता है उस समय (रुक्खमूलम्मि-वृक्षमूले) वृक्षके मूल में (अच्छंतं-आसीनं) एक और पडे हुए (कोणं ताहे तिगिच्छइ-कस्तं तदा चिकित्सते) उस मृगकी चिकित्सा कौन करता है? अर्थात् कोई नहीं करता है ॥७८॥

આત્માને ભાવિત કરીને धम्मं चरिस्सामि-धर्मं चरिष्यामि શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ કરીશ મને આ ધર્મના સેવનમાં કોઈ સહાયકની અપેક્ષા નથી ॥ ૭૭ ॥

આના ઉપર દૃષ્ટાન્ત કહે છે—"जया" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા હું આપને પૂછું છું કે, जया-यदा જે સમયે મહા અરણ્યમાં વિચરવાવાળા मियस्स-मृगस्य મૃગને કોઈ आयंको- आतङ्को રોગ થઈ જાય છે એ સમયે रुक्खमूलम्मि-वृक्षमूले વૃક્ષના થડની પાસે अच्छंतं-आसीनं પડેલા कोणं ताहे तिगिच्छई-कस्तं तदा चिकित्सति એ મૃગની ચિકિત્સા કોણ કરે છે? અર્થાત કોઈ કરતું નથી ॥ ૭૮ ॥

पक्षिणा च परिकर्म=रोगोत्पत्तौ तत्प्रतीकार कः करोति ? न कोऽपि करोतीत्यर्थः। यथाऽरण्ये मृगपक्षिणा न कोऽपि परिकर्म करोति, तथाऽपि ते जीवन्ति च विचरन्ति च। अतो नास्ति निष्प्रतिकर्मताया दुःखहेतुत्वम् ॥७६॥

यस्मादेव तस्मात्—

मूलम्—एगभूएँ अरण्णे वा, जहा उ चरई मिगे।
एँव, धम्मं चरिस्सामि, संजमेण तवेण यं ॥७७॥

छाया—एकभूत अरण्ये वा, यथा तु चरति मृग'।
एव धर्मं चरिष्यामि, सयमेन तपसा च ।७७॥

टीका—'एगभूए' इत्यादि।

हे मातापितरौ ! अरण्ये=अटव्या यथा तु=यथैव मृगः एकभूतः=एकाकी सन् चरति, एवम्=अनेन प्रकारेणैव अहमपि सयमेन=पृथ्वीकायादि सप्तदशविधसयमेन, तपसा=अनशनादिना द्वादशविधेन च धर्मं=श्रुतचारित्रलक्षण चरि-

सत्य है। परन्तु आप इस बात का भी तो विचार करे कि-(अरण्णे मियपक्खिण को परिकम्म कुणइ-अरण्ये मृगपक्षिणा कः परिकर्म करोति) अटवी मे रहने वाले मृग और पक्षिओंका प्रतिकर्म-रोगकी उत्पत्ति में दवा-का उपचार कौन करता है अर्थात् कोई नही करता है ॥ ७६ ॥

जब ऐसा है तो—'एग भूए' इत्यादि!

अन्वयार्थ—(जहा-यथा) जिस प्रकार (अरण्णे-अरण्ये) जगलमे मिगे-मृगः) एकाकी (एगभूए-एकभूत) एकाकी स्वतत्र-निरपेक्ष होकर (चरई-चरति) विचरण करता है, (एव-एवम्) ईसी प्रकार हे मात तात ! मै भी सत्रह प्रकार (संजमेण तवेण य-सयमेन तपसा च) अनशन आदि बारह प्रकार के तप से अपने आत्मा को भावित करता हुआ

કરે। છે, अरण्णे मियपक्खिण को परिकम्म कुणइ-अरण्ये मृगपक्षिणा क परिकर्म करोति અટવીમા રહેવાવાળા મૃગ અને પક્ષીઓના પ્રતિકર્મ-રોગની ઉત્પત્તિમા દવાનો ઉપચાર કોણ કરે છે ? અર્થાત્ કોઈ કરતા નથી ॥ ૭૬ ॥

જ્યારે એવુ છે તો—"एगभूए" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जहा-यथा જે રીતે अरण्णे-अरण्ये જગલમા मिगे-मृग મૃગ एगभूए-एकभूत એકાકી સ્વતત્ર-નિરપેક્ષ થઈને चरई-चरति વિચરણ કરે છે एव-एवम् આ પ્રમાણે હે માતા પિતા ! હુ પણ સત્તર પ્રકારના संजमेण-तवेण य-सयमेन तपसा च સયમની તથા અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપથી પોતાના

चरणभूमिं गच्छति। तदेव कथयति-'भक्तपाणस्स' इत्यादि। स मृगः भक्त पानस्य=तृणस्य जलस्य च अर्थाय=हेतोः वल्लराणि=सघनवनानि, सरांसि= सरोवराणि च गच्छति। ॥८०॥

ततः—

मूलम्—खाइत्ता पाणियं पाउं, वल्लरेहिं सरेहि यं।
मिगचारियं चरित्ता णं, गच्छेई मिगचारियं ॥८१॥

छाया—खादित्वा पानीयं पीत्वा, वल्लरेषु सरस्सु च।
मृगचर्यां चरित्वा खलु, गच्छति मृगचर्याम् ॥८१॥

टीका—'खाइत्ता' इत्यादि।

मृगो वल्लरेषु=सघनवनेषु खादित्वा=तृणादिकं चरित्वा सरस्सु च पानीयं पीत्वा, तथा-मृगचर्यां=चरणं=चर्या-इतश्चेतश्चोत्प्लवनं-मृगाणां चर्या मृगचर्या ताम्, चरित्वा=कृत्वा मृगस्वभावोचितमुत्प्लवनादिकं कृत्वेत्यर्थः, खलु=निश्चयेन मृगचर्यां=मृगाणां चर्या=चेष्टा-स्वातन्त्र्योपवेशनाद्यात्मिका यस्यां सा मृगचर्या= तां गच्छति। अयं भावः-मृगो वनेषु तृणं चरित्वा सरस्सु पानीयं पीत्वा च स्वस्वाभाविक गत्या उत्प्लुत्योत्प्लुत्य स्ववासोचितस्थाने समागच्छतीति। 'वल्लरेहिं सरेहिं' इत्युभयत्र सप्तम्यर्थे तृतीया ॥८१॥

(सुही होइ-सुखी भवति) नीरोग हो जाता है (तया-तदा) उस समय वह भक्तपान के निमित्त (गोयर-गोचरम्) चरने की भूमि की तर्फ (गच्छइ-गच्छति) निकल जाता है। वहां वह सघन वनों में एवं तालावों पर जाकर खाता है और पानी पीता है ॥८०॥

फिर क्या करता है सो कहते हैं—'खाइत्ता' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इसलिये जिस वह मृग (वल्लरेहिं-वल्लरेषु) सघनवन एवं (सरेहिं य सरस्सु च) तालावों पर जाकर (खाइत्ता-खादित्वा) खा कर (पाणियं

सुखी भवति नीरोगी थई जाय छे तया-तदा ए वखते ते पोताना खोराक माटे गोयर-गोचरं चरवा माटे गोचर भूमीमां गच्छइ-गच्छति नीकळी जाय छे त्यां ए गाढ वनोमां जईने खाय छे अने तळावोमां जई पाणी पीवे छे ॥ ८० ॥

पछी शुं करे छे ते बतावे छे—'खाइत्ता' इत्यादि

अन्वयार्थ—आ माटे जे प्रकारे ए मृग वल्लरेहिं-वल्लरेषु गाढां वन अने सरेहिं य-सरस्सु च तळावो उपर जईने खाइत्ता-खादित्वा खाई पाणीयं पाउं-

छाया—को वा तस्मै औषधं ददाति, को वा तस्य पृच्छति सुखम् ।
को वा तस्मै भक्तपानं वा, आहृत्य प्रणामयति ।७९॥

टीका—'को वा' इत्यादि ।

हे मातापितरौ ! तस्मै रोगग्रस्ताय मृगाय को औषधं ददाति ? न कोऽपि ददातीत्यर्थः । कः तस्य मृगस्य समीपे समागत्य सुखम्=पृच्छति, न कोऽपि पृच्छतीत्यर्थः । को भक्तपानम् आहृत्य=समादाय=तस्मै प्रणामयति=अर्पयति, न कोऽप्यर्पयतीत्यर्थः । वा शब्दाः समुच्चयार्थकाः ॥७९॥

कथं तर्हि तस्य निर्वाहो भवति ? इत्याह—

मूलम्—जया यं से सुही होइ, तया गच्छइ गोयरं ।
भत्तपाणस्स अट्ठाए, वल्लराणि सराणि य ॥८०॥

छाया—यदा च स सुखी भवति, तदा गच्छति गोचरम् ।
भक्तपानस्य अर्थाय, वल्लराणि सरांसि च ॥८०॥

टीका—'जया य' इत्यादि ।

यदा च स मृगः सुखी=नीरोगो भवति, तदा स वृक्षतलान्निर्गत्य गोचर

फिर—'को वा से' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे माततात ! (से-तस्मै) रोगग्रस्त मृगको (को वा ओसहं देइ-को वा औषधं ददाति) कौन तो औषधि लाकर देता है और (को वा से पुच्छई सुहं-को वा तस्य पृच्छति सुखम्) कौन उसके सुख दुःख की बात पूछता है । तथा (को वा से भत्तपाणं वा आहरित्तु पणामए-को वा तस्मै भक्तपानं वा आहृत्य प्रणामयति) कौन उसके पास जाकर उसको भक्त पान लाकर देता है अर्थात् कोई नहीं देता है ॥७९॥

फिर उसका निर्वाह कैसे होता है ? सो कहते हैं—'जया य' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जया-यदा) जिस समय (से-सः) वह बिचारा मृग

પછી—"को वा से" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે માતા પિતા ! से-तस्मै એ રોગગ્રસ્ત મૃગને को वा ओसहं देइ-को वा औषधं ददाति કોણ ઔષધિ લાવીને આપે છે, અને को वा से पुच्छइ सुहं-को वा तस्य पृच्छति सुखम् કોણ એના સુખ દુ ખની વાત પૂછે છે, તથા को वा से भत्तपाणं वा आहरित्तु पणामए-को वा तस्मै भक्तपानं वा आहृत्य प्रणामयति કોણ એના પાસે જઈને એને આહારપાણી પહોચાડે છે ? અર્થાત્ કોઇ આપતુ નથી ॥૭૯॥

પછી એનો નિર્વાહ કઇ રીતે થઇ શકે છે ? આને કહે છે—"जया य" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—जया-यदा જે વખતે से-स તે બિચારો મૃગ सुही होइ-

रोहणात्कमरहित सन् खलु=निश्चयेन ऊर्ध्वा दिश प्रक्रामति=प्रकर्षेण गच्छति=सर्वोपरिस्थाने स्थितोभवति मुक्तो भवतीति यावत्। रोगाभावे भिक्षार्थं गमन जिनकल्पिकापेक्षया प्रोक्तम् ॥८२॥

मृगचर्या मेव स्पष्टयति--

मूलम्--जहा मिए एग अणेगचारी, अणेगवासे धुवगोयरे य ।
एवं मुणी गोयरियं पविट्ठे, नो हीलए नो वि य खिसइज्जा ॥८३॥

छाया--यथा मृगः एकः अनेकचारी, अनेकवासो ध्रुवगोचरश्च।
एव मुनिर्गोचर्यां प्रविष्टो, नो हीलयति नोऽपिच खिंसयति ॥८३॥

टीका--'जहा' इत्यादि।

यथा मृग' एकः=एकाकी अद्वितीय., अनेकचारी=अनियतेषु अनेकेषु स्थानेषु भक्तपानार्थं चरितु शीलमस्येति, तथा, अनेकवनगरस्सु च भक्त पानार्थं सचरणशीलः, अनेकवासः, अनेकवनवासो निवासो यस्येति तथा, अनि

विशिष्ट सम्यग्ज्ञान-आदि भावसे शुक्लध्यान पर आरूढ हो जाता है और इस तरह वह कर्ममल रहित होता हुआ (उड्ढदिस पक्कमई-उर्ध्वा दिशम् प्रक्रामति) उर्ध्वदिश-मुक्तिस्थान- में जाकर विराजमान हो जाता है। रोग के अभाव में भिक्षा के लिये गमन जिनकल्पी की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये ॥८२॥

अब मृग चर्या को स्पष्ट करते हुए कहते हैं—'जहा मिगे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जहा-यथा) जिस प्रकार (एगमिए-एकः मृगः) अकेला मृग (अणेगचारी-अनेकचारी) अनियत अनेक स्थानों मे भक्तपान के निमित्त फिरा करता है और (अणेगवासो-अनेकवास.) अनियत अनेक

સમ્યગ્જ્ઞાન આદિ ભાવથી શુકલધ્યાન ઉપર આરૂઢ થઈ જાય છે અને આ રીતે એ કર્મ મળ વગરના થઇને उड्ढदिस पक्कमई-उर्ध्वा दिशम् प्रक्रामति મુક્તિ સ્થાનમા જઈને બિરાજમાન થાય છે રોગના અભાવમા ભિક્ષાના માટે ગમન જીનકલ્પીની અપેક્ષાથી કહેવાએલ છે એમ જાણવુ જોઈએ ॥ ૮૨ ॥

હવે મૃગચર્યાને સ્પષ્ટ કરતા કહે છે—"जहा मिगे" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--जहा-यथा જે પ્રમાણે एग मिये-एकः मृग' એકલો મૃગ अणेगचारी-अनेकचारी નિયત સ્થાનોના ભકતપાન-આહારપાણી માટે ફર્યા કરે છે અને अणेगवासे-अणेगवासः અનિયત અનેક સ્થાનોમા રહ્યા કરે છે તથા

'एनमूर' इत्यारभ्य 'खाइत्ता पानीय पाउ' इत्येतद्गाथापर्यन्तेन गाथा-पञ्चकेन दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकरूपे स्वात्मनि एतदुपसंहर्तुं गाथाद्वयमाह--

मूलम्--एव समुट्ठिओ भिक्खू, एवमेव अणेगगो ।
मिगचारियं चरित्ता णं, उड्ढ पक्कमई दिसं ॥८२॥

छाया--एव समुत्थितो भिक्षुः, एवमेव अनेकग ।
मृगचर्यां चरित्वा खलु, ऊर्ध्वां प्रक्रामति दिशम् ॥८२॥

टीका--'एव' इत्यादि ।

एव मृगवत् समुत्थित.=संयमानुष्ठाने समुद्यत इति भावः, एवमेव=मृगवदेव अनेकग=अनियतस्थानेषु गमनशीलः-यथा मृगो नैकत्र वृक्षतले आस्ते, किन्तु कदाचित् क्वचिद् वृक्षतले, अन्यत्र वा निवसति, तथैव साधुरप्यनियत वासितया कदाचित् क्वचित्स्थानेऽन्यदाऽन्य स्मिन् स्थाने निवसतीति भावः। एतादृशो भिक्षु'-मुनि. मृगचर्यां चरित्वा=मृगवद्रोगाभावे गोचर गत्वा, तत्र लब्धेन भक्तपानेन शरीरधारण कृत्वा विशिष्टसम्यग्ज्ञानादि भावत' शुक्लध्याना

पाउ-पानीय पीत्वा) पानी पीकर और खा कर पीकर अपनी स्वाभाविक गति से इधर फिरता हुआ अपने स्थान पर आ जाता है ॥८१॥

अब इसका दार्ष्टान्तिक कहते हैं—'एव' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(एव-एवम्) इसी प्रकार (समुट्ठिओ-समुत्थितो) समय के अनुष्ठान करने मे तत्पर अथवा समुद्यत-उद्यम करनेवाला (भिक्खू -भिक्षु.) भिक्षु रोगादिक आतकों की उत्पत्ति के समय चिकित्सा के प्रति निरपेक्ष रहा करता है और (एवमेव) मृग की तरह ही (अनेकगो-अणेकग) अनियत स्थानों में फिरता रहता है। और जब वह नीरोग हो जाता है तब (मिगचारिय चारित्ताण-मृगचर्या चारित्वा) वह गोचरी के लिये निकल कर उसमे लब्ध भक्त पान से अपना निर्वाह करता है। तथा

पानी य पीत्वा પાણી પીએ છે અને ખાઇ પીને પોતાની સ્વાભાવિક ગતિથી જ્યા ત્યા ખેલતા કૂદતા પોતાના સ્થાન ઉપર પહોચી જાય છે ॥ ૮૧ ॥

હવે આનુ દષ્ટાંતિક કહે છે-"एव" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—एव-एवम् આ રીતે समुट्ठिओ-समुत्थितो સયમનુ અનુષ્ઠાન કરવામા તલ્લીન અથવા સમુદ્યત भिक्खु-भिक्षु ભિક્ષુ રોગાદિક આતકોની ઉત્પતિ વખતે ચિકિત્સા તરફ નિરપેક્ષ રહ્યા કરે છે અને एवमेव-एवमेव મૃગની માફક अणेकगो-अनेकश' અનિયત સ્થાનમા ફરતા રહે છે જ્યારે તે નિરોગી બની જાય છે ત્યારે તે मिगचारिय चारित्ताण-मृगचर्या चरित्वा ગોચરી માટે નિકળીને તેમા મળતા ભક્તપાનથી-આહાર પાણીથી પોતાના નિર્વાહ કરતા રહે છે, તથા વિશિષ્ટ

छाया--मृगाचर्यां चरिष्यामि, एवं पुत्र ! यथासुखम् ।
अम्बापितृभ्यामनुज्ञातो, जहाति उपधिं ततः ॥८४॥

टीका--'मिगचारियं' इत्यादि ।

इत्थं मृगाचर्यास्वरूपमुक्त्वा मृगापुत्रः प्राह-हे अम्बापितरौ ! अहमपि मृगाचर्यां चरिष्यामि । यथा भवतोरग्रे मृगाचर्या प्रोक्ता, तामङ्गीकरिष्यामि । इत्थं तेनोक्तेऽम्बापितरौ प्रोक्तवन्तौ-हे पुत्र ! यथेव तदा यथासुखं कुरु-यथा तव सुखं स्यात्तथा कुरु । अत्रास्माकमानाऽस्ति । ततो मातापितृभ्याम् अनुज्ञातो मृगापुत्रः उपधिम् उपधीयते नरक आत्माऽनेनेत्युपधिः द्रव्यतो धनधान्यादिकं, भावतः-कषायादिकं त जहाति-परित्यजति ॥८४॥

मृगचर्या का वर्णन करने पर मृगापुत्र ने जो कहा, तथा माता-पिता ने जो कहा तथा उसके बाद मृगापुत्रने जो किया सो कहते हैं—'मिगचारियं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस प्रकार मृगचर्याका स्वरूप कह कर मृगापुत्र नें कहा हे माततात ! मैं भी (मिगचारियं चरिस्सामि-मृगचर्यां चरिष्यामि) इसी मृगचर्या का सेवन करूँगा। पुत्र की यह विचारधारा सुनकर माता-पिता ने कहा (पुत्ता-हे पुत्र) पुत्र ! (जहासुहं एवं-यथा सुखं एवम्) अच्छी तरह से आनंद के साथ तुम ऐसा करो। अब हम इसमें तुम्हारे प्रतिबंधक नहीं होते हैं। हम तुमको अपनी सम्मति देते हैं कि तुम संसारसमुद्र से पार करने वाली दीक्षा अंगीकार करो (अम्मापिईहिंऽणुण्णाओ-अम्बापितृभ्यामनुज्ञातो) मातापिता की इस प्रकार आज्ञा प्राप्त कर मृगापुत्र ने (तओ उवहिं जहाइ-ततः उपधिं जहाति) धन

મૃગચર્યાનું વર્ણન કરીને મૃગાપુત્રે જે કહ્યું તથા માતાપિતાએ જે કહ્યું તે તથા ત્યારબાદ મૃગાપુત્રે જે કર્યું તેને કહે છે—"मिगचारियं" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—આ પ્રકારથી મૃગાચર્યાના સ્વરૂપને કહીને મૃગાપુત્રે કહ્યું કે, હે માતા પિતા ! હું પણ मिगचारियं चरिस्सामि-मृगचर्या चरिष्यामि આવી મૃગચર્યાનું સેવન કરીશ પુત્રની આવી વિચારધારાને સાંભળીને આનંદપૂર્વક તેમણે કહ્યું કે, पुत्ता-पुत्र હે પુત્ર जहा सुहं एवं-यथा सुखम् एवम् ઘણા આનંદની સાથે સારી રીતે એવું તમે કરો. હવે અમો આ વિષયમાં તમારો અવરોધ કરવા ઈચ્છતા નથી અમો તમોને અમારી સંમતિ આપીએ છીએ કે, તમે સંસાર સમુદ્રને પાર કરવા વાળી આ દીક્ષાનો અંગિકાર કરો ! अम्मापिईहिंऽणुण्णाओ-अम्बापितृभ्यामनुज्ञातो માતા પિતાની એવા પ્રકારની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરી મૃગાપુત્રે तओ उवहिं जहाइ-

यतानेकस्थानवासशीलः-मृगो हि कदाचित्तरुतले तिष्ठति, तथा-ध्रुवगोचरः=ध्रुवा निश्चितो गोचरे चरश्चरण यस्य स तथा सर्वदा गोचरलब्धाहाराहरणशीलश्च भवति। एव मुनिरपि भवति। एकः द्रव्यतो मुनिगणसमन्वितत्वादनेकोऽपि सन् भावतो रागद्वेषरहितत्वादेक एव, अनेकचारी=भिक्षार्थमुच्चनीचम ध्यमानेका नियतगृहेषु भ्रमणशीलः, अनेकवास'=अनियतस्थानेषु वासकारी, तथा-ध्रुव गोचरश्च=सर्वदा भिक्षालब्धाहारग्रहणशीलश्च। एतादृशो मुनिर्गोचर्या प्रविष्ट' नो हीलयति=अन्तमान्तेऽशनादिके प्राप्ते सति दातार नापमानयति। अपि च तथाविधाहाराप्राप्तौ नो खिसयति=स्व पर वा न निन्दति ॥८३॥

एव मृगचर्यास्वरूप निरूप्य यन्मृगापुत्रेणोक्त, यच्च तन्मातापितृभ्यामुक्तम्, ततो यज्जात कृतवांस्तदुच्यते--

मूलम्--मिगचारिय चरिस्सामि, एवं पुत्ता जहासुहं।
अम्मापिईहिंऽणुण्णाओ, जहाइ उवहिं तओ ॥८४॥

स्थानों मे रहा करता है तथा (धुवगोयरेय-ध्रुवगोचरश्च) निश्चय से गोचर भूमि में लब्ध आहार को खाता पीता है (एव-एवम्) इसी तरह (मुणी-मुनिः) मुनि भी (एग-एक) रागद्वेष से रहित होने के कारण अकेला होता हुआ (अणेगचारी-अनेकचारी) भिक्षा के निमित्त उच्च, नीच, एव मध्यम अनेक अनियत गृहो में भ्रमण करता है और निश्चित वास विना का हो जाता है। तथा सर्वदा भिक्षा लब्ध आहार का करने वाला होता है। ऐसा मुनि जब (गोयरिय पविट्ठ हवइ-गोचर्यां प्रविष्टो भवति) गोचरी के लिये निकलता है तब अत प्रात आहार के मिलने पर दातारकी (नो हीलए-नो हीलयति) हीलना नही करता है अथवा-(नो विय खिंसइज्जा-नो ऽपिच खिंसयति) नहीं मिलने पर अपनी और पर की निंदा भी नही करता है ॥८३॥

धुवगोयरेय-ध्रुवगोचरश्च નિશ્ચયથી ગોચર ભૂમિમા જે મળી શકે તે આહારને ખાય પીએ છે एव-एवम् તેવી રીતે मुणी-मुनि' મુનિપણે एग-एक' રાગદ્વેષથી રહિત હોવાના કારણે એકલા હોવા છતા ભિક્ષા નિમિત્ત ઉચ નીચ અને મધ્યમ અનેક અનિયત ગૃહોમા ભિક્ષા નિમિત્તે ભ્રમણ કરે છે અને નિશ્ચિતવાસ રહીત હોય છે તથા સદાને માટે ભિક્ષા આહારને કરવાવાળા હોય છે એવા મુની જ્યારે गोयरीय पविट्ठे हवइ-गोचर्या प्रविष्ठो भवति ગોચરી માટે બહાર નિકળે છે ત્યારે અન્તપ્રાન્ત આહાર મળવા છતા પણ આપનાર દાતાની नो हीलये-नो हीलयति નિંદા કરતા નથી અથવા नो विय खिसइज्जा-नोऽपिच खिसयति ન મળવાથી પોતાની તેમજ બીજાની નિંદા પણ કરતા નથી ॥ ૮૩ ॥

मातापित्रोरनुमतिमादाय किं कृतवानित्याह--

मूलम्—एवं सं अम्मापियरो, अणुमाणित्ताण बहुविहं ।
ममत्तं छिन्दई ताहे, महानागोव्व कंचुयं ॥८६॥

छाया--एवं सोऽम्बापितरौ, अनुमान्य बहुविधम् ।
ममत्वं छिनत्ति तदा, महानाग इव कञ्चुकम् ॥८६॥

टीका—'एव' इत्यादि ।

तदा=तस्मिन्काले एवं=पूर्वोक्तप्रकारेण स मृगापुत्रोऽम्बापितरौ अनुमान्य= दीक्षादानाज्ञायाम् अनुमतौ कृत्वा, कञ्चुकं महानागः=महासर्प इव बहुविधम् ममत्वम् =भवन मे, वसन मे, जाया मे, बन्धु वर्गो मे इत्यादि रूप बहुविध भाव ममत्वं छिनत्ति=परित्यजति । अय भावः—यथा महानागश्चिरसम्बद्धमपि कञ्चुकं त्यजति, एवं मृगापुत्रोऽपि अनादिभवाभ्यस्त ममत्वं परित्यक्तवान् । ८६॥

अनेन आन्तरोपधिपरित्याग उक्तः, सम्प्रति बहिरुपधिपरित्यागमाह—

मूलम्—इड्ढी वित्तं चं मित्ते यं पुत्तदारं चं नायओ ।
रेणुयं वं पडे लग्गं, निद्धुणित्ताण निग्गओ ॥८७॥

मातापिता की आज्ञा मिलने पर मृगापुत्रने क्या किया सो कहते हैं—'एव मे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इस प्रकार (ताहे-तदा) उस समय (सो-स) मृगापुत्रने (अम्मापियरो अणुमाणित्ताण-अम्बापितरौ अनुमान्य) अपने माता-पिता को दिक्षा लेने की आज्ञा में अनुमत करके (महानागो व-महानाग इव) जिस प्रकार महा सर्प (कचुय-कञ्चुकम् इव) काचुलीका परित्याग कर देता है उसी तरह (ताहे-तदा) बहु विध (ममत्त छिन्दई-ममत्व छिनत्ति) ममत्वका परित्याग कर दिया ॥८६॥

માતા પિતાની આજ્ઞા મળવાથી મૃગાપુત્રે શુ કર્યું તે વાતને કહે છે-"एवं से" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—આ પ્રકારે ताहे-तदा તે સમયે મૃગાપુત્રે अम्मपियरो अणुमणित्ताण-अम्बापितरौ अनुमान्य પોતાના માત પિતાને દીક્ષા લેવાની આજ્ઞામા અનુમત કરીને महानागो-महानाग' જે પ્રકારે મહાસર્પ પોતાની कचुय-कञ्चुकम् इव કાચળીનો પરિત્યાગ કરી દે છે એવીજ રીતે તેણે तहो-तदा બહુ વિધ મમત્વનો પરિત્યાગ કરી દીધો ॥ ८९ ॥

उक्तमेवार्थं सविस्तरमाह—

मूलम्—मिगचारियं चरिस्सामि, सव्वदुक्खविमोक्खणिं।
तुब्भेहिं अब्भणुण्णाओ, गच्छ पुत्त! जहासुहं ॥८५॥

छाया—मृगचर्यां चरिष्यामि, सर्वदुःखविमोक्षणीम्।
युष्माभिरभ्यनुज्ञातो, गच्छ पुत्र! यथासुखम् ॥८५॥

टीका—'मिगचारियं' इत्यादि।

हे मातापितरौ! युष्माभिः अभ्यनुज्ञातः=आज्ञापितोऽहं सर्वदुःखविमोक्षणीं=सकलासातविमुक्तिहेतुं मृगचर्यां=निष्प्रतिकर्मतारूपां चरिष्यामि=आसेविष्ये। ततो मातापितरौ प्रोक्तवन्तौ-हे पुत्र! यथासुखं गच्छ=यथा ते सुखं भवेत् तथा-कुरु, प्रव्रज्यां गृहाणेति यावत् ॥८५॥

धान्य आदिक द्रव्य परिग्रह का तथा कषाय आदि अभ्यंतर परिग्रह का त्याग कर दिया ॥८४॥

इस बात को फिर कहते हैं—'मिगचारियं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे माततात! (तुब्भेहिं अब्भणुण्णाओ-युष्माभिरभ्यनुज्ञातो) आपसे आज्ञा प्राप्त कर मैं (सव्वदुक्खविमोक्खणिं-सर्व दुःख विमोक्षणीम्) सर्व दुःखों को ध्वंसकरने वाली (मिगचारियं-मृगचर्यां) मृगचर्या-निष्प्रति कर्मरूपता-का (चरिस्सामि-चरिष्यामि) सेवन करूँगा। इस प्रकार जब मृगापुत्र ने उनसे कहा-तब वे बोले-(पुत्त-पुत्र) हे पुत्र! जिसमें तुमको (जहा सुहं गच्छ-यथा सुखं गच्छ) सुख मालुम पडे वैसा काम करो-हमारी चिन्ता जरा भी न करो। हम तुम को आज्ञा देते है कि तुम प्रव्रज्या अगीकार करो ॥८५॥

ततः उपधिं जहाति धनधान्य आदिक द्रव्य परिग्रहने। तथा कषाय आदि आभ्यंतर परिग्रहने। त्याग करी दीधे। ॥ ८४ ॥

आ वातने पछीथी कहे छे—"मिगचारियं" इत्यादि!

अन्वयार्थ—हे माता पिता! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाओ-युष्माभिरभ्यनुज्ञातो आपनी आज्ञा प्राप्त करीने सव्वदुक्खविमोक्खणिं-सर्वदुक्खविमोक्षणीम् हु सर्वं दुःखोने। नाश करवावाळी मिगचारियं-मृगचर्या मृगचर्या-निष्पत्ति कर्मरूपतानु चरिस्सामि-चरिष्यामि सेवन करीश आ प्रमाणे ज्यारे मृगापुत्रे तेमने कह्यु त्यारे तेना मातापिताओ कह्यु के, पुत्त-हे पुत्र हे पुत्र! जेमा तमने जहासुहं गच्छ-यथासुखं गच्छ सुख मळी शके तेवु काम करे। अमारी चिंता जरापण न करे। अमे। तमोने आज्ञा आपीओ छीओ के, तमे। प्रवज्या ग्रहण करे। ॥८५॥

टीका—'पचमहव्वयजुत्तो' इत्यादि—

प्रव्रज्याग्रहणानन्तरं मृगापुत्रो मुनिः पञ्चमहाव्रतयुक्तः=प्राणातिपातविरमणादिरूपैः पञ्चमहाव्रतैर्युक्तः, पञ्चसमितः=पञ्चभिः-ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपणोच्चारप्रस्रवणखेलजल्लसिङ्घाणपरिष्ठापनिकाभिः समितिभिः सहितः, त्रिगुप्तिगुप्तः=तिसृभिः-मनोवाक्कायरूपाभिर्गुप्तिभिः=रक्षितश्च सन् साभ्यन्तरबाह्ये-आभ्यन्तरैः=प्रायश्चित्तादिभिः बाह्यैः=अनशनादिभिश्च सह वर्तते यत्तस्मिंस्तथोक्ते तपःकर्मणि उद्युक्तः=प्रवृत्तोऽभूत्। आभ्यन्तरबाह्यतपोलक्षणं चैतत्—

'पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं तहेव सज्झाओ। झाणं उस्सग्गो वि य, अब्भितरओ तवो होइ ॥१॥

अणसणमूणोयरिया, वित्ती संखेवणं रसच्चाओ। कायकिलेसो संलीणया य बज्झो तवो होइ ॥२॥

छाया—प्रायश्चित्तं विनयो वैयावृत्त्यं तथैव स्वाध्यायः। ध्यानम् उपसर्गो

दीक्षा लेकर वे कैसे बने सो कहते हैं—'पचमहव्वयजुत्तो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वस्त्र मे लग्न धूलि की तरह मृगापुत्रने (पचमहव्वयजुत्तो-पञ्चमहाव्रतयुक्तः) पंचमहाव्रतों की (पंचसमिओ तिगुत्तिगुत्तो य-पञ्चसमितस्त्रिगुप्तिगुप्तश्च) पांच समितिओं की एवं तीन गुप्तिओं से रक्षित हो कर के चारित्र की आराधना की, तथा (सब्भितर बाहिरए-साभ्यन्तर बाह्ये) बाह्य और आभ्यन्तर के भेद से बारह प्रकार के (तओ कम्मंसि उज्जुओ-तपः कर्मणि उद्युक्तः) तपों का भी पालन करना प्रारंभ किया। प्राणातिपात विरमण आदि पांच महाव्रत हैं। ईर्या समिति, भाषासमिति, आदाननिक्षेपण समिति, उच्चार प्रस्रवणसमिति, जल्लसंघाण परिष्ठापनसमिति, ५ समिति हैं। मनगुप्ति वचनगुप्ति और कायगुप्ति ये

દીક્ષા લઈને તે કેવા બન્યા, તેને કહે છે—पचमहव्वयजुत्तो ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—મૃગાપુત્રે पचमहव्वयजुत्तो-पञ्चमहाव्रतयुक्तः પાંચ મહાવ્રતોની पंचसमियो तिगुत्तिगुत्तो य-पञ्चसमितस्त्रिगुप्तिगुप्तश्च પાંચ સમિતિઓની અને ત્રણ ગુપ્તિઓની, આ પ્રમાણે તેર પ્રકારના ચારિત્રની આરાધના કરી તથા सब्भितर बाहिरए-साभ्यन्तर बाह्ये બાહ્ય અને અભ્યંતરના ભેદથી બાર પ્રકારના तवो कम्मंसि उज्जुओ-तपः कर्मणि उद्युक्तः તપનું પણ પાલન કરવાનો પ્રારંભ કર્યો પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ મહાવ્રત છે, ઈર્યા સમિતિ, ભાષાસમિતિ, આદાન નિક્ષેપણ સમિતિ, ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ સમિતિ, જલ્લસંઘાણ પરિષ્ઠાપન સમિતિ આ પાંચ સમિતિ છે મનગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ, અને કાયગુપ્તિ, આ ત્રણ ગુપ્તિઓ છે પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય,

छाया—ऋद्धिं वित्तं च मित्राणि च, पुत्रदारं च ज्ञातीन् ।
रेणुकमिव पटे लग्नं, निर्धूय निर्गतः ॥८७॥

टीका—'इड्ढी' इत्यादि ।

स मृगापुत्रः कुमारः ऋद्धिं=करितुरगादि सम्पदं च=पुनः वित्तं=हिरण्य सुवर्णादि रूपम्, च=पुनः मित्राणि, तथा पुत्रदारं= पुत्रान् दाराश्च, ज्ञातीन्= सोदरादींश्च पटे लग्नं रेणुकमिव=धूलिमिव निर्धूय=त्यक्त्वा निर्गतः=गृहाद् निष्क्रान्तः=प्रव्रजितः इति यावत् ॥८७॥

ततोऽसौ कीदृक् सञ्जात इत्याह—

मूलम्—पंचमहव्वयजुत्तो पञ्चसमिओ तिगुत्तिगुत्तो य ।
सब्भिंतर बाहिरए, तओ कम्मंसि उज्जुओ ॥८८॥

छाया—पञ्चमहाव्रतयुक्तः, पञ्चसमितस्त्रिगुप्तिगुप्तश्च ।
साभ्यन्तरबाह्ये, तपः कर्मणि उद्युक्तः ॥८८॥

इस गाथा द्वारा सूत्रकार ने 'अन्तरंग परिग्रह का त्याग मृगापुत्र ने किया' यह बात प्रदर्शित की है। अब बाह्य परिग्रह का भी त्याग उन्होंने कर दिया–यह बात वे इस गाथा द्वारा कहते हैं—

'इड्ढी वित्तं च' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वस्त्र मे लग्न धूली कि तरह मृगापुत्रने (इड्ढी–ऋद्धिं) करी तुरग आदि सम्पत्ति का (वित्त–वित्तं) हिरण्य सुवर्ण आदि वित्त का, (मित्तेय–मित्राणि च) मित्र जनोंका (पुत्तदारं च नायओ–पुत्रदारं च ज्ञातिं ?) पुत्र का, स्त्री का, तथा अपने ज्ञातिजनो का (पडे लग्गं रेणुयं व–पटे लग्नं रेणुकमिव) वस्त्र मे लगी हुइ धूलकी तरह (निद्धुणित्ताण निग्गओ–निर्द्धूय निर्गतः) परित्याग कर दिया और घरसे निकल गया अर्थात् दीक्षा लेकर मुनि बन गया ॥८७॥

આ ગાથા દ્વારા સૂત્રકારે "અંતરંગ પરિગ્રહનો ત્યાગ મૃગાપુત્રે કર્યો" એ વાત પ્રદર્શિત કરેલ છે હવે બાહ્ય પરિગ્રહનો પણ તેણે ત્યાગ કરી દીધો એ વાતને આ ગાથા દ્વારા કહે છે—"इड्ढी वित्तं च" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ– વસ્ત્રને ચોટેલી ધૂળની માફક મૃગાપુત્રે इड्ढी–ऋद्धिं હાથી ઘોડા આદિ સંપત્તિનો वित्त–वित्तं હિરણ્ય સુવર્ણ આદિ વિત્તનો, मित्तेय–मित्राणि च મિત્ર જનોનો, पुत्तदारं च नायओ–पुत्रदारंच ज्ञातिन् પુત્રનો, સ્ત્રીનો, તથા પોતાના જ્ઞાતિજનોનો पडेलग्गं रेणुयंव–पटे लग्नं रेणुकमिव લુગડામાં લાગેલ ધૂળની માફક પરિત્યાગ કરી દીધો અને ઘેરથી નીકળી ગયા અર્થાત દીક્ષા લઈને મુનિ બની ગયા ॥८७॥

समत्वमेव प्रकारान्तरेणाह--

मूलम्—लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा ।
समो निन्दापसंसासु, तहा माणावमाणओ ॥९०॥

छाया- लाभालाभे सुखे दुःखे, जीविते मरणे तथा ।
समो निन्दाप्रशंसासु, तथा मानापमानतः ॥९०॥

टीका—'लाभालाभे' इत्यादि ।

स मृगापुत्रो मुनिः लाभालाभे-लाभश्चालाभश्च लाभालाभं तस्मिन् आहारपानीयवस्त्रपात्रादीनां प्राप्तावप्राप्तौ वा, इत्यर्थः। तथा-सुखे दुःखे, तथा-जीविते मरणे, तथा निन्दाप्रशंसासु; तथा-मानापमानतः=मानापमानयोः=माने-आदरे, अपमाने-अनादरे च समस्तुल्यः । मानापमानत इत्यत्र सार्व विभक्तिकस्तसिः ॥९०॥

समो-त्रसेषु स्थावरेषु च सर्वभूतेषु समः) रागद्वेष के अभाव से त्रस एवं स्थावर जीवों के ऊपर इनके चित्त में समता वृत्ति आ गई ॥८९॥

इसी बातको पुनः सूत्रकार पुष्ट करते हैं—'लाभालाभे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—मृगापुत्र की चित्तवृत्ति (लाभालाभे-लाभालाभे) लाभ और अलाभ में-वस्त्रपात्रादिक तथा भक्त पानादिक की प्राप्ति में तथा अप्राप्ति में समभाववाली बन गई इसी तरह (सुहे दुक्खे-सुखे दुःखे) सुखदुःख (जीविए मरणे तहा-जीविते मरणे तथा) जीवित, मरण तथा (निंदापससासु-निंदाप्रशंसासु) निंदा प्रशंसा और (माणावमाणओ-मानापमानतः) मान एवं अपमान में भी (समो-समो) समभाव वाले हो गये ॥९०॥

ગઈ तसेसु थावरेसु य सव्वभूएसु समो-त्रसेषु स्थावरेषु च सर्वभूतेषु समः રાગદ્વેષના અભાવથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની ઉપર તેમના ચિત્તમાં સમતા વૃત્તિ આવી ગઈ ॥૮૯॥

આ વાતને ફરીથી સૂત્રકાર પુષ્ટ કરે છે—"लाभालाभे ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—મૃગાપુત્રની ચિત્તવૃત્તી लाभालाभे-लाभालाभे લાભ અને અલાભમાં વસ્ત્ર પાત્રાદિક તથા ભક્ત પાનાદિકની આહારપાણીની પ્રાપ્તિમાં તથા અપ્રાપ્તિમાં સમભાવવાળી બની ગઈ આજ પ્રમાણે सुहे दुक्खे-सुखे दुःखे સુખ દુઃખ जीविए मरणे तहा-जीविते मरणे तथा જીવિત, મરણ તથા निन्दापससासु-निन्दाप्रशंसासु નિંદા પ્રશંસા અને माणावमाणओ-मानापमानतः માન તથા અપમાનમાં પણ समो-समो સમભાવવાળા બની ગયા ॥ ૯૦ ॥

ऽपि च, आभ्यन्तरिक तपो भवति ॥१॥ अनशनमूनोदरिता, वृत्तिसक्षेपण रसत्यागः। कायक्लेश सल्लीनता च बाह्य तपो भवति ॥२॥ इति ॥८८॥

तथा च—

मूलम्—निम्ममो निरहंकारो, निस्सगो चत्तगारवो।
समो यं सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य ॥८९॥

छाया—निर्ममो निरहङ्कारो, निःसङ्गस्त्यक्तगौरवः।
समश्च सर्वभूतेषु, त्रसेषु स्थावरेषु च ॥८९॥

टीका 'निम्ममो' इत्यादि—

स मृगापुत्रो मुनिः निर्मम=वस्त्रपात्रादिषु ममत्वरहित' निरहङ्कार'=अहङ्कार रहित', नि सङ्गः=बाह्याभ्यन्तरसङ्गरहितः, त्यक्तगौरव=ऋद्धिगौरव रस गौरव सातगौरवेति गौरवत्रयरहित, च=पुन त्रसेषु स्थावरेषु च सर्वभूतेषु=त्रस स्थावरात्मक-सकलभूतेषु सम=रागद्वेषाभावात्तुल्योऽभूत् ॥८९॥

३ तीनगुप्तियाँ हैं। प्रायश्चित्त विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान व्युत्सर्ग ये छह प्रकार के आभ्यन्तरतप हैं। अनशन, ऊनोदर वृत्ति सक्षेपण, रसपरित्याग, कायक्लेश, सल्लीनता, ये छह बाह्यतप हैं ॥८८॥

फिर कैसे बने सो कहते हैं—'निम्ममो' इत्यादि।

अन्वयार्थ— तप करते २ मृगा पुत्र की परिणति इतनी निर्मल बन गई कि वे (निम्ममो–निर्ममो) वस्त्रपात्र आदि में भी ममत्व रहित हो गये। (निरहकारो–निरहङ्कारो) अहकारभाव आत्मा से बिलकुल चला गया। बाह्य और अभ्यन्तर परिग्रह के त्याग से (निस्सगो–नि सङ्ग) उनमे नि सगता आगई। इनकी परिणति (चत्तगारवो–त्यक्तगौरव) ऋद्धिगौरव, रसगौरव, सातगौरव से रहित हो गई। (तसेसु थावरेसु य सव्वभूएसु

વૈયાવૃત્ય, સ્વાધ્યાય, ધ્યાન અને વ્યુત્સર્ગ એ છ પ્રકારના અભ્યતર તપ છે અનશન, ઉણોદરીવૃત્તિ સક્ષેપણ રસ પરિત્યાગ, કાયાકલેશ, સલ્લીનતા આ છ બાહ્ય તપ છે ॥૮૮॥

પછી કેવા બન્યા તે કહે છે—"निम्ममो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—તપ કરતા કરતા મૃગાપુત્રની પરિણતી એટલી નિર્મળ બની ગઈ કે, निम्ममो–निर्ममो વસ્ત્ર, પાત્ર આદિમા પણ તેમને મમત્વ ન રહ્યુ निरहकारो–निरहङ्कारो અહકાર ભાવ આત્મામાથી બીલકુલ ચાલ્યો ગયો બાહ્ય અને અભ્યતર પરિગ્રહના ત્યાગથી એમનામા निस्सगो–नि सङ्ग નિ સગતા આવી ગઇ એમની પરિણતી चत्त गारवो–त्यक्तगौरव રિદ્ધિ ગૌરવ, રસ ગૌરવ, સાત ગૌરવથી રહિત બની

तथा—

मूलम्—अणिस्सिओ इह लोए, परलोए अणिस्सिओ ।
वासीचंदणकप्पो यं, असणेऽणसणे तहा ॥९२॥

छाया—अनिश्रित इह लोके, परलोके अनिश्रित ।
वासीचन्दनकल्पश्च, अशनेऽनशने तथा ॥९२॥

टीका—'अणिस्सिओ' इत्यादि ।

स मृगापुत्र मुनि' इहलोके=ऐहलौकिके राजादिसम्माने अनिश्रित =निश्रारहित , परलोके=देवलोकसम्बन्धिसुखोपभोगादौ च अनिश्रित –निश्रारहितो जातः।

उक्त चापि=–

'णो इह लोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा ।' इति ।

च=पुन वासीचन्दनकल्पो जात'–वासीव वासी तम्, अपकारिणमित्यर्थ ' चन्दनमिव उपकारकत्वेन कल्पयति मन्यते इति वासीचन्दनकल्प.

तथा—'अणिस्सिओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वे मृगापुत्र मुनिराज तपस्याकी आराधना से (इहलोए–इहलोके) इहलोक सबधी राजादिक द्वारा प्राप्त सन्मान आदिके विषय में जिस तरह (अणिस्सिओ–अनिश्रितः) निश्रारहित बन चुके थे उसी तरह वे (परलोए अणिस्सिओ–परलोके अनिश्रितः) देवलोक सबधी सुख के उपभोग आदि में भी निश्रा रहित बने। इह लोक के लिये तप नहीं करना चाहिये इस पर कहा भी है—

'णो इह लोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा'

इसी तरह उनकी चित्तवृत्ति भी (वासीचदणकप्पो य–वासीचन्दनकल्पश्च)

તથા—"अणिस्सिओ" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—એ મૃગાપુત્ર મુનિરાજ તપસ્યાની આરાધનાથી इहलोए–इहलोके આ લોક સબધી રાજાદિક દ્વારા પ્રાપ્ત સન્માન આદિના વિષયમા જે રીતે अणिस्सिओ–अनिश्रित નિશ્રા રહિત બની ગયા હતા એજ રીતે તે परलोए अणिस्सिओ–परलोके अनिश्रित' પરલોક–દેવલોક સબધિ સુખના ઉપભોગ આદિમા પણ નિશ્રા રહિત બન્યા આ લોક અને પરલોકના માટે તપ ન કરવુ જોઇએ આના ઉપર કહ્યુ પણ છે—

" णो इह लोगट्ठयाए तव महिट्ठिज्जा नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा "

આ રીતે એમની ચિત્તવૃત્તિ પણ वासीचदणकप्पो यं–वासीचन्दनकल्पश्च

तथा च--

मूलम्--गारवेसु कसाएसु, दडसल्लभएसु य ।
नियत्तो हाससोगाओ, अणियाणो अवधणो ॥९१॥

छाया--गौरवेभ्य कषायेभ्यो, दण्डशल्यभयेभ्यश्च ।
निवृत्तो हासशोकात्, अनिदान अबन्धनः ॥९१॥

टीका--'गारवेसु' इत्यादि ।

गौरवेभ्य.=ऋद्धि गौरवादिभ्य , कषायेभ्यः=क्रोधादिकषायेभ्य , दण्डशल्य भयेभ्यः=दण्ड =मनोवाक्कायाना सावद्यव्यापाररूप , मायाशल्य निदानशल्य मिथ्या दर्शनशल्य चैतच्छल्यत्रय, भयानि=इहलोकभय परलोकभयम् आदानभयम् अकस्माद्भय मरणभयम्, अयशोभयम्, आजीविकाभय चेति सप्तभयानि, दण्डादीनामितरेतरयोगद्वन्द्व., तेभ्य , तथा-हासशोकात्=हासश्च शोकश्चेति हासशोक तस्माच्च निवृत्त. सन् अनिदान =मायादि-निदानवर्जित , अबन्धन =रागद्वेष बन्धन रहितो जात । 'गारवेसु कसाएसु दडसल्लभएसु' इत्यत्र पञ्चम्यर्थे सप्तमी ।९१।

फिर--'गारवेसु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--तप करते २ ऋद्धि आदि तीन प्रकार के (गारवे-गौरवेभ्य) गौरवों से क्रोधादिक-चार प्रकार की (कसाएसु-कषाएभ्यो) कषायों से, मन, वचन एवं काय के सावद्य व्यापार रूप (दडसल्लभएसु य-दण्डशल्य भयेषु च) मनोदण्ड, वचनदण्ड, कायदण्ड तीन दडों से, मायाशल्य, निदानशल्य, एव मिथ्यादर्शनशल्य इन शल्यों से, इह लोकभय, परलोकभय, आदानभय अकस्मातभय, मरणभय, अयशोभय, एव आजीविकाभय, इन सात भयों से तथा (हाससोगाओ नियत्तो-हासशोकात् निवृत्त') हास, शोक से निवृत्त हो कर वे मृगापुत्र मुनिराज (अणियाणो अबधणो-अनिदान' अबन्धन.) अनिदान और अबन्धनरूप बन गये ॥९१॥

પછી--"गारवेसु" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—તપ કરતા કરતા રિદ્ધિ આદિ ત્રણ પ્રકારના गारवेसु-गौरवेभ्य ગૌરવોથી, ક્રોધાદિક ચાર પ્રકારના कसाएसु-कषायेभ्य કષાયોથી મન વચન અને કાયાના સાવદ્ય વ્યાપાર રૂપ दडसल्लभएसु य-दण्डशल्यभयेषु च મનોદંડ વચનદંડ, કાયદંડ એ ત્રણ દંડોથી, માયાશલ્ય, નિદાનશલ્ય અને મિથ્યાદર્શન શલ્ય, આ શલ્યોથી, આલોક ભય પરલોક ભય, આદાન ભય, અકસ્માત ભય, મરણ ભય, અયશો ભય, અને આજીવિકા ભય, આ સાત ભયોથી તથા हाससोगाओ नियत्तो-हासशोकात् निवृत्त હાસ્ય શોકથી નિવૃત્ત થઈને તે મુનિરાજ-મૃગાપુત્ર अणियाणो अबधणो-अनिदान अबन्धन અનિદાન અને અબંધનરૂપ બની ગયા ॥ ૯૧ ॥

योगैः'=शुभध्यानव्यापारैः' सर्वेभ्यः अप्रशस्तेभ्यः=प्रशसाऽनास्पदेभ्यः, द्वारेभ्यः =कर्मोपार्जनोपायेभ्यो हिंसादिभ्य पिहितास्रवः—आस्रव –कर्मागमः पिहितो येन स तथा जातः। बहुव्रीहित्वान्निष्ठान्तस्य पूर्वनिपात, सापेक्षस्यापि गमकत्वात् समास'। तथा—प्रशस्तदमशासन –प्रशस्त =दम =उपशम' शासन=जिनागमात्मक च यस्य स तथा जात। यद्वा—स मृगापुत्रो मुनि' अध्यात्मयोगैः सर्वेभ्यो ऽप्रशस्तेभ्यो द्वारेभ्यो निवृत्त अत एव पिहितास्रवः=अवरुद्धकर्मागमनाश्रवा शस्तथा प्रशस्तदमशासनश्च जात। अत्र 'निवृत्त.' इत्यस्या याहार कर्तव्य। 'सव्वओ' इत्यत्र सार्वविभक्तिकस्तसि ॥९३॥

सम्प्रति तत्फलोपदर्शनाय प्राह—

मूलम्— एवं नाणेण चरणेण, दसणेण तवेण य।
भावणाहि य सुद्धाहिं, सम्म भावित्तु अप्पय ॥९४॥
बहुयाणि उ वासाणि, सामण्णमणुपालिया।
मासिएण उ भत्तेण, सिद्धिं पत्तो अणुत्तर ॥९५॥

छाया—एव ज्ञानेन चरणेन, दर्शनेन तपसा च।
भावनाभिश्च शुद्धाभि, सम्यग् भावयित्वाऽऽत्मानम् ॥९४॥
बहुकानि तु वर्षाणि, श्रामण्यमनुपाल्य।
मासिकेन तु भक्तेन, सिद्धिं प्राप्त अनुत्तराम् ॥९५॥

तथा 'अप्पसत्थेहिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—उन मृगापुत्र मुनिराजने (अज्झप्पज्झाणजोगेहिं–अध्यात्मध्यानयोगै.) अध्यात्म सबधी शुभ ध्यान के सबध से (अपसत्थेहिं दारेहिं–अप्रशस्तेभ्यो द्वारेभ्यो) अप्रशस्त द्वारों से आनेवाले (सव्वओ पिहियासवे–सर्वत. पिहितास्रव) आस्रव को बिलकुल रोक दिया था (पसत्थदमसासणे–प्रशस्तदमशासन.) दम–उपशम–एव–शासन–जिनागम के अनुसार प्रवृत्ति मे अपने आपको विसर्जित कर दिया था ॥९३॥

તથા—"અપ્પસત્થેહિં" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—એ મૃગાપુત્ર મુનિરાજે अज्झप्पज्झाणजोगेहिं–अध्यात्मध्यानयोगैः અધ્યાત્મ સંબંધી શુભ ધ્યાનના સંબંધથી अपसत्थेहिं दारेहिं–अप्रशस्तेभ्यो द्वारेभ्यः અપ્રશસ્ત દ્વારોથી આવવાવાળા सव्वओ पिहियासवे–सर्वत' पिहितास्रव આ સર્વને ખીલકુલ રોકી દીધેલ અને पसत्थदमसासणे-प्रशस्तदमशासन પ્રશસ્ત દમ ઉપશમ અને શાસન જીન આગમ અનુસાર પ્રવૃત્તિમાં પોતાની જાતને વિસર્જીત કરી દીધી ॥૯૩॥

यो मामपकरोत्येष, तत्त्वेनोपकरोत्यसौ। शिरामोक्षाद्युपायेन, कुर्वाण इव नीरुजम् ॥' अथवा–वास्यामपकारिण्या चन्दनस्य कल्प इव स्नेह इव य उपकारित्वेन वर्तते स वासीचन्दनकल्पः। 'अपकारपरेऽपि परं, कुर्वन्त्युपकारमेव हि महान्तः। सुरभी करोति वासी मलयजमपि तक्षमाणमपि इति मुनिर्मृगापुत्र एतादृशो जातः'। तथा स मृगापुत्रमुनि अशने=आहार करणे अनशने=अनाहारे अथवा–नञ् शब्दः कुत्सिते, कुत्सिताहारे=अन्तप्रान्ताहारे चापितुल्यो जातः। द्वितीय: 'अणिस्सिओ' इति सर्वथा निश्रारहितत्व द्योतयति ॥९२॥

तथा च—

मूलम्—अप्पसत्थेहि दारेहि, सव्वओ पिहियासवे ।
अज्झप्पज्झाणजोगेहिं, पसत्थदमसासणे ॥९३॥

छाया—अप्रशस्तेभ्यो द्वारेभ्य, सर्वतः पिहितास्रव ।
अध्यात्मध्यानयोगैः, प्रशस्तदमशासनः ॥९३॥

टीका—'अप्पसत्थेहिं' इत्यादि ।

स मृगापुत्रमुनि अध्यात्मध्यानयोगैः–आत्मनीति–अध्यात्म, अध्यात्म ये ध्यान

वासीचन्दन कल्प बन गई। जिस प्रकार चदन अपने काटने वाले कुल्हाडे को सुगधित कर देता है उसी प्रकार मृगापुत्र भी अपने अपकारी के प्रति भी द्वेष भावना से रहित बने। अथवा–वासी–वसुला के समान अपने अपकारी को भी चदन के तुल्य मानने लग गये थे। (तहा असणेऽणसणे–तथा अशने अनशने) तथा अशन मे एव अनशन मे भी वे मृगापुत्र मुनिराज समचित्त बन गये। कुत्सित अर्थ मे नञ् शब्द के प्रयोग से अन्त प्रान्त आहार यहा अनशन शब्द से गृहीत हुआ है। अथवा–आहार नहीं करना यह भी अनशन शब्दका अर्थ होता है ॥९२॥

સુગધિત ઘસાયેલા ચદન જેવી બની ગઈ જે પ્રમાણે ચદન પોતાને કાપવવાળા કુહાડાને પણ સુગધિત બનાવી દે છે, તે પ્રમાણે મૃગાપુત્ર પણ પોતાના અપકારી તરફ પણ દ્વેષભાવથી રહિત બન્યા તથા वासी–वसुलानी માફક પોતાના અપકારીને પણ ચદનના જેવા માનવા લાગી ગયા હતા તથા અશનમા અને અનશનમા પણ તે મૃગાપુત્ર મુનિરાજ સમચિત્ત બની ગયા કુત્સિત અર્થમા નઞ્ શબ્દના પ્રયોગથી અન્ત પ્રાન્ત આહાર અહીં અનશન શબ્દથી ગ્રહણ કરાયેલ છે અથવા આહાર ન કરવો એ પણ અનશન શબ્દનો અર્થ થાય છે ॥૯૨॥

छाया—एवं कुर्वन्ति संबुद्धा, पण्डिताः प्रविचक्षणाः।
विनिवर्तन्ते भोगेभ्यो, मृगापुत्रो यथा ऋषिः ॥९६॥

टीका—'एव इत्यादि'

सुधर्मा स्वामी प्राह—हे जम्बू ! मृगापुत्र ऋषिः यथाऽकरोत् यथा च स भोगेभ्यो विनिवृत्तः, एवम्=अनेन प्रकारेणैव संबुद्धाः=सम्यग्ज्ञाततत्त्वाः, पण्डिताः= हेयोपादेयविवेकयुक्ताः, प्रविचक्षणाः=अवसरज्ञाः कुर्वन्ति, एवमेव भोगेभ्यो विनिवर्तन्ते। 'जहामिसी' इत्यत्रमकारः आर्षत्वात् 'भोगेसु' इति पञ्चम्यर्थे सप्तमी ॥९६॥

पुनः प्रकारान्तरेणोपदिशन्नाह—

मूलम्—महप्पभावस्स महाजसस्स, मियाइ पुत्तस्स निसम्मभासियं।
तवप्पहाणं चरियं च उत्तमं, गइप्पहाणं च तिलोयविस्सुयं ॥९७॥
वियाणियो दुक्खविवड्ढणं धणं, ममत्तबंधं च महाभयावहं।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं, धारेह निव्वाणगुणावहं महं, त्ति बेमि॥९८॥

छाया—महाप्रभावस्य महायशसः, मृगायाः पुत्रस्य निशम्य भाषितम्।
तपःप्रधानं चरितं च उत्तमं, गतिप्रधानं च त्रिलोकविश्रुतम् ॥९७॥
विज्ञाय दुःखविवर्धनं धनं, ममत्वबन्धं च महाभयावहम्।
सुखावहां धर्मधुरामनुत्तरां, धारयत निर्वाणगुणावहां महतीम्,
इति ब्रवीमि ॥९८॥

अब अध्ययन का उपसंहार करते हुए उपदेश कहते हैं—'एव' इत्यादि

अन्वयार्थ—अब श्री सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं—(जहा-यथा) जैसे (मियापुत्तो मिसी-मृगापुत्र ऋषिः) मृगापुत्र ऋषिने (भोगेसु विणियट्टति-भोगेभ्यो विनिवर्तन्ते) भोगोंका परित्याग किया है (एव-एवम्) इसी तरह से (संबुद्धा-संबुद्धाः) संबुद्ध-तत्वों के सम्यक्ज्ञाता (पंडिया-पण्डिताः) पंडित जन भी अवसर आने पर ऐसा ही करते हैं ॥९६॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતા ઉપદેશ કહે છે—"एव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—શ્રી સુધર્મા સ્વામી શ્રી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે કે હે જમ્બૂ ! जहा-यथा જેમ मियापुत्तो मिसी-मृगापुत्र ऋषि, મૃગાપુત્ર ઋષિએ भोगेसु विणिय ट्टति-भोगेभ्यो विनिवर्तन्ते ભોગોનો પરિત્યાગ કરેલ છે एव-एवम् એવી રીતથી संबुद्धा-संबुद्धाः તત્વોના સમ્યક્જ્ઞાતા पंडिया-पण्डिताः પંડિતજન પણ અવસર આવવાથી એવું જ કરે છે ॥ ૯૬ ॥

टीका—'एव' इत्यादि।

स मृगापुत्र मुनि. एवम्=अमुना प्रकारेण ज्ञानेन=मतिश्रुतादिकेन, चरणेन=शास्त्रोक्ताचरणेन, दर्शनेन=शुद्धसम्यक्त्वश्रद्धारूपेण, च=पुन तपसा=द्वादशविधेन, च=पुनः शुद्धाभि =निदानादिदोपरहिताभिः भावनाभि.=महाव्रतसम्बन्धिनीभि पञ्चविंशतिसंख्याभिरनित्यत्वादिभिर्द्वादशविधाभिर्वा आत्मान भावयित्वा-तन्मयता नीत्वा, तु=पुन. बहुकानि=बहूनि वर्षाणि श्रामण्य=साधुत्वम् अनुपाल्य, तु=पुन मासीकेन भक्तेन=मासावध्यनशन कृत्वा सकलकर्मक्षयेण अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा सिद्धि=मोक्षरूपा सिद्धि प्राप्तः ॥९४-९५॥

अथाध्ययनोपसंहारपूर्वकमुपदिशन्नाह।

मूलम्—एवं करंति संबुद्धा, पंडिया पवियक्खणा।
विणियट्टंति भोगेसु, मियापुत्ते जहा मिसी ॥९६॥

अन्वयार्थ—(एव-एवम्) इस प्रकार (नाणेण-ज्ञानेन) मतिश्रुत आदि ज्ञान से (चरणेण-चरणेन) शास्त्रोक्त आचरण से (दसणेण-दर्शनेन) और शुद्ध सम्यक् श्रद्धारूप दर्शन से (तवेण य सुद्धाहिं भावणाहिं-तपसा च शुद्धाभि भावनाभि·) तथा निदान आदि दोषों से मुक्त महाव्रत संबधी पच्चीस भावनाओं से अथवा-बारह भावनाओं से (अप्पय भावित्तु -आत्मान भावयित्वा) अपनी आत्मा को भावित तथा (बहुयाणि वासाणि सामण्णमनुपालिया-बहुकानि वर्षाणि श्रामण्य अनुपाल्य) बहुत वर्षोंतक मुनि अवस्था का पालन करके मृगापुत्र मुनिराज ने (मासिएण भत्तेन अणुत्तर सिद्धिं पत्तो-मासिकेन भक्तेन अनुत्तराम् सिद्धिं प्राप्त·) एक मास का संथारा धारण करके अनुत्तर सिद्धिको-मुक्तिस्थान को प्राप्त किया ॥९४-९५॥

આજ વાતને સૂત્રકાર બે ગાથાઓથી ફરીને પ્રદર્શિત કરે છે—"एव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—एव-एवम् આ પ્રકારે नाणेण-ज्ञानेन મતિશ્રુત આદિ જ્ઞાનથી चरणेण-चरणेन શાસ્ત્રોકત આચરણથી અને दसणेण-दर्शनेन શુદ્ધ સમ્યક્ શ્રદ્ધારૂપ દર્શનથી તથા तवेण य सुद्धाहिं भावणाहिं-तपसा च शुद्धाभि· भावनाभिः નિદાન આદિ દોષોથી મુક્ત મહાવ્રત સંબંધી પચીસ ભાવનાઓથી અથવા બાર ભાવનાઓથી अप्पय भावित्त-आत्मान भावयित्वा પોતાના આત્માને ભાવિત કરીને તથા बहुयाणि वासाणि सामण्णमनुपालिया-बहुकानि वर्षाणि श्रामण्य अनुपाल्य ઘણાં વર્ષો સુધી મુનિ અવસ્થાનું પાલન કરીને મૃગાપુત્ર મુનિરાજે मासियेण भत्तेन अणुत्तर सिद्धि पत्तो-मासिकेन भक्तेन अनुत्तरा सिद्धि प्राप्त એક માસનો સંથારો ધારણ કરીને અનુત્તર સિદ્ધિને એટલે મુક્તિ સ્થાનને પ્રાપ્ત કર્યું ॥૯૪॥ ॥૯૫॥

छाया—एवं कुर्वन्ति संबुद्धा, पण्डिताः प्रविचक्षणाः।
विनिवर्त्तन्ते भोगेभ्यो, मृगापुत्रो यथा ऋषिः ॥९६॥

टीका—'एव इत्यादि'

सुधर्मा स्वामि प्राह–हे जम्बू! मृगापुत्र ऋषि र्यथाऽकरोत् यथा च स भोगेभ्यो विनिवृत्त, एवम्=अनेन प्रकारेणैव संबुद्धा =सम्यग्ज्ञाततत्त्वा, पण्डिता = हेयोपादेयविवेकयुक्ताः, प्रविचक्षणा =अवसरज्ञा कुर्वन्ति, एवमेव भोगेभ्यो विनिवर्त्तन्ते। 'जहा मिसी' इत्यत्र मकारः आर्षत्वात् 'भोगेसु' इति पञ्चम्यर्थे सप्तमी ॥९६॥

पुनः प्रकारान्तरेणोपदिशन्नाह—

मूलम्—महप्पभावस्स महाजसस्स, मियाइ पुत्तस्स निसम्मभासियं।
तवप्पहाणं चरियं च उत्तमं, गइप्पहाणं च तिलोयविस्सुयं ॥९७॥
वियाणियां दुक्खविवड्ढणं धणं, ममत्तबंधं च महाभयावहं।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं, धारेह निव्वाणगुणावहं महं, त्ति बेमि॥९८॥

छाया—महाप्रभावस्य महायशसः, मृगाया पुत्रस्य निशम्य भाषितम्।
तपः प्रधानं चरितं च उत्तमं, गतिप्रधानं च त्रिलोकविश्रुतम् ॥९७॥
विज्ञाय दुःखविवर्धनं धनं, ममत्वबन्धं च महाभयावहम्।
सुखवहां धर्मधुरामनुत्तरां, धारयत निर्वाणगुणावहां महतीम्,
इति ब्रवीमि ॥९८॥

अब अध्ययन का उपसंहार करते हुए उपदेश कहते हैं—'एवं' इत्यादि

अन्वयार्थ—अब श्री सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं–(जहा–यथा) जैसे (मियापुत्तो मिसी–मृगापुत्र ऋषिः) मृगापुत्र ऋषिने (भोगेसु विणियट्टति–भोगेभ्यो विनिवर्त्तन्ते) भोगोंका परित्याग किया है (एव–एवम्) इसी तरह से (संबुद्धा–संबुद्धा) संबुद्ध–तत्वों के सम्यक्ज्ञाता (पंडिया –पण्डिता) पंडित जन भी अवसर आने पर ऐसा ही करते हैं ॥९६॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતા ઉપદેશ કહે છે —"एवं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—શ્રી સુધર્મા સ્વામી શ્રી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે કે હે જમ્બૂ! जहा–यथा જેમ मियापुत्तो मिसो–मृगापुत्र. ऋषि, મૃગાપુત્ર ઋષિએ भोगेसु विणिय ट्टति–भोगेभ्यो विनिवर्तन्ते ભોગોનો પરિત્યાગ કરેલ છે एव–एवम् એવી રીતથી संबुद्धा–संबुद्धाः તત્વોના સમ્યક્જ્ઞાતા पंडिया–पण्डिताः પંડિતજન પણ અવસર આવવાથી એવું જ કરે છે ॥ ૯૬ ॥

टीका--'महप्पभावस्स' इत्यादि ।

हे मुनयः ! महाप्रभावस्य=महान्=अत्युत्कृष्टः प्रभावः=महात्म्य यस्य स तथोक्तस्य, दुष्करप्रतिज्ञापालनादतिशयमाहात्म्ययुक्तस्य, महायशस=दिगन्त व्याप्तयशस, मृगायाः राज्ञ्याः पुत्रस्य मुनेः भाषित=ससारासारत्वदुःखप्रचुरत्वावेदक वचन निशम्य=श्रुत्वा, तपः प्रधानम्=तपसा द्वादशविधेन प्रधान=श्रेष्ठम्, अत एव उत्तमम्= उत्कृष्टतम चरित=चारित्र च निशम्य=श्रुत्वा, तथा-तस्य त्रिलोकविश्रुत=लोकत्रयप्रसिद्ध गतिप्रधान-गतिषु प्रधान गतिप्रधानम्, गतिषु प्रधानभूता मोक्षरूपा गतिं च निशम्य=श्रुत्वा, तथा-धन च दुःखविवर्धन=दुःख वृद्धिकर विज्ञाय, सति धने चौराग्निनृपादिभ्यो भयस्य सर्वदा सद्भावाद् धनस्य दुःखविवर्धकत्व विज्ञेयम् । तथा ममत्वबन्ध=मातापितृस्त्रीपुत्रादिषु ममत्वबन्धन च महाभयावह=महाभयजनक विज्ञाय, स्वजनादि ममत्वबन्धो हि प्राणिन नरके

इसी बात को पुनः प्रकारान्तर से उपदेश के रूप मे दो गाथाओं से कहते है—'महप्पभावस्स' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे मुनिजनो ! तुम (महप्पभावस्स महाजसस्स मियाइ पुत्तस्स भासिय निसम्म तवप्पहाण उत्तम चरिय तिलोयविस्सुय गइप्पहाण च निसम्म-महाप्रभावस्य महायशसः मृगापुत्रस्य भाषित, निशम्य तपः प्रधान उत्तम चरित, त्रिलोकविश्रुतम् गतिप्रधान च निशम्य) दुष्कर प्रतिज्ञा के पालन करने से महाप्रभावक तथा दिगन्त में व्याप्त यशशाली होने से महायशस्वी ऐसे मृगापुत्र के, ससार की असारता तथा दुःख प्रचुरता के आवेदक वचनो को, तथा तपः प्रधान उत्तम चारित्र को तथा त्रिलोक प्रसिद्ध मोक्ष प्राप्तिरूप गति को सुनकर तथा (धण दुक्खविवड्ढण ममत्तबध च महाभयावह वियाणिया-धन दुःखविवर्धन ममत्व

આ વાતને ફરીથી પ્રકારાન્તરથી ઉપદેશના રૂપમા બે ગાથાઓથી કહે છે--"महप्पभावस्स" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે મુનિજનો ! તમે महप्पभावस्स महाजसस्स मियाइपुत्तस्स भासिय निसम्म तवप्पहाण उत्तम चरिय तिलोयविस्सुय गइप्पहाणं च निसम्म-महाप्रभावस्य महायशसः मृगापुत्रस्य भाषित निशम्य तप प्रधान उत्तम चरित त्रिलोकविश्रुत गतिप्रधान च निशम्य દુષ્કર પ્રતિજ્ઞાનુ પાલન કરવાથી મહાપ્રભાવક તથા દિગતમા વ્યાપ્ત યશશાળી હોવાથી મહાયશસ્વી એવા મૃગાપુત્રના, સસારની અસારતા તથા દુખ પ્રચુરતાના આવેદક વચનોને તથા તપ પ્રધાન ઉત્તમ ચારિત્રને તથા ત્રણલોકમા પ્રસિદ્ધ મોક્ષપ્રાપ્તિરૂપ ગતિને સાભળીને તથા धण दुक्खविवड्ढण ममत्तबध च महाभयावह वियाणिया-धन दुःखविवर्धन

नीत्वा महाभयं ददाति, निर्वाणगुणावहा=निर्वाणगुणाः–अनन्तज्ञानदर्शनवीर्यसुखा न्यस्तानावहति=प्रापयति या सा ता तथा, निर्वाणगुणप्रापिका, अतएव–सुखावहा =अक्षयसुखप्रापिकाम् अनुत्तरा=सर्वोत्कृष्टा महतीम्=अपरिमितमाहात्म्ययुक्ता धर्मधुरा=धर्मो धुरिव महासत्त्वैरुह्यमानतया, धर्मधुरा ता तथा, पञ्चमहाव्रतरूपा धर्मरूपा धारयत। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थ पूर्ववद् बोध्य' ॥९७–९८॥

इतिश्री–विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचक–पञ्चदशभाषाकलितललितकलापा लापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–शाहूछत्रपति–कोल्हा पुर–राजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि –जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकर–पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तरा ध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्याया व्याख्याया मृगापुत्राख्य एकोनविंशतितमम ध्ययन सम्पूर्णम्।

बन्धच महाभयावहम् विज्ञाय) धनको दुःखका विशेषरूप से वर्धक एव मातापिता स्त्री पुत्र आदिकों मे ममत्व का बध महाभय का जनक जानकर (निव्वाणगुणावह–निर्वाणगुणावहाम्) अनतज्ञान, अनतदर्शन, अनतवीर्य, अनतसुख, इनको प्राप्त करानेवाली तथा (सुहावह–सुखा-वहाम्) अक्षय सुख स्वरूप ऐसी (अणुत्तर–अनुत्तराम्) सर्वोत्कृष्ट एव (महतीम्) अपरिमित माहात्म्ययुक्त ऐसी (धम्मधुराम्–धर्मधुराम्) पच महाव्रतरूप धर्मकी धुराको (धारेह–धारयत) धारण करो। (त्ति बेमि–इति-ब्रवीमि) ऐसा महावीर प्रभु के उपदेशानुसार मैं कहता हू ॥९७–९८॥

॥ इस उन्नीसवे अध्ययन का हिन्दी अनुवाद सपूर्ण हुवा ॥

ममत्वबन्ध च महाभयावह विज्ञाय धनने दुःखना विशेष रूपने वधारनार अने भाता पिता स्त्री पुत्र आदिकोमा ममत्वनो बध महाभयने जन्मावनार जाणीने निव्वाणगुणावह निर्वाणगुणावहाम् अनतज्ञान, अनतदर्शन, अनतवीर्य, अनतसुख, એને પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા सुहावह–सुखावहाम् અક્ષય સુખ સ્વરૂપ એવી સર્વોત્કૃષ્ટ અને અપરિમિત મહાત્મ્ય યુકત એવી धम्मधुर–धर्मधुराम् પાચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મની ધુરાને धारेह–धारयत ધારણ કરો त्ति बेमि–इति ब्रवीमि એવુ મહાવીર પ્રભુના ઉપદેશ અનુસાર હુ કહુ છુ ॥૯૭॥ ॥૯૮॥

શ્રી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ઓગણીસમા અધ્યયન।
ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સમાપ્ત થયો.

॥ अथ विंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते ॥

उक्त मृगापुत्रकाख्य नामैकोनविंशतितममध्ययनम् । सम्प्रति महानिर्ग्रन्थीय नाम विंशतितमम॰ययन मारभ्यते । अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः पूर्वस्मि-न्नध्ययने निष्प्रतिकर्मता प्रोक्ता, सा च अनाथत्वभावनयैव पालयितु शक्यते, अतोऽस्मिन्न॰ययनेऽनेकविधमनाथत्व मोच्यते । इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्येदत-स्याध्ययनस्येदमादिम सूत्रम्—

मूलम्—सिद्धाण नमो किच्चा, सजयाणं च भावओ ।
अत्थधम्मगइ तच्चं, अणुसिट्ठिं सुणेह मे ॥१॥

छाया—सिद्धान् नमस्कृत्य, सयताश्च भावतः ।
अर्थधर्मगतिं तथ्याम्, अनुशिष्टिं शृणुत मे ॥१॥

टीका—'सिद्धाण' इत्यादि ।

सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामीप्रभृतीन् शिष्यान् सबोध्य प्राह-भो शिष्याः । सिद्धान्-सित=बद्धमष्टविध कर्म, तद्ध्मातं=भस्मसाद्भूतमेषामिति सिद्धाः-

---

बीसवा अध्ययन का प्रारभ-

मृगापुत्रक नाम का उन्नीसवां अध्यन का व्याख्यान हो गया । अब वह बीसवा अध्यन विवेचन के लिये प्रारभ होता है । इसका नाम महानिर्ग्रन्थीय अध्ययन है । इसका सबध उन्नीसवें अध्ययन के साथ है । और वह इस प्रकार से है–उन्नीसवें अध्ययनों मे जो निष्प्रतिकर्मता प्रकट करने में आई हैं सो उसका पालन अनाथपने की भावना से ही हो सकता है । अनाथपना भी अनेक प्रकार है । यही बात इस अध्ययन में कही जावेगी । इस अध्ययन की यह आदि गाथा है–'सिद्धाण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी आदि शिष्यों को सबोधित करके

वीसभा अध्ययननो प्रारभ—

मृगापुत्रक नामनु ओगणीसमु अध्ययन आगळ कहेवाई गयु हवे आ वीसमु अध्ययन विवेचनना माटे प्रारभ थाय छे आनु नाम महानिर्ग्रन्थीय अध्ययन छे आ अध्ययननो सबध ओगणीसमा अध्ययननी साथे छे, अने ते आ प्रमाणे छे ओगणीसमा अध्ययनमा निष्प्रतिकर्मता प्रगट करवामा आवेल छे परतु एनु पालन तो अनाथपणानी भावनाथी ज थई शके छे अनाथपणाना पण अनेक प्रकार छे ए वात आ अध्ययनमा कहेवामा आवशे आ अध्ययननी आ प्रथम गाथा छे—"सिद्धाण" ईत्यादि ।

अन्वयार्थ—सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी वगेरे शिष्योने सबोधन करता कहे

ध्यानानलनिर्दग्धाष्टकर्मेन्धनाः। उक्तं हि—

"सिय धतति सिद्धस्स, सिद्धत्तमुवजायइ" इति।

तान् तीर्थङ्करादिसिद्धान्, इह तीर्थकरा भाविसिद्धत्वात् सिद्धा इत्युच्यते। तथा सयतान्=सकलसावद्यव्यापारविरतान् आचार्योपाध्यायसर्वसाधूंश्च भावतो=भावपूर्वकं नमस्कृतस्य, अर्थधर्मगतिम्—अर्थ्यते—मोक्षार्थिभिरभिलष्यते इत्यर्थः=रत्नत्रयलक्षणः, स चासौ धर्मश्चेत्यर्थधर्मस्तस्य गतिः=स्वरूपज्ञानं यया सा तां तथोक्ताम्, तथ्याम्=अविपरीतार्थाम् 'अनुशिष्टिं=हितोपदेशरूपां शिक्षां मे=मया कथ्यमानां शृणुत। यद्वा मे=मम अनुशिष्टिं=शिक्षां यूयं शृणुत। किं—कृत्वा—सिद्धान्—पञ्चदशप्रकारान, तथा सयतान्—साधून्—आचार्योपाध्यायादिसर्वसाधूंश्च भावतः—नमस्कृत्य, कीदृशीं मे अनुशिष्टिम्? , अर्थधर्मगतिं दुष्प्राप्यधर्मप्राप्तिकारीकाम्,

---

कहते हैं—हे शिष्य! मैं (सिद्धाणच—सिद्धानाच) सिद्धों को एव (सजयाण च—सयतानां च) सयतों को (भावओ—भावतः) भावपूर्वक (नमोकिच्चा—नमस्कृत्वा) नमस्कार करके (अत्थधम्मगइ—अर्थधर्मगतिं) अर्थ—रत्नत्रय, धर्म—तद्रूपधर्म—उस के गति स्वरूप को प्रतिपादन करने वाली (तच्च—तथ्या) वास्तविक (अणुसिट्ठिं—अनुशिष्टिं) अनुशिष्टि को— हितोपदेशरूप शिक्षा को अथवा दुष्प्राप्य धर्म की प्राप्ति करने वाली शिक्षा को मैं कहता हू सो (सुणेह—शृणुत) सुनो। "सित—अष्टविध कर्म—ध्मात भस्मसाद्भूत येषां ते सिद्धा" इस व्युत्पत्ति के अनुसार ज्ञानावरणीय आदिक आठ प्रकार के कर्म जिन के भस्म हो चुके है वे सिद्ध हैं। आचार्य, उपाध्याय एव सर्वसाधु ये सयत हैं क्यों कि ये सकल सावद्य व्यापारों से सर्वथा विरत होते हैं। मोक्षार्थी प्राणियों द्वारा जो अभिलषित होता

છે કે, હે શિષ્ય! હુ "सिद्धाण च"—सिद्धाना च સિદ્ધોને અને सजयाण च—सयताना च સયતોને भावओ—भावत' ભાવપૂર્વક नमोकिच्चा—नमस्कृत्वा નમસ્કાર કરીને अत्थधम्मगइ—अर्थधर्मगतिं અર્થ—રત્નત્રય ધર્મ—તદ્રૂપધર્મ—એના ગતિસ્વરૂપને પ્રતિપાદન કરવાવાળી तच्च—तथ्या વાસ્તવિક अणुसिट्ठिं—अणुशिष्टिं અનુશિષ્ટિને—હિતોપદેશરૂપ શિક્ષાને અથવા દુષ્પ્રાપ્ય ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવવાવાળી શિક્ષાને હુ કહુ છુ, તેને તમો सुणेह—शृणुत સાભળો.—

"सिय धतति सिद्धस्स, सिद्धत्तमुवजायइ।
सित अष्टविध कर्म—ध्मात भस्मसाद्भूत येषा ते सिद्धाः"

આ અનુસાર જ્ઞાનાવરણીય આદિક આઠ પ્રકારના કર્મ જેના નષ્ટ થઈ ચૂકયા છે તે સિદ્ધ છે આચાર્ય, ઉપાધ્યાય અને સઘળા સાધુ એ સયત છે, કેમકે તેઓ સઘળા સાવદ્ય વ્યાપારોથી સપૂર્ણપણે વિરત હોય છે મોક્ષના અભિલાષી પ્રાણીઓ

यया मम शिक्षया दुर्लभधर्मस्य प्राप्तिः स्यादिति भावः। पुनः कीदृशी मेऽनुशिष्टिम् ?, तथ्या=सत्याम्। यद्वा=भद सिद्धान् संयतांश्च भावतो नमस्कृत्य, अर्थधर्मगतिं तथ्याम् अनुशिष्टिं करोमि, शृणुत मे=मम समीपे शृणुत इत्यन्वयः। इह चानुशिष्टिरभिधेया, अर्थ धर्मगति प्रयोजनम्। अनयोश्च परस्परमुपायोपेय भाव सम्बन्धः, सामर्थ्यादुक्तः मुमुक्षुरधिकारीत्यपि प्रचित 'सिद्धाण संजयाण' इत्यत्र द्वितीयार्थे षष्ठी। यद्वाऽत्र सम्बन्धसामान्ये षष्ठी बोध्या ॥१॥

धर्मकथानुयोगत्वादस्य धर्मकथाऽभिधानमिषेण सम्प्रति शिक्षामाह—

मूलम्—पभूयरयणो राया, सेणिओ मगहाहिवो।
विहारजत्तं निज्जाओ, मंडिकुच्छिंसि चेइए ॥२॥

छाया—प्रभूतरत्नो राजा, श्रेणिको मगधाधिपः।
विहारयात्रां निर्यातः, मण्डिकुक्षौ चैत्ये ॥२॥

टीका—'पभूयरयणो' इत्यादि।

प्रभूतरत्नः—प्रभूतानि=प्रचुराणि रत्नानि=कर्केतनादीनि—प्रवरगजाश्वादि रूपाणि वा यस्य स तथाभूतो मगधाधिप श्रेणिको राजा सान्तःपुर सपरि

है वह यहां अर्थरूप से ग्रहण किया गया है। ऐसा वह अर्थ रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र है। क्यों कि वही मोक्षार्थियों द्वारा अभिलषित होता है। यहां अनुशिष्टि, अभिधेय है और अर्थ धर्मगति प्रयोजन है। तथा इन दोनों का परस्पर में जो उपाय उपेयभाव है वही यहां संबंध है। मोक्षाभिलाषी अधिकारी है ॥१॥

यह धर्मकथानुयोग है इसलिये धर्म कथा को लेकर शिक्षा कहते है—'पभूयरयणो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पभूयरयणो—प्रभूतरत्नः) कर्केतन आदि रत्नो के अथवा अपनी २ जाति में उत्तम गज, अश्व आदि रूप रत्नों के अधिपति

દ્વારા જે અભિલષિત થાય છે તેનુ અહીં અર્થ રૂપથી ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે એવો તે અર્થ રત્નત્રય-સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર છે કેમકે, તે મોક્ષાર્થીઓ દ્વારા અભિલષિત થાય છે અહીં અનુશિષ્ટિ, અભિધેય છે અને અધર્મગતિ પ્રયોજન છે તથા એ બન્નેનો પરસ્પરમા જે ઉપાય ઉપેયભાવ છે એજ અહીં સબંધ છે મોક્ષાભિલાષી અધિકારી છે ॥ ૧ ॥

આ ધર્મકથાનુયોગ છે આ કારણે ધર્મકથાને લઈને શિક્ષા કહેવામા આવે છે—" पभूयरयणो " ઈત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—पभूयरयणो—प्रभूतरत्न કર્કેતન આદિ રત્નોને અથવા પોતપોતાની જાતિમા ઉત્તમ હાથી ઘોડા આદિરૂપ રત્નોના અધિપતિ અને मगहाहिवो—मग-

जन. स गान्धरो विहारयात्रया=क्रीडार्थम्-वनाहनिकादिरूपम् उद्दिश्य निर्यात'= नगरान्निर्गत सन मण्डिकुक्षौ=मण्डिकुक्षिनामके चैत्ये=उद्याने समागतः। 'विहा रजत्त' इत्यत्र तृतीयार्थे द्वितीया ॥२॥

तदुद्यान कीदृशमित्याह--

मूलम्--नाणादुमलयाइण्णं, नाणापक्खिनिसेविय ।
नाणाकुसुमसंछन्न, उज्जाण नंदणोवमं ॥३॥

छाया--नानाद्रुमलताकीर्णं, नानापक्षिनिषेवितम् ।
नानाकुसुमसञ्छन्नम्, उद्यान नन्दनोपमम् ॥३॥

टीका- 'नाणादुम' इत्यादि ।

तदुद्यान नानाद्रुमलताकीर्णं=नाना-अनेकविधा ये द्रुमा=वृक्षाः लताश्च ताभिराकीर्णं व्याप्तम्, तथा नानापक्षिसमाकुलं=नाना-अनेक जातीया ये पक्षिण स्तैर्निषेवित=सश्रितम्, तथा-नानाकुसुमसञ्छन्नम्- नाना=अनेक जातीयानि यानि कुसुमानि=पुष्पाणि तै सञ्छन्नम्=आच्छादितम्, तथा-नन्दनोपम चासीत् ॥३॥

एव (मगहाहिवो-मगधाधिप) मगधदेश का स्वामी (सेणियो राया-श्रेणिकोराजा) श्रेणिक राजा किसी समय (विहारजत्त-विहारयात्रा) विहार यात्रा क्रीडा के लिये (निज्जाओ-निर्यात') नगर से प्रस्थित हो कर (मडि-कुच्छिसि चेइए-मण्डिकुक्षौ चैत्ये) मडिकुक्षि नामक उद्यानमे आये ॥२॥

वह उद्यान कैसा है सो कहते है— नाणादुम०' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(नाणादुमलयाइण्ण-नानाद्रुमलताकीर्णं) नाना प्रकार के वृक्षो एव लताओ से व्याप्त तथा (नाणापक्खिनिसेविय-नाना पक्षि निषेवितम्) नाना प्रकार के पक्षिओं से युक्त एव (नाणा कुसुमसछन्न-नानाकुसुमसच्छन्नम्) अनेक प्रकार के पुष्पों से युक्त (उज्जाण नदणोवम-उद्यान नन्दनोपमम्) नन्दनवन के जैसा था ॥३॥

धाधिप अने मगध देशना स्वामी सेणियो राया-श्रेणिको राजा श्रेणिक राजा कोई समय विहारजत्त-विहार यात्रा विहार यात्रा क्रीडाना माटे निज्जाओ-निर्यात' नगरथी બહાર નીકળીને मडिकुच्छिसि चेइए-मण्डिकुक्षौ चैत्ये मंडकुक्षि નામના ઉદ્યાનમા પહોચ્યા ॥ २ ॥

એ ઉદ્યાન કેવુ હતુ તેનુ વર્ણન કહે છે—"नाणादुम" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—नाणादुमलयाइण्ण-नानाद्रुमलताकीर्णं અનેક પ્રકારના વૃક્ષો અને અને લતાઓથી ભરપૂર એવુ તેમજ नाणापक्खि निसेविय-नानापक्षि निषेवितम् વિવિધ પ્રકારના પક્ષીઓ અને नाणाकुसुमसच्छन्न-नानाकुसुमसच्छन्नम् અનેક પ્રકારના સુગંધી મનોહર પુષ્પોથી ભરેલ એ उज्जाण नदणोवम-उद्यान नदनोपमम् ઉદ્યાન નન્દનવન જેવુ હતુ ॥ ૩ ॥

ततो यद्भूत्तदुच्यते—

मूलम्—तत्थ सो पासई साहुं, संजयं सुसमाहियं ।
निसन्नं रुक्खमूलम्मि, सुकुमालं सुहोइयं ॥४॥

छाया—तत्र स पश्यति साधुं, संयतं सुसमाहितम् ।
निषण्णं वृक्षमूले, सुकुमारं सुखोचितम् ॥४॥

टीका—'तत्थ' इत्यादि ।

तत्र उद्याने सः श्रेणिको राजा वृक्षमूले निषण्णं=समासीनं सुकुमारं=कोमलं सुखोचितं=सुखयोग्यं सुसमाहितं=चित्तसमाधियुक्तं संयतं=संयमवन्तं साधुं=मुनिं पश्यति । सर्वोऽपि शिष्टः साधुरित्युच्यते, अत 'संयतः' इत्युक्तम् । निह्नवादिरपि बहिः संयमवान् भवतीति 'सुसमाहितम्' इत्युक्तम् ॥४॥

ततः—

मूलम्—तस्स रूवं तु पासित्ता, राइणो तम्मिं संजए ।
अच्चंतं परमो आसी, अउलो रूवविम्हओ ॥५॥

छाया—तस्य रूपं तु दृष्ट्वा, राज्ञस्तस्मिन् संयते ।
अत्यन्तपरम आसीत्, अतुलो रूपविस्मयः ॥५॥

टीका—'तस्स' इत्यादि ।

तस्य साधोः रूपं दृष्ट्वा, राज्ञः श्रेणिकस्य तस्मिन् संयते=तस्य साधौ

फिर जो हुआ सो कहते हैं—'तत्थ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तत्थ-तत्र) उस उद्यानमें (सो-स.) राजाने (रुक्खमूलम्मि निसन्नं-वृक्षमूले निषण्णं) वृक्ष के नीचे बैठे हुए (सुकुमालं-सुकुमारं) सुकुमार सुसमाहियं-सुसमाहितम्) सुखोचित चित्तकी समाधिसंपन्न तथा (संजयं-संयतं) संयमशाली एक मुनिराज को देखा ॥४॥

फिर—'तस्स' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तस्स रूवंतु पासित्ता-तस्य रूपंतु दृष्ट्वा) मुनिराज

એ ઉદ્યાનમાં જઈ પહોંચેલા રાજાએ ત્યાં શું જોયું તેને કહે છે—"तत्थ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—એ ઉદ્યાનમાં सो-स એક रुक्खमूलम्मि निसन्न-वृक्षमूले निषण्ण વૃક્ષની નીચે બેઠેલા એક सुकुमाल-सुकुमार સુકુમાર सुहोचिय-सुखोचितम् સુખોચિત ચિત્તની સમાધિથી સંપન્ન તથા संजय-संयत સંયમશાળી એવા મુનિરાજને જોયા ॥૪॥

પછી—"तस्स" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—तस्स रूवंतु पासित्ता-तस्य रूपंतु दृष्ट्वा તે મુનીરાજના રૂપને જોઇને

विषये अत्यन्तपरमः=सर्वोत्कृष्टः अतुलः=निरुपम, रूपविस्मयः=रूपविषयमाश्चर्यम् आसीत्=अभवत्। 'तु' शब्दः पूरणे ॥५॥

विस्मयस्वरूपमेवाह—

मूलम्—अहो वण्णो अहो रूवं, अहो अज्जस्स सोमया।
अहो खंति अहो मुत्ती, अहो भोगे असंगया ॥६॥

छाया—अहो वर्णः अहो रूपम्, अहो आर्यस्य सौम्यता।
अहो क्षान्तिः अहो मुक्तिः, अहो भोगे असंगता ॥६॥

टीका—'अहो' इत्यादि।

अस्य आर्यस्य-साधोः अहो! वर्णः=सुस्निग्धो गौरादिः, अहो! अस्य रूपम्=आकारः, उपलक्षणत्वात् लावण्यं च। मुक्ताफलचाकचिक्ययुक्तमस्य रूप-माश्चर्यजनकम्। उक्तं च—

के रूप को देखकर (राइणो तम्मि संजए-राज्ञस्तस्मिन् संयते) राजा को उस संयत के विषय मे बहुत (अच्चंतपरमो-अत्यंतपरमो) अधिक तथा (अतुलो रूवविम्हिओ-अतुलो रूपविस्मयः) अतुलरूप विषयक आश्चर्य हुआ ॥५॥

आश्चर्य का कारण कहते हैं—'अहो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—राजाने विचार किया कि—देखो इन (अज्जस्स-आर्यस्य) मुनिराज का (अहो वण्णो-अहो वर्ण) वर्ण कितना अच्छा सुस्निग्ध एवं गौर है (अहो रूव-अहो रूप) रूप एवं लावण्य कितना अच्छा मनमोहक है मुक्ताफल के चाकचिक्य के समान इनका रूप वास्तव में आश्चर्य-जनक है। कहा भी है—

रायणो तम्मि संजए-राज्ञस्तस्मिन् संयते રાજાને એ સંયતના વિષયમાં ખૂબ જ अच्चंत परमो-अत्यंत परमो અધિક તથા अतुलो रूवविम्हओ-अतुलो रूपविस्मय. અતુલ રૂપવિષયક આશ્ચર્ય થયું ॥ ५ ॥

આશ્ચર્ય થવાના કારણને કહે છે—"अहो" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—રાજાએ વિચાર કર્યો કે અરે વાહ? આ अज्जस्स-आर्यस्य મુનિરાજનો अहो वण्णो-अहो वर्ण. કેવો સુંદર સ્નિગ્ધ અને ગૌરવર્ણ છે તેમજ अहो रूव-अहो रूपम् લાવણ્ય કેટલું મનમોહક છે? મુક્તાફળના ચાકચિક્યની માફક એમનું રૂપ વાસ્તવમાં આશ્ચર્ય જનક છે કહ્યું પણ છે કે—

मुक्ताफलेषु छायायास्तरलत्वमिवान्तरा ।
प्रतिभाति यदङ्गेषु, तल्लावण्यमिहोच्यते ॥१॥

अहो ! अस्य सौम्यता=विशुद्धाध्यवसायशीलत्वादस्य मुखे शारदनिर्मला ऽखण्डचन्द्रमण्डलादप्यधिका दर्शकजननयनानन्ददायिनी प्रतिभाति। अहो! अस्य क्षान्तिः=क्षमा, अस्य सद्यः प्रव्रजितस्य शरीरसम्बन्धिसुगन्धलोभाकृष्टषट्पदनिकरैस्तुद्यमानस्यापि निश्चलतयाऽऽश्चर्यकारिणी क्षान्तिः प्रतिभाति। अहो ! अस्य मुक्तिः=निर्लोभता, अस्याश्चर्यकारिण्या क्षान्त्या निर्लोभताऽपि प्रकटी भवति, यद् पूर्वरूपलावण्यसंपन्नस्यापि शरीरस्यानपेक्षणादस्य निर्ममत्वमपि महाश्चर्यजनकम्।

"मोती के अंदर जो तरल (चंचल कांति) छाया होती है उसी प्रकार जिसके शरीरकी कांति चमकार करती हो उसको लावण्य कहते हैं।"

(अहो सोमया-अहोसौम्यता) अहो! विशुद्ध अध्यवसायवाले होने से इनके मुख पर जो शरत्कालीन निर्मल पूर्ण चन्द्रमण्डल से भी अधिक कांति है वह दर्शक जनों के नयनों को कितनी आनंद दायिनी हो रही है। (अहोखंति-अहो क्षांतिः) इनकी क्षमा तो विशेष विस्मयकारक बन रही है। यद्यपि ये महात्मा अभी नवीन दीक्षित ही ज्ञात हो रहे हैं फिर भी इनकी शारीरिक चन्दनादि सुगंध से आकृष्ट हुआ जो यह भ्रमर निकर मे वह इनको व्यथित करता हुआ विचलित नहीं कर सकता है ये बिलकुल निश्चल बने हुए बैठे हैं यह कितने आश्चर्य की बात है। (अहो मुत्ती-अहो मुक्ति) लोभरहित जो इनकी वृत्ति है वह भी बडी विलक्षण ज्ञात होती है। अपूर्व लावण्य से अलकृत जो इन की यह

"મોતીની અંદર જે તરલ છાયા હોય છે, એજ પ્રમાણે અંગોમાં જે પ્રતિભાસ હોય છે તેને લાવણ્ય કહે છે"

अहो सोमया-अहो सौम्यता જુઓ! વિશુદ્ધ અધ્યવસાયવાળા હોવાથી એમના મુખારવિંદ ઉપર જે શરદ્દકાળના નિર્મળ પૂર્ણ ચંદ્રમંડળથી પણ અધિક કાન્તિ છે એ જોનારાઓના નયનોને કેટલો આનંદ આપી રહી છે! अहो खंति-अहो क्षांतिः એમની ક્ષમા તો ખરેખર વિશેષ વિસ્મયકારક જ છે જો કે આ મહાત્મા હમણા નવાજ દીક્ષિત થયેલા લાગે છે છતાં પણ, એમની શારિરિક સુગંધથી આકર્ષાઈને જે આ ભમરાઓ ફરી રહ્યા છે તે એમને વ્યથા પહોંચાડી રહ્યા હોવા છતાં તેમને ધ્યાનમાંથી ચલાયમાન કરી શકતા નથી એ એ બિલકુલ નિશ્ચલ બનીને જ બેઠા છે એ કેટલા આશ્ચર્યની વાત છે? अहो मुत्ती-अहो मुक्ति. લોભ રહિત જે એમની વૃત્તિ છે એ પણ ખૂબ વિલક્ષણ જણાય છે અપૂર્વ લાવણ્યથી અલંકૃત એવી એમની જે આ શારિરીક અનપેક્ષા વૃત્તિ છે એનાથી

अहो ! अस्य साधोः-भोगे=भोगविषये असगता=निस्पृहता । सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणादि तथारूपनिर्ग्रन्थवेषधारित्वादस्य भोगविषयेऽप्य नासक्तिराश्चर्यं जनयति। अस्य साधो वर्णादिकं सर्वमाश्चर्यकारीति राजा श्रेणिको मनस्यचिन्तयदिति भावः ॥६॥

ततो राजा यदकरोत्तदुच्यते--

मूलम्--तस्स पाए उ वंदित्ता, काऊंण यं पयाहिणं ।
नाइदूरमणासन्ने, पजली पडिपुच्छइ ॥७॥

छाया--तस्य पादौ तु वन्दित्वा, कृत्वा च प्रदक्षिणाम् ।
नातिदूरेऽनासन्ने, प्राञ्जलिः प्रतिपृच्छति ॥७॥

टीका--'तस्स' इत्यादि ।

तस्य=साधो पादौ=चरणौ वन्दित्वा=प्रणम्य, प्रदक्षिणा च कृत्वा नातिदूरे=नातिविप्रकृष्टे, अनासन्ने=नातिसमीपे स्थितो राजा प्राञ्जलिः=करबद्धः सन

शारीरिक विषयक अनपेक्षा वृत्ति है उससे प्रकट होने वाला निर्मल भाव महान् आश्चर्य जनक बन रहा है। (अहो भोगे असगया-अहो-भोगे असगता) स्पृहता तो इनकी अत्यन्त आश्चर्य उत्पन्न करती है। इस प्रकार राजा के मनमे मुनिराज की सब ही बातें आश्चर्य जनक प्रतीत हो रही थी ॥६॥

इनको देखकर राजाने जो किया सो कहते है—'तस्स' 'इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस प्रकार आश्चर्यभाव मे मग्न हुए उन राजाने उनके पास पहुँचकर (तस्य पाएउ वदित्ता-तस्य पादौ वन्दित्वा) उनके चरणों मे वदना की, पश्चात् (पयाहिण काऊण नाइदूरमणासन्ने पजली पडिपुच्छइ-प्रदक्षिणा कृत्वा नातिदूरे अनासन्ने प्राञ्जलिः प्रतिपृच्छती)

પ્રકટ થઈ રહેલો નિર્મળભાવ મહાન આશ્ચર્ય જનક બની રહેલ છે अहो भोगे असगया-अहो भोगे असगता ભોગવિષયમા એમની નિસ્પૃહતા તો અત્યત આશ્ચર્ય ઉત્પન્ન કરે છે આ પ્રકારે રાજાના મનમા મુનીરાજની સઘળી બિના આશ્ચર્યજનક જ દેખાઈ રહી હતી ॥ ૬ ॥

એમને જોઈને રાજાએ શુ કર્યું તે કહે છે—"तस्स" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—આ પ્રકારના આશ્ચર્યભાવમા મગ્ન બનેલા એ રાજાએ તેમની પાસે પહોચીને तस्स पाएउ वदित्ता-तस्य पादौ वन्दित्वा તેમના ચરણમા વદન કર્યું પછી पायाहिण काऊण नाइदूरमणासन्ने पजली पडिपुच्छइ-प्रदक्षिणा कृत्वा नातिदूरे

प्रति पृच्छति=प्रश्नं करोति। 'तु' शब्दः पादपूरणे। वन्दनानन्तरं प्रदक्षिणाभिधानं महापुरुषेषु दृष्टिपथे समागतेष्वेव तेषां प्रणामः कर्तव्य, इति सूचनार्थम् ॥७॥

प्रश्नस्वरूपमाह--

मूलम्--तरुणोऽसि अज्जो! पव्वईओ, भोगकालम्मि संजया।
उवट्ठिओऽसि सामन्ने, एयमट्ठं सुणेमि तां ॥८॥

छाया--तरुणोऽसि आर्य! प्रव्रजितो, भोगकाले संयत!।
उपस्थितोऽसि श्रामण्ये, एतमर्थं शृणोमि तावत् ॥८॥

टीका--'तरुणोसि' इत्यादि।

हे आर्य! हे संयत! त्वं तरुणः=युवाऽसि, अत एव अस्मिन् भोगकाले=भोगयोग्यवयसि, त्वं कथं प्रव्रजितः? कथं च श्रामण्ये=असिधारा तुल्य साधुधर्मपालने उपस्थितोऽसि=उद्युक्तोऽसि। तावत्=प्रथमम् एतमर्थं=तव प्रव्रज्याया हेतुं शृणोमि=श्रोतुकामोऽस्मि। पश्चात् यच्च कथयिष्यसि तदपि श्रोष्यामीति भावः ॥८॥

प्रदक्षिणा पूर्वक उनके न अतिसमीप और न अतिदूर हाथ जोड़कर बैठ गये और इस प्रकार पूछने लगे ॥७॥

क्या पूछा? सो कहते हैं--'तरुणोसि' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(अज्जो-आर्य) हे आर्य! (संजया-संयत) हे संयत! आप इस समय (तरुणोऽसि-तरुणोऽसि) भर जवानी में हैं अतः यह समय तो महाराज (भोगकालम्मि पव्वइओ-भोगकाले प्रव्रजितः असि) भोग भोगने का है-फिर आप इस समय कैसे दीक्षित हो गये हैं और (सामन्ने उवट्ठिओऽसि-श्रामण्ये उपस्थित असि) असिधारा तुल्य जो यह श्रामण्य-साधुपना है उसके पालन करने में कैसे उद्युक्त बने हैं। मैं (ता-तावत्) सर्व प्रथम (एयमट्ठं सुणामि-एतमर्थं शृणोमि) आपके

अनासन्ने प्राञ्जलि प्रतिपृच्छति પ્રદક્ષિણા કરી તેમનાથી દૂર પણ નહીં તેમ અડીને પણ નહીં એ રીતે હાથ જોડીને બેસી ગયા અને આ પ્રકારે પૂછવા લાગ્યા ॥ ૭ ॥

રાજાએ મુનિરાજને શું પૂછ્યું? તે કહે છે—"तरुणोसि" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—अज्जो-आर्य હે આર્ય! सजया-संयत હે સંયત! આપ આ સમયે तरुणोऽसि-तरुणोऽसि ભર જુવાનીના છો, આથી આ સમય તો મહારાજ भोगकालम्मि पव्वइओ-भोगकाले प्रव्रजितः ભોગ ભોગવવાનો છે ત્યારે આવા સમયે આપ ક્યા કારણે દીક્ષિત બની ગયા છો અને सामण्णे उवट्ठिओऽसि-श्रामण्ये उपस्थित असि તરવારની ધાર સમાન જે આ શ્રામણ્ય-સાધુપણું છે એનું પાલન કરવામાં કેમ ઉદ્યુક્ત બન્યા છો? હું ता-तावत् સહુથી પ્રથમ एयमट्ठं सुणामि-

इत्थं श्रेणिकभूपस्य वचनं श्रुत्वा मुनिराह—

मूलम्—अणाहो मि महाराय ! नाहो मज्झ न विज्जइ ।
अणुकंपगं सुहिं वावि, कंची नाभिसमेमहं ॥९॥

छाया—अनाथोऽस्मि महाराज, नाथो मम न विद्यते ।
अनुकम्पकं सुहृदं वाऽपि, कंचिन्नाभिसमेम्यहम् ॥९॥

टीका —'अणाहो' इत्यादि ।

हे महाराज ! अहम् अनाथोऽस्मि, अतो मम नाथ=योगक्षेमकारी= अलब्धस्य लाभो योगः, लब्धस्य परिपालनं क्षेमः, तत्कारी न कश्चिद् विद्यते । अहं कश्चिदपि अनुकम्पकम्=अनुकम्पाकारकं जनं सुहृदं=मित्रं वाऽपि न अभिसमेमि=नाभिसंगच्छामि—न प्राप्नोमि । मम योगक्षेमकारी कश्चिदप्यनुकम्पकः सुहृद् वा नाभूत्ततोऽहं प्रव्रजित इति भावः ॥९॥

मुख से यह सब बातें सुनना चाहता हूं ॥ ८ ॥

श्रेणिकराजा के वचन सुनकर मुनिराज कहते हैं—'अणाहोमि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(महाराय महाराज !) हे राजा मैं (अणाहोमि—अनाथः अस्मि) अनाथ हूं—मेरा योग क्षेमकारी कोई नहीं है इसी लिये (मज्झ नाहो न विज्जइ—मम नाथः न विद्यते) मेरा कोई नाथ नहीं है। अलब्ध के लाभ का नाम योग तथा लब्ध के परिपालन करने का नाम क्षेम है। (अहं कंचि अणुकंपगं सुहिं वावि नाभिसमेमु—अहं कंचित् अनुकंपकं सुहृदं वापि न अभिसमेमि) मैं किसी भी दयालु तथा मित्र-जन के समीप नहीं गया हूं। अर्थात्—मुझे ऐसा कोई भी दयालु तथा मित्रजन नहीं दिखा कि जो मेरे लिये योग क्षेमकारी हुआ हो—अतः अपने को अनाथ समझकर मैं दीक्षित हो गया हूं ॥ ९ ॥

एतमर्थं शृणोमि આપના મુખેથી એ વાત સાભળવાની ઇચ્છા રાખુ છુ ॥૮॥

શ્રેણિક રાજાના વચન સાભળીને મુનિરાજ કહે છે—"अणाहोमि" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—महाराय—महाराज ! હે રાજા ! હુ अणाहोमि—अनाथःअस्मि અનાથ છુ, મારા ઉપર ક્ષેમ કરનાર એવુ કોઈ નથી આ કારણે मज्झ नाहो न विज्जइ—मम नाथः न विद्यते મારો કોઈ નાથ નથી અલબ્ધના લાભનુ નામ યોગ તથા લબ્ધનુ પરિપાલન કરવાવાળાનુ નામ ક્ષેમ છે હુ अह कंचिअणुकपगं सुहिं वावि नाभिसमेमु—अह कचित् अनुकपकं सुहृद वापि न अभिसमेमि કોઈ પણ દયાળુ તથા મિત્ર જનની પાસે ગયો નથી અર્થાત્ મને એવો કોઇ પણ દયાળુ મિત્રજન મળેલ નથી કે જે મારા માટે યોગ ક્ષેમકારી થયેલ હોય આથી મારી જાતને અનાથ સમજીને મે દીક્ષા અગીકાર કરી છે ॥૯॥

एवं मुनिनोक्तः राजा प्राह—

मूलम्—तंओ सों पहसिंओ, रांया सेणिंओ मगहाहिवो ।
एंव तें इड्डिमंतस्स, कंह णांहो नं विज्जंइ ॥१०॥

छाया—ततः स प्रहसितो राजा, श्रेणिको मगधाधिपः
एवं ते ऋद्धिमतः, कथं नाथो न विद्यते ॥१०॥

टीका—'तओ सो' इत्यादि ।

ततो मुनिवचनश्रवणानन्तरं प्रहसितः=प्रहसन् स मगधाधिपः श्रेणिको राजाऽब्रवीत्-हे महाभाग ! एवम्=दृश्यमानप्रकारेण ऋद्धिमतः=विस्मयकारकवर्णादि सम्पत्तिमतः, ते=तव नाथः=योगक्षेमकारी कथं न विद्यते इति महदाश्चर्यम् । आश्चर्यहेतुः-'यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति' इति 'गुणवति धनं ततः श्रीः श्रीमत्याज्ञा ततो राज्यम्' इति च लोकप्रवादस्य विरुद्धता ॥१०॥

मुनिराज के वचन को सुनकर राजा जो कहता है उसी को प्रकट करते हैं—'तओ सो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस प्रकार मुनिराज के वचन सुनकर (तओ सो मगहाहिवो सेणियो राया पहसियो—ततः सः मगधाधिपः श्रेणिकः राजा प्रहसितः) मगध के अधिपति श्रेणिक राजा को हँसी आगई और हँसते २ ही उन्होंने मुनिराज से कहा—महाराज ! (एवं इड्डिमतस्स ते कह णाहो न विज्जइ—एवं ऋद्धिमतः ते कथं नाथो न विद्यते) विस्मयकारक रूप आदि संपत्ति संपन्न आपका कोई नाथ नहीं है यह एक भारी आश्चर्य की बात है ॥ १० ॥

મુનિરાજના વચનને સાભળીને રાજા જે કહે છે એને પ્રગટ કરવામા આવે છે "तओ सो"—ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—મુનિરાજના વચન સાભળીને तओ सो मगहाहिवो सेणियो राया पहसियो-ततः स मगधाधिपः श्रेणिकः राजा प्रहसितः મગધના અધિપતિ શ્રેણિક રાજાને હસવુ આવી ગયુ અને હસતા હસતા જ તેમણે મુનિરાજને કહ્યુ મહારાજ ! एवं इड्डिमतस्स ते कह नाहो न विज्जइ—एवं ऋद्धिमतः ते कथं नाथो न विद्यते વિસ્મયકારક એવુ આપનુ રૂપ, આવી સપત્તિ સપન્ન હોવા છતા પણ આપનો કોઈ નાથ નથી આ એક ભારે આશ્ચર્યની વાત છે ॥૧૦॥

यदि चानाथत्वैव व्रताङ्गीकारहेतुस्तर्हि—

मूलम्—होमि नाहो भयंताणं, भोगे भुंजाहि संजया !।
मित्तनाइपरिवुडो, माणुस्सं खु सुदुल्लहं ॥११॥

छाया—भवामि नाथो भदन्तानां, भोगान् भुङ्क्ष्व संयत !।
मित्रज्ञातिपरिवृतो, मानुष्यं खलु सुदुर्लभम् ॥११॥

टीका—'होमि' इत्यादि।

हे संयत ! अहं भदन्तानां=पूज्यानां युष्माकं नाथो भवामि। त्वं मित्रज्ञातिपरिवृतः मित्रैर्ज्ञातिभिश्च युक्तो भोगान्=मनोज्ञशब्दादीन् भुङ्क्ष्व। मयि नाथे सति तव मित्राणि ज्ञातयो भोगाश्च सुलभा इति भावः। यतो मानुष्यं=मनुष्यजन्म खलु=निश्चयेन सुदुर्लभम् ॥११॥

'यदि आपके साधु बनने में अनाथता ही कारण है तो मैं आपका नाथ हो जाऊं' इस प्रकार के अभिप्राय को लेकर राजा कहते हैं— 'होमि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(संजया !-हे संयत) हे संयत ! (भयंताणं नाहो होमि-भदन्तानां नाथो भवामि) आपका मैं नाथ होता हूं। (मित्त नाइ परिवुडो भोगे भुंजाहि-मित्रज्ञाति परिवृत भोगान् भुङ्क्ष्व) अतः आप मित्र एवं ज्ञातिजनों से युक्त होकर मनोज्ञ शब्दादिक भोगों को भोगें। अपने को अनाथ न समझें। मेरे जैसे व्यक्ति के नाथ होने पर आपके क्या कमी रह सकती है। क्या मित्रजन क्या ज्ञातिजन क्या भोग ये सभी सुलभ हैं। क्यों व्यर्थ के इस त्याग की अवस्था में पड़ गये हो। (माणुस्सं खु सुदुल्लहं-मानुष्यं खलु सुदुर्लभम्) यह मनुष्य पर्याय

"આપના સાધુ બનવામાં જો અનાથતા જ કારણભૂત છે તો હું આપનો નાથ થઈ જાઉં" આ પ્રકારના અભિપ્રાયને લઈને રાજા કહે છે—'होमि' ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—संजय-संयत હે સંયત ! भयंताणं नाहो होमि-भदन्तानां नाथो भवामि આપનો હું નાથ થાઉં છું मित्तनाइ परिवुडो भोगे भुंजाहि-मित्रज्ञाति परिवृत्तः भोगान् भुङ्क्ष्व આથી આપ મિત્ર અને જ્ઞાતિજનોથી યુક્ત બનીને મનોજ્ઞ શબ્દાદિ ભોગોને ભોગવો. પોતાને અનાથ સમજો મારા જેવી વ્યક્તિ નાથ થવાથી આપને હવે શાની કમી રહેવાની છે? મિત્રજન, જ્ઞાતિજન, તેમ જ ભોગ એ બધું સુલભ છે શા માટે વ્યર્થમાં આ ત્યાગની અવસ્થામાં પડી ગયા છો? माणुस्सं खु सुदुल्लहं-मानुष्यं खलु सुदुर्लभम् આ મનુષ્ય પર્યાય ઘડી ઘડી મળતો નથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ મહાદુર્લભ જાણીને એને ભોગો ભોગવીને સફળ કરો ॥૧૧॥

मुनिराह—

मूलम्—अप्पणा वि अणाहो सि, सेणिया ! मगहाहिवा !
अप्पणा अणाहो संतो, कहं णाहो भविस्ससि ? ॥१२॥

छाया—आत्मनाऽपि अनाथोऽसि, श्रेणिक ! मगधाधिप ! !
आत्मना अनाथः सन्, कथं नाथो भविष्यसि ? ॥१२॥

टीका—'अप्पणावि' इत्यादि।

हे मगधाधिप ! श्रेणिक ! त्वम् आत्मनाऽ=पि स्वयमपि अनाथोऽसि, स्वयमपि स्वस्य योगक्षेमकरणेऽसमर्थोऽसीतिभावः। आत्मनाऽनाथः=स्वयं स्वस्य योगक्षेमकरणेऽसमर्थः सन् त्वं कथं मम नाथो भविष्यसि ? न केनापि प्रकारेण नाथो भवितुमर्हसीति भावः ॥१२॥

ततो यद्भूत्तदुच्यते—

मूलम्—एवं वुत्तो नरिंदो सो, सुसंभंतो सुविम्हिओ।
वयणं अस्सुयपुव्वं, साहुणा विम्हयंन्निओ ॥१३॥

बार २ नहीं मिलती है। अतः इसकी प्राप्ति महा दुर्लभ जानकर इस भोगों को भोगने द्वारा सफल करो ॥ ११ ॥

राजा के पूर्वोक्त वचन सुनकर अनाथी मुनि कहते हैं—'अप्पणावि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(मगहाहिवा सेणिया–मगधाधिप श्रेणिक !) हे मगधाधिपति श्रेणिक ! (अप्पणा वि अणाहोसि–आत्मनाऽपि अनाथोऽसि) तुम स्वयं अपने आप जब अनाथ हो–तो (अप्पणा अणाहो संतो कह णाहो भविस्ससि–आत्मना अनाथ सन् कथं नाथो भविष्यसि) तुम मेरे नाथ कैसे बन सकते हो ! जो स्वयं का नाथ होता है वही पर का नाथ होता है ॥ १२ ॥

રાજાના આ પ્રકારના વચનને સાંભળીને અનાથી મુનિ કહે છે—"अप्पणावि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—मगहाहिवा सेणिया–मगधाधिप श्रेणिक ? હે મગધાધિપતિ શ્રેણિક ? अप्पणावि अणाहोसि–आत्मनाऽपिअनाथोऽसि તમો પોતેજ જ્યાં પોતાના માટે અનાથ છો ત્યારે अप्पणा अणाहो सतो कह नाहो भविस्ससि–आत्मना अनाथ सन् कथ नाथो भविष्यसि તમે મારા નાથ કઈ રીતે બની શકવાના છો ? જે સ્વયં નાથ હોય છે તેજ બીજાના નાથ બની શકે છે ॥૧૨॥

छाया--एवमुक्तो नरेन्द्रः स, सुसम्भ्रान्तः सुविस्मितः।
वचनम् अश्रुतपूर्वं, साधुना विस्मयान्वितः ॥१३॥

'एवमुत्तो' इत्यादि।

विस्मयान्वितः=पूर्वमपि साधो रूपलावण्यादि दर्शनेन विस्मय प्राप्तः स नरेन्द्रः साधुना एवं=पूर्वोक्तगाथानुसारेण अश्रुतपूर्वम्=पूर्वं न कदाऽपि श्रुतं, वचनम् उक्तः=अभिहितः, अतएव-सुसम्भ्रान्तः=अत्यन्त व्याकुलितः, सुविस्मितः=अतिशयाश्चर्यसम्पन्नश्च जातः ॥१३॥

ततो राजा प्राह--

मूलम्--आसा हत्थी मणुस्सा मे, पुरं अंतेउरं च मे ॥
भुंजामि माणुसे भोए, आणा इस्सरियं च मे ॥१४॥
एरिसे संपयग्गम्मि, सव्वकामसमप्पिए।
कहं अणाहो भवइ, मा हु भंते! मुसं वए! ॥१५॥

छाया--अश्वा हस्तिनो मनुष्या मे, पुरमन्तःपुरं च मे।
भुञ्जे मानुषान्, भोगान् आज्ञा ऐश्वर्यं च मे ॥१४॥
ईदृशे सम्पदग्रे, सर्वकाम समर्पिते।
कथम् अनाथो भवति, मा हु भदन्त! मृषा वादीः ॥१५॥

फिर जो हुआ सो कहते है--'एव' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(विम्हयन्निओ सो नरिंदो-विस्मयान्वितः स नरेन्द्रः) पहिले से ही साधु के रूप लावण्य आदि के देखने से विस्मय को प्राप्त राजा जब (साहुणा एव अस्सुयपुव्व वयण वुत्तो-साधुना एवम् अश्रुतपूर्वं वचनम् उक्तो) मुनिराजने ऐसा अश्रुतपूर्व वचन कहा तो उनके चित्तमे एक प्रकार की (सुसंभंतो सुविम्हिओ-सुसम्भ्रान्त सुविस्मित) व्याकुलता जग जाने से बडा भारी अचरज हुआ ॥ १३ ॥

પછી જે બન્યું તેને કહે છે—"एव" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—विम्हयन्निओ सो नरिंदो-विस्मयान्वित सः नरेन्द्र પ્રથમ નજરે જ સાધુના રૂપ-લાવણ્ય જોઇને વિસ્મય પામેલા રાજાને જ્યારે साहुणा एव अस्सुयपुव्व वयण वुत्तो-साधुना एवम् अश्रुपूर्वं वचन उक्तो મુનિએ આ પ્રકારે અશ્રુતપૂર્વ વચન કહ્યું ત્યારે તેમના ચિત્તમાં એક પ્રકારની सुसंभंतो सुविम्हिओ-सुसम्भ्रान्त. सुविस्मित વ્યાકુળતા જાગી જવાથી ખૂબ જ ભારે અચરજ થયું ॥૧૩॥

टीका--'आसा' इत्यादि--'एरिसे' इत्यादि।

हे महाभाग! मे=मम अश्वाः=तुरगाः सन्ति,=हस्तिनः सन्ति, पुरम्=नगरम् अन्तःपुरम्=राज्ञीवृन्दं च मेऽस्ति। तथा चाहम् मानुषान्=मनुष्यसम्बन्धिनो भोगान=मनोज्ञशब्दादींश्च भुञ्जे। तथा-मे=मम आज्ञा=अस्खलितशासनरूपा, ऐश्वर्यं=समृद्धिः प्रभुत्वं चास्ति। ईदृशे=एवंविधे सर्वकामसमर्पिते=सर्वेषां कामानां=मनोज्ञशब्दादीनां समर्पितम्=समर्पणं पूरणं यस्मात्तथाविधे सम्पदग्रे-सम्पत्प्रकर्षे सति अयं मादृशो जनः कथम् अनाथो भवति? न कदाचिदप्यनाथ इतिभावः। हु=यस्मादेव तस्माद्! हे भदन्त! मा मृषावादी,=एवं भाषणे मृषावादः स्यात्, तस्मादेवं मा वद ॥१४-१५॥

फिर राजा कहता है--'आसा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--हे मुनिराज! (मे आसा हत्थी मणुस्सा-मे अश्वाः हस्तिनः मनुष्याः) मेरे पास अनेक घोडे हैं अनेक हाथी हैं अनेक मनुष्य हैं। (पुर-पुरम्) कई नगर भी मेरे पास है। (अंतेउरं च-अन्तःपुरञ्च मे) अंतःपुर मेरे पास है। (माणुसे भोए भुंजमि-मानुषान् भोगान् भुंजे) मनुष्य संबंधि-विविध भोगों को मैं वहां आनंद के साथ भोगता हूं। (आणा इस्सरियं च मे-आज्ञा ऐश्वर्यं च मे) आज्ञा एवं ऐश्वर्य में मुझे किसी भी प्रकार के संकट का सामना नहीं करना पडता है॥ १४ ॥

'एरिसे' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(एरिसे-ईदृशे) इस प्रकार (सव्वकामसमप्पिए सपयग्गम्मि-सर्वकामसमर्पिते सम्पदग्रे) समस्त इच्छाओं की पूर्ति करने वाली प्रकृष्ट संपत्ति के होते हुए (कहं अणाहो भवइ-कथं अनाथो भवति) मैं

પછી રાજા કહે છે—"आसा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે મુનિરાજ! मे आसा हत्थी मणुस्सा-मे अश्वाः हस्तिनः मनुष्याः મારી પાસે અનેક ઘોડા છે, અનેક હાથી છે, અનેક મનુષ્ય છે, पुर-पुरम् ઘણા નગર મારે આધીન છે, अंतेउरं च-अन्तःपुरम् च અન્તઃપુર મારી પાસે છે माणुसे भोए भुंजामि-मानुषान् भोगान् भुंजे મનુષ્ય સંબંધી વિવિધ ભોગોને હું ત્યાં આનંદની ભોગવું છું आणा इस्सरियं च मे-आज्ञा ऐश्वर्यं च मे આજ્ઞા અને ઐશ્વર્યમાં મારે કોઈ પણ પ્રકારની બાધાનો સામનો કરવો પડતો નથી ॥૧૪॥

"एरिसे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ— एरिसे-ईदृशे આ પ્રકારે सव्वकामसमप्पिए सपयग्गम्मि-सर्वकामसमर्पिते सपदग्रे સઘળી ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવાવાળી પ્રકૃષ્ટ સંપત્તિ મારી પાસે હોવા છતાં હું कहं अणाहो भवइ-कथं अनाथो भवति અનાથ કઈ રીતે હોઈ

राज्ञो वचनं श्रुत्वा मुनिराह—

मूलम्—नं तुम जाणे अणाहस्स, अत्थं पोत्थं चं पत्थिवा ! ।
जहा अणाहो हवेंइ, सणाहो वां नराहिं वा ! ॥१६॥

छाया—नत्त्वं जानासि अनाथस्य, अर्थं प्रोत्थं च पार्थिव ! ।
यथा अनाथो भवति, सनाथो वा नराधिप ॥१६॥

टीका—'न तुम' इत्यादि।

हे पार्थिव=हे पृथिवीपते ! त्वम् अनाथस्य=अनाथशब्दस्य अर्थ न जानासि, तथा-प्रोत्था=प्रकर्षेण उत्थान-मूलकारण-केनाभिप्रायेण मया त्वमनाथ उक्त इत्येवं रूपां न जानासि। एतदेव स्पष्टयति-हे नराधिप=हे नरेश्वर ! यथा=येन प्रकारेण पुरुषः-अनाथः सनाथो वा भवति, तथा त्वं न जानासि ॥१६॥

अनाथ कैसे हो सकता हूं। (हु-हु) इस लिये (भंते !-भदन्त) हे भदन्त मुझे अनाथ कहना सर्वथा असत्प्रलाप है। ऐसे प्रलाप मे मृषावाद का दोष आता है। (मा मुस वए-मा मृषा वादी) अतः आपको ऐसा (असत्य) नही कहना चाहिये ॥ १५ ॥

इस पर मुनिराज कहते हैं—'न तुम' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पत्थिवा-पार्थिव) हे राजन् ! (तुम अणाहस्स अत्थ पोत्थं च नजाणे-त्वं अनाथस्य अर्थं प्रोत्थं च न जानासि) तुम अनाथ के अर्थ को तथा मैंने तुमको अनाथ कैसे कहा है इस मेरे अभिप्राय की उत्पत्ति के मूलकारण को नहीं जानते हो तथा (नराहिवा जहा अणाहो हवइ सणाहो वा-नराधिप यथा अनाथो भवति सनाथो वा) हे नराधिप ! पुरुष अनाथ व सनाथ कैसे होता है यह भी तुम नही जानते हो इसी लिये तुमको मेरे कथन में मृषावाद प्रतीत होता है ॥ १६ ॥

શકુ ? हु-हु આ કારણે भंते !-भदन्त હે ભદન્ત ! મને અનાથ કહેવા એ સર્વથા અસત્ય વાત છે આવા પ્રલાપમા મૃષાવાદનો દોષ આવે છે मा मुस वए-मा मृषा वादी' આથી આપે આવુ અસત્ય ન બોલવુ જોઇએ ॥૧૫।

આના ઉપર મુનિરાજ કહે છે—"न तुम" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—पत्थिवा-पार्थिव હે રાજન્ ! तुम अणाहस्स अत्थ पोत्थ च न जाणे-त्वं अनाथस्य अर्थं प्रोत्थ च न जानासि તમો અનાથના અર્થને, તેમજ મે તમને અનાથ કેમ કહ્યા, એ મારા અભિપ્રાયની ઉત્પત્તિના મૂળ કારણને જાણતા નથી તથા नराहिवा जहा अणाहो हवइ सणाहो वा-नराधिप यथा अनाथो भवति सनाथो वा પુરુષ અનાથ તેમ જ સનાથ કઈ રીતે થાય છે એ પણ તમે જાણતા નથી આથી મારા કહેવામા તમોને મૃષાવાદ પ્રતીત થાય છે ॥ ૧૬ ॥

अथ मुनि रनाथत्वमेव विवृणोति--

मूलम्—सुणेहि मे महाराय !, अव्वक्खित्तेन चेयसा ।
जहा अणाहो हवइ, जहा मे य पवत्तियं ॥१७॥

छाया--शृणु मे महाराज !, अव्याक्षिप्तेन चेतसा ।
यथा अनाथो भवति, यथा मया च प्रवर्तितम् ॥१७॥

टीका—'सुणेहि' इत्यादि ।

हे महाराज ! त्व मे=मम सकाशात् अव्याक्षिप्तेन=स्थिरेण चेतसा शृणु यथा पुरुषः--अनाथः=अनाथ शब्द वाच्यो भवति । यथा च=येनाशयेन च मया 'अनाथ' इति पद मवर्त्तित=कथितम् । तदह कथयामि एकाग्रचित्तो भूत्वा शृणु, इत्यर्थः ॥१७॥

स्वपूर्वा वस्थानिवेदनपुरस्सरमनाथत्व मस्पयति--

मूलम्—कोसंबी नाम नयरी, पुराणपुरभेयणी ।
तत्थ आसी पिया मज्झं, पभूयधण संचओ ॥१८॥

छाया—कौशाम्बी नाम नगरी, पुराणपुरभेदनी ।
तत्र आसीद् पिता मम, प्रभूतधनसचयः ॥१८॥

अब मुनिराज अनाथ के अर्थ को समझाते हैं—'सुणेहि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--मनुष्य (जहा–यथा) जैसे (सणाहो–सनाथः) सनाथ एव (अणाहो–अनाथः भवति) अनाथ होता है, तथा (जहा मे य पवत्तिय–यथा मे च प्रवर्तितम्) मैंने किस अभिप्राय से तुमको अनाथ कहा है यह सब मै तुमको समझाता हू (महाराय अव्वक्खित्तेन चेयसा सुणेहि–हे महाराज अव्याक्षिप्तेन चेतसा शृणुत) तुम एकाग्रचित्त हो कर सुनो ॥१७॥

मुनिराज अपनी पूर्व अवस्था का परिचय देते हुए अनाथ का स्व-

હવે મુનિરાજ અનાથના અર્થને સમજાવે છે—"सुणेहि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--મનુષ્ય जहा–यथा જે રીતે સનાથ તેમ જ अणाहो हवइ–अनाथः भवति અનાથ થાય છે તથા મે जहा मे य पवत्तिय–यथा मे च मवर्तितम् તમને કયા અભિપ્રાયથી અનાથ કહેલ છે એ સઘળુ હુ તમને સમજાવુ છુ महाराय अव्वक्खित्तेन चेयसा सुणेहि–महाराज अव्याक्षिप्तेन चेतसा शृणुत હે રાજન ! એકાગ્ર ચિત્ત બનીને એ તમો સાભળો ॥ ૧૭ ॥

મુનિરાજ પોતાની પૂર્વ અવસ્થાનો પરિચય આપતા અનાથનુ સ્વરૂપ સમ

टीका–'कोसवी' इत्यादि।
हे राजन्! पुराणपुरभेदनी–पुराणानि=प्राचीनानि=अति–समृद्धानि यानि पुराणि=नगराणि तानि भिनत्ति=स्वासाधारणगुणैः पृथग् व्यवस्थापयति=स्वापेक्षया न्यूनानि प्रदर्शयति या सा तथा, सकलपुरोपमानभूतेत्यर्थः, कौशाम्बी नाम नगरी अस्ति। तत्र–धनसंचयः=धनसंचयो नाम मम पिता आसीत्। स कथंभूत? प्रभूत' प्रचुरधनवान्। 'पभूअ' इति लुप्तप्रथमान्तम्। मुनेः पितु र्नाम धनसंचय इति वृद्धाः। तदानीं धनसंचये जीविते सत्यपि 'आसी पिया' इति भूतकाल निर्देश', पिता इतिकथनं च संसारावस्थापेक्षया एवमग्रेऽपि विज्ञेयम् ॥१८॥

सम्प्रति स्वस्यानाथत्व निवेदयति—

मूलम्—पढमे वए महाराय!, अउला मे अच्छिवेयणा।
अहोत्था विउलो दाहो, सव्वगत्तेसु पत्थिवा! ॥१९॥

छाया—प्रथमे वयसि महाराज!, अतुला मे अक्षिवेदना।
अभवद् विपुलो दाहः, सर्वगात्रेषु पार्थिव! ॥१९॥

टीका—'पढमे' इत्यादि।
हे महाराज! प्रथमे वयसि= यौवनकाले मे=मम अतुला=अनुपमा अक्षिवेदना=नेत्रपीडा अभवत्। तथा–हे पार्थिव! सर्वगात्रेषु=अङ्गप्रत्यङ्गेषु विपुलः=महान् दाहः=दाहज्वरश्चाभवत् ॥१९॥

रूप समझाते हैं—'कोसंबी' इत्यादि।
अन्वयार्थ—हे राजन्! (पुराणपुरभेयणी–पुराणपुरभेदनी) अति-समृद्धनगरों को भी अपने असाधारणगुणों द्वारा न्यून प्रकट करनेवाली ऐसी एक (कोसंबीनाम नयरी–कौशाम्बी नाम नगरी) कौशाम्बी नामकी नगरी है। उसमें (पभुय धणसंचओ–प्रभूत धनसंचय) प्रचुर धन संपत्ति का मालिक 'धनसंचय' नाम का (मज्झ पिया आसी–मम पिता आसीत्) मेरे गृहस्थावस्था के पिता थे ॥१८॥

કહે છે—"कोसंबी" ઇત્યાદિ
અન્વયાર્થ—હે રાજન! पुराणपुरभेयणी–पुराणपुरभेदनी અતિ સમૃદ્ધ નગરીઓને પણ પોતાના અસાધારણ તેજથી ઝાંખી કહેવડાવે એવી એક कोसंबी नाम नयरी–कौशाम्बी नाम नगरी કૌશાંબી નામની નગરી છે તેમાં पभूयधणसंचओ–प्रभूतधनसंचय પ્રચુર ધનસંપત્તિના માલિક 'ધનસંચય' નામના મારા ગૃહસ્થ અવસ્થાના પિતા હતા ॥ ૧૮ ॥

अक्षिवेदना यथाऽ भूत्तथोच्यते—

मूलम्—सत्थं जहा परमतिक्खं, सरीरविवरंतरे ।
आवीलिज्ज अरी कुद्धो, एवं मे अच्छिवेयणा ॥२०॥

छाया—शस्त्रयथा परमतीक्ष्ण, शरीरविवरान्तरे।
आपीडयेदरिः क्रुद्ध', एव मे अक्षिवेदना ॥२०॥

टीका—'सत्थ' इत्यादि ।

क्रुद्धः=क्रोधयुक्तः अरि'=शत्रु शरीरविवरान्तरे=शरीरविवराणि=कर्णनासिकादीनि तेषामन्तरे=मध्ये यथा परमतीक्ष्ण शस्त्रम् आपीडयेत्=निर्दय सनिवेशयेत्, एव=एवमेव मम अक्षिवेदना समुत्पन्ना ।२०॥

'पढमे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महाराय !–महाराज) हे राजन् ! (पढमे वये–प्रथमे वयसि) यौवन काल मे (मे–मे) मुझे (अउला अच्छि वेयणा आहोत्था–अतुला अक्षिवेदना अभवत्) बहुत ही अधिक नेत्रपीडा हुईथी । तथा मेरे (सव्वगत्तेसु–सर्वगात्रषु) समस्त शरीर में (पत्थवा–पार्थिव !) हे राजन्' विउलो दाहो–विपुलः दाहः) बहुतभारी दाहज्वर उत्पन्न हो गया था ॥१९॥

वह अक्षि वेदना किस प्रकार की हुई सो कहते हैं—'सत्थ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जहा–यथा) जिस प्रकार (कुद्धो अरी–क्रुद्ध अरिः) क्रुद्धवैरि (सरीरविवरतरे–शरीरविवरान्तरे) कर्णनासिका आदि इन्द्रियों मे (परमतिक्ख सत्थ आविलिज्ज–परमतीक्ष्णम् शस्त्रम् आपीडयेत्) अत्यन्ततीक्ष्ण शस्त्र को घोंसता है और उस समय जो वेदना

"पढमे" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—महाराय–महाराज હે રાજન્ ! पढमे वये–प्रथमे वयसि યૌવનકાળમા મને अउला अच्छिवेयणा आहोत्था–अतुला अक्षिवेदना अभवत् ખૂબ જ અકળાવનાર એવી આંખોની પીડા થઇ । તથા सव्वगत्तेसु–सर्वगात्रेषु મારા સઘળા શરીરમાં पत्थिवा–पार्थिव હે રાજન્ ! ઘણો विउलो दाहो–विपुल. दाह તીવ્ર એવો દાહ ઉત્પન્ન થયો ॥૧૯॥

એ આંખોની વેદના કેવા પ્રકારની થઇ તે કહે છે—"सत्थ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—जहा–यथा જે પ્રકારે कुद्धो अरी–क्रुद्ध अरि ક્રોધના આવેશમા આવી ગયેલો વૈરી सरीरविवरतरे–शरीरविवरान्तरे કાન, નાક વગેરે ઇન્દ્રિઓમા परमतिक्ख सत्थ आवीलिज्ज–परमतीक्ष्णम् शस्त्रम् आपीडयेत् અત્યંત તીક્ષ્ણ

किंच--

मूलम्--तिंय मे अन्तरिच्छं चं, उत्तिमंग च पीडयेइ ।
इंदासणि समाघोरा, वेयणा परमदारुणा ॥२१॥

छाया--त्रिकं मे अन्तरिक्षं च, उत्तमाङ्गं च पीडयति ।
इन्द्राशनिसमा घोरा, वेदना परमदारुणा ॥२१॥

टीका--'तियमे' इत्यादि ।

हे राजन! इन्द्राशनिसमा=इन्द्रस्य अशनिः=वज्रं तेन समा=तुल्या, अति दाहोत्पादकत्वात् घोरा=परेषामपि दृश्यमाना सती भयोत्पादिका, तथा-परमदारुणा=अतीवदुःखोत्पादिका वेदना=असातरूपा मे=मम त्रिकं=कटिप्रदेशम्, अन्तरिक्षं=शरीरमध्यभाग-हृदयोदरादिरूपं तथा-उत्तमाङ्गं=शिरश्च पीडयति ॥२१॥

होती है (एव-एवम्) इसी तरह की (मे-मे) मेरे (अच्छि वेयणा-अक्षिवेदना) नेत्रपीडा हुईथी ॥२०॥

'तिय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे राजन्! (इदासणि समा-इन्द्राशनिसमा) अतिदाहोत्पादक होने से इन्द्र के वज्र के समान घोर-देखी जाने पर दूसरों को भी भय उत्पन्न करने वाला तथा (परमदारुणा-परमदारुणा) अत्यत प्राणान्तक दुःख दायक एसी (वेयणा-वेदना) उस असाता रूप वेदनाने (मे तिय अन्तरिच्छ च उत्तिमग च पीडयई-मे त्रिकं अन्तरिक्षं उत्तमाङ्ग च पीडयति) मेरी कमर को तथा शरीर के मध्यभाग-हृदय उदर आदिको तथा उत्तमाङ्ग-शिर को विशेष व्यथित किया ॥२१॥

એવા શસ્ત્રને ઘોચી દે અને એ સમયે જે વેદના થાય છે, एव-एवम् એવા પ્રકારની मे-मे મને अच्छिवेयणा-अक्षिवेदना આંખોની પીડા થતી હતી ।२०॥

"तिय" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--હે રાજન્! इदासणिसमो-इन्द्राशनिसमः અતિ દાહ કરનાર હોવાથી ઇન્દ્રના વજ્ર જેવી ઘોર-જોવાથી બીજાને પણ ભય ઉત્પન્ન કરે એવી તથા परमदारुणा-परमदारुणा અત્યંત પ્રાણાન્તક દુઃખદાયક એવી वेयणा-वेदना તે અસાતા વેદનાએ मे तिय अतरिच्छ च उत्तिमग च पीडयइ-मे त्रिक अन्तरिक्ष उत्तमाङ्ग च पीडयति મારી કમરને તથા શરીરના મધ્યભાગ-હૃદય, પેટ વગેરેને તેમ જ ઉત્તમાંગ-માથાને વધારે વ્યથિત કર્યું ॥૨૧॥

तदा—

मूलम्—उवट्ठिया मे आयरिया, विज्जामंततिगिच्छगा ।
अबीया सत्थकुसला, मंतमूलविसारया ॥२२॥

छाया—उपस्थिता मे आचार्याः, विद्यामन्त्रचिकित्सकाः ।
अद्वितीयाः शास्त्रकुशलाः, मन्त्रमूलविशारदाः ॥२२॥

टीका— 'उवट्ठिया' इत्यादि ।

एवं रूपायां वेदनायां सत्यां मे=मम अक्षिवेदनादि-रोगानपनेतुं विद्या-मन्त्रचिकित्सकाः, तत्र-विद्या=देव्यधिष्ठिता, मन्त्रः=देवाधिष्ठितः, ताभ्यां चिकित्सकाः=व्याधिप्रतीकारकारिणः, अद्वितीयाः=अनन्यसमानाः-तत्सदृशानामन्येषामभावात्, शास्त्रकुशलाः=चिकित्साशास्त्रेषु निपुणाः, मन्त्रमूलविशारदाः=मन्त्रेषु मूलेषु=ओषधीषु च विशारदाः=पारङ्गताः आचार्याः=प्राणाचार्याः=वैद्याः उपस्थिताः ॥२२॥

मूलम्—ते मे तिगिच्छं कुव्वंति, चाउप्पायं जहाहियं ।
न य दुक्खा विमोयंति, एसा मज्झ अणाहया ॥२३॥

छाया—ते मे चिकित्सां कुर्वन्ति, चतुष्पादां यथाहितम् ।
न च दुःखाद् विमोचयन्ति, एषा मम अनाथता ॥२३॥

उस समय—'उवट्ठिया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस प्रकार की उस वेदना के होने पर (मे-मे) मेरे पास उस वेदना का उपचार करने के लिये (विज्जामंततिगिच्छगा-विद्यामंत्रचिकित्सकाः) विद्या एवं मंत्र से व्याधिका प्रतीकार करनेवाले (अबीया-अद्वितीयाः) अद्वितीय (आयरिया-आचार्याः) प्राणाचार्य वैद्यजन जो (सत्थकुसला-शास्त्रकुशलाः) चिकित्साशास्त्र में अतिशयरूप से पटु थे और (मंतमूलविसारया-मंत्रमूलविशारदाः) मंत्रों एवं औषधि के विज्ञान में पारगत थे वे (उवट्ठिया-उपस्थिताः) उपस्थित हुए अर्थात् आये ॥२२॥

એ સમયે—"उवट्ठीया" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—આવા પ્રકારની એ વેદના થવાથી मे-मे મારી પાસે એ વેદનાના ઉપચાર કરવા માટે विज्जामंततिगिच्छगा विद्यामन्त्रचिकित्सकाः વિદ્યા અને મંત્રથી વ્યાધિના પ્રતિકાર કરવાવાળા अबीया-अद्वितीयाः અદ્વિતીય आयरिया-आचार्याः પ્રાણાચાર્ય વૈદ્યજન જે सत्थकुसला-शास्त्रकुशलाः ચિકિત્સા શાસ્ત્રમાં અતિશય હોશીયાર હતા અને मंतमूलविसारया-मंत्रमूलविशारदाः મંત્રો તેમ જ ઔષધિના વિજ્ઞાનમાં પારગત હતા તેઓ उवट्ठिया-उपस्थिताः ઉપસ્થિત થયા, અર્થાત્ આવ્યા ॥૨૨॥

टीका—'ते' इत्यादि।

ते=वैद्याः मे=मम चतुष्पादा=चत्वारः भिषग्भेषज-रोगिपरिचारिकाः पादाः=भागा यस्याः सा ता तथा, भिषग्भेषज-रोगिपरिचारकरूप चतुर्भागात्मिकाम्, यद्वा-वमनविरेचन-मर्दनस्वेदनरूपचतुर्भागात्मिकाम्, अथवा-अञ्जनबन्धनलेपन-मर्दनरूपचतुर्भागात्मिका चिकित्सा यथहितं=यथा मम हितं स्यात्तथा कुर्वन्ति=कृतवन्तः। 'जहाहिय' इत्यस्य-यथाऽधीतामिति च्छायापक्षे-यथाधीता=वैद्यगुरु सम्प्रदायानुसारेणाधीता चतुष्पादा चिकित्सा मे=मम कृतवन्तः। परन्तु ते मा दुःखात्=अक्षिवेदनादि दुःखात् च न विमोचयन्ति=विमुक्तं न कृतवन्त। एषा=दुःखाद् अविमोचनात्मिका मम अनाथता ॥२३॥

तथा—

मूलम्—पिया मे सव्वसारं पि, दिज्जाहि मम कारणा।
न य दुक्खा विमोयंति, एसा मज्झ अणाहया ॥२४॥

फिर—'तेमे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(ते-ते) उन वैद्योंने (मे-मे) मेरी (चउप्पाय-चतुष्पादाम्) भिषक्, भेषज, रोगी एवं परिचारक रूप चतुर्भागात्मक, अथवा-वमन, विरेचन, मर्दन एवं स्वेदन रूप चतुर्भागात्मक, अथवा अंजन, बंधन लेपन तथा मर्दन रूप चतुर्भागात्मक (तिगिच्छ-चिकित्साम्) चिकित्सा को (जयाहिय-यथाहितम्) जैसे मुझे आराम होसके इसरूप से (कुव्वति-कुर्वन्ति) करना आरंभ किया परन्तु वे मुझे (दुक्खा न य विमोयति-दुःखात् न च विमोचयन्ति) उस दुःख से नहीं छुडासके (एसा मज्झ-एषा मम) यही मेरी दुःख से नहीं छुडाने रूप (अणाहया-अनाथता) अनाथता है ॥२३॥

પછી—"તે-મે" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—તે-તે એ વૈદ્યોએ मे-मे મારી चउप्पाय-चतुष्पादाम् ભિષક્, ભૈષજ, રોગી અને પરિચારકરૂપ ચતુર્ભાગાત્મક અથવા-વમન, વિરેચન, મર્દન અને સ્વેદનરૂપ ચતુર્ભાગાત્મક અથવા-અંજન, બંધન, લેપન તથા મર્દનરૂપ ચતુર્ભાગાત્મક तिगिच्छ-चिकित्सा ચિકિત્સા મને जहाहिय-यथाहितम् જે રીતે આરામ થઈ શકે એ રીતે कुव्वति-कुर्वन्ति કરવાનો પ્રારંભ કર્યો પરંતુ તેઓ મને दुक्खा न य विमोयन्ति-दुःखात् न च विमोचयन्ति એ દુઃખથી છોડાવી શક્યા નહીં, एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता આ મારી દુઃખથી નહીં છોડાવવા રૂપ અનાથતા છે ॥ ૨૩ ॥

छाया—पिता मे सर्वसारमपि, दद्यात् मम कारणात्।
न च दुःखाद् विमोचयन्ति, एषा मम अनाथता ॥२४॥

टीका--'पिया' इत्यादि।

हे राजन्! मे-मम पिता मम कारणात् स्वकीय सर्वसारमपि=रत्नादिक सकलप्रधानवस्तु जातमपि दद्यात्=दातुमुद्यतोऽभूत्। तथापि च न केऽपि मा दुःखाद् विमोचयन्ति स्म,=विमुक्त कृतवन्तः। अय भावः—मम पित्रा घोषणा कारिता-यद्यस्य मदीयपुत्रस्यैकमपि रोग कश्चिद् वैद्यो निवर्तयेत्, तदा तस्मै सर्वसार धनमर्पयामि' इति। तथापि केऽपि मम दुःखविमोचका नाभूवन् इति। 'एषा मम अनाथता ॥२४॥

तथा--'पियामे' इत्यादि।

अन्वयार्थ--इस समय (मे पिया-मे पिता) मेरा पिता (मम कारणा सव्वसारपि दिज्जाहि-मम कारणात् सर्वसारमपि दद्यात्) मेरे निमित्त से समस्त रत्नादिक वस्तुओं को भी देने के लिये तैयार हो गया तो भी (न य दुक्खा विमोयति-न च दुःखात् विमोचयति) वे मेरे दुःख को दूर करने के लिये समर्थ नहीं हो सके। (एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता) यही मेरी अनाथता है।

अनाथी मुनि के ससारी पिता ने ऐसी घोषणा करवा दी थी की "जो कोई वैद्य मेरे पुत्र की एक भी वेदना को दूर कर देगा उसको मैं अपना सर्वस्व अर्पित कर दूंगा" परन्तु एक भी वैद्य उसके रोग कि निवृत्ति के लिये समर्थ नहीं हो सका। यही मेरी अनाथता है ॥२४॥

તથા—"पियामे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--એ સમયે मे पिया-मे पिता મારા પિતા मम कारणा सव्व-सारपि दिज्जाहि-मम कारणात् सर्वसारपि दद्यात् મારા નિમિત્તથી સઘળી રત્નાદિક-વસ્તુઓને પણ આપવા માટે તત્પર થઇ ગયા હતા તે પણ મારા પિતા न य दुक्खा विमोयति-न च दुःखात् विमोचयति મારા દુઃખને દૂર કરવા માટે સમર્થ બની શકયા નહીં एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता આ મારી અનાથતા છે

અનાથી મુનિના સંસારી પિતાએ એવો ઘોષણા કરાવેલ હતી કે, "જે કોઇ વૈદ્ય મારા પુત્રની એક પણ વેદનાને દૂર કરી આપશે તેને હું મારૂં સર્વસ્વ આપી દઇશ" પરંતુ એક પણ વૈદ્ય મારા એ રોગની નિવૃત્તિ કરવામાં સમર્થ ન થઇ શકયા એ મારી અનાથતા છે ॥૨૪॥

तथा—

मूलम्--माया वि मे महाराय ! पुत्तसोगदुहट्टिया ।
न य दुक्खा विमोयंति, एसा मज्झ अणाहया ॥२५॥

छाया—माताऽपि मे महाराज !, पुत्रशोकदुःखार्दिता ।
न च दुःखाद् विमोचयति, एषा मम अनाथता ॥२५॥

टीका—'मायावि' इत्यादि ।

हे महाराज ! मे=मम माताऽपि पुत्रशोकदुःखार्दिता=पुत्रविषय शोकः—पुत्रशोकः=हा कथमिव मम पुत्रो रोगग्रस्तो जात इत्यादिरूपस्ततो यद् दुःख तेनार्दिता=पीडिता जाता । तथापि च सा मां दुःखाद् न विमोचयति= न विमोचितवती । एषा मम अनाथता । अत्रार्षत्वादेकत्वे बहुत्वम् ॥२५॥

तथा—

मूलम्--भायरो मे महाराय !, सगा जेट्ठकनिट्ठगा ।
न य दुक्खा विमोयंति, एसा मज्झ अणाहया ॥२६॥

छाया--भ्रातरो मे महाराज !, स्वका ज्येष्ठकनिष्ठका ।
न च दुःखाद् विमोचयन्ति, एषा मम अनाथता ॥२६॥

'माया वि मे महाराय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महाराय मे माया वि पुत्तसोगदुहट्टिया—महाराज मे माता अपि पुत्रशोकदुःखार्दिता जाता) हे राजन मेरी माता भी "हा मेरा यह पुत्र इस प्रकार से रोगग्रस्त कैसे हो गया है" इत्यादिरूप पुत्रसंबंधी दुःख से पीडित होने लगी । परंतु फिर मुझे (दुक्खा न य विमोयति—दुःखात् न च विमोचयति) दुःख से नहीं छुडा सकी । (एसा मज्झ अणाहया—एषा मम अनाथता) यही मेरी अनाथता है ॥२५॥

"माया वि मे महाराय" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महाराय मे मायावि पुत्तसोगदुहट्टिया—महाराज ! मे माताऽपि पुत्रशोकदुःखार्दिता जाता હે રાજન્! મારી માતા પણ "હાય! મારો આ પુત્ર આ પ્રકારના રોગનો ભોગ કેવી રીતે થયો ?" ઇત્યાદિ રૂપ પુત્ર સંબંધી દુઃખથી પીડા ભોગવવા લાગી પરંતુ તે પણ મને दुक्खा न य विमोयति—दुःखात् न च विमोचयन्ति દુઃખથી છોડાવી શકેલ નહીં एसा मज्झ अणाहया—एषा मम अनाथता આ મારી અનાથતા છે ॥ ૨૫ ॥

छाया—पिता मे सर्वसारमपि, दद्यात् मम कारणात्।
न च दुःखाद् विमोचयन्ति, एषा मम अनाथता ॥२४॥

टीका—'पिया' इत्यादि।

हे राजन्! मे-मम पिता मम कारणात् स्वकीय सर्वसारमपि=रत्नादिक सकलप्रधानवस्तु जातमपि दद्यात्=दातुमुद्यतोऽभूत्। तथापि च न केऽपि मा दुःखाद् विमोचयन्ति स्म,=विमुक्त कृतवन्तः। अय भावः—मम पित्रा घोषणा कारिता-यद्यस्य मदीयपुत्रस्यैकमपि रोग कश्चिद् वैद्यो निवर्तयेत्, तदा तस्मै सर्वसार धनमर्पयामि' इति। तथापि केऽपि मम दुःखविमोचका नाभूवन् इति। एषा मम अनाथता ॥२४॥

तथा—'पियामे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इस समय (मे पिया-मे पिता) मेरा पिता (मम कारणा सव्वसारपि दिज्जाहि-मम कारणात् सर्वसारमपि दद्यात्) मेरे निमित्त से समस्त रत्नादिक वस्तुओं को भी देने के लिये तैयार हो गया तो भी (न य दुक्खा विमोयति-न च दुःखात् विमोचयति) वे मेरे दुःख को दूर करने के लिये समर्थ नहीं हो सके। (एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता) यही मेरी अनाथता है।

अनाथी मुनि के ससारी पिता ने ऐसी घोषणा करवा दी थी की "जो कोई वैद्य मेरे पुत्र की एक भी वेदना को दूर कर देगा उसको मैं अपना सर्वस्व अर्पित कर दूंगा" परतु एक भी वैद्य उसके रोग कि निवृत्ति के लिये समर्थ नहीं हो सका। यही मेरी अनाथता है ॥२४॥

તથા—"पियामे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—એ સમયે मे पिया-मे पिता મારા પિતા मम कारणा सव्वसारपि दिज्जाहि-मम कारणात् सर्वसारपि दद्यात् મારા નિમિત્તથી સઘળી રત્નાદિક-વસ્તુઓને પણ આપવા માટે તત્પર થઇ ગયા હતા તે પણ મારા પિતા न य दुक्खा विमोयति-न च दुःखात् विमोचयति મારા દુખને દૂર કરવા માટે સમર્થ બની શકયા નહીં एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता આ મારી અનાથત છે

અનાથી મુનિના સસારી પિતાએ એવી ઘોષણા કરાવેલ હતી કે, "જે કોઇ વૈદ્ય મારા પુત્રની એક પણ વેદનાને દૂર કરી આપશે તેને હુ મારૂ સર્વસ્વ આપી દઇશ" પરતુ એક પણ વૈદ્ય મારા એ રોગની નિવૃત્તિ કરવામા સમર્થ ન થઇ શકયા એ મારી અનાથતા છે ॥૨૪॥

साम्प्रत भार्यामाश्रित्य तिसृभिर्गाथाभिरनाथतामाह—

मूलम्—भारिया मे महाराय ! अणुरत्ता अणुव्वया ।
अंसुपुण्णेहि नयणेहिं, उरं मे परिसिंचइ ॥२८॥
अन्नं पाणं च ण्हाणं च गंधमल्लविलेवणं ।
मए णायमणायं वा, सा बाला नोवभुंजइ ॥२९॥
खणं पि मे महाराय !, पासओ वि न फिट्टइ ।
न यं दुक्खा विमोएइ, एसा मज्झं अणाहया ॥३०॥

छाया—भार्या मे महाराज !, अनुरक्ता अनुव्रता ।
अश्रुपूर्णनयनैः, उरो मे परिषिञ्चति ॥२८॥
अन्नं पानं च स्नानं च, गन्धमाल्यविलेपनम् ।
मया-ज्ञातमज्ञातं वा, सा बाला नोपभुङ्क्ते ॥२९॥
क्षणमपि मे महाराज ! पार्श्वतोऽपि न भ्रश्यते ।
न च दुःखाद् विमोचयति, एषा मम अनाथता ॥३०॥

टीका—'भारिया' इत्यादि ।

हे महाराज ! अनुरक्ता=अनुरागवती, अनुव्रता पतिव्रता, मे=मम भार्याऽपि अश्रुपूर्णैः नयनैः मे=मम उरः परिषिञ्चति स्म ॥२८॥

न य विमोयति-दुःखात न विमोचयति) दुःख से नहीं बचा सकी । (एसा मज्झ अणाहया-एषा मे अनाथता) यह मेरी अनाथता है ॥२७॥

'भारिया मे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महाराय-महाराज) हे राजन् ! जो (मे-मे) मेरी (भारिया-भार्या) भार्या थी कि जो मुझ मे (अणुरत्ता-अनुरक्ता) विशेष अनुरक्त एव (अणुव्वया-अनुव्रता) पतिव्रताथी वह (असुपुण्णेहिं नयणेहिं-अश्रुपूर्णैः नयनैः) अश्रुपूर्ण नयनो से मेरे वक्षःस्थल को सींचती थी ॥२८॥

દુઃખથી છોડાવી શકેલ ન હતી एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता આ મારી અનાથતા છે ॥ २७ ॥

"भारिया मे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महाराय-महाराज હે રાજન્ ! જે मे-मे મારી भारिया-भार्या સ્ત્રી હતી કે જે મારામાં अनुरत्ता-अनुरक्ता ખૂબજ અનુરકત અને अणुव्वया-अणुव्रता પતિવ્રતા હતી તે असुपुण्णेहिं नयणेहिं-अश्रुपूर्णैः नयनैः અશ્રુપૂર્ણ નયનોથી મારા વક્ષસ્થળને ભિંજવતી હતી ॥ २८ ॥

टीका—'भायरो' इत्यादि—

हे महाराज! मे=मम स्वकाः=सोदराः, ज्येष्ठकनिष्ठकाः=अग्रजा अनुजा भ्रातरोऽपि च मा दुःखाद् न विमोचयन्तिस्म=न विमोचितवन्तः। एषा मम अनाथता ॥२६॥

मूलम्—भइणीओ मे महाराय!, सगा जेट्ठकनिट्ठगा।
न य दुक्खा विमोयंति, एसा मज्झ अणाहया ॥२७॥

छाया—भगिन्यो मे महाराज!, स्वका ज्येष्ठकनिष्ठिकाः।
न च दुःखाद् विमोचयन्ति, एषा मम अनाथता ॥२७॥

टीका—'भइणीओ' इत्यादि।

हे महाराज! मे=मम ज्येष्ठकनिष्ठिकाः=ज्येष्ठा कनिष्ठा स्वकाः=सोदरा भगिन्यश्च मा दुःखाद् न विमोचयन्ति स्म। एषा मम अनाथता ॥२७॥

'भायरो मे महाराय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(महाराय-महाराज!) हे राजन्! (मे-मे) मेरे (सगा-स्वकाः) सोदर-सगे जो (जेट्ठकनिट्ठगा भायरो-ज्येष्ठकनिष्ठकाः-भ्रातरः) बडे छोटे भाई हे वे भी मुझे (दुक्खा-दुःखात्) इस दुःख से (न य विमोयंति-न च विमोचयन्ति) नहीं छुडासके (एसा मज्झ अणाहया-एषा मे अनाथता) यह मेरी अनाथता है ॥२६॥

'भइणीओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इसी तरह (महाराय-महाराज) हे राजन्! जो (मे-मे) मेरी (सगा जेट्ठकनिट्ठगा भइणीओ-स्वकाः ज्येष्ठकनिष्ठकाः भगिन्यः) उस समय सोदर-सगी बडी छोटी बहिनें थी वे भी मुझे इस (दुक्खा

"भायरो मे महाराय" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महाराय-महाराज હે રાજન્! मे-मे મારા सगा-स्वका સગા जेट्ठकनिट्ठगा भायरो-ज्येष्ठकनिष्ठका भ्रातरः જે નાનામોટા ભાઈ છે તે પણ મને दुक्खा-दुःखात् આ દુઃખથી न य विमोयंति-न च विमोचयन्ति છોડાવી શક્યા નહીં एसा मज्झ अणाहया-एषा मम अनाथता આ મારી અનાથતા છે ॥૨૬॥

"भइणीओ" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—આવી રીતે महाराय-महाराज હે રાજન્! જે मे-मे મારી सगा जेट्ठकनिट्ठगा भइणीओ-स्वका ज्येष्ठकनिष्ठका भगिन्यः સગી નાનીમોટી બહેનો હતી તે પણ મને दुक्खा न य विमोयंति- दुःखात् न च विमोचयन्ति આ

मूलम्—तओ ह एवंमाहंसु, दुक्खमा हु पुणो पुणो ।
वेयणा अणुभविउं जे, संसारम्मि अणंतए ॥३१॥

छाया—ततोऽहमेवमब्रुवम्, दुःक्षमा खलु पुनः पुनः ।
वेदना अनुभवितुं यत्, संसारे अनन्तके ॥३१॥

टीका—'तओ ह' इत्यादि ।

ततः=तदनन्तरं—रोगप्रतीकारेषु विफलेष्विति भावः, अहमेवं=वक्ष्यमाण प्रकारेण अब्रुवम्, यत् वेदनाः= अक्षिवेदनादिकाः खलु=निश्चयेन अनुभवितु= वेदयितुं दुःक्षमाः=दुःशकाः । एवं विधा वेदना अनन्तके संसारे मया पुनः पुनः = वारं वारम् अनुभूताः ॥३१॥

यतश्चैवमतः —

मूलम्—सइं च जइ मुच्चेज्जा वेयणा विउला इओ ।
खंतो दंतो निरारंभो, पव्वेए अणगारियं ॥३२॥

छाया—सकृच्च यदि मुच्येय, वेदनाया विपुलाया इतः ।
क्षान्तो दान्तो निरारम्भः, प्रव्रजेयमनगारिताम् ॥३२॥

'तओ ह' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तओ–ततः) रोग का प्रतीकार जब विफल हो गया तब (अहं एवमाहंसु–अहम् एवं अब्रुवम्) मैंने ऐसा कहा कि (वेयणा अणुभविउजे दुक्खमा–वेदना अनुभवितुं अक्षमा) ये आंख आदि की वेदनाएँ यद्यपि अनुभवन करने के लिये अशक्य है (अणंतए–संसारम्मि पुणो पुणो–अनन्तके संसारे पुनःपुनः) परन्तु क्या किया जाय–मैंने तो इस अनंत संसार में ऐसी वेदनाएँ बारबार भोगी है ॥३१॥

इस प्रकार की अनाथता का अनुभव होने पर उन्हों ने क्या विचार

"तओ ह" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—तओ–ततः રોગનો પ્રતિકાર જ્યારે નિષ્ફળ નિવડયો ત્યારે अहं एवमाहंसु–अहं एवमब्रूवम् મે એવું કહ્યુ કે वेयणा अणुभविउजे दुक्खमा–वेदना अनुभवितुं अक्षमा આ આંખ આદિની વેદનાઓ જો કે અનુભવ કરવામાં અશક્ય છે अणंतए संसारम्मि पुणोपुणो–अनन्तके संसारे पुनःपुनः પરંતુ ઉપાય શું ? મે તો આ અનંત સંસારમાં આવી વેદનાઓ વારંવાર ભોગવી છે ॥૩૧॥

આ પ્રકારની અનાથતાનો અનુભવ થવાથી મે શું વિચાર કર્યો તે કહે છે —

'अन्न' इत्यादि—

सा बाला=नवयौवना मम भार्या अन्नम्=अशन पान=पानीयम्, च=पुन. स्नान=स्नात्यनेनेति स्नानम्, गन्धोदकादिकम्, तथा–गन्धमाल्यविलेपन=गन्ध.= कोष्ठपुटादिक., माल्य=चम्पकपाटलजातीयुथिकादिमाला, विलेपनम्= गोशी र्षचन्दनानुलेपनम् एषा समाहारद्वन्द्व तत् मया ज्ञातम् अज्ञात वा मम सन्नि धावसन्निधौवेति भाव, नोपभुङ्क्ते–नासेवते ॥२९॥

'खणपि' इत्यादि—

हे महाराज। छायेवानुगामिनी सा मम भार्या क्षणमपि मे=मम पार्श्व- तोऽपि पार्श्वप्रदेशादपि न भ्रशते=नापयाति स्म। तथापि च सा मा दु.खाद् न विमोचयतिस्म। एषा मम अनाथता ॥३०॥

'अन्न पाणच' इत्यादि। 'खण पि मे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—तथा (अन्न पाण न्हाण च गधमल्लविलेवण मए णाय मणाय वा सा बाला नोवभुजइ–अन्न पान च स्नान च गधमाल्यविलेपन मया ज्ञात अज्ञात वा सा बाला न उपभुक्ते) मेरे सामने अथवा परोक्ष मे न वह खाती थी न पीती थी न धोती थी न गध सूघती थी न माला धारण करती थी और न चन्दनादि का विलेपन करती थी, अधिक क्या कहा जाय–(महाराय–महाराज) हे महाराज (खणपि मे पासओवि न फिट्टइ–क्षणमपि मे पार्श्वतोऽपि न भ्रशते) वह एक क्षण भी मेरे पास से दूर नही हटती थी ऐसी होती हुई भी मेरी ससारावस्था की भार्या भी मुझे (न य दुक्खा विमोएइ–न च दुक्खात् विमोचयति–)उस दु ख से नही छुडा सकी (एसा मज्झ अणाहया–एषा मम अनाथता) यह मेरी अनाथता है ॥२९।३०॥

"अन्न पाणच ' ઇત્યાદિ ! "खण पि मे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—તથા अण्णपाण च ण्हाण च गधमल्लविलेवण मए णायमणाय वा सा बाला नोवभुजइ–अन्न पान च स्नान च गधमाल्यविलेपन मया ज्ञात अज्ञात वा सा बाला न उपभुक्ते મારી સામે અથવા પાછળથી તે ખાતી ન હતી, પીતી ન હતી, નહાતી ન હતી, ધોતી ન હતી, કે ન તો ગ ધને સુ ઘતી હતી ન માળા ધા ણુ કરતી, તેમજ ચ દન આદિનુ વિલેપન પણુ કરતી ન હતી વધુ શુ કહેવામા આવે ! महाराय !–भो महाराज હે મહારાજ खणपि मे पासओ वि न फिट्टइ–क्षणमपि मे पर्श्वतोऽपि न भ्रशते તે મારી પાસેથી એક ક્ષણુ પણુ આઘી ખસતી ન હતી એવી હોવા છતા પણુ સ સાર અવસ્થાની મારી એ સ્ત્રી પણુ મને न य दुक्खो विमोएइ–न च दुक्खात् विमोचयति આ દુ ખથી છોડાવી ન શકી एसा मज्झ अणाहया–एषा मम अनाथता આ મારી અનાથતા છે ॥૨૯–૩ ॥

मूलम्—तओ कल्ले पभायम्मि, आपुच्छित्ताण बंधवे।
खंतो दंतो निरारंभो पव्वइओ अणगारियं ॥३४॥

छाया—ततः कल्ये प्रभाते, आपृच्छय बान्धवान्।
क्षान्तो दान्तो निरारम्भः, प्रव्रजितोऽनगारिताम् ॥३४॥

टीका—'तओ' इत्यादि।

हे राजन्! ततः तदनन्तरं वेदनाक्षये सति कल्ये द्वितीयदिने प्रभाते=प्रातःकाले बान्धवान् आपृच्छय क्षान्तो दान्तो निरारम्भोऽनगारितां प्रव्रजितः=प्राप्तः ॥३४॥

'एवच' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(नराहिवा ?–नराधिप) हे राजन्! एव चिंतइत्ताण–एवं चिन्तयित्वा) ऐसा विचार कर (पसुत्तोमि–प्रसुप्तोऽस्मि) मैं सो गया (राईए परियत्तंतीए वेयणा खय गया–रात्रौ परिवर्तमानायां मे वेदना क्षयं गता) ज्यों ही रात्रि व्यतीत हुई कि मेरी वह वेदना बिल्कुल शांत हो गई ॥३३॥

'तओ कल्ले' इत्यादि।

अन्वयार्थ—फिर बाद मे हे राजन्! मैंने (कल्ले–कल्ये) दूसरे दिन (पभायम्मि प्रभाते) प्रात काल मे (बंधवे–बान्धवान्) बंधुओ से (आपुच्छित्ताण–आपृच्छय) पूछकर (खंतो दंतो निरारम्भो अणगारियं पव्वइओ–क्षान्त दान्त निरारम्भ. अनगारिताम् प्रव्रजित) क्षान्त दान्त एव परिग्रह से सर्वथा रहित होकर मुनिदीक्षा धारण करली ॥३४॥

'एवच'' ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—नराहिवा–नराधिप હે રાજન્ एवंचिंतइत्ताण–एवं चिन्तयित्वा આવો વિચાર કરી पसुत्तोमि–प्रसुप्तोऽस्मि હુ સુઈ ગયો, राईए परियत्तंतीए मे वेयणा खय गया–रात्रौ परिवर्तमानायां मे वेदना क्षयं गता રાત પુરી થઈ કે, મારી એ વેદનાઓ બિલકુલ શાંત થઈ ગઈ ॥૩૩॥

"तओ कल्ले" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—આ પછીથી હે રાજન્! મે कल्ले–कल्ये બીજા દિવસે पभायम्मि–प्रभाते સવારમાજ बंधवे–बान्धवान् ભાઈઓને आपुच्छित्ताण–आपृच्छय પૂછીને (खंतो दंतो निरम्भो अणगारियं पव्वइओ–क्षान्त दान्त निरारम्भ अनगारिताम् प्रव्रजित ક્ષાંત, દાન્ત, અને પરિગ્રહથી સર્વથા રહિત થઈને મુનિદીક્ષા ધારણ કરી લીધી ॥૩૪॥

टीका--'सइ च' इत्यादि ।

यद्यहम् इत=अस्या विपुलाया'=विस्तीर्णाया वेदनायाः सकृच=सकृदपि मुच्येयम्=विमुक्तो भवेयम् । तदाऽहं क्षान्त.=क्षमायुक्त, दान्त =इन्द्रिय नो इन्द्रिय दमने तत्पर -जितेन्द्रियो भूत्वा निरारम्भः=आरम्भवर्जित सन् अनगारिता= साधुत्व प्रव्रजेयम्, प्रतिपद्येयम् अङ्गीकुर्यामिति यावत् । यन ससारोच्छेदान्मूल्त एव वेदना न स्यादिति भावः ॥३२॥

मूलम्--एवं च चिंतइत्ताणं, पसुत्तो मि नराहिवा ! ।
परियत्तंतीए राईए, वेयणा मे खयं गया ॥३३॥

छाया--एवं च चिन्तयित्वा खलु, प्रसुप्तोऽस्मि नराधिपः ! ।
परिवर्तमानाया रात्रौ, वेदना मे क्षय गता ॥३३॥

टीका--'एव च' इत्यादि ।

हे नराधिप ! एव=पूर्वोक्तप्रकारेण च चिन्तयित्वा=विचार्य खलु=यावत् प्रसुप्तोऽस्मि=निद्रा गतोऽस्मि। तावत् परिवर्तमानाया=व्यतिगच्छन्त्या रात्रौ मे= मम वेदया क्षय गता ॥३३॥

किया सो कहते है—'सइच' इत्यादि ।

अन्वयार्थ - (जइ-यदि) यदि मै (इओ-इत) इस (विउला वेयणा विपुलाया' वेदनायाः) अत्यन्त कष्ट देने वाली वेदना से (सइच मुच्चेज्जा- सकृत् अपि मुच्येय) एक बार भी रहित हो जाऊँ (तया-तदा) तो मै (खतो दतो निरारभो अणगारियं पव्वए-क्षान्त. दान्तः निरारम्भ अन- गारितां प्रव्रजेयम्) क्षमायुक्त होकर इन्द्रिय एव नोइन्द्रिय के दमन करने मे तत्पर होऊँगा और आरभ से रहित हो जाने से साधुपना अगीकार करूगा कि जिससे पुन ससार के उच्छेद हो जाने से इन वेदनाओं का मूल से ही विनाश हो जाय ॥३२॥

"सइच" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—जइ-यदि જો કે, હુ इओ-इत એ विउला वेयणा विपुलायाः वेदनाया અત્યત કષ્ટ આપવાવાળી વેદનાથી सय च मुच्चेज्जा-सकृत् अपि मुच्येयम् એકવાર પણ બચી જાઉ तया-तदा તો હુ खतो दतो निरारभो अणगारियं पव्वए-क्षान्तः-दान्त' निरारम्भ अनगारिता प्रव्रजेयम्-ક્ષમાયુકત બની, ઇન્દ્રિયો તથા નોઇન્દ્રિયનુ દમન કરવામા તત્પર બની જઇશ અને આરભથી રહિત બનીને સાધુપણુ અગિકાર કરીશ કે જેનાથી ફરી સસારનો ઉચ્છેદ થઇ જવાથી આ વેદનાઓનો મૂળમાથી જ વિનાશ થઈ જાય ॥૩૨॥

कुतो दीक्षाग्रहणानन्तरं त्व नाथो जातः, न ततः पूर्वम् ? इत्याह—

मूलम्—अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणं वणं ॥३६॥

छाया—आत्मा नदी वैतरणी, आत्मा मे कूटशाल्मलिः।
आत्मा कामदुघा धेनुः, आत्मा मे नन्दनं वनम् ॥३६॥

टीका—'अप्पा' इत्यादि—

हे राजन्! आत्मा=आत्मैव नरकसम्बन्धिनी वैतरणी नदी। उद्धतस्यात्मनो नरकहेतुत्वात्। अतएव मे=मम आत्मैव कुटमिव=पीडाजनकस्थानमिव यातना हेतुत्वात्, शाल्मलिः=नरकस्थो वैक्रिय शाल्मलिर्वृक्षोऽस्ति। तथा—आत्मैव

के उपाय का परिज्ञान वाला होने से तथा उनका संरक्षण करने वाला होने से मैं नाथ बन गया हूं ॥३५॥

दीक्षाग्रहण करने पर आप नाथ बने और उसके पहले नाथ नहीं थे सो क्या कारण? इसी को कहते हैं – 'अप्पा' इत्यादि।

दीक्षा ग्रहण के पहिले मैं नाथ क्यों नहीं हुआ और अब नाथ कैसे बन गया हूं—सो हे राजन! मैं तुम्हारे इस संदेह की निवृत्ति निमित्त यह कहता हूं कि यह (अप्पा वेयरणी नई—आत्मा वैतरणी नदी) आत्मा—उद्धत आत्मा ही नरक की वैतरणी नदी है—क्यों कि ऐसी आत्मा ही नरक की हेतु होती है इसी लीये (अप्पा मे कूडसामली—आत्मा मे कूट शाल्मलि') ऐसी आत्मा मुझे कूट की तरह—पीडाजनक स्थान की तरह—यातना की हेतु होने से—नरक में रहे हुए वैक्रिय शाल्मली वृक्ष

તેમની રક્ષા કરવાના ઉપાયના જાણવાળો હોવાથી તથા એમનુ સંરક્ષણ કરવાવાળો હોવાથી હું નાથ બની ગયો છું ॥૩૫॥

દીક્ષા લીધા પછી આપ નાથ બન્યા અને એની પહેલાં આપ નાથ ન હતા એનું શું કારણ છે? આને કહે છે—"अप्पा" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—દીક્ષા લીધા પહેલાં હું નાથ કેમ ન બન્યો, અને હવે નાથ કેમ બની ગયો છું તો હે રાજન! તમારા આ સંદેહની નિવૃત્તિ નિમિત્તે જણાવવાનું કે अप्पा वेयरणी नई—आत्मा वैतरणी नदी આ આત્મા ઉદ્ધત આત્મા જ નરકની વૈતરણી નદી છે કેમકે, એવો આત્મા જ નરકના હેતુરૂપ હોય છે આ કારણે अप्पा मे कूट सामली-आत्मा मे कूट शाल्मलिः એવી આત્મા મને કૂટની માફક—પીડાજનક સ્થાનની માફક—યાતનાના હેતુરૂપ હોવાથી—નરકમાં રહેલ વૈક્રિય શાલ્મલી

मूलम्—तओ हं नाहो जाओ, अप्पणो य परस्स यं ।
सव्वेसिं चेवं भूयाणं, तसाणं थावराण यं ॥३५॥

छाया—ततोऽहं नाथो जातः, आत्मनश्च परस्य च ।
सर्वेषां चैव भूतानां, त्रसाणां स्थावराणां च ॥३५

टीका—'तओ हं' इत्यादि ।

हे राजन् ! अतः=दीक्षाग्रहणानन्तरमहम् आत्मनः=स्वस्य च तथा-परस्य=अन्यस्य नाथ =योगक्षेमकारको जात । अलब्धलाभो योग , लब्धस्य च रक्षण क्षेमः । अलब्धस्य लाभेन, लब्धस्य च तस्य प्रमाद परित्यागपूर्वक परिरक्षणेन स्वस्य नाथः । धर्मदानस्थैर्यकरणाभ्यामन्येषा च नाथः । तथा-सर्वेषा भूताना=जीवाना चैव=चापि नाथो जातः । कीदृशाना नाथो जात इत्याह-'तसाण' इत्यादि-त्रसाणा स्थावराणा च । त्रसस्थावरभूताना रक्षणोपायपरिज्ञानेन तत्करणेन च तेषा नाथोऽस्मि । ॥३५॥

'तओ हं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे राजन् ! (तओ हं-तत अहम्) जब मैने दीक्षा धारण करली तब उसके बाद मै (अप्पणो परस्स य नाहो जाओ-आत्मन परस्य च नाथ. जात) अपना एव परका नाथ-योग क्षेमकारी हो गया। अलब्ध रत्नत्रय के लाभ से एव लब्ध रत्नत्रय के प्रमाद परिहार पूर्वक परिरक्षण से जीव अपना नाथ बन जाता है-मैं भी इसी तरह का नाथ बन गया हू। धर्मका दान देने से तथा उसमे स्थिरता करवाने से प्राणी दूसरो का नाथ बन जाता है। इसी तरह मै भी दूसरे-(सव्वेसिं भूयाण तसाण थावराण य नाहो जाओ-सर्वेषा भूताना त्रसाणा स्थावराणा च नाथः जात) समस्त भूतों का त्रस स्थावर जीवो का-उनकी रक्षा करने

"तओ हं" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે રાજન્ ! तओहं-ततः अहम् જ્યારે મે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી તે પછી अप्पणो परस्स य नाहो जाओ-आत्मन• परस्य च नाथो जात પોતાના અને બીજાના નાથ-યોગક્ષેમકારી બની ગયો અલબ્ધ રત્નત્રયના લાભથી અને લબ્ધ રત્નત્રયના પ્રમાદ પરિહાર પૂર્વક પરિરક્ષણથી જીવ પોતાનો નાથ બની જાય છે હુ પણ એ પ્રકારનો નાથ બની ગયો છુ ધર્મનુ દાન દેવાથી તથા તેમા સ્થિરતા કરાવવાથી પ્રાણી બીજાઓનો નાથ બની જાય છે આવી રીતે હુ પણ બીજા सव्वेसिं भूयाण तसाण थावराण य नाहो जाओ-सर्वेषा भूताना त्रसाणा थावराणा च नाथ जात સઘળા ભૂતોનો ત્રસ અને સ્થાવર જીવોનો

कुतो दीक्षाग्रहणानन्तरं त्वं नाथो जातः, न ततः पूर्वम्? इत्याह—

मूलम्—अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।

अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणं वणं ॥३६॥

छाया—आत्मा नदी वैतरणी, आत्मा मे कूटशाल्मलिः।

आत्मा कामदुघा धेनुः, आत्मा मे नन्दनं वनम् ॥३६॥

टीका—'अप्पा' इत्यादि—

हे राजन्! आत्मा=आत्मैव नरकसम्बन्धिनी वैतरणी नदी। उद्धतस्यात्मनो नरकहेतुत्वात्। अतएव मे=मम आत्मैव कूटमिव=पीडाजनकस्थानमिव यातना हेतुत्वात्, शाल्मलिः=नरकस्थो वैक्रिय शाल्मलिवृक्षोऽस्ति। तथा—आत्मैव

के उपाय का परिज्ञान वाला होने से तथा उनका संरक्षण करने वाला होने से मैं नाथ बन गया हूं ॥३५॥

दीक्षाग्रहण करने पर आप नाथ बने और उसके पहले नाथ नहीं थे सो क्या कारण? इसी को कहते हैं - 'अप्पा' इत्यादि।

दीक्षा ग्रहण के पहिले मैं नाथ क्यों नहीं हुआ और अब नाथ कैसे बन गया हूं—सो हे राजन! मैं तुम्हारे इस संदेह की निवृत्ति निमित्त यह कहता हूं कि यह (अप्पा वेयरणी नई—आत्मा वैतरणी नदी) आत्मा—उद्धत आत्मा ही नरक की वैतरणी नदी है—क्यों कि ऐसी आत्मा ही नरक की हेतु होती है इसी लीये (अप्पा मे कूडसामली—आत्मा मे कूट शाल्मलिः) ऐसी आत्मा मुझे कूट की तरह—पीडाजनक स्थान की तरह—यातना की हेतु होने से—नरक में रहे हुए वैक्रिय शाल्मली वृक्ष

તેમની રક્ષા કરવાના ઉપાયના જ્ઞાનવાળો હોવાથી તથા એમનું સંરક્ષણ કરવાવાળો હોવાથી હું નાથ બની ગયો છું ॥૩૫॥

દીક્ષા લીધા પછી આપ નાથ બન્યા અને એની પહેલાં આપ નાથ ન હતા એનું શું કારણ છે? આને કહે છે—"अप्पा" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—દીક્ષા લીધા પહેલાં હું નાથ કેમ ન બન્યો, અને હવે નાથ કેમ બની ગયો છું તો હે રાજન! તમારા આ સંદેહની નિવૃત્તિ નિમિત્તે જણાવવાનું કે अप्पा वेयरणी नई—आत्मा वैतरणी नदी આ આત્મા ઉદ્ધત આત્મા જ નરકની વૈતરણી નદી છે કેમકે, એવો આત્માજ નરકના હેતુરૂપ હોય છે આ કારણે अप्पा मे कूट सामली-आत्मा मे कूट शाल्मलि' એવી આત્મા મને કૂટની માફક—પીડાજનક સ્થાનની માફક—યાતનાના હેતુરૂપ હોવાથી—નરકમાં રહેલા વૈક્રિય શાલ્મલી

कामदुघा=कामान्-अभिलषितस्वर्गापवर्गसुखरूपान् दोग्धि=प्रपूरयति या सा तथा, धेनुः=कामधेनुरस्ति। तथा-मे=मम आत्मैव नन्दनं वन-चित्ताह्लादकत्वान्नन्दन वनसदृशमस्ति ।३६॥

मूलम्—अप्पा कत्ता विकत्ता यँ, दुहाण यँ सुहाण यँ ।
अप्पा मित्तममित्तं चँ, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ॥३७॥

छाया—आत्मा कर्ता विकर्ता च, दुःखाना च सुखाना च ।
आत्मा मित्रममित्र च, दुष्प्रस्थित सुप्रस्थित. ॥३७॥

टीका—'अप्पा' इत्यादि—

हे राजन् ! दु खाना च सुखाना च कर्ता आत्मैव, च=पुनस्तेषां विकर्ता= विक्षेपकः'-निवारक , आत्मैव। यत एवम् अतः-दुष्प्रस्थितसुप्रस्थितः दुष्प्र स्थित -दुष्टप्रस्थित -प्रवृत्तो दुराचरणकारक , सुप्रस्थित =सुष्ठुप्रस्थितः=सदनु ष्ठान कारक, अनयो' कर्मधारय , आत्मैव मित्र च अमित्र च भवति। दुष्प

जैसी है। तथा (अप्पा कामदुहा घेणु-आत्मा कामदुघा धेनुः) यह आत्मा ही अभिलषित स्वर्ग एवं अपवर्ग के सुखो को देनेवाली होने से काम धेनु है। तथा यह (अप्पा मे नन्दण वण-मे आत्मा नंदन वनम्) आत्मा ही चित्ताल्हादक होने से मेरे लिये नंदन वन के समान है ॥३६॥

'अप्पा कत्ता' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे राजन् ! (दुहाण सुहाण य कत्ता अप्पा-दुःखाना सुखाना च कर्ता आत्मा) दु'ख एव सुखों का कर्ता यह आत्मा ही है, तथा (विकत्ता-विकर्ता) उनका निवारण करने वाला भी यही आत्मा है। जब यह आत्मा (दुपट्ठिय सुपट्ठिओ-दुष्प्रस्थितसुप्रस्थिता)-दुरा-चरणों मे फँस जाता है अथवा सदाचरणों मे लवलीन हो जाता है

વૃક્ષ જેવી છે તથા अप्पा कामदुहा धेणु'-आत्मा कामदुघा धेनु —આ આત્માજ અભિલષિત સ્વર્ગ અપવર્ગના સુખોને આપવાવાળો હોવાથી કામધેનુ છે તથા अप्पा मे नन्दण वण-मे आत्मा नंदन वनम् આ આત્માજ ચિત્તને આનંદ આપનાર હોવાથી મારા માટે નંદનવન સમાન છે ॥૩૬॥

"अप्पा कत्ता" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે રાજન્ ! दुहाणसुहाण य कत्ता अप्पा-दु खाना सुखाना च कर्ता आत्मा દુઃખ અને સુખોનો કર્તા આ આત્માજ છે તથા विकत्ता-विकर्ता તેનુ નિવારણ કરનાર પણ આ આત્માજ છે જ્યારે આ આત્મા दुपट्ठिय सुपट्ठिओ- दुष्प्रस्थित सुप्रस्थिताः દુરાચરણમા ફસાઈ જાય છે અથવા સદાચરણમા લવલીન

स्थितस्य आत्मनो वैतरण्यादि रूपत्वेन सकलदुःखहेतुतयाऽमित्रस्वरूपत्वम्, सुप्रस्थितस्य आत्मनः कामधेन्वादि-रूपत्वेन सकलसुखहेतुतया मित्रत्वम्। सुप्रस्थितत्वं चात्मनः प्रव्रज्यायामेव सम्भवति। अतः प्रव्रज्या ग्रहणानन्तरमेवाहं योगक्षेमकरणे सामर्थ्ययुक्तत्वान्नाथो जातः। न तु ततः पूर्वमिति भावः ॥३७॥

पुनरपि प्रकारान्तरेणानाथत्वमाह—

मूलम्—

इमा हु अन्ना वि अणाहया निवा!, तमेगचित्तो निहुओ सुणोहि मे।
नियंठधम्मं लहियाण वी जहा, सीयंति एगे बहुकायरा नरा ॥३८॥

छाया—इयं खलु अन्याऽपि अनाथता नृप!, तामेकचित्तो निभृतः शृणु मे।
निर्ग्रन्थधर्मं लब्ध्वाऽपि यथा, सीदन्ति एके बहुकातरा नराः ॥३८॥

टीका—'इमा हु' इत्यादि।

हे नृप! इयं=वक्ष्यमाणा खलु=निश्चयेन अन्याऽपि अपराऽपि अनाथता

तब वह आत्मा आत्मा का (मित्तममित्त हवइ-मित्रममित्र भवति) मित्र एवं अमित्र माना जाता है। दुराचरणों में निमग्न आत्मा वैतरणी का रूपक होने से सकल दुःखों का हेतु हो जाता है इसलिये वह अपने आपका अमित्र बन जाता है। तथा जब यही आत्मा सदाचरणों का सेवन करने लग जाता है, तब कामधेनु और नन्दनवन जैसा अभिलषित पदार्थ की प्राप्ति का हेतु होने से अपने आपका मित्र बन जाता है। आत्मा में सदाचरण तल्लीनता प्रव्रज्या को अंगीकार करने पर ही आती है इसी लिये हे राजन् मैं प्रव्रज्या ग्रहण के बाद ही योग क्षेम करण में सामर्थ्ययुक्त हो सकने के कारण नाथ बन सका हूं। इसके पहिले नहीं ॥३७॥

थई जाय छे त्यारे आत्मा मित्तममित्त हवइ-मित्रममित्र भवति आत्मानो मित्र अने अमित्र मानवामा आवे छे दुराचरणमा निमग्न आत्मा वैतरणीनो रूपक होवाथी सघळा दुःखोनो हेतु थई जाय छे आ कारणे ते पोते पोतानो दुश्मन बनी जाय छे तथा ज्यारे आ आत्मा सदाचरणोनु सेवन करवा लागी जाय छे त्यारे कामधेनु अने नंदनवन जेवा अभिलषित पदार्थनी प्राप्तिनो हेतु होवाथी पोते पोतानो मित्र बनी जाय छे आत्मामा सदाचरण तल्लीनता प्रव्रज्याने अंगिकार करवाथी ज आवे छे आथी हे राजन्! हु प्रव्रज्या लीधा पछीज योग क्षेमकरणमा सामर्थ्यवाळो थई जवाने कारणे नाथ बनी शक्यो छु ते पहेला नहीं ॥३७॥

ऽस्ति। ताम्=अनाथताम् मे=मम सकाशात् एकचित्त=एकाग्रमनाः, अतएव निभृत.=स्थिरश्च भूत्वा शृणुष्व। यादृशी साऽनाथता तथाह—'नियठधम्म' इत्यादिना-निर्ग्रन्थाना धर्मं-आचारम्त लब्ध्वापि=प्राप्यापि=यथा एके=केचित् बहु कातरा -निःसत्त्वा नरा'=पुरुषा• सीदन्ति=चारित्राराधने शिथिला भवन्ति। सीदनलक्षणेयमपराऽनाथतेति भावः ॥ ॥३८॥

तामनाथतामेव दर्शयति--

मूलम्—

जो पव्वइत्ताण महव्वयाइ, सम्म च नो फासयई पमाया।
अणिग्गहप्पा य रसेसु गिद्धे, न मूलओ छिंदइ बंधणं से ॥३९॥

छाया--प्रव्रज्य महाव्रतानि, सम्यक् च नो स्पृशति प्रमादात्।
अनिग्रहात्मा च रसेषु गृद्धो, मूलतश्छिनत्ति व बन्धन स ॥३९॥

फिर दूसरे प्रकार से भी अनाथता कहते हैं—'इमा'-इत्यादि।

अन्वयार्थ—(निवा ?-नृप) हे राजन्! (इमा अण्णावि अणाहया-इय-अपि अन्या अनाथता) यह एक दूसरी प्रकार की भी अनाथता है। (मे तमेगचित्तो निहुओ सुणेहि-मे ताम् एकचित्त' निभृतः शृणु) मैं उसको तुम से कहता हू। तुम उसको एकाग्रचित्त एव स्थिर होकर सुनो। वह अनाथता यह है-(नियठ धम्म लहियाणवि एगे बहु कायरा नरा सीयन्ति-निर्ग्रन्थधर्मं लब्ध्वाऽपि एके बहुकातराः नरा• सीदन्ति) निर्ग्रन्थ धर्म अर्थात चारित्र को प्राप्त करके भी कितनेक ऐसे कायर नर हुआ करतेहैं जो उस चारित्र की आराधना करने मे शिथिल हो जाते है। इस प्रकार यह चारित्राराधन की शिथिलता दूसरे प्रकार की अनाथता कही गई है ॥३८॥

પછી બીજા પ્રકારથી પણ અનાથતાને કહે છે--"इमा" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ--निवा-नृप હે રાજન્! इमा अण्णा वि अणाहया-इय अपि अन्या अनाथता આ એક બીજા પ્રકારની પણ અનાથતા છે, જે હુ તમને કહુ છુ मे तमेगचित्तो निहुओ सुणेहि-मे ताम् एकचित्त निभृत शृणु તમે તેને સ્થિર તાથી એકાગ્રચિત્ત બનીને સાભળો! તે અનાથતા આ છે नियठधम्म लहियाण वि एगे बहुकायरा नरा सीयन्ति-निर्ग्रन्थधर्मं लब्ध्वाऽपि एके बहुकातरा सीदन्ती નિર્ગ્રન્થ ધર્મ અર્થાત્ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પણ કેટલાક એવા કાયર મનુષ્ય થાય છે કે, જે તેઓ ચારિત્રની આરાધના કરવામા શિથિલ થઇ જાય છે આ પ્રકારની અનાથતા કહેવામા આવેલ છે ॥૩૮॥

टीका—'जो' इत्यादि।

यः प्रव्रज्य=दीक्षां गृहीत्वा महाव्रतानि=प्राणातिपातविरमणादि रूपाणि पञ्च महाव्रतानि प्रमादात् हेतोश्च सम्यक् नो स्पृशति=न पालयति। अनिग्रहात्मा= अनिग्रहः=निग्रहरहित आत्मा यस्य स तथा,-अजितेन्द्रियः, अत एव-रसेषु=मधुरादिषु गृद्धः गृद्धिमान स मोक्षमव्रजितः बन्धन-बध्यतेऽनेनेति बन्धनं रागद्वेषात्मकं बन्धनं मूलतो न छिनत्ति ॥३९॥

मूलम्—

आउत्तया जस्स य नत्थि काइ, इरियाइ भासाइ तहेसणाए।
आयाणनिक्खेव दुगुंछणाए, न वीरजायं अणुजाइ मग्गं ॥४०॥

इसी बात को इस गाथा द्वारा प्रकट करते हैं—'जो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जो पव्वइत्ताण-यः प्रव्रज्य) जो मनुष्य मुनिदीक्षा धारण करके (महव्वयाइ सम्मं च नो फासयइ-महाव्रतानि सम्यक् नो स्पृशति) प्राणातिपातविरमण आदिरूप महाव्रतों का अच्छी तरह पालन नहीं करता है (से-स) वह (अणिग्गहप्पा-अनिग्रहात्मा) अजितेन्द्रिय व्यक्ति (रसेसु गिद्धे-रसेषु गृद्धः) मधुर आदि रसों में गृद्धि वाला होता हुआ (मूलओ बंधण न छिंदइ-मूलतः बन्धन न छिनत्ति) समूल रागद्वेष रूपी बंधन का छेदन करनेवाला नहीं हो सकता है। अर्थात्-जो मनुष्य मुनिदीक्षा धारण करके भी इन्द्रियों का दास बना रहता है और इसी कारण महाव्रतों का सम्यक्रीति से परिपालन नहीं करता है वसा व्यक्ति रसों की गृद्धता से रागद्वेष पर विजय नहीं पाता है ॥३९॥

આ વાતને આ ગાથા દ્વારા પ્રગટ કરવામા આવે છે—"जो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जो पव्वइत्ताण—यः प्रव्रज्य જે મનુષ્ય મુનિદીક્ષા ધારણ કરીને महव्वयाइ सम्मं च नो फासयइ—महाव्रतानि सम्यक् नो स्पृशति પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિરૂપ મહાવ્રતોનું સારી રીતે પાલન કરતો નથી, से—स તે अनिग्गहप्पा—अनिग्रहात्मा અજીતેન્દ્રિય વ્યક્તિ रसेसु गिद्धे—रसेषु गृद्धः મધુર આદિ રસોમાં ગૃદ્ધિ-વાળો બનીને मूलओ बंधण न छिंदइ—मूलतो बंधनं न छिनत्ति રાગદ્વેષરૂપી બંધનનું છેદન કરવાવાળો બની શકતો નથી અર્થાત્-જે મનુષ્ય મુનિદીક્ષા ધારણ કરીને પણ ઇન્દ્રિયોનો દાસ બની રહે છે અને એજ કારણથી મહાવ્રતોનું સમ્યક્ રીતિથી પરિપાલન કરતો નથી એવી વ્યક્તિ રસોની ગૃદ્ધતાથી રાગદ્વેષ ઉપર વિજય મેળવી શકતી નથી ॥૩૯॥

छाया—आयुक्तता यस्य च नास्ति काचित्, ईर्यायां भाषायां तथैषणायाम् ।
आदाननिक्षेपयोर्जुगुप्सनायां, न वीरयातमनुयाति मार्गम् ॥४०॥

टीका—'आउत्तया' इत्यादि ।

ईर्यायाम्=ईर्यासमितौ भाषायां=भाषासमितौ, तथा एषणाम्=एषणासमितौ, आदाननिक्षेपयोः=साधूपकरण-ग्रहणन्यासरूपसमितौ, जुगुप्सनायां=परिष्ठापनासमितौ च-उच्चारादीनां संयमानुपयोगितया जुगुप्सनीयत्वेनैव परिष्ठापनात् जुगुप्सनाऽत्र परिष्ठापनैव ग्राह्या, यस्य काचित् स्वल्पाऽपि आयुक्तता=सावधानता नास्ति, वीरयातम्=वीरैस्तीर्थंकर गणधरादिभिर्यात=गतं मार्गं=रत्नत्रयरूपं मोक्षपथं नानुयाति=न गच्छति । 'आयाणनिक्खेव' इतिलुप्तसप्तम्यन्तम् । ॥४०॥

मूलम्—

चिरंपि से मुडरुई भवित्ता, अथिरव्वए तवनियमेहिं भट्ठे ।
चिरं पि अप्पाण किलेसइत्ता, न पारये होइ हु संपराए ॥४१॥

'आउत्तया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(इरियाइ भासाइ तहेसणाए आयाणनिक्खेव दुगुंछणाए जस्स काइ आउत्तया नत्थि-ईर्यायां भाषायां तथा एषणायां आदाननिक्षेपयोः जुगुप्सनायां यस्य काचित् आयुक्तता नास्ति) ईर्यासमिति में, भाषासमिति में तथा एषणासमिति में, आदाननिक्षेपणसमिति में एव परिष्ठापनसमिति मे जिस साधु को स्वल्प भी सावधानता नहीं है वह (वीरजाय मग्ग न अणुजाइ-वीरयात मार्गं न अनुयाति) तीर्थंकर एव गणधरों से सेवित मार्गका-रत्नत्रय रूप मोक्षमार्ग का-अनुयायी नही होता है । अर्थात्-पाच समितियों के पालन करने में जिसका उपयोग नही है वह मोक्ष मार्ग का अनुयायी भी नही है ॥४०॥

"आ उत्तया" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—इरियाइ भासाइ तहेसणाए आयाणनिक्खेव दुगुंछणाए जस्स काइ अउत्तया नत्थि-ईर्यायां भाषायां तथा एषणायां आदाननिक्षेपयोः जुगुप्सनायां यस्य काचित् आयुक्तता नास्ति ઈર્યાસમિતિમાં, ભાષા સમિતિમાં, તથા એષણાસમિતિમાં આદાન નિક્ષેપણ સમિતિમાં અને પરિષ્ઠાપન સમિતિમાં જે સાધુને થોડી પણ સાવધાનતા નથી તે वीरजाय मग्ग न अणुजाइ-वीरयात मार्गं न अनुयाति તીર્થંકર અને ગણધરોથી સેવીત માર્ગના-રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગના અનુયાયી બનતા નથી અર્થાત્ પાચ સમિતિઓનું પાલન કરવામાં જેનો ઉપયોગ નથી તે મોક્ષ માર્ગના અનુયાયી પણ નથી ॥૪૦॥

छाया—चिरमपि स मुण्डरुचिर्भूत्वा, अस्थिरव्रतस्तपो नियमेभ्यो भ्रष्टः ।
चिरमपि आत्मानं क्लेशयित्वा, पारगो भवति खलु सम्परायस्य ॥४१॥

'चिर पि' इत्यादि ।

हे राजन्! चिरमपि=प्रभूतकालमपि मुण्डरुचि: मुण्डे=केशापनयनरूपे मुण्डन एव शेषानुष्ठानपराङ्मुखतया रुचि:=अभिलाषो यस्य स तथा, भूत्वा अस्थिरव्रत:=अस्थिराणि—चलानि व्रतानि=प्राणातिपातविरमणादीनि यस्य स तथा, अतएव—तपोनियमेभ्यो—तपांसि=अनशनादिद्वादशविधानि, नियमा:=अभिग्रहादिकास्तेभ्यो भ्रष्ट:=चलित:=स:=द्रव्यमुनि चिरमपि प्रभूतकालमपि, आत्मानं लुञ्चनादिना क्लेशयित्वा=क्लेशभाजं कृत्वाऽपि सम्परायस्य—सपरायन्ति=सम्यक् पर्य

'चिरपि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे राजन! जो साधु (चिरपि मुडरुई भवित्ता अथिरव्वए तवनियमेहिं भट्ठे—चिरमपि मुण्डरुचि: भूत्वा अस्थिरव्रत: तपोनियमेभ्य:भ्रष्ट) चिरकालतक भी केशापनयनरूप मुडन में ही अभिलाषी बनकर (अथिरव्वए—अस्थिरव्रत:) शेषव्रतो में अस्थिरभाव रखता है (से—स) वह (तवनियमेहिं भट्ठे—तपो नियमेभ्य भ्रष्ट) अनशन आदि बारह प्रकार के तप एव अभिग्रह आदिक नियमो से चलित हुआ द्रव्यमुनि कहलाता है। वह (चिरपि अप्पाण किलेसइत्ता—चिरमपि आत्मान क्लेशयित्वा) चिर कालतक भी अपने आपको लुचन आदि द्वारा क्लेशित करके भि (हु—खलु) निश्चय से (सम्पराए पारए न होइ—सम्परायस्य पारगो न भवति) ससार का पारगामी नही होता है। अर्थात्—जो साधु केवल मुडन मे ही रुचि रख कर शेष प्राणातिपात विरमणादिक व्रतों म

"चिरपि" ઇત્યાદિ !

હે રાજન્! જે સાધુ चिरपि मुडरुई भवित्ता अथिरव्वए तवनियमेहिं भट्ठे—चिरमपि मुण्डरुचि: भूत्वा अस्थिरव्रत तपो नियमेभ्यो भ्रष्ट લાબા સમય સુધી પણ કેશાપનયન રૂપ મુડનમા જ અભિલાષી બનીને अथिरव्वए—अस्थिरव्रत બીજા વ્રતોમા અસ્થિરભાવ રાખે છે से—स તે तवनियमेहिं भट्ठे—तपो नियमेभ्य भ्रष्ट અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપ અને અભિગ્રહ આદિ નિયમોથી ચલિત થયેલ દ્રવ્યમુનિ કહેવાય છે તે चिरपि अप्पाण किलेसइत्ता—चिरमपि आत्मान क्लेशयित्वा લાબા સમય સુધી પોતે પોતાને લોચન આદિ દ્વારા દુખિત વેદના ભોગવીને પણ हु—खलु નિયમથી सम्पराए पारए न होइ—सम्परायस्य पारगो न भवति સસારનો પારગામી બનતો નથી અર્થાત જે સાધુ કેવળ મુડનમા જ રૂચિ રાખીને બીજા પ્રાણાતિ

टन्ति जन्तवो ऽस्मिन्निति सम्पराय संसारस्तस्य पारगः= पारगामी खलु=निश्चयेन न भवति। 'संपराए' इति षष्ठ्यर्थे सप्तमी ॥४१॥

मूलम्--

पोल्लेव मुट्ठी जह से असारे, अयंतिए कूडकहावणेवा ।
राढामणी वेरुलियप्पगासे, अमहग्गए होइ हु जाणएसु ॥४२॥

छाया--पोल्लेव मुष्टिर्यथा सोऽसारः, अयन्त्रित. कूटकार्षापण इव।
राढामणिर्वैदूर्यप्रकाश, अमहार्घको भवति खलु ज्ञायकेषु ॥४२॥

टीका--'पोल्लेव' इत्यादि।

पोल्लेव=अन्त'सुषिरैव-एवकारोऽवधारणे, या कदाचिदपि निबिडा नैव भवति, एवंविधा मुष्टिर्यथा=मुष्टिरिव स द्रव्यमुनिः असार'=साररहितो भवति, सदर्थ शून्यत्वात्; तथा कूटकार्षापण इव=कूटकार्षापणवत् अयन्त्रित'=अनियमितो भवति, यथा कूटकार्षापण कूटतया न केनापि नियन्त्र्यते अर्थात्-क्रयविक्रयादौ न व्यवह्रियते, एवमेव असौ संयताभासो निर्गुणत्वेन न केनाप्याद्रियते

उपेक्षा भाव रखता है वह अस्थिर व्रती होकर अपने तप एवं नियमों से भ्रष्ट ही माना गया है। ऐसा व्यक्ति चाहे जितना भी अपने आपको क्लेशित करे तो भी संसार से पार नहीं हो सकता है ॥४१॥

'पोल्लेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(जहा पोल्ला मुट्ठी असारे एव-यथा पोल्ला मुष्टि, असारा एव भवति) जैसे पोली मुट्ठी सार रहित ही होती है उसी तरह (से असारे-स'असार) वह द्रव्यमुनि रत्नत्रय से शून्य होने से सार रहित होता है। (इव) तथा जैसे (कूटकहावणे अयतिए-कूटकार्षापण अयन्त्रित भवति) तथा अयमपि अयन्त्रित, भवति) खोटा पैसा-रूप्या-सिक्का-क्रय-विक्रय आदि में व्यवहार योग्य नही होता है उसी तरह यह संयता

પાતાદિક વિરમણ વ્રતોમા ઉપેક્ષાભાવ રાખે છે તે સ્થિરવ્રતિ થઈને પોતાના તપ અને નિયમોથી ભ્રષ્ટજ માનવામા આવેલ છે એવી વ્યક્તિ પોતે પોતાની જાતને ક્લેશિત કરે તો પણ તે સસારથી પાર થઇ શકતો નથી ॥૪૧॥

"पोल्लेव"--ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--जहा पोल्ला मुट्ठी असारे एव-यथा पोल्ला मुष्टि, असारा एव भवति જે પ્રમાણે પોલી મુઠી સાર વગરની હોય છે એજ પ્રમાણે से असारे-स असार તે દ્રવ્ય મુનિ રત્નત્રયથી શૂન્ય હોવાથી સાર રહિત બને છે તથા જેમ कूट कहावणे अयतिए-कूट कार्षापण अयन्त्रित भवति ખોટા પૈસા-રૂપીયા સીક્કા-ક્રય

इति भावः। अत्र हेतुमाह-यतो वैडूर्यप्रकाश =वैडूर्यमणिवत्प्रकाशमानो राढामणिः =काचमणिः ज्ञायकेषु=परीक्षकेषु खलु=निश्चयेन अमहार्घकः =अल्पमूल्यो भवति, मुग्धजनविप्रतारकत्वात्तस्य। एवमेव मुनिवद्भासमानो द्रव्यमुनिस्तत्त्वज्ञेषु निश्चयेन सम्मानानर्हो भवति, अज्ञजनविप्रतारकत्वात्तस्य ॥४२॥

तथा च—

मूलम्—

कुसीललिंगं इह धारइत्ता, इसिज्झयं जीविय वूहइत्ता ।
असंजए संजय लप्पमाणे, विणिघायमागच्छइ से चिरंपि ॥४३॥

भास भी निर्गुण होने से आदर के योग्य नहीं होता है। (वेरुलियप्पगासे राढामणी-वैडूर्यप्रकाश राढामणि) वैडूर्यमणि के समान प्रकाशवाली काचकी मणि (हु-खलु) निश्चयसे (जाणएसु अमहग्घए होइ-ज्ञायकेषु अमहार्घको भवति) परीक्षकजनों की दृष्टि मे बहुमूल्यवाली नहीं होती है। अर्थात्-जैसे पोली मुट्ठी की कोई कीमत नहीं होती है और न झूठा सिक्का ही चलन योग्य होता है वैसे ही जो साध्वाभास है-द्रव्यलिङ्गी मुनि हैं-उनकी भी तत्त्वज्ञों की दृष्टि में कोई कीमत नहीं होती है। वे ज्ञानीजनों में कभी भी आदर पाने योग्य नहीं बन सकते हैं भले ही भोले भाले मनुष्य इनका आदर करें इससे वे सच्चे मुनि नहीं हो सकते हैं। काचका मणि कभी वैडूर्यमणि का स्थान प्राप्त नहीं कर सकता है। भले ही उसकी चमक दमक वैडूर्य के समान हो तो क्या ॥४२॥

વિક્રય આદિમા વહેવાર ઉપયોગી નથી થતા એજ પ્રમાણે આ સંયતાભાસ પણ નિર્ગુણ હોવાથી આદરને યોગ્ય હોતો નથી वेरुलियप्पगासे राढामणी-वैडूर्यप्रकाश राढामणि, વૈડૂર્ય મણીની માફક પ્રકાશવાળો કાચનો મણી हु-खलु નિશ્ચયથી जाणएसु अमहग्घए होइ-ज्ञायकेषु अमहार्घको भवति પરીક્ષા કરનાર માણસોની દૃષ્ટીમા બહુમૂલ્યવાળો હોતો નથી અર્થાત્ જેમ પોલી મુઠીની કાંઈ કિંમત નથી હોતી અને જેમ ખોટો સિક્કો ચલણ યોગ્ય હોતો નથી એમજ જે સાધ્વાભાસ છે દ્રવ્યલિંગી મુનિ છે તેમની પણ તત્વજ્ઞોની દૃષ્ટીમા કોઈ કિંમત નથી જ્ઞાનીજનોમા તે કદી પણ આદર પામવા યોગ્ય બની શકતો નથી ભલે ભોળા ભલા માણસો એનો આદર કરે પરંતુ એથી તે સાચો મુનિ થઈ શકતો નથી કાચનો મણી કદી વૈડૂર્યમણીનું સ્થાન મેળવી શકતો નથી ભલે તેની ચમક વૈડૂર્યમણીના જેવી હોય તો પણ શું ? ॥૪૨॥

छाया—कुशीललिङ्गम् इह धारयित्वा, ऋषिध्वज जीविकायै बृंहयित्वा।
असयतः सयत लपन्, विनिघातमागच्छति स चिरमपि ॥४३॥

टीका— 'कुसीललिंग' इत्यादि ।

यो द्रव्यमुनिरिहजन्मनि कुशीललिङ्ग=पार्श्वस्थादिवेष धारयित्वा तथा-जीविकायै=उदरभरणार्थम् ऋषिध्वज=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिक साधु चिह्न, बृंहयित्वा=परिधाय अतएव-असयतः=भावसयमरहित सन् आत्मान सयत=साधु लपन्=शब्दयन् 'अह सयतोऽस्मि' इतिवदन, स द्रव्यमुनिः विनिघात=भवभ्रमणरूपा विविधा पीडा चिरमपि=प्रभूतकालमपि आगच्छति=प्राप्नोति। 'सजयलप्पा माने' इत्यत्र 'सजय' इतिलुप्तद्वितीयान्तम् ॥ ॥४३॥

'कुसीललिग' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो द्रव्यमुनि (कुसीललिंग धारइत्ता-इह कुशीललिङ्ग धारयित्वा) इस जन्म मे पार्श्वस्थ आदि के वेष को धारण कर के तथा (जीविय इसिज्झय वूहइत्ता-जीविकायै ऋषि वज बृंहयित्वा) उदर-पोषण के निमित्त ऋषि वज को-सदोरकमुखवस्त्रिका तथा रजोहरण आदि साधुचिह्न को-लेकर के (असयए-असयतः) सयम से रहित होता हुआ भी (अप्पाण सजय लप्पमाणे-आत्मान सयत लपन्) अपने आपको सयमी प्रकट करता है (से-स) वह (विनिघात चिरपि आगच्छइ-विनिघात चिरमपि आगच्छति) भवभ्रमणरूप विविध पीडाको बहुत कालतक प्राप्त करता रहता है।

भावार्थ—भाव सयम से रहित होने पर भी जो द्रव्यलिङ्गी अपने आपको भाव सयमीरूप से प्रकट करता है एव पार्श्वस्थ आदि के लिङ्ग

"कुसीललिग—ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—જે દ્રવ્ય મુનિ कुसीललिंग धारइत्ता—इह कुशीललिङ्ग धारयित्वा આ જન્મમા પાર્શ્વસ્થ આદિના વેશને ધારણ કરીને તથા जीविय इसिज्झय वूहइत्ता—जीवीकायै ऋषिध्वज बृहयित्वा ઉદર પોષણ નિમિત્તે ઋષિ ધ્વજને-સદોરક મુખ વસ્ત્રિકા તથા રજોહરણ આદિ સાધુ ચિન્હને લઈને असयए–असयत સયમથી રહિત હોવા છતા अप्पाण सजय लप्पमाणे–आत्मान सयत लपत् પોતે પોતાની જાતને સયમી તરીકે ઓળખાવે છે से–सः તે विणिघाय चिरपि आगच्छइ–विनिघात चिरमपि आगच्छति ભવભ્રમણરૂપ વિવિધ પીડાને ઘણા કાળ સુધી ભોગવતો રહે છે

ભાવાર્થ—ભાવ સયમથી રહિત હોવા છતા પણ જે દ્રવ્યલિગી પોતેપોતાને ભાવ સયમી રૂપથી પ્રગટ કરે છે અને પાર્શ્વસ્થ આદિના લિગને લઈને પણ જે

अत्र हेतुमाह—

मूलम्—

विसं तु पीयं जह कालकूडं, हणाइ सत्थं जह कुग्गहीयं ।
एसो वि धम्मो विसओववण्णो हणाइ वेयाल इवाविवण्णो ॥४४॥

छाया—विषं तु पीतं यथा कालकूटं, हन्ति शस्त्रं यथा कुगृहीतम् ।
एषोऽपि धर्मो विषयोपपन्नो, हन्ति वेताल इवाविपन्नः ॥४४॥

टीका—'विसं तु' इत्यादि ।

यथा तु कालकूटं विषं=कालकूटाख्यं विषं पीतं सत् पानकर्तारं हन्ति, यथा च कुगृहीतं=विपरीततया गृहीतं शस्त्रं धारणकर्तारं हन्ति, इव=यथा अविपन्नः=मन्त्रादिभिरवशीकृतो वेतालः साधकं हन्ति, तथैव-विषयोपपन्नः=शब्दादि

को लेकर भी जो ऋषिचिह्नों को सिर्फ पेट भरने के ख्याल से ही धारण करता है वह असंयमी ही है और वह बहुत कालतक भी इस भव-भ्रमणरूप पीडा से छुटकारा नहीं पा सकता है ॥४३॥

इसमें हेतु कहते हैं—'विसतु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जहा पीयं कालकूडं विसं हणाइ-यथा पीतं कालकूटं विषं हन्ति) जिस प्रकार पिया हुआ कालकूट विष पीने वाले के प्राणों का अपहारक होता है अथवा (जहा-यथा) जैसे (कुग्गहीयं सत्थं हणाइ-कुगृहीतं शस्त्रं हन्ति) विपरीतपने से ग्रहण किया हुआ शस्त्र धारण करनेवाले का विनाश कर देता है अथवा (इव) जैसे (अविवण्णो वेयाल हणाइ-अविपन्नः वेतालः हन्ति) मन्त्रादिको द्वारा वश में नहीं किया गया वेताल वशमे करने वाले साधक का ध्वंस कर देता है इसी तरह (विसओववण्णो-विषयोपपन्नः) शब्दादिविषयरूप भोगों की लोलुपता

ऋषिचिन्होने फक्त पेट भरवाना ख्यालथी ज धारणु करे छे ते असयमी छे अने ते घणा काळ सुधी पणु आ भवभ्रमणरूप पीडाथी छुटकारो मेळवी शकतो नथी । ४३ ॥

आमा हेतु कहे छे—"विसतु" इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जहा पीयं कालकूडं विसं हणाइ-यथा पीतं कालकूटं विषं हन्ति जेवी रीते काळकूट विष पीनारा प्राणीना प्राणोनो नाश करनार बने छे अथवा जहा-यथा जेम कुग्गहीय सत्थं हणाइ-कुगृहीतं शस्त्रं हन्ति उंधी रीते धारणु करवामां आवेल शस्त्र धारणु करनारनो विनाश करी दे छे अथवा जेम अविवण्णो वेयाल हणाइ-अविपन्नः वेतालः हन्ति मन्त्रादिकोथी वशमां न करवामां आवेल वेताल

छाया--कुशीललिङ्गम् इह धारयित्वा, ऋषि ध्वज जीविकायै बृहयित्वा।
असयतः सयत लपन्, विनिघातमागच्छति स चिरमपि ॥४३॥

टीका-- 'कुसीललिंग' इत्यादि।

यो द्रव्यमुनिरिहजन्मनि कुशीललिङ्ग=पार्श्वस्थादिवेष धारयित्वा तथा-जीविकायै=उदरभरणार्थम् ऋषिध्वज=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिक साधुचिह्न, बृहयित्वा=परिधाय अतएव-असयत=भावसयमरहित सन आत्मान सयत=साधु लपन्=शब्दयन् 'अह सयतोऽस्मि' इतिवदन, स द्रव्यमुनिः विनिघात=भवभ्रमणरूपा विविधा पीडा चिरमपि=प्रभूतकालमपि आगच्छति=प्राप्नोति। 'सजयलप्पा माने' इत्यत्र 'सजय' इतिलुप्तद्वितीयान्तम् ॥ ॥४३॥

'कुसीललिंग' इत्यादि।

अन्वयार्थ--जो द्रव्यमुनि (कुसीललिंग धारइत्ता-इह कुशीललिङ्ग धारयित्वा) इस जन्म मे पार्श्वस्थ आदि के वेष को धारण कर के तथा (जीविय इसिज्झय वूहइत्ता-जीविकायै ऋषि वज बृहयित्वा) उदर-पोषण के निमित्त ऋषि वज को-सदोरकमुखवस्त्रिका तथा रजोहरण आदि साधुचिह्न को-लेकर के (असयए-असयतः) सयम से रहित होता हुआ भी (अप्पाण सजय लप्पमाणे-आत्मान सयत लपन्) अपने आपको सयमी प्रकट करता है (से-स) वह (विनिघात चिरपि आगच्छइ-विनिघात चिरमपि आगच्छति) भवभ्रमणरूप विविध पीडाको बहुत कालतक प्राप्त करता रहता है।

भावार्थ--भाव सयम से रहित होने पर भी जो द्रव्यलिङ्गी अपने आपको भाव सयमीरूप से प्रकट करता है एव पार्श्वस्थ आदि के लिङ्ग

''कुसीललिंग--ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--જે દ્રવ્ય મુનિ कुसीललिंग धारइत्ता-इह कुशीललिङ्ग धारयित्वा આ જન્મમા પાર્શ્વસ્થ આદિના વેશને ધારણ કરીને તથા जीविय इसिज्झय वूहइत्ता-जीवीकायै ऋषि वज बृहयित्वा ઉદર પોષણ નિમિત્તે ઋષિ ધ્વજને-સદોરક મુખ વસ્ત્રિકા તથા રજોહરણ આદિ સાધુ ચિન્હને લઈને असयए-असयत સયમથી રહિત હોવા છતા अप्पाण सजय लप्पमाणे-आत्मान सयत लपत् પોતે પોતાની જાતને સયમી તરીકે ઓળખાવે છે से-स તે विणिघाय चिरपि आगच्छइ-विनिघात चिरमपि आगच्छति ભવભ્રમણરૂપ વિવિધ પીડાને ઘણા કાળ સુધી ભોગવતો રહે છે

ભાવાર્થ--ભાવ સયમથી રહિત હોવા છતા પણ જે દ્રવ્યલિંગી પોતેપોતાને ભાવ સયમી રૂપથી પ્રગટ કરે છે અને પાર્શ્વસ્થ આદિના લિંગને લઈને પણ જે

'जो' इत्यादि ।

यो द्रव्यमुनिः लक्षण=सामुद्रोक्त शुभाशुभसूचक स्त्रीपुरुषचिह्न, तथा-स्वप्नशास्त्रोक्त स्वप्नानां शुभाशुभलक्षण फल प्रयुञ्जानो=गृहस्थाना पुरतो निवेदको भवति, तथा-यो निमित्तकौतूहलसम्प्रगाढ -निमित्त=भूकम्पादिक, कौतूहल=अपत्याद्यर्थे स्नपनादिक, तयोः सम्प्रगाढ =सम्प्रसक्तश्च भवति, तथा च य कुहेटविद्यास्रवद्वारजीवी-कुहेटविद्या'=अलीकाश्चर्यविधायि मन्त्र तन्त्र ज्ञानात्मिका विद्यास्ता एव कर्मबन्धहेतुतयाऽऽस्रवद्वाराणि तैर्जीवितु शीलमस्येति तथा, मन्त्र तन्त्रादि-कुत्सित विद्याद्वारा यो जीविका निर्वहति, एव विध स द्रव्यमुनिः तस्मिन काले=लक्षणस्वप्ननिमित्तकौतूहलकुहेटविद्याजनितपातकफलोपभोगकाले शरण=त्राण न गच्छति=न प्राप्नोति। त द्रव्यसाधु न कोऽपि नरकतिर्यग्योन्यादिभवाद् दुःखाद् रक्षतीति भाव ॥४५॥

'जो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जो-य) जो द्रव्यमुनि (लक्खण सुविण पउजमाणे-लक्षण स्वप्न प्रयुञ्जानः) सामुद्रिक शास्त्रोक्त एव शुभाशुभ के सूचक स्त्री पुरुषों के चिह्नों को तथा स्वप्नशास्त्रोक्त शुभाशुभ स्वप्नों के फलको गृहस्थों से कहता है (निमित्तकोऊहल सपगाढे-निमित्तकौतूहलसम्प्रगाढ.) तथा जो भूकम्प आदि निमित्तको, पुत्र आदिकी प्राप्ति के निमित्त स्वप्न आदि कौतूहल को जो अन्यजनों के लिये कहता है तथा (कुहेड विज्जासवदारजीवी-कुहेट विद्यास्रवद्वारजीवी) तथा जो कुहेटविद्याओं द्वारा मंत्र तंत्र आदि कुत्सित विद्याओं द्वारा-जीविका का निर्वाह करता है वह (तम्मिकाले सरण न गच्छई-तस्मिन् काले शरण न गच्छति) उस काल में उन २ अपने कर्तव्यो द्वारा नरकादिक में पतन होते समय सुरक्षित नही हो सकता है।

"जो" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—जो-य· જે દ્રવ્ય મુનિ लक्खण सुविण पउजमाणे-लक्षण स्वप्न प्रयुञ्जान· સામુદ્રિક શાસ્ત્રોક્ત અને શુભાશુભને કહેનાર તેમજ સ્ત્રી પુરૂષોના ચિન્હોને તથા સ્વપ્ન શાસ્ત્રોક્ત શુભાશુભ સ્વપ્નોના ફળ ગૃહસ્થોને કહે છે, निमित्तकोउहलसपगाढे-निमित्तकौतूहलसम्प्रगाढ· તથા જે ભૂકંપ આદિ નિમિત્તને, પુત્ર આદિની પ્રાપ્તિ નિમિત્ત સ્વપ્ન આદિના કુતૂહલને જે અન્ય જનો માટે કહે છે તથા कुहेड विज्जासवदारजीवी-कुहेट विद्यास्रवद्वारजीवी જે મેલી વિદ્યાઓ દ્વારા મંત્ર તંત્ર આદિ મેલી વિદ્યાઓ દ્વારા-જીવીકાનો નિર્વાહ કરે છે તે એ કાળમાં જે તે પોતાના કર્તવ્યો દ્વારા નર્કાદિકમાં પતન થતી વખતે સુરક્ષિત બની શકતા નથી

विषयरूपभोगलोलुपतायुक्तः एप धर्मोऽपि द्रव्यमुनिं हन्ति= दुर्गतौ पातयति। सम्यग्रूपेण मुनिं समाराधितो धर्म एव ऊर्ध्वं नयति, अनाराधितस्तु भवभ्रमण मेव कारयतीति भावः ॥४४॥

किं च--

मूलम्---

जो लक्खणं सुविण पउंजमाणे, निमित्तकोउहल्ल संपगाढे ।
कुहेडविज्जासवदारजीवी, न गच्छई सरणं, तम्मिंकाले ॥४५॥

छाया---यो लक्षण स्वप्नं प्रयुञ्जानो, निमित्तकौतूहलसंप्रगाढः ।
कुहेट विद्यास्रवद्वारजीवी, न गच्छति शरण तस्मिन् काले ॥४५॥

से युक्त हुआ (एसो धम्मो वि-एष धर्म अपि) यह धर्म भी द्रव्य-लिङ्गी का नाशकर देता है। उसको दुर्गति मे डाल देता है।

भावार्थ---आराधित धर्म ही भवभ्रमण का अतक-नाशक होता है, अनाराधित नहीं। द्रव्यलिङ्गी मुनि धर्म का वास्तविक रूप से आराधन नही करता हैं वह उस धर्म को अपनी आजीविका का साधन बनाता है इसीलिये जिस प्रकार कालकूट विष है वह, पीनेवाले का नाश कर देता है और अच्छे से अच्छा शस्त्र होता है वह अपनेको अच्छी तरह से नही पकडनेवाले को काट गिराता है एव अवशीभूत वेताल जिस प्रकार साधक का नाश कर देता है उसी प्रकार अनाराधित धर्म भी भवभ्रमणरूप पीडाजनक होता है तथा आराधित किया गया वही धर्म जीव की उन्नतिका-उर्ध्वगति प्राप्ति का-धारक होता है ॥४४॥

વશમા કરવાવાળા સાધકનો ધ્વસ કરી દે છે તેવી રીતે विसओववण्णो-विषयोपपन्न. શબ્દાદિક વિષયરૂપ ભોગોની લોલુપતાથી યુકત બનેલ एसो धम्मो वि-एष. धर्म. अपि દ્રવ્ય લિગીનો એ ધર્મ પણ નાશ કરી દે છે અને દુગતિમા ફેકી દે છે

ભાવાર્થ---આરાધિત ધર્મજ ભવોભવના ફેરાનો નાશ કરનાર છે અનઆરાધિત નહી દ્રવ્યલિગી મુનિ ધર્મનુ વાસ્તવિકરૂપથી આરાધન કરતા નથી તે ધર્મને પોતાની આજીવીકાનુ સાધન બનાવે છે આથીજે પ્રકારે કાળકૂટ ઝેર તેના પીનારનો નાશ કરે છે અને સારામા સારૂ શસ્ત્ર હોય છે તે તેને સારી રીતથી ન પકડનારને જ સહારે છે, આવીજ રીતે અવશીભૂત વૈતાલ સાધકનો નાશ કરી નાખે છે એજ પ્રમાણે અનારાધિત ધર્મ પણ ભવ ભ્રમણરૂપ પીડાનેઆપનાર બને છે તથા આરાધિત કરાયેલ એવો ધર્મ જીવની ઉન્નતિના-ઉર્ધ્વગતિ પ્રાપ્તિના ધારક બનેછે ॥૪૪॥

सदा दुःखी सन विपर्यासम्=तत्त्वेषु वैपरीत्यम् उपैति=प्राप्नोति। एवं विपर्यासमुपगत स नरकतिर्यग्योनीः=नरकतिर्यग्रूपान् भवान सन्धावति। नरकेषु तिर्यक्षु च समुत्पद्यते इत्यर्थः। 'तु' शब्दः पूरण। 'विप्परियास' इति लुप्त द्वितीयान्तम्। ॥४६॥

कथ चारित्र विराधको नरकतिर्यग्गतिः प्राप्नातीत्याह—

मूलम्—

उद्देसियं कीयगडं नियागं नं मुचंई किंचि अणेसणिज्जं।
अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता, इओ चुओ गच्छई कट्टु पावं ॥४७॥

छाया--औद्देशिक क्रीतकृत नियाग, न मुञ्चति किंचिदनेषणीयम्।
अग्निरिव सर्वभक्षी भूत्वा, इतश्च्युतो गच्छति कृत्वा पापम् ॥४७॥

धना करके (सया दुही-सदा दुःखी) सदा दुःखी होता हुआ (विप्परियासुवेइ-विपर्यासम उपैति) तत्त्वों के विषय में विपरीत भाव को प्राप्त होता है। इस प्रकार विपरीत भाव से वह (नरगतिरिक्खजोणी-नरक तिर्यग्योनि) नरक एवं तिर्यञ्चरूप भवों को (सधावइ-सन्धावति) प्राप्त करता है।

भावार्थ—द्रव्यलिङ्गी साधु तत्त्वतः शीलवर्जित होने के कारण असयमी ही माना गया है। यह चारित्र की विराधना इसलिये करता है कि इसके प्रबलमिथ्यात्व का उदय है। और इसीसे यह दुःखी होता रहता है। मिथ्यात्व का ही यह प्रभाव है जो इसके हृदय मे तत्त्वों के प्रति यथार्थ श्रद्धान नहीं हो सकता है। नरक तिर्यञ्चगति में उत्पन्न होने के लिये इसको यही मिथ्यात्व प्रधान कारण बनता है ॥४६॥

सया दुही-सदा दुःखी सदा दुःख लोगवता लोगवता विप्परियासुवेइ-विपर्यासम् उपैति तत्वोना विषयमा विपरीत भावने प्राप्त करनार बने छे आ प्रकारना विपरीत भावथी ते नरगतिरिक्खजोणी-नरकतिर्यग्योनि नरक अने तिर्यंचरूप भवोने सधावइ-सन्धावति प्राप्त करे छे

भावार्थ—द्रव्यलिंगी साधु तत्वत शीलवर्जित होवाना कारणे असयमी मानवामा आवेल छे ते चारित्रनी विराधना ए माटे करे छे के, मने प्रबल मिथ्यात्वनो उदय होय छे अने तेनाथी ए दुःखित थता रहे छे मिथ्यात्वनो ज ए प्रभाव छे जे तेना हृदयमा तत्वोना तरफ यथार्थ श्रद्धा राखी शकता नथी नरक तीर्यंच गतिमा उत्पन्न थवा माटे एमने आ मिथ्यात्व प्रधान कारण बने छे ॥४६॥

अमुमेवार्थं विशेषतः माह—

मूलम्—

तमतमेणेव उ से असीले, सया दुही विप्परियासुवेइ ।
संधावइ नरगतिरिक्खजोणी, मोणं विराहित्तु असाहुरूवे ॥४६॥

छाया—तमस्तमसैव तु सोऽशील, सदा दुःखी विपर्यासमुपैति ।
सन्धावति नरकतिर्यग्योनी., मौन विराध्य असाधुरूप ॥४६॥

टीका—'तमतमे' इत्यादि

अशील=शीलवर्जित अतएव असाधुरूप=तत्त्वतोऽसयतस्वभाव स द्रव्यमुनि. तमस्तमसैव=प्रगाढमिथ्यात्वेनैव हेतुना मौन=चारित्र विराध्य=दूषयित्वा

भावार्थ—जो मुनिजन अपने निर्वाह के लिए स्त्री पुरुषोंके शुभाशुभ चिह्नो का फल उनको कहते है तथा स्वप्नों का इष्टानिष्ट फल प्रदर्शित करते है, पुत्र आदि की प्राप्ति निमित्त जो गडा तावीज देते है-अमुक स्थान पर स्नान करना कहते है, मत्र तत्र आदि विद्याओं से जो कि ज्ञानावरणीयादि कर्मास्रव के कारण है अन्यजनों को विमोहित कर अपना निर्वाह करते है वे सब द्रव्यमुनि है। इनके ये कर्तव्य नरक आदि योनियो के दु खों से इनको बचा नहीं सकते है ॥४५॥

इसी अर्थको विशेष रूप से कहते हैं—'तम तमेणेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(असीले-अशील.) शीलवर्जित होने की वजह से (असाहुरूवे-असाधुरूप) तत्त्वत असयत स्वभाव का (से-स) वह द्रव्यमुनि (तम तमेणेव-तमस्तमसा एव) प्रगाढ मिथ्यात्व से युक्त होने के कारण (मोण-मौनम्) चारित्र की (विराहित्तु-विराध्य, विरा-

ભાવાર્થ— જે મુનિજન પોતાના નિર્વાહ માટે સ્ત્રી પુરૂષોના શુભાશુભ ચિહ્નોના ફળોને કહે છે, તથા સ્વપ્નોના સારા માઠા ફળોને સંભળાવે છે, તથા પુત્ર આદિની પ્રાપ્તિ નિમિત્તે જે તાવીજ વિગેરે બનાવી આપે છે, અમુક સ્થાન ઉપર સ્નાન કરવાનું કહે છે, મંત્રતંત્ર આદિ વિદ્યાઓથી કે જે જ્ઞાનાવરણીયાદી આસ્રવનું કારણ છે અન્ય જનોને વિમોહિત કરી પોતાનો નિર્વાહ કરે છે તે સઘળા દ્રવ્ય મુનિ છે તેમના એ કર્તવ્યો નરક તીર્યંચ આદિ યોનીઓના દુઃખોથી તેમને બચાવી શકતા નથી ॥૪૫॥

એજ અર્થને વિશેષ રૂપથી કહે છે—'तम तमेणेव'' ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—असीले-अशील શીલને પાળનારા ન હોવાના કારણથી તે असाहुरूवे-आसाधुरूप દ્રવ્યમુનિ तम तमेणेव-तमस्तमसा एव પ્રગાઢ મિથ્યાત્વથી ભરેલા હોવાના કારણે मोण-मौनम् ચારિત્રની विराहित्तु-विराध्य વિરાધના કરીને

सदा दुःखी सन् विपर्यासम्=तत्त्वेषु वैपरीत्यम् उपैति=प्राप्नोति। एवं विपर्यासमुपगतः स नरकतिर्यग्योनीः=नरकतिर्यग्रूपान् भवान् सन्धावति। नरकेषु तिर्यक्षु च समुत्पद्यते इत्यर्थः। 'तु' शब्दः पूरणे। 'विप्परियासं' इति लुप्तद्वितीयान्तम्। ॥४६॥

कथं चारित्रविराधको नरकतिर्यग्गतिं प्राप्नोतीत्याह—

मूलम्—

उद्देसियं कीयगडं नियागं न मुंचई किंचि अणेसणिज्जं।
अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता, इओ चुओ गच्छइ कट्टु पावं ॥४७॥

छाया—औद्देशिकं क्रीतकृतं नियागं, न मुञ्चति किंचिदनेषणीयम्।
अग्निरिव सर्वभक्षी भूत्वा, इतश्च्युतो गच्छति कृत्वा पापम् ॥४७॥

धना करके (सया दुही—सदा दुःखी) सदा दुःखी होता हुआ (विप्परियासुवेइ—विपर्यासम् उपैति) तत्त्वों के विषय में विपरीत भाव को प्राप्त होता है। इस प्रकार विपरीत भाव से वह (नरगतिरिक्खजोणी—नरकतिर्यग्योनिः) नरक एवं तिर्यञ्चरूप भवों को (संधावइ—सन्धावति) प्राप्त करता है।

भावार्थ—द्रव्यलिङ्गी साधु तत्त्वतः शीलवर्जित होने के कारण असंयमी ही माना गया है। यह चारित्र की विराधना इसलिये करता है कि इसके प्रबलमिथ्यात्व का उदय है। और इसीसे यह दुःखी होता रहता है। मिथ्यात्व का ही यह प्रभाव है जो इसके हृदय में तत्त्वों के प्रति यथार्थ श्रद्धान नहीं हो सकता है। नरक तिर्यञ्चगति में उत्पन्न होने के लिये इसको यही मिथ्यात्व प्रधान कारण बनता है ॥४६॥

सया दुही—सदा दुःखी સદા દુઃખ ભોગવતા ભોગવતા विप्परियासुवेइ—विपर्यासम् उपैति તત્વોના વિષયમાં વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરનાર બને છે. આ પ્રકારના વિપરીત ભાવથી તે नरगतिरिक्खजोणी—नरकतिर्यग्योनि નરક અને તિર્યંચરૂપ ભવોને संधावइ—सन्धावति પ્રાપ્ત કરે છે.

ભાવાર્થ—દ્રવ્યલિંગી સાધુ તત્વતઃ શીલવર્જીત હોવાના કારણે અસંયમી માનવામાં આવેલ છે. તે ચારિત્રની વિરાધના એ માટે કરે છે કે, એને પ્રબળ મિથ્યાત્વનો ઉદય હોય છે અને તેનાથી એ દુઃખિત થતા રહે છે. મિથ્યાત્વનો જ એ પ્રભાવ છે જે તેના હૃદયમાં તત્વોના તરફ યથાર્થ શ્રદ્ધા રાખી શકતા નથી. નરક તીર્યંચગતિમાં ઉત્પન્ન થવા માટે એમને આ મિથ્યાત્વ પ્રધાન કારણ બને છે ॥૪૬॥

अमुमेवार्थं विशेषतः प्राह--

मूलम्—

तमतमेणेव उ से असीले, सया दुही विप्परियासुवेइ ।
सधावइ नरगतिरिक्खजोणी, मोणं विराहित्तु असाहुरूवे ॥४६॥

छाया—तमस्तमसैव तु सोऽशील, सदा दुःखी विपर्यासमुपैति।
सन्धावति नरकतिर्यग्योनी, मौन विराध्य असाधुरूप ॥४६॥

टीका--'तमतमे' इत्यादि

अशील =शीलवर्जित अतएव असाधुरूप =तत्त्वतोऽसयतस्वभाव' स द्रव्य मुनि. तमस्तमसैव=प्रगाढमिथ्यात्वेनैव हेतुना मौन=चारित्र विराध्य=दूषयित्वा

भावार्थ—जो मुनिजन अपने निर्वाह के लिए स्त्री पुरुषोंके शुभाशुभ चिह्नो का फल उनको कहते हैं तथा स्वप्नों का इष्टानिष्ट फल प्रदर्शित करते है, पुत्र आदि की प्राप्ति निमित्त जो गडा तावीज देते है-अमुक स्थान पर स्नान करना कहते है, मत्र तत्र आदि विद्याओं से जो कि ज्ञानावरणीयादि कर्मास्रव के कारण है अन्यजनों को विमोहित कर अपना निर्वाह करते है वे सब द्रव्यमुनि है। इनके ये कर्तव्य नरक आदि योनियों के दु.खों से इनको बचा नही सकते है ॥४५॥

इसी अर्थ को विशेष रूप से कहते हैं--'तम तमेणेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(असीले-अशील) शीलवर्जित होने की वजह से (असाहुरूवे-असाधुरूप) तत्त्वत. असयत स्वभाव का (से-स') वह द्रव्यमुनि (तम तमेणेव-तमस्तमसा एव) प्रगाढ मिथ्यात्व से युक्त होने के कारण (मोण-मौनम्) चारित्र की (विराहित्तु-विराध्य, विरा-

ભાવાર્થ— જે મુનિજન પોતાના નિર્વાહ માટે સ્ત્રી પુરૂષોના શુભાશુભ ચિહ્નોના ફળોને કહે છે, તથા સ્વપ્નોના સારા માઠા ફળોને સંભળાવે છે, તથા પુત્ર આદિની પ્રાપ્તિ નિમિત્તે જે તાવીજ વિગેરે બનાવી આપે છે, અમુક સ્થાન ઉપર સ્નાન કરવાનુ કહે છે, મત્રતત્ર આદિ વિદ્યાઓથી કે જે જ્ઞાનાવરણીયાદી આસ્રવનુ કારણ છે અન્ય જનોને વિમોહિત કરી પોતાનો નિર્વાહ કરે છે તે સઘળા દ્રવ્ય મુનિ છે તેમના એ કર્તવ્યો નરક તીર્યંચ આદિ યોનીઓના દુખોથી તેમને બચાવી શકતા નથી ॥૪૫॥

એજ અર્થને વિશેષ રૂપથી કહે છે—'तम तमेणेव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—असीले-अशील શીલને પાળનારા ન હોવાના કારણથી તે असाहुरूवे-असाधुरूप દ્રવ્યમુનિ तम तमेणेव-तमस्तमसा एव પ્રગાઢ મિથ્યાત્વથી ભરેલા હોવાના કારણે मोण-मौनम् ચારિત્રની विराहित्तु-विराध्य વિરાધના કરીને

सदा दुःखी सन् विपर्यासम्=तत्त्वेषु वैपरीत्यम् उपैति=प्राप्नोति। एवं विपर्यासमुपगतः स नरकतिर्यग्योनी:=नरकतिर्यग्रूपान् भवान् सन्धावति। नरकेषु तिर्यक्षु च समुत्पद्यते इत्यर्थः। 'तु' शब्दः पूरणे। 'विप्परियासं' इति लुप्त द्वितीयान्तम्। ॥४६॥

कथं चारित्रं विराध्य नरकतिर्यग्गतिं प्राप्नोतीत्याह—

मूलम्—

उद्देसियं कीयगडं नियागं न मुंचई किंचि अणेसणिज्जं।
अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता, इओ चुओ गच्छइ कट्टु पावं ॥४७॥

छाया—औद्देशिकं क्रीतकृतं नियागं, न मुञ्चति किंचिदनेषणीयम्।
अग्निरिव सर्वभक्षी भूत्वा, इतश्च्युतो गच्छति कृत्वा पापम् ॥४७॥

धना करके (सया दुही—सदा दुःखी) सदा दुःखी होता हुआ (विप्परियासुवेइ—विपर्यासम् उपैति) तत्त्वों के विषय में विपरीत भाव को प्राप्त होता है। इस प्रकार विपरीत भाव से वह (नरगतिरिक्खजोणी—नरकतिर्यग्योनिः) नरक एवं तिर्यञ्चरूप भवों को (संधावइ—सन्धावति) प्राप्त करता है।

भावार्थ—द्रव्यलिङ्गी साधु तत्त्वतः शीलवर्जित होने के कारण असंयमी ही माना गया है। यह चारित्र की विराधना इसलिये करता है कि इसके प्रबलमिथ्यात्व का उदय है। और इसीसे यह दुःखी होता रहता है। मिथ्यात्व का ही यह प्रभाव है जो इसके हृदय में तत्त्वों के प्रति यथार्थ श्रद्धान नहीं हो सकता है। नरक तिर्यञ्चगति में उत्पन्न होने के लिये इसको यही मिथ्यात्व प्रधान कारण बनता है ॥४६॥

सया दुही—सदा दुःखी સદા દુઃખ ભોગવતા ભોગવતા विप्परियासुवेइ—विपर्यासम् उपैति તત્વોના વિષયમાં વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરનાર બને છે આ પ્રકારના વિપરીત ભાવથી તે नरगतिरिक्खजोणी—नरकतिर्यग्योनिः નરક અને તિર્યંચરૂપ ભવોને संधावइ—सन्धावति પ્રાપ્ત કરે છે

ભાવાર્થ—દ્રવ્યલિંગી સાધુ તત્વત શીલવર્જીત હોવાના કારણે અસંયમી માનવામાં આવેલ છે તે ચારિત્રની વિરાધના એ માટે કરે છે કે મને પ્રબળ મિથ્યાત્વનો ઉદય હોય-છે અને તેનાથી એ દુઃખિત થતા રહે છે મિથ્યાત્વનો જ એ પ્રભાવ છે જે તેના હૃદયમાં તત્વોના તરફ યથાર્થ શ્રદ્ધા રાખી શકતા નથી નરક તીર્યંચગતિમાં ઉત્પન્ન થવા માટે એમને આ મિથ્યાત્વ પ્રધાન કારણ બને છે ॥૪૬॥

टीका—'उद्देसिय' इत्यादि ।

स द्रव्यमुनिः, औद्देशिकम्=उद्देशेन=कमप्येकं साधुमुद्दिश्य, निर्वृत्तम्–औद्देशिकं–तथा–क्रीतकृतं=साध्वर्थं क्रीतं नियागं=नित्यपिण्डम्–आमन्त्रणपूर्वकं दत्तमशनादिकं वा, तथा–अन्यदपि अनेषणीयम्=साधुभिरग्राह्यं किंचिदप्यशनादिकं न मुञ्चति=न परित्यजति=सर्वं गृह्णातीति भावः । एवंविध स द्रव्यमुनिः अग्निरिव सर्वभक्षी=सर्वम्=अप्रासुकादिकं सर्वं भक्षयितुं शीलमस्येति तथा, भूत्वा, पापं=साध्वाचारपरित्यागरूपं 'कट्टु'=कृत्वा इतः अस्माद् भवाच्च्युतो मृतः सन् नरकगतिं तिर्यग्गतिं च गच्छति ॥४८॥

चारित्र की विराधना से नरक तिर्यञ्चगति कैसे प्राप्त होती है ? सो कहते हैं—'उद्देसिय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—वह द्रव्यमुनि (उद्देसिय–औद्देशिकम्) किसी भी एक साधु के उद्देश से तैयार किये गये तथा (कीयगडं–क्रीतकृतम्) साधु के लिये खरीदे गये (निआगं–नियागम्) नित्यपिण्ड–आमन्त्रपूर्वक दिये गये अशनादिक पिण्डको तथा (किंचि अणेसणिज्जं–किञ्चिद् अनेषणीयम्) अन्य कोई भी अनेषणीय–साधु के लिये अकल्प्य अशनादिकपिंड–को (न मुचई–न मुञ्चति) नहीं छोडता है । किन्तु (अग्गिविवासव्व भक्खी भवित्ता–अग्निरिव सर्वभक्षी भूत्वा) अग्नि के समान सर्वभक्षी होकर वह (पावकट्टु–पापं कृत्वा) साधु आचार का परित्याग रूप पाप करके (इओ चुओ–इतः च्युतः) इस भव से च्युत होने पर (गच्छइ–गच्छति) नरकगति एवं तिर्यञ्चगति में जाता है ।

भावार्थ—द्रव्यमुनि अग्नि के समान सर्वभक्षी रहा करता है ।

ચારિત્રની વિરાધનાથી નરક તીર્યંચગતિ કેમ પ્રાપ્ત થાય છે તેને કહે છે "उद्देसिय" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—એ દ્રવ્યમુનિ उद्देसिय–औद्देशिकम् કોઈપણ એક સાધુના ઉદ્દેશથી તૈયાર કરવામાં આવેલ તથા कीयगड क्रीतकृतम् સાધુ માટે ખરીદવામાં આવેલ निआग–नियाग નિત્યપિંડ આમંત્રણપૂર્વક આપવામાં આવેલ અશનાદિક પિંડને તથા किंचि अणेसणिज्ज–किञ्चित् अनेषणीयम् બીજા કોઈ પણ અનેષણીયસાધુ માટે અકલ્પ્ય અશનાદિક પિંડને न मुचई–न मुचति છોડતા નથી પરંતુ अग्गीविवासव्व भक्खी भवित्ता–अग्निरिव सर्वभक्षि भूत्वा અગ્નિની માફક સર્વભક્ષી બનીને તે पावकट्टु–पप कृत्वा સાધુ આચારના પરિત્યાગરૂપ પાપ કરીને इओ चुओ–इत• च्युत આ ભવથી ભ્રષ્ટ થવાથી गच्छइ–गच्छति નરકગતિ અને તીર્યંચ ગતિમાં જાય છે

ભાવાર્થ—દ્રવ્યમુનિ અગ્નિ સમાન સર્વભક્ષી રહ્યા કરે છે તેને કલ્પનીય

यतश्च दुश्चरितैरेव दुर्गतिप्राप्तिः रत आह—

मूलम्—

नं तं अरी कंठछित्ता करेइं, जं से करे अप्पणिया दुरप्पया ।
से नाहिई मच्चुमुहं तुं पत्ते, पच्छाणुतावेण दयाविहूणो ॥४८॥

छाया—न तमरि कण्ठच्छेत्ता करोति, य तस्य करोत्यात्मीया दुरात्मता ।
स ज्ञास्यति मृत्युमुखं तु प्राप्तः, पश्चादनुतापेन दयाविहीन ॥४८॥

टीका—'न त' इत्यादि ।

कण्ठच्छेत्ता=कण्ठच्छेदनकारक अरि =शत्रु न तमनर्थ करोति, यम् अनर्थ तस्य आत्मीया=स्वकीया दुरात्मता=दुष्टाचार प्रवृत्तिरूपा करोति । दयाविहीन = सयमानुष्ठानवर्जितः स द्रव्यमुनिस्तु मृत्युमुख प्राप्त =मरणाभिमुखं गत. पश्चादनु

उसको कल्पनीय अकल्पनीय अशनादिक का कोई भी ध्यान नहीं होता है। चाहे वह औद्देशिक हो चाहे क्रीत कृत हो। जब यह पर गति में जाने लगता है तो नरक एव तिर्यञ्च गति में जाकर अनत दुःखो को भोगा करता है ॥४७॥

अन्वयार्थ—'दुश्चरित से ही दुर्गति प्राप्त होती है' इसलिये कहते हैं—'न त' इत्यादि। (कंठछित्ता-कण्ठच्छेत्ता) कंठ को छेदन करनेवाला (अरी-अरिः) शत्रु (त न करेइ-त न करोति) उस अनर्थ को नहीं करता है कि (ज से अप्पणिया दुरप्पया करेइ-य तस्य आत्मीया दुरात्मा करोति) जिस अनर्थ को इसकी यह आत्मीय दुष्टाचाररूप प्रवृत्ति करती है। यह (से-सः) वह उस समय (नाहिई-ज्ञास्यति) जान सकेगा कि जब वह (दयाविहूणो-दयाविहीन) सयमानुष्ठान वर्जित द्रव्यमुनि (मच्चु

અકલ્પનીય અશનાદિકનુ કોઈ પણ પ્રકારનુ ધ્યાન હોતુ નથી ચાહે તે ઔદ્દેશીક હોય, ચાહે ક્રીતકૃત હોય જ્યારે તે પરગતિમા જાય છે તો નરક અને તીર્યંચગતિમા જઈને અનત દુખોને ભોગવતો રહે છે ॥૪૭।

"દુશ્ચરિત્રથી જ દુર્ગતિ પ્રાપ્ત થાય છે" તેના માટે કહે છે—"न त" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—कंठछित्ता-कण्ठच्छेत्ता ગળાને કાપનારો अरी-अरि શત્રુ त न करेइ-त न करोति એ અનર્થ નથી કરતો કે, ज से अप्पणिया दुरप्पया करेइ-य तस्य आत्मना दुरात्मता करोति જેવા અનર્થને તેવી આ આત્મીય દુષ્ટાચારરૂપ પ્રવૃત્તિ કરે છે આ વાત से-स તે એ સમયે नाहिई-ज्ञास्यति જાણી શકાશે કે જ્યારે તે दयाविहूणो-दयाविहीन સયમ અનુષ્ઠાન વર્જીત દ્રવ્યમુનિ मुच्चुमुह तु-

तापेन=हा ! मया दुष्ठुकृतम् इत्येव रूपेण पश्चात्तापेन युक्तः सन् स्वदौरात्म्य फल ज्ञास्यति=अनुभविष्यति। मरणसमयेऽतिमन्दधर्मस्यापि धर्माभिप्रायोत्पत्ति दर्शनादेव कथनम्। यतश्च दुरात्मा अनर्थहेतु, पश्चात्तापहेतुश्च, तस्मात् पूर्वमेव सा त्याज्येति भाव ॥४८॥

मृत्यु पत्ते-मृत्युमुख तु प्राप्तः) मृत्यु के मुख मे प्राप्त होगा। मरण समय मे अतिमद धर्मवाले प्राणी के लिये भी धर्म के अभिप्राय की उत्पत्ति देखी जाती है। इसलिये ऐसा कहा गया है कि (पच्छाणु तावेण नाहिई-पश्चात् अनुतापेन ज्ञास्यति) वह द्रव्यमुनि 'मैने बहुत बुरा किया' इस प्रकार के पश्चात्ताप से युक्त होकर मृत्यु के समय अपने दौरात्म्य के फल को जान सकेगा।

भावार्थ—यह द्रव्यलिङ्ग रूप दुरात्मा शत्रु से भी अधिक भयकर काम करती है। कण्ठच्छेद करने वाला शत्रु एक ही भव म पर्यायका विघातक होने से दुःखदायी होता है परन्तु यह दुरात्मा तो इस जीवको भव २ में दु ख देनेवाली होती है। यह बात यह द्रव्यलिङ्गी मुनि उस समय जान सकेगा कि जब इसकी मृत्यु का अवसर उपस्थित होगा तभी यह "मैंने अच्छी बात नहीं की-बहुतबुरा किया जो इस दुरात्मता के पल्ले पडा रहा' इस प्रकार पश्चात्ताप करेगा। तात्पर्य यह है कि इस दुरात्मता का परिहार मोक्षार्थियों को सब से पहिले ही करदेना चाहिये। क्यो कि यह अनर्थ की हेतु एव पश्चात्ताप की कारण है ॥४८॥

पत्ते-मृत्युमुख तु प्राप्तः મૃત્યુના મુખમા જશે મરણ સમયે અતિ મદ ધર્મવાળો પ્રાણી માટે પણ ધર્મના અભિપ્રાયની ઉત્પત્તિ જોવાય છે આ કારણે એવુ કહેવામા આવેલ છે કે, पच्छाणुतावेण नाहिई—पश्चात् अनुतापेन ज्ञास्यति તે દ્રવ્યમુનિ "મે ઘણુ જ ખરાબ કર્યું છે," આ પ્રકારનો પશ્ચાત્તાપ કરી મૃત્યુ સમયે પોતાની દુરાચારી કર્મના ફળને જાણી શકશે

ભાવાર્થ—એ દ્રવ્યલિંગી દુરાત્મા શત્રુથી પણ અધિક ભયકર કામ કરે છે ગળુ કાપનાર શત્રુ એકજ ભવમા પર્યાયનો વિઘાતક હોવાથી દુખદાયી બને છે પરતુ આ દુરાત્મા તો આ જીવને ભવોભવમાં દુખ આપનાર બને છે આ વાત એ દ્રવ્યલિંગી મુનિ એ સમયે જાણી શકશે કે, જ્યારે એના મૃત્યુનો સમય આવી લાગશે ત્યારે તે "મે આ સારૂ કામ નથી કર્યું ઘણુ જ ખરાબ કર્યું કે આ દુરાત્મતાની જાળમા પડી રહ્યો" આ પ્રકારનો પશ્ચાત્તાપ કરશે તાત્પર્ય એ છે કે, આ દુરાત્માનો પરિહાર મોક્ષાર્થીઓએ સૌથી પહેલા જ કરી લેવો જોઈએ કેમકે, તે અનર્થના હેતુ અને પશ્ચાત્તાપનુ કારણ છે ॥૪૮॥

यस्तु मरणसमयेऽपि स्वदुरात्मता न जानाति तस्य का गतिर्भवतीत्याह--

मूलम्—

निरट्ठिया णग्गरुई उ तस्स, जे उत्तमट्ठे विवज्जासमेई ।
इमे वि से नत्थि परे वि लोए, दुहओ वि से झिज्जइ तत्थ लोए ॥४९॥

छाया—निरर्थिका नाग्न्यरुचिस्तु तस्य, य उत्तमार्थे विपर्यासमेति।
अयमपि तस्य नास्ति परोऽपि लोक', द्विधाऽपि स क्षीयते तत्र लोके ॥४९॥

टीका—'निरट्ठिया' इत्यादि।

हे राजन्! य उत्तमार्थे=उत्तमः-उत्कृष्टतमः अर्थ:=मोक्षरूपो यस्मात्स तस्मिन् श्रुतचारित्रलक्षणे धर्मे विपर्यासं=मोहवशेन विपरीतभावम् एति=प्राप्नोति, तस्य द्रव्यलिङ्गिनो नाग्न्यरुचि:= नाग्न्ये= श्रामण्ये रुचिरभिलाषो निरर्थिकैव= व्यर्थैव। निरर्थकत्वमेव दर्शयति-'इमे वि' इत्यादि-तस्य द्रव्यलिङ्गिनोऽयमपि प्रत्यक्षो लोको नास्ति-मोहप्रमादादिपारवश्येन शरीरक्लेशहेतुकेशलुञ्चनादि सेवनस्यापि निरर्थकत्वात्। न केवलमयमेव, लोको नास्ति, किन्तु तस्य परोऽपि

जो मरण समय में भी अपनी दुरात्मा को नहीं जानता है उसकी क्या गति होती है? सो कहते है- 'निरट्ठिया' इत्यादि।

अन्वयार्थ--हे राजन्! (जे-यः) जो मुनि (उत्तमट्ठे विवज्जास एइ-उत्तमार्थे विपर्यास एति) उत्तमार्थ मे श्रुतचारित्ररूप धर्म में-मोह के वश से विपरीत भावको प्राप्त होता है (तस्स णग्गरुई निरट्ठिया-तस्य नाग्न्य रुचिः निरर्थिका) उसमुनि की-द्रव्यलिंगी साधुकी-नाग्न्य-श्रामण्य मे रुचि-अभिलाषा व्यर्थ ही जाननी चाहिये। (इमेवि से नत्थि-अयमपि तस्य नास्ति) तथा यह प्रत्यक्षीभूत लोक भी उसका नहीं सधता है केवल

જે મરણ સમયે પણ પોતાના દુરાત્માને જાણતો નથી તેની શુ ગતિ થાય છે તેને કહે છે—निरट्ठिया" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે રાજન્! जे-ये જે મુનિ उत्तमट्ठे विवज्जास एइ-उत्तमार्थे विपर्यास एति ઉત્તમ અર્થમા શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મમા-મોહના વશથી વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે तस्स णग्गरुई निरट्ठिया-तस्य नाग्न्यरुचि' निरर्थिका દ્રવ્ય લિંગી સાધુની-નાગ્ન્ય-શ્રામણ્યમા રૂચી-અભિલાષા વ્યર્થજ જાણવા જોઈએ इमे वि से नत्थि-अयमपि तस्य नास्ति તથ આ પ્રત્યક્ષભૂત લોક પણ તેનુ સધાતુ નથી ફકત

लोको नास्ति–कुगतिगमनात्। इत्थ स धर्मभ्रष्टो द्रव्यलिङ्गी तत्र=उभयलोकाभावे सति लोके=जगति द्विधाऽपि=ऐहिकपारलौकिकार्थाभावेन 'झिज्झइ' क्षीयते= ऐहिकपारलौकिकार्थे समाराधकान् मयतान् विलोक्य धिङ् मामुभयभ्रष्टमिति चिन्तयाऽनुतापमनुभवतीति भाव. ॥४९॥

यही बात नहीं है किन्तु (परे वि लोए तस्स नत्थि–परेऽपि लोकः तस्य नास्ति) परभव भी उसका बिगड जाता है। कारण कि ऐसे जीव का कुगति मे पतन होता है इसलिये। मोहप्रमाद आदि की परवशता से केशलुचन आदि का करना केवल शारीरिक क्लेशस्वरूप होने से यह लोक उसका बिगडा हुआ ही जानना चाहिये। (दुहओ वि से झिज्झइ तत्थलोए–द्विधाऽपि स क्षीयते तत्र लोके) इस प्रकार धर्मभ्रष्ट वह द्रव्य लिङ्गी मुनि इस ससार में ऐहिक एव पारलौकिक दोनों प्रकार के अर्थ के अभाव से अपने आप पश्चात्ताप का पात्र बन जाता है।—

भावार्थ—जो मुनि श्रुतचारित्र रुप धर्म में विपरीत भाव धारण करता है उसका साधु होना व्यर्थ है। क्योंकि इस स्थिति में उसके दोनों लोक बिगड जाते हैं। जब यह ऐहिक एवं पारलौकिक अर्थ के समाराधक अन्य साधुजनों को देखता है तो इस प्रकार की चिन्ता से कि–"मुझे धिक्कार है मेरे तो दोनों ही लोक बिगड चुके है" रात-दिन पश्चात्ताप करता है ॥४९॥

એજ વાત નથી પરતુ परलोए तस्स नत्थि–परलोको तस्य नास्ति તેનો પરભવ પણ બગડી જાય છે કારણ કે, એવા જીવનુ કુગનિમા પતન થાય છે કારણ કે મોહ પ્રમાદ આદિની પરવશત થી કેશ લોચન આદિનુ કરવુ કેવળ શારીરિક ક્લેશ હોવાથી આ લોક તેનો બગડેલોજ જાણવો જોઇએ दुहओ वि से झिज्झइ तत्थ लोए– द्विधाऽपि स क्षीयते तत्र लोके આ પ્રકારની ધર્મભ્રષ્ટ એ દ્રવ્યલિંગી મુનિ આ સસારમા ઐહિક અને પારલૌકિક બન્ને પ્રકારના અર્થના અભાવથી પોતેજ પોતાની જાતે પશ્ચાત્તાપને પાત્ર બની જાય છે

ભાવાર્થ—જે મુનિ શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મમા વિપરીત ભાવ ધારણ કરે છે તેમનુ સાધુ થવુ વ્યર્થ છે કેમકે આવી સ્થિતીમા તેમના બન્ને લોક બગડી જાય છે જ્યારે આ અહિક પારલૌકિક અર્થના સમારાધક અન્ય સાધુજનોને જુએ તો એવા પ્રકારની ચિતાથી કે, "મને તો ધિક્કાર છે મારા તો બન્ને લોક બગડી ચુકેલ છે" રાત દિવસ પશ્ચાત્તાપ કરે છે ॥૪૯॥

कथमनुतापमनुभवत्यसौ इति सदृष्टान्तमाह--

मूलम्—

एमेव जहाछंदकुसीलरूवे, मग्गं विराहित्तु जिणुत्तमाणं।
कुररी विवा भोगरसाणुगिद्धा, निरट्ठसोया परितावमेइ ॥५०॥

छाया—एवमेव यथाच्छन्दकुशीलरूपो, मार्गं विराध्य जिनोत्तमानाम्।
कुररीव भोगरसानुगृद्धा, निरर्थशोका परितापमेति ॥५०॥

टीका—'एमेव' इत्यादि।

एवमेव=उक्तरूपेणैव महाव्रतास्पर्शादिना प्रकारेण यथाच्छन्दकुशीलरूप-यथाच्छन्दा=स्वरुचिकल्पिताचारा, कुशीलाः=कुत्सितशीलाः पार्श्वस्थाः परतीर्थिकादयो वा, तेषां रूपमिव=स्वभाव इव रूपं=स्वभावो यस्य स तथा, जिनोत्तमानां=तीर्थकराणां मार्गं=श्रुतचारित्रलक्षणं मार्गं विराध्य=खण्डयित्वा भोगरसानुगृद्धा भोगानां=जिह्वास्वाददायकानां मांसानां रसे=आस्वादे अनुगृद्धा=लोलुपा, तथा हृते भोगे-निरर्थशोका=निरर्थं=निष्प्रयोजनः शोको यस्याः सा तथा, कुररीव=कुररीपक्षिणीव परितापं=सन्तापम् एति=प्राप्नोति। अयं भावः-यथाऽऽ

वह किस प्रकार पश्चात्ताप का अनुभव करता है सो दृष्टान्त द्वारा कहते हैं—'एमेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(एमेव-एवमेव) इस पूर्वोक्त प्रकार से ही-महाव्रतों के नहीं पालने आदि प्रकार से ही (जहाछंदकुसीलरूवे-यथाच्छन्द-कुशीलरूप) स्वरुचिकल्पित आचार वालों के तथा कुत्सितशीलवालों-पार्श्वस्थ अथवा परतीर्थिक आदिजनों के स्वभाव जैसे स्वभाववाला यह द्रव्यलिङ्गी (जिणुत्तमाण मग्गं विराहित्तु-जिनोत्तमानां मार्गं विराध्य) तीर्थंकरों के श्रुतचारित्ररूप मार्ग का विराधना करके (भोगरसाणुगिद्धा कुररीविवानिरट्ठसोया परितावमेइ-भोगरसानुगृद्धा कुररीव निरर्थशोका परितापम् एति) जिह्वा के लिये आस्वाद दायक मांस के आस्वाद मे गृद्ध

એ કયા પ્રકારનો પશ્ચાતાપ કરે છે એને દૃષ્ટાંત દ્વારા સમજાવે છે—"एमेव" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—एमेव-एवमेव આ પૂર્વોક્ત પ્રકારથી જ-મહાવ્રતોને ન પાળવા આદિ પ્રકારથી जहाछंद कुसीलरूवे-यथाच्छन्दकुशीलरूप સ્વરૂચિકલ્પી આચાર વાળાના તથા કુત્સિત શીલવાળ-પાર્શ્વસ્થ અથવા પરતીર્થિક આદિજનોના સ્વભાવ જેવા સ્વભાવવાળાએ દ્રવ્યલિંગી जिणुत्तमाण मग्ग विराहित्तु-जिनोत्तमाना मार्गं विराध्य તીર્થંકરોના શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મની વિરાધના કરીને भोगरसाणुगिद्धा कुररी विवा निरट्ठसोया परितावमेइ-भोगरसानुगृद्धा कुररीव निरर्थशोका परितापमेति

मिप लुब्धा कुररी स्वमुखगृहीत मांसखण्ड तन्त्रऽन्यपक्षिणा प्रसह्य गृहीत विला क्य आमिषास्वादलोलुपतया सन्ताप करोति, न च तत्प्रतीकार कर्तुं समर्था भवति, न चान्यः कश्चित्तद्विपत्तिप्रतीकार-करोति, एवमेवासौ द्रव्यलिङ्गी ऐहलौकिकापायमाप्तो सन्ताप करोति, न च तत्प्रतीकार क॰ समर्थो भवति, न चान्य कश्चित्तद्विपत्प्रतीकारकरणे समर्थो भवति। एतादृशस्य द्रव्यलिङ्गिनः स्वपर परित्राणकरणासमर्थतयाऽनाथत्व विज्ञेयमिति ॥५०॥

बनी हुई पश्चात् छीने जाने पर व्यर्थ शोक करने वाली कुररी पक्षिणी की तरह परिताप को प्राप्त करता रहता है।

भावार्थ—महाव्रतों के पालन करने के स्वाद से सर्वथा वचित वह द्रव्यलिङ्गी मुनियथाच्छद एव कुशीलों की तरह जिनमार्ग की विराधना करता है। पश्चात् जब ऐहलौकिक एव पारलौकिक अर्थ की आपत्ति उपस्थित होती है तव प्रतीकार करने के लिये समर्थ न हो सकने के कारण केवल पश्चात्ताप ही किया करता है। इस परिस्थिति मे और कोई ऐसा नही होता है जो इसको सहायता प्रदान करसके जिस प्रकार कुररी पक्षिणी मास रस के आस्वाद करने मे गृद्ध बनकर जब मास का टुकडा को मुह मे दवाकर चलती है तव उसका वह टुकडा दूसरे पक्षी छीन लेते हैं तब यह स्वाद की लोलुपता से केवल दुःख का ही अनुभव करती है उसका प्रतीकार नहीं कर सकती है और न कोई और दूसरा उसकी इस विपत्ति में सहायक ही होता है। इस प्रकार स्व

જીભનો આસ્વાદ લેવા માટે માસના આસ્વાદમા ગૃદ્ધ બનેલ અને પછીથી ખુચવી લેવાથી વ્યર્થ શોક કરવાવાળી કુરરી પક્ષિણીની માફક પરિતાપને પામે છે

ભાવાર્થ—મહાવ્રતોના પાલન કરવાના માર્ગથી સર્વથા વચિત એવા એ દ્રવ્ય લિગી મુનિ યથાચ્છદ અથવા કુશીલોની માફક જીન માર્ગની વિરાધના કરે છે પછીથી જ્યારે ઇહલૌકિક અને પારલૌકિક અર્થની આપત્તિ ઉપસ્થિત થાય છે ત્યારે પ્રતીકાર કરવા માટે સમર્થ ન થઈ શકવાના કારણે કેવળ પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે આવી પરિસ્થિતિમા તેનો કોઇ એવો સહાયક હોતો નથી કે, જે તેને સહાયતા આપી શકે જે પ્રમાણે કુરરી પક્ષિણી માસ રસનો આસ્વાદ કરવામા ગૃદ્ધ બની જ્યારે માસના ટુકડાને મોઢામા દબાવીને ચાલે છે અને તેનો તે ટુકડો બીજુ પક્ષી તેની પાસેથી ઝુટવી લે છે ત્યારે તે સ્વાદની લોલુપતાથી ફક્ત દુ ખનો અનુભવજ કરતી રહે છ તેનો પ્રતીકાર કરી શકતી નથી અને બીજુ કોઈ તેની એ આપત્તિમા

अथ यत्कर्तव्य तदुपदिशति—

मूलम्—

सुच्चाण मेहावि सुभासियं इमं, अणुसासण णाणगुणोववेयं ।
मग्ग कुसीलाण जहाय सव्व, महानियठाण वए पहेणं ॥५१॥

छाया—श्रुत्वा मेधाविन् ! सुभाषितमिदम् अनुशासन ज्ञानगुणोपपेतम् ।
मार्ग कुशीलाना हित्वा सर्वं, महानिर्ग्रन्थाना व्रजे पथा ॥५१॥

टीका—'सुच्चाण' इत्यादि ।

हे मेधाविन्=धारणाबुद्धीयुक्त, राजन् ! वीतरागेण सुभाषित सुष्ठुतया=याथातथ्येन भाषित=ज्ञानगुणोपपेत=ज्ञानस्य यो गुणो विरतिलक्षणस्तेन उपपेत=युक्तम्, यद्वा—ज्ञानेन=पञ्चविधेन गुणेन=गुणेन=विरतिलक्षणेन च उपपेत=युक्तम्, इदम्=अनन्तरोक्तम् अनुशासन श्रुत्वा, कुशीलाना च सर्व मार्ग हित्वा=त्यक्त्वा, महानिर्ग्रन्थाना=महासाधूना पथा=मार्गेण व्रजे =गच्छेः ॥५१॥

पर के परित्राण करने में असमर्थ होने की वजह से यह द्रव्य लिंगी का अनाथपना जानना चाहिये ॥५०॥

अब कर्तव्य कहते है—'सुच्चाण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(मेहावि-मेधाविन्) हे धारणा बुद्धि सपन्न राजा वीत राग द्वारा (सुभासिय-सुभाषितम्) यथातथ्यरूप कथित तथा (णाण-गुणोववेय-ज्ञानगुणोपपेतम्) ज्ञान के विरति लक्षणरूप गुण से अथवा पचविध विरति लक्षण गुण से युक्त (इम-इदम्) यह—अनन्तरोक्त (अणु-सासण-अनुशासनम्) अनुशासनको (सुच्चाण-श्रुत्वा) सुन करके तथा (कुसीलाण सव्व मग्ग जहाय-कुशीलाना सर्वं मार्गं हित्वा) कुशीलो के समस्त मार्ग का परित्याग कर के तुम (महानियठाणपहेण वहे-

---

તેને મદદ કરનાર બનતુ નથી આ પ્રકારથી સ્વપરનુ પરિત્રાણ કરવામા અસમર્થ હોવાના કારણે તે દ્રવ્યલિગીનુ અનાથપણુ જાણવુ જોઈએ, ॥૫૦॥

હવે કર્તવ્યને કહે છે—"सुच्चाण" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—मेहावि-मेधाविन् હે ધારણા બુદ્ધિ સપન્ન રાજા ! વીતરાગ તરફથી सुभसिय-सुभाषितम् યથાતથ્ય રૂપ કહેવાયેલા તથા णाणगुणोववेयम्-ज्ञानगुणोपपेतम् જ્ઞાનના વિરતિ લક્ષણ રૂપ ગુણથી અથવ પચવિધ વિરતિ લક્ષણ ગુણથી યુક્ત इद-इदम् આ અનન્તરોક્ત अणुसासण-अनुशासनम् અનુશાસનને सुच्चाण-श्रुत्वा સાભળીને તથા कुशीलाण सव्व मग्ग जहाय-कुशीलाना सर्वं मार्ग हित्वा કુશીલોના સઘળા માર્ગોનો પરિત્યાગ કરીને તમો महानियठाण पहेण वहे महानिर्ग्रन्थाना पथा व्रजे

महानिर्ग्रन्थमार्गगमनस्य यत्फलं तदुच्यते—

मूलम्—

चरित्तमायारगुणन्निए तओ, अणुत्तरं संजमं पालियाण।
निरासवे संखवियाण कम्मं, उवेइ ठाणं विउलुत्तमं धुवं ॥५२॥

छाया—चारित्राचारगुणान्वितस्ततः, अनुत्तरं संयमं पालयित्वा।
निरास्रवः संक्षपय्य कर्म, उपैति स्थानं विपुलोत्तमं ध्रुवम् ॥५२॥

टीका—'चरित्त' इत्यादि।

चारित्राचारगुणान्वितः=चारित्रस्य आचारः=आचरणम्-आसेवनं स एव गुणस्तेन अन्वितो=युक्त, यद्वा-चारित्राचारः=चारित्रासेवन, गुणो=ज्ञान, ताभ्या-मन्वितो=युक्तः साधुः तत =महानिर्ग्रन्थमार्गगमनात्-अनुत्तरं=प्रधानं संयमं= यथाख्यातचारित्रात्मकं पालयित्वा= आसेव्य, निरास्रवः=प्राणातिपाताद्यास्रव-

---

महानिर्ग्रन्थाना पथा व्रजे.) महानिर्ग्रन्थों के मार्ग से चलो इस गाथा द्वारा यह प्रकट किया गया है कि इस सब कथन को सुनकर हे राजन्! तुम्हारा अब क्या कर्तव्य है-अनाथीमुनिराज श्रेणिक महाराज से कह रहे हैं कि-वीतराग प्रभु द्वारा निर्दोषरीति से कथित इस ज्ञानगुणोपपेत अनुशासन को सुनकर तुम अब कुशीलों के मार्ग का परित्याग करते हुए महानिर्ग्रन्थों के मार्गका अनुसरण करो। इसी में तुम्हारी भलाई है ॥५१॥

महानिर्ग्रन्थ के मार्ग में चलने का फल कहते हैं—'चारित्त' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(चारित्तमायारगुणन्निए-चारित्राचारगुणान्वितः) चरित्रके आचरणरूप गुण से संपन्न अथवा चारित्र सेवन एवं ज्ञान रूप-गुण से अन्वित साधु (तओ-ततः) महानिर्ग्रन्थ के मार्ग पर चलने से (अणुत्तरं संजमं पालियाण-अनुत्तरं संयमं पालयित्वा) प्रधान संयम-

---

મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગથી ચાલો આ ગાથા દ્વારા એ પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે કે, આ સઘળી વાતો સાંભળીને હે રાજન્! તમારૂં હવે શું કર્તવ્ય છે-અનાથી મુનિ રાજ શ્રેણીક મહારાજને કહી રહેલ છે કે વીતરાગ પ્રભુદ્વારા કહેવાયેલા આ જ્ઞાન ગુણોપપેત અનુશાસનને સાંભળીને તમો હવે કુશીલોના માર્ગનો પરિત્યાગ કરીને મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગનું અનુસરણ કરો એમાં જ તમારી ભલાઇ છે ॥૫૧॥

મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગમાં ચાલવાના ફળને કહે છે—"चरित्त" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—चरित्तमायारगुणन्निए—चारित्रमाचारगुणान्वित ચારિત્રના આચરણ રૂપગુણથી સંપન્ન અથવા ચારિત્રસેવન અને જ્ઞાનરૂપ ગુણથી અન્વિત સાધુ तओ—तत મહાનિર્ગ્રન્થના માર્ગ ઉપર ચાલવાથી अणुत्तर संजम पालियाण—अनु

रहित' सन् कर्म=ज्ञानावरणीयादिक सक्षपय्य=क्षयं नीत्वा विपुलोत्तम=विपुलम्-अनन्तानामपि तत्रावस्थितेः, उत्तमम्=उत्कृष्टतमं प्रधानत्वात्, उभयोः कर्मधारयः, ध्रुवं=नित्यं स्थान=मुक्तिपदाख्यं स्थानम् उपैति=प्राप्नोति। 'चारित्तमायार' इत्यत्र मकारो प्राकृतत्वात् ॥५२॥

अथोपदेशमुपसंहरन्नाह--

मूलम्—

एवुग्गदंते वि महातवोधणे महामुणी महापइण्णे महायसे।
महानियंठिज्जमिणं महासुअं से काहए महया वित्थरेणं ॥५३॥

छाया--एवमुग्रदान्तो ऽपि महातपोधनो, महामुनिः महाप्रतिज्ञो महायशाः।
महानिर्ग्रन्थीयमिदं महाश्रुतं, स कथयति महता विस्तरेण ॥५३॥

टीका--'एवुग्गदंते' इत्यादि।

उग्रदान्तः उग्रश्चासौ दान्तश्चेति कर्मधारयः, उग्रः कर्मशत्रु मृत्युग्ररूपत्वात्,

यथाख्यात चारित्र-का पालन करके (निरासवे-निरास्रवः) प्राणातिपात आदि द्वारा होने वाले आस्रव से रहित होता हुआ (कम्मं सखविया ण-कर्म सक्षपय्य) ज्ञानावरणीयादिक कर्मों को क्षपित करके (विउलुत्तमं धुवं ठाणं उवेइ-विपुलोत्तमं ध्रुवं स्थानं-उपैति) विस्तृत-अनन्तसिद्धों का भी उसमें अवस्थान होने से विशाल-तथा प्रधान होने से सर्वोत्कृष्ट ऐसे नित्य -अविचलित मुक्तिपद नामक स्थान को प्राप्त कर लेता है।—

भावार्थ—जो मुनि चारित्राचार गुणान्वित होकर यथाख्यात चारित्र का पालन करता है वह निरास्रव हो कर ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का विनाश कर विपुल, उत्तम एवं ध्रुव मुक्तिस्थानमें जाकर विराजमान हो जाता है ॥५२॥

त्तरं संयमं पालयित्वा પ્રધાન સંયમ-યથાખ્યાત ચારિત્રનું પાલન કરીને निरासवे-निरास्रवः પ્રાણાતિપાત આદિ આસ્રવથી રહિત બનીને कम्मं सखविया ण-कर्म सक्षपय्य જ્ઞાનાવર્ણીયાદિક કર્મોને ક્ષપિત કરીને विउलुत्तमं धुवं ठाणं उवेइ-विपुलोत्तमं ध्रुवं स्थानं उपैति વિસ્તૃત-અનન્ત સિદ્ધોનું પણ તેમાં અવસ્થાન હોવાથી વિશાળ-તથા પ્રધાન હોવાથી સર્વોત્કૃષ્ટ એવા નિત્ય અવિચલિત મુક્તિપદ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત કરી લે છે

ભાવાર્થ—જે મુનિ ચારિત્રાચાર ગુણાન્વિત બનીને યથાખ્યાત ચારિત્રનું પાલન કરે છે તે નિરાસ્રવ બનીને જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો વિનાશ કરીને વિપુલ ઉત્તમ અને ધ્રુવ મુક્તિ સ્થાન ઉપર જઈને બીરાજમાન થઈ જાય છે ॥૫૨॥

महानिर्ग्रन्थमार्गगमनस्य फलमाह—

मूलम्—

चरित्तमायारगुणन्निए तओ, अणुत्तरं संजमं पालियाण।
निरासवे संखवियाण कम्मं, उवेइ ठाणं विउलुत्तमं धुवं ॥५२॥

छाया—चारित्राचारगुणान्वितस्ततः, अनुत्तरं संयमं पालयित्वा।
निरास्रवः संक्षपय्य कर्म, उपैति स्थानं विपुलोत्तमं ध्रुवम् ॥५२॥

टीका—'चरित्त' इत्यादि।

चारित्राचारगुणान्वितः=चारित्रस्य आचारः=आचरणम्-आसेवनं स एव गुणस्तेन अन्वितो=युक्तः, यद्वा-चारित्राचारः=चारित्रासेवनं, गुणो=ज्ञानं, ताभ्यामन्वितो=युक्तः साधुः ततः=महानिर्ग्रन्थमार्गगमनात्-अनुत्तरं=प्रधानं संयमं=यथाख्यातचारित्रात्मकं पालयित्वा= आसेव्य, निरास्रवः=प्राणातिपाताद्यास्रव-

महानिर्ग्रन्थानां पथा व्रजे.) महानिर्ग्रन्थों के मार्ग से चलो इस गाथा द्वारा यह प्रकट किया गया है कि इस सब कथन को सुनकर हे राजन्! तुम्हारा अब क्या कर्तव्य है—अनाथीमुनिराज श्रेणिक महाराज से कह रहे हैं कि—वीतराग प्रभु द्वारा निर्दोषरीति से कथित इस ज्ञानगुणोपपेत अनुशासन को सुनकर तुम अब कुशीलों के मार्ग का परित्याग करते हुए महानिर्ग्रन्थों के मार्गका अनुसरण करो। इसी में तुम्हारी भलाई है ॥५१॥

महानिर्ग्रन्थ के मार्ग मे चलने का फल कहते है—'चारित्त' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(चारित्तमायारगुणन्निए—चारित्राचारगुणान्वित) चारित्रके आचरणरूप गुण से संपन्न अथवा चारित्र सेवन एवं ज्ञान रूप गुण से अन्वित साधु (तओ—तत) महानिर्ग्रन्थ के मार्ग पर चलने से (अणुत्तरं संजमं पालियाण—अनुत्तरं संयमं पालयित्वा) प्रधान संयम-

મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગથી ચાલો આ ગાથા દ્વારા એ પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે કે, આ સઘળી વાતો સાંભળીને હે રાજન્! તમારૂં હવે શું કર્તવ્ય છે—અનાથી મુનિરાજ શ્રેણીક મહારાજને કહી રહેલ છે કે વીતરાગ પ્રભુદ્વારા કહેવાયેલા આ. જ્ઞાન ગુણોપપેત અનુશાસનને સાંભળીને તમો હવે કુશીલોના માર્ગનો પરિત્યાગ કરીને મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગનું અનુસરણ કરો એમાં જ તમારી ભલાઈ છે ॥૫૧॥

મહાનિર્ગ્રન્થોના માર્ગમાં ચાલવાના ફળને કહે છે—"चरित्त" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—चरित्तमायारगुणन्निए—चारित्रमाचारगुणान्वित ચારિત્રના આચરણ રૂપગુણથી સંપન્ન અથવા ચારિત્રસેવન અને જ્ઞાનરૂપ ગુણથી અન્વિત સાધુ तओ—तत મહાનિર્ગ્રન્થના માર્ગ ઉપર ચાલવાથી अणुत्तर संजम पालियाण—अनु

रहित सन् कर्म=ज्ञानावरणीयादिकं संक्षपय्य=क्षय नीत्वा विपुलोत्तम=विपुलम्-अनन्तानामपि तत्रावस्थितेः, उत्तमम्=उत्कृष्टतमं प्रधानत्वात्, उभयोः कर्मधारयः, ध्रुवं=नित्यं स्थान=मुक्तिपदाख्यं स्थानम् उपैति=प्राप्नोति। 'चारित्तमायार' इत्यत्र मकारो प्राकृतत्वात् ।५२॥

अथोपदेशमुपसंहरन्नाह--

मूलम्—

एवुग्गदंते वि महातवोधणे, महामुणी महापइण्णे महाजसे ।
महानियंठिज्जमिणं महासुअं से काहए महया वित्थरेण ॥५३॥

छाया--एवमुग्रदान्तोऽपि महातपोधनो, महामुनिः महाप्रतिज्ञो महायशाः।
महानिर्ग्रन्थीयमिदं महाश्रुतं, स कथयति महता विस्तरेण ॥५३॥

टीका--'एवुग्गदंते' इत्यादि ।

उग्रदान्तः उग्रश्चासौ दान्तश्चेति कर्मधारयः, उग्रः कर्मशत्रु प्रत्युग्ररूपत्वात्,

---

यथाख्यात चारित्र-का पालन करके (निरासवे-निरास्रवः) प्राणातिपात आदि द्वारा होने वाले आस्रव से रहित होता हुआ (कम्मं खवियाण-कर्म संक्षपय्य) ज्ञानावरणीयादिक कर्मों को क्षपित करके (विउलुत्तमं धुवं ठाणं उवेइ-विपुलोत्तमं ध्रुवं स्थानं-उपैति) विस्तृत-अनन्तसिद्धों का भी उसमें अवस्थान होने से विशाल-तथा प्रधान होने से सर्वोत्कृष्ट ऐसे नित्य-अविचलित मुक्तिपद नामक स्थान को प्राप्त कर लेता है।—

भावार्थ—जो मुनि चारित्राचार गुणान्वित होकर यथाख्यात चारित्र का पालन करता है वह निरास्रव हो कर ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का विनाश कर विपुल, उत्तम एवं ध्रुव मुक्तिस्थानमें जाकर विराजमान हो जाता है ॥५२॥

त्तर संयमं पालयित्वा प्रधान संयम-यथाख्यात चारित्रनुं पालन करीने निरासवे-निरास्रवः प्राणातिपात आदि आस्रवथी रहित बनीने कम्मं खवियाण-कर्म संक्षपय्य ज्ञानावरणीयादिक कर्मोने क्षपित करीने विउलुत्तमं धुवं ठाणं उवेइ-विपुलोत्तमं ध्रुवं स्थानं उपैति विस्तृत-अनन्त सिद्धोनुं पण तेमां अवस्थान होवाथी विशाळ-तथा प्रधान होवाथी सर्वोत्कृष्ट एवा नित्य अविचलित मुक्तिपद नामना स्थानने प्राप्त करी ले छे

ભાવાર્થ—જે મુનિ ચારિત્રાચાર ગુણાન્વિત બનીને યથાખ્યાત ચારિત્રનું પાલન કરે છે તે નિરાસ્રવ બનીને જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોનો વિનાશ કરીને વિપુલ ઉત્તમ અને ધ્રુવ મુક્તિ સ્થાન ઉપર જઈને બીરાજમાન થઈ જાય છે ।૫૨।।

दान्त' इन्द्रिय नो इन्द्रियदमनात् महातपोधन'—तपांसि—अनशनादि द्वादशविधानि, तान्येव उत्कृष्टत्वान्महान्ति, महान्ति यानि तपांसि तान्येव धनानि यस्य स तथा, पुनः—महाप्रतिज्ञः=महती प्रतिज्ञा यस्य स तथा, स्वीकृतस्य संयमस्य याथातथ्येन परिपालनात् महाप्रतिज्ञत्वम्, अतिदृढव्रत इत्यर्थ, अत एव—महायशाः—महद् यशो स तथा—उत्कृष्टज्ञान—क्रियाराधनेन दिगन्तविश्रान्तकीर्तिरित्यर्थ, एतादृशः स महामुनि इदम्=अध्ययरहितोक्तम्—महानिर्ग्रन्थीय=महानिर्ग्रन्थेभ्यो हित महाश्रुत महता विस्तरेण सुविस्तृत यथा स्यात्तथा श्रेणिक प्रति कथयति=अवोचत्। वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवत्प्रत्ययः। अपि पादपूरणे ॥५३॥

अब अध्ययन का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'एवुग्गदंते' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(उग्गदंते—उग्रदान्त.) कर्म शत्रु के प्रति उग्र रूप होने से स्वय उग्र तथा इन्द्रिय एव मन के दमन करने से दान्त (महातवोधणे—महातपोधनः) अनशन आदि बारह प्रकार के महान् तपों के आराधक होने से महान् तपस्वी (महापइण्णे—महाप्रतिज्ञ) स्वीकृत सयम के यथावत् परिपालन से महाप्रतिज्ञ (महाजसे—महायशाः) इसी लिये महान् यशस्वी—उत्कृष्ट रूप से ज्ञान एव क्रिया की आराधना करने वाले होने की वजह से दिगन्त मे विस्तारित कीर्ति सपन्न ऐसे (से महामुणी—स. महामुनि) उन महामुनिराजने (इण महानियंठिज्जमहासुय—इद महानिग्रन्थीय महाश्रुतम्) यह महानिर्ग्रन्थीय—महानिर्ग्रन्थों के लिये हित-विधायक—महाश्रुत (वित्थरेण काहए—विस्तरेण—कथयति) श्रेणिक राजाके प्रति विस्तारसे कहा ॥५३॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે—"एवुग्ग दंते" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—उग्ग दंते—उग्र दान्त કર્મશત્રુના તરફ ઉગ્રરૂપ હોવાથી સ્વયં ઉગ્ર તથા ઇન્દ્રિય અને મનનું દમન કરવાથી દાન્ત महातवोधणे—महातपोधन અનશન આદિ બાર પ્રકારના મહાન તપોના આરાધક હોવાથી મહાન તપસ્વી महापइन्ने—महाप्रतिज्ञ. સ્વીકૃત સંયમના યથાવત્ પરિપાલનથી મહાપ્રતિજ્ઞ આ કારણે મહાન યશસ્વી ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી જ્ઞાન અને ક્રિયાની આરાધના કરવાવાળા હોવાના કારણે દિગંતમાં વિસ્તારિત કીર્તિસંપન્ન એવા से महामुणी—स महामुनि એ મુનિરાજે इण महानियंठिज्ज महासुय—इद महानिर्ग्रन्थीय महाश्रुतम् આ મહાનિર્ગ્રન્થીય—મહાનિર્ગ્રન્થો માટે હિતવિધાયક મહાશ્રુત वित्थरेण काहए—विस्तरेण कथयति શ્રેણિક રાજાને વિસ્તારથી કહી સંભળાવ્યું ॥૫૩॥

ततश्च—

मूलम्—तुट्ठो य सेणिओ राया, इणमाहु कयंजली।
अणाहत्तं जहाभूयं, सुट्ठु मे उवदंसियं ॥५४॥

छाया—तुष्टश्च श्रेणिको राजा, इदमाह कृताञ्जलिः।
अनाथत्वं यथाभूतं, सुष्ठु मे उपदर्शितम् ॥५४॥

टीका—'तुट्ठो' इत्यादि।

महामुनेर्वचनं श्रुत्वा तुष्टः श्रेणिको राजा कृताञ्जलिः सन् इदं=वक्ष्यमाणम् आह-उक्तवान् यदुक्तवांस्तदुच्यते-'अणाहत्तं' इत्यादिना। हे महामुने! भवता यथाभूतं=वास्तविकम् अनाथत्वं मे=मम सुष्ठु=सम्यक्प्रकारेण उपदर्शितं=प्रोक्तम् च शब्दः पूरणे ॥५४॥

किं च— मूलम्—

तुब्भं सुलद्धं खु मणुस्सजम्मं, लाभा सुलद्धा य तुमे महेसी।
तुब्भे सणाहा य सबंधवा य, जं भे ठिया मग्गि जिणुत्तमाणं ॥५५॥

छाया—युष्माभिः सुलब्धं खलु मनुष्यजन्म, लाभाः सुलब्धाश्च युष्माभिर्महर्षे।
यूयं सनाथाश्च, सबान्धवाश्च, यद्यूयं स्थिता मार्गे जिनोत्तमानाम् ॥५५॥

इसके बाद—'तुट्ठो य' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इस प्रकार अनाथिमुनिराज द्वारा अनाथपद की व्याख्या सुनकर (तुट्ठो-तुष्ट) प्रसन्न एवं संतुष्ट हुए (सेणिओ राया-श्रेणिक राजा) श्रेणिक राजा ने (कयंजली-कृताञ्जलिः) हाथ जोडकर उन अनाथी मुनि से (इणमाहु-इदमाह) इस प्रकार कहा कि-आपने (मे) मुझे (जहाभूयं अणाहत्तं-यथाभूतं अनाथत्वम्) वास्तविक अनाथपना (सुट्ठु-सुष्ठु) अच्छी तरह से (उवदंसियं-उपदर्शितम्) खुलाशा करके समझाया है ॥५४॥

ત્યારબાદ—"तुट्ठोय" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—આ પ્રકારે અનાથ મુનિરાજ દ્વારા અનાથપદની વ્યાખ્યાને સાંભળીને तुट्ठो-तुष्ट પ્રસન્ન અને સંતુષ્ટ બનેલા એવા सेणिओ राया-श्रेणिकः राजा એ શ્રેણિક રાજાએ कयंजली-कृताञ्जलिः હાથ જોડીને એ અનાથ મુનિને इणमाहु-इदमाह આ પ્રકારથી કહ્યું કે આપે मे-मे મને जहाभूयं अणाहत्तं-यथाभूतं अनाथत्वम् વાસ્તવિક અનાથપણું सुट्ठु-सुष्ठु સારી રીતે उवदंसियं-उपदर्शितम् ખુલાસો કરીને સમજાવેલ છે ॥૫૪॥

टीका—'तुब्भ' इत्यादि ।

हे महर्षे ! युष्माभि खलु=निश्चयेन मनुष्यजन्म सुलब्धम् । मनुष्यजन्मनो यत्फल ससारनिस्तरणरूप तद् भवद्भि• समुपलब्धमिति भाव: । च=पुन युष्माभि• लाभा:=वर्णरूपादि प्राप्तिरूपा धर्मविशेषप्राप्तिरूपा वा सुलब्धा =सुष्ठुतया प्राप्ता• । सुलब्धत्वे हेतुरुत्तरोत्तरगुणप्रकर्षता । च=पुन• हे महर्षे ! तत्त्वतो यूयमेव सनाथा सबान्धवाश्च स्थ, यद्=कारणात् यूय जिनोत्तमाना मार्गे=पथि स्थिता = सुश्रामण्यमुपगता इत्यर्थ• । सुलब्धजन्मत्वादौ जिनमार्गस्थिति हेतु ॥५५॥

किंच—

मूलम्—तं सिं णाहो अणाहाणं, सव्वभूयाण संजया ! ।
खामेमि ते महाभाग !, इच्छामु अणुसासिउ ॥५६॥

फिर राजा कहता है—'तुब्भ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महेसी-महर्षे) हे महाऋषि ! (तुब्भ माणुस्स जम्म सुलद्ध-युष्माभि' खलु मनुष्य जन्म सुलब्धम्) आपने इस मनुष्य जन्म को अच्छा जाना है अर्थात्-मनुष्य जन्म का जो फल होना चाहीये वह आपने प्राप्त कर लिया इसलिये आपका मनुष्यजन्म जाना सफल हो गया है तथा (तुब्भे-युष्माभि) आपने (लाभा सुलद्धा-लाभा सुलब्धा•) वर्ण रूपादि प्राप्ति रूप अथवा धर्मविशेष प्राप्ति रूप लाभों की सफलता प्राप्त कर उनको सुलब्ध बनाया है। तथा हे महामुनि (तुब्भे सणाहा सबधवा यूयम्-सनाथा• सबान्धवा) आप ही वास्तविक रूप मे सनाथ एव बान्धव-सहित है (ज तुब्भे-यद् यूयम्) क्यों कि जो आप (जिणुत्तमाण मग्गि ठिया-जिनोत्तमाना मार्गे स्थिता) जिनोत्तमों के मार्ग मे स्थिर हो रहे हैं ॥५५॥

પછી રાજા કહે છે—"तुब्भ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महेसी-महर्षे હે મહર્ષિ ! तुब्भ माणुस्स जम्म सुलद्ध-युष्माभि खलु मानुष्य जन्म सुलब्धम् આપે આ મનુષ્ય જન્મને સારી રીતે જાણેલ છે અર્થાત મનુષ્ય જન્મનુ જે ફળ થવુ જોઈએ તે આપે પ્રાપ્ત કરી લીધુ છે, આ કારણે આપનો મનુષ્ય જન્મ સફળ થઇ ગયેલ છે तुब्भे-युष्माभि આપે लाभा सुलद्धा-लाभाः सुलब्धा' વર્ણ રૂપાદિ પ્રાપ્તિરૂપ અથવા ધર્મ વિશેષ પ્રાપ્તિરૂપ લાભોની સફળતા પ્રાપ્ત કરી તેને સુલબ્ધ બનાવેલ છે તથા હે મહામુનિ ! तुब्भे सणाहा सबधवा-यूयम् सनाथा• सबाधवा• આપ જ વાસ્તવિક રૂપમા સનાથ અને બાધવ સહિત છો ज तुब्भे-यत् यूयम् કેમ કે, જે આપ जिणुत्तमाण मग्गिठिया-जिनोत्तमाना मार्गे स्थिता જીનના ઉત્તમમાં ઉત્તમ માર્ગમા સ્થિત થઇ ગયેલ છે ॥૫૫॥

छाया—त्वमसि नाथः अनाथाना, सर्वभूताना सयतः ! ।
क्षमयामि त्वया महाभाग !, इच्छामि अनुशासितुम् । ५६॥

टीका—'तसी' इत्यादि ।

हे सयत=हे मुने ! त्वम् अनाथाना=स्व स्व योगक्षेमकारिरहिताना सर्वभूताना=सर्वजीवाना नाथ =योगक्षेमकारकोऽसि, षट्कायजीवरक्षणे गृहीतव्रतत्वात् । हे महाभाग ! त्वयाऽह स्वापराध क्षमयामि । तथा–हे मुने ! भवतोऽहमात्मानमनुशासितु=शिक्षयितुमिच्छामि ॥५६॥

पुन क्षमापणामेव विशेषेणाह—

सूत्रम्—पुच्छिऊण मए तुज्झे, झाणविग्घो उ जो कओ ।
निमतिया य भोगेहि, त सव्व मरिसेहि मे ॥५७॥

छाया—पृष्ट्वा मया युष्माक, ध्यानविघ्नस्तु यः कृतः ।
निमन्त्रिताश्च भोगैः, तत्सर्व मृष्यत मे ॥५७॥

टीका—'पुच्छिऊण' इत्यादि ।

हे मुने ! पृष्ट्वा=प्रश्न कृत्वा मया युष्माक ध्यानविघ्न =ध्यानान्तरायस्तु

अब राजा महामुनि से खमाता है—'तसि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(सजया ?-सयत) हे मुनिराज ! (त अहाण सव्व भूयाणणाहोसि–त्व अनाथाना सर्वभूताना नाथः असि) अपने २ क्षेम योग से रहित अनाथों–सर्वभूतों के योग क्षेम कारक होने से आप एकमात्र नाथ है। (महाभाग ! खामेमि–महाभाग !–क्षमयामि) हे महा भाग ! मैं अपने अपराधों की क्षमा चाहता हू। तथा (अणुसासिउ इच्छामु–अनुशासितु इच्छामि) आप से अपने आप को अनुशासित होने की प्रार्थना करता हू ॥५६॥

फिर क्षमापना को विशेष रूपसे कहते हैं—'पुच्छिऊण' इत्यादि । मैंने

अन्वयार्थ—हे मुने ! (पुच्छिऊण–पृष्ट्वा) प्रश्न करके (मए–मया)

હવે રાજા મહામુનિને ખમાવે છે—"તસિ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सजया–सयत ! હે મહામુનિ ! त अहाण सव्वभूयाणणाहोसि–त्व अनाथाना सर्वभूताना नाथ असि પોતપોતાના ક્ષેમયોગથી રહિત અનાથો–સર્વ ભૂતોના યોગક્ષેમકારક હોવાથી આપ એક માત્ર નાથ છો महाभाग खामेमि–महाभाग क्षमयामि હે મહાભાગ હુ મારા અપરાધોની આપની પાસે ક્ષમા માગુ છુ તથા આપનાથી अणुसासिउ इच्छामु–अनुशासितु इच्छामि હુ મને અનુશાસિત થવાની પ્રાર્થના કરૂ છુ ॥૫૬॥

પછી ક્ષમાપનાને વિશેષ રૂપથી કહે છે—"पुच्छिऊण" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હે મુનિ ! पुच्छिउण–पृष्ट्वा પ્રશ્ન કરીને मए मया મે तुज्झो–

यःकृतः। च=पुन. भोगैर्यद्युय निमन्त्रिता'। हे भदन्त ! मे=मम त सर्वमप राध मृष्यत=क्षम ध्वम् ॥५७॥

सम्प्रत्य ध्ययनार्थंपसहारमाह—

मूलम्—एव थुणित्ताण स रायसीहो,-णगारसीहं परमाइ भत्तिए।
सओरोहो सपरियणो सबंधवो, धम्माणुरत्तो विमलेण चेयसा ॥५८॥
ऊससियरोमकूवो, काऊण यं पयाहिणं।
अभिवंदिऊण सिरसा, अइयाओ नराहिवो ॥५९॥

छाया—एवस्तुत्वा स राजसिंहः, अनगारसिंह परमया भक्त्या।
सावरोध सपरिजन सबान्धवो, धर्मानुरक्तो विमलेन चेतसा ॥५८॥
उच्छ्वसितरोमकूप., कृत्वा च प्रदक्षिणाम्।
अभिवन्द्य शिरसा, अतियातो नराधिप' ॥५९॥

टीका—'एव थुणित्ताण' इत्यादि।

सावरोध =सान्तःपुर सपरिजन =दासीदासादिवर्गसहित' सबान्धव = बन्धुवर्गसहितो राजसिंह.-राजा सिंहइव राजसिंहो मृगतुल्यापरनृपेषु तस्य सिंह

तुज्झे-युष्माकम्) आपके (जो-य) जो (ज्झाणविग्घो कओ-ध्यानविघ्न' कृत) ध्यान में विघ्न किया है तथा (भोगेहिं निमतिया-भोगै निमन्त्रिता) भोगों द्वारा आपको आमन्त्रित किया है, हे भदन्त! (मे-मे) मेरा (त सव्व-तत्सर्वम्) वह सब अपराध (मरिसेह-मृष्यत) आप क्षमा करें ॥५७॥

अब अध्ययन का उपसहार करते हैं—'एव' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सओरोहो-सावरोध) अन्त पुर सहित (सपरियणो-सपरिजन') दासीदास आदि परिजन सहित तथा (सबधवो-सबान्धव) बन्धुवर्ग सहित (स-स) वे (रायसीहो-राजसिंह) राजाओ मे सिंह जैसे (नराहिवो-नराधिप.) श्रेणिक राजा (परमाए भत्तिए-परमया भक्त्या) अति उत्कृष्ट भक्ति से (अणगारसीह-अनगारसिंहम्) अनगारों मे सिंह

युष्माकम् આપના जो-य. ધ્યાનમા ज्झाणविग्घो कओ-ध्यानविघ्न. कृत વિઘ્ન નાખેલ છે તથા भोगेहिं निमतिया-भोगै निमन्त्रिता ભોગો ભોગવવાના કાર્ય માટે આપને આમન્ત્રિત કરેલ છે હે ભદન્ત! આપ मे-मे મારા त सव्व-तत्सर्वम् એ સઘળા અપરાધોની मरिसेह-मृष्यत ક્ષમા કરો ॥૫૭॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસહાર કરે છે—"एव" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सओरोहो-सावरोध અન્ત પુર સહિત सपरियणो-सपरिजन દાસીદાસ આદિ પરિજન સહિત તથા सबधवो-सबान्धव બધુ વર્ગ સહિત स-स તે रायसीहो-राजसिंह રાજાઓમા સિંહ જેવા શ્રેણિક રાજા परमाए भत्तिए-

तुल्यपराक्रमवत्त्वात्, स नराधिप श्रेणिकः परमया=अत्युत्कृष्टया भक्त्या अनगार सिंहम्=अनगार सिंह इव त तथा, कर्ममृगान प्रति उग्रत्वादनगारस्य सिंहो पमत्वम् एवं=पूर्वोक्तप्रकारेण स्तुत्वा विमलेन=मिथ्यात्वमलरहितेन चेतसा मता धर्मानुरक्तः=धर्मानुरागयुक्तः अत एव उच्छ्वसितरोमकूपः–उच्छ्वसिताः=उद्भिन्ना रोमकूपा रोमरन्ध्राणि यस्य स तथा–रोमाञ्चितश्च सन प्रदक्षिणा कृत्वा, शिरसा अभिवन्द्य च स्वस्थानम् अतियातः=गतः ॥५८–५९॥

अथ महामुनिर्यत्कृतवांस्तदुच्यते--

मूलम्—इयरो वि' गुणसमिद्धो, तिगुत्तिगुत्तो तिदंडविरओय ।
विहंग इव विप्पमुक्को, विहरइ वसुंह विगयमोहो त्ति बेमि'' ॥६०॥

छाया—इतरोऽपि गुणसमृद्धः, त्रिगुप्तिगुप्तस्त्रिदण्डविरतश्च ।
विहग इव विप्रमुक्तो, विहरति वसुधां विगतमोह इति ब्रवीमि ॥६०॥

टीका--'इयरो वि' इत्यादि ।

अथ इतरोऽपिः,=अनाथि मुनिरपि गुणसमृद्धः=सप्तविंशतिसाधुगुणयुक्तः,

---

जैसे उन अनाथी मुनि की (एवं–एवम्) इस पूर्वोक्त प्रकार से (थुणित्ताण–स्तुत्वा) स्तुति करके (विमलेण चेयसा धम्माणुरत्तो–विमलेन चेतसा धर्मानुरक्तः) मिथ्यात्वमल से रहित होने से निर्मल चित्त द्वारा धर्मानुराग से युक्त हो गये। और उसी समय उन्होंने (ऊससिय रोमकूवो –उच्छ्वसितरोमकूपः) रोमाञ्चित शरीरवाले होते हुए बड़े आदर के साथ (पयाहिण काऊण–प्रदक्षिणा कृत्वा) उनकी प्रदक्षिणा पूर्वक। एवं प्रदक्षिणा करने के पश्चात् (सिरसा अभिवंदिऊण–शिरसा अभिवद्य) मस्तक झुकाकर वंदना करके (अइयाओ–अतियातः) अपनेपर वापिस गये ॥५८–५९॥

अब राजा के जाने पर अनाथी मुनिने क्या किया सो कहते हैं--

परमया भत्तया અતિ ઉત્કૃષ્ટ એવી ભક્તિથી अणगारसीह–अनगार सिंहम् અનગાર સિંહ જેવા એ અનાથી મુનિની एवं–एवम् આવી પૂર્વોક્ત પ્રકારથી थुणित्ताण–स्तुत्वा સ્તુતિ કરીને विमलेण चेयसा धम्माणुरत्तो–विमलेन चेतसा धर्मानुरक्त મિથ્યાત્વના મળથી રહિત બનવાથી નિર્મળ ચિત્તદ્વારા ધર્માનુરાગથી યુક્ત બની ગયા અને તે સમયે તેમણે ऊससियरोमकूवो–उच्छ्वसितरोमकूप રોમાંચિત શરીરવાળા થઈને ઘણા આદરની સાથે पयाहिण काऊण–प्रदक्षिणा कृत्वा તેમની પ્રદક્ષિણા કરી અને પ્રદક્ષિણા કરીને પછીથી सिरसा अभिवन्दिऊण–शिरसा–अभिवन्द्य મસ્તક નમાવીને વંદના કરીને अइयाओ–अतियात પોતાના સ્થાન ઉપર પાછા ગયા ॥૫૮॥૫૯॥

त्रिगुप्तिगुप्तः = मनोवाक्कायरूपगुप्तित्रयगुप्तः, त्रिदण्डविरतः=त्रिदण्डेभ्यो=मनोवाक्कायानामशुभव्यापारेभ्यो विरतः=दूरीभूतः, च=पुनः विहग इव=पक्षीव विप्रमुक्तः= क्वचिदपि प्रतिबन्धरहितः-अप्रतिबद्धविहार इति यावत् तथा-विगतमोहः= रागद्वेषरहितः सन् वसुधा=पृथिवीं विहरति=विचरतिस्म 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्यः ॥६०॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहूछत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां महानिर्ग्रन्थीय नाम विंशतितममध्ययनं सम्पूर्णम् ।

'इयरो वि' इत्यादि।

अन्वयार्थ--इधर (इयरो वि-इतरोऽपि) अनाथी मुनि भी (गुणसमिद्धो-गुणसमृद्धः) साधु के सत्ताईस गुणों से युक्त तथा तिगुत्तिगुत्तो-त्रिगुप्तिगुप्तः) मन, वचन एवं कायरूप गुप्तित्रय से गुप्त-सहित और (तिदंड विरओ-त्रिदण्डविरतः) मन, वचन, काय के-अशुभ व्यापाररूप दण्डों से रहित (विहग इव-विहग इव) पक्षी की तरह (विप्पमुक्को-विप्रमुक्तः)प्रतिबन्ध से रहित विगयमोहो-विगतमोहः) रागद्वेष से रहित-शान्तचित्त हो कर (वसुहं विहरइ-वसुधा विहरति) इस भूमण्डलपर विचरने लगे। (त्तिबेमि-इतिब्रवीमि) जैसा भगवान से सुना वैसा मै कहता हूं ॥६०॥

इस प्रकार यह बीसवां अध्ययन समाप्त हुआ ॥२०॥

રાજાના ગયા પછી અનાથી મુનિએ શું કર્યું તેને કહે છે—"इयरो वि" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—હવે આ તરફ इयरोवि-इतरोऽपि અનાથી મુનિ પણ गुणसमिद्धो-સાધુના સત્તાવીસ ગુણોથી યુકત તથા तिगुत्तिगुत्तो-त्रिगुप्तिगुप्तः મન, વચન, અને કાયરૂપ ગુપ્તિત્રયથી ગુપ્ત-સહિત અને त्रिदंडविरओ-त्रिदण्डविरतः મન, વચન, અને કાયાના અશુભ વ્યાપાર રૂપ દંડોથી રહિત विहगइव-विहगइव પક્ષીની માફક विप्पमुक्को-विप्रमुक्तः પ્રતિબંધોથી રહીત विगयमोहो-विगतमोहः રાગદ્વેષથી રહિત શાંત ચિત્ત બનીને वसुहं विहरइ-वसुधा विहरति આ ભૂમંડળ ઉપર વિચારવા લાગ્યા त्ति बेमि-इति ब्रवीमि જેવું ભગવાનની પાસેથી સાંભળ્યું છે તે જ હું કહું છું

આ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનું વીસમું અધ્યયન સંપૂર્ણ થયું ॥૨૦॥

॥ अथ एकविंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते ॥

उक्तं महानिर्ग्रन्थीयं नाम विंशतितममध्ययनम्। सम्प्रति समुद्रपालीयं नाम एकविंशतितममारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः-पूर्वस्मिन्नध्ययनेऽनेकविधमनाथत्वमुक्तम्। तच्च परिचिन्त्य एकान्तचर्यया चरितव्यम्। सा एकान्तचर्येह समुद्रपालदृष्टान्तेन प्रोच्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यैतस्याध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—चंपाए पालिए नाम, सावए आसि वाणिए।

महावीरस्स भगवओ, सीसे सो उ महप्पणो ॥१॥

छाया—चम्पायां पालितो नाम, श्रावक आसीद् वाणिजः।

महावीरस्य भगवतः, शिष्यः स तु महात्मनः ॥१॥

टीका—'चंपाए' इत्यादि।

अङ्गदेशे, चम्पायां नगर्यां पालितो नाम वाणिजः=वणिक् श्रावको देश

इक्कीसवां अध्ययन प्रारंभ—

बीसवां अध्ययन कहा गया है। अब यह इक्कीसवां समुद्रपालीय नामका अध्ययन प्रारंभ होता है। इसका संबंध बीसवें अध्ययन के साथ इस प्रकार से है, पूर्व अध्ययन में जो अनेक प्रकार की अनाथता कहने में आई है सो साधु का कर्तव्य है कि वह इस अनाथता का अच्छी तरह विचार कर एकान्तचर्या से विहार करे। वही एकान्तचर्या इस अध्ययन में समुद्रपाल के दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट की गई है। अतः इस संबंध से ही इस अध्ययन का प्रारंभ हुआ है। उसका यह सर्व-प्रथम सूत्र है—'चंपाए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—अंगदेश में (चंपाए-चंपायाम्) चंपा नाम की नगरी में (पालिए नाम-पालित नाम) पालित इस नाम का एक (वाणिए सावए

એકવીસમા અધ્યયનનો પ્રારંભ—

વીસમું અધ્યયન કહેવાઇ ગયું હવે આ એકવીસમા સમુદ્રપાલીય નામના અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે આ અધ્યયનનો વીસમા અધ્યયનની સાથેનો સંબંધ આ પ્રકારનો છે—પૂર્વ અધ્યયનમાં જે અનેક પ્રકારની અનાથતા કહેવામાં આવેલ છે તો સાધુનું કર્તવ્ય છે કે, તેમણે આ અનાથતાનો સારી રીતે વિચાર કરીને એકાન્તચર્યાથી વિહાર કરવો જોઇએ એ એકાન્તચર્યા આ અધ્યયનના સમુદ્ર પાલના દૃષ્ટાંતથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવેલ છે આથી એ સંબંધથી જ આ અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે એનું આ સર્વ પ્રથમ સૂત્ર છે—"चंपाए" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—અંગદેશમાં चंपाए-चंपायाम् ચંપા નામની નગરીમાં पालिए नाम-

विरत आसीत्। तु=पुनः स महात्मनः=महात्मनो भगवतो महावीरस्य शिष्य आसीत्। भगवन्निकटव्रतित्वस्य तेन प्रतिबोधितत्वात् ॥१॥

मूलम्--निग्गंथे पावयणे, सावए से विकोविए।
पोएण ववहरन्ते, पिहुंडं नगरमागए ॥२॥

छाया--नैर्ग्रन्थे प्रवचने, श्रावकः स विकोविदः।
पोतेन व्यवहरन्, पिहुण्डं नगरमागतः ॥२॥

टीका--'निग्गथे' इत्यादि।

नैर्ग्रन्थे=निर्ग्रन्थसम्बन्धिनि प्रवचने विकोविदः=विशिष्टः कोविदः=विदित जीवादिपदार्थः स पालितो नाम-श्रावकः पोतेन=प्रवहणेन व्यवहरन=व्यापार कुर्वन् पिहुण्ड नाम नगरम् आगतः ॥२॥

मूलम्--पिहुंडे ववहरंतस्स, वाणिओ देइ धूयरं।
तं ससत्तं पइगिज्झ, सदेसमह पत्थिओ ॥३॥

आसि-वणिज. श्रावक. आसीत्) वणिक श्रावक था (सो-स.) वह (महप्पणो-महात्मन) महात्मा (भगवओ-भगवतः) भगवान (महावीरस्स -महावीरस्य) महावीर प्रभुका (सीसे-शिष्य') शिष्य था ॥१॥

'निग्गथे' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(निग्गथे पावयणे-नैर्ग्रन्थे प्रवचने) निर्ग्रन्थ संबधी प्रवचन मे (विकोविए-विकोविदः) विशिष्ट-विद्वान (से सावए-स श्रावकः) वह श्रावक (पोएण ववहरते-पोतेन व्यवहरन्) जहाज से व्यापार करता हुआ (पिहुंड नगरमागए-पिहुण्डम् नगरम् आगत) पिहुण्ड नामके नगर मे आया ॥२॥

पालित नाम પાલિત એ નામનો એક वाणिए सावए आसि-वाणिज श्रावक आसीत् વણિક શ્રાવક હતા सो महप्पणो-स. महात्मा એ મહાત્મા भगवओ-भगवत ભગવાન મહાવીરના सीसे-शिष्य શિષ્ય હતા ॥૧॥

"निग्गथे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—निग्गथे पावयणे-नैर्ग्रथे प्रवचने નિગ્રન્થ સબધી પ્રવચનમા विकोविए-विकोविद विशिष्ट-विद्वान से सावए-स श्रावक એ શ્રાવક पोएण ववहरतो-पोतेन व्यहरन् જહાજથી વ્યાપાર કરતા કરતા पिहुड नगरमागए-पिहुण्डम् नगरम् आगत. પિહુણ્ડ નામના નગરમા પહોચ્યા ॥૨॥

छाया—पिहुण्डे व्यवहरते, वाणिजो ददाति दुहितरम्।
ता ससत्त्वां प्रतिगृह्य, स्वदेशमथ प्रस्थितः ॥३॥

टीका—'पिहुंडे' इत्यादि।

पिहुण्डे=पिहुण्डनगरे व्यवहरते=व्यापारं कुर्वते तस्मै पालिताय श्रावक वणिजे तद्गुणाकृष्टः कश्चिद् वाणिजो दुहितरं=पुत्रीं ददाति=अदात्। अथ कृतदारपरिग्रहः स पालितः कियत्कालानन्तरं ससत्त्वां=सगर्भां तां वणिक्पुत्रीं प्रतिगृह्य=आदाय स्वदेशम्=अङ्गदेशं चम्पानगरीं प्रति प्रस्थितः=प्रचलितः ।३॥

मूलम्—अह पालियस्स घरणी, समुद्दम्मि पसवइ।
अह दारए तहिं जाए, समुद्दपालित्ति नामए ॥४॥

छाया—अथ पालितस्य गृहिणी, समुद्रे प्रसूते।
अथ दारकस्तत्र जातः, समुद्रपालेति नामकः ॥४॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=अनन्तरं पालितस्य गृहिणी=भार्या समुद्रे प्रसूते=प्रसूतवती। अथ तत्र=

'पिहुंडे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पिहुंडे ववहरतस्स वाणिओ धूयर देइ–पिहुण्डे व्यवहरते वाणिजः दुहितरं ददाति) पिहुण्ड नगर में व्यापार करने वाले उस वणिक श्रावक को किसी वणिक व्यापारी ने अपनी पुत्री दी अर्थात्–किसी वहां के वणिक्‌ने अपनी लडकी का विवाह उस पालित श्रावक के साथ कर दिया। वह पालित श्रावक कितनेक काल के बाद वहां से (ससत्त तं पइगिज्झ–ससत्त्वां तां प्रतिगृह्य) सगर्भा उस अपनी भार्या को साथ लेकर (सदेसं पत्थिओ–स्वदेशम् प्रस्थितः) चंपानगरी की ओर चला ॥३॥

'अह पालियस्स' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह–अथ) इसके बाद (पालियस्स घरणी समुद्दम्मि

"पिहुंडे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—पिहुंडे ववहरतस्स वाणिओ धूयर देइ–पिहुण्डे व्यवहरते वाणिज दुहितरं ददाति પિહુણ્ડ નગરમાં વ્યાપાર કરવાવાળા એ વણિક શ્રાવકને કોઈ વણિક વ્યાપારીએ પોતાની પુત્રી આપી અર્થાત્ ત્યાંના કોઈ વણિકે પોતાની પુત્રીનો વિવાહ એ પાલિત શ્રાવકની સાથે કરી દીધો. એ પાલિત શ્રાવક કેટલાક કાળ પછી ત્યાંથી ससत्त तं पइगिज्झ–स सत्त्वां तां प्रतिगृह्य પોતાની સગર્ભા એવી એ પત્નીને સાથે લઈને सदेसं पत्थिओ–स्वदेशं प्रस्थितः ચંપાનગરી તરફ આવવા નીકળ્યો. ॥૩॥

"अह पालियस्स" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अह–अथ પછી पालियस्स घरणी समुद्दम्मि पसवइ–पालितस्य

विरत आसीत्। तु=पुनः स महात्मनः=प्रशस्तात्मनो भगवतो महावीरस्य शिष्य आसीत्। भगवच्छिष्यतात्वस्य तेन प्रतिबोधितत्वात् ॥१॥

मूलम्--निग्गंथे पावयणे, सावए से विकोविए।
पोएणं ववहरंते, पिहुंड नगरमागए ॥२॥

छाया--नैर्ग्रन्थे प्रवचने, श्रावकः स विकोविदः।
पोतेन व्यवहरन्, पिहुण्ड नगरमागतः ॥२॥

टीका--'निग्गथे' इत्यादि।

नैर्ग्रन्थे=निर्ग्रन्थसम्बन्धिनि प्रवचने विकोविदः=विशिष्टः कोविदः=विदित जीवादिपदार्थः स पालितो नाम-श्रावकः पोतेन=प्रवहणेन व्यवहरन्=व्यापार कुर्वन् पिहुण्ड नाम नगरम् आगतः ॥२॥

मूलम्--पिहुंडे ववहरंतस्स, वाणिओ देइ धूयरं।
तं ससत्तं पइगिज्झ, सदेसमह पत्थिओ ॥३॥

आसि-वणिजः श्रावकः आसीत्) वणिक श्रावक था (सो-स.) वह (महप्पणो-महात्मन) महात्मा (भगवओ-भगवतः) भगवान (महावीरस्स-महावीरस्य) महावीर प्रभुका (सीसे-शिष्यः) शिष्य था ॥१॥

'निग्गथे' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(निग्गथे पावयणे-नैर्ग्रन्थे प्रवचने) निर्ग्रन्थ संबधी प्रवचन मे (विकोविए-विकोविद) विशिष्ट-विद्वान् (से सावए-स श्रावकः) वह श्रावक (पोएण ववहरंते-पोतेन व्यवहरन्) जहाज से व्यापार करता हुआ (पिहुड नगरमागए-पिहुण्डम नगरम् आगत) पिहुण्ड नामके नगर मे आया ॥२॥

पालित नाम પાલિત એ નામનો એક वाणिए सावए आसि-वाणिजः श्रावकः आसीत् વણિક શ્રાવક હતા सो महप्पणो-स. महात्मा એ મહાત્મા भगवओ-भगवत ભગવાન મહાવીરના सीसे-शिष्य શિષ્ય હતા ॥૧॥

"निग्गथे" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--निग्गथे पावयणे-नैग्रथे प्रवचने નિગ્રન્થ સબધી પ્રવચનમા विकोविए-विकोविद વિશિષ્ટ-વિદ્વાન से सावए-स श्रावक એ શ્રાવક पोएण ववहरंते-पोतेन व्यहरन् જહાજથી વ્યાપાર કરતા કરતા पिहुड नगरमागए-पिहुण्डम् नगरम् आगत. પિહુણ્ડ નામના નગરમા પહોંચ્યા ॥૨॥

मूलम्--बावत्तरिं कलाओ ये, सिक्खिए नीइकोविए।
जोव्वणेण य सपंन्ने, सुरूवे पियदसणे ॥६॥

छाया--द्वासप्तति कलाश्च, शिक्षिता नीतिकोविद ।
यौवनेन च सम्पन्न, सुरूप प्रियदर्शन ॥६॥

टीका--'बावत्तरिं' इत्यादि।

च=पुन' वृद्धि गत. स समुद्रपालो द्वासप्तति कला. शिक्षित'=कलाचार्य समीपे अभ्यस्तवान। तथा-नीतिकोविद:=लोकनीति धर्मनीतिनिपुणश्चाभूत् तथा-यौवनेन सम्पन्नश्च स सुरूप =सुन्दररूपवान प्रियदर्शन =प्रेक्षकाणा नयनानन्दकरश्चाभूत् ॥६॥

मूलम्--तस्स रूववइ भज्जं, पिया आणेइ रूविणि ।
पासाए कीलए रम्मे, देवो दोगुंदगो जहा ॥७॥

छाया--तस्य रूपवती भार्या, पिता आनयति रूपिणीम्।
प्रासादे क्रीडति रम्ये, देवो दोगुन्दुको यथा ॥७॥

'बावत्तरिं कलाओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(बावत्तरिं कलाओ सिक्खिए-स' द्वासप्ततिकला' शिक्षित:) जैसे २ वह समुद्रपाल बढने लगा तैसे २ वह कलाचार्य के पास बहत्तर ७२ कलाओंका अभ्यास करने लगा। इस तरह वह क्रमश: (नीइकोविए-नीतिकोविद) लोक निति मे निपुण हो गया। (जोव्वणेण सपन्ने सुरूवे पियदसणे-यौवनेन-सपन्न' सुरूप प्रियदर्शन') जब यह यौवन अवस्था से युक्त हुआ तो बहुत ही सुन्दर इसका रूप होने से प्रेक्षक जनो के नयनो को इसको देखते समय अनुपम आनद मिलने लगा ॥६॥

"बावत्तरिं कलाओ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—बावत्तरिं कलाओ सिक्खिए-स द्वासप्तति कला. शिक्षित જેમ જેમ એ સમુદ્રપાળ મોટો થવા માડયો તેમ તેમ તે કલાચાર્યની પાસે જઈને બોતેર (૭૨) કલાઓનો અભ્યાસ કરવા લાગ્યો આ પ્રકારે ક્રમશ नीइ कोविए-नीति कोविद નીતિમા તે નિપુણ બની ગયો जोव्वणेण सपन्ने सुरूवे पियदसणे यौवनेन सपन्न सुरूप, प्रियदर्शनः જ્યારે યૌવન અવસ્થાએ પહોચ્યો ત્યારે તેનુ રૂપ ઘણુ જ સુદર હોવાના કારણે એને જોતા જ તેના તરફ જોનારની આખો આનદરૂપી અમૃતથી ઠરતી ॥૬॥

समुद्रे तस्या दारको जातः। यो हि समुद्रपालेति नामकोऽभूत्। समुद्रे जात त्वात्तस्य समुद्रपाल इति नाम मातापितृभ्यां कृतमिति भावः ॥४॥

मूलम्—खेमेणं आगए चंपं, सावए वाणिए घरं।
सवड्ढइ घरे तस्स, दारए से सुहोइए ॥५॥

छाया—क्षेमेण आगतश्चम्पां, श्रावको वाणिजो गृहम्।
संवर्द्धते गृहे तस्य, दारकः स सुखोचितः ॥५॥

टीका—'खेमेण' इत्यादि।

पलितनामा स श्रावको वाणिजः क्षेमेण=कुशलेन चम्पां, तत्र चम्पायां गृहं=स्वगृहं च आगतः अथ तस्य-पालितस्य गृहे सुखोचितः=सुखयोग्यः= सुकुमारः स दारकः संवर्द्धते ॥५॥

पसवइ-पालितस्य गृहिणी समुद्रे प्रसूते) पालित की उस पत्नी ने चलते ? समुद्र मे ही पुत्रको जन्म दिया। पालित ने समुद्र में उत्पन्न होने के कारण (अह समुद्दपालित्ति नामए दारए तहिं जाए-अथ समुद्रपाल इति नामकः दारकः तत्र जातः) बच्चे का नाम वही पर समुद्रपाल ऐसा रख दिया ॥४॥

खेमेण आगए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वह पालित (सावए वाणिए-श्रावकः वणिज) श्रावक वणिक् (खेमेण-क्षेमेण) कुशलपूर्वक (चपं घरं आगए-चम्पाम् गृहम् आगत) चम्पा नगरी मे अपने घर आ गया (तस्स घरे-तस्य गृहे) उस पालित श्रावक के घर पर (से दारए-स दारकः) वह समुद्रपाल बालक (सुहोइए सवड्ढइ-सुखोचितः संवर्द्धते) आनंद के साथ बढने लगा ॥५॥

गृहिणी समुद्र प्रसूते જહાજમાં મુસાફરી દરમ્યાન પાલિતની પત્નીએ એક પુત્રને જન્મ આપ્યો. સમુદ્રમાં જન્મ થવાના કારણે अह समुद्दपालित्तिनामए दारए तहिं जाए-अथ समुद्रपाल इति नामकः दारकः जातः પાલિતે એ બાળક પુત્રનું નામ તેજ વખતે સમુદ્રપાલ એવું રાખ્યું ॥४॥

"खेमेण आगए" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—તે પાલિત सावए वाणिए-श्रावकः वाणिज શ્રાવક વણિક खेमेण-क्षेमेण કુશળ રીતે चपं घरं आगए-चम्पाम् गृहम् आगत ચંપાનગરીમાં પોતાને ઘેર પહોંચી ગયા. तस्स घरे-तस्य गृहे પાલિત શ્રાવકને ત્યાં ઉત્પન્ન થયેલ से दारए-स दारकः એ સમુદ્રપાળ નામનો બાળક પણ ત્યાં सुहोइए सवड्ढइ-सुखोचितः संवर्धते આનંદની સાથે વધવા માંડયો. ॥५॥

मूलम्--बावत्तरिं कलाओ यं, सिक्खिए नीइकोविए ।

जोव्वणेण य सपंन्ने, सुरूवे पियदंसणे ॥६॥

छाया--द्वासप्तति कलाश्च, शिक्षिता नीतिकोविद ।

यौवनेन च सम्पन्न', सुरूप' प्रियदर्शन ॥६॥

टीका--'बावत्तरिं' इत्यादि।

च=पुन वृद्धिं गत स समुद्रपालो द्वासप्तति कला: शिक्षित.=कलाचार्य समीपे अभ्यस्तवान। तथा-नीतिकोविद =लोकनीतिधर्मनीतिनिपुणश्चाभूत् तथा-यौवनेन सम्पन्नश्च स सुरूप =सुन्दररूपवान प्रियदर्शन =प्रेक्षकाणा नयनानन्दकरश्चाभूत् ॥६॥

मूलम्--तस्स रूववंड भज्जं, पिया आणेइं रूविणि ।

पासाए कीलंए रम्मे, देवो दोगुदंगो जहा ॥७॥

छाया--तस्य रूपवतीं भार्या, पिता आनयति रूपिणीम्।

प्रासादे क्रीडति रम्ये, देवो दोगुन्दको यथा ॥७॥

'बावत्तरिं कलाओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(बावत्तरिं कलाओ सिक्खिए-स द्वासप्ततिकलाः शिक्षित') जैसे २ वह समुद्रपाल बढने लगा तैसे २ वह कलाचार्य के पास बहत्तर ७२ कलाओंका अभ्यास करने लगा। इस तरह वह क्रमश. (नीइकोविए-नीतिकोविद) लोक निति मे निपुण हो गया। (जोव्वणेण सपन्ने सुरूवे पियदसणे-यौवनेन-सपन्न' सुरूप प्रियदर्शन') जब यह यौवन अवस्था से युक्त हुआ तो बहुत ही सुन्दर इसका रूप होने से प्रेक्षक जनो के नयनो को इसको देखते समय अनुपम आनद मिलने लगा ॥६॥

"बावत्तरिं कलाओ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—બાવત્તરિં કલાઓ સિક્ખિએ-સ દ્વાસપ્તતિ કલા શિક્ષિત' જેમ જેમ એ સમુદ્રપાળ મોટો થવા માંડયે તેમ તેમ તે કલાચાર્યની પાસે જઈને બોતેર (૭૨) કલાઓનો અભ્યાસ કરવા લાગ્યો. આ પ્રકારે ક્રમશ નીઇ કોવિએ-નીતિ કોવિદ નીતિમા તે નિપુણ બની ગયો. જોવ્વણેણ સપન્ને સુરૂવે પિયદંસણે યૌવનેન સપન્ન સુરૂપ, પ્રિયદર્શન જ્યારે યૌવન અવસ્થાએ પહોંચ્યો ત્યારે તેનુ રૂપ ઘણુ જ સુદર હોવાના કારણે એને જોતા જ તેના તરફ જોનારની આખો આનદરૂપી અમૃતથી ઠરતી ॥૬॥

टीका--'तस्स' इत्यादि।

पिता=पालित, तस्य समुद्रपालस्य कृते रूपिणी=रूपिणीत्यभिधेया रूपवतीं=सुन्दरीं भार्याम् आनयति=आनीतवान्। पालितः सर्वाङ्गसुन्दरीं रूपिणीत्यभिधेयां कन्यां समुद्रपालितेन विवाह कारितवान् इति भावः। स समुद्रपालो दोगुन्दकों देवो यथा=दोगुन्दकदेव इव रम्ये प्रासादे तया सह क्रीडति=शब्दादिकाम भोगान् उपभुङ्क्ते इत्यर्थः। ॥७॥

मूलम्—अह अन्नया कयाइ, पासायालोयणे ठिओ।
वज्झमंडणसोभागं, वज्झं पासइ वज्झगं ॥८॥

छाया—अथ अन्यदा कदाचित्, प्रासादालोकने स्थितः।
वध्यमण्डनशोभाकं, वध्यं पश्यति वध्यगम् ॥८॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=अनन्तरम् अन्यदा कदाचित् प्रासादालोकने=प्रासादगवाक्षे स्थितः

'तस्स रूववइं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पिया-पिता) पिता पालितने (तस्स-तस्य) समुद्रपाल का (रूविणिं-रूपिणिम्) रूपिणी इस नाम की (रूववइं-रूपवतीम्) अनुपम सुन्दर रूपवाली कन्या के साथ (आणेइ-आनयति) विवाह कर दिया। (रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे) समुद्रपाल अपनी भार्या के साथ अपने सुरम्य महल मे (दोगुंदगो जहा-दौगुन्दक यथा) दौगुन्दक देव की तरह (कीलए-क्रीडति) शब्दादिक कामभोगों को भोगने लगा ॥७॥

'अह अन्नया' इत्यादि।

अन्वयार्थ (अह-अथ) एक दीन की बात है कि (अन्नया कयाइ-

"तस्स रूववइं" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—સમુદ્રપાલ ઉમર લાયક થતા તેના पिया-पिता પિતા પાલિત શ્રાવકે तस्स-तस्य તેનુ रूविणीं-रूपिणीम् રૂપિણી નામની रूववइं-रूपमतीम् અનુપમ સુંદર રૂપવાળી કન્યાની સાથે आणेइ-आनयति લગ્ન કરી દીધુ रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे સમુદ્રપાળ પોતાની સ્ત્રીની સાથે પોતાના સુરમ્ય મહેલમા दोगुन्दको जहा-दोगुन्दक यथा દૌગુન્દક દેવની માફક कीलए-क्रीडति શબ્દાદિક કામ ભોગોને ભોગવવા લાગ્યો ॥૭॥

"अह अन्नया" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अह-अथ એક દિવસની વાત છે કે अन्नयाकयाइ-अयदा कदाचित्

समुद्रपालः वध्यग-वध्य=वधस्थानं गच्छतीति वध्यगस्तं वधस्थाने नीयमानमित्यर्थः। वध्यमण्डनशोभाक-वध्यस्य=वधार्हस्य यानि मण्डनानि=रक्तचन्दनकरवीरादीनि तैः शोभाकान्ति र्यस्य स वध्यमण्डनशोभाकस्तं, वध्यं=वधार्हमपि चोरं पश्यति ॥८॥

मूलम्—तं पासिऊण संवेगं, समुद्दपालो इणमब्बवी।
अहो असुहाण कम्माणं, निज्जाणं पावगं इमं ॥९॥

छाया—तं दृष्ट्वा संवेगं, समुद्रपाल इदमब्रवीत्।
अहो अशुभानां कर्मणां, निर्याणं पापकमिदम् ॥९॥

टीका—'तं' इत्यादि

समुद्रपालः तम्=तथाविधाकार्यकारिणं वधार्हं चोरं दृष्ट्वा संवेगं=संवेगकारणम् इदं=वक्ष्यमाणं वचनमब्रवीत=उक्तवान। यदब्रवीत्तदुच्यते-'अहो' इत्यादिना-अहो! इदं=पुरो दृश्यमानम् अशुभानां कर्मणां पापकम्=अशुभं निर्याणं फलम्, यदयं वराको वधार्थं नीयते ।९॥

अन्यदा कदाचित्) किसी समय समुद्र पाल (पासाए लोयणे ठीओ-प्रासादालोकने स्थित) अपने प्रासाद के गोख में बैठा हुआ था उसने (वज्झगं वज्झमंडणसोभागं वज्झं पासइ-वध्यगम् वध्यमंडनशोभाकं वध्यं पश्यति) वधस्थान की ओर ले जाते हुए तथा वध्य व्यक्ति के योग्य वेष से सज्जित किये गये एक वध्यको-किसी चोर को देखा ॥८॥

'तं पासिऊण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तं पासिउण-तम् दृष्ट्वा) उस चोर को देखकर (समुद्दपालो-समुद्रपाल) समुद्रपालने (संवेगं-संवेगम्) संवेग के कारणभूत (इणमब्बवी-इदं अब्रवीत्) इन वचनों को कहा-कि-(अहो असुहाण कम्माणं इमं पावगं निज्जाणं-अहो अशुभानां कर्मणां इदं पापकं निर्याणम्)

કોઈ સમય સમુદ્રપાળ પોતાના મહેલના ઝરૂખામાં બેઠેલ હતો ત્યારે તેણે वज्झगं वज्झमडणसोभागं वज्झं पासइ-वध्यगम् वध्यमंडनशोभाकं वध्यं पश्यति એક ચોરને વધસ્થાન તરફ લઈ જતો જોયો તથા તેનો વધ કરનાર જલ્લાદને જોયો ॥૮॥

"तं पासिउण" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—तं पासिउण-तम् दृष्ट्वा એ ચોરને જોઈને समुद्दपालो-समुद्रपाल સમુદ્રપાલે संवेगं-संवेगं સંવેગના કારણભૂત એવા इणमब्बवी-इदं अब्रवीत् વચનો કહ્યાં જુઓ! अहो असुभाण कम्माणं इमं पावगं निज्जाणं-अहो अशुभानां कर्मणां इदं

टीका--'तस्स' इत्यादि।

पिता=पालितः तस्य समुद्रपालस्य कृते रूपिणी=रूपिणीत्यभिधेया रूपवतीं=सुन्दरीं भार्याम् आनयति=आनीतवान्। पालितः सर्वाङ्गसुन्दरीं रूपिणीत्यभिधेया कन्या समुद्रपालितेन विवाह कारितवान् इति भावः। स समुद्रपालो दोगुन्दको देवो यथा=दोगुन्दकदेव इव रम्ये प्रासादे तया सह क्रीडति=शब्दादिकाम भोगान् उपभुङ्क्ते इत्यर्थः। ॥७॥

मूलम्--अह अन्नया कयाइ, पासायालोयणे ठिओ।
वज्झमडंणसोभाग, वज्झ पासंइ वज्झग ॥८॥

छाया--अथ अन्यदा कदाचित्, प्रासादालोकने स्थितः।
वध्यमण्डनशोभाक, वध्य पश्यति वध्यगम् ॥८॥

टीका--'अह' इत्यादि।

अथ=अनन्तरम् अन्यदा कदाचित् प्रासादालोकने=प्रासादगवाक्षे स्थित'

'तस्स रूववइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(पिया-पिता) पिता पालितने (तस्स-तस्य) समुद्रपाल का (रूविणि-रूपिणिम्) रूपिणी इस नाम की (रूववइ-रूपवतीम्) अनुपम सुन्दर रूपवाली कन्या के साथ (आणेइ-आनयति) विवाह कर दिया। (रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे) समुद्रपाल अपनीभार्या के साथ अपने सुरम्य महल मे (दोगुदगो जहा-दौगुन्दकः यथा) दौगुन्दक देव की तरह (कीलए-क्रीडति) शब्दादिक कामभोगों को भोगने लगा ॥७॥

'अह अन्नया' इत्यादि।

अन्वयार्थ (अह-अथ) एक दीन की बात है कि (अन्नया कयाइ-

"तस्स रूववइ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ--સમુદ્રપાલ ઉમર લાયક થતા તેના पिया-पिता પિતા પાલિત શ્રાવકે तस्स-तस्य તેનુ रूविणी-रूपिणीम् રૂપિણી નામની रूववइ-रूपमतीम् અનુપમ સુદર રૂપવાળી કન્યાની સાથે आणेइ-आनयति લગ્ન કરી દીધુ रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे સમુદ્રપાળ પોતાની સ્ત્રીની સાથે પોતાના સુરમ્ય મહેલમા दोगुन्दको जहा-दोगुन्दक यथा દોગુન્દક દેવની માફક कीलए-क्रीडति શબ્દાદિક કામ ભોગોને ભોગવવા લાગ્યો ॥૭॥

"अह अन्नया" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ--अह-अथ એક દિવસની વાત છે કે अन्नयाकयाइ-अयदा कदाचित

समुद्रपालः वध्यगम्-वध्य=वधस्थानं गच्छतीति वध्यगस्तं वधस्थाने नीयमान मित्यर्थः। वध्यमण्डनशोभाकं-वध्यस्य=वधार्हस्य यानि मण्डनानी=रक्तचन्दन करवारादीनि तैः शोभाकान्ति र्यस्य स वध्यमण्डनशोभाकस्तं, वध्यं=वधार्ह मपि चोरं पश्यति ॥८॥

मूलम्—तं पासिऊण संवेगं, समुद्दपालो इणमव्ववी।
अहो असुहाण कम्माणं, निज्जाणं पावगं इमं ॥९॥

छाया—तं दृष्ट्वा संवेगं, समुद्रपाल इदमब्रवीत्।
अहो अशुभानां कर्मणां, निर्याणं पापकमिदम् ॥९॥

टीका—'तं' इत्यादि

समुद्रपालः तम्=तथाविधाकार्यकारिणं वधार्हं चौरं दृष्ट्वा संवेगं=संवेगकारणम् इदं=वक्ष्यमाणं वचनमब्रवीत=उक्तवान। यदब्रवीत्तदुच्यते-'अहो' इत्यादिना- अहो! इदं=पुरो दृश्यमानम् अशुभानां कर्मणां पापकम्=अशुभं निर्याणं फलम्, यदयं वराको वधार्थं नीयते ॥९॥

अन्यदा कदाचित्) किसी समय समुद्र पाल (पासाए लोयणे ठीओ- प्रासादालोकने स्थित) अपने प्रासाद के गोख में बैठा हुआ था उसने (वज्झग। वज्झमडणसोभाग वज्झं पासइ-वध्यगम् वध्यमडनशोभाकं वध्यं पश्यति) वधस्थान की ओर ले जाते हुए तथा वध्य व्यक्ति के योग्य वेष से सज्जित किये गये एक वध्यको-किसी चोर को देखा ॥८॥

'तं पासिऊण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तं पासिउण-तम् दृष्ट्वा) उस चोर को देखकर (समुद्दपालो-समुद्रपालः) समुद्रपालने (संवेग-संवेगम्) संवेग के कारणभूत (इणमव्ववी-इदं अब्रवीत्) इन वचनों को कहा-कि-(अहो असुहाण कम्माण इमं पावगं निज्जाणं-अहो अशुभानां कर्मणां इदं पापकं निर्याणम्)

કોઈ સમય સમુદ્રપાળ પોતાના મહેલના ઝરૂખામાં બેઠેલ હતો ત્યારે તેણે વજ્ઝગ વજ્ઝમડણસોભાગ વજ્ઝં પાસઇ-વધ્યગમ્ વધ્યમડનશોભાકં વધ્યં પશ્યતિ એક ચોરને વધસ્થાન તરફ લઈ જતો જોયો. તથા તેનો વધ કરનાર જલ્લાદને જોયા ॥૮॥

"તં પાસિઉણ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—તં પાસિઉણ-તમ્ દૃષ્ટ્વા એ ચોરને જોઇને સમુદ્દપાલો-સમુદ્રપાલઃ સમુદ્રપાલે સંવેગ-સંવેગં સંવેગના કારણભૂત એવા ઇણમવ્વવી-ઇદં અબ્રવીત્ વચનો કહ્યાં જુઓ! અહો અસુભાણ કમ્માણ ઇમં પાવગં નિજ્જાણં-અહો અશુભાનાં કર્મણાં ઇદં

टीका--'तस्स' इत्यादि।

पिता=पालितः तस्य समुद्रपालस्य कृते रूपिणी=रूपिणीत्यभिधेया रूपवतीं=सुन्दरी भार्याम् आनयति=आनीतवान। पालितः सर्वाङ्गसुन्दरी रूपिणीत्यभिधेया कन्या समुद्रपालितेन विवाहं कारितवान इति भावः। स समुद्रपालो दोगुन्दको देवो यथा=दोगुन्दकदेव इव रम्ये प्रासादे तया सह क्रीडति=शब्दादिकाम भोगान् उपभुङ्क्ते इत्यर्थः। ॥७॥

मूलम्—अहं अन्नया कयाइ, पासायालोयणे ठिओ।
वज्झमंडणसोभाग, वज्झं पासइ वज्झगं ॥८॥

छाया—अथ अन्यदा कदाचित्, प्रासादालोकने स्थितः।
वध्यमण्डनशोभाक, वध्य पश्यति वध्यगम् ॥८॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=अनन्तरम् अन्यदा कदाचित् प्रासादालोकने=प्रासादगवाक्षे स्थित'

'तस्स रूवनइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पिया-पिता) पिता पालितने (तस्स-तस्य) समुद्रपाल का (रूविणिं-रूपिणिम्) रूपिणी इस नाम की (रूववइ-रूपवतीम्) अनुपम सुन्दर रूपवाली कन्या के साथ (आणेइ-आनयति) विवाह कर दिया। (रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे) समुद्रपाल अपनीभार्या के साथ अपने सुरम्य महल मे (दोगुंदगो जहा-दौगुन्दक• यथा) दौगुन्दक देव की तरह (कीलए-क्रीडति) शब्दादिक कामभोगो को भोगने लगा ॥७॥

'अह अन्नया' इत्यादि।

अन्वयार्थ (अह-अथ) एक दीन की बात है कि (अन्नया कयाइ-

"तस्स रूववइ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—સમુદ્રપાલ ઉમર લાયક થતા તેના पिया-पिता પિતા પાલિત શ્રાવકે तस्स-तस्य તેનુ रूविणी-रूपिणीम् રૂપિણી નામની रूववइ-रूपमतीम् અનુપમ સુદર રૂપવાળી કન્યાની સાથે आणेइ-आनयति લગ્ન કરી દીધુ रम्मे पासाए-रम्ये प्रासादे સમુદ્રપાળ પોતાની સ્ત્રીની સાથે પોતાના સુરમ્ય મહેલમા दोगुन्दको जहा-दोगुन्दक यथा દોગુન્દક દેવની માફક कीलए-क्रीडति શબ્દાદિક કામ ભોગોને ભોગવવા લાગ્યો ॥७॥

"अह अन्नया" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अह-अथ એક દિવસની વાત છે કે अन्नयाकयाइ-अयदा कदाचित्

छाया—हित्वा सगं च महाक्लेशं महामोहं, कृष्णं भयावहम्।
पर्यायधर्मम् अभ्यरोचत, व्रतानि शीलानि परीषहांश्च ॥११॥

टीका— 'जहित्तु' इत्यादि।

स समुद्रपालमुनिः महाक्लेश-महान् क्लेशः=चतुर्गतिसंसारभ्रमणलक्षण दुःखं यस्माद् यस्मिन्वा स महाक्लेशस्तं, महामोहं=महान् मोहः स्त्र्यादिविषयः, अज्ञानं वा यस्मात्स महामोहस्तं, कृष्णं=कृष्णलेश्याहेतुत्वात्कृष्णम्, अत एव भयावहं=प्राणिनां भयजनकं संगं=स्वजनादिसम्बन्धं हित्वा=त्यक्त्वा पर्यायधर्मं=पर्याय=प्रव्रज्यापर्यायस्तत्र यो धर्मः महाव्रतादिरूपस्तम् अभ्यरोचत=अभिरोचितवान्-तदनुष्ठानविषयां रुचिं कृतवान्। पर्यायधर्ममेव विशेषादाह-व्रतानि=महाव्रतानि,

---

दीक्षित होने के बाद समुद्रपाल मुनि ने जिस प्रकार से अपनी प्रवृत्ति की तथा जिस तरह से अपनी आत्मा को अनुशासित किया यह बात सूत्रकार अब इन गाथाओं द्वारा प्रगट करते हैं--

'जहित्तु' इत्यादि।

अन्वयार्थ--समुद्रपाल मुनिने (महाकिलेसम्-महाक्लेशम्) इस चतुर्गतिरूप संसार में भ्रमणरूप महान कष्ट के दायक (महतमोह-महामोहम्) अतिमोह एवं अज्ञान के वर्धक (कसिण-कृष्णम्) कृष्णलेश्या के हेतु होने से स्वयं कृष्णरूप तथा (भयावह-भयावहम्) प्राणियों को विविध प्रकार के भयों का जनक होने से भयावह ऐसे (संग-संगम्) स्वजनादि संबंधरूप परिग्रहका (जहित्तु-हित्वा) परित्यागकर (परियायधम्म-पर्यायधर्मम्) प्रव्रज्यापर्याय के महाव्रतादि रूप धर्मको अंगीकार किया। उसके पालन में उनकी विशेष अभिरुचि जगी। इसी बात को सूत्रकार-

---

દીક્ષિત થયા પછી એ સમુદ્રપાલ મુનિએ જે પ્રકારની પોતાની પ્રવૃત્તિ કરી તથા જે પ્રકારથી પોતાના આત્માને અનુશાસિત બનાવ્યો છે એ વાત સૂત્રકાર હવે આ ગાથાઓ દ્વારા પ્રગટ કરે છે—"जहित्तु" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—સમુદ્રપાલ મુનિએ महाकिलेसम्-महाक्लेशम् આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણરૂપ મહાન કષ્ટને આપનાર महतमोह-महामोहम् અતિ મોહ અને અજ્ઞાનને વધારનાર कसिण-कृष्णम् કૃષ્ણલેશ્યાનો હેતુ હોવાથી પોતે કૃષ્ણરૂપ તથા भयावह-भयावहम् પ્રાણીઓને વિવિધ પ્રકારના ભયોને આપનાર હોવાથી ભયાવહ એવા संग-संगम् સ્વજન આદિ સંબંધરૂપ પરિગ્રહનો जहित्तु-हित्वा પરિત્યાગ કરી परियायधम्म-पर्यायधर्मम् પ્રવ્રજ્યા પર્યાયના મહાવ્રતાદિરૂપ ધર્મને અંગીકાર કર્યો એના પાલનમાં એની વિશેષ અભિરૂચી જાગી આ વાતને સૂત્રકાર वयाणि

ततः—

मूलम्—संबुद्धो सो तहिं भयवं, परमं संवेगमागओ।
आपुच्छऽम्मापियरो, पव्वए अणगारियं ॥१०॥

छाया—संबुद्धः स तत्र भगवान्, परमं संवेगमागतः।
आपृच्छ्याम्बापितरौ, प्रव्रजत्यनगारिताम् ॥१०॥

टीका—'संबुद्धो' इत्यादि।

तत्र=प्रासादालोकने स्थितः स समुद्रपालः परमम्=अत्युत्कृष्टं संवेग—वैराग्यम् आगतः=प्राप्तः संबुद्धो जातः—स्वयं बोधं प्राप्तवान्। भगवान्=वैराग्यवान् स समुद्रपालः अम्बापितरौ आपृच्छ्य=पृष्ट्वा अनगारितां प्रव्रजति अनगारो जात इत्यर्थः ॥१०॥

प्रव्रज्यानन्तरं स समुद्रपाल मुनिर्यथा या प्रवृत्ति कृतवान्, यथाचाऽऽत्मानमनुशासितवांस्तथैवोच्यते—

मूलम्—जहित्तु संगं च महाकिलेसं, महंतमोहं कसिणं भयावहं।
परियायधम्मं अभिरोयइज्जा, वयाणि सीलाणि परीसहे यं ॥११॥

अहो अशुभ कर्मों का यह अशुभ फल है जो यह बिचारा वधस्थान की और मारने के लिये ले जाया जा रहा है ॥९॥

ततः— 'संबुद्धो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सो तहिं—स तत्र) समुद्रपाल को गोख मे बैठे २ ही (परम संवेगमागओ—परम संवेग आगत) सर्वोत्कृष्ट वैराग्य प्राप्त हो गया। (संबुद्धो—संबुद्ध) स्वयं प्रतिबुद्ध हो कर (भयवं—भगवान्) वैराग्य संपन्न बने हुए उस समुद्रपालने (अम्मापियरो आपुच्छ—अम्बापितरौ आपृच्छ्य) मातापिता से पूछकर (अणगारियं पव्वए—अनगारिताम् प्रव्रजितः) दीक्षा धारण करली ॥१०॥

पापकं निर्याणम् અશુભ કર્મોના આ અશુભ ફળ છે, જેથી આ બિચારાને વધ સ્થાન ઉપર મારવા માટે લઈ જવામા આવે છે ॥૯॥

तत—"संबुद्धो" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सो तहिं—स तत्र સમુદ્રપાલને ઝરૂખામા બેઠા બેઠા જ परम संवेग मागओ—परम संवेग आगत સર્વોત્કૃષ્ટ વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત થઇ ગયો, અને संबुद्धो—संबुद्ध પોતે જાતે જ પ્રતિબુદ્ધ થઇને भयवं-भगवान् વૈરાગ્ય સંપન્ન બનેલા એવા એ સમુદ્રપાલે अम्मापियरो अपुच्छ—अम्बापितरौ—आपृच्छय માતાપિતાની આજ્ઞા મેળવીને अणगारियं पव्वए—अनगारिताम् प्रव्रजति દીક્ષા અંગીકાર કરી ॥૧૦॥

स्वीकृत्य जिनदेशितं धर्मं=श्रुतचारित्ररूपम् अचरत्=आसेवितवान्। आत्मनोऽनुशासनपक्षे 'चरेत्' इति छाया। हे विद्=विद्वन्-आत्मन्! अहिंसादीनि पञ्च महाव्रतानि स्वीकृत्य भवान् जिनदेशितं श्रुतचारित्ररूपं धर्मं चरेत्=आसेवेत ॥१२॥

मूलम्—

सव्वेहि भूएहि दयाणुकंपी, खंतिक्खमे संजय बंभयारी।
सावज्जजोगं परिवज्जयंतो चरिज्ज भिक्खू सुसमाहिइंदिए ॥१३॥

छाया—सर्वेषु भूतेषु दयानुकम्पी क्षान्तिक्षमः संयतब्रह्मचारी।
सावद्ययोगं परिवर्जयन् अचरद् भिक्षुः सुसमाहितेन्द्रियः ॥१३॥

टीका—'सव्वेहिं' इत्यादि।

स भिक्षुः=साधुः समुद्रपालः सर्वेषु भूतेषु=एकेन्द्रियाद्यारभ्य पञ्चेन्द्रियपर्यन्तसमस्तप्राणिषु दयानुकम्पी=दयया-रक्षणरूपया अनुकम्पनशीलः, क्षान्ति

त्याग महाव्रत इन पांच महाव्रतों स्वीकार करके (जिणदेसियं धम्मं चरिज्ज-जिनदेशितं धर्मं अचरत) जिनदेव द्वारा प्रतिपादित श्रुत चारित्र रूप धर्मका पालन किया। आत्मा के अनुशासन पक्षमें "चरेज्ज" की "चरेत" ऐसी छाया समझनी चाहिये-अर्थात्-"हे विद्वन्! आत्मन्! अहिंसा आदिक पंच महाव्रतों को स्वीकार कर तू अब जिनदेशित श्रुत चारित्र रूप धर्मका सेवन कर" जब ऐसा आत्मानुशासन करने रूप अर्थ विवक्षित हो तब "वित्" को संबोधन रूपमें एवं "चरेज्ज" को "चरेत्" के रूपमें जानना चाहिये ॥१२॥

'सव्वेहिं भूएहिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(भिक्खू-भिक्षु) वे समुद्रपालमुनि (सव्वेहिं भूएहिं दयाणुकंपी-सर्वेषु भूतेषु दयानुकंपी) समस्त एकेन्द्रिय से लेकर पंचे-

व्रतोनो स्वीकार करीने जिणदेसियं धम्मं चरिज्ज-जिनदेशितं धर्मं अचरत् જીનદેવ દ્વારા પ્રતિપાદિત શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કર્યું. આત્માના અનુશાસન પક્ષમાં "अचरत्"ને "चरेत्" એવું ક્રિયાપદ સમજવું જોઈએ. અર્થાત્-હે વિદ્વાન્ આત્મન્! અહિંસા આદિ પાંચ મહાવ્રતોનો સ્વીકાર કરી તું હવે જીનદેશિત શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું સેવન કર" જ્યારે એવું આત્માનુશાસન કરવારૂપ અર્થ વિવક્ષિત થાય ત્યારે "वित्"ને સંબોધન રૂપમાં અને "चरेज्ज"ને "चरेत्"ના રૂપથી જાણવા જોઈએ ॥૧૨॥

"सव्वेहिं भूएहिं" ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—भिक्खू-भिक्षु એ સમુદ્રપાલ મુનિ सव्वेहिं भूएहिं दयाणुकंपी-सर्वेषु भूतेषु दयानुकंपी સઘળી એકેન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિય સુધીના જીવો ૫૨

शीलानि=उत्तरगुणरूपाणि, परीषहान=परीषहसहनानि च अभिरोचितवान। यद्वा-मुनि स्वात्मानमेवानुशास्ति-हे आत्मन! भवान महाक्लेशादिविशेषणविशिष्ट सङ्ग त्यक्त्वा पर्यायधर्मम् अभिरोचयेत्-चारित्र समाराधयतु ॥११॥

मूलम्—

अहिंस सच्च च अतेणगं च, तत्तो य बंभ अपरिग्गह च।

पडिवज्जिया पंच महव्वयाइ, चरेज्ज धम्मं जिणदेसियं विऊ ॥१२॥

छाया—अहिंसा सत्य च अस्तैन्यक च, ततश्च ब्रह्म अपरिग्रह च।

प्रतिपद्य पञ्च महाव्रतानि, अचरद् धर्म जिनदेशित वित्। १२॥

टीका—'अहिंस' इत्यादि।

वित्=विद्वान् स समुद्रपालमुनि. अहिंसा=प्राणातिपातविरमण, सत्य=मृषावादविरमण, च=तथा-अस्तैन्यकम्=अदत्तादानविरमण च, ततश्च ब्रह्म=ब्रह्मचर्य, तथा-अपरिग्रह-परिग्रहविरमण चेत्येव पञ्चमहाव्रतानि प्रतिपद्य=

"वयाणी सीलाणि-व्रतानि शीलानि" इत्यादिपदों द्वारा प्रकट करते है-महाव्रती (वयाणी-व्रतानि) व्रत, (सीलाणि-शीलानी) उत्तरगुणरूप शील एव (परिसहे-परीषहान्) क्षुधा तृषा आदि परीषहों का जीतना इन सब का पालन करना ही उनको रुचा ॥११॥

उसके बाद इन्होंने जो किया तथा जो इनका कर्तव्य होता है वह कहते हैं—'अहिंस' इत्यादि।

अन्वयार्थ—उन (विऊ-वित) विद्वान् समुद्रपाल मुनिने (अहिंस सच्च च अतेणग तत्तो य बंभ अपरिग्गह पच महव्वयाइ पडिवज्जिया-अहिंसा सत्य अस्तैन्यक ततश्च ब्रह्म अपरिग्रह पचमहाव्रतानि प्रतिपद्य) अहिंसा महाव्रत, अदत्तादान विरमण महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत परिग्रह

सीलाणि-व्रतानि शिलानि ઇત્યાદિ પદો દ્વારા પ્રગટ કરે છે-મહાવ્રતી वयाणि-व्रतानि ઉત્તમ ગુણરૂપ શીલ અને परिसहे-परिषहान् ભૂખ, તરસ આદિ પરીષહોને જીતવા એ સઘળાનુ પાલન કરવુ જ એને રૂચ્યુ છે ॥૧૧॥

આના પછી એમણે જે કર્યું તથા જે એમનુ કર્તવ્ય હોય છે તેને કહે છે—"अहिंस" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—એ विऊ-वित् વિદ્વાન સમુદ્રપાલ મુનિએ अहिंस सच्च च अत्तेणग तत्तो य बंभ अपरिग्गह पच महव्वयाइ पडिवज्जिया-अहिंसा सत्य अस्तैन्यक ततश्च ब्रह्म अपरिग्रह पच महाव्रतानि प्रतिपद्य અહિંસા મહાવ્રત, સત્ય મહાવ્રત, અદત્તાદાન વિરમણ મહાવ્રત, બ્રહ્મચર્ય મહાવ્રત, પરિગ્રહ ત્યાગ મહાવ્રત આ પાચ મહા

तेन्द्रियश्च भूत्वा सावद्ययोग परिवर्जयन चरत्। त्वमपि भिक्षुरसि, अतस्त्वमपि तथैव चरेरिति। 'सव्वेहिं भूएहिं' इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया ॥१३॥

मूलम्—

कालेणं कालं विहरिज्ज रट्ठे बलाबल जाणियं अप्पणो यं।
सीहो व सद्देणं न संतसिज्जा, वयजोगं सुच्चा ण असब्भमाहु ॥१४॥

छाया—कालेन काल व्यवहरद् राष्ट्रे, बलाबल ज्ञात्वा आत्मनश्च।
सिंह इव शब्देन न समत्रस्येत्, वचोयोग श्रुत्वा न असभ्यम ब्रूयात् ॥१४॥

टीका—'कालेण' इत्यादि।

कालेन=पादोनपौरुष्यादिना कालम्=कालोचितम् उभयकाले प्रतिलेखनम् द्वितीयपौरुष्यादौ ध्यान चतुष्काल स्वाध्याय, तथा यथाशक्तितपश्चरण च कुर्वन

चारी एव सुसमाहितेन्द्रिय होकर सावद्ययोगका परिहार कर विहार करता है-सो तुम भी भिक्षु हो अत तुम भी इसी तरह से बनकर विचरण करो। यद्यपि पचमहाव्रतो के पालन करने से समुद्रपालमुनि मे ब्रह्मचर्य का पालन स्वत सिद्ध हो जाता है। फिर स्वतन्त्र रूप से जो इस गाथा मे ब्रह्मचारी पद रखा गया है उसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्य दुरनुचर है। इसी बात को सूचित करने के लिये उसका यहा ग्रहण हुआ है ॥१३॥

'कालेण काल' इत्यादि।

अन्वयार्थ—मुनि समुद्रपाल ने (कालेण काल-कालेन कालम्) पादोनपौरुषी आदि समय के अनुसार उभयकाल मे प्रतिलेखन करना,

सुसमाहितेन्द्रिय थईने सावद्ययोगोनो परिहार करीने विहार करे छे तो तमो पण भिक्षु छो, आथी तमो पण आवी ज रीतना बनीने विचरण करो जो के पांच महाव्रतोनुं पालन करवाथी समुद्रपाल मुनिमां ब्रह्मचर्यनुं पालन स्वयं सिद्ध थई जाय छे छतां स्वतंत्र रूपथी जे आ गाथामां ब्रह्मचारी पद राखवामां आवेल छे एनुं तात्पर्य ए छे के, ब्रह्मचर्यनुं पालन ए घणुं ज कठण छे आथी आ वातने सूचित करवा माटे एनुं आ स्थळे ग्रहण थयेल छे ॥१३॥

"कालेण काल" इत्यादि

अन्वयार्थ—समुद्रपाल मुनिए कालेण काल-कालेन कालम् पादोन पौरुष आदि समयना अनुसार उभय काळमां प्रतिलेखन करवुं, बीजी पौरुषी आदिमां

क्षम'=क्षान्त्या=क्षमागुणेन नत्वशक्तया क्षमते=दुर्जनानां दुर्भाषितादिकं सहते य. स तथा, स शक्तोऽपि क्षमागुणेन परीषहसहनशील:, संयत'=स=सम्यग् यत =प्रयत -जिनाज्ञाराधने तत्पर. इसमध्यमान्त पदम् ब्रह्मचारी=नवबाटिका विशुद्धब्रह्मचर्यसेवनशील महाव्रतमतिपन्नत्वात् संयत' सिद्धस्य ब्रह्मचर्यस्य पुन र्ब्रह्मचारीति कथनेन तस्य दुरनुचरत्व सूचितम् तथा-सुसमाहितेन्द्रिय.=वशी कृतेन्द्रियश्च भूत्वा सावद्ययोग=वाङ्मन काययोगाना सावद्यव्यापार परिवर्जयन्= परित्यजन् अचरत्=विहरतिस्म। आत्मनोऽनुशासनपक्षे चरेदिति छाया-हे आ त्मन्! भिक्षु सर्वेषु भूतेषु दयानुकम्पी क्षान्तिक्षम संयतब्रह्मचारी सुसमाहि-

न्द्रियतक के जीवों पर दयानुकंपी बने-दया से रक्षा करने रूप परिणति से-अनुकंपन शील बने (खंतिक्खमे-क्षान्तिक्षमः) क्षान्तिगुण से-क्षमा रूप आत्मिकगुण से-अशक्ति से नहीं-दुर्जनों के दुर्वचनोको सहन करने वाले बने (संजयबंभयारी-संयतब्रह्मचारी) संयतभाव से ब्रह्मचारी बने नववाड से विशुद्ध ब्रह्मचर्य के सेवनमे लवलीन रहे-तथा (सुसमाहि इंदिए-सुसमाहितेन्द्रिय) पच इन्द्रियों को वश मे करके (सावज्जजोग -सावद्ययोगम्) वे मन, वचन एव काय इन तीन योगों के सावद्य व्यापारों का (परिवज्जयतो-परिवर्जन्) परित्याग करते हुए ही (चरेज्ज- अचरत्) श्रुतचारित्ररूप धर्म के पालन करने मे अथवा विहार करने मे निरत हुए। आत्मानुशासनपक्षमे "चरेज्ज" की संस्कृतछाया "चरेत्" ऐसी कर लेनी चाहिये। उसका भाव तब इस प्रकार हो जायगा- अर्थात् समुद्रपाल मुनि ने अपनी आत्मा को इस प्रकार समझाया-कि हे आत्मन्! भिक्षु समस्त जीवों पर दयावान् क्षान्तिक्षम, संयतब्रह्म

દયાનુકંપી બન્યા-દયાથી રક્ષા કરવા રૂપ પરિણતિથી-અનુકંપન શીલ બન્યા. खंतिक्खमे क्षान्तिक्षम ક્ષાન્તિ ગુણથી-ક્ષમારૂપ, આત્મિકગુણથી-અશક્તિ નહિં-દુર્જનોના દુર્વચનોને સહન કરવાવાળા બન્યા. संजयबंभयारी-संयतब्रह्मचारी સંયતભાવથી બ્રહ્મચારી બન્યા. નવવાડથી વિશુદ્ધ બ્રહ્મચર્યના સેવનમાં લવલીન રહ્યા. તથા सुसमाहिइंदिए-सुसमाहितेन्द्रिय પાંચ ઇન્દ્રિયોને વશમાં કરીને તે सावज्जजोग- सावद्ययोगम् મન, વચન અને કાયા આ ત્રણ યોગોના સાવદ્ય વ્યાપારોનું परि वज्जयतो-परिवर्जन् પરિત્યાગ કરીને चरेज्ज-अचरत् શ્રુત ચરિત્રરૂપ ધર્મનું પાલન કરવામાં અથવા વિહાર કરવામાં નિરત થયા. આત્માનુશાસન પક્ષમાં "चरेज्ज"ની સંસ્કૃત છાયા "चरेत्" એવી કરી લેવી જોઈએ. આનો ભાવ ત્યારે આ પ્રકારનો થઈ જશે. અર્થાત્ સમુદ્રપાલ મુનિએ પોતાના આત્માને આ પ્રકારે સમજાવ્યો કે હે આત્મન્! ભિક્ષુ સઘળા જીવો તરફ દયાવાન, ક્ષાન્તિક્ષમ, સંયત બ્રહ્મચારી અને

छाया—उपेक्षमाणस्तु पर्यव्रजत्, प्रियमप्रियं सर्वमतितिक्षत।
न सर्वं सर्वत्राभ्यरोचत, न चापि पूजां गर्हां च संयतः ॥१५॥

टीका—'उवेहमाणो' इत्यादि।

संयतः स समुद्रपालमुनिस्तु परस्य कटु भाषितम् उपेक्षमाणः=अगणयन् पर्यव्रजत्=व्यहरत्। तथा—प्रियमप्रियं च सर्वम् अतितिक्षत=सोढवान। तथा—न सर्वत्र स्थाने सर्वं वस्तु अभ्यरोचत=यथादृष्टाभिलाषुको नाभूदिति भावः। अपिच—आत्मनः पूजा=सन्मानादिरूपा गर्हा=निन्दा च नाभ्यरोचत समभावेनाऽमन्यतेत्यर्थः। आत्मनोऽनुशासनपक्षे—हे—आत्मन्! संयतः=साधुस्तु परोक्तं दुरुक्तम्

'उवेहमाणो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—वे समुद्रपाल मुनि (उवेहमाणो—उपेक्षमाणः) परोक्त कटु भाषणों को सुनकर भी उसकी उपेक्षा करते थे। तथा (पियमप्पियं सव्व तितिक्खएज्जा—प्रियं अप्रियं सर्वं अतितिक्षत) प्रिय एवं अप्रिय व्यवहार को भी वे एकरूप म समझ कर सहन करते थे और इस प्रकार वे (परिव्वएज्जा—पर्यव्रजत) आनंद के साथ विचरते थे (सव्वत्थ सव्वं न अभिरोयएज्जा—सर्वत्र सर्वं नाभ्यरोचत) जहां २ वे विहार करते वहां की किसी भी दृष्ट वस्तु में इनकी अभिलाषा नहीं जगती—उसमें मम त्वभाव जागृत नहीं होता। तथा इनको (न यावि पूयं गरहं च—न चापि पूजां गर्हां च) वे न अपनी प्रशंसा से—प्रसन्न होते थे और न निन्दा से अप्रसन्न अर्थात्-प्रशंसा और निन्दा में समभाव रखते थे। आत्मानुशासनके पक्ष में वे इस प्रकार कहते—कि हे आत्मन्! साधु का कर्तव्य

"उवेहमाणो" इत्यादि

અન્વયાર્થ—એ સમુદ્રપાલમુનિ उवेहमाणो—उपेक्षमाण બીજાઓથી કહેવાયેલા કડવા ભાષણો સાંભળીને પણ તેની તરફ ધ્યાન આપતા ન હતા, તથા पियमप्पियं सव्व तितिक्खएज्जा—प्रियं अप्रियं सर्वं अतितिक्षत પ્રિય અને અપ્રિય વ્યવહારને પણ તેઓ એક રૂપમાં સમજીને સહન કરતા હતા, આ પ્રમાણે તેઓ परिव्वएज्जा—पर्यव्रजत् આનંદની સાથે વિચરતા હતા सव्वत्थ सव्वं न अभिरोयएज्जा—सर्वत्र सर्वं नाभ्यरोचत જ્યાં જ્યાં તેઓ વિહાર કરતા ત્યાંની પોતે જોયેલી કોઈ પણ વસ્તુમાં તેમની અભિલાષા જાગતી ન હતી તેમાં મમત્વભાવ જાગૃત થતો ન હતો. એને नयावि पूय गरहं च—न चापि पूजां गर्हां च તેઓ ન તો પોતાની પ્રશંસાથી પ્રસન્ન થતા અને નિંદાથી અપ્રસન્ન પણ થતા ન હતા. અર્થાત્—પ્રશંસા અને નિંદામાં સમભાવ રાખતા હતા. આત્માનુશાસનના પક્ષમાં તેઓ આ પ્રકારથી કહેતા હતા કે હે

आत्मनः=स्वस्य च बलाबलं=सहिष्णुत्वासहिष्णुत्वं ज्ञात्वा—यथात्मनः संयमयोगहानिर्न स्यात् तथा ज्ञात्वा राष्ट्रे=मण्डले उपलक्षणत्वात् ग्रामादौ च व्यहरत्=विहारं कृतवान्। तथा च—सिंह इव शब्देन=भयोत्पादकेन शब्देन न समत्रस्यत्=न त्रस्तो नाभूत्—सत्त्वान्नैव चलितवानिति भावः, सिंहदृष्टान्ताभिधानं च तस्य सात्त्विकत्वे नातिस्थिरत्वात्। तथा—वचोयोगं=वाग्योगं=दुःखोत्पादकं वचनं श्रुत्वाऽपि स असभ्यम्=अश्लीलवाक्यम्—न अब्रवीत्=नोक्तवान्। आत्मनोऽनुशासनपक्षे—विहरेत्, सन्त्रस्येत्, ब्रूयादिति योज्यम्। 'वयजोग' इति आर्षत्वाद् लुप्तानुस्वारो निर्दिष्टः ॥१४॥

पुनरप्याह— मूलम्—

उवेहमाणो उ परिव्वएज्जा, पियमप्पियं सव्वं तितिक्खएज्जा।
न सव्व सव्वत्थऽभिरोयइज्जा, न यावि पूयं गरहं च संजए ॥१५॥

द्वितीयपौरुषी आदि में ध्यान करना, चतुष्काल स्वाध्याय करना तथा अपनी शक्ति के अनुसार तपश्चरण करना यह सब यथाविधि (कुर्वन्) करते हुए (अप्पणो बलाबलं जाणिय—आत्मनः—बलाबलं ज्ञात्वा) अपना सहिष्णुत्व एवं असहिष्णुत्वरूप बलाबल को जानकर (रट्ठे विहरिज्ज—राष्ट्रे व्यवहरत्) देश में तथा उपलक्षण से ग्राम आदि में विचरे। तथा (सद्देण सीहोव न संतसिज्जा—शब्देन सिंह इव न समत्रस्यत्) भयोत्पादक शब्द से वे सिंह की तरह कभी भी अपने धैर्य से विचलित नहीं होते। और न कभी (वयजोग सुच्चा—वचोयोग श्रुत्वा) दूसरों के असभ्य वचनों को सुनकर भी (असब्भ ण आहु—असभ्य न अब्रवीत्) वे असभ्य वचन न बोले। आत्मानुशासनपक्षमे "विहरिज्ज" की संस्कृत छाया "विहरेत्" "संतसिज्जा" की "संत्रस्येत्" "आहु" की "ब्रूयात्" जाननी चाहिये ॥१४॥

ध्यान કરવુ, અથવા ચોથા કાળમા સ્વાધ્યાય કરવો. તથા પોતાની શક્તિ અનુસાર તપશ્ચરણ કરવુ આ સઘળુ યથાવિધિ કરતા કરતા अप्पणो बलाबल जाणिय—आत्मन बलाबल ज्ञात्वा પોતાના સહિષ્ણુત્વ અને અસહિષ્ણુત્વરૂપ બળાબળને જાણીને रट्ठे विहरिज्ज—राष्ट्रे व्यवहरत् દેશમા તથા ઉપલક્ષણથી ગામેગામ વિચરણ કર્યું તથા सद्देण सीहोव न संतसिज्जा—शब्देन सिंहइव न समत्रस्यत् ભયોત્પાદક શબ્દથી તે સિંહની માફક કદી પણ પોતે ધૈર્યથી વિચલિત ન થતા અને वयजोग सुच्चा—वचोयोग श्रुत्वा બીજાના અસભ્ય વચનોને સાંભળીને તેઓ કદી પણ असब्भ ण आहु—असभ्यन अब्रवीत् અસભ્ય વચન બોલ્યા નથી આત્માનુશાસન પક્ષમા "विहरिज्ज"ની સંસ્કૃત છાયા "विहरेत्" "संतसिज्जा"ની "संत्रस्येत्" "आहु" ની "ब्रूयात्" જાણવી જોઈએ ॥૧૪॥

छाया--अनेके छन्दा इह मानवेषु, यान् भावत सम्प्रकरोति भिक्षु ॥
भयभैरवास्तत्र उयन्ति भीमा, दिव्या मानुषा अथवा तैरश्चाः ॥१६॥
परीषहा दुर्विषहा अनेके, सीदन्ति यत्र बहुकातरा नरा ।
स तत्र प्राप्तो नाव्यथत भिक्षु, सग्रामशीर्षे इव नागराज ॥१७॥

टीका--'अणेगच्छन्दा' इत्यादि ।

इह=जगति मानवेषु=मनुष्येषु अनेके=बहव छन्दाः=अभिप्राया भवन्ति । यान् अभिप्रायान् भिक्षुरपि=अनगारोऽपि भावत =तत्त्ववृत्त्या औदयिकादि भावतो वा सम्प्रकरोति=करोत्येव । अत एव तद्गुणा मोक्ता । यद्वा-अत एवमात्माऽनुशास्यते इति भाव । किंच तत्र=व्रतप्रतिपत्तौ भयभैरवा'=भयेन= भयजनकत्वेन भैरवा =भीषणा' भीमाः=रौद्रा दिव्या =दिवि भवा दिव्याः,

के समाधान निमित्त सूत्रकार कहते हैं--'अणेगछन्दा' इत्यादि 'परीसहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-- (इह-इह) इस ससार मे (माणवेहिं-मानवेषु) मनुष्यों में (अणेगछन्दा-अनेके छन्दा) अनेक अभिप्राय होते हैं। कि (जे-यान्) जिन अभिप्रायो को (भावओ-भावत) तत्त्ववृत्ति मे अथवा औदयिक भावों की अपेक्षा से (भिक्खू-भिक्षु) भिक्षु भी (सपकरेइ-सम्प्रकरोति) कर सकता है। इसलिये वह ऐसे भावो के करने मे व्यर्थ समय नष्ट न करे इस विचार से इन गुणो का प्रतिपादन किया गया है अथवा वह स्वय इनमे पडकर आत्माको स्वच्छद न बनाले इसलिये आत्मापर अनुशासन रखने की बात कही गई है। तथा (तत्थ-तत्र) महाव्रतों को अगीकार करने पर (भयभेरवा भीमा दिव्वा मणुस्सा अदुवा तिरि-

કહેવામા આવ્યુ છે આ પ્રકારની શકાના સમાધાન માટે સૂત્રકાર કહે છે—

"अणेग छदा" ઈત્યાદિ "परीषहा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—इह-इह આ સસારમા माणवेहिं-मानवेषु મનુષ્યોના अणेगछदा-अनेकछदा અનેક અભિપ્રાય હોય છે કે જે અભિપ્રાયોને भावओ-भावत, તત્વવૃત્તિથી અથવા ઔદયિક ભાવોની અપેક્ષાથી भिक्खू-भिक्षु ભિક્ષુ પણ सपकरेइ सम्प्रकरोति કરી શકે છે આ માટે તે આવા ભાવો રાખવમા પોતાના સમયનો વ્યર્થમા દુરૂપયોગ ન કરે આ વિચારથી એ ગુણોનુ પ્રતિપાદન કરેલ છે અથવા તે સ્વય તેમા પડીને આત્માને સ્વચ્છદી ન બનાવે આથી આ મા ઉપર અનુશાસન રાખવાની વાત કહેવામા આવેલ છે તથા तत्थ-तत्र મહાવ્રતોનો અગીકાર કરવાથી भयभेरवा भीमादिव्वा मणुस्सा अदुवा तिरच्छा उइंति-भयभैरवा भीमा'

उपेक्षमाणः परिव्रजेत्=विहरेत् तथा-प्रियमप्रियं च सर्वं तितिक्षेत=सहेत, न सर्वत्र सर्ववस्तु अभिरोचेत=नाभिलषेत न चापि पूजा गर्हा च अभिरोचेत। एवं संयताचारः, अतस्त्वमपि तथैव भवितुं प्रयतस्वेति भावः ॥१५॥

ननु भिक्षोरपि किमन्यथाभाव सम्भवति येनैवं तद्गुणाः प्रोच्यन्ते ? यद्वा -एवमात्मानुशास्यते इत्याह—

मूलम्—

अणेगं छंदा इह माणवेहिं, जे भावओ संपकरेइ भिक्खू ।
भयभेरवा तत्थ उइंति भीमा, दिव्वा मणुस्सा अदुवा तिरिच्छा ॥१६॥
परीसहा दुव्विसहा अणेगे, सीयंति जत्था बहु कायरा नरा ।
से तत्थ पत्ते न वहिज्ज भिक्खू, संगामसीसे इव नागराया ॥१७॥

है कि वह परोक्ष कुवचनों की तरफ जरा भि ध्यान नहीं दे-सदा उस तरफ उपेक्षावृत्ति ही धारण करता रहे। तथा विहार आदि के अवसर मे चाहे तो कोई मीठी वाणी बोले चाहे कोई कडवी वाणी बोले-साधु को चाहिये कि वह उसको शान्ति और आनंद के साथ सहन करे। अनेक जगह जाने पर भी किसी भी वस्तु के ममत्व से वह बधे नही। अपनी प्रशसा एवं निंदा मे समभाव रखना चाहिये। यह सयत जन का आचार है। तू भी सयत है अत तू भी इसी रूप से होने का प्रयत्न कर ॥१५॥

शका—क्या भिक्षुजन मे भी अन्यथाभाव की सभावना रहती है कि-जिससे इस प्रकार के उसके गुण कहे जा रहे हैं अथवा वह आत्मा को अनुशासित करें यह भी कहा जा रहा है। इस प्रकार इस शका

આત્મન્ સાધુનુ કર્તવ્ય છે કે તે પરોક્ત કુવચનોની તરફ જરા પણ લક્ષ ન આપે એના તરફ સદાને માટે ઉપેક્ષા વૃત્તિજ ધારણ કરતા રહે, તથા વિહાર આદિના અવસરમા ચાહે તો કોઈ મીઠી વાણી બોલે, ચાહે કોઇ કડવી વાણી બોલે સાધુને માટે તો તે શાતિથી અને આનદથી સહન કરવાનુ જ હોય છે અનેક જગ્યાએ જવાનુ થતા પણ કોઈ વસ્તુથી મમત્વભાવ બાધે નહિ, પોતાની નિંદા અને પ્રશસામા સાધુએ સમભાવ રાખવો જોઇએ આ સાધુનો આચાર છે કે તુ પણ સાધુ છે આથી તુ પણ એવા જ રૂપનો થવાનો પ્રયત્ન કર ॥૧૫॥

શકા—શુ ભિક્ષુજનમા પણ અન્યથી સભાવના રહે છે કે, જેનાથી આ પ્રકારના તેના ગુણ કહેવામા આવે છે, અથવા તે આત્માને અનુશાસિત કરે એ પણ

अनेक परीषहाश्च उत्पन्ति। येषु उपसर्गेषु परीषहेषु च सत्सु कातरा नरा बहु सीदन्ति। अथ तत्र=तेषु प्राप्तो भिक्षु संग्रामशीर्षे नागराज इव न व्यथेत। अतस्त्वयाऽपि न व्यथितव्यमिति ॥१६-१७॥

किंच--

मूलम्--

सीओसिणा दंसमसा यं फासा, आयंका विविहा फुसंति देहं।
अकुक्कुओ तत्थऽहियासएज्जा, रयाइं खेवेज्ज पुरेकडाइं ॥१८॥

छाया--शीतोष्णानि दंशमशकाश्च स्पर्शाः, आतङ्का विविधाः स्पृशन्ति देहम्।
अकुकूजन्तत्राध्यासहेत, रजांसि क्षिपेत् पुराकृतानि ॥१८॥

टीका--'सीओसिणा' इत्यादि।

शीतोष्णानि=शीतपरीषहाः, दंशमशकाः=दंशमशकपरीषहाः, स्पर्शाः = तृणस्पर्शरूपाः परीषहाश्च, तथा-विविधाः=अनेकप्रकाराः आतङ्काः=रोगाश्च देह

कायर होते हैं वे ही संयमसे पतित होते हैं। परन्तु जो वास्तविक भिक्षु है वह इनको सहन करता हुआ अडोल एवं अकंप बना रह कर संयम को और अधिक मजबूती के साथ थामे रहता है। संग्राम के बीच में उपस्थित हुए गजराज की तरह वह इन शत्रुरूपी उपसर्ग परीषहादिक के आघातों की जरा भी पर्वाह नहीं करता है। और उनको सहता है। अतः तू भी भिक्षु है। इसलिये तुझे भी इनसे व्यथित नहीं होना चाहिये ॥१६॥१७॥

और भी--'सीओसिणा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(सीओसिणा-शीतोष्णानि) शीतपरीषह, उष्णपरीषह (दंसमसा-दंशमशकाः) दंशमशकपरीषह (फासा-स्पर्शाः) तृणस्पर्शरूप

હોય છે તે સંયમથી પતિત થાય છે પરંતુ જે વાસ્તવિક ભિક્ષુ છે તે તેને સહન કરીને અડોળ અને મક્કમ બની રહીને સંયમને ખૂબ જ મજબૂતાઈથી વળગી રહે છે સંગ્રામની વચમાં ગયેલા ગજરાજની માફક તે આ શત્રુરૂપી ઉપસર્ગ, પરીષહ આદિકના આઘાતોની જરા સરખીએ પરવા કરતા નથી અને તેને સહે છે આથી તું પણ ભિક્ષુ છે આ કારણે તારે પણ એનાથી અકળાવું ન જોઈએ ॥૧૬-૧૭॥

વળી પણ- 'सीओसिणा'' ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सीओसिणा-शीतोष्णाणि શીત પરીષહ, ઉષ્ણ પરીષહ, दंसमसा दंसमशक દંશમશક પરીષહ, फासा-स्पर्शा તૃણ સ્પર્શરૂપ પરીષહ, તથા विविहा

देवसम्बन्धिन , मनुषा.=मनुष्यसम्बन्धिनः, तरथा.=तिर्यक्सम्बन्धिनश्च उपसर्गा उद्यन्ति=उदिता भवन्ति। 'उपसर्गा' इत्याक्षिप्यते। 'अणेग' इति लुप्तप्रथमान्त पदम्। 'माणवेहिं' इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया। तथा-दुर्विषहा'=सुदुस्सहा अनेके= अनेकसंख्यका परीषहा'=दिव्यमानुषतैरश्चा' परीषहाश्च उद्यन्ति=उदिता भवन्ति। यत्र=येषु उपसर्गेषु परीषहेषु च कातरा.=अधीरा नरा बहु=भृश सीदन्ति=संयम प्रति शिथिला भवन्ति। स=अथ स समुद्रपालो भिक्षुः तत्र=तेषु उपसर्गेषु परीषहेषु च प्राप्त =समापन्नः, संग्रामशीर्षे=युद्धमूर्द्धनि नागराज इव=महागज इव= नाव्यथत=पीडा नानुभूतवान। आत्मनोऽनुशासनपक्षे-हे आत्मन। दुर्विषहा

रुग्रा उइति-भय भैरवा भीमा दिव्याः मनुषाः अथवा तैरश्चा' "उपसर्गा.उद्यन्ति) साधु के ऊपर, भयोत्पादक होने से भीषण, भीम-रौद्र- ऐसे देवकृत मनुष्यकृत अथवा तिर्यञ्चकृत उपद्रव भी आते हैं। तथा दुन्विसहा अणेगे परिसहा-दुर्विषहा' अनेके परीषहा) सुदुस्सह अनेक परिषह भी उदित होते हैं कि (जत्था-यत्र) जिन उपसर्ग एव परीषहों के आने पर (कायरा नरा-कातरा नरा) कायर जन (बहुसीयंति-बहु- सीदन्ति) सर्वथा संयम से शिथिल हो जाते है। परन्तु (से भिक्खू तत्थ पत्ते संगामसीसे नागराया इव न वहिज्ज-स भिक्षु' तत्र प्राप्त संग्राम- शीर्षे नागराज इव न अव्यथत) वे समुद्रपाल मुनि उपसर्ग एव परीषहों के आने पर भी युद्ध के बीच मे गये हुए नागराज-महागज की तरह जरा भी व्यथित नहीं हुए। आत्मा के अनुशासन पक्षमें आत्मा को उन्हों ने ऐसी स्थिति मे इस प्रकार समझाया-कि हे आत्मन् ! इस स्थिति मे तो दुर्विषह अनेक उपसर्ग-और परीषह आते हैं एव जो नर

दिव्या मानुषाः अथवा तैरश्चा उपसर्गा. उद्यन्ति સાધુના ઉપર ભયોત્પાદક હોવાથી ભિષણ રૌદ્ર એવા દેવકૃત મનુષ્યકૃત અથવા તીર્યંચ કૃત ઉપદ્રવ પણ આવે છે તથા दुव्विसहा अणेगे परिसहा-दुर्विषया अनेके परिषहा ઘણા જ આકરા અનેક પરીષહ પણ આવે છે કે जत्थ-यत्र જે ઉપસર્ગ અને પરીષહોના આવવાથી આવા कायरा नरा कातरानरा. કાયર જન बहुसीयन्ति-बहुसीदन्ति સંયમથી સર્વથા શિથિલ થઈ જાય છે પરંતુ स भिक्खू तत्थ पत्ते संगामसीसे नागराया इव न वहिज्ज-स भिक्षु तत्र प्राप्त संग्रामशीर्षे नागराज इव न अव्यथत એ સમુદ્ર પાલ મુનિ ઉપસર્ગ અને પરીષહના આવવા છતા પણ યુદ્ધની વચમા ગયેલા મહા ગજની માફક જરા પણ ખિન્ન ન બન્યા આત્માના અનુશાસનપક્ષમા આત્માને તેઓએ એવી સ્થિતિમા આ પ્રકારથી સમજાવ્યો કે હે આત્મન્! આ સ્થિતિમા તો દુર્વિષહ અનેક ઉપસર્ગ અને પરીષહ આવ્યા જ કરે છે અને જે નર કાયર

हे आत्मन् ! तेषु समुपस्थितेषु मुनिः अकुक्रजः सन् तानधिसहेत, अपि च–पुराकृतानि रजांसि=कर्माणि क्षिपेत्=परीषहसहनादिभिरपनयेत्, 'अतस्त्वमपि तथैव कुरु' इति भावः ॥१८॥

किंच—

मूलम्—

पहाय रागं च तहेव दोसं, मोहं च भिक्खू सययं वियक्खणो ।
मेरुव्व वाएण अकंपमाणो, परीसहे आयगुत्ते सहेज्जा ॥१९॥

छाया—प्रहाय रागं च तथैव द्वेषं, मोहं च भिक्षुः सततं विचक्षणः ।
मेरुरिव वातेनाकम्पमानः, परीषहानात्मगुप्तोऽसहत ॥१९॥

टीका—'पहाय' इत्यादि ।

सततं=निरन्तरं विचक्षणः=तत्त्वविचारपरायणो भिक्षुः समुद्रपालमुनिः रागम्–अभिमतेषु, तथैव च द्वेषम्–अनभिमतेषु, च=पुनः–मोहं=मिथ्यात्वहास्यादिरूपमज्ञानं प्रहाय=परित्यज्य वातेन मेरुरिव परीषहादिना अकम्पमानः=अविचलन्

परीषह तथा विविध प्रकार के आतंक इस शरीरको व्यथित करेंगे ही परन्तु इस स्थिति मे कायरता सूचक 'हा मात हा तात !' इत्यादि शब्दों का प्रयोग न करते हुए तू उनको सहन कर, इससे तुझको यह लाभ होगा कि तू पूर्वोपार्जित कर्मों का क्षपक बन जावेगा ॥१८॥

फिर भी—'पहाय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(सययं–सततम्) निरन्तर (वियक्खणो–विचक्षण) तत्त्वों की विचारणा करने मे तत्पर बने हुए (भिक्खू–भिक्षु) उन समुद्रपाल मुनिने (रागं दोसं तहेव मोहम् पहाय–रागं द्वेषं तथैव मोहम् प्रहाय) अभिमत विषयों मे राग, अनभिमत विषयों मे द्वेष तथा मिथ्यात्व हास्य

આત્મન્ ! શીત, ઉષ્ણ, દંશમશક અને તૃણસ્પર્શરૂપ પરીષહ તથા વિવિધ પ્રકારના આતંક આ શરીરને વ્યથિત કરે છે જ પણ આ સ્થિતિમાં કાયરતાસૂચક હે માત ! હે તાત ! ઇત્યાદિ શબ્દોનો પ્રયોગ ન કરતાં તું એને સહન કર આથી તને એ લાભ થશે કે તું પૂર્વોપાર્જીત કર્મોનો ક્ષય કરનાર બની જઈશ ॥૧૮॥

છતાં પણ—'पहाय' ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सयय–सततम् નિરંતર वियक्खणे–विचक्षण તત્વોની વિચારણા કરવામાં તત્પર બનેલા એ સમુદ્રપાલ મુનિએ राग दोस तहेव मोह पहाय–राग द्वेष तथैव मोह प्रहाय અભિમત વિષયોમાં રાગ, અનભિમત વિષયોમાં દ્વેષ તથા મિથ્યાત્વ હાસ્ય આદિરૂપ અજ્ઞાનનો પરીત્યાગ કરી वाएण मेरुव्व अकंपमाणो–

स्पृशन्ति=उपतापयन्ति। तत्र=तेषु परीषहेषु आतङ्केषु च समुपस्थितेषु समुद्रपालमुनिः अकुक्कुजः=कुत्सितं कूजतीति कुकूजः—न कुकूजः—अकुकूजः=हा मात', हा तात!, इत्यादिकं कुत्सितं शब्दमकुर्वन् तान् स अध्यसहत=सोढवान्। अनेन पूर्वगाथार्थ एव स्पष्टप्रतिपत्त्यर्थमुक्तः। ईदृशश्च सन् स मुनिः पुराकृतानि=पूर्वभवोपार्जितानि रजांसि=रजांसीव रजांसि—जीवमालिन्यहेतुत्वात् कर्माणि अक्षिपत्= परिषहसहनादिभिरपनीतवान्। आत्मनोऽनुशासनपक्षे—हे आत्मन्! शीतोष्णदंशमशकतृणस्पर्शरूपाः परिषहाः विविधा आतङ्काश्च देहं स्पृशन्ति।

परीषह तथा (विविहा आयंका देहं फुसंति—विविधा आतङ्का देहम् स्पृशन्ति) और भी अनेक प्रकार के रोग शरीर को व्यथित करते रहते हैं इनसे कायरजन घबराकर 'हे मात! हे तात!' इत्यादि शब्द करते हुए संयम से सर्वथा शिथिल बन जाते हैं, परंतु (तत्थ—तत्र) उन परीषहों एवं उपसर्गों तथा रोगों के आने पर भी वे समुद्रपाल मुनि (अकुक्कुओ—अकुकूजः) 'हा मात! हा तात!' इत्यादि कुत्सित शब्दों को न करते हुए (अहियासहेज्जा—अध्यसहत) उन सबको शांतिभाव से सहन करते थे। इस प्रकार अपने आचार और विचार मे दृढ बने हुए समुद्रपाल मुनि ने (पुराकडाइं रयाइं खेवेज्ज—पुराकृतानि रजांसि—अक्षिपत्) पूर्वभवों में उपार्जित रजो को मलीन करने के हेतु होने से रज जैसे ज्ञानावरणीय द्रव्यकर्मों एवं भावकर्मों को आत्मासे पृथक् कर दिया। जब इस गाथा का अर्थ इस आत्मानुशासनपक्ष में लगाया जावेगा तब इसका अर्थ इस प्रकार घटित होगा—कि—हेआत्मन्! शीत, उष्ण दंश मशक एवं तृणस्पर्श रूप

आतंका देहं फुसंति—विविधा आतङ्का देहम् स्पृशन्ति બીજા પણ અનેક પ્રકારના રોગ શરીરને વ્યથિત કરતા રહે છે તેનાથી કાયરજન ગભરાઈને હે માત! હે તાત! ઈત્યાદિ બોલ બોલીને સંયમથી સંપૂર્ણ પણે શિથિલ બની જાય છે પરંતુ तत्थ—तत्र એ પરીષહ અને ઉપસર્ગોના તથા રોગોના આવવા છતાં પણ એ સમુદ્રપાલ મુનિ अकुक्कुओ-अकुकूजः હે માત હે તાત! ઈત્યાદિ કુત્સિત શબ્દો ન કરતા अहियासहेज्ज—अध्यसहत તે સઘળું શાંત ભાવથી સહન કરતા હતા આ પ્રકારથી પોતાના આચાર અને વિચારમાં દૃઢ બનેલા સમુદ્રપાલ મુનિએ पुराकडाइं रयाइं खेवेज्ज—पुराकृतानि रजांसि अक्षिपत् પૂર્વભવોમાં ઉપાર્જીત કરેલા રજોને—એ જીવને મલીન કરવાના હેતુવાળા હોવાથી રજ જેવા જ્ઞાનાવરણીય આદિક દ્રવ્યકર્મો અને ભાવકર્મોને આત્માથી જુદા કરી દીધા જ્યારે આ ગાથાનો અર્થ આત્માનુશાસન પક્ષમાં લગાડવામાં આવશે ત્યારે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થશે કે હે

रोत्, तथा-गर्हा=निन्दा प्रति नावनतो ऽभवत्-अपमानितोऽपि खेदं ना करोत्। न चापि पूजा गर्हा च प्रति असजत्-'मम सम्मानो भवतु, अपमानो मा भवतु' इत्येव विचारासक्तोऽपि न जात । एवं भूत स संयत =मुनि ऋजुभावम्=आर्जव प्रतिपद्य=अङ्गीकृत्य विरत =पापान्निवृत्त सन् निर्वाणमार्गं=सम्यग्ज्ञानादिरूपम् उपैति =प्राप्नोति। आत्मनोऽनुशासनपक्षे-हे आत्मन्! महर्षि, पूजा प्रति अनुन्नतो भवतु गर्हा प्रति नावनतो भवेत्। न चापि पूजा गर्हा च प्रतिसजेत्= सक्तो भवेत्। त्वमपि तथैव भव। एव समुद्रपालमुनिरात्मानमनुशासितवान्।

भी उनको जरा सा भी गर्व का लेश नहीं था तथा (गरिह नावणए-गर्हा नावनत.) गर्हा-निन्दा होने पर भी उनको थोडा सा भी खेद नहीं होता था (नयावि पूय गरिह सजए-नचापि पूजा गर्हा असजत्) और न उनको ऐसा विचार ही होता था कि कोई मेरी प्रशसा करे या निन्दा करे अर्थात्-'मेरा सन्मान हो' ऐसा उनको विचार नही आता था और 'मेरा कभी अपमान न हो' ऐसी चिन्ता नही होती थी। इस प्रकार की स्थिति सपन्न वे मुनिराज (उज्जुभाव पडिवज्ज-ऋजुभाव प्रतिपद्य) आर्जव भाव को अगीकार करके (विरए-विरत) पापों से विरक्त होते हुए (निव्वाणमग्ग उवेइ-निर्वाणमार्ग उपैति) सम्यग्ज्ञानादिरूप निर्वाणमार्ग को प्राप्त करने मे सावधान रहते थे। आत्मानुशासनपक्ष मे-हे आत्मन्! महर्षिजन अपनी प्रशसा होने पर भी गर्व नही करते है तथा अपमान होने पर खेद नहीं करते हैं। और न उनके चित्त मे प्रशसा की चाहना जगती है और न अपमान होने पर खेदभाव की जाग्रति है। उनके परि-

સરખોએ ગર્વનો ભાવ ન હતો. તથા गरिह नावणए-गर्हा नावनत. નિંદા થવાથી પણ તેમને જરા સરખોએ ખેદ થતો ન હતો. न यावि पूय गरिह सजए-न चापि पूजा गर्हा असज्जत् તેમને કદી એવો વિચાર પણ થતો ન હતો કે, કોઈ મારી પ્રશસા કરે અથવા નિંદા કરે અર્થાત્-"મારૂ સન્માન થાય" આવો વિચાર તેમને આવતો ન હતો. "મારૂ કદી અપમાન ન થાય" એવી ચિંતા તેમને થતી ન હતી. આ પ્રકારની સ્થિતિ સંપન્ન એ મુનિરાજ उज्जुभाव पडिवज्ज-ऋजुभाव प्रतिपद्य આર્જવ ભાવને અંગીકાર કરીને, विरए-विरत પાપોથી વિરકત થતા હતા निव्वाण मग्ग उवेइ-निर्वाणमार्ग उपैति સમ્યક્ જ્ઞાન આદિ રૂપ નિર્વાણમાર્ગને પ્રાપ્ત કરવામા સાવધાન રહેતા હતા. આત્માનુશાસનપક્ષમા હે આત્મન્! મહર્ષીજન પોતાની પ્રશસા થવા છતા પણ ગર્વ કરતા નથી, તથા અપમાન કરવાથી ખેદ કરતા નથી તેમ ન તો તેમના ચિત્તમા પ્રશસાની ચાહના જાગે છે અને ન અપ

=आत्मगुप्तः-आत्मना गुप्त -कच्छपवत्सकुचितसर्वाङ्गः परीपहान्=शीतोष्णादिपरीपहान् असहत=सोढवान्। आत्मनोऽनुशासनपक्षे-हे आत्मन्! सतत विचक्षणो भिक्षुरित्युपक्रम्य परीपहान् सहेत=परीपहाणा सहन करोति अतस्त्वमपि तथैव कुरु। इत्येव व्याख्या कार्या। अनेन परीपहसहनोपाय उक्त ॥१९॥

किंच—

मूलम्—

अणुण्णए नावणए महेसी, नं यावि पूयं गरिह च सज्जये।
से उज्जुभाव पडिवज्ज संजए, निव्वाणमग्गं विरए उवेइ ॥२०॥

छाया—अनुन्नतो नावनतो महर्षि, न चापि पूजा गर्हा च असजत्।
स ऋजुभाव प्रतिपद्य सयत', निर्वाणमार्ग विरत उपैति ॥२०॥

टीका—'अणुण्णए' इत्यादि।

महर्षि समुद्रपाल पूजा=प्रशसा प्रति अनुन्नतोऽभवत् सम्मानितोऽपि गर्वनाक

आदिरूप अज्ञान का परित्याग कर (वाएण मेरुव्व अकपमाणो-वातेन मेरु' इव अकपमान.) झझावात से मेरु की तरह परीषह आदि से अकप बनकर (आयगुत्ते-आत्मगुप्त) तथा कच्छप की तरह इन्द्रियों को गोप कर (परीसहे सहेज्जा-परीपहान् असहत्) शीत उष्ण आदिपरीपहों को सहन किया। आत्मा के अनुशासन पक्षमें-हे आत्मन्! निरन्तर तत्वों की विचारणा करने मे तल्लीन बना हुआ भिक्षु परीषह आदि को सहन करने मे कसर नही रखता है। अत तुम भी अकपबनकर इनको सहन करो ॥१९॥

और भी—'अणुण्णए' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(महेसी-महर्षि) वे समुद्रपाल (मुनि पूय अणुण्णए-पूजा अनुन्नत.) अपनी प्रशसा मे गर्व से रहित थे-समानित होने पर

वातेन मेरु इव अकम्पमान' ઝઝાવાતથી મેરૂની માફક પરિષહ આદિથી અડોળ બની તથા आयगुत्तो-आत्मगुप्तः કાચબાની માફક ઇન્દ્રિયોને સકેલીને परीसहे सहेज्जा-परीपहान् असहत् શીત, ઉષ્ણ આદિ પરીષહોને સહન કર્યા આત્માના અનુશાસન પક્ષમા હે આત્મન્! નિરતર તત્વોની વિચારણા કરવામા તલ્લીન બની રહેલ ભિક્ષુ પરીષહ આદિને સહન કરવામા કસર રાખતા નથી આથી તુ પણ અકપ બનીને એને સહન કર ॥૧૯॥

વળી પણ—"अणुणए" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—महेसी-महर्षि એ સમુદ્રપાલ મુનિ पूय अणुणए-पूजा अनुन्नत પોતાની પ્રશસામા ગર્વથી રહિત હતા સન્માનિત થવા છતા પણ તેમનામા જરા

पूर्व-पश्चाद् भेदेन द्विविधः। तत्र पूर्वसंस्तवो मातापित्रादीनाम्, पश्चात्-संस्तव श्वशुरादीनाम्। पुनः विरतः=पापक्रियाभ्यो निवृत्तः, आत्महितः=आत्मनां जीवानां हितं=हिताभिलापुकः, प्रधानवान्-प्रधान=संयमो मुक्तिहेतुत्वात् तद् यस्यास्ति स तथा, संयमवानित्यर्थः, तथा-छिन्नशोकः=शोकरहितः, छिन्नस्रोता" इतिच्छाया पक्षे-छिन्नानि स्रोतांसि=मिथ्यादर्शनादीनि येन स तथा, अत एव-अममः= ममत्वरहितः, तत एव अकिञ्चनः=द्रव्यादिपरिग्रहरहितः स समुद्रपालमुनि परमार्थपदेषु-परमार्थो मोक्षः पद्यते=प्राप्यते यैस्तानि परमार्थपदानि=सम्यग्द र्शनादीनि तेषु तिष्ठति=स्थितोऽभवत्। 'परमट्ठपएहिं' इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया ॥२१॥

मूलम्--विवित्तलयणाणि भइज्ज ताई, निरोवलेवाई असंथडाइं।
इसीहि चिण्णाइं महायसेहिं, कायेण फासेज्ज परीसहाइं ॥२२॥

किंच--

छाया--विविक्तलयनानि अभजत्त्रायी, निरुपलेपानि असंस्तृतानि।
ऋषिभिश्चीर्णानि महायशोभिः, कायेनास्पृशत्परीषहान् ॥२२॥

इन मुनिराज ने इन दोनों प्रकार का संस्तव परित्यक्त कर दिया। (विरए-विरत) पापक्रियाओं से निवृत्त हो कर (आयहिए-आत्महित) ये जीवों के अभिलाषी बने। इसीलिये ये (पहाणव-प्रधान वत्) मुक्ति के प्रधान हेतु होने से संयमधारी हुए (छिन्नसोए-छिन्नशोक) शोक को इन्हों ने अपनी विचार धारा से बाहर कर दिया। अथवा ये छिन्नस्रोत-मिथ्या-दर्शन आदि से रहित होकर (अममे-अममः) परपदार्थों में ममताभाव से विहीन बने (अकिंचणे-अकिंचन (द्रव्यादि परिग्रह से वर्जित होकर (परमट्ठपएहिं चिट्ठइ-परमार्थपदेषु तिष्ठति) वे परमार्थ के साधन भूत एक मात्र सम्यग्दर्शन आदि के परिपालन में ही सावधान हुए ॥२१॥

परित्याग करी दीधो विरए-विरत पापक्रियाओथी निवृत्त बनी आयहिए-आत्महित तेओ जीवोना हित साधवाना अभिलाषी बन्या आ कारणे ते पहाणव-प्रधानवत् मुक्तिना प्रधान हेतु होवाथी संयमधारी बन्या छिन्नसोए-छिन्नशोक शोकने तेओओ पोतानी विचारधाराथी बहार करी दीधो अथवा तेओ छिन्नस्रोत मिथ्यादर्शन आदिथी रहित बनी, अममे-अमम परपदार्थमां ममताभावथी विहीन बन्या अने अकिंचणे-अकिञ्चन द्रव्यादि परिग्रहथी वर्जीत बनीने परमट्ठपएहिं चिट्ठइ-परमार्थपदेषु तिष्ठति ते परमार्थना साधनभूत एक मात्र सम्यग्दर्शन आदिनु परिपालन करवामां ज सावधान बन्या ॥२१॥

एवम्=अनेन प्रकारेण आत्मानुशासनः स सदतं ऋजुभावम् प्रतिपद्य विरतः सन् निर्वाणमार्गम् उपेति=प्राप्नोति। तत्कालापेक्षया वर्तमाननिर्देशः ॥२०॥

ततः स कीदृशः सन् किं करोतीत्याह—

मूलम्—अरइरइसहे पहीणसंथवे, विरए आयहिए पहाणवं।
परमट्ठपएहिं चिट्ठई, छिन्नसोए अममे अकिंचणे ॥२१॥

छाया—अरतिरतिसहः प्रहीणसंस्तवः, विरत आत्महितः प्रधानवान्।
परमार्थपदेषु तिष्ठति, छिन्नशोकः अममः अकिञ्चनः ॥२१॥

टीका—'अरइरइसहे'।

अरतिरतिसहः=अरतिः=संयमविषया, रतिः=असंयमविषया, ते सहते—ताभ्यां न बाध्यते—यः स तथा, संयमे रतिमान् असंयमेऽरतिमानित्यर्थः, तथा—प्रहीणसंस्तवः—प्रहीणः=प्रक्षीणः=संस्तवो परिचयो यस्य स तथा, त्यक्तसङ्ग इत्यर्थः संस्तव

णाम सदा एकसे रहा करते हैं—प्रशंसा, निंदा में पक्षपात की गंध भी वहां नहीं रहती है। अतः अब तू मुनि है तो तेरे भी ऐसा ही बनना चाहिये। ऐसा बनेगा तभी जाकर निर्वाणमार्ग की प्राप्ति हो सकेगी ॥२०॥

फिर वे समुद्रपालमुनि कैसे होते हुए क्या क्रिया सो कहते हैं—'अरइरइसहे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अरइरइसहे-अरतिरतिसहः) उन समुद्रपाल मुनिराज को कभी भी संयम में अरति एवं असंयम मे रति भाव नहीं हुआ—अर्थात्—वे इस प्रकार के भाव से बाधित नहीं हुए—न भावों को उन्होंने किया। (पहीणसंथवे-प्रहीणसंस्तवः) माता पिता आदि के साथका परिचय पूर्वसंस्तव तथा श्वशुर—आदि का संबंध पश्चात् संस्तव है सो

માન થવાથી એ ભાવની જાગૃતિ થાય છે તેમનું પરિણામ સદા એકસરખું રહ્યા કરે છે પ્રશંસા-નિંદામાં પક્ષપાતની ગંધ પણ ત્યાં રહેતી નથી, આથી જ્યારે તું મુનિ છે તો તારે પણ એવા બનવું જોઈએ એવો બનીશ ત્યારે જ નિર્વાણ માર્ગની પ્રાપ્તિ થઈ શકશે ॥૨૦॥

પછી તે સમુદ્રપાલ મુનિએ કેવા બનીને શું કર્યું તેને કહે છે—
"અરઇરઇસહે ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अरइरइसहे-अरतिरतिसहः એ સમુદ્રપાલ મુનિરાજને કદી પણ સંયમમાં અરતી અને અસંયમમાં રતીભાવ ન થયો અર્થાત્—તેઓ આ પ્રકારના ભાવથી બાધિત ન થયા એવા ભાવોને તેમણે સહન કર્યા पहीणसंथवे-प्रहीणसंस्तवः માતાપિતા આદિની સાથેનો પરિચય, પૂર્વસંસ્તવ તથા શ્વસુર આદિનો સંબંધ એ પછીનો સંબંધ છે તો એ મુનિરાજે આ બન્ને પ્રકારના સંબંધનો

ततः स कीदृशो जातः ! इत्याह—

मूलम्—से नाणनाणोवगए महेसी, अणुत्तरं चरिउं धम्मसंचयं ।
अणुत्तरे नाणधरे जससी, ओभासेइ सूरिए वंतलिक्खे ॥२३॥

छाया—स ज्ञानज्ञानोपगतो महर्षिः, अनुत्तरं चरित्वा धर्मसंचयम् ।
अनुत्तरज्ञानधरो यशस्वी, अवभासते सूर्य इवान्तरिक्षे ॥२३॥

टीका—'से' इत्यादि ।

ज्ञानज्ञानोपगतः—ज्ञानं तेन यद् ज्ञानम्=साध्वाचारस्यावबोधस्तमुपगतः प्राप्तः स समुद्रपालो महर्षिः=मुनिः अनुत्तरं=सर्वोत्कृष्टं धर्मसंचयं=क्षान्त्यादि धर्मसमूहं चरित्वा=आसेव्य अनुत्तरज्ञानधरः=अनुत्तरं=सर्वोत्कृष्टं यत् ज्ञानं= केवलाख्यं तस्य धरो धारकः, अत एव यशस्वी=प्रशस्तयशाः अन्तरिक्षे=आकाशे सूर्य इव जगति अवभासते । 'अणुत्तरे णाणधरे' इत्यत्र एकार आर्षत्वात् ॥२३॥

फिर वे समुद्रपालमुनि किस प्रकार के बने? सो कहते है—'से' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(नाणझाणोवगए महेसी—ज्ञानध्यानोपगतः स महर्षिः) श्रुतज्ञान से साधु के आचार विषयक ज्ञान से युक्त वे समुद्रपाल महर्षि (अणुत्तरं धम्मसंचयं चरिउं—अनुत्तरं धर्मसंचयं चरित्वा) सर्वोत्कृष्ट क्षान्त्यादिक धर्म का संचय करके (अणुत्तरे नाणधरे—अनुत्तरज्ञानधरः) सर्वोत्कृष्ट केवलज्ञान के धारी बन गये। अत—एव (जससी—यशस्वी) प्रशस्त-यश संपन्न होकर वे (अंतलिक्खे सूरिएव ओभासइ—अन्तरिक्षे सूर्य इव अवभासते) आकाश में सूर्य की तरह इस जगत मे चमकने लगे ॥२३॥

अब अध्ययन का उपसंहार करते हुए सूत्रकार समुद्रपालमुनि के

પછી એ સમુદ્રપાલ મુનિ કેવા પ્રકારના બન્યા? એ કહે છે—'से' ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—नाणझाणोवगए महेसी—ज्ञानध्यानोपगत महर्षि શ્રુતજ્ઞાનથી સાધુના આચાર વિષયક જ્ઞાનથી યુક્ત એ સમુદ્રપાલ મુનિ अणुत्तर धम्मसंचयं चरिउं अनुत्तर धर्मसंचयं चरित्वा સર્વોત્કૃષ્ટ ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મનો સંચય કરીને अणुत्तरे णाणधरे—अनुत्तरे ज्ञानधरे સર્વોત્કૃષ્ટ કેવળજ્ઞાનના ધારક બની ગયા जससी—यशस्वी પ્રશસ્ત યશ સંપન્ન બનીને તે अंतलिक्खे सूरिएव ओभासइ—अन्तरिक्षे सूर्य इव अवभासते આકાશમાં સૂર્યની જેમ આ જગતમાં ચમકવા લાગ્યા ॥૨૩॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર સમુદ્રપાલ મુનિ દ્વારા આચરિત

ततः स कीदृशो जात.! इत्याह—

मूलम्—से नाणनाणोवगए महेसी, अणुत्तरं चरिउं धम्मसंचयं।
अणुत्तरे नाणधरे जससी, ओभासइ सूरिए वंतलिक्खे ॥२३॥

छाया—स ज्ञानज्ञानोपगतो महर्षिः, अनुत्तरं चरित्वा धर्मसंचयम्।
अनुत्तरज्ञानधरो यशस्वी, अवभासते सूर्य इवान्तरिक्षे ॥२३॥

टीका—'से' इत्यादि।

ज्ञानज्ञानोपगत —ज्ञान तेन यद् ज्ञानम्=साध्वाचारस्यावबोधस्तमुपगतः प्राप्त स समुद्रपालो महर्षि=मुनि अनुत्तर=सर्वोत्कृष्ट धर्मसंचय=क्षान्त्यादि धर्मसमूह चरित्वा=आसेव्य अनुत्तरज्ञानधर =अनुत्तर=सर्वोत्कृष्ट यत् ज्ञान= केवलाख्य तस्य धरो धारक, अत एव यशस्वी=प्रशस्तयशा अन्तरिक्षे=आकाशे सूर्य इव जगति अवभासते। 'अणुत्तरे णाणधरे' इत्यत्र एकार आर्षत्वात् ॥२३॥

फिर वे समुद्रपालमुनि किस प्रकार के बने? सो कहते है—
'से' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(नाणझाणोवगए महेसी–ज्ञानध्यानोपगतः स महर्षि) श्रुतज्ञान से साधु के आचार विषयक ज्ञान से युक्त वे समुद्रपाल महर्षि (अणुत्तर धम्मसचय चरिउ–अनुत्तर धर्मसचय चरित्वा) सर्वोत्कृष्ट क्षान्त्यादिक धर्म का सचय करके (अणुत्तरे नाणधरे–अनुत्तरज्ञानधरः) सर्वोत्कृष्ट केवलज्ञान के धारी बन गये। अत–एव (जससो–यशस्वी) प्रशस्त–यश सपन्न होकर वे (अतलिक्खे सूरिए ओभासइ–अन्तिरिक्षे सूर्य इव अवभासते) आकाश में सूर्य की तरह इस जगत मे चमकने लगे ॥२३॥

अब अध्ययन का उपसहार करते हुए सूत्रकार समुद्रपालमुनि के

પછી એ સમુદ્રપાલ મુનિ કેવા પ્રકારના બન્યા? એ કહે છે—'से' ઈત્યાદિ

અન્વયાર્થ—नाणझाणोवगए महेसी–ज्ञानध्यानोपगत. महर्षि શ્રુતજ્ઞાનથી સાધુના આચાર વિષયક જ્ઞાનથી યુક્ત એ સમુદ્રપાલ મુનિ अणुत्तर धम्मसचय चरिउ अनुत्तर धर्मसचय चरित्वा સર્વોત્કૃષ્ટ ક્ષાન્ત્યાદિક ધર્મનો સચય કરીને अणुत्तरे णाणधरे– अनुत्तरे ज्ञानधरे સર્વોત્કૃષ્ટ કેવળજ્ઞાનના ધારક બની ગયા जससी–यशस्वी પ્રશસ્ત યશ સપન્ન બનીને તે अतलिक्खे सूरिएव ओभासइ–अन्तरिक्षे सूर्य इव अवभासते આકાશમા સૂર્યની જેમ આ જગતમા ચમકવા લાગ્યા ॥૨૩॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસહાર કરતા સૂત્રકાર સમુદ્રપાલ મુનિ દ્વારા આચરિત

'विवित्तलयणाणि' इत्यादि ।

त्रायी=त्राता-षट्कायजीवरक्षणपरायणः स समुद्रपालमुनिः निरुपलेपानि=द्रव्यतो भावतश्च लेपरहितानि-द्रव्यतः साध्वर्थं न लिप्तानि, अपि तु गृहस्थेन स्वार्थं लिप्तानि, भावतो 'ममैतानीमानि स्थानानी' त्यभिष्वङ्गरूपलेपरहितानि, तथा-असंस्तृतानि,=शाल्यन्नबीजादिभिरव्याप्तानि, अत एव-महायशोभिः=प्रख्यातकीर्तिभिः ऋषिभिः=मुनिभिः चीर्णानि=आसेवितानि विविक्तलयनानि=स्त्रीपशुपण्डकवर्जितानि उपाश्रयरूपस्थानानि अभजत्=आसेवितवान्-तत्रनिवासं कृतवान् । तथा-कायेन=शरीरेण परीषहान्= शीतोष्णादिपरीषहान् अस्पृशत्= सोढवान्। पुनः परीषहस्पर्शनाभिधानमतिशयख्यापनार्थम् ॥२२॥

फिर भी—'विवित्त लयणाणि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(ताई-त्रायी) षट्काय के जीवों की रक्षा करने में तत्पर समुद्रपालमुनिराज (निरोवलेवाई-निरुपलेपानि) द्रव्य एव भाव से लेप रहित-द्रव्य से साधु के लिये नहीं लीपे गये परन्तु गृहस्थों द्वारा अपने लिये लिपे गये, भाव से-" ये स्थान मेरे हैं" इस प्रकार से अभिष्वगरूप से रहित तथा (असथडाइ-असंस्तृतानि) शालि अन्न आदि बीजों से अव्याप्त इसीसे (महायसेहिं इसिहिं चिण्णाइ-महायशोभिः ऋषिभिः चीर्णानि) महायशस्वी ऋषियों द्वारा-मुनियों द्वारा-सेवित किये गये ऐसे (विवित्तलयणाणि-विविक्तलयनानि) स्त्री, पशु, पंडक से रहित उपाश्रय रूप स्थानों मे (भइज्ज-अभजत्) रहते थे। तथा (कायेण परिसहाइ फासेज्ज -कायेन परिषहान् अस्पृशत्) शरीर से शीत उष्ण आदि परीषहों को सहते थे। परिषहों के सहन करने का पुनः यह कथन उनमे अतिशय ख्यापन करने के लिये जानना चाहिये ॥२२॥

छता पण—"विवित्तलयणाणि" इत्यादि

અન્વયાર્થ—ताई-त्रायी ષટ્કાયના જીવોની રક્ષા કરવામા તત્પર સમુદ્રપાલ મુનિરાજ निरोवलेवाई-निरुपलेपानि દ્રવ્ય અને ભાવથી લેપ રહિત-દ્રવ્યથી સાધુને માટે ન લીપેલા, પરંતુ ગૃહસ્થો તરફથી પોતાના માટે લેપાયેલા ભાવથી "આ સ્થાન મારૂ છે" આ પ્રકારના અભિષ્વંગરૂપ લેપથી રહિત તથા असथडाइ-असंस्तृतानि શાલિ અન્ન આદિ બીજોથી અવ્યાપ્ત આથી જ महायसेहिं इसिहिं चिण्णाइ-महायशोभिः ऋषिभिः चीर्णानि મહાયશસ્વી ઋષિઓ દ્વારા-મુનિઓ દ્વારા-સેવવામા આવેલ એવા विवित्तलयणाणि-विविक्तलयनानि સ્ત્રી પશુપંડકથી રહિત ઉપાશ્રય રૂપ સ્થાનોમા भइज्ज-अभजत् રહેતા હતા, તથા काएण परिसहाइ फासेज्ज-कायेन परिषहान् अस्पृशत् શરીરથી શીત, ઉષ્ણ આદિ પરીષહોને સહતા હતા પરીષહોને સહન કરવાનુ ફરી આ કથન તેમા અતિશય ખ્યાપન કરવા માટે જાણવુ જોઇએ ॥૨૨॥

दुस्तर समुद्रमिव तरित्वा=उत्तीर्य अपुनरागम=नास्ति पुनरागमः=आवर्त्तन यस्मात्तन्मोक्षरूप स्थान गत = सिद्धि प्राप्त इत्यर्थः। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्यः ॥२४॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहूछत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्याया व्याख्यायां महानिर्ग्रन्थीय नामैकविंशतितममध्ययन सम्पूर्णम्।

महाभवौघ तरित्वा) दुस्तर समुद्र के समान इस महान संसारसमुद्र को पार करके (अपुणागम गए-अपुनरागम गत) मुक्तिस्थान रूप अपुनरागमस्थान को प्राप्त करलिया। हे जम्बू! (त्ति बेमि-इति ब्रवीमि) जैसा मैने वीर प्रभु के मुख से सुना है वैसा ही तुमसे कहता हू ॥२४॥

॥इस प्रकार इक्कीसवां अध्ययन सपूर्ण हुआ २१॥

समुद्र मिव महाभवौघ तरित्वा દુસ્તર સમુદ્ર સમાન આ મહાન સંસારસમુદ્રને પાર કરીને अपुणागम गए-अपुनरागम गत' મુક્તિસ્થાન ભૂત અપુનરાગમ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરી લીધુ હે જમ્બૂ! त्ति बेमि-इति ब्रवीमि જેવુ મે વીરપ્રભુના મુખેથી સાભળ્યુ છે એવુ જ હુ તમને કહુ છુ ॥૨૪॥

ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રનુ એકવીસમુ અધ્યયન સપૂર્ણ ॥૨૧॥



सम्प्रति अध्ययनार्थमुपसंहरन् समुद्रपालमुनिनाऽऽचरितस्य साधुधर्मस्य फलमाह—

मूलम्—

दुविहं खवेऊण य पुन्नपावं, निरंगणे सव्वओ विप्पमुक्के।
तरित्ता समुद्दं व महाभवोहं, समुद्दपाले अपुणागमं गए,
त्ति बेमि ॥२४॥

॥ इइ समुद्दपालीयं एगवीसइमं अज्झयणं समत्तं ॥२१॥

छाया—द्विविधं क्षपयित्वा च पुण्यपापं, निरङ्गणः सर्वतो विप्रमुक्तः।
तरित्वा समुद्रमिव महाभवौघं, समुद्रपालः अपुनरागमं गत इति
ब्रवीमि ॥२४॥

टीका—'दुविहं' इत्यादि।

समुद्रपालो महर्षिः द्विविधं=घातिकं भवोपग्राहिकं चेति द्विप्रकारं पुण्यपापं=शुभाशुभप्रकृतिरूपं कर्म च क्षपयित्वा=निरङ्गणः संयमं प्रति निश्चलः, शैलेश्यवस्थां प्राप्त इति यावत्, अत एव-सर्वतः=बाह्यादाभ्यन्तराच्च परिग्रहाद् विप्रमुक्तः=रहितः महाभवौघं=अतिदुस्तरतया महान् यो भवौघः=देवादिभवसमूहस्तं

द्वारा आचरित धर्म का फल कहते हैं—'दुविह' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(समुद्दपाले-समुद्रपालः) समुद्रपालमुनिराजने (दुविह पुन्नपाव खवेउण-द्विविधं पुण्यपापं क्षपयित्वा) घातिक एवं भवोपग्राहिक शुभाशुभ प्रकृतिरूप कर्म का क्षपण करके (निरंगणे-निरङ्गणः) शैलेशी अवस्था संपन्न होकर (सव्वओ विप्पमुक्के-सर्वतः विप्रमुक्तः) बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह त्याग से (समुद्द व महाभवोहं तरित्ता-समुद्रमिव

ધર્મના ફળને કહે છે—"दुविह" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—समुद्दपाले-समुद्रपालः સમુદ્રપાલ મુનિરાજે दुविह पुण्णपाव खवेऊण-द्विविधं पुण्यपापं क्षपयित्वा ઘાતિક અને ભવોપગ્રાહિક શુભાશુભ પ્રકૃતિરૂપ કર્મનાનો ક્ષય કરીને निरंगणे-निरङ्गणः શૈલેષી અવસ્થા સંપન્ન કરીને सव्वओ विप्पमुक्के-सर्वतः विप्रमुक्तः બાહ્ય અભ્યંતર પરિગ્રહના ત્યાગથી समुद्द व महाभवोहं तरित्ता-

दुस्तर समुद्रमिव तरित्वा=उत्तीर्य अपुनरागम=नास्ति पुनरागम.=आवर्त्तन यस्मात्तन्मोक्षरूप स्थान गत= सिद्धि प्राप्त इत्यर्थ । 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थ. पूर्ववद् बोध्य. ॥२४॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहूछत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्याया व्याख्यायां महानिर्ग्रन्थीय नामैकविंशतितममध्ययन सम्पूर्णम् ।

महाभवौघ तरित्वा) दुस्तर समुद्र के समान इस महान संसारसमुद्र को पार करके (अपुणागम गए-अपुनरागम गत.) मुक्तिस्थान रूप अपुनरागमस्थान को प्राप्त करलिया। हे जम्बू! (त्ति बेमि-इति ब्रवीमि) जैसा मैंने वीर प्रभु के मुख से सुना है वैसा ही तुमसे कहता हू ॥२४॥

॥इस प्रकार इक्कीसवां अध्ययन संपूर्ण हुआ २१॥

समुद्रमिव महाभवौघ तरित्वा दुस्तर समुद्र समान आ महान संसारसमुद्रने पार करीने अपुणागम गए-अपुनरागम गतः मुक्तिस्थान भूत अपुनरागम स्थानने प्राप्त करी लीधु हे जम्बू! त्ति बेमि-इति ब्रवीमि जेवु मे वीरप्रभुना मुखेथी सांभळ्यु छे एवु ज हु तमने कहु छु ॥२४॥

उत्तराध्ययन सूत्रनु एकवीसमु अध्ययन संपूर्ण ॥२१॥



॥ अथ द्वाविंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते ॥

उक्तं समुद्रपालीयं नाम एकविंशतितममध्ययनम्। सम्प्रति रथनेमीयं नाम द्वाविंशतितममध्ययनं प्रारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः-पूर्वस्मिन्नध्ययने विविक्तचर्या प्रोक्ता सा च चरणे धृतिमतैव शक्यते कर्तुम्। यदि च चरणे कथंचिद् विस्रोतः समुत्पद्येत, तदा रथनेमिवद् धृतिराधेया, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यैतस्याध्ययनस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—सोरियपुरम्मि नयरे, आसि राया महड्ढिए।
वसुदेवेत्ति नामेणं, रायलक्खणसंजुए ॥१॥

छाया—शौर्यपुरे नगरे, आसीद्राजा महर्द्धिकः।
वसुदेव इति नाम्ना, राजलक्षणसंयुतः ॥१॥

टीका—'सोरियपुरम्मि' इत्यादि।

शौर्यपुरे नगरे राजलक्षणसंयुत-राज्ञः यानि लक्षणानि=चक्रस्वस्तिकाङ्कु-

---

बाईसवां अध्ययन प्रारंभ—

इक्कीसवें अध्ययन के कह देने के बाद अब यह बाईसवां अध्ययन कहा जाता है। उसके साथ इसका संबंध इस प्रकार है-इक्कीसवें अध्ययन मे जो विविक्तचर्या कही गई है वह वही साधु कर सकता है जो चारित्र में धैर्य शाली होता है। यदि चारित्र मे कथंचित्-विस्रोत-अधैर्य आ जाता है तो उस समय रथनेमी की तरह साधुको धैर्य धारण करना चाहिये। यही बात उनके दृष्टान्त से इसमे पुष्ट की जायगी, इसी संबंध से इस अध्ययन का प्रारंभ किया गया है। उसका सर्व प्रथम सूत्र यह है—'सोरियपुरम्मि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सोरियपुरम्मि नयरे रायलक्खणसंजुए वसुदेवेत्ति

બાવીસમા અધ્યયનનો પ્રારંભ—

એકવીસમું અધ્યયન કહેવાઈ ગયું છે, હવે આ બાવીસમા અધ્યયનની શરૂઆત થાય છે આનો સંબંધ એકવીસમા અધ્યયનની સાથે આ પ્રકારનો છે—એકવીસમા અધ્યયનમાં જે વિવિક્તચર્યા કહેવામાં આવેલ છે તે એજ સાધુ કહે છે કે, જે ચારિત્રમાં ધૈર્યશાળી હોય છે જો કે ચારિત્રમાં કહેવાયેલ વિસ્રોત-અધૈર્ય આવી જાય છે તો એ સમયે રથનેમીની માફક સાધુએ ધૈર્ય ધારણ કરવું જોઈએ આ વાતને એમના દૃષ્ટાંતથી આમાં પુષ્ટ કરવામાં આવશે આ સંબંધથી આ અધ્યયનનો પ્રારંભ કરવામાં આવેલ છે એનું સર્વ પ્રથમ સૂત્ર આ છે—"सोरियपुरम्मि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सोरियपुरम्मि नयरे रायलक्खण संजुए वसुदेवेत्ति नामेण महड्ढिए

शादीनि दानसत्यशौर्यादीनि वा तै, संयुक्तः=युक्तो वसुदेव, इति नाम्ना प्रसिद्धो महर्द्धिक =छत्रचामरादिविभूतियुक्तो राजाऽऽसीत् ॥१॥

मूलम्--तस्स भज्जा दुवे आसिं, रोहिणी देवई तहा।
तासिं दोण्हं पि दो पुत्ता इट्ठा य राम-केसवा ॥२॥

छाया--तस्य भार्ये द्वे आस्ता, रोहिणी देवकी तथा।
तयो द्वयोरपि द्वौ, इष्टौ च रामकेशवौ ॥२॥

टीका—'तस्स' इत्यादि।

तस्य वसुदेवस्य रोहिणी तथा देवकी द्वे भार्ये आस्ताम्। तयोर्द्वयोरपि इष्टौ=सकलप्रजावल्लभौ रामकेशवौ=बलभद्र-कृष्णाभिधानौ द्वौ पुत्रौ आस्ताम्।

नामेण महड्ढिए राया आसि-शौर्यपुरे नगरे राजलक्षणसंयुत वसुदेव इति नाम्ना महर्द्धिक राजा आसीत्) शौर्यपुर नाम के नगर में राजचिह्नो से-चक्र, स्वस्तिक, अङ्कुश आदि अथवा दान सत्य, शौर्य आदि लक्षणों से-युक्त वसुदेव इस नामका एक राजा थे जो छत्र चमर आदि महान विभूति का अधिपति थे ॥१॥

'तस्य भज्जा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(तस्स रोहिणी तहा देवई दुवे भज्जा आसि-तस्य रोहिणी तथा देवकी द्वे भार्ये आस्ताम्) वसुदेव की देवकी तथा रोहिणी नामकी दो स्त्रिया थी। (तासिं दोण्हपि दो पुत्ता इट्ठा-तयोः द्वयो अपि द्वौ पुत्रौ इष्टौ) इन दोनों के दो पुत्र थे जो प्रजाजनों को विशेष प्रिय थे (रामकेसवा-रामकेशवौ) इनमे एक का नाम राम और दूसरे का केशव था।

राया आसि-शौर्यपुरे नगरे राजसक्षणसयुत वसुदेव इति नाम्ना महर्द्धिक' राजा आसीत् शौर्यपुर नामना नगरमा राजचिन्होथी-चक्र, स्वस्तिक, अकुश आदि अथवा दान, सत्य, शौर्य आदि लक्षणोथी युक्त वसुदेव आ नामना એક રાજા હતા જે છત્ર ચમર આદિ મહાન વિભૂતિના અધિપતિ હતા ॥૧॥

"तस्स भज्जा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—तस्स रोहिणी तहा देवई दुवे भज्जा आसी-तस्य रोहिणी तथा देवकी द्वे भार्ये आस्ताम् વસુદેવને દેવકી તથા રોહિણી નામની બે સ્ત્રિઓ હતી तासिं दोण्ह पि दो पुत्ता इट्ठा-तयो द्वयो, अपि द्वौ पुत्रौ इष्टौ એ બન્નેને બે પુત્રો હતા જે પ્રજાજનોમા ખૂબ જ પ્રિય હતા रामकेसवौ-रामकेशवौ તેમા એકનુ નામ રામ અને બીજાનુ નામ કેશવ હતુ

इह च रथनेमिवक्तव्यतायाः प्रस्तावे तीर्थम् इति प्रसङ्गेन भगवन्नेमिनाथचरितेऽभिधित्सिते तद्विवाहादिषूपयोगिनः केशवस्य प्रथममभिधानम्। तत्सहचरितत्वा द्रामस्यापि। वसुदेवस्य यद्यपि द्वासप्ततिसहस्राणि दारा आसन, तथापि प्रकरण-वशादुभयोरेवाभिधानं कृतमिति बोध्यम् ॥२॥

तथा—

मूलम्—सोरियंपुरम्मि नयरे, आँसि रायाँ महिड्ढिएं।
समुद्दविजेए नाँम, रायलक्खणसंजुए ॥३॥

छाया—शौर्यपुरे नगरे, आसीद् राजा महर्द्धिकः।
समुद्रविजयो नाम, राजलक्षणसंयुत ॥३॥

टीका—'सोरियपुरम्मि' इत्यादि।

व्याख्या सरला। इह पुनः शौर्यपुराभिधानं समुद्रविजयवसुदेवयो

शंका—यहाँ पर तो रथनेमि का चरित्र कहना है?—फिर यह राम और केशव की बात बीचमें कहने का क्या प्रसंग है? इसका उत्तर इस प्रकार है—यहां रथनेमि का ही चरित वक्तव्य है फिर भी इन के विवाह आदि में उपयोगी केशव थे इस अपेक्षा उनका पहिले नाम कहा गया है और केशव के संबंध से उनके सहचारी राम का भी वर्णन कर दिया है। तथा वसुदेव की यद्यपि बहत्तर ७२ हजार स्त्रियां थी तौ भी प्रकरण वश उनकी तथा रोहिणी इन दो ही स्त्रियों का यहां कथन किया है ॥२॥

'सोरियपुरम्मि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सोरियपुरम्मि नयरे-शौर्यपुरे नगरे) उसी शौर्य नगर मे

શંકા—અહીંયા તો રથનેમીનું ચરિત્ર કહેવાનું છે, પછી આ રામ અને કેશવની વાત વચમાં કહેવાનું શું કારણ છે? તેનો ઉત્તર આ પ્રકારે છે અહીં રથનેમીનું જ ચરિત્ર કહેવાનું છે, તો પણ એના વિવાહ આદિમાં ઉપયોગી કેશવ હતા આ અપેક્ષાથી તેમનું નામ પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે અને કેશવના સંબંધથી એમના સહચરી રામનું નામ પણ કહેવાયેલ છે વસુદેવને જો કે, બોતેર હજાર સ્ત્રિઓ હતી તો પણ પ્રકરણ વશ તેમની દેવકી અને રોહિણી આ સ્ત્રિઓનું કથન અહીં કહેવામાં આવ્યું છે ॥૨॥

"सोरियपुरम्मि" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—सोरियपुरम्मि नयरे—सौर्यपुरे नगरे એજ શૌર્યપુર નગરમાં समुद्द

रैवतावस्थितिसूचनार्थम्। समुद्रविजय. प्रमुखा दश दशार्हा भ्रातर आसन्। तेषु ज्येष्ठो ज्येष्ठभ्राताऽऽसीत्। तथापि वसुदेवस्य पूर्ववर्णन विष्णुपितृत्वेनेति ज्ञा यम् ॥३॥

मूलम्—तस्स भज्जा सिवा नाम तीसे पुत्ते महाजसे।
भयवं अरिट्ठनेमित्ति, लोगनाहे दमीसरे ॥४॥

छाया—तस्य भार्या शिवा नाम, तस्या पुत्रो महायशाः।
भगवानरिष्टनेमिरिति, लोकनाथो दमीश्वर ॥४॥

टीका—'तस्स' इत्यादि।

तस्य समुद्रविजयस्य शिवा नाम भार्याऽऽसीत्। तस्या• शिवाया पुत्रो महायशा =लोकत्रयप्रसिद्धकीर्तिमान, लोकनाथ -त्रिलोकीनाथ, दमीश्वर =दमिना-जितेन्द्रियाणामीश्व =स्वामी कामार्य एव मारविजयाद्दमीश्वरत्व विज्ञेयम् भगवान् =ऐश्वर्यधारी अरिष्टनेमिरिति=अरिष्टनेमीति नाम्ना प्रसिद्ध आसीत् ॥४॥

(समुद्दविजए नाम-समुद्रविजयो नाम) समुद्रविजय नाम का राजा थे जो (रायलक्खणसजुए महड्ढिए राया आसी-राजलक्षणसयुत महर्द्धिक राजा आसीत्) राजलक्षणों से युक्त तथा छत्र, चमर आदि विभूति से विशिष्ट थे। यह वसुदेव के वडे भाई थे। केशव-विष्णु-का पिता होने से वह वसुदेव का पहिले जो वर्णन किया गया है ॥३॥

'तस्स भज्जा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तस्स सिवा नाम भज्जा आसि-तस्य शिवा नाम भार्या आसीत्) समुद्रविजय की पत्नी का नाम शिवादेवी था। (तीसे पुत्ते भयव अरिट्ठनेमि-तस्या पुत्र भगवान् अरिष्टनेमि) शिवादेवी के पुत्रका नाम भगवान अरिष्टनेमि था। (महाजसे-महायशा) महाय-

विजये नाम-समुद्रविजयो नाम समुद्रविજય નામના રાજા હતા રાયલક્ખણસજુએ મહડ્ઢિએ રાયા આસિ-राजलक्षणसयुत महर्द्धिक राजा आसीत् જે રાજ્ય લક્ષણોથી યુક્ત તથા છત્ર, ચમર આદિ વિભૂતિથી વિશિષ્ટ હતા તે વસુદેવના મોટાભાઈ કેશવ હતા કેશવ વિષ્ણુના પિતા હોવાથી વસુદેવનુ પહેલા વર્ણન કરવામા આવેલ છે ॥૩॥

"तस्स भज्जा" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—तस्स सिवानाम भज्जा आसी-तस्य शिवानाम भार्या आसीत् સમુદ્રવિજયની પત્નીનુ નામ શિવાદેવી હતુ तीसे पुत्ते भयव अरिट्ठनेमि-तस्या• पुत्र भगवान् अरिष्टनेमि શિવાદેવીના પુત્રનુ નામ અરિષ્ટનેમિ હતુ તે महाजसे-

अत्र प्रसङ्गागत श्रीमद्भगवन्नेमीश्वरचरित प्रोच्यते। तथाहि—(मनुष्यसुररूपौ प्रथमद्वितीयभवौ)

आसीदत्र भरतक्षेत्रेऽचलपुरनाम्नि नगरे स्वपराक्रमाधरीकृतसकलनृपपराक्रम श्रीविक्रमो नाम राजा। आसीत्तस्य सकलरमणीगुणधारिणी धारिणी नामदेवी। एकदा तयाऽऽम्रवृक्षो दृष्टः। ततस्तस्या धननामक एक पुत्र समुत्पन्न.। स हि समये द्विसप्ततिकलाकलापमासाद्य क्रमेण यौवनमनुगतोऽप्रतिरूपेण स्वकीयरूपेण देवानपि विजितवान। स हि कुसुमपुराधीशस्य सिंहाभिधस्य राज्ञो रूपलावण्यसम्पन्ना शीलौदार्यादिगुणयुक्ता नयनानन्दकरीं स्वसौन्द

शस्वी थे (लोगनाहे–लोकनाथ॰) तीनलोक के नाथ थे। तथा (दमीसरे–दमीश्वर॰) कुमार अवस्था मे ही इन्द्रियों के विजयी होने से जितेन्द्रियों के ये स्वामी थे।

भगवान् नेमीश्वर के सर्व प्रथम मनुष्य और देव इन दो भवों का यहा वर्णन किया जाता है–इस भरतक्षेत्र मे अचलपुर नामका नगर था। वहा के अधिपति का नाम श्री विक्रम था। इसने अपने विशिष्ट पराक्रम से सकल राजाओं को जीतलियाथा। इनकी धारिणी नामकी रानी थी। जो स्त्रियों के सकल गुणों से विभूषित थी। एक समय रानीने स्वप्नमे आम्रवृक्ष को देखा। इससे धन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। धीरे २ बढते हुए धनने बहत्तरकलाओं मे पारगत होकर यौवन अवस्था प्राप्तकी। इस अवस्था मे इसकी यौवन श्री खिल उठी। अप्रतिम अपने रूप से धनने देवों को लज्जित कर दिया। पिता ने इसका वैवाहिक सबध कुसुमपुर के अधिपति सिंह राजा की रूप लावण्य सपन्न

महायशा મહાયશસ્વી હતા. लोगनाहे-लोकनाथ ત્રણુ લોકના નાથ હતા. તથા दमीसरे-दमीश्वर કુમાર અવસ્થામાં જ ઇન્દ્રિયોના વિજયી હોવાથી જીતેન્દ્રિયોના સ્વામી હતા

ભગવાન નેમીશ્વરનુ સહુથી પહેલા મનુષ્ય અને દેવ આ બે ભવોનુ અહીંયા વર્ણન કરવામા આવે છે આ ભરત ક્ષેત્રમા અચલપુર નામનુ એક નગર હતુ ત્યાના અધિપતિનુ નામ વિક્રમ હતુ તેણે પોતાના ખૂબ પરાક્રમથી સઘળા રાજાઓને જીતી લીધા હતા તેને ધારિણી નામની રાણી હતી જે સ્ત્રીયોના સઘળા ગુણોથી વિભૂષિત હતી એક સમય રાણીયે સ્વપ્નામા આંબાના વૃક્ષને જોયુ તેનાથી તેને ધન નામનો એક પુત્ર ઉત્પન્ન થયો, ધીરેધીરે વધતા ધનકુમારે બોતેર કળાઓમા પારગત બની યૌવન અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી આ અવસ્થામા તેની યૌવનશ્રી ખીલી ઉઠી પોતાના અપ્રતિમ રૂપથી ધને દેવોને પણ લજ્જીત કરી દીધા પિતાએ તેનો વૈવાહિક સબધ કુસુમપુરના અધિપતિ સિંહ રાજાની રૂપ લાવણ્ય સપન્ન

र्याधरीकृतविद्याधरीं स्वानुरक्ता धनवती नामकन्या परिणीतवान्। स तया सह विविधान् कामभोगान् भुञ्जानोऽन्यदा निदाघकाले वनविहारेच्छया नन्दनवनसम-सर्वर्तुपुष्पफलसमन्वितं वनं गतवान्। तत्र तौ तृषाशुष्यन्मुखकण्ठताल्लुकं श्रमातिशयेन मूर्च्छितं। क्षितौ पतितं तपःकृशाङ्गं गुणैरकृशं शान्तरसोदधिं श्रमणं सदोरक-मुखवस्त्रिकासुशोभितमुखं मुनिं दृष्टवन्तौ। तं तथाविधं दृष्ट्वा तौ दम्पती ससम्भ्रमं त्वरितं तत्समीपे समागतवन्तौ। वहमानेन शीतलेन पवनेन

धनवती कन्या के साथ कर दिया। यह कन्या शील औदार्य आदि प्रशस्त गुणों से विभूषित थी तथा अपने रूप लावण्य से विद्याधर कन्याओं को भी तिरस्कृत करती थी। इसको देखने वाले के नयनों को अपार आनंद प्राप्त होता था। धनकुमार धनवती के साथ विविध काम भोगो को भोगता हुआ अपने समय को व्यतीत करने लगा। एक समय की बात है कि-ग्रीष्मऋतुमे धनकुमार इस धनवती को साथ लेकर वन क्रीडा की इच्छा से सर्वर्तुपुष्पफलवाले वन मे जो कि नंदनवन के समान विशेष शोभा का धाम बना हुआ था गया। वहां इन दोनों ने गर्मी की अतिशयता से पीडित होने के कारण एक मुनिराज का जो कि मुख पर निबद्ध सदोरकमुखवस्त्रिका से सुशोभित थे जमीन पर मूर्च्छित अवस्था में पडे हुए देखा। तृषा से इनका मुख कंठ तथा तालु सूख रहा था। तपस्या से इनका शारीरिक एक २ अवयव कृश हो रहा था। सम्यग्दर्शन आदि गुणों से उनका चित्त किसी भी तरह शिथिल नहीं बन पाया था। उस समय भी वे शान्त-

ધનવતી કન્યાની સાથે કરી દીધો તે કન્યા શીલ ઔદાર્ય આદિ પ્રશસ્ત ગુણોથી વિભૂષિત હતી તથા પોતાના રૂપ લાવણ્યથી વિદ્યાધર કન્યાઓને પણ ઝાખી પાડતી હતી તેને જોનારની આંખોને અપાર આનંદ પ્રાપ્ત થતો હતો ધનકુમાર ધનવતીની સાથે વિવિધ કામભોગો ભોગવતા ભોગવતા પોતાના સમયને વ્યતીત કરતા હતા એક સમયની વાત છે કે, ગ્રીષ્મઋતુમા ધનકુમાર આ ધનવતીને સાથે લઈને વનક્રીડાની ઈચ્છાથી સર્વ પ્રકારના ફળ પુષ્પોથી સુશોભિત એવા નન્દનવન સમા ઉદ્યાનમા ગયા ત્યા એ બન્નેએ ઘણી જ ગરમીની અતિશયતાથી પીડિત થવાના કારણે એક મુનિરાજને જેના મુખ ઉપર સદોરકમુખવસ્ત્રિકા હતી તેમને જમીન ઉપર મૂર્ચ્છિત અવસ્થામા પડેલા જોયા તરસથી તેમનુ ગળુ, મોઢુ અને તાળવુ સુકાઈ રહ્યુ હતુ તપસ્યાના કારણે તેમના શારીરિક દરેક અવયવ કૃષ બની ગયેલ હતા સમ્યગ્દર્શન આદિ ગુણોથી તેમનુ ચિત્ત કોઈ પણ રીતે શિથિલ બનેલ

तन्मूर्च्छा निवृत्ता। प्राप्तस्वास्थ्य तं मुनिं विनयावनतो धन प्रणम्य 'भदन्तानां कथमेवमवस्थाऽभूदिति पृष्टवान। ततो गुणनिधिर्मुनिरब्रवीत्-अहमस्मि मुनि चन्द्रनामा। पुरा स्वगुरुणा मित्राचार्येण सह ग्रामानुग्राम विहरन्नहमेकदाऽरण्य सार्थाद् वियुक्तो दिग्भ्रमेणेतस्ततः परिभ्रमन् श्रान्तः क्षुधापिपासासकुलोऽत्र मूर्च्छितो जातोऽस्मि। अनन्तर युष्मत्कृतोपचारैः पुनर्लब्धसंज्ञोऽस्मि, यथाऽहं शीतलेन पवनेन स्वस्थो जातः, तथैव युवाभ्यामपि शान्तभावेन पद्गाय

रस के समुद्र स्वरूप ज्ञात होते थे। मुनीराजको इस परिस्थितिमे देखकर ये दोनों दम्पति शीघ्र ही उन के समीप जा पहुँचे। कुछसमय बाद बहतेहुए शीतल पवन से उनकी मूर्च्छा दूर हुई। अब वे अच्छीतरह स्वस्थ हुए तब धनकुमारने हाथजोडकर बडी विनय के साथ उनसे मूर्च्छित होने का कारण पूछा। धनकुमार की जिज्ञासा का समाधान करते हुए गुणनिधि उन मुनीराजने कहा कि-हे धनकुमार! मेरा नाम मुनिचद्र है। मैं इस अवस्था मे इसलिये आगया हू कि मैं अपने गुरुदेव मित्राचार्य के साथ ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ एक समय उनसे जगलमे छूटा पड गया। दिग्भ्रम से इतस्त परिभ्रमण करने पर भी मुझे उनका साथ नही मिला-अत एकाकी होकर मै इधर उधर उनकी तलाश करने लगा परन्तु वे मुझे नही मिल सके-और मैं श्रान्त एव क्षुधा तृषा से अत्यत व्यथित होकर मूर्च्छित हो गया और इस स्थिति मे आपहुँचा। शीतल पवन से मै स्वस्थ हुआ हू। इसी तरह

न हतु આ સમયે પણ તેઓ શાતરસના સમુદ્ર સ્વરૂપ દેખાતા હતા મુનિરાજને આવી સ્થિતિમા જોઈને એ બન્ને દપતિ તરત જ તેમની પાસે જઈ પહોચ્યા થોડા સમય બાદ ફુકાતા શીતળ પવનના કારણે તેમની મૂચ્છૉ દૂર થઈ જ્યારે તેઓ સારી રીતે સ્વસ્થ થયા ત્યારે ધનકુમારે હાથ જોડીને ઘણા વિનયની સાથે તેમને મૂર્છિત થવાનુ કારણ પૂછ્યુ ધનકુમારની જીજ્ઞાસાનુ સમાધાન કરતા એ ગુણનિધિ મુનીરાજે કહ્યુ કે, હે ધનકુમાર! મારૂ નામ મુનીચદ્ર છે હુ આવી અવસ્થામા એ કારણથી આવી ગયેલ છુ કે, હુ મારા ગુરૂદેવ મિત્રાચાર્યની સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા એક સમય જગલમા તેમનાથી વિખુટો પડી ગયો દિશાના ભ્રમથી અહી તહી ભટકવા છતા પણ મને તેમનો સાથ ન મળ્યો આથી એકાકિ થઈને હુ અહીતહી તેમની તપાસ કરવા લાગ્યો પરતુ તેઓ મને મળી ન શકયા અને હુ શ્રાન્ત અને ભૂખ તરસથી અત્યત વ્યથિત બનીને મૂર્છિત બની ગયો અને આ સ્થિતિમા આવી પહોચ્યો શીતળ પવનથી હુ સ્વસ્થ થયો છુ

जीवेषु अहैतुकी दया कर्तव्या। दयापरिज्ञानं च जिनप्रोक्तधर्मपरिज्ञानेन विना न संभवति। अतो युवाभ्यां मया वक्ष्यमाणो जिनप्रोक्तधर्मः श्रद्धापुरस्सरं श्रोतव्यः, इत्युक्त्वा मुनिस्ताभ्यां सम्यक्त्वाणुव्रतादिकं जिनप्रोक्तं श्रावकधर्मं प्रोक्तवान्। ततस्तौ तदन्तिके श्रावकधर्मं प्रतिपन्नौ। ताभ्यां प्रार्थितो मुनिचन्द्रो मुनिरचलपुरोपाश्रये समवसृत। धनवतीधनाभ्यां च स चतुर्विधाहारं प्रतिलम्भितः। ताभ्यां मुनिसमीपे प्रतिदिवसं धर्मशिक्षा श्रुता। तदनु ताभ्यामनुज्ञातः स मुनिस्ततो

तुम भी अपने शान्तभाव से षट्काय जीवों के ऊपर बिना किसी निमित्त के सदा दया का भाव रखो। दया का परिज्ञान, बिना जिनधर्म के अनुशीलन के संभवित नहीं हो सकता है—अतः मैं सब से पहिले उसी जिनधर्म का स्वरूप आप लोगों को समझाता हूं, आप लोग उसको सावधान होकर श्रद्धापूर्वक सुनें इस प्रकार कहकर मुनिराज ने उनको श्रावक धर्म का उपदेश दिया। सम्यक्त्व तथा जिनप्रोक्त अनुव्रत आदि का स्वरूप उनको अच्छी तरह समझाया। मुनिराज के श्रीमुख से इस प्रकार धार्मिक देशना सुनकर उन दोनोंने श्रावक के व्रत अंगीकार किये। धनकुमार और धनवतीने मुनिराज से अचलपुर पधारने की विनन्ती की। उस विनन्ती को स्वीकार कर मुनिराज अचलपुर पधारे वहां के उपाश्रय मे उतरे। धनवती और धनकुमारने विपुल अशनपानादि से मुनिराज को प्रतिलम्भित किया तथा प्रतिदिन उनके पास जा कर उनसे धर्म का उपदेश भी सुना। मुनिराज कुछ काल बाद वहां से विहार कर

આજ પ્રમાણે તમે પણ પોતાના શાન્તભાવથી ષટ્કાય જીવોના ઉપર કાંઈ નિમિત્ત વગર સદા દયાનો ભાવ રાખો. દયાનું પરિજ્ઞાન જીનધર્મના અનુસરણ સીવાય સંભવિત બનતું નથી આથી હું સહુથી પહેલાં એ જૈનધર્મનું સ્વરૂપ આપ લોકોને સમજાવું છું આપ લોક સાવધાન બનીને તેને શ્રદ્ધાપૂર્વક સાંભળો આ પ્રકારે કહીને મુનિરાજે તેમને શ્રાવકધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. સમ્યકત્વ તથા જીનપ્રોક્ત અનુવ્રત આદિનું સ્વરૂપ તેમને સારી રીતે સમજાવ્યું મુનિરાજના શ્રીમુખથી આ પ્રકારે ધાર્મિક દેશના સાંભળીને એ બન્નેએ શ્રાવકના વ્રતનો અંગીકાર કર્યો ધનકુમાર અને ધનવતીએ મુનિરાજને અચલપુર પધારવાની વિનંતી કરી તે વિનંતિનો સ્વીકાર કરીને મુનીરાજ અચલપુર પહોંચ્યા અને ઉપાશ્રયમાં ઉતર્યા ધનવતી અને ધનકુમારે વિપુલ અશનપાનાદિકથી મુનિરાજને પ્રતિલંભિત કર્યા તથા પ્રતિદિન એમની પાસે જઈને તેમની પાસેથી ધર્મનો ઉપદેશ પણ સાંભળ્યો. મુનીરાજ થોડા સમય બાદ ત્યાંથી વિહાર કરી ગયા ધનકુમારે વિશેષ રીતિથી ધનવતીની સાથે શ્રાવક ધર્મનું

तन्मूर्च्छा निवृत्ता। ससस्वास्थ्य तं मुनिं विनयावनतो धनः प्रणम्य 'भवन्ताना कथमेवमवस्थाऽभूदिति पृष्टवान्। ततो गुणनिधिर्मुनिरब्रवीत्–अहमस्मि मुनि चन्द्रनामा। पुरा स्वगुरुणा मित्राचार्येण सह ग्रामानुग्राम विहरन्नेकदाऽरण्य सार्थाद् वियुक्तो दिग्भ्रमेणेतस्ततः परिभ्रमन श्रान्तः क्षुधापिपासाकुलोऽत्र मूर्च्छितो जातोऽहम्। अनन्तरं युष्मत्कृतोपचारैः पुनर्लब्धसंज्ञोऽस्मि, यथाऽह शीतलेन पवनेन स्वस्थो जात, तथैव युवाभ्यामपि शान्तभावेन पद्मराग

रस के समुद्र स्वरूप ज्ञात होते थे। मुनीराजको इस परिस्थिति मे देख-कर ये दोनों दम्पति शीघ्र ही उनके समीप जा पहुँचे। कुछ समय बाद वहतेहुए शीतल पवन से उनकी मूर्च्छा दूर हुई। अब वे अच्छी तरह स्वस्थ हुए तब धनकुमारने हाथजोडकर बडी विनय के साथ उनसे मूर्च्छित होने का कारण पूछा। धनकुमार की जिज्ञासा का समाधान करते हुए गुणनिधि उन मुनीराजने कहा कि–हे धनकुमार! मेरा नाम मुनिचद्र है। मैं इस अवस्था में इसलिये आगया हूं कि मैं अपने गुरुदेव मित्राचार्य के साथ ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ एक समय उनसे जगलमे छूटा पड गया। दिग्भ्रम से इतस्त परिभ्रमण करने पर भी मुझे उनका साथ नही मिला–अत एकाकी होकर मैं इधर उधर उनकी तलाश करने लगा परन्तु वे मुझे नही मिल सके–और मै श्रान्त एव क्षुधा तृषा से अत्यत व्यथित होकर मूर्च्छित हो गया और इस स्थिति मे आपहुँचा। शीतल पवन से मैं स्वस्थ हुआ हू। उसी तरह

न હતુ આ સમયે પણ તેઓ શાતરસના સમુદ્ર સ્વરૂપ દેખાતા હતા મુનિરાજને આવી સ્થિતિમા જોઈને એ બન્ને દપતિ તરત જ તેમની પાસે જઈ પહોચ્યા થોડા સમય બાદ ફુકાતા શીતળ પવનના કારણે તેમની મૂર્છા દૂર થઈ જ્યારે તેઓ સારી રીતે સ્વસ્થ થયા ત્યારે ધનકુમારે હાથ જોડીને ઘણા વિનયની સાથે તેમને મૂર્છિત થવાનુ કારણ પૂછયુ ધનકુમારની જીજ્ઞાસાનુ સમાધાન કરતા એ ગુણનિધિ મુનીરાજે કહ્યુ કે, હે ધનકુમાર! મારૂ નામ મુનીચદ્ર છે હુ આવી અવસ્થામા એ કારણથી આવી ગયેલ છુ કે, હુ મારા ગુરૂદેવ મિત્રાચાર્યની સાથે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા એક સમય જ ગલમા તેમનાથી વિખુટો પડી ગયો દિશાના ભ્રમથી અહી તહી ભટકવા છતા પણ મને તેમનો સાથ ન મળ્યો આથી એકાકિ થઈને હુ અહીતહી તેમની તપાસ કરવા લાગ્યો પર તુ તેઓ મને મળી ન શક્યા અને હુ શ્રાન્ત અને ભૂખ તરસથી અત્ય ત વ્યથિત બનીને મૂર્છિત બની ગયો અને આ સ્થિતિમા આવી પહોચ્યો શીતળ પવનથી હુ સ્વસ્થ થયો છુ

वान्। अन्ते च धनवतीयुक्तः स धनमुनिरनशनं कृत्वा कालधर्ममनुप्राप्तः। ततस्तौ सौधर्मे देवलोके शक्रसमौ सुरौ भूत्वा समुत्पन्नौ। इति प्रथमद्वितीयभवौ॥

(अथ मनुष्यसुररूपौ-तृतीयचतुर्थभवौ)

इतश्च्युतो धनजीवोऽत्रैव भरतक्षेत्रे वैताढ्योत्तरश्रेण्यां सूरतेजः पुरे सूर नाम्ना खेचरचक्रवर्तिना विद्युन्मत्या भार्याया कुक्षौ समुत्पन्नः। पूर्णे समये सा पुण्यलक्षणं सुतं जनितवती। मातापितरौ महता समुत्सवेन 'चित्रगति' इति तस्य नामकृतवन्तौ। क्रमेण स वर्द्धमानः स कलाचार्यात् सकलाः कलाः स्वायत्तीकृतवान्, तदनन्तरमसौ तारुण्यं प्राप्तवान्।

देश देना प्रारंभ किया। इससे अनेक भव्यजीवों का परम उपकार हुवा। इस प्रकार विचरते हुए अन्त मे धनवती और धनमुनिने अनशन करके काल के अवसर काल करके वे दोनों सौधर्मस्वर्ग मे शक्रसम देव उत्पन्न हुए। ये इनके प्रथम एवं द्वितीय भव हैं।

मनुष्य एवं देवरूप तृतीय और चतुर्थ भव इनके इस प्रकार हे -

जब इन दोनों की देवपर्याय के भव और स्थिति के समाप्त होने पर वे दोनों वहा से चवे। सो धन का जीव तो इसी भरतक्षेत्र मे वैताढ्यपर्वत की उत्तर श्रेणी मे जो सूरतेज पुर था, वहा के विद्याधराधिपति सूर की धर्मपत्नी विद्युन्माला की कुक्षि मे पुत्ररूप से अवतरित हुआ। तथा धनवती का जीव वैताढ्य पर्वत की दक्षिण श्रेणी मे वर्तमान शिवसद्म नाम के नगर मे अनङ्गसिंह राजा की रानी शशिप्रभा की कुक्षि मे पुत्रीरूप से उत्पन्न हुवा। उनके माता पिताने धन के जीव का नाम चित्रगति और धनवती के जीव का नाम रत्नवती रक्खा। चित्रगति

ભવ્ય જીવો ઉપર ઉપકાર થયો આ આપ્રમાણે વિચરતા વિચરતા અંતે ધનવતી અને ધનમુનિએ અનશન કરીને કાળના અવસરે કાળ કરીને તે બન્ને સૌધર્મ સ્વર્ગમાં શક્રસમ દેવઉત્પન્ન થયા એ એમનો પ્રથમ અને બીજો ભવ છે

મનુષ્ય અને દેવરૂપ તેમનો ત્રીજો અને ચોથો ભવ આ પ્રકારે છે

જ્યારે દેવ પર્યાયનો ભવ અને સ્થિતિ સમાપ્ત થવાથી એ બન્ને ત્યાંથી ચવ્યા ત્યારે ધનનો જીવ આ ભરતક્ષેત્રમા વૈતાઢ્ય પર્વતની ઉત્તર શ્રેણીમા જે સૂરતેજપુર હતુ ત્યાના વિદ્યાધરાધિપતિ સૂરની ધર્મપત્ની વિદ્યુન્માળાના ઉદરથી પુત્રરૂપથી અવતરીત થયો તથા ધનવતીનો જીવ વૈતાઢ્ય પર્વતની દક્ષિણ શ્રેણીમા વર્તમાન શિવસદ્મ નામના નગરમા અનંગસિંહ રાજાની રાણી શશીપ્રભાના ઉદરથી પુત્રીરૂપે ઉત્પન્ન થયો એમના માતા પિતાએ ધનના જીવનુ નામ ચિત્રગતિ અને ધનવતીના જીવનુ નામ રત્નવતી રાખ્યુ ચિત્રગતિ બોતેર ૭૨ વિદ્યાઓમા નિપુણ

विहतवान। धनवत्या सहितो धनोऽपि विशुद्ध श्रावकधर्मं पालयन पित्रा दत्तराज्यं नीतिपुरस्सर प्रजा परिपालयन बहूनि वर्षाणि सानन्द नीतवान।

अथान्यदाऽचलपुरे वसुन्धर नामा मुनि समवसृतः। तत्समवसरण वृत्तान्त श्रुत्वा धनवती सहितो धननृपोऽपि धर्मदेशना श्रोतु तदन्तिके गत्वा त प्रणम्य भवपाथोधितरणिभूता धर्मदेशना श्रुतवान। धर्मदेशनाश्रवणेन सजात वैराग्य पुत्रे राज्यभार समारोप्य धनवतीसहितो महता समारोहेण वसुन्धराचार्यसमीपे दीक्षा गृहीतवान। क्रमेण गीतार्थ सन स धनमुनिराचार्यपद प्राप्य जिनोक्तविशुद्धधर्मोपदेशदानेन बहून भविजनान अनुगृह्णन भूमण्डले विहार कृत

गये। धनकुमारने धनवती सहित श्रावक धर्मका विशुद्धरीति से परिपालन करते हुए अनेक वर्ष निकाले और पिता द्वारा प्रदत्त राज्य का सम्य क्रीति से परिपाल करते हुए आनद से अपना समय व्यतीत किया।

एक समयकी बात है की अचलपुर मे वसुन्धर नामके एक मुनिराज आये हुए थे राजाको जब उनके आगमन के समाचार ज्ञात हुए तब वे अपनी धनवती रानी के साथ उनको वदना करने के लिये उनके पास गये। वहाँ ससारसमुद्र से पार उतारने के लिये नौका जैसी धर्मदेशना सुनी, उन्होंने जब धर्मदेशना सुनी तब उसके प्रभावसे उनको वहीं पर वैराग्यभाव जागृत हो गया। घर पर आकर राजाने अपने पुत्र को उसी समय बुलाकर उसको राज्यतिलक कर दिया। और धनवती सहित स्वय बडे समारोह के साथ उन्हीं वसुन्धराचार्य के पास जाकर सयम अगीकार किया। क्रमश' गीतार्थ बनकर धनमुनि ने आचार्यपद प्राप्त करके जिनोक्त विशुद्ध धर्म का भव्य जीवो को उप-

વિશુદ્ધ રીતિથી પરિપાલન કરીને અનેક વર્ષ વીતાવ્યા અને પિતા તરફથી મળેલા રાજ્યનુ સમ્યક રીતથી પરિપાલન કરીને આનદથી પોતાનો સમય વ્યતીત કર્યો

એક સમયની વાત છે કે, અચલપુરમા વસુન્ધર નામના એક બીજા મુનિરાજ આવેલ હતા રાજાને જ્યારે એમના આગમનના સમાચાર મળ્યા ત્યારે તે પોતાની ધનવતી રાણીની સાથે તેમને વદના કરવા માટે તેમની પાસે ગયા ત્યા સસાર સમુદ્રથી પાર ઉતરવા માટે નૌકા જેવી ધર્મદેશના સાભળી એમણે જ્યારે ધર્મ દેશના સાભળી ત્યારે તેના પ્રભાવથી તેમને ત્યા જ વૈરાગ્યભાવ જાગૃત થઈ ગયો ઘેર પહોચીને રાજાએ પોતાના પુત્રને એ જ સમયે બોલાવીને રાજતિલક કરી દીધુ અને ધનવતીની સાથે પોતે ભારે સમારોહથી એ વસુન્ધરાચાર્યની પાસે જઈને સ યમ અ ગીકાર કર્યો ક્રમશ ગીતાર્થ બનીને ,ધનમુનિએ આચાર્યપદ પદ પ્રાપ્ત કર્યું અને જીનોક્ત વિશુદ્ધ ધર્મનો ભવ્ય જીવોને ઉપદેશ દેવાનો પ્રાર ભ કર્યો એમનાથી અનેક

स्विन्याः राज्याः पुत्रो जैनधर्मरतो गुणवान् सुमित्रो नाम, एका पुत्री च कुसुमश्रीर्नाम या कलिङ्गदेशाधिपतये कनकसिंहाय दत्ता अपरस्या भद्रा राज्याः पुत्रश्छद्मपरायणो दुर्गुणानामाकरो विनयवर्जितो धर्मरुचिरहितः पद्मनामाऽऽसीत्। स्वपुत्रसपत्नीपुत्रयोरेवं महदन्तरं दृष्ट्वा भद्रा मनस्यचिन्तयत्—सतिसुमित्रे मम पुत्रो न कदाऽपि राज्यं प्राप्स्यति, अतो मया कोऽपि यत्नः कर्तव्यो येन मम पुत्रस्य राज्यप्राप्तिर्भवेत्, इति चिन्तयित्वा साऽन्यदा सुमित्राय राजकुमाराय विषमं विषमदात्। विषपानानन्तरं सुमित्रो मूर्च्छितोऽभवत्। तन्मूर्च्छावृत्तान्तं समुपलभ्य भृशमाकुलस्तत्पिता सुग्रीवभूपो वैद्यैः सह तत्रागतः। मन्त्रादिभिर्बहूपाय

नाम सुमित्र था सुमित्र गुणवान एवं जिन धर्म का भक्त था सुमित्र की एक बहिन थी जिसका नाम कुसुमश्री था। राजा सुग्रीव ने इसको कलिंग देश के अधिपति कनकसिंह को दी थीं। भद्रा नाम की जो दूसरी सुग्रीव की धर्मपत्नी थी उसके भी एक पुत्र था इसका नाम पद्म था। यह महा छलकपटी तथा दुर्गुणों की खान था। अविनयी एवं धर्मरुचि से सर्वथा रहित था। भद्राने अपने पुत्र पद्म और सपत्नी के पुत्र सुमित्र में इस तरह बडा भारी अन्तर देखकर विचार किया—सुमित्र के रहने पर मेरे पुत्र को राज्य का अधिपति होना सर्वथा असंभव है। अतः इस शल्य को जैसे बने शीघ्र ही मार देना चाहिये—इसी में पद्म का हित है। ऐसा विचार कर उसने सुमित्र राजकुमार को विषम विष दे दिया। विषपान करते ही सुमित्र मूर्च्छित हो गया। सुग्रीव को जब यह खबर लगी तो वह वैद्यों को साथ में लेकर अत्यंत आकुलित बन घटना स्थल

राणीयो હતી મોટી યશસ્વનીને એક પુત્ર હતો જેનુ નામ સુમિત્ર હતુ સુમિત્ર ગુણવાન અને જૈનધર્મનો ભક્ત હતો સુમિત્રને એક બહેન હતી તેનુ નામ કુસુમશ્રી હતુ રાજા સુગ્રીવે તેને કલીંગ દેશના અધિપતિ કલિંગસિંહને આપેલ હતી ભદ્રા નામની સુગ્રીવની જે બીજી પત્ની હતી તેને પણ એક પુત્ર હતો તેનુ નામ પદ્મ હતુ તે મહા છળકપટી અને દુર્ગુણની ખાણ હતો અવિનયી અને ધર્મરૂચીથી સર્વથા રહિત હતો ભદ્રાએ પોતાના પુત્ર પદ્મ અને યશસ્વિનીના પુત્ર સુમિત્રમા આ પ્રમાણેનો ભારે અતર જોઇને વિચાર કર્યો કે, સુમિત્રના રહેવાથી મારા પુત્રનુ રાજ્યના અધિપતિ થવુ સર્વથા અસભવ છે આથી આ સુમિત્રને જેમ બને તેમ દૂર કરી દેવો જોઇએ આમા જ મારા પુત્ર પદ્મનુ હિત છે આવો વિચાર કરી તેણે સુમિત્ર રાજકુમારને વિષમ ઝેર આપી દીધુ ઝેર અપાતા જ સુમિત્ર મૂર્છિત બની ગયો સુગ્રીવને જ્યારે આ વાતની ખબર પડી ત્યારે તે વૈદ્યોને સાથે લઈને અત્યત વ્યાકુળચિત્તવાળો બનીને જ્યા સુમિત્ર મૂર્છિત

सौधर्मदेवलोकान्च्युतो धनवती जीवो वैताढ्यगिरिश्रेणिस्थिते शिव सद्मनामके नगरेऽनङ्गसिंहस्य राज्ञः शशिप्रभाया राज्याः कुक्षौ समुत्पन्न । पूर्ण समये शशिप्रभा पुण्यरूपा पुत्रीं जनीतवती। मातापितृभ्या महता महोत्सवेन रत्नवतीति तन्नाम कृतम्। क्रमेण प्रवर्धमाना सा सकला कला अधीतवती। प्राप्तयौवना ता दृष्ट्वा तत्पिता 'कोऽस्या' पतिर्भविष्यती' ति कमपि नैमित्तिक पृष्टवान्। ततो नैमित्तिकस्त प्रोक्तवान्–यस्तवकरात् दिव्य खड्गबलाद् ग्रहीष्यति, तदा च तदुपरि दिव्यपुष्पवृष्टिर्भविष्यति, स एव तव जामाता भविष्यति'। एव नैमित्तिकवचन निशम्य तत्पिताऽनङ्गसिंह परमप्रमुदितो जात ।

आसीत्तस्मिन्नेव कालेऽस्मिन् भरतक्षेत्रे चक्रपुर नगरे सुग्रीवो नाम राजा। तस्यास्तो द्वे राज्यौ यशस्विनी भद्रेति च। आसीत् तयोर्मध्ये ज्येष्ठाया यश

वहत्तर ७२ कलाओं में निपुण हो गया और तारुण्यवय को प्राप्त किया। रत्नवती भी सकल कलाओं में अभ्यस्त बनकर युवावस्था को पाई। मातापिताने जब इसको तरुणावस्था सपन्न देखा तो उनके चित्तमें इसके परणाने की चिन्ता लगी। उन्होंने 'कौन इसका पति होगा' इस बात को किसी नैमित्तिक से पूछा। नैमित्तिक ने वर होने की निशानीरूप में अनगसिंह से कहा कि– देखो–जो–व्यक्ति तुम्हारे हाथ मे से बलात्कार से तलवार खींच लेगा और ऐसा करने पर जिसके ऊपर दिव्य पुष्पवृष्टि होगी वही तुम्हारा जामाता बनेगा। इस प्रकार नैमित्तिक के वचनो से विश्वस्त होकर अनगसिंह निश्चिन्त बनकर आनदित हुआ।

जिस समय की यह बात है उस समय इसी भरतक्षेत्र मे चक्रपुर नाम के नगर में एक सुग्रीव नामके राजा थे। उनकी यशस्विनी और भद्रा नामकी दो रानिया थी। बडी यशस्विनी के एक पुत्र था जिसका

થઈ ગયા અને તરૂણવયને પ્રાપ્ત કરી રત્નવતી પણ બધી કળામા નિપુણ બનીને યુવાવસ્થાએ પહોચી માતા પિતાએ જ્યારે તેને તરૂણ અવસ્થા સપન્ન જોઈ ત્યારે તેને પરણાવવાની ચિંતા થવા લાગી તેઓએ "આનો પતિ કોણ થશે" આ વાત કોઈ જ્યોતિષીને પૂછી જ્યોતિષીએ એના પતિ અગેની નીશાનીમા અનગસિંહને કહ્યુ કે, જુઓ જે વ્યક્તિ તમારા હાથમાથી બળાત્કારે તરવાર ખેચી લેશે અને એવુ થવા છતા પણ દિવ્ય પુષ્પવૃષ્ટિ થશે તેજ તમારો જમાઈ બનશે આ પ્રકારના જ્યોતિષીના વચનોથી વિશ્વાસુ બનીને અનગસિહ નિશ્ચીંત બની આનદિત બન્યા

જે સમયની આ વાત છે એ સમયે આ ભરતક્ષેત્રમા ચક્રપુર નામના નગરમા એક સુગ્રીવ નામનો રાજા હતો તેને યશસ્વિની અને ભદ્રા નામની બે

भिमन्त्रिताम्भोभिः सुमित्रमभ्यषिञ्चत् । अभिषेकसमनन्तरमेव स प्राप्तचैतन्यः 'कथमत्र एते जना समागताः' इति पृष्टवान् । ततः सुग्रीवः प्रोक्तवान्-पुत्र ! तव विमाता तुभ्यं विषमदात् । तत्प्रभावेण त्वं मूर्च्छितो जातः । अत एव एते पौरजना अस्मदादिभिः सहात्र शोकाकलिताः समागता । बहुधा समुपचरितो-ऽपि त्वं विषमुक्तो न जातः । परन्तु दैववशादयमस्माकं निष्कारणबन्धुरत्र समागतः । अनेन त्वं मन्त्राम्भसाऽभिषिच्य निर्विषः कृतः । पितुर्वचनं निशम्य सुमित्रः कृतज्ञतां प्रदर्शयन् कृताञ्जलिः सन् प्राह-भ्रातः स्वनामवशा

समस्त कारण जानकर उसने उसी समय मंत्रों से जल को मंत्रित-कर उस कुमार के ऊपर छिडका। जलके छिडकते ही कुमार की बेहोशी दूर हो गई। तब सचेत होकर "यह जनमेदनी यहा एकत्र क्यों हुई है" ऐसा कुमारने पूछा। पिता सुग्रीवने कुमार से कहा बेटा ! तुम्हारी विमाताने तुमको विषपान करा दिया था-सो उसके प्रभावसे तुम मूर्च्छित हो गये थे। पुरवासियों को जब तुम्हारे मूर्च्छित होने की बात ज्ञात हुई तो सब के सब शोक से आकुलित होकर यहा पर आये हैं। विविध उपचार करने पर भी जब तुम निर्विष नही हो सके तो सबको बेहद चिन्ता बढ़ने लगी। इतने मे ही भाग्य-वशात् निष्कारणबंधु ये महाशय भी यहा आ पहुँचे। इन्होंने तुम्हारी इस परिस्थिति को देखकर मंत्रो से जलको मंत्रित किया और फिर उसको ज्यों ही तुम्हारे ऊपर छाटा तो बेटा ! देखते २ तुम बिलकुल स्वस्थ हो गये हो। पिता के इस प्रकार के वचन सुनकर कृतज्ञता

કરૂણ વિલાપ કરી રહેલા સુગ્રીવ રાજાને સાભળ્યા ત્યારે તે આકાશ માર્ગથી ત્યા ઉતર્યો અને રોવાનુ સઘળુ કારણ જાણીને તેણે એ સમયે મંત્રોથી પાણીને મંત્રીને તે કુમારની ઉપર છાટયુ એ પાણીના છાટવાથી કુમારની બેહોશી દૂર થઈ ગઈ ત્યારે સચેત બનીને "આ જનમેદની અહીં કેમ એકત્રિત થયેલ છે" એવુ કુમારે પૂછયુ પિતા સુગ્રીવે કુમારને કહ્યુ-બેટા ! તમારી ઓરમાન માતાએ તમને ઝેર આપેલ હતુ જેના પ્રભાવથી તમો મૂર્છિત બની ગયેલ હતા પુરવાસીઓએ તમારા મૂર્છિત થવાની વાત જ્યારે જાણી ત્યારે સઘળા શોકથી વ્યાકુળ બનીને અહીં આવેલ છે અનેક પ્રકારના ઉપચારો કરવા છતા પણ તમો જ્યારે નિર્વિષ ન બની શકયા ત્યારે સઘળાને બેહદ ચિંતા થવા લાગી આ સમયે ભાગ્યવશાત નિષ્કારણબંધુ આ મહાશય પણ અહીં આવી પહોચ્યા તેઓએ તમારી આ પરિસ્થિતિને જોઈને તેમણે મંત્રોથી પાણીને મંત્રીને અને મંત્રાયેલા પાણીને જ્યારે તમારા ઉપર છાટયુ ત્યા તો જોતજોતામાજ તમો એકદમ સ્વસ્થ બની ગયા પિતાના આ પ્રકારના વચનોને

चरितोऽपि स मूर्च्छारहितो नाभूत्। ततः पौरैः सह राजा सुग्रीवस्तस्य गुणान् सम्मृत्य २ भृशं क्रन्दितवान्। भद्रा राणी तस्मिन्नेव काले ततः पलाय्य क्वापि गता। तामपश्यन्तो जना एवं निश्चितवन्तो यद्राजकुमाराय भद्रैव विषमदात्। अत एवास्मिन् विषमेऽपि समये सा न दृश्यते। पापात्मना पापकृत्यं लशुनगन्धवत्प्रकाशितं भवत्येव। सुमित्रकुमारविपत्तिशोकेन व्याकुलिते सान्तःपुरे सपरिजने सपौरे सुग्रीवनृपे दैवादाकाशमार्गेण गच्छन् चित्रगतिः करुण विलापशब्दं श्रुत्वा तत्रैवावतीर्णः। सर्वं वृत्तान्तं ज्ञात्वा स मन्त्रा

पर आकर उपस्थित हुवा। मंत्र आदि द्वारा विविध चिकित्सा करने पर भी वह जब मूर्च्छा विहीन नहीं हुआ—तब सुग्रीव को बडी भारी चिन्ता हुई वह इसी अवस्था मे उसके गुणों को याद कर २ के विलाप करने लगा। भद्रा रानी उस समय न मालूम भागकर कहा चली गई थी। लोगों ने उस को घटना (विषदियाहुवा) स्थल पर नहीं देखा तो यह निश्चय कर लिया कि इसको उसने ही विष दिया है, इसी कारण वह इस आपत्ति के समय मे भी यहा उपस्थित नही हुई है। जैसे लहशुन की गध छुपाने पर भी प्रकट हो जाती है उसी तरह पापियों का पापकृत्य भी छिपाने पर भी नही छिपता है वह तो सर्व समक्ष प्रकट होकर बोलता ही है। इसी समय भाग्यवशात् धन का जीव चित्रगति नाम का विद्याधर आकाशमार्ग से होकर कही जा रहा था। उसने ज्यों ही सुमित्रकुमार विपत्ति के शोक से व्याकुल होकर अन्त पुर सहित, पुरवासी सहित परिजन सहित करूण विलाप करते हुए सुग्रीव राजा के रोने के शब्द को सुना तो वह उसी समय आकाशमार्ग से वही पर उतरा। और रोने का

હતો તે સ્થળે આવી પહોચ્યા મત્ર આદિ દ્વારા દરેક પ્રકારની ચિકિત્સા કરવા છતા પણ તેની મૂર્ચ્છા ન વળી ત્યારે સુગ્રીવને ઘણી ભારે ચિતા થઈ અને તે આવી અવસ્થામા એના ગુણોને યાદ કરી કરીને વિલાપ કરવા લાગ્યો ભદ્રા રાણી એ સમયે ભાગીને ક્યા ચાલી ગઇ હતી તેની કોઇને ખબર ન હતી લોકોએ જ્યારે તેને આ સ્થળે ન જોઈ ત્યારે એવો નિશ્ચય કરી લીધો કે, કુમારને એ ભદ્રા રાણીએ ઝહેર આપેલ છે આ કારણથી જ તે આવા આપત્તિના સમયે પણ દેખાતી નથી જેમ લસણની ગ ધ છુપાવવા છતા પણ છુપાવી શકાતી નથી તેવી રીતે પાપીયોના પાપ કર્મો પણ છુપાવવા છતા છુપાતા નથી એ તો બધાની સામે પ્રગટ થઈને બોલેજ છે આ સમયે ભાગ્યવશાત ધનનો જીવ ચિત્રગતિ નામનો વિદ્યાધર આકાશ માર્ગથી કોઈ જગ્યાએ જઇ રહેલ હતો તેણે જ્યારે સુમિત્રકુમારની વિપત્તિના શોકથી વ્યાકુળ બનીને અન્ત પુર તેમજ પુરવાસી તેમજ પરિજન સાથે

अत्र या श्वारा इहाऽऽगामिष्यति. त वंदित्वा भवान गन्तु मर्हति । तेनैव मुक्तश्चित्रगति सुमित्रभवने स्थितवान। सुयशा केवली समागत उद्याने। ज्ञातवृत्तान्तौ सुमित्रचित्रगती दर्शनार्थमुद्याने गतौ। तत्र तौ देवैः परिवृत त मुनिं नत्वा नितरा प्रमुदितमानसौ परिषदि समुपविष्टौ। केवलिन आगमन वृत्तान्त श्रुत्वा सुग्रीवभूपोऽपि समागत'। केवलिन प्रणम्य सोऽपि परिषदि समुपविष्ट । सकलकल्याणतत्पर केवली तेभ्यो धर्ममुपादिशत्। धर्मदेशना-

स्वाभाविक धर्म है। अत आप प्रत्युपकार की चिन्ता न करें। आप स्वस्थ हो गये हमको यही एक बड़ा भारी हर्ष है। इस प्रकार के पारस्परिक वार्तालाप से उन दोनों मे आपसमे गाढ प्रीति हो गई। चित्रगतिने जब वहा से जानेका विचार किया तो सुमित्रने उनसे कहा कि मित्र! यहा पर आजकल में सुयशकेवली भगवान् आनेवाले है अतः उनको वदना कर आप यहा से जावें-हम नही रोकेंगे। सुमित्र की इस बात को सुनकर चित्रगति वहा ठहर गया। इतने मे सुयश केवली भगवान् भी वहा के उद्यान मे पधारे। जब इन दोनों मित्रों को केवली भगवान् के आगमन का वृत्तान्त मिला तब वे दोनों साथ साथ उनको वदना करने के निमित्त उद्यान मे गये। वहा देवों से परिवृत मुनिराज को देखकर उन्होंने बडी ही भक्तिसे नमस्कार किया और आनदित होकर परिषदा मे बैठ गये। सुग्रीवराजा भी केवलि भगवान् का आगमन सुनकर उनको वदना करने के लिये वहा आये। तथा धर्मोपदेश सुनने की अभिलाषा से केवलि को नमन कर वे भी उसी परिषदा मे गये। सकल जीवो के कल्याण करने में तत्पर केवली भगवानने आये

સ્વસ્થ બની ગયા એજ એક ભારે હર્ષની વાત છે આ પ્રકારના પરસ્પરના વાર્તાલાપથી એ બન્નેમા ગાઢ મૈત્રી થઇ ગઇ ચિત્રગતિએ જ્યારે ત્યાથી જવાનો વિચાર કર્યો ત્યારે સુમિત્રે તેને કહ્યુ કે, મિત્ર ! અહીયા આજકલમા સુયસ કેવળી ભગવાન આવવાના છે આવી એમને વદના કર્યા પછી આપ અહીંથી જાવ અમો તમોને રોકશુ નહી સુમિત્રની આ વાતને સાભળીને ચિત્રગતિ ત્યા રોકાઇ ગયા એટલામા સુયશ કેવળી ભગવાન પણ ત્યાના ઉદ્યાનમા પહોચ્યા ત્યા દેવોથી પરિવૃત મુનિરાજને જોઈને તેઓએ ઘણીજ ભકિતથી નમસ્કાર કર્યો અને આનદિત બનીને પરિષદામા બેસી ગયા સુગ્રીવ રાજા પણ કેવળી ભગવાનનુ આગમન સાભળીને તેમને વદના કરવા માટે ત્યા આવ્યા તથા ધર્મઉપદેશ સાભળવાની અભિલાષાથી કેવળીને નમન કરી તે પણ એ પરિષદામા પહોચ્યા સકળ જીવોનુ કલ્યાણ કરવામા તત્પર કેવળી ભગાવાને આવેલા એ સઘળાઓને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો ધર્મશ્રવણ કર્યા બાદ ચિત્રગતિએ નમસ્કાર કરી કેવળી ભગવાનને કહ્યુ-

ख्यानेन मम कर्णौ पुनीहि। भवादृशानामुपकारिणां नामगोत्रादिश्रवणं सुखाय भवति। ततश्चित्रगतिः सर्वं स्वपरिचयं याथातथ्येनोक्तवान्। तच्छ्रुत्वा सुमित्रः प्राह—विषेण विषदात्रा च मम महोपकृतम्, यदनभ्रामृतवृष्टितुल्यं भवद्दर्शनं जातम्। अन्यथा तु भवद्दर्शनं दुर्लभमेवासीत्। जीवितदातुर्बालमृत्युजनितदुर्गतेश्च परिरक्षितुर्भवतः किं प्रत्युपकुर्वे? एवं वदन्तं मित्रतां प्राप्तं सुमित्रं पृष्ट्वा चित्रगतिः स्वपुरं प्रति प्रस्थातुमुद्यतः। तदा सुमित्रः प्राह—मित्र! सुयशाः केवली

प्रदर्शित करते हुए सुमित्रने हाथ जोडकर कहा–भाई! आप कृपाकर अपना नाम एवं वंश का परिचय देकर मेरे कानों को पवित्र कीजिये। आप जैसे अकारण उपकारी बन्धुओं का नाम एवं गोत्रादि का सुनना भी सुख के लिये होता है। कुमार का आग्रह देखकर चित्रगतिने उसको अपना यथावत् समस्त परिचय दिया। परिचय पाकर कुमारने अपने अहोभाग्यकी सराहना करते हुए कहा–विष और विषदाताने मेरा बडा भारी उपकार किया जो विना बद्दल अमृतवृष्टि तुल्य आपका दर्शन हमको हो गया। नहीं तो आपके दर्शन का अवसर ही हमको कैसे प्राप्त होता। वह तो बिलकुल दुर्लभ था। अब कहिये बालमृत्यु जनित दुर्गति से मेरी रक्षा करने वाले तथा जीवनदान देनेवाले आपका हम क्या प्रत्युपकार करें। जब सुमित्रने ऐसा कहा तो चित्रगतिने मुस्करा कर कुमार से कहा कि कर्तव्य प्रत्युपकार की भावनावाला नहीं होता है। मनुष्य मात्र का आपत्ति में एक दूसरे की सहायता करना यह

સાંભળીને કૃતજ્ઞતા પ્રદર્શિત કરતા કરતા સુમિત્રે હાથ જોડીને કહ્યું–ભાઈ! આપ ઉપકારી આપનું નામ તથા વંશનો પરિચય આપીને મારા કાનને પવિત્ર કરો. આપ જેવા બીન સ્વાર્થે ઉપકાર કરનાર બંધુઓનું નામ તેમજ ગોત્રને જાણવું એ સુખ કારક હોય છે કુમારનો આગ્રહ જાણીને ચિત્રગતિએ પોતાનો યથાવત સઘળો પરિચય આપી દીધો પરિચય પામીને કુમારે પોતાના અહોભાગ્યને જણાવતાં કહ્યું–ઝેર અને ઝેરના આપનારે મારા ઉપર એવો મહાન ઉપકાર કર્યો કે, કોઈ પણ જાતના આંતરિક પરિચય સિવાય અમૃત વૃષ્ટિની માફક આપના દર્શનનો લાભ અમોને મળી ગયો નહીં તો આપના દર્શનનો લાભ અમોને કઈ રીતે મળવાનો હતો એ કેવળ દુર્લભજ હતો હવે કહો બાલ મૃત્યુ જેવા દુર્ગતિથી મારી રક્ષા કરવાવાળા તથા જીવતદાન આપવાવાળા એવા આપના ઉપર અમો કેવો પ્રતિ ઉપકાર કરી શકીયે જ્યારે સુમિત્રે આવું કહ્યું તો ચિત્રગતિએ હસીને કુમારને કહ્યું કે, કર્તવ્ય પ્રતિ ઉપકારની ભાવનાવાળું હોતું નથી મનુષ્ય માત્રને આપત્તિમાં એક બીજાની સહાયતા કરવી એ સ્વાભાવિક ધર્મ છે આથી આપ પ્રતિ ઉપકારની ચિંતા ન કરો આપ

तत्र चौरैर्हृतभूषणा सा पल्लीपतये समर्पिता, पल्लीपतिनाऽपि कस्मैचिद् वाणिजे प्रदत्ता। ततोऽपि पलायिता साऽटव्यां दवाग्निना दग्धा मरिष्यति, तत प्रथमं नरकं प्राप्स्यति। ततो निर्गता सा चाण्डालभार्यात्वं प्राप्य कलहे सपत्न्याहता तृतीयां पृथिवीं प्राप्स्यति। ततो निस्सृत्य सा तिर्यगादिगतिषु भवभ्रमणं करिष्यति। इत्थं केवलिनो वचनं निशम्य विरक्तः स सुग्रीव नृपो मुनिवरमवोचद्—भदन्त! यत्कृतेऽनया दुश्चरितं कृतं, स तस्याः पुत्रस्तु अत्रैवास्ति।

का समाधान करते हुए केवलीने उनसे कहा—राजन्! वह भद्रा आपके मकान से भागकर जगल मे गई थी—वहा उस विचारी के समस्त आभूषणों को चोरोंने चुरालिया और उसको पल्लीपति के आधीन कर दिया। पल्लीपतिने भी उसको किसी व्यापारी को वेंच दिया। परतु उसको इस स्थिति से भी जब सतोष नहीं हुआ तो वह वहां से भागकर फिर जगल में जा छिपी। वहा वह अब दावाग्नि से दग्ध होकर मरेगी और वह मरकर प्रथम नरक मे जायेगी। वहा की आयु समाप्तकर जब यह वहा से निकलेगी तो किसी चाडाल की पत्नी होगी। उसको उसकी सौत वहां मार डालेगी। मर कर फिर वह तीसरे नरक म जायेगी। वहा से भी आयु की समाप्ति के बाद निकल कर तिर्यग् आदि गतियों मे भ्रमण करेगी।

इस प्रकार केवली के मुख से ससार की असारता तथा भद्रा की दुर्गति का हाल सुनकर सुग्रीव राजा को जीवन सफल बनाने के भाव जग उठे। ससार, शरीर एव भोगों से विरक्त होकर उन्होंने

સુગ્રીવરાજાના આ પ્રશ્નનુ સમાધાન કરતા કેવળીએ સુગ્રીવ રાજાને કહ્યુ—રાજન્! એ ભદ્રા આપના રાજભવનમાથી ભાગીને વનમા ગઇ હતી ત્યા તે બીચારીના સઘળા આભૂષણો ચોરોએ ચોરી લીધા અને તેને પલ્લીપતિને આધીન કરી દીધી પલ્લીપતિએ તેને કોઇ વેપારીને ત્યા વેચી નાખી પરતુ તેને જ્યારે એ સ્થિતિથી પણ સતોષ ન થયો ત્યારે તે ત્યાથી ભાગીને જગલમા જઈને છૂપાઈ ગઇ ત્યા હવે તે દાવાગ્નિમા દગ્ધ થતી મરી જશે અને તે મરીને પ્રથમ નર્કમા જશે ત્યાની આયુ સમાપ્ત કરીને એ જ્યારે ત્યાથી નીકળશે ત્યારે કોઇ ચાડાલની પત્ની થશે તેને તેની શોક્ય ત્યા મારી નાખશે મરીને પછી તે ત્રીજા નરકમા જશે ત્યાથી પણ આયુની સમાપ્તિના પછી નીકળીને તિર્યંચ આદિ ગતિયોમા ભ્રમણ કરશે

આ પ્રકારના કેવળીના મોઢેથી સસારની અસારતા તથા ભદ્રાની દુર્ગતિનો ચિતાર સાભળીને સુગ્રીવ રાજાને પોતાનુ જીવન સફળ બનાવવાનો ભાવ જાગી ઉઠયો સસાર, શરીર અને ભોગોથી વિરકત થઇને એમણે મુનિરાજને નિવેદન કર્યું

श्रवणानन्तर चित्रगतिर्मुनिं प्रणम्य प्राह—भदन्त ! मित्रस्यास्य प्रसादेन भवद्दर्शनं मया समुपलब्धम् । अहमद्यप्रभृति सम्यक्त्वपूर्वकं श्रावकधर्मं स्वीकुर्वे । इत्युक्त्वा धर्मकार्ये समुल्लसत्पराक्रमः पापकर्मतो विरत स चित्रगतिर्देशविरतिं केवलि समीपे स्वीकृतवान् ।

अथ सुमित्रपिता सुग्रीवः कृताञ्जलिस्त केवलिन पृष्टवान्—हे भदन्त ! ममास्य पुत्र विषदानेन मृत्युमुखे प्रक्षिप्य पलायिता मम द्वितीया राज्ञी भद्रा क्व गता ? एवं पृष्टो मुनिः प्राह —राजन ! भवद्भवनात्पलायिता साऽरण्ये गता ।

हुए उन सबको धर्मका उपदेश दिया। धर्मश्रवण के बाद चित्रगतिने नमस्कार कर केवली भगवान् से कहा—भदन्त ! आज आपके पवित्र दर्शनकर मैं अपने आपको बहुत ही अधिक भाग्यशाली मान रहा हूँ। इसका श्रेय सुमित्र मित्र को है, क्योंकि उन्हीं के प्रसाद से मुझे आज आपके दर्शन हुए है। मैं आज से सम्यक्त्वपूर्वक श्रावक के व्रत अंगीकार करता हूँ। इस प्रकार श्रावक के व्रत ग्रहण करने से जन्म सफल होता है, ऐसा जानकर चित्रगतिने केवली भगवान् के पास श्रावकव्रत लिये। इन से जीवन धर्मकार्य करने मे अधिक अग्रेसर बनता है और पापकर्मो की तरफ से विरत होता है।

सुमित्र के पिता सुग्रीवने जो कि वही पर उपस्थित थे उसी समय दोनो हाथ जोडकर केवलिप्रभु से पूछा—भदन्त ! मेरे इस पुत्रसुमित्र को विषप्रदान करके मारने की भावनावाली वह मेरी रानी कि जिसका नाम भद्रा है यहाँ से भागकर कहा गई है ? कृपाकर यह बात आप मुझे कहिये। सुग्रीव राजा के इस प्रश्न

ભદન્ત ! આજે આપના પવિત્ર દર્શન કરી હુ મને પોતાને ઘણો અધિક ભાગ્યશાળી માની રહ્યો છુ આનો યશ સુમિત્ર મિત્રને છે કેમકે, તેમનાજ આગ્રહથી મને આજે આપના દર્શન થયા છે હુ આજથી સમ્યકત્વપૂર્વક શ્રાવકનુ વ્રત અગીકાર કરૂ છુ શ્રાવકનુ વ્રત ગ્રહણ કરવાથી પોતાનુ જીવન સફળ થય છે જાણીને ચિત્રગતિએ કેવળી પ્રભુની પાસેથી શ્રાવક વ્રત લીધુ આનાથી જીવન ધર્મકાર્ય કરવામા અગ્રેસર બને છે અને પાપ કર્મોની તરફથી વિરત થાય છે

સુમિત્રના પિતા સુગ્રીવે કે જેઓ ત્યા ઉપસ્થિત હતા તેમણે તે સમયે બન્ને હાથ જોડીને કેવળી પ્રભુને પૂછ્યુ કે હે ભદન્ત ! મારા આ પુત્ર સુમિત્રને વિષપ્રદાન કરીને મૃત્યુના મોઢામા હોમી દેવાની ભાવનાવાળી એ મારી રાણી કે, જેનુ નામ ભદ્રા છે તે અહીથી ભાગીને કયા ગઇ છે ? કૃપા કરીને એ વાત આપ મને કહો

तत्र चौरैर्हतभूषणा सा पल्लीपतये समर्पिता, पल्लीपतिनाऽपि कस्मैचिद् वाणिजे प्रदत्ता। ततोऽपि पलायिता साऽटव्यां दवाग्निना दग्धा मरिष्यति, ततः प्रथमं नरकं प्राप्स्यति। ततो निर्गता सा चाण्डालभार्यात्वं प्राप्य कलहे सपत्न्याहता तृतीयां पृथिवीं प्राप्स्यति। ततो निस्सृत्य सा तिर्यगादिगतिषु भवभ्रमणं करिष्यति। इत्थं केवलिनो वचनं निशम्य विरक्तः स सुग्रीव नृपो मुनिवरमवोचत्-भदन्त! यत्कृतेऽनया दुश्चरितं कृतं, स तस्याः पुनस्तु अत्रैवास्ति।

का समाधान करते हुए केवलीने उनसे कहा-राजन्! वह भद्रा आपके मकान से भागकर जंगल में गई थी-वहां उस बिचारी के समस्त आभूषणों को चोरोंने चुरालिया और उसको पल्लीपति के आधीन कर दिया। पल्लीपतिने भी उसको किसी व्यापारी को बेंच दिया। परंतु उसको इस स्थिति से भी जब संतोष नहीं हुआ तो वह वहां से भागकर फिर जंगल में जा छिपी। वहां वह अब दावाग्नि से दग्ध होकर मरेगी और वह मरकर प्रथम नरक में जायेगी। वहां की आयु समाप्तकर जब यह वहां से निकलेगी तो किसी चांडाल की पत्नी होगी। उसको उसकी सौत वहां मार डालेगी। मर कर फिर वह तीसरे नरक में जायेगी। वहां से भी आयु की समाप्ति के बाद निकल कर तिर्यग आदि गतियों में भ्रमण करेगी।

इस प्रकार केवली के मुख से संसार की असारता तथा भद्रा की दुर्गति का हाल सुनकर सुग्रीव राजा को जीवन सफल बनाने के भाव जग उठे। संसार, शरीर एवं भोगों से विरक्त होकर उन्होंने

સુગ્રીવરાજાના આ પ્રશ્નનુ સમાધાન કરતા કેવળીએ સુગ્રીવ રાજાને કહ્યુ-રાજન! એ ભદ્રા આપના રાજભવનમાથી ભાગીને વનમા ગઇ હતી ત્યા તે બીચારીના બધળા આભૂષણો ચોરોએ ચોરી લીધા અને તેને પલ્લીપતિને આધીન કરી દીધી પલ્લી પતિએ તેને કોઇ વેપારીને ત્યા વેચી નાખી પરતુ તેને જ્યારે એ સ્થિતિથી પણ સતોષ ન થયો ત્યારે તે ત્યાથી ભાગીને જગલમા જઈને છૂપાઈ ગઇ ત્યા હવે તે દાવાગ્નિમા દગ્ધ થતી મરી જશે અને તે મરીને પ્રથમ નર્કમા જશે ત્યાની આયુ સમાપ્ત કરીને એ જ્યારે ત્યાથી નીકળશે ત્યારે કોઇ ચાડાલની પત્ની થશે તેને તેની શોક્ય ત્યા મારી નાખશે મરીને પછી તે ત્રીજા નરકમા જશે ત્યાથી પણ આયુની સમાપ્તિના પછી નીકળીને તિર્યંચ આદિ ગતિયોમા ભ્રમણ કરશે

આ પ્રકારના કેવળીના મોઢેથી સસારની અસારતા તથા ભદ્રાની દુર્ગતિનો ચિતાર સાભળીને સુગ્રીવ રાજાને પોતાનુ જીવન સફળ બનાવવાનો ભાવ જાગી ઉઠયો સસાર, શરીર અને ભોગોથી વિરકત થઇને એમણે મુનિરાજને નિવેદન કર્યું

श्रवणानन्तर चित्रगतिर्मुनिं प्रणम्य प्राह–भदन्त! मित्रस्यास्य प्रसादेन भवद्दर्शन मया समुपलब्धम्। अहमद्यप्रभृति सम्यक्त्वपूर्वकं श्रावकधर्मं स्वीकुर्वे। इत्युक्त्वा धर्मकार्ये समुल्लसत्पराक्रमः पापकर्मतो विरत' स चित्रगतिर्देशविरतिं केवलि समीपे स्वीकृतवान्।

अथ सुमित्रपिता सुग्रीव कृताञ्जलिस्त केवलिन पृष्टवान्–हे भदन्त! ममास्य पुत्र विषदानेन मृत्युमुखे प्रक्षिप्य पलायिता मम द्वितीया राज्ञी भद्रा क्व गता? एव पृष्टो मुनि' प्राह.–राजन! भवद्भयनात्पलायिता साऽरण्ये गता।

हुए उन सबको धर्मका उपदेश दिया। धर्मश्रवण के बाद चित्रगतिने नमस्कार कर केवली भगवान् से कहा–भदन्त! आज आपके पवित्र दर्शनकर मै अपने आपको बहुत ही अधिक भाग्यशाली मान रहा हूँ। इसका श्रेय सुमित्र मित्र को है, क्योंकि उन्हीं के प्रसाद से मुझे आज आपके दर्शन हुए है। मै आज से सम्यक्त्वपूर्वक श्रावक के व्रत अगीकार करता हूँ। इस प्रकार श्रावक के व्रत ग्रहण करने से जन्म सफल होता है, ऐसा जानकर चित्रगतिने केवली भगवान् के पास श्रावव्रत लिये। इन से जीवन धर्मकार्य करने मे अधिक अग्रेसर बनता है और पापकर्मो की तरफ से विरत होता है।

सुमित्र के पिता सुग्रीवने जो कि वहीं पर उपस्थित थे उसी समय दोनो हाथ जोडकर केवलिप्रभु से पूछा–भदन्त! मेरे इस पुत्रसुमित्र को विषप्रदान करके मारने की भावनावाली वह मेरी रानी कि जिसका नाम भद्रा हे यहां से भागकर कहां गई है? कृपाकर यह वात आप मुझे कहिये। सुग्रीव राजा के इस प्रश्न

ભદન્ત! આજે આપના પવિત્ર દર્શન કરી હુ મને પોતાને ઘણો અધિક ભાગ્યશાળી માની રહ્યો છુ આનો યશ સુમિત્ર મિત્રને છે કેમકે, તેમનાજ આગ્રહથી મને આજે આપના દર્શનથયા છે હુ આજથી સમ્યકત્વપૂર્વક શ્રાવકનુ વ્રત અગીકાર કરૂ છુ શ્રાવકનુ વ્રત ગ્રહણ કરવાથી પોતાનુ જીવન સફળ થય છે જાણીને ચિત્રગતિએ કેવળી પ્રભુની પાસેથી શ્રાવક વ્રત લીધુ આનાથી જીવન ધર્મકાર્ય કરવામા અગ્રેસર બને છે અને પાપ કર્મોની તરફથી વિરત થાય છે

સુમિત્રના પિતા સુગ્રીવે કે જેઓ ત્યા ઉપસ્થિત હતા તેમણે તે સમયે બન્ને હાથ જોડીને કેવળી પ્રભુને પૂછ્યુ કે હે ભદન્ત! મારા આ પુત્ર સુમિત્રને વિષપ્રદાન કરીને મૃત્યુના મોઢામા હોમી દેવાની ભાવનાવાળી એ મારી રાણી કે, જેનુ નામ ભદ્રા છે તે અહીથી ભાગીને કયા ગઇ છે? કૃપા કરીને એ વાત આપ મને કહો

अथान्यदा कलिङ्गदेशाधिपते राज्ञीं सुमित्रभगिनीमनङ्गसिंहभूपपुत्रो रत्नवतीभ्राता कमलः कामवशेन हृतवान्। सुमित्रभगिनीहरणवृत्तान्तं कस्यापि विद्याधरस्य मुखादुपश्रुत्य विद्याप्रभावेण कमलेन हृता तां परिज्ञाय सुमित्रभगिनीमहमानेष्ये, इति विनिश्चित्य चित्रगतिः सैन्यं सज्जीकृत्य शिवसद्मनगराभिमुखं प्रचलितः तत्र गत्वा कमलं विद्याधरेण सह युद्ध्वा तं निगृहीतवान्। पुत्रनिग्रहवृत्तान्तं श्रुत्वाऽनङ्गसिंहः सिंहवत्तमुपाऽभ्यधावत्। ततस्तयोः परमदारुणं युद्धमभूत्। चित्रगतिं च दुर्जयं ज्ञात्वाऽनङ्गसिंहस्तं दिव्यं खड्गं स्मृतवान्। स्मृत

यह बात अनङ्गसिंह राजा जो वैताढ्यगिरि की दक्षिणश्रेणी में स्थित शिवसद्म नाम के नगर का अधिपति था उसके पुत्र कमल को पहुँची। यह कमल रत्नवती का (पूर्वभव के धनवती के जीवका) भ्राता था। इसने काम के वश होकर कलिङ्ग देश के अधिपति कनकसिंह की रानी को जो सुमित्र की बहिन कुसुमश्री थी हरण कर लिया था। सुमित्र के मित्र चित्रगति को जब अपने मित्रकी बहिन के हरण हो जान-जाने के समाचार किसी विद्याधर के मुख से ज्ञात हुए तब वह यह कर के कमलने विद्या के प्रभाव से ही मेरे मित्रकी बहिन का हरण किया है अपनी सैन्य को सज्जित कर उसको पीछे वापिस लाने के अभिप्राय से शिवसद्मनगर पर चढाई की। और वहां पहुंचकर उसने कमल को युद्ध में परास्त कर दिया। जब अपने बेटेका युद्ध में परास्त होना अनङ्गसिंहने सुना तो वह क्रोधित होकर चित्रगति के ऊपर सिंह की तरह एकदम झपटा। चित्रगतिने अपने सन्मुख आते हुए जब

આ વાત અનંગસિંહ રાજા કે જે વૈતાઢ્યગિરિની દક્ષિણ શ્રેણીમાં આવેલા શીવસદ્મ નામના નગરના અધિપતિ હતા તેના પુત્ર કમળના કાને પહોંચી આ કમળ રત્નવતી (પૂર્વભવની ધનવતીનો જીવ)નો ભાઈ હતો તેણે કામના વશમાં બનીને કલિંગ દેશના અધિપતિ કનકસિંહની રાણી કે જે ચક્રપુર નગરના રાજા સુમિત્રની બહેન કુસુમશ્રી હતી તેનું હરણ કર્યું કુસુમશ્રીનું હરણ થવાના સમાચાર સુમિત્રના મિત્ર ચિત્રગતિને કોઈ વિદ્યાધરના મોઢેથી મળ્યા ત્યારે તેણે આ સમાચાર સાંભળીને કમળે પોતાની વિદ્યાના પ્રભાવથી પોતાના મિત્ર સુમિત્રની બહેનનું હરણ કરેલ છે તે જાણી લેતાં શિવસદ્મ નગર ઉપર ચડાઈ કરી અને ત્યાં પહોંચીને તેણે યુદ્ધમાં કમળને પરાસ્ત કરી દીધો જ્યારે પોતાના પુત્રને યુદ્ધમાં પરાસ્ત થયાનું અનંગસિંહે સાંભળ્યું ત્યારે તે ક્રોધિત થઈને ચિત્રગતિની ઉપર સિંહની માફક એકદમ ધસી આવ્યો ચિત્રગતિએ આ પ્રમાણે પોતાના ઉપર ધસી આવતા અનંગસિંહને જોયો

अहो ! ईदृशममु ससार धिक् ! पद्मपुत्रा स स्वसुताय सुमित्राय राज्य दत्त्वा दीक्षा गृहीतवान् । सुमित्रोऽपि मित्रेण सह नगरमागत्य कतिचिद् ग्रामान लघुभ्रात्रे पद्माय ददौ । परन्तु दुर्बुद्धि स पद्मस्ततो निर्गत्य क्वापि गत. । चित्रगतिरप्यन्यदा सुमित्रमापृच्छय स्वनगर गतः ।

मुनिराज से निवेदन किया कि महाराज ! सुभद्राने जिस अपने पुत्रकी तरक्की के निमित्त इतना भयकर अनर्थ किया उसका वह पुत्र तो इस समय यहीं पर है । बडे दु'खकी बात है कि जीव अन्य के लिये इतना भयकर अनर्थ करते हुए अपने भविष्यका कुछ भी ध्यान नही रखता है । और जिसके लिये इतना अनर्थ किया जाता है वह भी उसका कुछ साथ नहीं देता है । इस स्वार्थी एव सारहीन ससार को धिक्कार है । इस प्रकार अपना हार्दिक मनोरथ केवली भगवान से प्रकट कर सुग्रीवने वही पर अपने सुमित्र पुत्र को राज्य का अधिपति घोपित कर स्वयसयम अगीकार करलिया । सुमित्रने चित्रगति मित्र के साथ वहा से वापिस नगर में आकर अपने भाइ पद्म के लिये कितनेक ग्राम दिये, परन्तु दुर्बुद्धि पद्म लज्जित होकर वहा नही रहा-और छिपकर न मालूम कहा भागकर चला गया । चित्रगति भी कितनेक दिन अपने मित्र के पास रहकर फिर वहा से अपने नगर मे मित्र से पूछकर आ गया ।

કે, મહારાજ ! ભદ્રાએ પોતાના પુત્રની તરક્કીના નિમિત્તે આટલો ભયકર અનર્થ કર્યો એનો એ પુત્ર તો આ સમયે અહીયા જ છે ઘણા જ દુ ખની વાત છે કે, જીવ બીજાના માટે આવો ભયકર અનર્થ ઉભો કરીને પોતાના ભવિષ્યનો કાઇ પણ વિચાર કરતો નથી-ધ્યાન રાખતો નથી અને જેના માટે આવો અનર્થ કરવામા આવે છે તે પણ તેને એવા સમયે કાઇ પણ સાથ આપતો નથી આવા સાર વગરના અને સ્વાર્થી સસારને ધિક્કાર છે આ પ્રકારનો પોતાનો હાર્દિક મનોરથ કેવળી ભગવાનની સમક્ષ પ્રગટ કરીને સુગ્રીવ રાજાએ ત્યાજ પોતાના પુત્ર સુમિત્રને રાજ્યના અધિપતિ તરાકે જાહેર કરી પોતે દીક્ષિત થઇ ગયા સુમિત્ર પોતાના મિત્ર ચિત્રગતિની સાથે ત્યાથી નગરમા પાછા ફરીને પોતાના ભાઇ પદ્મના માટે કેટલાક ગામ આપ્યા પરતુ દુર્બુદ્ધ પદ્મ લજ્જીત થવાથી ત્યા ન રહ્યો અને કોઇને કાંઈ કહ્યા સિવાય ગુપચુપ કયાક ચાલ્યો ગયો ચિત્રગતિ પણ કેટલાક દિવસ ત્યા પોતાના મિત્ર બની ગયેલ સુમિત્ર રાજાની સાથે રહીને પછીથી તેની રજા મેળવીને પોતાના નગરમા પહોચી ગયા

चापि अनशनं कृत्वा मृता। ततश्चित्रगति-रत्नवतीजीवौ चतुर्थे देवलोके देवत्वं प्राप्तवन्तौ ॥ ॥ इति तृतीयचतुर्थभवौ ॥

॥ मनुष्यसुरत्वौ पञ्चमषष्ठभवौ ॥

अथ ततश्च्युतश्चित्रगतिजीवः पश्चिममहाविदेहक्षेत्रे पद्मसनके विजये सिंहपुरे नगरे राज्ञो हरिनन्दिनः प्रियदर्शनाख्याया भार्यायाः कुक्षौ समुत्पन्नः। ततः सम्प्राप्ते काले सा पुत्ररत्नं जनितवती। मातापितृभ्यां महता महोत्सवेन 'अपराजित' इति तन्नाम कृतम्। क्रमेण शुक्लपक्षचन्द्रवत् प्रवर्द्धमानः स सकलाः

अन्त मे अनशनपूर्वक प्राणो का विसर्जन कर वे चतुर्थ देवलोक गये। इसी रीति से रत्नावती साध्वी भी अनशन करके चतुर्थ देवलोक मे देवकी पर्याय से उत्पन्न हुई। इस प्रकार ये इनके धनराजा और धनवती रानी का मनुष्य और देवरूप तृतीय और चतुर्थ भव है॥

अब मनुष्य एव देवरूप पचम और छट्टे भव का वर्णन इस प्रकार है—

पश्चिम महाविदेह मे पद्मसनक नाम के विजय मे सिंहपुर नामका एक नगर था। वहा के राजा का नाम हरिनंदी और रानी का नाम प्रियदर्शना था। चित्रगति का जीव चतुर्थ देवलोक की अपनी स्थिति समाप्त कर इसी प्रियदर्शना की कुक्षि मे पुत्ररूप से अवतरित हुआ। जब गर्भ का पूर्ण समय व्यतीत हुवा तब प्रियदर्शनाने पुत्ररत्न को जन्म दिया। मातापिता के चित्त मे बडा भारी हर्ष हुआ। दोनो ने मिलकर पुत्र के जन्म का बडाभारी उत्सव मनाया। बडे ही उल्लास के साथ पुत्र का नाम अपराजित रक्खा। अपराजित ने क्रमशः बढते

અનશનથી પ્રાણોનુ વિસર્જન કરીને ચોથા દેવલોકમા દેવની પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયા આ પ્રકારે આ દેવલોકમા ગયા આજ પ્રકારે રત્નવતી સાધ્વી પણ અનશન કરીને ચોથા દેવલોકમા દેવની પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયા આ પ્રમાણે આ ધનરાજા અને ધનવતી રાણીના મનુષ્ય અને દેવરૂપ ત્રીજો અને ચોથો ભવ છે

હવે મનુષ્ય અને દેવરૂપ પાચમા અને છઠ્ઠા ભવનુ વર્ણન આ પ્રકારનુ છે—

પશ્ચિમ મહાવિદેહમા પદ્મસનક નામના વિજયમા સિંહપુર નામનુ એક નગર હતુ ત્યાના રાજાનુ નામ હરિનંદી અને રાણીનુ નામ પ્રિયદર્શના હતુ ચિત્રગતિનો જીવ ચોથા દેવલોકની પોતાની સ્થિતિને સમાપ્ત કરીને આ પ્રિયદર્શનાની કૂખે પુત્રરૂપથી અવતરિત થયો જ્યારે ગર્ભનો પૂર્ણસમય થઈ ગયો ત્યારે પ્રિયદર્શનાએ પુત્રરત્નને જન્મ આપ્યો માતપિતાના ચિત્તમા ભારે હર્ષ થયો બન્નેએ મળીને પુત્રના જન્મનો ભારે ઉત્સવ મનાવ્યો ભારે ઉલ્લાસની સાથે પુત્રનુ નામ અપરા

मात्मन ज्वालामालाकुल शत्रुमदापहं दिव्य खड्गरत्न तस्य हस्ते समायातम्। ततोऽनङ्गसिंहश्चित्रगतिमेवमब्रवीद्-रेमूढ! कथकार म्रियसे, जीवितेच्छा चेदस्ति, तर्हि त्वरितमितोऽपसर, नो चेदेकोऽपि त्वमननासिना पश्चत्व गमिष्यसि। एवमनङ्गसिंहवचन निशम्य चित्रगतिरवोचत्-अय शूरम्मन्य! अनेन लोहखण्डेन यत्तव मद, स तव निर्वीर्यतामेव ख्यापयति, इत्युक्त्वा विद्यया सर्वत्र तमः प्रसार्य तस्य हस्तात्तत्खड्गरत्न जग्राह। ततस्तमो विनिवृत्तम्। अनङ्ग-

अनगसिंह को देखा तो परस्पर मे इन दोनों का तुमुल युद्ध हुआ। अनगसिंहने युद्ध मे चित्रगति को जब अजेय देखा तो उसने उसी समय दिव्य खड्ग की स्मृति की। स्मरण करते ही वह दिव्य तलवार ज्वालामाला से आकुलित बना हुआ शत्रु के मद को दूर करने के लिये उसके हाथ मे आ गया। तलवार के हाथ मे आते ही अनगसिंहने दर्प के आवेग मे चूर होकर चित्रगति से कहा रे मूर्ख! तू व्यर्थ क्यों मरना चाहता है। यदि जीवित रहने की इच्छा है तो शीघ्र ही यहा से वापिस चला जा। यदि यहा से नहीं गया तो याद रख इस तलवार के द्वारा तेरा विध्वस कर दिया जायगा। इस प्रकार अनगसिंह के गर्वीले वचन सुनकर चित्रगतिने निडर होकर प्रत्युत्तर के रूप मे उससे कहा-अरे ओ शूरमन्य! तू इस लोह के टुकडे का क्या अभिमान करता है, इस से तो तेरी केवल निर्वीर्यता ही झलकती है। ऐसा कहते हुए चित्रगतिने विद्या के प्रभाव से युद्धस्थल मे अधेरा करके

त्यारे બન્નેનુ પરસ્પરમા તુમુલ યુદ્ધ જામી પડયુ અનગસિહે યુદ્ધમા ચિત્રગતિને જ્યારે અજેય જાણ્યો ત્યારે એણે તે સમયે દિવ્ય ખડગને યાદ કર્યું ખડગનુ સ્મરણ કરતા જ એ દિવ્ય ખડગ જ્વાલામાલાથી આકુલિત થઈને શત્રુના મદને દૂર કરવા માટે એના હાથમા આવ્યુ દિવ્ય ખડગ હાથમા આવતાજ અનગસિહ એકદમ ભારે એવા મદના આવેશમા આવી જઈને ચિત્રગતિને કહ્યુ-રે મૂર્ખ! તુ વ્યર્થમા શા માટે મરવા ચાહે છે જો જીવતા રહેવાની ઈચ્છા હોય તો અહીંથી જલદી નાસી છુટ જો તુ અહીંથી ચાલ્યો નહી જાય તો યાદ રાખ કે આ ખડગથી તારો વિધ્વસ કરી નાખવામા આવશે અનગસિહના આ પ્રકારના ગર્વભરેલા વચનોને સાભળીને ચિત્રગતિએ નિડર થઈને પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ કે—પોતનાં જાતને શુરવીર માનીને નકામા ગર્વમા ફુલાતા હે માનવિ! તુ આ લોઢાના ટુકડાનુ શુ અભિમાન કરે છે આનાથી તો તારી નિર્વિર્યતાજ દેખાઈ આવે છે આ પ્રમાણે કહીને ચિત્રગતિએ વિદ્યાના પ્રભાવથી યુદ્ધ સ્થળમા અધારૂ કરી દઈને અનગસિહના

चापि अनशनं कृत्वा मृता। ततश्चित्रगति- रत्नवतीजीवौ चतुर्थे देवलोके देवत्वं प्राप्तवन्तौ ॥ ॥ इति तृतीयचतुर्थभवौ ॥

॥ मनुष्यसुरत्वे पञ्चमषष्ठभवौ ॥

अथ ततश्च्युतश्चित्रगतिजीवः पश्चिममहाविदेहक्षेत्रे पद्मसनके विजये सिंहपुरे नगरे राज्ञो हरिनन्दिनः प्रियदर्शनानाम्न्याया भार्याया कुक्षौ समुत्पन्नः। ततः जन्मप्राप्ते काले सा पुत्ररत्नं जनितवती। मातापितृभ्यां महता महोत्सवेन 'अपराजित' इति तन्नाम कृतम्। क्रमेण शुक्लपक्षचन्द्रवत् प्रवर्द्धमानः स सकलाः

अन्त में अनशनपूर्वक प्राणों का विसर्जन कर वे चतुर्थ देवलोक गये। इसी रीति से रत्नावती साध्वी भी अनशन करके चतुर्थ देवलोक में देवकी पर्याय से उत्पन्न हुई। इस प्रकार ये इनके धनराजा और धनवती रानी का मनुष्य और देवरूप तृतीय और चतुर्थभव है॥

अब मनुष्य एवं देवरूप पञ्चम और छट्टे भव का वर्णन इस प्रकार है—

पश्चिम महाविदेह में पद्मसनक नाम के विजय में सिंहपुर नामका एक नगर था। वहां के राजा का नाम हरिनंदी और रानी का नाम प्रियदर्शना था। चित्रगति का जीव चतुर्थ देवलोक की अपनी स्थिति समाप्त कर इसी प्रियदर्शना की कुक्षि में पुत्ररूप से अवतरित हुआ। जब गर्भ का पूर्ण समय व्यतीत हुवा तब प्रियदर्शनाने पुत्ररत्न को जन्म दिया। मातापिता के चित्त में बड़ा भारी हर्ष हुआ। दोनों ने मिलकर पुत्र के जन्म का बडाभारी उत्सव मनाया। बडे ही उल्लास के साथ पुत्र का नाम अपराजित रक्खा। अपराजित ने क्रमशः बढ़ते

અનશનથી પ્રાણોનું વિસર્જન કરીને ચોથા દેવલોકમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા. આ પ્રકારે આ દેવલોકમાં ગયા. આજ પ્રકારે રત્નવતી સાધ્વી પણ અનશન કરીને ચોથા દેવલોકમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયા. આ પ્રકારે આ ધનરાજા અને ધનવતી રાણીના મનુષ્ય અને દેવરૂપ ત્રીજો અને ચોથો ભવ છે.

હવે મનુષ્ય અને દેવરૂપ પાંચમા અને છઠ્ઠા ભવનું વર્ણન આ પ્રકારનું છે—

પશ્ચિમ મહાવિદેહમાં પદ્મસનક નામના વિજયમાં સિંહપુર નામનું એક નગર હતું. ત્યાંના રાજાનું નામ હરિનંદી અને રાણીનું નામ પ્રિયદર્શના હતું. ચિત્રગતિનો જીવ ચોથા દેવલોકની પોતાની સ્થિતિને સમાપ્ત કરીને આ પ્રિયદર્શનાની કૂખે પુત્રરૂપથી અવતરિત થયો. જ્યારે ગર્ભનો પૂર્ણસમય થઈ ગયો ત્યારે પ્રિયદર્શનાએ પુત્રરત્નને જન્મ આપ્યો. માતપિતાના ચિત્તમાં ભારે હર્ષ થયો. બન્નેએ મળીને પુત્રના જન્મનો ભારે ઉત્સવ મનાવ્યો. ભારે ઉલ્હાસની સાથે પુત્રનું નામ અપરા

मात्रमेव ज्वालामालाकुलं शत्रुमदापहं दिव्यं खड्गरत्नं तस्य हस्तं समागतम्। ततोऽनङ्गसिंहश्चित्रगतिमेवमब्रवीत्—रे मूढ! कथमकाले मर्तुमिच्छसि, जीवितेच्छा चेदस्ति, तर्हि त्वरितमितोऽपसर, नो चेदेषोऽपि त्वमनेनासिना पञ्चत्वं गमिष्यसि। एवमनङ्गसिंहवचनं निशम्य चित्रगतिरवोचत्—अये शूरंमन्य! अनेन लोहखण्डेन यस्तव मदः, स तव निर्वीर्यतामेव सूचयति, इत्युक्त्वा विद्यया सर्वत्र तमः प्रसार्य तस्य हस्तात्तत्खड्गरत्नं जग्राह। ततस्तमो विनिवृत्तम्। अनङ्ग

अनंगसिंह को देखा तो परस्पर मे इन दोनों का तुमुल युद्ध हुआ। अनगसिंहने युद्ध मे चित्रगति को जब अजेय देखा तो उसने उसी समय दिव्य खड्ग की स्मृति की। स्मरण करते ही वह दिव्य तलवार ज्वालामाला से आकुलित बना हुआ शत्रु के मदको दूर करने के लिये उसके हाथ मे आ गया। तलवार के हाथ म आते ही अनगसिंहने दर्प के आवेश मे चूर होकर चित्रगति से कहा रे मूर्ख! तू व्यर्थ क्यों मरना चाहता है। यदि जीवित रहने की इच्छा है तो शीघ्र ही यहा से वापिस चला जा। यदि यहा से नहीं गया तो याद रख इस तलवार के द्वारा तेरा विध्वस कर दिया जायगा। इस प्रकार अनगसिंह के गर्वीले वचन सुनकर चित्रगतिने निडर होकर प्रत्युत्तर के रूप मे उससे कहा—अरे ओ शूरमन्य! तू इस लोह के टुकडे का क्या अभिमान करता है, इस से तो तेरी केवल निर्वीर्यता ही झलकती है। ऐसा कहते हुए चित्रगतिने विद्या के प्रभाव से युद्धस्थल मे अधेरा करके

ત્યારે બન્નેનુ પરસ્પરમા તુમુલ યુદ્ધ જામી પડ્યુ અનગસિહે યુદ્ધમા ચિત્રગતિને જ્યારે અજેય જાણ્યો ત્યારે એણે તે સમયે દિવ્ય ખડગને યાદ કર્યું ખડગનુ સ્મરણ કરતા જ એ દિવ્ય ખડગ જ્વાલામાલાથી આકુલિત થઈને શત્રુના મદને દૂર કરવા માટે એના હાથમા આવ્યુ દિવ્ય ખડગ હાથમા આવતાજ અનગસિહ એકદમ ભારે એવા મદના આવેશમા આવી જઇને ચિત્રગતિને કહ્યુ—રે મૂર્ખ! તુ વ્યર્થમા શા માટે મરવા ચાહે છે જો જીવતા રહેવાની ઇચ્છા હોય તો અહીંથી જલદી નાસી છુટ જો તુ અહીંથી ચાલ્યો નહીં જાય તો યાદ રાખ કે આ ખડગથી તારો વિધ્વસ કરી નાખવામા આવશે અનગસિહના આ પ્રકારના ગર્વભરેલા વચનોને સાભળીને ચિત્રગતિએ નિડર થઇને પ્રત્યુત્તરમા કહ્યુ કે—પોતાની જાતને શુરવીર માનીને નકામા ગર્વમા ફૂલાતા હે માનવિ! તુ આ લોઢાના ટુકડાનુ શુ અભિમાન કરે છે આનાથી તો તારી નિર્વિર્યતાજ દેખાઇ આવે છે આ પ્રમાણે કહીને ચિત્રગતિએ વિદ્યાના પ્રભાવથી યુદ્ધ સ્થળમા અધારૂ કરી દઇને અનગસિહના

पश्चादखिलान प्राणिन, एव ध्यायन् स मुनिरनशन कृत्वा मृतो ब्रह्मलोके नामयतुल्यो देवोऽभवत्। पद्मस्तु मुनिं हत्वा परावृत्तो मार्गे कृष्णभुजङ्गेन दष्टो मृतस्तमस्तमाया सप्तम्या पृथिव्या गत.। सुमित्रमुनिं मृत श्रुत्वा चित्रगति नितरामन्वतप्यत।

इत खेचराधिपति सूरभूप. कृतदारपरिग्रह स्वसुत चित्रगतिं राज्यधुराधरणक्षम विलोक्य तस्मै राज्य दत्त्वा स्वय सुदर्शनाचार्यसमीपे दीक्षा गृहीत्वा क्रमात्परम पद प्राप्तवान। ततो विचारकोर्जित स चित्रगतिश्चिर

होता तो यह मेरे साथ इस प्रकार का आज व्यवहार नहीं करता। अतः मेरा कर्तव्य है कि मै सब से पहिले इस के साथ क्षमापना करूं पश्चात शेष अन्य प्राणियों के साथ। इस प्रकार ध्यान करते हुए वे मुनिराज अन्त में अनशन करके देवलोक गये। और पाचवें ब्रह्म देवलोक में इन्द्रतुल्य देव की पर्याय से उत्पन्न हुवे। मुनि को बाण से घायल कर ज्यों ही प वापिस लौट रहा था कि उसको अचानक ही मार्ग मे कृष्ण सर्पने काट खाया, इससे वह वहीं पर मर गया और तमस्तमा नामकी सप्तम पृथिवी म जाकर नारकी की पर्याय से उत्पन्न हुवा चित्रगति को सुमित्र मुनिराज की मृत्यु सुनकर विशेष दुःख हुआ।

इधर खेचराधिपति सूर नामके राजाने अपने पुत्र चित्रगति को विवाहित करके राजधुरा के धारण करने में समर्थ देखकर दीक्षा लेने का विचार किया। अवसर पाकर सूरभूपने अपनी विचारधारा को

આજે આવા પ્રકારનો વહેવાર કરત નહી આથી મારૂં કર્તવ્ય છે કે, સૌથી પહેલા હુ તેની સાથે ક્ષમાપના કરૂ પછી બાકીના બીજા પ્રાણીઓની સાથે આ પ્રકારનુ ધ્યાન કરતા કરતા તે મુનિરાજ અતમા અનશન કરીને દેવલોકમા ગયા અને પાચમા દેવલોક બ્રહ્મસ્વર્ગમાં ઇન્દ્રની માફક દેવ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયા મુનિને બાણથી ઘાયલ કરીને પદ્મ જ્યારે પાછો ફરી રહેલ હતો ત્યારે રસ્તામા અચાનક જ કાળા સર્પે તેને કરડી ખાધો આથી તે ત્યાજ મરી ગયો અને તમસ્તમા નામની સાતમી પૃથ્વીમા જઇને નારકીય પર્યાયથી ઉત્પન્ન થયો ચિત્રગતિને સુમિત્ર મુનિરાજના મૃત્યુના સમાચાર મળતા તેને એથી ભારે દુઃખ થયુ

આ તરફ ખેચર અધિપતિ સૂર નામના રાજાએ પોતાના પુત્ર ચિત્રગતિને વિવાહિત કરીને રાજ્યધુરાને ધારણ કરવામા સમર્થ જાણીને દીક્ષા લેવાનો વિચાર કર્યો અવસર મેળવીને સૂર રાજાએ પોતાની વિચારધારાને કાર્યરૂપમા મૂકવા માટે

समीपे दीक्षां गृहीतवान्। स किञ्चिदूनानि नव पूर्वाणि समधीत्य गुरोरनुज्ञया एकाकी विहरन् एकदा मगधदेशे गतः। तत्र ग्रामाद् बहिः क्वापि कायोत्सर्गं कृत्वा स्थितः। तस्मिन्नेव समये सयोगवशाल्लघुभ्राता पद्मोऽपि भ्रमंस्तत्रागतः। स कायोत्सर्गेण संस्थितं सुमित्रमुनिं दृष्ट्वा समुत्पन्नक्रोधावेशो बाणमाकर्णमाकृष्य मुनिमुरसि जघान। मम कर्मण एवेदं फलम्, यदि मया तदैवास्मै राज्यं दत्तमभविष्यत्तदाऽयं नैवंविधमकृत्यमकरिष्यत्। इति हेतोरयं पूर्वोक्तेन शमयामि,

कर दी। उससे उनका चित्त सांसारिक व्यवहार कार्य में अरुचि संपन्न बन गया। कुछ दिनो बाद सुमित्र ने अपने पुत्र को राज्यपर स्थापित कर सुयश मुनिराज के पास दीक्षा धारण करली। सुमित्र मुनि कुछ कम नौ पूर्व का अध्ययन करके गुरु की आज्ञा से एकाकी विचरने लगे। विचरते २ वे एक समय मगधदेश मे आये। वहां ग्राम से बाहर किसी एकान्त स्थान में जब ये कायोत्सर्ग में स्थित थे तब वही पर घूमता घामता इनका संसारी अवस्था का छोटा भाई पद्म भी आपहुँचा। उसने कायोत्सर्ग में स्थित सुमित्रमुनिराज को देखकर उत्पन्न हुए क्रोध के आवेग से आकर्णबाण खेंचकर उनकी छाती मे मारा। बाण से छातीमें विद्ध होने पर भी मुनिराज ने उस पर क्रोध भाव नही किया प्रत्युत अपने मन मे इस प्रकार विचार किया कि इस बाण के द्वारा विद्ध होने मे मेरा ही कर्म का उदय कारण है—उसी का यह फल है। यदि मैंने इसको उसी समय राज्य दे दिया

તેના મનમા વૈરાગ્યની ભાવના જાગૃત બની ગઇ આથી તેનુ ચિત્ત સંસારી વ્યવહાર કાર્યમા અરૂચિ સંપન્ન બની ગયુ થોડા દિવસો પછી પોતાના પુત્રને રાજ્યગાદી સોપીને સુયશ મુનિરાજની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી આ રીતે સંસારથી વિરક્ત બની મુનિ બની ગયેલા સુમિત્ર મુનિ નવ પૂર્વથી થોડા ઓછા એવા પૂર્વનુ અધ્યયન કરીને ગુરૂની આજ્ઞાથી એકાકી વિચરના લાગ્યા વિહાર કરતા કરતા તેઓ એક સમય મગધ દેશમા આ યા, ત્યા ગામથી બહાર કોઇ એક એકાંત સ્થાનમા જ્યારે તેઓ કાયોત્સર્ગમા સ્થિત હતા ત્યારે ત્યા ઘૂમતો ઘૂમતો તેનો સંસાર અવસ્થાનો નાનો ભાઇ પદ્મ ત્યા આવી પહોચ્યો તેણે કાયોત્સર્ગમા લાગેલા મુનિરાજ સુમિત્રને જોઇને ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધના આવેશથી પોતાની પાસેના બાણમાથી આકરૂ એવુ એક બાણ તેની છાતીમા માર્યું બાણ લાગતા તેની છાતીમા વીંધ પડી જવા છતા મુનિરાજે તેના ઉપર ક્રોધભાવ ન કર્યો પરંતુ પોતાના મનમા એવો વિચાર કર્યો કે, આ બાણથી વીંધાવામા મારાજ કર્મના ઉદયનુ કારણ છે અને એનુજ આ ફળ છે, જો મે આને એજ સમયે રાજ આપી દીધુ હોત તો આ મારી સાથે

सिंहः स्वहस्तं खड्गरहितमपश्यत्। तस्मिन्नेव समये देवैः पुष्पवृष्टिः कृता। अनङ्गसिंहो नैमित्तिकवचनमनुस्मृत्य महृष्टचित्तस्तं स्वपुरं नीत्वा तस्मै स्वपुत्रीं रत्नवतीं दत्तवान्। एवं कृतविवाहश्चित्रगतिः सपत्नीकोऽखण्डशीलां सुमित्र भगिनीं समादाय चक्रपुरे समागत्य सुमित्रायाऽर्पितवान्। सुमित्रेण सत्कृतः सपत्नीकश्चित्रगतिस्ततः स्वनगरं गतः। सुमित्रस्तु भगिनीहरणवृत्तान्तेन सांसा रिकव्यवहारकर्मणि विरक्तिमापन्नः पुत्रे राज्यं न्यस्य मुनिवरस्य सुयशस

उसके हाथ से वह खड्गरत्न झपट लिया। खड्ग के हाथ मे आते ही वहा एकदम प्रकाश हो गया। इस प्रकाश मे अनंगसिंहने अपने हाथको खड्गरहित देखा तो अचभेमे पड गया। इसी समय आकाश मे देवताओंने वहा पुष्पों की वर्षा की। अचभे मे पडे हुए अनगसिंह को उस समय नैमित्तिक के वचनो की याद आने से अपार हर्ष होने लगा। और युद्ध का स्थान अब शान्त वातावरण के रूप मे परिवर्तित हो गया। प्रसन्न होकर अनगसिंह ने चित्रगति को अपने नगर मे ले जाकर उसके साथ अपनी पुत्री रत्नवती का विवाह कर दिया। विवाहविधि समाप्त हो जाने के बाद चित्रगति ने अखण्डशील सुमित्र भगिनी को साथ लेकर भार्यासहित चक्रपुर मे प्रवेश किया और अपने मित्रसुमित्र को उसकी बहिन सोंप दिया। सुमित्र ने भी अपने मित्र का खूब आदर सत्कार किया। इस प्रकार मित्र से सत्कृत होकर चित्रगति कुछ दिनों बाद अपने स्थान पर आगया। सुमित्र के इस भगिनी हरण वृत्तान्त ने चित्त पर वैराग्य की छाप अंकित

હાથમાંથી એ ખડ્ગરત્નને આચકી લીધું ખડ્ગ ચિત્રગતિના હાથમાં આવી જતાં ત્યાં પાછો એકદમ પ્રકાશ થઇ ગયો આ પ્રકાશમાં અનંગસિંહે પોતાના હાથને ખડ્ગ રહિત જોયો ત્યારે તે ભારે અચંબામાં પડી ગયો આજ સમયે આકાશમાંથી દેવતાઓએ ત્યાં પુષ્પવૃષ્ટિ કરી અચંબામાં પડેલા અનંગસેનને એજ વખતે જ્યો- તિષીએ કહેલા વચનો યાદ આવી જવાથી તેને અપાર હર્ષ થયો અને યુદ્ધનું સ્થળ શાન્ત વાતાવરણના રૂપમાં ફેરવાઈ ગયું પ્રસન્ન થઇને અનંગસિંહ ચિત્ર ગતિને પોતાના નગરમાં લઇ ગયો અને તેની સાથે પોતાની પુત્રી રત્નવતીનો વિવાહ કરી દીધો વિવાહવિધિ સમાપ્ત થઈ ગયા પછી ચિત્રગતિએ અખંડશીલ સુમિત્રની બહેનને સાથે લઈને પોતાની પત્ની સાથે ચક્રપુરમાં પ્રવેશ કર્યો અને પોતાના મિત્ર સુમિત્રને તેની બહેન સોંપી દીધી સુમિત્રે પણ પોતાના મિત્રનો ઘણોજ આદર સત્કાર કર્યો આ પ્રમાણે મિત્રથી આદરમાન પામીને ચિત્રગતિ થોડા દિવસ ત્યાં રોકાઇને પોતાના સ્થાને પાછા ફર્યો સુમિત્રની ભગિનીના હરણના વૃત્તાંતથી

खचरचक्रवर्तित्वमन्वभूत्। स राज्यसंरक्षणार्थं युज्यमानयो राज्यधुराधारणसहायकयो प्रभावशालिनोर्द्वयो सामन्तपुत्रयोर्मरणसमाचारं श्रुत्वा सञ्जातवैराग्य स्वपुत्रं विक्रमसेननामानं राज्ये संस्थाप्य रत्नवत्या सह स्वयं दमनाचार्यसमीपे दीक्षां गृहीतवान्। आचार्येण सा रत्नवती साध्वी सुव्रता प्रवर्तिन्यै शिष्यात्वेन समर्पिता। गृहीतदीक्षश्चित्रगतिर्मुनिर्विंशतिस्थानकैः स्थानकवासित्वं पुन पुन समाराध्य चिरं विहृत्य चान्तेऽनशनं कृत्वा मृत.। रत्नवती साध्वी

कार्यरूप मे परिणत करने के लिये चित्रगति को राज्य देकर सुदर्शनाचार्य के पास जाकर दीक्षा अंगीकार करली और क्रमश मुक्तिपद का भी लाभ कर लिया। पिता द्वारा प्रदत्त राज्य का चित्रगति ने अच्छी तरह न्याय नीति के अनुसार संचालन किया। इस प्रकार त्रिविधबल से बलिष्ठ होते हुए उन्होंने बहुत समय तक विद्याधरों का चक्रवर्तिपन भोगते हुए आनन्द के साथ अपना समय सुचारूरूप से व्यतीत किया। जब राज्यधुरा धारण करने मे सहायकभूत प्रभावशाली ऐसे दो सामन्तपुत्रों का मरण सुनकर चित्रगति के अन्त करण मे वैराग्य की भावना जाग्रत हो गई। इससे उसी समय उन्हों ने राज्य मे अपने पुत्र विक्रमसेन को स्थापित कर रत्नवती के साथ दमनाचार्य के पास मुनि दीक्षा धारण करली। आचार्यमहाराज ने रत्नवती साध्वी को सुव्रता प्रवर्तिनी को उसकी शिष्या के रूप मे समर्पित कर दी। चित्रगतिने अच्छी तरह बीस स्थानों का वारवार सेवन द्वारा स्थानकवासीपन का आराधन करते हुए बहुतकालतक विचरे और

ચિત્રગતિને રાજ્યધુરા સોંપીને સુદર્શનાચાર્યની પાસે જઈને દીક્ષા અંગીકાર કરી લીધી અને ક્રમશ મુક્તિ પદનો લાભ પણ કરી લીધો. પિતાએ સુપ્રત કરેલા રાજ્યનું ચિત્રગતિએ સારી રીતે સંચાલન કર્યું. આ પ્રકારે ત્રિવિધબળથી બલિષ્ટ બનીને આ રીતે તેણે લાંબા સમય સુધી વિદ્યાધરોના ચક્રવર્તીપણાને ભોગવીને આનંદની સાથે પોતાના સમયને સુંદર રીતે વ્યતીત કર્યો. જ્યારે રાજ્યધુરા ધારણ કરવામાં સહાયભૂત એવા પ્રભાવશાળી બે સામંત પુત્રોના મરણના સમાચાર તેણે સાંભળ્યા ત્યારે ચિત્રગતિના અંતઃકરણમાં વૈરાગ્યની ભાવના જાગૃત થઈ આથી તે સમયે પોતાના પુત્ર વિક્રમસેનને રાજગાદી સોંપીને પોતે રત્નવતીની સાથે દમનઆચાર્યની પાસેથી મુનિદીક્ષા ધારણ કરી. આચાર્ય મહારાજે રત્નવતીને સાધ્વી સુવ્રતા પ્રવર્તીની તેની શિષ્યાના રૂપથી સોંપી દીધી. ચિત્રગતિએ સારી રીતે વીસ સ્થાનોના વારંવાર સેવનથી સ્થાનકવાસીપણાની આરાધના કરતા લાંબો કાળ વિચરણ કર્યું અને અંતમાં

स्तत्रागतः। त भीत पुरुष 'मा भैषी'-रिति यावत्कुमारो वदति, तावत्कृपाणपाणय उद्भटा भटास्तत्र समागताः। ते च तौ कुमारौ वदन्ति-अनेनाऽस्मत्पुरे चौर्यं कृतम्, अतो वयमेन हनिष्यामः, युवामत्रान्तराय मा कुरुतम्, गच्छत स्वाभिरुचितेन पथा। तेषा वचन निशम्य अपराजितकुमार प्राह-अरे! शरणागतमम् मत्पुरतः शक्रोऽपि हन्तु न समर्थः, किं पुनर्वराका यूयम्? इत्य तेनोक्ते ते भटाः कुमार हन्तु मधाविता। कुमारोऽपि कोशात् कृपाणमाकृष्य तान् पराजितवान्। स्वसैनिकपराजयवृत्तान्त श्रुत्वा कोसलेश कुमार निग्रहीतु

कहता हुआ कोई एक पुरुष आया। उस भयभीत पुरुष को जितने में राजकुमारने "भय मत करो" ऐसा आश्वासन दिया कि इतने में ही वहा तलवारों को हाथों मे लिये हुए अनेक उद्भटभट वहा आ पहुँचे। आते ही दोनों कुमारों से उन्होंने कहा-इस पुरुषने हमारे नगर में चौरी की है। इसलिये हम इस को मार डालना चाहते हैं। आप हमारे इस काममे अन्तरायभूत न बनें और जहा आपलोग जा रहे हों वहां शांति के साथ अपने रास्ते चले जावें। उनकी इस बात को सुनकर अपराजित कुमारने कहा-अरे! तुम क्या कह रहे हो-देखो शरणागत इस व्यक्ति को मेरे समक्ष इन्द्र भी नहीं मार सकता है तो फिर तुम विचारों की तो बात ही क्या है। जब कुमारने ऐसा कहा तो वे सब के सब सुभट कुमार को मारने के लिये तत्पर हो गये। जब कुमार अपराजितने उनकी इस दुष्प्रवृत्ति को देखा तो उसने उसी समय तलवार को म्यान से बाहर निकाल ली और उनको

એવું કહે તો કોઈ એક માણુસ ત્યાં આવી પહોંચ્યો. એ ભયભીત માણુસને જ્યારે રાજકુમારે "ભયથી મુક્ત થાવ" એવું આશ્વાસન આપ્યું ત્યાં તો તરવારોને હાથમાં ધારણ કરેલ એવા અનેક સશસ્ત્ર સુભટો ત્યાં આવી પહોંચ્યા અને આવતાની સાથેજ એ બન્ને કુમારોને જોઈને તેમણે કહ્યું કે, આ માણુસે અમારા શહેરમાં ચોરી કરી છે જેથી અમે તેને મારી નાખવા ઈચ્છીએ છીયે આપ અમારા કામમાં અંતરાયભૂત ન બનો અને જ્યાં જતા હો ત્યાં તમારે રસ્તે ચાલ્યા જાવ તેમની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને અપરાજીત કુમારે કહ્યું-અરે તમે શું કહી રહ્યા છો? શરણે આવેલી આ વ્યક્તિને મારવાનું ઇન્દ્રનું પણ ગજું નથી તો તમે બીચારાઓનું શું ગજું છે જ્યારે કુમારે આમ કહ્યું ત્યારે તે સઘળા સુભટો, કુમારને મારવા માટે તત્પર બની ગયા જ્યારે કુમાર અપરાજીતે તેમની આવી દુષ્પ્રવૃત્તિને જોઈ ત્યારે તેણે એજ સમયે તરવારને મ્યાનથી બહાર કાઢીને અને તેમને નિરૂત્સાહી કરીને પરાજીત બનાવી દીધા કૌશલેશે જ્યારે

कला समुपलभ्य पूर्णत्वमिव तारुण्यं प्राप्तः। तस्य सचिवपुत्रो विमलबोधाख्यो मित्रमासीत्। एकदा तौ कुमारौ हयारूढौ नगरान्तप्रदेशे भ्रमणार्थं गतौ। तस्मिन् समयेऽश्वापहृतौ तौ वनं प्राप्तौ तदाऽपराजितो मित्रं विमलबोधमेवमब्रवीत्–आवां दैवादश्वापहृतौ वनं समागतौ, नोचेत् पित्राज्ञावशवर्तिनोरावयोः रम्यदेशान्तरविलोकनं कथं स्यात्? मातापितृभ्यामावयोर्विरहः सोढव्य एव, अतः सम्प्रत्यावाभ्यां गृहे न गन्तव्यम् प्रत्युत विविधदेशा विलोकनीयाः। 'एवमस्तु' इति यावद्विमलबोधो वदति, तावदेव 'रक्ष रक्ष' इति वदन् कोऽपि पुरुष

हुए सकल कलाओं मे निपुणता प्राप्त करली। क्रमशः वह तरुणावस्था को पाये। अपराजित की मित्रता मत्रीपुत्र विमलबोध के साथ घनिष्ट हुई। जब ये दोनो कुमार अपने-घोड़ो पर बैठकर नगर के बाहिर घूमने गये हुए थे तब इन घोडों से अपहृत होकर वे दोनों जगल मे पहुँच गये। उस समय राजकुमार अपराजित ने मत्रीपुत्र विमलबोध से कहा कि–देखो अपन लोग इससमय अश्व से अपहृत होकर इस अरण्य मे आ पहुँचे हैं, नही तो माता पिता की आज्ञा के वशवर्ती अपन लोगों को ऐसे सुरम्यस्थान का अवलोकन ही कैसे होता। मातापिता को इतने समयतक तो हम लोगों के इस विरहजन्य दुःख को सहन करना ही पडेगा। अत सब से अच्छी बात तो यही है कि अपन लोग इस समय घर पर न जाकर विविधदेशों को देखने के लिये यहा से चलेचलें। विमलबोधने अपराजित के इस बात को ज्यो ही स्वीकृत किया कि इतनेमे ही वहा "रक्षा करो रक्षा करो" इस प्रकार

જીત રાખ્યુ અપરાજીતે ક્રમશ આગળ વધતા બધી કળાઓમા નિપુણતા પ્રાપ્ત કરી લીધી અને તેણે ક્રમશ તરૂણ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી અપરાજીતની મિત્રતા મત્રી પુત્ર વિમળબોધની સાથે ઘણીજ ગાઢ રીતે બધાઇ જ્યારે આ બે કુમાર પોતપોતાના ઘોડા ઉપર બેસીને નગરની બહાર ફરવા ગયા ત્યારે આ ઘોડાઓથી અપહૃત બનીને તે બન્ને જગલમા પહોચી ગયા એ સમયે રાજકુમાર અપરાજીતે મત્રી પુત્ર વિમળ બોધને કહ્યુ કે, આ સમયે અશ્વોથી અપહૃત થઇને આપણે આ જગલમા આવી પહોચ્યા છીયે આવુ ન બનત તો માતા પિતાની આજ્ઞાને વશવર્તી એવા આપણને આવુ સુરમ્ય સ્થાન જોવાનુ ભાગ્ય કઈ રીતે મળી શકત, માતાપિતા આટલા સમય સુધી તો આપણા વિરહના દુ ખને સહન કરવુ પડશે આથી સહુથી સારી વાતતો એ છે કે, આપણે આ સમયે ઘેર પાછા ન ફરતા જુદા જુદા દેશોને જોવા માટે અહીથી ચાલ્યા જઇએ વિમળબોધે અપરાજીતની આ વાતનો જ્યારે સ્વીકાર કર્યો એ સમયે "રક્ષા કરો, રક્ષા કરો"

महाराज! एष भवत्सुहृदो हरिनन्दिनः पुत्रोऽस्ति। तच्छ्रुत्वा राजा स्वसैनिकान् युद्धाद् विरन्तुमादिश्य कुमारमब्रवीत्—वत्स! त्वं मम सुहृदो हरिनन्दिन पुत्रोऽसि। हे वीर! अनेन पराक्रमेण त्वया पितुर्यशो धवलितम्। भाग्यादद्य त्वं मम नेत्रगोचरतां गतः। त्वादृशं मित्रपुत्रं समुपलक्ष्य मम चेतो नितरां प्रमोदति। इत्युक्त्वा समित्रं तं स्वहस्तिनः पृष्ठे समारोप्य स्वराजभवनमनेषीत्। ततः कोसलाधीशः स्वपुत्र्या कनकमालया सह तं विवाहितवान्। कृतविवाहोऽपराजितकुमारो विमलबोधेन मित्रेण सह कांश्चिद्दिवसांस्तत्र स्थित्वा ऽन्यदा एकस्या रात्रौ प्रयाणे विघ्ने माभूदिति हेतोः कमप्यनुक्त्वा मित्रेण सह ततो निर्गतः। गच्छन् स एकदा एकस्मिन् महारण्ये कस्याश्चित्स्त्रिया

से मत्रीने कहा—महाराज! यह आपके मित्र हरिनदी का पुत्र है। इस बात को सुनकर राजाने उसी समय सैनिकों को युद्ध बद करने का आदेश दिया। युद्ध बदकर के फिर राजाने कुमार से कहा—वीर! इस परम पराक्रम से तुमने अपने पिता के यश को उज्ज्वल कर दिया है। भाग्य से ही मुझे आज तुमको देखने का लाभ हुआ है। तुम्हारे जैसे योग्य मि पुत्र को देखकर मेरा अन्त करण आज विशेष आनद का अनुभव करने लगा है। इस प्रकार अपराजित से कहकर राजा उसको मित्र सहित अपने हाथीपर बैठाकर अपने राजभवन में ले आया। वहा आकर राजा ने अपनी पुत्री कनकमाला के साथ उसका विवाह कर दिया। इस प्रकार विवाहित होकर कुमार कुछ दिनों तक वही पर विमलबोध मित्र के साथ रहे। यहा से जाने मे विघ्न न हो इस ख्याल से वे एकदिन मित्र के साथ रात्रि के समय किसी से विना कहे सुने ही वहा से अपने घर को चल दिये।

મિત્ર હરનદીનો પુત્ર છે આ વાતને સાભળીને રાજાએ તે સમયે સૈનિકોને યુદ્ધ બધ કરવાનો આદેશ આપ્યો યુદ્ધ બધ કરીને પછીથી રાજાએ કુમારને કહ્યુ—વીર! આ અજોડ એવા પરાક્રમથી તમોએ તમારા પિતાના યશને ઉજવળ બનાવેલ છે ભાગ્ય થીજ આજે મને તમને જોવાનો અવસર પ્રાપ્ત થયેલ છે તમારા જેવા યોગ્ય મિત્રપુત્રને જોઈને મારૂ અત કરણ આજે વિશેષ આનદ અનુભવી રહ્યુ છે આ પ્રકારે અપરાજીતને કહીને રાજા તેને તેના મિત્ર સાથે હાથી ઉપર બેસાડીને પોતાના રાજભવનમા લઈ ગયા ત્યા પહોચીને રાજાએ તેનો વિવાહ પોતાની પુત્રી કનકમાળા સાથે કરી દીધો આમ વિવાહિત થઈને કુમાર ત્યા પોતાના મિત્ર વિમળ બોધની સાથે ત્યા રહ્યો અહીંથી જવામા વિઘ્ન ન આવે એવા ખ્યાલથી તે એક દિવસ પોતાના મિત્રની સાથે રાત્રીના સમયે કોઈને કહ્યા વગર ત્યાથી પોતાના ઘેર

प्रचुरसैन्य प्रेषितवान। ते सैनिका अप्यपराजितकुमारेण पराजिताः। ततो विदितवृत्तान्तः कोसलाधीश. स्वयमेव सज्जीभूय मन्त्रिसामन्तसेनापतिभि' सह ससैनिको योद्धुं समागतः। त सुसन्नद्ध युद्धार्थं समागत वीक्ष्य कुमारस्त तस्कर विमलबोधसमीपे संस्थाप्य युद्धार्थं समुद्यत'। स हि वेगेन समुत्प्लुत्य कस्यापि हस्तिनो दन्ते चरण निधाय हस्तिपक चाधोऽवतार्य स्वय हस्तिन समारूढ सन् रण कर्तुमारेभे। कुमारस्य स्थैर्यं शौर्यं बल युद्धनैपुण्य च दृष्ट्वा राजा पर मविस्मय प्राप्तवान्। तस्मिन्नेव समये मन्त्री स्वस्वामिन कोसलाधीश्वरमुवाच-

निरुत्साहित कर पराजित कर दिया। कौसलेशने जब अपनी सेना का इस प्रकार पराजय सुना तो वह कुमार को निग्रहीत-(पकड़ने) के लिये बहुत से सैनिकों को भेजा। आये हुए उन सैनिकों को भी कुमारने पराजित कर पीछे हटा दिये। कौसलेश को जब इस भेजी हुई सेना के पराजित होने की बात मालूम हुई तो वे स्वय सज्जित होकर मत्री सामन्त एव सेनापति के साथ सेना को लेकर युद्ध करने के लिये वहा आये। जब अपराजित कुमार को यह बात मालूम हुई कि स्वय कोसलेश सनद्ध होकर युद्ध के लिये आये हैं तो उसने उस तस्कर को अपने मित्र विमलबोध के पास स्थापित कर कोसलेश के साथ युद्ध करने के लिये तत्पर हो गया। कुमार फौरन ही उछ-लकर किसी हाथी के दातपर खडा होकर उसने महावत को नीचे उतार कर स्वय उस हाथी पर बैठकर युद्ध करने लगा। कुमार की इस प्रकार स्थिरता, शूरवीरता, बलिष्ठता एव युद्धकरने की निपुणता देखकर राजा को भारी आश्चर्य हुआ। इसी समय कोसलाधिपति

પોતાની સેનાનો આ પ્રકારનો પરાજય સાભળ્યો ત્યારે તેણે કુમારને પકડવા માટે ઘણા સૈનિકોને મોકલ્યા આવેલા સૈનિકોને પણ કુમારે પરાજીત કરીને પાછા હઠાવી દીધા કૌશલેશને જ્યારે મોકલેલી સેનાને પણ પરાજીત થયાના ખબર મળ્યા ત્યારે પોતે જાતે સજ્જીત બનીને મત્રી સામત અને સૈન્યની સાથે સેનાપતિની સાથે સેનાને લઇને યુદ્ધ કરવા માટે ત્યા પહોચ્યા જ્યારે અપરાજીત કુમારને એ વાત ખબર પડી કે, કૌશલેશ પોતેજ યુદ્ધ માટે તયાર થઈને આવે છે ત્યારે તેણે તે ચોરને પોતાના મિત્ર વિમલબોધને સોપીને કૌશલેશની સામે યુદ્ધ કરવા તત્પર બની ગયા કુમારે એકદમ ઉછળીને કોઈ હાથીના દાત ઉપર ચડી જઇને માવતને નીચે પછાડી દઇને પોતે તે હાથી ઉપર બેસીને યુદ્ધ કરવા લાગ્યો કુમારની આ પ્રકારની સ્થિરતા, શૂરવીરતા તથા યુદ્ધ કરવાની નિપુણતા જોઇને રાજાને ઘણુજ આશ્ચર્ય થયુ આ વખતે કૌશલ અધિપતિને મત્રીએ કહ્યુ—મહારાજ ! આ આપના

निशम्य जातामर्षः स विद्याधरः प्राह–रे दुरात्मन् ! तिष्ठ, त्वमपि परलोके अस्याः सार्थो भव, इत्युक्त्वा स करधृतकरवालः कुमारं युद्धाय न्यमन्त्रयत्। ततस्तावुभावपि चिरकालं खड्गाखड्गि युद्धं कृत्वा पश्चाद् बाहुयुद्धेन योद्धुं प्रवृत्तौ। तदा स विद्याधरो नागपाशेनापराजितं कुमारं बबन्ध। कुमारोऽपि तं नागपाशं यथा गजो जीर्णरज्जुबन्धनं त्रोटयति तथैव सद्यस्त्रोटितवान्। ततः स विद्याधरो विद्यास्त्रैः कुमारमपराजितं प्राहरत्, परन्तु अपराजितकुमारस्य स्वपुण्यप्रभावेण सर्वाणि विद्यास्त्राणि निष्फलानि जातानि। अथ कुमारः समुत्प्लुत्य विद्याधरस्य

पीडित करने में कितना अनर्थ होता है। इस प्रकार कुमार के वचनों से उत्तेजित हुआ वह विद्याधर अपराजित कुमार से कहने लगा रे दुरात्मन्! ठहर जा तुझे भी इसी के साथ परलोक की यात्रा कराता हूं। इस प्रकार बात बात में ही उनका परस्पर में युद्ध छिड गया। पहिले वे दोनों तलवारों से बहुत देरतक लडे। पीछे मल्लयुद्ध करने लगे। विद्याधरने इस समय नागपाश से अपराजित कुमार को जकड दिया, परन्तु गज जिस प्रकार जीर्ण रस्सी के बंधन को तोडताडकर एक तरफ फेंक देता है उसी प्रकार कुमार ने भी उस नागपाश को तोडकर एक तरफ फेंक दिया। विद्याधर ने जब अपने प्रयुक्त नागपाश की ऐसी दुर्दशा देखी तो शीघ्र उसने विद्यास्त्रों से कुमार के ऊपर प्रहार करना प्रारंभ किया। परन्तु अपराजित कुमार के पुण्यप्रभाव से वे सबके सब प्रयुक्त अस्त्र निष्फल हो गये। कुमार ने उसी समय उछलकर उस विद्याधर के मस्तक पर

છો? જો તારામાં ખરેખર બળ હોય તો તું આવી જા અને મારી સામે યુદ્ધ કર અને ત્યારે જ તને ખબર પડશે કે બીજાને પીડા આપવામાં કેટલો અનર્થ સમાયેલો હોય છે. કુમારના આ પ્રકારના વચનોને સાંભળીને ઉત્તેજીત બનેલ એ વિદ્યાધર અપરાજીત કુમારને કહેવા લાગ્યો કે, હે દુરાત્મન! ઉભો રહે તને પણ આની જ સાથે પરલોકની યાત્રા કરાવું છું. આ પ્રકારે વાત વાતમાં જ તેમનું પરસ્પરમાં યુદ્ધ જામી પડયું. પહેલાં તેઓ તરવારથી ઘણા સમય સુધી લડયા પછી મલ્લયુદ્ધ કરવા લાગ્યા. વિદ્યાધરે આ સમય નાગપાશથી અપરાજીત કુમારને જકડી લીધો. પરંતુ હાથી જેમ જુની રસ્સીના બંધનને તોડી ફાડીને એક બાજુ ફેંકી દે છે એજ પ્રકારે કુમારે એ નાગપાશને તોડી ફોડીને એક બાજુ ફેંકી દીધા. વિદ્યાધરે જ્યારે પોતાના પ્રયુક્ત નાગપાશની આવી દુર્દશા જોઈ ત્યારે તેણે તરતજ વિદ્યાઓથી કુમારના ઉપર પ્રહાર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો. પરંતુ અપરાજીત કુમારે પુણ્ય પ્રભાવથી એ સઘળા પ્રયુક્ત અસ્ત્રોને નિષ્ફળ બનાવ્યા. કુમારે એજ સમયે ઉછળીને તે

'हा ! हा ! इयमुर्वी निर्वीरा जाता, नो चेदत्रास्य मां कश्चिदस्माद् दुष्टात्परित्रायेत' इति करुणविलापमाकर्ण्य ध्वनिमनुसृत्य गन्तुं प्रवृत्तः। किंचिद्दूरं गतः स प्रज्वलज्ज्वालामालाकुलितस्य ज्वलनस्य समीपे स्थितामेकां स्त्रियं समाकृष्टकरवालमेकं पुरुषं च दृष्टवान्। पुनः सा बाला करुणमाक्रन्दन्ती एवमुवाच-योऽत्र वीरो भवेत्स मामस्माद् विद्याधराद्रक्षतु। ततोऽपराजितकुमारोऽग्रे गत्वा तं विद्याधरमेवमुवाच-रे विद्याधर ! अमुमबलां कथं कदर्थयसि ? यदि ते बलमस्ति तदा मया सह युद्धं कृत्वा तं सार्थकं कुरु। इत्थं कुमारस्य वचनं

चलते २ जब किसी जंगल में आये तो वहां पर इन्हों ने इस प्रकार किसी स्त्री की करुण चिल्लाहट सुनी कि-"हा हा ! यह पृथ्वी निर्वीर हो गई, नहीं तो अवश्य ही कोई मुझे इस दुष्ट के पंजे से छुडा लेता और मेरी रक्षा करता।" ज्यों ही कुमार के कान में इस प्रकार की ध्वनि पडी तो वे उसी ध्वनि का अनुसरण कर वहां से चले। कुमार कुछ दूर चलकर पहुँचे ही थे कि उनकी दृष्टि में प्रज्वलित ज्वालामाला से आकुलित अग्नि के पास एक स्त्री बैठी हुई दिखलाई पडी और उसके पास तलवार खींचे हुए एक पुरुष। स्त्री रोरो कर इस प्रकार कह रही थी कि जो कोई यहां वीरपुरुष हो वह मेरी इस दुष्ट विद्याधर से रक्षा करे। इस परिस्थिति को देखकर मित्रसहित अपराजित कुमार शीघ्र ही आगे और जाकर उस विद्याधर से कहने लगा रे विद्याधर ! क्यों व्यर्थ मे इस अबला को तू दुःख दे रहा है ? क्यों इसके ऊपर अपने बल की छाप जमा रहा है ? यदि वास्तव मे तुझ मे बल हो तो आजा मेरे साथ युद्ध करले-तब तुझे मालूम हो जावेगा कि दूसरो को

જવા ચાલી નીકળ્યો. ચાલતા ચાલતા જ્યારે તેઓ એક જંગલમાં પહોંચ્યા તો ત્યાં તેઓએ કોઇ સ્ત્રીનું કરૂણ રૂદન સાંભળ્યું કે, "હાય હાય આ પૃથ્વી નિર્વીર થઈ ગઈ નહીં તો મને આ દુષ્ટના પંજામાંથી કોઇ છોડાવી લેત અને મારૂં રક્ષણ કરત" જ્યારે કુમારના કાને આ પ્રકારનો અવાજ અથડાયો ત્યારે તે એ અવાજ તરફ ચાલ્યા. કુમાર થોડે દૂર જતાં ત્યાં પહોંચવામાં હતા ત્યાં તેમની દૃષ્ટિએ પ્રજ્વલિત જ્વાળાઓવાળી અગ્નિ સામે એક સ્ત્રિને બેઠેલી દેખાઇ અને તેની પાસે તરવાર ખેંચીને ઉભેલા એક પુરૂષને જોયો. સ્ત્રી રોઈ રોઇને આ પ્રમાણે કહી રહી હતી કે, અહીંયા જો કોઇ વીરપુરૂષ હોય તો તે મારી આ દુષ્ટ વિદ્યાધરથી રક્ષા કરે. આ પરિસ્થિતિને જોઇને મિત્ર સાથે અપરાજીત કુમાર જલ્દીથી આગળ જઇને તે વિદ્યાધરને કહેવા લાગ્યો કે, વિદ્યાધર ! શા માટે આ અબળાને તું વ્યર્થમાં દુઃખ આપી રહેલ છો ? શા માટે આના ઉપર પોતાના બળની છાપ જમાવી રહેલ

ऽद्भुता रत्नमालाभिधा सुता। इयं हि केनचिद् नैमित्तिकेनोक्ते भाविभर्त्तरि अपराजितेऽनुरक्ताऽऽन्येद्युर्मया बहुशो विवाहायाभ्यर्थिताऽपि मम वचनं नानुमन्यत। ततो मया श्रीषेणसूनुना सुरकान्तनाम्ना इमां वशीकर्तुं बह्व्यो विद्याः साधिताः। पुनरेनामहं बहुश प्रार्थितवान्। तदैव मामेवमुक्तवती–मम मनो यत्राऽनुरक्तं

हे कुमार देखो यह जो लडकी है वह विद्याधराधिपति अमृतसेन की है। इसका नाम रत्नमाला है। यह गुणगण से अलकृत है। जब यह युवावस्था में आई तो इसके पिता ने किसी निमित्तज्ञ से इसका भावि पति होने के विषय मे पूछा तब उसने उससे कहा कि इसका पति अपराजित कुमार होगा। जब इसको यह बात मालूम पडी तो यह भी उसी में अपने चित्त को आसक्त कर रहने लगी। मैंने ज्यों ही इसको देखा तो मेरा मन भी इसके साथ विवाह करने को ललचा गया। मैं ने इसको विवाह करने के लिये बहुत कुछ समझाया–प्रार्थनाएँ भी अनेक बार कई प्रकार से की–परतु यह अपने ध्येय से जरा भी विचलित नहीं हुई। जब मैंने इसकी यह हठाग्रहिता देखी तो मै ने इसको अपने मे अनुरक्त करने के लिये अनेक विद्याओं की सिद्धि करना प्रारभ किया। मैं श्रीषेण विद्याधर का पुत्र हू मेरा नाम सूरकान्त है। विद्या साधकर जब मैं निश्चिंत बन गया तब पुन मै ने इससे अपने साथ सबध करने के लिये कहा–तब उस समय इसने ऐसा कहा

હે કુમાર! જુઓ આ જે છોકરી છે તે, વિદ્યાધરોના અધિપતિ અમૃતસેનની પ્રિય પુત્રી છે તેનુ નામ રત્નમાલા છે એ ખૂબજ ગુણવતી છે જ્યારે આ યુવાવસ્થાએ પહોચી ત્યારે તેના પિતાએ તેના ભાવિપતિ માટે કોઈ જ્યોતિષીને પૂછયુ, ત્યારે તે જ્યોતિષીએ કહેલુ કે, તેનો પતિ અપરાજીત કુમાર થશે જ્યારે તેને આ વાતની ખબર પડી ત્યારે તે પણ પોતાના ચિત્તને તેનામા આસકત કરીને રહેવા લાગી મે જ્યારે એને જોઇ ત્યારે મારૂ મન એની સાથે વિવાહ કરવા માટે લલચાઈ ગયુ મે તેને મારી સાથે વિવાહ કરવા ખુબ લલચાવી ઉપરાતમા વળી વખતે તેને વિનતી પણ કરી પરતુ તે પોતાના ધ્યેયથી જરા પણ વિચલિત ન બની જ્યારે મે તેની આ હઠાગ્રહતા જોઈ ત્યારે મે તેને મારા વશમા કરવા માટે અનેક વિદ્યાઓની સિદ્ધિ કરવાનો પ્રારભ કર્યો હુ શ્રીષેણ વિદ્યાધરનો પુત્ર છુ મારૂ નામ સુરકાન્ત છે વિદ્યા સાધીને જ્યારે હુ નિશ્ચીન્ત બની ગયો ત્યારે ફરીથી મે એને મારી સાથે સબધ કરવા કહ્યુ, ત્યારે એ સમયે તેણે મને એવુ કહ્યુ કે, જુઓ જ્યા મારૂ મન આસકત બની રહેલ છે એવા તે અપરાજીત

शिरसि करवालप्रहारं कृतवान्। महावेदनया मूर्च्छितः स विद्याधरश्छिन्नमूलद्रुम इव भूमौ निपतितः। तदा कुमारस्तमुवाच-भो विद्याधर! स्वस्थीभूय पुनर्मया सह युध्यस्व। ततः स विद्याधर प्राह-महाबाहो! युद्धे मां पराजितवान् भवान्, तत् शोभनं जातम्। हे मित्र! मम वस्त्रान्तग्रन्थौ द्वे मणिमूलिके विद्यते, ते घृष्ट्वा करवालविक्षते मम मूर्ध्नि लेपय। अपराजितकुमारेण तथैव कृतम्। शिरसि लेपेन स विद्याधरः सद्य एव स्वस्थो जातः। ततः कुमारेण पृष्टः स विद्याधरः स्ववृत्तान्तं कथयितुमारेभे-इह विद्याधराधिपस्यामृतसेनस्य गुणगणा-

तलवार से प्रहार किया। प्रहार के लगते ही विद्याधर उसकी वेदना से उसी समय वहीं पर मूर्च्छित हो गया और ऐसे गिरा कि जैसे कोई छिन्नमूल वाला वृक्ष गिर पडता है। उसके गिरते कुमारने उससे कहा-विद्याधर-मैं तुमको आमन्त्रित करता हूँ कि जब तुम स्वस्थ हो जाओ तब फिर मेरे साथ युद्ध करना। कुमार की इस प्रकार बात सुनकर विद्याधर ने कहा महाबाहो! युद्ध में आपने मुझे परास्त कर अच्छा ही किया है। मित्र! देखो मेरे वस्त्र के आंचल में इस समय दो मणि मूलिकाएँ बधी हुई है सो आप उनको घिसकर मेरे इस मस्तक के घाव पर लगा दें। विद्याधर की इस बात से प्रसन्न होकर कुमार ने वैसा ही किया। शिरपर लेप लगने से वह विद्याधर उसी समय स्वस्थ हो गया। कुमार ने विद्याधर से इस वृत्तान्त को पूछा तब विद्याधरने कुमार से अपना वृत्तान्त इस प्रकार कहा—

વિદ્યાધરના મસ્તક ઉપર તલવારનો પ્રહાર કર્યો એ પ્રહાર પડતાજ વિદ્યાધર એ સમયે ત્યાંજ મૂર્છિત થઈને પડી ગયો તે એવી રીતે પડયો કે, ભયંકર વાવા ઝોડાથી મૂળ સાથે ઉખડીને વૃક્ષ જમીન ઉપર પટકાઇ જાય એ રીતે વિદ્યાધરના પડતાજ તેને કુમારે -વિદ્યાધર હું તમને આમંત્રણ આપું છું કે, જ્યારે તમે સ્વસ્થ થઈ જાવ ત્યારે ફરી મારી સાથે યુદ્ધમાં ઉતરજો કુમારની આવી વાત સાંભળીને વિદ્યાધરે કહ્યું-મહાબાહુ! યુદ્ધમાં આપે મને પરાસ્ત કરીને ઘણું જ સારૂં કામ કર્યું છે મિત્ર! મારા વસ્ત્રના છેડે આ સમયે બે મણી મૂલિકાઓ બાંધેલ છે તો આપ એને ઘસીને તે મારા મસ્તક ઉપર લગાડો વિદ્યાધરની આ વાત સાંભળીને પ્રસન્ન થઈને કુમારે એ પ્રમાણે કર્યું માથા ઉપર લેપ લાગવાથી એ વિદ્યાધર એજ વખતે સ્વસ્થ બની ગયો કુમારે વિદ્યાધરને આ વૃત્તાંતને પૂછયું ત્યારે વિદ્યાધરે કુમારને પોતાનું વૃત્તાંત આ પ્રકારથી કહ્યું—

ततो विमलबोधोऽपराजित कुमारस्य परिचयमुक्तवान। कुमारस्य परिचय विज्ञाय रत्नमालाऽन्तर्नितरा प्रमुदिता। तस्मिन्नेव समये रत्नमालाया मातापितरौ ता गवेषयन्तौ तत्रागतौ। विमलबोधमुखात्सर्वं वृत्तान्त श्रुत्वा तौ परम मोदमापन्नौ। ततस्तौ कुमाराय निजा कन्या, सूरकान्तायाभय च दत्तवन्तौ। सूरकान्तश्च ते मणिमूलिके वेषान्तरोत्पादिका गुटिकाश्च कुमाराय दातुमिच्छति परन्तु कुमारेण तत्र औदासीन्य दर्शितम्। तदा सूरकान्तस्तन्मित्राय विमलबोधाय मणि मूलिकाद्वय वेषान्तरोत्पादिका गुटिकाश्च दत्तवान। अपराजितकुमारो रत्न

है" यह जानना चाहते है। अपराजित कुमार ने इस पर उस विद्याधर से कुछ नहीं कहा—केवल विमलबोध ने ही विद्याधर के लिये अपराजित कुमार का परिचय दिया। कुमार का परिचय पाकर रत्नमाला को अपार आनद हुआ। इतने में ही रत्नमाला के पिता रत्नमाला की खोज करते २ वहा आपहुँचे। उन्हों ने विमलबोध के मुख से समस्त वृत्तान्त यथावत जानकर प्रमुदित होते हुए रत्नमाला का विवाह वहीं पर अपराजित कुमार के साथ कर दिया। तथा सूरकान्त को अभयदान देकर आत्मग्लानि से रहित कर दिया। प्रत्युपकार के रूप में अथवा अपनी भक्ति प्रदर्शित करने के अभिप्राय से सूरकान्त ने उन दोनो मणिमूलिकाओ को तथा वेषान्तरोत्पादक गुटिका को कुमार को देने का विचार किया और ज्यों ही वह इस विचार से प्रेरित होकर उनको—कुमार को देने लगा सो कुमार ने उनको लेने में अपनी अनिच्छा प्रदर्शित की। जब सूरकांत ने उन चीजों को लेने मे कुमार की अनिच्छा देखी तो उसने उनको अपराजित के मित्र

બન્ને ઉપર પરમ ઉપકાર કરેલ છે આથી 'આપ કોણ છો" એ જાણવા ચાહુ છુ અપરાજીત કુમારે એના પ્રત્યુત્તરમા કાઈ ન કહ્યુ પરતુ વિમલબોધે જ અપરાજીત કુમારનો પરિચય વિદ્યાધરને કહી સભળાવ્યો કુમારનો તેના મિત્રના મુખેથી પરિચય સાભળીને રત્નમાળાને અપાર હર્ષ થયો આ સમયે રત્નમાળાના માતા પિતા પણ તેની શોધખોળ કરતા કરતા ત્યા આવી પહોચ્યા તેમણે વિમળબોધના મુખેથી સપૂર્ણ વૃત્તાત યથાવત જાણીને આનદની સાથે રત્નમાળાનો વિવાહ ત્યાજ કુમારની સાથે કરી દીધો તથા સૂરકાન્તને અભયદાન આપી ક્લેશમુક્ત બનાવ્યો પ્રત્યુપકારના રૂપમા અથવા પોતાની ભક્તિ પ્રદર્શિત કરવાના અભિપ્રાયથી સૂરકાન્તે તે બન્ને મણિમલિકાઓને તથા વેષાન્તરોત્પાદક ગુટીકાઓ કુમારને આપવાનો વિચાર કર્યો અને જ્યારે તે આવો વિચાર કરીને તે ગુટીકાઓ કુમારને આપવા લાગ્યો ત્યારે કુમારે તે ગુટીકાઓ લેવમા પોતાની અનિચ્છા બતાવી જ્યારે સૂરકાન્તે એ ગુટીકાઓ લેવ ની કુમારની અનિચ્છા

सोपराजितो मम भर्ता स्यादथवाऽग्निर्मा दहतु, अतो नास्ति तव प्रार्थनाया मम हृदयेऽवकाशः। एवमस्या वचनं निशम्य कोपाक्रान्तहृदयोऽहमेनामपहृत्य 'अग्निरेवैना दहतु' इति विचारेणात्र समायातः। यावदेना हत्वा वह्नौ प्रक्षिपामि, तावदस्या आक्रन्दं श्रुत्वाऽस्या मम च पुण्यैर्भवानत्रामिरागत। त्व पुनर्मम हत्वा देना, स्त्रीहत्याजनितदुर्गतेश्च मा रक्षितवान। हे परमोपकारिन! त्व कोऽसि?

कि-देखो जहा मेरा मन अनुरक्त हो रहा है ऐसा वह अपराजित कुमार या तो मेरा पति होगा-या अग्नि ही मेरी शरण होगी इसके सिवाय और कोई तीसरा व्यक्ति इस शरीर का रक्षक नही हो सकता है अतः जब मेरा ऐसा दृढसकल्प है तब तुम्हारे जैसे व्यक्ति के लिये मेरे हृदय में अवकाश मिल जाय यह बात सर्वथा असभव है। इस प्रकार हे कुमार! जब मैं ने इसकी ऐसी बात सुनी तो मुझे बडा भारी क्रोध हुआ। उससे मेरा हृदय सहसा आक्रान्त बन गया तब उसके आवेश से आकर मैं ने इसका यह हरण किया है। और हरण कर यहा इसको ले आया हू और इससे कह रहा था कि बस अब तेरा रक्षक एक यह अग्नि ही है। इसको मार कर मै अग्नि में डालना ही चाहता था कि इतने में इसके करूण रुदन को सुनकर आप इसके मेरे पुण्योदय से यहा पर आ पहुँचे।

आप के इस समागमन से मै स्त्री हत्या जनित पाप से प्राप्त होनेवाली दुर्गति के पतन से बच गया हू तथा यह स्त्री भी जीवित बच गई है। आपने हम दोनों का परम उपकार किया है। अंत हम "आप कौन

કુમાર કાતો મારા પતિ બનશે અથવા તો અગ્નિજ મારો આશ્રય બનશે તેના સિવાય ત્રીજી કોઈ વ્યક્તિ આ મારા શરીરનુ રક્ષણ કરનાર બની શકશે નહી આથી જ્યારે મારો એવો દૃઢ સકલ્પ છે ત્યારે તમારા જેવી વ્યક્તિ માટે મારા હૃદયમા અવકાશ મળી જાય એ વાત સર્વથા અસભવ છે આ પ્રમાણે હે કુમાર મે તેની વાત સાભળી ત્યારે મને હૃદયમા ઘણોજ ભારે ક્રોધ ચડયો એનાથી મારૂ હૃદય સહસા ક્રોધિત બની ગયુ અને એ ક્રોધના આવેશમા આવીને મે તેનુ હરણ કરેલ છે અને હરણ કરીને તેને અહી લઈ આવેલ છુ અને તેને કહી રહ્યો હતો કે હવે તારૂ રક્ષણ કરનાર આ એક અગ્નિજ છે આને મારીને હુ અગ્નિમા નાખી દેવાનુ ચાહતો હતો કે, એટલામા એના કરૂણ રૂદનને સાભળીને આપ એના અને મારા પુણ્ય ઉદયથી અહી આવી પહોચ્યા

આપના આ પ્રકારના આગમનથી હુ સ્ત્રી હત્યાના પાપથી પ્રાપ્ત થનારી દુર્ગતિના પતનથી બચી ગયો છુ તથા આ સ્ત્રી પણ બચી ગયેલ છે આપે અમારા

पुरोद्याने समागतः। अत्र यावदसौ उन्मनस्को विश्रमितुं यतते, तावद् द्वौ विद्याधरौ समुपेत्य तं कथितवन्तौ —अस्ति भुवनभानुनामा विश्रुतो विद्याधरेन्द्रः। तस्य विद्येते कमलिनी-कुमुदिनीत्यभिधेये द्वे कन्ये। अनयोः पतिरपराजितो भविष्यतीति केनचिद् नैमित्तिकेनोक्ते भुवनभानुना तमानेतुमावामाज्ञप्तौ। तत आवां विद्याप्रभावेण तत्र कानने युवामपश्याव. परन्तु यावदावां तत्र गतौ तावद् भवान् जलमानेतुं गत। कुमारमपहृत्यावां भुवनभानवे समर्पितवन्तौ। भुवनभानुरभ्युत्थानादिना कुमारं सत्कृत्य कन्यके समुद्वोढुं तं प्रार्थितवान्।

ओर के आवेग से कुछ हलका बन गया तब फिर इस ने कुमार की तलाश करना प्रारंभ किया। ढूढते २ यह नंदिपुर के उद्यान में आ पहुँचा। वहाँ ज्यों ही यह विमनस्क बनकर विश्राम करने की चेष्टा करने लगा कि इतने में दो विद्याधर आये और बोले—

भुवन में प्रसिद्ध भुवनभानु नाम का एक विद्याधरों का अधिपति है। उसकी कमलिनी और कुमुदिनी नामकी दो कन्याएं हैं। निमित्तज्ञ ने इनका पति होना अपराजित कुमार को कहा है। हमलोग पता लगाते २ विद्या के प्रभाव से उस जंगल में गये कि जहां कुमार को प्यास ने सताया था। कुमार को प्यास शांत करने के लिये ज्यों ही आप जल लाने के लिये उसको एक वृक्ष के नीचे बैठा कर गये कि हम लोग उसको उसी समय वहां से हरकर भुवनभानु के पास ले आये हैं। भुवनभानु को कुमार के आगमन से बडा भारी हर्ष हुआ है। उसने कुमार का खूब सत्कार किया और अपनी दोनों लड

આવેગથી કાઇક હલકુ થયુ ત્યારે ફરીથી તેણે કુમારની તપાશ કરવાનો પ્રારંભ કરવા વિચાર કર્યો અને શોધખોળ કરતા કરતા તે નંદિપુરના ઉદ્યાનમા પહોચ્યો. ત્યા પહોચીને જ્યારે તે શૂનમુન બનીને વિશ્રામ કરવાની ચેષ્ટા કરવા લાગ્યો કે એટલામા તેની પાસે બે વિદ્યાધર આવ્યા ને બોલ્યા—

ભુવનમા પ્રસિદ્ધ ભુવનભાનુ નામના વિદ્યાધરોના અધિપતિ છે એની કમલિની અને કુમુદિની નામની બે કન્યાઓ છે જ્યોતિષીએ એ બન્ને કન્યાઓના પતિ તરીકેનુ અપરાજીતનુ નામ બતાવેલ છે એ કારણે વિદ્યાધરાધિપતિ ભુવનભાનુએ અમોને એમને લેવા માટે મોકલેલ છે અમે લોકો એની શોધખોળ કરતા કરતા વિદ્યાના પ્રભાવથી એ જંગલમા ગયા કે જ્યા કુમાર તરસથી પીડાઈ રહ્યા હતા તેમને આંબાના વૃક્ષ નીચે બેસાડી આપ પાણી લેવા ગયા ત્યારે અમોએ ત્યાથી તેમનુ હરણ કર્યું અને અહી ભુવનભાનુની પાસે લઈ આવેલ છીએ ભુવનભાનુને કુમારના આગમનથી ઘણોજ હર્ષ થયો છે એણે કુમારનો ખુબ સત્કાર કર્યો અને

मागया पितरोमयुक्तवान्-यदाऽहं स्वनगरे गमिष्यामि, तदैवा तव पुत्री मम समीपे प्रापणीया। एवमुक्त्वा विमलबोधेन सह कुमारोऽग्रे प्रस्थितः।

तदनन्तर कियद्दूर गतः स तृषातुरो जातः। ततो विमलबोध कुमार कस्यचिदाम्रवृक्षस्य मूले निवेश्य स्वयं जलमानेतुं गतः। जलमादाय प्रतिनिवृत्त स तत्र कुमारमदृष्ट्वाऽत्यन्तमविद्यत। अथ शोकसवलितस्वान्त स कुमार गवेषयितुस्तत परिभ्राम, परन्तु तेन न क्वापि कुमारस्य वार्ता समुपलब्धा। ततोऽनिष्टमाशङ्कमान स शोकावेगेन मूर्च्छितो भूमौ पतितवान्, लब्धसंज्ञस्तु भृशं व्यलपत्। अथ कथञ्चिद् धैर्यमालम्ब्य स पुनः कुमारमन्वेषयितुं पर्यटन नन्दि

विमलबोध को दे दिया। अपराजित कुमार तथा विमलबोध ने वहां से जाने का विचार किया-तब रत्नमाला के पिता से अपराजित कुमार ने ऐसा कहा कि जब मैं घर पहुँच जाऊँ तब आप अपनी पुत्री को मेरे पास भेज देना। ऐसा कह कर कुमार वहां से विमलबोध के साथ चल दिया।

चलते २ कुछ दूर जाने पर अपराजित कुमार को प्यास ने सताया तब विमलबोध अपराजित कुमार को एक आम्रवृक्ष की छाया में बैठा कर उसके लिये पानी लेने को गया। पानी लेकर ज्यों ही वह वापिस लौटा तो उसने वहां कुमार को नहीं देखा। इस कारण वह दुःखित होकर कुमार की गवेषणा निमित्त इधर उधर घूमने लगा। परन्तु उसको कुमार का किसी भी प्रकार से पता नहीं मिल सका। तब वह कुमार के अनिष्ट होने की आशंका से मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ा। कुछ देर बाद जब इसको चेतना आई तो वह खूब रोया। रोते २ जब इसका हृदय

ભાળી ત્યારે તેણે તે ગુટિકાઓ અપરાજીત કુમારના મિત્ર વિમળબોધને આપી અપરાજીત કુમાર અને વિમળબોધ બન્નેએ ત્યાંથી ચાલવાનો વિચાર કર્યો અને રત્નમાળાના પિતાને અપરાજીત કુમારે એવું કહ્યું કે, જ્યારે હું મારા ઘેર પહોંચી જાઉં ત્યારે આપ આપની પુત્રીને મોકલી આપશો આ પ્રમાણે કહીને કુમાર વિમળબોધની સાથે ચાલી નીકળ્યા

ચાલતા ચાલતા થોડે દૂર જવા પછી અપરાજીતકુમારને ખૂબ તરસ લાગી એટલે અપરાજીતકુમારને આંબાના વૃક્ષની છાયામાં બેસાડીને વિમળબોધ એમને માટે પાણી લેવા ગયો પાણી લઈને જ્યારે તે પાછો ફર્યો ત્યારે તેણે કુમારને ત્યાં ન જોવાથી કુમારની શોધખોળ કરવા નિમિત્તે અહીં તહીં ઘૂમવા લાગ્યો પરંતુ એને કુમારનો ક્યાંય પણ પત્તો ન મળ્યો આથી એના મનમાં કુમારનું અનિષ્ટ થયાની શંકા જાગી આથી તે મૂર્છિત થઈને જમીન ઉપર પડી ગયો કેટલીકવાર પછી જ્યારે તેનામાં ચેતન આવ્યું ત્યારે તે ખૂબ રોયો રોતા રોતા એનું હૃદય શોકના

णीतवान्। कतिचिद् दिवसास्तत्र स्थित्वा तौ ततोऽपि पूर्ववत्प्रचलितौ। तद नन्तरं तौ क्रमेण श्रीमद्मपुरं समागतौ। सूरकान्तविद्याधरप्रदत्तमणिप्रभावेण पूर्णेच्छौ तौ सुखेन तत्र स्थितवन्तौ। अथान्यदा तस्मिन् पुरेऽत्युच्चैः कोला-हलो जातः तन्निशम्य अपराजितकुमारो विमलबोधं पृष्टवान्-अय महाकोलाहलः कुतो जायते? सोऽपि जनमुखात् सर्ववृत्तान्तं समुपलभ्य समागत्यापराजित कुमारमब्रवीत्-अस्त्यत्र नगरे सुप्रभो नाम राजा। तं कोऽपि छलेन छुरिकया ऽऽहतवान्। अस्य राज्ञो राज्ययोग्यः कोऽपि पुत्रादिर्नास्ति अतो नागरिकाः

कुमार के पास आ पहुँचा। इस प्रकार वियुक्त मित्र के मिलने पर कुमार ने उन दोनों विद्याधर कन्याओं के साथ अपना विवाह कर लिया। विवाह हो जाने के बाद कुमार समित्र कितनेक दिनों तक वहां रहा।

पश्चात् वहां से भी चलकर मित्रके साथ फिर वह चलते २ श्री सद्मपुर आ पहुंचा। सूरकांत विद्याधर के द्वारा प्रदत्त मणिमूलिकाओं के प्रभाव से वहां उनकी प्रत्येक इच्छा सफल होने लगी-किसी भी ठाटबाट की इनके पास कमी नहीं रही।

एक दिन की बात है कि उस पुर में अचानक ही बहुत बडा भारी कोलाहल मचा। इसको सुनकर अपराजित कुमार ने विमलबोध से पूछा-यह महाकोलाहल क्यों हो रहा है? विमलबोध ने अपराजित को इस जिज्ञासा के समाधान निमित्त जनमुख से समस्तवृत्तान्त जानकर अपराजित कुमार से इस प्रकार कहा-इस नगर में सुप्रभ नामका एक राजा रहता है। उसको छलसे किसीने छुरी से घायल कर दिया है-इस बात से समस्त नागरिक जन करुणक्रन्दन कर रहे

વિદ્યાધર કન્યાઓ સાથે પોતાના લગ્ન કરી લીધા વિવાહ થઈ ગયા બાદ કુમાર કેટલાક દિવસ સુધી ત્યાં રોકાયો

પોતાના મિત્રની સાથે પછીથી ચાલીને તે શ્રીસદ્મપુર આવી પહોંચ્યો. સૂરકાન્ત વિદ્યાધર દ્વારા અપાયેલ મણી મૂલીકાઓના પ્રભાવથી તેની ત્યાં દરેક ઇચ્છાઓ સફળ થવા લાગી કોઇ પણ જાતના ઠાઠમાઠની તેને કમી રહી નહીં

એક દિવસના વાત છે કે, જ્યારે એ નગરમાં એકદમ કોલાહલ મચી ગયો તેને સાંભળીને અપરાજીત કુમારે વિમળબોધને પૂછ્યું-આ મહા કોલહલ શા માટે થઈ રહેલ છે? વિમળબોધે અપરાજીતના એ પ્રશ્નના સમાધાન નિમિત્તે જનતાના મુખેથી સઘળો વૃત્તાંત જાણીને અપરાજીત કુમારને આ પ્રમાણે કહ્યું-આ નગરના સુપ્રભ નામના એક રાજા રહે છે તેને છળકપટથી કોઈએ છરી મારીને ઘાયલ કરી દીધેલ છે આ વાતથી સઘળા નાગરીકો કરૂણ આક્રંદ કરી રહેલ છે જેનો આ

परन्तु कुमारो भवद्वियोगव्यथाकुलत्वात्तूष्णीकतामाश्रयन्। ततः प्रभुणा भवदन्वेषणाय पुनराज्ञप्तावावां भवन्तं सर्वत्र समन्वेषयन्तौ दैवानुग्रहात् धनमिव भवन्तमद्य समुपलब्धवन्तौ अतो भवान् आवाभ्यां सह त्वरितं प्रचलतु, कुमारस्यान्तिकं नयावो भवन्तम्। तयोर्वचनं निशम्य कुमारदर्शनोत्कण्ठाविवशो विमलबोधस्ताभ्यां सह कुमारसमीपे समागतः। ततः कुमारो विद्याधरकुमारिकाद्वय परि

कियों के साथ विवाह करने का विचार भी उसके समक्ष रख दिया है। परन्तु स्वीकृति का रूप अभीतक इसलिये नहीं मिल रहा है कि कुमार इस समय आपके वियोग से विशेष दुःखित हो रहे हैं। आपके विना वे अभी इस विषय में बिलकुल मौन हैं। जब भुवनभानु को यह पता पड़ा कि ये मित्र के विना दुःखित एवं अपनी संमति देने में असमर्थ हैं तो उन्होंने आपकी तपास करने के लिये हम दोनों को आज्ञा दी–और कहा कि जहां भी विमलबोध मिलजावें शीघ्र उनको वहां से यहां ले आवो। स्वामी की आज्ञा प्राप्तकर हमलोग आपकी तलाश में वहां से चले–तलाश करते २ हमको आज बडे भाग्य से खोया हुआ धन की प्राप्ति के समान आपकी प्राप्ति हो पाई है। अतः आप हम लोगों के साथ २ ही यहां से शीघ्र चलने की कृपा करें। इस प्रकार उनके वचनों को सुनकर विमलबोध अपराजित कुमार के दर्शनों की उत्कंठा से उत्कंठित होकर उनके साथ वहां से चला और

પોતાની બન્ને પુત્રીઓનો વિવાહ તેની સાથે કરવાનો વિચાર પણ જાહેર કરી દીધો પરંતુ કુમાર તરફથી તે વાતની સ્વીકૃતીનો અભિપ્રાય હજુ સુધી એ કારણે નથી મળ્યો કે, તેઓ આપના વિયોગથી ખૂબજ દુઃખી બની રહ્યા છે આપના વગર તેઓ આ વિષયમાં બિલકુલ મૌન છે જ્યારે ભુવનભાનુને આ વાત જાણવામાં આવી કે, મિત્ર વગર તેઓ દુઃખિત છે, અને પોતાની સંમતિ આપવામાં ન અસમર્થ છે ત્યારે તેમણે આપની તપાસ કરવા માટે અમો બન્નેને ફરીથી આજ્ઞા કરી અને કહ્યું કે, તમોને જ્યાંથી વિમળબોધ મળે તેને તુર્તજ અહીં લઈ આવો સ્વામીની આજ્ઞા મેળવીને અમો બન્ને આપની તપાસ કરવા માટે ચાલ્યા અને તપાસ કરતાં કરતાં જેમ નાશ પામેલ ધનની પ્રાપ્તિ થાય તેમ ખૂબ સૌભાગ્યથી આપની પ્રાપ્તી થયેલ છે જેથી આપ અમારી સાથે ઉતાવળથી ચાલવાની કૃપા કરો.

આ પ્રકારના તે બન્ને વિદ્યાધરોના વચનોને સાંભળીને વિમળબોધ અપરાજીત કુમારના દર્શનની ઉત્કંઠાથી ઉત્કંઠિત થઈને તેમની સાથે ચાલી નીકળ્યો અને કુમારની પાસે આવી પહોંચ્યો આ પ્રમાણે છુટા પડેલા મિત્રના મળવાથી કુમારે તે બન્ને

ऽपराजित कुमार बहुमानपुरस्सरं मूर्च्छितस्य राज्ञःसमीपे आनीतवान। कृपा र्द्रहृदय कुमारो विमलबोधसकाशाद् मणिमूलिकाद्वय गृहीत्वा नीरेण तत् सघृष्य सुप्रभनृपस्य छुरिकाक्षतस्थाने लिप्तवान्। अनुलेपनसमकालमेव राजा ऽपगतमूर्च्छ स्वस्थो जात। सोऽपराजित कुमारमेवमब्रवीत्–अये! निष्कारण बन्धो! त्वं मम भाग्यैरेवात्राऽऽगतोऽसि। त्वया स्वजन्मना कस्य कुल समलङ्कृतम्, कश्च जनपदस्त्वया धन्यतम कृत.? का नगरी सम्प्रति त्वद् विरहेण क्लेशिता? कस्याङ्कस्त्वया बालोचितचापल्येन धूसरीकृत? एतत्सर्वं श्रोतुं मम चेतश्चञ्चलायते

कामलता के वचनों को सुनकर मन्त्रिगण अपराजित कुमार के पास आये और बहुमानपुरस्सर उसको मूर्च्छित राजा के पास लेकर उपर पहूँचे। जाते ही कुमारने राजा की ज्यों ही स्थिति देखी, तो उनको उसके उपर बडी दया आई। उसी समय अपने मित्र विमलबोध के पास से दोनों मणिमूलिकाओं को लेकर तथा उनको पानी मे घिसकर उन्होंने सुप्रभ नृप के घाव के स्थान से उसका लेप कर दिया। लेप होते ही राजा की मूर्च्छा दूर हो गई–और अपनी तबियत उसको हल्की –स्वस्थ–मालूम पडने लगी। राजाने तबियत स्वस्थ होते ही अपराजित कुमार से पूछा अकरण बन्धो! आप हमारे शुभोदय से ही यहा पधारे हैं अत' हमको "आपने किस कुल को आपने जन्म से अलकृत किया है" यह बताकर अनुग्रहीत करे। तथा ऐसा वह कोनसा देश है जो आप के जन्म से धन्यतम बना है। तथा ऐसी वह कौनसी अभागिनी नगरी है जिसको आपके विरहजन्य दुःख का अनुभव

કામલતાના વચનો સાભળીને મત્રીગણ અપરાજીત કુમાર પાસે આવ્યા અને તેને ઘણાજ સન્માનની સાથે મૂર્છિત બનેલા રાજાની પાસે લઇ ગયા જઈને કુમારે જ્યારે રાજાની આ સ્થિતિ જોઇ ત્યારે તેના ઉપર તેને ખૂબ દયા આવી ગઇ એ સમયે પોતાના મિત્ર વિમળબોધની પાસેથી તે બન્ને મણીમૂલિકાઓને લઇને તથા તેને પાણીમા ઘસીને તે સુપ્રભ રાજાના ઘાવ ઉપર તેનો લેપ કરી દીધો લેપ થતાજ રાજાની મૂર્છા દૂર થઇ ગઈ અને તેને પોતાની તબીયત સ્વસ્થ લાગવા માડી રાજાની તબીયત સ્વસ્થ થતા જ અપરાજીત કુમારને પૂછ્યુ –અકારણ બધુ! આપ અમારા શુભઉદયથી અહી આવ્યા છો જેથી અમને "ક્યા કુળને આપે આપના જન્મથી અલકૃત કરેલ છે" આ વાત બતાવીને અમારાપર અનુગ્રહ કરો તથા એવો કયો દેશ છે કે, જે આપના જન્મથી ધન્ય બનેલછે, તથા એવી કઈ અભાગિણી નગરી છે કે, જેને આપના વિરહથી ઉત્પન્ન થતા દુ ખનો અનુભવ કરવો

करुणं क्रन्दन्ति। स एव क्रन्दनरवः कोलाहलरूपेण श्रूयते। तन्दुःखाकर्णनाकुलितः कुमारोऽनीव विषण्णो जातः। युज्यते चैतत् सन्तो हि परदुःखेन भृशं दुःखिता भवन्ति। अथ नानाप्रकारेषु कृतेष्वपि उपचारेषु राजा स्वास्थ्यं नो लब्धवान्, तदा तत्सचिवान् कामलता नाम दासी प्राह–सद्गुणः कोऽपि वैदेशिकः पुरुषः समित्रोऽत्र निवसति। स हि कमपि व्यापारमकुर्वाणोऽपि सुखेन तिष्ठति। मन्ये ऽवश्यमेव तत्सन्निधौ किमप्यौषधं भविष्यति। तस्या वचनं श्रुत्वा मन्त्रिगणो-

हैं उसी का यह कोलाहल सुनने में आरहा है। इस बात से परिचित होकर अपराजित कुमार को एकप्रकार की भीतर चोट सी पहुँची, बात भी ठीक है जो सज्जन होते हैं वे पर को दुःखित देखकर स्वयं दुःखित हो जाते हैं। राजाका अनेक प्रकार से उपचार किया गया–परन्तु सुनते हैं कि उनको इससे अभीतक कोई भी लाभ नहीं पहुंचा है। राजा के ऐसा कोई योग्यपुत्र भी नहीं है जो राज्य के भार को सभाल सके। अतः सब को इस बात से बडी चिन्ता लग रही है। इस प्रकार कहकर उसने अपराजित कुमार से यह भी कहा कि जब मंत्रिगण इस चिन्ता से व्यथित हो रहे थे–तब कामलता नाम की किसी एक दासी ने उनसे ऐसा कहा है कि यहां पर कोई एक विदेशी पुरुष अपने मित्र के साथ आया हुआ है। वह व्यापार धन्दा कुछ भी नहीं करता है फिर भी आनंद के साथ अपना समय व्यतीत कर रहा है इससे ज्ञात होता है कि उसके पास कोई ऐसी औषधि होनी चाहिये जो इसका हरएक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। इस प्रकार उस

કોલાહલ સંભળાઇ રહેલ છે આ વાત સાંભળીને અપરાજીત કુમારના મનમાં એક પ્રકારની ચોટ લાગી ગઈ કે, વાત તો ઠીક છે, જે સજ્જન હોય છે તે પારકાનું દુઃખ જોઈને સ્વયં દુખિત થાય છે રાજાનો અનેક પ્રકારથી ઉપચાર કરવામાં આવ્યો પરંતુ સંભળાય છે કે, તેને હજુ સુધી કાંઇ લાભ થયેલ નથી રાજાને એવો કોઇ યોગ્ય પુત્ર પણ નથી કે, જે રાજ્યભાર સંભાળી શકે આ કારણને લઇને સઘળાને ભારે ચિંતા થઇ રહેલ છે આ પ્રમાણે કહીને તેણે અપરાજીત કુમારને એ પણ કહ્યુ કે, જ્યારે મંત્રીગણ આ ચિંતાથી વ્યથિત થઈ રહેલ છે ત્યારે કામલતા નામની કોઈ એક દાસીએ કહ્યુ કે, કોઈ એક વિદેશી પુરૂષ પોતાના મિત્ર સાથે અહીં આવેલ છે તે વેપાર ધંધો કાંઇ કરતા નથી તો પણ આનંદની સાથે પોતાનો સમય વીતાવે છે આથી એવું જાણવા મળે છે કે, તેની પાસે એવી કોઇ ઔષધી હોવી જોઈએ કે, જે તેની દરેક આવશ્યકતાને પુરી કરે છે આ પ્રકારના

अथासौ मित्रसहित कुमारो मार्गे गच्छन् क्रमेण कुण्डपुरोद्याने समागतः। दृष्ट्वा भक्त्या तं प्रणम्य तद्दर्शना ...तवान। धर्मदेशनाश्रवणानन्तरं कुमारः कृताञ्जलिः प्रणम्यैवं पृच्छति। भदन्त! अहं भव्योऽस्मि, किंवा-अभव्यः? इति कथयतु भवान। एवमपराजितेन पृष्टो भगवान् केवली तमेवं कथितवान् हे देवानुप्रिय! त्वं भव्योऽसि। इतः पञ्चमे भवे भरतक्षेत्रे त्वं द्वाविंशतितमो जिनो भविष्यसि, अयं तव सखा तव गणधरो भविष्यति। इदं केवलिनो वचः श्रुत्वा सजाततर्षः स तस्मिन्नेव नगरे समित्रो विंशति स्थानकानि पुनः पुनराराधयन् न्यवसत्।

कुमार कुछ दिनों तक वहीं रहा। कुछ समय बाद मित्र को साथ लेकर वहाँ से चल दिया।

चलते २ कुण्डनपुर के बगीचे में ज्यों ही पहुँचे कि वहां उनको केवली भगवान के दर्शन हुए। अब क्या था-दर्शन कर कुमार बहुत आनंदित हुआ। उनके श्रीमुख से धर्म की देशना सुनकर उसके आनंद की सीमा ही नहीं रही। जब केवली भगवान् की धर्मदेशना समाप्त हुई तब कुमार ने बडे विनय के साथ हाथ जोडकर उनसे प्रश्न किया-हे भदन्त! मैं भव्य हूं अथवा अभव्य हूं? कुमार के इस प्रश्न को सुनकर केवली ने उनसे कहा देवानुप्रिय! तुम भव्य हो! आजसे पंचम भव में तुम बीसस्थानकों का आराधन करके इसी भरतक्षेत्र में २२ वें तीर्थंकर होगे। तथा यह विमलबोध मित्र तुम्हारा गणधर होगा। इस प्रकार केवलि प्रभु के आनंद प्रदान करने वाले वचनों को सुनकर कुमार मित्र सहित बीस स्थानकों की आराधनाकरतेहुए उसी नगर में रहे। एकदिन की बात है

થોડા દિવસો ત્યાં રહ્યા કેટલોક સમય વીત્યા પછી તેઓ પોતાના મિત્ર સાથે ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યા

ચાલતા ચાલતા કુંદનપુરના બગીચામાં આવી પહોંચ્યા ત્યાં તેમને કેવળી ભગવાનના દર્શન થયા, પછી શું હતુ-દર્શન કરીને કુમારને ઘણો આનંદ થયો એમના શ્રીમુખથી ધર્મની દેશના સાંભળીને એમના આનંદની સીમા ન રહી જ્યારે કેવળી ભગવાનની ધર્મદેશના સમાપ્ત થઈ ત્યારે ઘણાજ વિનયની સાથે હાથ જોડીને તેમને પ્રશ્ન કર્યો-હે ભદન્ત! હું ભવ્ય છું અથવા અભવ્ય છું? કુમારના આ પ્રશ્નને સાંભળીને ભગવાને કહ્યું કે હે દેવાનુપ્રિય! તમો ભવ્ય છો આજથી પાંચમા ભવમાં તમો વીસ સ્થાનોનું આરાધન કરીને આ ભરતક્ષેત્રમાં બાવીસમા તીર્થંકર થશો તથા આ વિમળબોધ મિત્ર તમારા ગણધર થશે આ પ્રકારના કેવળી ભગવાનના આનંદ પ્રદાન કરવવાળા વચનોને સાંભળીને કુમાર મિત્ર સહિત વીસ સ્થાનોની આરાધના કરતા કરતા એજ નગરમાં રહ્યા એક દિવસની વાત છે કે,

अतो निवेदय सर्वम्। ततस्तन्मित्रं विमलबोधेन कुमारस्य सर्वं कुमारवृत्तान्तं निवेदितम्। कुमारस्य परिचयं श्रुत्वा प्रसन्नमना सुप्रभो राजा प्रमुवाच-अहो! त्वं तु मम मित्रपुत्रोऽसि! शोभनं जातं यदत्रागतः, इत्युक्त्वा बहुमानेन सह समित्रं तं स्वभवने न्यवासयत्। सम्प्राप्ते शुभमुहूर्ते रम्भानाम्नी स्वकन्या कुमारेण विवाहितवान्। कुमारो मित्रेण सह चिरं तत्र स्थित्वा पुनः भार्यया सह तस्मात्पुरान्निर्गतः।

करना पडा है। कौनसा ऐसा वह पिता भाग्यशाली है कि जिसकी गोदको अपने बालोचित क्रीडाओं से अलकृत किया है। तथा ऐसी वह कौनसी माता है कि जिसने आप जैसे भाग्यशाली पुत्र को जन्म देकर पुत्रवती स्त्रियों के बीच में अपना मुख्य आसन जमाया है। यह समस्त वृत्तान्त हमको कहकर लालायित हुए इस मेरे अन्तःकरण को आप हर्षित करें। राजा का इस प्रकार अपने परिचय पानेकी उत्कंठावाला देखकर कुमारने तो कुछ नहीं कहा। केवल कुमार के मित्र विमलबोधने ही राजाकी उत्कंठा शांत करने के लिये कुमार का सर्व वृत्तान्त सहित परिचय दिया। कुमार का परिचय पाकर सुप्रभ राजा बहुत ही मुदित हुआ, तथा कहने लगा-अरे! तब तो तुम मेरे मित्र के पुत्र होते हो अच्छा हुआ जो तुम यहां आये। ऐसा कहकर उस राजाने कुमार को बहुमान पुरस्सर मित्रसहित अपने यहां ही रख लिया तथा कोई शुभ मुहूर्त देखकर अपनी रम्भा नामकी कन्या का विवाह भी उसके साथ कर दिया। विवाहित होने के बाद

પડે છે? ક્યા એવા ભાગ્યશાળી પિતા છે કે, જેમની ગોદને આપની બાલોચિત ક્રીડાઓથી અલંકૃત કરી છે? એવી કઇ પવિત્ર માતા છે, કે, જેણે આપના જેવા ભાગ્યશાળી પુત્રને જન્મ આપીને પુત્રવાળી સ્ત્રિયોની વચ્ચે પોતાનુ મુખ્ય આસન જમાવ્યુ છે? આ સઘળો વૃત્તાંત અમને બતાવીને ઇંતેજાર બનેલ મારા અંતઃકરણને હર્ષિત કરો. રાજાને આ પ્રકારે પોતાનો પરિચય જાણવાની ઇચ્છાવાળા જોઇને કુમારે તો કાંઈ કહ્યુ નહીં પરંતુ કુમારના મિત્ર વિમળબોધે રાજાની ઉત્કંઠા શાંત કરવા માટે કુમારના સઘળા વૃત્તાંત સહિત પરિચય આપ્યો. કુમારનો પરિચય પામીને સુપ્રભ રાજા ખૂબ આનંદિત થયા તથા કહેવા લાગ્યા કે, અરે! તમે તો મારા મિત્રના પુત્ર છો ઠીક થયુ કે તમો અહીં આવ્યા આવુ કહીને તે રાજાએ બહુમાન સાથે તેના મિત્ર સહિત રાજભવનમાં લઇ ગયા અને કોઇ શુભ મુહૂર્ત જોઇને પોતાની રંભા નામની પુત્રી સાથે તેના લગ્ન કરી દીધા વિવાહિત થયા બાદ કુમાર

नन्दिनं विना ऽन्ये समाहूताः सर्वे नृपा नृपकुमाराश्च समागताः। मञ्चारिष्ठितेषु तेषु नृपेषु नृपकुमारेषु दैवात्परिभ्रमन् अपराजितकुमारो मित्रेण सह तत्रागतः। अपराजितकुमारश्चिन्तयति–अनेन वेषेण मा राजानो ज्ञास्यति, अतो वेषान्तरं निर्माय समित्रेण मयाऽत्र मण्डपे प्रवेष्टव्यम्। इति विचार्य-गुटिका प्रभावेण रूपान्तरं कल्पयित्वा मित्रेण सह मण्डपे प्रविष्टः। ततः परिधृतभूषा सुवेषा राजपुत्री प्रीतिमती सखीदासीप्रभृतिभिः सह साक्षाद्

चित्रकारों ने बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रित किया था। सुन्दर २ सुहावने मंचों से जो मंडित हो रहा था। आमंत्रण पाकर इस मंडप में समस्त नृप एवं उनके कुमार यथायोग्य समय पर आकर उपस्थित हुए। हां यदि कोई नहीं आया था तो वह था अपराजितकुमार का पिता हरिनंदी। क्यों कि इनको अपने पुत्र का वियोग विशेष दुःखदायी हो रहा था उससे ये बिचारे बहुत ही अधिक दुःखित हो रहे थे। अतः इन्हों ने बाहर आना जाना ही छोड दिया था। जब सब राजा और राजकुमार अपने २ स्थानों पर अच्छी तरह बैठे थे उसी समय अपराजित कुमार अपने मित्र के साथ इधर उधर घूमता हुआ भाग्यवशात् वहां आ पहुँचे। आकर कुमार ने विचार किया कि इस वेष से तो राजा लोग मुझे पहिचान लेंगे। अतः दूसरा वेष धारण कर लेना चाहिये जिससे राजा लोग मुझे पहिचान नहीं सके। ऐसा विचार कर राजकुमार ने गुटिका के प्रभाव से अपना वेश बदल लिया और मित्र को साथ में लेकर फिर वे उस स्वयंवर मंडप में प्रविष्ट हो गये। इतने ही में वहां साक्षात्

સુંદર એવા મંચોથી તેને સુશોભિત કર્યો. આમંત્રણ મળતાં આ મંડપમાં સઘળા રાજાઓ અને એમના કુમારો યથાયોગ્ય સમયે આવી પહોંચ્યા. જો કોઈ ન આવ્યું હોય તો તે આ અપરાજીત કુમારના પિતા હરીનંદી હતા. કારણ કે તેમને પોતાના પુત્રના વિયોગનું દુઃખ ખૂબ હતું અને એ વિચારથી તેઓ ખૂબ દુઃખિત રહેતા હતા. આથી તેઓએ બહાર આવવા જવાનું પણ છોડી દીધું હતું. જ્યારે સઘળા રાજાઓ અને રાજકુમારો પોતપોતાના સ્થાનો ઉપર સારી રીતે બેઠેલ હતા એ સમયે અપરાજીત કુમાર પોતાના મિત્રની સાથે આમ તેમ ઘૂમતો ઘૂમતો ભાગ્યવશાત ત્યાં આવી પહોંચ્યો. આવીને તેણે વિચાર કર્યો કે, આ વેશમાં તો બધા રાજાઓ મને ઓળખી જશે. જેથી બીજો વેશ ધારણ કરી લેવો જોઈએ કે જેનાથી રાજા લોક મને ઓળખી ન શકે. એવો વિચાર કરીને રાજકુમારે ગુટિકાના પ્રભાવથી પોતાનો વેશ બદલીને પોતાના મિત્રને સાથે લઈને તે એ સ્વયંવર મંડપમાં જઈ પહોંચ્યા.

अथान्यदा स मित्रेण सह परिभ्रमन दर्शनीयान पदार्थान पश्यन देशान्तर भ्रमितुमारेभे।

आसीत्तस्मिन्नेव काले जनानन्दकरे जनानन्द नामके पुरे जितशत्रुर्नाम राजा। तस्यासीद् धारिणी नाम राज्ञी। देवलोकाच्युतो रत्नवती जीवो धारिण्या कुक्षौ समुत्पन्नः। सा च काले कन्या रत्नमेक जनितवती। मातापितृभ्या प्रीतिमतीति तन्नाम कृतम्। सा सवर्द्धमाना क्रमेण सकला कला: नवीनवती। सा एतादृशी विदुषी समभूद्यत्तस्याः पुरतः पण्डिता अपि हतप्रभा अभवन। एतादृशी स्वपुत्रीं विलोक्य नृपोऽन्यदा चतुरचित्रकरचित्रित चारुमञ्चाश्रित स्वय वरमण्डप कारितवान्। तत्र मण्डपे पुत्रवियोगार्त्तमपराजितस्य पितर हरि

कि वहासे मित्रसहित कुमार घूमने की भावना से प्रेरित होकर दर्शनीय पदार्थों को देखता हुआ देश देश फिरने लगा।

उस समय में एक जनानन्द नामका नगर था। नगर का जैसा नाम था वैसा ही इसका काम था। यहा का प्रत्येक व्यक्ति आनद ही आनद मे मग्न रहता था। वहा के राजा का नाम था जितशत्रु। इनकी रानी का नाम धारिणी था। देवलोकसे चवकर रत्नवती का जीव इसी धारिणी रानी के कुक्षिम पुत्री के रूप मे अवतरित हुआ। तब ठीक नौ महीने साढेसातरात्रि के व्यतीत होने पर धारिणी के पुत्री हुई। माता पिता ने इस का नाम प्रीतिमती रखा। प्रीतिमती धीरे २ बढती हुई सकलकलाओं मे ऐसी कुशल बनी कि इसके आगे पडितजन भी कोई गणना मे नही थे। इस प्रकार अपनी कन्या को देखकर जितशत्रु राजा ने शीघ्र ही एक स्वयवरमडप तैयार करवाया—जिसको चतुर

ત્યાથી મિત્રના સાથે કુમાર ઘૂમવાના ઈરાદાથી પ્રેરાઈને દર્શનીય પદાર્થોને જોતા જોતા દેશ દેશમા ફરવા લાગ્યા

એ સમયે એક જનાનદ નામનુ નગર હતુ નગરનુ જેવુ નામ હતુ એવુ એનુ કામ હતુ ત્યાની દરેક વ્યક્તિ આનદ આનદમા મગ્ન રહેતી હતી ત્યાના રાજાનુ નામ જીતશત્રુ હતુ જેની રાણીનુ નામ ધારિણી હતુ દેવલોકથી ચવીને રત્નવતીનો જીવ એ ધારણી રાણીની કૂખેથી પુત્રી રૂપે અવતરિત થયો જ્યારે નવ મહીના અને સાડા સાત દિવસ પૂરા થયા ત્યારે ધારિણીએ પુત્રી રત્નને જન્મ આપ્યો માતા પિતાએ તેનુ નામ પ્રીતિમતી રાખ્યુ પ્રીતિમતી ધીરે ધીરે મોટી થતા સર્વ કળાઓમા એવી કુશળ થઈ ગઈ કે, તેની આગળ પડિત જનોની કોઈ ગણના રહી નહી આ પ્રકાર પોતાની કન્યાને જોઈને જીતશત્રુ રાજાએ એક સ્વયવર મડપ તુર્ત જ તૈયાર કરાવ્યો જેને ચતુર ચિતારાઓએ ખુબ સુદર રીતે ચિત્રિત કર્યો હતો ખુબ

नृपान् सर्वान् मौनमवलम्ब्य संस्थितान् विलोक्य चिन्तानिमग्नः सन् विचिन्तयति-एते सर्वेऽपि नृपा मग्नाः। परमेतेषु कोऽपि योग्यो नास्ति मत्पुत्र्याः। अधुना किं भविष्यति? किं मत्सुता यावज्जीवमपरिणीतैव स्थास्यति। एवं चिन्तयन्तं राजानं तन्मनोभावज्ञः कोऽपि निजसचिवः प्रोवाच-देव! विषादेनालम्! इयं भूमिः बहुरत्ना। अत एवं मुद्घोष्यताम्-यः कश्चिद्राजा वा राजपुत्रो राजन्यो वा कश्चित् कुलीनो वादे मम पुत्रीं निर्जयेत्स तेऽस्याः पतिर्भविष्यति। सचिवस्य वचनं प्रतिपद्य राजा जितशत्रुस्तथैवादघोषयत्। अपराजित

हमलोगों के मन को ही हरण कर लिया है तो फिर इस स्थिति में हम लोग इसके प्रश्नों का उत्तर कैसे दे सकते हैं। जितशत्रु ने इन सबको जब इस प्रकार मौन लेकर बैठे हुए देखे तो उसने चिन्ता निमग्न बनकर-मन ही मन ऐसा विचारा कि देखो ये समस्त नृप कन्या को वरण करने के लिये तो आये हैं, पर इनमें कोई ऐसा नहीं है जो मेरी पुत्री के प्रश्न का उत्तर देकर उसके पति होने के योग्य बन सके तो अब मेरी पुत्री का क्या होगा? क्या यह जीवनभर बिना विवाहित ही रहेगी? इस प्रकार विचारमग्न हुए उस राजा के अभिप्राय को पास में बैठे हुए राजा के किसी प्रधानने जानलिया और राजा से कहा-महाराज! आप चिन्ता न करें। इस भूमि पर अनेक नररत्न हैं। अतः अब आप इस प्रकार की घोषणा करावें कि जो कोई राजा या राजपुत्र या कोई और दूसरा कुलीन व्यक्ति मेरी पुत्री को वाद में पराजित करेगा वही उसका पति होगा। प्रधान की इस

છે, ભાઈ! જુઓ તો ખરા કે, તેણીએ જ્યારે પોતાના અસાધારણ રૂપથી આપણા લોકોના મનને હરણ કરી લીધેલ છે ત્યારે પછી આવી સ્થિતિમાં આપણે તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર કેવી રીતે આપી શકીએ? જીતશત્રુએ જ્યારે આ બધાને આ પ્રકારે મૌન બેઠેલા જોયા ત્યારે તેણે ચિંતા નિમગ્ન બનીને મનોમન એવો વિચાર કર્યો કે, જુઓ આ સઘળા રાજા કન્યાને વરવાને માટે આવ્યા છે પરંતુ તેમાં એવા કોઈ પણ નથી જે મારી પુત્રીના પ્રશ્નનો ઉત્તર દઈને તેનો પતિ બનવાને યોગ્ય બની શકે તો હવે મારી પુત્રીનું શું થશે? શું તે જીવનભર અવિવાહિત રહેશે? આ પ્રકારના વિચારમાં મગ્ન બનેલ રાજાના વિચારને તેમની પાસે બેઠેલા રાજાના કોઈ મંત્રીએ જાણી લીધો અને રાજાને કહ્યું મહારાજ! આપ ચિંતા ન કરો. આ ભૂમિ ઉપર અનેક નર રત્ન છે. આથી આપ એવા પ્રકારની ઘોષણા કરાવો કે, જે કોઈ રાજા અથવા રાજપુત્ર અથવા કોઈ કુલિન વ્યક્તિ મારી પુત્રીને હવે પછી પરાજીત કરશે તે તેનો પતિ થશે. પ્રધાનની આ પ્રકારની વાતનો સ્વીકાર કરીને જીતશત્રુ

क्ष्मीरिव तत्र समागता। तदा तस्याः सखी मालती अङ्गुल्या सर्वान् भूपान् दर्शयन्ती तामुवाच—सखि! एते भूचराः खेचराः सर्वेऽपि राजानो भवती वरीतुं समुपागताः। तदेषां मध्ये यो रोचते तं वृणीष्व। ततः सा राजन्यकाभिमुखी भूत्वा सर्वान् प्रति मधुरेण स्वरेण सरस्वतीव प्रश्नं कृतवती। तस्याः प्रश्नं श्रुत्वा सर्वेऽपि नृपा नृपपुत्राश्च प्रश्नोत्तरं दातुमसमर्था लज्जया नतशिरसो भुवं विलोकयन्तो मौनमालम्ब्य संस्थिताः। केचिदेवं परस्परं प्रोचुः—इयमप्रतिमरूपेणास्माकं मनो हृतवती। हृते मनसि कथं सक्ता भवेमोत्तरप्रदाने। ततो जित

लक्ष्मी की तरह प्रीतिमती राजकुमारी विभूषित होकर अपनी दासी एवं सखियों से घिरी हुई होकर आ पहुँची। सामने रही हुई उसकी सखी मालती ने आये हुए उन समस्त राजाओं को अपनी अंगुली के इशारे से बताती हुई प्रीतिमती से कहा—सखि! देखो ये जितने भी राजा राजकुमार एवं विद्याधर यहाँ उपस्थित हुए हैं वे सब आपको वरण करने की अभिलाषा से ही यहां आये हुए हैं इसलिये इन मे से जो आपको योग्यरुचे उसको ही आप वरण कर कृतार्थ करे। इसप्रकार मालती ने ज्यों ही राजकुमारी से कहा—कि वह उसीसमय उन राजाओं के समक्ष खडी उनसे सरस्वती के समान मधुरस्वर मे प्रश्न करने लगी। उसके प्रश्न को सुनकर समस्त नृप एवं उनके पुत्र प्रश्नों के उत्तर देने मे अपनी २ असमर्थता जानकर लज्जा के मारे शिर नीचा करके जमीन की तरफ देखने लगे और चुप रहे। कितनेक जन परस्पर इस प्रकार कहने लगे—भाई देखो तो सही इसने जब अपने असाधारण रूप से

એટલામા જ ત્યાં સાક્ષાત લક્ષ્મીના માફક પ્રીતિમતી રાજકુમારી વિભૂષિત બનીનેપોતની દાસીઓ અને સખીયોથી ઘેરાયેલી ત્યા આવી પહોંચી સામેમા રહેલી તેની સખી માલતીએઆવેલા સઘળા રાજાઓને પોતાની આંગળીના ઇશારાથી બતાવીને પ્રીતિમતીને કહ્યુ સખી! જુઓ! આ જેટલા પણ રાજા રાજકુમાર અને વિદ્યાધર અહીં આવ્યા છે તે સઘળા આપની સાથે પોતાના લગ્નની અભિલાષાથી અહીં આવેલ છે આ કારણે આમનામાથી જે આપને યોગ્ય લાગે એના ગળામા વરમાળા આરોપો આ પ્રમાણે જ્યારે માલતીએ રાજકુમારીને કહ્યુ એટલે તે એજ સમયે એ રાજાઓની સામે ઉભી રહીને એમને સરસ્વતીની માફક મધુર સ્વરથી પ્રશ્ન કરવા લાગી એના એ પ્રશ્નને સાંભળીને સઘળા રાજાઓ તથા એમના પુત્રો પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવામા પોતાની અસમર્થતા જાણીને લજ્જાના માર્યા મોઢુ નીચુ કરીને જમીનની તરફ જોવા લાગ્યા અને ચુપ રહ્યા કેટલાક તો અંદરો અંદર આ પ્રમાણે કહેવા લાગ્યા

१ येत्। तस्मादेनं हत्वा राजकुमारी प्रीतिमती बलाद् स्माभि र्हरणीया। एवमुक्त्वा ते कुमार हन्तुमनसः स्वसैनिकान सज्जितवन्तः। ततः कुमारः स्वविक्रमेण सर्वान पराजितवन्त। युद्धे कुमारस्यापरिमेय विक्रमं दृष्ट्वा तद्विक्रमाकृष्टचित्त स्तन्मातुरः सोमप्रभस्तिलकादिना त परिचित्य-'अये भागिनेय ' बहुदिवसानन्तर मिलितोऽस्मि' इत्युक्त्वा गाढमालिलिङ्गे। सोमप्रभमुखात्कुमारस्य परिचय श्रुत्वा सर्वेऽपि नृपा युद्धान्मतिनिवृत्ता वादे प्रीतिमत्या युद्धे चापराजितकुमारेण पराजिताल्लज्जावशान्नतमस्तका स्व स्व राजधानी प्रति प्रस्थिता। ततः

को कैसे परण सकता है। ऐसा विचार कर उन्होंने ऐसा एक निश्चय करलिया कि पहिले इस व्यक्ति को मार दिया जाय पश्चात् राजकुमारी प्रीतिमती को बलात् हरण कर लिया जाय। जब यह विचार लोगों के आपस में एकमत से निश्चित हो गया तब सबके सब राजाओं ने कुमार को मारने के लिये अपने २ सैनिकों को सज्जित होने का आदेश दे दिया। जब सैनिकजन सज्जित होचुके और युद्ध करने के लिये कुमार के समक्ष आकर खडे हो गये तब कुमारने उन सबको क्षणमात्र में परास्त कर दिया। कुमार का इस तरह अजेय एवं अतुल पराक्रम देखकर कुमार के मातुल (मामा) सोमप्रभ ने तिलक आदि द्वारा उसका परिचय पाकर के कहा-हे भानेज ! बहुत दिनों के बाद तुम आज मिले हो। सोमप्रभ के मुख से कुमार का परिचय सुनकर समस्त नृप युद्ध से निवृत्त हो गये। इस प्रकार बादमे प्रीतिमती से एवं युद्ध में अपराजित कुमार से परास्त हुए वे सबके सब आये

આ કન્યા તેને કેમ પરણે છે? આવો વિચાર કરીને તેમણે એવો નિશ્ચય કરી લીધો કે, પહેલા આ વ્યક્તિને મારી નાખવામા આવે અને પછીથી રાજકુમારી પ્રીતિમતીનુ બળપૂર્વક હરણ કરી લેવામા આવે જ્યારે આ વિચાર તે લોકોએ આપસ આપસમા એક મતથી નિશ્ચિત કર્યો ત્યારે સઘળા રાજાઓએ કુમારને મારવાના માટે પોતપોતાના સૈનિકોને સજ્જીત થઇ જવાનો આદેશ આપ્યો જ્યારે સૈનિકો સજ્જ થઇને યુદ્ધ કરવાને માટે અપરાજીત રાજકુમારની સમક્ષ ખડા થઇ ગયા ત્યારે કુમારે તે સઘળાને ક્ષણ માત્રમા હરાવી દીધા કુમારનુ આ પ્રકારનુ અજેય અને અતુલ પરાક્રમ જોઇને કુમારના મામા સોમપ્રભે તિલક વગેરેથી તેનો પરિચય પામીને કહ્યુ- હે ભાણેજ ! ઘણા દિવસો બાદ તુ આજે મળ્યો છે સોમપ્રભના મુખથી કુમારનો પરિચય પામીને રાજાઓ યુદ્ધથી નિવૃત્ત બની ગયા આ પ્રમાણે બાદમા પ્રીતિમતીથી અને યુદ્ધમા અપરાજીત કુમારથી હાર પામેલા એ સઘળા રાજાઓ લજ્જીત બને

कुमारस्तामुद्दिश्य गाथाद्वयं पपाठ। प्रीतिमतीसम्मुखं गतवान्। दुर्वेषमपि तं प्रेक्ष्य प्रीतिमती पूर्वभवप्रीत्या नितरामन्तर्मुमुदे। युज्यते चैतत्-अभ्रच्छन्नोऽपि भानुः पद्मिना मुल्लासयत्येव। ततः प्रीतिमती पूर्ववदेव प्रश्न कृतवती। अपराजितकुमारस्तदुत्तर दत्त्वा तां निरुत्तरां कृतवान्। एवमपराजितकुमारेण पराजिता सा राजपुत्री प्रीतिमती वरमालामपराजितकुमारस्य कण्ठेऽर्पितवती। ततः सर्वे नृपाः परस्पर मेवमब्रुवन् अहो! विद्यमानेष्वस्मासु शास्त्रशूरा वराकोऽयं कथमिमां परिणेतुं समर्था

प्रकार की सम्मति को अंगीकार कर जितशत्रु राजाने उसी समय पूर्वोक्त रूप से घोषणा करवादी। इस घोषणा को सुनते ही अपराजितकुमार सन्मुख आकर प्रीतिमति से कहने लगा। पूछो जो तुमको पूछना हो। अपराजित कुमार को दुर्वेष में देखकर भी प्रीतिमती का मन पूर्वभव की प्रीति के कारण उसमे अनुरक्त हो गया। आनंदित होकर उसने अपराजित से प्रश्न किये। अपराजित ने प्रत्येक उसके प्रश्न का यथावत् उत्तर देकर उस कन्या को चकित करते हुए सर्वथा निरुत्तर कर दिया। इस प्रकार अपराजितकुमार द्वारा पराजित होकर प्रीतिमतीने बडे ही आनद के साथ अपराजित कुमार के गले मे वरमाला डाल दी। अपराजित कुमार के गले मे वरमाला डाली हुई देखकर समस्त उपस्थित राजागण इस प्रकार आपस में वातचीत करने लग गये-देखो यह कितने आश्चर्य की वात है जो हम क्षत्रियों के होने पर भी इस कन्याने इसके गले मे वरमाला डाली है। खैर इसकी चिन्ता नहीं। अब देखना यह है कि हम लोकों की इस उपस्थिति मे यह इस कन्या

રાજાએ તેજ સમયે ઉપર કહેલી ઘોષણુ કરાવી દીધી આ ઘોષણાને સાભળતા જ અપરાજીત કુમાર આગળ આવીને પ્રીતિમતીને કહેવા લાગ્યો-તમારે જે પૂછવુ હોય તે પૂછો અપરાજીત કુમારને બીજા વેષમા જોઇને પણ પ્રીતિમતીનુ મન પૂર્વભવની પ્રીતિના કારણથી તેમનામા અનુરકત થઇ ગયુ આનદિત બનીને તેણે અપરાજીતને પ્રશ્ન કર્યો અપરાજીતે એના પ્રત્યેક પ્રશ્નોનો યથાવત્ ઉત્તર આપીને એ કન્યાને ચકિત કરીને સર્વથા નિરુત્તર બનાવી દીધી આ પ્રકારે અપરાજીત કુમારથી પરાજીત થઈને પ્રીતિમતીએ ઘણાજ આનદની સાથે અપરાજીત કુમારના ગળામા વરમાળા નાખી દીધી અપરાજીત કુમારના ગળામા વરમાળા નખાયેલી જોઇને ત્યા આવેલા સઘળા રાજાઓ આ પ્રમાણે અદરો અદર વાતચીત કરવા લાગ્યા જુઓ આ કેટલા આશ્ચર્યની વાત છે કે, આપણે ક્ષત્રિયો હોવા છતા પણ આ કન્યાએ તેના ગળામા વરમાળા નાખી છે ખેર એની ચિંતા નથી હવે જોવુ છે કે આપણી હજરીમા

सन्ति। भवद्वृत्तान्तमिमं श्रुत्वा तदाज्ञया भवन्तं नेतुमहं समागतोऽस्मि। अतो भवता गन्तव्यम्। दूतवचनं श्रुत्वा मातापित्रोर्दर्शनायोत्कण्ठितोऽपराजितकुमारः श्वशुरमापृच्छय प्रीतिमत्या भार्यया सह समित्रोऽतित्वरितगत्या स्वनगरं प्रति प्रचलितः। प्रीतिमत्या भार्यया सह समित्रोऽपराजितकुमारः स्वनगरं सिंहपुरं समागतः। तदागमनवृत्तान्तं श्रुत्वा तन्मातापितरौ नितरां प्रमोदमापन्नौ। कुमारोऽपि समागत्य पितुश्चरणयोः स्वमस्तकं निहितवान्। एवं प्रणमन्तं विनीतं तं समुत्थाप्य गाढमालिङ्ग्य शिरसि समाघ्राय प्रेमाश्रुणा तन्मस्तकमभ्यषिञ्चत्। ततः कुमारो मातुश्चरणावभ्यवन्दत। नमन्तं समुत्थाप्य सा मुहुर्मुहुः पाणिभ्यां

इसलिये आपके पास भेजा है कि मै आपको यहां से घर ले जाऊँ। अतः आप घर शीघ्र चलें। दूत के द्वारा मातापिता की इस परिस्थिति से, परिचित होकर कुमार के चित्त में उनके दर्शन करने की उत्कंठा तीव्ररूप से बढी। कुमार ने समय पाकर अपने घर जाने के लिये श्वशुर से आज्ञा मागी। श्वशुर ने प्रसन्न होकर जब उनको घर जाने की आज्ञा दी–तब वे साथ मे प्रीतिमती को लेकर वहां से मित्र सहित चले और शीघ्र वे अपने नगर मे आये। कुमार के आगमन के वृत्तान्त ने मातापिता के हृदय को आनंद से फुला दिया। आते ही कुमारने मातापिता के चरणों में अपना मस्तक टेक दिया। चरणों मे पडे हुए अपने प्राणप्रिय पुत्र को दोनों हाथों से उठाकर पहिले पिताने छाती से लगाकर और खूब गाढ आलिंगन कर उसके मस्तक पर हाथ फिराया और हर्षाश्रुओं से उसको अभिषिक्त किया। जब कुमारने माता के पवित्र चरणों को नमन किया तब माताने भी इसी तरह से उसको

वृत्तांत सांभळीने तेमणे मने ए माटे आपनी पासे मोकलेल छे के, हुं आपने अहीं थी तेमनी पासे लई जाउं आथी आप शीघ्र आपनी राजधानीमां मारी साथे पाछा फरो दूतनी पासेथी माता पितानी आवी परिस्थितिथी परिचित बनतां कुमारना चित्तमां तेमना दर्शन करवानी उत्कंठा तीव्र बनी कुमारे समय लईने पोताना वतनमां जवानी श्वशुर पासेथी आज्ञा मागी ससराए प्रसन्न थईने तेने जवानी आज्ञा आपी त्यारे ते प्रीतिमतीने साथे लईने पोताना मित्रनी साथे चाल्या अने झडपथी पोताना नगरमां पहोंच्या कुमारना आगमनना समाचारे माता पिताना हृदयने आनंदमां फुलावी दीधुं आवतां ज कुमारे माताना चरणोमां पोतानुं मस्तक नमाव्युं चरणोमां पडेला पोताना प्राणप्रिय पुत्रने बन्ने हाथोथी उठावीने पिताए छातीए लगाडीने गाढ आलींगन आपी तेना मस्तक उपर हाथ फेरव्यो अने आंसुथी तेने अभिषेक कर्यो ज्यारे कुमारे माताना पवित्र चरणोमां नमन कर्युं

कुमारो गुटिकाप्रभावेण तिरोहित स्वकीयरूप प्रकटितवान शुभमुहूर्ते प्रीतिमती परिणीय च स्वभार्यया प्रीतिमत्या सह विंशतिस्थानकानि पुनः पुनः समाराधयन् समित्रस्तत्र बहून् दिवसान स्थितवान। अथापराजितकुमारस्य ज्ञातसमस्तवृत्तान्तो राजा हरिनन्दी तत्समीपे दूत प्रेषितवान। दूतोऽपराजितकुमारसमीपे समागत। कुमारेण मातापित्रोः कुशल पृष्टम्। ततो दूत प्राह–कुमार! भवन्मातापित्रो कुशल देहधारणमात्रमस्ति। भवद्गमनानन्तर तयोर्दृशो भवदागमनमार्गसक्ता निर्निमिषा

हुए राजा लोक लज्जित होते हुए अपनी २ राजधानी की ओर चल दिये। जब सब चले गये तब कुमार ने गुटिका के प्रभाव से परिवर्तित अपनास्वरूप यथार्थरूपमें प्रकट कर सबको पुलकित किया। शुभमुहूर्त के आनेपर प्रीतिमती के मातापिता ने प्रीतिमती का विवाह अपराजित कुमार के साथ करके लडकी के साथ का अपना उत्तरदायित्व पूर्ण रूप से शांति के साथ निभाया। विवाहित होनेपर कुमार और प्रीतिमती ये दोनों बीस स्थान कों की पुन पुनः आराधना करते हुए अपने मित्र के साथ वहां रहे। हरिनंदी को जब अपराजित कुमार के समस्त वृत्तान्त यथावत् ज्ञात हुए तब उन्हों ने अपराजितकुमार के पास अपना एक दूत भेजा। अपराजित कुमार के पास आकर दूत ने उनके पूछने पर मातापिता के कुशल समाचार प्रकट करते हुए कहा कुमार! क्या कहें देह धारण मात्र से ही आपके मातापिता कुशल हैं। जब से आप वहां से आये हैं–तब से उनकी आखे रातदिन आपके आगमन की प्रतीक्षा मे एकटक बनी हुई हैं। आपका वृत्तान्त सुनकर उन्होंने मुझे

પોતપોતાની રાજધાની તરફ ચાલી નીકળ્યા જ્યારે બધા ચાલ્યા ગયા ત્યારે ગુટીકાના પ્રભાવથી પોતાના મૂળ સ્વરૂપને પ્રગટ કરીને બધાને હર્ષિત કરી દીધા શુભ મુહૂર્ત આવતા પ્રીતિમતીના માતા પિતાએ પ્રીતિમતીનો વિવાહ અપરાજીત કુમારની સાથે કરીને પુત્રીની સાથેનુ પોતાનુ ઉત્તરદાયિત્વ સપૂર્ણ રીતે શાંતિની સાથે નિભાવ્યુ લગ્નથી જોડાયા પછી કુમાર અને પ્રીતિમતી બન્નેએ વીસ સ્થાનોની ફરી ફરીથી આરાધના કરતા કરતા પોતાના મિત્રની સાથે ત્યા રહ્યા હરીનદી રાજાને જ્યારે અપરાજીત કુમારનુ સઘળુ વૃત્તાત યથાવત જાણવા મળ્યુ ત્યારે અપરાજીત કુમારની પાસે પોતાના એક દૂતને મોકલ્યો અપરાજીત કુમારની પાસે આવીને દૂતે રાજકુમારે પૂછતા માતા પિતાના કુશળ સમાચાર પ્રગટ કરતા કહ્યુ–કુમાર! શુ કહુ દેહ ધારણ પુરતા આપના માતા પિતા કુશળ છે જ્યારથી આપ ઘેરથી નિકળી ગયા છો ત્યારથી તેમની આખો રાત દિવસ આપના આગમનની પ્રતીક્ષામા એકટક બની રહેલ છે આપનો

अथापराजितनृपोऽखिलान प्रजाजनान सुष्ठु परिपालयन बहूनि वर्षाण्य तिक्रान्तवान्। एकदोद्याने गतः स स्वसौन्दर्येण जितस्मर मित्रैर्वधुभिश्च वृत कचि दिभ्यश्रेष्ठिपुत्र दृष्टवान। स हि सुललितं गाने समासक्तचेता अर्थिभ्योऽत्यर्थं दान ददानश्च आसीत्। तादृश त दृष्ट्वाऽपराजितभूप सेवकान पृष्टवान–अय कोऽस्ति? तत सेवका. प्रोचुः–असौ समुद्रपालस्य सार्थवाहस्य पुत्रो नाम्नाऽनङ्गदेवोऽस्ति।

सुव्रताचार्य के पास दीक्षा अगीकार करली और गीतार्थ होकर अन्त में वे तथा प्रियदर्शना अनशन कर सिद्धिगति को पाये।

अपराजित कुमार राजा बनकर अब अपनी पत्नी के साथ धीमर बनको की आराधना करते हुए अपनी प्रजा का अच्छी तरह से पालन करते हुए रहने लगे। इस प्रकार प्रजापालन की व्यवस्था करते २ उनके अनेक वर्ष व्यतीत हुए।

एक दिन की बात है कि जब ये उद्यान मे गये हुए थे तब वहा इनकी दृष्टि एक इभ्यश्रेष्ठिपुत्र के ऊपर पडी। श्रेष्ठिपुत्र का सौन्दर्य इतना अधिक था कि उसके समक्ष कामदेव का भी सौन्दर्य फीका लगता था। इसके साथ इसके अनेक मित्र एव इसकी अनेक वधुएँ थी। गानतान में मस्त होकर यह उस समय वहा अनेक अर्थीजनो को दान दे रहा था। इस प्रकार उसको देखकर अपराजित कुमारने अपने सेवको से पूछा–यह कौन है? सेवकोने कहा–महाराज! यह अपने नगर के सेठ समुद्रपाल का पुत्र है। इसका नाम अनगदेव है।

કરી લીધી અને ગીતાર્થ થઈને તેઓ અતમા પ્રિયદર્શના સાથે અનશન કરીને સિદ્ધ ગતિને પામ્યા

અપરાજીત કુમાર રાજા બનીને પોતાની પત્નીની સાથે વીમ સ્થ નોની આરાધના કરતા કરતા પોતાની પ્રજાનુ સારી રીતે પાલન કરવા લાગ્યા આ પ્રમાણે પ્રજા પાલનની વ્યવસ્થા કરતા કરતા તેમના ઘણા વર્ષો વ્યતીત થયા

એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે તેઓ ઉદ્યાનમા ગયેલ હતા ત્યારે તેમની દૃષ્ટિ એક ઇભ્ય–શ્રેષ્ટિપુત્રના ઉપર પડી શ્રેષ્ટિપુત્રનુ સૌંદર્ય એટલુ અધિક હતુ કે, તેની સામે કામદેવનુ સૌંદર્ય પણ ફીકુ લાગે એની સાથે એના ઘણા મિત્રો અને પત્નીઓ હતી ગાનતાનમા મસ્ત બનીને એ આ સમયે ત્યા કેટલાએ માગનારાઓને દાન આપી રહેલ હતો આ પ્રમાણે એને જોઈને અપરાજીત કુમારે પોતાના સેવકોને પૂછયુ–આ કોણ છે? સેવકોએ કહ્યુ–મહારાજ! આ આપણા નગરના શેઠ સમુદ્રપાલનો પુત્ર છે અને એનુ નામ અનગદેવ છે સેવકો તરફથી

तमस्पृशत् । प्रीतिमती स्नुषा चापि श्वश्रूश्वशुरौ नमन् अभिवन्दितवती । विमल-बोधमुखादपराजितकुमारस्य समग्र वृत्तान्त श्रुत्वा मातापितरौ नितरा प्रमुदितौ। पूर्व या या राजकन्या परिणीतास्तासा मातापितर' स्वस्वकन्यामादाय महता महोत्सवेन सिंहपुरं हरिनन्दिनो राज्ञ' समीपे, तस्मिन्नेव दिवसे क्रमेण समागता.। ततोऽन्यदा हरिनन्दिनृप. सर्वान भूचरान खेचराश्च स्वसम्बन्धिन सत्कृत्य बहुमानपुर सर विसर्जितवान् । अथान्यदा राजा हरिनन्दी कुमारमपराजित राज्य सस्थाप्य स्वय प्रियदर्शनया सह सुव्रताचार्यसविधे दीक्षा गृहीत्वा गीतार्थ. सन् अन्ते प्रियदर्शनया सहानशन कृत्वा सिद्धिगति प्राप्त ।

उठाकर अपनी छाती से लगा लिया और मस्तक पर हाथ फिराया प्रीतिमतीने भी अपने श्वशुर और सासुजी का अभिवादन किया। पश्चात् मातापिताने विमलबोध के मुख से कुमार का समग्र वृत्तान्त सुना। सुनते समय उनकी छाती भारे आनद से फूली नही समाई। जिन २ लडकियों के साथ अपराजित कुमार का वैवाहिक सबध हुवा था उन २ लडकियों के मातापिता अपनी २ लडकियों को लेकर बडे ठाटबाट के साथ सिंहपुर नगर मे हरिनदी नृप के घर में क्रमश. आकर एक ही दिन मे उपस्थित हुए। कुछ दिनों तक ये सब सबधी समुदायरूप मे ठहरे। हरिनदीने सबका यथोचित आदर सत्कार किया। पश्चात् सविधि बहुमान पुरस्सर उन सबको विदा किया।

एकदिन हरिनदीराजा को अपना निजके कल्याण करने की भावना उदित हुई और जब वह दृढतर बनगई तब उन्होंने राज्य मे अपने पुत्र अपराजित को स्थापित कर प्रियदर्शना पत्नी के साथ

ત્યારે માતાએ પણ તેને એજ પ્રમાણે ઉઠાડીને પોતાની છાતી સાથે લગાડી લીધો અને મસ્તક ઉપર હાથ ફેરવ્યો. પ્રીતિમતીએ પણ પોતાના સાસુ સસરાને વદન કર્યું પછી માતા પિતાએ વિમળબોધ પાસેથી કુમારનો સઘળો વૃત્તાંત સાભળ્યો આ સાભળીને તેમની છાતી ભારે આનદથી ફૂલાઇ એટલામા જે જે રાજાની પુત્રીયો સાથે કુમારના લગ્ન થયેલ હતા ત બધા રાજાઓ પોતાની પુત્રીઓને લઇને ઠાઠમાઠથી સિહપુર આવી પહોચ્યા કેટલાક દિવસ સુધી એ સઘળા સબધીજનો સમુદાય રૂપમા રોકાયા રાજા હરીનદીએ સઘળાનો યથોચિત આદર સત્કાર કર્યો આ પછી સઘળા રાજાઓ પોતપોતાના નગરની તરફ વીદાય થયા

એક દિવસ હરીનદી રાજાના દિલમા પોતાનુ કલ્યાણ કરવાની ભાવના જાગૃત થઇ અને જ્યારે એ દૃઢતર બની ગઇ ત્યારે તેમણે અપરાજીત કુમારને રાજ્યગાદિ ઉપર સ્થાપિત કરીને પ્રીયદર્શના પત્નિની સાથે સુવ્રતાચાર્યની પાસે દીક્ષા અગિકાર

कुण्डपुरे दृष्टपूर्व. केवली ज्ञानेन त दीक्षाभिलाषिण विज्ञाय सिंहपुरे समवसृत.। तस्य समवसरणवृत्तान्तमुपलभ्य नृपोऽपराजितो विमलबोधेन प्रीतिमत्या च सह त केवलिन वन्दितु गत । तत्र केवलिना दीयमाना धर्मदेशना श्रुत्वा राज्ये विश्वमित्र पुत्र सस्थाप्य प्रीतिमत्या विमलबोधेन च सह तस्यान्तिके प्रव्रजित । ततस्ते त्रयोऽपि सुचिर तीव्र तपस्तप्त्वाऽन्तेऽनशन कृत्वा विपद्यैकादशे कल्पे इन्द्रसमा सुरा अभवन । । इति पञ्चमषष्ठभवौ ॥

जाग्रत हो गया। इसी समय कुण्डपुर मे पूर्वदृष्ट कोई एक केवली भगवान कि जिनके ज्ञान में अपराजित राजा दीक्षाभिलाषी हो रहे हैं ऐसी पर्याय झलक रही थी सिंहपुर मे वहा से आये। अपराजित राजाने ज्यो ही उनके आगमन का वृत्तान्त सुना तो वे प्रीतिमती एव विमलबोध मित्र के साथ उनको वदना करने के लिये गये। वहा उन्होंने केवली द्वारा दी गई धर्मदेशना का पान किया। वैराग्यभाव पहिले से जाग्रत तो था ही–अब वह केवली की समीपता मे और अधिक बढ गया। अपराजित राजाने उसी समय अपने विश्वमित्र पुत्र को राज्य मे स्थापित कर प्रीतिमती एव विमलबोधमित्र के साथ केवली भगवान के पास दीक्षा धारण करली। दीर्घकालतक इन तीनो ने खूब तपस्या की। और वीस स्थानक को सेवन करके स्थानकवासीपन को आराधन किया। अन्त मे अनशन करके–प्राणों का परित्याग कर वे तीनों ही ग्यारहवें देवलोक में इन्द्र के समान देव पर्याय में उत्पन्न हुए।

॥ यह पचम और छठवा भव है ॥

થઇ ગયો આ સમયે કુણ્ડપુરમા પહેલા જોયેલા કોઈ એક કેવલીભગવાનનીદૃષ્ટિમા અપરાજીત રાજાને સસારથી પરમ વૈરાગ્ય જાગેલ છે તેવુ જણાયુ આથી તેઓ ત્યાથી સિહપુર આવ્યા અપરાજીત રાજાએ જ્યારે તેમના આગમનના સમાચાર સાભળ્યા તો તે પ્રીતિમતી અને વિમળબોધ મિત્રની સાથે તેમને વદના કરવા માટે ગયા ત્યા તેમણે કેવળી ભગવાન તરફથી અપાયેલ ધર્મદેશનાનુ પાન કર્યું વૈરાગ્ય તો પહેલાથી જાગૃત થઇ ગયેલ હતો જ એ કેવળીન સામીપ્યમા વધી ગયો આથી અપરાજીત રાજાએ પોતાના વિશ્વમિત્ર પુત્રને રાજગાદી સુપ્રત કરી પ્રીતિમતી અને વિમળબોધ મિત્રની સાથે કેવળી ભગવાનની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી ઘણા કાળ સુધી એ ત્રણેએ ખૂબ તપશ્ચા કરી અને સ્થાનકવાસીપણાના વીસ બોલોનુ આરાધન કર્યું અતમા અનશન કરીને પ્રાણોનો પરિત્યાગ કરી એ ત્રણે અગ્યારમા દેવલોકમા ઇન્દ્રના સમાન દેવપર્યાયમા ઉત્પન થયા

॥ "આ પાચમો અને છઠો ભવ છે ॥

ततो नृपो मनस्येवमचिन्तयत्—यस्य मम राज्ये वणिजा अपि परमोदारा॰ परमर्द्धिसम्पन्ना॰ सन्ति, सोऽहं धन्य । एवं विचिन्तयन् राजा स्वभवनं गतः ।

अथ द्वितीयदिनेऽपराजितो राजा जनैरुह्यमानं कमपि शवं दृष्ट्वा सेवकान् पृष्टवान्—कोऽसौ मृत ? तत सेवका प्रोचु॰—स्वामिन् ! व्यतीतेऽह्नि योऽनङ्ग देव उद्याने भवता दृष्ट , स एव मरकीरोगेण सहसा मृत॰ । इमं वृत्तान्तं श्रुत्वा नृपएवमचिन्तयत्—अहो ! इदं विश्वमशाश्वतमस्ति ! अस्मिन् सर्वं सन्ध्यारागवत् क्षणभङ्गुरमस्ति । एवं ध्यायन्नृप॰ परमं वैराग्यमाश्रित॰ । तस्मिन्नेव समये,

सेवकों द्वारा परिचय पाकर अपराजितने विचार किया—धन्य है इस मेरे राज्य को कि जिस में ऐसे परमधनिक उदार वणिग्जन वसते हैं । इस प्रकार विचार करके अपराजित राजा वहां से अपने महल में वापिस लौट आया । दूसरे दिन की बात है कि अपराजित राजाने मनुष्यो द्वारा कंधे पर ले जाते हुए एक मुर्दे को देखा। देखकर सेवकों से पूछा—यह कौन आज मर गया है। सेवकोंने कहा स्वामिन् ! कल जिस अनङ्गदेव को आपने बगीचे में देखा था वही आज मिरगी रोग के दौरे से मर गया है। इस वृत्तान्त को सुनकर अपराजित राजाने विचार किया—अहो ! संसार कितना आशाश्वत है। जिसको कल बगीचे में मोजमजा से इठलाते हुए देखा था। वही आज काल का ग्रास बनकर इस संसार से कूच कर गया है । सच है इस संसार मे जो कुछ भी है सध्याराग के समान क्षणभंगुर है। इस प्रकार विचारमग्न हुए अपराजित को संसार से परम वैराग्यभाव

હકીકત મેળવીને અપરાજીતે વિચાર કર્યો—ધન્ય છે મારા આ રાજ્યને કે જેની અંદર ખૂબજ ધનવાન ઉદાર વણિકજનો વસે છે આ પ્રકારનો વિચાર કરીને અપરાજીત રાજા ત્યાથી પાછા ફરી પોતાના મહેલમા પહોચ્યા બીજા દિવસની વાત છે કે, અપરાજીત રાજાએ મનુષ્યોના ખભા ઉપર ઉપાડીને લઇ જવાતા એક મુરદ ને જોયુ તેજોઈને સેવકોને પૂછ્યુ—આજે આ કોણ મરી ગયુ છે? સેવકોએ કહ્યુ—સ્વામિન્! કાલે આપે બગીચામા જે અનંગદેવને જોયેલ હતો તે શેઠનો પુત્ર મૃગિના રોગથી આજે મરી ગયેલ છે આ વૃત્તાતને સાભળી અપરાજીત રાજાએ વિચાર કર્યો કે, અહો! સસાર કેટલો અસ્થિર છે જેને કાલે બગીચામા મોજમજા ઉડાવતા જોયેલ હતો તે આજે કાળનો કોળીયો બની આ સસારથી કુચ કરી ગયેલ છે સાચુ છે, આ સસારમા જે કાંઇ છે તે સધ્યાના રગની માફક ક્ષણભગુર છે આ પ્રકારના વિચારમા મગ્ન બનેલા અપરાજીત રાજાના દિલમા સસારથી પરમ વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન

कृतवान्। शङ्खस्य पूर्वभवमित्र विमलबोधजीवोऽपि स्वर्गाच्च्युत. श्रीषेणस्य राज्ञो मन्त्रिणा गुणनिधेर्मतिप्रभ इति नाम्ना पुत्रो जात । एष हि शङ्खकुमारस्य परम मित्रमभूत्। एतौ सदैव नव यौवनमधिगतवन्तौ। अथान्यदा देशवासिनो जना श्रीषेणनृपसमीपे समागत्य नमस्कारपूर्वकमेवमूचु –स्वामिन्! भवद्राज्य सीमासमीपवर्तिनि गिरावतिदुर्गमो दुर्गोऽस्ति। तत्र समरकेतुर्नाम पल्लीपति परिवसति। सोऽस्मान पुन पुनर्लुण्टति। अतो भवानस्मान् रक्षतु। तेषा वचन श्रुत्वा महीपति श्रीषेण स्वयमेव त निग्रहीतु सैनिकान् सज्जीकृत्य प्रचलित । तस्मिन समये समवगत समस्त वृत्तान्त शङ्खकुमार पितुरन्तिक समागत्यैव विज्ञप्तवान–तात! सर्प शिरो गरुडस्येव तुच्छे तस्मिन शत्रौ भवत प्रयाण

से चलकर श्रीषेण राजा के मंत्री गुणनिधि के यहाँ मतिप्रभ नामका पुत्र हुआ। पूर्वभव के संस्कार वश इस भव में भी इन दोनों में परम मित्रता हो गई। ये दोनों साथ ही साथ तरुणवय को प्राप्त हुए। एक समय की बात है कि श्रीषेण राजा के पास देशनिवासियोंने आकर ऐसी प्रार्थना की कि स्वामिन्! आपके राज्य की सीमा के समीपवर्ती गिरि पर एक महान् दुर्गम दुर्ग है। उसमें समरकेतु नामका एक पल्लीपति रहता है। वह हम लोगों को रातदिन दुखित करता रहता है। लूटता है मारता है और जिस तरह से उसके जीमे आता उसी तरह से वह हमलोगों को दुखी करने मे कसर नहीं रखता है अत प्रार्थना है कि आप इससे हम लोगों की रक्षा करें। उनकी इस प्रकार दुःखभरी कथा सुनकर श्रीषेण राजा सैनिकों का सज्जित कर उसको निग्रहीत करने के लिये स्वयंचलने को तैयार हुए। पिता की इस प्रकार की तैयारी सुनकर अपराजित का जीव शङ्खकुमारने

लीधी विमळबोधनो जीव पण स्वर्गथी चवीने श्रीषेण राजाना मंत्री गुणनिधिने त्या मतिप्रभ नामना पुत्ररूपे अवतरित थयो पूर्वभवना संस्कारना कारणे ओ बन्नेने मित्राचारी थई आ बन्नेओ साथे साथे तरुण वयने प्राप्त करी ओक समयनी वात छे के, श्रीषेण राजानी पासे आवीने देश निवासीओओ प्रार्थना करी के, हे स्वामिन! आपना राज्यनी सीमानी पासे रहेला पर्वत उपर ओक महान दुर्गम दुर्ग छे तेनी अंदर समरकेतु नामनो ओक पल्लीपति रहे छे ते अमने रात दिवस दुःखी करे छे, लुंटे छे मारे छे अने तेना मनमा आवे ते रीते अमने दुःखी करवामा कसर राखतो नथी जेथी अमारी प्रार्थना छे के, तेनाथी अमारु रक्षण करो प्रजाजनोनी आवी दुःखभरी कथा सांभळीने श्रीषेण राजा सैनिकोने सज्जीत करीने तेने हाथ करवा माटे पोते ज जवा माटे तैयार थया पितानी आ

मनुष्यसुररूपौ सप्तमाष्टमभवौ वर्णयति

आसीदत्र भरतक्षेत्रे हस्तिनापुरे पुरे श्रीषेणनामा राजा। तस्यासीद् राज्ञी श्रीमती नाम। सा एकदा पयःफेननिभायां सुकोमलायां शय्यायां शयाना स्वप्ने शङ्खवदुज्ज्वलं पूर्णं चन्द्रं दृष्टवती। ततस्तस्याः कुक्षौ एकादशकल्पादायुर्भवस्थितिक्षयेण च्युतोऽपराजितजीवः समवतीर्णः। सम्प्राप्ते समये सा पूर्णिमा पूर्णेन्दुमिवैकं पुत्रं जनितवती। स्वप्ने शङ्खवदुज्ज्वलचन्द्रदर्शनात् मातापितृभ्यां महता समारोहेण तस्य शङ्ख इति नामकृतम्। धात्रीभिर्लाल्यमानः स क्रमात् समवर्द्धमानः पयोदः पयांसि पयोद इव गुरोः सकलाः कलाः स्वायत्ती-

अब इनका मनुष्य एवं देवरूप सातवां और आठवां भव इस प्रकार है—

इस भरतक्षेत्र के अन्तर्गत एक हस्तिनापुर नामका नगर है इसमें श्रीषेण राजाका राज्य था। इसकी रानी का नाम श्रीमती था। एक समय जब कि यह दूध के फेन के समान सुकोमलशय्या पर सो रही थी तो इसने स्वप्न मे शंख के समान उज्ज्वल पूर्णचंद्र मंडल देखा। उसी समय ग्यारहवें देवलोक से चवकर अपराजित कुमार का जीव इसके गर्भ का समय जब परिपूर्ण व्यनीत हुआ तब श्रीमतीने पूर्णिमा के पूर्ण इन्दुमण्डल जैसे पुत्र को जन्म दिया। स्वप्न में शंख के समान उज्ज्वल चंद्रमंडल के देखने से मातापिताने बडे समारोह के साथ बालक का नाम शंख रखा। शंखकुमार पांच धाय द्वारा लालित पालित होता हुआ क्रमशः बढने लगा। जिस प्रकार बादल समुद्र से जल को ग्रहण करता है उसी प्रकार शंखकुमारने भी गुरुजनों से अनेक कलाओं को ग्रहण कर लिया। विमलबोध का जीव भी स्वर्ग

હવે તેમનો મનુષ્ય અને દેવરૂપનો સાતમો અને આઠમો ભવ આ પ્રમાણે છે—

આ ભારતક્ષેત્રની અંદર હસ્તિનાપુર નામનુ એક નગર છે તેમા શ્રીષેણ નામના રાજાનુ રાજ્ય હતુ તેમની રાણીનુ નામ શ્રીમતિ હતુ, એક સમયે જ્યારે દૂધના ફીણના જેવી સુકોમળ શૈયા ઉપર એ રાણી સૂતેલ હતી ત્યારે તેણીએ સ્વપ્નામા શંખના જેવુ ઉજ્વળ પૂર્ણ ચદ્રમડળ જોયુ એવે વખતે અગ્યારમા દેવલોકમાથી ચવીને અપરાજીત કુમારનો જીવ તેના ગર્ભમા અવતરિત થયો ગર્ભનો સમય જ્યારે પરિપૂર્ણ થયો ત્યારે પૂર્ણિમાના પૂર્ણચદ્રના જેવા પુત્રને તેણે જન્મ આપ્યો સ્વપ્નમા ઉજ્વળ ચદ્રમડળને જોવાથી માતાપિતાએ બાળકનુ નામ શખ રાખ્યુ શખકુમાર પાંચ ધાત્રીઓથી લાલન પાલન થતા વધવા લાગ્યા જે પ્રકારે વાદળ સમુદ્રના જળને ગ્રહણ કરે છે તેજ પ્રમાણે શખકુમારે ગુરૂજનોની પાસેથી અનેક કળાઓને ગ્રહણ કરી

छलचतुरः सपरिजनः पल्लीशो यावद्दुर्गं रुरोध तावत्-प्रबलैः स्वबलैः सह कुमारोऽपि तमवेष्टयत् । ततः सामन्तसैन्यैरेकतः शङ्खकुमारसैन्यैरपरत आहतः सपरिजनः पल्लीशः स्वपराजयसूचनार्थं कुठारं कण्ठे समवलम्ब्य कुमारस्य शरणं समागतः प्राञ्जलिः सन्नेवमब्रवीत्-हे कुमार ! भवान् स्वबुद्धिप्रभावेण मम मायित्वं व्यर्थां कृतवान् । धन्यो भवान् ! अहं भवतो दासोऽस्मि । मम सर्वस्वं समादाय मम जीवितं रक्षतु, प्रसीदतु मयि कुमारः । ततः कुमारस्तेन पल्लीस्वामिना लुण्टाकतया यस्य यस्य द्रव्यं गृहीतं तेभ्यः सर्वेभ्यः प्रत्यर्प्य तं पल्लीस्वामिनं सहादाय स्वपुरं प्रति प्रचलितः । रात्रौ मार्गे शिबिरं निवेश्य

में छिप गया। छलविद्या में चतुर पल्लीपतिने ज्यों ही परिजनों को साथ लेकर दुर्ग को रोकने का प्रयास किया कि इतने में ही कुमारने प्रबल अपने सैन्य के साथ पीछे से आकर उसको घेर लिया। एक तरफ सामन्त के सैन्य से तथा दूसरी तरफ कुमार के सैन्य से आहत किया गया पल्लीपतिने अपने साथियों के साथ अपने पराजय की सूचना निमित्त कंठ में कुठार को धारणकर कुमार की शरण में आगया और हाथजोडकर उनसे कहने लगा-हे कुमार ! आपने अपनी बुद्धि की चतुराई से मेरा मायावीपन सर्वथा व्यर्थकर दिया है, आपको इसके लिये धन्यवाद है। मैं आपका आज से दासभाव अंगीकार करता हूं। मेरे पास जो कुछ भी चर अचर संपत्ति है वह सब आपकी है-आप इसको स्वीकार करें, और मुझे जीवनदान देकर अनुगृहीत करें। आपकी बडी दया होगी। पल्लीपति की इस प्रकार दीनता देखकर कुमारने उसके द्वारा जिनजिन का द्रव्य हरण किया था उसको उन उनको

પતિએ જ્યારે પરિજનોને સાથે લઈને દુર્ગને રોકવાનો પ્રયાસ કર્યો કે, એટલામાં કુમારે પાછળથી પોતાના પ્રબળ સૈન્યની સાથે આવીને તેને ઘેરી લીધો એક તરફ સામંતના સૈન્યથી તથા બીજી તરફથી કુમારના સૈન્યથી ઘેરાઈ ગયેલ પલ્લીપતિ પોતાના સાથીઓની સાથે પોતાના પરાજયની સૂચના નિમિત્ત ગળામાં કુહાડીને ધારણ કરી કુમારના શરણે આવી ગયો અને હાથ જોડીને તેમને કહેવા લાગ્યો કે, હે કુમાર ! આપે આપની બુદ્ધિની ચતુરાઈથી મારૂં માયાવીપણું સર્વથા વ્યર્થ બનાવી દીધેલ છે આપને તેના માટે ધન્યવાદ છે આજથી હું આપનો દાસભાવ અંગીકાર કરૂં છું મારી પાસે જે કાંઈ ચર અચર સંપત્તિ છે તે આપની છે આપ તેનો સ્વીકાર કરો અને મને જીવતદાન આપી ઉપકાર કરો. આપની આથી મારા ઉપર મહાન કૃપા થશે. પલ્લીપતિની આ પ્રકારની દીનતા જોઈને કુમારે એના હાથે જેના

न युक्तम्। अहमेवास्मि तद्दर्पमुन्मूलयितुं समर्थ, एवं शङ्खकुमारस्य विनयसमन्वितं वचनं निशम्य राजा श्रीषेणस्तमेवादिदेश शत्रुमन्यभिगन्तुम्। ततः पितुराज्ञया सन्नद्धः शङ्खकुमारः ससैन्यः पल्लीशं पराजेतुं प्रस्थितः क्रमेण पल्ली-समीपे समागतः। पल्लीशः कुमारस्यागमनवृत्तान्तं श्रुत्वा स्वानुचरैः सह दुर्गं परित्यज्य क्वाऽपि गिरिगह्वरे निलीनः। युद्धकलाभिज्ञः शङ्खकुमारः कमपि सामन्तं कियत्-सैन्यैः सह दुर्गे सन्निवेश्य स्वयमवशिष्टैः सैन्यैः सह कुञ्जे निलीनः।

आकर उनसे प्रार्थना की-तात! सर्प के बच्चे को निगृहीत करनेके लिये जिस प्रकार गरुड का प्रयाण शोभा नहीं देता है उसी प्रकार उस तुच्छ पल्लीपति को निगृहीत करने के लिये आपका यह प्रयाण उचित प्रतीत नहीं होता है, अतः आप मुझे आज्ञा दीजिये मैं जाऊँ। इस प्रकार शङ्ख-कुमार के विनयान्वित वचन सुनकर श्रीषेणराजाने अपना जाना बन्द कर दिया। और कुमार को ही जाने की आज्ञा दी। पिता की आज्ञा प्राप्त कर शङ्खकुमारने सैन्य को सज्जित कर पल्लीपति को पराजित करने के लिये प्रस्थान किया। इधर पल्लीपतिने ज्यों ही कुमार की अपने ऊपर आक्रमण करने को आने की बात सुनी तो वह शीघ्र ही वहां से निकल कर अपने अनुचरों के साथ किसी पर्वत की गुफा मे जाकर छिप गया। युद्धकला कुशल कुमार भी जब दुर्ग में पल्लीपति के साथ मुकाबला नहीं हुआ तब किसी सामन्त को कितनेक सैन्यजनों के साथ उस दुर्ग मे स्थापित कर अवशिष्ट सैन्य के साथ किसी पास के ही निकुञ्ज

આ પ્રમાણેની તૈયારીને જાણીને અપરાજીત કુમારના જીવ શંખે આવીને તેમને પ્રાર્થના કરી તાત! સર્પના બચ્ચાને હાથ કરવા માટે જેમ ગરૂડનું પ્રયાણ શોભારૂપ નથી તેજ પ્રમાણે પલ્લીપતિને હાથ કરવા માટે આપનું પ્રયાણ ઉચિત લાગતું નથી જેથી આપ મને આજ્ઞા કરો તો હું જાઉં આ પ્રકારના શંખકુમારના વિનય ભરેલા વચનોને સાંભળીને શ્રીષેણ રાજાએ પોતાનું જવાનું બંધ કરી દીધું અને કુમારને જવાની આજ્ઞા આપી પિતાની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરીને શંખકુમારે સૈન્યને સજ્જીત કરીને પલ્લીપતિનો પરાજ્ય કરવા માટે પ્રસ્થાન કર્યું આ બાજુ પલ્લીપતિએ જ્યારે પોતાના ઉપર કુમાર આક્રમણ કરવા આવી રહેલ હોવાની વાતને સાંભળી તો તરતજ તે ત્યાંથી નીકળીને પોતાના અનુચરોની સાથે કોઈ પર્વતની ગુફામાં જઈને છુપાઈ ગયો યુદ્ધ કળામાં કુશળ કુમાર પણ જ્યારે દુર્ગમાં પલ્લીપતિની સાથે મુકાબલો ન થયો ત્યારે કોઈ સામંતને કેટલાક સૈનિકો સાથે તે દુર્ગમાં રાખીને બાકીના સૈન્યની સાથે નજીકની નીકુંજમાં છુપાઈ ગયો છલ વિદ્યામાં ચતુર પલ્લી

श्रुत्य 'शङ्ख एव मम योग्योऽस्ति' अत स मम भर्त्ता इति प्रतिज्ञातवती। ततो नृप' 'एपा योग्ये जनेऽनुरक्ता' इति मनसि विचिन्त्य परमानन्द प्राप्तवान्। अथान्यदा मणिशेखरो विद्याधरो जितारिं नृपतिं तामयाचत। ततो जितारी नृपस्तमेव प्राह–मम कन्या शङ्खादन्य न कमपि पतिं वरीतुमिच्छति। तर्हि कथ तवेच्छापूर्त्ति. स्यात्? नृपस्य वचन श्रुत्वा स तस्मिन् काले तत प्रतिनिवृत्तो ऽन्यदा धात्र्या मया सह ता हृतवान्। रागिणामाग्रहो हि कुग्रह इव नितरा मसाध्यो भवति। मा तु रुदतीमत्र विहाय ता गृहीत्वा स कुत्रापि पर्वते

के मुख से यह बात सुनी कि 'शंख ही इस समय सकल गुणों का निधान है' उसी दिन से उसका चित्त शंखके गुणों से आकृष्ट हो गया और यह निश्चय करलिया है कि शंख ही मेरे योग्य पति है। इसलिये वह ही मेरे जीवन का एकमात्र आधार होसकेगा। जब यशोमती के मातापिता को इस के इस प्रकार के निश्चय का पता चला तो वे बडे ही प्रसन्न हुए। एक दिन की बात है कि मणिशेखर नामके किसी विद्याधरने जितारि नृप से यशोमती की याचना की, तब जितारि राजाने उससे कहा–कि कन्या का मन शंखकुमार के सिवाय अन्य किसी मे भी अनुरक्त नहीं है। नृप के इसप्रकार वचन सुनकर मणिशेखर उस समय वापस लौट गया। मौका पाकर उसने मेरे सहित उसका हरण कर लिया। और मैं उस यशोमती की धायमाता हूं। क्या कहा जाय रागि व्यक्तियों का आग्रह कुग्रह की तरह नितरा असाध्य ही हुआ करता है। वह रोती हुई मुझको छोडकर पता नहीं वह उसको लेकर

मतीએ કોઈના મોઢેથી આ વાત સાભળી કે, "શ ખ આ સમયે સઘળા ગુણોની ખાણ છે" તે દિવસથી તેનુ ચિત્ત શ ખના ગુણોથી બંધાઇ ગયુ છે અને તેણીએ મનથી એવો નિશ્ચય કરી લીધો છે, કે, શ ખજ મારા યોગ્ય પતિ છે જેથી તે મા। જીવનના એક માત્ર આધારરૂપ બની શકશે જ્યારે યશોમતીના માતાપિતાએ તેના આ પ્રકારના નિશ્ચયને જાણ્યો ત્યારે, તે ઘણાજ ખુશી થયા એક દિવસની વાત છે કે, મણિશેખર નામના કોઈ વિદ્યાધરે જીતારી રાજા પાસે યશોમતીની યાચના કરી ત્યારે જીતારી રાજાએ તેને કહ્યુ કે, કન્યાનુ મન શ ખકુમાર સિવાય કોઈનામા નથી રાજાનુ આ પ્રકારનુ વચન સાભળીને મણિશેખર એ સમયે પાછો ચાલ્યો ગયો. તેણે તક મેળવીને મારી સાથે યશોમતીનુ હરણ કર્યું અને હુ તે યશોમતીની ધાવ માતા છુ શુ કહી શકાય રાગી વ્યક્તિઓનો આગ્રહ કુગ્રહની માફક ખરેખર અસાધ્યજ થતો હોય છે એ મને અહી રોતી મૂકીને ન માલુમ તેણીને લઇને ક્યા

यावत्स्वप्स्यति तावत्करुणं रुदितशब्दं श्रुतवान्। ततः सत्वरं प्रचलितः स रुदितशब्दमनुसृत्य कियद्दूरं गतोऽर्द्धवृद्धां कामपि स्त्रियं रुदतीं विलोक्य पृष्टवान्-अम्ब! कथं रोदिषि? साऽब्रवीत्—

अस्त्यङ्गदेशे चम्पायां जितारिर्नाम भूपतिः। तस्य कीर्तिमतीराज्ञ्या यशोमती नाम पुत्री समुत्पन्ना। सा हि वर्द्धमानवयसा सह सकलाः कलाः समभ्यस्य यौवनं वयः प्राप्ता। सा हि स्वानुरूपं वरमपश्यन्ती न कुत्राऽप्यनुरज्यत। अन्यदा सा कस्याऽपि मुखात् सकलगुणानामाकरं श्रीपालपुत्रं शङ्खनृप-

दिलाकर उस पल्लीपति को अपने साथ ले लिया, और अपने नगर की तर्फ प्रस्थान किया। रात्रि मे जब इन्होंने किसी एक स्थान पर पडाव पडा तो कुमारने जैसे ही सोने का विचार किया कि इतने मे उनके कान में किसी के दयाजनक रोने की ध्वनि पडी। ध्वनि का अनुसरण कर ज्यों ही कुमार वहां से निकलकर आगे चला तो क्या देखता है कि एक अर्द्धवृद्ध स्त्री रो रही है। उसके पास जाकर कुमारने पूछा-माता! तुम क्यों रो रही हो कुमार की बात सुनकर उसने कहा-

हे पुत्र! अङ्गदेश मे चंपा नामकी एक नगरी है। वहां जितारी नामका राजा रहता है। उसकी रानी का नाम कीर्तिमती है। इससे एक पुत्री उत्पन्न हुई जिसका नाम यशोमती है। उसने क्रमशः सकल कलाओं का अभ्यास कर लिया। और जब यह तरुण अवस्था को प्राप्त हुई तब माता पिताने इसका विवाह करने का विचार किया परन्तु इसके योग्य वर नहीं मिला। एक दिन अचानक यशोमतिने किसी

જેના દ્રવ્યનુ હરણ કરવામા આવેલ હતુ તે બધાને એ અપાવી દઈને પલ્લીપતિને પોતાની સાથે લઈને પોતાના નગર તરફ પ્રસ્થાન કર્યું રાત્રિ થતા કોઈ એક સ્થાન ઉપર તેઓએ પડાવ રાખેલ હતો અને રાત્રે કુમાર જ્યા સુવાનો વિચાર કરે એટલામા તેના કાને કોઈનો રોવાનો દયાજનક અવાજ અથડાયો આવી રહેલા અવાજ તરફ લક્ષ રાખીને કુમાર ત્યાથી નીકળીને આગળ વધ્યા ત્યારે તેણે ત્યા એવુ જોયુ કે, એક અર્ધવૃદ્ધ સ્ત્રી રોતી હતી તેની પાસે જઇને કુમારે પૂછ્યુ કે, માતા તમો શા માટે રૂઓ છો? કુમારની વાત સાભળીને તેણે કહ્યુ —

હે પુત્ર! અગદેશમા ચપા નામની એક નગરી છે ત્યા જીતારી નામનો એક રાજા રહે છે તેની રાણીનુ નામ કીર્તિમતી છે તેનાથી ઉત્પન્ન થયેલી એક પુત્રી છે જેનુ નામ યશોમતી છે તેણીએ ક્રમશ બધી કળાઓનો અભ્યાસ કરી લીધો છે અને જ્યારે તેણે યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી ત્યારે તેના માતાપિતાએ તેનો વિવાહ કરવાનો વિચાર કર્યો પરતુ તેને યોગ્ય વર ન મળ્યો એક દિવસ અચાનક યશો

सोऽय भाग्यात्स्वयमेव समुपस्थित । अहममुमद्य त्वदाशया सह हनिष्यामि। ततस्त्वा स्वगृहे नीत्वा परमोत्सवेन परिणेष्यामि। तद्वचन श्रुत्वा शङ्खकुमारः प्राह-अरे। मूढ । आत्मश्लाघया अलम्। यदि शक्तिरस्ति, तर्हि युद्धाय सन्नद्धो भव। ततस्तयोर्युद्ध प्रवृत्तम् । मणिशेखर शङ्ख दुर्जय ज्ञात्वा विद्यास्त्रैस्तस्मिन् कुमारे प्रहृतवान। परन्तु तत्पुण्यप्रभावेण सर्वाणि विद्यास्त्राणि विफलानि जातानि ततस्तद्दुःखेन मणिशेखरो मूर्च्छितो भूमौ निपतित'। कुमारेण शीतलोपचारै'

वरण करना चाहती हो वह कुमार तुम्हारे भाग्य से यहा स्वय ही आगया है। देख मैं इसको आज ही तेरी आशा के साथ २ ही मार दूगा। फिर निष्कटक होकर मैं तुझे अपने घर लेजाकर तेरे साथ विवाह करूँगा। इस प्रकार विद्याधर के वचनो को सुनकर शखकुमारने उससे कहा-अरे मूढ ! अपने मुँह अपनी प्रशसा करना अच्छा नही है। यदि शक्ति है तो आजा युद्ध करले। इस प्रकार परस्पर वातचीत होते २ ही उन दोनों का युद्ध प्रारभ हो गया। मणिशेखरने जब यह देखा कि शखकुमार सामान्य योद्धा नही है और न इसका जीतना ही कोई साधारण वात है तब उसने ऊपर उसके विद्याधर सबधी अस्त्रो का प्रयोग करना प्रारभ किया। परन्तु कुमार के पुण्यप्रभावने उसके उन समस्त अस्त्रों को विफल बना दिया। इस दु'ख से मणिशेखर विद्याधर मूर्च्छित होकर धडाम से जमीन पर गिरपडा। कुमारने ज्यों ही मूर्च्छित होकर जमीन पर पडे हुए विद्याधर को देखा तो उसने उसी समय शीत-

અરે! તુ જેને વરવા માગે છે તે કુમાર તારા ભાગ્યથી અહીં આવી પહોચેલ છે જો હુ તેને અહીંયા જ તારી આશાની સાથે સાથે જ મારી નાખીશ પછી નિષ્કટક બનીને હુ તને લઈ જઈને તારી સાથે વિવાહ કરીશ આ પ્રકારના વિદ્યાધરના વચનોને સાભળીને શખકુમારે તેને કહ્યુ-અરે મૂઢ! પોતાના મોઢેથી પોતાની પ્રશસા કરવી એ બરોબર નથી જો તારામા શકિત હોય તો સામે આવીજા અને મારી સાથે યુદ્ધ કર આ પ્રકારના પરસ્પર વાતચિત થતા એ બન્નેનુ યુદ્ધ શરૂ થઈ ગયુ. મણિશેખરે જ્યારે એવુ જાણ્યુ કે, શખકુમાર સામાન્ય યોદ્ધો નથી તેમ એને જીતવો એ સાધારણ વાત નથી આવો વિચાર કરીને તેણે શખકુમાર ઉપર વિદ્યાધર સબધી અસ્ત્રો ફેકવાનો પ્રારભ કર્યો પરતુ કુમારના પુણ્ય પ્રભાવે વિદ્યાધરનાં એ સઘળા અસ્ત્રો વિફલ બન્યા આ દુખથી મણીશેખર વિદ્યાધર મૂર્છિત થઈને જમીન ઉપર પટકાઇ પડયો, કુમારે જ્યારે મૂર્છિત થઈને જમીન ઉપર પડતા વિદ્યાધરને જોયો ત્યારે તેણે તે સમયે શીત ઉપચારથી તેને સ્વસ્થ કરી

गत । 'सम्प्रति तस्या का वर्तते' इति विचिन्त्य मम चेतो नितरां खिद्यते। अतोऽहमसहाया रोदिमि। कुमार उक्तवान्-धैर्यमवलम्बस्व। अहं शीघ्रमेव तां कन्यामानयामि, इत्युक्त्वा कुमारो रात्रावरण्ये परिभ्रमन् प्रभाते तत्र पर्वते समागतः। तदा स दूरादेव शब्दं श्रुतवान्-अये! शङ्ख एव मया पतित्वेन वृतः। अतः किं वृथैवानेनानीतम्। ततः कुमारः शब्दमनुसृत्य तत्र गतः। ताभ्यां कुमारो दृष्टः। ततो मणिशेखरविद्याधरः सहास्यमाह-अयि! त्वं यं वरीतुमिच्छसि,

कहां चला गया है। परंतु मुझे ऐसा ख्याल आता है कि वह किसी पर्वतपर ही गया होगा। मैं जो रो रही हूं सो उसका कारण केवल इतना ही है कि वह बिचारी यशोमती इस समय न मालूम किस दशा का अनुभव कर रही होगी। और मैं असहाय होकर रो रही हूँ। इस प्रकार उस धायमाता के वचनों को सुनकर कुमारने उससे कहा-कि तुम घबराओ मत-धैर्य धारण करो-मैं शीघ्र ही उस कन्या को यहां ले आता हूं। ऐसा कहकर कुमार वहां से चल दिया और रातभर चलकर जब उसको प्रभात हुआ तो वह उस पर्वत पर आ पहुँचा जहां विद्याधर उस कन्या को लेकर आया था। कुमारने वहां आते ही यह शब्द दूर से सुना कि-"अरे! मैं ने तो अपना पति शंख को ही निश्चित किया है। व्यर्थ में तू मुझे यहां क्यों लाया है। कुमारने ज्यों ही इन शब्दों को सुना कि वह शीघ्र ही इन शब्दों के आने के मार्ग का अनुसरण कर वहाँ जा पहुँचा। उन दोनोंने कुमार को देखा। देखकर विद्याधरने हँसकर यशोमती से कहा-अयि! तुम जिसको

ચાલી ગયેલ છે પરંતુ મને લાગે છે કે, તે કોઈ પર્વત ઉપર જ લઈ ગયેલ હશે હું જે રોઈ રહી છું તેનું કારણ એટલું જ છે કે, એ બિચારી યશોમતી આ સમયે કેવી દશામાં મૂકાયેલ હશે આજ કારણથી હું અસહાય બનીને રોઈ રહી છું આ પ્રકારના એ ધાયમાતાના વચનોને સાંભળીને કુમારે કહ્યું-કે તમો ગભરાઓ નહીં ધૈર્ય ધારણ કરો હું જલદીથી તે કન્યાને અહીં લઈ આવું છું એવું કહીને કુમાર ત્યાંથી ચાલી નીકળ્યો અને રાતભર ચાલીને સવાર થતાં જ તે એક પર્વત પર પહોંચ્યો એ પર્વત એ હતો કે જ્યાં પેલો વિદ્યાધર યશોમતીને લઈને ત્યાં ગયેલ હતો કુમારે ત્યાં પહોંચતાં જ દૂરથી એ પ્રકારનો શબ્દ સાંભળ્યો કે, "મેં તો મારા પતિ તરીકે શંખને જ મારા હૃદયમાં સ્થાપિત કરેલ છે તું વ્યર્થમાં મને અહીં શા માટે લઈ આવેલ છો" કુમારે જ્યારે એ શબ્દોને સાંભળ્યા કે, તરત જ તે એ શબ્દો જે બાજુથી આવતા હતા તે તરફ ચાલીને એ સ્થળે જઈ પહોંચ્યો એ બન્નેએ કુમારને જોયો જોતાં જ હસીને વિદ્યાધરે યશોમતીને કહ્યું—

शेखर विद्याधरस्य सेवका समागता। तदा शङ्खकुमारस्तेषु द्वौ विद्याधरौ शिबिरे सप्रेष्य तन्मुखात्स्वसैनिकान् हस्तिनापुर गन्तु समादिष्टवान्, सैनिकमुखात् मातापितरौ च विज्ञापितवान् अहमिदानी मित्रेण सह मणिशेखरविद्याधरस्य पुर गन्तास्मीति। अन्यैर्विद्याधरैश्च वनेस्थिता यशोमत्या धात्रीमानायितवान्। ततो धात्र्या यशोमत्या च सह कुमार शङ्खो मणिशेखरविद्याधरेण युक्तो वैताढ्ये गत.। तत्र कुमार सुशर्माचार्यमुनिं प्रणम्य तदत्ता धर्मदेशना श्रुतवान्। ततो मणिशेखर शङ्खकुमारेण सह स्वपुरे समागतः। तत्र कुमार. सुचिर नित्र सतिष्ठ। ततो विद्याधराः कुमारस्य कुलशीलौदार्यादिगुणान् दृष्ट्वा स्वा स्वा पुत्री

इसी समय वहां मणिशेखर विद्याधर के सेवक भी आ पहुँचे। शङ्खकुमारने उनमे से दो विद्याधरो को शिविर (सेना के निवासस्थान) मे भेजकर अपने सैनिकों को हस्तिनापुर जाने के लिये सूचना भिजवा दी। तथा अपने मातापिता को यह समाचार भी भिजवा दिया कि मै अपने मित्र के साथ इस समय मणिशेखर विद्याधर के पुर जा रहा हू। तथा कितनेक विद्याधरों को भेजकर वनमे स्थित यशोमती की धाय को भी कुमारने बुलवा लिया। इस प्रकार धायमाता, यशोमती एव मणिशेखर विद्याधर इनके साथ २ शंखकुमार वहा से चलकर वैताढ्य पर्वत पर आ पहुँचा। वहा आकर कुमारने सब के साथ सुशर्माचार्य को वदना करके धर्मदेशना सुनी। वहा से मणिशेखर शङ्खकुमार के साथ अपने पुर में आया। कुमार वहा बहुत दिनो तक रहा। वहा के विद्याधरोंने इस अवसर मे कुमार के कुल शील सतोष एव औदार्य आदि महान् गुणो को अच्छी तरह देख लिया। जब वे कुमार के हरएक प्रकार

આ સમયે ત્યા મણિશેખર વિદ્યાધરના સેવકો પણ આવી પહોચ્યા શખકુમારે એમાના બે સેવકોને શિબિર (પોતાની સેનાના પડાવ) ઉપર મોકલીને પોતાના સનિકોને હસ્તિનાપુર પહોચી જવાની સૂચના મોકલી દીધી તથા પોતાના માતાપિતાને એવા સમાચાર મોકલી આપ્યા કે, હુ મારા મિત્રની સાથે આ સમયે મણિશેખર વિદ્યાધરના નગરમા જઈ રહ્યો છુ તથા કેટલાક વિદ્યાધરોને મોકલને યશોમતીની ધાવ માતાને પણ કુમારે બોલાવી લીધી આ પ્રકારે ધાવમાતા, યશોમતી અને મણીશેખર વિદ્યાધર એમની સાથે સાથે શખકુમાર ત્યાથી ચાલીને વૈતાઢય પર્વત ઉપર જઈ પહોચ્યા ત્યા પહોચીને કુમારે સહુની સાથે સુશર્માચાર્યની વદના કરી તેમની પાસેથી ધર્મદેશના સાભળી ત્યાથી મણિશેખર શખકુમારની સાથે પોતાના નગરમા પહોચ્યો આ સ્થળે કુમાર ઘણા દિવસો સુધી રહ્યા ત્યાના વિદ્યાધરોએ એ અવસરમાં કુમારના કુળ શીલ, વગેરે ઔદાર્યગુણોને સારી રીતે જાણી લીધા જ્યારે બધા વિદ્યાધરો કુમારના હરેક પ્રકારના વ્યવહારથી ખૂબ પરિચિત બન્યા ત્યારે તેમણે

स्वस्थीकृतः पुनर्युद्धाय प्रेरितः स मणिशेखरस्तमाह–महाबाहो ! इतः पूर्वं केनाऽप्यनिर्जितोऽहं त्वया युद्धे जितः। अतोऽहं तव पराक्रमक्रीतो दासोऽस्मि। ततः कुमार आह–अहमपि त्वयि परं तुष्टोऽस्मि। ततः स आह–महाभाग ! वैताढ्येऽधुना सुशर्माचार्यनामा खेचरमुनिः सपरिवारो विहरति। अतस्तं वन्दितुमावाभ्यां गन्तव्यम्। कुमारः शङ्खोऽपि तद्वचनमन्वमन्यत। यशोमती च सकलगुणैरलङ्कृतं शङ्खकुमारं दृष्ट्वा 'मया मनसा सर्वश्रेष्ठो वरो वृतः'' इति चिन्तयन्ती परमं मनस्तोषं माप्तवती। तस्मिन्नेव समये मणि

लोपचार से उसको स्वस्थ कर युद्ध करने के लिये प्रेरित किया, परन्तु कुमार को दुर्जेय एवं बलिष्ट जानकर मणिशेखरने पुनः युद्ध करना उचित नहीं समझा, उसने उसी समय कुमार को नमनकर विनय के साथ कहा–महाबाहो ! आजतक मैं किसी से परास्त नहीं हुआ हूं, परंतु यह जीवन में पहिला मौका है जो आपसे मुझे हार खानी पडी है अतः अब तो आपने विजित कर मुझे अपने पराक्रम से अपना दास बना लिया है। कुमारने विद्याधर की इस प्रकार बात सुनकर उससे कहा तुम घबराओ नहीं, मैं भी तुम पर बहुत संतुष्ट हूं। कुमार की इस प्रकार से अपने ऊपर ममता जानकर विद्याधरने कहा महाभाग ! वैताढ्य पर्वत पर इस समय सुशर्माचार्य नामके खेचरमुनि सपरिवार विचर रहे हैं सो अपन दोनों उनको वंदना करने के लिये चले। कुमारने विद्याधर के इन वचनों का बहुमान किया। तथा सकलगुणों से अलंकृत शङ्खकुमार को देखकर–"मैं ने अपने मनसे सर्वश्रेष्ठ वर को वरा है" ऐसे विचारों से यशोमती को अपार संतोष हुआ।

યુદ્ધ કરવા માટે તૈયાર થવા જણાવ્યું પરંતુ કુમારને ન જીતી શકાય તેવો બલિષ્ઠ જાણીને મણિશેખરે ફરીથી યુદ્ધ કરવાનું ઉચિત ન માન્યું આથી તેણે એ સમયે કુમારને નમન કરી વિનયની સાથે કહ્યું–મહાબાહુ ! આજ સુધી હું કોઈનાથી પરાસ્ત થયો નથી પરંતુ આ જીવનમાં મારા માટે આ પ્રથમ જ પ્રસંગ છે કે, આપનાથી મારે હાર ખાવી પડી છે આથી આપે મારા ઉપર વિજય મેળવીને મને દાસ બનાવી લીધેલ છે કુમારે વિદ્યાધરની આ વાત સાંભળીને તેને કહ્યું–તમો ગભરાવ નહીં હું પણ તમારા ઉપર ખૂબ પ્રસન્ન છું કુમારની પોતાના ઉપર આ પ્રકારની મમતા જાણીને વિદ્યાધરે કહ્યું–મહાભાગ વૈતાઢ્ય પર્વત ઉપર આ સમયે સુશર્માચાર્ય નામના ખેચર મુનિ સપરિવાર વિચરી રહ્યા છે આથી આપણે તેમને વંદના કરવા માટે જઈએ કુમારે વિદ્યાધરના એ વચનોનું બહુમાન કર્યું તથા સઘળા ગુણોથી અલંકૃત એવા શંખકુમારને જોઈને "મેં મારા મનથી સર્વશ્રેષ્ઠ વરને વરેલ છે" આવા વિચારોથી યશોમતીને પણ ઘણો જ સંતોષ થયો

सह स्वपुर हस्तिनापुर समागत । कुमारस्य मातापितरौ वधूभि॰ सह समागत स्वसुत विलोक्य पर प्रमोदमापन्नौ। स्वपत्नीभि सह शङ्खकुमारो मातापितरौ प्रणम्य तद्दत्ता शुभाशिष प्रतिपद्य स्वभवने समागतः। अथाऽन्यदा श्रीषेण नृपति' पुत्र राज्यधुराधरणक्षम विलोक्य तस्मिन् राज्यभार समारोप्य स्वय श्रीमती देव्या सह सुकीर्त्ति नाम्न आचार्यस्य समीपे दीक्षा गृहीत्वा तीव्र तप कृत्वा केवलज्ञानसम्पन्नो जात'।

अथ-गृहीतराज्यभार' शङ्खः सम्यक् प्रजा पालयन् विंशतिस्थानकानि समाराधयश्च बहूनि वर्षाणि नीतवान। अथैकदा निदाघसमयाह्नकाले सम्यग् ज्ञानदर्शनचारित्रधर, प्रकृत्योदार, गुणगणगम्भीर पापभरजलनिधितीर जङ्गम

से वह सबको साथ लेकर हस्तिनापुर आया। मातापिताने जब अपने पुत्र की इस प्रकार की विशिष्ट सपत्ति और शोभा देखी तो बडे अधिक हर्षित हुए। कुमारने अपनी पत्नियों के साथ मातापिता के चरणों का स्पर्श किया। मातापिताने इनको खूब हार्दिक आशीर्वाद दिया। इस प्रकार रहते २ कुमार का कालक्षेप आनद के साथ होने लगा। जब श्रीषेण राजाने पुत्रको राज्यधुरा के धारण करने मे समर्थ देखा तो एक दिन उन्होंने उसको राज्यतिलक कर स्वय श्रीमती देवी के साथ सुकीर्ति नामक आचार्य के पास दीक्षा धारण की। दीर्घ काल तक तपस्या करने के बाद उनको केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

इधर राज्य प्राप्त करके कुमारने अपनी प्रजा का लालन पालन अच्छी तरह बहुत कालतक किया। एक दिन की बात है यशोमती जो उस समय अपने महल की खिडकी मे बैठी हुई बाहरी दृश्य के निरीक्षण

આદરથી તે સઘળાને સાથે લઈને હસ્તિનાપુર પહોચ્યો માતાપિતાએ પોતના પુત્રની આ પ્રકારની વિશિષ્ટ સપત્તિ અને શોભા જોઈ એથી ઘણોજ સતોષ થયો કુમારે પોતાની પત્નીઓની સાથે માતાપિતાના ચરણોમા વદન કર્યા માતાપિતાએ તેમને હાર્દિક આશીર્વાદ આપ્યા આ પ્રકારે રહેતા રહેતા કુમારનો સમય ઘણાજ હર્ષની સાથે વીતવા લાગ્યો જ્યારે શ્રીષેણ રાજાએ પુત્રને રાજધુરા સભાળવામા સમર્થ જોયો ત્યારે એક દિવસ તેમને રાજતિલક કરી પોતે શ્રીમતી દેવીની સાથે સુકીર્તિ નામના આચાર્યની પાસે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી ઘણા કાળ સુધી તપસ્યા કર્યા પછી તેમને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થઇ ગયુ

આ તરફ રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને કુમારે પોતાની પ્રજાનુ પાલન ઘણા કાળ સુધી સારી રીતે કર્યું. એક દિવસની વાત છે કે યશોમતી પોતાના મહેલની બારીમા બેસીને બહારનુ દૃશ્ય જોઇ રહી હતી એ સમયે તેણે એક મુનિરાજને પોતાના

परिणेतु मार्थितवन्त'। कुमार आह–यशोमत्या सह विवाह कृत्वा भवता कन्या. परिणेष्यामि। अथान्यदा ते विद्याधरा. स्व स्व कन्यया सह धात्री यशोमती शङ्खकुमारसहिता अङ्गदेशे चम्पापुरीं समागता.। जितारि. शङ्खकुमारेण सह समागता स्वपुत्रीं तद्धात्रीं स्व स्वपुत्रीसहितान विद्याधरांश्च विलोक्य, मन्दानन्दसन्दोहसमन्वितो जात । तत. शुभमुहूर्ते शङ्खकुमारो यशोमतीं विद्याधरकन्याश्च परिणीय ताभि सह स्थिरवास चम्पाया स्थितवानन्यदा, ताभि

के व्यवहार से खूब परिचित एव सन्तुष्ट बने–तब उनलोगोंने कुमार के साथ अपनी २ पुत्रियों का विवाह कर देने का विचार किया। जब विचार दृढ हो चुका तब सबने कुमार से अपनी २ लडकियों के साथ विवाह करने की प्रार्थना की। सब के हृदयगम विचारों को स्फुट रूपमें सुनकर कुमारने उनसे कहा ठीक है–परंतु मै पहिले यशोमती के साथ विवाह करूँगा–पश्चात्–आप लोगों की लडकियों के साथ। किसी एक समय वे समस्त विद्याधर अपनी २ कन्याओं को साथ लेकर धात्री, यशोमती तथा शखकुमार के साथ २ अगदेशान्तर्गत चपापुरी में आये। जितारि राजाने जब यह देखा कि मेरी पुत्री यशोमती शंखकुमार के साथ तथा अपनी धात्री एव अन्य विद्याधरों के साथ २ आई है तो उसको बडा आनद हुआ। उसने शीघ्र ही शुभ मुहूर्त मे यशोमती का सबध शखकुमार के साथ कर दिया। पश्चात् अन्यविद्याधरोंने भी अपनी २ पुत्रियों को कुमार के साथ विवाहित कर दिया। विवाह हो जाने के बाद कुछदिनों तक कुमार वहाँ पर रहा। पश्चात् घरकी याद आने

પોતાની બે પુત્રીયોનો તેમની સાથે વિવાહ કરવાનો વિચાર કર્યો –જ્યારે વિચાર દૃઢ બની ચૂકયો ત્યારે સઘળાએ કુમારને તેમની બે પુત્રીયોની સાથે વિવાહ કરવાની વિનતી કરી બધાના આગ્રહને વશ બનીને કુમારે તેમને કહ્યું ઠીક છે પરતુ હુ પહેલાં યશોમતીની સાથે વિવાહ કરીશ અને પછીથી આપ લોકોની કન્યાઓ સાથે કોઈ એક સમયે સઘળા વિદ્યાધરો પોતાની બે કન્યાઓને સાથ લઈને ધાત્રી, યશોમતી તથા શ ખકુમારની સાથે સાથે અ ગદેશમા આવેલ ચ પાપુરીમા પહોચ્યા જીતારી રાજાએ જ્યારે એ જાણ્યુ કે મારી પુત્રી યશોમતી શ ખકુમારની સાથે તેમજ પોતની ધાત્રી અને અન્ય વિદ્યાધરોની સાથે આવેલ છે ત્યારે તેને ઘણોજ આન દ થયો તેણે શુભ મુહૂર્ત જોઈને યશોમતીનો સ બ ધ શ ખકુમારની સાથે કરી દીધો એ પછી વિદ્યાધરોએ પણ પોતાની બે પુત્રીઓનો વિવાહ શ ખકુમારની સાથે કર્યો વિવાહ થઈ જવા પછી કુમાર કેટલાક સમય ત્યા રહ્યો પછી ઘરની યાદ

सह तत्समीपे प्रव्रजितवान् । यशोमती राज्ञी च सुव्रताप्रवर्तिनी समीपे प्रव्रजिता जाता । क्रमाच्च शङ्खमुनिः गीतार्थः सन् विंशतिस्थानकानां पुनः पुनः सेवनेन स्थानकवासित्वं समाराध्याभिग्रहादिकं सुदुष्करं तपः कुर्वाणो मतिप्रभेण च सह मासिकमनशनं कृत्वा मृत्वा अपराजिते विमाने समुत्पन्नः । यशोमत्यपि तथैवा नशनं कृत्वा, मृता तत्रैवापराजिते विमाने समुत्पन्ना ॥

(अथ नवमस्तीर्थङ्करभवः)

तत्र त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिमनुभूयाऽन्यदाऽऽयुर्भवस्थितिक्षयेणापराजितविमानात्प्रच्युतः शङ्खजीवोऽत्रैव भरतक्षेत्रे शौर्यपुरे नाम्नि पुरे दशार्हाणां

दीक्षाधारण करली। शङ्ख राजा को दीक्षित जानकर इसके मित्र मतिप्रभ ने भी दीक्षा अंगीकार करली। यशोमती रानीने सुव्रता प्रवर्तिनी के पास दीक्षा ली। शङ्खमुनिने क्रमशः गीतार्थ बनकर विंशतिस्थानकों का पुनः पुनः सेवन करके स्थानकवासीपन की आराधना करके एवं अभिग्रहादि दुष्कर तप करके मतिप्रभ के साथ अन्तसमय में एक मास का अनशन किया और मरकर ये दोनों अपराजित विमान में जाकर उत्पन्न हुए। तथा यशोमतीने भी इसी तरह से एकमास का अनशन कर मरण किया सो वह भी उसी विमान में उत्पन्न हुई। यह देवभव आठवाँ हुआ ॥८॥

नवमा तीर्थंकर भव इस प्रकार है-

शङ्ख के जीवने अपराजित विमान मे रहने की अपनी तेतीस सागर की स्थिति को भोगते २ जब समाप्त करदिया तब वह उस अपराजित विमान से चवकर इसी भरतक्षेत्र के अन्तर्गत शौर्यपुर

ધારણ કરી લીધી શંખરાજાને દીક્ષિત જાણીને તેના મિત્ર મતિપ્રભે પણ દીક્ષા ધારણ કરી લીધી યશોમતીએ પણ સુવ્રતા પ્રવર્તિની પાસે દીક્ષા લઇ લીધી શંખમુનિએ ક્રમશ ગીતાર્થ બનીને વીસ સ્થાનોનું ફરી ફરીથી સેવન કરી સ્થાનકવાસીપણાની આરાધના કરીને, તથા અભિગ્રહ આદિ દુષ્કર તપ કરીને મતિપ્રભની સાથે અંત સમયમાં એક માસનું અનશન કર્યું અને મરીને એ બન્ને અપરાજીત વિમાનમાં જઇને ઉત્પન્ન થયા તથા યશોમતીએ પણ એક માસનું અનશન કરીને મરણ કર્યું તે પણ એ વિમાનમાં ઉત્પન્ન થઇ આ દેવભવ આઠમો થયો ॥૮॥

॥ નવમો તીર્થંકરભવ આ પ્રકારનો છે ॥—

શંખના જીવે અપરાજીત વિમાનમાં રહેવાની પોતાની તેત્રીસ સાગરની સ્થિતિને ભોગવીને સમાપ્ત કરી ત્યારે તે ત્યાંથી અપરાજીત વિમાનથી ચવીને ભરતક્ષેત્રની

मकरोत्। तदा राज्ञी यशोमती मनस्येवमचिन्तयत्–यद्यहं मुनिं राज्ञोऽपेक्षयाऽधिकं प्रतिलम्भयामि तदा मे महाफलं स्यात्। इति विचिन्त्य राज्ञी स्वहस्तगमनं कृतवती। ततो राज्ञ्याऽधिकं प्रतिलम्भितो मुनिः। नृपस्तु न तथाऽचिन्तयत्। ततो राज्ञीं मायाभावसमन्विता वीक्ष्यापरिवर्तितभावं नृपं समाश्रयन्ती तीर्थंकर नाम गोत्रकर्म। यशोमती शङ्खाभ्यामेव प्रतिलम्भितस्ततः प्रतिनिवृत्तः। ततः एकदा केवली श्रीषेणराजर्षिर्विहरन् हस्तिनापुरं समवसृतः। शङ्खनृपस्तमभिवन्दितुं गतः। तत्र तं नत्वा मोहपङ्कप्रक्षालिनीं धर्मदेशनां श्रुत्वा मुक्तिकल्पलताबीजवैराग्यं सम्प्राप्तवान्। ततश्चन्द्रबिम्बनामकपुत्रं राज्ये संस्थाप्य स्वमित्रेण मतिप्रभेण

को दोनोंने एक साथ उठाया और मुनिराज को वहराने लगे तो रानी यशोमतीने विचार किया कि–मैं यदि राजा की अपेक्षा मुनिराज को अधिक लाभान्वित करूँ तो मुझे बड़े पुण्य का बंध होगा। इस प्रकार विचार कर रानीने अपने हाथों को ढीला करके अधिक वहराया। राजाने ऐसा विचार नहीं किया था इसलिये रानी को मायाचारी संपन्न तथा राजा को अपरिवर्तित भाव वाला देखकर तीर्थंकर नामकर्मने राजा का ही आश्रय लिया। अर्थात् राजाने उस समय तीर्थंकर गोत्र बाँध लिया, मुनिराज वहां से यशोमती एवं शंखराजा द्वारा प्रतिलंभित होकर चले गये। इसके बाद श्रीषेणकेवली विहार करते हुए हस्तिनापुर मे पधारे। शंखराजा उनको वंदना करने के लिये गया। वंदना करके शंखराजाने उनसे मोहरूपी कीचड को धोनेवाली धर्मदेशना सुनी, सुनकर मुक्तिकल्पलता का बीजभूत परम वैराग्य को पाया। इससे शंख राजाने राज्य में अपने चन्द्रबिम्ब नामके अपने पुत्र को स्थापितकर

તે પાત્રને બન્નેએ ઉઠાવ્યુ અને મુનિરાજને વહોરાવવા લાગ્યા આ વખતે રાણી યશોમતિએ વિચાર કર્યો કે, હુ રાજા કરતા મુનિરાજને વધારે લાભ આપુ તો મને પુણ્યનો મોટો બધ થશે આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાણીએ પોતાના હાથને ઢીલો કરીને અધિક વોરાવ્યુ રાજાએ એવો વિચાર કરેલ ન હતો આથી રાણીને માયા ચારી સપન્ન તથા રાજાને અપરિવર્તિત ભાવવાળા જોઈને તીર્થંકર નામકર્મએ રાજાનો જ આશ્રય લીધો અર્થાત રાજાએ એ સમયે તીર્થંકર ગોત્ર બાધી લીધુ, મુનિ રાજ ત્યાથી યશોમતી અને શખરાજાથી પ્રતિલભિત બનીને ચાલ્યા ગયા આ પછી શ્રીષેણ કેવળી વિહાર કરતા કરતા હસ્તિનાપુરમા પધાર્યા શખરાજા તેમને વદના કરવા માટે ગયા વદના કરીને શખરાજાએ તેમની પાસેથી મોહરૂપી કીચડને ધોવાવાળી ધર્મ દેશના સાભળી તે સાભળીને મુક્તિ કલ્પલતના બીજભૂત પરમ વૈરાગ્ય જાગ્યો આથી શખરાજાએ પોતાના ચદ્રબિમ્બ નામના પુત્રને રાજ્યગાદિ ઉપર સ્થાપિત કરીને દીક્ષા

टीका—'सोऽरिट्ठनेमि नामो' इत्यादि—

अरिष्टनेमि नामा स भगवान् लक्षणस्वरसंयुत—तत्र लक्षणानि=औदार्य-गाम्भीर्यादीनि तैः सहितो यः स्वरः = ध्वनिस्तेन संयुतो=युक्त —माधुर्यादिगुणसंपन्न स्वरवान्, तथा—अष्टसहस्रलक्षणधर —अष्टाधिक सहस्रम्—अष्टसहस्रम्, तत्संख्यकानि यानि शुभसूचकानि लक्षणानि—हस्तपादादौ स्वस्तिकवृषभसिंहश्रीवत्स शङ्खचक्रगजाश्वच्छत्राब्धिप्रमुखाणि तदंकिता चिह्नानि तेषां धर =धारक.—तीर्थङ्करतासूचक स्वस्तिकाद्यष्टोत्तरसहस्रलक्षणयुक्त., गौतम'=गौतमगोत्रोत्पन्न, कालकच्छविः=श्यामकान्ति सुशोभितः, तु=पुन.—वज्रऋषभनाराचसंहनन.—वज्र= कीलकाकारमस्थि, ऋषभ =पट्टाकृतिकोऽस्थिविशेष, नाराचम्=उभयतो मर्कट बन्धः, एभिः संहनन=शरीररचना यस्य स तथा, वज्रऋषभनाराचसंहननादीनि

सूत्रकार भगवान के रूप आदि का वर्णन करते हुए कहते हैं—'सोरिट्ठ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अरिट्ठनेमि नामो सो—अरिष्टनेमिनामा स) अरिष्ट नेमि नामवाले वे भगवान् (लक्खणस्सरसंजुओ—लक्षणस्वरसंयुत') माधुर्य गाम्भीर्य आदि लक्षणों से समन्वित स्वर वाले थे। (अट्ठसहस्स लक्खणधरो—अष्टसहस्रलक्षणधर.) हस्तपाद आदिकों में स्वस्तिक, वृषभ सिंह, श्रीवत्स, शख, चक्र, गज, अश्व, छत्र, समुद्र आदि शुभ सूचक एक हजार आठ १००८ लक्षणों को धारण किये हुए थे। (गोयमो—गौतमः) गौतमगोत्र मे उत्पन्न हुए थे। (काल गच्छवी—कालकच्छविः) कान्ति इनकी श्याम थी। (वज्जरिसहसंघयणो—वज्रऋषभसंहननः) वज्र-ऋषभनाराच संहनन वाले थे। कीलक के आकारवाली हड्डि का नाम वज्र है, पट्टाकार हड्डी का नाम ऋषभ है। उभयत मर्कटबंध का नाम नाराच है। इनसे जो शरीर की रचना होती है उसका नाम वज्रऋ-

સૂત્રકાર ભગવાનના રૂપ આદિનું વર્ણન કરતા કહે છે કે, "सोरिट्ठ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अरिट्ठनेमिनामो सो—अरिष्टनेमिनामा सः અરિષ્ટનેમિ નામવાળા તે ભગવાન માધુર્ય ગાંભીર્ય આદિ લક્ષણોયુક્ત સ્વરવાળા હતા अट्ठसहस्सलक्खणधरो—अष्टसहस्रलक्षणधर હાથ પગમાં સાથિયા, વૃષભ, સિંહ, શ્રીવત્સ, શંખ, ચક્ર, ગજ, અશ્વ, છત્ર, સમુદ્ર, વગેરે શુભસૂચક એક હજાર આઠ ૧૦૦૮ લક્ષણોને ધારણ કરેલ હતા गोयमो—गौतम. ગૌતમ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થયા હતા कालगच्छवी—काल क च्छवि તેમની કાન્તી શ્યામ હતી वज्जरिसहसंघयणो—वज्रऋषभसंहनन વજ્રઋષભ, નારાચ, સંહનનવાળા હતા ખીલા આકારના હાડકાનું નામ વજ્ર છે પટ્ટાકાર હાડકાનું નામ ઋષભ છે ઉભયત મર્કટબંધનું નામ નારાચ છે તેનાથી શરીરની જે

जात्यस्वर्णमयी लङ्काशङ्काविधायिनी द्वारकापुरी नाम पुरी निरमापयत्। तत्र रामकृष्णाद्याः सर्वेऽपि यदुवंशजाः सुखेन न्यवसन्। क्रमेण कृष्ण प्रतिवासुदेव जरासन्धं हत्वा भरतार्द्धं साधयित्वा त्रिखण्डराज्यं बुभुजे। भगवानरिष्ट नेमिस्तत्र यथा सुखं क्रीडन् समधिगततारुण्योऽपि भोगपराङ्मुख एव तस्थौ।

सम्प्रति सूत्रकार सार्धगाथया भगवतो रूपादिकं वर्णयति—

मूलम्—सोऽरिट्ठनेमिं नामो उँ, लक्खणस्सरसजुओ ।
अट्ठसहस्सलक्खणधरो, गोयमो कालगच्छवी ॥५॥
वज्जरिसहसंघयणो, समचउरंसो झसोयरो ।
तस्स राईमई कण्णं, भज्जं जायइ केसवो ॥६॥

छाया—सोऽरिष्टनेमिनामा तु, लक्षणस्वरसंयुतः ।
अष्टसहस्रलक्षणधरो, गौतमः कालकच्छविः ॥५॥
वज्रऋषभसंहननः, समचतुरस्रः झषोदरः ।
तस्मै राजीमतीं कन्यां, भार्यां याचते केशवः ॥६॥

श्रीकृष्णने वैश्रवणदेव की आराधना करके उसकी सहायता से बारह योजन लंबी तथा नवयोजन चौडी एक पुरी की रचना करवाई। इसका नाम द्वारका रक्खा गया। जात्यस्वर्णमयी होने से यह देखने वालों के लिये लंका की शंका उत्पन्न कर देती थी। इसमें बलदेव एवं कृष्ण आदि यादवगण निर्भय होकर रहने लगे। यहीं से कृष्णने प्रतिवासुदेव जरासन्ध को मारने की योजना तैयार की। जरासन्ध को मारकर कृष्णने भरतक्षेत्र के तीनखंडों पर अपना राज्य स्थापित किया। भगवान् अरिष्ट नेमि जो कि तरुणवय मे थे वे आनंदपूर्वक अपना समय व्यतीत करते हुए भी भोगों से पराङ्मुख बन रहे थे ॥४॥

આરાધના કરીને એમની સહાયતાથી બાર યોજન લાંબીઅને નવ નવયોજન પહોળી એક પુરીની રચના કરાવી અને તેનુ નામ દ્વારકા રાખવા આવ્યુ દ્વારકાપુરી જાત્યસ્વર્ણમયી હોવાના કારણે એ જોવાવાળાને લંકાની શંકા ઉત્પન્ન કરી દેતી હતી એમા બલદેવ અને કૃષ્ણ આદિ યાદવગણ નિર્ભય થઈને રહેવા લાગ્યા અહીંથી કૃષ્ણે પ્રતિ વાસુદેવ જરાસંધને મારવાની યોજના તૈયાર કરી જરાસંધને મારી કૃષ્ણે ભરત ક્ષેત્રના ત્રણ ખંડો ઉપર પોતાનુ રાજ્ય સ્થાપિત કર્યું ભગવાન અરિષ્ટનેમિ જે તરૂણ વયવાળા હતા તેઓ આનંદપૂર્વક સમય વ્યતીત કરતા હતા છતા તેઓ ભોગોથી પરાઙ્મુખ બની રહેલ હતા ॥૪॥

टीका—'सोऽरिट्ठनेमि नामो' इत्यादि—

अरिष्टनेमि नामा स भगवान् लक्षणस्वरसयुत —तत्र लक्षणानि=औदार्य-गाम्भीर्यादीनि तैः सहितो य स्वर = ध्वनिस्तेन सयुतो=युक्त —माधुर्यादिगुणसपन्न स्वरवान्, तथा—अष्टसहस्रलक्षणधर —अष्टाधिक सहस्रम्—अष्टसहस्रम्, तत्सरव्य-कानि यानि शुभसूचकानि लक्षणानि—हस्तपादादौ स्वस्तिकवृषभसिंहश्रीवत्स-शङ्खचक्रगजाश्वच्छत्रादिप्रमुखाणि तारिकृता चिह्नानि तेषा धर =धारक —तीर्थङ्करतासूचक स्वस्तिकाद्यष्टोत्तरसहस्रलक्षणयुक्त , गौतम =गौतमगोत्रोत्पन्न , कालकच्छवि'=श्यामकान्ति सुशोभित , तु=पुन.—वज्रऋषभनाराचसहननः—वज्र=कीलकाकारमस्थि, ऋषभ =पट्टाकृतिकोऽस्थिविशेषः, नाराचम्=उभयतो मर्कट बन्ध', एभिः सहनन=शरीररचना यस्य स तथा, वज्रऋषभनाराचसहननावानि

सूत्रकार भगवान के रूप आदि का वर्णन करते हुए कहते हे—'सोरिट्ठ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(अरिट्ठनेमि नामो सो-अरिष्टनेमिनामा स) अरिष्ट नेमि नामवाले वे भगवान (लक्खणस्सरसजुओ—लक्षणस्वरसयुत') माधुर्य गाभीर्य आदि लक्षणों से समन्वित स्वर वाले थे। (अट्ठसहस्स लक्खणधरो—अष्टसहस्रलक्षणधर.) हस्तपाद आदिकों में स्वस्तिक, वृषभ सिंह, श्रीवत्स, शख, चक्र, गज, अश्व, छत्र, समुद्र आदि शुभ सूचक एक हजार आठ १००८ लक्षणों को धारण किये हुए थे। (गोयमो-गौतमः) गौतमगोत्र मे उत्पन्न हुए थे। (काल गच्छवी—कालकच्छवि') कान्ति इनकी श्याम थी। (वज्जरिसहसघयणो—वज्रऋषभसहनन) वज्र-ऋषभनाराच सहनन वाले थे। कीलक के आकारवाली हड्डि का नाम वज्र है, पट्टाकार हड्डी का नाम ऋषभ है। उभयत मर्कटबध का नाम नाराच है। इनसे जो शरीर की रचना होती है उसका नाम वज्रऋ-

સૂત્રકાર ભગવાનના રૂપ આદિનું વર્ણન કરતા કહે છે કે, "सोरिट्ठ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अरिट्ठनेमिनामो सो—अरिष्टनेमिनामा स અરિષ્ટનેમિ નામવાળા તે ભગવાન માધુર્ય ગાંભીર્ય આદિ લક્ષણોયુક્ત સ્વરવાળા હતા अट्ठसहस्सलक्खणधरो —अष्टसहस्रलक्षणधर હાથ પગમાં સાથિયા, વૃષભ, સિંહ, શ્રીવત્સ, શંખ, ચક્ર, ગજ, અશ્વ, છત્ર, સમુદ્ર, વગેરે શુભસૂચક એક હજાર આઠ ૧૦૦૮ લક્ષણોને ધારણ કરેલ હતા गोयमो—गौतम. ગૌતમ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થયા હતા कालगच्छवी—काल क-च्छवि તેમની કાન્તી શ્યામ હતી वज्जरिसहसघयणो—वज्रऋषभसहनन વજ્રઋષભ, નારાચ, સંહનનવાળા હતા ખીલા આકારના હાડકાનું નામ વજ્ર છે પટ્ટાકાર હાડકાનું નામ ઋષભ છે ઉભયત મર્કટબંધનું નામ નારાચ છે તેનાથી શરીરની જે

जात्यस्वर्णमयीं लङ्काशङ्काविधायिनी द्वारकापुरीं नाम पुरीं निरमापयत्। तां रामकृष्णाद्याः सर्वेऽपि यदुवंशजाः सुखेन न्यवसन्। अगण कृष्ण प्रतिवासुदेव जरासन्धं हत्वा भरतार्द्धं साधयित्वा त्रिखण्डराज्यं बुभुजे। भगवानरिष्ट नेमिस्तु यथा सुखं क्रीडन् समतिगततारुण्योऽपि भोगपराङ्मुख एव तस्थौ।

सम्प्रति सूत्रकारः सार्धगाथया भगवतो रूपादिकं वर्णयति—

मूलम्—सोऽरिट्ठनेमिं नामो उँ लक्खणस्सरसजुओ।
अट्ठसहस्सलक्खणधरो, गोयमो कालगच्छंवी ॥५॥
वज्जरिसहसघयणो, समचउरसो झसोयरो।
तस्स राईमइं कण्णं, भज्जं जायइ केसवो ॥६॥

छाया—सोऽरिष्टनेमिनामा तु, लक्षणस्वरसयुतः।
अष्टसहस्रलक्षणधरः, गौतमः कालकच्छविः ॥५॥
वज्रऋषभसंहननः, समचतुरस्रः झषोदरः।
तस्मै राजीमतीं कन्यां, भार्यां याचते केशवः ॥६॥

श्रीकृष्णने वैश्रवणदेव की आराधना करके उसकी सहायता से बारह योजन लंबी तथा नवयोजन चौडी एक पुरी की रचना करवाई। इसका नाम द्वारका रक्खा गया। जात्यस्वर्णमयी होने से यह देखने वालों के लिये लंका की शंका उत्पन्न कर देती थी। इसमें बलदेव एवं कृष्ण आदि यादवगण निर्भय होकर रहने लगे। यहीं से कृष्णने प्रतिवासुदेव जरासन्ध को मारने की योजना तैयार की। जरासन्ध को मारकर कृष्णने भरतक्षेत्र के तीनखंडो पर अपना राज्य स्थापित किया। भगवान् अरिष्ट नेमि जो कि तरुणवय में थे वे आनंदपूर्वक अपना समय व्यतीत करते हुए भी भोगों से पराङ्मुख बन रहे थे ॥४॥

આરાધના કરીને એમની સહાયતાથી બાર યોજન લાંબીઅને નવ નવયોજન પહોળી એક પુરીની રચના કરાવી અને તેનું નામ દ્વારકા રાખમાં આવ્યું દ્વારકાપુરી જાત્યસ્વર્ણમયી હોવાના કારણે એ જોવાવાળાને લંકાની શંકા ઉત્પન્ન કરી દેતી હતી એમાં બલદેવ અને કૃષ્ણ આદિ યાદવગણ નિર્ભય થઈને રહેવા લાગ્યા અહીંથી કૃષ્ણે પ્રતિ વાસુદેવ જરાસંધને મારવાની યોજના તૈયાર કરી જરાસંધને મારી કૃષ્ણે ભરત ક્ષેત્રના ત્રણુ ખંડો ઉપર પોતાનું રાજ્ય સ્થાપિત કર્યું ભગવાન અરિષ્ટનેમિ જે તરુણ વયવાળા હતા તેઓ આનંદપૂર્વક સમય વ્યતીત કરતા હતા છતાં તેઓ ભોગોથી પરાङ્મુખ બની રહેલ હતા ॥૪॥

टीका—'सोऽरिट्ठनेमि नामो' इत्यादि—

अरिष्टनेमि नामा स भगवान् लक्षणस्वरसंयुतः-तत्र लक्षणानि=औदार्य-गाम्भीर्यादीनि तैः सहितो यः स्वरः = ध्वनिस्तेन संयुतो=युक्तः-माधुर्यादिगुणसंपन्न स्वरवान्, तथा-अष्टसहस्र लक्षणधरः-अष्टाधिकं सहस्रम्-अष्टसहस्रम्, तत्संख्य-कानि यानि शुभसूचकानि लक्षणानि-हस्तपादादौ स्वस्तिकवृषभसिंहश्रीवत्स शङ्खचक्रगजाश्वच्छत्राब्धिप्रमुखाणि तीर्थकृतां चिह्नानि तेषां धरः=धारकः-तीर्थङ्करतासूचकस्वस्तिकाद्यष्टोत्तरसहस्रलक्षणयुक्तः, गौतमः=गौतमगोत्रोत्पन्नः, कालकच्छविः=श्यामकान्ति सुशोभित, तु=पुनः-वज्रऋषभनाराचसंहनन-वज्र= कीलकाकारमस्थि, ऋषभ=पट्टाकृतिकोऽस्थिविशेषः, नाराचम्=उभयतो मर्कट बन्ध, एभिः संहनन=शरीररचना यस्य स तथा, वज्रऋषभनाराचसंहननावानि

सूत्रकार भगवान के रूप आदि का वर्णन करते हुए कहते हैं- 'सोरिट्ठ' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(अरिट्ठनेमि नामो सो-अरिष्टनेमिनामा स) अरिष्ट नेमि नामवाले वे भगवान (लक्खणस्सरसंजुओ-लक्षणस्वरसंयुतः) माधुर्य गांभीर्य आदि लक्षणों से समन्वित स्वर वाले थे। (अट्ठसहस्स लक्खणधरो-अष्टसहस्रलक्षणधरः) हस्तपाद आदिकों में स्वस्तिक, वृषभ सिंह, श्रीवत्स, शंख, चक्र, गज, अश्व, छत्र, समुद्र आदि शुभ सूचक एक हजार आठ १००८ लक्षणों को धारण किये हुए थे। (गोयमो-गौतमः) गौतमगोत्र मे उत्पन्न हुए थे। (काल गच्छवी-कालकच्छविः) कान्ति इनकी श्याम थी। (वज्जरिसहसंघयणो-वज्रऋषभसंहननः) वज्र-ऋषभनाराच संहनन वाले थे। कीलक के आकारवाली हड्डि का नाम वज्र है, पट्टाकार हड्डी का नाम ऋषभ है। उभयत मर्कटबंध का नाम नाराच है। इनसे जो शरीर की रचना होती है उसका नाम वज्रऋ-

સૂત્રકાર ભગવાનના રૂપ આદિનું વર્ણન કરતા કહે છે કે, "सोरिट्ठ" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—अरिट्ठनेमिनामो सो-अरिष्टनेमिनामा स અરિષ્ટનેમિ નામવાળા તે ભગવાન માધુર્ય ગાંભીર્ય આદિ લક્ષણોયુક્ત સ્વરવાળા હતા अट्ठसहस्सलक्खणधरो-अष्टसहस्रलक्षणधरः હાથ પગમાં સાથિયા, વૃષભ, સિંહ, શ્રીવત્સ, શંખ, ચક્ર, ગજ, અશ્વ, છત્ર, સમુદ્ર, વગેરે શુભસૂચક એક હજાર આઠ ૧૦૦૮ લક્ષણોને ધારણ કરેલ હતા गोयमो-गौतमः ગૌતમ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થયા હતા कालगच्छवी-कालकच्छविः તેમની કાન્તી શ્યામ હતી वज्जरिसहसंघयणो-वज्रऋषभसंहननः વજ્રઋષભ, નારાચ, સંહનનવાળા હતા ખીલા આકારના હાડકાનું નામ વજ્ર છે પટ્ટાકાર હાડકાનું નામ ઋષભ છે ઉભયત મર્કટબંધનું નામ નારાચ છે તેનાથી શરીરની જે

त्यर्थः, समचतुरस्र=समचतचतुरस्र च समचतुरस्र तदस्यास्तीति समचतुरस्र=समचतुरस्रसंस्थानवानित्यर्थ । तथा-झषोदरः=झषस्य-मत्स्यस्य उदरमिव उदर यस्य स तथा, यथा मत्स्यस्योदर सम कोमल च भवति तथैव समकोमलोदरवान् भगवानासीत् । तस्मै भगवतेऽरिष्टनेमये भार्या=भार्यात्वेनेत्यर्थ राजीमतीं नाम कन्या केशवः=कृष्णो याचते=उग्रसेनाद् याचितवानितिभावः ॥ ६ ॥

सा च कीदृशी ? इत्याह—

मूलम्--अहे सा रायवरकण्णा, सुसीला चारुपेहिणी ।
सव्वलक्खणसपन्ना, विज्जुसोयामणिप्पभा ॥७॥

छाया--अथ सा राजवरकन्या, सुशीला चारुप्रेक्षिणी ।
सर्वलक्षणसपन्ना, विद्युत् सौदामिनी प्रभा ॥७॥

टीका—'अहसा' इत्यादि—

अथ सा राजवरकन्या=राज्ञा मध्ये वरस्य=श्रेष्ठस्य उग्रसेनस्य कन्या=पुत्री राजीमती सुशीला=शोभनाचारयुक्ता चारुप्रेक्षिणी-चारु=सुष्ठु प्रेक्षितु शील यस्या

षभनाराच सहनन है। प्रभु का सहनन यही वज्रऋषभनाराच था। तथा (समचउरसो-समचतुरस्र') संस्थान समचतुस्र था। (झसोयरो-झषोदरः) उदर उनका मछली के उदर समान अति कोमल था। इन प्रभु के लिये (केसवो-केशव') कृष्णने (राइमइ कण्ण भज्ज जाएइ-राजीमती कन्या भार्या याचते) इनकी भार्या होने के लिये राजीमती कन्या की उग्रसेन से याचना की ॥५॥६॥

वह राजीमती कैसी थी सो सूत्रकार उसका वर्णन करते हैं- 'अहसा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(सा रायवरकण्णा-सा राजवरकन्या) वह राजाओं मे श्रेष्ठ उग्रसेन की कन्या (सुसीला-सुशीला) सुन्दर आचारवाली थीं

રચના થાય છે તેનુ નામ વજ્રઋષભ નારાચ સહનન છે પ્રભુનુ સહનન આ વજ્ર ઋષભ નારાચ હતુ તથા समचउरसो-समचतुरस्र સસ્થાન સમચતુરસ્ર હતુ झसोयरो-झषोदरः તેનુ પેટ માછલીના પેટની જેમ અતિ કોમળ હતુ આ પ્રભુના વિવાહ માટે केसवो-केशवः કૃષ્ણે ઉગ્રસેન પાસે राइमइ कण्ण भज्ज जाएइ-राजीमती कन्या याचते તેની રાજીમતી કન્યાની માગણી કરી ॥૫॥૬॥

તે રાજીમતી કેવી હતી તેનુ વર્ણન કરતા સૂત્રકાર કહે છે-"अहसा" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—सा रायवरकण्णा-सा राजवरकन्या રાજાઓમા શ્રેષ્ઠ એવા એ ઉગ્રસેન રાજાની કન્યા, सुसीला-सुशीला સુદર આચારવાળી હતી चारु पेहिणी-

सा तथा, शोभननेत्रवतीत्यर्थः, तथा-सर्वलक्षणसम्पन्ना तथा-विद्युत् सौदामिनी प्रभा-विशेषेण द्योतते प्रकाशते इति विद्युत=विशेषेण प्रकाशमानेत्यर्थ, सा चासौ सौदामिनी=विद्युल्लताः तस्याः प्रभा=कान्तिरिव प्रभा यस्याः सा तथा विद्युत्प्रभावद्रूपलावण्यसम्पन्नाचासीत । 'अथ' शब्दो वाक्योपन्यासार्थकः ॥७॥

केशवो यथाऽरिष्टनेम्यर्थे राजीमतीमयाचत, तथोच्यते—

यथान्यदा भगवानरिष्टनेमिः क्रीडन कृष्णस्य शस्त्रशालां गतः । तत्र कृष्णस्य शार्ङ्गं धनुर्गृह्णन्तं भगवन्तं प्रति शस्त्रशालारक्षकः प्रवक्ति-महाभाग ! कमठपृष्ठकठोरमिदं धनुरधिज्यं कर्तुं विष्णुं विना न कोऽपि समर्थः । अतोऽस्य धनुषोऽधिज्यीकरणाग्रहं विमुञ्च । नास्ति तव शक्तिरस्य धनुषः प्रत्यञ्चामुत्

(चारु पेहिणी-चारुप्रेक्षिणी) सुन्दर नेत्रवाली थी (सव्व लक्खणसपन्ना सर्वलक्षणसपन्ना) स्त्रियों के समस्त उचित लक्षणों से युक्त थी एव (विज्जुसोया मणिप्पभा-विद्युत्-सौदामिनीप्रभा) विशेष रूप से चमकने वाली बिजली के समान प्रभावाली थी ॥७॥

केशवने अरिष्ट नेमि के लिये राजीमती की याचना जिसरूप से की थी वह यहा कथारूप से कही जाती है-

एक दिन की बात है भगवान् अरिष्टनेमि क्रीडा करते हुए कृष्ण की शस्त्रशाला मे जा पहुँचे। वहा उन्होंने कृष्ण के शार्ङ्ग धनुष को ज्यों ही अपने हाथ से उठाया कि इतने में उस शस्त्रशाला के रक्षक ने उनसे कहा महाभाग ! इस धनुष को जो कि कमठ-कच्छप की पृष्ठ की अस्थि (हड्डि) के समान कठोर है कृष्ण के सिवाय और कोई नहीं चढा सकता है। अत आप इसको चढाने का आग्रह न करे। क्यो कि

ચારુ પેક્ષિણી સુંદર નેત્રવાળી હતી, સવ્વલક્ખણસપન્ના-સર્વલક્ષણસપન્ના સ્ત્રિયોના સઘળા ઉત્તમ લક્ષણોથી યુક્ત હતી અને વિજ્જુસોયામણિપ્પભા-વિદ્યુત્ સૌદામિની પ્રભા વિશેષ રૂપથી ચમકવાવાળી વિજળીની માફક સમાન પ્રભાવાળી હતી ॥૭॥

કેશવે અરિષ્ટનેમિના માટે રાજીમતિની યાચના જે રૂપથી કરેલ હતી તે અહીંયા કથારૂપે કહેવામા આવે છે—

એક દિવસની વાત છે કે, ભગવાન અરિષ્ટનેમી રમતા રમતા કૃષ્ણની શસ્ત્ર શાળામાં જઈ પહોચ્યા ત્યા તેમણે કૃષ્ણના શાર્ઙ્ગધનુષ્યને પોતાના હાથથી જ્યારે ઉઠાવ્યુ ત્યારે એ સમયે શસ્ત્રશાળાના રક્ષકે એમને કહ્યુ-મહાભાગ ! આ ધનુષ્ય કે જે કાચબાની પીઠના અસ્થિના જેવુ કઠોર છે જેને કૃષ્ણના સિવાય કોઈ ચડાવી શકતુ નથી આથી આપ એને ચઢાવવાનો આગ્રહ ન કરો. કેમકે, આપનામા એટલી શક્તિ

त्यर्थः, समचतुरस्र'=समानतचतुरस्र च समचतुरस्र तदस्यास्तीति समचतुरस्रः= समचतुरस्रसस्थानवानित्यर्थ । तथा-झषोदरः=झषस्य-मत्स्यस्य उदरमिव उदर यस्य स तथा, यथा मत्स्यस्योदर सम कोमल च भवति तथैव समकोमलोदरवान् भगवानासीत् । तस्मै भगवतेऽरिष्टनेमये भार्या=भार्यात्वेनेत्यर्थ राजीमतीं नाम कन्या केशवः=कृष्णो याचते=उग्रसेनाद् याचितवानितिभावः ॥ ६ ॥

सा च कीदृशी ? इत्याह—

मूलम्--अह सा रायवरकण्णा, सुसीला चारुपेहिणी ।
सव्वलक्खणसंपन्ना, विज्जुसोयामणिप्पभा ॥७॥

छाया--अथ सा राजवरकन्या, सुशीला चारुप्रेक्षिणी ।
सर्वलक्षणसपन्ना, विद्युत् सौदामिनी प्रभा ॥७॥

टीका—'अहसा' इत्यादि—

अथ सा राजवरकन्या=राज्ञा मध्ये वरस्य=श्रेष्ठस्य उग्रसेनस्य कन्या=पुत्री राजीमती सुशीला=शोभनाचारयुक्ता चारुपेक्षिणी—चारु=सुष्ठु प्रेक्षितु शील यस्या.

षभनाराच सहनन है। प्रभु का सहनन यही वज्रऋषभनाराच था। तथा (समचउरसो-समचतुरस्रः) सस्थान समचतुस्र था। (झसोयरो-झषोदरः) उदर उनका मछली के उदर समान अति कोमल था। इन प्रभु के लिये (केसवो-केशवः) कृष्णने (राइमइ कण्ण भज्ज जाएइ-राजीमती कन्या भार्या याचते) इनकी भार्या होने के लिये राजीमती कन्या की उग्रसेन से याचना की ॥५॥६॥

वह राजीमती कैसी थी सो सूत्रकार उसका वर्णन करते हैं- 'अहसा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(सा रायवरकण्णा-सा राजवरकन्या) वह राजाओं मे श्रेष्ठ उग्रसेन की कन्या (सुसीला-सुशीला) सुन्दर आचारवाली थी

રચના થાય છે તેનુ નામ વજ્રઋષભ નારાચ સહનન છે પ્રભુનુ સહનન આ વજ્ર ઋષભ નારાચ હતુ તથા समचउरसो-समचतुरस्र સસ્થાન સમચતુરસ્ર હતુ झसोयरो-झषोदरः તેનુ પેટ માછલીના પેટની જેમ અતિ કોમળ હતુ આ પ્રભુના વિવાહ માટે केसवो-केशवः કૃષ્ણે ઉગ્રસેન પાસે राइमइ कण्ण भज्ज जाएइ-राजीमती कन्या याचते તેની રાજીમતી કન્યાની માગણી કરી ॥૫॥૬॥

તે રાજીમતી કેવી હતી તેનુ વર્ણન કરતા સૂત્રકાર કહે છે-"अहसा" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—सा रायवरकण्णा-सा राजवरकन्या રાજાઓમા શ્રેષ્ઠ એવા એ ઉગ્રસેન રાજાની કન્યા, सुसीला-सुशीला સુદર આચારવાળી હતી चारु पेहिणी-

भगवता ध्माते तस्मिन् शङ्खे तद्ध्वनिना विश्वं बधिरीकृतम्, पर्वताः प्रकम्पिताः, अचला अपि चलिताः सागराः सीमानमतिक्रामिताः, धीरा अप्यधीरिताः वीरा अपि भयजनितमूर्च्छया भूमौ पातिताः। किमधिकम्? तस्य शङ्खस्य ध्वनिना त्रिदशा अपि त्रासिताः। श्रीकृष्णोऽपि सिंहनादेन गज इव तेन ध्वनिना नितरां क्षुभितो जातः। ततः स इत्थं चिन्तितवान्–अहो! केन महौजसा शङ्खो ध्मातः। मया ध्माते शङ्खे सामान्यभूभृतां क्षोभो भवति। परमनेन शङ्खध्वनिना ममापि क्षोभो जायते। मन्ये शक्रो वा चक्रवर्ती वाऽन्यः कश्चिद् विष्णुर्वा समागतः। तत्कथं मयेदं राज्यं रक्षणीयम्। इत्येवं यावत्स विचारयति, तावदायुधशालारक्षकाः

बैठा हो। भगवानने जब उसको पूरा तो उसकी ध्वनि से समस्त विश्व बधिर जैसा बन गया। पर्वत प्रकंपित हो उठे, अचल (पर्वत) चलायमान होने लगे। समुद्रोंने अपनी २ सीमा को छोड दी, धीर भी अधीरित हो गये, तथा वीर भी भयजनित मूर्च्छा से भूमि पर गिर पडे। ज्यादा और क्या कहा जाय उस शंख की ध्वनि से देव भी त्रस्त हो उठे। श्रीकृष्णने जब इसकी ध्वनि सुनी तो वे भी सिंहनाद से गज की तरह उस शंख की ध्वनि से अत्यंत क्षुभित बन गये। उन्होंने विचार किया–अरे! यह शंख किस बलिष्ठने बजाया है। मैं जब इस शंख को बजाता हूं तो सामान्य राजाओं को क्षोभ होता है परंतु आज इसकी ध्वनि से तो मुझे भी क्षोभ हो रहा है। मालूम पडता है आज या तो कोई इन्द्र आया है या कोई चक्रवर्ती आया है या कोई दूसरा विष्णु आया है। अब मेरे राज्यकी रक्षा होना बडी मुश्किल है। वे जब इस प्रकार विचार कर रहे थे कि इतने मे

અવાજથી સારૂએ વિશ્વ બહેરા જેવું બની ગયું પર્વત કંપાયમાન થયા, અચળ ચલાયમાન બન્યા, સમુદ્રોએ પોતપોતાની સીમા છોડી દીધી ધીર પણ અધીરતાવાળા થઈ ગયા વીરો પણ ભયજનિત મૂર્છાથી જમીન ઉપર પડી ગયા વધારે તો શું કહેવું તે શંખના પ્રભાવથી દેવ પણ ત્રાસી ઉઠયા શ્રી કૃષ્ણે જ્યારે તેનો અવાજ સાંભળ્યો ત્યારે તે પણ સિંહનાદથી ગજની માફક તે શંખના ધ્વનીથી અત્યંત ક્ષોભિત બની ગયા તેમણે વિચાર કર્યો કે, અરે! આ શંખ કયા બળવાને વગાડયો છે? હું જ્યારે આ શંખને વગાડું છું ત્યારે સામાન્ય રાજાઓને ક્ષોભ થાય છે પરંતુ આજે તો તેના અવાજથી મને પણ ક્ષોભ થઈ રહેલ છે જણાય છે કે, આજ તો કોઈ ઇન્દ્ર આવેલ લાગે છે, અથવા તો કોઈ ચક્રવર્તી આવેલ જણાય છે, અથવા તો કોઈ બીજા વિષ્ણુ આવેલ લાગે છે હવે તો મારા રાજ્યની રક્ષા કરવી ખૂબ મુશ્કેલ પડશે તેઓ જ્યારે આવા પ્રકારનો વિચાર કરી રહેલ હતા એટલામાં આયુધશાળાના

मयितुम्। शस्त्रशालारक्षकस्य एवं वचनं निशम्य सस्मितो भगवानरिष्टनेमिरिस्तद्धनुः सत्वरमादाय वेत्रवन्नमयित्वा लीलयैवाधिज्यमकरोत्। इन्द्रधनुस्तुल्येन तेन धनुषा नीरद इव शोभितो भगवानरिष्टनेमिष्टङ्कारध्वनिभिर्विश्वं विश्वमपूरयत्। ततो धनुस्त्यक्त्वा धर्मचक्री भास्करभास्वरं चक्रं गृहीत्वाऽङ्गुल्याऽभ्रामयत्। ततस्तत्परित्यज्य लीलयैव यष्टिमिव कौमोदकीं गदामुत्थापितवान्, यद्ग्रहणे विष्णुरप्यायासवान् भवति। गदां भ्रमयित्वा विभुः पाञ्चजन्यं शङ्खं गृहीतवान्। स शङ्खो भगवता स्वमुखे संयोजितो विकसन्नीलारविन्दस्थराजहंस इव शुशुभे।

आप मे तो इतनी भी शक्ति नहीं है जो आप इसकी प्रत्यञ्चा (पणच) तक को भी झुका सकें। अरिष्टनेमिने जब शस्त्रशाला रक्षक के इस प्रकार वचन सुने तो उनको बडा अचरज हुआ। उन्होंने उसी समय उस कठोर धनुष को उठाकर देखते २ ही वेत्र की तरह नमा दिया और चढा दिया। उस इन्द्रधनुष के तुल्य धनुष से मेघ की तरह प्रतीत होनेवाले प्रभुने टंकार की ध्वनी से समग्र विश्व को पूरितकर दिया। इसके बाद उन धर्मचक्री प्रभुने प्रभामण्डल से परिपूरित चक्र को उठाकर उसको अपनी अगुली से घुमाया, बाद मे उसको छोडकर कौतुकवश उन्होंने यष्टि के समान कौमुदी गदा को भी विना किसी आयास के उठा लिया कि जिसके उठाने मे त्रिखण्डाधिपति विष्णु को भी परिश्रम पडता था। प्रभुने गदाको घुमाकर बाद में पाचजन्य शख को बजाने के लिये उठा लिया। जब उसको वे बजाने लगे तो प्रभु के मुख पर लगा हुआ वह शख ऐसा मालूम देता था जैसे विकसित नीलकमल पर राजहस

નથી કે જેથી આપ એની પ્રત્યચાને પણ ઝુકાવી શકો। અરિષ્ટનેમિએ શસ્ત્રશાળાના રક્ષકના આ પ્રકારના વચન જ્યારે સાભળ્યા ત્યારે તેમને ભારે અચરજ થઈ એમણે એજ વખતે એ કઠોર ધનુષ્યને ઉપાડીને જોતજોતામા જ વેત્રની માફક નમાવી દીધુ, અને ચડાવી દીધુ એ ઇન્દ્ર ધનુષના તુલ્ય ધનુષથી મેઘની માફક પ્રતીત થઇ રહેલા પ્રભુએ ટકારની ધ્વનીથી સઘળા વિશ્વને પૂરિત કરી દીધુ, એના પછી એ ધર્મ ચક્રી પ્રભુએ પ્રભા મ ડળથી શોભાયમાન એવા ચક્રને ઉઠાવીને તેને પોતાની આગળી ઉપર ઘૂમાવ્યુ તે પછી તેને છોડીને કૌતુકવશ તેઓએ લાકડીની માફક કૌમુદી ગદાને પણ કોઈ પણ પ્રકારની મહેનત વગર ઉપાડી લીધી કે જેને ઉપાડવામા ત્રણ ખ ડના અધિપતિ વિષ્ણુને પણ પરિશ્રમ પડતો હતો પ્રભુએ ગદાને ઘૂમાવીને પછીથી પાચ જન્ય શ ખને વગાડવા માટે ઉપડયો જ્યારે તે તેને વગાડવા લાગ્યા ત્યારે પ્રભુના મોઢા ઉપર લાગેલો તે શ ખ જાણે એવો દેખાતો હતો કે, વિકસિત નીલ કમળ ઉપર રાજહ સ બેઠેલ હોય ભગવાને જ્યારે તેને વગાડયો ત્યારે તેના

एकदा भगवानरिष्टनेमिरुद्याने गतः। तस्मिन्नेव समये कृष्णोऽपि तत्र गतः। तत्र कृष्णोऽरिष्टनेमिमेवमुक्तवान् भ्रातः! एहि शौर्य परीक्षितुमावां युद्धं कुर्वहे। ततो भगवानरिष्टनेमिर्वासुदेवमेवमुवाच-बलपरीक्षणं तु बाहुयुद्धेनापि भवितु शक्नोति, अतः साधारणजनोचितं युद्धं नावयो युज्यते। कृष्णेनारिष्टनेमिवचनं स्वीकृत्य भरतार्द्धजयश्रीसद्मभूतः परिघतुल्यः स्वबाहुः प्रसारितः। ततो भगवानरिष्टनेमिः कृष्णस्य बाहुं बाहुमदेन सह नमयामास। अथ भगवानरिष्टनेमिः वज्रदण्डवदृढं स्वभुजदण्डं प्रसारयामास। ततः कृष्णस्तस्य बाहुं नमयितुं सर्वं स्वसामर्थ्यं प्रादर्शयत्। परन्तु भगवतो बाहुः किंचिदपि नो

संदेह नहीं करनो चाहिये। इस प्रकार बलभद्र के कहने पर भी श्रीकृष्ण अपनी हृदयगत शंका को दूर करने में समर्थ नही हो सके।

एक दिन की बात है कि भगवान् उद्यान मे गये। वहां उसी समय कृष्ण भी आ पहुँचे। आते ही कृष्णने नेमिप्रभु से कहा-भाई! आओ शौर्य के परीक्षण के लिये हमदोनों युद्ध करे। कृष्ण की इस बात को सुनकर प्रभुने कहा-युद्ध करने की क्या आवश्यकता है-बल का परीक्षण तो बाहुयुद्ध से भी हो सकता है। अतः साधारण जनोचित युद्ध करने मे हमारी तुम्हारी शोभा नहीं है। प्रभु के इन वचनों को सन्मान देकर कृष्णने आधे भरत की जयश्री के एक गृह स्वरूप अपने बाहु को जो परिघा के समान थी फैला दिया। प्रभुने उनके इस बाहु को बाहुमद के साथ २ नमा दिया। अब प्रभुने अपने बाहु को जो वज्रदंड के समान दृढ था पसारा। कृष्णने इसको नमाने की खूब

ન કરવો જોઈએ આ પ્રકારના બળભદ્રના કહેવા છતાં પણ શ્રી કૃષ્ણ પોતાની હૃદયની શંકાને દૂર કરવામાં સમર્થ ન થઈ શક્યા,

એક દિવસની વાત છે કે, ભગવાન બગીચામાં ગયા, ત્યાં એ વખતે કૃષ્ણ પણ આવી પહોંચ્યા આવતાં જ કૃષ્ણે નેમિ પ્રભુને કહ્યું-ભાઈ આવો શૌર્યની પરીક્ષા કરવા માટે આપણા બન્ને યુદ્ધ કરીએ કૃષ્ણની આ વાતને સાંભળીને પ્રભુએ કહ્યુ-યુદ્ધ કરવાની શું આવશ્યકતા છે? બળની પરીક્ષા તો બાહુયુદ્ધથી થઈ શકે છે આથી સાધારણ માણસોના જેવું યુદ્ધ કરવામાં અમારી તમારી શોભા નથી પ્રભુના આ વચનોને સન્માન આપીને કૃષ્ણે અર્ધા ભરતની જયશ્રીના એક ગૃહ સ્વરૂપ પોતાના હાથને કે જે પરિઘા સમાન હતો તેને ફેલાવી દીધો પ્રભુએ તેમના એ હાથને પોતાના હાથના જોરથી નમાવી દીધો. હવે પ્રભુએ પોતાનો હાથ કે જે વજ્ર દંડની માફક દૃઢ હતો તેને લાંબો કર્યો કૃષ્ણે તેને નમાવવાની ખૂબ ખૂબ કોશિશ કરી પોતાનામાં

समागत्य सर्वं वृत्तं निवेदितवन्तः। ततः शङ्कातङ्काकुलः श्रीकृष्णो बलदेवमेवमुक्तवान् यस्यैवंविधक्रीडया जगत्त्रयमपि क्षोभो भवति, स नेमिर्यद्यावयो राज्यं गृह्णीयात्तदा कस्तं निषेद्धुं समर्थो भवेत्? श्रीकृष्णस्यैवं वचनं निशम्य बलभद्रः प्राह-अरिष्टनेमिविषये त्वेवंविधः सन्देहो निर्मूल एव। यतोऽयमस्मद्भ्राता यदुवंशाब्धिचन्द्रोऽरिष्टनेमिरभुक्तराज्यलक्ष्मीकोऽपरिणीत एव प्रव्रज्यां प्रतिपद्य द्वाविंशतितमोऽर्हन् भविष्यति। यो हि समुद्रविजयादिभिर्बहुशः प्रार्थ्यमानोऽपि न वाञ्छति विवाहं, स एवंविधो महापुरुषः नेमिः कथमस्माकं राज्यं गृह्णीयात्। अतस्त्वया नेमिविषये न कोऽपि सन्देहः कार्यः। बलभद्रेणैवमुक्तोऽपि वासुदेवो हृद्गता नेमिविषया शङ्का त्यक्तुं प्रभुर्नाभूत्।

उस आयुधशाला के रक्षकजनोंने आकर उनसे सब वृत्तान्त कहा। सुनकर शंका रूप आतंक से आकुलित होकर कृष्णने बलदेव से इस प्रकार कहा-देखो जिसकी इस प्रकार की क्रीडा से जगत्त्रय में भी क्षोभ मच जाता है ऐसा वे नेमि यदि हमारे तुम्हारे राज्य को ले लेवें तो उनको कौन निषेध करने में समर्थ हो सकता है। श्रीकृष्ण के इस प्रकार वचन सुनकर बलभद्रने उनसे कहा-भाई! नेमिनाथ के विषय मे इस प्रकार का सन्देह करना बिलकुल निर्मूल है। कारण कि ये बाईसवें तीर्थंकर हैं और हमारे भाई हैं। तथा यादववंशरूपी समुद्र के ये चद्रमा हैं। ये तो विना राज्यभोगे ही तथा विना विवाह किये ही दीक्षा धारण करेंगे। भला सोचने की बात है कि जो समुद्र विजय आदि द्वारा बहुत २ प्रार्थित होने पर भी विवाह नहीं करना चाहते हैं ऐसे महापुरुष नेमिनाथ हमारे राज्य को छीन लेंगे यह सर्वथा असंभव है। अतः तुमको नेमिनाथ के विषय में किसी भी प्रकार का

રક્ષકોએ તેમની સમક્ષ આવીને સઘળો વૃત્તાંત કહી સંભળાવ્યો. સાંભળીને શંકિત મનથી વ્યાકુળ થઈને કૃષ્ણે બળદેવને આ પ્રમાણે કહ્યું-જુઓ. જેની આ પ્રકારની ક્રીડાથી ત્રણે જગતમાં ક્ષોભ મચી રહેલ છે એવો તે નેમિ જો મારા અને તમારા રાજ્યને લઈ લે તો તેને અટકાવવામાં કોણ સમર્થ છે? શ્રી કૃષ્ણના આ પ્રકારના વચનોને સાંભળીને બળભદ્રે તેને કહ્યું-ભાઈ! નેમિનાથના વિષયમાં આવા પ્રકારનો સંદેહ કરવો તે બિલકુલ ઉચિત નથી કારણકે તે બાવીસમા તીર્થંકર છે અને આપણા ભાઈ છે તથા યાદવ વંશરૂપી સમુદ્રના એ ચંદ્રમા છે એ તો રાજ્યને ભોગવ્યા સિવાય તેમજ વિવાહ પણ કર્યા સિવાય દીક્ષા ધારણ કરશે એ વિચારવાની વાત છે કે, સમુદ્રવિજય આદિ દ્વારા ખૂબ ખૂબ સમજાવવા છતાં પણ તેઓ વિવાહ કરવો ઇચ્છતા નથી તેવા મહાપુરુષ નેમિનાથ આપણા રાજ્યને છીનવી લ્યે તે સાવ અસંભવ વાત છે આથી તમારે નેમિનાથના વિષયમાં કોઈ પણ પ્રકારનો સંદેહ

एकदा भगवानरिष्टनेमिरुद्याने गतः। तस्मिन्नेव समये कृष्णोऽपि तत्र गतः। तत्र कृष्णोऽरिष्टनेमिमेवमुक्तवान् भ्रातः! एहि शौर्यं परीक्षितुमावां युद्धं कुर्वहे। ततो भगवानरिष्टनेमिर्वासुदेवमेवमुवाच—बलपरीक्षणं तु बाहुयुद्धेनापि भवितुं शक्नोति, अतः साधारणजनोचितं युद्धं नावयोर्युज्यते। कृष्णेनारिष्टनेमिवचनं स्वीकृत्य भरतार्द्धजयश्रीसद्मभूतः परिघतुल्यः स्वबाहुः प्रसारितः। ततो भगवानरिष्टनेमिः कृष्णस्य बाहुं बाहुमदेन सह नमयामास। अथ भगवानरिष्टनेमिः वज्रदण्डवद्दृढं स्वभुजदण्डं प्रसारयामास। ततः कृष्णस्तस्य बाहुं नमयितुं सर्वं स्वसामर्थ्यं प्रादर्शयत्। परन्तु भगवतो बाहुः किञ्चिदपि नो

संदेह नहीं करना चाहिये। इस प्रकार बलभद्र के कहने पर भी श्रीकृष्ण अपनी हृदयगत शंका को दूर करने में समर्थ नहीं हो सके।

एक दिन की बात है कि भगवान् उद्यान में गये। वहां उसी-समय कृष्ण भी आपहुँचे। आते ही कृष्णने नेमिप्रभु से कहा—भाई! आओ शौर्य के परीक्षण के लिये हमदोनों युद्ध करें। कृष्ण की इस बात को सुनकर प्रभुने कहा—युद्ध करने की क्या आवश्यकता है-बल का परीक्षण तो बाहुयुद्ध से भी हो सकता है। अतः साधारण जनोचित युद्ध करने में हमारी तुम्हारी शोभा नहीं है। प्रभु के इन वचनों को सन्मान देकर कृष्णने आधे भरत की जयश्री के एक गृह स्वरूप अपने बाहु को जो परिघा के समान थी फैला दिया। प्रभुने उनके इस बाहु को बाहुमद के साथ २ नमा दिया। अब प्रभुने अपने बाहु को जो वज्रदंड के समान दृढ था पसारा। कृष्णने इसको नमाने की खूब

न કરવો જોઈએ આ પ્રકારના બળભદ્રના કહેવા છતા પણ શ્રી કૃષ્ણ પોતાની હૃદયની શંકાને દૂર કરવામા સમર્થ ન થઈ શક્યા,

એક દિવસની વાત છે કે, ભગવાન બગીચામા ગયા, ત્યા એ વખતે કૃષ્ણ પણ આવી પહોંચ્યા આવતા જ કૃષ્ણે નેમિ પ્રભુને કહ્યુ—ભાઈ આવો શૌર્યની પરીક્ષા કરવા માટે આપણા બન્ને યુદ્ધ કરીએ કૃષ્ણની આ વાતને સાભળીને પ્રભુએ કહ્યુ—યુદ્ધ કરવાની શુ આવશ્યકતા છે? બળની પરીક્ષા તો બાહુયુદ્ધથી થઈ શકે છે આથી સાધારણ માણસોના જેવુ યુદ્ધ કરવામા અમારી તમારી શોભા નથી પ્રભુના આ વચનોને સન્માન આપીને કૃષ્ણે અધો ભરતની જયશ્રીના એક ગૃહ સ્વરૂપ પોતાના હાથને કે જે પરિઘા સમાન હતો તેને ફેલાવી દીધો પ્રભુએ તેમના એ હાથને પોતાના હાથના જોરથી નમાવી દીધો. હવે પ્રભુએ પોતાનો હાથ કે જે વજ્ર દંડની માફક દૃઢ હતો તેને લાંબો કર્યો કૃષ્ણે તેને નમાવવાની ખૂબ ખૂબ કોશિશ કરી પોતાનામા

नतः। भगवतो बाहौ विलग्नः केशवः शाखाविलग्नशिशुवद् बभौ। तदा केशवः स्वमनस्येवमचिन्तयत् यद्ययं मम राज्यमादातुकामः स्यात्तदा प्रकृष्टबलवताऽनेन पूर्वमेव तद् गृहीतं स्यात्, अतोऽनुमन्ये नायं राज्याकाङ्क्षी, इति विचिन्त्य राज्यापहारचिन्तया निर्मुक्तो मनःस्वास्थ्यमापन्नवान्। एकदा समुद्रविजयः श्रीकृष्णमेवमुवाच–हे केशव! नेमिमविवाहितं विलोक्य मम चेतो नितरां खिद्यते, अतस्तथा प्रयतस्व, यथा नेमिर्विवाहं कुर्यात्। कृष्णस्तस्य वचनं स्वीकृत्य तस्मिन्

२ चेष्टा की–अपना जितना बल था सब उसके नमाने में लगा दिया–तौ भी वे उस बाहु को जरा भी नहीं नमा सके। यहांतक कि वे प्रभु के भुजदण्डपर लटक भी गये तौ भी वह उनसे किंचित् भी नमित नहीं हुई। जैसे कोई बालक वृक्ष की डाल पकड कर उसपर लटक जाता है कृष्ण भी इसी तरह उस पर लटके रहे। प्रभु की इस प्रकार अचिंत्यशक्ति देखकर कृष्णने विचार किया–कि यदि ये राज्य को लेने के अभिलाषी होते तो पहिले से ही मेरा राज्य इनके द्वारा ले लिया गया होता परन्तु ऐसा तो इन्होंने किया नहीं है अतः यह बात तो सत्य है कि ये राज्य के आकाक्षी नहीं है। इस प्रकार कृष्ण इस चिन्ता से निर्मुक्त बन गये।

एक दिन की बात है–समुद्रविजयने श्रीकृष्ण से ऐसा कहा कि–हे केशव! मै नेमिकुमार को अविवाहित देखता हू तो मेरा चित्त खिन्न हो जाता है–अतः तुम ऐसा प्रयत्न करो कि जिससे नेमिकुमार विवाह करने के लिये राजी हो जावें। कृष्णने जब समुद्रविजय के इन

જેટલુ બળ હતુ તેટલુ તેને નમાવવામા લગાવી દીધુ તો પણ તે હાથને નમાવી શકયા નહીં ત્યા સુધી જોર કર્યું કે, તે પ્રભુના હાથ ઉપર લટકી ગયા તો પણ તેને જરા પણ નમાવી શકયા નહી જે પ્રમાણે કોઇ બાળક વૃક્ષની ડાળને પકડીને લટકી રહે તે પ્રમાણે કૃષ્ણ પણ લટકી રહ્યા પ્રભુની આ પ્રકારની અચિન્ત્ય શકિતને જોઈને કૃષ્ણે વિચાર કર્યો કે, જો તે રાજ્ય લેવાની જ અભિલાષાવાળા હોત તો પહેલાથી જ મારા રાજ્યને તેણે લઈ લીધુ હોત પરતુ એવુ તો તેણે કર્યું નથી આથી એ વાત તો સત્ય છે કે તેને રાજયની આકાક્ષા નથી આ પ્રકારે કૃષ્ણ એ ચિતાથી મુક્ત બની ગયા

એક દિવસની વાત છે કે, સમુદ્ર વિજયે શ્રી કૃષ્ણને એવુ કહ્યુ કે, હે કેશવ! હુ નેમિકુમારને અવિવાહિત જોઉ છુ તો મારા ચિત્તમા ભારે ખેદ થાય છે આથી તમે એવો પ્રયત્ન કરો કે, નેમિકુમાર વિવાહ કરવા માટે રાજી થઈ જાય કૃષ્ણે સમુદ્રવિજયના અતરવ્યથાયુકત શબ્દોને જ્યારે સાભળ્યા ત્યારે તેમણે નેમિનાથને

कृत्य सत्यभामारुक्मिण्याद्या निजाङ्गना· नियुक्तवान्। अथ कामिजनान् काम-शासने सकाम प्रवर्त्तयन्, कारस्करवृक्षाणामपि कामविकारकारिता शिक्षयन्, उत्फुल्लप्रसूनस्तबकरसास्वादपरायणैर्मधुकरैर्मधुर स्वं कारयन्, पिकान् पञ्चमस्वरं शिक्षयन्, मन्दैर्मलयानिलैर्विरहिणां मानसानि सोत्कण्ठानि कुर्वन् जगज्जन विनिर्जयेऽनङ्गवीर समुत्साहयन् वसन्त समागत·। वसन्तसाहाय्येन समीर सर्वेषां सुखकरो जात।

अन्तर्व्यथा सूचक शब्दों को सुना तो उन्होंने नेमिनाथ को विवाह करने के लिये राजी करने की एक इस प्रकार की युक्ति सोची उन्होने सत्य-भामा, रुक्मिणी आदि अपनी पत्नियों से कहा-कि तुम सब जैसे बने वैसे नेमिकुमार को विवाह करने के लिये विवश करो। इतने में सब ऋतुओं के राजा वसन्त का मनोमोहक समय आ गया-इसमे वसन्त राजाने समस्त कामिजनों को काम के शासन मानने में परवश-विवश कर दिया। कारस्कर जाति के वृक्षों को भी इसने कामजन्य विकार कारिता की शिक्षा दे डाली। मधुकरोंने जो उत्फुल्लपुष्प के स्तवकों के रसास्वादन मे तत्पर बने हुए थे, मधुरस्वर करना प्रारम्भ कर दिया। पिकों (कोकिलों)ने अपने पञ्चमस्वर में मधुरगीतों को गाना प्रारम्भ कर दिया।मन्द २ मल-यानिलों (मलय के पवन) के झोकोंने भी विरहिजनों के मन को उत्कंठित बनाने मे कसर नहीं रखी। इस प्रकार इस वसन्तने जगज्जन के विनि-र्जय करने में कामरूपी वीर को उत्साहित करने मे किसी प्रकार की त्रुटि नहीं आने दी। इस वसन्तमास की सहायता पाकर पवन भी

વિવાહ કરવા માટે રાજી કરવાની એક એવા પ્રકારની યુક્તિ વિચારી અને તેમણે પોતાની રૂક્મણી સત્યભામા, આદિ સ્ત્રિયેને કહ્યું કે તમે સઘળી મળીને નેમિકુમારને વિવાહ કરવા માટે વિવશ કરો આટલામા વસંતનો મનમોહક સમય આવી ગયો તેમા વસંત રાજાએ સઘળા કામીજનોને કામનુ શાસન માનવામા વિવશ બનાવી દીધા કારસ્કર જાતિના વૃક્ષોને પણ તેમણે કામજન્ય વિકાર થાય તેવા પ્રકારથી પ્રફુલ્લિત બનાવી દધા ભ્રમરાઓ કે જેઓ સુંદર એવા રસદાયક પુષ્પોનો રસાસ્વાદ ચૂસવામા તત્પર બનેલ હતા તેમણે મધુરસ્વર કરવાનો પ્રારભ કરી દીધો કોયલોએ પોતાના પાંચેય સ્વરથી ગીતોને ગાવાનો પ્રારભ કરી દીધો મલયાગિરી તરફથી ફૂકાતા મંદ મંદ પવનની લહેરોએ વિરહી જનોના મનને પણ ઉત્કંઠિત બનાવવ મા કસર રાખી નહીં આ પ્રકારે આ વસંતે જગતના માણુસોને વિનિર્જય કરવામા કામરૂપી વીરને ઉત્સાહિત કરવામા કોઈ પણ પ્રકારની તૃટિ આવવા દીધી નહીં આ વસંત માસની

उक्तं च—

लताकुञ्जं गुञ्जन्मदवदलिपुञ्जं चपलयन्,
समालिङ्गन्नङ्गं द्रुततरमनङ्गं प्रबलयन् ।
मरुन्मन्दं मन्दं दलितमरविन्दं तरलयन्
रजोवृन्दं विन्दन् किरति मकरन्दं दिशि दिशि ॥

व्याख्या—(गुञ्जन् मदवान् अलिपुञ्जः-भ्रमरसमूहो यत्र तत् लताकुञ्जं चपलयन्, अङ्गं समालिङ्गन्=पाणिनां सुखस्पर्शं कुर्वन्, अनङ्गं=कामं, द्रुततरं=त्वरितगत्या, प्रबलयन्=संवर्द्धयन्, दलितं=विकसितम्, अरविन्दं=कमलं मन्दं मन्दं तरलयन्=चपलयन् रजोवृन्दं=पुष्पपरागसमूहं, विन्दन्=गृह्णन्, मरुद् दिशि दिशि मकरन्दं=पुष्परसं, किरति=विक्षिपति ।

समस्त जनता के लिये विशेष सुखकर प्रतीत होने लगा। इस विषय में कहा भी है—

लताकुञ्जं गुञ्जन्मदवदलिपुञ्जं चपलयन्,
समालिंगन्नगं द्रुततरमनङ्गं प्रबलयन् ।
मरुन्मदं मदं दलितमरविन्दं तरलयन्,
रजोवृन्दं विन्दन् किरति मकरन्दं दिशि दिशि ॥

भिन्न २ शब्द करता हुआ ऐसा मदोन्मत्तभ्रमर समूह है जिसमें ऐसे लताकुंज को चचल बनाने वाला तथा प्राणियों के अंगको सुख स्पर्श प्रदान करने वाला, काम को त्वरितगति से वेग देने वाला, विकसित कमल को धीरे २ तरलित करने वाला, और पुष्पराग को ग्रहण करने वाला पवन इस समय मे प्रत्येक दिशा मे मकरन्द की वर्षा करने लगा।

સહાયતા મેળવીને પવન પણ સઘળી જનતાને વિશેષ સુખકર દેખાવા લાગ્યો. આ વિષયમાં કહ્યું છે કે,—

लत्ताकुञ्जं गुञ्जन्मदवदलिपुञ्जं चपलयन्,
समालिंगन्नग द्रुततरमनङ्गं प्रबलयन् ।
मरुन्मदं मदं दलितमरविन्दं तरलयन्,
रजोवृन्दं विन्दन् किरति मकरन्दं दिशि दिशि ॥

ભિન્ન ભિન્ન શબ્દ કરી રહેલ એવા મદોન્મત્ત ભ્રમર સમૂહ છે, જેમાં એવા લતાકુંજને ચચલ બનાવનારો તથા પ્રાણીયોના અંગને સુખસ્પર્શ પ્રદાન કરવાવાળો, કામને ત્વરિત ગતિથી વેગ આપનાર, વિકસી રહેલા કમળને ધીરે ધીરે પ્રફુલ્લ બનાવનાર, તથા પુષ્પ પરાગને ગ્રહણ કરવાવાળો પવન આ સમયે પ્રત્યેક દિશામાં મકરન્દની વર્ષા કરવા લાગ્યો.

तदा सर्वत्र सकलोत्सवश्रेष्ठो वसन्तोत्सवः प्रवृत्तः । भगवानरिष्टनेमिस्तदा कृष्णानुरोधेन तदन्तःपुरवने समागतोऽपि निर्विकार एव क्रीडां पश्यन् स्थितः । वसन्तर्तौ व्यतीते ग्रीष्मर्तुः राज्ञस्तेजोऽभिवर्धयन् समागतः । तस्मिन्नपि ऋतौ भगवानरिष्टनेमिः सान्तःपुरेण कृष्णेन सह तदनुरोधात् क्रीडागिरौ रैवतके निर्विकार एव स्थितः । अथावसरं प्राप्य कृष्णस्य भार्याः पट्टमहिष्यो रुक्मिणी-सत्यभामा-प्रभृतयो भगवन्तं समेत्यैवमूचुः ।

इस वसन्त के समय सर्वत्र सकल उत्सवों में श्रेष्ठ वसन्त का उत्सव मनाया जाने लगा। कृष्णने अपने अपने अन्तःपुर के बगीचे में भी इस उत्सव को मनाने का आदेश दे दिया। जब वहां बडे ठाठबाट से यह उत्सव मनाया जा रहा था उस समय कृष्ण ने प्रभु से अपने अन्तःपुर के बगीचे में चलने की प्रेरणा की। वे उनके अनुरोध से वहां गये भी परन्तु निर्विकार रूप में बैठे २ ही वे वहां की सब लीला देखते रहे। कृष्णने इस स्थिति में भी उनके मन को निर्विकार देखकर बडा आश्चर्य किया। उत्सव समाप्त होते ही प्रभु वहां से अपने स्थान पर वापिस आ गये। जब वसन्त ऋतु का समय व्यतीत हो चुका एवं राजा के तेज को बढाने वाले प्राज्ञ अमात्य की तरह सूर्य के तेजको बढाता हुआ ग्रीष्म ऋतु का समय लग गया-तब भगवान् अरिष्ट नेमि कृष्ण के आग्रह से उनके साथ क्रीडागिरि रैवतक पर्वत पर वन क्रीडा एवं जलक्रीडा देखने के लिये गये। वहां पर भी प्रभु विकार विवर्जित हो रहे। अवसर पाकर कृष्ण की रुक्मिणी तथा सत्यभामा आदि आठ पटरानियों ने मिलकर भगवानसे कहने लगी। जिन में

આ વસન્તના સમયે સર્વત્ર સઘળા ઉત્સવોમા શ્રેષ્ઠ વસન્તનો ઉત્સવ મનાવામાં આવ્યો કૃષ્ણે પોતાના અંતઃપુરના બગીચામાં જ આ ઉત્સવને મનાવવાનો આદેશ આપી દીધો જ્યારે ત્યાં ઠાઠમાઠથી એ ઉત્સવ મનાવવામાં આવી રહેલ હતો તે સમયે કૃષ્ણેપ્રભુને પોતાના અંતઃપુરના બગીચામાં ચાલવા માટે કહ્યું તેઓ કૃષ્ણના આગ્રહથી ત્યાં ગયા પરન્તુનિર્વિકાર રૂપથી બેઠા બેઠા ત્યાંની સઘળી લીલા જોવા લાગ્યા કૃષ્ણને આવી સ્થિતિમાં પણ તેના મનને નિર્વિકાર જોઈને ઘણું આશ્ચર્ય થયું ઉત્સવ પૂરો થતાં પ્રભુ પોતાના સ્થને પાછા ફર્યા જ્યારે વસન્તઋતુનો સમય પૂરો થઇ ચૂક્યો અને રાજાના તેજને વધારનાર બુદ્ધિશાળી મંત્રીના માફક સૂર્યના તેજને વધારનાર ગ્રીષ્મઋતુનો સમય આવી ગયો ત્યારે ભગવાન અરિષ્ટનેમિ કૃષ્ણના આગ્રહથી ક્રીડાગિરી રૈવતક પર્વત ઉપર વનક્રીડા અને જળક્રીડ જોવાને માટે ગયા ત્યાં પણ પ્રભુ વિકાર વિવર્જીતજ થઈ રહ્યા અવસર જોઇને કૃષ્ણની રૂક્મણી તથા સત્યભામા આદિ આઠ પટરાણીયો મળીને ભગવાનને કહેવા લાગી જેમાં સર્વ પ્રથમ

(४) पद्मावती—

(वसन्ततिलकावृत्तम्)

पद्मावतीति समुवाच विनावधूटीं, शोभा न काचन नरस्य भवत्यवश्यम् ।
नो केवलस्य पुरुषस्य करोति कोऽपि, विश्वासमेष विट एव भवेदभार्य ॥

देवरजी! तुम यह क्या नवीन रीत चला रहे हो। तुम तो हरिवंश के एक विभूषण हो, अतः जबतक अपना एक उत्तराधिकारी तुम उत्पन्न नहीं कर देते हो तबतक यह हरिवंशविभूषणता कैसी। मुनिसुव्रतनाथ भी तो इसी वंश के विभूषण हुवे हैं। उन्होंने अपना विवाह करके ही पश्चात् मुनि दीक्षा धारण की है। वे गृहस्थ थे और उनके अनेक पुत्र भी थे। पश्चात् दीक्षित होकर मुक्ति प्राप्त की है ॥१॥

चौथी पद्मावती कहती है--

(वसन्ततिलका)

पद्मावतीति समुवाच विनावधूटीं, शोभा न काचन नरस्य भवत्यवश्यम्
नो केवलस्य पुरुषस्य करोति कोऽपि, विश्वासमेष विट एव भवेदभार्य ॥१॥

पद्मावती कहती है कि हे देवर। स्त्रीके विना मनुष्य की कोई शोभा नहीं है और स्त्री रहित-पुरुष का कोई विश्वास भी नही करता है। तथा विना स्त्री का पुरुष विट (नपुसक) ही कहलाता है ॥१॥

દેવરજી ! તમે આ તે કેવી નવી રીત ચલાવી રહ્યા છે, તમે તો હરિવંશના એક વિભૂષણ છો આથી જ્યા સુધી તમે તમારો એક ઉત્તરાધિકારી ઉત્પન્ન નહિ કરો ત્યા સુધી આ હરિવંશની વિભૂષતા કેવી ? મુનિ સુવ્રતનાથ પણ આજ વંશના એક વિભૂષણ થયા છે તેઓએ પોતાનો વિવાહ કરીને પાછળથી મુનિ દીક્ષા ધારણ કરેલ છે તેઓ ગૃહસ્થ હતા અને તેમને અનેક પુત્ર પણ હતા પછીથી દીક્ષિત થઈને તેમણે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરેલ છે ॥૧॥

ચોથી પદ્માવતી કહે છે—

(વસન્તતિલકા)

पद्मावतीति समुवाच विना वधूटीं, शोभा न काचन नरस्य भवत्यवश्यम् ।
नो केवलस्य पुरुषस्य करोति कोऽपि, विश्वासमेष विटएव भवेदभार्य. ॥

પદ્માવતી કહે છે કે, હે દેવરજી ! સ્ત્રીના વગર મનુષ્યની કોઇ શોભા નથી અને સ્ત્રી વગરના પુરૂષનો કોઈ વિશ્વાસ પણ કરતુ નથી તથા સ્ત્રીના વગરનો પુરૂષ વિટ (નપુસક) જ કહેવાય છે ॥૧॥

(५) गान्धारी—

(इन्द्रवज्राछन्द)

ससारयात्रा शुभसत्रसार्थ,-पर्वोत्सवा वेश्म विवाहकृत्यम् ।
उद्यानलीला कमलाविलास', शोभन्त एतानि विनाऽङ्गना नो ॥

पाचवी गान्धारी कहती है—

(इन्द्र वज्रा छन्द)

ससार यात्रा शुभसघसार्थ,-पर्वोत्सवावेश्म विवाह कृत्यम् ।
उद्यानलीला कमलाविलास , शोभन्त एतानि विनाऽङ्गना नो ॥८॥

देवरजी ! तुम तो हमे बडे भोले मालूम पडते हो। परतु ससार का काम इस भोलेपन से नही चलता है। ससारयात्रा-जीवनयात्रा, दयादान आदि शुभ कार्यों का करना, सघ मे रहना, पर्वों (तहेवारों) का मनाना, उत्सवों का करना, आदि समस्त कार्य विना स्त्री के सुन्दर नही लगते हैं। अत जीवन मे घर की शोभारूप नारी का होना आवश्यक है। इसके विना न मकान ही सुहावना लगता है और न विवाहकृत्य ही मन को रूचता है। उपवन क्रीडा भी नारी के विना के नही होती है। तथा लक्ष्मी का विलास-आनन्द तो विना स्त्री के हो ही नहीं सकता है अर्थात विना स्त्री के लक्ष्मी भी फिकी लगती है ॥१॥

પાચમી ગાન્ધારી કહે છે —

(ઇન્દ્રવજ્રા છદ)

ससारयात्रा शुभ सत्र सार्थ, पर्वोत्सवा वेश्म विवाह कृत्यम् ।
उद्यानलीला कमला विलासह , शोभन्त एतानि विनाऽङ्गना नो ॥१॥

દેવરજી ! તમો તો અમોને સાવ ભોળા માલુમ પડો છો પરતુ સસારનુ કામ આવા ભોળાપણાથી ચાલતુ નથી સસાર યાત્રા-જીવન યાત્રા, દયા દાન વગેરે શુભ કાર્યોનુ કરવુ, સઘમા રહેવુ પર્વો તહેવારોને મનાવવા, ઉત્સવોને કરવા, વગેરે સઘળા કામો સ્ત્રીના વગર સુદર લાગતા નથી આથી જીવનમા ઘરની શોભારૂપ એવી સ્ત્રીનુ હોવુ આવશ્યક છે તેના વગર ઘર શોભતુ નથી તેમ વિવાહ વગેરેના પ્રસગો પણ મનને રૂચીકર આપવાવાળા બને છે ઉપવનની ક્રીડા પણ સ્ત્રીના વગર શોભતી નથી તથા લક્ષ્મીનો વિલાસ આનદ તો સ્ત્રીના વગર મળી શકતા જ નથી અર્થાત સ્ત્રીના વગર લક્ષ્મી પણ ફીકી લાગે છે ॥ ૧॥

(६) गौरी—

(इन्द्रवज्राछन्दः)

अज्ञानभाजः किल पक्षिणोऽपि, क्षितौ परिभ्रम्य वसन्ति सायम् ।
नीडे स्वकान्तासहिताः सुखेन, ततोऽपि किं देवर ! मूढदक्त्वम् ? ॥

(७) लक्ष्मणा—

(इन्द्रवज्राछन्दः)

स्नानादि सर्वाङ्गपरिक्रियाया, विचक्षणं प्रीतिरसाभिरामं ।
विश्रम्भपात्रं विधुरे सहायं, कोऽन्यो भवेद्वन विना प्रियायाः ॥

छट्ठी गौरीने कहा—

(इन्द्रवज्रा)

अज्ञान भाजः किल पक्षिणोऽपि, क्षितौ परिभ्रम्य वसन्ति सायम् ।
नीडे स्वकान्ता सहिताः सुखेन, ततोऽपि किं देवर ! मूढ दक्त्वम् ? ॥१॥

हे देवरजी ! हमे तो तुम्हारी यह उदासीनता देखकर अपार दुःख होता है कारण कि देखो तो सही अज्ञानी पक्षी भी इधर उधर से घूम घाम कर जब सायकाल को अपने स्थान पर आते है तो वे भी अपनी कान्ता के साथ आनद से मनो विनोद किया करते हैं। परतु पता नही तुम्हारी बुद्धि क्यों ऐसी विपरीत हो रही है जो तुम इनसे भी अधिक अज्ञानी बन रहे हो ॥१॥

છઠ્ઠી ગૌરીએ કહ્યુ—

(ઇન્દ્રવજ્રા)

अज्ञानभाजः किल पक्षिणोऽपि, क्षितौ परिभ्रम्य वसन्ति सायम् ।
नीडे स्वकान्तासहिताः सुखेन, ततोऽपि किं देवर ! मूढ दक्त्वम् ? ॥१॥

હે દેવરજી ! અમોને તો તમારૂં આ ઉદાસિનપણુ જોઇને અપારદુઃખ થાય છે કારણકે, જુઓ તો ખરા અજ્ઞાની પક્ષી પણ અહીંતહીં રખડી રઝળીને જ્યારે સધ્યાકાળે પોતાના સ્થાન ઉપર આવે છે ત્યારે તે પણ પોતાની પત્નીની સાથે આનદથી મનોરજન કરે છે પરતુ સમજાતુ નથી કે, તમારી બુદ્ધિ કેમ એવા વિપરીત થઈ રહી છે કે, જેથી તમો તેનાથી પણ વધારે અજ્ઞાની બની રહ્યા છો ॥૧॥

(८) सुसीमा—

(इन्द्रवज्राभेदरूप ऋद्धिच्छन्दः)

विना प्रिया को गृहमागताना, प्राघूर्णकाना मुनिसत्तमानाम् ।
करोति भोज्यप्रतिपत्तिमन्य, कथ च शोभा लभते मनुष्यः ॥

सातवीं लक्ष्मणाने कहा—

(इन्द्रवज्रा)

स्नानादि सर्वाङ्गपरिष्क्रियायां, विचक्षणः प्रीतिरसाभिरामः ।
विस्रम्भपात्र विधुरे सहायः, कोऽन्योभवेदत्र विना प्रियायाः ॥१॥

हे देवरजी ! स्नान आदि क्रियाओं में तथा समस्त शारीरिक सेवा शुश्रूषा करने में विचक्षण एव प्रेमपात्र तथा विश्वस्तजन यदि कोई है तो वह एक अपनी अर्धाङ्गिनी ही है। आपत्ति मे फसे हुए व्यक्ति के लिये हर एक प्रकार से सहायता प्रदान कर प्रसन्न रखनेवाली अपनी स्त्री ही होति है। दूसरा और कोई नहीं होता है ॥१॥

आठवीं सुसीमाने कहा—

(इन्द्रवज्राभेदरूप ऋद्धिच्छन्द)

विना प्रिया को गृहमागताना, प्राघूर्णकाना मुनिसत्तमानाम् ।
करोति भोज्यप्रतिपत्तिमन्य, कथ च शोभा लभते मनुष्यः ॥१॥

हम आपसे यह पूछती हैं, कि जब आपके घर कोई महिमान या मुनिराज पधारेंगे तो उनका आहारपानी आदिक से आदर सत्कार कौन

સાતમી લક્ષ્મણાએ કહ્યુ —

(ઇન્દ્રવજ્રા)

स्नानादिसर्वांगपरिष्क्रियाया, विचक्षणः प्रीतिरसाभिरामः ।
विस्रम्भपात्र विधुरे सहायः, कोन्यो भवेदत्र विना प्रियायाः ॥१॥

હે દેવરજી ! સ્નાન આદિ ક્રિયાઓમા અને સઘળી શારીરિક સેવા સુશ્રૂષા કરવામા વિચક્ષણ અને પ્રેમપાત્ર તથા વિશ્વસ્તજન જો કોઈ હોય તો તે એક પોતાની અર્ધાંગિની જ છે આપત્તિમા ફસાયેલ વ્યકિતના માટે દરેક પ્રકારની સહાયતા આપવામા પ્રસન્નતા આપનાર પોતાની સ્ત્રી જ હોય છે બીજુ કોઈ પણ હોતુ નથી ॥૧॥

આઠમી સુસીમાએ કહ્યુ—

(ઇન્દ્રવજ્રા ભેદરૂપ ઋદ્ધિછન્દ)

विना प्रिया को गृहमागताना, प्राघूर्णकाना मुनिसत्तमानाम् ।
करोति भोज्यप्रतिपत्तिमन्य, कथ च शोभा लभते मनुष्य ॥१॥

હુ આપને પૂછુ છુ કે, જ્યારે આપના ઘેર કોઇ મહેમાન અથવા મુનિરાજ પધારશે ત્યારે એમનો આહાર પાણી વગેરેથી સત્કાર કોણ કરશે ? સમર્થ હોવા

इत्यत्र ताभिः कृष्णभार्याभिरनुरूप्यमानं भगवन्तमरिष्टनेमिं रामकृष्णादयोऽप्यागत्य तथैवान्वरुन्धन्। इत्थं बन्धुभिस्तद्‌वधूभिश्च धुर्यैर्यैर्मस्तानिर्बन्धमुक्तो भगवानरिष्टनेमि 'अहो ! मंसारस्य मोहदशा' इति विचिन्त्य सस्मितो जातः। तत स्मितेन कृष्णादयोऽन्वमन्यन्त—यद् भगवता विवाहः स्वीकृत इति। ततः सहर्षः श्रीकृष्णः समुद्रविजयसमीपे गत्वा तस्मै सुखजनकं समाचारं न्यवेदयत्। परमानन्दितहृदयः समुद्रविजयः कृष्णमवोचत् वत्स !

करेगा। समर्थ होकर भी मनुष्य जबतक ऐसा नहीं करता है तबतक उसकी कोई शोभा भी नहीं होती है। अतः मानो और जीवन साथिनी कन्या के साथ विवाह करलो। विना प्रिया के ये सब काम अकेले तुमसे नहीं चल सकेंगे ॥१॥

इस प्रकार इन कृष्ण की आठपटरानियों द्वारा अनुरोधित किये गये उन अरिष्टनेमिकुमार के पास आकर बलदेव तथा कृष्ण आदि महानुभावोंने भी इसी तरह का अनुरोधकरना प्रारंभ किया। सब का इस प्रकार का आग्रह देखकर भगवान् अरिष्टनेमि कुमार को "देखो तो सही संसारिजनों की कैसी यह मोहदशा है" इस प्रकार के विचार से कुछ हँसी सी आगई। उनका मन्दहास्य देखकर कृष्ण आदि जनोंने ऐसा विचार किया कि प्रभुने विवाह करने की अपनी शुभसमति दे दी है। इस प्रकार के विचार से उस समय कृष्ण आदिकों को बडा हर्ष हुआ। उसी हालत में वे श्रीकृष्ण महाराजा समुद्रविजय के पास पहुँच कर कहने लगे कि—प्रभुने विवाह करना स्वीकार कर लिया है। इस समाचार

છતા પણ જ્યારે મનુષ્ય આ પ્રમાણે કરતો નથી તો એથી એની કોઈ શોભા નથી આથી માની જાવ અને જીવન સાથીની કન્યાની સાથે વિવાહ કરી લ્યો પ્રિયા વગર આ સઘળુ કામ તમારાથી ચલશે નહી ॥૧॥

આ પ્રમાણે કૃષ્ણની આઠેય પટરાણીયોથી અનુરોધિત બનેલ આ અરિષ્ટનેમિ કુમારની પાસે આવીને બળદેવ અને કૃષ્ણ આદિ મહાનુભાવોએ પણ એજ પ્રમાણે અનુરોધ કરવો શરૂ કર્યો બધાનો આ પ્રમાણે આગ્રહ જોઇને ભગવાન્ અરિષ્ટનેમિ કુમારને "જુઓ તો ખરા સંસારી જનોની કેવી આ મોહ દશા છે' આ પ્રકારના વિચારથી થોડુંક હસવુ આવી ગયુ તેમનુ મંદ હાસ્ય જોઇને કૃષ્ણ વગેરે બધાએ એવુ માની લીધુ કે પ્રભુએ વિવાહ કરવામા પોતાની શુભ સંમતિ આપી દીધી છે આ પ્રકારના વિચારથી કૃષ્ણ વગેરે બધાને ઘણોજ હર્ષ થયો એ હર્ષના ઉત્સાહમા શ્રી કૃષ્ણ મહારાજા સમુદ્રવિજયની પાસે જઇને કહેવા લાગ્યા કે, પ્રભુએ વિવાહ કરવાનો સ્વીકાર કરી લીધો છે આ સમાચાર સાભળવાથી મહારાજા સમુદ્રવિજયનુ

नेमियोग्या कामपि कन्याम् अन्वेषय। ततः कृष्णो नेमियोग्या कन्या सर्वतो ऽन्वैषयत्। परन्तु तद्योग्या न काचिदपि कन्या समुपलब्धा। अथान्यदा कृष्णं चिन्ताकुलितं दृष्ट्वा सत्यभामा तन्मनोगतं भावं विज्ञायैवमभाषत—स्वामिन्! नेमिविषये चिन्तां परित्यज। राजीवनयना सद्गुणराजिनी शुद्धमति नाम्ना राजीमती मम भगिनी नेमेरनुरूपाऽस्ति। सत्यभामाया वचनं निशम्य ताम् भिनन्दयन् कृष्णः प्राह—त्वयैव सूचयन्त्या मम चिन्ताऽपहृता। ततः कृष्णस्त्वरितमेवोग्रसेन—नरेन्द्रस्य गृहं गतः। उग्रसेनोऽपि गोविन्दं समागतं दृष्ट्वा सत्कारं

को सुनकर महाराजा समुद्रविजय का मनमयूर आनंद से नाच उठा। उन्होंने उसी समय कृष्ण से कहा—वत्स! तुम अब देरी न करो और नेमि के योग्य किसी योग्य कन्या की तलास करो। महाराजा समुद्रविजय के इस प्रकार के आदेश से प्रेरित होकर श्रीकृष्णजीने नेमिप्रभु के योग्य कन्या की चारों तरफ तपास करना प्रारंभ कर दिया परंतु उनकी दृष्टि मे प्रभु के योग्य कोइ नहीं जची। कृष्ण को एक दिन चिन्ता से विशेष आकुलित देखकर सत्यभामाने उनके हार्दिक अभिप्राय का पता लगा लिया—तब उसने उनसे इसप्रकार कहा—स्वामिन्! आप जो नेमि के विषय की चिन्ता से आकुलित हो रहे हैं सो चिन्ता को दूर कर दें। कारण कि मेरी बहिन जिसका नाम राजीमती है और सद्गुणराजी से जो विराजित है तथा कमल के समान जिसके दोनों नेत्र हैं वह नेमि के योग्य है। यह बडी शुद्धमती संपन्न है। सत्यभामा के इस प्रकार वचन सुनकर कृष्णने उसको विशेष धन्यवाद दिया और फिर वे उससे कहने लगे—प्रिये! तुमने अच्छा कहा जो इस

મન મયૂર નાચી ઉઠયું તેઓએ એ સમયે કૃષ્ણને કહ્યું કે વત્સ! હવે તમે વાર ન લગાડો અને નેમિના માટે કોઈ યોગ્ય કન્યાની તપાસ કરો. મહારાજા સમુદ્રવિજયના આ પ્રમાણેના આદેશને મેળવીને શ્રી કૃષ્ણજીએ નેમિ પ્રભુને યોગ્ય કન્યાની તપાસ કરવાનો ચારે તરફ પ્રારંભ કરી દીધો પરંતુ તેમની દૃષ્ટીમાં પ્રભુને યોગ્ય કોઈ કન્યા દેખાઈ નહીં. કૃષ્ણને આ પ્રકારની ચિંતાથી વ્યાકુળતાવાળા જોઈને સત્યભામાએ તેમના હાર્દિક વિચારોનો પત્તો મેળવીને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું—સ્વામિન્! આપ નેમિના વિષયની ચિંતાથી જે રીતે વ્યાકુળ બની રહ્યા છો તે ચિંતાને આપ દૂર કરી દો કારણકે, મારી બહેન જેનું નામ રાજીમતી છે અને તે સદ્ગુણની ખાણ જેવી છે તથા કમળ જેવા જેના બે નેત્રો છે તે નેમિને યોગ્ય છે તે ઘણીજ શુદ્ધમતિ સંપન્ન છે સત્યભામાનું આ પ્રકારનું વચન સાંભળીને કૃષ્ણે તેને ઘણોજ ધન્યવાદ આપ્યો અને પછી તેઓ કહેવા લાગ્યા પ્રિયે! તમે ઘણું જ સારૂં કહ્યું છે, આથી

पुरस्सरमुवाच अहो! भवता कथमेतावानायासः कृतः। उग्रसेनवचनं निशम्य कुन्दाभदन्तच्छटया रदच्छदं स्वच्छयन् कृष्णः प्राह- राजन्! इमां भवत्पुत्रीं राजीमतीं नेम्यर्थे भवन्तं याचे। इत्थं हरिणा नेम्यर्थं याचितायां राजीमत्यां आत्मानं कृतकृत्यं मन्यमानः प्रकृष्टानन्दवश-समुच्छ्वसितरोमराजिरुग्रसेनः कृष्णं प्रति यदुक्तवान् तदुच्यते—

मूलम्—अहाह जणओ तीसे वासुदेवं महिड्ढियं।

इहागच्छउ कुमारो, जा से कण्णं दलामि हं॥८॥

छाया—अथाह जनकस्तस्या, वासुदेवं महर्द्धिकम्।

इहागच्छतु कुमारः, यतस्तस्मै कन्यां ददाम्यहम्॥ ८॥

संवाद से मेरी चिन्ता को दूर किया। इसके बाद तुरन्त ही कृष्ण उग्रसेन राजा के पास गये। उग्रसेनने कृष्णजी को अपने घर पर आये हुए देखकर उनका अच्छा उचित सत्कार किया। पश्चात् बोले- कहिये आपने कैसे इतना यहां तक आनेका कष्ट किया है? इस प्रकार प्रेमभरे उग्रसेन राजा के वचन सुनकर कृष्णजीने कुन्दपुष्प की आभा के समान आभावाली अपनी दंतपङ्क्ति की कान्ति से ओष्ठ को स्वच्छ करते हुए कहा राजन्! आपकी जो यह राजीमती नाम की पुत्री है वह आप नेमिकुमार के लिये प्रदान करें इसके लिये मैं आपके पास आया हूँ॥७॥

इस प्रकार कृष्ण द्वारा नेमि के निमित्त राजीमती के मागे जाने पर अपने आपको कृतकृत्य मानते हुए प्रकृष्ट आनंद के वश से समुच्छ्वसितरोमराजिवाले होते हुए उग्रसेन राजाने श्रीकृष्ण के प्रति क्या कहा वह इस गाथा द्वारा प्रगट किया जाता है—

મારી ચિંતાને તમોએ દૂર કરી છે આ પછીથી તુરતજ કૃષ્ણ ઉગ્રસેન રાજાની પાસે ગયા, ઉગ્રસેને કૃષ્ણને પોતાને ત્યાં આવેલા જોતા તેમનો સારી રીતે સત્કાર કર્યો પછી બોલ્યા કહો–અહી સુધી આવવાનુ આપે શા કારણે કષ્ટ ઉઠાવ્યુ છે? આ પ્રમાણે ઉગ્રસેન રાજાના પ્રેમભર્યા વચનોને સાભળીને કૃષ્ણજીએ કુન્દપુષ્પની આભા સમાન આભાવાળી પોતાની દાંત પંક્તિની કાંતિથી હોઠને સ્વચ્છ કરતા કહ્યુ–રાજન્! આપની જે રાજીમતી નામની પુત્રી છે, તે આપ નેમિકુમાર માટે પ્રદાન કરો આને માટે હુ આપની પાસે આવેલ છુ ॥૭॥

આ પ્રકારે કૃષ્ણ દ્વારા નેમિના નિમિત્તે રાજીમતિની માગણી થવાથી પોતાની જાતને એથી ધન્ય માનીને ઘણાજ આનંદની સાથે એકદમ ઉલ્લાસિત બનીને ઉગ્રસેન રાજાએ શ્રી કૃષ્ણને શુ કહ્યુ તે આ ગાથાદ્વારા પ્રગટ કરવામા આવે છે--

टीका 'अहाह' इत्यादि—

अथ=वासुदेवकृतराजीमतीयाचनानन्तरं तस्या'=राजीमत्या जनकः=पिता उग्रसेनो महर्द्धिकं=भरतार्द्धऋद्धियुक्तं वासुदेवं=कृष्णम् एवमाह–हे वासुदेव! कुमारः=अरिष्टनेमिः इह=मम भवने आगच्छतु, यतस्तस्मै=कुमारायाहं कन्यां ददामि=विवाहविधिना समर्पयामि ॥८॥

इत्थं विवाहस्वीकृतौ सत्यां क्रोष्टुकिनैमित्तिकादिष्टविवाहलग्ने सन्यासन्ने यदभूत्तदुच्यते—

'अहाह' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(अह–अथ) वासुदेवने जब राजीमती की याचना करी तब उनके बाद (तीसे जणओ–तस्याः जनकः) राजीमती के पिताने (महड्ढिय वासुदेव–महर्द्धिकं वासुदेवम्) आधे भरत खंड की ऋद्धि से संपन्न वासुदेव से (आह–आह) ऐसा कहा–(कुमारो इहागच्छउ–कुमार इह आगच्छतु) हे वासुदेव! अरिष्टनेमिकुमार यहां मेरे घर पधारे (जा–यतः) क्यों कि (से ह कण्ण दलामि–तस्मै अहं कन्यां ददामि) उनके लिये मुझे कन्या देना है।

भावार्थ—कृष्ण का वचन सुनकर हर्षित हुए उग्रसेनने उनसे कहा–वासुदेवजी–हमें आपका विचार स्वीकृत है। आप कुमार को यहां ही भेज दीजिये। मैं उनके साथ विधिपूर्वक अपनी कन्या का विवाह कर दूंगा ॥८॥

इस प्रकार उग्रसेन द्वारा कहे जाने पर कृष्णने क्रोष्टुकि नैमत्तिक द्वारा विवाह लग्न का संशोधन करवाया। विवाह का समय जब नजदीक

''અહાહ'' ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--अह–अथ વાસુદેવે જ્યારે રાજીમતીની યાચના કરી ત્યારે तीसे जणओ–तस्याः जनकः રાજીમતીના પિતાએ महड्ढिय वासुदेव–महर्द्धिकं वासुदेवम् અથવા ભરતખંડની ઋદ્ધિવાળા એવા વાસુદેવને आह–आह કહયું કે, कुमारो इहागच्छउ–कुमार' इहागच्छतु હે વાસુદેવ ! અરિષ્ટનેમિકુમાર અહીં મારે ઘેર પધારે કેમકે, મારે તેમને કન્યા આપની છે

ભાવાર્થ--કૃષ્ણનું વચન સાંભળીને હર્ષિત બનેલા ઉગ્રસેન રાજાએ શ્રી કૃષ્ણને કહયું–વાસુદેવજી ! અમોને તમારો વિચાર સ્વીકાર્ય છે આપ કુમારને અહીં મોકલી દો હું તેની સાથે મારી કન્યાનો વિધિપૂર્વક વિવાહ કરી દઇશ ॥૮॥

આ પ્રમાણે ઉગ્રસેન તરફથી સ્વીકાર કરાતા કૃષ્ણે કોષ્ટુકી નામના જ્યોતિષી પાસે વિવાહ લગ્નનું મુહૂર્ત જોવડાવ્યું વિવાહનો સમય જ્યારે નજીક આવ્યા

मूलम्—सव्वोसहीहिं ण्हविओ, कयकोउयमंगलो ।
दिव्वजुयलपरिहिओ, भूसणेहिं विभूसिओ ॥९॥

छाया—सर्वौषधिभिः स्नपितः, कृतकौतुकमङ्गलः ।
दिव्ययुगलपरिहितः, भूषणैर्विभूषितः ॥९॥

टीका—'सव्वोसहीहिं' इत्यादि—

अथरिष्टनेमिः सर्वौषधिभिः-सर्वा ओषधयः सर्वौषधयः=जया, विजया, ऋद्धिः, वृद्धिः, इत्यादि नामभिः प्रसिद्धास्ताभिःस्नपितः कृतकौतुकमङ्गलः-कृतानि कौतुकानि=ललाटे मुशलस्पर्शादिरूपाणि मङ्गलानि=दध्यक्षतादीनि च यस्य स तथा, पुनः-दिव्य युगलविभूषितः-दिव्यम्=प्रशस्त युगलं=देवदूष्य वस्त्रद्वयं परिहितं=परिधृतं येन स तथा, परिधृतप्रशस्तदेवदूष्यवस्त्रयुगल इत्यर्थः तथाभूषणैः=मुकुटकुण्डलादिभिरलङ्कारैः, विभूषितः=सुशोभितः ॥९॥

आया तब उस समय क्या हुआ-यह बात प्रकट की जाती है—

'सव्वोसहीहिं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—अरिष्टनेमिप्रभु को (सव्वोसहीहिं ण्हविओ-सर्वौषधिभिः स्नपितः) जया, विजया, ऋद्धि, वृद्धि इत्यादि नामवाली प्रसिद्ध औषधि द्वारा स्नान कराया गया। (कयकोउयमंगलो-कृतकौतुकमंगलः) उनके मस्तक से मुशल का स्पर्श कराने रूप कौतुक एवं दधि अक्षत आदि रूप मांगलिक पदार्थों के धारणेरूप मंगलकार्य किये गये। उनको (दिव्वजुयलपरिहिओ-दिव्ययुगलपरिहितः) प्रशस्त देवदूष्य दो वस्त्र पहिराये गये। (भूसणेहिं विभूसिओ-भूषणैर्विभूषितः) तथा मुकुट, कुंडल आदि आभूषणों से वे सुशोभित किये गये।

ત્યારે તે સમયે શું વાત બની તેને હવે પ્રગટ કરવામાં આવે છે—

"સવ્વોસહીહિં" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—અરિષ્ટનેમિ પ્રભુને સવ્વોસહીહિં ણ્હવિઓ-સર્વૌષધિભિઃ સ્નપિતઃ જયા, વિજયા, ઋદ્ધિ, વૃદ્ધિ, ઇત્યાદિ નામવાળી પ્રસિદ્ધ ઔષધિયો દ્વારા સ્નાન કરાવવામાં આવ્યું કયકોઉયમંગલો—કૃતકૌતુકમંગલઃ તેમના માથા સાથે સાંબેલાનો સ્પર્શ કરાવવારૂપ કૌતુક અને દૂધ, દહી, ચોખા આદિરૂપ માંગલિક પદાર્થોથી આવરણ રૂપ મંગળ કાર્ય કરવામાં આવ્યું એમને દિવ્વજુયલ પરિહિયો—દિવ્યયુગલ પરિહિતઃ પ્રશસ્ત દેવને પણ દુર્લભ એવા બે વસ્ત્રો પહેરાવવામાં આવ્યાં ભૂસણેહિં વિભૂસિઓ—ભૂષણૈર્વિભૂષિતઃ તેમજ મુગટ, કુંડળ આદિ આભૂષણોથી તેમને સુશોભિત કરવામાં આવ્યા

तत.—

मूलम्--मॅत्त चं गंधहत्थि च, वासुदेवस्स जिट्ठगं ।

आरूढो सोहई अहिय, सिरं चूडामणी जहा ॥१०॥

छाया--मत्त गन्धहस्तिनं च, वासुदेवस्य ज्येष्ठकम् ।

आरूढ शोभतेऽधिक, शिरसि चूडामणिर्यथा ॥१०॥

टीका—'मत्त च' इत्यादि—

च=पुनः वासुदेवस्य=श्रीकृष्णस्य ज्येष्ठक=प्रधान पट्टहस्तिनमित्यर्थ., मत्त=दृप्त, गन्धहस्तिन–गजविशेषम्, आरूढ–सन् अधिक शोभते, यथा शिरसि चूडामणि'। यथा मस्तके चूडामणि–शोभते, तथैव गजारूढो भगवानरिष्ट नेमि. परमशोभा प्राप्तवानिति भाव ॥१०॥

भावार्थ—अब नेमिकुमार को वरराजा बनाने के लिये वर का वेष उनपर सुसज्जित किया जा रहा है। यही बात इस गाथा द्वारा प्रकट की गई है। सब से पहिले उनको सब प्रकार की औषधियों से मिश्रित जल द्वारा स्नान कराया गया। कौतुक मगल कार्य किये गये। दिव्ययुगलवस्त्रों का उन्होने परिधान किया। और समस्त आभूषणों से फिर वे खूब सुसज्जित होकर सुशोभित होने लगे ॥९॥

इसके बाद—'मत्त च' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(च–च) बाद मे नेमिकुमार को (वासुदेवस्स जिट्ठग मत्त गधहत्थि आरूढो–वासुदेवस्य ज्येष्ठकम् मत्त गन्धहस्तिन अरूढ) कृष्ण महाराज के प्रधान मदोन्मत्त गन्धहस्ती पर आरूढ किया गया। (अहिय सोहई जहा सिरे चूडामणी–अधिक शोभते यथा शिरसि चूडामणी)

ભાવાર્થ—જ્યારે નેમિકુમારને વરરાજા બનાવવાને માટે વરરાજાના વેશથી તેમને સુસજ્જીત કરવામા આવેલ હતા ત્યારે સહુથી પહેલા તેમને સઘળા પ્રકારની ઔષધીઓ યુક્ત જળથી સ્નાન કરાવવામા આવ્યુ અને કૌતુક મગળ કાર્ય કરવામા આવ્યા આ પછી તેમને દિવ્ય એવા બે વસ્ત્રો પહેરાવવામા આવ્યા અને પછી સઘળા આભૂષણોથી તેમને શણગારવામા આવ્યા જેથી તેઓ ઘણાજ સુશોભિત લાગવા માડયા ॥૯॥

ત્યાર પછી—"मत्तच" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ–च–च ત્યાર પછી નેમિકુમારને वासुदेवस्स जिट्ठग मत्त गधहत्थि आरूढो–वासुदेवस्य ज्येष्ठकम् मत्त गधहस्तिन आरूढ. કૃષ્ણ મહારાજના પ્રધાન એવા મદોન્મત્ત ગધહાથી ઉપર બેસાડવામા આવ્યા अहिय सोहई जहा सिरं चूडामणी–अधिक शोभते यथा शिरसि चूडामणी તે સમય એ તેમના ઉપર

गजेन्द्रमारूढो भगवानरिष्टनेमिः कथं स्वभवनान्निर्याति इत्याह--

मूलम्--अह ऊसिएण छत्तेण, चामराहि य सोहिओ।
दसारचक्केण य सो, सव्वओ परिवारिओ ॥११॥
चउरंगिणीए सेणाए, रइयाए जहक्कमं।
तुरियाणं सन्निनाएणं, दिव्वेणं गयणं फुसे ॥१२॥
एयारिसाए इड्ढीए, जुत्तीए उत्तमाए य।
नियगाओ भवणाओ निज्जाओ वहिपुंगवो ॥१३॥

छाया--अथ उच्छ्रितेन छत्रेण, चामराभ्यां च शोभितः।
दशार्हचक्रेण च स, सर्वतः परिवारित ॥ ११ ॥
चतुरङ्गिण्या सेनया, रचितया यथाक्रमम्।
तूर्याणां सन्निनादेन, दिव्येन गगनस्पृशा ॥ १२ ॥
एतादृश्या ऋद्ध्या, द्युत्या उत्तमया च।
निजकाद् भवनाद्, निर्यातो वृष्णिपुङ्गवः ॥ १३ ॥

टीका--'अह' इत्यादि--

अथ=गजोपरि समारोहणानन्तरम् उच्छ्रितेन=भृत्यैरुपरिधृतेन छत्रेण, चामराभ्यां वीज्यमानाभ्यां च शोभित., दशार्हचक्रेण=दशार्हाः--समुद्रविजयाक्षोभस्तिमित

उस समय वे उसके ऊपर बैठे हुए ऐसा सुहावने लगते थे कि जिस प्रकार मस्तक पर धारण किया गया चूडामणि सुहावना लगता है ॥१०॥

गजउपर विराजमान भगवान् अरिष्टनेमि किस प्रकार भवन से निकले? सो विशेषक अर्थात् तीन गाथाओं से कहते हैं--'अह' इत्यादि, 'चउरंगिणीए' इत्यादि, एयारिसाए' इत्यादि च।

अन्वयार्थ--(अह-अथ) गज के ऊपर बैठने के बाद (ऊसिएण छत्तेण चामराहिय सोहिओ-उच्छ्रितेन छत्रेण चामराभ्यां च शोभित) नेमिकुमार

બેઠેલા એવા સુંદર દેખાતા હતા કે જે રીતે માથા ઉપર ધારણ કરવામાં આવેલ ચૂડામણી શોભા આપે છે ॥૧૦॥

હાથી ઉપર બેઠેલા ભગવાન અરિષ્ટનેમિ કેવા પ્રકારે ભવનથી નીકળ્યા? તે વિશેષક ત્રણ ગાથાઓથી કહે છે--"अह" ઈત્યાદિ। "चउरंगिणीए ઈત્યાદિ। "एयारिसाए" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--अह-अथ હાથીના ઉપર બેઠા પછી उसिण्ण छत्तेण चामराहिय सोहिओ-उच्छ्रितेन छत्रेण चामराभ्यां च शोभित નેમિકુમારની ઉપર સેવકોએ છ

समुद्रविजयादिनामकैः दशभिः भ्रातृभिः वृतः समुद्रविजयादयो दशभ्रातरस्तेषां चक्रेण समूहेन, यद्वा—दशार्हचक्रेण=दशार्हसमूहेन सर्वतः=चतुर्दिक्षु परिवारितः=परिवेष्टितः ॥११॥

यथाक्रमं=यथाक्रमं रचितया=निवेशितया चतुरङ्गिण्या=हस्त्यश्वरथपदातिरूपया सेनया, गगनस्पृशा—गगनं स्पृशतीति गगनस्पृक् तेन नभोऽङ्गणव्यापिना दिव्येन =मनोहरेण तूर्याणां=मृदङ्गपणवादीनां सनिनादेन=गाढध्वनिना एतादृश्या=उपरिनिर्दिष्टया ऋद्ध्या=विभूत्या, उत्तमया=उत्कृष्टतमया द्युत्या=दीप्त्या च उपलक्षितः स वृष्णिपुङ्गवः=वृष्णिकुलश्रेष्ठो भगवानरिष्टनेमिः विवाहार्थं निजकात्= स्वकीयाद् भवनाद् निर्यातः=निर्गतो मण्डपासन्नप्रदेशे समागतः। इद वर्णन

के ऊपर खेचरोंने छत्र धरा तथा चमर ढोरने वाले उनपर चमर ढोरने लगे। (दसारचक्केण य सो सव्वओ परिवारिओ—दशार्हचक्रेण च स सर्वतः परिवारितः) समुद्रविजय, अक्षोभ, स्तिमित, सागर, हिमवत, अचल, धरण, पूरण, अभिचंद तथा वसुदेव इन दशों दशार्हों से परिवृत (वहिपुंगवो—वृष्णिपुंगवः) वे नेमिकुमार (जहक्कम रइयाए चउरंगिणीए सेणाए गयण फुसे दिव्वेण तुरियाण सनिनाएण एयारिसाए इड्ढीए उत्तमाए य जुत्तीए—यथाक्रमं रचितया चतुरंगिण्या सेनया गगनस्पृशा दिव्येन तूर्याणां सनिनादेन एतादृशा ऋद्ध्या उत्तमया च द्युत्या) यथाक्रम स्थापित चतुरंगिणी—हस्ति, अश्व, रथ एव पदातिरूप सेना से तथा गगन को स्पर्श करने वाले दिव्य वादित्रों के तुमुल नाद से इस प्रकार पूर्वोक्त ऋद्धि से एव उत्तम दीप्ति से युक्त होकर विवाह के लिये (निग्गओ भवणाओ निज्जाओ—निजकात् भवनात् निर्यातः) अपने भवन से निकले। और चलकर मंडप के समीप आये।

चमर ढोळनारा तेमना उपर चमर ढोळवा लाग्या. दसारचक्केण य सो सव्वओ परिवारिओ—दशार्हचक्रेण च स सर्वतः परिवारितः समुद्रविजय, अक्षोभ, स्तिमित, सागर, हिमवत, अचल, धरण, पूरण, अभिचंद तथा वसुदेव आ दसे दशार्होथी परिवृत बनेला वहिपुंगवो—वृष्णिपुंगवः ए नेमिकुमार जहक्कम रइयाए चउरंगिणीए सेणाए गयण फुसे दिव्वेण तुरियाण सनिनाएण एयारिसाए इड्ढीए उत्तमाए य जुत्तीए-यथाक्रम रचितया चतुरंगिण्या सेनया गगनस्पृशा दिव्येन तूर्याणां सनिनादेन एतादृशा उत्तमया द्युत्या यथाक्रम स्थापित चतुरंगिणी—हाथी, अश्व, रथ अने पायदळरूप सेनथी तथा गगनभेदी एवा दिव्य वाजीत्रोना तुमुल नादथी आ प्रकारनी संपूर्ण ऋद्धि साथे तेमज उत्तम दीप्तिथी युक्त बनीने विवाह माटे निग्गओ भवणाओ निज्जाओ—निजकात् भवनात् निर्यातः पोताना भवनथी नीकळ्या अने चालीने मंडप समीप पहोंच्या.

विशेषकेण कृतम्। तल्लक्षणं हि—

द्वाभ्यां युग्ममिति प्रोक्तं, त्रिभिश्च स्याद् विशेषकम्।
कलापकं चतुर्भिः स्यात्तदूर्ध्वं कुलकं स्मृतमिति ॥१॥

तदा राजीमत्या दक्षिणनेत्रस्फुरणादिरूपमशुभमभूत्।

अत्रैव वृद्धसम्प्रदाय —

यदा भगवानरिष्टनेमिः स्वभवनान्निर्गतः, तदा राजपुत्री राजीमती स्वभवनोपरि गवाक्षे स्थिताऽऽसीत्। सा भगवन्तमरिष्टनेमिमागच्छन्तं विलोक्य वचनातीतमानन्दमनुभवन्त्येवमचिन्तयत्-अहो! किमयं सूर्यो वा स्मरो वा मघवा वा समागच्छति, किंवा मम भाग्यपुण्यसञ्चय एव मर्त्यरूपधरः समागच्छति,

भावार्थ—कृष्णने नेमिकुमार को वरराजा के वेष मे सज्जित कर और उनको अपने पट्टहस्ती पर बैठाकर वे उनकी वरात को लेकर अपने घर से उग्रसेन के यहा चले। वरात की शोभा अपूर्व थी। जब वरात मडप के समीप पहुँची तब राजीमती का दाहिना नेत्र स्फुरित हुआ जो उसके अमगल का सूचक था।

इस विषय में वृद्धसम्प्रदाय ऐसा है—

जिस समय भगवान् अरिष्टनेमि अपने भवन से निकले उस समय राजपुत्री राजीमती अपने भवन के ऊपर गवाक्ष में बैठी हुई थी। उसने जब भगवान अरिष्टनेमि को आते हुए देखा तो उसके आनद का पार नही रहा। उसके हृदय मे उनको देखते ही अनेक प्रकार के तर्क वितर्क उठने लगे-उसने सोचा क्या यह कोई सूर्य है या कामदेव है या इन्द्र है जो इस तरफ आ रहा है। अथवा क्या

ભાવાર્થ—કૃષ્ણે નેમિકુમારને વરરાજાના વેશમા સજ્જીત કરીને અને પોતાના પટ્ટ હાથી ઉપર બેસાડીને તેઓ પોતાના ઘેરથી જાનને લઈને ઉગ્રસેન રાજાને ત્યા ચાલ્યા જાનની શોભા અપૂર્વ હતી જ્યારે જાન મંડપની પાસે પહોચી ત્યારે રાજીમતિનુ જમણુ નેત્ર ફરક્યુ જે તેને અમંગળનુ સૂચન કરી રહેલ હતુ

આ વિષયમા વૃદ્ધ સંપ્રદાય એવો છે—

જે સમયે ભગવાન અરિષ્ટનેમિ પોતાના ભવનથી નીકળ્યા તેજ સમયે રાજપુત્રી રાજીમતી પોતાના ભવનની બારીમા બેઠેલ હતી તેણે જ્યારે ભગવાન અરિષ્ટનેમિને આવતા જોયા ત્યારે તેના આનંદનો પાર ન રહ્યો એને જોતા જ તેના હૃદયમા અનેક પ્રકારના તર્કવિતર્કો ઉઠવા લાગ્યા તેણે વિચાર કર્યો કે આતે શુ કોઈ ઇન્દ્ર છે, સૂર્ય છે, કે કામદેવ છે કે, જે આ તરફ આવી રહેલ છે અથવા

येन मम भाग्येनाऽसौ मम भर्त्ता विद्यते, तस्मै का प्रत्युपक्रियामहं करिष्ये।
एवं विचिन्तयन्ती नेमिदर्शनजनितापूर्वानन्दमनुभवन्ती—'काऽहं, किमायते, कोऽसौ कालः, क्वाऽहं तिष्ठामि' इत्यादिकं किमपि न ज्ञातवती। अस्मिन्नवसरे तस्याः दक्षिणमीक्षणं प्रस्फुरितम्। तत्र साऽनिष्टाशङ्काकुलितहृदया सखीभ्यो दक्षिणनेत्रस्फुरणवृत्तान्तं न्यवेदयत्। ततस्तामाश्वासयितुं सख्योऽब्रुवन्—महाभागे! तव शुभं भवतु, खेदं मा कुरु। किमत्र समागतोऽपि श्रीमानरिष्टनेमिर्निवर्तिष्यते? इदमसम्भाव्यम्! अतश्चिन्तामपहाय प्रसन्नमानसा भव। ततो राजीमती सखीसमुदायमेवमब्रवीत्—सख्यः! स्वभवितव्यतामहं जाने, अतो मम हृदयं निश्वसिति, यदयमत्र समागतोऽपि प्रतियास्यति,—न तु मां परिणेष्यति ॥११-१३॥

मेरा ही कोई पूर्वभव का पुण्यसमूह मनुष्य के रूप में इधर आ रहा है। धन्य है मेरे उस पुण्य को जिसने मुझे ऐसा सर्वोत्तम पति दिया है। मैं इस उपलक्ष्य (भेट) में उसकी क्या प्रत्युपक्रिया करूँ। इस प्रकार विचारमग्न उस राजुल को नेमिप्रभु के दर्शन से अपूर्व आनन्द का अनुभव हुआ—अतः वह यह सब भूल गई कि मैं कौन हूँ, यह सब क्या हो रहा है, यह समय कौनसा है, मैं कहाँ हूँ। इसी समय उसका दाहिना नेत्र फरकने लगा। उसने उसी समय पास में रही हुई अपनी सखियों से इस दाहिने नेत्र के फरकने के समाचार कहे—सो उन्होंने उसको आश्वसित करने के लिये कहा—महाभागे! तेरा कल्याण हो—तू खेद मत कर। क्या यहां आये हुए अरिष्टनेमिकुमार वापिस लौट कर चले थोडे ही जावेंगे। इसलिये चिन्ता को दूर कर तुम प्रसन्न चित्त होओ। सखियों से इस प्रकार सुनकर राजुलने उसी समय उनसे ऐसा कहा—

મારા કોઈ પૂર્વભવના પુણ્ય સમૂહ મનુષ્યના રૂપમા અહીં આવી રહેલ છે ધન્ય છે મારા એ પુણ્યને કે જેણે મને આવો સર્વોત્તમ પતિ આપેલ છે હુ તે ઉપલક્ષમા એની કઈ રીતની પ્રત્યુપક્રિયા કરૂ આ પ્રકારના વિચારમા નિમગ્ન એવી રાજુલને નેમિપ્રભુના દર્શનથી અપૂર્વ આનદનો અનુભવ થયો આથી તે એ સઘળુ ભૂલી ગઈ કે, હુ કોણ છુ આ સઘળુ શુ થઈ રહ્યુ છે આ સમય કયો છે? હુ કયા છુ? એજ વખતે તેનુ જમણુ નેત્ર ફરકવા લાગ્યુ એમણે એજ વખતે પોતાની પાસે બેસેલી સખીઓને પોતાનુ જમણુ નેત્ર ફરકવાની વાત કહી આથી એ સખીઓએ તેને આશ્વાસન આપતા કહ્યુ કે, હે મહાભાગે! તારૂ કલ્યાણ થાઓ તુ ખેદ ન કર શુ અહીં આવેલા અરિષ્ટનેમિકુમાર પાછા થોડા જ ચાલ્યા જવાના હતા? માટે ચિંતા છોડી દઈને તમો પ્રસન્નચિત્ત થાઓ આ પ્રકારનુ સખીઓનુ કહેવાનુ સાભળીને રાજુલે એ સમયે તેમને એવુ કહ્યુ—સખીઓ હુ મારી ભવિતવ્યતાને જાણુ છુ

अत्रान्तरे यद्भूतदुच्यते–

मूलम्–अहं सो तत्थ निज्जतो, दिस्स पाणे भयदुए।
वाडेहिं पंजरेहिं च, सन्निरुद्धे सुदुक्खिए ॥१४॥
जीवियतं तु संपत्ते, मंसट्ठा भक्खियव्वए।
पासित्ता से महापण्णे, सारहिं इणमब्बवी ॥१५॥

छाया–अथ स तत्र निर्यन्, दृष्ट्वा प्राणान् भयद्रुतान्।
वाटेषु पञ्जरेषु च, सन्निरुद्धान् सुदुःखितान् ॥१४॥
जीवितान्तं तु सम्प्राप्तान्, मांसार्थं भक्षयितव्यान्।
दृष्ट्वाऽथ महाप्राज्ञः, सारथिम् इदमब्रवीत् ॥१५॥

टीका–'अहसो' इत्यादि।

अथ=अनन्तर स भगवानरिष्टनेमि निर्यन्=निर्गच्छन् विवाहमण्डपप्रत्यासन्नप्रदेशे वाटेषु=वृक्षशालाकादिभिर्निर्मितेषु पंजरेषु=पक्ष्यादिबन्धनगृहेषु च सन्निरुद्धान्=गाढनियन्त्रितान् अत एव सुदुःखितान्=दुःख प्राप्तान्, भयद्रुतान्=भयत्रस्तान् प्राणान्=प्राणिनो जीवान्=मृगत्तित्तिरलावकादीन् दृष्ट्वा, तु=पुनः जीवितान्त=जीवि

सखियों! मैं अपनी भवितव्यता जानती हूं अतः मेरा हृदय ऐसा विश्वास नहीं करता है कि ये मेरे साथ विवाह करेंगे। मुझे तो ऐसा ही मालूम देता है कि वे मुझे छोडकर ही चले जायेंगे। ११।१२।१३॥

इसके बाद क्या हुआ सो सूत्रकार कहते हैं–'अहसो' इत्यादि 'जीवियंतु' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह–अथ) जब नेमिकुमार चले आरहे थे तब (सो सः) उन्होंने (तत्थ–तत्र) उस मंडप के समीप (वाडेहिं–वाटेषु) वाडों में तथा (पंजरेहिं–पंजरेषु) पिंजरों में (सन्निरुद्धे–सन्निरुद्धान्) बन्द किये गये अत एव (सुदुक्खिए–सुदुःखितान्) अत्यंत दुःखित ऐसे (भयदुए–भयद्रुतान्) भयत्रस्त (पाणे–प्राणान्) जीवों को–मृग त्तित्तिर चिडिया

અથી મારૂ હૃદય એવો વિશ્વાસ નથી કરતુ કે, તેઓ મારી સાથે વિવાહ કરશે મને તો એવુ જ માલુમ પડે છે કે, મને છોડીને તેઓ ચાલ્યા જશે ॥૧૧॥૧૨॥૧૩॥

આ પછી શુ થયુ તેને સૂત્રકાર કહે છે –"अहसो" ઇત્યાદિ ! "जीवियतु" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ–अह–अथ જ્યારે નેમિકુમાર આવી રહ્યા હતા ત્યારે सो–स તેમણે तत्थ–तत्र તે મંડપની સામે वाडेहिं–वाटेषु વાડામાં તથા पंजरेहिं–पंजरेषु પાંજરામાં सन्निरुद्ध–सन्निरुद्धान् પુરવામાં આવેલા તેમજ सुदुक्खिए–सुदुःखितान् અત્યંત દુઃખી એવા ત્રાસથી भयदुए–भयद्रुतान् ભયભીત બનેલા

तस्य=प्राणधारणव्यापारस्य अन्त=मृत्योरासन्नत्वादवसान समाप्तान्=समधिगतान्, यद्वा-जीवितस्य अन्त=पर्यन्तवर्ती भागस्त सम्प्राप्तान्, मृत्युमुखप्राप्तप्रायानित्यर्थः मांसार्थे=मांसाशनलोलुपैरविवेकिभिर्मांसाशनेन भक्षयितव्यान्=भक्षितुमानीतान् जीवान् 'पासित्ता' प्रेक्ष्य=विचार्य अथ=तदनन्तर महाप्राज्ञः-महती प्रज्ञा=मतिश्रुतावधिज्ञानत्रयात्मिका यस्य स तथा, तीर्थङ्करा हि जन्मत एव मत्यादिज्ञानत्रययुक्ता भवन्ति। एतादृशः स भगवानरिष्टनेमि सर्व जानन्नपि, जीवरक्षाकरणकारणानुमोदनस्वरूपाया अहिंसाया विशिष्टमाहात्म्य बोधयितु सारथिं=मक्रमाद हस्तिपकम् इद वक्ष्यमाण वचनम् अब्रवीत्=उक्तवान्। १४-१५॥

मूलम्—कस्स अट्ठा इमे पाणा, एए सव्वे सुहेसिणो।
वाडेहिं पंजरेहिं च, सन्निरुद्धा य अच्छेहिं ॥१६॥

छाया—कस्यार्थम् इमे प्राणा, एते सर्वे सुखैषिणः।
वाटेषु पञ्जरेषु च, सन्निरुद्धाश्च आसते ॥१६।

आदि जानवरों को (दिस्स-दृष्ट्वा) देखकर ऐसा विचार किया कि ये सब (जीवियत नु सपत्ते मसट्ठा भक्खियव्वए-जीविताना सम्प्राप्तान् मांसार्थं भक्षयितव्यान्) मारे जाने वाले हैं-क्यों कि मांसाहार के लोलुपी अविवेकी व्यक्तियोंने इनको मासके निमित्त ही यहां लाकर बंद किया है। अतः (से महापण्णे-स महाप्राज्ञः) जन्म से ही मतिश्रुत एव अवधिज्ञानरूप प्रज्ञा से समन्वित होने से सब जानते हुए भी जीवरक्षा करणकारणानुमोदन स्वरूप अहिंसा का विशिष्ट महात्म्य बतलाने के लिये उन प्रभुने (सारहिं-सारथिम्) सारथि-अर्थात् महावत से (इणं मब्बवी-इदम् अब्रवीत्) ऐसा कहा-॥१४॥१५॥

જીવોને મૃગ, તિત્તિર આદિ વગેરેને दिस्स-दृष्ट्वा જોઈને એવો વિચાર કર્યો કે, આ બધા जीवियतु सपत्ते मसट्ठा भक्खियव्वए-जीविताना सम्प्राप्तान मांसार्थं भक्षयितव्यान् મારવામાં આવનાર છે કેમકે, માંસાહારના લોલુપિ અવિવેકી વ્યક્તિઓએ તેમને માંસના નિમિત્તેજ અહીં લાવી યોગ્ય સમજી બંધ કરેલ છે આથી से महापण्णे-स महाप्राज्ञः જન્મથી જ મતિશ્રુત તથા અવધિજ્ઞાન રૂપ પ્રજ્ઞાથી સમન્વિત હોવાથી સઘળું જાણતા હોવા છતાં પણ અહિંસાનું વિશિષ્ટ મહાત્મ્ય બતાવવા માટે તે પ્રભુએ सारहिं-सारथिम् સારથી-અર્થાત્ માવતને इणं मब्बवी-इदम् अब्रवीत् એવું કહ્યું ॥૧૪॥૧૫॥

टीका—'कस्स' इत्यादि।

एते सर्वे प्राणाः=मृगलावकादयो जीवाः सुखैषिणः=सुखाभिलाषिणः सन्ति। जीवानां सुखैषित्वं स्वाभाविकम्। इमे प्राणिनः कस्यार्थे=कस्य हेतोः वाटेषु पञ्जरेषु च सन्निरुद्धाः आसते। द्वितीयचकार पूरणार्थः ॥१६॥

एवं भगवतोक्ते—

मूलम्—अह सारही तओ भणइ, एए भद्दा उ पाणिणो।
तुब्भं विवाहकज्जम्मि, भुंजावेउ बहु जणं ॥१७॥

छाया—अथ सारथिस्ततः भणति, एते भद्रास्तु प्राणिनः।
युष्माकं विवाहकार्ये, भोजयितुं बहु जनम् ॥१७॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=भगवद्वचनश्रवणानन्तरं सारथिः=हस्तिपकः ततः=भगवन्तं भणति=ब्रवीति—हे कुमार! एते भद्राः=सरलाः—क्रूरस्वभाववर्जिताः प्राणिनः=मृगतित्तिरलाव

क्या कहा सो कहते हैं—'कस्स अट्ठा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(एए सव्वे सुहेसिणो—एते सर्वे सुखैषिणः) ये सब मृगत्तित्तिर लावक आदि जानवर सुखाभिलाषी हैं (इमे पाणा कस्स अट्ठावाडेहिं पंजरेहिं च सन्निरुद्धाय अच्छई—इमे प्राणाः कस्यार्थं वाटेषु पञ्जरेषु च सन्निरुद्धाः आसते) फिर ये प्राणी यहां वाडों में तथा पंजरों में किसकारण से बंद किये हुए हैं ॥१६॥

अब सारथि कहता है—'अह सारही' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह—अथ) नेमिकुमारने जब पशुओं के बंद होने का कारण सारथि से पूछा—तब (सारही—सारथि) उस सारथिने (तओ भणइ—ततः भणति) प्रभुको उत्तर दिया कि—हे कुमार! (एए भद्दा

શુ કહ્યુ તે કહે છે—"कस्स अट्ठा" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ- एए सव्वे सुहेसिणो—एते सर्वे सुखैषिण આ સઘળા મૃગ આદિ જાનવરો સુખના અભિલાષી છે, છતા પણ इमे पाणा कस्स अट्ठा वाडेहिं पंजरेहिं च सन्निरुद्धा य अच्छई—इमे प्राणा कस्यार्थं वाटेषु पञ्जरेषु च सन्निरुद्धा आसते આ પ્રાણીઓને અહી વાડામા તથા પાંજરામા શા માટે પુરવામા આવ્યા છે ॥૧૬॥

હવે સારથી કહે છે—"अह सारही" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—अह—अथ નેમિકુમારે જ્યારે પશુઓને બાધેલ હોવાનુ કારણ સારથીને પુછ્યુ ત્યારે सारही—सारथि. તે સારથીએ तओ भणइ—त भणति પ્રભુને ઉત્તર આપ્યો કે, હે કુમાર! एए भद्दा पाणिणो—एते भद्रा प्राणिन ક્રૂર સ્વભાવથી

कान्या युष्माकं विवाहकार्ये बहु जन=समागतान् बहून् यादवान् भोजयितुं सन्निरुद्धा सन्ति। 'तओ' इत्यत्र सार्वविभक्तिकस्तसिः। 'तु' शब्दः पूरणे ॥१७॥

इत्थं सारथिनोक्ते तत्प्रभुश्चक्रे तदाह—

मूलम्—सोऊण तस्स वयणं, बहुपाणिविणासणं।
चिंतेइ से महापन्ने, साणुक्कोसे जिएहि ऊ ॥१८॥

छाया—श्रुत्वा तस्य वचनं, बहुप्राणिविनाशनम्।
चिन्तयति स महाप्राज्ञः, सानुक्रोशो जीवेषु तु ॥१८॥

टीका—'सोऊण' इत्यादि।

तस्य=हस्तिपकस्य बहुप्राणिविनाशनं-बहुप्राणिविनाशसूचकं वचनं श्रुत्वा जीवेषु=प्राणिषु सानुक्रोशो=दयावान् महाप्राज्ञो=मत्यादिज्ञानत्रयसहितः स भगवानरिष्टनेमिः, तु=निश्चयेन चिन्तयति ॥१८॥

पाणिणो-एते भद्राः प्राणिनः) ये क्रूर स्वभाव से रहित होने के कारण भोले प्राणी-मृग तित्तिर लावक आदि जानवर हे इनको मारकर (तुब्भे विवाहकज्जम्मि बहु जण भुजावेउ-युष्माकं विवाहकार्ये बहुजनं भोजयितुम्) आपके इस विवाहकार्य में आये हुए बहुत यादवों को जो कि मांसाहारी है उनको खिलाने के लिये बंद किये गये है ॥१७॥

इस प्रकार सारथि के वचन सुनकर भगवानने क्या किया सो कहते हैं—'सोऊण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तस्स बहुपाणिविणासणं वयणं सोऊण-तस्य बहुप्राणिविनाशनं वचनं श्रुत्वा) इस प्रकार अनेक प्राणियों के विनाश सूचक सारथि के वचन सुनकर (जिएहिं साणुक्कोसे-जीवेषु सानुक्रोशः) समस्त प्राणियों में अनुकम्पा के भाव रखने वाले तथा (महापन्ने-महाप्राज्ञः

રહિત હોવાના કારણે ભોળા પ્રાણી મૃગ, તિત્તિર લાવક, વગેરે જાનવર છે તેમને મારીને तुब्भे विवाहकज्जम्मि-युष्माकं विवाहकार्ये આપના આ વિવાહ કાર્યમાં આવેલા बहु जण भुजावेउ-बहुजनं भोजयितुम् ઘણા યાદવો કે, જે માંસાહારી છે તેમને ખવરાવવાને માટે બંધ કરવામાં આવેલ છે ॥૧૭॥

આ પ્રમાણે સારથિનું વચન સાંભળીને ભગવાને જે કહ્યું તે કહે છે—"सोऊण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—तस्स बहुपाणिविणासणं वयणं सोऊण-तस्य बहुप्राणिविनाशनं वचनं श्रुत्वा આ પ્રકારના અનેક પ્રાણીયોના વિનાશ સૂચક એવા સારથિના વચન સાંભળીને जिएहिं साणुक्कोसो-जीवेषु सानुक्रोशः સઘળા પ્રાણીયોમાં અનુ

भगवान् यथा निचिन्तितवान् तदाह--

मूलम्--जइ मज्झ कारणा एए, हम्मंति सुबहू जिया ।
नै मे एयं तु निस्सेसं,परलोए भविस्सइ ॥१९॥

छाया--यदि मम कारणादेते, हन्यन्ते सुबहवो जीवाः ।
न मे एतत्तु निःश्रेयसं, परलोके भविष्यति ॥१९॥

टीका--'जइ' इत्यादि ।

यदि एते मन्निरुद्धा सुबहवः प्राणिनो मम कारणाद् हन्यन्ते । तदा तु एतद्=हननं परलोके मोक्षगमने मे=मम निश्रेयसं=कल्याणकारकं न भविष्यति । हिंसया मोक्षो न भवतीति भावः ॥१९॥

एतेषां प्राणिनां बन्धमोचनपुरस्सरं रक्षणमेव श्रेयस्करमिति भगवदभिप्रायं ज्ञात्वा सारथिना वाटकानां पञ्जराणां च द्वाराणि समुद्घाटितानि, तेषां मृग

मति-आदिक तीन ज्ञान संपन्न (से-स) उन नेमि प्रभुने (चिंतेइ-चिन्तयति) विचार किया ॥१८॥

भगवान ने जो विचार किया सो बताते हैं--'जइ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--यदि (मज्झ-मम) मेरे (कारणा-कारणात्) निमित्त से (एए सुबहू जीया-एते सुबहवो जीवाः) ये सब रोके गये जीव (हम्मंति-हन्यन्ते) मारे जाते हैं तो (एयं-एतत्) यह हिंसा (मे-मे) मेरे लिये (परलोए निस्सेसं न भविस्सइ-परलोके निःश्रेयसं न भविष्यति) मोक्षगमन में कल्याणप्रद नहीं होगी अर्थात्-हिंसा से मोक्ष नहीं होता है ॥१९॥

सारथिने जब यह देखा कि इन प्राणियों का बंधन मोचन पूर्वक संरक्षण ही श्रेयस्कर है, ऐसा विचार प्रभु का है तो उसने प्रभु के इस

ક પાનો ભાવ રાખવાવાળા તથા महापन्ने-महाप्रज्ञ મત્યાદિક ત્રણ જ્ઞાનથી સંપન્ન से-स તે નેમિપ્રભુએ चिंतेइ-चिन्तयति વિચાર કર્યો ॥૧૮॥

ભગવાને જે વિચાર કર્યો તે બતાવે "जइ" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ- જો मज्झ-मम મારા कारणा-कारणात् નિમિત્તથી एए सुबहू जीया-एते सुबहवो जीवाः આ સઘળા પકડાયેલા જીવ हम्मति-हन्यन्ते મારવામાં આવે છે તો एय-एतत् આ હિંસા मे-मे મારા માટે परलोए निस्सेस न भविस्सइ-परलोके निश्रेयस न भविष्यति મોક્ષગમનમાં કલ્યાણપ્રદ થશે નહીં અર્થાત્ હિંસાથી મોક્ષ થતો નથી ॥૧૯॥

સારથિએ જ્યારે એ જોયું કે, આ પ્રાણીઓને છોડી મૂકીને તેઓનું સંરક્ષણ કરવું એ શ્રેયસ્કર છે એવો પ્રભુનો વિચાર છે તેમ સમજીને તેણે પ્રભુના એ વિચાર અનુસાર બાજ

त्तित्तिरलावकादीनां बन्धनानि च छिन्नानि। ततस्ते सर्वे जीवाः सुखमनुभवन्तः वनं गताः। इत्थं सारथिकृतदयाकार्येण सतुष्टो भगवान् यत्कृतवांस्तदाह—

मूलम्—सो कुंडलाण जुयलं, सुत्तगं च महाजसो।
आभरणाणि य सव्वाणि, सारहिस्स पणामए ॥२०॥

छाया—स कुण्डलानां युगलं, सूत्रकं च महायशाः।
आभरणानि च सर्वाणि, सारथये अर्पयति ॥२०॥

टीका—'सो' इत्यादि।

महायशाः-महत्=सर्वातिशायि यशः=कीर्त्तिर्यस्य स तथा, स भगवान्-रिष्टनेमिः कुण्डलानां युगलं, च=पुनः सूत्रकं-कटिसूत्रकम्, केयूरकादीनि अन्यानि च सर्वाणि आभरणानि=कयूरादिकानि सर्वाण्याभरणानि सारथये अर्पयति। वाटकेषु स्थिताः-पञ्जरेषु च स्थिता हनिष्यमाणाः मृगत्तित्तिरलावकादयोऽनेन सारथिना रक्षिताः, इति हेतोः परितुष्य भगवानरिष्टनेमिस्तस्मै पारितोषिक कुण्डलादिकं ददातीति सूत्रार्थः ॥२०॥

विचार के अनुसार ही पंजर एवं वाडे मे बंद किये हुए उन समस्त पशुओं को छोडने के अभिप्राय से उनका द्वार उघाड दिया और उन के सब बंधन काट दिये। इससे सब के सब वे जीव वहां से आनंदपूर्वक सुखि होते हुए वन को चले गये। इस प्रकार सारथि कृत इस दयामय कार्य से संतुष्ट भगवान् ने उस समय क्या किया सो कहते हैं—'सो' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(महाजसोसो महायशाः सः) महाकीर्ति संपन्न उन प्रभुने उसी समय (कुंडलाण जुयलं सुत्तगंच-कुंडलानां युगलं सूत्रकं च) दोनों कानों के कुंडलो को और कटिमेखला को तथा अन्य (सव्वाणि

રામાં અને વાડામાં બંધ કરેલા એ સઘળાં પશુઓને છોડવાના અભિપ્રાયથી તેનું દ્વાર ઉઘાડી નાખ્યું અને એમના બંધન કાપી નાખ્યાં આથી તે સઘળા જીવો આનંદ પૂર્વક સુખી બનીને, ત્યાંથી નિર્ભય થઈ વનમાં ચાલી ગયા આ પ્રકારના સારથીથી કરાયેલા આ દયામય કાર્યથી સંતુષ્ટ ભગવાને તે સમયે શું કર્યું તેને કહે છે -"सो" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--महाजसो-महायशाः મહાકીર્તિસંપન્ન તે પ્રભુએ એ સમયે कुंडलाणं जुयलं सुत्तगं च-कुण्डलानां युगलं सूत्रकं च બન્ને કાનોના કુંડળો અને કટિ

ततो यदभूत्तदुच्यते—

अथ करुणारससागरः सकलजन्तुरक्षणपरायणो भगवानरिष्टनेमिस्ततो हस्तिनं निवर्तयितुं हस्तिपकमादिष्टवान्। अनतिक्रमणीयादेशस्य तस्य भगवतो निदेशानुसारेण हस्तिपको हस्तिनं निवर्तितवान्। निवर्तमानं भगवन्तमरिष्टनेमिं विलोक्य तन्मातापितरौ शिवासमुद्रविजयौ तत्पुरतः समागत्य प्रपतदश्रुबिन्दुभेदापितेक्षणौ एवमुक्तवन्तौ—वत्स! कथमस्मत्प्रमोदद्रुमं मूलत उन्मूलयितुं प्रयतसे? विवाहं स्वीकृत्य सम्प्रति तथ्यागतं कृष्णादिनं यदून् कथं खेदयसि? त्वदि

आभरणाणि-सर्वाणि आभरणानि) समस्त केयूर आदि आभरणों को उतार कर (सारहिस्स पणामए—सारथये अर्पयति) सारथि को दे दिये ॥२०॥
इसके बाद क्या हुआ सो कथा रूपसे कहते हैं—

दयालु प्रभुने प्रसन्न होकर जब अपने समस्त आभूषणों को शरीर पर से उतार कर उस सारथि को दे दिया तब करुणारस के सागर तथा समस्त प्राणियों की रक्षाकरने में तत्पर उन भगवान् अरिष्टनेमि ने सारथि से अपने हाथी को वापिस लौटाने के लिये आदेश दिया। सारथिने भी अनतिक्रमणीय आदेशवाले उन प्रभु की आज्ञानुसार हाथी को पीछे वहा से वापिस लौटा लिया। हाथी को वापिस लौटा हुआ देख कर प्रभु के मातापिताने उसी समय उनके पास आकर आखों से अश्रु की चौधार बहाते हुए कहा—वत्स! यह क्या कर रहे हो क्यों हम लोगों के प्रमोदरूपी वृक्ष को जडमूल से उखाडने के लिये तत्पर हो रहे हो। यदि विवाह नहीं ही करना था तो क्यों वह सब समारंभ सजवाया।

મેખલા તથા सव्वाणि आभरणाणि—सर्वाणि आभरणानि સઘળા કેયૂર વગેરે આભૂષણો ઉતારીને सारहिस्स पणामये—सारथये अर्पयति સારથીને આપી દીધા ॥૨૦॥

આના પછી શુ બન્યુ તે કથા રૂપથી કહે છે--

દયાળુ પ્રભુએ પ્રસન્ન બનીને જ્યારે પોતાના સઘળા આભૂષણોને શરીર પરથી ઉતારી તે સારથીને આપી દીધા ત્યારે કરૂણારસના સાગર તથા સઘળા જીવોની રક્ષા કરવામા તત્પર એ ભગવાન અરિષ્ટ નેમીએ તે સારથીને પોતાના હાથીને પાછો ફેરવવા માટે આદેશ આપ્યો. સારથીએ પણ અનતિક્રમણીય આદેશવાળા પ્રભુની આજ્ઞાઅનુસાર હાથીને ત્યાથી પાછો ફેરવ્યો. હાથીને પાછો ફરતો જોઇને પ્રભુના માતા પિતાએ એ સમયે તેમની પાસે પહોચી આખોથી આસુ સારતા કહ્યું કે વત્સ! આ શુ કરી રહ્યા છો? અમારા ઉત્સાહથી પ્રમુદિત બનેલા વૃક્ષને જડમૂળથી ઉખેડવા માટે કેમ તત્પર બન્યા છો? જો વિવાહ કરવોજ   આ

त्वदर्थे कृष्णः स्वयमेवोग्रसेनसमीपे गत्वा तत्पुत्रीं राजीमतीं याचितवान्, अधुना स कथं स्वमुखमुग्रसेनं दर्शयिष्यति? कथं वा वराकी सा राजीमती स्थास्यति? सा तु जीवनपर्यन्तं जीवन्मृतेव स्थास्यति। न हि कुलीना कन्या मनसाऽपि स्वीकृतं पतिं परित्यजति। भर्तृहीना भामिनी चन्द्रहीना रजनीव न शोभते। अतो विवाहं कृत्वा स्ववधूमुखमस्मान् दर्शय। अस्माकमिमां प्रथम

पहिले विवाह की अनुमति देकर अब इस समय उसके परित्याग से कृष्णादिक यादवों को दुःखित करना तुमको योग्य नहीं है। देखो बेटा! तुम्हारे निमित्त ही कृष्ण उग्रसेन के पास गये और उनसे तुम्हारे लिये राजीमती की याचना की। परंतु अब बतलाओ जब तुम्हारी तर्फ से यह परिस्थिति उत्पन्न की जा रही है तो कृष्ण की क्या कीमत उनके समक्ष रहेगी। इससे तो उनको अपना मुह दिखाने मे भी शरम आवेगी। तथा यह भी तुम्हारे जैसे ज्ञानियों को सोचने की बात है कि इस हालत में उस बिचारी राजुल की क्या दशा होगी। वह तो अब बिना बिचारी ही जीवन पर्यंत जीती हुई मरी के समान हो रहेगी। कारण कि कुलीन कन्याएँ मनसा स्वीकृत पति के सिवाय अन्य पुरुषों की स्वप्न मे भी चाहना नहीं करती हैं। राजुलने जब आपको अपना पति मान लिया है तो वह अब दूसरे की कैसे होगी। जिस प्रकार रजनी, चन्द्र बिना शोभारहित लगती है उसी प्रकार स्त्री भी पति विहीन शोभारहित लगती है। इसलिये विवाह करो और अपनी

બધી ધમાલ શા માટે ઉભી કરાવી? પ્રથમ વિવાહની અનુમતી આપીને હવે તેનો પરિત્યાગ કરવાથી, કૃષ્ણ વગેરે યાદવોને દુઃખી કરવા એ તમારા માટે યોગ્ય નથી જુઓ પુત્ર! તમારા નિમિતે જ કૃષ્ણ ઉગ્રસેન રાજા પાસે ગયા અને તમારા માટે રાજીમતિની માગણી કરી પરંતુ આ સમયે તમારા તરફથી આવા પ્રકારની પરિસ્થિતિ ઉભી કરવામાં આવી રહી છે તો આથી એમની પાસે કૃષ્ણની કિંમત શું રહેશે? આવો પ્રકાર બનતા તેમને માટે તો મોઢું દેખાડવું પણ ભારે શરમ જનક બની જવાનું તેમજ વિચારશીલ એવા તમારે એ પણ વિચારવું જરૂરી છે કે, જેની સાથે તમારે વિવાહ નક્કી થયેલ છે એ બિચારી રાજુલની શું હાલત થશે એ તો હવે અવિવાહિત એવી જીવત છતાં મર્યા જેવીજ રહેવાની કારણ કે, કુલીન કન્યાઓ, મનથી સ્વીકારેલા પતિ સિવાય બીજા કોઇ પુરૂષની સ્વપ્નામાં પણ ચાહના કરતી નથી રાજુલે જ્યારે તમને પોતાના પતિ માની લીધેલ છે ત્યારે તે હવે બીજાની કઇ રીતે બની શકે? જે પ્રમાણે રાત ચંદ્ર વગરની સારી નથી લાગતી તેજ પ્રમાણે સ્ત્રી પણ પતિ વગર શોભતી નથી આ કારણે વિવાહ કરો અને તમારી પત્નીનું મોઢાના

ततो यद्भूतदुच्यते—

अथ करुणारससागरः सकलजन्तुरक्षणपरायणो भगवानरिष्टनेमिस्ततो हस्तिनं निवर्त्तयितुं हस्तिपकमादिष्टवान्। अनतिक्रमणीयादेशस्य तस्य भगवतो निदेशानुसारेण हस्तिपको हस्तिनं निवर्तितवान्। निवर्तमानं भगवन्तमरिष्टनेमिं विलोक्य तन्मातापितरौ शिवासमुद्रविजयौ तत्पुरतः समागत्य प्रपतदश्रुबिन्दुमेचकितेक्षणौ एवमुक्तवन्तौ–वत्स। कथमस्मत्प्रमोदद्रुमं मूलत उन्मूलयितुं प्रवृत्तसे? विवाहं स्वीकृत्य सम्प्रति तस्यागतं कृष्णादिनं यदून् कथं खेदयसि? यदि

आभरणाणि–सर्वाणि आभरणानि) समस्त केयूर आदि आभरणों को उतार कर (सारहिस्स पणामए–सारथये अर्पयति) सारथि को दे दिये ॥२०॥
इसके बाद क्या हुआ सो कथा रूपसे कहते हैं—

दयालु प्रभुने प्रसन्न होकर जब अपने समस्त आभूषणों को शरीर पर से उतार कर उस सारथि को दे दिया तब करुणारस के सागर तथा समस्त प्राणियों की रक्षाकरने में तत्पर उन भगवान् अरिष्टनेमि ने सारथि से अपने हाथी को वापिस लौटाने के लिये आदेश दिया। सारथिने भी अनतिक्रमणीय आदेशवाले उन प्रभु की आज्ञानुसार हाथी को पीछे वहा से वापिस लौटा लिया। हाथी को वापिस लौटा हुआ देख कर प्रभु के मातापिताने उसी समय उनके पास आकर आखों से अश्रु की चौधार बहाते हुए कहा–वत्स! यह क्या कर रहे हो क्यों हम लोगों के प्रमोदरूपी वृक्ष को जडमूल से उखाडने के लिये तत्पर हो रहे हो। यदि विवाह नहीं ही करना था तो क्यों वह सब समारंभ सजवाया।

મેખલા તથા सव्वाणि आभरणाणि–सर्वाणि आभरणानि સઘળાં કેયૂર વગેરે આભૂષણો ઉતારીને सारहिस्स पणामये–सारथये अर्पयति સારથીને આપી દીધાં ॥૨૦॥

આના પછી શું બન્યું તે કથા રૂપથી કહે છે—

દયાળુ પ્રભુએ પ્રસન્ન બનીને જ્યારે પોતાના સઘળાં આભૂષણોને શરીર પરથી ઉતારી તે સારથીને આપી દીધા ત્યારે કરૂણારસના સાગર તથા સઘળા જીવોની રક્ષા કરવામાં તત્પર એ ભગવાન અરિષ્ટ નેમીએ તે સારથીને પોતાના હાથીને પાછો ફેરવવા માટે આદેશ આપ્યો. સારથીએ પણ અનતિક્રમણીય આદેશવાળા પ્રભુની આજ્ઞાઅનુસાર હાથીને ત્યાંથી પાછો ફેરવ્યો. હાથીને પાછો ફરતો જોઈને પ્રભુના માતા પિતાએ એ સમયે તેમની પાસે પહોંચી આંખોથી આંસુ સારતાં કહ્યું કે વત્સ! આ શું કરી રહ્યા છો? અમારા ઉત્સાહથી પ્રમુદિત બનેલા વૃક્ષને જડમૂળથી ઉખેડવા માટે કેમ તત્પર બન્યા છો? જો વિવાહ કરવોજ નહોતો તો પછી આ

प्रवर्त्तयतु। एवमुक्त्वा देवाः समुद्रविजयादीन् यादवानेवमब्रुवन्-भवन्तः पुण्यवन्तः सन्ति, यतो भवतां कुले स्वयं भगवान्तीर्थङ्करः प्रादुर्भूतः। अतो भवद्भिः प्रमोदस्थाने विषादो न कर्तव्यः। अयं हि भगवान् दीक्षामादाय समुत्पन्नकेवलज्ञानस्तीर्थं प्रवर्तयन् विश्वत्रयमानन्दयिष्यति। तेषां देवानामिदं वचनं निशम्य समुद्रविजयादयः परं प्रमोदमापन्नाः। ततो भगवान् स्वगृहं समागत्य वार्षिकं दानं दातुं प्रवृत्तः।

इतश्च भगवन्तमरिष्टनेमिं प्रतिनिवर्तमानं दृष्ट्वा शोकभरातुरा राजीमती वज्राहतेव विगतचेतना भूमौ निपतिता। ततः सखीभिर्विहितैः शीतलोपचारैः

गये। और कहने लगे-प्रभो! आप तीर्थ की प्रवृत्ति करो। पश्चात् समुद्रविजय आदि के समीप जाकर उन्होंने ऐसा कहा-आप लोग बहुत अधिक पुण्यशाली हैं, जो आपके कुल में स्वयं भगवान तीर्थंकर का जन्म हुआ है। इसलिये प्रमोद के स्थान में विषाद करना आपको उचित नहीं है। ये तो भगवान हैं। दीक्षा लेकर केवलज्ञान की प्राप्ति से इनके द्वारा धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति होना है। इसीसे विश्वत्रय आनंदित होगा। इस प्रकार देवों के इन वचनो को सुनकर उन समुद्रविजयादिक यादवों को अपार हर्ष हुआ। इसके बाद भगवान् ने अपने घर पर वापिस लौटकर वार्षिक दान देना प्रारम्भ किया।

इधर जब राजुलने अरिष्टनेमिकुमार को लौटते हुए देखा तो उसके शोक का समुद्र उमड पड़ा। उसने वज्राहत के समान उस विचारी राजुल को सर्वथा निश्चेष्ट बना दिया। बिचारी राजुल जमीन पर गिर पडी। सखियोंने जिस किसी भी तरह शीतलोपचार करके इनको

પ્રભુ! આપ તીર્થની પ્રવૃત્તિ કરો. પછીથી સમુદ્રવિજય વગેરેની પાસે જઈને તેઓએ કહ્યું આપ લોક ઘણાજ પુન્યશાળી છો. કારણ કે આપના કુળમાં સ્વયં ભગવાન તીર્થંકરનો જન્મ થયેલ છે આથી આનંદના સ્થળે વિષાદ કરવો આપના માટે ઉચિત નથી એ તો ભગવાન છે દીક્ષા લઈને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિથી તેમના દ્વારા ધર્મતીર્થની પ્રવૃત્તિ થવાની છે સઘળું વિશ્વ આનંદિત થશે આ પ્રકારના વચનોને સાંભળીને સમુદ્રવિજય તથા બીજા યાદવોને અપાર હર્ષ થયો આ પછી ભગવાને પોતાના રાજ્યમાં પાછા ફરીને વાર્ષિક દાન દેવાનો પ્રારંભ કરી દીધો.

બીજી તરફ જ્યારે રાજુલે અરિષ્ટનેમિકુમારને પાછા ફરતા જોયા ત્યારે એના દિલમાં શોકનો સમુદ્ર ઉમટી પડયો જેમ માથે વજ્ર પડયું હોય તેવી દશા એ બિચારી રાજુલની થઈ ગઈ અને તે જમીન ઉપર પુછડાઈ પડી સખીઓએ તાત્કાલીક શીતળ ઉપચારો કરીને તેને શુદ્ધિમાં આણી શુદ્ધિમાં આવતાં જ તે દુઃખથી વ્યાકુળ

ममार्थना सफलीकुरु। पितोर्वचन निशम्य भगवानाह–पूज्याः! भवन्तो विवाहा ग्रह मा कुर्वन्तु। सर्वो हि प्रियो जनो, हितैषिभिर्हितेऽर्थे प्रवर्तितो भवति, नाहिते। यस्य विवाहकर्मणः प्रारम्भ एतावता प्राणिना हिंसा भवति। सा च मम इहलोकपरलोके कल्याणाय न भविष्यति।

सुकृतिनो हि पारलौकिके कृत्ये कृतप्रयत्ना भवन्ति, नत्वापातरमणीये भोगादौ। यदा भगवानेव स्वमातापितावादीनब्रवीत्, तदा लोकान्तिकाना देवा नामासनानि प्रकम्पितानि। ततस्ते स्वावधिज्ञानेन भगवतस्तीर्थप्रवर्तनसमय परिज्ञाय त्वरित भगवतोऽन्तिके समागता भगवन्तमेवमब्रुवन्–भगवन्! तीर्थं

पत्नी के मुख के दर्शन हम सब लोगों को कराओ यही तुमसे हमारी प्रार्थना है। हमारी इस प्रार्थना को बेटा! सफल करो। इस प्रकार प्रेमभरे पिता के वचन सुनकर भगवान् ने कहा–पूज्य! आप लोग अब विवाह करने के लिये मुझसे आग्रह न करें। क्यों कि जो हितैषीजन होते है वे अपने प्रियजन को हितकारी मार्ग में ही प्रवर्तित कराते है अहितकारी मार्ग मे नहीं। जिसका प्रारभकाल ही इतने प्राणियों की हिंसा का विधायक है तो वह विवाह कृत्य मेरे कल्याण के लिये कैसे हो सकता है। सुकृतीजनों का प्रयत्न इहलोक परलोक के सुधारने में ही सफल होता है, आपातरमणीय भोगादिक में नही। भगवान् के इस प्रकार वचनों को सुनकर ज्यो ही मातापिताने उन से कुछ और कहने का उपक्रम किया कि इतने मे ही लोकान्तिक देवों के आसन कम्पायमान हुए और वें अपने अवधिज्ञान से भगवान् के तीर्थ प्रवर्तन का समय जानकर शीघ्र ही प्रभु के समीप आकर उपस्थित हो

દર્શન અમો સઘળાને કરાવો અમારી તમોને આ પ્રાર્થના છે અમારી આ પ્રાર્થનાને હે પુત્ર તમો સફળ કરો આ પ્રકારના માતા પિતાના પ્રેમભર્યા વચનોને સાંભળીને ભગવાને કહ્યુ, પૂજ્ય! આપ લોકો વિવાહ કરવા માટે હવે મને આગ્રહ ન કરો કેમકે હિતેચ્છુ જનો હોય છે તેઓ પોતાના પ્રિયજનને હિતકારી માર્ગમા જ પ્રવર્તિત કરાવે છે અહિતકારી માર્ગમાં નહીં જેનો પ્રારભ કાળજ આટલા પ્રાણીઓના નાશનુ કારણ બને છે તો તે વિવાહકૃત્ય મારા કલ્યાણ માટે કઈ રીતે બની શકે? સુકૃત્ય કરનારા મનુષ્યોનુ કૃત્ય પરલોક સુધારવામાં જ સફળ બને છે આપાત રમણીય ભોગાદિકમા નહીં. ભગવાનના આ પ્રકારના વચનોને સાભળીને માતાપિતાએ તેમને કાંઈક વધુ કહેવા સમજાવવા પ્રારભ કર્યો એ સમયે લોકાંતિક દેવોના આસન કપાયમાન બન્યા અને એથી તેમણે પોતાના અવધિજ્ઞાનથી ભગવાનના તીર્થ પ્રવર્તનના સમયને જાણીને તુરતજ પ્રભુની પાસે આવી પહોચ્યા અને કહેવા લાગ્યા

मृगाङ्कः न कदाप्यङ्कमृगं परित्यजति, नचापि समुद्रो वडवानलम्। एवं सत्यपि सुभग! यदि मां परित्याज्यामेव मन्यसे, तर्हि विवाहस्वीकारविडम्बनया मां कथं विडम्बितवानसि। यद्वा नास्त्यत्र तव मनागपि दोषः। अथ ममैव दोषो यत्सुदुर्लभे भवत्यनुरक्तहृदया जाता। वायसी यदि हंसेऽनुरक्ता भवति, तत् तस्या एव दोषः। अये भुवनसुन्दर! त्वया परित्यक्ताया मम रूपं कलाकौशलं लावण्यं यौवनं कुलं सर्वं विफलमेव। हे प्राणप्रिय! तव वियोगव्यथाभिर्मम प्राणा उत्क्रामन्तीव, हृदयं निश्च्यवतीव, वक्षःस्थलं स्फुटतीव, वपुश्चेदं ज्वलतीव। हे करुणाकर! मयि कथमकरुणोऽसि, रक्ष मां त्वद्वियोगजनितापद्भ्य। अये!

भी अपने आश्रित हुए मृगका परित्याग नहीं करता है और न समुद्रने आजतक वडवानल का परित्याग ही किया है। यदि आपकी दृष्टि में मैं परित्याग करने के योग्य ही थी तो फिर आपने विवाह की स्वीकृति रूप विडम्बना से मेरी विडम्बना क्यों की। अथवा और अधिक क्या कहूं आपका तो इसमें थोडा सा भी दोष नहीं है। दोष तो मेरा ही है जो मैं आप जैसे अत्यंत दुष्प्राप्य व्यक्ति में अनुरक्त बनी। कागली यदि हँस में अनुरक्त होती है तो यह दोष हँस को न देकर कागली को ही दिया जाता है। हे त्रिभुवन सुन्दर! आपने जब मेरा परित्याग ही कर दिया है तो अब मेरा रूप, कलाकौशल, लावण्य, यौवन एवं कुल ये सब ही विफल है। हे प्राणप्रिय! अब कहो क्या करूँ आपकी वियोग व्यथा से मेरे प्राण निकल रहे हैं, हृदय फटता है, वक्षःस्थल फट रहा है और यह शरीर जल रहा है। हे-करुणाकर! जब तुमने पशुओं पर इतनी ऊँची दया दिखलाई है तो फिर मेरे ऊपर

જુઓ! ચંદ્રમા કદી પણ પોતના આશ્રિતજન મૃગનો પરિત્યાગ કરતા નથી તેમ સમુદ્રે પણ આજ સુધી વડવાનલનો પરિત્યાગ કરેલ નથી જો આપની દૃષ્ટીમાં હું પરિત્યાગ કરવા યોગ્ય જ હતી તો પછી આપે શા માટે વિવાહ કરવાનું સ્વીકારીને મારી વિટંબના કરી. આથી વધુ શું કહું? આપનો તો આમાં થોડો પણ દોષ નથી દોષ તો મારો જ છે કે, આપના જેવા પ્રાપ્ત ન કરી શકાય તેવી વ્યક્તિમાં અનુરક્ત બની કાગડી જો હંસમાં અનુરક્ત બને તો તેમાં હંસનો દોષ નથી પરંતુ કાગડીનો જ દોષ છે હે ત્રિભુવન સુંદર! આપે જ્યારે મારો પરિત્યાગ જ કરી લીધો છે તો, હવે મારૂં રૂપ, કલા કૌશલ્ય, લાવણ્ય યૌવન અને કુળ એ બધું નકામું છે હે પ્રાણપ્રિય! હવે હું શું કરૂં? આપના વિયોગની વ્યથાથી મારો પ્રાણ નીકળી રહ્યો છે હૃદય ફાટે છે, વક્ષ સ્થળ ફાટે છે, અને મારૂં આ શરીર બળી રહ્યું છે હે કરૂણાકર! જ્યારે તમોએ પશુઓ ઉપર આટલી અગાધ દયા બતાવી તો પછી

समधिगतचैतन्या सा दुःश्रवान् दुःखोद्गारोपमान् विलापानकरोत्–हे नाथ! अनुरक्तां मां परित्यज्य कथं प्रतिनिवृत्तोऽसि? त्वादृशो जनो यदि स्वगतप्राणामनुरक्तां परित्यजेत्, तदा नु मन्ये महाननर्थः स्यात्। यतो लोकव्यवहारो महान्तं जनमनुकृत्य प्रवर्तते। भवन्तमनुकृत्यान्येऽप्येवं करिष्यन्ति। ततो नाम का दशा स्यात्कन्यकाजनानाम्। अतो न युज्यते भवतो मत्परित्यागः। महान्तो हि सदोषमप्याश्रितं न त्यजन्ति। अस्त्येवात्र निदर्शनं मृगाङ्कः समुद्रश्च। पश्य,

स्वस्थ किया। स्वस्थ सी बनकर राजुलने दुःख के उद्गार के समान दुःश्रव विलापों को करना प्रारंभ किया–बोली नाथ! अनुरक्त मुझे अचानक ही छोडकर आप क्यों चले गये हैं। यदि आप जैसे समझदार प्राणी भी अपने में अनुरक्तजन का परित्याग कर देते हैं तो यह बडे अनर्थ की बात हो सकती है क्यों कि संसार में बडे लोगों का ही अधिकतर अनुसरण किया जाता है। जब आपने ऐसा किया है तो अन्य जन भी इस तरह करने से अब कब रुक सकेंगे। फिर इस तरह की हालत में कन्याओं की दशा कैसी क्या होगी यह स्वयं समझने की बात है। आप स्वयं अपने मन से पूछिये क्या आपने मुझे छोडकर यह काम अच्छा किया है? कभी नहीं। आप जैसे विशिष्ट व्यक्तियों को यह कहां तक उचित माना जा सकता है। जिनको उनके भाग्यने बडा बताया है उनका तो यह कर्तव्य होता है कि वे सदोष भी अपने आश्रितजन का परित्याग नहीं करते हैं। फिर आपने ऐसा क्या समझकर किया है। देखो चन्द्रमा कभी

चित्तवाळी बनीने दुःख भरेला विलापो करवा लागी ते बोलवा माडी के, हे नाथ! आप! कांई पण कह्या सिवाय अचानक मने छोडीने केम चाल्या गया? आपना जेवा समजदार माणुस पण पोतानामां अनुरक्त एवा जननो परित्याग करी दे ए तो घणाज आश्चर्यनी वात छे केमके, आ संसारमा खास करीने मोटा लोकोनु ज बीजा माणुसो अनुसरण करता होय छे ज्यारे आपे आवुं कर्युं छे तो बीजा लोको पण आ प्रकारनु वर्तन करवाथी हवे कई रीते रोकई शके? पछी आ प्रकारनी हालतमां कन्याओनी केवी हालत थशे एनो आपे केम विचार न कर्यो? आप पोतेज आपना मनने पूछीने विचारजो के, आपे छोडीने पाछा चाल्या जवानु जे काम करेल छे ते व्याजबी करेल छे? कही नहीं आपना जेवी विशिष्ट व्यक्तिओ माटे ए कइ रीते उचित मानी शकाय तेम छे जेमने एना भाग्ये मोटाई आपेल छे एमनु तो ए कर्तव्य थई पडे छे के, तेओ भूलथी पण पोताना आश्रितजननो परित्याग नथी करता तो पछी आपे शुं समजीने आवु करेल छे?

मृगाङ्कः न कदाऽप्यङ्कमृग परित्यजति, नचापि समुद्रो वडवानलम्। एव सत्यपि सुभग! यदि मा परित्याज्यामेव मन्यसे, तर्हि विवाहस्वीकारविडम्बनया मा कथ विडम्बितवानसि। यद्वा नास्त्यत्र तव मनागपि दोषः। अथ ममैव दोषो यत्सुदुर्लभे भवत्यनुरक्तहृदया जाता। वायसी यदि हसेऽनुरक्ता भवति, तत् तस्या एव दोषः। अये भुवनसुन्दर! त्वया परित्यक्ताया मम रूप कलाकौशल लावण्य यौवन कुल सर्वे विफलमेव। हे प्राणप्रिय! तव वियोगव्यथाभिर्मम प्राणा उत्क्रामन्तीव, हृदय निश्चयवतीव, वक्षः स्थल स्फुटतीव, वपुश्चेद ज्वलतीव। हे करुणाकर! मयि कथमकरुणोऽसि, रक्ष मा त्वद्वियोगजनितापद्भ्यः। अये!

भी अपने आश्रित हुए मृगका परित्याग नहीं करता है और न समुद्रने आजतक वडवानल का परित्याग ही किया है। यदि आपकी दृष्टि में मैं परित्याग करने के योग्य ही थी तो फिर आपने विवाह की स्वीकृति रूप विडम्बना से मेरी विडम्बना क्यों की। अथवा और अधिक क्या कहूं आपका तो इसमें थोडा सा भी दोष नहीं है। दोष तो मेरा ही है जो मैं आप जैसे अत्यत दुष्प्राप्य व्यक्ति में अनुरक्त बनी। कागली यदि हँस में अनुरक्त होती है तो यह दोष हँस को न देकर कागली को ही दिया जाता है। हे त्रिभुवन सुन्दर! आपने जब मेरा परित्याग ही कर दिया है तो अब मेरा रूप, कलाकौशल, लावण्य, यौवन एव कुल ये सब ही विफल है। हे प्राणप्रिय! अब कहो क्या करूँ आपकी वियोग व्यथा से मेरे प्राण निकल रहे हैं, हृदय फटता है, वक्षःस्थल फट रहा है और यह शरीर जल रहा है। हे-करुणाकर! जब तुमने पशुओं पर इतनी ऊँची दया दिखलाई है तो फिर मेरे ऊपर

જુઓ! ચદ્રમા કદી પણ પોતના આશ્રિતજન મૃગનો પરિત્યાગ કરતા નથી તેમ સમુદ્રે પણ આજ સુધી વડવાનલનો પરિત્યાગ કરેલ નથી જો આપની દૃષ્ટીમા હુ પરિત્યાગ કરવા યોગ્ય જ હતી તો પછી આપે શા માટે વિવાહ કરવાનુ સ્વીકારીને મારી વિટબના કરી. આથી વધુ શુ કહુ? આપનો તો આમા થોડો પણ દોષ નથી દોષ તો મારો જ છે કે, આપના જેવા પ્રાપ્ત ન કરી શકાય તેવી વ્યક્તિમા અનુરકત બની. કાગડી જો હસમા અનુરકત બને તો તેમા હસનો દોષ નથી પરતુ કાગડીનો જ દોષ છે હે ત્રિભુવન સુદર! આપે જ્યારે મારો પરિત્યાગ જ કરી દીધો છે તો, હવે મારૂ રૂપ, કલા કૌશલ્ય, લાવણ્ય યૌવન અને કુળ એ બધુ નકામુ છે હે પ્રાણપ્રિય! હવે હુ શુ કરૂ? આપના વિયોગની વ્યથાથી મારો પ્રાણ નીકળી રહ્યો છે હૃદય ફાટે છે, વક્ષ સ્થળ ફાટે છે, અને મારૂ આ શરીર બળી રહ્યુ છે હે કરૂણાકર! જ્યારે તમોએ પશુઓ ઉપર આટલી અગાધ દયા બતાવી તો પછી

यथा त्वं पशुषु कृपालुरभूस्तथा मय्यपि भव। त्वादृशां महात्मनां पङ्क्तिभेद-विमुचितः ? हे प्रभो! मां दृशा गिरा चैकवारमपि सम श्वासय। मम परिचयं विनैव यन्मां परित्यजसि, तन्नास्ति तवोचितम्। फलमनास्वाद्यैव किं कश्चित्फलस्य कटुकत्वं मधुरत्वं वा ज्ञातुं शक्नोति ? अथवा सिद्धिवधूत्कण्ठितस्य तव

इतने अकरुण क्यों बन गये हो। अपनी वियोगजनित इस आपत्ति से जैसे भी हो सके मेरी रक्षा करो। क्या मैं उन पशुओं से भी हीन हूं कि जिनपर आपकी दया का प्रवाह वरसा है और मेरे पर नहीं ? आप जैसे महात्माओं की दृष्टि में ऐसा पङ्क्तिभेद तो नहीं होना चाहिये। प्रभो! कमसे कम आप एक बार भी मेरी तरफ निहार लेते तो भी सतोष हो जाता। अथवा मुझे अब क्या करना चाहिये यह बात भी अपनी वाणी द्वारा कह जाते तो भी मैं अपने जीवन को सफल मान लेती, परन्तु ऐसा तो आपने किया ही नहीं। विना परिचय हुए ही आपने मुझे छोडा है जो इस प्रकार का परित्याग आपका उचित नहीं माना जाता। आपने क्या समझ कर मेरा त्याग किया है, कमसे कम यह बात भी हमको मालूम हो जाती तो भी मैं मन मारकर अपने घर बैठ जाती। अहो! क्या कभी ऐसा भी हुआ है कि विना फल का स्वाद लिये ही उसकी मधुरता और कटुकता जानली गई हो। अथवा सुना है कि आप तो सिद्धिरूपी वधू में उत्कंठित बने

મારા ઉપર આટલા અકરૂણ કેમ બની ગયા ? આપના વિયોગથી ઉભી થયેલ આ આપત્તિથી જે રીતે થઇ શકે તે રીતે મારૂ રક્ષણ કરો શુ હુ એ પશુઓથી પણ હીન છુ કે, તેના ઉપર આપની દયાનો પ્રભાવ વરસ્યો છે અને મારા ઉપર નહી આપના જેવા મહાપુરૂષના દૃષ્ટીમા એવો પંકિતભેદ નો ન હોવો જોઇએ ઓછામા ઓછુ આપ એક વખત મારી સામે જોઇ લેત તો પણ મારા દિલમા એથી સંતોષ થાત અથવા હવે મારે શુ કરવુ જોઇએ તે વાત પણ જો આપ મને આપના મુખેથી કહી જાત તો પણ હુ એથી મારા જીવનને સફળ માની લેત પરંતુ આપે એવુ કર્યું જ નહી કોઈ પણ પ્રકારનો પરિચય મેળવ્યા સિવાય જ આપે મને છોડી દીધી છે જેથી આ પ્રકારનો પરિત્યાગ આપનો ઉચિત મનાતો નથી આપે શુ સમજીને મારો ત્યાગ કરેલ છે એ વાત તો ઓછામા ઓછી હુ જાણી શકત તો પણ હુ મન મારીને ઘરમાં બેઠી રહેત કહો ! કયાય એવુ પણ બન્યુ છે કે ફળનો સ્વાદ લીધા વગરજ તેની મધુરતા અથવા તો કડવાશ જાણી શકાઇ હોય સાભળેલ છે કે આપ તો સિદ્ધિરૂપ વધૂમા ઉત્કંઠિત બન્યા છો આ સ્થિતિમા જ્યારે

इन्द्राण्यपि मनो हर्तुं न समर्था, तर्हि मानुषकीटिकाया मम का कथा? एवं विलपन्तीं तां राजीमतीं सख्यएवमवदन्-सखि! मा रोदीः! निष्ठुराग्रणीरेष नीरसोऽरिष्टनेमिस्त्वां परित्यज्य गतः, गच्छतु सः, अन्येऽपि बहवो यदुकुमाराः त्वद्योग्याः सन्ति! तेषु कमपि स्वानुरूपं मनोहरं वरं वृणीष्व! निरर्थकं विलापं परित्यज। सखीनामेवं वचनं निशम्य सा चारुमती राजीमती कर्णौ पिधायैवमब्रवीत्-अये सख्यः यूयमपि मामेव प्राकृतोचितं वचनमवोचत! अये!

हुए हैं तब इस स्थिति में जब आपके मन को इन्द्राणी जैसी सर्वश्रेष्ठ नारी भी मोहित करने में समर्थ नहीं हो सकती हैं तो फिर मेरी जैसी मनुष्य रूपी चिउटी-कीडी तो क्या कर सकती है। वह तो है ही किस गिनती में।

इस प्रकार जब राजीमती विलाप कर रही थी तब उसकी सखियोंने उससे ऐसा कहा-सखि! तुम मत रोओ-रोना तो उस के लिये चाहिये कि जिसके चित्त में रोने का कुछ प्रभाव हो सके-यह नेमिकुमार तो कोरा निष्ठुर है। नारी के समागमजन्य रति रस को यह क्या जाने। यही कारण है जो उसने आपका इस तरह परित्याग कर दिया है। अस्तु कोई चिन्ता की बात नहीं। और भी बहुत से इससे बढकर राजकुमार हैं जो तुम्हारे योग्य है। इनमें जिनको तुम वरना चाहो वर सकती हो। अकेले नेमिकुमार से ही क्या अटकी है। क्यों व्यर्थ प्रलाप-कर चित्त को दुःखित करती हो। निरर्थक इस विलाप को छोडो।

इस प्रकार सखिजनों के वचनों को सुनकर राजीमतीने उसी समय अपने दोनों कानों पर हाथ रखकर कानों को बंद कर लिया और

આપના મનને ઈન્દ્રાણી જેવી સ્ત્રી પણ મોહિત કરવામાં સમર્થ થઈ શકે તેવું નથી તો પછી મારા જેવી મનુષ્યરૂપી કીડી તો શું જ કરી શકે? હું તો પછી કઈ ગણત્રીમાં!

આ પ્રમાણે જ્યારે રાજીમતી વિલાપ કરી રહેલ હતી ત્યારે તેની સખીઓએ તેને એવું કહ્યું કે, સખી! તમે વિલાપ ન કરો રોવું તો એને માટે જોઈએ કે, જેના ચિત્તમાં રોવાનો પ્રભાવ પડી શકે આ નેમકુમાર તો તદ્દન નિષ્ઠુર છે નારીના સમાગમ જન્ય રસને તે શું જાણે એજ કારણ છે કે, જેથી તેમણે આપનો આ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરી દીધેલ છે ભલે કોઈ ચિંતાની વાત નથી એમનાથી પ્રભાવશાળી એવા બીજા પણ ઘણા રાજકુમારો છે કે, જેઓ તમારા યોગ્ય છે એમાં જેને ચાહો તેને વરી શકો છો એકલા નેમિકુમારથી જ કયાં અટકયું છે વ્યર્થમાં વિલાપ કરીને ચિત્તને શા માટે દુઃખ પહોંચાડો છો આ માટે વ્યર્થના આ વિલાપને છોડી દે

આ પ્રકારના સખીજનોના વચનોને સાંભળીને રાજીમતીએ પોતાના બન્ને હાથોને કાનની આડા રાખીને કાનને બંધ કરી દીધા અને કહ્યું —હે સખીઓ તમે

निशा निशानाथं परित्यज्य पद्मिनीनाथं कामयताम्, शीतलता सूर्ये समासज्जताम्, किन्तु राजीमती नेमिं त्यक्त्वाऽपरं पुरुषं न कदापि कामयिष्यते। यदि नेमिः स्वपाणिना मम पाणिं न ग्रहीष्यति, तर्हि तस्य स भावपाणिर्व्रतग्रहणकाले मम मूर्ध्नि भविष्यत्येव। तस्या एवं कुलकन्यकोचितं वचनं निशम्य तत्सख्यः 'सत्यं! सत्यं! तवोचितमेतद् व्यवसितम्' इत्युक्त्वा महायशायास्तस्या वचनमनुमोदितवत्यः। ततः सा राजीमती पुनः स्वसखीवृन्दमब्रवीत्-अद्य स्वप्ने मया ऐरावतारूढः कश्चित्पुरुषो दृष्टः। स मम गृहमागत्य त्वरितमेव ततः प्रतिनिवृत्तो मन्दरशिखरं समारोहत्। ततस्थः सोऽमृतमयानि चत्वारि

कहा-अये सखिजनो! तुम तो मूर्खों जैसी बातें करती हो भले रात्रि अपने स्वामी चन्द्र का परित्याग कर पद्मिनीनाथ-सूर्य के साथ रह जावे, शीतलता चन्द्रमा को छोडकर चाहे सूर्य मे अनुरक्त हो जावे किन्तु याद रखो यह राजीमती नेमिकुमार को छोडकर और किसी दूसरे पुरुष की कभी कामना नहीं करेगी। कोई चिन्ता नहीं यदि नेमिकुमारने अपने हाथ से मेरा हाथ नही पकडा है, परन्तु व्रतग्रहण काल मे मेरे माथे पर उनका भाव हाथ अवश्य होगा। इस प्रकार कुलीन कन्या के उचित राजुल के वचन सुनकर उन सखियोने उसके अध्यवसाय की खूब प्रशंसा की और कहने लगी-ठीक है ठीक है तुम्हारा यह वचन बहुत ही उत्तम है। सत्य है। राजीमतीने सखियों की इस प्रकार जब बात सुनी तो पुनः वह उनसे कहने लगी-सखियो! आज मैंने स्वप्न मे ऐरावत पर आरूढ कोई एक पुरुष देखा है। और यह भी देखा कि वह मेरे घर पर आकर शीघ्र वहां से लौट गया

તો મૂરખ જેવી વાતો કરો છો ભલે રાત્રી પોતાના સ્વામી ચંદ્રનો પરિત્યાગ કરીને પદ્મિનિનાથ સૂર્યની સાથે રહેવા જાય શીતળતા ચંદ્રમાથી હઠીને ભલે સૂર્યમાં અનુરક્ત બને પરંતુ યાદ રાખો કે, આ રાજીમતી નેમિકુમારને છોડીને બીજા કોઈ પણ પુરુષનો વિચાર કદીપણ કરનાર નથી કાંઈ ચિંતા નથી જો કે, નેમિકુમારે પોતાના હાથથી મારો હાથ પકડેલ નથી પરંતુ વ્રત ગ્રહણ કાળમાં મારા માથા ઉપર એમનો ભાવ હાથ અવશ્ય મૂકાશે આ પ્રકારના કુલીન કન્યાને યોગ્ય એવા રાજુલના વચન સાંભળીને તે સખીઓએ તેની મક્કમતાની ખૂબ પ્રશંસા કરી અને કહેવા લાગી કે, બરોબર છે બરોબર છે તમારું આ વચન ઘણું જ ઉત્તમ છે સત્ય છે રાજીમતીએ સખીઓની જ્યારે આ પ્રકારની વાત સાંભળી તો ફરીથી તે તેમને કહેવા લાગી કે, હે સખીઓ! આજ મેં સ્વપ્નમાં ઐરાવત ઉપર આરૂઢ એવા કોઈ એક પુરુષને જોયેલ છે અને એ પણ જોયું કે, મારા ઘર ઉપર આવીને એ તુરતજ પાછા ફરી ગયા અને જઈને મેરૂના

फलानि प्रजाभ्यो ददानो मयाऽपि याचितो मह्यमपि तानि फलानि दत्तवान्। ततः सख्य एवमब्रुवन्-अनघे! मा विषादं कुरु, क्षीणास्ते विघ्नाः, आपातकटुकोऽप्येष विघ्नः परिणामसुन्दरः। अतस्त्वया नेमिविरहजनितः शोकः सर्वथा निवारणीयः। ततो नेमिचरणार्पितमना राजीमती कथंचिद् धैर्यमास्थाय गृहे स्थितवती। अथान्यदा भगवानरिष्टनेमिर्व्रतमादातुमुद्यतोऽभूत्। ॥२०॥

यथा भगवान् प्रव्रज्यां गृहीतवान्, तथा दर्शयति सूत्रकारः—

मूलम्—मणपरिणामो यं कओ, देवा यं जहोइयं समोइण्णा।
सव्विड्ढीए सपरिसा, निक्खमणं तस्स काउंजे ॥२१॥

छाया—मनःपरिणामश्च कृतो, देवाश्च यथोचितं समवतीर्णाः।
सर्वर्द्ध्या सपर्षदो, निष्क्रमणं तस्य कर्तुं यत् ॥२१॥

और जाकर मेरु के शिखर पर चढ गया। वहां ठहरकर उसने प्रजाजनों को चार अमृतफल देते समय मांगने पर मुझे भी उन फलों को दिया है। कहो इसका क्या होना चाहिये-सखियोंने इस स्वप्न को सुनकर प्रत्युत्तर में कहा-अनघे! इसका फल बहुत अच्छा है तुम विषाद मत करो। अब समझो तुम्हारे सब विघ्न दूर हो चुके हैं। यह नेमि का वियोगरूप विघ्न यद्यपि आपातकटुक है तो भी इसका परिणाम बहुत सुन्दर है। अतः तुम अब नेमि का विरहजनित शोक सर्वथा दूर कर दो। इस तरह सखियों के समझाने बुझाने पर राजीमतीने जिस किसी भी प्रकार से धैर्य को धारण कर गृह मे रहना कबूल कर लिया ॥२०॥

अब कुछ काल व्यतीत होने पर नेमिकुमारने जिस प्रकार संयम

શિખર ઉપર ચડી ગયા ત્યાં જઈને પ્રજાજનોને ચાર અમૃતફળ આપવા માંડયા એ સમયે માગવાથી મને પણ તેમણે એ ફળ આપ્યા છે કહો! આથી શું થવું જોઈએ સખીઓએ એ સ્વપ્નની વાતને સાંભળીને પ્રત્યુત્તરમાં કહ્યું કુમારીજી! તમારા એ સ્વપ્નનું ફળ તો ઘણું જ સારૂ છે તમો મનમાં જરા સરખો પણ વિષાદ ન કરો સમજો કે, તમારા સઘળા વિધ્ન દૂર થઈ ચૂક્યા છે આ નેમિકુમારનું ચાલ્યા જવારૂપ વિઘ્ન જો કે, આઘાત પહોંચાડનાર તો પણ એનું પરિણામ તો ઘણું જ સુંદર આવવાનું છે આથી તમો નેમિકુમારના વિરહથી ઉદ્‌ભવેલા શોકને સર્વથા તજી દો. આ પ્રકારે સખીઓએ સમજાવવાથી રાજીમતીએ મનમાં થોડું આશ્વાસન અનુભવ્યું અને ઘરમાં સ્વસ્થ બનીને રહેવાનું કબૂલ કર્યું ॥૨૦॥

આ પછી થોડા સમયે નેમિકુમારે જે રીતે સંયમને ધારણ કર્યો એ વાતને

निशा निशानाथं परित्यज्य पद्मिनीनाथं कामयताम्, शीतलता सूर्ये समासक्ताम्, किन्तु राजीमती नेमिं त्यक्त्वाऽपरं पुरुषं न कदापि कामयिष्यते। यदि नेमिः स्वपाणिना मम पाणिं न ग्रहीष्यति, तर्हि तस्य स भावपाणिर्व्रतग्रहणकाले मम मूर्ध्नि भविष्यत्येव। तस्या एवं कुलकन्यकोचितं वचनं निशम्य तत्सख्यः 'सत्य! सत्य! तवोचितमेतद् व्यवसितम्' इत्युक्त्वा महायशायास्तस्या वचनमनुमोदितवत्यः। ततः सा राजीमती पुनः स्वसखीवृन्दमब्रवीत्-अद्य स्वप्ने मया ऐरावतारूढः कश्चित्पुरुषो दृष्टः। स मम गृहमागत्य त्वरितमेव ततः प्रतिनिवृत्तो मन्दरशिखरं समारोहत्। ततस्थः सोऽमृतमयानि चत्वारि

कहा-अये सखिजनो! तुम तो मूर्खों जैसी बातें करती हो भले रात्रि अपने स्वामी चन्द्र का परित्याग कर पद्मिनीनाथ-सूर्य के साथ रह जावे, शीतलता चन्द्रमा को छोडकर चाहे सूर्य में अनुरक्त हो जावे किन्तु याद रखो वह राजीमती नेमिकुमार को छोडकर और किसी दूसरे पुरुष की कभी कामना नहीं करेगी। कोई चिन्ता नहीं यदि नेमिकुमारने अपने हाथ से मेरा हाथ नही पकडा है, परन्तु व्रतग्रहण काल मे मेरे माथे पर उनका भाव हाथ अवश्य होगा। इस प्रकार कुलीन कन्या के उचित राजुल के वचन सुनकर उन सखियोने उसके अध्यवसाय की खूब प्रशंसा की और कहने लगी-ठीक है ठीक है तुम्हारा यह वचन बहुत ही उत्तम है। सत्य है। राजीमतीने सखियों की इस प्रकार जब बात सुनी तो पुनः वह उनसे कहने लगी-सखियो! आज मैंने स्वप्न मे ऐरावत पर आरूढ कोई एक पुरुष देखा है। और यह भी देखा कि वह मेरे घर पर आकर शीघ्र वहां से लौट गया

તો મૂરખ જેવી વાતો કરો છો ભલે રાત્રી પોતાના સ્વામી ચન્દ્રનો પરિત્યાગ કરીને પદ્મિનિનાથ સૂર્યની સાથે રહેવા જાય શીતળતા ચન્દ્રમાથી હઠીને ભલે સૂર્યમા અનુરક્ત બને પરંતુ યાદ રાખો કે, આ રાજીમતી નેમિકુમારને છોડીને બીજા કોઈ પણ પુરૂષનો વિચાર કદીપણ કરનાર નથી કોઈ ચિંતા નથી જો કે, નેમિકુમારે પોતાના હાથથી મારો હાથ પકડેલ નથી પરંતુ વ્રત ગ્રહણ કાળમા મારા માથા ઉપર એમનો ભાવ હાથ અવશ્ય મૂકાશે આ પ્રકારના કુલીન કન્યાને યોગ્ય એવા રાજુલના વચન સાભળીને તે સખીઓએ તેની મક્કમતાની ખૂબ પ્રશંસા કરી અને કહેવા લાગી કે, બરોબર છે બરોબર છે તમારૂં આ વચન ઘણુ જ ઉત્તમ છે સત્ય છે રાજીમતીએ સખીઓની જ્યારે આ પ્રકારની વાત સાભળી તો ફરીથી તે તેમને કહેવા લાગી કે, હે સખીઓ! આજ મે સ્વપ્નમા ઐરાવત ઉપર આરૂઢ એવા કોઈ એક પુરૂષને જોયેલ છે અને એ પણ જોયુ કે, મારા ઘર ઉપર આવીને એ તુરતજ પાછા ફરી ગયા અને જઈને મેરૂના

शिबिकारत्न समारूढो देवमनुष्यपरिवृतो भगवान अरिष्टनेमि द्वारकात =द्वारका-पुर्याः निष्क्रम्य=निर्गत्य क्रमेण रैवतके=रैवतकपर्वते समागत्य स्थित ॥२२॥

मूलम्—उज्जाण सपत्तो, ओइण्णो उत्तिमाओ सीयाओ ।
साहस्सीइ परिवुडो अभिनिक्खमई उ चित्ताहिं ॥२३॥

छाया—उद्यान सम्प्राप्त, अवतीर्ण उत्तमाया शिबिकायाः ।
साहस्र्याः परिवृत, अभिनिष्क्रामति तु चित्रासु ॥२३॥

टीका—"उज्जाण" इत्यादि—

तदनु भगवानरिष्टनेमि रैवतकपर्वतस्य उद्यान=सहस्राम्रवणनामकमुद्यान सम्प्राप्त=समागत तत्र उत्तमाया उत्कृष्टतमाया शिबिकातोऽवतीर्णः तु=पुनः

'देवमणुस्स परिवुडो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तओ तत) जब चतुर्विधनिकाय के देव आकर उपस्थित हुए उसके बाद (सीयारयण समारूढो-शिबिकारत्न समारूढ) देवो द्वारा निर्मित उत्तरकुरु नामक श्रेष्ठ पालखी में विराजकर (देवमणुस्सपरिवुडो-देवमनुष्यपरिवृतः) देव एव मनुष्यों से परिवृत हुए (भयव-भगवान्) भगवान् अरिष्टनेमि (वारगाओ निक्खमिय-द्वारकात निष्क्रम्य) द्वारकापुरी से निकलकर (रेवयम्मि ठिओ-रैवतके स्थितः) क्रमशः रैवतक पर्वत पर पधारे ॥२२॥

'उज्जाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—उसके बाद वे (उज्जाण सपत्तो-उद्यान सम्प्राप्त) रैवतक पर्वत के सहस्राम्र नामके उद्यान मे पहुँचे। वहा पर (उत्तिमाओ सीयाओ ओइण्णे-उत्तमायाः शिबिकाया अवतीर्ण) उस सर्वो

"देवमणुस्स परिवुडो" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—तओ-तत ज्यारे चारे निકાયોના દેવ આવીને હાજર થઈ ગયા ત્યારપછી सीयारयण समारूढो-शिबिकारत्न समारूढ દેવોએ બનાવેલ ઉત્તર કુરુ નામની શ્રેષ્ઠ પાલખીમાં બેસીને देवमणुस्स परिवुडो-देवमनुष्यपरिवृत દેવ અને મનુષ્યોથી ઘેરાયેલા એવા भयव-भगवान् ભગવાન અરિષ્ટનેમિ वारगाओ निक्खमिय द्वारकात निष्क्रम्य દ્વારકાપુરીથી નીકળીને ચાલતા ચાલતા रेवयम्मि ठिओ-रैवतके स्थित રૈવતક પર્વત ઉપર પધાર્યા ॥૨૨॥

"उज्जाण" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—આ પછી તેઓ उज्जाण सपत्तो-उद्यान सम्प्राप्त रैवतક પર્વતના સહસ્રામ્ર નામના ઉદ્યાનમા પહોચ્યા ત્યા પહોચીને उत्तमाओ सीआओ ओइण्णे-

टीका—'मणपरिणामो य'' इत्यादि—

भगवता निष्क्रमणं प्रति मनःपरिणामः=मनसोऽभिप्रायश्च कृतः। तदा भगवन्तं निष्क्रमणं प्रत्युद्यतं स्वासनकम्पताऽवधिज्ञानेन परिज्ञाय तस्य भगवतो ऽरिष्टनेमेः निष्क्रमणं=दीक्षामहोत्सवं कर्तुं सर्वर्द्ध्या=सर्वप्रकारया ऋद्ध्या युक्ताः सपर्षदः=स्व स्वपरिवारपरिवृताः देवाः चतुर्विधा देवाश्च यथोचितक्रमेण समवतीर्णाः=समागताः। 'जे' इति निपातः पादपूर्त्तौ ॥२१॥

मूलम्—देवमणुस्सपरिवुडो, सीयारयणं तओ समारूढो।
निक्खमिय वारगाओ, रेवययम्मि ठिओ भयवं ॥२२॥

छाया—देवमनुष्यपरिवृतः शिबिकारत्नं ततः समारूढः।
निष्क्रम्य द्वारकातो, रैवतके स्थितो भगवान् ॥२२॥

टीका—'देवमणुस्सपरिवुडो' इत्यादि—

ततः=चतुर्विधदेवागमनानन्तरम् शिबिकारत्नं=सुरनिर्मितमुत्तरकुरुनामकं

ग्रहण किया यही बात सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—

'मणपरिणामो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—भगवान् नेमिकुमारने निष्क्रमण के प्रति (मणपरिणामो य कओ-मनः परिणामश्च कृतः) मानसिक परिणाम किया उस समय अपने २ आसनों के कम्पित होने से अवधिज्ञान द्वारा भगवान को निष्क्रमण के प्रति उद्यत हुए जानकर (तस्स निक्खमणं काउंजे-तस्य निष्क्रमणं कर्तुं) उनका दीक्षामहोत्सव करने के लिये (देवाय जहाइय सव्वड्ढीए सपरिसा समोइण्णा-देवाश्च यथोचितं सर्वर्द्ध्या सपर्षदः समवतीर्णाः) समस्त ऋद्धियों से एवं अपने परिवार से युक्त होकर चारों निकायों के देव क्रमशः आकर उपस्थित हो गये ॥२१॥

સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે —"मणपरिणामो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—ભગવાન નેમિકુમારે નિષ્ક્રમણના તરફ मणपरिणामो य कओ-मनःपरिणामश्च कृतः માનસિક પરિણામ કર્યું આ સમયે પોતપોતાના આસનો કંપિત થવાથી અવધિજ્ઞાન દ્વારા ભગવાનને નિષ્ક્રમણના તરફ ઉદ્યત થયેલા જાણીને तस्स निक्खमणं काउंजे-तस्य निष्क्रमणं कर्तुं એમનો દીક્ષામહોત્સવ કરવાને માટે देवाय जहाइय सव्वड्ढीए सपरिसा समोइण्णा-देवाश्च यथोचितं सर्वर्द्ध्या सपर्षदः समवतीर्णाः સઘળી ઋદ્ધિયો સાથે તેમજ પોતપોતાના પરિવારથી યુક્ત બનીને ચારે નિકાયોના દેવ એક પછી એક આવીને હાજર થઇ ગયા ॥૨૧॥

गन्ध, स सजातो येषां तांस्तथा, स्वभावत एव सुरभिगन्धीन्, मृदुकुञ्चितान्=कोमलकुटिलान् केशान् पञ्चमुष्टिभि कृत्वा त्वरितं यथास्यात्तथा लुञ्चति ॥२४॥

दीक्षाग्रहणानन्तर भगवान मन पर्ययज्ञान प्राप्तवान । ततो यद्भूत्तदुच्यते-

मूलम्--वासुदेवो य णं भणइ लुत्तकेसं जिइंदियं ।
इच्छियं मणोरहं तुरियं, पावेसुत्तं दमीसरा ॥२५॥

छाया--वासुदेवश्च तं भणति, लुप्तकेशं जितेन्द्रियम् ।
ईप्सितमनोरथं त्वरितं, प्राप्नुहि त्वं दमीश्वर ! ॥२५॥

टीका--'वासुदेवो य' इत्यादि ।

ततो लुप्तकेशं=लुञ्चितकेशं जितेन्द्रियं=वशीकृतेन्द्रियसमूहं तं भगवन्तमरिष्टनेमिं वासुदेव=श्रीकृष्णो भणति=कथयति, चकारस्योपलक्षणत्वाद् बलभद्रसमुद्रविजयादयोऽपि भणन्ति-'हे दमीश्वर !=हे सयमिश्रेष्ठ ! त्वम् ईप्सितमनोरथं=स्वाभिलषितमोक्षरूपं मनोरथं त्वरितं=शीघ्रं प्राप्नुहि ॥२५॥

वानने (सुगधगन्धिए-सुगन्धगन्धितान्) स्वभावतः सुगन्धित तथा (मउय कुचिए-मृदुककुञ्चितान्) कोमल कुटिल (केसे-केशान्) केशों का (पच-मुट्ठीहिं पचमुष्टिभि.) पचमुष्टियों से (सयमेव लुचइ-स्वयमेव लुञ्चति) स्वय लोच किया ॥२४॥

दीक्षा ग्रहण करते ही भगवान् को मन पर्ययज्ञान हुआ बाद क्या हुवा सो कहते है-'वासुदेवो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(लुत्तकेस जिइदियं णं वासुदेवो भणइ-लुप्तकेशं जितेन्द्रिय त वासुदेवो भणति) इसके बाद लुञ्चित केश वाले तथा जितेन्द्रिय उन अरिष्टनेमि से वासुदेवने कहा (दमीसरा-दमीश्वर) हे सयमश्रेष्ठ (त्वम्) तुम (तुरियं-त्वरितम्) शीघ्र (इच्छियं मणोरह पावसुत्त-

---

सो-स. એ નેમિનાથ ભગવાને સુગધગન્ધિએ-સુગન્ધગન્ધિતાન્ સ્વભાવત સુગંધિત તથા મઉયકુચિએ-મૃદુકકુઞ્ચિતાન્ કોમળ કુટિલ કેશોનુ પચમુટ્ઠીહિં-પચમુષ્ટિભિ પંચમુષ્ટિઓથી સયમેવ લુચઇ-સ્વય લુઞ્ચતિ લોચન કર્યું ॥૨૪॥

દીક્ષા ગ્રહણ કરતાજ ભગવાનને મન પર્યયજ્ઞાન થયુ એ પછી શુ બન્યુ તે કહે છે--"વાસુદેવો" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ---લુત્તકેસ જિઇદિય ણ વાસુદેવો ભણઇ લુપ્તકેશ જિતેન્દ્રિય ત વાસુદેવો ભણતિ આ પછી લુચિત કેશવાળા તથા જીતેન્દ્રિય એ અરિષ્ટનેમીને વાસુદેવે કહ્યું, દમીસરા-દમીશ્વર હે સયમશ્રેષ્ઠ ! તમે તુરિય-ત્વરિતમ્ શીઘ્ર ઇચ્છિય

साहस्रयाः=प्रधानपुरुषाणां सहस्रेण परिवृतः=युक्तो भगवान् चित्रासु=चित्रानक्षत्रे अभिनिष्क्रामति=श्रामण्य प्रतिपद्यते स्म—महस्रपुरुषैः सह दीक्षितो जातः। भगवतोऽरिष्टनेमे पञ्चाऽपि कल्याणकानि चित्रानक्षत्र एव सपन्नानि। भगवान् वर्षशतत्रय गृहस्थावासे कौमारमनुपाल्य प्रव्रज्यां गृहीतवान्। 'चित्ताहिं' इत्यत्र सप्तम्यर्थे तृतीया। बहुत्वमार्षत्वात् ॥२३॥

कथ श्रामण्य प्रतिपन्न इत्याह—

मूलम्—अह सो सुगंधगंधिए, तुरियं मउयकुंचिए।
सयमेव लुचंइ केसे, पंचमुट्ठीहिं समाहिए २४॥

छाया—अथ स सुगन्धगन्धितान्, त्वरित मृदुककुञ्चितान्।
स्वयमेव लुञ्चति केशान्, पञ्चमुष्टिभिः समाहितः ॥२४॥

टीका—'अह' इत्यादि।

अथ=पञ्चमहाव्रतग्रहणानन्तर समाहितः=सर्वसावद्यत्यागेन ज्ञानदर्शनचारित्ररूपसमाधियुक्तः स भगवानरिष्टनेमिः स्वयमेव सुगन्धगन्धितान्—सुगन्धो

क्लृप्त शिविका (पालखी) से वे उतरे। पश्चात् (साहस्सीइ परिवुडो चित्ताहिं अभिनिक्खमई—साहस्र्या परिवृतः—चित्रासु अभिनिष्क्रामति) हजार प्रधान पुरुषों से युक्त होकर उन प्रभुने चित्रा नक्षत्र में दीक्षा धारण की। भगवान् अरिष्टनेमि के पाचों ही कल्याण इसी चित्रा नक्षत्र में हुए हैं। भगवानने तीनसौ वर्षतक गृहस्थावस्था में कुमारपने व्यतीत कर प्रव्रज्या ग्रहण की है ॥२३॥

दीक्षा कैसे ली? सो कहते हैं—'अहसो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह—अथ) महाव्रतों को ग्रहण करने के बाद (समाहिए—समाहितः) सर्वसावद्ययोगों के परित्याग से ज्ञान, दर्शन एव चारित्र रूप समाधिभाव से सपन्न (सो—सः) उन नेमिनाथ भग-

---

उत्तमाया' शिबिकयाः अवतीर्णः ભગવાન એ સર્વોત્કૃષ્ટ પાલખીમાથી નીચે ઉતર્યા પછી साहस्सीइ परिवुडो चित्ताहिं अभिनिक्खमई—साहस्र्या परिवृत्त चित्रासु अभिनिष्क्रामति હજાર પ્રધાન પુરૂષોની સાથે પ્રભુએ ચિત્રા નક્ષત્રમા દીક્ષા ધારણ કરી ભગવાન અરિષ્ટનેમિનાં પાચેય કલ્યાણ એ ચિત્રા નક્ષત્રમા થયેલ છે ભગવાને ત્રણસો વર્ષ સુધી ગૃહસ્થાવસ્થામા કુમારપણામા વ્યતીત કરી પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરી છે ॥૨૩॥

દીક્ષા કઇ રીતે લીધી ? એ કહે છે—"अहसो" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—अह—अथ પાંચ મહાવ્રતોને ગ્રહણ કર્યા પછી समाहिए—समाहित સર્વ સાવદ્ય યોગોના પરિત્યાગથી જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ સમાધીભાવથી સંપન્ન

अन्य बहवो यादवाश्च एवम्="इप्सितमनोरथं त्वरितं प्राप्नुहि, दर्शनादिना च वर्द्धमाना भव" इति पूर्वोक्तेनाशीर्वचसा भगवन्तमरिष्टनेमिं वन्दित्वा=स्तुत्वा नत्वा च द्वारकापुरीम् अतिगता=गतवन्तः। गुणोत्कर्षप्रचकानामाशीर्वचनानां स्तुतिरूपत्वं प्रसिद्धम्। अत 'एव वन्दित्वा' इत्युक्तम् ॥२७॥

भगवद्दीक्षाग्रहणानन्तरं त्रुटितसमागमाशा राजीमती कीदृशी बभूव, तदाह–

मूलम्—सोऊण रायवरकन्ना, पव्वज्जं सा जिणस्स उ ।
नीहासा उ निराणंदा सोगेण उ समुच्छिया ॥२८॥

छाया—श्रुत्वा राजवरकन्या, प्रव्रज्यां सा जिनस्य तु ।
निर्हासा तु निरानन्दा शोकेन तु समूर्च्छिता ॥२८॥

टीका—'सोऊण' इत्यादि।

राजवरकन्या=राजसु=राजसु मध्ये वरः श्रेष्ठः–उग्रसेनः, तस्य कन्या, सा राजीमती तु जिनस्य=भगवतोऽरिष्टनेमेः प्रव्रज्यां=दीक्षां–दीक्षासमाचार

(दसाराय–दशार्हाः) समुद्रविजय आदि यादव एवं (बहुजणा–बहुजना) और भी अन्य बहुत से जन (एवम्) हे नेमिकुमार! "आप शीघ्र ही अपने मनोभिलषित अर्थ की प्राप्ति करो तथा दर्शन आदि से बढते रहो" इस प्रकार आशीर्वादात्मक वचन कहते हुए (अरिट्ठनेमिं वंदित्ता–अरिष्टनेमिं वन्दित्वा) भगवान् को वन्दना करके एवं उनकी स्तुति करके (बारगाउरिं अइगया–द्वारकापुरीं अतिगताः) द्वारकापुरी गये ॥२७॥

अब जब राजीमती की नेमिकुमार के मिलने की आशा बिलकुल टूट गई तब उसकी क्या दशा हुई सो सूत्रकार प्रकट करते हैं—'सोऊण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(रायवरकन्ना–राजवरकन्या) राजाओं में श्रेष्ठ उग्रसेन की वह कन्या राजीमती (जिणस्स–जिनस्य) नेमिनाथ भगवान् की

દશાર્હાં સમુદ્રવિજય વગેરે યાદવ અને બીજા પણ बहुजणा–बहुजना ઘણા માણસોએ હે નેમિકુમાર! "આપ જલદીથી તમારા મનની અભિલાષાને પૂર્ણ કરો અને દર્શન આદિથી વધતા રહો" આ પ્રકારના આશીર્વાદાત્મક વચન કહેતા કહેતા अरिट्ठनेमिं वंदित्ता–अरिष्टनेमिं वन्दित्वा અરિષ્ટનેમિ ભગવાનને વંદના કરી, એમની સ્તુતિ કરીને बारगाउरिं अइगया–द्वारकापुरी अतिगताः દ્વારકાપુરી ગયા ॥૨૭॥

રાજીમતીની નેમિકુમારને મળવાની આશા જ્યારે બિલકુલ તુટી ગઈ ત્યારે એની શું દશા થઈ તેને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—"सोऊण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ- रायवरकन्ना–राजवरकन्या રાજાઓમાં સર્વશ્રેષ્ઠ એવા ઉગ્રસેન રાજાની એ કન્યા રાજીમતીએ जिणस्स–जिनस्य નેમિનાથ ભગવાનની પવ્વજ્જં सोऊण–

किं च—

मूलम्—नाणेणं दंसणेणं च, चरित्तेणं तवेणं य ।
खंतीए मुत्तीए, वड्ढमाणो भवाहि यं ॥२६॥

छाया—ज्ञानेन दर्शनेन च, चारित्रेण तपसा च ।
क्षान्त्या मुक्त्या, वर्द्धमानो भव च ॥२६॥

टीका—'नाणेण' इत्यादि ।

ज्ञानेन दर्शनेन च चारित्रेण तपसा च क्षान्त्या-क्षमया मुक्त्या=निर्लोभतया च वर्धमानो भव=वर्द्धस्व ॥२६॥

मूलम्—एवं ते रामकेसवा, दसारा य बहुजणा ।
अरिट्ठनेमिं वंदित्ता, अइगया बारगाउरिं ॥२७॥

छाया—एवं तौ रामकेशवौ, दशार्हाश्च बहुजना ।
अरिष्टनेमिं वन्दित्वा, अतिगता द्वारकापुरीम् ॥२७॥

टीका—'एवं ते' इत्यादि ।

तौ प्रसिद्धौ रामकेशवौ तथा समुद्रविजयादयो दशार्हाः, तथा-बहुजनाः=

ईप्सित मनोरथ प्राप्नुहि) ईप्सित मनोरथ को प्राप्त करो । सूत्रस्थ चकार यह कहता है कि बलभद्र समुद्रविजय आदिने भी ऐसा ही कहा ॥२५॥

फिर भी कहा—'नाणेण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(नाणेण-ज्ञानेन) ज्ञान (दंसणेण-दर्शनेन) दर्शन, (चरि ण-चरित्रेण) चारित्र, (तवेण-तपसा) तप, (खंतीए-क्षान्त्या) क्षमा एवं (मुत्तीए वड्ढमाणे भवाहिया-मुक्त्या वर्धमानो भवच) मुक्ति-निर्लोभता-इन सब से आप बढते रहो ॥२६॥

'एवं ते रामकेसवा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(ते राम केसवा-तौ रामकेशवौ) वे रामकेशव तथा

मणोरह पावसुत्त-ईप्सित मनोरथ प्राप्नुहि ઇચ્છિત મનોરથને પ્રાપ્ત કરો. સૂત્રસ્થ ચકાર એ બતાવે છે કે બલભદ્ર સમુદ્રવિજય વગેરેએ પણ એવું જ કહ્યું ॥૨૫॥

પછી પણ કહ્યું --"नाणेण" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—नाणेण-ज्ञानेन જ્ઞાન, दंसणेण-दर्शनेन દર્શન, चारित्तेण-चारित्रेण ચારિત્ર तवेण-तपसा તપ, खंतीए-क्षान्त्या ક્ષમા અને मुत्तीए वड्ढमाणे भवाहिया-मुक्त्या वर्धमानो भवच મુક્તિ નિર્લોભતા આ બધાથી આપ વધતા રહો. ॥૨૬॥

"एवं ते रामकेसवा" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--ते रामकेसवा-तौ रामकेशवौ એ રામ કેશવ તથા दसाराय-

इत्थं व्रतग्रहणकृतमती राजीमती व्रतग्रहणकालं प्रतीक्षमाणा पितृगृहे स्थिता। तदा भगवतोऽरिष्टनेमेर्लघुभ्राता रथनेमिस्तस्यामनुरक्तः पुष्प फल विभूषणादिकं तस्यै प्रेषयति सती राजीमती तु तं न गृह्णाति स्म। उपपद्यते चैतत्-कामी हि का च कामलिवदन्यथा-भावमेव सर्वत्र पश्यति। ततोऽन्यदा स रथनेमि स्तस्या राजीमत्याः समीपमागत्य वदति-सुलोचने! नेमिकृतपरित्यागतो मा विषाद!

सेय-यदि अह तेन परित्यक्ता मम प्रव्रजितु श्रेय.) यदि नेमिकुमारने मुझे छोड दी दिया है, तो अब मेरी भलाई इसीमें है कि मैं दीक्षा धारण कर लू घर मे रहने में मेरी भलाई नहीं है। कारण ऐसा करने (अर्थात् ससार में रहने) से तो मुझे अन्यभव मे भी दुःख भोगने पडेंगे॥२९॥

इस प्रकार राजीमती दीक्षा ग्रहण करने में अभिलाषा सपन्न बनी हुई थी कि इतने में भगवान अरिष्टनेमि के एक छोटे भाई रथनेमी राजीमती पर अनुरक्त हो गये। उन्होंने उसको अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये उसके पास फल पुष्प गध विभूषण आदि भेजना प्रारभ किये। राजीमती निष्पाप हृदयवाली थी अत उसने इनको स्वीकार नहीं किया। ठीक बात है कामीजन पीलिया रोग वाले की तरह सर्वत्र अन्यथाभाव को ही देखा करता है। एक दिन की बात है कि रथ नेमिने राजीमती के पास आकर कहा सुलोचने! नेमिकुमारने जो आपका परित्याग कर दिया है उससे आप जरा भी खेदखिन्न न होवें।

मम प्रव्रजितु श्रेय નેમિકુમારે મને તરછોડી દીધી છે ત્યારે હવે મારી ભલાઇ તો એમાજ છે કે, હુ દીક્ષા ધારણ કરી લઉ ઘરમા રહેવાથી હવે મારી ભલાઇ નથી કારણકે, એવુ કરવાથી અથવા તો સસારમા રહેવાથી તો અન્ય ભવમા પણ મારે દુ ખ ભોગવવુ પડશે ॥૨૯॥

આ પ્રકારનો દીક્ષા ધારણ કરવાનો મનોગત નિશ્ચય રાજીમતી કરી રહેલ હતી એ સમયે ભગવાન અરિષ્ટનેમિનો એક નાનો ભાઈ રાજીમતીમા અનુરકત થઇ ગયો તેણે રાજીમતીને પોતાના તરફ આકર્ષવા માટે તેની પાસે ફળ, પુષ્પ અને આભૂષણ આદિ મોકલવાનો પ્રારભ કર્યો રાજીમતી નિષ્પાપ હૃદયવાળી હતી આથી તેણે એ વસ્તુઓનો સ્વીકાર ન કર્યો એ વાત સાચી છે કે, કામી માણસો, કમળાનો રોગી જેમ ચારે બાજુ પીળુજ ભાળે છે તે રીતે જોતા હોય છે એક દિવસની વાત છે કે, રથનેમિએ રાજીમતીની પાસે આવીને કહ્યુ, સુલોચના! નેમિકુમારે આપનો પરિત્યાગ કરી દીધો છે આથી આપ જરા પણ પોતાના દિલના શોક ન કરો. ભલે

श्रुत्वा=कर्णाकर्णि समाकर्ण्य निर्हासा-निर्गतो हासो यस्याः सा तथा-हास्यरहिता तु=पुनः-निरानन्दा-निर्गत आनन्दो यस्या' सा तथा आनन्दरहिता च जाता। तु=पुन' शोकेन समूर्च्छिता जाता ॥२८॥

सखीभिः शीतलोपचारादिना लब्धसंज्ञा सा यत्कृतवती, तदुच्यते--

मूलम्—राईमई विचिंतेइ, धिरत्थु मम जीवियं ।
जाँह तेणं परिच्चत्ता, सेयं पव्वेइउ ममं ॥२९॥

छाया---राजीमती विचिन्तयति, धिगस्तु मम जीवितम्।
यद्यह तेन परित्यक्ता, श्रेय प्रव्रजितु मम ॥२९॥

टीका--'राईमई' इत्यादि ।

सम्प्राप्तचैतन्या राजीमती विचिन्तयति-मम जीवित धिगस्तु। यद्यह तेन भगवता परित्यक्ता तर्हि मम प्रव्रजितु=प्रव्रज्या ग्रहण श्रेय.=कल्याणकरम्, नतु गृहेऽवस्थानम्। येनान्यजन्मन्यपि दु.खभागिनी न भवेयम् ॥२९॥

(पव्वज्ज सोऊण-प्रव्रज्यां श्रुत्वा) दीक्षा ग्रहण करने की सुनकर (निहासा निरानदा-निर्हासा निरानदा) हास्यभाव से एव आनदभाव से राहत होकर (सोगेण समुच्छिया-शोकेन समूर्च्छिता) शोक से सतप्त होकर मूर्च्छित हो गई ॥२८॥

सखियों के द्वारा शीतलोपचारो से स्वस्थ होने पर राजीमतीने जो किया सो कहते है—'राईमई' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जब सखियोंने शीतलोपचार द्वारा उसको सचेत किया तब वह (राईमई-राजीमती) राजीमती (विचिंतेइ-विचिन्तयति) विचार करने लगी कि-(मम जीविय धिगत्थु-मम जीवित धिक् अस्तु) मेरे इस जीवन को धिकार है क्योंकि-(जाह तेण परिचत्ता मम पव्वउ

प्रव्रज्या ...ना દીક્ષા ગ્રહણ કર્યાનુ સાભળીને निहासा निरानदा-निर्हासा निरानदा હાસ્યભાવ અને આનદભાવથી રહિત બની सोगेण समुच्छिया-शोकेन समूर्च्छिता' શોકથી સતપ્ત થઇને મૂર્ચ્છિત બની ગઈ ॥૨૮॥

સખીઓએ શીતલ ઉપચારો કરીને શુદ્ધિમા લાવ્યા પછી રાજીમતીએ શુ કર્યું તે કહે છે--"राईमई" ઇત્યાદિ !

જ્યારે સખિઓએ મૂર્ચ્છિત બનેલ રાજીમતીને શીતળ એવા ઉપચારો કરીને શુધ્ધિમા આણ્યા ત્યારે તે राई मई-राजीमती રાજીમતી સ્વત विचिंतेइ-विचिन्तयति વિચાર કરવા લાગી કે मम जीविय धिगत्थु-मम जीवित धिकस्तु મારા આ જીવન ને ધિક્કાર છે કેમકે, जाह तेण परिचत्ता मम पव्वइय सेय-यदि अह तेन परित्यक्ता

नीरागानुरक्ता ह्व दृश्याऽसि कथमात्मानं मुधा सन्तापयसि ? हन्त ! त्वद्गतजीवित मां चेत्स्वीकुर्यास्तर्हि जन्मावधि ते दास स्याम् ! अयि मुग्धे ! भोगान् भुङ्क्ष्व ! तान् विना जीवनं निरर्थकमिति सर्वोऽपि जानाति। अतो मुञ्च कदाग्रहं, स्वीकुरु मां त्वद्वियोगसन्तापितजीवितम्। इत्थं तद्वचनं श्रुत्वा समयज्ञा सा राजीमती तस्य पश्यत एव पायसं भुक्त्वा मदनफलं भक्षित्वा कटोरके वमनं कृत्वा रथनेमिं प्राह—पिबेदम् ! तस्या इदं वचनं श्रुत्वा रथनेमिः किंचिद्विरक्त

साथ कहा अयि मृगनयने ! जिस प्रकार शुष्क काष्ठ में अनुरक्त बनकर भ्रमरी व्यर्थ ही अपने आपको सन्तापित करती है उसी प्रकार चतुर भी तुम क्यों व्यर्थ में उन विरक्त हुए नेमिकुमार में अनुरक्त बनकर अपने आपको संतापित कर रही हो। तुम्हारी प्राप्ति की आशा से जीनेवाले मुझे स्वीकार कर तुम देखो कि मैं किस प्रकार तुम्हारा जीवनभर दास बनकर रहता हूँ। अयि मुग्धे ! भोगों को भोगने में ही संसार का मजा है। क्यों कि उनके विना जैसे सुन्दर पकवान भी लवण के विना व्यर्थ हो जाता है जीवन भी व्यर्थ है। यह बात सर्व ही जानते हैं। इसलिये कदाग्रह का परित्याग कर मुझे भर्तारूप से तुम स्वीकार करो। नहीं तो यह निश्चित समझो कि मैं इस संसार में नामशेष हो जाऊँगा। इस प्रकार रथनेमि की अटपटी बातें सुनकर उस राजीमतीने उसके देखते २ ही खीर को खाकर मदनफल खा लिया। उसके प्रभाव से उसको उसी समय वमन हो गया। उस वमनको वह कटोरे में ले आई और रथनेमि से कहने लगी अच्छा तुम

સુકા લાકડા ા અનુરક્ત બનેલ ભમરી વ્યર્થમા પોતાની જાતને સતાપિત કરે છે એજ રીતે ચતુર હોવા છતા પણ તમે વ્યર્થમા શા માટે વિરક્ત થયેલા નેમિકુમારમા અનુરક્ત થઈને પોતાની જાતને સતપિત કરી રહ્યા છો તમારી પ્રાપ્તિ કરવાની આશામા જીવી રહેલા એવા મારો સ્વીકાર કરો અને જુઓ કે, હુ કઇ રીતે જીવનભર તમારો દાસ બનીને રહુ છુ હે મુગ્ધે ! ભોગો ભોગવવામા જ સસારની મજા છે કેમકે એના વગર જેમ ભાતભાતના સ્વાદિષ્ટ ભોજન પણ મીઠા વગર સ્વાદિષ્ટ નથી લાગતા એજ પ્રકારથી જીવન પણ વ્યર્થ છે આ વાતને સહુ કોઈ જાણે છે આ કારણે હઠાગ્રહનો પરિત્યાગ કરી મને તમારા ભરથાર રૂપે સ્વીકાર કરો એમ નહીં થાય તો નિશ્ચય માનો કે હુ આ સસારમાથી નામશેષ બની જવાનો રથનેમીની આ પ્રકારની અટપટી વાતોને સાભળીને રાજમતીએ એના જોતા જોતાજ ખીર ખાધી અને ઉપરથી મદન ફળને ખાઇ લીધુ જેના પ્રભાવથી તેને એજ વખતે ઉલટી થઇ એને એક કટોરામા લઇને રથનેમિની સામે આવી

स त्वां परित्यक्तवान्, तेन किम्? त्वं मां भर्तारं स्वीकृत्य स्वकं वयः सफलीकुरु। अहं त्वां भृशम् कामये, यथा भ्रमरो मालतीम्। तस्येदं वचनं श्रुत्वा राजीमती प्राह-यद्यप्यहं तेन प्रभुणा परित्यक्ता, तथापि तद्गतमानसैवास्मि। स मां पत्नीत्वेन नो गृहीतवान्, शिष्यात्वेन तु ग्रहीष्यत्येव। अतस्तव प्रार्थना व्यर्था! मुञ्च मद्विषयामनुरक्तिम्। एवं तया प्रोक्तः स तस्मिन्नहनि ततो निर्गतः। परन्तु तद्गता स्पृहां परित्यक्तुं समर्थो नाभूत्। अथापरेद्युः स पुनरपि रहसि राजीमतीं प्रेम्णा प्रोक्तवान्-अयि मृगाक्षि! विरक्तेऽरिष्टनेमौ शुष्के काष्ठेऽलि

उन्होंने यदि आपको छोड दिया तो इससे क्या? हम तो मौजूद हैं-अतः तुम मुझे अपना पति समझकर मेरे साथ अपने इस देव-दुर्लभ वय को सफलित करो। मैं जिस प्रकार भ्रमर मालती को चाहता है उसी प्रकार तुमको अत्यंत चाह रहा हूं। रथनेमि के इस प्रकार असभ्य वचनों को सुनकर राजीमतीने बडी ही शांति के साथ सभ्यभाषा में उनको उत्तर दिया-यद्यपि मैं अरिष्टनेमिद्वारा छोड दी गई हूं तो भी मेरे द्वारा वे नहीं छोडे गये हैं। मेरा मन तो उन्हीं में लीन बना हुआ है। माना उन्होंने मुझे पत्नीरूप से स्वीकार नहीं किया है तो क्या हुआ शिष्यारूप से तो स्वीकार करेंगे ही। इसलिये आपका इस प्रकार कहना सर्वथा व्यर्थ है। आप मेरी आशा न करें। इस प्रकार जब राजीमतीने उनसे कहा तो वह उस दिन तो वहां से चले गये-परंतु राजीमती की प्राप्ति की आशा उनकी गई नहीं। दूसरे दिन फिर मौका पाकर उनने राजीमती से बडी आर्जाजी के

તેમણે તમોને છોડી દીધા છે પરંતુ અમે લોકો તો છીએ જ, આથી તમે મને પોતાના પતિ તરીકે માનીને મારી સાથે તમારી આ દેવદુર્લભ વયને સફળ કરો જે પ્રમાણે ભ્રમર માલતીને ચાહે છે આજ પ્રમાણે હું તમને ચાહી રહ્યો છું રથનેમિના આ પ્રકારના અસભ્ય વચનોને સાંભળીને રાજીમતીએ ખૂબજ શાંતિપૂર્વક સભ્ય એવી ભાષામાં તેને ઉત્તર આપ્યો કે, હું જો કે અરિષ્ટનેમિથી તરછોડાયેલી છું તો પણ મેં મારા હૃદયમાંથી તેમને દૂર કરેલ નથી મારૂં મન તો એમનામાંજ લીન બનેલ છે તેમણે ભલે મને પત્નીરૂપે સ્વીકારેલ નથી તો શું થયું? શિષ્યારૂપે તો તેઓ મારો સ્વીકાર અવશ્ય કરશે જ આ કારણે આપનું આ પ્રકારનું કહેવું સર્વથા વ્યર્થ છે આપ મારી આશા ન કરો આ પ્રમાણે રાજીમતીએ જ્યારે તેને કહ્યું એટલે તે દિવસે તો એ ત્યાંથી ચાલ્યો ગયો પરંતુ રાજીમતીની પ્રાપ્તિની આશા તે છોડી શક્યો નહીં બીજે દિવસે સમય મળતાં ફરી તે રાજીમતીની પાસે પહોંચ્યો અને ઘણીજ આજીજીના સાથે કહેવા લાગ્યો કે, હે મૃગાક્ષિ! જે પ્રકારે

इतश्च भगवानरिष्टनेमिश्छद्मस्थावस्थायां ग्रामादिषु विहरमाणश्चतुःपञ्चाशत दिनान्यतिवाह्य पञ्चपञ्चाशत्तमे दिवसे पुनरपि रैवतकपर्वतमागत्याष्टमतपः कृत्वा ध्यानस्थः केवलज्ञानमाप्तवान। तदा कम्पितासनाः सर्वे देवेन्द्रा देवैः सह तत्र समागताः। समागतैस्तैर्देवैर्निर्मिते सुशोभिते समवसरणे समुपविश्य भगवान रिष्टनेमिर्देशनां दातुमारेभे। वनपालमुखात्प्रभोर्ज्ञानोत्पत्तिसमाचारं श्रुत्वा बल-राम-श्रीकृष्णौ समुद्रविजयादयो दशार्हास्तथाऽन्येपि बहवो यादवा, रैवतक

होकर वह वापिस अपने घर पर लौट आया। इस प्रकार विशुद्धभावना संपन्न बनी हुई राजीमतीने घर मे रहने तक का अपना समय विविध प्रकार की तपस्याओं की आराधना करने में ही व्यतीत किया। विशुद्ध तपस्याओ के अनुष्ठान से उसका समय भी घर में रहते हुए सुखपूर्वक व्यतीत होने लगा।

उधर भगवान अरिष्टनेमि छद्मस्थावस्था में चोपन ५४ दिन तक रहे और इसी अवस्था में उन्होंने ग्रामानुग्राम विहार किया। परन्तु पचपन ५५ वें दिन वे पुनः रैवतक पर्वत पर आये और वहां उन्होंने अष्टमतप करके ध्यानस्थ होकर केवलज्ञान प्राप्त किया। भगवान को केवलज्ञान होते ही इन्द्रों के आसन कम्पायमान हुए, सो भगवान् को केवलज्ञान की प्राप्ति जान-कर समस्त इन्द्र देवों के साथ २ वहांपर आकर एकत्रित हो गये। देवोंने वहां भगवान के समवसरण की रचना की। भगवानने धार्मिकदेशना देना प्रारंभ किया। वनपाल के मुख से प्रभु को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ जानकर बलराम श्रीकृष्ण एवं समुद्रविजय आदि यादव तथा और

તે પોતાના ઘેર ચાલી ગયો. આ પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાવાળી બનેલ રાજીમતી જ્યાં સુધી ઘરમાં રહી ત્યાંસુધી વિવિધ પ્રકારની તપસ્યાઓથી તેણે પોતાનો સમય વ્યતીત કર્યો. વિશુદ્ધ તપસ્યાઓના અનુષ્ઠાનથી એનો સમય ઘરમાં રહેવા છતાં સુખપૂર્વક વ્યતીત થવા લાગ્યો.

આ તરફ ભગવાન અરિષ્ટનેમિ છદ્મસ્થાવસ્થામાં ચોપન દિવસ સુધી રહ્યા અને એ અવસ્થામાં તેમણે ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કર્યો. પંચાવનમા દિવસે તેઓ ફરીથી રૈવતક પર્વત ઉપર પાછા ફર્યા અને ત્યાં તેમણે અષ્ટમતપ કરીને ધ્યાનસ્થ બનીને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. ભગવાનને કેવળજ્ઞાન થતાં જ ઇન્દ્રોના આસન કંપાયમાન બન્યાં. આથી ભગવાનને કેવળની પ્રાપ્તિ જાણીને સઘળા ઇન્દ્ર દેવોની સાથે રૈવતક પર્વત ઉપર આવી પહોંચ્યા. દેવોએ ભગવાનના સમવસરણની રચના કરી. ભગવાને ધાર્મિક દેશના આપવાનો પ્રારંભ કર્યો. વનપાળના મુખેથી પ્રભુને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયાનું જાણીને બલરામ, શ્રીકૃષ્ણ અને સમુદ્રવિજય વગેરે યાદવો તથા બીજા

एवमवोचत्-किमहं शुनकोऽस्मि, यदिदं वमनं पिबामि ! सस्मिता राजीमती प्राह-किं भवानपीदं जानाति ? स प्राह-बालोऽप्येतज्जानाति, तर्हि नाहं वेद्मीति शङ्काया अवकाश एव कुतो भवत्या हृदि जातः ? ततः कोपहासाश्लिष्टवदना राजीमती प्राह-अये मूढ ! नेमिकृतपरित्यागेन वमनतुल्या मां भोक्तुमिच्छन् भवान् यदि कुक्कुरो न भवसि, तर्हि कोऽसि ? इति भवानेव कथयतु ! एवं तस्या वचनं श्रुत्वा तद्विषयामाशां परित्यज्य रथनेमिः स्वगृहं गतवान् । ततः सती सा राजीमती विशुद्धं तपस्तप्यमाना सुखेन स्वगृहे स्थिता ।

इसको पीओ । राजुल की इस बात को सुनकर रथनेमिने कुछ घृणितभाव से ऐसा कहा क्या मैं श्वान हूं जो वमन को चाटूं-या पीऊँ ? तब सस्मित होकर राजीमतीने उनसे कहा अरे ! क्या आप भी इस बातको जानते हैं ? उसने कहा इसमें जानने की कौनसी बडी भारी बात है यह तो एक बाल जन भी जानता है । फिर मैं कैसे न जानूं इस प्रकार के संदेह को आपके हृदय मे स्थान ही कैसे हुआ । रथनेमि के इस प्रकार वचन सुनकर राजीमती को पहिले तो उन पर कोप आया पश्चात उसको दबाकर वह कुछ हँसकर उनसे कहने लगी-अये मुग्ध ! जब नेमिने मुझे छोड दिया है तो मैं तो वमन तुल्य ही हूं फिर भी आप मुझ वमन को भोगने के अभिलाषी बन रहे हो तब कहो तुम श्वान नहीं हो तो कौन हो । इस प्रकार राजीमती की इस प्रयुक्त युक्ति से सचेत होकर रथनेमिने उसकी प्राप्ति की आशा का परित्याग कर दिया । तथा निश्चिन्त

અને કહેવા લાગી કે, તમો આને પી જાઓ રાજુલથી આ વાતને સાભળીને રથનેમિએ કાંઇક ઘૃણાયુકત ભાવથી કહ્યુ કે, શુ હુ કુતરો છુ કે, ઉલટીને ચાટુ-પીઇ જાઉ ? આથી રાજુલે હસતા હસતા કહ્યુ કે, શુ આપ એ વાતને જાણો છો ? રથનેમિએ કહ્યુ-એમાં જાણવાની શુ વાત છે આને તો નાનામા નાનુ બાળક પણ સમજે છે તો પછી હુ કેમ ન જાણતો હોઉ આ પ્રકારના સદેહને આપના હૃદયમા સ્થાન કેમ મળ્યુ ? રથનેમિના આ વચનને સાભળીને રાજીમતીના દિલમા પ્રથમ તો તેના પ્રત્યે ક્રોધ ઉત્પન્ન થયો પરંતુ ક્રોધને દબાવીને હસતા હસતા એ કહેવા લાગી કે, અરે મૂઢ જ્યારે નેમિકુમારે મને છોડી દીધેલ છે ત્યારે એ દૃષ્ટીએ હુ ઉલટીના જેવીજ છુ છતા પણ ઉલટીના જેવી મને આપ પોતાની ભોગવવાની સામગ્રી જેવી માની અભિલાષા કરી રહેલ છો તો તમો કુતરા જેવા નહી તો કેવા છો ? આ પ્રકારની રાજીમતીની યુકિતયુકત સમજાવટથી રથનેમિના મનમા લજ્જા ઉત્પન્ન થઇ અને એ આશાનો તેણે પરિત્યાગ કરી દીધો અને નિશ્ચિન્ત થઇને

एतच्च सूत्रकारोऽपि वर्णयति—

मूलम्—अह सा भमरसंनिभे, कुच्चफणगपसाहिए।
सयमेव लुंचइ केसे, धिइमता ववस्सिया ॥३०॥

छाया—अथ सा भ्रमरसन्निभान्, कूर्चफणकसन्निभान्।
स्वयमेव लुञ्चति केशान्, धृतिमती व्यवसिता ॥३०॥

टीका - 'अह' इत्यादि।

अथ=धर्मदेशनाश्रवणानन्तरं धृतिमती=धैर्ययुक्ता व्यवसिता=धर्माङ्गीकरणेऽध्यवसाययुक्ता सा राजीमती भ्रमरसन्निभान्=कृष्णतयाऽऽकुञ्चिततया च भ्रमरतुल्यान्, कूर्चफणकप्रसाधितान्-कूर्चेन-वंशशलाकानिर्मितेन 'कूँची' इति प्रसिद्धेन, फणकेन-कङ्कतकेन च प्रसाधितान्=संस्कृतान् केशान् भगवन्तनुज्ञया स्वयमेव लुञ्चति=अपनयति ॥३०॥

धार्मिक देशना सुनकर राजीमतीने सातसौ सखियों के साथ भगवान के समीप दीक्षा धारण की ॥

सूत्रकार अब इसी बात का वर्णन करते हैं-'अहसा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह-अथ) प्रभु नेमिनाथ भगवानकी धर्मदेशना सुनने के बाद (धिइमता-धृतिमति) धैर्ययुक्त तथा (ववस्सिया-व्यवसिता) धर्म अंगीकार करने के अध्यवसायवाली (सा-सा) उस राजीमतीने (भमरसंनिभे-भ्रमरसन्निभान्) भ्रमर के समान काले तथा (कुच्चफणगपसाहिए-कूर्चफणकसन्निभान्) कूची एवं फणक-कङ्कतक-से समारे हुए अपने (केसे-केशान्) केशों का (सयमेव लुचइ-स्वयमेव लुञ्चति) अपने हाथों से ही लुञ्चन किया ॥३०॥

સમયે એમની ધર્મદેશના સાંભળીને રાજીમતીએ સાતસો સખીઓની સાથે ભગવાનના સમક્ષ દીક્ષા ધારણ કરી લીધી

સૂત્રકાર હવે એ વાતનું વર્ણન કરે છે "अहसा" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—अह-अथ પ્રભુ નેમિનાથ ભગવાનની ધર્મદેશનાને સાંભળ્યા પછી धिइमता-धृतिमति ધૈર્યને ધારણ કરનાર તથા ववस्सिया-व्यवसिता ધર્મને અંગીકાર કરવાના અધ્યવસાયવાળી सा सा એ રાજીમતીએ भमरसनिभे-भ्रमरसन्निभान ભમરાના જેવા કાળા તથા कुच्चफणगपसाहिए-कूर्चफणकसन्निभान् સુંદર રીતે ઓળાયેલા લાંબા केसे-केशान કેશોનું सयमेव लुचइ-स्वयमेव लुञ्चति પોતાના હાથથી જ લોચન કર્યું ॥૩૦॥

पर्वते समागत्य यथास्थानं समुपविश्य प्रमोदातिरेकितहृदयाः जिनप्रदत्तां देशनाम् श्रुतवन्तः। तत्र-प्रसङ्गवशाद्राजीमत्यपि सखीभिः सह समागता। भगवद्दत्तां देशनां श्रुत्वा बहवो राजानोऽन्ये च बहवो मनुष्याः प्रचुरानार्याश्च प्रतिबुद्धा भगवतः समीपे प्रव्रजिताः। केचित्तु श्रावकधर्मं स्वीकृतवन्तः। तेषु प्रव्रजितेषु वरदत्ताद्या अष्टादशगणधरा अभवन्। ते भगवद्दत्तया त्रिपद्या द्वादशाङ्गी कृतवन्तः। रथनेमिरपि भगवतोऽन्तिके प्रव्रजितः। रामकृष्णौ समुद्रविजयादयो दशार्हा उग्रसेनाद्यो यादवा राजीमत्यादयो यदुकन्यकाश्च द्वारका पुरीं प्रतिगताः। प्राप्तकेवलज्ञानो भगवानरिष्टनेमिर्ग्रामानुग्रामं विहरन्नन्यदा द्वारकायां समवसृतः। तदा सुमती राजीमती भगवतो देशनां श्रुत्वा सप्तशतसख्यकाभिः सखीभिः सह भगवतोऽन्तिके दीक्षां गृहीतवती।

भी अन्य यादवगण रैवतक पर्वतपर आ पहुँचे। तथा प्रसंगवश सखियों के साथ राजीमती भी आई। वे सब हर्षित हृदय होकर प्रभु की देशना सुनने मे दत्तचित्त हो गये। प्रभुद्वारा दीगई धर्मदेशना सुनकर अनेक राजा अनेक मनुष्य तथा प्रचुर अनार्य उस समय प्रतिबुद्ध होकर उनके समीप दीक्षा धारण की। कितनेक व्यक्तियोंने प्रभु से श्रावकव्रत अंगीकार किये। जितने प्रव्रजित हुए थे उन्ही मे से वरदत्त आदिक अठारह गणधर हुए। उन्होंने भगवान की दी हुई त्रिपदी द्वारा द्वादशाङ्गी की रचना की। रथनेमिने भी भगवान् के समीप मुनिदीक्षा स्वीकार की। राम, कृष्ण एव समुद्रविजय आदि दशार्ह तथा उग्रसेन आदि यादव एव राजीमती आदि यदुकन्याएँ प्रभु की धर्मदेशना सुनकर वापिस द्वारका आ गई। विहार करते २ केवली नेमिनाथ भगवान् जब फिर द्वारका पधारे उस समय उनकी

યાદવગણો રૈવતક પર્વત ઉપર આવી પહોંચ્યા પ્રસંગવશ રાજીમતી પણ પોતાની સખીઓની સાથે આવેલ હતી પ્રભુની ધર્મદેશનાને હર્ષિત હૃદયથી સહુ કોઈ સાંભળી રહ્યા હતા પ્રભુ તરફથી દેવાયેલી ધર્મદેશના સાંભળીને અનેક રાજાઓ અનેક મનુષ્યો તથા પ્રચુર અનાર્યોએ એ સમયે પ્રતિબુદ્ધ બનીને તેમની સામે દીક્ષા ધારણ કરી લીધી કેટલીક વ્યક્તિઓએ પ્રભુની સામે શ્રાવક વ્રતનો અંગીકાર કર્યો જેટલા પ્રવ્રજીત થયા હતા એમનામાંથી વરદત્ત આદિ અઢાર ગણધર થયા એમણે ભગવાને આપેલ। ત્રિપદી દ્વારા દ્વાદશાંગીની રચના કરી રથનેમિએ પણ ભગવાનની પાસેથી મુનિદીક્ષા ધારણ કરી રામ, કૃષ્ણ અને સમુદ્રવિજય આદિ દશાર્હ તથા ઉગ્રસેન આદિ યાદવ અને રાજીમતી વગેરે યાદવ કન્યાઓ પ્રભુની ધર્મદેશના સાંભળીને દ્વારકા પાછા ફરી ગયા વિહાર કરતા કરતા ભગવાન નેમિનાથ જ્યારે દ્વારકા પહોંચ્યા

छाया—सा प्रव्रजिता सती, प्राव्राजयत्तत्र बहुम् ।
स्वजनं परिजनं चैव, शीलवती बहुश्रुता ॥३२॥

टीका--'सा पव्वइया' इत्यादि ।

प्रव्रजिता सती-प्रव्रज्याग्रहणानन्तरं शीलवती=मूलोत्तरगुणयुक्ता बहुश्रुता =अधीतसकलाङ्गोपाङ्गा सा राजीमती साध्वी तत्र-द्वारकायां बहु स्वजनं= भगिन्यादिवर्गं परिजनं=सख्यादिवर्गं चैव प्राव्राजयत्=दीक्षामग्राहयत् । राजीमती भगिन्यादीनां सख्यादीनां च सप्तशतीं प्राव्राजयदिति-सम्प्रदाय ॥३२॥

अथ तदनन्तर वक्तव्यतामाह—

मूलम्--गिरिं च रेवयं जंती, वासेणोल्ला उ अंतरा ।
वासंते अंधयारम्मि, अंतो लयणस्स सा ठिया ॥३३॥

छाया—गिरिं च रैवतकं यान्ति, वर्षेणार्द्रा तु अन्तरा ।
वर्षति अन्धकारे, अन्तर्लयनस्य सा स्थिता ॥३३॥

टीका--'गिरिं च' इत्यादि ।

च=पुनरन्यदा भगवदरिष्टनेमि वन्दनाय रैवतकं गिरिं यान्ती=गच्छन्ती

फिर राजीमतीने क्या किया? सो कहते हैं—'सो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पव्वइया सती-प्रव्रजिता सती) दीक्षित होकर मुलोत्तर गुणों के परिपालन करने में अतिशय सावधान एव (बहुस्सुया-बहुश्रुता) उपांगसहित सकल अंगो के अभ्यास से विशिष्टज्ञान संपन्न (सा-सा) उस साध्वी राजीमतीने (तहिं-तत्र) द्वारिका मे (बहु सयण परियण चेव-बहु स्वजन परिजन चैव) अपनी बहिनो आदिको को एव सखिजनो को (पव्वावेसी-प्राव्राजयत्) दीक्षाग्रहण करवाई । इन सबकी संख्या सातसौ ७०० थी ॥३२॥

પછી રાજીમતીએ શુ કર્યું ? આને કહે છે--"सो" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--पव्वइया सती-प्रव्रजिता सती દીક્ષા લઈને મુલોત્તર ગુણોનુ પરિપાલન કરવામા અતિશય સાવધાન અને बहुस्सुया-बहुश्रुता ઉપાગ સહિત સઘળા અ ગોનુ અભ્યાસથી વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર सा-सा એ સાધ્વિ રાજમતીએ तहिं-तत्र દ્વારકામા बहु सयण परियण चेव-बहु स्वजन परिजन चैव પોતાની બહેનો તેમજ અન્ય સખીજનોને पव्वावेसी-प्राव्राजयत् દીક્ષા ધારણ કરાવી જેની સંખ્યા સાતસો ૭૦૦ની હતી ॥૩૨॥

ततश्च यदभूत्तदुच्यते—

मूलम्—वासुदेवो यं णं भणइ, लुत्तकेस जिइंदियं ।
संसारसायरं घोरं, तरं कण्णे! लहुं लहुं ॥३१॥

छाया—वासुदेवश्च तां भणति, लुप्तकेशां जितेन्द्रियाम् ।
संसारसागरं घोरं, तर कन्ये! लघु लघु ॥३१॥

टीका—'वासुदेवो' इत्यादि ।

लुप्तकेशां=लुञ्चितकेशां जितेन्द्रियां=वशीकृतेन्द्रियां तां साध्वीं राजीमतीं वासुदेवः=कृष्णो भणति, चकारस्योपलक्षणत्वात्, उग्रसेनादयोऽपि भणन्ति। किं भणन्ति—हे कन्ये! घोरं=भयङ्करं संसारसागरं=चतुर्गतिकसंसाररूपं सागरं लघु लघु=शीघ्रं शीघ्रं=तर=उत्तीर्णा भव, मुक्तिं लभस्वेति भावः ॥३१॥

एवं गृहीतप्रव्रज्या वासुदेवादिभिराशीर्भिस्तुता सा राजीमती साध्वी यदकरोत्तदुच्यते—

मूलम्—सा पव्वइया संती, पव्वावेसी तहिं बहुं ।
सयणं परियणं चेव, सीलवंता बहुस्सुया ॥३२॥

उसके बाद जो हुआ सो कहते हैं—'वासुदेवो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(लुत्तकेस जिइंदियं-लुप्तकेशां जितेन्द्रियाम्) केशों का जिसने अपने हाथों से लोच किया है तथा अपनी इन्द्रियों को जिसने वश में कर लिया है ऐसी (णं-ताम्) उस साध्वी राजीमती से (वासुदेवो य भणइ-वासुदेवश्च भणति) वासुदेव तथा उग्रसेन आदिकोंने कहा कि-(कण्णे-कन्ये) हे कन्ये! तुम (घोरं संसारसायरं-घोरम् संसारसागरम्) भयंकर इस चतुर्गति रूप संसार समुद्र को (लहुं लहुं तर-लघु लघु तर) अति शीघ्र पार करो-अर्थात् मुक्ति प्राप्त करो ॥३१॥

આના પછી જે થયું તેને કહેવામાં આવે છે—"वासुदेवो" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—लुत्तकेस जिइंदियं-लुप्तकेशां जितेन्द्रियाम् પોતાના જ હાથથી પોતાના કેશોનું લુંચન કરનાર તથા પોતાની ઈન્દ્રિયોને જેણે વશમાં કરી લીધેલ છે એવી णं-ताम् એ સાધ્વી રાજીમતીને वासुदेवो य भणइ-वासुदेवश्च भणति વાસુદેવ તથા ઉગ્રસેન વગેરેએ કહ્યું કે, कण्णे-कन्ये હે પુત્રી! घोरं संसारसायरं-घोरं संसारसागरम् ભયંકર એવા આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર સમુદ્રને તમો लहुं लहुं तर-लघुलघु तर શીઘ્ર પાર કરો—અર્થાત મુક્તિ પ્રાપ્ત કરો. ॥૩૧॥

छाया—सा प्रव्राजिता सती, प्राव्राजयत्तत्र बहुम् ।
स्वजनं परिजनं चैव, शीलवती बहुश्रुता ॥३२॥

टीका--'सा पव्वइया' इत्यादि ।

प्रव्रजिता सती-प्रव्रज्याग्रहणानन्तरं शीलवती=मूलोत्तरगुणयुक्ता बहुश्रुता =अधीतसकलाङ्गोपाङ्गा सा राजीमती साध्वी तत्र-द्वारकायां बहुं स्वजनं= भगिन्यादिवर्गं परिजनं=सख्यादिवर्गं चैव प्राव्राजयत्=दीक्षामग्राहयत्। राजीमती भगिन्यादीनां सख्यादीनां च सप्तशती प्राव्राजयदिति-सम्प्रदाय ॥३२॥

अथ तदनन्तर वक्तव्यतामाह—

मूलम्--गिरिं च रेवयं जंती, वासेणोल्ला उ अंतरा ।
वासंते अधयारम्मि, अंतो लयणस्स सा ठिया ॥३३॥

छाया—गिरिं च रैवतकं यान्ति, वर्षेणार्द्रा तु अन्तरा ।
वर्षति अन्धकारे, अन्तर्लयनस्य सा स्थिता ॥३३॥

टीका--'गिरिं च' इत्यादि ।

च=पुनरन्यदा भगवदरिष्टनेमि वन्दनाय रैवतकं गिरिं यान्ती=गच्छन्ती

फिर राजीमतीने क्या किया? सो कहते हैं—'सो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पव्वइया सती-प्रव्रजिता सती) दीक्षित होकर मुलोत्तर गुणो के परिपालन करने मे अतिशय सावधान एवं (बहुस्सुया-बहुश्रुता) उपांगसहित सकल अंगो के अभ्यास से विशिष्टज्ञान संपन्न (सा-सा) उस साध्वी राजीमतीने (तहिं-तत्र) द्वारिका मे (बहु सयण परियण चेव-बहु स्वजन परिजन चैव) अपनी बहिनो आदिको को एवं सखिजनों को (पव्वावेसी-प्राव्राजयत्) दीक्षाग्रहण करवाई। इन सबकी संख्या सातसौ ७०० थी ॥३२॥

પછી રાજીમતીએ શું કર્યું ? આને કહે છે--"सो" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--पव्वइया सती-प्रव्रजिता सती દીક્ષા લઈને મુલોત્તર ગુણોનું પરિપાલન કરવામાં અતિશય સાવધાન અને बहुस्सुया-बहुश्रुता ઉપાંગ સહિત સઘળા અંગોનું અભ્યાસથી વિશિષ્ટ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર सा-सा એ સાધ્વી રાજીમતીએ तहिं-तत्र દ્વારકામાં बहु सयण परियण चेव-बहु स्वजन परिजन चैव પોતાની બહેનો તેમજ અન્ય સખીજનોને पव्वावेसी-प्राव्राजयत् દીક્ષા ધારણ કરાવી જેની સંખ્યા સાતસો ૭૦૦ની હતી ॥૩૨॥

अन्तरा=मध्ये वर्षेण=वृष्ट्या आर्द्रा=क्लिन्नगात्रा सा राजीमती साध्वी वर्षति जलदे अन्धकारे लयनस्य=रैवतकगिरिगुहाया अन्तः=मध्ये स्थिता। 'तु' शब्दः पूरणे ॥३३॥

तत्र च--

मूलम्--चीवराइं विसारंती, जहाजायत्ति पासिया।
रहनेमी भग्गचित्तो, पच्छा दिट्ठो य तीइं वि ॥३४॥

छाया--चीवराणि विसारयन्ती, यथाजातेति दृष्ट्वा।
रथनेमिर्भग्नचित्त, पश्चाद् दृष्टश्च तयाऽपि ॥३४॥

टीका--'चीवराइ' इत्यादि।

चीवराणि=शाटिकादीनि वस्त्राणि विसारयन्ती=विस्तारयन्ती सा राजीमती साध्वी यथाजाता=जन्मकालिकाऽवस्थाऽऽपन्ना जाता। इति=इत्थम्-असंवृताङ्गीं

फिर क्या हुआ सो कहते हैं--'गिरिं च' इत्यादि।

अन्वयार्थ--एक समय राजीमती भगवान अरिष्टनेमि की वंदना करने के लिये (गिरिं च रेवयं जंती-गिरिं रैवतकं यान्ती) रैवतक पर्वत पर जा रही थी तब (अंतरा-अन्तरा) बीच ही में उसको (वासेणोल्ला-वर्षेण आर्द्रा) बरसाद आ गया सो वह भीगगई। इस तरह (वासते-वर्षति) बरसा होने पर (सा-सा) वह (लयणस्स अंतो अंधयारम्मि ठिया-लयनस्य अन्तः अन्धकारे स्थिता) रैवतक गिरि की गुफा के भीतर अंधेरे मे जाकर ठहर गई ॥३३॥

वहां वह--'चीवराइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(चीवराइ-चीवराणि) शाटिका आदि वस्त्रों को (विसारंती विसारयन्ती) फैलातीहुई (जहा जाय-यथा जाता) बिलकुल नग्न-

---

આ પછી શુ થયુ તેને કહે છે -"गिरिंच" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--એક સમયની વાત છે કે, રાજીમતી ભગવાન અરિષ્ટનેમિને વંદના કરવા માટે गिरिंच रेवय जंती-गिरिं रैवतकं यान्ती રૈવતક પર્વત ઉપર જઈ રહેલ હતી એ સમયે अंतरा-अन्तरा રસ્તામા તે वासेणोल्ला-वर्षेण आर्द्रा વરસાદ આવવાથી તેના સઘળા કપડા ભીંજાઈ ગયા આથી वासेण-वर्षति વરસાદમા सा-सा તે लयणस्स अंतो अंधयारम्मि ठिया-लयनस्य अंतः अन्धकारे स्थिता- રૈવતક પર્વતમા પહોચીને એક ગુફાની અંદર જઈ અંધારામા રોકાઈ ગઈ ॥૩૩॥

એ ગુફામા જઈને રાજીમતીએ શુ કર્યુ ? તેને કહે છે--"चीवराइ" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--ગુફામા પહોચીને અંધારામા રાજીમતીએ પોતાના चीवराइ-चीवराणि શાટિકા આદિ વસ્ત્રોને विसारंति-विसारयन्ति કાઢી સુકાવવા લાગી.

ता गुहायां प्रथमत एव कायोत्सर्गेण स्थितो रथनेमिः=गृहीतसंयमः प्रभोर्लघुभ्राता दृष्ट्वा भग्नचित्तः=संयमाच्चलितचित्तो जातः। उदाररूपां तामवलोक्य तस्यां समुत्पन्नाभिलाषः स कामपरवशो जात इति भावः। पश्चाच्च तया राजीमत्याऽपि स दृष्टः। अन्धकारमयप्रदेशे समागतो जनः प्रथमं न किमप्यवलोकयति, कियत्कालानन्तरमेव तद्दृष्टिरन्धकारप्रदेशस्थितं वस्तु विलोकयितुं समर्था भवति। अत एव गुहाप्रविष्टया तया पूर्वं रथनेमिर्न दृष्टः। पूर्वं प्रविष्टेन रथनेमिना तु

अवस्था वाली हो गई। (इति-इति) राजुल को इस हालत में (पासिया-दृष्ट्वा) देखकर वहां गुफा में पहेले से ही कायोत्सर्ग में बैठे हुए (रहनेमी-रथनेमिः) रथनेमि का (भग्गचित्तो -भग्नचित्तो) चित्त संयम से चलित हो गया। (पच्छा-पश्चात) कुछदेर बाद (तीवि दिट्ठो-तयाऽपि दृष्ट) राजुलने भी उसको देखा॥

भावार्थ राजुलने उस गुफा में प्रविष्ट होकर अपने शाटिकादिक समस्त वस्त्रों को नग्न होकर सुखाया। वहां पहिले से ही रथनेमि कायोत्सर्ग में बैठे थे। अंधकार होने के कारण राजुल की दृष्टि में 'यहां रथनेमि ठहरे हुए है' यह बात देखने में नहीं आ सकी। प्रायः ऐसा ही होता है कि जब अंधकारमय प्रदेश मे पहिले पहिल जाया जाता है तब कुछ देरतक वहां पर का कोई पदार्थ नजर नहीं आता है। बाद मे सब दिखने लगता है। इसीलिये राजुल को वहां ठहरने

जहा जाया-यथा जाता આ સમયે તે બિલકુલ નગ્ન અવસ્થાવાળી બની ગયેલ હતી इति-इति રાજુલ પોતાના ભીંજાયેલા વસ્ત્રોને સુકવવા અને સ્વસ્થ થવા તે ગુફામાં ગઇ હતી એ સમયે એજ ગુફાની અંદરના એક ભાગમાં કાયોત્સર્ગમાં रथनेमी-रथनेमिः રથનેમિ બેઠેલ હતા તેણે રાજુલને તદ્દન નગ્નઅવસ્થામાં पासिया-दृष्ट्वा જોઇને भग्गचित्तो-भग्न चित्त અનુ ચિત્ત સંયમથી વિચલિત બની ગયું पच्छा-पश्चात् પછી જરા સ્વસ્થ થતાં રાજુલે પણ રથનેમિને ત્યાં જોયા

ભાવાર્થ--રાજુલે એ ગુફામાં પ્રવેશ કરીને પોતાના શાટિકાદિક ભીંજાયેલા સઘળા વસ્ત્રોને સુકાવ્યા શરીર ઉપરના ભીંજાયેલા એ વસ્ત્રોને સુકવવા નિમિત્ત અલગ કરતાં રાજુલનું શરીર તદ્દન નગ્ન બની ગયું આ ગુફામાં કાયોત્સર્ગ માટે પહેલાથીજ રથનેમિ બેઠેલ હતા અંધકાર હોવાથી રાજુલની દૃષ્ટિમાં "આ સ્થળે રથનેમિ બેઠેલ છે" એ દેખી શકાયું નહીં કારણકે, અજવાસમાંથી અંધકારવાળા સ્થળમાં જતાં ત્યાં કોઈ વસ્તુ પડેલી હોય તો તે જોઈ શકાતી નથી થોડા સ્વસ્થ થયા પછી ધીરે ધીરે અજવાસનો આભાસ દૂર થતા દેખાવ લાગે છે આવીજ સ્થિતિ રાજુલની

सा दृष्टा। ततः कियत्कालानन्तरं साऽपि रथनेमिं ददर्श। यदीयं पूर्वमेव तं पश्येत्तदा तु तत्र न प्रविशेत्। अपि तु वृष्टिसम्भ्रमादपराः साध्व्यो यं यमाश्रयमाश्रितवत्यस्तेषु कमपि इयमप्याश्रयेदिति भावः ॥३४॥

तं दृष्ट्वा सा यदकरोत्तदुच्यते—

मूलम्—भीया यं सा तहिं दट्ठु, एगंते सजयं तयं।
बाहाहिं काउ संगोफं, वेवमाणी निसीयई ॥३५॥

छाया—भीता च सा तत्र दृष्ट्वा, एकान्ते संयत तकम्।
बाहुभ्यां कृत्वा संगोफं, वेपमाना निषीदति ॥३५॥

टीका—'भीया य' इत्यादि।

सा राजीमती च एकान्ते तत्र गुहायां तकं=तं संयतं=रथनेमिसाधुं दृष्ट्वा—अयं कदाचिन्मम शीलभङ्गं कुर्यादिति हेतोः भीता=त्रस्ता सती बाहुभ्यां=

पर पीछे से रथनेमि दिखलाई पडे। यदि पहिले से उनको वहां रथनेमि का ठहरना ज्ञात होता—अथवा भीतर जाते राजुल की दृष्टि उन पर पडती तो वह वहां कभी नहीं ठहरती। जिस प्रकार वृष्टि के सभ्रमसे इतर साध्वियाँ भिन्न २ प्रदेशों मे जाकर ठहर गई थी उसी तरह यह भी उनमे से ही किसी एक स्थानपर जाकर ठहरजाती ॥३४॥

रथनेमि के दृष्टि गोचर होने पर राजीमतीने क्या किया सो कहते है—'भीयाय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(सा-सा) वह राजीमती (तहिं एगते-तत्र एकान्ते) उस गुफा रूप एकान्त स्थान में (तयं सजयं-तकं संयतम्) उन रथनेमि संयत को (दट्ठु-दृष्ट्वा) देखकर (भीया-भीता) डरगई। तथा वह उसी

માટે પણ બનેલી ત્યાં થોડો સમય વ્યતીત થતાં રથનેમિ ઉપર તેની દૃષ્ટિ પડી પહેલાં રાજુલને એ સ્થળે રથનેમિ રોકાયેલ છે એવી જો ખબર હોત તો અથવા તો ગુફામાં ગયા પછી પણ તેની દૃષ્ટિ રથનેમિ ઉપર પડી હોત તો એ ગુફામાં ઉભત પણ નહીં જે પ્રમાણે વરસાદના સંભ્રમથી બીજી સાધ્વીઓ અલગ અલગ સ્થળોમાં જઈને રોકાઈ ગયેલ હતી એજ પ્રમાણે રાજુલ પણ એમની માફક એવા એકાદા સ્થાનમાં જઈને રોકાઈ જાત ॥૩૪॥

રથનેમિ દેખાયા પછી રાજીમતીએ શું કર્યું તેને કહે છે—"भीयाय" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—सा-सा એ રાજીમતી तहिं एगते-तत्र एकान्ते ગુફારૂપી એકાન્ત સ્થાનમાં तयं सजयं-तकं संयतम् તે રથનેમિ સંયતને दट्ठु=दृष्ट्वा બેઠેલા જોઈને

भुजाभ्या संगोपं कृत्वा=शरीरावरण यथा स्यात्तथा शरीरसंकोचनं कृत्वा वेपमाना=कम्पमाना निषीदति=उपविष्टा । 'तस्म्' इत्यत्र 'अव्ययसर्वनाम्नामक् प्राक्टे' इति स्वार्थिकोऽक्प्रत्यय ॥३५॥

ततो यज्जात तदुच्यते—

मूलम्—अह सो वि रायपुत्तो, समुद्दविजयंगओ ।
भीयं पवेइयं दट्ठु, इमं वक्कमुदाहरे ॥३६॥

छाया—अथ सोऽपि राजपुत्रः, समुद्रविजयाङ्गजः ।
भीता प्रवेपिता दृष्ट्वा, इदं वाक्यमुदाहरत् ॥३६॥

टीका—'अह' इत्यादि ।

अथ=अनन्तर समुद्रविजयाङ्गजः=समुद्रविजयपुत्रो राजपुत्रः स रथनेमिरपि भीता=त्रस्ता प्रवेपिता=प्रकम्पमानाङ्गीं ता राजीमती दृष्ट्वा इद=वक्ष्यमाण वाक्यमुदाहरत्=उक्तवान् ॥३६॥

समय (बाहाहिं संगोफ काउ-भुजाभ्या संगोप कृत्वा) अपने दोनो हाथों से शरीर को आवृत करके (वेवमाणी-वेपमाना) भय से कपित होती हुई (निसीयइ-निषीदति) बैठ गई ॥३५॥

उसके बाद जो हुआ सो कहते हैं—'अहसो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(अह-अथ) इसके बाद (समुद्दविजयगओ-समुद्रविजयाङ्गज) समुद्रविजय के अङ्ग जात उन (रायपुत्तो-राजपुत्र) राजपुत्र रथनेमि भगवनने भी (भीय-भीताम्) त्रस्त एव (पवेइय-प्रवेपिताम्) कम्पायमान साध्वी राजीमती को (दट्ठु-दृष्ट्वा) देखकर (इम वक्कमुदाहरे-इदम वाक्यम् उदाहरत्) उससे इस प्रकार बोले ॥३६॥

भीया-भीता गभराईने खूब डरी गई अने तेणे तेज वखत बाहाहिं संगोफ काउ-बाहुभ्या संगोप कृत्वा पोताना बन्ने हाथोथी पोताना शरीरने ढांकी खूबज संकोच अनुभवती वेवमाणी-वेपमाना कांपवा लागी अने सकडाईने निसीयइ-निषीदति बेसी गई ॥३५॥

आ पछी जे बन्युं तेने कहे छे—"अह सो" इत्यादि ।

अन्वयार्थ—अह-अथ ए पछी समुद्दविजयगओ-समुद्रविजयाङ्गज समुद्रविजयना अंगजात ए रायपुत्ते-राजपुत्र राजपुत्र रथनेमि भगवते पण भीय-भीताम् त्रस्त अने पवेइय-प्रवेपिताम् कंपायमान साध्वी राजीमतीने दट्ठु-दृष्ट्वा जोईने इम वक्कमुदाहरे-इदम् वाक्यमुदाहरत् एमने आ प्रकारे कह्यु ॥३६॥

तेन यदुक्त तदुच्यते--

मूलम्--रहनेमी अहं भद्द ! सुरूवे ! चारु भासिणि ।
मम भयाहि सुतणू !, न ते पीला भविस्सइ ॥३७॥

छाया--रथनेमिरहं भद्रे ! सुरूपे चारुभाषिणि ।
मा भजस्व सुतनु !, न ते पीडा भविष्यति ॥३७॥

टीका--'रहनेमि' इत्यादि ।

हे भद्रे ! अहं रथनेमिः=रथनेमिनामाऽस्मि । हे सुरूपे=सुन्दरि, हे चारुभाषिणि=मधुर वचने ! मा भजस्व=भर्तृत्वेनाङ्गीकुरु येन हे सुतनु=शोभनाङ्गि ! ते=तव पीडा=जीवननिर्वाहकष्ट न भविष्यति ॥३७॥

मूलम्--एहि ता भुजिमो भोए, माणुस्स खु सुदुल्लह ।
भुत्तभोगी तओ पच्छा, जिणमग्गं चरिस्समो ॥३८॥

छाया--एहि तावद् भुञ्जीवहि भोगान्, मानुष्य खलु सुदुर्लभम् ।
भुक्तभोगिनौ ततः पश्चा,-ज्जिनमार्गं चरिष्यावः ॥३८॥

टीका--'एहि ता' इत्यादि ।

हे सुन्दरि ! एहि=आगच्छ मम समीपे । आवां तावत्=प्रथम भोगान्=शब्दादि कामभोगान् भुञ्जीवहि=अनुभवेव ।' खलु=यतो मानुष्य=मनुष्यजन्म

'रहनेमि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(भद्दे-भद्रे) हे भद्रे ! (अहं रहनेमो-मैं रथनेमि हूं । (सुरूवे चारुभासिणि-सुरूपे चारुभाषिणि) हे सुन्दर रूपवाली एवं मधुर बोलनेवाली (मम भयस्व-मां भजस्व) मुझे अब तुम अपना पतिस्वरूप समझकर अंगीकार करो। जिससे (सुतणू-सुतनु !) हे शोभनाङ्गी ! (ते-ते) तुझे (पीला-पीडा) जीवन निर्वाह सम्बन्धी किसी प्रकार का कष्ट (न भविस्सइ-न भविष्यति) नही होगा ॥३७॥

"रहनेमि" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--भद्दे-भद्रे હે ભદ્રે ! अहं रहनेमी-अहं रथनेमी હુ રથનેમી છુ सुरूवे चारुभासिणि-सुरूपे चारुभाषिणि હે સુંદર રૂપવાળી અને મધુર બોલવાવાળી मम भयस्व-मा भजस्व મને હવે તમે પતિસ્વરૂપ સમજીને અંગીકાર કરો જેથી सुतणू-सुतनू હે શોભનાંગી ते-ते તમને पीला-पीडा જીવન નિર્વાહ સબધી કોઈ પ્રકારનુ કષ્ટ न भविस्सइ-न भविष्यति થશે નહી ॥૩૭॥

सुदुर्लभ=सुदुष्प्रापम्। ततः पश्चात्-भुक्तभोगिनौ-भुक्ता भोगाः भुक्तभोगास्ते सन्ति ययोस्तौ तथा-आसेवितशब्दादिकामभोगौ आवां जिनमार्गं=जिनोक्त चारित्रलक्षण मोक्षमार्गं चरिष्यावः=सेविष्यावहे ॥३८॥

एवं रथनेमिना प्रोक्ता सा राजीमती साध्वी यदकरोत्तदुच्यते--

मूलम्--दट्ठूण रहनेमिं तं, भग्गुज्जोयपराइयं ।
राईमई असंभंता, अप्पाणं संवरे तहिं ॥३९॥

छाया--दृष्ट्वा रथनेमिं तं, भग्नोद्योगपराजितम् ।
राजीमती असम्भ्रान्ता, आत्मानं संवृणोति तत्र ॥३९॥

टीका--'दट्ठूण' इत्यादि ।

राजीमती साध्वी भग्नोद्योगपराजित=भग्नोद्योग'-भग्नः=नष्टः उद्योग'=

'एहि' इत्यादि।

अन्वयार्थ-हे सुन्दरि! (एहि-एहि) आओ (भोए भुंजिमो- भोगान् भुञ्जीवहि) हम तुम दोनों विषय भोगों को भोगें। देखो (खु-खलु) निश्चय से (माणुस्सं सुदुल्लहं-मानुष्यं सुदुर्लभम्) यह मनुष्यभव अत्यंत दुर्लभ है। (तओ पच्छा-ततः पश्चात्) इसके बाद (भुत्तभोगी-भुक्त-भोगिनौ) भुक्त भोगी होकर हम तुम दोनों (जिणमग्गं चरिस्सामो-जिनमार्गं चरिष्यावः) जिनोक्त मार्ग-चारित्रलक्षणरूप मोक्षमार्ग का सेवन करेंगे ॥३८॥

रथनेमि के इस प्रकार के वचन सुनकर राजीमतीने जो किया सो कहते हैं--'दट्ठूण' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(राईमई-राजीमती) राजीमती साध्वीने (भग्गुज्जोय

"एहि" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--હે સુંદરિ! एहि-एहि આવો भोए भुंजिमो-भोगान् भुञ्जीवहि આપણે બન્ને વિષય ભોગોને ભોગવીએ જુઓ खु-खलु નિશ્ચયથી माणुस्सं सुदुल्लहं -मानुष्यं सुदुर्लभम् આ મનુષ્યભવ અત્યંત દુર્લભ છે तओ पच्छा-ततः पश्चात् તે પછી આપણે भुत्तभोगी-भुक्तभोगी આપણે બન્ને जिणमग्गं चरिस्सामो-जिनमार्गं चरिष्यावः જીનોક્ત માર્ગ-ચારિત્ર લક્ષણરૂપ મોક્ષમાર્ગનું સેવન કરીશું ॥૩૮॥

રથનેમિના આ પ્રકારના વચન સાંભળીને રાજીમતીએ જે કહ્યું તેને કહે છે - "दट्ठूण" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--राईमई-राजीमती રાજીમતી સાધ્વીએ भग्गुज्जोय पराइयं भग्नो-

उत्साह सयम प्रति यस्य स तथा, विनष्टसयमोत्साह इत्यर्थः स चासौ पराजित =स्त्रीपरीषहेण पराजित , स भग्नोद्योगपराजितस्त रथनेमि=रथनेमिमुनि दृष्ट्वा असम्भ्रान्ता=भयरहितास्वात्मवीर्योल्लासेन शीलभङ्गात् स्वात्मान परित्रातु दृढमति, सा राजीमती सती तत्र=गुहायाम् आत्मान सवृणोति=वस्त्रेणाच्छादयति ॥३९॥

ततः किम् ? इत्याह ।

मूलम्--अह सा रायवरकन्ना, सुट्ठिया नियमव्वए ।

जाइं कुलं च सीलं च, रक्खमाणी तयं वए ॥४०॥

छाया--अथ सा राजवरकन्या, सुस्थिता नियमव्रते ।

जातिं कुलं च, शीलं च, रक्षन्ती तक वदति ॥४०॥

टीका--'अह सा' इत्यादि ।

अथ=स्वात्मसवरणानन्तर, नियमव्रते=नियम'=द्रव्यक्षेत्रकालभावेनाभिग्रहग्रहण व्रतानि=प्राणातिपातादिविरमणलक्षणानि पञ्चमहाव्रतानि, उभयो समा-

---

पराइय-भग्नोद्योगपराजितम्) जब यह देखा कि स्त्री परीषह से पराजित होकर रथनेमि का उत्साह सयम के प्रति नष्ट हो गया है तब वह सयमभ्रष्ट (त रहनेमिं-त रथनेमिं) उस रथनेमि को (दट्ठूण-दृष्ट्वा) देखकर (असभंता-असम्भ्रान्ता) भयरहित हो गई अर्थात् स्वात्मवीर्योल्लास से शील रक्षा के लिये दृढमति बन गई । उसी समय उसने (तत्थ-तत्र) उस गुफा में (अप्पाणं सवरे-आत्मान सवृणोति) अपने शरीर को वस्त्र से ढक लिया ॥३९॥

इसके बाद क्या हुवा सो कहते हैं-'अहसा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(अह-अथ) इसके बाद-अपने शरीर के आच्छादन के बाद (नियमव्वए सुट्ठिया-नियमव्रते सुस्थिता) द्रव्य, क्षेत्र, काल और

योग पराजितम् જ્યારે એ જોયુ કે, સ્ત્રી પરીષહથી પરાજીત થઇને રથનેમિનો ઉત્સાહ સયમ તરફથી ફરી ગયેલ છે ત્યારે તે સયમભ્રષ્ટ त रहनेमिं-त रथनेमिं તે રથનેમિને दिट्ठूण-दृष्ट्वा જોઇને असभंता-असम्भ्रान्ता ભયરહિત બની ગઇ અર્થાત પોતાના આત્માના વિર્યોલ્લાસથી શીલનુ રક્ષણ કરવા માટે દઢ મનવાળી બની ગઇ તે સમયે તેણે तत्थ-तत्र એ ગુફામા अप्पाण सवरे आत्मान सवृणोति પોતાના શરીરને વસ્ત્રથી ઢાકી લીધુ ॥૩૯॥

એ પછી શુ બન્યુ તે કહે છે-"अहसा" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--अह-अथ તેના પછી પોતાના શરીરને વસ્ત્રથી ઢાકી લીધા પછી नियमव्वए सुट्ठिया-नियमव्रते सुस्थिता દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવના અનુસાર

द्वारे नियमव्रते तस्मिन् सुस्थिता=सुस्थिरा सा राजवरकन्या राजीमती सा-श्री जाति=मातृवंश, कुल=पितृवंश च, शील=चारित्रं च रक्षन्ती तक=तं संयमाच्चलायमानं रथनेमिं वदति=वक्ष्यमाणप्रकारेण कथयति । शीलरक्षणेऽपि जातिकुले रक्षिते एव भवत इति मा कश्चिन्मन्यतामिति 'जाइकुलं च' इत्युक्तम् ॥४०॥

सा यदुक्तवती तदुच्यते—

मूलम्—जइसि रूवेण वेसमणो, ललिएण नलकूबरो ।
तहावि ते न इच्छामि, जइसि सक्खं पुरंदरो ॥४१॥

छाया—यद्यसि रूपेण वैश्रवणो, ललितेन नलकूबरः ।
तथापि त्वां न इच्छामि, यद्यसि साक्षात्पुरन्दरः ॥४१॥

टीका—'जइसि' इत्यादि—

हे रथनेमे ! यदि त्वं रूपेण वैश्रवणः=कुबेरः असि=भवसि, यदि च ललितेन=ललितकलया सविलासचेष्टितेनेति यावत् नलकूबरः—नलकूबर नामादेव

भाव के अनुसार अभिग्रह ग्रहण करने रूप नियम में तथा प्राणातिपात आदि विरमण रूप व्रतों में अच्छी तरह स्थिर बनी हुई (सा—सा) उस साध्वी राजीमतीने (जाइ कुल शील रक्खमाणी तकं वए—जातिं कुलं शीलं च रक्षन्ती तकं वदति) अपने मातृपक्षरूप जाति की पितृपक्षरूप कुल की एवं चारित्ररूप शील की रक्षा करती हुई संयम से चलायमान हुए रथनेमि से इस प्रकार कहा—॥४०॥

क्या कहा सो कहते हैं ? 'जइसि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे रथनेमि ! (जइ रूवेण वेसवणो असि—यदि रूपेण वैश्रवणः असि) यदि तुम रूप से कुबेर तुल्य भी हो (ललिएण नलकूबरो—ललितेन नलकूबरः) ललित कलाओं से नलकूबर जैसे

અભિગ્રહ ગ્રહણ કરવા રૂપ નિયમમા તથા પ્રાણાતિપાત આદિ વિરમણરૂપ વ્રતોમા સારી રીતે સ્થીર બનેલ સા—સા તે સાધ્વી રાજીમતીએ जाइ कुलं शील रक्खमाणी तकं वए—जातिं कुलं शीलं च रक्षन्ति तकं वदति પોતાના માતૃપક્ષરૂપી જાતિની, પિતૃપક્ષરૂપ કુળની અને ચારિત્રરૂપ શીલની રક્ષા કરતા કરતા સયમથી ચલાયમાન બનેલ રથનેમિને આ પ્રકારે કહ્યુ ॥૪૦॥

રાજીમતીએ શુ કહ્યુ તે કહે છે—"जइसि" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે રથનેમિ ! जइ रूवेण वेसमणो असि—यदि रूपेण वैश्रमण असि ભલે તમે રૂપમા કુબેરના જેવા હો, ललिएण नलकूबरो ललितेन नलकूबरो

विशेषो भवसि अधिक किम्। यद्यपि त्वं साक्षात् पुरन्दरः=इन्द्र असि=भवसि, तथापि ते=त्वां न इच्छामि=अभिलषामि-मम मनस्त्वयि साभिलाष न भवेदिति भावः। अय रूपाद्यभिमानी, अतएवमुक्त' ॥४१॥

किंच—

मूलम्—पक्खंदे जलियं जोइं. धूमकेउं दुरासयं।
नेच्छंति वंतयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणे ॥४२॥

छाया—प्रस्कन्दन्ति ज्वलितं ज्योतिषं, धूमकेतुं दुरासदम्।
नेच्छन्ति वान्तकं भोक्तुं कुले जाता अगन्धने ॥४२॥

टीका—'पक्खदे' इत्यादि—

गन्धनागन्धनभेदेन भुजगा द्विविधा', तत्र गन्धनास्ते ये मन्त्रप्रयोगादिवशा दष्टप्रदेशे वान्त विषं पुनश्चूषन्ति, तद्भिन्ना अगन्धनास्तत्कुलमगन्धनं, तस्मिन कुले जाता =समुत्पन्ना· सर्पाः, ज्वलितं=प्रदीप्त धूमकेतुं-धूम केतुश्चिह्नं यस्य स-धूमकेतुस्तं धूमध्वजमित्यर्थ, अत एव-दुरासदं=दुष्प्रवेशं ज्योतिषम्,=अग्नि प्रस्कन्दन्ति=प्रविशन्ति, किन्तु वान्तम्=उद्गीर्ण-सन्त्यक्तं विषं भोक्तुं नेच्छन्ति=नाभि

भी हो तथा (सक्खं पुरंदरो-साक्षात् पुरंदरः) और तो क्या। तुम साक्षात् इन्द्र भी हो (तहावि-तथापि) तो भी (ते न इच्छामि-ते न इच्छामि) मैं तुमको नही चाहती हू ॥४१॥

और भी—'पक्खदे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अगंधणे कुले जाया-अगन्धने कुले जाता) अगन्धन कुल में उत्पन्न हुए नाग (जलियम्-ज्वलितम्) जाज्वल्यमान (धूमकेउं-धूमकेतुम्) धूमरूप ध्वजावाली ऐसी (दुरासयं-दुरासदम्) दुष्प्रवेश (जोइं-ज्योतिषम्) अग्नि मे (पक्खंदे-प्रस्कन्दन्ति) प्रवेश कर जाते हैं

લલિતકળાઓથી નળકૂબર જેવા પણ હો તથા વધુ તો શુ કહુ સક્ખં પુરંદરો-साक्षात् पुरंदर साक्षात ઈન્દ્ર જેવા હો. तहावि-तथापि તો પણ ते न इच्छामि-ते न इच्छामि હુ તમને ચાહતી નથી ॥૪૧॥

વધુમા પણ -"पक्खंदे" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--अगंधणे कुले जाया-अगन्धन कुले जाता અગન્ધન કુળમા ઉત્પન્ન થયેલ નાગ जलियम्-ज्वलितम् જાજ્વલ્યમાન धूमकेउ-धूमकेतुम् ધૂમરૂપ ધ્વજાવાળી એવી दुरासियं-दुरासदम् દુષ્પ્રવેશ जोइं-ज्योतिषम् અગ્નિમા पक्खंदे-

स्पन्ति । तिर्यञ्च सर्पा अपि वह्निप्रवेशापेक्षया दुःसहमनुचित वान्ताशनमेव मन्यन्ते तस्मात् हे रथनेमे ! प्रवचनतत्त्वाभिज्ञेन त्वया निःसारतया परित्यक्तस्य विषयस्य पुनः स्वीकारण न विधेयमिति भावः ॥४२॥

किञ्च—

मूलम्—धिरत्थु ते जसोकामी, जो त जीवियकारणा ।
वंतं इच्छसि आवेउ, सेयं ते मरणं भवे ॥४३॥

परन्तु (वतय भोत्तु नेच्छंति-वान्तक भोक्तु न इच्छन्ति) उगले हुए जहर को नहीं चूसते हैं ।

भावार्थ—नाग दो प्रकार के होते हैं ? एक गन्धन और दूसरे अगन्धन । जो मन्त्रादिक के प्रयोग से डक प्रदेश मे रहे हुए अपने उगले हुए जहर को चूस लेते है वे गन्धन हैं । तथा अगन्धन वे नाग होते है जो अपने द्वारा काटे गये प्रदेश से जहर को नहीं चूसते है, चाहे ये अग्नि में जलकर भले मर जावे परन्तु उगला हुआ जहर पुनः चूसना इनको सर्वथा अनुचित होता है । अत राजुल इस दृष्टान्त द्वारा रथनेमि से कह रही है कि जब तिर्यञ्चो की ऐसी हालत है तो तुम क्यों उगले हुए विषयों को पुनः चूसने के सकल्प से इनसे भी नीचे बनना चाहते हो । तुमने पहिले प्रवचन के तत्त्वो को भली भाति जानकर नि सार समझकर ही तो इन विषयों का परित्याग कर दिया है-अब पुन वान्त को चाटने की क्यों अभिलाषा करते हो ॥४२॥

प्रस्कन्दन्ति પ્રવેશ કરી જાય છે પરંતુ वतय भोत्तु नेच्छन्ति-वान्तक भोक्तु न इच्छन्ति ઓકેલા ઝેરને ચૂસતા નથી

ભાવાર્થ—નાગ બે પ્રકારના હોય છે એક ગન્ધન અને બીજા અગન્ધન જે મંત્રાદિકના પ્રયોગથી પોતે ઓકેલા ઝેરને ચૂસી લ્યે છે તે ગંધન છે તથા અગન્ધન એ નાગ હોય છે જે પોતે ઓકેલા ઝેરને પાછું ચૂસતા નથી ચાહે તે અગ્નિમાં બળીને ભલે મરી જાય પરંતુ ઓકેલું ઝેર પાછું ચૂસવું એ એમના માટે શક્ય નથી હોતું આ પ્રકારના દૃષ્ટાંત દ્વારા રાજુલ રથનેમિને કહી રહી છે કે, તિર્યંચોની એવી હાલત છે તો તમે શા માટે ઓકેલા વિષયોને ફરીથી ચૂસવાના સંકલ્પથી એનાથી પણ નીચે ઉતરવા ચાહો છો તમોએ પહેલાં પ્રવચનના તત્વોને સારી રીતે સમજીને નિસાર જાણ્યા પછી આ વિષયોનો પરિત્યાગ કરી દીધો છે હવે પાછું ઓકેલું ચાટવાની અભિલાષા શા માટે કરી રહ્યા છો ? ॥૪૨॥

छाया—धिगस्तु त्वा (ते) यशस्कामिन्!, यस्त्वं जीवितकारणात्।
वान्तमिच्छसि आपातु, श्रेयस्ते मरणं भवेत् ॥४३॥

टीका—'धिरत्थु' इत्यादि—

कामयते=वाञ्छति तच्छील॰ कामी, यशसः=संयमस्य कीर्तेर्वा कामी यशस्कामी, तत्संबुद्धौ हे यशस्कामिन्! यद्वा—अकारच्छेदात् हे अयशस्कामिन्=हे असंयमापयशोऽर्थिन्! त्वा धिगस्तु, निन्द्योऽसि त्वमित्यर्थः। 'ते' इति द्वितीयार्थे षष्ठी। यद्वा—'ते' इति षष्ठ्यन्तमेव, तत्र "पौरुषम्" इत्यस्य शेष, धिगित्यने

और भी—'धिरत्थु' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जसोकामी—यशस्कामिन्) संयम अथवा कीर्ति की कामनावाले हे रथनेमे! ते (धिरत्थु—ते धिक्अस्तु) तुमको धिक्कार हो। (जो त—यस्त्वम्) जो तुम (जीविय कारणा—जीवितकारणात्) असंयमित जीवित के सुख के निमित्त (वन—वान्तम्) भगवान् नेमिनाथ द्वारा परित्यक्त होने की वजह से वान्त जैसी मुझे (आवेउ—आपातुम्) सेवित करने की (इच्छसि—इच्छसि) चाहना कर रहे हो। इसकी अपेक्षा तो (ते—ते) तुम्हारा (मरण सेय—मरण श्रेय) मरना ही अच्छा है।

"ते जसो कामी" यहां अकार का प्रश्लेष करने से "तेऽयशस्कामिन्" ऐसा पद बन जाता है। तब असंयम एवं अपयश की कामना करने वाले तेरे लिये धिक्कार हो ऐसा अर्थ हो जाता है। अथवा "ते" इसको द्वितीया विभक्ति के स्थान पर न मानकर षष्ठी विभक्ति के स्थानपर ही रक्खा जाय तब "ते पौरुषम्" ऐसा संबंध लगाना

ફરી પણ—"धिरत्थु" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जसो कामी यशस्कामिन् સંયમ અથવા કીર્તિની કામનાવાળા હે રથનેમિ! ते धिरत्थु—ते धिक्अस्तु તમને ધિક્કાર છે जो त—यस्त्वम् જે તુ जीविय कारणा—जीवित कारणात् અસંયમિત જીવનના સુખના નિમિત્તે वंत—वान्तम् ભગવાન નેમિનાથ દ્વ ત્યાગવામા આવેલ હોવાથી ઉલટી જેવી મને आवेउ—आपातुम् સેવન કરવાની તમો इच्छिसि—इच्छसि ચાહના કરી રહ્યા છો આ રીતે જીવવા કરતા ते—ते તમારૂ मरण सेय—मरण श्रेय મરી જવુ જ ઉત્તમ છે

"तेजसो कामी" અહીં અકારનો પ્રશ્લેષ કરવાથી "तेऽयशस्कामिन्" એવુ પદ બની જાય છે ત્યારે અસંયમ અને અપયશની કામના કરવાવાળા એવા તને ધિક્કાર હો એવો અર્થ થઇ જાય છે અથવા "ते" આને બીજી વિભક્તિના સ્થાન ઉપર ન માનતા છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાન ઉપર જ રાખવામા આવે તો "ते पौरुषम्"

न सम्बन्ध , ते=तव पौरुष धिगित्यर्थ । यद्वा—हे कामिन । ते=तव यश = 'अहो धन्योऽय तीव्र तप सयमव्रतपरिपालको महात्मेत्येव लोकमतीता कीर्तिम्, अथवा—अयश =मा दृष्ट्वा ... स्वरूप पाप धिगस्तित्वर्थ । यस्त्व जीवित कारणात्=असयमजीवित ... वान्त=भगवता परित्यक्तत्वाद् वान्तसदृशी माम्, यद्वा—सयमसेवित्वेन परित्यक्तस्य विषयस्यैवमभिलापोदयाद् वान्ततुल्य विषयम् आपातुम्=उपभोक्तुम्, इच्छसि=कामयसे। एतादृशस्य ते=तव मरण=मृत्यु श्रेय = प्रशस्त श्रेष्ठ भवेत् । न पुनरित्थमनाचरणीयाचरणमिति ॥४३॥

मूलम्—अहं च भोगरायस्स, तं चऽसि अंधगवण्हिणो ।
मा कुले गंधणा होमो, संजमं निहुओ चर ॥४४॥

छाया—अहं च भोगराजस्य, त्वं चासि अन्धकवृष्णे ।
माकुले गन्धनौ भूव सयम निभृतश्चर ॥४४॥

चाहिये। यहा "पौरुष" का अध्याहार होने से 'तेरे इस पुरुषार्थ को धिक्कार है" "ऐसा अर्थ सगत होगा। अथवा "कामिन्" हे कामी 'यह महात्मा धन्य है जो तीव्र तप एव सयम व्रत का परिपालक है' तेरे इस यश को धिक्कार है। अथवा—मुझे देखकर जो इस प्रकार की दुश्चेष्टा की उस तेरे पाप को धिक्कार है।

भावार्थ—राजुल अधिक कुछ न कहकर रथनेमि से सिर्फ इतना ही कह रही है तुम कुछ तो ख्याल करो किस पद मे वर्तमान हो और क्या करने की अभिलाषा कर रहे हो। इससे तुम्हारी व साधु समाज की कितनी बदनामी होगी। वान्त को भोगने की अपेक्षा तो मरण ही कहीं अच्छा है ॥४३॥

એવો સબધ લગાવવો જોઇએ અહીં "पौरुष"નો અધ્યાહાર હોવાથી 'તારા આ પુરુષાર્થને ધિક્કાર છે" એવો અર્થ સગત થશે અથવા "कामिन्" હે કામી એ મહાત્મા ધન્ય છે જે તીવ્ર તપ અને સયમ વ્રતના પરિપાલક છે' તારા આ યશને ધિક્કાર છે અથવા-મને જોઈને તારામા આ પ્રકારની દુશ્ચેષ્ટા જાગી એ તારા પાપને ધિક્કાર છે

ભાવાર્થ—રાજુલે વધારે કાંઈ પણ ન કહેતા રથનેમિને ફકત એટલુજ કહ્યુ છે, તમો કાંઈક તો ખ્યાલ કરો કયા પદ ઉપર તમો બિરાજી રહ્યા છો અને શુ કરવાની અભિલાષા કરી રહ્યા છો આવી તમારી અને સાધુ સમાજની કેટલી બદનામી થશે ઉલટીને ચાટવાની અપેક્ષા કરતા તો મરણુજ ઘણુ ઉત્તમ છે ॥૪૩॥

टीका—'अहच' इत्यादि—

हे रथनेमे ! अहच भोगराजस्य=तन्नाम्ना प्रसिद्धस्य पौत्री, उग्रसेनस्य च पुत्री अस्मि, त्वच अन्धकवृष्णेः=अन्धकवृष्णिनाम्ना प्रसिद्धस्य पौत्र समुद्र विजयस्य च पुत्रोऽसि। एवमावां महाकुलसभूतौ स्वः। तस्मादावां महति कुले=स्व-स्ववंशे-गन्धनौ=गन्धनसर्पवद् वान्तभोजिनौ मा भूव=मा भवेव। गन्धनसर्पा हि मन्त्राकृष्टा ज्वलदनलपातभीरतया वान्तमपि विष पिबन्ति, तथा आवाभ्यां परित्यक्ता वान्तसदृशाः कामभोगा न पुनरासेव्या इति भावः। तर्हि किं कार्यम् ? इत्याह-सजम इत्यादि-तस्मात् हे रथनेमे ! त्व निभृतः= निश्चलः विषयादिभिरक्षोभ्य सन् सयमम्=अनश्वर सुखसाधनभूत निरवद्यक्रियानुष्ठान-चर=पालय ॥४४॥

'अह च भोगरायस्स' इत्यादि।

अन्वयार्थ-हे रथनेमे ! (अह-अह) मैं (भोगरायस्स-भोगराजस्य) भोगराज की पौत्री तथा उग्रसेन की पुत्री हू और (त-त्वम्) तुम (अधगवण्हिणो असि-अन्धकवृष्णेरसि) अधकवृष्णि के पौत्र एव समुद्रविजय के पुत्र हो। इस तरह हम तुम दोनों महाकुलीन हैं। अतः (गधणा-गन्धनौ) गन्धनसर्प की तरह हम वान्तभोगी (मा होमो-मा भूव) नहीं बनें। किन्तु हे रथनेमे ! (निहुओ-निभृत') विषयादिकों से अक्षोभ्य होकर (सजम-सयमम्) अनश्वर सुख के साधनभूत ऐसे निरवद्य क्रियानुष्ठानरूप सयम का (चर-चर) पालन करो।

भावार्थ—राजुल कहती है कि हम तुम कुलीन व्यक्ति हैं। गन्धन सर्प की तरह वान्त को पुनः अगीकार करने वाले नहीं हैं।

"अह च भोगरायस्स" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--હે રથનેમિ अह-अह હુ भोगरायस्स भोगराजस्य ભોગરાજની પૌત્રી તથા ઉગ્રસેનની પુત્રી છુ અને तुम-त्वम् તમો अधगवण्हिणो असि-अधकवृष्णेरसि અધક વૃષ્ણિના પૌત્ર અને સમુદ્રવિજયના પુત્ર છો આ રીતે હુ અને તમો બન્ને કુલીન છીયે આથી गधणा-गधनौ ગન્ધન સર્પની માફક ઓકેલુ ચાટનાર मा होमो-मा भूव ન બનવુ જોઇએ પર તુ હે રથનેમિ ! निहुओ-निभृत વિષયાદિકોથી સ પૂર્ણ નિર્લેપ બનીને सजमम्-सयमम् અનશ્વર એવા સુખના સાધનભૂત એવા નિરવદ્ય ક્રિયાનુષ્ઠાનરૂપ સ યમનુ चर-चर પાલન કરો

ભાવાર્થ--રાજુલે કહ્યુ કે, હે રથનેમિ ! હુ અને તમો બન્ને કુલીન છીયે ગન્ધન સર્પની માફક ઓકેલાનો ફરીથી અ ગીકાર કરવાવાળા નથી આ માટે હુ

मूलम्—जइ तं काहिसिं भावं, जा जा दिच्छसि नारिओ।
वायाविद्धोव्वे हडो, अट्ठियप्पा भविस्ससि ॥४५॥

छाया—यदि त्वं करिष्यसि भावं, या या द्रक्ष्यसि नारीः।
वाताविद्ध इव हडः, अस्थितात्मा भविष्यसि ॥४५॥

टीका—'जइ तं' इत्यादि—

हे रथनेमे! यदि त्वं या या नारीरीक्षसि, तासु तासु भावं=भोगाभिलाषं करिष्यसि। ततस्त्वं वाताविद्धः=वायुकम्पितः हडइव=हड नामक निर्मूल वनस्पतिविशेष इव शैवाल इव वा अस्थितात्मा=अस्थितः=अस्थिरः आत्मा—यस्य स तथा, चञ्चलचित्ततयाऽस्थिरस्वभावो भविष्यसि। अय भावः—जन्म जरामरणजन्य जगदटवीपर्यटनदुःखपरम्परानिराकरणकारणेभ्यः संयमगुणेभ्यः प्रस्खलया

इसलिये हे रथनेमे! मैं तुमसे यही बात कहती हूं कि तुम गन्धन सर्प की तरह न बनकर अगन्धन सर्प की तरह बनो और संयम को प्राणपण (प्राणरूपि मूल्य) से निभाने के लिये तत्पर रहो ॥४४॥

'जइ तं काहिसिं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे रथनेमे! (जइ तं जा जा नारिओ दिच्छसि—यदि त्वं याः या नारीः द्रक्ष्यसि) यदि तुम जिन २ नारियों को देखोगे और उनमें (भावं काहिसि—भावं करिष्यसि) भोग की अभिलाषा करोगे तो (वायाविद्धो हडोव्व अट्ठियप्पा भविस्ससि—वाताविद्ध हड इव अस्थितात्मा भविष्यसि) वायु से कंपित हड नाम के निर्मूल वनस्पति की तरह अथवा शैवाल की तरह चञ्चल स्वभाव के हो जाओगे। तात्पर्य इसका यह है कि जन्म, जरा, एवं मरणजन्य इस जगतरूपी कान्तार में

તમને આ વાત કહું છું કે, તમો ગન્ધન સર્પના જેના ન બનતા અગંધન સર્પના જેવા બનો અને સંયમને પ્રાણના ભોગે નિભાવવા માટે તત્પર રહો ॥૪૪॥

"जइ तं काहिसि" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે રથનેમિ! जइ तं जा जा नारिओ दिच्छसि—यदि त्वं याः याः नारीः द्रक्षसि જો તમો જે જે નારીઓને જોશો અને તેનામાં भावं काहिइ—भावं करिष्यसि ભોગની અભિલાષા કરશો તો वायाविद्धो हडोव्व अट्ठियप्पा भविस्ससि—वाताविद्ध हडइव अस्थितात्मा भविष्यसि વાયુથી સદા કંપાયમાન એવી હડ નામની નિર્મૂળ વનસ્પતિની માફક અથવા શેવાળની માફક ચંચળ સ્વભાવના બની જશો. તાત્પર્ય આનું એ છે કે, જન્મ, જરા અને મરણ જન્ય આ જગતરૂપી ખાડામાં

धर्मे=चारित्ररूपे धर्मे सम्प्रतिपातितः=सुस्थितः। 'सम्प्रतिपातितः' इत्यत्र णिजर्थोऽविवक्षितः। अत्र नाग विषये एव वृद्धसम्प्रदायः आसीत्कोऽपि राजा। सहि नूपुरपण्डितारव्यानकं पठित्वा रुष्टो राज्ञीं हस्तिपकं हस्तिनं च मारयितुमुद्यतः। स हि राज्ञीं हस्तिपकं हस्तिनं च गिरिशृङ्गाग्रे समारोहयत्। ततः स हस्तिपकमुक्तवान्-पातय हस्तिनं गिरिशृङ्गात्। ततो हस्तिपकप्रेरितो हस्ती क्रमशः स्वकीय पदत्रयं समुत्थाप्य एकेन पदेन स्थितः। ततो नागरिकजनै राजा एवं विज्ञप्तः-कथं चिन्तामणिरिवदुष्प्रापो हस्तिचूडामणिर्व्यापाद्यते? ततो राज्ञा हस्तिपकः समादिष्टो हस्तिनं

वचनं श्रुत्वा) वैराग्यरूप सार से गर्भित होने के कारण सुन्दर इस प्रकार के वचनों को सुनकर (अंकुसेण-अङ्कुशेन) अङ्कुश से (नागो जहा-नागः यथा) हाथी की तरह (धम्मे सपडिवाइओ-धर्मे सम्प्रतिपातितः) चारित्ररूप धर्म मे सुस्थित हो गया।

हस्ती की कथा इस प्रकार है—

एक कोई राजा था। उसने किसी नूपुर पंडित का वृत्तान्त पढा। पढ कर वह रुष्ट हो गया। रुष्ट होते ही उसने रानी, महावत तथा हाथी को मारने का विचार कर लिया। हाथी, रानी तथा महावत को गिरिशिखर के अग्रभाग पर चढाकर उसने महावत से ऐसा कहा इस हाथी को यहा से धकेल दो-गिरा दो-। महावतने उसको वहा से गिराने की ज्या ही प्रेरणा की कि वह हाथी तीन पैर उठा कर अपने एक पैर से खडा हो गया। नगरजनों को जब राजा के इस अकृत्य का पता चला तो उन्होंने आकर उससे कहा-महाराज यह क्या करवा रहे हो। चिन्तामणि

થવાના કારણે આ પ્રકારના સુંદર એવા વચનોને સાંભળીને अंकुसेण-अंकुशेन અંકુશથી नागो जहा-नाग यथा હાથીની માફક धम्मे सपडिवाइओ-धर्मे सम्प्रतिपातित ચારિત્ર ધર્મમાં સુસ્થિત થઈ ગયા.

હાથીની કથા આ પ્રકારની છે--

કોઈ એક રાજા હતો, તેણે કોઈ નૂપુર પંડિતનું વૃત્તાંત વાંચ્યું વાંચીને તે ક્રોધિત બની ગયો. ક્રોધિત બનતા જ તેણે રાણી, મહાવત તથા હાથીને મારવાનો વિચાર કરી લીધો. હાથી રાણી તથા મહાવતને એક ગિરિશ્રૃંગ એટલે કે, પહાડના શિખર ઉપર ચડાવીને મહાવતને હુકમ કર્યો કે, આ હાથીને અહીંથી ધકેલી દો. મહાવતે હાથીને ત્યાંથી ધકેલવાની ચેષ્ટા કરી ત્યારે હાથી પોતાના ત્રણ પગોને ઉંચા કરી એક પગથી ઉભો થઈ ગયો. નગરજનોએ રાજાના આ પ્રકારના અકૃત્યને જાણ્યું ત્યારે તેમણે આવીને રાજાને કહ્યું-મહારાજ આ શું કરાવી રહ્યા છો? ચિંતામણી

निवर्तयितुम्। हस्तिपकः प्राह-यदि राज्ञ्ये मह्यं चाभयं दद्यात् भवान् तदाऽहं हस्तिनं प्रतिनिवर्तयामि। राज्ञा चाभयं दत्तम्। ततो हस्तिपकोऽङ्कुशेन शनैः शनैर्हस्तिनं निवर्त्तितवान्। तदनु हस्ती मार्गे संस्थितः। एवं राजीमत्यपि समुत्पन्नविस्रोतसिकं रथनेमिम् अहितप्रतिनिवर्तकतयाऽङ्कुशतुल्येन स्ववचनेन असंयममार्गात्तत्तनाद्रुमति निवर्त्तितवती। ततः स चारित्ररूपधर्ममार्गे संस्थितः ॥४७॥

ततो रथनेमिर्यत्कृतवांस्तदुच्यते--

मूलम्---मणगुत्तो वयगुत्तो, कायगुत्तो जिइंदिओ।
सामण्णं निच्चलं फासे, जावज्जीवं दढव्वओ ॥४८॥

छाया---मनोगुप्तो वचोगुप्तः, कायगुप्तो जितेन्द्रियः।
श्रामण्यं निश्चलमस्प्राक्षीत्, यावज्जीवं दृढव्रतः ॥४८॥

टीका---'मणगुत्तो' इत्यादि--

मनोगुप्तः-मनसा गुप्तः, वचोगुप्तः=वचसा गुप्तः, कायगुप्तः-कायेन गुप्तः-गुप्त

के समान दुष्प्राप हाथी को क्यों मरवा रहे हो। नगरजनों की इस बात से राजाने महावत से कहा-हाथी को वापिस लौटा लो। महावतने तब राजा से कहा कि यदि आप रानी तथा मेरे लिये जो अभय देवें तो मैं हाथी को लौटा लेता हूं। राजाने उसको तथा रानी को अभय दे दिया। तब महावतने अंकुश से धीरे २ हाथी को लौटा लिया। इस तरह हाथी अपने मार्ग पर आ गया। इसी तरह राजीमतीने भी चारित्र से पतित होने की भावनावाले रथनेमि को अहितकारक मार्ग से धीरे २ अपने वचनरूपी अंकुश से लौटाकर उनको चारित्ररूप धर्म मार्ग पर लगा दिया ॥४७॥

इसके बाद रथनेमिने क्या किया सो कहते हैं—'मणगुत्तो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(मणगुत्तो वयगुत्तो कायगुत्तो-मनोगुप्त वचोगुप्त

જેવા ન મળી શકે તેવા હાથીને શા માટે મરાવી રહ્યા છો? નગરજનોની વાત સાંભળીને રાજાએ મહાવતને કહ્યું કે, હાથીને પાછો ફેરવી લો. રાજાના આ પ્રકારના વચન સાંભળીને મહાવતે કહ્યું કે, જો આપ રાણીને અને મને અભય વચન આપો તો હું હાથીને પાછો ફેરવી લઉં. રાજાએ અભયનું વચન આપ્યું. એટલે મહાવતે ધીરે ધીરે અંકુશથી હાથીને પાછો ફેરવી લીધો. આથી હાથી ઠીક માર્ગ ઉપર આવી ગયો. આવી રીતે રાજીમતિએ ચારિત્રથી પતિત થવાની ભાવનાવાળા રથનેમિને અહિતકારક માર્ગથી ધીરે ધીરે પોતાના વચનરૂપી અંકુશથી ફેરવીને તેને ચારિત્રરૂપ ધર્મ માર્ગ ઉપર લગાવી દીધો ॥૪૭॥

આ પછી રથનેમિએ શું કર્યું તે કહે છે—"મણગુત્તો" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—મણગુત્તો વયગુત્તો કાયગુત્તો-મનોગુપ્ત વચોગુપ્ત કાયગુપ્ત

धर्मे=चारित्ररूपे धर्मे सम्प्रतिपातित'=सस्थित: ।'सम्प्रतिपातित:'इत्यत्र णिजर्थोऽवि वक्षितः। अत्र नाग विषये एव वृद्धसम्प्रदायः आसीत्कोऽपि राजा। सहि नूपुरपण्डितारव्यानक पठित्वा रुष्टो राज्ञीं हस्तिपक हस्तिन च मारयितुमुद्यतः। स हि राज्ञीं हस्तिपक हस्तिन च गिरिशृङ्गाग्रे समारोहयत्। तत' स हस्तिपकमुक्तवान्-पातय हस्तिन गिरिशृङ्गात्। ततो हस्तिपकप्रेरितो हस्ती क्रमशः स्वकीय पदत्रय समुत्थाप्य एकेन पदेन स्थितः। ततो नागरिकजनै राजा एव विज्ञप्तः-कथ चिन्तामणिरिवदुष्प्रापो हस्तिचूडामणिर्व्यापाद्यते? ततो राज्ञा हस्तिपक. समादिष्टो हस्तिन

वचन श्रुत्वा) वैराग्यरूप सार से गर्भित होने के कारण सुन्दर इस प्रकार के वचनों को सुनकर (अकुसेण-अकुशेन) अकुश से (नागो जहा-नाग. यथा) हाथी की तरह (धम्मे सपडिवाइओ-धर्मे सम्प्रतिपातित') चारित्ररूप धर्म मे सस्थित हो गया।

हस्ती की कथा इस प्रकार है—

एक कोई राजा था। उसने किसी नूपुर पडित का वृत्तान्त पढा। पढ कर वह रुष्ट हो गया। रुष्ट होते ही उसने रानी, महावत तथा हाथी को मारने का विचार कर लिया। हाथी, रानी तथा महावत को गिरिशिखर के अग्रभाग पर चढाकर उसने महावत से ऐसा कहा इस हाथी को यहा से धकेल दो-गिरा दो-। महावतने उसको वहा से गिराने की ज्यों ही प्रेरणा की कि वह हाथी तीन पैर उठा कर अपने एक पैर से खडा हो गया। नगरजनों को जब राजा के इस अकृत्य का पता चला तो उन्होंने आकर उससे कहा-महाराज यह क्या करवा रहे हो। चिन्तामणि

થવાના કારણે આ પ્રકારના સુદર એવા વચનોને સાભળીને अकुसेण-अकुशेन અકુશથી नागो जहा-नाग यथा હાથીની માફક धम्मे सपडिवाइओ-धर्मे सम्प्रतिपातित ચારિત્ર ધર્મમા સસ્થિત થઈ ગયા

હાથીની કથા આ પ્રકારની છે--

કોઇ એક રાજા હતો, તેણે કોઇ નૂપુર પડિતનુ વૃત્તાત વાચ્યુ વાચીને તે ક્રોધિત બની ગયો ક્રોધિત બનતા જ તેણે રાણી, મહાવત તથા હાથીને મારવાનો વિચાર કરી લીધો હાથી રાણી તથા મહાવતને એક ગિરિશ્રૃગ એટલે કે, પહાડના શિખર ઉપર ચડાવીને મહાવતને હુકમ કર્યો કે, આ હાથીને અહીથી ફેકી દો મહાવતે હાથીને ત્યાથી ધકેલવાની ચેષ્ટા કરી ત્યારે હાથી પોતાના ત્રણ પગોને ઉચા કરી એક પગથી ઉભો થઇ ગયો નગરજનોએ રાજાના આ પ્રકારના અકૃત્યને જાણ્યુ ત્યારે તેમણે આવીને રાજાને કહ્યુ-મહારાજ આ શુ કરાવી રહ્યા છો? ચિતામણી

विरामयन्, दशविध धर्मं समादिशन् दशाऽपि दिश पुनातिस्म। शङ्खचक्रादिलक्षणस्यास्मोदप्रभस्य दशचापोन्नितस्य तस्य भगवतोऽष्टादशसहस्रसंख्यका साध्व्यचत्वारिंशत्सहस्रसंख्यका साध्व्य, एकोनसप्ततिसहस्राधिकैकलक्षसंख्यका श्रावकाः षट्त्रिंशत्सहस्राधिकलक्षत्रयसंख्यका श्राविकाश्चासन्। केवलज्ञानमासाद्य चतुःपञ्चाशद्दिनोनानि सप्तशतवर्षाणि प्रभुर्भुवि व्यहरत्। अन्ते च भगवान् रैवतके गिरौ समवसृत्य पञ्चशतसाधुभि सह मासिकमनशन कृत्वा विनश्वरमिद शरीर परिहाय सिद्धिपदमाप्तवान्। तदा सर्वे सुरेन्द्रै जय जयेति

अब यहा अवशिष्ट नेमिनाथ प्रभु का चारित्र कहा जाता है, वह इस प्रकार है--

प्रभु नेमिनाथने भूमण्डल पर विहार करते हुए भव्यरूप कमलों को सूर्य की तरह खूब विकसित किया। उत्तम क्षमा आदि दस १० प्रकार के धर्म का उपदेश दिया। अपने विहार से दस दिशाओं को पवित्र किया। प्रभु शंख चक्र आदि लक्षणों के धारक थे। इनके शरीर की कांति मेघ की प्रभा के समान नील थी। शरीर की ऊँचाई दस धनुष की थी। भगवान के अठारह हजार साधु थे। चालीस हजार साध्वियां थीं। एक कम सित्तर (७०) हजार अधिक एक लाख श्रावक थे। छत्तीस हजार अधिक तीनलाख श्राविकाएँ थी। केवलज्ञान प्राप्त करके प्रभुने इस भूमण्डलपर चौपन ५४ दिन कम सात सौ ७०० वर्षतक विहार किया। अन्त मे रैवतक गिरि पर पधार कर पाच सो साधुओं के साथ एक मासका अनशन करके विनश्वर इस

હવે અહી નેમિનાથ પ્રભુના બાકીના ચરિત્રને કહેવામા આવે છે તે આ પ્રકારનુ છે--

પ્રભુ નેમિનાથ ભૂમડળ ઉપર વિહાર કરતા કરતા ભવ્યરૂપ કમળોને સૂર્યના માફક ખૂબ વિકસિત કર્યા ઉત્તમ ક્ષમા આદિ દસ પ્રકારના ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો પોતાના વિહારથી દસ દિશાઓને પવિત્ર કરી પ્રભુ શખ ચક્ર, આદિ લક્ષણોના ધારણ કરનાર હતા તેમના શરીરની કાતિ મેઘની પ્રભાના જેવી નીલવર્ણી હતી શરીરની ઉચાઇ દસ ધનુષની હતી ભગવાનને અઢાર હજાર સાધુ હતા ચાલીસ હજાર સાધ્વીઓ હતી એક લાખ અને ઓગણોતેર હજાર નવમો નેનવ્વાણુ શ્રાવક હતા ત્રણ લાખ અને છત્રીસ હજાર શ્રાવિકાઓ હતી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને પ્રભુએ આ ભૂમડળ ઉપર સાતસો વર્ષમા ફક્ત ચોપન દિવસ ઓછા વિહાર કર્યો અતમા રૈવતક પર્વત ઉપર પધારીને પાચસો ૫૦૦ સાધુઓની સાથે એક માસનુ અનશન

णामा वा साधव एवम्=अनेन प्रकारेणैव कुर्वन्ति। किं कुर्वन्ति ? इत्याह— 'विनियट्टति' इत्यादिना—'त संबुद्धादिविशेषणविशिष्टा साधवः कथंचिद् विस्रोतसिकोत्पत्तावपि (अस्थिरावस्था प्राप्तावपि) विशेषेण तन्निरोध कृत्वा भोगेभ्य'= मनोज्ञशब्दादिरूपेभ्यो विनिवर्तन्ते=विनिवृत्ता भवन्ति। यथा स पुरुषोत्तमो रथनेमिर्भोगेभ्यो विनिवृत्तः। संबुद्धादिविशेषणविशिष्टा एव साधव एकदा भग्नपरिणामा अपि पुनः सयम प्रतिप॰ क्षमाः, नत्वनेवंविधा॰ इति संबुद्धादि विशेषणपदै' सूचितम्। 'भोगेसु' इत्यत्र पञ्चम्यर्थे सप्तमी, आर्षत्वात्। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्यः ॥५०॥

पूर्वावशिष्ट भगवतोऽरिष्टनेमेश्चरितमुच्यते—

भगवानरिष्टनेमिरवनीतले विहरन सहस्रांशुरिव कमलोपमान् भव्यजनान्

चारित्रपरिणामों के आराधक साधुजन (एव-एवम्) इस प्रकार से (करति-कुर्वन्ति) करते हैं। (जहा-यथा) जैसे (सो पुरिसत्तमो-स पुरुषोत्तम) उन पुरुषोत्तम रथनेमिने किया है अर्थात् जिस प्रकार रथनेमि भोगों से विरक्त हुए उसी प्रकार संबुद्ध आदि विशेषणों से विशिष्ट साधुजन भी किसी भी तरह भोगों की तरफ चलितचित्त होने पर भी (भोगेसु विनियट्टति-भोगेभ्य विनिवर्तन्ते) उन भोगों से-मनोज्ञ शब्दादिक विषयो से विनिवृत्त होते हैं। इन संबुद्ध आदि विशेषणों से सूत्रकारने यह सूचित किया है कि जो संबुद्धविशेषण विशिष्ट साधुजन होते हैं वे ही अपने भग्नपरिणामो को पुन सयम मे स्थिर कर सकते हैं। जो ऐसे नहीं है वे नहीं। "त्ति बेमि-इति ब्रवीमि" इन पदों का अर्थ पहिले कर दिया गया है ॥५०॥

प्रविचक्षणा આગમના મર્મને જાણનાર તથા ચારિત્ર પરિણામોના આરાધક સાધુજન एव-एवम् આ પ્રકારથી करति-कुर्वन्ति કરે છે કે, जहा-यथा જેમ सो पुरिसोत्तमो-स पुरुषोत्तमो એ પુરૂષોત્તમ રથનેમિએ કરેલ છે અર્થાત્-જે પ્રકારે રથનેમિ ભોગોથીવિરક્ત બન્યા એજ પ્રકારે સંબુદ્ધ આદિ વિશેષણોથી વિશિષ્ટ સાધુજન પણ કોઇ પણ પ્રકારથી ભોગોની તરફ રૂચી જાગવા છતા પણ भोगेसु विनियट्टति-भोगेभ्य विनिवर्त्तन्ते તે ભોગોથી, મનોજ્ઞ શબ્દાદિક વિષયોથી અનિવૃત્તજ રહે છે આ સંબુદ્ધ આદિ વિશેષણોથી સૂત્રકારે એવુ સૂચિત કરેલ છે કે, જે સંબુદ્ધ આદિ વિશેષણ વિશિષ્ટ સાધુજન હોય છે તેજ પોતાના ભગ્ન પરિણામોને ફરીથી સંયમમા સ્થિર કરી શકે છે જે એવા નથી તે તેવુ કરી શકતા નથી "त्ति बेमि इति ब्रवीमि" આ પદોનો અર્થ અગાઉ કરી દેવાયેલ છે ॥૫૦॥

सकलगुणालङ्कृतश्चतुर्विधसैन्यसमृतः सर्वज्ञधर्मारविन्दरसास्वादभ्रमरोऽरविन्दो नाम नृपः। तस्यासीत्सकलशास्त्रपारङ्गतो जिनधर्मनिरतो विश्वभूतिर्नामपुरोहितः। तस्यासीत्पतिसेवापरायणाऽनुद्धरा नाम भार्या। विश्वभूतेः पुरोहितस्य कमठ–मरुभूति नामानौ द्वौ सुतौ जातौ। तत्रासीत् कमठस्य पत्नी वरुणा, मरुभूतेश्च वसुन्धरा। विश्वभूति पुरोहितो गृहभारोद्धरणक्षमौ पुत्रौ विलोक्य तयोर्गृहभारमारोप्य स्वयं पुण्यकार्यं कुर्वन् कालान्तरे कालं कृत्वा देवलोकं गतः। तद्भार्याऽनुद्धराऽपि पुण्यकार्यं कृत्वा मृता स्वर्गं गता। अथ ज्येष्ठभ्रातृ-

अरविन्द नामके राजा राज्य करते थे। ये बडे ही धर्मात्मा थे। इनका मन सदा मिलिन्द (भ्रमर) की तरह सर्वज्ञ द्वारा प्रतिपादित धर्मरूपी अरविन्द के मकरन्द का पान करने की ओर अधिक लालायित रहा करता था। सकल गुणों से ये अलकृत थे। चतुर्विध सैन्य से ये सदा युक्त थे। इनका एक पुरोहित था जिसका नाम विश्वभूति था। यह सकल शास्त्रों का वेत्ता एवं जिन धर्म में निरत था। पुरोहित की धर्मपत्नी का नाम अनुद्धरा था। यह पति सेवा करने में बडी चतुर थी। इसके कमठ और मरुभूति नामके दो पुत्र थे। कमठ की पत्नी का नाम वरुणा और मरुभूति की पत्नी का नाम वसुन्धरा थी। विश्वभूतिने जब अपने इन दोनो पुत्रो को गार्हस्थिक भार के वहन करने लायक देखा तो उसने अपने ऊपर का समस्त भार इन दोनो कुमारों के कंधे पर रखकर आप पुण्यकार्य मे लवलीन हो गया। कितनेक समय के बाद पुरोहित मरकर देवलोक मे देवपने उत्पन्न हुआ। तथा इसकी जो अनुद्धरा भार्या थी वह भी पुण्यकार्य करने

હતા જે ઘણા જ ધર્માત્મા હતા એમનુ મન સદાના માટે ભમરાની નાફક સર્વજ્ઞ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મરૂપી અરવિંદના મકરદનુ પાન કરવા તરફ ઘણુ જ ખેચાયેલુ રહ્યા કરતુ હતુ સઘળા ગુણોથી એ અલકૃત હતા ચતુર્વિધ સૈન્ય જેમની સેવામા હતુ એમને એક પુરોહિત હતો જેનુ નામ વિશ્વભૂતિ હતુ તે સઘળા શાસ્ત્રોને જાણનાર તથા જીનધર્મમા શ્રદ્ધાવાળો હતો પુરોહિતની ધર્મપત્નીનુ નામ અનુદ્ધરા હતુ તે પતિ સેવા કરવામા ચતુર હતી તેને કમઠ અને મરૂભૂતિ નામના બે પુત્ર હતા કમઠની પત્નીનુ નામ વરૂણા હતુ અને મરૂભૂતિની પત્નીનુ નામ વસુધરા હતુ વિશ્વભૂતીએ જ્યારે પોતાના બન્ને પુત્રોને ગૃહસ્થાશ્રમનો બોજો ઉઠાવવામા યોગ્ય જાણ્યા ત્યારે તેણે પોતાના ઉપરનો ગૃહસ્થાશ્રમનો સઘળો ભાર પોતાના બન્ને પુત્રોના કાધ ઉપર નાખીને પોતે પુણ્ય કાર્યમા લવલીન બની ગયા કેટલાક સમય બાદ પુરોહિત મરીને દેવલોકમા દેવપણે ઉત્પન્ન થયા તથા

ऽन्याऽपि कश्चित् संभवेदत आह–'अरहा' इत्यादि–स हि पार्श्वः अर्हन्=अर्हति देवेन्द्रादिकृतानि वन्दन नमस्कारणादीनि यः स तथा, तीर्थङ्कर इत्यर्थः, अतएव–लोकपूजित =लोकत्रयसेवित, सबुद्धात्मा=सबुद्धः=तत्त्वज्ञान आत्मा यस्य स तथा, तत्त्वज्ञानवांश्च आसीत्, एव विधच्छद्मस्थोऽपि स्यात्, अत आह—'सव्वण्णू' इत्यादि–स पार्श्वप्रभुः सर्वज्ञः=सकललोकालोकस्वरूपज्ञान सम्पन्नः, तथा–धर्मतीर्थकरः=धर्म एव भवाब्धितरणहेतुत्वात्तीर्थ–धर्मतीर्थं तस्य करः=कारकः प्रवर्तक इति यावत्, तथा–स जिन =सकलकर्मजेता चासित्। अथ द्वितीयो जिन शब्दो मुक्तावस्थाऽपेक्षया प्रोक्तः ॥१॥

अत्र प्रसङ्गप्राप्त श्रीपार्श्वनाथप्रभुचरित भव्यजनपरिज्ञानाय सक्षेपतो लिख्यते–

(प्रथमो मरुभूति भवः)

आसीदत्रैव भरतक्षेत्रे सकलश्रिया कलागृह पोतन नामक पत्तनम्। तत्र

अन्वयार्थ—(जिणे–जिन.) रागद्वेष के विजेता (पासेत्ति नामेण–पार्श्व इति नाम्ना) पार्श्वनाथ इस नाम से प्रसिद्ध (जिणे–जिन) जिन भगवान् थे। ये (अरहा–अर्हन्) तीर्थंकर पद धारक थे। (लोगपूइए लोकत्रयपूजित.) तीन लोक द्वारा पूजित थे। (सबुद्धप्पा–सबुद्धात्मा) स्वय बुद्ध थे। (सव्वण्णू–सर्वज्ञः) सकल त्रिकालवर्ती पदार्थों को एक साथ जानते थे। तथा (धम्मतित्थयरो–धर्मतीर्थंकरः) भवाब्धि से तरण का हेतु होने से धर्मरूप तीर्थ के प्रवर्तक थे।

इन पार्श्वनाथ प्रभु के दस भवों मे से प्रथमभव मरुभूति का इस प्रकार है—

इसी भरतक्षेत्र में सकल शोभा का धाम तथा लक्ष्मीरूपी ललना का ललाम कलागृह एक पोतनपुर नामका पत्तन था। यहा

અન્વયાર્થ–जिणे–जिनः રાગદ્વેષ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરનાર पासेत्ति नामेण–पार्श्व इति नाम्ना પાર્શ્વનાથ એ નામથી પ્રસિદ્ધ जिणे–जिन જીન ભગવાન હતા તેઓ अरहा–अर्हन् તીર્થંકર પદના ધારક હતા लोग पूइए–लोकत्रयपूजित ત્રણ લોકથી પૂજાતા હતા, सबुद्धप्पा–सबुद्धात्मा સ્વયં બુદ્ધ હતા સઘળા सव्वण्णू–सर्वज्ञः ત્રિકાળદર્શી પદાર્થોને એકસાથે જાણનાર હતા તથા धम्मतित्थयरो–धर्मतीर्थंकर ભવાબ્ધિથી તરવાના હેતુ હોવાથી ધર્મરૂપ તીર્થના પ્રવર્તક હતા

એ પાર્શ્વનાથ પ્રભુના દસ ભવોમાથી પ્રથમ ભવ મરૂભૂતિનો વૃત્તાંત આ પ્રકારનો છે—

આ ભરતક્ષેત્રમા સઘળી શોભાના ધામ તથા લક્ષ્મીરૂપી લલનાના લલામ કલાગૃહ એક પોતનપુર નામનું ગામ હતું ત્યાં અરવિંદ નામના રાજા રાજ્ય કરતા

सर्वत्र भ्रमयित्वा निर्वासितवान्। एवं मरणादप्यधिकमपमानं प्राप्तः कमठः जातवैराग्यो वनं गतः। तत्र स तापसो भूत्वा बालतपस्तप्तुमारब्धवान्। इतश्च मरुभूतिः कमठस्यातीवदुःसहां विडम्बनां वीक्ष्य पश्चात्तापसमन्वित एवमचिन्तयत्–अहो! धिङ् माम्! येन मया गृहच्छिद्रं राज्ञे निवेद्य ज्येष्ठभ्रातुर्दुर्दशा कारिता। अहो! "गृहदुश्चरितं लोके प्रकाश्यं नैव कस्यचित्" इति नीतिवचोऽपि रोषाक्रान्तेन मया विस्मृतम्। अतोऽहं भ्रातुः समीपे गत्वा

उसका अनाचार भी जनता के सामने घोषित किया जावे। इस तरह समस्त नगर भर में उसको चारों ओर फिराया जावे। राजाकी इस प्रकार आज्ञा प्राप्त कर राजपुरुषोंने उसको उसी प्रकार की परिस्थिति से युक्त कर नगर से बाहिर निकाल दिया। इस प्रकार मरण से अधिक दुःखदाई अपमानको पाया जिससे कमठ के चित्त मे वैराग्य का भाव जागृत हो उठा। वह वनमे चला गया। वहां उसने तापस के वेषमे रह कर अज्ञान तप तपना प्रारंभ कर दिया। इधर जब मरुभूति ने कमठ की इस प्रकार दुःसह विडम्बना देखी तो उसका अन्तःकरण पश्चात्ताप से उत्तप्त होकर विचारने लगा-अहो मुझे धिक्कार है मैंने व्यर्थ मे ही राजा से गृहच्छिद्र कहकर इस आपत्ति को मोल लिया है। ज्येष्ठ भ्राता की इस दुर्दशा का कारण मैं ही हुआ हूं इस मेरी मूर्खता ने ही आज मेरे घर को उजाड दिया है। सच है नीतिकारों का ऐसा कहना की–"गृह के दुश्चरित को कहीं पर भी प्रकट नहीं करना चाहिये"।

વામાં આવે આ પ્રમાણે આખા નગરમાં ચારે તરફ તેને ફેરવવામાં આવે રાજાની આ પ્રકારની આજ્ઞા મળતાં રાજપુરૂષોએ રાજઆજ્ઞાના અનુસાર કરીને એ દુરાચારી કમઠ પુરોહિતને નગરથી બહાર કરી દીધો આ પ્રમાણે મરવાથી પણ અતિ ભયંકર એવા અપમાન પામવાથી એ કમઠના મનમાં તીવ્ર વૈરાગ્યભાવ જાગૃત થઈ ગયો આથી તે વનમાં ચાલ્યો ગયો ત્યાં તેણે તાપસના વેષમાં રહીને ખૂબ જ શ્રદ્ધાપૂર્વક તપ તપવાનો પ્રારંભ કરી દીધો આ તરફ મરૂભૂતિએ જ્યારે કમઠની આવા પ્રકારની દુઃસહ વિટંબના જોઈ ત્યારે તેનું અંતઃકરણ પશ્ચાત્તાપથી દુઃખી હૃદય અને તે મનોમન વિચારવા લાગ્યો કે, મને ધિક્કાર છે, વ્યર્થમાં મે મારૂ ગૃહછિદ્ર રાજા પાસે જાહેર કરીને આ પ્રકારની આપત્તિ ઉભી કરેલ છે મોટાભાઈની આવી દુર્દશાનું કારણ હું જ છું મારી આ પ્રકારની મૂર્ખતાના કારણે આજે મારા હાથે મારૂ ઘર ઉજડ બનેલ છે સાચું છે નીતિકારોનું એ કહેવું છે કે, 'પોતાના ઘરનું છિદ્ર કોઈ પણ ભોગે ક્યાંય પ્રગટ ન કરવું જોઈએ

न्तर गत इति निःशङ्को दुराचरणे प्रवृत्तौ। तयो रिमं दुराचारं विलोक्य रात्रिं निर्याप्य प्रभाते गृहान्निर्गत्य राज्ञोऽरविन्दस्य समीपे समागत्य स्वपत्न्याः स्वज्येष्ठभ्रातश्च सर्वं दुश्चरितं तस्मै न्यवेदयत्। ततो राजा राजपुरुषैः कृत दुष्कृतस्य तस्य कमठस्य शिरो मुण्डयित्वा चर्ममयग्रथिताम् एवं सच्छिद्रशराव समन्वितपादत्राणमयीं मालां तत्कण्ठे परिधाप्य मलमूत्रभस्मादिभिर्देह लेप यित्वा गर्दभे तं समारोप्य डिण्डिमवादनपुरस्सरं तदनाचारं ज्ञापयित्वा नगर

न्तर 'मरुभूति ग्रामान्तर गया हुआ है' इस ख्याल से और अधिक निःशङ्क होकर दुराचार सेवन करने में प्रवृत्त हो गये। उन दोनों के इस दुष्टाचार को अपनी आखों से देखकर मरुभूति प्रातःकाल होते ही वहा से निकलकर राजा अरविन्द के पास पहुँचा और पहुँचकर उसने उनसे अपनी पत्नी एव अपने बडे भाई कमठ के दुराचार को कह दिया। राजाने दुराचार की बात सुनकर बडा अफसोस जाहिर किया–और फौरन ही राजपुरुषो को बुलाकर यह आज्ञा दी कि शीघ्र ही अपराधी कमठ का शिर मुडवाकर तथा उसके गले मे चर्मसूत्र से ग्रथित जूतो की माला पहिनाकर मलमूत्र एव भस्म से उसका समस्त शरीर लिंपित कर उसको नगर से बाहिर निकाल दो। निकालते समय उसको गधे पर बैठा कर ही निकालना। जूतों की जो उसके गले मे माला पहिराई जावे वह बीच २ मे मिट्टी के सच्छिद्र शरावो मे पिरोई गई होनी चाहिये। तथा डिंडिमवादन पूर्वक उसी के साथ

રગામ ગયેલ છે આ ખ્યાલથી તદ્દન બેફીકર બનીને દુરાચારનુ સેવન કરવામા પ્રવૃત્ત બની ગયા એ બન્નેના દુષ્ટાચારને પોતાની આખેથી જોઈને મરૂભૂતિ પ્રાતઃકાળ થતા જ ત્યાથી નીકળીને રાજા અરવિંદની પાસે પહોચ્યો અને ત્યા જઈને તેણે પોતાની પત્ની તથા પોતાના મોટાભાઇ કમઠના દુરાચારની સઘળી વાત તેને કહી સભળાવી રાજાએ દુરાચારની વાત સાભળીને ઘણો જ અફસોસ જાહેર કર્યો અને તુરતજ રાજાએ રાજપુરૂષોને બોલાવીને એવી આજ્ઞા આપી કે, તાત્કાલીક અપરાધી કમઠનુ માથુ મુડાવી તથા તેના ગળામા ચામડાના જોડાની માળા પહેરાવીને મળમૂત્રથી તેના શરીરને લીપાવીને તેને નગરથી બહાર કાઢી મૂકો. આ પ્રકારે જ્યારે તેને નગરથી બહાર કાઢી મૂકવામા આવે ત્યારે તેને ગધેડા ઉપર બેસાડીને ગામ વચ્ચેથી બહાર કાઢવો. તેના ગળામા જોડાઓની જે માળા પહેરાવવામા આવે તેની વચમા વચમા માટીના શરાશે પરોવવા તેમજ તેને શહેરની બહાર આ રીતે ગધેડા ઉપર બેસાડીને કાઢવામા આવે ત્યારે ડીમડીમ વાજા વગાડીને તેના અનાચારને લોકો સમક્ષ જાહેર કર

सर्वत्र भ्रमयित्वा निर्वासितवान्। एवं मरणादप्यधिकमपमानं प्राप्तः कमठः जातवैराग्यो वनं गतः। तत्र स तापसो भूत्वा बालतपस्तमुमारब्धवान्। इतश्च मरुभूतिः कमठस्यातीवदुःसहां विडम्बनां वीक्ष्य पश्चात्तापसमन्वित एवं व्यचिन्तयत्–अहो! धिङ् माम्! येन मया गृहच्छिद्रं राज्ञे निवेद्य ज्येष्ठभ्रातुः दुर्दशा कारिता। अहो! "गृहदुश्चरितं लोके प्रकाश्यं नैव कस्यचित्" इति नीतिवचोऽपि कोपाक्रान्तेन मया विस्मृतम्। अतोऽहं भ्रातुः समीपे गत्वा

उसका अनाचार भी जनता के सामने घोषित किया जावे। इस तरह समस्त नगर भर में उसको चारों ओर फिराया जावे। राजाकी इस प्रकार आज्ञा प्राप्त कर राजपुरुषोंने उसको इसी प्रकार की परिस्थिति से युक्त कर नगर से बाहिर निकाल दिया। इस प्रकार मरण से अधिक दुःखदाई अपमानको पाया जिससे कमठ के चित्त में वैराग्य का भाव जागृत हो उठा। वह वनमें चला गया। वहां उसने तापस के वेषमें रह कर अज्ञान तप तपना प्रारंभ कर दिया। इधर जब मरुभूति ने कमठ की इस प्रकार दुःसह विडम्बना देखी तो उसका अन्तःकरण पश्चात्ताप से उत्तप्त होकर विचारने लगा–अहो मुझे धिक्कार है मैंने व्यर्थ में ही राजा से गृहच्छिद्र कहकर इस आपत्ति को मोल लिया है। ज्येष्ठ भ्राता की इस दुर्दशा का कारण मैं ही हुआ हूं, इस मेरी मूर्खता ने ही आज मेरे घर को उजाड दिया है। सच है नीतिकारों का ऐसा कहना की–"गृह के दुश्चरित को कहीं पर भी प्रकट नहीं करना चाहिये"।

વામાં આવે આ પ્રમાણે આખા નગરમાં ચારે તરફ તેને ફેરવવામાં આવે રાજાની આ પ્રકારની આજ્ઞા મળતાં રાજપુરુષોએ રાજઆજ્ઞા અનુસાર કરીને એ દુરાચારી કમઠ પુરોહિતને નગરથી બહાર કરી દીધો. આ પ્રમાણે મરવાથી પણ અતિ ભયંકર એવા અપમાન પામવાથી એ કમઠના મનમાં તીવ્ર વૈરાગ્યભાવ જાગ્રત થઈ ગયો. આથી તે વનમાં ચાલ્યો ગયો. ત્યાં તેણે તાપસના વેશમાં રહીને ખૂબ જ શ્રદ્ધાપૂર્વક તપ તપવાનો પ્રારંભ કરી દીધો. આ તરફ મરુભૂતિએ જ્યારે કમઠની આવા પ્રકારની દુઃસહ વિટંબના જોઈ ત્યારે તેનું અંતઃકરણ પશ્ચાત્તાપથી ઉકળી ઉઠ્યું અને તે મનોમન વિચારવા લાગ્યો કે, મને ધિક્કાર છે, વ્યર્થમાં મેં મારું ગૃહછિદ્ર રાજા પાસે જાહેર કરીને આ પ્રકારની આપત્તિ ઉભી કરેલ છે. મોટાભાઈની આવી દુર્દશાનું કારણ હું જ છું. મારી આ પ્રકારની મૂર્ખતાના કારણે આજે મારા હાથે મારું ઘર ઉજડ બનેલ છે. સાચું છે નીતિકારોએ એ કહેલું છે કે, "પોતાના ઘરનું છિદ્ર કોઈ પણ ભોગે ક્યાંય પ્રગટ ન કરવું જોઈએ

प्रणिपातपुरस्सरं स्वापराधं तं क्षमापयामि। एवं विचार्य मरुभूतिर्वने गत्वा भ्रातुश्चरणयोर्न्यपतत्। तस्मिन् समये दुर्बुद्धिमयमठः कुकर्मकर्मठः कमठस्तं न्मूला मृत्योरप्यधिकां विडम्बनां स्मरन् चरणयोः प्रणिपततो भ्रातुः शिरसि शिलां प्रक्षिप्तवान्। एवं कमठकृतशिलाप्रहारचूर्णितमस्तको मरुभूतिरार्त्तध्यानवशाद्गतप्राणोऽत्यक्तवान्।

॥ इति प्रथमो मरुभूतिभवः ॥१॥

हाय- मैंने इस नीति के वचन को क्यों उल्लंघन किया। कोपाक्रान्त होकर मैंने अपने पर का ख्याल नहीं रक्खा। अतः अब मेरी भलाई इसी में है कि मैं बडे भाई के पाँव पडकर अपने उस अपराध की क्षमा याचना करूं। उनके चरणों में पडकर कहूं-मेरे भाई! मेरे इस अपराध की क्षमा दो। उठो और घर पर चलो। इस प्रकार विचार कर मरुभूति उसी समय घर से निकल कर वनमे गया। वहां पहुंच कर इसने बडे प्रेम के साथ भाई के चरणों में नमन किया। नमन करते ही मरुभूति के मस्तक ऊपर दुर्बुद्धि के एक मठ स्वरूप उस कुकर्म कर्मठ ने अपनी मृत्यु से भी भयकर दुर्दशा को याद कर शिला पटक दी। इस प्रकार कमठकृत शिला के प्रहारसे चूर्णित मस्तक होकर मरुभूति आर्तध्यान से मरकर विंध्याचल पर्वत पर हाथी की पर्याय मे उत्पन्न हुआ॥

॥ यह मरुभूति का प्रथम भव है॥

"मे आ नीति वचननु शा माटे उल्लंघन कर्यु ? रोषना आवेषमा आवी जइने मे घरनो अने बहारनो कांइ पण विचार न कर्यो, आथी मारी भलाइ तो हवे एमा ज रही छे के, हु मोटाभाईना पगमा पडीने मारा आ अपराधनी क्षमा याचना करुं एमना चरणोमा पडीने मारा अपराधनी क्षमा मागु अने तेमने फरी पाछा घरमा लई आवु आ प्रकारनो विचार करीने मरुभूति ते समये घरथी नीकळीने वनमा गयो त्या पहोचीने तेणे घणा ज प्रेमथी भाईना चरणोमा नमन कर्यु नमन करता ज दुर्बुद्धिथी भरेला एवा ए कमठना चित्तमा पोतानी थयेल दुर्दशानो चितार जागृत बन्यो अने आथी कोई प्रकारनो विचार न करता एक पत्थरनी शीला उपाडीने तेना माथा उपर झीकी कमठ द्वारा मस्तक उपर थयेला शीलाना प्रहारथी मरुभूतिनु मस्तक छुंदाई गयु अने ए प्रहारना कारणे आर्त ध्यानथी मरीने विंध्याचळ पर्वत उपर हाथीनी पर्यायमा उत्पन्न थयो.

आ मरुभूतिनो प्रथम भव थयो,

(अथ द्वितीयो गजभवः)

इत्थमार्त्तध्यानवशान्मृतः विन्ध्याचले यूथाधिपो गजो जातः । इतश्चार-विन्दो नृपः शरदृतौ स्त्रीभिः सह प्रासादोपरितनभागे क्रीडन् गगने इन्द्रध-नुषा शोभितं विद्युद्युक्तं गर्जन्तं मेघं दृष्टवान् । तं दृष्ट्वा राजा सहर्षमेवम-भाषत-अहो ! कीदृशोऽयं मनोहरो मेघः । ततः क्षणादेव स मेघो जले तैलमिव व्योम्नि विस्तृतः । पुनः क्षणादेव स मेघो वातोद्धतो नाशमगात् निदाघशारद

द्वितीय भव हाथी का इस प्रकार है—

जब मरुभूति आर्त ध्यान के प्रभाव से विन्ध्याचल पर्वत पर यूथा-धिपति हाथी की पर्याय से उत्पन्न हुआ उसी समय की यह घटना है की अरविन्द राजा को वैराग्य का रंग जम रहा था। बात इस प्रकार है—जब शरत् ऋतु मे अरविन्द राजा स्त्रियों के साथ महल के उपरितन भागपर क्रीडाकर रहे थे उस समय उन्होंने विद्युत युक्त गर्जना करता हुआ एक मेघ देखा। परन्तु थोडा ही देर बाद जब उन्होंने पुनः उसको देखा तो, वह इन्द्रधनुष से शोभित मेघ उनको देखने मे नहीं आया। बस अब क्या था—सहसा उनके चित्त मे यह बात जम गई कि देखो तो सही—जो मेघ पहिले देखा गया था—वह कितना चित्ताकर्षक था जल मे जिस तरह तैल बिन्दु फैल जाती है उसी तरह वह भी आकाश मे विस्तृत हो रहा था—परंतु वायु के झकोरे ने उसका इस प्रकार फैलाना

બીજો ભવ હાથીનો આ પ્રમાણે છે—

મરૂભૂતિ આર્ત્તધ્યાનના પ્રભાવથી વિંધ્યાચળ પર્વત ઉપર યૂથ અધિપતિ હાથીની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો આ સમયની જ આ વાત છે કે, અરવિંદ રાજાને વૈરાગ્યના રંગ લાગી રહ્યો હતો એ વાત આ પ્રકારની છે—

શરદ ઋતુમાં અરવિંદ રાજા પોતાની સ્ત્રિયોની સાથે પોતાના રાજભવનના ઉપરની અગાસી ઉપર બેસીને આનંદનો અનુભવ કરી રહેલ હતો તે સમયે તેણે વીજળીના ચમકારા સાથે ગર્જના કરતા મેઘને ચડી આવતો જોયો થોડી જ વાર પછી જ્યારે તેમણે ફરી આકાશ તરફ જોયું તો ઈંદ્રધનુષ્યથી દેદીપ્યમાન એવું મેઘનું આગમન તેમની દૃષ્ટિએ ન પડયું આ પ્રમાણે જોયા પછી એના દિલમાં એકાએક પ્રકાશ જાગી ઉઠયો અને તે મનોગત વિચારવા લાગ્યો કે, મેં થોડી જ વાર પહેલાં મેઘની જે ઘટા ચઢેલી જોયેલ હતી તે કેટલી ચિત્તને આકર્ષણ કરનાર હતી જળમાં જે પ્રમાણે તેલનું નાનું સરખું ટીપું ફેલાઈને મોટું દેખાય છે આ પ્રમાણે મેઘ પણ આકાશમાં ફેલાઈને કેવું આકર્ષણ જમાવી રહેલ હતો પરંતુ વાયુથી એના આ પ્રકારનું સુંદર રૂપ સહન ન થયું જેથી પોતાના ઝપાટાથી

विनष्टः। ततो राजा मनस्येवमचिन्तयत्-यथाऽसौ मेघो दृष्टनष्टः, एवमेव संसारे सर्वेऽपि भावाः सन्ति। अतस्तेषु स्वात्मार्थगवेषिणः का रतिः? एवं ध्यायन् समुत्पन्नप्रकृष्टवैराग्योऽरविन्दनृपस्तत्क्षणे जातिस्मरणं प्राप्तवान्। ततः पुत्रं राज्ये संस्थाप्य स प्रसन्नगुप्ताचार्यसन्निधौ दीक्षां गृहीतवान्। तत्पश्चादरविन्दमुनिः क्रमेण गीतार्थः सन्नवधिज्ञानमाप्तवान्। एकदाऽरविन्दमुनिर्गुरोरनुज्ञया एकाकी ग्रामानुग्रामं विहरन् मध्याह्नकाले मरुभूतिगजाश्रिताटवीं प्राप्तवान्। तत्रासौ मुनिश्छायाशीतले तरुतले समुपविष्टः।

सह्य नहीं हुआ। उसने अकाल में ही उस विचारे को भाग्यहीन पुरुष की इच्छा की तरह ध्वस्त कर दिया। तब इससे यही बात साबित होती है कि जिस प्रकार यह मेघ देखते २ विलीन हो गया इसी तरह से संसार के समस्त पदार्थ भी देखते २ नष्ट हो जाने वाले है। अतः मोक्षाभिलाषियों के लिये इनमें अनुराग करने को स्थान ही कहां है। अज्ञानी हैं वे जो इनमे अनुराग करते है। इस प्रकार की विचारधाराने अरविन्द राजा का जीवन बदल दिया उन्हों ने अपने पुत्र को राज्य दे कर वैराग्यभाव की जागृति से एवं जातिस्मरण ज्ञान से प्रसन्नगुप्ताचार्य के समीप जाकर भागवती दीक्षा धारण करली। दीक्षा धारण करने के बाद क्रमशः वे गीतार्थ भी बन गये और अवधिज्ञान को पाये। एक समय की बात है कि जब वे गुरु महाराज की आज्ञा ले कर एकाकी ग्रामानुग्राम विचरते २ मरुभूति का जीव वह हाथी जिस वनमें रहता है वहां पधारे और आकर मध्याह्न काल में एक वृक्ष की शीतल छाया

ભાગ્યહીન પુરૂષની ઇચ્છા જે પ્રમાણે છિન્નભિન્ન જ થવા સરજાય છે તે પ્રમાણે અકાળે જ તેને છિન્નભિન્ન કરી દીધો આથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે, જે પ્રકારે જોતજોતામાં એ મેઘ વિલીન થઇ ગયો એજ રીતે સંસારના સઘળા પદાર્થ પણ જોતજોતામાં નષ્ટ થઇ જનારા છે આથી મોક્ષના અભિલાષીઓએ એનામાં જરાપણ અનુરાગ રાખવો ન જોઇએ એમાં અનુરાગ રાખનારા અજ્ઞાની છે આ પ્રકારની વિચારધારાએ અરવિંદ રાજાના જીવનને તાત્કાલ જ બદલી નાખ્યું તેણે પોતાના પુત્રને રાજ્યગાદી ઉપર સ્થાપિત કરી વૈરાગ્ય ભાવની જાગ્રતિથી અને જાતિસ્મરણ જ્ઞાનથી પ્રસન્નગુપ્તાચાર્યની પાસે જઇને ભગવતી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી દીક્ષા ધારણ કર્યા પછી ક્રમશ તે ગીતાર્થ પણ બની ગયા અને અવધિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કર્યું એક સમયની વાત છે કે, જ્યારે તે ગુરૂ મહારાજની આજ્ઞા લઇને એકાકી ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતાં વિચરતા મરૂભૂતિનો જીવ એ હાથી જે વનમા રહેતો હતો ત્યા પહોચ્યા મધ્યાહ્નકાળ હોવાને કારણે

तस्मिन्नेव समये कोऽपि सार्थस्तत्र समागतः। तस्य सार्थस्याधिपतिरासीत्सागरदत्तनामा श्रेष्ठी। तेन सार्थवाहेन सह स सार्थो मुनिसमीपे समागत्य तं नत्वा तत्समीपे स्थितः। तस्मिन्नेव समये करेणुकाभिः सहितो मरुभूतिगजो जलविहारार्थं सरसस्तीरे समागतः। स तत्र सरसि जलविहारं कृत्वा जलं पीत्वा करेणुभिः परिवृतः उपरि समागत्य यावद्दिशः पश्यति, तावत्तरुतले स्थितः स सार्थस्तेनावलोकितः। तं सार्थं दृष्ट्वा क्रोधाध्मातचित्तः स करी त्वरितं यम इव समागतः। कालरूपिणं तं गजं समापतन्तं परिलोक्य सर्वेऽपि सार्थस्थिता मनुष्याः स्वप्राणान् रक्षितुमितस्ततः पलायिताः। अरविन्दमुनिस्तु तं बोधार्हं

मे विराजे। तब उसी समय एक सार्थ वहां उनके पास आया, इसका अधिपति था सागरदत्त सेठ वह सार्थ मुनिराज को नमन कर एक ओर बैठ गया। इतने में ही हथिनियों से सहित वह मरुभूति का जीव हाथी भी वहां जल क्रीडा के लिये तालाब के पास आया। वहां उसने स्वेच्छानुसार जल क्रीडा किया तथा मनमाना जल भी पीया। पश्चात् हथनियों से परिवृत हो कर वह पानी में से निकल कर तट पर आया। आते ही उसने ज्यों ही अपनी दृष्टि ऊँची कर और दृष्टि को इधर उधर दिशाओं की ओर डाली-तब उसकी निगाह में वृक्ष के नीचे बैठा हुआ सार्थ दिखलाई पडा। सार्थ को देखकर क्रोध से अन्ध होकर वह हाथी यमराज की तरह एकदम उसपर टूट पडने के लिये उसकी ओर बडे वेग से बढ गया। अपनी तरफ हाथी को विकरालरूप में आता हुआ देखकर सार्थ के लोग अपना प्राण बचाने के लिये इधर

એક વૃક્ષની શીતળ છાયા નીચે બીરાજમાન થયા. આ સમયે એક સાર્થ ત્યાં તેમની પાસે આવ્યો. એનો અધિપતિ હતો સાગરદત્ત શેઠ. એ સાર્થ મુનિરાજને નમન કરી એક બાજુ બેસી ગયો. એ સમયે હાથણીઓના વૃંદ સાથે મરૂભૂતિનો જીવ એ હાથી પણ ત્યાં જળક્રીડા કરવા માટે તળાવની પાસે આવી પહોંચ્યો, ત્યાં તેણે પોતાની ઈચ્છા અનુસાર જળક્રીડા કરી અને મનમાન્યું જળ પણ પીધું. પછી હાથણીયોથી ઘેરાયેલ એ હાથી પાણીમાંથી નીકળીને બહાર આવ્યો. બહાર નીકળતાં તેણે પોતાની દૃષ્ટિ ઉંચી કરી અને ચારે તરફ જોવા માંડયું. ત્યારે તેની નજર વૃક્ષની નીચે બેઠેલા સાર્થ ઉપર પડી. સાર્થને જોતાં જ એકાએક તેનામાં ક્રોધ ઉત્પન્ન થયો અને ક્રોધથી આંધળો બનેલ એ હાથી યમરાજની માફક એકદમ એના ઉપર તૂટી પડવા ઘણા જ વેગથી તેના તરફ દોડયો. હાથીને વિકરાળરૂપ કરી પોતાના તરફ દોડયો આવતો જોઈને સાર્થના માણસો પોતાના જીવને બચાવવા અહીં તહીં નાસી છૂટયા. જ્યારે અર

स्वावधिज्ञानेनावगम्य कायोत्सर्गं कृत्वाऽवस्थ इव तत्र तस्थौ। अथ क्रुद्धः स करी तत्पार्श्वमागतः। तं तथा सुस्थिरं विलोक्य समुपशान्तकोपः स गजस्तत्पुरतः स्थिरतया संस्थितः। अथ सोऽरविन्दमुनिः कायोत्सर्गं पारयित्वा तस्य गजस्योपकृतये इत्याह–भो! भद्र मरुभूतिभवं किं न स्मरसि? अरविन्दनृपं मामपि किं न जानासि? अये कृतिन्! पूर्वभवे प्रतिपन्नं श्रावकधर्मं किं विस्मृतोऽसि? इत्थं तेनोक्तः स गजो जातिस्मृतिमाप्तवान्। ततः स स्वशुण्डादण्डमुदूर्ध्वीकृत्य तं मुनिं नमति स्म। तदनु स गजस्तेन मुनिनोपदिष्ट

इधर भाग गये। वे अरविंद मुनिराज तो कायोत्सर्ग धारण कर बैठ गये। मुनिराजने अवधिज्ञान द्वारा यह जान लिया था कि यह मरुभूति का जीव है और बोधके योग्य है। हाथी दौडता हुआ मुनिराज के बिल कुल समीप आ गया। मुनिराज को स्थिर देखकर हाथी का क्रोध उपशान्त हो गया और वह स्थिर भाव से उनके ही सामने स्थिर होकर खडा रहा। हाथी को उपशान्त देखकर मुनिराज ने कायोत्सर्ग को पार कर उस हाथी की भलाई के निमित्त इस प्रकार कहा–भो गजराज! क्या तुम अपने मरुभूति के भवको और मुझ अरविन्द राजा को भूल गये हो?। तथा पूर्वभव में ग्रहण किये गये श्रावक धर्म को भी भूल गये हो?। तुम्हें क्या याद नहीं है कि तुम इससे पहिले भव में मरुभूति थे और मैं तुम्हारा राजा अरविन्द हूं। तथा तुमने श्रावक धर्म अंगीकार किया था। इस प्रकार मुनिराज ने जब कहा तो उस हाथी को जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। इससे उसने उसी समय अपने सुण्डादण्ड को ऊँचा करके मुनिराज को नमन किया।

विंद मुनीराज तो कायोत्सर्ग धारण करीने બેસી ગયા. મુનિરાજે અવધિજ્ઞાન દ્વારા એ જાણી લીધું હતું કે, આ મરૂભૂતિના જીવ છે અને બોધને યોગ્ય છે હાથી દોડતો દોડતો મુનિરાજની પાસે આવી પહોંચ્યો ત્યારે મુનિરાજને સ્થિર જોઈને તેનો ક્રોધ શાન્ત થઈ ગયો અને તે સ્થિરભાવથી મુનિરાજની સામે આવી ઉભો રહી ગયો હાથીએ ક્રોધને ત્યાગી દીધો છે અને સ્થિર થઈને ઉભેલ છે તે જાણીને મુનિરાજે કાયોત્સર્ગને પાર કરી એ હાથીની ભલાઈના માટે આ પ્રમાણે કહ્યુ હે ગજરાજ! શુ તમે તમારા મરૂભૂતિના ભવને અને મને અરવિંદ રાજાને ભૂલી ગયા છો? તેમજ પૂર્વભવમા ગ્રહણ કરેલ શ્રાવક ધર્મને પણ ભૂલી ગયા છો? તમોને એ ધ્યાનમા નથી કે, પૂર્વભવમા તમે મરૂભૂતિ હતા અને હુ તમારો રાજા અરવિંદ હતો આ પ્રકારે મુનીરાજે જ્યારે કહ્યુ ત્યારે એ હાથીને જાતિસ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ ગયુ આથી તેણે એજ સમયે પોતાની સૂંઢને ઉંચી કરી મુનિરાજને નમન

जैनेन्द्रधर्मं प्रतिपद्य गुणाकरं तं मुनिवरं नत्वा स्वस्थानं गतः। अथ ते सार्थिकास्तमद्भुतं दृश्यं दृष्ट्वा तस्य मुनिवरस्य समीपे समागत्य तं भक्तिबहुमानपुरस्सरं प्रणतवन्तः। अथ ते मुनिवरं पप्रच्छुः-भगवन्! को भवान्? कश्च भवतां धर्मः? ततो मुनिः स्वकीयं नाम धर्मं च उक्त्वा तेभ्यो जिनप्रोक्तं सर्वतो विशुद्धं धर्मं प्रोक्तवान्। ते सर्वेऽपि मुनेरुपदेशं श्रुत्वा श्रावकधर्मं प्रतिपद्य जिनेन्द्रप्रोक्तमार्गानुयायिनो जाताः। मुनेरुपदेशान्मरुभूतिजीवः स हस्ती मुनिवदीर्यया चरन् षष्ठादिकं तपः कुर्वन् पारणायां शुष्कपर्णादिकम् अभ्यवहरन्, वन्यमहिषाद्यालोडितं प्रासुकं पल्वलजलं पिबन् परित्यक्तसकलभोगः शुभाशयो जातः।

इसके बाद मुनिराज ने उसे जैनेन्द्रधर्म का उपदेश दिया। धर्मका उपदेश सुनकर हाथी ने उसको अंगीकार कर लिया और गुणों के सागर मुनिराज को नमन कर फिर वह अपने स्थानपर चला गया। जब सार्थजनों ने इस तरह का यह अद्भुत दृश्य देखा तो देखकर वे सब के सब पास मे आकर भक्ति बहुमान पुरस्पर मुनिराज को वन्दन किया। पश्चात् उनसे पूछने लगे-भगवन! आप कौन है? क्या आप का धर्म है? नाम भी आप का क्या है? मुनिराज ने इसके उत्तर मे अपना नाम एवं धर्म आदि सब कहा। पश्चात् जिनेन्द्र का धर्म क्या है वह भी उनको कहा और वह भी फरमाया कि यही धर्म सर्वतो विशुद्ध है। इस प्रकार मुनिवर का धार्मिक उपदेश सुनकर वे सब के सब सार्थजन श्रावक धर्म को अंगीकार कर जिनेन्द्र मार्ग के अनुयायी बन गये। मुनिराज के उपदेश से मरुभूति का जीव भी मुनि की तरह ईर्यापथ से चलने लगा तथा छठ आदिक की तपस्या भी करने लगा

કર્યું આ પછી મુનિરાજે તેને જીનેન્દ્ર ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. ધર્મના ઉપદેશ સાભળીને હાથીએ તેનો અંગીકાર કરી લીધો અને ગુણોના સાગર મુનિરાજને નમન કરીને પછી તે પોતાના સ્થાન ઉપર ચાલી ગયો. જ્યારે સાર્થજનોએ આ પ્રકારનુ અદ્ભૂત દ્રશ્ય જોયુ ત્યારે તેમના હૃદયમા પણ ધર્મભાવની જાગૃતિ થઈ આવી અને હાથીના ચાલી ગયા પછી તેઓ મુનિરાજની પાસે આવી પહોચ્યા અને ખૂબજ ભક્તિભાવ પૂર્વક મુનિરાજના ચરણમા વદન કરીને તેમને પૂછ્યુ-ભગવાન! આપ કોણ છો? આપનો શુ ધર્મ છે? આપનુ નામ શુ છે? મુનિરાજે ઉત્તરમા પોતાનુ નામ તથા ધર્મ આદિ સઘળો વૃત્તાત કહી સભળાવ્યો પછીથી જીનેન્દ્રનો ધર્મ કેવો છે એ પણ એમને સમજાવ્યુ અને કહ્યુ કે, આ ધર્મ સપૂર્ણ વિશુદ્ધ છે આ પ્રકારનો મુનિરાજનો ધાર્મિક ઉપદેશ સાભળીને એ સઘળા સાર્થજનોએ શ્રાવક ધર્મનો અંગીકાર કર્યો અને જીનેન્દ્ર માર્ગના અનુયાયી બની ગયા મુનિરાજના ઉપદેશથી મરૂભૂતિનો જીવ હાથી પણ મુનિની માફક ઈર્યાપથથી ચાલવા લાગ્યો તથા છઠ

इतश्च कमठतापसः सोदरं हत्वाऽप्यनुपशान्तकोपः कालसमयं प्राप्य मृत्वा विन्ध्याटव्यामत्युत्कटः कुक्कुरजातीय उरःपरिसर्पो जातः। स एकदा तत्रैव विन्ध्याटव्यां परिभ्रमन् प्रचण्डमार्त्तण्डकिरणसंतप्तं पयः पातुं सरसि प्रविशन्तं मरुभूतिमतङ्गजमपश्यत्। अथ स गजो दैवयोगतः पङ्के निमग्नः। तदाऽसौ कमठजीवः कुक्कुटजातीयः सर्पः समुद्दीप्तवैरभावः समुड्डीय तन्मस्तके दष्टवान्।

एवं पारणा के दिन शुष्क पर्णादिक का आहार करने लगा। जब इसको प्यास लगती तो यह वन्यमहिष आदि जानवरों द्वारा आलोडित प्रासुक पल्वल-छोटे खड्डे के जल को पी लेता। इस तरह सकलभोगों का परित्याग कर यह सर्व प्रकार से शुभाशय वाला बन गया।

उधर मरुभूति भाई को मारकर भी जब कमठ का क्रोध उपशांत नहीं हुआ वह उसी क्रोध से जलता हुवा काल समय पाकर मरा और विन्ध्याटवी में अत्युत्कट कुक्कुट जाति का उरःपरिसर्प-सर्पपने उत्पन्न हुआ। एक दिनकी बात है कि जब मरुभूति का जीव यह हाथी उसी विन्ध्याटवी में घूमता हुवा प्रचण्डमार्त्तण्ड की किरणों से संतप्त होकर पानी पीने के लिये तालाब मे घुस रहा था तब घुसते हुए इसको उस सर्पने देख लिया। गर्मी की अधिकता से तालाब का पानी बहुत कुछ सूख गया था। अतः इसके तटपर कादव जमा हुआ था। हाथी प्रविष्ट होते ही कर्मवश उस कादव मे बुरी तरह फस गया। जब उस सर्पने

આદિકની તપસ્યા પણ કરવા લાગ્યો. અને પારણાના દિવસે સૂકા પાંદડા વગેરેનો આહાર કરવા માંડ્યો. જ્યારે તેને તરસ લાગતી ત્યારે તે વનભેંસ આદિ જનાવરો જેને આળોટતા એવા પાણીના ખાડાઓમાંથી પાણી પીઈ લેતો. આ પ્રમાણે સઘળા ભોગાનો પરિત્યાગ કરીને તેમવ પ્રકારના શુભાશયવાળો બની ગયો.

બીજી બાજુ પોતાના ભાઈ મરૂભૂતિને મારી નાખવા છતાં પણ કમઠનો ક્રોધ શાન્ત ન થયો. અને એ ક્રોધથી બળી રહેલ એવો એ કમઠ રખડી રજળીને મર્યો ત્યારે તેનો જીવ વિન્ધ્યાટવીમાં કુકુટ જાતીના સર્પરૂપે સર્પપણાથી ઉત્પન્ન થયો. એક દિવસની વાત છે કે, મરૂભૂતિનો જીવ હાથી એજ વિન્ધ્ય અટવીમાં ફરતો ફરતો સૂર્યના પ્રખર તાપથી ત્રાસ પામતો પાણી પીવા માટે તળાવની પાસે પહોંચ્યો. હાથીને પાણી પીવા તળાવમાં જતાં સર્પે જોઈ લીધો. આ સમયે પ્રખર એવા તાપને લઈ તળાવનું મોટા ભાગનું પાણી સૂકાઈ ગયું હતું અને ચારે બાજુ કાદવના થર જામી પડેલ હતા. પાણીના તરસથી અકળાઈ રહેલ એ હાથીએ કાદવમાં થઈને પાણી તરફ જવા માંડ્યું. પરંતુ વચ્ચેજ તે કાદવમાં ઉંડે ખૂતી ગયો. આ

ततो विषव्याप्तशरीरः स गजः स्वावसानसमयमुपस्थं विज्ञायाऽनशनं कृत्वा दुःसहां विषवेदनां सहमानः पञ्चनमस्क्रियाः स्मरन् प्राणांस्त्यक्तवान् ॥

॥ इति द्वितीयो गजभवः ॥

॥ अथ देवभवस्तृतीयः ॥

इत्थं प्राणान् परित्यज्य स सहस्रारनामकेऽष्टमे देवलोके सप्तदशसागरायुष्को देवो जातः । कुक्कुटनागश्चाऽप्यन्यदा मृत्वा पञ्चमपृथिव्यां सप्तदशसागरायुष्को नारको जातः ।

हाथी को कादव में फँसा हुआ देखा तो वह उडकर वहां आया-और आते ही उसने उसके मस्तक पर डंक लगा दिया। डंक लगते ही हाथी के समस्त शरीर में विष फैल गया। हाथीने अपने अवसान का समय समीपस्थ जानकर समाधि मरण धारण कर लिया और आहार पानी का सर्वथा परित्याग कर उस दुःसह विष वेदना को समता भाव से सहन किया। इस तरह पंच नमस्कार मंत्र का जाप करते हुए उसने अपने प्राणों का विसर्जन किया इससे वह इस तृतीय भव में देवकी पर्याय में जाकर उत्पन्न हो गया। सहस्रार नामक अष्टम देवलोक का यह देव हुआ वहा इसकी आयु सत्रह सागर की हुई। कुक्कुट नाग का जीव भी अपनी पर्याय को छोडकर पंचम पृथिवी में सत्रहसागर की आयु का धारक नारक हुआ।

यह मरुभूति का द्वितीय और तृतीय भव है।

તકનો લાભ લઈ કમઠના જીવ એ સર્પે તેના ઉપર તરાપ મારીને તેના માથા ઉપર ડંખ માર્યો સર્પના કરડવાથી તેનુ ઝેર હાથીના સારાએ શરીરમા પ્રસરી ગયુ હાથીએ પોતાનો મરણ કાળ નજીક જાણીને સમાધી મરણ ધારણ કરી લીધુ અને આહાર પાણીનો પરિત્યાગ કરી સર્પના ઝેરની દુ સહ વેદનાને સમતા ભાવથી સહન કરી અને પંચ નમસ્કાર મંત્રનો જાપ કરતા કરતા તેણે પોતાના પ્રાણોનુ વિસર્જન કર્યું. આથી તે ત્રીજા ભવમા દેવ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયા અને સહસ્રાર નામના આઠમા દેવલોકમા તે દેવ થયા ત્યા એમની આયુ સત્તર સાગરની હતી કુક્કુટ નાગનો જીવ પણ પોતાની પર્યાયને છોડીને પાચમી પૃથ્વીમા સત્તર સાગરની આયુષ્યવાળો નારક થયો.

આ મરૂભૂતિનો બીજો અને ત્રીજો ભવ થયો

। अथ किरणवेगभवश्चतुर्थः ॥

अथ स मरुभूति गजजीवः स्वायुःस्थितिभवक्षयेण तस्माद् देवलोकाच्च्युतोऽस्मिन् जम्बूद्वीपे पूर्वमहाविदेहे सुकच्छविजये वैताढ्यपर्वते स्वशोभया विनिर्जितालकापा तिलकानामनगर्याः स्वामिनो विद्युद्गति नामकस्य विद्याधरस्य कनकतिलका नाम्न्या राज्याः कुक्षौ समवतीर्णः। ततः सा कनकतिलका गर्भसमयेऽतिक्रान्ते जनमनोनयनानन्दकरं सुकुमारं कुमारं जनितवती। मातापितृभ्यां तस्य महता महोत्सवेन 'किरणवेग' इति नाम कृतम्। क्रमेण प्रवर्द्धमानवयसा सह तेन कलाचार्यसमीपे सकलाकलाऽधीता। एवं प्रतिपक्षसकलकल'

मरुभूति का किरण वेग नामका चौथा भव—

जब सत्रहसागर प्रमाण आयुवाले सहस्रार देवलोक मे रहते २ मरुभूति के जीव की पर्याय समाप्त हो चुकी तब वह वहां से चवा। और चवते ही इस जंबूद्वीप मे पूर्व महाविदेहस्थ सुकच्छ विजयान्तर्गत वैताढ्य पर्वत पर वर्तमान तिलक नाम की नगरी जो अपनी शोभा से अलकापुरी को भी पुरी तरह से तिरस्कृत करती थी। उस में उसके स्वामी विद्युद्गति विद्याधर की कनकतिलका पत्नी की कुक्षि में अवतरित हुआ। गर्भ का समय जब समाप्त हो चुका तब कनकतिलकाने जनमनोनयनानंदकारी एक सुकुमार कुमार को जन्म दिया। माता पिता को इसके जन्म से अपार हर्ष हुआ। उन दोनोंने इसका नाम 'किरणवेग' रखा। किरणवेग द्वितीया के चन्द्रमा की तरह क्रमशः वृद्धिंगत होने लगा और उमर की वृद्धि के साथ २ कलाओं का अभ्यास भी करने लगा। जब वह सकल कलाओं की प्राप्ति से विशेष निष्णात

મરૂભૂતિનો કિરણવેગ નામનો ચોથો ભવ—

૧૭ સાગર પ્રમાણ આયુવાળા સહસ્રાર દેવલોકમા રહેતા રહેતા મરૂભૂતિના જીવની દેવલોકની આયુ પૂરી થઈ ત્યારે તે દેવલોકથી ચવીને જંબુદ્વીપમા પૂર્વ મહાવિદેહસ્થ સુકચ્છ વિજયાન્તરગત વૈતાઢ્ય પર્વત ઉપર આવેલી તિલક નામની નગરી કે જે પોતાની શોભાથી અલકાપુરીના જેવી શોભાયમાન હતી તેમા ત્યાના સ્વામી વિદ્યુદ્ગતિ વિદ્યાધરની કનક તિલકા પત્નીની કૂખેથી અવતર્યો ગર્ભનો સમય પૂરો થયો ત્યારે કનકતિલકાએ જોનારના મનને અતિ આનંદ પમાડે તેવા સુકુમાર પુત્રને જન્મ આપ્યો માતાપિતાને પુત્રના જન્મથી ઘણોજ હર્ષ થયો આ બન્નેએ પુત્રનુ નામ 'કિરણવેગ' રાખ્યુ બીજના ચંદ્રમાની માફક કિરણવેગ ક્રમથી વધવા લાગ્યો ઉમરના વધવાની સાથોસાથ કળાઓનો અભ્યાસ પણ કરવા માંડયો જ્યારે તેણે યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત કરી ત્યારે સઘળી કળાઓમા પણ ભારે નિપુણતા મેળવી

स यावन् वयः प्राप्य रूपचातुर्यौदार्यादिगुणगणालङ्कृता अनेका राजकन्याः परिणीतवान्। तं राज्यभारोद्वहनक्षमं विलोक्य विद्युद्गतिर्विद्याधरस्तस्मै राज्यं समर्प्य स्वयं गुरुगुप्ताचार्यसमीपे प्रव्रजितः। गृहीतराज्यभारः किरणवेगो न्यायेन प्रजाः परिपालयन् बहूनि वर्षाण्यतिक्रान्तवान्। एकदा स सुरगुरुनाम्नो मुनेर्धर्मदेशनां श्रुत्वा सञ्जाततीव्रवैराग्यो राज्यभारं पुत्रे न्यस्य स्वयं तत्सविधे प्रव्रजितः। क्रमेण गीतार्थः स किरणवेगमुनिरेकाकिविहाराभिग्रहं गृहीत्वा नभो-

ण्य औदार्य आदि गुणगणों से अलकृत अनेक राजकन्याओं के साथ इसको विवाह भी कर दिया। धीरे २ जब कुमार राज्यसचालन के योग्य बन गया तब विद्युद्गति विद्याधरने उसको राज्यभार समर्पित कर स्वयं गुप्ताचार्य गुरु महाराज के समीप भागवती दीक्षा धारण करली। किरणवेगने बडी बुद्धिमत्ता के साथ न्यायनीतिपूर्वक राज्य का सचालन करते हुए प्रजाजनों को खूब आनद से रखा। इस प्रकार राज्य का भार सभालते २ किरणवेग के कितनेक वर्ष व्यतीत हो चुके। एक समय की बात है कि किरणवेग के सुरगुरु नामके किसी मुनि-राज के मुख से धार्मिक देशना का ज्ञान प्राप्त करके उसके प्रभाव से चित्त में वैराग्य का तीव्र रग जम गया। इसलिये उसने अपने पुत्र पर राज्य का भार स्थापित कर स्वय उन मुनिराज के पास भागवती दीक्षा धारण करली। दीक्षा लेकर उन्होंने क्रमशः आगमों का गुरु के समीप खूब अध्ययन किया इस से वे गीतार्थ हो गये। वे एकाकी विहार

લીધી હતી રૂપ, ચારિત્ર અને ઔદાર્ય આદિ ગુણોથી શોભાયમાન એવા એ કુમા-રના અનેક રાજકન્યાઓની સાથે લગ્ન પણ કરી દેવામા આવ્યા ધીરે ધીરે કુમાર જ્યારે રાજ્યનો કારોબાર ચલાવવામા કુશળ બની ગયો ત્યારે વિદ્યુદ્ગતિ વિદ્યાધરે એને રાજ્યગાદિ ઉપર બેસાડીને ગુપ્તાચાર્ય મહારાજની પાસે જઈને ભાગવતી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી કિરણવેગે ઘણીજ બુધ્ધિમત્તાની સાથે ન્યાયનીતિ પૂર્વક રાજ્યનુ સચાલન કરી પ્રજાને ખૂબ આનદમા રાખી આપ્રમાણે રાજ્યનો ભાર સભાળીના સભાળતા કિરણવેગના કેટલાક વરસો વ્યતીત થઈ ગયા એક સમયની વાત છે કે, કિરણવેગે સુરગુરૂ નામના કોઈ એક મુનિરાજના મુખેથી ધાર્મિક દેશનાનુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું એના પ્રભાવથી તેના ચિત્તમા વૈરાગ્યનો તીવ્ર રગ જામી ગયો આથી તેણે પોતાના પુત્રને રાજ્યગાદી સુપ્રદ કરી દઈને પોતે મુનિરાજની પાસેથી ભાગવતી દીક્ષા ધારણ કરી લીધી દીક્ષા લીધા પછી તેમણે ગુરૂની પાસેથી આગમોનુ ખૂબ જ્ઞાન મેળવ્યુ આગમોના અધ્યયનથી તેઓ ગીતાર્થ બની ગયા અને

गत्या विहरन् पुष्करद्वीपमायातः। स तत्र कनकगिरिनाम्नो गिरेरन्तिके कायो त्सर्गपुरस्सरं विविधं तपोऽतप्यत।

पञ्चमनरकात्स्वायुःस्थितिमर्यादया निर्गतः कमठजीवस्तस्यैव गिरेर्गह्वरे महाविषः सर्पो जातः। स चैकदा गिरिसमीपे परिभ्रमन् कायोत्सर्गेण संस्थितं ध्यानस्थं तं मुनिवरं ददर्श। ततः पूर्वभववैरेण क्रुद्धः स सर्पस्तस्य मुनिवरस्य प्रत्यङ्गं ददंश। इत्थं सर्पदष्टः किरणवेगमुनिरनशनं कृत्वाऽचिन्तयत्-सर्पोऽसौ मम सुहृत्, कर्म निर्जरणे सहायकारी। अतोऽसौ प्रशंसनीय एव न तु निन्द्यः। इत्थं विचिन्तयन् समुधीः प्राणान् परित्यक्तवान् ॥

करते हुए आकाशमार्ग से पुष्करद्वीप में आये। वहां पर उन्होंने कनक गिरि नामक पर्वत के पास कायोत्सर्गपूर्वक अनेक प्रकार के तपों का तपना प्रारंभ कर दिया।

इधर पंचम नरक से अपनी आयु की समाप्ति के बाद कमठ का जीव वहां से निकला और निकल कर उसी गिरि की गुफा में महा विषैला सर्प हो गया। एक दिन की बात है कि जब वह गिरि के समीप घूम रहा था तब उसने कायोत्सर्ग में स्थित ध्यानस्थ उन किरणवेग मुनिराज को देखा। देखते ही उसके क्रोध का ठिकाना नहीं रहा-पूर्वभव के बद्धवैर से क्रुद्ध होकर उसने मुनिवर के प्रत्येक अंग पर डंक मारा। इस प्रकार सर्प से दष्ट होकर वे किरणवेग मुनि अनशन करके विचार करने लगे कि यह सर्प मेरा मित्र है क्यों कि कर्मों की निर्जरा करने में

એકાકી વિહાર કરતા કરતા આકાશ માર્ગથી પુષ્કર દ્વીપમા પહોચ્યા ત્યા તેમણે કનકગિરી નામના પર્વતની પાસે કાયોત્સર્ગ પૂર્વક અનેક પ્રકારના તપોને તપવાના પ્રારભ કર્યો

બીજી બાજુ પાચમા નરકમાથી પોતાની આયુની સમાપ્તિ પછી કમઠને જીવ ત્યાથી નીકળીને કનકગિરિ પર્વતની ગુફામા મહાવિષવાળા સર્પની પર્યાયમા અવતર્યો એક દિવસની વાત છે કે, જ્યારે તે ગિરિની પાસે ઘૂમી રહેલ હતો ત્યારે તેણે કાયોત્સર્ગમા સ્થિત ધ્યાનસ્થ એવા કિરણવેગ મુનિરાજને જોયા જોતા જ તેના ક્રોધનુ ઠેકાણુ ન રહ્યુ પૂર્વભવના બધાયેલ વેરથી ક્રોધિત બનીને તેણે મુનિવરના પ્રત્યેક અગ ઉપર ડખ માર્યો આ પ્રકારે સર્પના ડસવાથી તે કિરણવેગ મુનિરાજ અનશન કરીને વિચારવા લાગ્યા કે, આ સર્પ મારો મિત્ર છે. કેમકે, કર્મોની નીર્જરા કરવામા તે મને સહાયક બનેલ છે આથી

(अथ देवभवः पञ्चम)

ततः सोऽच्युतनामके द्वादशे देवलोके जम्बूद्रुमावर्ते नाम्नि विमाने द्वाविंशतिसागरोपमायुः प्रभाभासुर सुरो जातः। स सर्पस्तु वने परिभ्रमन्नेकदा दवाग्निना दग्धो मृतो भूयः षष्ठपृथिव्यामुत्कृष्टस्थितिको नारको जातः॥

(अथ वज्रनाभभव षष्ठः)

ततः स किरणवेगर्षिजीवः स्वायुःस्थितिभवक्षयेणाऽच्युतकल्पाच्च्युतोऽत्र जम्बूद्वीपे पश्चिमविदेहक्षेत्रे सुगन्धिविजये रम्याया शुभङ्करापुर्या अधिपस्य

यह मेरा सहायक बना है। इसलिये यह प्रशंशनीय ही है निन्द्य नही। इस प्रकारकी उज्ज्वल विचारधारा से ओतप्रोत होकर किरणवेग मुनिराजने अपने प्राणोंका परित्याग करदिया।

यह मरुभूति का किरणवेग नामक चौथा भव है।

॥ मरुभूति का पाचवा देवभव ॥

प्राणों का परित्याग करके वे अच्युत नामके बारहवें देवलोकमें जम्बुद्रुमावर्तनामक विमानमें बाईससागर की स्थितिवाले देव हुए। इनका शरीर बडा प्रभा से भासुर होने से इनका नाम प्रभाभासुर हुआ। सर्पने भी भ्रमण करते हुए एक दिन उसी वन मे दावाग्नि से जलकर अपने प्राणों का परित्याग कर छठी नरक का वह उत्कृष्ट स्थिति का धारक नारकी बना।

॥ यह पांचवाँ भव हैं ॥

मरुभूति का छट्ठा वज्रनाभका भव—

किरणवेग मुनि का जीव अपने जीवन का समय समाप्त कर उस

તે પ્રસશનીય છે, નિન્નીય નહી આ પ્રકારની ઉજ્વળ વિચારધારાથી ઓતપ્રોત બનીને કિરણવેગ મુનિરાજે પોતાના પ્રાણોના પરિત્યાગ કરી દીધો.

આ મરૂભૂતનો કિરણવેગ નામક ચોથો ભવ થયો

પાચમો દેવ ભવ

પ્રાણોના પરિત્યાગ કરીને તે અચ્યુત નામના બારમા દેવલોકમા જમ્બૂદ્રુમાવર્ત નામના વિમાનમા બાવીસ સાગરની સ્થિતિવાળા દેવ થયા તેમનુ શરીર ત્યા પ્રભાથી ભાસુર હોવાથી તેમનુ નામ પ્રભાભાસુર થયુ સર્પ પણ ભ્રમણ કરતા કરતા એક સમયે તે વનમા દાવાનળથી બળીને પોતાના પ્રાણોનો ત્યાગ કરીને છઠા નરકમા નારકી બન્યો

આ પાચમો ભવ થયો

મરૂભૂતિનો છઠ્ઠો વજ્રનાભનો ભવ —

કિરણવેગ મુનિનો જીવ પોતાના જીવનનો સમય સમાપ્ત કરી તે અચ્યુત

महावीर्यस्य वज्रवीर्यनाम्नो नृपस्यापरलक्ष्म्या इव लक्ष्मीवत्या भार्यायाः कुक्षौ समवतीर्णः। अथ व्यतीते गर्भसमये लक्ष्मीवती राज्ञी सूर्यं प्राचीव तेजस्विनं सुत जनितवती। ततो द्वादशेऽहनि मातापितृभ्यां तस्य दारकस्य महता महोत्सवेन वज्रनाभ इति नामकृतम्। क्रमेण प्रवर्द्धमानः स वज्रनाभकुमारः कलाचार्यात् सकलाः कलाः कलयित्वा यौवन वयः प्राप्तवान्। अथान्यदा राजा वज्रवीर्यो राज्यभारोद्वहनक्षम स्वसुत वज्रनाभ विलोक्य तस्मिन् राज्यभार समर्प्य स्वय प्रव्रजितो जात'। वज्रनाभोऽपि प्रजा परिपालयन् बहूनि वर्षाणि

अच्युत स्वर्ग से च्यव कर वह इस जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में सुगन्धिविजय में रमणीय जो शुभकरपुरी थी उसके अधिपति महा-पराक्रमशाली वज्रवीर्य राजा थे। उनकी साक्षात् लक्ष्मी जैसी लक्ष्मी-वती रानी थी। उसकी कुक्षि में अवतीर्ण हुआ। लक्ष्मीवतीने गर्भ का समय व्यतीत होने पर पूर्व दिशा जैसे तेजस्वी सूर्य को जन्म देती है उसी तरह से तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। मातापिताने पुत्र के प्रसव की प्रकृष्ट रीति से प्रमोद पुलकित होकर पुत्रोत्सव ग्यारह दिन-तक मनाया। पश्चात् बारहवें दिन बडे उत्सव के साथ उन्होंने उसका 'वज्रनाभ' नाम रखा। वज्रनाभ क्रमशः वृद्धिंगत होने लगा। उमर की वृद्धि के साथ २ उसने कलाचार्य के पास से समस्त कलाओं का अभ्यास भी कर लिया। जब वह यौवन के रग से खिल चुका तो पिताने इसको तरुण देखकर अनेक राजकन्याओं के साथ इसका विवाह सबध भी कर दिया। वज्रनाभकुमार जब राजकाज के सभालने योग्य बन गया तो पिताने उसको राज्य का भार सोंपकर दीक्षा धारण

સ્વર્ગથી ચવીને આ જમ્બૂદ્વીપના પશ્ચિમ વિદેહ ક્ષેત્રમા સુગ ધિ વિજયમા રમણીય એવી જે શુભકર પુરી હતી તેના અધિપતિ મહાપરાક્રમશાળી વજ્રવીર્ય રાજાની સાક્ષાત્ લક્ષ્મી જેવી લક્ષ્મીવતી રાણી હતી તેની કૂખેથી અવતર્યો ગર્ભનો સમય પૂરો થતા લક્ષ્મીવતીએ પૂર્વ દિશા જે રીતે સૂર્યને જન્મ આપે છે તે રીતે તેજસ્વી પુત્રને જન્મ આપ્યો માતાપિતાએ પુત્રના જન્મથી ઉત્સાહિત બનીને અગ્યાર દિવસ સુધી પુત્ર જન્મનો ઉત્સવ મનાવ્યો પછી બારમા દિવસે ઘણાજ ઉત્સાહથી પુત્રનુ નામ વજ્રનાભ રાખ્યુ વજ્રનાભ ક્રમશ વધવા લાગ્યા ઉમરની વૃદ્ધિ થતા તેણે કલાચાર્યની પાસેથી સઘળી કળાઓનો અભ્યાસ પણ કરી લીધો જ્યારે તે યુવાવસ્થાએ પહોચ્યા ત્યારે પિતાએ તેને તરૂણ જોઇને અનેક રાજકન્યાઓની સાથે તેનો વિવાહ સ બ ધ પણ કરી દીધો વજ્રનાભકુમાર જ્યારે રાજ કાર્યને સ ભાળવામા યોગ્ય બની ગયા ત્યારે પિતાએ રાજ્યનો ભાર તેને સુપ્રદ કરી દીક્ષા

राज्य कृत्वा विरक्तिमापन्नो राज्ये स्वसुत चक्रायुध सस्थाप्य स्वय क्षेमङ्कर नाम्न आचार्यस्य समीपे प्रव्रजितवान्। गृहीतदीक्ष स वज्रनाभमुनिस्तीव्र तपस्तपन् परीषहान् सहमानः क्रमेणाकाशगमनादिका लब्धीरासवान्। अथान्यदा गुरोराज्ञया एकाकी विहरन स वज्रनाभऋषिराकाशमार्गेण सुकच्छविजयेऽगच्छत्। अन्येद्यु स विहरन् भीमकान्तारमध्यग ज्वलनगिरिं गत तावत्सूर्योऽप्यस्ताचल

करली। वज्रनाभ कुमारने न्यायनीति के अनुसार राज्यका सचालन करते हुए प्रजाजनों को खूब सतुष्ट रखा। इस तरह राज्य करते २ जब अपनी आयुका अधिक समय व्यतीत हो चुका, तब वज्रनाभ राजाने भी चक्रायुध पुत्र को राज्य सचालन के योग्य देखकर उस पर राज्य का भार स्थापित कर क्षेमकर नाम के आचार्य के पास मुनिदीक्षा धारण करली। दीक्षित होते ही वज्रनाभ मुनिराजने तीव्रतपों का तपना एव परीषहों का शातिभाव से सहन करना, इस ओर ही अपना समस्त समय व्यतीत करना प्रारभ कर दिया। इस तरह उनको क्रमश आकाश गमनादिक अनेक लब्धिया प्राप्त हो गई। एक दिन वज्रनाभ मुनिराजने अपने गुरुदेव से एकाकी विहार करने की आज्ञा प्राप्त करली–सो वे एकाकी विहार करते हुए आकाशमार्ग से सुकच्छविजय में आ पहुँचे। वहा आकर किसी एक समय वे विहार करते २ भयकर जगल के बीचमें स्थित ज्वलनगिरि पर्वत पर आये। जिस समय ये मुनिराज इस पर्वत पर आये थे उस समय सूर्य अस्ता

ધારણ કરી લીધો વજ્રનાભકુમારે ન્યાયનીતિ અનુસાર રાજ્યનું સંચાલન કરીને પ્રજાને ખૂબજ સંતોષ આપ્યો આ પ્રમાણે રાજ્ય કરતાં કરતાં જ્યારે તેમની આયુનો ઘણો સમય વ્યતીત થઈ ચૂક્યો ત્યારે વજ્રનાભ રાજાએ પણ પોતાના ચક્રાયુધ નામના પુત્રને રાજ્ય સંચાલન કરવામાં યોગ્ય જાણીને તેને રાજ્યગાદી સુપ્રત કરી ક્ષેમંકર નામના આચાર્યની પાસે તેમણે મુનિદીક્ષા ધારણ કરી લીધી દીક્ષિત થતાંજ વજ્રનાભ મુનિરાજે અત્યંત કઠણ એવાં તીવ્રતપો તપવાનો પ્રારંભ કરી દીધો અને પરીષહોને શાંતિભાવથી સહન કરવા એ તરફજ પોતાનો સઘળો સમય વ્યતીત કરવાનો પ્રારંભ કરી દીધો આ પ્રકારે તેમને ક્રમશ આકાશ ગમન આદિ અનેક લબ્ધિયો પ્રાપ્ત થઈ ગઈ એક દિવસ વજ્રનાભ મુનિરાજે પોતાના ગુરુદેવ પાસેથી એકાકી વિહાર કરવાની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરી લીધી આ પછી તેઓ એકાકી વિહાર કરતા આકાશ માર્ગથી સુકચ્છ વિજયમાં પહોંચ્યા ત્યાં પહોંચીને વિહાર કરતાં કરતાં તેઓ ભયંકર જંગલની અંદરના જ્વલનગિરિ પર્વત ઉપર પહોંચ્યા જે સમયે મુનિરાજ આ પર્વત ઉપર પહોંચ્યા એ સમયે સૂર્ય અસ્તાચળ

गतः। ततः सत्त्वशाली स महामुनिस्तस्य पर्वतस्य कस्मिंश्चिद् गह्वरे निसर्गेण कायोत्सर्गेण स्थितवान्।

अथ प्रातः काले समुदिते सूर्ये जीवरक्षापरायणः स मुनिर्गह्वरान्निर्गत्य विहारं कृतवान्। तस्मिन्नेव समये कुरङ्गकनामा पल्लीभिल्लोऽपि मृगयार्थं निर्गतः। स भिल्लः कृतानेकभवभ्रमणो नरकनिर्गतः सर्पजीव आसीत्। पापात्मा स मृगयार्थं प्रचलितः प्रथममेव तं मुनिं दृष्टवान्। तं मुनिं दृष्ट्वाऽमाङ्गल्यमिति मत्वा पूर्वभववैरतश्च स कुरङ्गकभिल्लो धनुराकर्णमाकृष्य निशितेन बाणेन तस्य मुनेर्हृदि प्राहरत्।

चलकी ओर प्रस्थित हो रहा था। अतः सत्त्वशाली वे मुनिराज उसी पर्वतके किसी एक गुफामें कायोत्सर्ग कर ठहर गये।

जब प्रातःकालका समय हुआ और सूर्य उदित हो चुका तब जीवोंकी रक्षा मे परायण मुनिराजने वहा से निकलकर विहार कर दिया। इसी समय एक कुरङ्गक नामका एक भील भी शिकार के लिये अपनी पल्लीसे निकलकर इधर उधर भटक रहा था। यह भील का जीव और कोई नहीं था नरकसे निकला हुआ सर्पका जीव था जो अनेक पर्यायोंमें भ्रमण करता हुआ इस भिल्लकी पर्यायसे पैदा हो गया था। जब वह शिकार के लिये अपने स्थान से चला तो सर्व प्रथम उसकी दृष्टि इन्हीं मुनिराज पर पडी। उनको देखते ही पूर्वभव के वैरसे इसका स्वभाव गरम हो गया। उसने विचार किया कि देखो तो सही यह घर से निकलते ही मुझे अमगल हुआ है। अतः उसने धनुष पर तीक्ष्ण बाण आरोपित कर मुनिराज के हृदय पर मारा।

તરફ જઈ રહેલ હતા આથી સત્વશાળી એ મુનિરાજ એ પર્વતની એક ગુફામા કાર્યોત્સર્ગ કરીને રોકાઇ ગયા

જ્યારે પ્રાત કાળનો સમય થયો ત્યારે અને સૂર્યનો ઉદય થયો ત્યારે જીવોની રક્ષામા પરાયણ એવા મુનિરાજે ત્યાથી નીકળીને વિહાર કરી દીધો આ સમયે એક કુરગડક નામનો ભીલ પણ પોતાના સ્થાનમાથી શિકાર કરવા માટે નિકળી પડેલ હતો આ ભીલનો જીવ તે બીજો કોઈ નહી પરતુ નરકમાથી નીકળેલો સર્પનો જીવ હતો જે અનેક પર્યાયમા ભ્રમણ કરીને આ ભીલની પર્યાયમા ઉત્પન્ન થયેલ હતો જ્યારે તે શિકાર માટે નીકળ્યો ત્યારે તેની દૃષ્ટિ સહુથી પ્રથમ મુનિરાજ ઉપર પડી એમને જોતાજ પૂર્વભવના વેરના કારણે તેનો સ્વભાવ ગરમ થઈ ગયો તેણે વિચાર કર્યો કે, ઘેરથ નીકળતાજ મને આ અપશુકન થયેલ છે આથી તેણે ધનુષ ઉપર તીક્ષ્ણ બાણ ચડાવીને મુનિરાજના હૃદય ઉપર માર્યું તેનાથી વીધાઈને

ततः प्रहारव्यथितः स मुनिः, 'नमो अरिहंताणं' इत्युच्चार्य भुवि समुपविश्य भक्तप्रत्याख्यानं कृत्वाऽखिलान् जीवान् क्षामयित्वा शुभध्यानपूर्वकं प्राणान् परित्यक्तवान्।

॥ इति षष्ठो भवः ॥

(अथ ललिताङ्गदेवभवः सप्तमः)

ततः स मध्यग्रैवेयके ललिताङ्गनामकः देवत्वेन समुत्पन्नः। निसर्गदुष्टः स भिल्लस्तु कालान्तरे मृत्वा रौरवे नाम्नि सप्तमपृथिव्या नारको जातः॥

॥ इति सप्तमो भवः ॥

(अथाष्टमः सुवर्णबाहुभवः)

आसीदत्र जम्बूद्वीपे पूर्वमहाविदेहे तत्क्षेत्रविभूषणमिव धनधान्यहिरण्य-

उस से विद्ध होकर मुनिराजने "नमो अरिहंताणं" कहते हुए जमीन पर बैठ कर और भक्त प्रत्याख्यान करके तथा समस्त जीवों को क्षमा करके और उन से अपने दोषो की क्षमा कराकर शुभ ध्यानपूर्वक प्राणों का परित्याग कर दिया।

यह छठा भव है

सातवाँ ललितांगदेवका भव—

ये मुनिराज इस प्रकार मरकर मध्यम ग्रैवेयक मे ललितांगनामक देव हुए। तथा स्वभावतः दुष्ट वह भिल्ल मरकर रौरव नामक सप्तम पृथिवी में नारक हुआ।

यह सातवा भव है

आठवाँ सुवर्णबाहुका भव—

वज्रनाभ का जीव मध्यम ग्रैवेयक की स्थिति भोगते २ जब समाप्त

મુનિરાજ "નમો અરિહંતાણં" કહેતા કહેતા જમીન ઉપર બેસી ગયા, અને ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન કરીને તેમજ સઘળા જીવોને ક્ષમા આપીને અને તેમની પાસેથી પોતાના દોષોની ક્ષમા માગીને શુભધ્યાન પૂર્વક પ્રાણોનો પરિત્યાગ કરી દીધો.

આ છઠ્ઠો ભવ થયો

સાતમો લલિતાંગ દેવનો ભવ —

એ મુનિરાજ આ પ્રકારે મરીને મધ્યમ ગ્રૈવેયકમાં લલિતાંગ નામના દેવ થયા તથા સ્વભાવતઃ દુષ્ટ એવો એ ભીલ્લ મરીને રૌરવ નામના સાતમા નરકમાં નારકી થયો

આ સાતમો ભવ થયો

આઠમો સુવર્ણબાહુનો ભવ આ પ્રકારનો છે—

વજ્રનાભનો જીવ મધ્યમ ગ્રૈવેયકની સ્થિતિ ભોગવતા ભોગવતા એ આયુને

क्षण विश्रम्य हय गृहीत्वा यावदग्रे गच्छति, तावदेकं तापसाश्रममपश्यत्। तत्र प्रविशतो राज्ञो दक्षिण नेत्र परिस्फुरति स्म। ततो राज्ञा चिन्तितम्-अवश्यमेव ममात्र श्रेयो भविष्यति? इति विचिन्तयन् यावत्सोऽग्रे गच्छति, तावत्सख्या सह वृक्षमूले जल सिञ्चन्तीमेका तापसकन्यामपश्यत्। तावद्राज्ञोऽनुचरा अपि समागता। ततोऽनुचरैः सह राजा आश्रमे प्रविष्टः। सानुचर राजान दृष्ट्वा ते उभे तापसकन्ये सम्भ्रान्ते जाते। राजा च सखीं पृष्टवान्-अस्याश्रमस्य कः कुलपतिः? का भवती? इय भवत्सखी च का? तत सा

पिलाया। तथा स्वय भी जल पिया। इसके बाद उस सरोवर के तट पर कुछ क्षण तक विश्राम कर ज्यों ही राजा घोडे को लेकर आगे वढा कि इतने मे उसको एक तापसाश्रम दिखलाई पडा। वहा जाकर ज्यों ही वह उस मे प्रविष्ट होने वाला था, कि इसी समय इसका दाहिना नेत्र फडकने लगा। नेत्र के फडकते ही राजाने विचार किया कि नियमत' यहा मुझे श्रेय की प्राप्ति होनेवाली है। इस प्रकार विचार करते २ जैसे ही वह आगे बढ रहा था कि इतने मे उसको सखीयों के साथ वृक्षोंकी-क्यारिओ मे जल सींचती हुई एक तापस कन्या दिखलाई दी। इसी समय वहा राजा के अनुचर भी आ पहुचे। अनुचरों के साथ राजा उस आश्रम में प्रविष्ट हुआ। अनुचरों सहित राजा को देखकर वे दोनों तापस कुमारिया सम्भ्रान्त जैसी हो गई। राजाने धैर्य बधाते हुए उसकी सखी से पूछा-इस आश्रम का कुलपति कौन है? तथा आप लोग कौन है? यदि गोपनीय जैसी वात न हो तो यह बतलावें कि यह

લઈ જઈને પાણી પાયુ અને પોતે પણ પીધુ આ પછી એ સરોવરને કાંઠે થોડા સમય સુધી વિશ્રામ કર્યો આ પછી રાજા ઘોડાને લઈને આગળ વધ્યા ત્યારે તેમની દૃષ્ટિએ તાપસનો એક આશ્રમ પડયો ત્યા પહોચીને જ્યારે એણે આશ્રમમા પ્રવેશ કરવા પગ ઉપાડયો એ સમયે તેનુ ડાબુ નેત્ર ફડકવા લાગ્યુ નેત્ર ફડકતા જ રાજાએ વિચાર કર્યો કે, અહી મને શ્રેયની પ્રાપ્તિ જરૂર થનાર છે. આ પ્રકારનો વિચાર કરતા કરતા તે આગળ વધી રહેલ હતો એ સમયે પોતાની સખીઓની સાથે પુષ્પવૃક્ષોની ક્યારીયોને જળ સીચી રહેલ એક તાપસ કન્યા નજરે પડી આ સમયે રાજાના સૈનિકો પણ ત્યા આવી પહોચ્યા અનુચરોની સાથે રાજાએ આશ્રમમા પ્રવેશ કર્યો અનુચરો સહિત રાજાને જોઈને એ બન્ને તાપસ કુમારિકાઓને ગભરામણુ થઇ રાજાએ તેમને ધૈર્ય બધાવતા એની સખીને પૂછયુ કે, આ આશ્રમના કુળપતિ કોણ છે તથા આપ લોક કોણ છો? જો કહેવામા કાંઈ હરકત

प्राह अहमस्मि आश्रमवासिनस्तापसस्य कन्या नन्दा नाम इय मम सखी पद्मपुराधीश्वरस्य विद्याधरेश्वरस्य सुता रत्नावलीकुक्षिजाता पद्मा नाम। उत्पन्नायामस्या पिता मृत'। भ्रातरश्च राज्यार्थं मिथोऽयु यन्त। महद् युद्ध जातम्। ततोऽस्या माता रत्नावली देवी इमामादायास्मिन आश्रमे स्वभ्रातु कुलपतेर्गालवस्य समीपे समायाता। तापसैर्लाल्यमानाऽसौ क्रमेण बाल्यावस्थामपनीय युवती जाता। अत एवेय तापसकन्योचित कर्मकुरुते। युज्यते चैतत्, यतो यादृशः सवासो भवति, तादृश एवाभ्यासोऽपि भवति। अत्र हि कश्चिन्नैमित्तिकः समागतः।त नैमित्तिक गालव पृष्टवान्–नैमत्तिक! अस्या पद्माया' पति को भविष्यति? ततो नैमित्तिक प्राह –वज्रबाहुसुत सुवर्णबाहु हयेनापहृतोऽत्राश्रमे समागमिष्यति,

---

आपकी सखी कौन है?। राजा का प्रश्न सुनकर उसने कहा कि म आश्रमवासी तापस की कन्या ह। मेरा नाम नदा है। त था मेरे साथ-जो यह मेरी सखी है इसका नाम पद्मा है। यह विद्याधराधिपति पद्मपुर के-राजा की रानी रत्नावली की कुक्षि से उत्पन्न हुई है। इस के उत्पन्न होते ही इसका पिता मर गया। भाइयों मे राज्य के निमित्त परस्पर खूब-युद्ध होने लगा। तब इसकी माता रत्नावलीरानी इस कन्या का रक्षण निमित्त इसको लेकर अपने भाई गालवपति के पास आई है। यह तपस्वियों द्वारा पालित पोषित होकर क्रमशः यहीं पर यौवन अवस्था को प्राप्त हुई है, इस लिये यह तापस कन्याओं के उचित जलसीचनादि यह कार्य करती है। जैसी सगति मिलती है, मनुष्य वैसा ही बन जाया करता है। यहा कुछ-दिन पहिले एक नैमित्तिक आया था। गालवने उससे ऐसा पूछा था कि हे नैमत्तिक कहो तो सही इस विद्याधर कन्या का पति कौन होगा?

જેવુ ન હોય તો એ પણ બતાવો કે, આ આપની સખી કોણ છે? રાજાનો પ્રશ્ન સાભળીને તેણે કહ્યુ કે, હુ આશ્રમવાસી તાપસની કન્યા છુ મારૂ નામ નદા છે તથા મારી સાથે જે સખી છે એનુ નામ પદ્મા છે એ વિદ્યાધરાધિપતિ પદ્મપુરના રાજાની રાણી રત્નાવલીની કૂખેથી ઉત્પન્ન થયેલ છે આનો જન્મ થતાજ આના પિતા મરી ગયા ભાઈઓમા રાજ્યના કારણે પરસ્પરમા યુદ્ધ થયુ ત્યારે આ કન્યાના રક્ષણ માટે એની માતા રત્નાવલી રાણી આને લઇને પોતાના ભાઈ ગાલવ કુળપતિની પાસે આવેલ છે આને તપસ્વીયોથી પાળી પોષિને મોટી કરવામા આવેલ છે આથી એ તાપસ કન્યાઓને ઉચિત એવા જળસિચન આદિ કાર્ય કરે છે જેવી સગત મળે છે તેવો મનુષ્ય બની જાય છે અહી થોડા દિવસો ઉપર એક જ્યોતિષી આવેલ હતા ગાલવે એમને એવુ પૂછ્યુ કે, હે જ્યોતિષી કહો તો ખર આ વિદ્યાધર

स एवास्याः पतिर्भविष्यति। इत्थं तापसकन्यकाया नन्दाया वचनं निशम्य सुवर्णबाहुनृपः परमानन्द प्राप्तो मनस्येवमचिन्तयत्-अहो! उपकृतमनेन वाजिना। यदहमनेनापहृतोऽत्र तापसाश्रमे समागतोऽस्मि। एवं विचिन्त्य राजा तां पर्यपृच्छत्-कुलपतिः क्वाऽस्ते? चक्रवाको भास्करमिवाहं तं द्रष्टुमुत्सुकोऽस्मि। सा प्राह-कुलपतिरधुना कार्यान्तरेण क्वाऽपि गतः। शीघ्रमेव समागमिष्यति। ततः सा राजानमपृच्छत् महाभाग! स्फुटराज्यलक्ष्मधारी भवान् कः? ततो राज्ञोऽनुचरास्तामब्रुवन्-अयमेव महाराजः सुवर्णबाहु। तत

तब नैमित्तिकने कहा था कि वज्रबाहु का सुत सुवर्णबाहु इसका पति होगा और वह यहां अश्व द्वारा अपहृत होकर आवेगा। इस प्रकार उस तापस कन्या नंदा के मुख से समाचार सुनकर सुवर्णबाहु राजाको अपार हर्ष हुआ। उसने मन में विचार किया कि घोडेने हरण कर मेरा बडा उपकार किया है, क्यों कि अगर यह मुझे नहीं हरण करता तो मैं इस आश्रम मे कैसे आ सकता? इस प्रकार विचार कर राजाने उससे पूछा-इस समय कुलपतिजी कहां है। सूर्यके लिये चक्रवाक की तरह मैं उनके दर्शन के लिये उत्कंठित हो रहा हूं। नंदाने प्रत्युत्तर मे राजा से कहा-महाराज! कुलपति तो इस समय कार्यान्तर से कहीं गये हुए है। वे शीघ्र ही आनेवाले है। इस प्रकार नंदाने कह कर राजा से भी यह पूछ लिया कि हे महाभाग! प्रकट रूप में राज्य चिह्नों को धारण करनेवाले आप कौन हैं? इस प्रश्न का राजाने कुछ भी नंदा को उत्तर नहीं दिया परंतु राजा के अनुचरोंने उत्तर देते हुए

કન્યાનો પતિ કોણ થશે? ત્યારે જ્યોતિષીએ કહ્યું કે, વજ્રબાહુ આનો પતી થશે અને તે અશ્વથી અપહૃત થઈને અહીં આવશે આ પ્રકારની એ તાપસ કન્યાની વાતને સાંભળીને સુવર્ણબાહુ રાજાને ઘણોજ હર્ષ થયો એણે મનમાં વિચાર કર્યો કે, જો આ ઘોડો મને ઉપાડીને અહીં લઈ આવ્યો ન હોત તો આ આશ્રમમાં હું કઈ રીતે આવી શકત આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાજાએ ફરીથી એ તાપસ કન્યાને પૂછયું કે, આ સમયે કુળપતિજી કયાં છે? સૂર્યના માટે ચકવાકની માફક હું એમના દર્શનને માટે ઉત્કંઠિત થઈ રહ્યો છું નંદાએ પ્રત્યુત્તરમાં રાજાને કહ્યું-મહારાજ! કુળપતિજી તો આ સમયે કોઈ કામના માટે કયાંક ગયા છે અને તુરતમાંજ આવી જનાર છે આ પ્રમાણે કહ્યા પછી નંદાએ રાજાને પૂછયું કે, હે મહાભાગ! પ્રગટરૂપમાં રાજ્યચિન્હોને ધારણ કરવાવાળા આપ કોણ છો? એ પ્રશ્નનો રાજાએ નંદાને કાંઈ ઉત્તર ન આપ્યો પરંતુ રાજાના અનુચરોએ ઉત્તર આપતા

कुलपतेरागमने विलम्बं सम्भाव्य नन्दा नाम सा सखी सुवर्णबाहुमेतस्या पर्णकुटयां संस्थाप्य स्वयं तदागमनवृत्तान्तं रत्नावल्यै निवेदयितुं पद्मया सह गता। तस्मिन्नेव समये गालवोऽपि समागतः। नन्दा च सुवर्णबाहु समागमनवृत्तान्तं गालवाय रत्नावल्यै च न्यवेदयत्। अथ हृष्टो गालवः रत्नावलीं पद्मां नन्दां च सहादाय सुवर्णबाहुनृपस्यान्तिके समायातः। तमागतं दृष्ट्वा सुवर्णबाहुरभ्युत्थानेन तं तापसं सत्कृतवान्। गालवस्तं समभिनन्द्यैवमुवाच –राजन्! इयं मम भागिनेयी पद्मा। इमां भार्यात्वेन स्वीकरोतु। इयं तव भार्या भविष्यतीति नैमित्तिकेन सन्दिष्टम्। इत्थं गालववचनं श्रुत्वा तां सुमनस

कहा–यही महाराज सुवर्णबाहु है। सुनकर नंदा का हृदय अत्यन्त हर्षित हो गया। वह कुलपति के आनेकी प्रतीक्षा करने लगा–परंतु जब उनके आने में उसको विलम्ब दिखलाई दिया, तो वह सुवर्णबाहु राजा को एक पर्णकुटी में ठहराकर स्वयं उनके आनेकी खबर देने के लिये रत्नावली के पास पद्माको लेकर चली गई। इसी समय कुलपति गालव भी आ गये। नंदाने सुवर्णबाहु के आने के समाचार इन दोनों को सुना दिये। कुलपति प्रसन्न होकर रत्नावली रानी, पद्मा एवं नंदा को साथ लेकर सुवर्णबाहु राजाके पास चले आये। जब राजाने कुलपति को आते हुए देखा तो वह उनके सत्कार के निमित्त उठकर उनको अपने पास ले आया, सत्कृत होकर कुलपतिने भी राजाका अभिनंदन करते हुए कहा–राजन्! यह पद्मा मेरि भानजी है। अतः आप इसको अपनी भार्या बनाने के लिये स्वीकार करें। यह आपकी भार्या होगी–

કહ્યુ કે, આજ મહારાજ સુવર્ણબાહુ છે સાંભળીને નંદાનુ હૃદય અત્યંત હર્ષિત બની ગયુ રાજા કુળપતિના આવવાની પ્રતીક્ષા કરવા લાગ્યો પરંતુ જ્યારે એમના આવવામા એને વિલંબ જણાયો ત્યારે નંદાએ સુવર્ણબાહુ રાજાને એક પર્ણકુટીમા બેસાડીને પોતે તેના આવવાની ખબર આપવા માટે પદ્માને પોતાની સાથે લઈને રત્નાવલીની પાસે પહોચી ગઇ આ સમયે કુળપતિ ગાલવ પણ આવી પહોચ્યા નંદાએ સુવર્ણબાહુના આવવાના સમાચાર એ બન્નેને આપ્યા કુળપતિ આથી પ્રસન્ન બન્યા અને રત્નાવલી રાણી, પદ્મા અને નંદાને સાથે લઈને સુવર્ણબાહુ રાજાની પાસે પહોચ્યા જ્યારે રાજાએ કુળપતિને આવતા જોયા તો તે તેમનો સત્કાર કરવા ઉભા થઈને સામે આવ્યા રાજાએ કુળપતિને વંદન કર્યું આ પછી પર્ણકુટીમા આવી કુશળ વર્તમાન પૂછયા પછી કુળપતિએ કહ્યુ કે રાજન્! આ પદ્મા મારી ભાણેજ છે આપને હુ તે સોપુ છુ તો આપ એનો પત્ની તરીકે સ્વીકાર કરો આ આપની પત્ની થશે એ થોડા દિવસો ઉપર એક જ્યોતિષીએ પૂછવાથી

इव परमप्रमुदितो राजा गान्धर्वेण विधिना तया सह विवाहं कृतवान्। पद्मायाः वैमात्रेयो भ्राता पद्मोत्तरः सपरिवारो विमानैराकाशाद्वातरत्। ततो रत्नावल्याः सकाशाद् ज्ञातसकलवृत्तान्तो हृष्टतुष्टः स सुवर्णबाहु नृप समीपे समागत्य साञ्जल्येवमवादीत्-देव! मम भगिन्याः पद्मायाः भवान् पतिरिति विज्ञाय भवत्सेवायै समुपस्थितोऽस्मि। अतो भवान् स्वचरणरजसा वैताढ्यशिखरसंस्थित रत्नपुर नाम मम पुर पुनातु। तत कुलपतिं रत्नावली च पृष्ट्वा पद्मया सह सानुचरो राजा विमानमारुह्य पद्मपुर समागत। ततः पद्मोत्तरस्तस्मै निवासार्थं

यह बात हमको एक नैमित्तिक से पूछने पर ज्ञात हुई है। इस प्रकार गालव कुलपति के वचन सुनकर राजा उस समय इतना अधिक प्रसन्न हुआ कि जैसे अच्छा स्वप्न देखनेवाला व्यक्ति प्रसन्न होता है। राजाने वहीं पर पद्मा के साथ गांधर्व विधि से विवाह कर लिया पद्मा का एक पद्मोत्तर नाम का दूसरी माता का भाई और था। सो वह सपरिवार विमानों द्वारा इन दोनों के विवाह की वार्ता सुनकर वहा पर आ गया। उसने आते ही बडी प्रसन्नता के साथ राजा से हाथ जोड कर प्रार्थना की-देव! आप मेरी बहिन पद्मा के पति हैं इस बातको जानकर मै आप की सेवा मे उपस्थित हुआ हू-आप से अब मेरी यह प्रार्थना है कि आप अपने चरणों की धूलि से वैताढ्य शिखर पर सस्थित मेरे रत्नपुर नगर को पवित्र करे। पद्मोत्तर की प्रार्थना स्वीकृत कर सुवर्णबाहु राजा वहा से कुलपति एवँ रत्नावली रानी की सम्मति लेकर विमानो द्वारा पद्मपुर आ गये। साथ में नववधू पद्मा एव अनुचरों को भी लेते आये। पद्मोत्तर नरेशने इनके निवास के लिये अपना

અમને કહેલ છે ગાલવ કુળપતિના આ પ્રકારના વચન સાભળીને રાજા એ સમયે ખૂબજ પ્રસન્ન થયો જે રીતે સ્વપ્ન જોનાર વ્યક્તિ પ્રસન્ન થાય છે રાજાએ આ પછી એજ સ્થળે ગાધર્વ વિધિ અનુસાર પદ્માની સાથે વિવાહ કર્યો પદ્માનો પદ્મોત્તર નામનો એક બીજી માતાનો ભાઈ હતો તેણે આ વિવાહની વાત જાણતા તે સપરિવાર વિમાનમા ત્યા આવી પહોચ્યો તેણે આવતાજ ઘણી પ્રસન્નતાથી રાજાને હાથ જોડીને પ્રાર્થના કરી કે, દેવ! આપ મારી બહેન પદ્માના પતિ છો આ વાતને જાણીને હુ આપની સેવામા ઉપસ્થિત થયો છુ આપને હવે મારી એ પ્રાર્થના છે કે, આપ આપના ચરણોની પવિત્ર ધૂળથી વૈતાઢ્યગિરિ ઉપર આવેલા મારા રત્નપુર નગરને પાવન કરો પદ્મોત્તરની પ્રાર્થના સ્વીકારી સુવર્ણબાહુ રાજા કુળપતિ અને રત્નાવલી રાણીની આજ્ઞા લઈને રત્નપુર જવા વિમાનોમા રવાના થયા તેની સાથે પોતાના અનુચરો અને નવવધૂ પદ્મા પણ હતા પદ્મોત્તરે રાજાના નિવાસને

दिव्य रत्नप्रासादः दत्तः स्वयं तस्य समुचितां शुश्रूषां कृतवान्। तत्र सुवर्णबाहुः स्वभुजबलेन वैताढ्यगिरेर्दक्षिणोत्तरश्रेणिद्वयस्य राज्यं प्राप्तवान्। तत्र च तेन सुवर्णबाहुनाऽनेकाविद्याधरकन्या परिणीता। अथान्यदा पद्मायाभिस्ताभी राज्ञीभिः सह वैताढ्यपर्वतश्रेणीतः पुराणपुरनामकं स्वपुरं समागतः। ततः गतवति कियति काले समुत्पन्नचक्रादिरत्नः सुवर्णबाहुर्भूपालः षट्खण्ड क्षितिमण्डलं प्रसाध सुचिरं राज्यमनुशासितवान्। अथैकदा प्रासादोपरिभागेऽन्तः पुरिकाभिः सह क्रीडासुखमनुभवन् चक्रवर्ती सुवर्णबाहुर्गगने विमानैर्गमनागमनं कुर्वतो देवानपश्यत्। ततः स्वपुरे जगन्नाथनामकं तीर्थङ्करागमनं ज्ञात्वा सपरिवारः सुवर्णबाहुचक्रवर्ती तदन्तिके गत्वा तत्र तं प्रणम्य तद्वत्तां मोहमल्लापहां

दिव्य रत्नों का महल दिया और स्वयं उनकी उचित सेवा करने में लग गया। सुवर्णबाहुने भी रहते २ वहां दोनों श्रेणियों में अपना राज्य स्थापित कर लिया। तथा अनेक विद्याधर कन्याओं के साथ वैवाहिक संबंध भी कर लिया। रहते २ इनको जब अपने पुराणपुर नगर की याद आई तो ये सब स्त्रियों को साथ लेकर उस वैताढ्य पर्वत की श्रेणी से चलकर अपने नगर में वापिस आ गये। समय निकलते २ इनके शस्त्रागार में चक्रवर्ती पदका सूचक चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। उस से उन्होंने छह खंड पृथिवी को साधकर चिरकाल तक राज्य किया। एक दिन जब ये अपने प्रासाद के उपरितन भाग में अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ विविध प्रकार की रागक्रीडाओं का सुखानुभवन कर रहे थे, तब उन्होंने आकाश में विमानों द्वारा गमनागमन करते हुए देवों को देखा। उस से अपने नगर में जगन्नाथ नामके

માટે પોતાનો દિવ્ય રત્નોથી સુશોભિત મહેલ કાઢી આપ્યો અને પોતે તેમની સેવાના કામમાં લાગી ગયો. સુવર્ણબાહુએ પણ ત્યાં રહેતાં રહેતાં બન્ને શ્રેણીયોમાં પોતાનું રાજ્ય સ્થાપિત કરી દીધું તથા અનેક વિદ્યાધર કન્યાઓ સાથે વૈવાહિક સંબંધ પણ કરી લીધો. રહેતાં રહેતાં તેને જ્યારે પોતાના પુરાણપુર નગરની યાદ આવી ત્યારે તે ત્યાંથી પોતાની સઘળી સ્ત્રિઓને સાથે લઈને તે વૈતાઢ્ય પર્વતની શ્રેણીથી પોતાના નગરમાં પહોંચી ગયા. સમયના વહેતાં વહેતાં તેના શસ્ત્રાગારમાં ચક્રવર્તી પદનું સૂચક ચક્રરત્ન ઉત્પન્ન થયું. આનાથી તેણે છ ખંડ પૃથ્વી ઉપર પોતાનું આધિપત્ય જમાવ્યું અને ઘણા સમય સુધી રાજ્ય કર્યું. એક દિવસ જ્યારે તે પોતાના મહેલના ઉપરના ભાગમાં અંતઃપુરની સ્ત્રિયો સાથે વિવિધ પ્રકારનો આનંદ અનુભવી રહેલ હતા ત્યારે તેણે આકાશમાં વિમાનો દ્વારા ગમન–આગમન કરતા દેવોને જોયા. આથી તેમણે નગરમાં જગન્નાથ નામના તીર્થ-

धर्मदेशनां श्रुतवान्। अथ स चक्री तं धर्मचक्रिणं नत्वा स्वभवनं गतः। भगवाँ-स्तीर्थङ्करोऽपि भव्यान् प्रबोध्य ततोऽन्यत्र विहारं कृतवान्। स चक्रवर्ती सुवर्णबाहुस्तीर्थकरान्तिके धर्मदेशनाश्रवणार्थमागतानां सुराणां विषये एवमन्वचिन्तयत्–एवंविधा सदेवमानुषापारिषद् मया क्वाऽपि दृष्टा, इत्येवं विचिन्तयतस्तस्य जातिस्मृतिरुत्पन्ना। ततः स सर्वान् निजान् प्राग्भवान् दृष्टवान्, महानन्दमहीरुहबीजं वैराग्यं चाप्तवान्। अथ कियत्कालानन्तरं दीक्षामादातुमिच्छुः सुवर्णबाहुश्चक्रवर्ती राज्यभारं पुत्रे संस्थाप्य स्वयं दीक्षाग्रहणायोद्यतोऽभूत्। तस्मिन् समये

तीर्थंकर का आगमन जानकर सुवर्णबाहु चक्रवर्ती वंदना के निमित्त सपरिवार उनके पास जा पहुँचे। वंदना कर वे सभा में बैठ गये। प्रभुने मोहमल को दूर करनेवाली धर्मदेशना दी। देशना सुनकर चक्रवर्ती धर्मचक्री को नमन कर वापिस अपने महल में आ गये। भगवान् तीर्थंकरने भि वहां से विहार कर भव्यों को प्रतिबोध देकर अन्यत्र विहार किया। घर आकर चक्रवर्ती सुवर्णबाहुने तीर्थंकर के पास में धर्मदेशना श्रवण करने के लिये आये हुए देवताओं के विषय में ऐसा विचार किया कि–इस प्रकार की देव मनुष्यों की सभा मैंने कहीं पर देखी है। इस प्रकार विचार करते २ चक्रवर्ती को जातिस्मरण नामका ज्ञान उत्पन्न हो गया, इस से उन्होंने अपने समस्त पूर्वभव जान लिये। उनके जानने से उनको महानन्दरूप वृक्ष का बीज स्वरूप वैराग्य उत्पन्न हो गया। कुछ काल व्यतीत होने के बाद दीक्षा धारण करने की अभिलाषा संपन्न बनकर सुवर्णबाहु चक्रवर्ती राज्य

કરનુ આગમન જાણીને પોતાના પરિવાર સાથે વંદના માટે તેમની પાસે જઇ પહોંચ્યા વંદના કરીને સભામા બેઠા પ્રભુએ મોહમળને દૂર કરવાવાળી દેશના આપી દેશના સાભળીને ચક્રવર્તી ધર્મ ચક્રીને નમન કરી પોતાના મહેલમા પાછા ફર્યા ભગવાન તીર્થંકરે પણ ભવ્યોને પ્રતિબોધ કરીને ત્યાથી અન્યત્ર વિહાર કર્યો તીર્થંકર ભગવાનને વંદના કરી પાછા ફર્યા પછી ચક્રવર્તી સુવર્ણબાહુએ તીર્થંકરની પાસે ધર્મદેશના સાભળવા આવેલા દેવોના વિષયમા એવો વિચાર કર્યો કે, આ પ્રકારની દેવ–મનુષ્યોની સભા મે ક્યાક જોઇ છે આ પ્રકારનો વિચાર કરતા કરતા ચક્રવર્તીને 'જાતીસ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ ગયુ આથી તેઓએ પોતાના સઘળા પૂર્વભવોનુ વૃત્તાત જાણી લીધુ આ જાણી લેતા તેમને મહા આનંદરૂપ વૃક્ષના બીજ સ્વરૂપ વૈરાગ્યની ઉત્પત્તિ થઈ આવી કેટલોક કાળવ્યતીત થયા પછી દીક્ષા ધારણ કરવાની અભિલાષાવાળા બનીને સુવર્ણબાહુ ચક્રવર્તીએ રાજ્યનો ભાર

जगन्नाथं जिनः केवलज्ञानेन प्रव्रज्याग्रहणायोद्यतं सुवर्णबाहुचक्रिणं विज्ञाय ग्रामानुग्रामं विहरमाणः पुराणपुरे समवसृतः। तीर्थकृतः समवसरणसमाचारं श्रुत्वा सुवर्णबाहुस्तं दन्तिकं समागत्य तं प्रणम्यैवमब्रवीत्–भदन्त ! जन्मजरामरणभयोद्विग्नचित्तोऽहं संसारसागरं तरीतुकामो भवतां सन्निधे दीक्षां ग्रहीतुमिच्छामि। अतो मां दीक्षित्वा करोतु मम जीवनं सफलम्। ततस्तेन भगवता तीर्थङ्करेणाभ्यनुज्ञातोऽसौ तत्सन्निधे दीक्षां गृहीतवान्। ततः विंशति स्थानकानि समाराधयन्, स क्रमेण गीतार्थः सन् सुदुश्चरं तपस्तप्त्वा तीर्थङ्करनामगोत्रकर्म समुपार्जितवान्।

का भार अपने पुत्र पर स्थापित कर संयम धारण करने को उद्यत हुए। सुवर्णबाहु की दीक्षा धारण करने की यह पर्याय भगवान् जगन्नाथ तीर्थंकर के ज्ञान में झलकी सो वे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए पुरणपुर मे पधारे। तीर्थंकर के समवसरण का वृत्तान्त सुनकर सुवर्णबाहु चक्रवर्ती उनके पास गये, और उनको वन्दना करके कहने लगे कि हे भदन्त। मै जन्मजरा एवं मरण के भय से उद्विग्नचित्त बन रहा हू और इस संसारसागर से पार होने की इच्छा कर रहा हू, इसीलिये आपके पास दीक्षा धारण करने का अभिलाषी हो कर आया हू। अतः आप मुझे दीक्षा प्रदान कर मेरे जीवन को सफल बनाने की कृपा करे। चक्रवर्ती के इस प्रकार निवेदन को सुनकर जगन्नाथ तीर्थंकर ने उनको दीक्षित होने की स्वीकृति प्रदान कर दी। चक्रवर्तीने उसी समय उनके पास दीक्षा धारण करली। मुनि होकर वीसस्थानो की उन्होंने आराधना की, इस से क्रमशः गीतार्थ बनकर वे सुदुश्चर तप तपने लगे। तपस्या के प्रभाव से उनको तीर्थंकर नामकर्मका बंध हो गया।

પોતાના પુત્રને સોંપી દીધો અને સંયમ ધારણ કરવામાં ઉત્સાહિત બન્યા સુવર્ણ બાહુની દીક્ષા ધારણ કરવાની આ પર્યાય ભગવાન જગન્નાથ તીર્થંકરના જ્ઞાનમાં ઝળકી આથી તેઓ ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા પુરાણપુરમાં પધાર્યા તીર્થંકરના સમવસરણનો વૃત્તાંત સાંભળીને સુવર્ણબાહુ ચક્રવર્તી તેમની સમક્ષ ગયા અને તેમને વંદના કરી કહેવા લાગ્યા કે, હે ભદન્ત ! હું જન્મ, જરા, અને મરણના ભયથી વ્યાકુળ ચિત્તવાળો બની રહેલ છું આથી આપ મને દીક્ષા આપો ચક્રવર્તીના આ પ્રકારના નિવેદનને સાંભળીને જગન્નાથ તીર્થંકરે તેમને દીક્ષિત કરવાનું સ્વીકાર્યું અને દીક્ષા આપી મુનિ થઈને વીસ સ્થાનોની તેમણે આરાધના કરી એથી ક્રમશઃ તેઓ ગીતાર્થ બની ગયા અને અતિ દુષ્કર એવું તપ તપવા માંડયા તપસ્યના પ્રભાવથી તેમને તીર્થંકર નામ કર્મનો બંધ થઈ ગયો

स चान्यदा गुरोराज्ञया एकाकी अप्रतिबद्धविहारेण भूमौ विचरन् क्षीरवणाटव्यां क्षीरमहागिरिसमीपे समागतः। तत्र गिरौ भानोरभिमुखं कायोत्सर्गेण स 'शुद्धधीः' संस्थितः।

अथ कुरङ्गकभिल्लजीवोऽपि नरकादुद्धृत्य तस्मिन्नेव वने सिंहो भूत्वा समुत्पन्नः। स परिभ्रमन् अकस्मात्कायोत्सर्गेण संस्थितं तं मुनिं दृष्टवान्। तं दृष्ट्वा स सिंहः पूर्वभववैरानुबन्धात्तस्मिन् मुनौ समुत्पन्नवैरभावः कोपवशादारक्तनयनो राक्षस इव तं मुनिं प्रत्यधावत्। अथ स मुनिराजः सुवर्णबाहुरन्तकमिवापतन्तं तं सिंहं दृष्ट्वाऽनशनमकरोत्। सिंहः समुत्प्लुत्य प्रहारेणैकेन तस्य मुनेः शरीरान्मांसानि समाकृष्टवान्। प्रस्फुरद्रुधिरं स मुनिराजः शुभध्यानं कुर्वन् विनश्वरं शरीरं त्यक्तवान्॥

॥ इत्यष्टमः सुवर्णबाहुभवः ॥

एक दिन जब वे गुरुकी आज्ञा लेकर एकाकी अप्रतिबद्धविहार से विहार करते हुए क्षीरवणा नामकी अटवी में क्षीरमहागिरि के समीप आ पहुँचे और वहीं पर सूर्य के सामने ध्यान लगाकर कायोत्सर्ग से खडे हुए तब उसी समय कुरङ्गक भिल्लका जीव भी जो नरक से निकल उसी वन में सिंहकी पर्याय से उत्पन्न हुवा था, वह घूमता घामता अकस्मात् वहीं पर आ पहुंचा। आते ही उसकी दृष्टि सर्व प्रथम कायोत्सर्ग में स्थित उन मुनिराज पर पडी। दृष्टि पडते ही पूर्वभव के वैर के अनुबंध से उस सिंहने उन मुनि पर आघात करनेका विचार किया। विचार आते ही वह कोपातुर होकर राक्षस की तरह उनकी तरफ दौडा। मुनिराजने यमराज के समान आते हुए उस सिंह को देखा तो उन्होंने उसी समय चार प्रकार के आहार का परित्याग कर अनशन कर लिया।

એક દિવસ જ્યારે તેઓ ગુરૂની આજ્ઞા લઈને એકાકી અપ્રતિબદ્ધ વિહારથી વિહાર કરતા કરતા ક્ષીરવણા નામની અટવીમાં ક્ષીર મહાગિરિની સમીપમાં પહોંચ્યા અને ત્યાં સૂર્યની સામે ધ્યાન લગાવીને કાયોત્સર્ગથી ઉભા રહ્યા હતા ત્યારે કુરંગ ભીલનો જીવ જે નરકમાં નીકળીને એજ વનમાં સિંહની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થયેલ હતો તે રખડતો રખડતો એ સમયે ત્યાં આવી પહોંચ્યો. અને તેની દૃષ્ટિ કાયોત્સર્ગમાં સ્થિત એવા મુનિરાજ ઉપર પડી દૃષ્ટિ પડતા જ પૂર્વભવના વેરના સંબંધને લઈ મુનિરાજ ઉપર આક્રમણ કરવાનો તેણે વિચાર કર્યો અને વિચાર આવતાજ તેનામાં ક્રોધના અંકુરો ઉપસી આવ્યા અને એકદમ ક્રોધાતુર બનીને રાક્ષસની જેમ મુનિરાજની તરફ દોટ દીધી મુનિરાજે યમરાજની જેમ આવતા એ સિંહને જોયો એટલે એ સમયે તેમણે ચારે પ્રકારના આહારનો પરિત્યાગ કરી અનશન કરી લીધું

(अथ नवमो देवभव)

ततः स दशमे प्राणते स्वर्गे महाप्रभविमाने विंशतिसागरोपमायुष्को देवो भूत्वा समुत्पन्नः। स सिंहः कालान्तरे मृतश्चतुर्थनरके दशसागरोपमायुष्को नारको भूत्वाऽत्यन्तासह्ययातनामनुभूतवान्। तत उद्वृत्तस्तिर्यग्योनिषु भूरिशो भ्रमन् क्वापि ग्रामे द्विजपुत्रत्वेन समुत्पन्नः। तस्य जन्मानन्तरं तन्मातापित्राद्याः सर्वेऽपि स्वजना मृताः। ततस्तद् ग्रामवासिनो लोकाः कृपयाऽन्नादिदानैस्तं जीवय

सिंहने उछलकर उन पर प्रहार किया। उनके शरीर से उसने मांस नोंच लिया अतः उनका समस्त शरीर खून से लथपथ हो गया। ऐसी अवस्था में भी मुनिराजने अपना शुभ ध्यान नहीं छोडा ओर विनश्वर इस शरीर का परित्याग किया।

॥ यह आठवा भव है ॥

नववा देवभव—

वह सुवर्णबाहु मुनिराज का जीव दशवें स्वर्ग में महाप्रभविमान में वीससागर की आयुवाले देव की पर्याय में उत्पन्न हुवा। तथा वह सिंह भी कालान्तर में मरकर चौथे नरक में दससागर की आयुका धारक नारकी हुआ। वहां वह नरक की असह्य यातनाओं का भोगता रहा। जब इसकी वहांकी आयु समाप्त हो चुकी तब वह वहां से निकलकर तिर्यंच योनि में वार २ जन्म मरण करता हुआ अन्त में किसी ग्राम में ब्राह्मण के पुत्रपने उत्पन्न हुआ। इसके उत्पन्न होते ही मातापिता आदि समस्त स्वजन मर गये। पालक के अभाव में ग्रामवासियोंने अन्नादिक देकर

સિંહે ઉછળીને તેમના ઉપર પ્રહાર કર્યો અને તેમના શરીરમાંના માંસને લોચી લીધું આથી તેમનું સઘળું શરીર લોહીથી લથબથ થઈ ગયું આવી અવસ્થામાં પણ મુનિરાજે પોતાનું શુભધ્યાન છોડયું નહીં અને વિનશ્વર એવા શરીરનો પરિત્યાગ કરી દીધો.

આ આઠમો ભવ થયો

નવમો દેવભવ આ પ્રકારનો છે—

એ સુવર્ણબાહુ મુનિરાજનો જીવ દસમા સ્વર્ગમાં મહાપ્રભ વિમાનમાં વીસ સાગરની આયુવાળા દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો. તથા એ સિંહ પણ કાળાન્તરમાં મરીને ચોથા નરકમાં દસ સાગરની આયુનો ધારક નારકી બન્યો. અને ત્યાં તે નરકની અસહ્ય યાતનાઓ ભોગવતો રહ્યો જ્યારે તેની આયુ સમાપ્ત થઈ ચૂકી ત્યારે તે ત્યાંથી નીકળીને તીર્યંચ યોનીમાં વારવાર જન્મ મરણ કરતા કરતા અંતમાં કોઈ ગામમાં એક બ્રાહ્મણને ત્યાં પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થયો. એના ઉત્પન્ન થતાની સાથે જ માતા

न्तस्तस्य कमठ इति नाम कृतवन्तः। एवं परकृपानिर्भरजीवनोऽसौ कमठः क्रमेण बाल्यमुल्लङ्घ्य तारुण्य वयः प्राप्तवान। तदाऽत्यन्तदरिद्रो लोकैर्निन्द्यमानः स स्वोदरपूर्त्तयेऽपि समर्थो न जातः। स द्वि द्वि त्रि दिवसव्यवधानतः कष्टेन भोजन लभते स्म। स दान भोगप्रयुक्तार्थान कृतार्थान धनिनो लोकान दृष्ट्वा मनस्येव सञ्चिन्तयत्-एतैः पुरा जन्मनि प्रभूत तपस्तप्तम्। अत एवैते श्रीमन्त सन्ति। यथा बीज विना कृषि नं सम्भवति, तथैव तपो विना श्रियः प्राप्तेः सभावना नास्ति। अतोऽह तपसि तथा यतिष्ये यथा वाणिजो वाणिज्ये यतते। इत्थ विचिन्त्य

इसको जिलाया। यह पालित पोषित होकर बडा हुआ। सबने इसका कमठ नाम रख दिया। कमठ क्रमशः बाल्य अवस्थाका उल्लघन कर युवावस्था को प्राप्त हुआ। अत्यत दरिद्र होने से लोक उसकी हसी मजाक तथा निंदा करते रहते थे। इसम इतनी शक्ति नहीं थी कि वह अपनी उदर की भी पूर्ति कर सके। बिचारा दो तीन दिन बाद सो भी बडी मुश्किल से भोजन पाता था, इतना तो यह अभागा था। वह जब दान एव भोग में अपने अर्थ को प्रत्युक्त करने वाले धनवानों को देखता था तो मन में ऐसा विचार करने लगता कि इन लोगोंने पूर्वजन्म मे प्रभूत तप तपा है इसी कारण ये प्रचुर धनशाली हुए हैं। जिस प्रकार बीजकी पुष्टि के विना कृषी नही होती है उसी प्रकार तप के विना लक्ष्मीकी भी प्राप्ती जीवों को नही होती है इसलिये मै तपकी आराधना मे इस प्रकार प्रयत्न करू कि जिस प्रकार व्यापारीलोग व्यापार मे प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार सोच समझकर वह

પિતા તેમજ બીજા સ્વજનો પણ મૃત્યુ પામ્યા, તે બાળકને પાળકનો અભાવ હોવાથી ગામ લોકોએ એને પાળી પોષીને જીવાડયો ગામ લોકોના પાલન પોષણથી તે મોટો થયો અને લોકોએ તેનુ કમઠ એવુ નામ રાખ્યુ કમઠ ક્રમશ બાલ્યવય વટાવીને યુવાવસ્થાએ પહોચ્યો અતિ દરિદ્રી હોવાના કારણે લોકો તેની હાસી મજાક કરીને નિંદા કરતા હતા એનામા પોતાને ઉદર નિર્વાહ કરવાની પણ શક્તિ ન હતી બીચારાને બબ્બે ત્રણ ત્રણ દિવસે મહામુસીબતે ખવાનુ મળતુ એટલો તો એ અભાગી હતો. જ્યારે તે સારૂ એવુ ઐશ્વર્ય ભોગવતા અને દાનપુણ્ય કરતા ધનવાનોને જોતો ત્યારે મનમાને મનમાજ વિચાર કરવા લાગતો કે આ લોકોએ પૂર્વ જન્મમા ઘણુ એવુ તપ કર્યું હશે અને એજ કારણે તેઓ આ જન્મમા પ્રચુર ધનવાન બનેલા છે જે પ્રમાણે બીજની પુષ્ટીના વગર ખેતી થતી નથી એજ પ્રમાણે તપના વગર લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ પણ જીવોને થતી નથી આ માટે હુ પણ તપની આરાધનામા આ પ્રકારનો પ્રયત્ન કરૂ અને એ રીતે કે જેમ વેપારીઓ

जातसंवेग स कमठ कन्दादि भुञ्जानः पञ्चाग्न्यादि कृच्छ्रं तपः कुर्वन् तापसो जातः॥

अथ दशमो भव उच्यते—

आसीदत्र भरतक्षेत्रे वाराणसी नाम नगरी। यस्या सन्निधौ गङ्गा नदी वहति। यत्पुरी परितो मनोरमाण्युद्यानानि नन्दनवनमिव जनाना मनासि सुखयन्ति। यस्या प्रचुरमणिमाणिक्यमयकपिशीर्षकसुशोभित प्राकारोऽतिरमणीय आसीत्। यत्र प्रासादाना सौवर्णकलशेषु मणिमयभित्तिषु च प्रति बिम्बित सूर्य सहस्रधा प्रतिभासते स्म। यस्या धनिना महार्हाणि रम्याणि हर्म्याणि पुण्याऽभ्युदयलभ्यानि स्वर्गिणा विमानानीव शोभन्ते स्म। यस्यामगण्यपण्यै

कमठ कन्दमूल आदि का आहार करता हुआ पञ्चाग्नितपस्या आदि में अपने को लगाकर तापस बन गया।

दसवाँ भव श्रीपार्श्वप्रभुका—

इसी भरतक्षेत्र में वाराणसी नामकी नगरी थी। इसके बिलकुल पास गगा नदी बहती थी। इस पुरी के चारों ओर नदनवन जैसे मनोरम उपवन थे जो जनों के मनो को प्रफुल्लित करते थे। इसके चारों तरफ एक अतिरमणीय प्राकार था जो प्रचुर मणि, माणिक्य निर्मित कपिशीर्षकों–कगूरों से सुशोभित था। जहा के प्रासादों के सुवर्ण कलशों मे तथा मणिमयभित्तियों में प्रतिबिम्बित सूर्य हजारों प्रकार से प्रतिभासित होता था। जहा धनिकजनों के मकान जो कि महामूल्य एव सुरम्य थे। तथा देखने वालों को जो अपनी मूकभाषा से मानो यही कहते थे कि यदि तुम ऐसे मकानों को चाहते हो तो

વ્યાપારમા પ્રયત્નશીલ બને છે આ પ્રકારનો પોતાના મન સાથે નિશ્ચય કરી કમઠ કદમૂળ આદિનો આહાર કરતો રહીને પચાગ્નિ તપસ્યા આદિમા પોતાના ચિત્તને સ્થિર કરીને તાપસ બની ગયો

શ્રી પાર્શ્વપ્રભુનો દસમોભવ આ પ્રમાણે છે—

આ ભરત ક્ષેત્રમા વારાણસી નામની નગરી હતી એની તદ્દન નજીકમા ગગા નદી વહેતી હતી આ નગરીની ચારે તરફ નદનવન જેવાં ઉપવન હતા જે લોકોના દિલને પ્રફુલ્લિત કરતા હતા એની ચારે બાજુ અતિ રમણીય પ્રાકાર (મહેલો) હતા જે મણિ–માણિક્ય આદિથી ચળકતા તેમજ જેના કાગરાઓ વિ ખૂબજ શોભાયમાન હતા જેના ઉપરના સુવર્ણ કળશો તેમજ મણિ–માણિક્યમય ભીતોનુ પ્રતિબિબ સૂર્યના હજારો કિરણોની માફક પ્રકાશમાન થતુ હતુ ત્યાના ધનિક લોકોના મકાનો પણ ખૂબજ શુશોભિત અને સુરમ્ય હતા આને જોનારને મનોમનજ એવો વિચાર ઉઠતો કે જે આવા ઐશ્વર્યની ચાહના હોય તો પુણ્ય કાર્ય કરવુ જોઈએ આ

रापणाश्रेणी कृत्रिमापणराजीव राजते स्म। यस्या विश्वातिशायिनी प्रत्यक्षां लक्ष्मीं निरीक्ष्य निपुणा जना रोहणाचलं पाषाणशेषं पयोनिधिं च जलशेषमेव मन्यन्ते। एवं विधायामस्यां वाराणस्यां सकलगुणगणालङ्कृतः प्रजानां परिपालने दत्तावधानो विश्वजनीनोऽश्वसेनो नाम नरपतिरासीत्। यो हि विक्रमेण विष्वक्सेन (वासुदेव) इव देवोपमजनसेवितत्वादिन्द्र इव राजते स्म। यस्य प्रतापाग्निना प्लाविता अरण्यशरणं प्रपेदिरे। यस्मिन् पार्थिवे पृथिवीं शासति प्रजा ईति भीतिरहिता प्रसन्नास्तिष्ठन्ति। आसीत् तस्य राज्ञः शीलौदार्यादिगुणाभिरामा मनोरमा वामा नाम्नी पट्टराज्ञी। एकस्यां रात्रौ सुकोमलशय्यायां शयाना वामादेवी हस्त्यादीन्

पुण्यकर्म करो। देवों के विमानों जैसे भले मालूम पडते थे। जहां पर वणिक् वीथी से सुशोभित दुकानें कृत्रिमापण की श्रेणिके समान अरण्यपण्यो से सदा भरी रहती थीं। जिसकी ससार मे आश्चर्यजनक प्रत्यक्ष लक्ष्मी को देखकर निपुणजन रोहणाचल को पाषाणशेष एव पयोनिधि को जलशेष ही मानते थे। इस प्रचुर सौभाग्यशालिनी नगरी का शासक सकलगुणगणों से अलकृत तथा प्रजा के परिपालन करने मे सावधान अश्वसेन नामके राजा थे। ये विश्वजनो का हित विधायक थे। पराक्रम मे वासुदेव के समान तथा देवो के समान मनुष्यों द्वारा सेवित होने से इन्द्र के जैसे शोभित होते थे। इनके प्रताप से भगकर शत्रुओंने केवल अरण्य की ही शरण स्वीकृत की थी। इनके शासनकाल मे ईति भीति से रहित होकर प्रजाजन प्रसन्नचित्त बनकर सुख और आनदपूर्वक रहते थे। इन राजा की पट्टरानी का नाम वामादेवी था।

નગરીમા વેપાર-વાણિજ્ય કરનારાઓની દુકાનો પણ અનેક પ્રકારના દ્રવ્યોથી ભરેલી રહેતી તેમજ ખરીદનારાઓની હાર કતારોથી બજારો શોભાયમાન પ્રવૃત્તિમય દેખાતી હતી એકદરે સારાયે ભરતક્ષેત્રમા આ વારાણસી નગરી ખૂબજ દેદિપ્યમાન તેમજ સઘળી સિદ્ધિયોથી ભરેલી એવી નગરી હતી આ પ્રચુર સૌભાગ્યશાળી નગરીના શાસક સઘળા ગુણોથી અલકૃત એવા પ્રજાનુ પરિપાલન કરવામા સાવધાન અશ્વસેન નામના રાજા હતા તેઓ વિશ્વજનોના હિતવિધાયક હતા પરાક્રમમા વાસુદેવના જેવા તથા મનુષ્યોમા દેવની જેમ પૂજાતા હતા આથી ઈન્દ્ર જેવા શોભાયમાન લાગતા હતા એના પ્રતાપથી ભલભલા શત્રુઓ કપાયમાન બન્યા હતા અને પોતાના સ્થાનોને છોડીને અરણ્યનુ શરણ સ્વીકારેલ હતુ એમના શાસનના સમયમા પ્રજાજનોને કોઈ પણ પ્રકારની ભીતિ ન હતી કોઈ પણ પ્રકારના ડર રહિત સઘળા પ્રસન્નચિત્ત બનીને સુખપૂર્વક રહેતા હતા એ રાજાની પટરાણીનુ નામ વામાદેવી

चतुर्दशमहास्वप्नान् दृष्टवती। प्रातः शयनादुत्थिता राज्ञी स्वप्नवृत्तान्तं राज्ञे निवेदितवती। ततो राजा राज्ञ्यै यथेस्पदत्—अयि देवि! मन्यते तव पुत्रो जगत्पति र्भविष्यति। स्वप्नफलं श्रुत्वा वामादेवी परं प्रमोदमापन्ना। तत्र चैत्र कृष्ण चतुर्थ्यां रात्रौ वामा कुक्षौ प्राणतकल्पाच्च्युतो ज्ञानत्रययुक्तः सुवर्णबाहुकुमारः समवतीर्णः। सार्द्धसप्तरात्राधिकेषु नवसु मासेषु व्यतीतेषु वामादेवी नीलद्युतिमहिध्वजं पुत्रं प्रसूतवती। तदा स्वस्वासनकम्पैः प्रभोर्जन्म परिज्ञाय षट्पञ्चाशद् दिक्कुमार्यः समागत्य सूतिकर्माणि कृतवत्यः। देवेन्द्रा अप्यवधिज्ञानेन प्रभोर्जन्म

ने स्त्रीजनोचित शील, औदार्य आदि सद्गुणों से अभिराम एवं बड़ी ही मनोहर थी। एकदिन कोमलशय्या पर सोई हुई रानीने रात्रि में चौदह महास्वप्नों को देखा। जब प्रातःकाल का समय हुआ तो वह शय्या से उठकर उन स्वप्नों को राजा से कहने के लिये उनके पास पहुँची। वहां जाकर रानीने उन चौदह महास्वप्नों को राजा से कहा। महास्वप्नों को सुनकर राजाने रानी से कहा—हे देवी! इन स्वप्नों के देखने से तो यह सूचित होता है कि तुम्हारे यहां जगत्पति पुत्र होगा। इस प्रकार स्वप्न के फल को सुनकर वामादेवी अत्यंत प्रसन्न हुई। चैत्रकृष्ण चतुर्थी की रात्रि में वामादेवी की कुक्षि में दसवां प्राणत कल्प से च्यव कर सुवर्णबाहु का जीव तीन ज्ञान युक्त अवतीर्ण हुआ। जब नौ मास साढे सात दिन व्यतीत हो चुके तब वामादेवी ने पार्श्वप्रभु को जन्म दिया। भगवान की कांति नीली थी तथा सर्प के चिह्न से ये युक्त थे। प्रभु के जन्म लेते ही अपने २ आसन के कंपन से प्रभु का जन्म होना जानकर छप्पन दिशाकुमारियों ने आकर प्रसूति क्रिया की। देवेन्द्रों ने भी

હતું એ સ્ત્રીજનોમાં ઉત્તમ એવા શીલ, ઔદાર્ય આદિ સદ્ગુણોથી યુક્ત અને ખૂબજ મનોહર હતી એ વામાદેવીએ એક દિવસ રાત્રિના સમયે ચૌદ મહાસ્વપ્ન જોયા પ્રાતઃકાળે શય્યામાંથી ઉઠીને રાત્રે જોયેલ સ્વપ્નાની વાત રાજાને કહેવા માટે તેમની પાસે ગઈ રાજા પાસે જઈને ચૌદ સ્વપ્નાની વાત તેણે રાજાને કહી, રાણીના મુખેથી ચૌદ મહાસ્વપ્નોની વાત સાંભળીને રાજાએ કહ્યું દેવી! આ સ્વપ્ન જોવાથી એવું જાણી શકાય છે કે, તમારા ઉદરથી જગત્પતિ એવો પુત્ર અવતરશે આ પ્રકારના સ્વપ્નના ફળને જાણીને વામાદેવી અત્યંત પ્રસન્ન થઈ ચૈત્ર મહિનાની કૃષ્ણ ચતુર્થીની રાત્રે વામાદેવીની કૂખેથી દસમા પ્રાણતકલ્પથી ચવીને સુવર્ણબાહુનો જીવ લોકત્રયમાં અપ્રાપ્ય એવા ત્રણ જ્ઞાન સાથે અવતરીત થયો નવમાસ અને સાડા સાત દિવસ ગર્ભના પૂરા થયા ત્યારે વામાદેવીએ પાર્શ્વપ્રભુને જન્મ આપ્યો ભગવાનની કાન્તી નીલ રંગની હતી તથા સર્પના ચિહ્નથી તેઓ યુક્ત હતા પ્રભુનો જન્મ થતા જ પોતાના આસન કંપાયમાન બનતા પ્રભુનો જન્મ થયાનું જાણીને છપ્પન

दिशायाष्टाह्निक महोत्सवं कृतवन्तः। अश्वसेननृपोऽप्यानन्दातिरेकात्-कारागारवासदण्डभाजान् मुक्तवान्। गर्भस्थे भगवति तन्माता कृष्णरात्रावपि स्वपार्श्वत सर्पन्तं सर्पं दृष्टवती। सा तं वृत्तान्तं भर्त्रे निवेदितवती। तदा राजा तां प्रोक्तवान्-तव गर्भस्थस्य प्रभावो यदन्धकारेऽपि सर्पन् सर्पस्त्वया पार्श्वे दृष्ट इति। तस्यामु प्रभावं संस्मृत्य मातापितृभ्यां पार्श्व इति तन्नाम कृतम्। पञ्चभिर्धात्रीभिर्लाल्यमानः, अङ्गुष्ठे शक्रेण निहिता सुधां नित्यमापिबन् जगज्जलधिचन्द्रमा स जगत्प्रभुः क्रमेण

अवधिज्ञान से प्रभु का जन्म जानकर आष्टाह्निक महोत्सव किया। अश्वसेन राजा को उस समय मे अपार आनंद हुआ। उन्होंने कारागार मे से आजन्म कैद हुए कैदियों तक को भी मुक्त कर दिया। जिस समय प्रभु माता के गर्भ में आये थे उस समय कृष्णरात्रि में भी माता वामादेवी ने अपने पास से जाते हुए सर्प को देखा था। जब यह बात वामा देवी ने अपने पति से कही तो उन्होंने कहा कि-हे देवी! यह तुम्हारे गर्भस्थ बालक का प्रभाव है जो अधकार मे भी अपने पास से जाता हुआ सर्प दिखलाई पडा। गर्भस्थ बालक के इस प्रकार का प्रभाव को जानकर ही माता पिता ने उनका नाम पार्श्व रख लिया। पिताने पार्श्वकुमार के लालन पालन के लिये पाच धाइया नियुक्त की थी। उन्होंने इनको बडे प्रेम के साथ पालन पोषण किया। इन्द्र ने भगवान् के अगूठे मे अमृत रखा सो वे उसका ही नित्य पान किया करते थे। इस प्रकार जगतरूप जलधि के चन्द्रमा स्वरूप वे भगवान

દિક્કુમરીઓએ આવીને પ્રસૂતિ ક્રિયા કરી દેવોએ પણ અવધિજ્ઞાનથી પ્રભુનો જન્મ થયાનુ જાણીને આષ્ટાહ્નિક મહોત્સવ કર્યો અશ્વસેન રાજાને આ સમયે અપાર આનદ થયો તેમણે આ આનદના પ્રસગે કારાગારમા આજન્મ મહાન ભયકર રીતે કેદ ભોગવતા કેદીઓને પણ છોડી દીધા જે સમયે પ્રભુ માતાના ગર્ભમા આવ્યા હતા એ કૃષ્ણ રાત્રીના સમયે માતા વામાદેવીએ એક ફણીધર ભયકર સપને પોતાની પાસેથી જતા જોયેલ હતો જ્યારે આ વાત વામાદેવીએ પોતાના પતિને કહી ત્યારે તેમણે કહ્યુ કે, હે દેવી! આ તમારા ગર્ભમાના બાળકનો જ મહાન્ પ્રભાવ છે અને એજ કારણે અધકારમા પણ તમારી પાસેથી જઈ રહેલા સર્પને તમે જોઈ શકયા ગર્ભસ્થ બાળકના આ પ્રકારના પ્રભાવને જાણીને માતાપિતાએ તેમનુ નામ પાર્શ્વકુમાર રાખ્યુ પિતાએ પાર્શ્વકુમારના લાલન પાલન માટે પાચ ધાઈ નિયુકત કરી જેમણે ઘણા જ પ્રેમ પૂર્વક તેમનુ લાલન પાલન કર્યું ઈન્દ્રે ભગવાનના અગૂઠામા અમૃત રાખ્યુ જેથી તેઓ નિત્ય એનુ પાન કર્યા કરતા હતા આ પ્રમાણે જગતરૂપી સમુદ્રના

वर्द्धमानो यौवनावस्था प्राप्त । नवहस्तप्रमाण शरीर सर्वाङ्गसुन्दर. स प्रभु शौर्य रूपेण शीलौदार्यादिगुणेन सदाचारेण च जगज्जनमनांसि मोदयति स्म ।

अथान्यदा सिंहासनस्थितमश्वसेननरपति द्वारपाल समागत्य 'शिरसि पुरस्सर सविनयमिदमुवाच-देव ! कश्चित्पुरुषो भवन्त किमप्यावेदयितुमिच्छन् द्वार प्रतीक्षते ! तता राजाऽनुज्ञातेन तेन द्वारपालेन प्रवेशित स पुरुष एवमूचे- "देव ! अस्त्यत्रभरते कुशस्थलपुर नामपुरम् । तत्रास्ति सुकीर्तिभूमि प्रसेनजिन्नाम राजा। तस्यास्ति त्रिभुवनसौन्दर्यसारमपहृत्येव रचिता प्रभावती नाम दुहिता। तस्या सौन्दर्यं विशेषयामनुपमेयमेव। नास्त्यौ ता विलोक्य योग्य

क्रमश वृद्धिगत होते हुए युवावस्था को प्राप्त हुए। इनके शरीर का मान नौ हाथ का था। इनका समस्त सर्वाङ्ग सुन्दर था। शौर्य और रूप से तथा शील सदाचरण एव औदार्य आदि गुणो से जनता के मन को प्रभु विशेषरूप से हर्षित करते थे।

किसी एक दिनकी बात है कि जब अश्वसेन राजा राज्यसिंहासन पर विराजमान थे। तब उनको द्वारपाल ने आकर नमस्कार करके बडे विनय के साथ यह कहा कि हे नाथ! कोई एक पुरुष आपसे कुछ कहने के लिये द्वार पर खडा हुआ है, आज्ञा हो तो भीतर ले आऊँ? राजाने सुनकर उसको उस के आने की समति दी। द्वारपाल ने उस को राजाके पास पहुँचा दिया। उसने राजासे कहा-हे देव! इस भरत क्षेत्र मे कुशस्थल पुर नामका एक नगर है। उसके राजाका नाम प्रसेनजित है। प्रसेनजित सुकीर्ति का स्थान है। इनके एक प्रभावती नाम की पुत्री है। जो त्रिभुवन के सौंदर्य सारको लेकर के ही मानो

ચંદ્રમા સ્વરૂપ એ ભગવાન પાર્શ્વકુમાર ક્રમશ વધતા વધતા યુવાવસ્થાએ પહોચ્યા એમના શરીરની ઉંચાઇ નવ હાથની હતી અને સઘળુ શરીર સર્વાંગ સુદર હતુ શૌર્ય અને રૂપથી તથા સત્ય શીલ સદાચરણ અને ઔદાર્ય આદિ ગુણોથી જનતાના મનને પ્રભુ વિશેષરૂપથી હર્ષિત કરતા હતા

કોઇ એક દિવસની વાત છે કે જ્યારે અશ્વસેન રાજા રાજ્યાસન ઉપર બિરાજમાન હતા ત્યારે દ્વારપાળે આવીને નમન કરી ઘણા જ વિનયની સાથે કહ્યુ કે, હે નાથ! કોઈ એક પુરૂષ આપને કાઇક કહેવા માટે આવેલ છે અને દ્વાર ઉપર ઉભેલ છે જો આપની આજ્ઞા હોય તો અદર લઈ લાવુ રાજાએ દ્વારપાલની વાત સાભળીને તે પુરૂષને અદર લઇ આવવાનુ કહ્યુ આથી નમન કરી દ્વારપાલ જઇને તે પુરૂષને અદર લઈ આવ્યો એ પુરૂષે આવતા જ રાજાને નમ્રતાપૂર્વક કહ્યુ હે દેવ! આ ભારત ક્ષેત્રમા કુશસ્થળપુર નામનુ એક નગર છે ત્યાના રાજાનુ નામ પ્રસેનજીત છે પ્રસેનજીત રાજાએ સારી સુકીર્તિ મેળવી છે એને એક પ્રભાવતી નામની પુત્રી છે જે રૂપગુણનો

जामातृप्राप्तये पिता बहून् राजकुमारानन्वेषितवान्। परन्तु न कोऽपि तद्योग्यो वरो मिलितः। ततो राजा चिन्तितो जातः। अथान्यदा सखीभिः सहोद्यान गता प्रभावती किन्नरीभिर्गीयमान स्फीतमदो गीतमश्रृणोत् तद्यथा–सुतोऽश्वसेन भूभ ुः श्रीपार्श्वो जयताचिरम्। रूपलावण्यतेजोभिर्निर्जयन्निर्जरानपि॥ इति।

इद गीत निशम्य प्रभावती पार्श्वकुमारे समातानुरागा क्रीडा व्रीडा च सन्त्यज्य मुहुर्मुहुर्गीतश्रवणेऽभिलापयुक्ता किन्नरीगणाभिमुखी स्थिता।

बनाई गई है। इसीलिये उसका सौन्दर्य तीन लोक में अनुपम माना जाता है। उनके पिता नजित राजाने जब अपनी पुत्री को इस अनुपम रूप सौन्दर्य राशि का भंडार देखा तब देखकर उन्हों ने अनुरूप जामाता की तलाश के लिये अनेक राजकुमारों को देखा परतु उसके योग्य वर कोई भी उनकी दृष्टि म नहीं जचा! वर की अप्राप्ति से राजा के चित्त मे बडी चिंता लगी है। एक दिन की बात है कि प्रभावती सखियों के साथ उद्यान में गई थीं सो वहा उसने किन्नरियों द्वारा गाये गये गीत मे ऐसा सुना कि "अश्वसेन भूपति का पुत्र श्री पार्श्व कुमार चिरकालतक जयवता वर्तो जो अपने रूप, लावण्य एव तेज से देवताओ को भी जीतता है"।

इस गीत को सुनकर प्रभावती का आकर्षण पार्श्वकुमार की और हो गया। उस ने क्रीडा एव व्रीडा (लज्जा) का परित्याग कर उस गीत के श्रवण करने मे बार बार अपने मन का उपयोग लगाया और इसीलिये वह किन्नरियो के सन्मुख बैठ गई। जब गीत गाकर वे सब

અવતાર છે ત્રણ ભુવનમા એના જેવી બીજી કોઇ રૂપસુદરી નથી રાજા પ્રસેનજીતે પોતાની એ ઉત્તમ ગુણશીલવાળી પુત્રીના માટે યોગ્ય વરની ખુબ શોધ કરી પરતુ તે પ્રભાવતી કુવરીના યોગ્ય કોઈ રાજકુમાર તેને મળેલ નથી પોતાની વિવાહ યોગ્ય પુત્રી માટે યોગ્ય વર ન મળવાના કારણે રાજાના મનમા ભારે ચિતા વસી રહી છે એક દિવસની વાત છે કે કુમારી પ્રભાવતી પોતાની સખીઓની સાથે ઉદ્યાનમા ગઈ હતી એ સમયે ત્યા તેણે કિન્નરીઓ દ્વારા ગાવામા આવેલ ગીતને સાભળ્યુ એ ગીતમા તેણે એવુ સાભળ્યુ કે, અશ્વસેન ભૂપતિનો પુત્ર શ્રી પાર્શ્વકુમાર ચિરકાળ સુધી જયવતા વર્તો જે પોતાના રૂપ લાવણ્ય અને તેજથી દેવતાઓને પણ જીતે છે'

આ ગીતને સાભળીને પ્રભાવતીનુ આકર્ષણ પાર્શ્વકુમારની તરફ થઈ ગયુ જેથી તેણે ક્રીડા તેમજ લજ્જાનો ત્યાગ કરી એ ગીતને સાભળવામા જ વાર વાર પોતાના મનને ઉપયોગમા લગાડ્યુ અને એના માટે તે કિન્નરીઓની સામે બેસી ગઈ

गतासु किन्नरीषु तन्मार्गदत्तदृष्टिः प्रभावती विमनस्का जाता। पार्श्वकुमारे समनुरक्तेयमिति सखीभिरालक्षितम्। ततः सखीभिर्गृहमानीतेयं पार्श्वकुमारगत हृदया न किमपि जानाति यदहं काऽहं का इमा इति। ततस्तस्या मातापितरौ तत्सखीमुखात्पार्श्वकुमारानुरक्तेयमिति श्रुत्वा परं प्रमोदमापन्नौ। ततस्तावेवं प्रोक्त वन्तौ-इमां प्राणसमां सुतां पार्श्वेन परिणाय्य द्रुतमानन्दयिष्यावः। ततः कुशस्थ लपुरे प्रसिद्धं प्रभावती पार्श्वकुमारेऽनुरक्तेति।

की सब चली गई तो प्रभावती जिस ओर वे गई हुई थी उसी ओर निहारती रही। जब वे अदृश्य हो गई तो वह विमनस्क बन गई। सखियों ने उसकी इस परिस्थिति से यह जान लिया कि यह पार्श्व-कुमार में अच्छी तरह अनुरक्त हो गई है। बाद में सखियां जब उसको घर पर ले आई तो भी पार्श्वकुमार में अनुरक्त हृदयवाली होने से उसको यह भान नहीं रहा कि मैं कहां पर हूं और कौन हूं तथा ये कौन हैं। जब माता पिता ने उसकी इस तरह की हालत देखी तो उन्होंने सखियों से इसका कारण पूछा, जब उनको यह पता सखियों द्वारा पड गया की यह पार्श्वकुमार में अनुरक्त हुई है तो वे बडे प्रसन्न हुए, और कहने लगे कि प्राणों से भी अधिक प्रिय इस पुत्री को पार्श्वकुमार के साथ परणा कर हमलोग अब शीघ्र ही निश्चिन्त हो जावेंगे। कुशस्थलपुर मे भी यह बात प्रसिद्ध हो गई कि प्रभावती पार्श्वकुमार में अनुरक्त हो गई है।

જ્યારે ગીત ગાઇને એ સઘળી ચાલતી થઇ ત્યારે પ્રભાવતી, એ જે તરફ જઇ રહી હતી એ તરફ જોતી જ રહી જ્યારે તે દેખાતી બંધ થઈ ત્યારે તે સાવ સુનમુન જેવી બની ગઇ સખીઓએ આ ઉપરથી એ જાણી લીધુ કે, એ બ્હેન પાર્શ્વકુમારમા સંપૂર્ણ પણે અનુરક્ત બની ગઇ છે આ પછી જ્યારે સખીઓ તેને રાજભવનમા લઈ આવી ત્યારે પણ તે પાર્શ્વ કુમારમા અનુરક્ત હૃદય વાળી હોવાથી એને એ પણ ભાન ન રહ્યુ કે, હુ કયા છુ, અને કોણ છુ તથા મારી પાસે કોણ કોણ છે જ્યારે માતા પિતાએ તેની આ હાલત જોઇ ત્યારે તેમણે સખીઓને કારણ પૂછ્યુ ત્યારે સખીયો તરફથી સમગ્ર વાત તેમને કહેવામા આવી ત્યારે તેમને સાંત્વન મળ્યુ અને પાર્શ્વકુમારના ગુણોમા અનુરકત બન્યાની વાતે માતા પિતા ઘણા જ પ્રસન્ન બન્યા અને કહેવા લાગ્યા કે, પ્રાણોથી પણ અધિક પ્યારી એવી આ પુત્રીને પાર્શ્વકુમારની સાથે પરણાવીને અમો ખરેખર એક પ્રકારની મહાન ચિંતાથી મુક્ત બની જઇશુ કુશસ્થલપુરમા પણ આ વાત જાહેર થઇ ચૂકેલ છે કે પ્રભાવતી પાર્શ્વકુમારમા અનુરકત થઇ ગઇ છે

तमुद्यतं पितरं प्रति पार्श्वकुमारः साञ्जलिरब्रवीत्-तात! तृणतुल्ये तस्मिन् यवनराजे सुरासुरविजयिनामार्याणामुद्यमोऽनावश्यकः। भवदाज्ञानुसारेण तन्नि वारणं भविष्यति। ततो त्रिभुवनाधिकबलस्य तस्य पार्श्वप्रभोः पराक्रमं जानानो राजाऽश्वसेनस्तद्वचनं स्वीकृत्य यवनं प्रत्यभिगन्तुं सैन्यैः सहैनं समादिदेश। पित्रा समादिष्टो भगवान् पार्श्वनाथो यवनं प्रत्यभिगन्तुं यावदुद्यतो भवति, तावत् शक्रसारथिः सरथं समागत्य रथादवतीर्य भगवन्तं प्रणम्य ब्रवीति-भगवन्!

का कारण उनको समझा दिया। तात के मुख से संक्षेप से सब समाचार सुनकर तथा यवनराजा के प्रति प्रस्थित होने में उद्यत अपने पिता को देखकर पार्श्वकुमार ने विनय के साथ पिता से कहा-हे तात! तृणतुल्य उस यवन राजा के ऊपर चढाई करने का उद्यम आप जैसे सुरासुर विजयी शूरवीरो के लिये अनावश्यक है। आप की आज्ञानुसार उसका निवारण हो जायगा। अतः आप मुझे आज्ञा दिजिये। पार्श्वकुमार के इस प्रकार वचन सुनकर "त्रिभुवन के प्राणियों से भी अधिक बलशाली ये पार्श्वकुमार है अतः इसके बल पराक्रम की बात ही क्या कहनी है" ऐसा विचार कर अश्वसेन ने सैन्य के साथ उनको यवनराज के सामने जाने की आज्ञा दे दी। पिताकी आज्ञा पाते ही पार्श्वकुमार जैसे ही यवन राज के सन्मुख जाने को तैयार हुए कि वैसे ही शक्रेन्द्र का सारथि रथ लेकर उनके पास आ पहुचा और रथ से उतर कर नमस्कार करके उनसे कहने लगा भगवन्! क्रीडारूप से

तेने समजावी पिताना मुखेथी संक्षेपमा सघळी वात सांभळीने तथा यवनराजनी सामे लडवा जवा तत्पर बनेला पोताना पिताने जोईने पार्श्वकुमारे विनयनी साथे कह्यु के हे तात! तृणतुल्य ए यवनराजनी उपर चडाई करवानो उद्यम आपना जेवा सुरासुर विजयी शूरवीर माटे बराबर नथी आपनी आज्ञा अनुसार एनु निवारण थई जशे आथी आप मने आज्ञा आपो पार्श्वकुमारना आ प्रकारना वचन सांभळीने "त्रिभुवनना प्राणीओथी पण अधिक बळवाळा आ पार्श्वकुमार छे आथी एमना बळ पराक्रमनी वात ज शु करवी" एवो विचार करीने अश्वसेन महाराजाए यवनराजानी सामे सैन्यनी साथे लडवा जवानी तेमने आज्ञा आपी पितानी आज्ञा मळता ज पार्श्वकुमार यवनराजानी सामे लडवा जवा तैयार थया, ते समये शक्रेन्द्रनो सारथी रथ लईने तेमनी पासे आवी पहोंच्यो अने रथथी उतरीने नमस्कार करीने तेमने कहेवा लाग्यो के, भगवान! आप यवन

शक्रो भवन्तं क्रीडयाऽपि रणोद्यतं ज्ञात्वा भक्तिवशात् सरथं मां भवत्सेवायां प्रेषितवान्। अतो भवान् नानाविधशस्त्रास्त्रसमन्वितमस्पृष्टभूपृष्ठममुं रथमधिरोहतु। ततो भगवांस्तेजसामास्पदं तं रथमारुह्य नभसा कुशस्थलं प्रति प्रचलितः। सैनिकास्तु यथायोग्यं भूमिमार्गेण प्रचलिताः। ततो देवैः स्ववैक्रियशक्तिप्रभावेण कुशस्थलपुरसमीपे सोद्यानः प्रासादो निर्मितः। सैनिकाननुगृह्णन् भगवान् तदृष्ट्यनुसारेणैव शक्रसारथिना रथं चालयन् सैनिकैः सहैव तत्र समागतः। देवनिर्मिते उद्याने प्रासादे च भगवान् यथायोग्यं सर्वान् सवासितवान्। ततो

ही रण में उद्यत आप को जब इन्द्र ने जाना तो भक्तिवश उन्होंने मुझे रथ लेकर आप की सेवा में भेजा है अतः आप शस्त्र एवं अस्त्रों से सुसज्जित इस रथ में सवार हो जाइये। यह रथ जमीन पर नहीं चलता है। इन्द्र के सारथी की इस बात को सुनकर प्रभु अपूर्वतेज के धाम उस रथ पर सवार हो गये। और आकाश मार्ग से होकर कुशस्थलपुर की तरफ रवाना हुए। साथ के सैनिक लोक भूमि मार्ग से चले। जब कुशस्थलपुर के समीप आये, इतने में देवों ने अपनी वैक्रियशक्ति से उद्यानसहित प्रासाद बना दिया। भगवान्ने सारथि को यह आदेश दे दिया था कि जैसे २ ये सैनिक चले वैसे २ तुम रथ चलाना सो वह सारथी इसी प्रकार से रथ चलाता था अतः प्रभु अपने सैन्य के साथ २ ही कुशस्थलपुर के समीप आ पहुँचे। आते ही प्रभु देवनिर्मित उस उद्यानवाले प्रासाद में ठहर गये, और सैन्यजनों को भी

રાજાની સામે લડવા તૈયાર થઈ રહ્યા છો એવું જ્યારે ઈન્દ્રે જાણ્યું એટલે ભક્તિવશ તેમણે રથ લઈને મને આપની સેવામાં મોકલેલ છે આથી આપ શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોથી સુસજ્જીત આ રથ ઉપર સ્વાર થઈ જાવ આ રથ જમીન ઉપર ચાલતો નથી ઈન્દ્રના સારથીની આ વાત સાંભળીને પાર્શ્વ પ્રભુ અપૂર્વ તેજના ધામ એવા એ રથ ઉપર સ્વાર થઈ ગયા અને આકાશ માર્ગે કુશસ્થલપુરની તરફ રવાના થયા એમના સૈનિકો ભૂમિ માર્ગેથી ચાલવા લાગ્યા તેઓ કુશસ્થલપુરની પાસે આવ્યા એટલામાં દેવોએ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી ઉદ્યાન સાથે એક મહેલ તૈયાર કરી દીધો ભગવાને સારથીને એવો આદેશ આપેલ હતો કે, જેમ જેમ મારા આ સૈનિકો ચાલે તેમ તેમ તમારે આ રથને ચલાવવો આથી એ સારથી એ પ્રમાણે રથને ચલાવતો હતો આ રીતે પ્રભુ પોતાના સૈન્યની સાથે જ કુશસ્થલ પુરની પાસે આવી પહોંચ્યા ત્યાં પહોંચતા જ પ્રભુ પાર્શ્વનાથ દેવોએ તૈયાર કરેલા એ દિવ્યપ્રાસાદમાં રોકાયા અને સૈનિકોને પણ ત્યાં યથાયોગ્ય સ્થાને ઉતાર્યા જ્યારે સઘળા

भगवान् मनस्येवमचिन्तयत्—प्रथमं दूतमुखादमुं मन्निशामि प्रतिनिवर्तयितुम्। यद्यसौ न निवर्तिष्यते, तदैवान्योपायावलम्बनं करिष्यामि। एवं विचिन्त्य स भगवान् तत्समीपे दूतं प्रेषितवान्। दूतोऽपि यवनराट् समीपे गत्वा दुर्मदं तं यवनराजमेवमब्रवीत्—राजन्! श्री पार्श्वनाथो मम मुखाद् भवन्तमेवमादिशति—'अयं प्रसेनजिद्राजा मम तातचरणानां शरणागतः। अतस्त्वया कुशस्थलपुरावरोधनं परित्यज्य स्वराज्यं प्रति प्रस्थातव्यं, यदि वाञ्छसि कल्याणम्। त्वां प्रत्यभ्युद्यतं तातं विनयादिना सान्त्वयित्वाऽहं त्वां रक्षितुमना स्वयमागतः'। अतो भूयोभूयस्त्वां शिक्षयामि—यदि वाञ्छसि कल्याणं, तर्हि मम सन्देशश्रवण

यथायोग्य स्थान में वहां पर ठहरा दिया। जब सब व्यवस्थितरूप से ठहर गये तब प्रभु ने मनमें ऐसा विचार किया कि सर्वप्रथम दूत भेजकर यवनराज को यह सदेश भिजवाना चाहिये कि तुम यहां से वापिस अपने घर पर लौट जाओ। जब वह यह नहीं मानेगा तब अन्य उपाय का मुझे अवलम्बन करना योग्य होगा। ऐसा विचार कर प्रभु ने उसके पास अपना एक दूत भेजा। दूतने जाकर उस दुर्मद यवनराज से कहा—हे राजन श्री पार्श्वनाथ ने मेरे मुख द्वारा आपको यह सदेश दिया है—कि यह प्रसेनजित राजा मेरे पिता की शरण मे आया हुआ है—अत तुम कुशस्थलपुर को छोडकर अपने राज्य मे वापिस लौट जाओ इसी में तुम्हारा भला है। पिताजी स्वय तुम्हारा साम्हना करने के लिये आरहे थे, परतु मैं ने अनुनय-विनय करके उनको शात कर दिया है और तुम्हारी रक्षा करने के अभिप्राय से मैं स्वय आया हूं। मैं बार २ तुम को समझाता हूं कि यदि अपनी भलाई चाहते हो तो मेरे

વ્યવસ્થિત રૂપથી ગોઠવાઈ ગયા ત્યારે પ્રભુએ મનમા એવો વિચાર કર્યો કે, સહુથી પહેલા દૂતને મોકલીને યવનરાજને એવો સદેશો મોકલવો કે, તમો અહીંથી તમારા સ્થાન ઉપર પાછા ચાલ્યા જાવ જો એ આરીતે ન માને તો મારે બીજા ઉપાયનુ અવલબન કરવુ જોઈએ આવો વિચાર કરીને પ્રભુએ યવનરાજની પાસે પોતાનો એક દૂતને મોકલ્યો દૂતે જઈને એ મદમા છકેલા એવા યવનરાજને કહ્યુ કે, હે રાજન! શ્રી પાર્શ્વકુમારે મારી સાથે એવુ કહેવડાવ્યુ છે કે, આ પ્રસેનજીત રાજા મારા પિતાના શરણે આવેલ છે આથી તમારે કુશસ્થલપુરનો ઘેરો ઉઠાવીને પોતાના સ્થાને પાછા ચાલ્યા જવુ જોઈએ એમા જ તમારૂ ભલુ છે રાજા પોતે જ તમારો સામનો કરવા આવી રહેલ હતા પરતુ મે ઘણા જ વિનયની સાથે તેમને શાત કરી દીધા છે અને તમારૂ રક્ષણ કરવાના અભિપ્રાયે હુ આવ્યો છુ અને તમોને એવી સમજણ આપુ છુ કે જો તમે તમારી ભલાઈ ચાહતા હો તો મારા આ

समकालमेव ससैन्येन त्वया प्रस्थातव्यमिति।" इम सन्देश श्रुत्वा क्रुद्धो यवन राडेवमब्रवीत्–रे दूत ! यत्त्वमेव ब्रवीषि, तदसमीचीनमेव। मम पुरतोऽश्वसेनो वा पार्श्वनाथो वा कियन्मात्रम्। अहमेव तव मुखेन तव स्वामिन सन्दिशामि। गच्छ त्व सन्दिश स्वस्वामिनम्। यदि जीवितुकामोऽसि, तर्हि प्रयाहि त्वरितम्। नो चेत्ससैन्यो विनाश प्राप्स्यसि। तद्वचन श्रुत्वा दूतः पुनरप्यवोचत्–राजन् ! मम स्वामी प्रसेनजितमिव त्वामपि रक्षितुमिच्छति। अत एव त्वा बोधयितु मा प्रैषयत्। शक्रैरप्यविजेयस्य मम स्वामिन' पराक्रम बुद्ध्वा त्वरितमितोऽ-

इस सदेश को सुनते ही तुम अपनी सेना को लेकर वापिस लौट जाओ। दूतके मुख से इस सदेश को सुनकर यवनराज ने क्रुद्ध होकर उससे कहा रे दूत ! जो तू ऐसा कह रहा है सो तेरा वह कथन सर्वथा अनुचित ही है। मेरे समक्ष अश्वसेन तथा पार्श्वनाथ की क्या गिनती है। जा और तू उनसे ऐसा मेरी तर्फ से कहदे कि यहा अब तुमको ज्यादा देर तक ठहरने की आवश्यकता नही है। यदि अब और अधिक समय तक यहा ठहरे रहोगे तो याद रखो तुम्हारे जीवन की कुशलता नहीं है। अत' यदि जीवित रहने की अभिलाषा हो शीघ्र ही यहा से वापिस अपने स्थान पर भाग जाओ नही तो यही पर ससैन्य नष्ट कर दिये जाओगे। इस प्रकार यवन राज के असभ्यवचन सुनकर दूत ने पुन उससे कहा, हे राजन्' मेरे स्वामी तो इतने भले है कि वे यहा का राजा प्रसेनजित्त की तरह आप की भी रक्षा करना चाहते हैं इसी लिये उन्होंने मुझे आप को समझाने के लिये भेजा है। आप को यह अपने हृदय मे अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि मेरे स्वामी

ન્દેશાને મ ભળતા જ તમારી સેના સાથે પાછા ચાલ્યા જાવ દૂતના મુખેથી આ સ દેશો સાભળીને યવનરાજાએ ક્રોધિત બનીને તેને કહ્યુ અરે દૂત તુ જે કહી રહેલ છો એ તારૂ કહેવાનુ સઘળુ નિરર્થક છે મારી સામે અશ્વસેન તથા પાર્શ્વકુમારની શુ ગણત્રી છે જા અને મારા તરફથી તુ તેમને કહી દે કે, અહીયા તેમને વધુ સમય રોકાવુ નહી જો તેઓ મારા કહેવા પછી વધુ સમય રોકાશે તો યાદ રાખજો કે તમારા જીવનની કુશળતા નથી આથી જો જીવતા રહેવાની અભિલાષા હોય તો જલદીથી અહીથી ભાગી જાવ નહી તર સસૈન્ય અહી જ તમારો નાશ કરવામા આવશે યવનરાજાના આ પ્રકારના અસભ્ય વચન સાભળીને દૂતે ફરીથી તેમને કહ્યુ કે, હે રાજન ! મારા સ્વામી તો એટલા ભલા છે કે તેઓ અહીના રાજા પ્રસેનજીત માફક આપનુ પણ રક્ષણ કરવા ચાહે છે આ કારણે તેઓએ આપને સમજાવવા માટે મને મોકલેલ છે આપે આપના હૃદયમા એ સારી રીતે સમજી લેવુ જોઈએ

पसर। नाचेदविनयस्य फलं प्राप्स्यसि। यथा हरिणः सिंहेन, तिमिरं भास्करेण शलभा वह्निना, पिपीलिका समुद्रेण, नागा गरुडेन, पर्वत. पविना, मेष. कुञ्जरेण च य द्धुमसमर्थस्तथैव त्वमपि पार्श्वेन सह योद्धुमसमर्थोऽसि। अतो हितबुद्धया त्वामुपदिशामि विरम युद्धव्यवसायात्। गच्छ गृहम्, एवं ब्रुवन्तं तं दूतं यवनराजानुचरा हन्तुमुद्यता। तदा तस्य नीतिकुशलो मन्त्री तानेव प्राह—अरे मूढा.! पार्श्वप्रभोर्दूतं हन्तुमुद्यता यूयम्, मन्ये स्वमपि कण्ठं धृत्वाऽनर्थकूपे प्रक्षिपथ।

इन्द्रों से भी अजेय हैं अतः आपकी इन थोथी बातों में कुछ भी सार नहीं है। इस तरह तुम उनके पराक्रम को जानकर निज की भलाई के लिये यहां से वापिस हो जाओ. नहीं तो अपने किये का फल पाओगे? देखो— जैसे–सिंह के साथ हरिण, सूर्य के साथ अंधकार अग्नि के साथ, पतंग, समुद्र के साथ पिपीलिका (कीडी), गरुड़ के साथ नाग, वज्र के साथ पर्वत, हाथी के साथ मेष, युद्ध करने में असमर्थ है. वैसे तुम भी पार्श्वप्रभु के साथ युद्ध करने में असमर्थ हो, इसलिये मैं हित बुद्धि से तुमको समझाता हूं कि तुम इस व्यर्थ के युद्ध व्यवसाय से दूर रहो और जैसे घर से आये हो वैसे ही चले जाओ। इस प्रकार दूत जब यवनराज से कह रहा था कि इतने में ही उसके अनुचर उसको मारने को तैयार हो गये। अनुचरों को मारने के लिये उद्यत हुए देखकर यवनराज के नीतिकुशल मन्त्रीने उनसे कहा अरे! मूर्खो तुम्हारा यह व्यवसाय योग्य नहीं है जो तुम इस तरह से पार्श्वप्रभु

કે, મારા સ્વામી ઇન્દ્રોથી પણ અજેય છે અથી આપની આ બડાઈ વાળી વાતોમાં કાંઈ સાર નથી આ પ્રકારે તમે તેમના પરાક્રમને જાણીને તમારી પોતાની ભલાઇ માટે અહીંથી પાછા ફરી જાવ નહીં તર તમારે તમારા કરેલા કૃત્યોનુ ફળ અવશ્ય ભોગવવુ પડશે જેમ સિંહની સામે હરણ, સૂર્યની સામે અંધકાર, અગ્નિની સામે પતંગ, સમુદ્રની સામે કીડી, ગરૂડની સામે નાગ, વજ્રની સામે પર્વત, હાથીની સામે ભેંસ યુદ્ધ કરવામા અસમર્થ છે તેવી જ રીતે તમો પણ પાર્શ્વકુમારની સામે યુદ્ધ કરવામા અસમર્થ છો આ કારણે હું તમારા જ હિતને માટે સમજાવુ છુ કે, તમો આ નકામા યુદ્ધના વ્યવસાયથી શાંત રહો અને જે રીતે આવ્યા છો એ જ રીતે પોતાના સ્થળે પાછા ચાલ્યા જાવ આ પ્રમાણે દૂત જ્યારે યવનરાજને કહી રહ્યો હતો એ વખતે તેના અનુચર તેને મારવા માટે તૈયાર થઇ ગયા. અનુચરોને આ રીતે તૈયાર થયેલા જોઇને યવનરાજાના નીતિકુશળ મંત્રીએ તેમને અટકાવતા કહ્યુ કે, અરે મૂર્ખાઓ! તમારો આ વ્યવસાય યોગ્ય નથી કેમકે સંદેશો

यस्याज्ञा शक्रादयः सर्वे इन्द्रा अपि शिरसा मुकुटमिवसमुद्वहन्ति, तस्य पार्श्वप्रभोः दूतस्य हननं दूरेऽस्तु, तदपमानोऽपि सकलापदां पदम्। तस्माद्यूयं निवर्तध्वमस्मादनर्थव्यवसायात्। एवं स्वभटान् निवार्य मन्त्री पार्श्वप्रभुदूतं सामनीत्येदमब्रवीत् –महाभाग! एषामविचार्यकारिणामिममपराधं क्षमस्व। त्वयि योऽसद्व्यवहार एभिः कृतः, स त्वया न कथमपि पार्श्वप्रभवे निवेदनीयः। वयमधुनैव पार्श्वप्रभुप्रणन्तुं समागच्छाम। इत्थं सामवचनैः सान्त्वयित्वा तं दूतं विससर्ज। ततः स मन्त्री, स्वप्रभुं यवनराजमेवमब्रवीत्–स्वामिन्! सिंहसटाकर्षणवद् दुरन्त

के दूतको मारने के लिये उद्यत हो रहे हो। तुम्हारी यह अविचारित क्रिया अपने प्रभु को कंठ पकडकर कूप में पटकने जैसी है। जिस प्रभु की आज्ञा शक्रादिक देव भी मुकुट की तरह शिर पर धारण करते हैं भला, उनके दूतको मारना तो बहुत दूर की बात है, उनका अपमान करना भी सकल आपत्तियों को आमन्त्रित करना है। अतः भलाई आप लोगो की इसी में है कि आप लोग इस अनर्थकारी व्यवसाय से निवृत्त हो जावें। इस प्रकार अपने भटों को हटा कर मंत्री ने पार्श्वप्रभु के दूत से सामनीति का आश्रय करके इस प्रकार कहा–हे महाभाग! आप इन विना विचारे काम करने वाले भटों के इस अपराध को क्षमा करें। इन लोगों ने जो आप के साथ असद्व्यवहार किया है वह आप लोग पार्श्वप्रभु से प्रकट न करें। हम लोग अभी पार्श्वप्रभु को नमन करने के लिये आते हैं। इस प्रकार साम वचनों से दूत को शांत करके मंत्री ने उसको विसर्जित किया। बाद में यवनराज के पास पहुँच कर उनसे इस प्रकार कहा–हे स्वामिन्! सिंह की सटा के आकर्षण की तरह आपने

લઈને આવેલા દૂતને મારવો એ નીતિ વિરૂદ્ધનુ છે, તમારી આ અવિચારી વર્તણુક પોતાના પ્રભુને ગળેથી પકડીને કુવામા નાખી દેવા જેવી છે જે પ્રભુની આજ્ઞા ઈન્દ્રાદિક દેવો પણ શીરોધાર્ય માને છે ભલા એના દૂતને મારવો એ તો ઘણી દૂરની વાત છે, પરંતુ એનુ અપમાન કરવુ એ પણ સઘળી આપત્તીયોને આમંત્રણ આપવા બરોબર છે આપ લોકોની ભલાઇ તો એમા છે કે, આપ લોકો આ અનર્થકારી વ્યવસાયથી અલગ બનો આ પ્રકારે પોતાના અનુચરોને દૂર હટાવીને પછીથી મંત્રીએ પાર્શ્વકુમારના દૂતને સામનીતિનો આશ્રય લઈને કહેવા માડ્યુ હે મહાભાગ! અમારા અવિચારી કામ કરવા વાળા અનુચરોના અપરાધને આપ ક્ષમા કરો એ લોકોએ આપના તરફ જે પ્રકારનો વ્યવહારનુ આચરણ કર્યું છે તેને આપ પાર્શ્વપ્રભુની આગળ પ્રગટ ન કરતા અમો પણ પાર્શ્વપ્રભુને નમન કરવા માટે આવીએ છીએ આ પ્રકારના સામ વચનોથી દૂતને શાંત કરી મંત્રીએ તેને રવાના કર્યો પછી યવનરાજની પાસે જઈને મંત્રીએ તેને કહ્યુ હે સ્વામીન! સિંહની સટા (કેશવાળી) ખેંચવા જેવા દુરન્ત અકર્તવ્ય કાર્યને કરવાનો આપે આ પ્રારંભ કરેલ છે એનાથી

त्वया कथमिदमविचारितकृत्यं कृतम्? यस्य सेनायां स्वयमिन्द्राद्या देवाः सैनिका भूत्वा समुपस्थितास्तेन पार्श्वप्रभुणा सह तव सङ्ग्रामस्तृणाग्निसङ्ग्रामसमः। परमद्यापि नो किमपि गतम्। कण्ठे कुठारं न्यस्य पार्श्वप्रभुमाश्रय, स्वापराधं क्षमय, तदाज्ञावशवर्त्ती भव। यदि त्वमैहिकामुष्मिकं कुशलं वाञ्छसि, तदा मम वचनमङ्गी कुरु। इत्थं मन्त्रिणो वचनं निशम्य यवनः प्राह-मन्त्रिन्! भवताऽहं सुष्ठु बोधितः। यथा भवतोच्यते, तथैवाहं करिष्यामि। एवमुक्त्वा स यवनराजः स्वग्रीवायां कुठारं बद्ध्वा मन्त्रिणा सह पार्श्वप्रभोरन्तिके समुपागतः। द्वारपालेन निर्दिष्टमार्गः स सभामध्ये गत्वा प्रभोश्चरणयोरुपरि स्वमस्तकं

यह क्या दुरन्त अकर्तव्य कार्य बिना विचारे करना प्रारम्भ किया है? जिनकी सेवा में स्वयं इन्द्रादिक देव सैनिक होकर उपस्थित हुए है, उन पार्श्वप्रभु के साथ आपका संग्राम करना तृणाग्निसंग्राम के समान है। परन्तु अब भी कुछ नहीं बिगडा है। कंठ मे कुठार को धारण कर आप पार्श्वप्रभुकी शरण मे जाओ, और अपने अपराध की उनसे क्षमा मागो। उनकी आज्ञा के वशवर्ती हो कर रहो, यदि आप इस लोक पर लोक संबंधी कुशल चाहते होओ तो। मैं आपसे सर्वथा सत्य कहता हूं। मेरे इन वचनो को आप अंगीकार करें इसी में आपकी भलाई है। इस प्रकार मंत्री के वचन सुनकर यवनराजने कहा-हे मंत्रिन्! आपने हमें अच्छा समझाया। आपकी जैसी सलाह है हम वैसा ही करने को तैयार हैं। इस तरह कह कर यवनराज अपनी ग्रीवा में कुठार धारण करके मंत्री के साथ पार्श्वप्रभु के पास पहुंचा। द्वारपालने उसको प्रभु के समीप जाने का मार्ग

સેવામા ઈન્દ્રાદિક દેવ પોતે જ સૈનિક બનીને ઉપસ્થિત થયા છે એવા પાર્શ્વપ્રભુની સામે સંગ્રામ કરવો આપને માટે તૃણ અને અગ્નિના સંગ્રામ જેવુ છે છતા હજુ કાંઈ બગડયુ નથી આપ પોતાના ગળામા કુહાડાને ધારણ કરીને પાર્શ્વપ્રભુની શરણમા જાવ અને પોતાના અપરાધની માફી માગો એમની આજ્ઞા પ્રમાણે વર્તનાર બનો જો આપ આ લોક અને પરલોક સંબંધી કુશળતા ચાહતા હો તો સત્વર તમારા અકર્તવ્યને તજી દો હુ આપને સંપૂર્ણ સત્ય કહુ છુ મારા આ વચનોને આપ અંગીકાર કરો એમા જ આપની ભલાઈ છે આ પ્રકારે મંત્રીના વચન સાભળીને યવનરાજે કહ્યુ મંત્રીન્! આપે મને ઘણો જ ઉત્તમ માર્ગ સમજાવેલ છે આપની જેવી સલાહ છે એ પ્રમાણે હુ કરવા તૈયાર છુ આ પ્રમાણે કહીને યવનરાજે પોતાના ગળામા કુહાડો ધારણ કરી મંત્રીની સાથે પાર્શ્વપ્રભુની પાસે પહોંચ્યો દ્વારપાળે પ્રભુની પાસે જવાનો રસ્તો બતાવ્યો એ માર્ગથી જઈને સભામા બેઠેલા

धृतवान्। ततो भगवदाज्ञया स्वकण्ठात्कुठारमुन्मुच्य भूयः प्रणम्यैवमब्रवीत्-हे नाथ! भवान् सर्वसहोऽसि, अतो ममापराधः क्षम्यताम्, दीयतामभयम्। मम समग्रा श्रियं गृह्णातु, प्रसीदतु भवान्। तद्वचनं श्रुत्वा पार्श्वप्रभुराह-राजन्! तव कल्याणं भवतु। त्वं निजं राज्यं भुङ्क्ष्व। परमन्यदा त्वया एवं न कर्तव्यम्। सपरिवारो निर्भयं गच्छ स्वनगरम्। एवं प्रभुणाऽऽदिष्टः स स्वनगरं प्रति प्रस्थितः।

ततः प्रभोराज्ञया पुरुषोत्तमनामा दूतः प्रसेनजित्समीपे गत्वा सर्वं वृत्तं न्यवेदयत्। तच्छ्रुत्वाऽतीव प्रसन्नः स राजा प्रसेनजिदुपायनमिव स्वपुत्रीं प्रभावतीं

बतलाया सो उसी मार्ग से जाकर उसने सभा के बीच में बैठे हुए पार्श्वप्रभु के चरणों पर मस्तक रख दिया। पश्चात् पार्श्वप्रभु की आज्ञा से फिर अपने कंठ से कुठार उतार कर और पुनः उन्हे नमन कर इस प्रकार कहा-हे नाथ! आप सर्वसह है इसलिये मेरे अपराध को क्षमा करें और मुझे अभय प्रदान करे। आप प्रसन्न हों और मेरी इस समग्र लक्ष्मी को स्वीकारें। इस रूपसे यवनराज के वचनों को सुनकर प्रभुने उससे कहा-हे राजन्! तुम्हारा कल्याण हो तुम अपने राज्य को आनंद के साथ भोगो। परन्तु अब आगे ऐसा नहीं करना। निर्भय होकर तुम यहां से सपरिवार खुशी से अपने नगर को जाओ। इस प्रकर प्रभु द्वारा आदिष्ट होकर यवनराज अपने नगर को चला गया।

इसके बाद प्रभु की आज्ञा से पुरुषोत्तम दूतने प्रसेनजित् के पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह दिया। दूत के मुख से सब बातें सुनकर प्रसेनजित् अतीव प्रसन्न हुआ और भेट-यानेनजराने के रूप में अपनी प्रभावती

પાર્શ્વપ્રભુના ચરણો ઉપર પોતાનુ મસ્તક યવનરાજે નમાવ્યુ પછી પાર્શ્વપ્રભુની આજ્ઞાથી પોતે ગળામા ધારણ કરેલ કુહાડો કાઢી નાખીને ફરીથી નમન કર્યું અને કહ્યુ કે, હે નાથ! આપ સર્વજ્ઞ છો આ કારણે મારા અપરાધની ક્ષમા કરો અને મને અભયપ્રદાન કરો આપ પ્રસન્ન થાવ અને મારી આ સઘળી લક્ષ્મીનો સ્વીકાર કરો. આ પ્રમાણેના વિનયયુક્ત યવનરાજના વચનોને સાભળીને પ્રભુએ તેમને કહ્યુ હે રાજન! તમારૂ કલ્યાણ થાવ તમો તમારા રાજ્યને આનદથી ભોગવો. પરતુ હવે પછી આવુ અકર્તવ્ય કદી પણ ન કરતા નિર્ભય બનીને તમો અહીં થી સપરિવાર ખુશીથી પોતાના નગરમા જાઓ આ પ્રકારનો પ્રભુનો આદેશ મેળવીને યવનરાજ પોતાના સૈન્ય સાથે પોતાના નગર તરફ ચાલી ગયો

આ પછી પ્રભુની આજ્ઞાથી પુરૂષોત્તમ દૂતે પ્રસેનજીતની પાસે જઇને સઘળો વૃત્તાત તેને કહી સભળાવ્યો દૂતના મુખેથી સઘળી વાતો સાભળીને પ્રસેનજીત ખૂબ પ્રસન્ન થયો, અને ભેટ યાને નજરાણાના રૂપમા પોતાની પુત્રી પ્રભાવતીને સાથે લઈને પાર્શ્વપ્રભુની

सहादाय पार्श्वप्रभोः समीपे गत्वा नमस्कारपूर्वकमिदमब्रवीत्-प्रभो! भवान् स्वयमिहागत्य मय्यनुग्रहमकरोत्। इदानीमहं वदामि भवान् इमां कन्यकां मम पुत्रीं स्वीकरोत्विति। प्रसेनजितो वचनं निशम्य भगवानाह-राजन्! पितुराज्ञया भवन्तं परित्रातुमहमिहागमो, न तु भवत्सुतां परिणेतुम्। इत्थं प्रभोर्वचनं श्रुत्वा प्रसेनजिन्मनस्यचिन्तयत्-नाय मम वचनात्स्वीकरिष्यति, अतोऽस्य पितुर्वचनात् स्वीकारयिष्यामि। इत्थं विचिन्त्य स पार्श्वप्रभुमेवमुक्तवान्-स्वामिन्! भवत्पित्रा उपकृतोऽस्मि, अतोऽहं सपरिवारो भवता सह तं प्रणन्तुं गमिष्यामि। ततः पार्श्वप्रभुस्तं

पुत्री को साथ लेकर पार्श्वप्रभु के समीप आकर नमस्कार पूर्वक इस प्रकार कहने लगा-प्रभो! आपने मेरे ऊपर बडी भारी कृपा की जो स्वयं पधारे। मैं चाहता हूं कि आप मेरी इस पुत्री को स्वीकार कर मुझे अनुगृहीत करें। प्रसेनजित् के इस प्रकार वचन सुनकर प्रभुने उनसे कहा-हे राजन्! पिताकी आज्ञा से आप की रक्षा करने के लिये ही मैं यहां आया हूं, आपकी पुत्री को विवाहने के लिये नहीं आया हूं। पार्श्वकुमार के ऐसे वचन सुनकर प्रसेनजित् ने मन में ऐसा विचार किया कि ये कुमार मेरे कहने से मेरी पुत्री को स्वीकार नहीं करेंगे-अतः इनके पिता से इस विषय में कहना चाहिये तभी मेरी पुत्री को स्वीकार कर सकेंगे। इस प्रकार सोच समझ कर प्रसेनजित् ने पार्श्वकुमार से कहा-हे स्वामिन्! आप के पिता ने मेरा बहुत उपकार किया है, इसलिये मैं उनके दर्शन के लिये परिवार सहित आप के साथ चलना चाहता हूं। प्रसेनजित् का ऐसा आग्रह देख कर पार्श्वकुमार ने उनको अपने साथ

પાસે પહોંચી નમસ્કાર પૂર્વક કહેવા લાગ્યા પ્રભુ! આપ મારા ઉપર ઘણી જ કૃપા કરીને સ્વયં અત્રે પધાર્યા છો, હું ચાહું છું કે, આપ મારી આ પુત્રીનો સ્વીકાર કરી મને અનુગૃહીત કરો. પ્રસેનજીતના આ પ્રકારના વચનોને સાંભળીને પ્રભુએ તેમને કહ્યું હે રાજન્! પિતાની આજ્ઞાથી આપની રક્ષા કરવા માટે જ હું અહીં આવેલ છું આપની પુત્રીની સાથે વિવાહ કરવા માટે આવેલ નથી. પાર્શ્વકુમારના આવા વચન સાંભળીને પ્રસેનજીતે મનમાં એવો વિચાર કર્યો કે, આ કુમાર, મારા કહેવાથી મારી પુત્રીનો સ્વીકાર કરશે નહીં. આથી એના પિતાને આ વિષયમાં કહેવું જોઈએ આમ થવાથી તેઓ મારી પુત્રીનો સ્વીકાર કરી શકશે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને પ્રસેનજીતે પાર્શ્વકુમારને કહ્યું હે સ્વામીન્! આપના પિતાએ મારા ઉપર ભારે ઉપકાર કર્યો છે એ કારણે હું એમના દર્શન માટે સપરિવાર આપની સાથે આવવા ચાહું છું. પ્રસેનજીતના આ પ્રકારના આગ્રહથી પાર્શ્વકુમારે તેમને પોતાની

समनुज्ञातः प्रसेनजित्स्वपुत्रीं प्रभावतीं सहादाय तेन सह वाराणसी पुरीं गतः। तत्र गत्वा भगवान् पार्श्वनाथः पितरं प्रणम्य स्वभवनं गतः। स्वपुत्र्या प्रभावत्या सहितो राजा प्रसेनजिदपि राज्ञोऽश्वसेनस्य समीपे गत्वा तं प्रणतवान्। अश्वसेनोऽप्यासनात्समुत्थाय तं सादरं समालिङ्ग्य स्वासने समुपवेश्य कुशलमागमनकारणं च पृष्टवान्। ततः प्रसेनजिदाह—राजन्! यस्य भवान् रक्षकोऽस्ति, तस्य सर्वं कुशलमेव! तथापि भवत्समीपे समागतोऽस्मि किमपि कारणमुद्दिश्य! इयं मम पुत्री प्रभावती पार्श्वकुमारेऽनुरक्ताऽस्ति? अतो भवानिमां कन्यां पार्श्वकुमाराय गृह्णातु। राज्ञः प्रसेनजितो वचनं निशम्य राजाऽश्वसेनस्तमेवमब्रवीत्—राजन्!

चलने की आज्ञा दी। प्रभु से आज्ञा पाकर प्रसेनजित् साथ में अपनी पुत्री प्रभावती को लेकर ,उनके साथ बनारस गये। प्रभु पिता को प्रणाम कर अपने भवन पर चले गये और राजा प्रसेनजित् अश्वसेन राजा के पास जाकर उन से मिले। और नमस्कार किया। अश्वसेन राजा ने भी अपने आसन से उठकर उनसे भेट की एवं आधे सिंहासन पर बैठा कर कुशल समाचार पूछते हुए आने का कारण पूछा। प्रसेनजित् ने कुशल समाचार के विषय मे निवेदन करते हुए कहा कि महाराज! जिसके आप जैसे सामर्थ्यशाली राजा रक्षक हैं, भला उसमे अकुशलता कैसे हो सकती है? आपकी कृपा से सर्वप्रकार से सर्वकुशलता है। परंतु आपकी सेवा मे आने का कारण निज का कुछ उद्देश्य है, और वह यह है—यह मेरी प्रभावती पुत्री पार्श्वकुमार मे अनुरक्त हो रही है सो आप इस पुत्री को पार्श्वकुमार के निमित्त स्वीकार करे। प्रसेनजित् के इस प्रकार वचन सुनकर अश्वसेन राजा ने उनसे ऐसा कहा हे

સાથે ચાલવાની આજ્ઞા આપી પ્રભુની આજ્ઞા મળતા પ્રસેનજીત પોતાની પુત્રી વગેરેને સાથે લઇ તેમની સાથે વારાણસી પહોચ્યા પ્રભુ પિતાને પ્રણામ કરી પોતાના સ્થાને ચાલ્યા ગયા આ પછી રાજા પ્રસેનજીત અશ્વસેન રાજાને જઈને મળ્યા અને નમસ્કાર કર્યો અશ્વસેન રાજા પણ ઉભા થઈને તેમને ભેટયા, અને પોતાના અરધા આસન ઉપર બેસાડીને કુશળ સમાચાર પૂછયા અને પછીથી આવવાનુ કારણ પૂછયુ પ્રસેનજીતે કુશળસમાચાર જણાવતા કહ્યુ કે, મહારાજ! જેના આપ જેવા સામર્થ્ય શકિતશાળી રાજા રક્ષક છે તેની અકુશળતા કઇ રીતે હોઇ શકે? આપની કૃપાથી સર્વ પ્રકારની કુશળતા છે પરંતુ આપની સેવામા આવવાનુ કારણ મારો પોતાનો એમા એક અગત્યનો સ્વાર્થ છે અને તે એ છે કે, આપ મારી પુત્રી પ્રભાવતી પાર્શ્વનાથ કુમારમા અનુરકત થઈ રહી છે તો આપ મારી આ પુત્રીનો પાર્શ્વનાથ કુમારના માટે સ્વીકાર કરો પ્રસેનજીતના આ પ્રકારના વચન સાંભળીને અશ્વસેન રાજાએ

कुमारोऽय ससारात्सदैव विरक्तस्तिष्ठति । तथाऽप्यह तव तुष्टय त परिणाय यिष्यामि । इत्युक्त्वाऽश्वसेननृप' पार्श्वकुमार समाहूयेदमब्रवीत्-वत्स ! अस्य राज्ञ' सुता परिणय। यद्यपि त्व बाल्यादेव भववासाद् विरक्तोऽसि, तथाऽप्येतन्मम वचन दाक्षिण्यवता त्वया मान्यमेव। इत्थ पिता साग्रह प्रोक्तः पार्श्वप्रभु मौनमवलम्ब्य स्थित'। ततः प्रभावत्या सह भगवतो विवाह• सजात• ।

अथैकदा गवाक्षस्थितो भगवान् पार्श्वनाथः पुष्पहस्तान् नगराद् बहि र्गच्छतो बहून् जनानपश्यत् । तत• स पार्श्वस्थिताननुचरान् पृष्टवान्-किमद्य

राजन् ! देखो यह पार्श्वकुमार ससार से सर्वदा विरक्त बना रहता है, परन्तु फिर भी मै आप के सतोष के लिये उसको परणाऊँगा। ऐसा कह अश्वसेन राजा ने उसी समय अपने पास पार्श्वकुमार को बुलाकर ऐसा कहा-हे वत्स ! इस राजा की पुत्री के साथ तुम विवाह करो। यद्यपि तुम बाल्यकाल से ही इस गृहवास से विरक्त बने हुए हो तो भी मेरे इन वचनों को तुम जैसे विवेकी को मानना ही चाहिये। इस प्रकार पिता के द्वारा आग्रह पूर्वक कहे जाने पर पार्श्वकुमार उनके समक्ष कुछ भी नही बोले अतः प्रभु की समति जान कर पिताने प्रभावती के साथ उनका विवाह कर दिया।

एक दिनकी बात है कि भगवान् ने जो उस समय अपने महल की खिडकी मे बैठे हुएथे पुष्पो को हाथों मे लेकर नगर से बाहिर जाते हुए अनेक मनुष्यों को देखा। देखते ही प्रभु ने अपने पास मे खडे हुए

તેમને એવુ કહ્યુ કે, હે રાજન સાભળો પાર્શ્વકુમાર સસારથી સર્વદા વિરકત બનીને રહે છે છતા પણ આપના સતોષને માટે આપની પુત્રીની સાથે તેને પરણાવીશ આવુ કહીને અશ્વસેન રાજાએ પાર્શ્વકુમારને પોતાની પાસે બોલાવીને એવુ કહ્યુ કે, હે વત્સ ! આ રાજાની પુત્રી સાથે તમે વિવાહ કરો જો કે તમો બાલ્યકાળથી જ સસારિક વ્યવહારથી અલિપ્ત રહ્યા છો તો પણ મારા આ વચનોને તમારા જેવા વિવેકીએ માનવા જ જોઈએ આ પ્રકારે પિતા તરફથી આગ્રહ પૂર્વક કહેવામા આવવાથી પાર્શ્વકુમાર તેમની સામે કાઈ પણ ના બોલ્યા આથી પ્રભુની સમતિ જાણીને પ્રભાવતીનો પાર્શ્વપ્રભુની સાથે વિવાહ કરી દીધો

એક દિવસની વાત છે કે, ભગવાન પોતાના મહેલના ઝરૂખામા બેઠેલ હતા ત્યારે તેમણે હાથમા ફૂલોને લઈને નગરની બહાર જતા ઘણા મનુષ્યોને જોયા એ જોતા જ પ્રભુએ પોતાની પાસે ઉભેલા અનુચરને પૂછ્યુ શુ આજ કોઈ મહોત્સવ છે

कश्चिन्महोत्सवोऽस्ति, विशालजनसमूहः सपुष्पापणिर्नगराद् बहिर्गच्छति ? एवं पृच्छन्तं भगवन्तं कश्चिदनुचरः प्राह—स्वामिन्! नास्ति कश्चिदुत्सवः! किन्तु बहिरुद्याने कमठो नाम तापसाग्रणीः समागतोऽस्ति। तदर्चनायैते लोका गच्छन्ति। इत्थं तद्वचनमाकर्ण्य तत्कौतुकं द्रष्टुकामो भगवान् पार्श्वनाथोऽपि जनन्या सह सपरिजनस्तत्र गतः। तत्र पञ्चाग्निसाधकं तं कमठं पश्यन्नवधिनानेन वह्निकुण्डनिक्षिप्तकाष्ठे दह्यमानं नागनागिनीयुगलमपश्यत्। तत् प्रेक्ष्य कृपातरङ्गसमुद्वेल्लितस्वान्तो भगवान् पार्श्वप्रभुरेवमब्रवीत्—'अहो! तपस्यां कुर्वतोऽप्यस्य ज्ञानं न जातं, यतोऽस्य दयागुणो नास्ति! चक्षुर्विना यथा मुखं न शोभते, तथैव

अनुचरों से पूछा क्या आज कोई महोत्सव है, जो मनुष्यों के यह विशाल समूह के समूह हाथों में पुष्पों को लेकर नगर बाहर जा रहा है। भगवान् के इस प्रकार पूछने पर अनुचर ने कहा—स्वामिन्! उत्सव तो कोई नही हैं किन्तु नगर के बाहर उद्यान मे कमठ नाम का बडा तापस आया हुआ है। अतः उनके दर्शन के निमित्त ये सब लोग जा रहे हैं। इस प्रकार अनुचर के वचन सुनकर पार्श्वकुमार इस को देखने के लिये माता एवं परिजनों के साथ वहां गये। उस समय कमठ वहां पचाग्नि तपस्या कर रहा था। उसमे बडे २ काष्ट जल रहे थे। अवधिज्ञान से एक काष्ट के भीतर जो अग्निकुण्ड मे रखा हुआ जल रहा था नागनागिनी युगल को जलता हुआ देख कर प्रभुका हृदय करुणा से भर आया। उन्हों ने उसी समय ऐसा कहा—देखो यह कितने आश्चर्य की बात है, जो तपस्या करते हुए भी यह ज्ञान से विहीन बना हुआ है। इस का कारण इसमें दयागुण का अभाव है। जैसे चक्षु के विना

કે, જેથી નગરજનો હાથમા ફુલોને લઈને નગરની બહાર જઈ રહ્યા છે ભગવાનના આ પ્રમાણે પૂછવાથી અનુચરે કહ્યુ સ્વામિન્! ઉત્સવ તો કોઈ નથી પરતુ નગરની બહાર ઉદ્યાનમા કમઠ નામના એક મોટા તપસ્વી આવેલ છે આથી તેના દર્શન માટે આ સઘળા લોકો જઇ રહ્યા છે આ પ્રકારના અનુચરના વચન સાભળીને પાર્શ્વકુમાર પોતાના માતા અને પરિવારના બીજા માણસો સાથે ત્યા ગયા આ સમયે કમઠ ત્યા પચાગ્નિ તપસ્યા કરી રહેલ હતા ત્યા મોટા મોટા લાકડા બળી રહ્યા હતા, અવધિજ્ઞાનથી બળી રહેલા એ લાકડામા નાગ અને નાગણીનુ એક જોડુ હોવાનુ પાર્શ્વપ્રભુએ જાણ્યુ આથી પ્રભુનુ હૃદય કરૂણાથી ભરાઈ આવ્યુ અને આથી તેમણે એ સમયે એવુ કહ્યુ કે, જુઓ! આ કેટલા આશ્ચર્યની વાત છે કે, તપસ્યા કરવા છતા પણ આ તાપસ જ્ઞાનથી વિહીન બની રહેલ છે તેનુ કારણ તેનામા દયા ગુણનો અભાવ છે જે રીતે આખો વગર

दया विना धर्मोऽपि न शोभते। दयारहितो धर्मस्तु धर्माभास एव। निष्कृपस्यास्य कायक्लेश पशोरिव निष्फल । पार्श्वप्रभोर्वचनमाकर्ण्य कमठतापस एवमब्रवीत्–राजपुत्र ! भवादृशा जना गजशिक्षादौ दक्षा, स्युः, धर्मे तु वय मुनय एव दक्षाः वय हि सर्वज्ञा, स्मः। तत पार्श्वप्रभुरग्निकुण्डे प्रज्वलत्काष्ठ प्रदर्श्य त पृष्टवान्–किमस्त्यस्मिन् काष्ठे ? स प्राह––नास्ति किमपीति। तत पार्श्वप्रभुरग्निकुडात्तत्काष्ठ सेवकै निष्काश्य यत्नेनाभेदयत्। तस्माज्ज्वलनज्वाला समाकुल म्रियमाण नागनागिनी युगल निर्गतम्। तत्र भगवान् नमस्कारम न्त्रस्य शरण तस्मै दत्तवान्। तथा प्रत्याख्यानादिक चापि परलोकप्रस्थिताय

मुख की शोभा नही होती है उसी प्रकार दया के विना धर्म की भी शोभा नहीं होती है। ऐसा धर्म वास्तविक धर्म नही है किन्तु वह तो धर्माभास है। पशु की तरह दया रहित का थोथा यह कायक्लेश बिलकुल निष्फल है। इस तरह प्रभु का कथन सुनकर कमठ तापस ने उनसे कहा–राजपुत्र! आप जैसे मनुष्य तो गज की शिक्षा आदि मे ही निपुण हो सकते हैं धर्म में नही। धर्म मे तो हम मुनिजन ही दक्ष हुआ करते है। क्यों कि हम सर्वज्ञ है। इस प्रकार कमठ तापस के वचनो को सुनकर प्रभु अग्निकुण्ड से प्रज्वलत्काष्ठ को उसे दिखलाकर कहने लगे–बोलो इसमें क्या है? तापस ने कहा इसमे कुछ भी नहीं है। पश्चात पार्श्वप्रभु ने अग्नि कुण्ड से उस काष्ठ को सेवको द्वारा निकलवा कर उसको बडी सावधानी से चिरवाया। चिरवाते ही उस मे अग्नि की ज्वाला से मरता हुआ नागनागिनी युगल निकला। प्रभुने उन दोनों को पच नमस्कार मन्त्र सुनाया। तथा परलोक मे प्रस्थान करने वाले

મોઢાની શોભા નથી હોતી તે પ્રમાણે દયા વગર ધર્મની શોભા હોતી નથી એવો ધર્મ વાસ્તવિક ધર્મ નથી પરતુ માત્ર ધર્માભાસ છે પશુની માફક દયા રહિત એવો આ કાયાનો ક્લેશ બિલકુલ નિષ્ફળ છે આ પ્રમાણે પ્રભુનુ કથન સાભળીને કમઠ તાપસે તેમને કહ્યુ રાજપુત્ર! આપ જેવા મનુષ્ય તો હાથીને શિક્ષણ આપવા વિ કામમાં જ નિપુણ હોય છે, ધર્મમા નહી ધર્મમા તો અમો મુનિજનો જ જાણતા હોઇએ છીયે કેમકે અમો સઘળુ જાણનારા હોઈએ છીયે આ પ્રકારના કમઠ તાપસના વચનોને સાભળીને એ અગ્નિકુડમા બળી રહેલા લાકડાને તેને બતાવીને કહ્યુ–કહો આમા શુ છે ? તાપસે કહ્યુ કે, એમા કાંઈ પણ નથી પછીથી પાર્શ્વ કુમારે સેવકો પાસે અગ્નિકુડમા બળી રહેલા લાકડાને બહાર કઢાવી ઘણી જ સાવધાનીથી તેને ફડાવ્યુ ફડાવતા જ અગ્નિથી મૃત્યુના આરે ઉભેલ એવુ નાગ નાગણીનુ યુગલ નીકળ્યુ પ્રભુએ એ બન્નેને નમસ્કાર મત્ર સભળાવ્યો તથા પરલોકમા પ્રસ્થાન કરી રહેલા એમને માટે ભાતા સ્વરૂપ પ્રત્યાખ્યાન આ નિરૂપણ

तस्मै नागनागिनीयुगलाय सम्बलरूपेण दत्तवान्। भगवद्वचन श्रद्धान स नागो मृत्वा नागकुमारदेवेषु धरणाभिधो नागेन्द्रो जात। नागिनी च तस्य धरणेन्द्रस्य पट्टमहिषीत्वेन पद्मावती नाम देवी जाता। तदनु "अहो! अस्य कुमारस्य विज्ञानम्' इति वादिभि सकलैर्लोकै स्तूयमानो भगवान स्वानुचरैः सह स्वभवन समागतः। ततोऽत्यन्तलज्जिताऽन्तःशठ. स कमठ' प्रभूत बाल-तपः कृतवान। इत्थ बालतप' कुर्वन् मिथ्यात्वमोहित स मृत्वा भवनपतिषु मेघमालीति नामको देवो जात'।

अथान्यदा भगवान् पार्श्वनाथ उद्यान गत.। तत्रैकान्ते स्थितस्य तस्य भगवत' स्मृतिपथे भगवतो नेमिनाथस्य चरित समागतम्। तदा स एवमचि

उनके लिये कलेवा (भाता) स्वरूप प्रत्याख्यान आदिक भी दिया। भगवान् के वचनो पर विश्वास करनेवाले उन दोनो में से नाग का जीव तो मर कर नागकुमार देवो में धरणेन्द्र नामका इन्द्र हुआ। तथा नागिनी भी मर कर इस नाग प्रधान कुमार की पद्मावती देवी हुई। इसके बाद "देखो इस कुमार का विज्ञान कितना आश्चर्य कारी है" ऐसा वहा पर उप-स्थित हुए लोगों ने कहना प्रारभ किया। प्रभु भी वहा से अपने अनु-चरों को साथ लेकर मकानपर आगये। कमठ तापस विशेषलज्जित हुआ। तो भी उसने बालतप तपना नही छोडा प्रत्युत पहिले की अपेक्षा भी वह अधिक तप तपने लगा। इस बालतप को तपता हुआ मिथ्यात्व मोहित वह कमठ तापस बालतप करते २ मर गया। और मर कर भवनपतियों में जाकर असुरकुमार जाति का देव हुवा। वहाँ उसका नाम मेघमाली पडा।

एक समय की बात है कि भगवान् पार्श्वनाथ अपने उद्यान मे गये

આપ્યુ ભગવાનના વચનોમા પણ વિશ્વાસ કરવાવાળા એ બન્નેમાથી નાગનો જીવ મરીને નાગકુમાર દેવોની જાતીમા ધરણેન્દ્ર નામનો ઇન્દ્ર થયો તથા નાગણી પણ મરીને એ નાગકુમાર ઇન્દ્રની પ્રધાન દેવી પદ્માવતી થઈ આ પછી જુઓ! "આ કુમારનુ વિજ્ઞાન કેટલુ આશ્ચર્ય કારક છે" એવુ ત્યા ઉપસ્થિત થયેલા લોકોએ કહેવા માડયુ પ્રભુ પણ પોતાના અનુચરોની સાથે ત્યાથી નીકળી પોતાના નિવાસ સ્થાને પહોચી ગયા કમઠ તાપસ આથી ખૂબ શરમાયો તો પણ તેણે બાળતપ તપવાનુ છોડયુ નહી અને પ્રથમથી પણ વધુ કષ્ટ એવુ તપ એ તપવા માડયો આ બાળતપને તપતો મિથ્યાત્વમોહિ એ કમઠ બાળતપ કરતા કરતા મૃત્યુ પામ્યો, અને મરીને ભવનપતિઓમા જઈને અસુરકુમાર જાતિનો દેવ થયો ત્યા તેનુ નામ મેઘમાલી પડયુ

એક સમયની વાત છે કે, ભગવાન પાર્શ્વનાથ પોતાના ઉદ્યાનમા ગયા હતા ત્યા એકાન્તમા બેસીને તેઓ નેમિનાથ ભગવાનના ચારિત્રનો વિચાર કરવા લાગ્યા

न्तयत्-धन्याऽहंन्नरिष्टनेमयो गाढानुरक्तामपि राजीमतीं परित्यज्य कौमार एव व्रतमग्रहीत। तस्मान्ममाप्युचित यदह निःसङ्गो भवामि। इत्थं विचिन्तयतो भगवतोऽन्तिके लोकान्तिका देवाः समागत्य प्रणम्य तीर्थप्रवर्तनाय भगवन्तमभ्यर्थितवन्त । ततो भगवान धनदपूरितैर्धनैर्वार्षिक दान दत्वा व्रतग्रहणाय मातापित्रोराज्ञा गृहीतवान। ततोऽश्वसेनादिभिर्नरेन्द्रैः शक्रादिभिर्देवेन्द्रैश्च श्रीपार्श्वप्रभोर्दीक्षाऽभिषेको महता महोत्सवेन कृत । अथ भगवान देवैरुह्यमाना शिबिकामारुह्य आश्रमपदनामकोद्यानाभिमुखं प्रस्थित । तदा देवैर्देवदुन्दुभिनादैः द्यावापृथिव्यापूरिते । भगवानपि तदुद्यानं गत्वा शिबिकायास्तथाऽवतरत्, यथा

हुए थे। वहा एकान्त मे बैठ कर वे नेमिनाथ भगवान् के चारित्र का विचार करने लगे-प्रभुने विचारा धन्य है, उन अरिष्टनेमिनाथ को जिन्हो ने कुमार अवस्था मे ही अपने गाढानुरक्त राजीमती का परित्याग कर व्रत ग्रहण किया। मै भी इसी तरह निःसग होता हू प्रभु के उस प्रकार के विचार करते ही उसी समय उनके समीप लोकान्तिक देवों ने आकर उनको प्रणाम किया और तीर्थप्रवर्तन के लिये उनसे प्रार्थना की। प्रभु ने कुबेर द्वारा भरे गये भडार से वार्षिक दान देकर माता पिता से व्रत ग्रहण करने की आज्ञा मागी। उनकी आज्ञा प्राप्त कर भगवान ने सर्व विरति को धारण किया। इस समय अश्वसेन आदि नरेन्द्रों ने तथा शक्र आदि देवेन्द्रोंने पार्श्वप्रभु की दीक्षा का महोत्सव खूब ठाट बाट से मनाया। प्रभु की शिबिका को सर्व प्रथम देवोने कधो पर उठाया। और उसको वे आश्रमपद नामक उद्यान के सन्मुख ले गये। देवो ने उस समय दुन्दुभि के नादों से आकाश और भूमि को गुजित कर

પ્રભુએ વિચાર્યું કે ધન્ય છે એ અરિષ્ટ નેમિનાથને કે, જેઓએ કુમાર અવસ્થામા જ પોતાનામા ગાઢ અનુરક્ત એવી રાજુમતીનો પરિત્યાગ કરીને વ્રત ગ્રહણ કર્યું હુ પણ આવી જ રીતે નિસગ બની શકુ છુ પ્રભુએ આ પ્રકારનો વિચાર કરતા જ તે સમયે તેમની સામે લોકાતિક દેવે એ આવીને તેમને પ્રણામ કર્યો અને તીર્થ પ્રવર્તન માટે તેમને પ્રાર્થના કરી પ્રભુએ કુબેર દ્વારા ભરાયેલા ભડારથી વાર્ષિક દાન દઈને માતા પિતા પાસે વ્રત ગ્રહણ કરવાની આજ્ઞા માગી માતા પિતાની આજ્ઞા મેળવીને ભગવાને સર્વ વિરતીને ધારણ કરી આ સમયે અશ્વસેન આદિ નરેન્દ્રોએ તથા શક્ર આદિ દેવેન્દ્રોએ પાર્શ્વપ્રભુની દીક્ષાનો મહોત્સવ ખૂબ ઠાઠમાઠથી મનાવ્યો પ્રભુની પાલખીને સહુથી પ્રથમ દેવોએ પોતાના ખભા ઉપર ઉપાડી અને તેને આશ્રમપદ ઉદ્યાનની પાસે લઈ ગયા દેવોએ એ સમયે દુદુભીના નાદોથી આકાશ અને પૃથ્વીને ગુજીત બનાવી દીધા ભગવાન જ્યારે ઉદ્યાનમા

ममत्वात्तन्मनोऽवतीर्णम्। तत्र त्रिंशद्वर्षवयस्को भगवान् भूषणादिकमुत्तार्य लोचं कृत्वा, शक्रेण दत्तं देवदूष्यं दधानो नृणां त्रिभिः शतैः सह कृताष्टमतपाः सर्वविरतिं प्रतिपन्नः। तस्मिन् समये जिनो मनःपर्ययनामकं चतुर्थज्ञानं प्राप्तवान्। दीक्षां गृहीत्वा भगवान् भारण्डपक्षीवाप्रमत्तो भुवि विहरति स्म।

अथान्यदा भगवान् विहरन् नगरसमीपे दशस्य तापसाश्रमं समागतः। तस्मिन्नेवकाले सूर्योऽप्यस्ताचलमुपसंक्रान्तः। ततो भगवान् कस्यचिद् गर्त्तस्य तटस्थवटवृक्षच्छायायां निषण्णः। तत्र भगवान् नासाग्रन्यस्तनेत्रः प्रतिमया स्थितः

दिया। भगवान् जब उद्यान में पहुंचे तो वे शिबिका से ऐसे उतरे कि जैसे उनका मन ममत्व से उतरा था भगवान् की अवस्था इस समय सिर्फ तीस वर्ष की थी। इस अवस्था मे भी प्रभुने अपने शरीर से समस्त आभूषणों को उतार दिये और केशो का अपने हाथों से पंच-मुष्टि लोच करके शक्रेन्द्र द्वारा प्रदत्त देवदूष्य वस्त्र को धारण किया। भगवान् के साथ तीनसौ राजाओं ने दीक्षा अंगीकार की। दीक्षा धारण करते ही प्रभु को चतुर्थ मनःपर्ययज्ञान की प्राप्ति होगई। दीक्षा ग्रहण करके भगवान् भारण्डपक्षी की तरह अप्रमत्त होकर पृथ्वीमडलपर विहार करने लगे।

एक समय प्रभु विहार करते २ नगर के समीप मे रहे हुए तापसों के आश्रम म आये। इस समय सायंकाल का समय था। प्रभु वहां पधार कर एक खड्डे पर खडे हुए वटवृक्ष के नीचे प्रतिमा प्रतिपन्न होकर खडे रहे।

પહોંચ્યા ત્યારે તેઓ પાલખીમાંથી એવી રીતે ઉતર્યા કે, તેમનું મન મમત્વથી જે રીતે ઉતર્યું હતું ભગવાનની અવસ્થા આ સમયે ફક્ત ત્રીસ વર્ષની હતી આ અવસ્થામાં પણ પ્રભુએ પોતાના શરીર ઉપરના સઘળા આભૂષણોને ઉતારી નાખ્યા અને કેશોને પોતાના જ હાથથી પંચમુષ્ટી લોચન કરીને શકેન્દ્રે આપેલ દેવદુર્લભ વસ્ત્રને ધારણ કર્યાં ભગવાનની સાથે ત્રણસો રાજાઓએ દીક્ષા ધારણ કરી દીક્ષા ધારણ કરતાં જ પ્રભુને ચોથા મનઃપર્યયજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ દીક્ષા ગ્રહણ કરીને ભગવાન ભારંડ પક્ષીની માફક અપ્રમત્ત બનીને પૃથ્વી મંડળ ઉપર વિહાર કરવા લાગ્યા

એક સમય પ્રભુ વિહાર કરતા કરતા નગરની નજીકમાં આવેલા એવા એક તાપસોના આશ્રમમાં પહોંચ્યા આ વખતે સાયંકાળનો સમય હતો પ્રભુ ત્યાં પહોંચીને એક ટેકરા ઉપરના વટ વૃક્ષની નીચે પ્રતિમાની માફક નિશ્ચળપણે ઉભા રહી ગયા

तस्मिन् समये मेघमालिनामा सोऽसुरोऽवधिज्ञानेन स्वपूर्वभववृत्तान्तं ज्ञात्वा वैरं स्मृत्वा क्रोधेनान्तःप्रज्वलन् भगवतः पार्श्वनाथस्योपसर्गं कर्तुं तं प्रदेशं समागतः। तत्रागतः स स्ववैक्रियशक्त्या घोररूपवरान् पुच्छाघातकम्पितपर्वतान् अङ्कुशाकारनखवरान् सिंहान् विकुर्वितवान्। ते भगवतो भीतिमुत्पादयितुं बहुधा प्रयतन्ते स्म, परन्तु भगवान् ध्यानाद् मेरुरिव अकम्पितः स्थितः। ततः सोऽसुरः उत्तुङ्गगिरिसमान् भीषणेभ्योऽपि भीषणान् मत्तगजान् विकुर्वितवान्। तै गजैरपि भगवान् अनुद्विग्नः स्थितः। ततः क्रुद्धः स स्फारफूत्कारकारिणो

मेघमाली ने इस अवसर पर अपने अवधिज्ञान द्वारा पूर्वभव का समस्तवृत्तान्त जानकर क्रोध से एकदम क्रुद्ध होकर उपसर्ग करने के अभिप्राय से वहा आया। आते ही उसने अपनी वैक्रिय शक्ति के प्रभाव से बहुत सिंहों को विकुर्वित किया। ये सिंह घोररूप को धारण किये हुए थे। तथा अपनी पुच्छों के आघातों से पर्वतों को भी कपित कर देने वाले थे। इनके नख तो ऐसे थे जैसे मानों अकुश हो। उन्होंने भगवान् को अपने ध्यान से चलायमान करने का खूब प्रयत्न किया– उनको भयभीत करने के लिये अनेकविध उपाय किये–परन्तु मेरु के समान अकप वे प्रभु अपने ध्यान से जरा भी चलित नहीं हुए। जब कमठ के जीव उस असुर मेघमाली ने प्रभु को ध्यान से अडोल देखा तो उसने वैक्रिय शक्ति के द्वारा उत्तुगगिरि जैसे एव भीषण से भी भीषण मदोन्मत्त गजो को विकुर्वित किया। प्रभु इन से भी अनुद्विग्नचित्त होकर ध्यानस्थ बने रहे। इस तरह अपने प्रयत्न में जब मेघमाली देव अस-

મેઘમાલીએ આ અવસર ઉપર પોતાના અવધિજ્ઞાન દ્વારા પુર્વ ભવનો સઘળો વૃત્તાત જાણીને ક્રોધના આવેશમા આવી જઈને ઉપસર્ગ કરવાના અભિપ્રાયથી ત્યા આવ્યો આવતા જ તેણે પોતાની વૈક્રિય શકિતથી સિંહોને ઉત્પન્ન કર્યા એ સિંહ ભયકર એવા રૂપવાળા હતા અને પોતાના પુછડાના પછાડવાથી પર્વતોને પણ કપાયમાન બનાવે તેવા હતા તેમના નખ અકુશના જેવા હતા તેઓએ ભગવાનને પોતાના ધ્યાનથી ચલાયમાન કરવાનો ખુબ પ્રયત્ન કર્યો તેમને ભયભીત કરવા માટે અનેકવિધ ઉપાય કર્યા પરતુ મેરૂ જેવા અકપ એ પ્રભુ પોતાના ધ્યાનથી જરા પણ ચલાયમાન ન થયા જ્યારે કમઠના જીવ મેઘમાલી અસુરે પ્રભુને ધ્યાનમા અચલ જાણ્યા ત્યારે તેણે પોતાની વૈક્રિય શક્તિ દ્વારા ઉત્તુગગિરિ જેવા અને ભારે બળવાળા એવા ગજરાજોને ઉત્પન્ન કર્યા પ્રભુ એમનાથી પણ અચલ રહ્યા આ પ્રકારના પોતાના પ્રયત્નમા મેઘમાલી દેવ અસફળ થયો ત્યારે તેણે એકદમ

यमबाहुदण्डवच्चण्डाननकान् नेत्रविषान् सर्पान्, उत्कटकण्टकितान् वृश्चिकान्, भल्लूकान् शूकरादींश्चानेकान् श्वापदान्, ज्वालामालाभीषणमुखान् मुण्डमालाऽऽकीर्णकन्धरान् भयङ्करान् भूतान् प्रेतांश्च विकुर्वितवान्। ते सर्वेऽपि प्रभुं ध्यानाद् विचालयितुं न समर्था बभूवुः, यथा कीटमत्कुणादयः क्षुद्रजीवा वज्रं भेत्तुं न समर्था भवन्ति। ततोऽतितरां क्रुद्धः स मेघमाली व्योम्नि विद्युद्व्याप्तदिगन्तरां भीषणां मेघमालां विकुर्वित्वा मनस्येवमचिन्तयत्—अहमद्य पूर्वभवपरभवपरमशत्रुमेनम् अगाधे सलिले निमग्नं कृत्वा मारयिष्यामि। इत्थं विचिन्त्य स मुष्टिमुश

फल हुआ तो उसको एकदम क्रोध आया। क्रुद्ध होकर उसने ऐसे अनेक सर्पों को विकुर्वित किया कि जिनकी दृष्टि में विष भरा था। जो फूत्कार से कर रहे थे। जो यमके बाहु दण्ड समान लंबे एवं प्रचंड थे। ऐसे वृश्चिकों को विकुर्वित किया जो उत्कट कांटो से युक्त थे। इसी तरह भल्लूक शूकर आदि जानवरों को, ज्वालामाला से भीषण मुखवाले मुण्डों की मालाको गले में धारण करने वाले भयङ्कर भूतों को, प्रेतों को भी उसने विकुर्वित किया। परंतु ये सब भी प्रभु को ध्यान से चलायमान करने के लिये समर्थ नहीं हुए। जैसे मच्छर वज्र को भेदने में असमर्थ होता है उसी तरह ये सभी भगवान को चलायमान करने मे असमर्थ हुए। अन्त में हर तरह पराजित होकर कमठ के जीव इस असुर ने मेघमाला को विकुर्वित किया। विजलीयों को उसमें चमकाया। उनकी चमक से समस्त दिशाएँ प्रकाशित हो उठीं थीं। साथ २ मे इस असुर ने ऐसा भी विचार किया कि मैं आज इस पूर्वभव के परम शत्रु को अगाध जल

ક્રોધના આવેશમા આવીને મહા વિષિલા એવા સર્પોને ઉત્પન્ન કર્યા કે જેની દૃષ્ટિમા વિષ ભર્યુ હતુ જે ભયંકર એવા ફુત્કાર કરી રહ્યા હતા જે યમના બાહુ દંડના જેવા લાબા અને પ્રચંડ હતા ઉપરાત ખૂબ જ ઝેરીલા એવા વીછીઓને પણ તેણે પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી ઉત્પન્ન કર્યા આજ પ્રમાણે ભૂંડ, કુક્કર આદિ જાનવરોને, તેમજ ભયંકર એવા મુંડમાળાને ગ્રહણ કરેલ એવા ભૂતોને, પ્રેતોને પણ તેણે ઉત્પન્ન કર્યા છતા આ સઘળા પ્રભુને ધ્યાનમાથી ચલિત કરવામા સફળ ન બન્યા જેમ મચ્છર વજ્રને ભેદવામા અસમર્થ હોય છે એજ રીતે એ સઘળા ભગવાનને ચલાયમાન કરવામા અસમર્થ થયા અંતે દરેક પ્રકારે પરાજીત બનીને કમઠના જીવ એ અસુરે મેઘોને ઉત્પન્ન કર્યા, વિજળીઓને ચમકાવી, કે જેનાથી સઘળી દિશાઓ પ્રકાશિત થઈ જતી હતી સાથો સાથ એ અસુરે એવો પણ વિચાર કર્યો કે, મારા પૂર્વભવના આ શત્રુને અગાધ જળમા ડૂબાડીને મારી નાખું

द्विषन्नत्र न भविष्यसि ! अतो निरर्थकस्मात्पापाध्यवसायात्। नागराजस्येत्थं वचनं निशम्य असुरासुरः स्वदृष्टिमधो न्यधात्। तदा स नागराजसेवितं भगवन्तं पार्श्वनाथमपश्यत्। ततः सोऽतीवाश्चर्ययुक्तोऽचिन्तयत्-मम तु एतावत्येव शक्तिरस्ति। सा तु शैले शशकस्येव भगवति पार्श्वे निष्फला जाता। अपि चायं भगवान् स्वमुष्ट्या वज्रमपि पेष्टुं समर्थस्तथापि क्षमया सर्वं क्षमते। परन्त्वयं नागदेवस्तु न क्षमिष्यते। अस्मात्तु मे भयमस्त्येव। संसारेऽस्मिन् करुणा सागरादस्माद् विना न कोऽप्य-

त्प्रकाशक सूर्य के साथ द्वेष करता है वैसाही इस समय तेरी यह हालत हो रही है। अतः याद रख यदि अब इस जगत् के निष्कारणमित्र प्रभुपर जो तूने द्वेष किया तो तेरी किसी प्रकार से भी रक्षा नहीं हो सकेगी। इसीलिये अब तुझे यही उचित है कि तू शीघ्र इस पापाध्यवसाय से हट जा। धरणेन्द्र के इस प्रकार वचन सुनकर इस असुर ने ज्यों ही अपनी दृष्टि नीचे की कि उसको धरणेन्द्र से सेवित प्रभु दिखलाई दिये। धरणेन्द्र से सेवित प्रभु को देखते ही उसको महान् आश्चर्य हुआ। वह विचारने लगा-मेरी तो इतनी ही शक्ति थी अब मैं क्या करूँ। मेरी वह शक्ति तो इस समय पर्वत के साथ खरगोश की तरह इन पार्श्वप्रभु के साथ निष्फल बन गई है। दूसरे यह प्रभु तो अपनी मुष्टि से वज्र को भी चूर चूर करने की शक्ति धारण करते हैं। फिर भी क्षमा से सबको क्षमाप्रदान ही करते हैं परन्तु मेरे जैसे दुष्ट को तो ये नागदेव क्षमा करने वाले नहीं हैं। मुझे तो इनसे भय है ही। तथा दूसरा

દ્વેષ કરે છે એ જ પ્રકારની આ સમયે તારી હાલત બની રહી છે આથી યાદ રાખ કે, જો તું હવે આ જગતના ઉપકારક એવા પ્રભુ ઉપર નિષ્કારણ દ્વેષ કરીશ તો તારી કોઈ પણ રીતે રક્ષા થઈ શકવાની નથી આથી તારા માટે એજ ઉચિત છે કે, તું તુરત જ આ તારા પાપના અધ્યવસાયને છોડી દે ધરણેન્દ્રના આ પ્રકારના વચન સાંભળીને એ અસુરે જ્યા પોતાની નજર નિચે કરી કે, તેને ધરણેન્દ્રથી સેવાય રહેલા પ્રભુ ઉપર તેની દૃષ્ટિ ગઈ આ પ્રકાર જોઈને તેને મહાન આશ્ચર્ય થયું અને તે મનમાં વિચારવા લાગ્યો કે, મારી તો આટલી જ શકિત હતી હવે હું શું કરૂં મારી એ શકિત આ સમયે શૈલની સામે ખરગોશની માફક આ પાર્શ્વપ્રભુની સામે નિષ્ફળ બની ગઈ છે બીજું આ પ્રભુ તો પોતાની એક જ મુઠીના પ્રહારથી ભારેમા ભારે વજ્રનો પણ ચૂરો કરી નાખવાની શકિતવાળા છે છતા પણ ક્ષમાના ધારક એવા પ્રભુ દરેકના ઉપર ક્ષમા દૃષ્ટિવાળા છે પરંતુ મારા જેવા દુષ્ટને તો આ નાગદેવ ક્ષમા કરનાર નથી મને તો એનો ભય લાગી રહ્યો છે પરંતુ આ કરૂણાના

स्त्वपरो यो मा रक्षितु समर्थः। अतोऽहमेनमेव करुणासागर शरणीकुर्याम्। इत्थ विचिन्त्य कमठासुरो मेघ सहृत्य पार्श्वप्रभोश्चरणयो. मपतित' सन् वदति हे भगवन्! ममामुमपराध क्षमस्वे' त्युक्त्वा स्वकीय स्थान गतः। नागेन्द्रोऽपि भगवन्तमुपसर्गरहित ज्ञात्वा त प्रणम्य स्वस्थान गतः। प्रातःकाले भगवानपि ततो विहार कृतवान। इत्थ विहरमाणो भगवान सप्ताशीति ८७ तमे दिवसे पुनर्वाराणसीनगरीसमीपस्थबहिरुद्याने समागतः। तत्राष्टाशीतितमे ८८ दिवसे ध्यानस्थितस्य भगवत. सूर्योद्गमनकाले केवलज्ञान सजातम्। तदा सर्वेषामिन्द्राणामासनानि चलितानि। ततोऽवधिज्ञानेन सर्वे देवेन्द्राः प्रभोः केवलज्ञानप्राप्ति विज्ञाय स्वस्वानुचरैः सह तत्र समागता.। तत्र ते समवसरण कृतवन्त.। तत्र

अब इस ससार मे करुणा के सागर इन प्रभु के अतिरिक्त ऐसा है भी नही जो मेरी रक्षा करने मे समर्थ हो। अतः मेरी भलाइ इसी मे है कि मैं इनकी ही शरण अगीकार करूँ। इस प्रकार विचार कर उस असुर ने विकुर्वित उन मेघो को सहृत कर लिया और पार्श्व प्रभु के चरणो मे जाकर पड गया। प्रभु के चरणो मे पड कर उसने उनसे इस अपराध की क्षम याचना की पश्चात् वह वहा से अपने स्थान पर चला गया।

प्रातःकाल जब हुआ तब प्रभु भी वहाँ से विहार कर गये। विचरते २ भगवान् सत्तासी ८७ वें दिन पुन वाणारसी नगरी के समीप बाहिर उद्यान मे आकर विराजे। अठासी ८८ वें दिन उनको ध्यानावस्था मे बैठे हुए सूर्योदय के समय मे केवलज्ञान प्राप्त हुआ। उस समय समस्त इन्द्रो के आसन कपायमान हुए इससे उन्हों ने अवधिज्ञान द्वारा प्रभुको केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ जान कर बडा आनद मनाया। तथा

આગ. પ્રભુના અપરાધથી મને બચાવી શકે તેવુ આ જગતમા બીજુ કોઇ પણ નથી આથી મારૂ ભલુ તો એમા જ છે કે, હુ એમના શરણે જાઉ આ પ્રકારનો વિચાર કરીને એ અસુરે મેઘોને પોતપોતાના સ્થાને મોકલી દીધા અને પાર્શ્વનાથ પ્રભુના ચરણોમા જઇને પડી ગયો પ્રભુના ચરણોમા પડીને તે અસુરે પોતાના અપરાધોની ક્ષમા માગી અને પછી તે ત્યાથી પોતાના સ્થાને ચાલ્યો ગયો.

સવાર થયુ એટલે પ્રભુ પણ ત્યાથી વિહાર કરી ગયા વિચરતા વિચરતા ભગવાન સત્યાસીમા ૮૭ દિવસે વારાણુસી નગરીની પાસે બહારના ઉદ્યાનમા પહોચ્યા. અઠયાશીમા ૮૮ દિવસે ધ્યાનાવસ્થામા બેઠેલા એ પ્રભુ પાર્શ્વનાથને સૂર્યોદયના સમયે કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયુ આ સમયે સઘળા ઇન્દ્રોના સ્થાન કપાયમાન બન્યા આથી તેમણે અવધિજ્ઞાન દ્વારા પ્રભુને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયાનુ જાણીને ઘણો જ આનદ

त्रिंशद् वर्षाणि गार्हस्थ्ये, सप्ताशीति ८७ दिनानि छाद्मस्थ्ये, एतावद्दिनोनानि सप्ततिवर्षाणि केवलित्वे, इत्थं शतवर्षाणि भगवतः सर्वमायुरभूत् ॥

॥ इति भगवत्पार्श्वनाथप्रभुचरितम् ॥

इत्थं प्रसङ्गतः पार्श्वप्रभुचरितमभिधाय सम्प्रति प्रस्तुतसूत्रव्याख्या प्रारभ्यते—

मूलम्—तस्स लोगप्पईवस्स, आसि सीसे महाजसे ।
केसी कुमारसमणे, विज्जाचरणपारगे ॥२॥

छाया—तस्य लोकप्रदीपस्य, आसीत् शिष्यो महायशाः ।
केशी कुमारश्रमणो, विद्याचरणपारगः ॥२॥

टीका—'तस्स' इत्यादि ।

लोकप्रदीपस्य-लोके तद्गतसमस्तवस्तुप्रकाशतया प्रदीप इव लोकप्रदीपस्तस्य तथाभूतस्य तस्य भगवतः पार्श्वनाथस्य विद्याचरणपारगः-विद्या=ज्ञानं चरणं तयोः

के निर्वाण कल्याण को इस समय इन्द्रों ने देवों के साथ बडा उत्सव मनाया। भगवान् की सौ वर्ष की आयु में से तीस वर्षतक की तो उनकी आयु गृहस्थावस्था मे व्यतीत हुई, सत्तासी ८७ दिन छद्मस्थावस्था में निकले। तथा सत्तासी ८७ दिन कम सीत्तर ७० वर्ष केवली-पर्याय में व्यतीत हुए। इस प्रकार सौ वर्ष की आयु का हिसाब है॥

इस प्रकार प्रसगत पार्श्वप्रभु का चरित्र प्रकाशित कर अब प्रस्तुत सूत्रकी व्याख्या की जाती है—'तस्स' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(लोगप्पइवस्स-लोकप्रदीपस्य तस्य) लोकान्तर्गत लोक के अन्दरकी समस्त वस्तुओं को प्रकाशित करने वाले होने से प्रदीप के समान उन पार्श्वनाथ प्रभु के (विज्जाचरणपारगे-विद्याचरणपारगः) सम्यग्ज्ञान एवं चारित्र से सपन्न अत एव (महाजसे-महायशाः) दिगन्त

ભગવાનના નિર્વાણ કલ્યાણના આ સમયે ઇન્દ્રોએ, દેવોની સાથે મોટો ઉત્સવ મનાવ્યો. ભગવાનની સો વર્ષની આયુમા ત્રીસ વર્ષની આયુ તો ગૃહસ્થાવસ્થામા વ્યતીત થઈ સિત્યાસી દિવસ છદ્મસ્થાવસ્થામા રહ્યા, અને સીત્તેર વર્ષમા સિત્યાસી દીવસ ઓછા કેવળી પર્યાયમા વ્યતીત થયા આ પ્રમાણે પ્રભુની સો વરસની આયુનો આ હિસાબ છે ॥૧॥

આ પ્રમાણે પ્રસગત પાર્શ્વપ્રભુનુ ચરિત્ર પ્રકાશિત કરીને હવે પ્રસ્તુત સૂત્રની વ્યાખ્યા કરવામા આવે છે-"तस्स" ઇત્યાદિ

અન્વયાર્થ—लोगप्पईवस्स तस्स-लोकप्रदीपस्स तस्य લોકાતર્ગત સઘળી વસ્તુઓને પ્રકાશિત કરવા વાળા હોવાથી દિવાની માફક તે પાર્શ્વનાથ પ્રભુના विज्जाचरणपारगे-विद्याचरणपारग સમ્યગ્જ્ઞાન અને ચારિત્રથી સપન્ન અને महाजसे-

पारग.–ज्ञानचारित्रसपन्न इत्यर्थ, अत एव महायशा =दिगन्तविश्रुतकीर्तिः केशी='केशी' इति नाम्ना प्रसिद्धः, कुमारश्रमण.–कुमारोऽपरिणीततया, श्रमणश्च तपस्वितया, बालब्रह्मचारी, अत्युग्रतपस्वी चेत्यर्थ, शिष्य =पार्श्वनाथसन्तानीयतया प्रसिद्ध', आसीत् ॥२॥

अथ तद्वक्तव्यतामाह—

मूलम्—ओहिनाणसुए बुद्धे, सीससघसमाउले ।
गामाणुगाम रीयते, सावत्थि पुरिमागए ॥३॥

छाया—अवधिज्ञानश्रुतो बुद्ध, शिष्यसङ्घसमाकुल ।
ग्रामानुग्राम रीयमाण, श्रावस्तिं पुरीमागत ॥३॥

टीका—'ओहिनाणसुए' इत्यादि ।

अवधिज्ञानश्रुत'–अवधिज्ञान, श्रुत=श्रुतज्ञान, श्रुतज्ञानस्य मतिज्ञानसहचरितत्वान्मतिज्ञान च यस्य स तथा, मतिश्रुतावधिज्ञानत्रयसपन्न इत्यर्थ, बुद्ध =ज्ञाततत्त्वः, स केशीकुमारश्रमण शिष्यसङ्घसमाकुल =शिष्यसमुदायपरिवृतः सन् ग्रामानुग्राम रीयमाण.=विहरन् श्रावस्ती नाम पुरीम् आगत ॥३॥

व्यापी यशवाले (केसी–केशी) केशी नामके (कुमारसमणे–कुमारश्रवणः) कुमारश्रमण–अपरिणीत अवस्था मे ही मुनि बन जाने के कारण बाल ब्रह्मचारी– (सीसे आसि–शिष्य आसीत्) शिष्य थे ॥२॥

अब केशिश्रमण के विषय मे कहते है—'ओहिनाणसुए' इत्यादि ।

अन्वयार्थ–(ओहिनाणसुए–अवधिज्ञानश्रुत) इस समय मतिज्ञान, श्रुतज्ञान एव अवधिज्ञान से युक्त तथा (सीससघसमाउले–शिष्यसघसमाकुल) शिष्यसमूह से सपन्न एव (बुद्धे–बुद्धः) तत्त्वज्ञ वे केशीकुमार श्रमण (गामाणुगामं रीयते–ग्रामानुग्राम रीयमाण) ग्रामानुग्राम विहार करते हुए (सावत्थि पुरिमागए–श्रावस्ती पुरीम् आगतः) श्रावस्ती नगरी मे आये ॥३॥

महायशा દિગન્તવ્યાપી યશવાળા केसी–केशी કેસી નામના कुमारसमणे–कुमारश्रमण કુમાર શ્રવણ અપરિણીત અવસ્થામા મુનિ બની જવાના કારણે બાળ બ્રહ્મચારી सीसे–आसी–शिष्य आसीत् શિષ્ય હતા ॥૨॥

હવે કેશીશ્રમણના વિષયમા કહે છે "ओहिनाणसुए" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—ओहिनाणसुए–अवधिज्ञानश्रुतः મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનથી યુક્ત તથા सीससघसमाउले शिष्यसघसमाकुल શિષ્ય સમૂહથી સપન્ન અને बुद्धे–बुद्ध તત્વજ્ઞ એવા તે કેશીકુમાર શ્રવણ गामाणुगाम रीयते–ग्रामानुग्राम रीयमाणः

मूलम्—बारसंगविऊ बुद्धे, सीससंघसमाउले ।
गामाणुगामं रीयंते, से वि सावत्थिमागए ॥७॥

छाया—द्वादशाङ्गविद् बुद्धः, शिष्यसङ्घसमाकुलः ।
ग्रामानुग्रामं रीयमाणः, सोऽपि श्रावस्तीमागतः ॥७॥

टीका—'बारसंगविऊ' इत्यादि ।

द्वादशाङ्गवित्=आचाराङ्गादिद्वादशाङ्गज्ञानसम्पन्नो बुद्धो=जीवाजीवसकलपदार्थज्ञः स गौतमोऽपि ग्रामानुग्रामं रीयमाणो=विहरन् श्रावस्तीं नगरीमागतः ॥७॥

मूलम्—कुट्ठगं नामं उज्जाणं, तम्मी नगरमंडले ।
फासुए सिज्जसंथारे, तत्थ वासमुवागए ॥८॥

छाया—कोष्ठकं नाम उद्यानं, तस्या नगरमण्डले ।
प्रासुकशय्यासंस्तारे, तत्र वासमुपागतः ॥८॥

टीका—'कुट्ठगं' इत्यादि ।

चतुर्थगाथावदस्या व्याख्या बोध्या ॥८॥

शिष्य थे जो महायशस्वी थे ॥६॥

'बारसंगविऊ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—ये गौतम स्वामी (बारसंगविऊ-द्वादशाङ्गवित्) द्वादशांगी के वेत्ता एवं (बुद्धे-बुद्धः) जीव अजीव आदि सर्व पदार्थों के ज्ञाता थे। (गामाणुगामं रीयंते-ग्रामानुग्रामं रीयमाणः-ग्रामानुग्राम विहार करते हुए (से-सः) ये गौतम स्वामी भी अपनी (सीससंघसमाउले-शिष्यसंघसमाकुलः)-शिष्यमंडली सहित उसी (सावत्थिमागए-श्रावस्तीमागतः-श्रावस्ती नगरी में आये) ॥७॥

મહાન યશસ્વી અને લોકોને આ ધારામાંથી ઉગારવામાં લઈ જનાર એવા મહાકીર્તિવંત એવા શિષ્ય હતા ॥૬॥

"बारसंगविऊ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—એ ગૌતમ સ્વામી बारसंगविऊ-द्वादशाङ्गवित् દ્વાદશાંગીના વેત્તા અને बुद्धे-बुद्धः જીવ અજીવ આદિ સઘળા પદાર્થોના જ્ઞાતા હતા गामाणुगामं रीयंते ग्रामानुग्रामं रीयमाणः ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરતા કરતા से-सः એ ગૌતમસ્વામી પણ सीससंघसमाउले-शिष्यसंघसमाकुलः પોતાની શિષ્ય મંડળી સાથે सावत्थिमागए श्रावस्तीमागतः એ શ્રાવસ્તી નગરીમાં આવી પહોંચ્યા ॥૭॥

ततो यदभूत्तदुच्यते—

मूलम्—केसीकुमारसमणे, गोयमे य महायसे।
उभओ वि तत्थ विहरिंसु, अल्लीणा सुसमाहिया ॥९॥

छाया—केशिकुमारश्रमणो, गौतमश्च महायशाः।
उभावपि तत्र व्यहार्ष्टाम्, आलीनौ सुसमाहितौ ॥९॥

टीका—'केसीकुमारसमणे' इत्यादि।

महायशाः केशिकुमारश्रमणो महायशा गौतमश्च उभावपि आलीनौ=मनोवाकायरूपगुप्तित्रययुक्तौ सुसमाहितौ=सुष्ठु समाधिमन्तौ सन्तौ तत्र=श्रावस्त्यां नगर्यां व्यहार्ष्टाम्=संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन्तौ विहरतः स्म। 'महायसे' इति आवृत्त्या उभयोरपि विशेषणम् ॥९॥

'कुट्ठग' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(तम्मि नगरमडले कुट्ठग नाम उज्जाण तत्थ फासुए सिज्जसंथारे वासमुवागए–तस्या नगरमडले कोष्ठक नाम उद्यान तत्र प्रासुकशय्यासंस्तारे वासमुपागतः) उस श्रावस्ती नगरी के बाहर कोष्ठक नामका उद्यान था। वहां मुनिजनों के योग्य शय्या संस्तारक को ग्रहण करके गौतम स्वामी वहां विराजे ॥८॥

फिर क्या हुवा? सो कहते हैं—'केसी इत्यादि।

अन्वयार्थ—(महायसे केसीकुमारसमणे गोयमे य उभओ वि अल्लिणा सुसमाहिया तत्थ विहरिंसु–महायशाः केशिकुमारश्रमणो गौतमश्च उभौ अपि आलीनौ सुसमाहितौ तत्र व्यहार्ष्टाम्) महायशस्वी केशिकुमारश्रमण तथा गौतम ये दोनों मन, वचन एवं काय की गुप्ति से

"कुट्ठग" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—तम्मि नगरमडले कुट्ठग नाम उज्जाण तत्थ फासुए सिज्जसथारे वासमुवागए–तस्या नगरमडले कोष्ठक नाम उद्यान तत्र प्रासुकशय्यासंस्थारे वासमुपागत એ શ્રાવસ્તી નગરીની બહાર કોષ્ઠક નામનું ઉદ્યાન હતું ત્યાં મુનિજનોને યોગ્ય શય્યા સંસ્તારકને ગ્રહણ કરીને ગૌતમસ્વામી પણ એ સ્થળે બિરાજમાન થયા ॥૮॥

પછી શું થયું? તેને કહે છે—"केसी" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—महायसे केसीकुमारसमणे गोयमे य उभयो वि अल्लिणा सुसमाहिया तत्थ विहरिंसु–महायशाः केशिकुमारश्रमणो गौतमश्च उभौ अपि आलीनौ सुसमाहितौ तत्र व्यहार्ष्टाम् મહાયશસ્વી કેશીકુમાર શ્રમણ તથા ગૌતમ

मूलम्--उभओ सीलसघाणं सजयाणं तवस्सिणं ।
तत्थ चिंता समुप्पन्ना, गुणवताण ताइणं ॥१०॥

छाया--उभयोः शिष्यसघानां, सयतानां तपस्विनाम् ।
तत्र चिन्ता समुत्पन्ना, गुणवतां त्रायिणाम् ॥१०॥

टीका--'उभओ' इत्यादि ।

तत्र=श्रावस्त्याम् उभयोः=केशिकुमारश्रमणगौतमयोः गुणवता=ज्ञानदर्शनचारित्रवता त्रायिणाम्=षट्कायजीवरक्षकाणा सयताना=सयमवता तपस्विना=तपोनिष्ठाना भिक्षाचर्यादौ गमनागमन कुर्वता शिष्यसघाना परस्परावलोकनात् चिन्ता समुत्पन्ना=विचारः समुत्पन्न ॥१०॥

चिन्तास्वरूपमाह--

मूलम्--केरिसो वा इमो धम्मो, इमो धम्मो व केरिसो ।
आयारधम्मपणिही, इमा वा सा व केरिसी ॥११॥

गुप्त तथा सुसमाहित-सुष्ठु रीति से समाधिसपन्न थे। ये दोनों श्रावस्ती नगरी मे सयम एव तपसे आत्माको भावित करते हुए विचरने लगे ॥९॥

'उभओ सीसमघाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(तत्थ-तत्र) उस श्रावस्ती मे (उभओ-उभयोः) उन केशी कुमार तथा गौतम के (गुणवताण-गुणवताम्) ज्ञान, दर्शन एव चारित्रशाली तथा (ताइण-त्रायिणाम्) षट्कायजीवों के रक्षक तथा (सजयाण-सयतानाम्) सयमशाली (तवस्सिण-तपस्विनाम्) तपोनिष्ठ (सीससघाण-शिष्यसघानाम्) शिष्यवृन्द को भिक्षा चर्या आदि में गमनागमन करते समय परस्पर देखने से (चिता समुप्पन्ना-चिन्ता समुत्पन्ना) विचार उत्पन्न हुआ ॥१०॥

સ્વામી એ બન્ને મન, વચન અને કાયની ગુપ્તિથી ગુપ્ત તથા સુસમાહિતસુષ્ઠુરીતીથી સમાધી સપન્ન હતા એ બન્ને શ્રાવસ્તી નગરીમા સયમ અને તપથી આત્માને ભાવિત કરતા કરતા વિચરવા લાગ્યા ॥૯॥

"उभओ सीससघाण" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--तत्थ-तत्र એ શ્રાવસ્તીમા उभओ-उभयो એ કેશીકુમાર તથા ગૌતમના गुणवताण-गुणवतान् જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રશાળી તથા ताइण-त्रायिणाम् ષટ્કાય જીવોના રક્ષક તથા सजयाण-सयतानाम् સયમશાળી तवस्सिण-तपस्विनाम् તપોનિષ્ઠ सीससघाण-शिष्यसघानाम् શિષ્યવૃન્દને ભિક્ષાચર્યા આદિમા ગમનાગમન સમયે પરસ્પર જોવાથી चिता समुप्पन्ना चिन्ता समुत्पन्ना વિચાર ઉત્પન્નથયો ॥૧૦॥

छाया—कीदृशो वा अयं धर्मः, अयं धर्मो वा कीदृशः ।
आचारधर्मप्रणिधिः, अयं वा स वा कीदृश. ॥११॥

टीका—'केरिसो वा' इत्यादि ।

अयम्=अस्मत्सम्बन्धी वा धर्मो=महाव्रतरूपः कीदृशः ? अयं=तत्सम्बन्धी वा धर्मो=महाव्रतरूप' कीदृशः ? अयम्=अस्मत्सम्बन्धी वा, स=तत्सम्बन्धी वा आचारधर्मप्रणिधि =आचारः=वेषधारणादिको बाह्यक्रियाकलापः स एव धर्मो धर्महेतुत्वात्, तस्य प्रणिधिः=व्यवस्था कीदृशः ? पार्श्वमहावीरयोरुभयोरपि सर्वज्ञत्व निर्विवादम् । तर्हि तत्प्रणीतधर्मयोर्धर्मसाधनाना च कथ भेदः ? इति बोद्धुमिच्छामो वयमिति भावः । 'इमा वा सा व केरिसी' इति आर्षत्वात् स्त्रीत्वेन निर्दिष्टम् । 'वा' शब्दो वितर्के ॥११॥

विचारका स्वरूप कहते हैं—'केरिसो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(इमो धम्मो केरिसो-अयं धर्म' कीदृशः) हमारे द्वारा पालित यह महाव्रत रूप धर्म कैसा है ? तथा (इमो वा धम्मो केरिसो-अयं धर्मः कीदृश) इन के द्वारा पालित महाव्रत रूप धर्म कैसा है। (इमो आयारधम्मपणिही सा वा केरिसी-अयं आचार धर्मप्रणिधिः स वा कीदृश.) तथा हम लोग जिस बाह्यक्रियाकलापरूप धर्म को धारण करते हैं उसकी व्यवस्था तथा ये लोग जिस बाह्य क्रियाकलापरूप धर्म को धारण करते हैं उसकी व्यवस्था कैसी है। यद्यपि पार्श्वप्रभु एवं महावीर ये दोनों ही सर्वज्ञ है। तो भी तत्प्रणीत धर्मों मे तथा धर्म के साधनों में यह भेद कैसे हुआ। इस बात को हम जानना चाहते है ॥११॥

વિચારના સ્વરૂપને કહે છે—"केरिसो" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—इमो धम्मो केरिसो-अयं धर्मः कीदृशः અમારા તરફથી પાળવામા આવતો આ મહાવ્રતરૂપ ધર્મ કેવો છે તથા इमो वा धम्मो केरिसो-अयं वा धर्मः कीदृशः આ એમના દ્વારા પાળવામા આવતો ધર્મ કેવો છે તથા इमा आयार धम्मपणिही सा वा केरिसी-अयं आचारधर्मप्रणिधिः स वा कीदृशः અમો જે બાહ્યક્રિયા કલાપરૂપ ધર્મને ધારણ કરીએ છીએ તેની વ્યવસ્થા તથા આ લોકો જે બાહ્યક્રિયા કલાપરૂપ ધર્મને ધારણ કરે છે તેની વ્યવસ્થા કેવી છે જો કે, પાર્શ્વપ્રભુ અને મહાવીર એ બન્ને સર્વજ્ઞ છે તો પણ તેઓએ પ્રરૂપેલ ધર્મમા તથા ધર્મના સાધનોમા આ ભેદ કઇ રીતે થયો આ વાતને અમે જાણુવા ચાહીએ છીએ ॥૧૧॥

उक्तमेवार्थं पुनः प्रकटयितुमाह—

मूलम्—चाउज्जामो य जो धम्मो, जो इमो पंचसिक्खिओ।
देसिओ वद्धमाणेणं, पासेण य महामुणी ॥१२॥

छाया—चातुर्यामश्च यो धर्मो, योऽयं पञ्चशिक्षितः।
देशितो वर्द्धमानेन, पार्श्वेन च महामुनिना ॥१२॥

टीका—'चाउज्जामो य' इत्यादि।

यश्च चातुर्यामो–यमा एव यामाः, चत्वारो यामाश्चतुर्यामम्, तदस्त्यस्येति चतुर्यामः, स एव चातुर्यामः–मैथुनविरमणस्य परिग्रहविरमणेऽन्तर्भावात् प्राणातिपातविरमणमृषावादविरमणादत्तादानविरमणपरिग्रहविरमणात्मको महाव्रतचतुष्को धर्मो महामुनिना=तीर्थकरेण पार्श्वेन देशितः=उपदिष्टः। यश्चायं पञ्चशिक्षितः–पञ्च च ताः शिक्षाः पञ्चशिक्षास्ताः सञ्जाता अस्येति पञ्चशिक्षितः–प्राणातिपातविरमणमृषावादविरमणादत्तादानविरमणमैथुनविरमणपरिग्रहविरमणरूपपञ्चशिक्षायुक्तो धर्मो महामुनिना=तीर्थङ्करेण वर्द्धमानेन देशितः=उपदिष्टः। अनयोर्धर्मयो विशेषे किं नु कारणम्? इत्युत्तरेण सम्बन्धः। अनेन धर्मविषयः संशयः प्रकटीकृतः। 'महामुणी' इत्यत्र तृतीयार्थे प्रथमा। अस्याश्चाख्या पार्श्वेन वर्द्धमानेन चोभयत्रैव सम्बध्यते ॥१२॥

फिर उसी बात को कहते हैं—'चाउज्जामो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पासेण य महामुणी–पार्श्वेन महामुनिना) पार्श्वनाथ महामुनि–तीर्थंकर ने (जो य चाउज्जामो धम्मो देसिओ–योऽयं चातुर्याम धर्मः देशितः) जो यह चातुर्याम–प्राणातिपातविरमण, मृषावाद–विरमण, अदत्तादान विरमण तथा मैथुन विरमण को परिग्रहविरमण में अन्तर्भूत होने से परिग्रहविरमण यह चार प्रकार का मुनिधर्म कहा है–तथा (वद्धमाणेण महामुणी–वर्द्धमानेन महामुनिना) वर्द्धमान तीर्थंकर ने प्राणातिपातविरमण, मृषावाद विरमण, अदत्तादानविरमण, मैथुनविरमण एवं

પછીથી એ જ વાતને કહે છે—"चाउज्जामो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—पासेण य महामुणी–पार्श्वेन महामुनिना પાર્શ્વનાથ મહામુનિ તીર્થંકરે जो य चाउज्जामो धम्मो देसिओ–योऽयं चातुर्यामः धर्मः देशितः જે આ ચાતુર્યામ –પ્રાણાતિપાત વિરમણ, મૃષાવાદ વિરમણ, અદત્તાદાન વિરમણ, તથા મૈથુન વિરમણ ને પરિગ્રહ વિરમણમાં અંતર્ભૂત હોવાના કારણે પરિગ્રહ વિરમણ આ ચાર પ્રકારનો મુનિધર્મ કહેલ છે તથા वद्धमाणेण महामुणी–वर्धमानेन महामुनिना વર્ધમાન તીર્થંકરે પ્રાણાતિપાત વિરમણ, મૃષાવાદ વિરમણ, અદત્તાદાન વિરમણ, મૈથુન વિરમણ અને

अथाचारप्रणिधिविषय संशय स्पष्टयति—

मूलम्—अचेलगो यं जो धम्मो, जो इमो सतरुत्तरो।
एगकज्जपवन्नाण विसेसे किं नु कारणं? ॥१३॥

छाया—अचेलकश्च यो धर्मो, योऽयं सान्तरोत्तर.।
एककार्यप्रपन्नयो विशेषे कि नु कारण? ॥१३॥

टीका—'अचेलगो य' इत्यादि।

यश्चायम् अचेलक.–अचेल=मानोपेत श्वेत जीर्णप्रायमल्पमूल्य वस्त्रम् ,अ गोत्–असदिव चेल, तदस्यास्तीति–अचेल , स एवाचेलक –परिमितजीर्णप्रायाल्पमूल्य श्वेतवस्त्रपरिधानलक्षणो धर्मो भगवता वर्द्धमानेन देशित.। यश्चाय सान्तरोत्तर.–सान्तराणि=मानतो वर्णतश्च विशिष्टानि, उत्तराणि=बहुमूल्यानि च सान्तरोत्तराणि तानि सन्त्यस्मिन्निति सान्तरोत्तर.–अनेक वर्ण बहुमूल्य वस्त्रपरिधानलक्षणो धर्मो भगवता पार्श्वनाथेन देशित । एककार्यप्रपन्नयो –एककार्य=मुक्तिरूपफल, तदर्थं

परिग्रह विरमण इस प्रकार से पाच प्रकाररूप मुनिधर्म कहा है सो इसका क्या कारण है। इस प्रकार का उन दोनों तीर्थंकरों के शिष्यों को सदेह हुआ॥१२॥

अब सूत्रकार आचारप्रणिधि विषयक सदेह को प्रगट करते है—'अचेलगो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जो अचेलगो य धम्मो=य अचेलक धर्म) प्रभु श्रीवर्द्धमान स्वामी ने जो यह अचेलक–परिमित, जीर्णप्राय तथा अल्पमूल्य-वाले श्वेतवस्त्रों का परिधान करनारूप मुनिधर्म बतलाया है तथा (जो सतरुत्तरो–य अय सान्तरोत्तर) पार्श्वनाथ स्वामी ने जो अपने शिष्यों को प्रमाण से एव वर्ण से विशिष्ट तथा उत्तर-बहुमूल्य वस्त्रो का परिधान करनारूप मुनिधर्म कहा है सो (एकरज्जपवन्नाण विसेसे किनु

પરિગ્રહ વિરમણ આ પ્રમાણે પાચ પ્રકારનો મુનિધર્મ કહેલ છે તો તેનુ શુ કારણ છે? આ પ્રકારનો એ બન્ને તીર્થંકરોના શિષ્યોને સદેહ થયો ॥૧૨॥

હવે સૂત્રકાર આચાર પ્રણિધિ વિષયક સદેહને પ્રગટ કરે છે—"अचेलगो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जो अचेलगो य धम्मो–य' अचेलक धर्म' પ્રભુ શ્રી વર્ધમાન સ્વામીએ જે આ અચેલક–પરિમિત જીર્ણપ્રાય તથા અલ્પ મૂલ્યવાળા સફેદ વસ્ત્રોને પરિધાન કરવા રૂપ મુનિધર્મ બતાવેલ છે તથા जो सतरुत्तरो–य अय सान्तरोत्तर પાર્શ્વનાથ સ્વામીએ પોતાના શિષ્યોને પ્રમાણથી અને વર્ણથી વિશિષ્ટ અને બહુમૂલ્ય વસ્ત્રોને પરિધાન કરવારૂપ મુનિધર્મ બતાવેલ છે તે एककज्जपवन्नाण विसेसे

उक्तामेव चिन्तां प्रकटयितुमाह—

मूलम्—चाउज्जामो य जो धम्मो, जो इमो पंचसिक्खिओ।
देसिओ वद्धमाणेणं, पासेण य महामुणी ॥१२॥

छाया—चातुर्यामश्च यो धर्मो, योऽयं पञ्चशिक्षितः।
देशितो वर्द्धमानेन, पार्श्वेन च महामुनिना ॥१२॥

टीका—'चाउज्जामो य' इत्यादि।

यश्च चातुर्यामो-यमा एव यामाः, चत्वारो यामाश्चतुर्यामम्, तदस्त्यस्येति चतुर्याम, स एव चातुर्याम -मैथुनविरमणस्य परिग्रहविरमणेऽन्तर्भावात् प्राणातिपातविरमणमृषावादविरमणादत्तादानविरमणपरिग्रहविरमणात्मको महाव्रतचतुष्को धर्मो महामुनिना=तीर्थकरेण पार्श्वेन देशितः=उपदिष्टः। यश्चायं पञ्चशिक्षितः- पञ्च च ताः शिक्षाः पञ्चशिक्षास्ताः सजाता अस्येति पञ्चशिक्षित -प्राणातिपातविरमणमृषावादविरमणादत्तादानविरमणमैथुनविरमणपरिग्रहविरमणरूपपञ्चशिक्षायुक्तो धर्मो महामुनिना=तीर्थङ्करेण वर्द्धमानेन देशित =उपदिष्टः। अनयोर्धर्मयो विशेषे किं नु कारणम्? इत्युत्तरेण सम्बन्धः। अनेन धर्मविषयः संशयः प्रकटीकृतः। 'महामुणी' इत्यत्र तृतीयार्थे प्रथमा। अस्य-आवृत्त्या पार्श्वेन वर्द्धमानेन चोभयत्रेद सम्बध्यते ॥१२॥

फिर उसी बात को कहते हैं—'चाउज्जामो' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(पासेण य महामुणी-पार्श्वेन महामुनिना) पार्श्वनाथ महामुनि-तीर्थकर ने (जो य चाउज्जामो धम्मो देसियो-योऽय चातुर्याम धर्मः देशित) जो यह चातुर्याम-प्राणातिपातविरमण, मृषावाद विरमण, अदत्तादान विरमण तथा मैथुन विरमण को परिग्रहविरमण मे अन्तर्भूत होने से परिग्रहविरमण यह चार प्रकार का मुनिधर्म कहा है-तथा (वद्धमाणेण महामुणी-वर्द्धमानेन महामुनिना) वर्द्धमान तीर्थकर ने प्राणातिपातविरमण, मृषावाद विरमण, अदत्तादानविरमण, मैथुनविरमण एव

પછીથી એ જ વાતને કહે છે—"चाउज्जामो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—पासेण य महामुणी-पार्श्वेन महामुनिना પાર્શ્વનાથ મહામુનિ તીર્થંકરે जो य चाउज्जामो धम्मो देसिओ-योऽय चातुर्याम धर्म देशित જે આ ચાતુર્યામ—પ્રાણાતિપાત વિરમણ, મૃષાવાદ વિરમણ, અદત્તાદાન વિરમણ, તથા મૈથુન વિરમણને પરિગ્રહ વિરમણમા અંતર્ભૂત હોવાના કારણે પરિગ્રહ વિરમણ આ ચાર પ્રકારનો મુનિધર્મ કહેલ છે તથા वद्धमाणेण महामुणी-वर्धमानेन महामुनिना વર્ધમાન તીર્થંકરે પ્રાણાતિપાત વિરમણ, મૃષાવાદ વિરમણ, અદત્તાદાન વિરમણ, મૈથુન વિરમણ અને

तौ केशिगौतमौ शिष्यशङ्कानिवारणार्थं समागमे=सम्मिलननिमित्तं कृतमती= कृतनिश्चयौ जातौ ॥१४॥

ततश्च कः कस्य स्थाने गच्छतीत्याह—

मूलम्—गोयमो पडिरूवण्णू, सीससघसमाउले ।
जिट्ठं कुलमविक्खंतो तिंदुअं वणमागओ ॥१५॥

छाया—गौतमः प्रतिरूपज्ञः, शिष्यसघसमाकुलः ।
ज्येष्ठं कुलमपेक्षमाणः, तिन्दुकं वनमागतः ॥१५॥

टीका—'गोयमो' इत्यादि ।

प्रतिरूपज्ञः—प्रतिरूप=यथोचितं शास्त्रोक्तविनयं जानातीति तथा, स भगवान् गौतमो भगवतः पार्श्वस्य सन्तानम् ज्येष्ठं=प्राग्भावित्वेन ज्येष्ठं कुलम् अपेक्षमाणः= मन्यमानः—सम्मानयन्नित्यर्थः । शिष्यसघसमाकुलः=शिष्यसमुदायपरिवृतः सन् तिन्दुकं वनम्=तिन्दुकमुद्यानम् आगतः=प्राप्तः ॥१५॥

केशिगौतमौ) उन दोनों केशिकुमार और गौतमने (मीस्साण पवियक्किय विन्नाय—शिष्याणां प्रवितर्कितं विज्ञाय) शिष्यों के इस पूर्वोक्त सदेह को जानकर (समागमे कयमई—समागमे कृतमती) परस्पर में मिलने का विचार निश्चित किया ॥१४॥

कौन किस के स्थानपर जावे सो कहते है—'गोयमो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पडिरूवण्णू गोयमो प्रतिरूपज्ञ गौतम) यथोचित शास्त्रोक्त विनय के ज्ञाता गौतम स्वामी (जिट्ठं कुलमविक्खंतो—ज्येष्ठं कुलं अपेक्षमाण) केशिकुमार को ज्येष्ठ कुलवाले मानकर (सीससघसमाउलो—शिष्यसघसमाकुल) शिष्यसमूह को साथ लेकर (तिंदुअं वणमागओ—तिन्दुक वन आगत) तिन्दुक वनमे आये ॥१५॥

કેશિકુમાર અને ગૌતમે सिसाण पवियक्किय विण्णाय—शिष्याणां प्रवितर्कितं विज्ञाय શિષ્યોના આ પૂર્વોક્ત સ દેહને જાણીને समागमे कयमई—समागमे कृतमती પરસ્પરમા મળવાનો વિચાર કર્યો ॥૧૪॥

કોણ કોના સ્થાન ઉપર જાય તે અગે કહે છે—"गोयमो" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—पडिरूवण्णू गोयमो—प्रतिरूपज्ञः गौतम યથોચિત શાસ્ત્રોના વિનયના જ્ઞાતા ગૌતમ સ્વામી जिट्ठं कुलमविक्खंतो—ज्येष्टं कुलमपेक्षमाणः કેશીકુમારને મોટા કુળવાળા માનીને सीससघसमाउले—शिष्यसघसमाकुल શિષ્યસમૂહને સાથે લઈને તિન્દુકવનમા આવ્યા ॥૧૫॥

प्रपन्नयो =प्रवृत्तयोर्भगवतो पार्श्ववर्द्धमानयो॰ विशेष=धर्मस्याचरणव्यवस्थायाश्च भेदे किंनु कारणम् ? को हेतुरित्यर्थ॰, 'नु' शब्दो वितर्के। कारणभेदेन कार्यभेद। मोक्षरूप कार्यं तूभयोरप्येकमेव। कथ तर्हि कारणभेद ? इति तेषा चिन्ताकारणम ॥१३॥

एव शिष्यचिन्तोत्पत्तौ केशिगौतमौ यत्कृतवन्तौ तदुच्यते—

मूलम्—अह ते तत्थ सीसाण, विण्णाय पवियक्कियं ।
समागमे कयमई, उभओ केसिगोयमा ॥१४॥

छाया—अथ तौ तत्र शिष्याणां, विज्ञाय प्रवितर्कितम् ।
समागमे कृतमती, उभौ केशिगौतमौ ॥१४॥

टीका—'अह ते' इत्यादि ।

अथ=अनन्तर तत्र=श्रावस्त्या शिष्याणा प्रवितर्कित=सशय विज्ञाय उभौ

कारणम्-एककार्यप्रपन्नयो विशेषे किं नु कारणम्) मुक्तिरूप एक कार्य में प्रवृत्त इन दोनों तीर्थंकरों को धर्माचरण की व्यवस्था में ऐसे भेदका क्या कारण है। जब कारण में भेद होता है तब कार्य में भी भेद हो जाता है। परतु यहा तो ऐसा नहीं है। कारण कि मुक्तिरूप कार्य में किसी भी तीर्थंकर का भेद दृष्ट नहीं है। फिर कारण मे भेद क्यो ? ॥१३॥

इस प्रकार अपने २ शिष्यों को जब इस का सदेह उत्पन्न हो गया—तब केशिकुमार एव गौतमने इस विषय मे क्या किया—यह अब यहा से प्रकट किया जाता है—'अह ते इत्यादि।

अन्वयार्थ—(अह-अथ) अपने२ शिष्यों के सदेह उत्पन्न होने पर (तत्थ-तत्र) वहीं पर श्रावस्ती में (उभओ केसि गोयमा-तौ उभौ

किंनु कारणम्—एककार्यप्रपन्नयो विशेषे किं नु कारणम् મુક્તિરૂપ એક કાર્યમા પ્રવૃત્ત એ બન્ને તીર્થંકરોની ધર્માચરણની વ્યવસ્થામા આવા ભેદનુ શુ કારણ છે જ્યારે કારણમા ભેદ છે તો કાર્યમા પણ ભેદ થાય છે પરતુ અહી તો એવુ છે નહી કારણ કે, મુક્તિ રૂપી કાર્યમા કોઇ પણ તીર્થંકરને ભેદ ઈષ્ટ રૂપ નથી તો પછી કારણમા ભેદ કેમ ? ॥૧૩॥

આ પ્રકારે પોત પોતાના શિષ્યોને જ્યારે આવો સદેહ ઉત્પન્ન થઈ ગયો ત્યારે કેશિકુમાર અને ગૌતમે આ વિષય મા શુ કર્યું એ હવે અહિથી પ્રગટ કરવામા આવે છે—"अह ते" ઇત્યાદી ।

અન્વયાર્થ—अह-अथ પોતેપોતાના શિષ્યોના મનમા સદેહ ઉત્પન્ન થવાથી તત્થ-તત્ર ત્યા શ્રાવસ્તીમા-उभओ केसिगोयमा—तौ उभौ केशिगौतमौ એ બન્ને

स्वशिष्यैः प्रासुकम्=अचित्त-शुष्क कणवर्जितमेषणीय पलाल-शालि व्रीहि कोद्रव रालकपलालचतुष्टय च=पुनः पञ्चमानि=पलालचतुष्कापेक्षया पञ्चमानि कुशतृणानि=प्रासुकान् दर्भांश्च क्षिप्र-शीघ्र समागमनकालएव समर्पयति।

उक्त च—

"तिणपणग पुण भणिय, जिणेहिं कम्मट्ठगंठिमहणेहि।
साली वीही कोद्दव रालय,-रण्णेतणाइ च॥"

छाया--तृणपञ्चक पुनर्भणित, जिनैः कर्माष्टग्रन्थिमथनैः।
शालिर्व्रीहि कोद्रवा रालकाऽरण्यतृणानि च॥ इति॥

(कर्मग्रन्थिमथनैर्जिनैः, शालीनाम्=मार्गशीर्षमासे परिपक्वधान्याना, व्रीहीणा-'साठी' इति प्रसिद्धधान्याना,-कोद्रवाणा 'कोदो' इति प्रसिद्धधान्याना, रालकाना-

श्रमणने (गोयमस्स निसज्जाए-गौतमस्य निषद्यायै) गौतमस्वामी के बैठने के लिये (फासुय पलाल-प्रासुक पलालम्) अपने शिष्यों से प्रासुक-अचित्त-शुष्क-कणवर्जित-एषणीय-शालि, व्रीहि, कोद्रव तथा चौथे रालक के पलाल को तथा पाचवें प्रासुक-दर्भ-डाभ के तृणोंको (खिप्प सपणामये-क्षिप्र समर्पयति) शीघ्र बिछवाया। कहा भी है—

तिणपणग पुण भणिय जिणेहिं कम्मट्ठगंठिमहणेहिं।
साली वीही कोद्दव रालय रण्णे तणाइच॥
छाया--तृणपचक पुनर्भणित जिनैः कर्माष्टग्रन्थिमथनैः।
शालिर्व्रीहि कोद्रवो रालकोऽरण्यतृणानि च॥

कर्मों की गाठों को फोड देने वाले तीर्थंकरो ने ये पाच प्रकार के पलाल इस प्रकार कहे हैं--साठी का पलाल, कोदों का पलाल, धान्य

निसज्जाए-गौतमस्य निषद्यायै ગૌતમ સ્વામીને બેસવા માટે फासुय पलाल-प्रासुक पलालम् પોતાના શિષ્યોથી પ્રાસુક-અચિત્ત-શુષ્ક કણવર્જીત-એષણીય, શાલી, વ્રીહી કોદ્રવ તથા ચોથા રાલકના પાલાલને તથા પાચમા પ્રાસુક-દર્ભ-ડાભના તૃણોને खिप्प सपणामये-क्षिप्र समर्पयति તાત્કાલિક બિછાવ્યા કહ્યુ પણ છે

तिणपणग पुण भणिय जिणेहिं कम्मट्ठगंठिमहणेहिं।
साली वीहीकोद्दवरालय रण्णे तणाइ च॥
छाया—तृण पचक पुनर्भणित जिनैः कर्माष्टग्रन्थिमथनैः।
शालीर्व्रीहि. कोद्रवो रालकोऽरण्यतृणानि च॥

કર્મોની ગાઠોને ફોડી નાખનારા તીર્થંકરોએ પાચ પ્રકારના પરાલ આ પ્રકારના બતાવેલ છે—સાઠીનુ પરાલ, કોદરાનુ પરાલ, ધાન્યનુ પરાલ, રાલ-કગુનુ પરાલ,

मूलम्—केसि कुमारसमणे, गोयमं दिस्समागयं ।
पडिरूवं पडिवत्तिं, सम्मं संपडिवज्जइ ॥१६॥

छाया—केशिकुमारश्रमणो, गौतमं दृष्ट्वाऽऽगतम् ।
प्रतिरूपां प्रतिपत्तिं, सम्यक् सम्प्रतिपद्यते ॥१६॥

टीका—'केसिकुमारसमणे' इत्यादि ।

केशिकुमारश्रमणो गौतमम् समागतं दृष्ट्वा प्रतिरूपाम्=उचितां प्रतिपत्तिम्=आगन्तुक प्रतिकर्तव्यरूपां सम्यक् सम्प्रतिपद्यते=सम्यक्प्रकारेण करोति ॥१६॥

प्रतिपत्तिमेवाह—

मूलम्—पलालं फासुयं तत्थ, पंचमं कुसतणाणि य ।
गोयमस्स निसज्जाए, खिप्पं संपणामए ॥१७॥

छाया—पलालं प्रासुकं तत्र, पञ्चमानि कुशतृणानि च ।
गौतमस्य निषद्यायै, क्षिप्रं समर्पयति ॥१७॥

टीका—'पलाल' इत्यादि ।

तत्र=तिन्दुकोद्याने केशिकुमारश्रमणो गौतमस्य निषद्यायै=उपवेशनार्थं

'केसिकुमारसमणे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ - (केसिकुमारसमणे—केशिकुमारश्रमण) केशिकुमार श्रमणने (गोयम आगय दिस्स—गौतम आगत दृष्ट्वा) गौतम स्वामी को आये हुए देखकर (पडिरूव पडिवत्तिं—प्रतिरूपां प्रतिपत्तिम्) उनके योग्य सत्कार सम्मानरूप प्रतिपत्ति (सम्मं संपडिवज्जइ—सम्यक् सम्प्रतिपद्यते) अच्छी तरह से की ॥१६॥

अब उसी प्रतिपत्तिको कहते हैं—'पलाल' इत्यादि ।

अन्वयार्थ— (तत्थ—तत्र) उस तिन्दुक नामके उद्यान में श्री केशिकुमार

"केसिकुमारसमणे" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—केसिकुमारसमणे—केशिकुमारश्रमण કેશિકુમારશ્રમણે गोयम आगय दिस्स—गौतम आगत दृष्ट्वा ગૌતમ સ્વામીને આવેલા જોઈને पडिरूव पडिवत्तिं—प्रतिरूपां प्रतिपत्तिम् તેમને યોગ્ય સત્કાર સન્માનરૂપ પ્રતિપત્તિ सम्मं संपडिवज्जइ—सम्यक् सम्प्रतिपद्यते સારી રીતે કરી ॥૧૬॥

હવે એ પ્રતિપત્તિને કહે છે "पलाल" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—तत्थ—तत्र એ તિન્દુકનામના ઉદ્યાનમાં કેશિકુમાર શ્રમણ गोयमस्स

छाया—समागता बहवस्तत्र, पाषण्डाः कौतुकान्मृगाः ।
गृहस्थानामनेकाः, साहस्र्यः समागताः ॥१९॥

टीका—'समागया' इत्यादि ।

तत्र=तिन्दुकोद्याने कौतुकात्=कौतूहलात् मृगाः=मृगा इव मृगाः—अज्ञानिनो बहवः—अनेके पाषण्डाः=अन्यतीर्थिकाः परिव्राजकादयः समागताः । तथा—गृहस्थानाम् अनेकाः साहस्र्यः=अनेकसहस्रसंख्यकाः गृहस्था अपि समागताः ॥१९॥

किं च—

मूलम्—देवदाणवगंधव्वा, जक्खरक्खसकिन्नरा ।
अदिस्साण य भूयाणं, आसि तत्थ समागमो ॥२०॥

छाया—देवदानवगन्धर्वाः, यक्षराक्षसकिन्नराः ।
अदृश्यानां च भूतानाम्, आसीत्तत्र समागमः ॥२०॥

टीका—'देवदाणव' इत्यादि ।

तत्र तिन्दुकोद्याने देवदानवगन्धर्वाः, तत्र—देवाः=वैमानिकाः, दानवाः=भवनपतयः, गन्धर्वाः=व्यन्तरदेवविशेषाः, समागताः, च=पुनः यक्षराक्षस

श्रावस्ती में दोनों के समागम का वृत्तान्त फैलने पर जो हुआ सो कहते हैं—'समागया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तत्थ—तत्र) उस तिन्दुक उद्यान में (कोउगा—कौतुकात्) कौतूहल से (मिया—मृगाः) अनेक अज्ञानी जन (बहू—बहवः) अनेक (पासण्डा—पाषण्डाः) अन्यतीर्थिक परिव्राजक जन (समागया—समागताः) आये । तथा (गिहत्थाण अणेगाओ साहस्सीओ समागया—गृहस्थानाम् अनेकाः साहस्र्यः समागताः) हजारों गृहस्थजन भी आकर एकत्रित हो गये ॥१९॥

फिर भी—'देवदाणव'० इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तत्थ—तत्र) उस तिन्दुक उद्यान में (देवदाणवगंधव्वा—देवदानवगन्धर्वाः) देव—वैमानिक देव दानव—भवनपति देव गन्धर्व

શ્રાવસ્તીમાં બન્નેના સમાગમનો વૃત્તાંત ફેલાઈ જતાં જે બન્યું તેને કહે છે—"समागया" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—तत्थ-तत्र એ તિન્દુક ઉદ્યાનમાં कोउगा-कौतुकात् કૌતુહલથી અનેક અજ્ઞાની જન बहु-बहव અનેક पासंडा-पाषण्डाः બીજા ધર્મના પરિવ્રાજક જન समागया-समागताः આવી પહોંચ્યા તથા હજારો ગૃહસ્થજન પણ આવીને એકત્રિત થઈ ગયા ॥૧૯॥

પછી પણ—"देवदाणव" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—तत्थ-तत्र એ તિન્દુક ઉદ્યાનમાં देवदाणवगंधव्वा-देवदानवगन्धर्वा દેવ—વૈમાનિક દેવ, દાનવ—ભવનપતિ દેવ, ગંધર્વ, વ્યન્તરદેવ વગેરે આવ્યા

'कङ्गु' इति प्रसिद्धधान्यानां च पलालाश्चत्वारस्तृणभेदाः, पञ्चमो दर्भः, इति तृणपञ्चकं प्रोक्तम्।) 'पंचम' इत्यत्रार्षत्वाद् बहुवचनस्थाने एकवचनम् ॥१७॥

तत्रासने समुपविष्टौ तौ यथा शोभमानौ तथाऽऽह—

मूलम्—केसिकुमारसमणे, गोयमे यं महायसे।
उभंओ निसंन्ना सोहंति, चंदसूरसंमप्पहा ॥१८॥

छाया—केशिकुमारश्रमणो, गौतमश्च महायशाः।
उभौ निषण्णौ शोभेते, चन्द्रसूर्यसमप्रभौ ॥१८॥

टीका—'केसिकुमार' इत्यादि।

महायशाः केशिकुमारश्रमणो महायशा गौतमश्च उभावपि निषण्णौ=समुपविष्टौ चन्द्रसूर्यसमप्रभौ=चन्द्रसूर्यसमानकान्तिमन्तौ शोभेते स्म ॥१८॥

अथास्त्यामुभयोः समागमवृत्तान्ते प्रसृते यद्भूत्तदुच्यते—

मूलम्—समागंया वहू तत्थ, पासंडां कोउगं मियाँ।
गिहत्थानामणेगांओ, साहंस्सीओ समांगया ॥१९॥

का पलाल, रालक-कगू का पलाल। सब धान्य मार्गशीर्ष मास मे परिपक्व होकर तयार हो जाते हैं। पाचमा पलाल दर्भ-डाभ माना है ॥१७॥

आसन पर बैठे हुए केशिश्रमण और गौतम स्वामी किस प्रकार सोभते थे? सो कहते हैं—'केसिकुमारसमणे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(महायसे-महायशाः) महायशस्वी (केसिकुमारसमणे गोयमे य-केशिकुमार श्रमण गौतमश्च) केशिकुमार श्रमण तथा गौतम (उभओ निसण्णा-उभौ निषण्णौ) ये दोनों बैठे हुए (चंदसूरसमप्पहा सोहंति चन्द्रसूर्यसमप्रभौ शोभेते) चन्द्र सूर्य के समान शोभित होने लगे १८

આ બધા ધાન્ય માગશર માસમાં પરિપક્વ થઈને તૈયાર થઈ જાય છે પાંચમું પરાલ દર્ભ-દાભ મનાયેલ છે ॥૧૭॥

આસન ઉપર બેઠેલા કેશિશ્રમણ અને ગૌતમ સ્વામી કેવા શોભતા હતા? તેને કહે છે—"केसिकुमारसमणे" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—महायसे-महायशा મહાયશસ્વી केसिकुमारसमण गोयमे य-केशिकुमारश्रमण गौतमश्च કેશી કુમાર શ્રમણ તથા ગૌતમસ્વામી उभओ निसन्ना-उभौ निषण्णौ એ બન્ને બેઠેલા चंदसूरसमप्पहा सोहंति-चन्द्रसूर्यसमप्रभौ शोभेते ચંદ્રસૂર્યની સમાન શોભતા હતા ॥૧૮॥

छाया—पृच्छ भदन्त ! यथेच्छं ते, केशिनं गौतमोऽब्रवीत् ।
तत केशी अनुज्ञात , गौतमम् इदमब्रवीत् ॥२२॥

टीका—'पुच्छ' इत्यादि ।

'हे भदन्त ! ते=तव यत्पृष्टव्य भवेत्, तत् यथेच्छं मा पृच्छ' इत्थं भगवान् गौतम' केशिनं मुनिम् अब्रवीत् । ततस्त्य गौतमेनानुज्ञात =अनुमोदित केशी भगवन्त गौतमम् इद वक्ष्यमाणमब्रवीत्=पृष्टवान । द्वितीयचरणे 'गोयम' इत्यत्रार्षत्वात प्रथमास्थाने द्वितीया । २२॥

सम्प्रति केशीमुनिर्गौतम यत् पृष्टवास्तदुच्यते—

मूलम्—चाउज्जामो यं जो धम्मो, जो इमो पचसिक्खिओ ।
देसिओ वद्धमाणेण, पासेण यं महामुणी ॥२३॥

छाया—चातुर्यामश्च यो धर्मो, योऽय पञ्चशिक्षित. ।
देशिता वर्द्धमानेन, पार्श्वेन च महामुनिना ॥२३॥

टीका—'चाउज्जामो' इत्यादि ।

हे गौतम ! अस्या व्याख्या द्वादशगाथावद् बोध्या ॥२३॥

मूलम्—एगकज्जपवन्नाण, विसेसे किं नु कारण ।
धम्मे दुविहे मेहावी ! कह विप्पच्चओ न ते ? ॥२४॥

गौतमस्वामीने जो कहा सो कहते है—'पुच्छ भंते' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—गौतमस्वामी कहते है कि-(भंते-भदन्त) हे भदन्त ! केशीश्रमण ! (ते जहेच्छं पुच्छ—ते यथेच्छ पृच्छ) जो आपको पूछना हो वह आप यथेच्छ पूछें । इस प्रकार (गोयम केसिं अब्बवी—गौतमो केशिन अब्रवीत्) जब गौतमस्वामी ने केशिश्रमण से कहा (तओ केसी अणुण्णाए—तत' केशी अनुज्ञात) तब केशिश्रमण ने गौतम स्वामी से अनुमोदित -प्रेरित होता हुवा (गोयम इणमब्बवी—गौतमम् इद मब्रवीत) गौतम स्वामी को इस प्रकारकहा—॥२२॥

ગૌતમ સ્વામીએ જે કહ્યુ તેને કહે છે—"पुच्छ भंते" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—ગૌતમસ્વામીએ કહ્યુ કે, भंते-भदन्त હે ભદન્ત ! કેશીશ્રમણ ते जहेच्छं पुच्छ—ते यथेच्छ पृच्छ જે કાંઈ પૂછવાની ઇચ્છા હોય તે ખુશીથી પૂછો આ પ્રકારે गोयम केसिं अब्बवी—गौतमो केशिन अब्रवीत् ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે કેશી શ્રમણને કહ્યુ तओ केसी अणुण्णाए—तत केशी अनुज्ञात ત્યારે કેશી શ્રમણે ગૌતમસ્વામીથી અનુમોદિત અને પ્રેરિત થઈને गोयम इणमब्बवी—गौतम इद अब्रवीत् ગૌતમસ્વામીને આ પ્રકારે પૂછયુ ॥૨૨॥

किन्नराः समागता । यक्षादयस्त्रयोऽपि व्यन्तरदेवविशेषा । तथा तत्र=उद्याने अदृश्यानां=चक्षुषोऽविषयाणां भूतानां=व्यन्तरविशेषाणां च समागम आसीत् ॥२०॥

सम्प्रति तयोः परस्परसभाषणमाह—

मूलम्—पुच्छामि ते महाभाग !, केसी गोयममब्बवी ।
तओ केसिं बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी ॥२१॥

छाया—पृच्छामि त्वां महाभाग !, केशी गौतममब्रवीत् ।
ततः केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥२१॥

टीका—'पुच्छामि' इत्यादि ।

'हे महाभाग ! गौतम ! ते=त्वां पृच्छामि' इत्थं केशीमुनिर्गौतमं गणधरमब्रवीत् । ततः इत्थं ब्रुवन्तं=पृच्छन्तं केशिनं तु गौतम इदं=वक्ष्यमाणमब्रवीत् ॥२१॥

गौतमो यथाह–तदुच्यते—

मूलम्—पुच्छ भंते ! जहेच्छं ते, केसिं गोयममब्बवी ।
तओ केसी अणुण्णाए, गोयमं इणमब्बवी ॥२२॥

व्यन्तरदेवविशेष आये तथा (जक्खरक्खसकिन्नरा–यक्षराक्षसकिन्नरा) यक्ष, राक्षस, किन्नर तथा (अदिस्साण य–अदृश्यानां च) अदृश्य और भी व्यन्तर देव के भेदरूप भूत देवका (समागमो आसी–समागम आसीत्) समागम हुवा ॥२०॥

अब इन दोनों का संभाषण कहते है 'पुच्छामि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(महाभाग–महाभाग) हे महाभाग गौतम ! मै (ते पुच्छामि–ते–पृच्छामि) आप से पूछता हूं" जब इस प्रकार (केशी गोयममब्बवी केशी गौतममब्रवीत्) केशीश्रमण ने गौतम से कहा (तओ बुवंतं केसिं गोयमो इणमब्बवी–ततः ब्रुवन्तं केशिनं गौतम इदमब्रवीत्) तब गौतमस्वामी ने केशिश्रमणसे इस प्रकार कहा ॥२१॥

तथा जक्खरक्खसकिन्नरा–यक्षराक्षसकिन्नरा' यक्ष, राक्षस, किन्नर तथा अदिस्साण य–अदृश्यानां च अदृश्य બીજા પણ વ્યન્તરદેવના ભેદરૂપ ભૂતદેવનો સમાગમો આસિ–સમાગમ આસીત્ સમાગમ થયો ॥૨૦॥

હવે એ બન્નેના સંભાષણને કહે છે—"पुच्छामि" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—महाभाग–महाभाग 'હે મહાભાગ ગૌતમ ! હું ते पुच्छामि–ते पृच्छामि આપને પૂછું છું" જ્યારે આ પ્રકારે केसी गोयममब्बवी–केशी गौतममब्रवीत् કેશી શ્રમણે ગૌતમને કહ્યું तओ बुवंतं केसिं गोयमो इणमब्बवी–ततः ब्रुवन्तं केशिनं गौतम इदमब्रवीत् ત્યારે ગૌતમે કેશી શ્રમણને આ પ્રકારે કહ્યું ॥૨૧॥

एवं केशिना प्रोक्ते गौतमः प्राह—

मूलम्—तओ केसिं बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी ।
पण्णा समिक्खए धम्मं, तत्तं तत्तविणिच्छयं ॥२५॥

छाया—ततः केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ।
प्रज्ञा समीक्षते धर्मं,-तत्त्वं तत्त्वविनिश्चयम् ॥२५॥

टीका—'तओ' इत्यादि ।

ततः=तदनन्तरं गौतमस्वामी पूर्वरीत्या ब्रुवन्तं=पृच्छन्तं केशिनं=केशिस्वामिनम्, इदं=वक्ष्यमाणमुत्तरम् अब्रवीत्=उक्तवान् । गौतमो यदुत्तरं दत्तवांस्तदुच्यते 'पण्णा' इत्यादिना—हे भदन्त ! तत्त्वविनिश्चयं–तत्त्वानां=जीवादीनां विनिश्चयाः=निर्णया यस्मात्तत्तथाभूतं, धर्मतत्त्वं प्रज्ञा=बुद्धिः समीक्षते=पश्यति । अयं भावः–न वाक्यश्रवणादेवार्थनिर्णयो भवति, किन्तु प्रज्ञावशादेव भवतीति ॥२५॥

मस्त दो प्रकार के धर्म में संशय नहीं होता है ? । जब दोनों की सर्वज्ञता में कोई भेद नहीं है तो फिर इस प्रकार से मुनिजन के चारित्ररूप धर्म मे भेद का क्या कारण है ? ॥२४॥

इस प्रकार केशिश्रमण के कहने पर गौतमस्वामी कहते हैं—'तओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(तओ–तत) इसके बाद (गोयमो–गौतमः) गौतम स्वामी ने (बुवन्तं केसिं–ब्रुवन्तं केशिनं) पूछते हुए केशिश्रमण कुमार से (इणमब्बवी–इदमब्रवीत) इस प्रकार कहा—हे भदन्त ! (तत्तविणिच्छयं–तत्त्वविनिश्चयम्) तत्त्वों के विनिश्चायक (तत्तं–तत्त्वं) धर्मतत्त्व को (पण्णा समिक्खए–प्रज्ञा समीक्षते) बुद्धि देखती है–अर्थात् वाक्यश्रवण से अर्थ निर्णय नहीं होता है किन्तु प्रज्ञावश से ही होता है ॥२५॥

આ ચાતુર્યામ તથા પંચયામરૂપ એ પ્રકારના ધર્મમાં સંશય નથી આવતો ? જ્યારે બન્નેની સર્વજ્ઞતામાં કોઈ ભેદ નથી તો પછી આ પ્રકારની મુનિજનના ચારિત્ર રૂપ ધર્મમાં ભેદનું કયું કારણ છે ? ॥૨૪॥

આ પ્રકારના કેશીશ્રમણના કહેવાથી ગૌતમસ્વામી કહે છે—"तओ" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—तओ-तत. આના પછી गोयमो–गौतम ગૌતમસ્વામીએ बुवंत केसिं–ब्रुवन्तं केशिनम् પૂછતા કેશીકુમાર શ્રમણને इणमब्बवी–इदमब्रवीत् આ પ્રમાણે કહ્યું કે, હે ભદન્ત ! तत्तविणिच्छयं–तत्त्वविनिश्चयम् તત્વોના વિનિશ્ચાયક तत्तं–तत्वं ધર્મતત્વને पण्णा समिक्खए-प्रज्ञा समीक्षते બુદ્ધિ જૂએ છે અર્થાત વાક્ય શ્રવણથી અર્થ નિર્ણય થતો નથી પરંતુ પ્રજ્ઞાવશથીજ થાય છે ॥ ૨૫॥

छाया—एककार्यप्रपन्नयोः, विशेषे किं नु कारणम् ।
धर्मे द्विविधे मेधाविन्! कथं विप्रत्ययो न ते ? ॥२४॥

टीका—'एगकज्ज' इत्यादि ।

हे गौतम! एककार्यप्रपन्नयोः—एककार्य=मोक्षफलरूपसमानकार्यं तत्र प्रपन्नयोः=प्रवृत्तयोः पार्श्ववर्द्धमानयोः विशेषे=धर्मस्याचरणव्यवस्थायाश्च भेदे किं नु कारणम्=को हेतुः ? हे मेधाविन्!=हे विशिष्टधारणाशक्तिसमन्वित! महाभाग! अस्मिन् द्विविधे धर्मे=चातुर्यामपञ्चयामलक्षणे द्विप्रकारके धर्मे ते=तव विप्रत्ययः=संशयः कथं न भवति? तुल्ये सर्वज्ञत्वे किं कृतोऽसौ भेदः ? इत्यभिप्रायः ॥२४॥

केशीश्रमण ने गौतमस्वामी से जो पूछा सो कहते हैं—'चाउज्जामो' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस गाथा की व्याख्या बारहवी गाथा की तरह समझ लेवें अर्थात् (जो धम्मो चाउज्जामो–यो धर्मो चातुर्यामश्च) चारमहाव्रतरूप मुनिधर्म (वद्धमाणेण पासेण य–वर्धमानेन पार्श्वेन च) श्री पार्श्वनाथस्वामी ने (देसिओ–देशित) कहा और पाच महाव्रतरूप मुनि धर्म श्री वर्धमान स्वामी ने कहा है सो इन दोनों के भेद में क्या कारण है ॥२३॥

'एगकज्जप्पवन्नाण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—केशिकुमारश्रमण ने गौतम से यह भी पूछा कि महावीर प्रभु तथा पार्श्वप्रभु का (एगकज्जप्पवन्नाण–एककार्यप्रपन्नयोः) एकरूप मोक्षकार्य मे समानरूप से प्रवृत्त है तो फिर (विसेसे किं नु कारणम्–विशेषे किं नु कारणम्) धर्म के आचरण करने की व्यवस्था मे इस भेद का क्या कारणहै? (मेहावी–मेधाविन) हे श्रेष्ठबुद्धिमान (दुविहे धम्मे ते विप्पचओ कह न–द्विविधे धर्मे ते विप्रत्ययो कथं न ?) क्या आप को इस चातुर्याम तथा पचया

કેશી શ્રમણે ગૌતમ સ્વામીને જે પૂછ્યુ તેને કહે છે—"चाउज्जामो" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ— ગાથાની વ્યાખ્યા બારમી ગાથાની માફક સમજી લેવી અર્થાત્ जो धम्मो चाउज्जामो–यो धर्मश्चातुर्यामश्च ચાર મહાવ્રતરૂપ મુનિધર્મ वद्धमाणेण पासेण य–वर्द्धमानेन पार्श्वेन च શ્રી પાર્શ્વનાથ સ્વામીએ देसिओ–देशित. કહ્યા છે અને પાચ મહાવ્રતરૂપી મુનિધર્મ શ્રી વર્ધમાન સ્વામીએ કહ્યા છે તો આ બન્નેના કહેવાના ભેદનુ કારણ શુ છે ॥૨૩॥

"एगकज्जपवन्नाण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—કેશીકુમાર શ્રમણે ગૌતમસ્વામીને એ પણ પૂછ્યુ કે, જ્યારે મહાવીર પ્રભુ તથા પાર્શ્વપ્રભુ एककज्जप्पवन्नाण–एककार्यमपन्नयो મોક્ષરૂપ કાર્યમા સમાનરૂપથી પ્રવૃત્ત છે તો પછી विसेसे किं नु कारणम् विशेषे किं नु कारणम् ધર્મનુ આચરણ કરવાની વ્યવસ્થામા આવા ભેદનુ શુ કારણ છે? मेहावी-मेधाविन् હે શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન્ दुविहे धम्मे ते विप्पच्चयो कह न–द्विविधे धर्मे ते विप्रत्ययो कथ न? શુ આપને

उक्तमेवार्थं स्पष्टयति--

मूलम्—पुरिमाणं दुव्विसोज्झो उ, चरिमाण दुरणुपालओ ।
कप्पो मज्झिमगाण तु, सुविसोज्झो सुपालओ ॥२७॥

छाया--पौरस्त्यानां दुर्विशोध्यस्तु, चरमाणां दुरनुपालकः ।
कल्पो मध्यमकानां तु, सुविशोध्यः सुपालकः ॥२७॥

टीका--'पुरिमाण' इत्यादि ।

पौरस्त्यानां=प्रथमतीर्थङ्करशिष्याणां कल्पः=साध्वाचारः दुर्विशोध्यः=दुःखेन निर्मलतां नेतुं शक्यः। ते हि ऋजुजडत्वेन गुरुणाऽनुशिष्यमाणा अपि तद्वाक्यं सम्यग् ज्ञातुं न समर्था भवन्तीतिभावः । चरमाणाम्=अन्तिमतीर्थङ्करशिष्याणां कल्पः=साध्वाचारः दुरनुपालकः-दुःखेनानुपाल्यते, दुरनुपालः स एव दुरनुपालकः-दुःखेनानुपालनीयः। भगवतो वर्द्धमानस्य साधवो गुरुवाक्यं कथंचिज्जानन्तोऽपि

होने के कारण प्रज्ञ हैं (तेण धम्मे दुहा कए-तेन धर्मो द्विधा कृतः) इस कारण एक कार्य मानने पर भी धर्म को द्विविधरूप से कहा है ॥२६॥

उक्त अर्थ को स्पष्ट करते है--'पुरिमाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(पुरिमाण-पौरस्त्यानाम्) प्रथम तीर्थंकर के शिष्यों का (कप्पो-कल्पः) साध्वाचार (दुव्विसोज्झो-दुर्विशोध्यः) दुर्विशोध्य था बडी कठिनता से निर्मल किया जाता था। क्यों कि वे ऋजुजड थे-इसलिये गुरु महाराज द्वारा सिखलाये जाने पर भी उन के वाक्य को सम्यक् रीति से समझ सकने मे असमर्थ थे। तथा (चरिमाण-चरमाणाम्) अन्तिम-तीर्थंकर श्री महावीर के शिष्यों का साध्वाचार (दुरणुपालओ-दुरनुपालकः) दुरनुपाल्य है। क्यों कि इनके शिष्य गुरु के वाक्य को कथंचित् जानते हुए

સુખથી શિક્ષા ગ્રહણ કરનારા હોવાના કારણે પ્રાજ્ઞ છે तेण धम्मे-दुहा कडे तेन धर्मो द्विधा कृतः આજ કારણે એક કાર્ય માનવા છતાં પણ ધર્મ દ્વિવિધરૂપથી કહેલ છે ॥૨૬॥

એજ અર્થને સ્પષ્ટ કરે છે—"पुरिमाण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--पुरिमाण-पौरस्त्याना પ્રથમ તીર્થંકરના શિષ્યોના कप्पो-कल्पः સાધ્વાચાર दुव्विसोज्झो-दुर्विशोध्यः દુર્વિશોધ્ય હતો ખૂબ જ કઠીનતાથી નિર્મળ બનાવવામાં આવતો હતો કેમ કે, તેઓ ઋજુ જડ હતા આ કારણે ગુરૂ મહારાજ તરફથી સીખવાડવા છતાં પણ એમના વાકયને સમ્યકરીતિથી સમજી શકવામાં તેઓ અસમર્થ હતા તથા चरिमाण-चरमाणम् અંતિમ તીર્થંકર મહાવીરના શિષ્યોનો સાધ્વાચાર दुरणुपालओ-दुरनुपालकः દુરનુપાલ્ય છે કેમકે એમના શિષ્ય ગુરૂના વાકયને જો કે, જાણતા હોવા છતાં પણ વક્રજડ હોવાના કારણે સાધ્વાચારને

मुनिधर्मस्य द्वैविध्ये कारणमाह--

मूलम्--पुरिमा उज्जुजडा उ, वक्कजडा य पच्छिमा।
मज्झिमा उज्जुपन्ना उ, तेण धम्मे दुहा कए ॥२६॥

छाया--पौरस्त्या ऋजुजडास्तु, वक्रजडाश्च पश्चिमाः।
मध्यमा ऋजुप्रज्ञास्तु तेन धर्मो द्विधा कृतः ॥२६॥

टीका--'पुरिमा' इत्यादि।

हे भदन्त! पौरस्त्या=प्रथमजिनेश्वरशिष्यास्तु ऋजुजडा आसन्। ऋजवश्च ते जडाश्चेति ऋजुजडाः। आचार्यो यथा शिक्षां दद्यात्, तथैव ग्रहीतुमनसः शिष्याः सरलभावसम्पन्नतया ऋजवः। दुर्बोध्यतया जडा इति भावः। च=पुनः पश्चिमा=अन्तिमतीर्थकरशिष्या वक्रजडाः सन्ति। वक्राश्च ते जडाश्च। विरुद्धार्थग्राहित्वात् वक्राः, स्वकीयानेककुतर्कवशेन विवक्षितार्थज्ञातुमसमर्थत्वाज्जडा इति भावः। मध्यमा=मध्यवर्त्तिनां द्वाविंशतेस्तीर्थकराणां शिष्यास्तु ऋजुप्रज्ञा आसन्। ऋजवश्च ते प्रज्ञाश्चेति। ऋजवः सरलभावसम्पन्नत्वात्। प्रज्ञाः सुखेन शिक्षाग्राहकत्वात् इति भावः। तेन हेतुना एककार्यप्रतिपन्नत्वेऽपि धर्मो द्विधा कृतः=चातुर्याम-पञ्चयामभेदेन द्विविध उपदिष्ट इत्यर्थः ॥२६॥

मुनिधर्म के दो प्रकार से कहने में कारण कहते हैं-'पुरिमा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--हे भदन्त (पुरिमा-पौरस्त्या) प्रथम जिनेश्वर के शिष्य (उज्जुजडा उ-ऋजुजडास्तु) ऋजु और जड थे। आचार्य उनको जैसी शिक्षा देते थे वैसी ही वे सरल स्वभाववाले होने से मान लेते थे। परन्तु समजाना उनको बडा मुश्किल था। (पच्छिमा वक्कजडा य-पश्चिमा वक्रजडाश्च) अन्तिम-तीर्थकर के शिष्य वक्रजड है। (मज्झिमा-मध्यमा) तथा बीच के बाईस तीर्थकरों के शिष्य (उज्जुपन्ना उ-ऋजुप्रज्ञास्तु) ऋजु प्रज्ञ है। सरलस्वभाव संपन्न होने से ऋजु है तथा सुख से शिक्षा ग्राहक

મુનિ ધર્મને બે પ્રકારથી કહેવાનું કારણ કહે છે-"पुरिमा" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત! पुरिमा-पौरस्त्या પ્રથમ જીનેશ્વરના શિષ્ય उज्जु जडाउ-ऋजुजडास्तु ઋજુ અને જડ હતા, આચાર્ય એમને જેવું શીક્ષણ આપતા હતા તેવું તેઓ સરલસ્વભાવવાળા હોવાથી માની લેતા હતા પરંતુ તેમને સમજાવવું ઘણું જ મુશ્કેલ હતું पच्छिमा वक्कजडा य-पश्चिमा वक्रजडाश्च અંતિમ તીર્થકરના શિષ્ય વક્રજડ છે તથા मज्झिमा-मध्यमा વચ્ચેના બાવીસ તીર્થંકરોના શિષ્ય उज्जुपन्ना उ-ऋजुप्रज्ञास्तु ઋજુપ્રજ્ઞ છે સ્વભાવ સંપન્ન હોવાથી ઋજુ છે તથા

इत्थं गौतमेनोक्ते केशी प्राह—

मूलम्—साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसयो इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥२८॥

छाया—साधुर्गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥२८॥

टीका—'साहु' इत्यादि ।

हे गौतम ! ते=तव प्रज्ञा=बुद्धिः साधुः=शोभनाऽस्ति । मे=मम अयं संशयस्त्वया छिन्नः । अन्योऽपि मम संशयोऽस्ति । हे गौतम ! तं मे कथय= तस्योत्तरं मह्यं देहि । केशिन इयमुक्तिः शिष्यापेक्षया विज्ञेया । अस्मिन् समये ज्ञानत्रयान्वितस्य तस्यैतादृशसंशयासम्भवात् ॥२८॥

मूलम्—अचेलगो य जो धम्मो, जो इमो संतरुत्तरो ।
देसिओ वद्धमाणेणं, पासेणं य महाजसा ॥२९॥

इस प्रकार जब गौतमस्वामी ने कहा तब केशीकुमार श्रमण ने उनसे कहा—'साहु' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(गोयम-गौतम) हे गौतम ! (ते पण्णा-ते प्रज्ञाः) आपकी बुद्धि बहुत ही (साहु-साधु) अच्छी है । (मे इमो संसयो छिन्नो-मे अयम् संशयो छिन्नो) आपने मेरे संशय को दूर कर दिया है । (मज्झं अन्नो वि संसओ-मम अन्योऽपि संशयो) मुझे और भी संशय है । (तं मे कहसु गोयमा-तं मे कथय गौतम) अतः आप उसको भी दूर करें । इस प्रकार का यह केशी श्रमण का कथन शिष्यों की अपेक्षा जानना चाहिये । कारण कि केशी श्रमण स्वयं ज्ञानत्रय से युक्त थे अतः उनको ऐसे संशयों का होना असंभव है ॥२८॥

આ પ્રમાણે જ્યારે ગૌતમસ્વામીએ કહ્યું ત્યારે કેશીકુમાર શ્રમણે તેમને કહ્યું—"साहु" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—गोयम-गौतम હે ગૌતમ ! ते पण्णा-ते प्रज्ञा આપની બુદ્ધિ ઘણીજ साहु-साधु સારી છે मे इमो संसयो छिन्नो-मे अयम् संशयो छिन्नो આપે મારા આ સંશયને દૂર કરી દીધો છે मज्झ अन्नोवि संसओ-मम अन्योऽपि संशयो મને બીજો પણ સંશય છે આથી तं कहसु गोयमा-तम् कथय गौतम આપ એને પણ દૂર કરો આ પ્રકારનું કેશી શ્રમણનું કથન શિષ્યોની અપેક્ષાએ જાણવું જોઈએ કારણ કે, કેશી શ્રમણ પોતે જ્ઞાનત્રયથી યુક્ત હતા આથી તેમને એવો સંશય થવો અસંભવ છે ॥૨૮॥

वक्रजडत्वेन न यथावदनुष्ठातु शक्नुवन्तीतिभावः । म यमकाना=म यवर्ति द्वाविंशतितीर्थकरशिष्याणा कल्प.=सा चाचार', सुविशोध्य.=सुखेन निर्मलीकरणीय., सुपालकः=सुखेन पालनीयश्च भवति । एते हि ऋजुप्रज्ञत्वेन साधुक्रियाकलाप सुखेनैव यथावज्जानन्ति, पालयन्ति च। अत एते मध्यमतीर्थकराणा शिष्या उपदिष्टे चातुर्यामधर्मे मैथुनविरमणमपि यथावज्ज्ञातु पालयितु च शक्नुवन्ति । अतो भगवता पार्श्वेन चातुर्यामो धर्म प्रोक्त । प्रथमान्तिमजिनशिष्याम्नु न तथा । अत' प्रथमान्तिमतीर्थङ्कराभ्या श्री ऋपभ-श्रीवीरस्वामिभ्या पञ्चमहाव्रतरूपो धर्म' उक्त । तदेव विचित्रप्रज्ञविनेयानुग्रहाय धर्मस्य द्वैविध्य, न तु तात्त्विक द्वैविध्यम् ॥२७॥

भी वक्रजड होने के कारण से सा चाचार को यथावत् अनुष्ठित करने के लिये शक्तिशाली नहीं होते है। तथा (मज्झिमगाण तु कप्पो-मध्यमकाना तु कल्प') मध्यवर्ती वाईस तीर्थकरों के शिष्यों का सा चाचार (सुविसोज्झो सुपालओ-सुविशोध्य सुपालक) सुविशोध्य एव सुपाल्य कहा है। कारण कि इन के शिष्यजन ऋजुप्रज्ञ होने के कारण साधु सबधी क्रियाकलाप को अच्छी तरह तो जानते है और उसे अच्छी तरह से पालते है। इसलिये मध्यम तीर्थकरों के शिष्यजन उपदिष्ट चातुर्यामरूप धर्म मे मैथुन विरमण व्रत को भी अच्छी तरह जान लेते है और अच्छी-तरह उसको पालते भी है। इसीलिये भगवान् पार्श्वनाथ ने चातुर्याम धर्म कहा है। तथा प्रथम एव अन्तिम तीर्थकरों के शिष्य ऐसे तो होते नही है अत उनके लिये पचमहाव्रतरूप धर्म कहा। इस तरह विचित्रप्रज्ञ विनेयजनों के अनुग्रह के लिये धर्म की भिन्नता जाननी चाहिये। वास्तव में धर्म की भिन्नता नही है ॥२७॥

યથાવત્ પાળવામા શક્તિશાળી બનતા નથી તથા मज्झिमाण तु कप्पो-मध्यमकाना तु कल्प. વચ્ચેના બાવીસ તીર્થંકરોના શિષ્યોનો સાધ્વાચાર सुविसोज्झो सुपालओ -सुविशोध्य सुपालकः સુવિશોધ્ય અને સુપાલ્ય બતાવવામા આવેલ છે કારણ કે એમના શિષ્યજન ઋજુપ્રજ્ઞ હોવાના કારણે સાધુ સબધી ક્રિયાકલાપને સારી રીતે જાણે છે અને એનુ સારી રીતે પાલન પણ કરે છે આ માટે વચ્ચેના તીર્થંકરોના શિષ્યજન ઉપદેશવામા આવેલ ચાતુર્યામરૂપ ધર્મમા મૈથુન વિરમણ વ્રતને પણ સારી રીતે જાણી લે છે અને સારી રીતે તેને પાળે પણ છે આથી ભગવાન પાર્શ્વનાથે ચાતુર્યામ ધર્મ કહેલ છે તથ પ્રથમ અને છેલ્લા તીર્થંકરોના શિષ્ય એવા હોતા નથી આથી એમના માટે પચમહાવ્રતરૂપ ધમ કહ્યો આ પ્રમાણે વિચિત્ર પ્રજ્ઞ વિનેય જનોના અનુગ્રહને માટે ધમ ની ભિન્નતા જાણવી જોઈએ વાસ્તવમા ધર્મમા ભિન્નતા છે જ નહી ॥૨૭॥

एवं केशिना पृष्टे गौतमो यदुक्तवांस्तदुच्यते--

मूलम्--केसिमेवं बुवाणं तु, गोयमो इणमब्बवी।
विन्नाणेण समागम्म धम्मसाहणमिच्छियं ॥३१॥

छाया--केशिनमेवं ब्रुवाणं तु, गौतम इदमब्रवीत्।
विज्ञानेन समागम्य, धर्मसाधनमिष्टम् ॥३१॥

टीका--'केसिमेव' इत्यादि।

एवं=पूर्वोक्तरीत्या ब्रुवाणं=पृच्छन्तं केशिनं तु गौतम इदं=वक्ष्यमाणमुत्तरम् अब्रवीत्=उक्तवान्। यदुक्तवांस्तदुच्यते-'विन्नाणेण' इत्यादिना-हे भदन्त! विज्ञानेन=केवलज्ञानेन समागम्य=यस्य यदुचितं तदेव ज्ञात्वा धर्मसाधनम्= धर्मोपकरणं वर्षाकल्पादिकं पार्श्वनाथवर्द्धमानस्वामिभ्याम् इष्टम्=अनुमतम्-अनु-

भी तीर्थंकर को भेद इष्ट नहीं है फिर कारण मे भेद क्यों? (मेहावी-मेधावी) हे मेधाविन् (दुविहे लिङ्गे-द्विविधे लिङ्गे) अचेलक रूप तथा विविधवर्ण बहुमूल्य वस्त्ररूप, इन दो लिङ्गों में (ते विप्पच्चओ कहं न-ते विप्रत्ययः कथं न) आपको संदेह क्यों नहीं होता है ॥२९॥३०॥

केशी श्रमण के पूछने पर गौतम स्वामी ने क्या कहा? सो कहते हैं--'केसिमेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(एवं-एवम्) इस पूर्वोक्त रूप से (बुवाणं-ब्रुवाणम्) (केसिं-केशिनम्) केशी श्रमणकुमार से (गोयमो इणमब्बवी-गौतम इदम् अब्रवीत्) गौतम स्वामी ने इस प्रकार कहा-हे भदन्त! (विन्नाणेण समागम्म-विज्ञानेन समागम्य) विज्ञान-केवलज्ञान से जिस को जो उचित था उस को उसी रूप से जानकर (धम्मसाहणम्-धर्मसाधनम्) वह धर्मसाधन

ભેદ લાગ્યો નથી તો કારણમાં ભેદ શા માટે? મેહાવી-મેધાવી મેધાવિન્! દુવિહે લિઙ્ગે-દ્વિવિધે લિઙ્ગે અચેલકરૂપ તથા-વિવિધ વર્ણ બહુમૂલ્ય વસ્ત્રરૂપ આ બે લિંગોમાં તે વિપ્પચ્ચઓ કહં ન-તે વિપ્રત્યયઃ કથં ન આપને સંદેહ શા માટે નથી થતો? ॥૨૯॥૩૦॥

કેશી શ્રમણના પૂછવાથી ગૌતમ સ્વામીએ શું કહ્યું? તેને કહે છે--"केसीमेव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--एवं-एवम् આ પૂર્વોક્તરૂપથી बुवाणं-ब्रुवाणम् પૂછવાવાળા केसिं-केशिनम् કેશીકુમાર શ્રમણને गोयमो इणमब्बवी-गौतम इदमब्रवीत् ગૌતમસ્વામીએ આ પ્રકારે કહ્યું કે-હે ભદન્ત विन्नाणेण समागम्म-विज्ञानेन समागम्य વિજ્ઞાન-કેવળજ્ઞાનથી જેને જે ઉચિત હતું એને એજ રૂપથી જાણીને धम्मसाहणम्-धर्म

एगकज्जपवन्नाणं, विसेसे किं नु कारणं ? ।
लिंगे दुविहे मेहावी !, कह विप्पच्चओ न ते ? ॥३०॥

छाया—अचेलकश्च यो धर्मो, योऽयं सान्तरोत्तरः ।
देशितो वर्द्धमानेन, पार्श्वेन च महायशसा ॥२९॥
एककार्यप्रपन्नयोः, विशेषे किं नु कारणम् ? ।
लिङ्गे द्विविधे मेधाविन् !, कथं विप्रत्ययो न ते ॥३०॥

टीका—'अचेलगो य' इत्यादि ।

महायशसा=लोकत्रयव्याप्तकीर्त्तिना । द्विविधलिङ्गे=अचेलकतया विविधवस्त्रधारितया च द्विभेदे साधुवेषे । ते=भवतः, विप्रत्ययः—संशयः कथं न ? । इदं गाथाद्वयं व्याख्यातप्रायम् ॥२९॥३०॥

'अचेलगो' इत्यादि, 'एगकज्जपवन्नाण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जो अचेलगो धम्मो—यः अचेलकः धर्मः) महायशस्वी प्रभुवर्धमान स्वामी ने जो यह अचेलक-परिमित, जीर्णप्राय तथा अल्प मूल्य वाले श्वेतवस्त्रों का परिधान करना रूप मुनिधर्म कहा है, तथा (जो इमो संतरुत्तरो—यः अयं सान्तरोत्तरः) महायशस्वी पार्श्वनाथ स्वामी ने जो प्रमाण से एवं वर्ण से विशिष्ट तथा उत्तर—बहुमूल्य वस्त्रों का परिधान करनारूप मुनिधर्म कहा है। सो (एगकज्जपवन्नाण विसेसे किं नु कारणं—एककार्यप्रपन्नयोः विशेषे किं नु कारणम्) मुक्तिरूप एक कार्यमें प्रवृत्त इन दोनों तीर्थंकरो को धर्माचरण की व्यवस्था मे ऐसे भेद का क्या कारण है? जब कारण मे भेद होता है तब कार्य मे भी भेद हो जाता है परंतु यहां तो ऐसा है नहीं कारणकी मुक्तिरूप कार्य मे किसी

''अचेलगो'' ઈત્યાદિ !, ''एककज्जपवन्नाण'' ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—जो अचेलगो धम्मो—यः अचेलकः धर्म મહાયશસ્વી પ્રભુ વર્ધમાન સ્વામીએ જે એ અચેલક-પરિમિત, જીર્ણપ્રાય તથા અલ્પ મૂલ્યવાળા શ્વેતવસ્ત્રને પરિધાન કરવારૂપ મુનિધર્મ બતાવેલ છે તથા जो इमो संतरुत्तरो—यः अयं सान्तरोत्तर મહાયશસ્વી પાર્શ્વનાથ સ્વામીએ જે પ્રમાણથી અને વર્ણથી વિશિષ્ટ તથા ઉત્તર-બહુમૂલ્ય વસ્ત્રોને પરિધાન કરવારૂપ મુનિધર્મ બતાવેલ છે તે પછી एककज्जपवन्नाण विसेसे किंनु कारण—एगकार्यप्रपन्नयोः विशेषे किंनु कारणम् મુક્તિરૂપ એક કાર્યમા પ્રવૃત્ત આ બન્ને તીર્થંકરોના ધર્માચરણની વ્યવસ્થામા આવા ભેદનુ કારણ શુ છે? જ્યારે કારણમા ભેદ હોય છે ત્યારે કાર્યમા પણ ભેદ બની જાય છે પરંતુ આમા તો એવુ કાંઈ છે નહી કારણ કે મુક્તિરૂપ કાર્યમા કોઈ પણ તીર્થંકરને

एवं केशिना पृष्टे गौतमो यदुक्तवांस्तदुच्यते--

मूलम्--केसिमेवं बुवाणं तु, गोयमो इणमब्बवी।
विन्नाणेण समागम्म धम्मसाहणमिच्छियं ॥३१॥

छाया--केशिनमेवं ब्रुवाणं तु, गौतम इदमब्रवीत्।
विज्ञानेन समागम्य, धर्मसाधनमिष्टम् ॥३१॥

टीका--'केसिमेवं' इत्यादि।

एवं=पूर्वोक्तरीत्या ब्रुवाणं=पृच्छन्तं केशिनं तु गौतम इदं=वक्ष्यमाणमुत्तरम् अब्रवीत्=उक्तवान्। यदुक्तवाँस्तदुच्यते-'विन्नाणेण' इत्यादिना-हे भदन्त! विज्ञानेन=केवलज्ञानेन समागम्य=यस्य यदुचितं तथैव ज्ञात्वा धर्मसाधनम्= धर्मोपकरणं वर्षाकल्पादिकं पार्श्वनाथवर्द्धमानस्वामिभ्याम् इष्टम्=अनुमतम्-अनु-

भी तीर्थंकर को भेद इष्ट नहीं है फिर कारण में भेद क्यों? (मेहावी-मेधावी) हे मेधाविन् (दुविहे लिङ्गे-द्विविधे लिङ्गे) अचेलक रूप तथा विविधवर्ण बहुमूल्य वस्त्ररूप, इन दो लिङ्गों में (ते विप्पच्चओ कहं न-ते विप्रत्ययः कथं न) आपको संदेह क्यों नहीं होता है ॥२९॥३०॥

केशी श्रमण के पूछने पर गौतम स्वामी ने क्या कहा? सो कहते हैं--'केसिमेव' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(एवं-एवम्) इस पूर्वोक्त रूप से (बुवाणं-ब्रुवाणम्) (केसिं-केशिनम्) केशी श्रमणकुमार से (गोयमो इणमब्बवी-गौतम इदम् अब्रवीत्) गौतम स्वामी ने इस प्रकार कहा-हे भदन्त! (विन्नाणेण समागम्म-विज्ञानेन समागम्य) विज्ञान-केवलज्ञान से जिस को जो उचित था उस को उसी रूप से जानकर (धम्मसाहणम्-धर्मसाधनम्) वह धर्मसाधन

ભેદ લાગ્યો નથી તો કારણમાં ભેદ શા માટે? मेहावी-मेधावी મેધાવિન્! दुविहे लिङ्गे-द्विविधे लिङ्गे અચેલકરૂપ તથા-વિવિધ વર્ણ બહુમૂલ્ય વસ્ત્રરૂપ આ બે લિંગોમાં ते विप्पच्चओ कह न-ते विप्रत्ययः कथं न આપને સંદેહ શા માટે નથી થતો? ॥૨૯॥૩૦॥

કેશી શ્રમણના પૂછવાથી ગૌતમ સ્વામીએ શું કહ્યું? તેને કહે છે--"केसीमेव" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--एवं-एवम् આ પૂર્વોક્તરૂપથી बुवाणं-ब्रुवाणम् પૂછવાવાળા केसिं-केशिनम् કેશીકુમાર શ્રમણને गोयमो इणमब्बवी-गौतमः इदमब्रवीत् ગૌતમસ્વામીએ આ પ્રકારે કહ્યું-હે ભદન્ત विन्नाणेण समागम्म-विज्ञानेन समागम्य વિજ્ઞાન-કેવળજ્ઞાનથી જેને જે ઉચિત હતું એને એજ રૂપથી જાણીને धम्मसाहणम्-धर्म

ज्ञातम्। अय भावः-पूर्वान्तिमतीर्थंकरशिष्या ऋजुजडा वक्रजडाश्च भवन्ति। तेभ्यो रक्तवस्त्रादीनामनुज्ञा यदि दीयते, तदा ते ऋजुजडत्वेन वक्रजडत्वेन च वस्त्ररञ्जनादावपि प्रवृत्तिं कुर्युः, इति' प्रथमान्तिमतीर्थङ्कराभ्यां तेभ्यो रक्तवस्त्रादीनामनुज्ञा न दत्ता। मध्यवर्त्तितीर्थंकराणां शिष्यास्तु न तथा, किं तु ऋजुप्रज्ञा भवन्ति। अतस्तेषां रक्तादिवस्त्रमप्यनुज्ञातम् ॥३१॥

किं च—

मूलम्—पच्चयत्थयं च लोगस्स, नाणाविहविकप्पणं।

जत्तत्थं गहणत्थं च, लोगे लिंगपओयणं ॥३२॥

छाया—प्रत्ययार्थं च लोकस्य, नानाविधविकल्पनम्।

यात्रार्थं ग्रहणार्थं च, लोके लिङ्गप्रयोजनम् ॥३२॥

टीका—'पच्चयत्थयं' इत्यादि।

हे भदन्त! लोकस्य प्रत्ययार्थम्=एते जैनसाधवः सन्तीतिजनानां ज्ञानार्थं

(इच्छिय-इष्टम्, पार्श्वनाथ एवं वर्द्धमान प्रभुने कहा है। इसका तात्पर्य इस प्रकार है पूर्व एवं अन्तिम तीर्थंकर के शिष्य ऋजुजड एवं वक्रजड होते हैं। यदि उनके लिये रक्त वस्त्र आदि के धारण करने की आज्ञा दे दी जाती तो वे ऋजुजड एवं वक्रजड होने की वजह से वस्त्रों को रंगने लग जाते। इसलिये प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकरों ने रक्तवस्त्र आदि धारण करने की आज्ञा प्रदान नहीं की है। मध्यवर्ति तीर्थंकरों के शिष्य ऐसे नहीं हैं किन्तु ऋजु प्रज्ञ हैं। इसलिये उन्हों ने उनको पांचवर्ण के वस्त्र आदि धारण करने की आज्ञा दी है ॥३१॥

और—'पच्चत्थयं' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे भदन्त! (लोगस्स पच्चत्थयं-लोकस्य प्रत्ययार्थम्)

साधनम् એ ધર્મ સાધન इच्छिय-इष्टम् પાર્શ્વનાથ અને વર્ધમાન પ્રભુએ બતાવેલ છે એનું તાત્પર્ય આ પ્રકારથી છે-પ્રથમ અને છેલ્લા તીર્થંકરના શિષ્ય ઋજુજડ (સરળ છતાં અણસમજુ) અને વક્રજડવાળા અને (અણસમજુ) હોય છે જો એમને માટે લાલ વસ્ત્રના ધારણ કરવાની આજ્ઞા આપી દેવામાં આવત તો ઋજુજડ વક્રજડ હોવાના કારણે વસ્ત્રોને રંગવા આદિમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરવા લાગી જાત આજ કારણે પ્રથમ તથા છેલ્લા તીર્થંકરોએ લાલ વસ્ત્ર આદિના ધારણ કરવાની આજ્ઞા આપેલ નથી વચ્ચેના તીર્થંકરોના શિષ્ય એવા નથી કિંતુ ઋજુ પ્રજ્ઞ છે આ કારણે એમણે તેમને પાંચવર્ણના વસ્ત્ર આદિ ધારણ કરવાની આજ્ઞા આપેલ છે ॥૩૧॥

વળી પણ—"पच्चत्थयं" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત! लोगस्स पच्चत्थयं-लोकस्य प्रत्ययार्थम् "આ જૈન

नानाविधविकल्पनम्=नानाप्रकारोपकरणविधानं तीर्थंकरैः कृतम्। अयं भावः- एते जैनसाधवः सन्तीति प्रतीति लोकाः झटिति समायान्तु' इति हेतोः सदोरक-मुखवस्त्रिकारजोहरणादिकं नानाविधमुपकरणं साधूनां कृते निर्दिष्टम्। एतान्युपकरणानि यतिष्वेव प्रतिनियतानि, नान्येषु। यदि साधूनां लिङ्गमनियतं भवेत्, तदा धूर्ता अपि आत्मानं साधवो वदेयुः। ततश्च साधुष्वपि लोकानां विश्वासो न स्यात्। अत एव भगवता सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणादिकम् उपकरणं साधूनां कृते निर्दिष्टमिति। तथा यात्रार्थम् यात्रा=संयमनिर्वाहस्तदर्थं-उपकरणं विना वर्षादौ संयमबाधैव स्यात्, ग्रहणार्थम्-ग्रहणं=स्वस्य ज्ञानं तदर्थं कथंचिच्चित्तविप्लवोत्पत्तावपि मुनिरहमस्मीति ज्ञानार्थं लोके लिङ्गस्य साधुवेषस्य प्रयोजनमस्ति ॥३२॥

'ये जैनसाधु हैं' इस प्रकार से लौकिकजनों को समजाने के लिये (नाणाविह विकप्पण-नानाविधविकल्पनम्) नाना प्रकार के उपकरणों का विधान तीर्थंकरों ने किया है। 'ये जैनसाधु हैं' इस बात को लोक जल्दी समझ जावें इसलिये सदोरकमुखवस्त्रिका, रजोहरण आदि नाना प्रकार के उपकरण साधुओं के लिये निर्दिष्ट किये गये है। ये सब उपकरण यतिजनों में ही प्रतिनियत हैं अन्य में नहीं। यदि साधुजनो का चिह्न अनियत होता तो धूर्तजन भी अपने को साधु कहने लग जाते तो इस तरह लोगों का विश्वास यतिजनों म नहीं होता, इसीलिये भगवान् ने यह पूर्वोक्त यतिचिह्न नियमित किया है। तथा (जत्तत्थं गहणत्थं च लोगे लिंग पओयण-यात्रार्थं ग्रहणार्थं च लोके लिङ्गप्रयोजनम) यात्रा के लिये-संयम निर्वाह के लिये-एवं कथंचित् चित्तमें विप्लव उत्पन्न होने पर भी 'मै मुनि हू' इस प्रकार अपने ज्ञान के लिये इस लोकमे साधुचिह्न को प्रयोजन है ॥३२॥

સાધુ છે' આ પ્રકારથી લૌકિક જનોને સમજવાને માટે नाणाविहविकप्पण-नानाविधविकल्पनम् અનેક પ્રકારના ઉપકરણોનું વિધાન તીર્થંકરોએ કરેલ છે "આ જૈનસાધુ છે" આ વાતને લોકો જલદીથી સમજી જાય આ માટે સદોરકમુખવસ્ત્રિકા, રજોહરણ, આદિ નાના પ્રકારના ઉપકરણ સાધુઓને માટે નિર્દિષ્ટ કરવામાં આવેલ છે આ સઘળા ઉપકરણ યતિજનોમા પણ પ્રતિનિયત છે અન્યમા નહીં જો સાધુ જનોનું ચિન્હ અનિયત હોત તો ધૂર્ત માણસો પણ પોતાની જાતને સાધુ કહેવા લાગી જાત આથી લોકોનો વિશ્વાસ યતિજને મા ન રહેત આ કારણે ભગવાને આ પૂર્વોક્ત યતિચિન્હ નિયમિત કરેલ છે તથા जत्तत्थं गहणत्थं च लोगे लिंगपओयण-यात्रार्थं ग्रहणार्थं लोके लिङ्गप्रयोजनम् યાત્રાના માટે સંયમનિર્વાહના માટે અને કદાચિત ચિત્તમા વિપ્લવ ઉત્પન્ન થવા છતા પણ 'હું મુનિ છું' આ પ્રકારે પોતાના જ્ઞાનના માટે આ લોકમા સાધુચિન્હનું પ્રયોજન છે ॥૩૨॥

किं च--

मूलम्--अह भवे पइण्णा उ, मोक्खसब्भूयसाहणे।

नाणं च दंसणं चेवं, चरित्तं चेव निच्छये ॥३३॥

छाया--अथ भवति प्रतिज्ञा तु, मोक्षसद्भूतसाधनम्।

ज्ञानं च दर्शनं चैव, चारित्रं चैव निश्चये ॥३३॥

टीका--'अह' इत्यादि।

'अथ' शब्दो विशेषार्थद्योतकः। तं विशेषार्थमेवाह-हे भदन्त! निश्चये=निश्चयनये ज्ञानं च, दर्शनं चैव, चारित्रं चैव=ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षसद्भूतसाधनम्-मोक्षस्य सद्भूतं=वास्तविकं साधनं=कारणम्, अस्ति। इति प्रतिज्ञा-प्रतिज्ञानं प्रतिज्ञा-अभ्युपगमः सिद्धान्त इति यावद् भवति तु=भवत्येव-अस्त्येव पार्श्ववर्द्धमानतीर्थङ्करयोः। अयं भावः-निश्चयनये तु ज्ञानदर्शनचारित्राण्येव मोक्षसाधनम्। तत्र नास्ति लिङ्गं महत्त्वावहम्। श्रूयते हि-भरतादीनां लिङ्गं विनाऽपि केवलोत्पत्तिरिति। अतोऽत्रनये लिङ्गमकिंचित्करमेवेति भगवतोः पार्श्ववर्द्धमान

फिर भी--'अह' इत्यादि।

अन्वयार्थ--हे भदन्त! (निच्छये-निश्चये) निश्चयनय की अपेक्षा से (नाणं च दंसणं चेव चरित्तं चेव-ज्ञानं च दर्शनं चैव चारित्रं चैव) ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र यही (मोक्खसब्भूयसाहणे-मोक्षसद्भूतसाधनम) मोक्ष का वास्तविक साधन है। इस प्रकार का (पइण्णा भवे-प्रतिज्ञा भवति) सिद्धान्त दोनों तीर्थंकरों का है। तात्पर्य इस का यह है कि निश्चयनय के अनुसार जब मोक्ष के वास्तविक साधन का विचार किया जाता है तो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र की एकता ही मोक्ष की एक वास्तविक अबाध हेतु है। इसमें लिङ्ग के प्रति आग्रह नहीं है। क्यों कि शास्त्रों में ऐसी कई कथाएँ हैं-जैसे भरतचक्रवर्ती को मुनिलिङ्ग

छतां पण--"अह" इत्यादि।

हे भदन्त! निच्छये-निश्चये निश्चय नयनी अपेक्षाथी नाणं च दंसणं चेव चारित्तं चेव-ज्ञानं च दर्शनं चैव चारित्रं चैव ज्ञान दर्शन अने चारित्र ओ ज मोक्खसब्भूयसाहणे-मोक्षसद्भूतसाधनम् मोक्षनुं वास्तविक साधन छे आ प्रकारनो पइण्णा भवे-प्रतिज्ञा भवति सिद्धांत बन्ने तीर्थंकरोनो छे. तात्पर्य आनुं ओ छे के निश्चयनयना अनुसार ज्यारे मोक्षना वास्तविक साधननो विचार करवामां आवे छे तो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान अने सम्यक् चारित्रनी ओकताज मोक्षनुं ओक

योरप्यैक्यमस्त्यम्। व्यवहारनये तु लिङ्गस्यापि मोक्षसाधनतेष्यते एव। अतो व्यवहारनये मोक्षसाधनभूतस्य लिङ्गस्य भेदेऽपि निश्चयनये ज्ञानदर्शनचारित्ररूप मोक्षसद्भूतसाधनस्याभेदेन न लिङ्गभेदो विदुषा विप्रत्ययहेतुरिति ॥२३॥

गौतमस्योत्तरं श्रुत्वा केशीमुनिः प्राह--

मूलम्--साहु गोयम ! पण्णा ते, छिण्णो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥३४॥

छाया--साधुर्गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम्।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥३४॥

टीका--'साहु गोयम' इत्यादि।

हे गौतम ! ते=तव प्रज्ञा=बुद्धिः साधुः=शोभना अस्ति। मे=मम संशयः=

के बिना भी केवलज्ञान की उत्पत्ति हुई कही गई है। इसलिये इस नयकी दृष्टि मे लिङ्ग अकिंचित्कर है। इस विषय मे न तो श्री भगवान् पार्श्वनाथ प्रभु को कोई विवाद है और न प्रभु महावीर स्वामी को ही। जब व्यवहारनय की दृष्टि से विचार किया जाता है, तो लिङ्ग मे भी मोक्षसाधनता मानी गई है। इसीलिये व्यवहार की अपेक्षा मोक्ष का साधनभूत लिङ्ग भिन्न होने पर भी निश्चय की अपेक्षा से उसमे कोइ भेद नहीं है। अतः इस अपेक्षा लिङ्ग भेद विप्रत्यय-सन्देह का कारणभूत विद्वानों की दृष्टि मे नही हो सकता है ॥३३॥

गौतमस्वामी के उत्तर को सुनकर केशी श्रमण कहते हैं--'साहु' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(गोयम-गौतम) हे गौतम ! (ते-ते) आपकी (पण्णा-

વાસ્તવિક અબાધ હેતુ છે આમા લિંગના તરફ આગ્રહ નથી કેમકે શાસ્ત્રોમા એવી કેટલીએ કથાઓ છે --જેમ ભરત-ચક્રવર્તીને મુનિલિંગના વગર પણ કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થયેલ હોવાનુ બતાવાયેલ છે આથી આ નયની દૃષ્ટીમા લિંગ અકિંચિત્કર છે આ વિષયમા ન તો ભગવાન પાર્શ્વનાથનો કોઈ વિવાદ છે અને ન તો પ્રભુ મહાવીરનો પણ જ્યારે વ્યવહાર નયની દૃષ્ટીથી વિચાર કરવામા આવે છે તો લિંગમા પણ મોક્ષ સાધના માનવામા આવી છે આ કારણે વ્યવહારની અપેક્ષા મોક્ષના સાધનભૂત લિંગ ભિન્ન હોવા છતા પણ નિશ્ચયના અપેક્ષાથી એનામા કોઈ ભેદ નથી આથી એ અપેક્ષા લિંગભેદ વિપ્રત્યય-સંદેહનુ કારણભૂત વિદ્વાનોની દૃષ્ટીમા થઈ શકતુ નથી ॥૩૩॥

ગૌતમ સ્વામીના ઉત્તરને સાભળીને કેશીશ્રમણે કહ્યુ તેને કહે છે--"સાહુ" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--ગોયમ-ગૌતમ હે ગૌતમ ! તે-તે આપની પણ્ણા-પ્રજ્ઞા બુદ્ધિ

लिङ्गविषयः सन्देहः छिन्नः=अपगत.। अथाऽन्योऽपि मम संशयोऽस्ति। हे महाभाग गौतम ! त मे कथय=तस्य संशयस्य उत्तर मह्य देहि ॥३४॥

अथान्यदपि वस्तुतत्त्व स्वय जानन्नपि केशिमुनिः शिष्यसंशयापनोदनाय गौतम यथा पृष्टवाँस्तथोच्यते—

मूलम्—अणेगाण सहस्साणं, मॅज्झे चिट्ठसि गोयमा ! ।
ते य ते अभिगच्छंति, कहं ते निज्जिया तुमे ॥३५॥

छाया—अनेकेषा सहस्राणा, मध्ये तिष्ठसि गौतम ! ।
ते च त्वामभिगच्छन्ति, कथ ते निर्जितास्त्वया ।३५॥

टीका—'अणेगाण' इत्यादि ।

हे गौतम ! त्वम् अनेकेषाम्=बहूना सहस्राणाम्—बहुसहस्रसख्यकाना भक्रमात् शत्रूणाम्=मध्ये तिष्ठसि। ते बहुसहस्रसख्यका शत्रवश्च त्वाम् अभिगच्छति=

प्रज्ञा) बुद्धि (साहु साधु) बहुत अच्छी है जो (मे-मे) मेरा (इमो-ससओ छिण्णो-अय सशय छिन्न.) यह लिङ्गविषक सशय आपने दूर कर दिया है। (मज्झ अन्नो वि ससओ–मम अन्योऽपि सशय') मुझे कुछ और भी सदेह है सो (गोयमा–गौतम) हे गौतम! आप (त कहसु त कथय) उसको भी कहिये ॥३४॥

फिर वस्तु तत्त्वको स्वय जानते हुए भी केशी श्रमण शिष्यो के सशय को दूर करने के लिये गौतमस्वामी से पूछा सो कहते है—'अणेगाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(गोयम–गौतम) हे गौतम! आप (अणेगाणसहस्साण मज्झे चिट्ठसि–अनेकेषा सहस्राणा मध्ये तिष्ठसि) अनेक हजारों शत्रुओं के बीच में ठहरे हुए हो (ते य ते अभिगच्छंति–ते च त्वा अभिगच्छति) वे सब शत्रु आप पर आक्रमण करते है। अत मै आप से यह पूछ रहा

साहु–साधु ઘણી જ ઉત્તમ છે આપે मे-मे મારા આ इमो ससओ छिण्णो-अय सशय' छिन्न લિંગ વિષયક સંશય દૂર કરી દીધો છે मज्झ अन्नो वि ससओ मम अन्योऽपि सशय' મારા મનમા એક બીજો પણ સદેહ છે તો गोयमा–गौतम હે ગૌતમ! આપ त कहसु–त कथय એનુ પણ નિવારણ કરો ॥૩૪॥

પછી વસ્તુ તત્વને પોતે જાણતા હોવા છતા પણ કેશી શ્રમણે શિષ્યોના સંશયને દૂર કરવા માટે ગૌતમ સ્વામીને પૂછ્યુ તેને કહે છે—"अणेगाण" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—गोयम–गौतम હે ગૌતમ! अणेगाणसहस्साण–मज्झे चिट्ठसि –अनेकेषा सहस्राणा मध्ये तिष्ठसि અનેક હજારો શત્રુઓની વચમા રહેલા છો ते य ते अभिगच्छन्ति–ते च त्वा अभिगच्छति સઘળા શત્રુ આપના ઉપર આક્રમણ

त्वाभिमुख धावन्ति। त्वा पराभवितुमिच्छया। हे महाभाग! ते शत्रवस्त्वया कथ निर्जिताः? अथ भाव.–हे गौतम! तव केवलज्ञानानुत्पादात् कषायादयोऽनेकसहस्रसख्यकाः शत्रवस्त्वा जेतु त्वदभिमुख धावन्ति। ते दुर्जयाः शत्रवस्त्वया पराजिता। दृश्यते च तत्पराजयफल तव प्रशमादिकम्। अतो हे गौतम! त्वा पृच्छामि, एते शत्रवस्त्वया कथ निर्जिताः? इति। तृतीयचरणे यद्द्वितीय 'ते' इति पद, तत्र द्वितीयार्थे षष्ठी बोध्या ॥३५॥

गौतम' प्राह–

मूलम्–एगे जिए जिया पच्च, पच्च जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ता ण, सव्वसत्तू जिणामिह ॥३६॥

छाया–एकस्मिन् जिते जिता पञ्च, पञ्चसु जितेषु जिता दश।
दशधा तु जित्वा खलु, सर्वशत्रून् जयाम्यहम् ॥३६॥

टीका–'एगे जिए' इत्यादि।

एकस्मिन्=सकलभावशत्रुप्रधाने आत्मनि जिते सति पञ्चजिताः। इहात्मशब्देन

हू कि (तुमे–त्वया) आपने (ते–ते) उन सब को (कह निज्जिया–कथनिर्जिता) कैसे जीतलिया।

भावार्थ–केवलज्ञान उत्पन्न नहीं होने से अभीतक आन्तरिक शत्रु परास्त नहीं हो सके है, इसीलिये केशी श्रमण गौतम से यह पूछ रहा हैं कि इस अवस्था मे आप के ऊपर हजारो शत्रु आक्रमण करने के लिये खडे हैं फिर भी आप पराजय जन्य फल प्रशमादिक देखने मे जो आ रहे है उससे पता पडता है कि उन शत्रुओं पर आपने विजय पाली है–अत' आपने वे श० जिस प्रकार जीत लिये हैं यह मै आपसे जानना चाहता हू ॥३५॥

કરે છે આથી હુ આપને એ પૂછી રહ્યો છુ કે, तुमे–त्वया આપે ते–ते એ સઘળાને कह निज्जिया–कथ निर्जिताः કઇ રીતે જીતી લીધા

ભાવાર્થ–કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયેલ ન હોવાથી હજુ સુધી આતરિક શત્રુને પરાસ્ત કરી શકાયા નથી આ કારણે કેશી શ્રમણ ગૌતમને એ પૂછી રહ્યા છે કે, આ અવસ્થામા આપના ઉપર હજારો શત્રુઓ આક્રમણ કરવા માટે ઉભા છે છતા પણ આપનો એ લોકો પરાજય કરી શકયા નથી આથી એવુ જાણવામા આવે છે કે એ શત્રુઓ ઉપર આપે વિજય મેળવી લીધો છે આથી આપે એ શત્રુઓને કયા પ્રકારથી જીતી લીધા છે એ હુ આપની પાસેથી જાણવા માગુ છુ ॥૩૫॥

जीवो मनोगृह्यते । एक आत्मा, चत्वारः कषाया इत्येते पञ्चशत्रवो मया जिता इत्यर्थः। जीवस्य कषायरूपा' शत्रवो द्विशताधिकपञ्चसहस्रसंख्यका ५२०० सन्ति। भेदोपभेदसहिताः क्रोधाद्यश्चत्वारः कषायाः आत्मा चेति पञ्च जिता इतिभावः। तथा-पञ्चसु शत्रुषु जितेषु दश=दशसंख्यकाः शत्रवो जिताः। पूर्वोक्ताः पञ्च, पञ्चेन्द्रियाणि चेति दश शत्रवो मया जिता इत्यर्थः । तु=पुनः, दशधा=दशप्रकारान् शत्रून् जित्वा, अहं सर्वशत्रून्=पूर्वोक्तान् दशविधान् नोकषायांश्च, खलु= निश्चयेन जयामि ।

"अणेगाणसहस्साणं, मज्झे चिट्ठसि गोयमा !" इति केशिस्वामिकृत प्रश्नस्योत्तरप्रदानार्थं प्रवृत्तस्य गौतममहामुने 'दसहा उ जिणित्ताणं, सव्वसत्तू

प्रत्युत्तर मे गौतमस्वामी ने इस प्रकार कहा—'एगे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ— (एगे-एकस्मिन्) समस्त भाव शत्रुओं मे प्रधानभूत आत्मा के (जिए-जिते) जीत लेने पर (पंच जिए-पञ्च जिताः) मैंने एक आत्मा और चार कषाय ये पाच शत्रु जीत लिये है। जीव के कषाय रूप शत्रु पांचहजार दो सौ ५२०० है। भेद प्रभेद सहित क्रोधादिक चार कषायो को तथा एक आत्मा को इस प्रकार इन पाच को जीत लिया है (पंच जिए दस जिया-पञ्चसु जितेषु दश जिताः) तथा इन पाचो के जीत लेने पर दश शत्रु विजित हो जाते हैं-अर्थात पाच ये पूर्वोक्त तथा पाच इन्द्रिया ये दस शत्रु जीत लिये जाते है। (दसहा उ जिणित्ता सव्वसत्तू अहं जिणामि-दशधा तु जित्वा सर्व शत्रुन् अहं जितामि) इन दस शत्रुओ को जीत लेने पर ही म ने समस्त शत्रुओ को निश्चय से जीत लिया है।

પ્રત્યુત્તરમા ગૌતમસ્વામીએ આ પ્રકારે કહ્યુ-"एगे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—एगे-एकस्मिन् સઘળા ભાવ શત્રુઓમા પ્રધાનભૂત આત્માને जिये-जिते-જીતી લેવાથી पचजिए-पञ्चजिता મે એક આત્મા અને ચાર કષાય આમ પાચ શત્રુઓને જીતી લીધા છે જીવના કષાયરૂપ શત્રુ પાચહજારને બસો (૫૨૦૦ છે ભેદ પ્રભેદ સહિત ક્રોધાદિક ચાર કષાયોને તથા એક આત્માને આ પ્રમાણે પાચેને જીતી લીધેલ છે पचजिए दसजिया-पञ्चसु जितेसु दश जिता તથા આ પાચને જીતી લેવાથી દશ શત્રુ જીતાઇ જાય છે અથાત એ પુર્વોક્ત પાચ તથા પાચ ઈન્દ્રીયો આમ દશ શત્રુઓ જીતી લેવાય છે दसहा उ जिणित्ता सव्वसत्तू अहं जिणामि-दशधा तु जित्वा सर्वशत्रून् अहं जितामि દશ શત્રુઓને જીતીને મે એ સઘળા શત્રુઓને નિશ્ચયથી જીતી લીધા છે

जिणामिह' इति कथनं सर्वोपभेदसहिताः कषायादयो जिता इति तदाशय बोधनार्थम्। अन्यथा दशसङ्ख्यकशत्रुविजयेऽनेकसहस्रशत्रुविजयः कथं सम्पद्येत ?।

शत्रवोऽनेकानि सहस्राणि यथा सन्ति तथा प्रदर्श्यन्ते—

तत्र कषायाणां द्विशताधिकपञ्चसहस्राणि भेदाः सन्ति। क्रोध–मान–माया–लोभाश्चत्वारः कषायाः।

(१) एषां प्रत्येकमनन्तानुबन्ध्यादि भेदाच्चत्वारो भेदाः। तत्र चतुर्विधस्य क्रोधस्यैकसङ्ख्यकसमुच्चयजीवेन चतुर्विंशत्या दण्डकैश्च मिलितैः पञ्चविंशत्या

जब केशिश्रमण कुमार ने गौतम महामुनि से इससे पूर्व की गाथा में ऐसा पूछा था कि "अणेगाणसहस्साण मज्झे चिट्ठसि गोयमा" तब उनके इस प्रश्न का उत्तर जो गौतम स्वामी ने ऐसा दिया है कि 'दसहा उ विजित्ताण सव्वसत्तू जिणामिह" सो इस से उनका ऐसा आशय ज्ञात होता है कि उन्हों ने भेद प्रभेद सहित कषायों का जीतना ही प्रकट किया है। अन्यथा– जो ऐसा उनका अभिप्राय नहीं होता तो "दश शत्रुओं को मैने जीत लिया है" यह कथन उन का कैसे संगत माना जा सकता। शत्रु अनेक हजार जिस प्रकार से हैं वह प्रकारता इस प्रकार है—।

(१) मूल में क्रोध, मान, माया एवं लोभ ये चार कषाय हैं–इन क्रोधादिक चार कषायों का सामान्य जीव सहित चौवीस दण्डकों के साथ अर्थात् इन पचीस के साथ गुणा करने पर १००–१०० सौ सौ भेद हो जाते हैं। अर्थात् ये क्रोधादिक चार कषाय प्रत्येक अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान तथा सञ्ज्वलन के भेद से ४–४–४-४ रूप हैं–अनंतानुबंधी क्रोध,

જ્યારે કેશી શ્રમણ કુમારે ગૌતમ મહામુનીને આનાથી પહેલાની ગાથામા એ પ્રકારનુ પૂછેલ હતુ કે, "अणेगाए सहस्साण मज्झे चिट्ठसि गोयमा" ત્યારે એમના એ પ્રશ્નનો ઉત્તર જે ગૌતમસ્વામીએ એવો આપેલ છે કે, "दसहा उ विजित्ताण सव्वसत्तू जिणामिह" આનાથી એમનો એવો આશય જાણી શકાય છે કે, એમણે ભેદ પ્રભેદ સહિત કષાયે ને જીતવાનુ જ પ્રગટ કરેલ છે અન્યથા–જો એમનો એવો અભિપ્રાય ન થાત તો "દસ શત્રુઓને જીતી લેવાથી સઘળા શત્રુઓને મે જીતી લીધા છે" આ પ્રકારનુ કહેવુ તેમનુ કઈ રીતે સગત માની શકાય શત્રુ અનેક હજાર જેપ્રકારના છે તેની પ્રકારતા આ પ્રમાણે છે—

(૧) મૂળમા ક્રોધ, માન, માયાને લોભ આ ચાર કષાય છે આ ક્રોધાદિક ચાર કષાયોનુ સામાન્ય જીવ સહિત ચોવીસ દડકોની સાથે અર્થાત્ આ પચીસની સાથે ગુણાકાર કરવાથ ૧૦૦–૧૦૦ ભેદ થઈ જાય છે અર્થાત્ આ ક્રોધાદિક ચાર કષાય પ્રત્યેક અનતાનુબધી અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાન,તથા સજ્વલનના ભેદથી ૪–૪–૪–૪

गुणितेन शत भेदा भवन्ति। एवं मानादीनां त्रयाणामपि प्रत्येकं शत भेदा।। ततश्च कषायाणां चत्वारि शतानि ४०० भेदा भवन्ति।

(२) अन्य प्रकारेणापि क्रोधादीनां चतुर्णां कषायाणां प्रत्येकं चत्वारो भेदा भवन्ति। तद् यथा—आभोगनिर्वर्तितः १, अनाभोगनिर्वर्तितः २, उपशान्तः (अनुदयावस्थः) ३, अनुपशान्तः (उदयावलिकाप्रविष्टः) ४। आभोगनिर्वर्तितादि भेदाच्चतुर्विधस्य क्रोधस्य एकसामान्यकसमुच्चयजीवेन, चतुर्विंशत्या दण्डकैश्च मिलित्वा पञ्चविंशत्या गुणितेन शत भेदा भवन्ति। एवं मानादीनामपि शत शत भेदा भवन्ति। ततश्च कषायाणां चत्वारि शतानि ४०० भेदाः भवन्ति।

अप्रत्याख्यान क्रोध, प्रत्याख्यान क्रोध, सज्वलन क्रोध इस प्रकार ये चार क्रोध हो जाते हैं। इसी प्रकार मान, माया, लोभ भी ४-४ चार २ जानना चाहिये। इन ४-४ का पूर्वोक्त पचीस के साथ गुणा करने से १००, १००, १००, १०० इस प्रकार ४०० भेद क्रोधादिकों के हो जाते हैं।

(२) अन्य प्रकार से भी इन क्रोधादिक चार कषायों के प्रत्येक के चार चार भेद होते हैं—वे ये हैं—१ आभोगनिर्वर्तित, अनाभोगनिर्वर्तित, उपशान्त (अनुदयावस्थ) अनुपशांत (उदयावलिकाप्रविष्ट)। इन आभोगनिवर्तित्त आदि के भेद से चतुर्विध क्रोध का सामान्य जीव सहित चौवीस दण्डकों के साथ अर्थात् इन पचीस के साथ गुणा करने से इस क्रोध का सौ १०० भेद हो जाते हैं। इसी तरह मानादिक कषायों के भी सौ-सौ-१००-१०० भेद जानना चाहिये। इस तरह इस द्वितीय प्रकार से भी इन क्रोधादिकों के चार सौ ४०० भेद हो जाते हैं।

રૂપ છે અનન્તાનુબંધી ક્રોધ અપ્રત્યાખ્યાનક્રોધ, પ્રત્યાખ્યાનક્રોધ, સંજવલનક્રોધ આ પ્રકારે એ ચાર ક્રોધ થઈ જાય છે આજ પ્રમાણે માન, માયા, લોભ પણ ચાર ચાર જાણવા જોઈએ આ ચાર ચારનું પૂર્વોક્ત પચ્ચીસની સાથે ગુણવાથી ૧૦૦, ૧૦૦, ૧૦૦, ૧૦૦ આ પ્રકારના ૪૦૦, ચારસો ભેદ ક્રોધાદિકોના થઈ જાય છે

(૨) અન્ય પ્રકારથી પણ આ ક્રોધાદિક ચાર કષાયોના પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદ હોય છે—તે આ પ્રમાણે છે ૧ આભોગનિવર્તિત અનાભોગનિવર્તિત, ઉપશાંત, અનુપશાંત આ આભોગ નિવર્તિત આદિના ભેદથી ચતુર્વિધ ક્રોધના સામાન્ય જીવ સહિત ચોવીસ દંડકોની સાથે અર્થાત્ આ પચીસની સાથે ગુણાકાર કરવાથી આ ક્રોધના ૧૦૦, ભેદ થઈ જાય છે આજ પ્રકારે માનાદિક કષાયોના પણ સો-સો ૧૦૦, ૧૦૦, ભેદ જાણવા જોઈએ આવી રીતે આ બીજા પ્રકારથી પણ આ ક્રોધાદિકોના ચારસો ભેદ થઈ જાય છે

(३) पुनरन्यप्रकारेणापि कषायाणां चत्वारो भेदाः। तद् यथा-आत्मप्रतिष्ठित –(स्वनिमित्तम्) १, परप्रतिष्ठित –(परनिमित्तम्) २ तदुभयप्रतिष्ठित –(स्वपरनिमित्तम्) ३, अप्रतिष्ठित –(निरर्थकम्) ४। तत्रात्मप्रतिष्ठितादिभेदाच्चतुर्विधस्य क्रोधस्य पूर्वोक्तरीत्या पञ्चविंशत्यागुणितेन शत भेदा भवन्ति। एवमेव मानादीनां त्रयाणामपि। सर्वसंकलनया चत्वारिशतानि भेदा कषायाणां भवन्ति।

[४)' पुनरन्यप्रकारेण कषायाणां चत्वारो भेदाः तद् यथा क्षेत्रम्, वास्तु, शरीरम्, उपधिश्च। तत्र क्षेत्रादिभेदाच्चतुर्विधस्य क्रोधस्य पूर्ववत् शत भेदाः। एवं मानादीनामपि। सर्वसंकलनया चत्वारि शतानि 'भेदा' भवन्ति। इत्थं षोडश शतानि भेदा भवन्ति।

(५) कार्ये कारणोपचारात् कषायाणां षड्भेदा अन्येऽपि भवन्ति। तद्

(३) तीसरे प्रकार से भी क्रोधादिक कषायों के चार भेद इस तरह से होते है--(१) आत्मप्रतिष्ठित (स्वनिमित्त) २ परप्रतिष्ठित (पर निमित्त) तदुभय प्रतिष्ठित (स्वपर निमित्त) ४ अप्रतिष्ठित (निरर्थक) इन चार प्रकार के क्रोधका पूर्वोक्त पचीस के साथ गुणा करने से क्रोध सौ १०० प्रकार का हो जाता है। इसी तरह मानादिकों के भी भेद जानना चाहिये।

(४) चौथा प्रकार यह है–क्षेत्र, वास्तु, शरीर, उपधि। क्षेत्रादिक के भेद से चार प्रकार के क्रोध का पूर्वोक्त पचीस के साथ गुणा करने पर क्रोध के सौ १०० भेद जानने चाहिये। इसी तरह मानादिक कषायों के भी। इस प्रकार इस चारों प्रकारों के चारसौ चारसौ ४००–४०० भेदों को जोड देने पर कषायों के सोलसौ १६०० भेद हो जाते है।

(५) कार्य में कारण के उपचार से कषायों के छह भेद और भी

(૩) ત્રીજા પ્રકારથી પણ ક્રોધાદિક કષાયોના ચાર ભેદ આ રીતે થાય છે— ૧ આત્મપ્રતિષ્ઠિત ૨ પરપ્રતિષ્ઠિત ૩ તદુભયપ્રતિષ્ઠિત, ૪ અપ્રતિષ્ઠિત, આ ચાર પ્રકારના ક્રોધનો પુર્વોકત પચીસની સાથે ગુણાકાર કરવાથી ક્રોધ ૧૦૦ પ્રકારના થઈ જાય છે આજ પ્રમાણે માનાદિકોના ભેદોને પણ જાણવા જોઇએ

(૪) ચોથો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, શરીર, ઉપધિ ક્ષેત્રાદિકના ભેદથી ચાર પ્રકારના ક્રોધના આગલા પચીસની સાથે ગુણાકાર કરવાથી ક્રોધના સો ભેદ જાણવા જોઇએ આવી રીતે માનાદિક કષાયોને પણ જાણવા જોઈએ આ પ્રમાણે એ ચારે પ્રકારના ચારસો ભેદોને જોડી દેવાથી કષાયોના ૧૬૦૦ સોળસો ભેદ થઇ જાય છે

(૫) કાર્યમા કારણના ઉપચારથી કષાયોના બીજા પણ છ ભેદ થાય છે તે

(३) घ्राणेन्द्रियस्य विषयो द्विविधः, सुरभिगन्धो दुरभिगन्धश्चेति। तयोः सचित्तादिभेदेन प्रत्येकं त्रैविध्ये षट्संख्यका विकाराः, तेषां रागद्वेषभेदाद् द्वैविध्ये द्वादशसंख्यका घ्राणेन्द्रियस्य विकारा भवन्ति।

(४) रसनेन्द्रियस्य विषयः पञ्चविधतिक्तादिरसरूपः। पञ्चानां सचित्तादिभेदेन प्रत्येकं त्रैविध्ये पञ्चदश १५ संख्यका विकारा भवन्ति। तेषां पुनः शुभाशुभभेदेन द्वैविध्ये त्रिंशद् भेदाः पुनस्तेषां त्रिंशत्संख्यकानां रागद्वेषभेदाद् द्वैविध्ये ६० षष्टि भेदा भवन्ति।

(५) स्पर्शनेन्द्रियस्य विषयोऽष्टविधः कर्कशादिस्पर्शरूपः। तेषामष्टानां प्रत्येकं सचित्तादिभेदेन त्रैविध्ये चतुर्विंशतिसंख्यका विकाराः, पुनस्तेषां शुभा

घ्राणेन्द्रिय का सुगंध और दुर्गंध के भेद से दो प्रकार का विषय है। तथा इनका विकार बारह १२ प्रकार का है। सुगंध और दुर्गंध रूप विषय सचित्त, अचित्त एवं मिश्र के भेद से छह ६ प्रकारका है। तथा ये छहों ही प्रकार राग और द्वेष के भेद से बारह १२ प्रकार के हो जाते हैं।३।

रसना इन्द्रिय का विषय रस है। यह पाच प्रकार का है। तीखा कडुआ आदि। ये इसके भेद हैं। विकार साठ ६० हैं। ये पाचों ही विषय सचित्त, अचित्त एवं मिश्र के भेद से पन्द्रह १५ भेदवाले हो जाते हैं। तथा शुभ और अशुभ इन तीस भेदों को राग और द्वेष से गुणित करने पर रसनेन्द्रिय के विकार साठ ६० होते हैं।४।

स्पर्शन इन्द्रिय का विषय आठ प्रकार का स्पर्श है। इस शीत आदि

સાથે ગુણવાથી ત્રીસ ભેદ બીજા પણ થઈ જાય છે આ ત્રીસ ભેદોને પણ રાગ અને દ્વેષથી ગુણવાથી ચક્ષુઇન્દ્રિના વિકારના સાઠ ભેદ નિષ્પન્ન થઈ જાય છે ॥૨॥

ઘ્રાણેન્દ્રિયના સુગંધ-અને દુર્ગંધ એ બે પ્રકારનો વિષય છે તથા એનો વિકાર બાર ૧૨ પ્રકારનો છે સુગંધ અને દુર્ગંધ રૂપ વિષય સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્રના ભેદથી છ પ્રકારનો છે તથા એ છ એ પ્રકાર રાગ અને દ્વેષના ભેદથી બાર ૧૨ પ્રકારના થઈ જાય છે ॥૩॥

રસના ઇન્દ્રિયનો વિષય રસ છે એ પાચ પ્રકારનો છે તીખા, કડવા આદિ એ એના ભેદ છે વિકાર ૬૦ સાઠ છે આ પાચેય વિષય સચિત્ત, અચિત્ત, અને મિશ્રના ભેદથી પંદર ૧૫ ભેદ વાળા થઈ જાય છે તથા શુભ અને અશુભના ભેદથી એ પંદર ૧૫ પ્રકાર ત્રીસ ૩૦ ભેદવાળા થઈ જાય છે અને આ ત્રીસ ભેદોને રાગ અને દ્વેષની સાથે ગુણવાથી રસનેન્દ્રિયના વિકાર ૬૦ સાઠ થઈ જાય છે. ॥૪॥

સ્પર્શન ઇન્દ્રિયનો વિષય આઠ પ્રકારનો સ્પર્શ છે એ ઠંડી, આદિ આઠ

शुभभेदेन द्वैविध्येऽष्टचत्वारिंशद्भेदा भवन्ति। पुनरष्टचत्वारिंशत्सङ्ख्यकाना राग द्वेषभेदाद् द्वैविध्ये षण्णवति ९६ सङ्ख्यका विकारा भवन्ति।

सङ्कलनया सर्वे विकाराश्चत्वारिंशदधिकद्विशतसङ्ख्यका २४० भवन्ति।

ततश्चेन्द्रियाणि पञ्च, तेषा विषयास्त्रयोविंशतिः, विकाराश्चत्वारिंशदधिके द्वे शते, इति मिलित्वाऽष्टषष्ट्यधिके द्वे शते २६८ रिपवः सन्ति। तत्रापि सर्वप्रधानशत्रुणा मनसा सह योजिता एकोनसप्तत्यधिकानि चतुःपञ्चाशत् शतानि ५४६९ शत्रवो भवन्ति। तथा—भेदसहिता नोकषायाः सप्तविंशतिसङ्ख्यका भवन्ति।

आठ स्पर्शों के सचित्त आदि भेद से चोईस २४ तथा इन चोईस २४ को शुभ और अशुभ से गुणा करने पर अडतालीस ४८। तथा इन अडतालीस ४८ को राग और द्वेप से गुणित करने पर इस स्पर्शन इन्द्रिय के विकार छियानवे ९६ होते है।५।

इस तरह पाच इन्द्रियो के सब विकार दोसौ चालीस २४० हो जाते हैं। इन्द्रिया के विषय तेईस २३ और विकार ये दो सौ चालीस २४० तथा इन्द्रियों के भेद पाच ५, इन सबको परस्पर जोड देने से दो सौ अडसठ २६८ भेद शत्रुओ के हो जाते है। इनमे सर्व प्रधान शत्रु मन को भी जोड लेना चाहिये, सब भेद परस्पर जोडने पर पांच हजार चारसो उनहत्तर ५४६९ भेद शत्रुओं के होते हैं। तथा हास्यादिक छह (हास्य, रती, अरती, शोक, भय, जुगुप्सा) के प्रत्येक के चार चार भेद होने से इन सब के चोईस २४ भेद हो जाते हैं। इनमें तीन वेद स्त्री वेद पु वेद तथा नपुसक वेद मिलाने से नो कषायो के ये सत्ताईस २७ भेद होते हैं। इन सत्ताईस को पिछले भेदों मे मिलाने से पांच हजार चार

સ્પર્શોના સચિત્ત આદિ ભેદથી ચોવીસ ૨૪ તથા એ ચોવીસને શુભ અને અશુભથી ગુણવાથી અડતાલીસ ૪૮ તથા અડતાલીસને રાગ અને દ્વેષની સાથે ગુણવાથી આ સ્પર્શન ઈન્દ્રિયના વિકાર છન્નુ ૯૬ થઈ જાય છે ॥૫॥

આ પ્રકારથી પાચ ઇન્દ્રિઓના સઘળા વિકાર બસોને ચાલીસ થઇ જાય છે પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય તેવીસ ૨૩ અને તેના વિકાર ૨૪૦ થયા ઈન્દ્રિયોના ભેદ પાચ ૫ આ સઘળાને પરસ્પરમા જોડી દેવાથી બસોને અડસઠ ૨૬૮ ભેદ શત્રુઓના થઇ જાય છે આમા સહુથી મોટા શત્રુ મનને પણ જોડી દેવુ જોઈએ સઘળા ભેદ પરસ્પર જોડવાથી પાચ હજાર ચારસો ઓગણોતેર ૫૪૬૯ ભેદ શત્રુઓના થઇ જાય છે તથા હાસ્યાદિક છ ના પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદ હોવાથી આ સઘળાના ચોવીસ ભેદ થઇ જાય છે એમા ત્રણ વેદ સ્ત્રી વેદ, પુ વેદ તથા નપુસક વેદ મેળવવાથી નોકષાયોના સત્તાવીસ ભેદ થાય છે આ સત્તાવીસને પાછલા ભેદોમા મેળવવાથી પાચ હજાર

तत्र हास्यादीनां षण्णां प्रत्येकं चातुर्विध्ये चतुर्विंशतिः, स्त्रीपुनपुंसकवेदैः सह सप्तविंशतिभेदा नो कषायाणां भवन्ति।

इत्थं षण्णवत्यधिकानि चतुः पञ्चाशत् शतानि शत्रवो भवन्ति। अन्येऽपि मिथ्यात्वादयः शत्रवः सर्वशत्रुशब्देन ग्राह्याः।

यत्तु-"यद्यपि चतुर्णां कषायाणामवान्तरभेदेन षोडश संख्या भवन्ति। नोकषाणां नवानां मीलनात् पञ्चविंशतिर्भेदा भवन्ति, तथापि सहस्रसंख्या न भवति, परन्तु तेषां दुर्जयत्वात् सहस्रसंख्या प्रोक्ता" इति टीकान्तरे व्याख्यातम्, तत् प्रामादिकं पूर्वोक्तरीत्याऽनेकसहस्रसंख्यकशत्रु सद्भावात् ॥३६॥

अथ केशीमुनिः प्राह—

मूलम्—सत्तू यं इइ के वुत्ते, ? केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंत तुं, गोयमो इणमब्बवी ॥३७॥

सौ छियानवे (५४९६) भेद शत्रुओं के होते हैं। तथा सूत्रस्थ शत्रु शब्द से अन्य भी शत्रुस्वरूप जो मिथ्यात्व आदि हैं वे भी गृहीत कर लेना चाहिये।

किसी टीका मे यहां ऐसी व्याख्या की गई है कि-"यद्यपि चार कषायों के अवान्तर भेदों की अपेक्षा सोलह भेद होते हैं तथा-नव नो कषायो के समिलन से पचीस २५ भेद होते हैं। फिर भी सहस्र भेद तो होते नही है, अत. " अणेगाणसहस्साण मज्झे चिट्ठसि-गोयमा" ऐसा जो कहा गया है उसका निर्वाह इसरूप से कर लेना चाहिये-कि -ये कषाय दुर्जय हैं। दुर्जय होने से इनकी सहस्रसख्या कही गई है।" यह टीकाकार का कहना असगत है, क्यो कि पूर्वोक्त प्रकार से अनेक सहस्र सख्या शत्रुओं की हो जाती है। वह सख्या उपर बता चुके हैं ॥३६॥

ચારસો છન્નુ ૫૪૯૬ ભેદ શત્રુઓના થાય છે તથા સૂત્રસ્થ સર્વશત્રુ શબ્દ। બીજા પણ શત્રુ સ્વરૂપ જે મિથ્યાત્વ આદિ છે એને પણ ગ્રહણ કરી લેવાં જોઈએ

કોઇ ટીકામા અહી એવી વ્યાખ્યા કરવામા આવી છે કે " જોકે ચાર કષાયોના અવાન્તર ભેદોની અપેક્ષા સોળ ભેદ થાય છે તથા નવ નોકષાયોના સમિલનથી ૨૫ પચીસ ભેદ થાય છે પછી તો સહસ્ર ભેદ તો થતા નથી. એટલે આથી "अणेगाण सहस्साण मज्झे चिट्ठसि गोयमा" એવુ જે કહેવામા આવેલ છે તેનો નિર્વાહ આ રીતથી કરી લેવો જોઈએ કે, એ કષાય દુર્જય છે દુર્જય હોવાથી તેની સહસ્ર સખ્યા કહેવામા આવે છે ટીકાકારનુ આ કહેવુ અસગત છે કેમકે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી અનેક સહસ્ર સખ્યા શત્રુઓની થઇ જાય છે એ સખ્યા ઉપર બતાવવામા આવેલ છે ॥૩૬॥

छाया—शत्रुश्चेति क उक्तः ?, केशी गौतममब्रवीत्।
तत: केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥३७॥

टीका—'सत्तू य' इत्यादि।

गाथेयं सुगमा। नवरम्–शत्रुश्चेति–शत्रुरिवशत्रुः आत्मापकारित्वात्, इति च पूर्वं प्रोक्तः–शत्रुत्वेनाभिहितः स क उक्त इति। किं केशीश्रमणः शत्रून् न जानाति येन 'सत्तू य इइ के वुत्ते' इति पृच्छति,–यदि शत्रूनपि न जानीयात्तर्हि "अणेगाणसहस्साण मज्झे चिट्ठसि गोयमा !" इत्यादिकं कथमनेन प्रागुक्तम् ? उच्यते–भवजनविशेषप्रतिबोधार्थं सर्वा अपि प्रपृच्छा एवैताः, उक्तमेव पूर्वं यत् 'ज्ञानत्रयान्वितोऽसौ' इति, कथं ज्ञानत्रयवतोऽस्यैवंविधवस्तुपरिज्ञानसंभवः इति। शेषं स्पष्टम् ॥३७॥

केशी श्रमण पूछते है—'सत्तू य इइ के वुत्ते' इत्यादि।

आत्मा का अपकारी होने से शत्रु अर्थात् जो पहिले शत्रुशब्द से कहा गया है वह शत्रु कौन है।

यहा यह शंका होती है कि क्या केशी श्रमण शत्रु को नहीं जानते थे। यदि नहीं जानते तो पहले जो "अणेगाणसहस्साण" इत्यादि कहा–है कि 'अनेक हजारों शत्रुओं के बीच में आप रहते हो' सो यह कहना कैसे संगत होवे, अर्थात् केशी श्रमण शत्रु को जानते तो थे ही किंतु जानते हुए जो फिर प्रश्न किया है वह अल्पज्ञशिष्यों को विशेष रूपसे समझाने के लिये किया है, केशी श्रमण तिन ज्ञान के धारी थे यह पहेले कह चुके है और तीन ज्ञान के धारी को इस शंका का होना ही असंभव है ॥३७॥

કેશી શ્રવણ પૂછે છે—"सत्तू य इइ के वुत्ते" ઇત્યાદિ!

આત્માના અપકારી હોવાથી શત્રુના સમાન શત્રુ અર્થાત્ જે પહેલાં શત્રુ શબ્દથી કહેવામાં આવેલ છે એ શત્રુ કોણ છે?

અહીં એ શંકા થાય છે કે શું કેશી શ્રમણ શત્રુઓને જાણતા ન હતા તો પહેલાં જે "अणेगाणसहस्साण" ઇત્યાદિ કહેલ છે કે, અનેક હજારો શત્રુઓની વચમાં આપ રહો છો' તો તેમનું આ પ્રકારનું કહેવું કઈ રીતે સુસંગત બની શકે અર્થાત્ કેશી શ્રમણ શત્રુઓને જાણતા તો હતા જ પરંતુ જાણવા છતાં પણ જે પ્રશ્ન તેમણે કરેલ છે તે અલ્પજ્ઞ શિષ્યોને વિશેષ રૂપથી સમજાવવા માટે જ કરેલ છે કેશી શ્રમણ ત્રણ જ્ઞાનના ધારક હતા એ પહેલાં કહેવાઈ ગયેલ છે અને ત્રણ જ્ઞાનના ધારકને આવી શંકા ઉત્પન્ન થવી જ અસંભવિત છે ॥૩૭॥

गौतमो यदुक्तवाँस्तदुच्यते—

मूलम्—एगप्पा अजिए सत्तू, कसाया इंदियाणि य।
तें जिणित्तुं जहांणाय, विहरामि अहं मुणी ॥३८॥

छाया—एक आत्मा अजितः शत्रुः, कषाया इन्द्रियाणि च।
तान् जित्वा यथा न्यायं, विहरामि अहं मुने! ॥३८॥

टीका - 'एगप्पा' इत्यादि।

हे मुने! एकः आत्मा-अतति=गच्छति ताँस्तान् भावानिति आत्मा-जीवः-आत्मचित्तयोरभेदोपचाराच्चित्तं वा अजितः=अवशीतः सन् शत्रुः=अनेकानर्थावाप्तिहेतुत्वात् शत्रुरिव भवति। तथा-कषायाः-क्रोध-मान-माया-लोभाः अजिताः सन्तः शत्रवो भवन्ति। इन्द्रियाणि=श्रोत्रादीनि पञ्चेन्द्रियाणि अजितानि शत्रवो भवन्ति। चकारस्योपलक्षणत्वात्-नव नोकषायाः कषाया-द्युत्तरोत्तरभेदाश्चाऽपि अजिताः शत्रवो भवन्ति। तेषु शत्रुषु आत्मादि पञ्चेन्द्रियान्ता जिताश्चेत् नोकषाया अपि सर्वे शत्रवो जिता भवन्ति। अथोपसंहारमिषेण तेषां जये फलमाह-'ते जिणित्तु' इत्यादि, तान् उक्तरूपान् शत्रून् जित्वा अहं यथान्यायं=भगवदाज्ञाऽनुसारेण, विहरामि=तन्मध्ये स्थितोऽप्यप्रतिबद्धविहारितया विचरामि। 'एग' इति आर्षत्वात् लुप्तविभक्तिको निर्दिष्टः ॥३८॥

गौतमस्वामी ने जो कहा सो कहते हैं—'एगप्पा' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(एगप्पा अजिए सत्तू-एकः अजितः आत्मा शत्रु) एक अजित-नहीं जीता गया आत्मा अथवा चित्त ही शत्रु है तथा (कसाया इंदियाणि य-कषाया इन्द्रियाणि च) क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषाय शत्रु हैं। अजित इन्द्रियाँ शत्रु है। नव नो कषाय आदि शत्रु है। इन मे से आत्मा और इन्द्रिय रूप शत्रु जीत लेने पर नव नो कषाय शत्रु जीत लीये जाते है। (ते जिणित्तु जहाणाय, विहरामि अहं मुणी-तान् जित्वा यथान्यायं मुने अहं विहरामि) इन सब शत्रुओं को जीत कर हे मुने!

ગૌતમ સ્વામીએ જે કહ્યુ તેને કહે છે—"एगप्पा" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—एगप्पा अजिए सत्तू-एकः अजितः आत्मा शत्रुः એક અજીત ન જીતાયેલ આત્મા અથવા ચિત્ત જ શત્રુ છે તથા कसाया इंदियाणि य-कषाया इन्द्रियाणि च ક્રોધ, માન, માયા, લોભ આ ચાર કષાય શત્રુ છે અજીત ઇન્દ્રિયો શત્રુ છે નવ નોકષાય આદિ શત્રુ છે આમાંથી આત્મા કષાય ઇન્દ્રિયરૂપ શત્રુઓને જીતી લેવાથી નવ નોકષાય આદિ શત્રુ જીતી લેવાય છે ते जिणित्तु जहाणाय विहरामि अहं मुणी—तान् जित्वा यथान्यायं अहं मुने विहरामि આ સઘળા શત્રુઓને જીતીને

एवं गौतमस्य वचनं श्रुत्वा केशी प्राह—

मूलम्—साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ॥३९॥

छाया—साधुर्गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम्।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥३९॥

टीका—'साहु' इत्यादि।

इयं गाथा व्याख्यातपूर्वा ॥३९॥

केशी यत्प्रोक्तवाँस्तदुच्यते—

मूलम्—दीसंति बहवे लोए, पासबद्धा सरीरिणो।
मुक्कपासो लहुब्भूओ, कहं तं विहरसी मुणे ॥४०॥

छाया—दृश्यन्ते बहवो लोके, पाशबद्धाः शरीरिणः।
मुक्तपाशो लघुभूतः, कथं त्वं विहरसि मुने ! ॥४०॥

टीका—'दीसंति' इत्यादि।

हे मुने ! हे महाभाग गौतम ! लोके बहवः=अनेके शरीरिणः=प्राणिन

मैं भगवान् की आज्ञानुसार अप्रतिबद्ध विहारी बनकर विचरता हूं ॥३८॥

केशीश्रमण कहते हैं 'साहु' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(गोयम-गौतम) हे गौतम ! (ते पण्णा साहु-ते प्रज्ञा साधु) आपकी बुद्धि अच्छी है क्यों कि आपने (मे इमो संसओ छिन्नो-मे अयम् संशयः छिन्नः) मेरे संशय को मिटा दिया है। (अन्नो वि संसओ मज्झ अन्योऽपि संशयो मम) और भी मेरा संशय है (तं मे कहय गोयमा-तं मे कथय गौतम) सो आप दूर कीजिये ॥३९॥

केशी श्रमण ने जो कहा सो कहते हैं—'दीसंति' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(मुणे-मुने) हे मुने ! (लोए बहवे पासबद्धा सरीरिणो दिसंति-

---

હે મુનિ ! હું ભગવાનની આજ્ઞા અનુસાર અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બનીને વિચરૂં છું ॥૩૮॥

કેશી શ્રમણ કહે છે—"साहु" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—गोयम-गौतम હે ગૌતમ ! ते पण्णा साहु-ते प्रज्ञा साधु આપની બુદ્ધિ સારી છે કારણ કે આપે मे इमो संसओ छिन्नो-मे अयम् संशय छिन्न મારા સંશયને મિટાવી દીધા છે अन्नोवि संसओ मज्झ-अन्योऽपि संशयो मम વળી મને બીજો પણ સંશય છે तं मे कहय गोयमा-तं मे कथय गौतम તેને આપ દૂર કરો ॥૩૯॥

કેશી શ્રમણે જે કહ્યું તેને કહે છે-"दीसंति" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—मुणे-मुने હે મુનિ ! लोए बहवे पासबद्धा सरीरिणो दिसंति

पाशबद्धा =पाशै =बन्धनै बद्धाः=नियन्त्रिता दृश्यन्ते । एतादृशेऽस्मिन् लोके हे गौतम ! त्वं मुक्तपाशः=बन्धनरहितः, अत एव लघुभूत –लघु'=वायु', स इव सर्वत्राप्रतिबद्धगतित्वात्, वायुवदित्यर्थः, कथं विहरसि ? ॥४०॥

इत्थं केशिनोक्ते गौतमः प्राह—

मूलम्—ते पासे सव्वसो छित्ता, निहंतूण उवायओ ।
मुक्कपासो लहुब्भूओ, विहरामि अहं मुणी ! ॥४१॥

छाया—तान् पाशान् सर्वान् छित्वा, निहत्य उपायतः ।
मुक्तपाशो लघुभूतो, विहरामि अहं मुने ॥४१॥

टीका– 'ते पासे' इत्यादि ।

हे मुने !=हे भदन्त ! अहं तान्=लोकबन्धकान् सर्वान् पाशान् छित्वा, पुनस्तान् पाशान् उपायत =नि सङ्गत्वाद्यभ्यासरूपोपायात् निहत्य=पुनर्बन्धाभावेन विनाश्य मुक्तपाश.=पाशरहितः, अत एव–लघुभूत'=वायुरिवाप्रतिबद्धगतिः सन्

लोके बहवो पाशबद्धा शरीरिण दृश्यन्ते) इस संसार में अनेक प्राणीजन कि पाशोसे–बंधनो से नियन्त्रित (बंधे हुए) दिखलाई पडते हैं तब आप (मुक्कपासो–मुक्तपाश)बंधन रहित हो कर (लहुब्भूओ लघुभूतः) वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी बन कर (कह विहरसि–कथं विहरसि) कैसे विहार करते हो। ४०॥

गौतमस्वामी कहते हैं—'ते पासे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(मुणी–मुने) हे महामुने। (अहं–अहम्) मै (ते–तान्) उन लोक बंधक (सव्वसो पासे–सर्वान् पाशान्) समस्त पाशों को (छित्ता–छित्वा) त्याग करके तथा (उवायओ–उपायत') नि संगत्वादिक के अभ्यास रूप उपाय से (निहंतूण–निहत्य) पुन' उनका बंध न हो सके इस रूप से उनको तोडकर (मुक्कपासो–मुक्तपाश.) पाशरहित हो गया

–लोके बहव पाशबद्धा शरीरिणः दृश्यन्ते આ સંસારમા અનેક પ્રાણી જ્યારે પાશોના બંધનથી નિયંત્રિત દેખાય છે ત્યારે આપ मुक्कपासो–मुक्तपाश બંધન રહિત બનીને लहुब्भूओ–लघुभूत વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બનીને कह विहरसि–कथ विहरसि કઇ રીતે વિહાર કરો છો ॥૪૦॥

ગૌતમ સ્વામી કહે છે—"ते पासे" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--मुणी–मुने હે મહામુનિ ! હુ ते–तान् આ લોકને બંધન કારક એવા सव्वसो पासे–सर्वान् पाशान् સઘળા બંધનોને छित्ता–छित्वा કાપીને તથા उवायओ–उपायत નિસંગનાદિકના અભ્યાસરૂપ ઉપાયથી ફરીથી निहंतूण–निहत्य તેના બંધનમા ન જકડાઇ જાઉં એ રીતે તેને તોડીને मुक्कपासो–मुक्तपाश'

अस्मिन् लोके विहरामि=विचरामि। 'सव्वसो' इत्यत्रार्षत्वाद् द्वितीयार्थे 'शस्' प्रत्ययो बोध्यः ॥४१॥

तत —

मूलम्--पासा यं इंड के वुत्ता ?, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसि बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी ॥४२॥

छाया--पाशाश्च इति के उक्ता, ?, केशी गौतममब्रवीत्।
ततः केशिन ब्रुवन्त तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥४२॥

टीका--'पासा य' इत्यादि।

इय गाथा व्याख्यातप्राया ॥४२॥

तत'---

मूलम्--रागद्दोसाइओ तिव्वा, नेह पासा भयंकरा।
ते छिदित्तु जहानाय, विहरामि जहक्कम ॥४३॥

छाया--रागद्वेषादयस्तीव्राः, स्नेहपाशा भयङ्कराः।
तान छित्त्वा अथान्याय, विहरामि यथाक्रमम्

टीका--'रागद्दोसाइओ' इत्यादि।

हे भदन्त! रागद्वेषादयः=रागद्वेषमोहप्रभृतय., तथा-तीव्राः=अतिगाढा

हू। इस लिये (लहुब्भूओ-लघुभूतः) वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी होकर (विहरामि-विहरामि) इस लोक मे विचरता हू ॥४१॥

'पासाय' इत्यादि।

'वे पाश क्या है'' इस प्रकार केशी श्रमण के पूछने पर गौतम स्वामी ने उनको ऐसा कहा-॥४२॥

'रागद्दोसाइओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे भदन्त! (रागद्दोसाइओ-रागद्वेषादिक) रागद्वेष

બ ધન રહિત બની ગયેલ છુ આ કારણે लहुब्भूओ-लघुभूत વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધવિહારી બનીને विहरामि-विहरामि આ લોકમા વિચરૂ છુ ॥૪૧॥

"पासाय" ઇત્યાદિ।

"તે બ ધન કયુ છે" આ પ્રમાણે કેશી શ્રમણના પૂછવાથી ગૌતમ સ્વામીએ તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ ॥૪૨॥

"रागद्दोसाइओ" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--હે ભદન્ત! रागद्दोसाइओ-रागद्वेषादयः રાગ દ્વેષ આદિ તથા

पाशबद्धाः=पाशैः=बन्धनैः बद्धाः=नियन्त्रिताः दृश्यन्ते । एतादृशेऽस्मिन् लोके हे गौतम ! त्वं मुक्तपाशः=बन्धनरहितः, अत एव लघुभूतः-लघुः=वायुः, स इव सर्वत्राप्रतिबद्धगतित्वात्, वायुवदित्यर्थः, कथं विहरसि ? ॥४०॥

इत्थं केशिनोक्ते गौतमः प्राह—

मूलम्—ते पासे सव्वसो छित्ता, निहंतूण उवायओ ।
मुक्कपासो लहुब्भूओ, विहरामि अहं मुणी ! ॥४१॥

छाया—तान् पाशान् सर्वान् छित्त्वा, निहत्य उपायतः ।
मुक्तपाशो लघुभूतो, विहरामि अहं मुने ॥४१॥

टीका— 'ते पासे' इत्यादि ।

हे मुने !=हे भदन्त ! अहं तान्=लोकबन्धकान सर्वान् पाशान् छित्त्वा, पुनस्तान् पाशान् उपायतः=निःसङ्गत्वाद्यभ्यासरूपोपायात् निहत्य=पुनर्बन्धाभावेन विनाश्य मुक्तपाशः=पाशरहितः, अत एव-लघुभूतः=वायुरिवाप्रतिबद्धगतिः सन्

लोके बहवो पाशबद्धा शरीरिणः दृश्यन्ते) इस संसार में अनेक प्राणीजब कि पाशोंसे-बंधनों से नियन्त्रित (बंधे हुए) दिखलाई पडते हैं तब आप (मुक्कपासो-मुक्तपाशः) बंधन रहित हो कर (लहुब्भूओ लघुभूतः) वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी बन कर (कहं विहरसि-कथं विहरसि) कैसे विहार करते हो । ४०॥

गौतमस्वामी कहते हैं—'ते पासे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(मुणी-मुने) हे महामुने । (अहं-अहम्) मैं (ते-तान्) उन लोक बंधक (सव्वसो पासे-सर्वान् पाशान्) समस्त पाशों को (छित्ता-छित्त्वा) त्याग करके तथा (उवायओ-उपायतः) निःसंगत्वादिक के अभ्यास रूप उपाय से (निहंतूण-निहत्य) पुनः उनका बंध न हो सके इस रूप से उनको तोडकर (मुक्कपासो-मुक्तपाशः) पाशरहित हो गया

-लोके बहवः पाशबद्धा शरीरिणः दृश्यन्ते આ સંસારમાં અનેક પ્રાણી જ્યારે પાશોના બંધનથી નિયંત્રિત દેખાય છે ત્યારે આપ मुक्कपासो-मुक्तपाश બંધન રહિત બનીને लहुब्भूओ-लघुभूत. વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધ વિહારી બનીને कहं विहरसि-कथं विहरसि કઈ રીતે વિહાર કરો છો ॥૪૦॥

ગૌતમ સ્વામી કહે છે—"ते पासे" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--मुणी-मुने હે મહામુનિ ! હું ते-तान् આ લોકને બંધન કારક એવા सव्वसो पासे-सर्वान् पाशान् સઘળા બંધનોને छित्ता-छित्वा કાપીને તથા उवायओ-उपायत નિઃસંગતાદિકના અભ્યાસરૂપ ઉપાયથી ફરીથી निहंतूण-निहत्य તેના બંધનમાં ન જકડાઈ જાઉં એ રીતે તેને તોડીને मुक्कपासो-मुक्तपाश.

अस्मिन् लोके विहरामि=विचरामि । 'सव्वसो' इत्यत्रार्षत्वाद् द्वितीयार्थे 'शस्' प्रत्ययो बोध्यः ॥४१॥

ततः—

मूलम्—पासा यं इइ के वुत्ता ?, केसी गोयममब्बवी ।
तओ केसिं बुवंतं तुं, गोयमो इणमब्बवी ॥४२॥

छाया—पाशाश्च इति के उक्ताः ?, केशी गौतममब्रवीत् ।
ततः केशिन ब्रुवन्त तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥४२॥

टीका—'पासा य' इत्यादि ।

इय गाथा व्याख्यातमाया ॥४२॥

ततः—

मूलम्—रागद्दोसाइओ तिव्वा, नेह पासा भयंकरा ।
ते छिंदित्तु जहानाय, विहरामि जहक्कमं ॥४३॥

छाया—रागद्वेपादयस्तीव्राः, स्नेहपाशा भयङ्कराः ।
तान छित्त्वा अथान्याय, विहरामि यथाक्रमम्

टीका—'रागद्दोसाइओ' इत्यादि ।

हे भदन्त ! रागद्वेपादयः=रागद्वेपमोहप्रभृतय', तथा—तीव्रा.=अतिगाढा

हू। इस लिये (लहुब्भूओ–लघुभूतः) वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी होकर (विहरामि-विहरामि) इस लोक में विचरता हू ॥४१॥

'पासाय' इत्यादि ।

'वे पाश क्या है ?' इस प्रकार केशी श्रमण के पूछने पर गौतम स्वामी ने उनको ऐसा कहा—॥४२॥

'रागद्दोसाइओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे भदन्त ! (रागद्दोसाइओ–रागद्वेपादिक) रागद्वेष

બંધન રહિત બની ગયેલ છુ આ કારણે लहुब्भूओ–लघुभूत વાયુની માફક અપ્રતિબદ્ધવિહારી બનીને विहरामि–विहरामि આ લોકમા વિચરૂ છુ ॥૪૧॥

"पासाय" ઇત્યાદિ !

"તે બધન કયુ છે" આ પ્રમાણે કેશી શ્રમણના પૂછવાથી ગૌતમ સ્વામીએ તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ ॥૪૨॥

"रागद्दोसाइओ" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત ! रागद्दोसाइओ–रागद्वेपादयः રાગ દ્વેષ આદિ તથા

भयङ्कराः=अनर्थहेतुतया त्रासोत्पादकाः स्नेहपाशाः=पुत्रमित्रादि सम्बन्धिस्नेहरूपाः पाशाः सन्ति। तान्=रागद्वेषादीन्, स्नेहपाशांश्च, यथान्याय=सर्वज्ञकथित मर्यादामनुश्रित्य, छित्वा यथाक्रमम्-तीर्थंकरपरम्परानुसारेण विहरामि=ग्राम नगरादिषु अप्रतिबद्धविहारितया विचरामि। स्नेहस्य रागान्तर्गतत्वेऽपि अतिगाढ त्वात् स भिन्नतया निर्दिष्टः ॥४३॥

पुनः केशी गौतम प्रशसन् पृच्छति--

मूलम्--साहु गोयम ! पन्ना ते, छिन्नो मे संसओ इमो !
अन्नो वि संसओ मेज्झ, तं मे कहसु गोयमा ! ॥४४॥

छाया--साधुर्गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥४४॥

आदि तथा (तिव्वा-तीव्राः) अतिगाढ एव (भयकरा-भयङ्कराः) त्रासो त्पादक पुत्रादिक संबधी (नेह-स्नेहः) स्नेह ये सब (पासा-पाशाः) पाश हैं। (ते-तान्) इनको (जहानाय-यथान्याय) सर्वज्ञकथित मर्यादा के सहारे से (छिंदितु-छित्वा) नष्ट कर (जहक्कम-यथाक्रमम्) तीर्थंकरों की परम्परा के अनुसार मैं अप्रतिबद्ध बनकर ग्राम नगरादिकों मे (विहरामि-विहरामि) विहार करता हू। इस गाथा में यद्यपि स्नेह राग के अन्तर्गत होने से अलग नही कहना चाहिये था फिर भी स्वतन्त्ररूप से जो उसका उल्लेख किया गया है वह उसमे अत्यंत गाढता बतलाने के लिये ही किया गया है ॥४३॥

'साहु' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(गोयम-गौतम) हे गौतम (ते-ते) तुम्हारी (पन्ना-

तिव्वा-तीव्राः अति गाढ भयकरा-भयङ्कराः अने त्रासना उत्पन्न करनार पुत्रादिक संबधी नेह-स्नेह स्नेह आ सघळा पासा-पाशाः बधन छे अेमने जहानाय-यथान्याय सर्वज्ञ द्वारा कहेवामा आवेली मर्यादाना सहकारथी छिंदितु-छित्वा नष्ट करी जहक्कम-यथाक्रमम् तीर्थंकरोनी परंपराना अनुसार हु अप्रतिबद्ध बनीने ग्राम नगर आदिकेमा विहरामि-विहरामि विहार करु छु आ गाथामा जो के, स्नेहरागनु अतर्गत होवाथी अलग रीते कहेवानी जरूरत न हती छता पण स्वतंत्ररूपथी जे तेनो उल्लेख करवामा आवेल छे ते तेमा अत्यंत गाढता बताववा माटे ज कहेल छे ॥४३॥

"साहु" इत्यादि।

अन्वयार्थ--गोयमा-गौतम हे गौतम ते-ते तमारी पन्ना-प्रज्ञा बुद्धि

टीका—'साहु' इत्यादि।

अस्या व्याख्या पूर्ववत् ॥४४॥

संशयस्वरूपमाह—

मूलम्—अंतो हियंय संभूया, लया चिट्ठई गोयमा!।
फलेइ विसभक्खीण, सा उ उद्धरियां कह? ॥४५॥

छाया—अन्तर्हृदयसम्भूता, लता तिष्ठति गौतम!।
फलति विषभक्ष्याणि, सा तु उद्धृता कथम्? ॥४५॥

टीका—'अंतो हीयय' इत्यादि—

हे गौतम! अन्तर्हृदयसभूता—हृदयस्यान्तः, अन्तर्हृदय=मनः, तत्र समुद्भूता=समुत्पन्ना लता तिष्ठति। सा लता विषभक्ष्याणि—विषवद् भक्ष्यन्ते यानि तानि—विषोपमानि फलानि फलति=प्रसूते। सा लता तु त्वया कथम् उद्धृता=उत्पाटिता ॥४५॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—तं लयं सव्वसो छित्ता, उद्धरित्ता समूलियं।
विहरामि जहानायं, मुक्कोमि विसभक्खणा ॥४६॥

प्रज्ञा बुद्धि (साहु-साधु) उत्तम है केसी श्रमण ने इस गाथा द्वारा गौतम की प्रज्ञा की प्रशंसा की है। तथा (मे-मे) मेरा (इमो-अयम्) यह (संसओ छिन्नो-संशयो छिन्नो) संशय नष्ट हुआ (मज्झ-मम) मुझे अन्नो वि संसओ-अन्योऽपि संशयः) अन्य भी संशय है (तं मे कहसु गोयम-तं मे कथय गौतम) उसका भी आप समाधान करे यह निवेदन किया है ॥४४॥

संशय का स्वरूप कहते हैं—'अंतो' इत्यादि।

हे गौतम! हृदय के भीतर उत्पन्न हुए लता विष के समान फलों को उत्पन्न करती है। फिर वह आपने कैसे उखाडी ॥४५॥

साहु—साधु ઉત્તમ છે કેશીશ્રમણે આ ગાથા દ્વારા ગૌતમની પ્રજ્ઞાની પ્રસંશા કરેલ છે તથા મને मे—मे મારો इमो—अयम् આ संसओ छिन्नो—संशयो छिन्नो સંશય નાશ પામ્યો છે मज्झ अन्नोवि संसओ मम अन्योऽपि संशय, વળી મને બીજો સંશય છે જેથી આપ એનું નિરાકરણ કરો એવું નિવેદન કરેલ છે ॥૪૪॥

સંશયના સ્વરૂપને કહે છે—"अंतो" ઈત્યાદિ!

હે ગૌતમ! હૃદયની અંદર ઉત્પન્ન થયેલા લતા વિષના જેવા ફળને ઉત્પન્ન કરે છે તો આપે એને કઈ રીતે ઉખેડી? ॥૪૫॥

छाया—ता लता सर्वशः छित्वा, उद्धृत्य समूलिकाम्।
विहरामि यथान्याय, मुक्तोऽस्मि विषभक्षणात् ॥४६॥

टीका—'त लय' इत्यादि—

हे भदन्त! अह ता लता सर्वशः=सर्वथा छित्वा, पुन समूलिका=मूल सहिता ता लताम् उद्धृत्य=उत्पाट्य यथान्याय=शास्त्रानुसारेण साधुमार्गे विहरामि। अत एवाह विषभक्षणात्=विषफलभक्षणरूपात् दुष्कर्मणो मुक्तोऽस्मि ॥४६॥

केशी पृच्छति—

मूलम्—लया य इइ का वुत्ता? केसी गोयममब्बवी।
केसिमेव वुवत तु, गोयमो इणमब्बवी ॥४७॥

छाया—लता च इति का उक्ता, केशी गौतममब्रवीत्।
केशिनमेव ब्रुवन्त तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥४७॥

टीका—'लया य' इत्यादि—व्याख्या स्पष्टा ॥४७॥

गौतम ने इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया—'त लय' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे भदन्त! (त लय सव्वसो छित्ता–ता लता सर्वशः छित्वा) मे उस लता को सर्वथा छिन्न भिन्न कर के तथा (समूलिय उद्धरित्ता–समूलिकाम् उद्धृत्य) उस लता को मूल के साथ उखाड करके (विसभक्खणा मुक्कोमि–विषभक्षणात् मुक्तोस्मि) शास्त्रमार्ग के अनुसार साधु मार्ग मे विचरण करता हू। इसीलिये मै विषफल भक्षणरूप दुष्कर्म से मुक्त हुआ हू ॥४६॥

केशी ने पुन. पूछा—'लया य' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(लया य इइ का वुत्ता–लता च (इति का उक्ता.) वह लता कौनसी है जिसको अपने मूल से उखाड दिया है। (केसीमेव वुव त

ગોતમે એ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે આપ્યો—"त लय" ઈત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત! त लय सव्वसो छित्ता–ता लता सर्वश छित्वा હું એ લતાને સપૂર્ણપણે છિન્નભિન્ન કરીને તથા समूलिय उद्धरित्ता–समूलिका उद्धृत्य એ લતાને મૂળની સાથે ઉખાડીને विसभक्खणा मुक्कोमि–विषभक्षणात् मुक्तोस्मि શાસ્ત્રમાર્ગ અનુસાર સાધુ માર્ગમા વિચરણ કરૂ છુ આ કારણે હું વિષફળને ખાવારૂપ દુષ્કર્મથી મુક્ત બનેલ છુ ॥૪૬॥

કેશીશ્રમણે ફરીથી પૂછ્યુ—"लया य" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—लयाय इइ का वुत्ता–लता च इति का उक्ता એ લતા કઈ છે કે જેને આપે મૂળથી ઉખેડી નાખેલ છે केसीमेव वुवत तु–केशीमेव ब्रुवत तु

गोतम आह--

मूलम्--भवतण्हा लया वुत्ता, भीमा भीमफलोदया।
तमुद्धित्तु जहानाय, विहरामि महामुणी ॥४८॥

छाया--भवतृष्णा लता उक्ता, भीमा भीमफलोदया।
तामुद्धृत्य यथान्याय, विहरामि महामुने ! ॥४८॥

टीका--'भवतण्हा' इत्यादि--

हे महामुने ! भवतृष्णा=भवे=ससारे या तृष्णा=लोभः, सा, लता उक्ता। एषा भवतृष्णारूपा लता भीमा=स्वरूपतो भयप्रदा, तथा-भीमफलोदया-भीम.=दुःखहेतुत्वेन भयङ्करः फलाना=क्लिष्टकर्मणामुदयो=विपाको यस्याः सा तथा, नरकनिगोदादिदु खहेतुभूता चास्ति। एवविधा ता लताम् उद्धृत्य=उत्पाटय यथा न्यायं=शास्त्रोक्तमार्गानुसारेणाह विहरामि=अप्रतिबद्धविहारितया विचरामि।४८।

तु-केशीमेव ब्रुवत तु) केशी श्रमण के इस प्रकार पूछने पर (गोयमो इणमब्बवी-गौतमो इदमब्रवीत्) गौतमस्वामी इसप्रकार कहते है ॥४७॥

गौतमस्वामीने क्या कहा सो कहते हैं--'भवतण्हा' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(महामुणी-महामुने) हे महामुने! (भवतण्हा लया वुत्ता--भवतृष्णा लता उक्ता)वह लता भव तृष्णा स्वरूप है-अर्थात् ससार में जो लोभ है वही एक लता है। यह भवतृष्णा रूप लता स्वरूपत. (भीमा भीमफलोदया-भीमा भीमफलोदया) भय को देने वाली है, तथा दु.खों के हेतु होने से भयकर क्लिष्ट कर्मों का उदयरूप है जिससे ऐसी है। तथा नरकनिगोदादिक दुःखों की हेतुभूत है। (तमुद्धित्तु-तामुद्धृत्य) मैं ने उस लता को उखाड दिया है। इसी लिये (विहरामि-विहरामि) शास्त्रोक्तमार्ग के अनुसार मैं अप्रतिबद्ध होकर विहार करता हू ॥४८॥

કેશી શ્રમણના આ પ્રકારના પૂછવાથી गोयमो इणमब्बवी-गौतमो इदमब्रवीत् ગૌતમસ્વામી આ પ્રમાણે કહે છે ॥૪૭॥

ગૌતમ સ્વામીએ શુ કહ્યુ તેને કહે છે--"भवतण्हा" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--महामुणी-महामुने હે મહામુનિ! भवतण्हा लया वुत्ता-भवतृष्णा लता उक्ता એ લતા ભવતૃષ્ણા સ્વરૂપ છે અર્થાત-સ સારમા જે લોભ છે તે એક લતા છે એ ભવતૃષ્ણારૂપ લતા ખરી રીતે તો भीमा भीमफलोदया-भीमा भीम फलोदया ભયને આપનારી છે તથા દુ ખોના હેતુરૂપ હોવાથી ભય કર ક્લેશ ઉપજાવનાર કર્મના ઉદયરૂપ છે તથા નરક નિગોનાદિક દુ ખોની હેતુભૂત છે तमुद्धित्तु-तामुद्धृत्य મે તે લતાને ઉખેડી નાખી છે આ કારણે શાસ્ત્રોક્ત માર્ગ અનુસાર હુ અપ્રતિબદ્ધ થઈને विहरामि-विहरामि વિહાર કરૂ છુ ॥૪૮॥

पुनः केशी माह--

मूलम्—साहु गोयम! पण्णा ते छिन्नो मे संसओ इमो ।
अण्णो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥४९॥

छाया—साधु गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥४९॥

टीका—'साहु' इत्यादि—

अस्याः पूर्ववद् व्याख्या बोध्या ॥४९॥

पुनरपि केशी पृच्छति--

मूलम्—संपज्जलिया य घोरा, अग्गी चिट्ठइ गोयमा ! ।
जे डहंति सरीरत्था, कहं विज्झाविया तुमे ? ॥५०॥

छाया—सम्प्रज्वलिताश्च घोरा., अग्नयस्तिष्ठन्ति गौतम ! ।
ये दहन्ति शरीरस्था', कथं विध्यापितास्त्वया ? ॥५०॥

टीका—'संपज्जलिया' इत्यादि—

हे गौतम ! सम्प्रज्वलिता.—सं=समन्तात् प्र=प्रकर्षेण ज्वलिता.—जाज्वल्यमाना इत्यर्थः, अत एव घोरा.=भयकराः अग्नयस्तिष्ठन्ति=सन्ति । ये अग्नय' शरीरस्था.—शरीरान्तर्गता'—सन्तो जीवान् दहन्ति=परितापयन्ति । ते अग्नयस्त्वया

केशी श्रमण कहते है- 'साहु' इत्यादि ।

इस गाथा का अर्थ पहिले जैसा ही जानना चाहिये। इसमें गौतम स्वामी की प्रज्ञा की प्रशंसा की गई है ॥४९॥

केशी ने पुन. गौतम से पूछा—'संपज्जलिया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ - (गोयम—गौतम) हे गौतम ! (संपज्जलिया य—सम्प्रज्वलिताश्च) समन्तत प्रकर्षरूप से जाज्वल्यमान अतएव (घोरा—घोरा) घोर ऐसी (अग्गी—अग्नय) अग्नि है । (जे सरीरत्था—ये शरीरस्था) यह अग्नि शरीर

કેશી શ્રમણ કહે—"साहु" ઇત્યાદિ !

આ ગાથાનો અર્થ પહેલાની ગાથાઓ પ્રમાણે જ જાણવો જોઇએ આમાં ગૌતમ સ્વામીની પ્રજ્ઞાની પ્રશંસા કરવામાં આવેલ છે ॥૪૯॥

કેશીએ ફરીથી પૂછ્યું - "संपज्जलिया" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—गोयम—गौतम હે ગૌતમ ! संपज्जलिया य—सम्प्रज्वलिताश्च સમન્તત ! પ્રકર્ષરૂપથી જાજ્વલ્યમાન અતએવ घोरा—घोरा ઘોર-ભયંકર એવી અગ્નિ છે जे सरीरत्था डहंति—ये शरीरस्था दहन्ति આ અગ્નિ શરીરની અંદર

कथं त्वं यावता =निर्वापिताः? अग्नयो यद्यप्यात्मस्थास्तथाप्यात्म-शरीरयोरभे दोपचारात् शरीरस्था उक्ताः। 'चिट्ठइ' इत्यत्रार्षत्वाद् बहुत्वे एकत्वं बोध्यम् ॥५०॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—महामेहप्पसूयाओ, गिज्झ वारि जलुत्तम ।
सिंचामि सययं ते उं, सित्ता नो य दहंति मे ॥५१॥

छाया—महामेघप्रसूतात्, गृहीत्वा वारि जलोत्तमम् ।
सिञ्चामि सततं तांस्तु, सिक्ता नो च दहन्ति माम् ॥५१॥

टीका—'महामेहप्पसूयाओ' इत्यादि—

हे भदन्त! अहं महामेघप्रसूतात्=महामेघसमुत्पन्नात्=महतः प्रवाहात्, जलोत्तमं=शेषजलापेक्षया प्रधानं वारि=जलं गृहीत्वा=आदाय तान् अग्नीन् सततं सिञ्चामि। इत्थं सिक्तास्तु ते अग्नयो मां नो च दहन्ति=नैव भस्मसात् कुर्वन्ति ॥५१॥

के अन्तर्गत होकर जीवों को परितप्त करती रहती है। फिर यह तो कहिये कि (तुमे कह विज्झाविया-त्वया कथं विध्यापिताः) आपने इस अग्नि को कैसे बुझाया है?। यद्यपि अग्नि आत्मा के अन्तर्गत होती है-फिर भी यहां जो उसको शरीर के अन्तर्गत कही गयी है वह आत्मा और शरीर में अभेद उपचार से ही कहा गया है ॥५०॥

गौतम ने इस केशी के प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया—'महामेहप्पसूयाओ' इत्यादि।

अन्वयार्थ-हे भदन्त! (महामेहप्पसूयाओ-महामेघप्रसूतात्) मैं महामेघ से प्रसूत तथा (जलुत्तमं वारि गिज्झ-जलोत्तमम् वारी गृहीत्वा) जलोत्तम ऐसे पानी को लेकर इस अग्नि पर (सययं सिंचामि-सततं सिञ्चामि) सतत

પ્રવેશીને જીવોને પરિતપ્ત કર્યા કરે છે પછી એ તો બતાવો કે, तुमे कह विज्झाविया-त्वया कथं विध्यापिताः આપે આ અગ્નિને કઈ રીતે બુઝાવ્યો છે? જો કે, અગ્નિ આત્માની અંદરના ભાગમાં હોય છે તો પણ અહીં જે તેને શરીરની અંતર્ગત બતાવવામાં આવેલ છે તે આત્મા અને શરીરમાં અભેદ ઉપચારથી જ બતાવવામાં આવેલ છે ॥૫૦॥

ગૌતમે કેશીના એ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે આપ્યો "महामेप्पहसूयाओ" ઈત્યાદિ!

અન્વયાર્થ-હે ભદન્ત! महामेहप्पसूयाओ-महामेघप्रसूतात् હું મહામેઘથી પ્રસૂત તથા जलुत्तमं गिज्झ-जलोत्तमं वारि गृहीत्वा જળમાં ઉત્તમ એવા પાણીને લઈને

केशी पृच्छति--

मूलम्--अग्गी य इइ के वुत्ते, केसी गोयमसब्बवी ।
तओ केसिं बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी ॥५२॥

छाया--अग्नयश्चेति के उक्ताः, केशी गौतममब्रवीत् ।
ततः केशिन ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥५२॥

टीका--'अग्गी य' इत्यादि ।

अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या, नवरम् अग्निप्रश्नोऽत्र महामेघादि प्रश्नोपलक्षणम् ॥५२॥

मूलम्--कसाया अग्गिणो वुत्ता, सुयसीलतवो जलं ।
सुयधाराभिहया संता, भिन्ना हु न डहंति मे ॥५३॥

छाया--कषाया अग्नय उक्ताः, श्रुतशीलतपो जलम् ।
श्रुतधाराभिहताः सन्तो, भिन्नाः खलु न दहन्ति माम् ।

टीका--'कसाया' इत्यादि ।

हे भदन्त ! कषायाः=क्रोधादयो दाहकतया शोषकतया च अग्नय उक्ताः

सींचता हूं। (सित्ता उ मे नो दहति-सिक्तास्तु माम् न दहति) सो इस प्रकार सिंचित हुए यह अग्नि मुझे नहीं जलाती है ॥५१॥

केशी श्रमण ने इस प्रकार गौतमस्वामी के कहने पर उनसे पुनः पूछा-'अग्गी य' इत्यादि ।

इस गाथा में केशिकुमार ने गौतम से ऐसा पूछा है कि हे गौतम! अग्नि क्या है तथा जल क्या है? तब केशिकुमार के इस प्रश्न का समाधान गौतमने इस प्रकार किया--॥५२॥

'कसाया' इत्यादि ।

अन्वयार्थ- हे भदन्त ! (कसाया अग्गिणो वुत्ता-कषायाः अग्नय) उक्ताः

એ અગ્નિના સયય સિંચામિ-સતત મિશ્ચામિ ઉપર સતત છાંટુ છુ તો એ પ્રકારથી સિંચવામા આવેલ અગ્નિ મને જળાવી શકતો નથી ॥૫૧॥

કેશી શ્રમણે ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રકારના ઉત્તરથી ફરીને પૂછ્યુ 'अग्गीय" ઇત્યાદિ !

આ ગાથામા કેશીકુમારે ગૌતમને એવુ પૂછ્યુ કે, હે ગૌતમ ! અગ્નિ શુ છે જળ શુ છે ? ત્યારે કેશીકુમારના આ પ્રશ્નનુ સમાધાન ગૌતમે આ પ્રકારે કર્યુ ॥૫૨॥

'कसाया" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ-હે ભદન્ત ! कसाया अग्गिणो वुत्ता-कषाया अग्नय उक्ता' ક્રોધા દિ

स्तीर्थङ्करै'। तथा-श्रुतशीलतपः-श्रुतम्=उपचारात्कषायोपशमहेतवः श्रुतान्तर्गता उपदेशा, शीलम्=महाव्रतरूप, तप =द्वादशविधमनशनादिकम्, एषा समाहारस्तत्, जलम् उक्त तीर्थङ्करैः। उपलक्षणत्वात्-महामेघखिजगदानन्ददायकतया शेषमहामेघातिशायित्वेन च भगवाँस्तीर्थङ्कर, तदुत्पन्नआगमश्च महाप्रवाहः। उक्तार्थमुपसहरन्नाह-'सुयधारा' इत्यादि-ते कषायरूपा अग्नय. श्रुतधाराभिहताः= श्रुतस्य-श्रुतादिरूपस्य जलस्य या धारास्ताभिरभिहताः=अभिषिक्ता सन्तोभिन्ना -विध्यापिताः, मा खलु=निश्चयेन न दहन्ति। 'मे' इति द्वितीयार्थे षष्ठी, यद्वा= सम्बन्धसामान्ये षष्ठी बोध्या ॥५३॥

पुनः केशी प्राह—

मूलम्—साहु गोयम पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥५४॥

छाया—साधु गौतम! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, त मे कथय गौतम! ॥५४॥

क्रोधादिक कषाय दाहक एव शोषक होने के कारण अग्निस्वरूप तीर्थंकर महाप्रभुओ ने कहा है। (सुयसीलतवो जल-श्रुतशीलतपो जलम्) श्रुत-कषायों के उपशम के हेतुभूत जो श्रुतान्तर्गत उपदेश है वे, तथा महाव्रत स्वरूप शील एव अनशनादिक-बारह प्रकार के तप ये सब जल स्वरूप हैं। (सुयधाराभिहया भिन्ना श्रुतधाराभिहता भिन्ना.) भगवान् तीर्थंकर महामेघ तुल्य एव इनके द्वारा प्रतिपादित आगम महाप्रवाह है यह सब कषाय रूप अग्निसमूह श्रुतादिरूप जल की धारा से अभिहत होकर मेरे मे बुझ चुका है। (न डहति मे-माम् न दहन्ति) अत यह मुझे जलाती नहीं है ॥५३॥

કષાય દાહક અને શોષક હોવાના કારણે અગ્નિ સ્વરૂપ છે એવુ તીર્થંકર મહાપ્રભુઓએ બતાવેલ છે सुयसीलतवो जल-श्रुतशीलतपो जलम् કષાયોના ઉપશમના હેતુભૂત જે શ્રુતાન્તર્ગત ઉપદેશ છે, તથા મહાવ્રત સ્વરૂપ શીલ અને અનશન આદિ બાર પ્રકારના તપ છે એ બધા જળ સ્વરૂપ છે सुयधाराभिहताः भिन्ना-श्रुतधाराभिहता भिन्नाः ભગવાન તીર્થંકર મહામેઘ તુલ્ય અને એમના તરફથી પ્રતિપાદિત આગમ મહાપ્રવાહ છે આ બધા કષાયરૂપ અગ્નિસમૂહ શ્રુતાદિરૂપ જળની ધારાથી અભિહત થઈને મારામા બુઝાઈ ગયેલ છે આથી न डहति मे-माम् न दहन्ति એ મને બાળી શકતા નથી ॥૫૩॥

टीका—'साहु गोयम!' इत्यादि।
अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥५४॥
केशी मुनिः पृच्छति—

मूलम्—अयं साहसिओ भीमो, दुट्ठस्सो परिधावइ।
जंसि गोयममारूढो, कहं तेण न हीरसि ॥५५॥

छाया—अयं साहसिको भीमो, दुष्टाश्वः परिधावति।
यस्मिन् गौतम! आरूढः, कथं तेन न ह्रियसे? ॥५५॥

टीका—'अयं' इत्यादि।
साहसिकः–सहसा=असमीक्ष्य प्रवर्तते इति साहसिकः–उन्मार्गगामित्वात्, भीमो=भयङ्करः, नरकादिदुर्गतिगर्तपातकत्वात्, अयं=प्रत्यक्षो दुष्टाश्वः परिधावति=पलायते। यस्मिन् दुष्टाश्वे त्वमारूढोऽसि। हे गौतम! त्वं तेन दुष्टाश्वेन कथं न ह्रियसे=कथमुन्मार्गं न नीयसे? 'गोयममारूढो' इत्यत्र मकारागमआर्षत्वात् ॥५५॥

केशी श्रमण ने पूछा—'साहु' इत्यादि।
इस गाथा की व्याख्या पहिले जैसी जाननी चाहिये ॥५४॥
केशी श्रमण पूछते हैं—'अयं' इत्यादि।
अन्वयार्थ–(साहसिओ भीमो अयं दुट्ठस्सो परिधावइ–साहसिको भीमो अयं दुष्टाश्वः परिधावति) उन्मार्गगामी होने से, बिना सोचे समझे चाहे जहां चला जानेवाला तथा जीव के नरक आदि दुर्गतियों में पडने का हेतु होने से भयकर ऐसा यह दुष्ट घोडा दोडता है। (जसि गोयम? आरूढो तेन कथ न हीरसि–यस्मिन् गौतम! आरूढः कथ तेन न ह्रियसे) फिर भी इस पर हे गौतम! आप आरूढ हो रहे हैं। सो आप इसके द्वारा उन्मार्ग क्यो नहीं पहुचाये जाते है ॥५५॥

કેશી શ્રમણે ફરી પૂછ્યુ—"साहु" ઇત્યાદિ!
આ ગાથાની વ્યાખ્યા અગાઉની જેમ સમજી લેવી જોઈએ ॥૫૪॥
કેશી શ્રમણ પૂછે છે—"अयं" ઇત્યાદિ!
અન્વયાર્થ–साहसिओ भीमो अयं दुट्ठस्सो परिधावइ-साहसिको भीमो अयं दुष्टाश्वः परिधावति ઉન્માર્ગી હોવાથી કોઈ પણ પ્રકારનો વિચાર કર્યા સિવાય ગમે ત્યા ચાલી જનાર તથા જીવને નરક આદિ દુર્ગતિયોમા પડવાના હેતુરૂપ હોવાથી ભયકર એવો આ દુષ્ટ ઘોડો દોડે છે એ ઘોડા ઉપર સ્થિર રૂપથી સ્વાર બનેલા એવા जसि गोयमा आरूढो तेन कथ न हीरसि–यस्मिन् गौतम! आरूढः कथ तेन न ह्रियसे હે ગૌતમ! તમો એના દ્વારા ઉન્માર્ગ ઉપર કેમ નથી પહોચાડાતા? ॥૫૫॥

गौतमः प्राह--

मूलम्--पहावंतं निगिण्हामि, सुयरस्सीसमाहियं।
न मे गच्छइ उम्मग्गं, मग्गं च पडिवज्जइ ॥५६॥

छाया--प्रधावन्तं निगृह्णामि, श्रुतरश्मिसमाहितम्।
न मे गच्छति उन्मार्गं, मार्गं च प्रतिपद्यते ॥५६॥

टीका--'पहावंत' इत्यादि।

हे भदन्त ! श्रुतरश्मिसमाहितं=श्रुतम्=आगमस्तद् रश्मिरिव=प्रग्रह (लगाम इति भाषा प्रसिद्धः) इव-श्रुतरश्मिस्तेन समाहितः=नियन्त्रितस्तं तथाभूतं प्रधावन्तं दुष्टाश्वं निगृह्णामि=स्वाधीनं करोमि। अतो मे ममासौ दुष्टाश्व उन्मार्गं=विपरीतमार्गं न गच्छति-न नयतीत्यर्थः। किं तु मार्गं=सत्पथं प्रतिपद्यते=मार्गमारुह्य गच्छतीत्यर्थः ॥५६॥

केशि पृच्छति--

मूलम्--आसे य इइ के वुत्ते ?, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी ॥५७॥

इसके उत्तर रूप मे गौतमस्वामीने कहा--'पहावंत' इत्यादि।

अन्वयार्थ--हे भदन्त ! जिस घोडे पर मै सवार हुवा हूं वह घोडा (सुयरस्सी समाहियं पहावंतं निगिण्हामि- श्रुतरश्मि समाहितम् प्रधावन्तं निगृह्णामि) श्रुतरूप लगाम से नियन्त्रित है, अतः जब यह दौडने लगता है तब मै इसको उस लगाम के द्वारा रोक लेता हूं। इसलिये (मे उम्मग्गं न गच्छइ-मे उन्मार्गं न गच्छति) यह उन्मार्ग पर मुझे नही ले जाता है। किन्तु सीधे ही मार्ग पर चलता रहता है।--गौतम के इस कथन को सुनकर पुनः केशीने उनसे पूछा--॥५६॥

આના ઉત્તર સ્વરૂપમાં ગૌતમસ્વામીએ કહ્યુ-"पहावंत" ઈત્યાદિ !

હે ભદન્ત ! જે ઘોડા ઉપર હુ સ્વાર થયો છુ એ ઘોડા સુયરસ્સીસમાહિય પહાવંત નિગિણ્હામિ-श्रुतरश्मि समाहितम् प्रधावन्तं निगृह्णामि શ્રુતરૂપ લગામથી નિયંત્રિત છે આથી मे उम्मग्गं न गच्छइ-मे उन्मार्गं न गच्छति જ્યારે તે દોડવા માડે છે ત્યારે હુ એને એ લગામ દ્વારા રોકી લઉ છુ આ કારણે એ મને ઉન્માર્ગ ઉપર લઈ જઈ શકતો નથી પરંતુ સીધા માર્ગ ઉપર જ ચાલે છે

ગૌતમના આ કથનને સાભળીને ફરીથી કેશીએ એમને પૂછ્યુ ॥૫૬॥

छाया--अश्वश्च इति क उक्त ?, केशि गौतममब्रवीत्।
तत• केशिन ब्रुवन्त तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥५७॥
टीका--'आसे य' इत्यादि। अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥५७॥
गौतमः प्राह--
मूलम्--मणो साहसिओ भीमो दुट्ठस्सो परिधावइ।
तं सम्मं निगिण्हामि, धम्मसिक्खाइ कथग ॥५८॥
छाया--मन' साहसिको भीमो, दुष्टाश्वः परिधावति।
त सम्यक् निगृह्णामि, धर्मशिक्षया कन्थकम् ॥५८॥
टीका--'मणो' इत्यादि।
हे भदन्त! मन =मनोरूप' साहसिकः=असमीक्ष्यकारी भीमः भयङ्करो दुष्टाश्वः=अविनीततुरगः परिधावति=इतस्ततः परिभ्रमति। त मनोरूप दुष्टाश्व धर्मशिक्षयाधर्मशिक्षारूपकरणेन कन्थक=कन्थकमिव-जात्याश्वमिव सम्यक् निगृह्णामि वशीकरोमि ॥५८॥

क्या पूछा सो कहते हैं--'आसे य' इत्यादि।
महाभाग! जिस अश्वपर आप अरूढ हो रहे हैं वह अश्व कौनसा है। तब गौतम ने उनके प्रश्न का इस प्रकार उत्तर दीया ॥५७॥
उसी उत्तर को कहते है--'मणो' इत्यादि।
अन्वयार्थ-हे भदन्त! जिस घोडे क विषयमें मैने आपसे कहा है वह मन है। यह (मणो साहसियो भीमो दुट्ठस्सो परिधावइ-मनः साहसिको भीमो दुष्टाश्वः परिधावति) मनरूपी अश्व-घोडा बडा ही अधिक साहसी है, जब यह चाहता है तभी इधर उधर दौडने लग जाता है (त धम्मसिक्खाइ कथग सम्म निगिण्हामि-त धर्म शिक्षया कथकम् सम्यक् निगृह्णामि) इसको मैने धर्म देशना के द्वारा जात्यश्व की तरह अच्छी तरह अपना वश

મહાભાગ જે અશ્વ ઉપર આપ આરૂઢ થઈ રહ્યા છો એ અશ્વ કયો છે ? ગૌતમે એમના એ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે આપ્યો ॥૫૭॥
એમના ઉત્તરને કહે--"मणो" ઈત્યાદિ!
હે ભદન્ત! જે ઘોડાના વિષયમા મે આપને કહેલ છે તે ઘોડા એ મન છે આ मणो साहसियो भीमो दुट्ठस्सो परिधावइ-मनः साहसिको भीमो दुष्टाश्व' परिधावति મનરૂપી અશ્વ ખૂબ જ સાહસિક છે જ્યારે એ ચાહે છે ત્યારે અહી તહી દોડવા લાગી જાય છે त धम्मसिक्खाइ कथग सम्म निगिह्णामि-त धर्मशिक्षया कथक सम्यक् निगृह्णामि એને મે ધર્મદેશના દ્વારા જાત્ય અશ્વની માફક સપૂર્ણ રીતે મારા

पुनः कथा प्राह--

मूलम्--साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥५९॥

छाया--साधु गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥५९॥

टीका--'साहु गोयम' इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥५९॥

मूलम्--कुप्पहा बहवो लोए, जेहिं नासंति जंतुणो ।
अद्धाणे कह वट्टंतो, तं न नस्ससि गोयमा ! ॥६०॥

छाया--कुपथा बहवो लोके यैर्नश्यन्ति जन्तवः ।
अध्वनि कथं वर्त्तमानः, त्वं न नश्यसि गौतम ? ॥६०॥

टीका--'कुप्पहा' इत्यादि ।

हे गौतम ! लोके=जगति बहवः=अनेके कुपथाः=उन्मार्गाः सन्ति । यैः कुपथैः जन्तवः=प्राणिनः सन्मार्गात् नश्यन्ति=भ्रष्टा भवन्ति । हे गौतम !

वर्ती बना लिया है । अतः यह मेरे द्वारा चलाये गये मार्ग पर ही चलता है । कुमार्ग पर नहीं ॥५८॥

फिर केशी श्रमण कहते हैं--'साहु' इत्यादि ।

गौतम स्वामी द्वारा प्रतिपादित अश्व का वर्णन सुनकर केशी ने उनकी बुद्धि की बहुत ही अधिक सराहना की है तथा और भी प्रश्न पूछते हैं॥५९॥

केशीश्रमण गौतम से पूछते हे--'कुप्पहा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--हे महाभाग ! (लोए कुप्पहा बहवो-लोके कुपथा बहवः) इस संसार मे अनेक कुपथ है। (जेहिं जंतुणो नासंति-यैः जन्तवः नश्यन्ति)

વશવર્તી બનાવી લીધેલ છે આથી એ મારા તરફથી જે માર્ગે ચલાવવામાં આવે એજ માર્ગ ઉપર ચાલે છે કુમાર્ગ ઉપર જતો નથી ॥૫૮॥

ફરીથી કેશી શ્રવણ કહે છે -"સાહુ" ઈત્યાદિ !

ગૌતમસ્વામી તરફથી કહેવામા આવેલ અશ્વની તારીફ સાભળીને કેશી શ્રમણે એમની બુદ્ધિના ખૂબ જ વખાણ કર્યાં તથા બીજો પણ પ્રશ્ન પૂછવાની ઉત્કંઠા બતાવી ॥૫૯॥

કેશી શ્રમણ ગૌતમને પૂછે છે -"કુપ્પહા" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે મહાભાગ ! लोए कुप्पहा बहवो-लोके-कुपथा बहवः આ સંસારમા અનેક કુપથ છે, जेहिं जंतुणो नासंति-यै जन्तवः नश्यन्ति જેના

अ ध्वनि=मस्तारात् सन्मार्गे वर्तमानस्त्वं सन्मार्गात् कथं न नश्यसि= न प्रस्खलितो भवसि ? ॥६०॥

गौतम आह—

मूलम्—जे य मग्गेण गच्छंति, जे य उम्मग्गपट्टिया।
ते सव्वे विइया मज्झं, तो न नस्सामिहं मुणी ॥६१॥

छाया—ये च मार्गेण गच्छन्ति, ये च उन्मार्गप्रस्थिताः।
ते सर्वे विदिता मम, ततो न नश्याम्यहं मुने ! ॥६१॥

टीका—'जे य' इत्यादि।

हे भदन्त ! ये च जन्तवो मार्गेण=सन्मार्गेण गच्छन्ति। ये च उन्मार्गप्रस्थिता सन्ति। ते सर्वे मम विदिता=ज्ञाता सन्ति। न च मार्गोन्मार्गौ ज्ञानं विनाऽभिज्ञातु शक्यन्ते। तत =तस्मात् कारणात् हे मुने ! अहं सन्मार्गात् न नश्यामि=न प्रस्खलितो भवामि ॥६१॥

जिन पर चलनेसे ससारी जन सन्मार्ग से भ्रष्ट कर दिया जाता है। अत (अद्धाणे वट्टतो त कह न नस्ससि-अध्वनि वर्तमान त्वं कथं न नश्यसि) आप सन्मार्ग पर ऐसी दशा में आरूढ कैसे बने हुए हैं, आप सन्मार्ग से क्यो च्युत नही हो सके हैं ? ॥६०॥

गौतमस्वामी कहते हैं—'जे य' इत्यादि।

अन्वयार्थ-हे भदन्त ! (जे य मग्गेण गच्छति-ये च मार्गेण गच्छन्ति) जो प्राणी सन्मार्गपर चलने वाले है तथा (जे य उम्मग्गपट्ठिया ये च उन्मार्गप्रस्थिता) जो उन्मार्ग पर चलने वाले हैं (ते सव्वे मज्झ विइया—ते सर्वे मम विदिता) वे सब मेरी दृष्टि से बाहर नहीं हैं। मै उनको जानता हू। तथा सन्मार्ग क्या है या उन्मार्ग क्या है ? यह बात भी मेरे ध्यान मे है। (तो

ઉપર ચાલનાથી સસારીજનો સન્માર્ગથી ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે આથી अद्धाणे वट्टता त कह न नस्ससि—अध्वनि वर्तमान त्वं कथं न नश्यसि આપ સન્માર્ગ ઉપર એવી દશામા આરૂઢ કઈ રીતે થઇ શકયા છો શુ આપ સન્માર્ગથી ચ્યુત થઈ શકયા નથી ? ॥૬૦॥

ગૌતમ સ્વામી કહે છે —"जे य" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત ! जे य मग्गेण गच्छति—ये च मार्गेण गच्छन्ति જે પ્રાણી સન્માર્ગ ઉપર ચાલવાવાળા છે તથા जे य उम्मग्गपट्ठिया ये च उन्मार्गप्रस्थिताः જે ઉન્માર્ગ ઉપર ચાલવાવાળા છે ते सव्वे मज्झ विइया—ते सर्वे मम विदिता એ સઘળા મારી દૃષ્ટિથી બહાર નથી હુ તેમને જાણુ છુ તથા સન્માર્ગ શુ છે અને ઉન્માર્ગ શુ છે ? આ વાત પણ મારા ધ્યાનમા છે तो मुणीह न नस्सामि—

केशी प्राह—

मूलम्—मग्गे[1] य[2] इइ के[3] वुत्ते[4]? केशी गोयममब्ववी ।

तओ के[1] सिं वुवंत तु, गोयमो इणमब्ववी ॥६२॥

छाया—मार्गश्च इति क उक्त ? केशी गौतममब्रवीत् ।
ततः केशिन ब्रुवन्त तु गौतम इदमब्रवीत् ॥६२॥

टीका—'मग्गे य' इत्यादि ।

मार्ग=सन्मार्ग, 'च' शब्दादुन्मार्गोऽपि बोध्यः । व्याख्या पूर्ववत् ॥६२॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—कुप्पवयणपासंडी सव्वे[2] उम्मग्गपट्ठिया[3] ।

सम्मग्गं तु जिणक्खाय, एस मग्गे[1] हि उत्तमे ॥६३॥

छाया—कुप्रवचनपापण्डिन सर्वे उन्मार्गप्रस्थिता ।
सन्मार्गस्तु जिनाख्यात, एष मार्गो हि उत्तम ॥६३॥

टीका—'कुप्पवयणपासंडी' इत्यादि ।

इह लोके ये कुप्रवचनपापण्डिन=कपिलादि दर्शनानुयायिन सन्ति । ते सर्वे उन्मार्गप्रस्थिता =बहुविधापायुक्तमार्गेण प्रस्थिता सन्ति । अनेन कुप्रव-

---

मुणी ह न नस्सामि-ततो मुने अहं न नश्यामि) यही कारण है की मैं समार्ग से स्खलित नहीं हो सका हूं ॥६१॥

केशी श्रमण पूछते हैं—'मग्गे य' इत्यादि । •

वे सन्मार्ग या उन्मार्ग क्या है? तब गौतमस्वामीने उनको इस प्रकार समझाया ।६२॥

'कुप्पवयणपासंडी' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—इस लोक में (कुप्पवयणपासंडी-कुप्रवचनपाषण्डिनः) कपिल

ततो मुने अहं न नश्यामि આજ કારણ છે કે જેનાથી હું સન્માર્ગથી સ્ખલિત થઈ શકતો નથી ॥૬૧॥

કેશી શ્રમણ પૂછે છે—"मग्गे य" ઇત્યાદિ ।

એ સન્માર્ગ અને ઉન્માર્ગ શું છે? ત્યારે ગૌતમ સ્વામીએ તેને આ પ્રકારથી સમજાવ્યું ॥૬૨॥

"कुप्पवयणपासंडी" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—આ લોકમાં कुप्पवयणपासंडी-कुप्रवचनपापण्डिनः કપિલ આદિ દર્શનોના

चनानि कुपथा इत्युक्तम्। हि=यतः एष जिनोक्तो मार्गः उत्तमः=उत्कृष्टतमः= विनयमूलत्वादय जिनोक्तो मार्गः सर्वमार्गापेक्षया श्रेष्ठ इति यावत् ॥६३॥

पुनः केशी मुनिः प्राह—

मूलम्—साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥६४॥

छाया—साधु गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम्।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥६४॥

टीका—'साहु' इत्यादि। व्याख्या पूर्ववत् ॥६४॥

मूलम्—महाउदगवेगेण, वुज्झमाणाण पाणिणं।
सरणं गई पइट्ठा य, दीवं कं मन्नसी मुणी ! ॥६५॥

आदि दर्शनो के अनुयायी जितने भी हैं वे सब (उम्मग्गपट्ठिया-उन्मार्गप्रस्थिताः) उन्मार्गगामी हैं। क्यों कि ये कपिल आदि दर्शन सब कुमार्ग हैं। तथा (तु जिणमक्खायं सम्मग्ग-तु जिनाख्यातः सन्मार्गः) जिनेन्द्रद्वारा प्रतिपादित मार्ग ही एक सन्मार्ग है, क्यों कि विनयमूल होने से (एस मग्गे उत्तमे-एष मार्गो हि उत्तमः) यही सब मार्गों की अपेक्षा श्रेष्ठ मार्ग है ॥६३॥

गौतम प्रभु की इस बात को सुनकर केशी मुनि ने कहा—'साहु' इत्यादि।

हे गौतम मेरे प्रश्न का उत्तर देने के कारण आपकी प्रज्ञा बहुत ही अच्छी है। मुझे और भी संशय है अतः उसकी भी निवृत्ति आप करें ॥६४॥

અનુયાયી જેટલા છે એ બધા उम्मग्गपट्ठिया-उन्मार्गप्रस्थिता ઉન્માર્ગગામી છે કેમકે એ કપિલ આદિ દર્શન બધું કુમાર્ગ છે તથા तु जिणमक्खायं सम्मग्ग-तु जिनाख्यात सन्मार्ग જીનેન્દ્ર દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગ જ એક સન્માર્ગ છે કેમ કે, વિનયમૂળ હોવાથી एस मग्गे उत्तमे-एष मार्गो हि उत्तम આજ સઘળા માર્ગોની અપેક્ષા શ્રેષ્ઠ માર્ગ છે ॥૬૩॥

કેશી શ્રમણ —"महाउदगवेगेण" ઇત્યાદિ !

હે ગૌતમ મારા પ્રશ્નનો ઉત્તર સારી રીતે આપવાથી આપની પ્રજ્ઞા ઘણી જ ઉત્તમ છે મને બીજો પણ સંશય છે જેથી આપ તેને પણ દૂર કરો ॥૬૪॥

छाया—महोदकवेगेन, वाह्यमानानां प्राणिनाम् ।
शरणं गतिं प्रतिष्ठां च, द्वीपं कं मन्यसे मुने ? ॥६५॥

टीका—'महाउदगवेगेण' इत्यादि ।

हे मुने ! महोदकवेगेन=महत् उदकं यत्र तत् महोदकं=महास्रोतो महाप्रवाह इति यावत्, तस्य वेगेन वाह्यमानानां=नीयमानानां प्राणिनां शरणं=रक्षणक्षमं, गतिम्=आधारभूतम्, प्रतिष्ठां च=स्थिरावस्थानहेतुं द्वीपं=निरुपद्रवस्थानं कं मन्यसे ? ॥६५॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—अत्थि एगो महादीवो, वारिमज्झे महालओ ।
महाउदगवेगस्स, गई तत्थ न विज्जइ ॥६६॥

छाया—अस्ति एको महाद्वीपो, वारिमध्ये महालयः ।
महोदकवेगस्य, गतिस्तत्र न विद्यते ॥६६॥

टीका—'अत्थि' इत्यादि ।

हे भदन्त ! वारिमध्ये=जलमध्ये महालयः—महान् उच्चैस्त्वेन विस्तीर्णत्वेन च विशालः आलयः स्थानं यत्र स तथा, एको महाद्वीपोऽस्ति । तत्र=महाद्वीपे

केशीश्रमण पूछते हैं—'महा उदगवेगेण' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(मुणी-मुने) हे मुने ! 'महा उदगवेगेण—महा उदकवेगेन) महाप्रवाह के वेग से (वुज्झमाणाण पाणिण—वाह्यमानानां प्राणिनाम्) बहाये गये इन प्राणियों का (सरणं गइं पइट्टं य दीवं कं मन्नसी—शरणं गतिं प्रतिष्ठां च द्वीपं कं मन्यसे) शरण एवं आधारभूत तथा उनकी स्थिति का हेतुरूप द्वीप किसको मानते हैं ? ॥६५॥

इस केशीश्रमण के प्रश्न को सुनकर गौतमने इस प्रकार कहा 'अत्थि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे भदन्त ! (वारिमज्झे एगो महादीवो अत्थि—वारिमध्ये एको महाद्वीपो अस्ति) जल के बीच में विस्तार वाला एक महाद्वीप है । (महा

અન્વયાર્થ—मुणी-मुने હે મુનિ ! મહાપ્રવાહના વેગથી એ વેગમાં वुज्झमाणाण पाणिण—वाह्यमानानां प्राणिनाम् ખેચાયેલ આ પ્રાણીયોનું શરણ सरणं गइं पइट्टं य दीवं कं मन्नसी—शरणं गतिं प्रतिष्ठां च द्वीपं कं मन्यसे અને આધારભૂત તથા એમની સ્થિર સ્થિતિના હેતુ રૂપ દ્વીપ કેને માનો છો ? ॥૬૫॥

કેશી શ્રમણના આ પ્રશ્નને સાંભળીને ગૌતમે આ પ્રકારથી કહ્યું—"अत्थि" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત ! वारिमज्झे एगो महादीवो अत्थि—वारिमध्ये एको महाद्वीपो अस्ति જળની વચમાં વિસ્તારવાળો એક મહાદ્વીપ છે महाउदगवेगस्स गई तत्थ न विज्जइ—महाउदकवेगस्य गतिस्तत्र न विद्यते તથા વેગશાળી પ્રવાહની

चनानि कुपथा इत्युक्तम्। हि=यतः एप जिनोक्तो मार्गः उत्तमः=उत्कृष्टतमः= विनयमूलत्वात्य जिनोक्तो मार्ग सर्वमार्गापेक्षया श्रेष्ठ इति यावत् ॥६३॥

पुनः केशी मुनिः प्राह—

मूलम्—साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो ।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा ! ॥६४॥

छाया—साधु गौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम ! ॥६४॥

टीका—'साहु' इत्यादि । व्याख्या पूर्ववत् ॥६४॥

मूलम्—महाउदगवेगेणं, वुज्झमाणाण पाणिणं ।
सरणं गई पइट्ठा य, दीवं कं मन्नेसी मुणी ! ॥६५॥

आदि दर्शनों के अनुयायी जितने भी है वे सब (उम्मग्गपट्ठिया-उन्मार्ग प्रस्थिता') उन्मार्गगामी है। क्यों कि ये कपिल आदि दर्शन सब कुमार्ग हैं। तथा (तु जिणमक्खाय सम्मग-तु जिनाख्यात सन्मार्गः) जिनेन्द्रद्वारा प्रतिपादित मार्ग ही एक सन्मार्ग है, क्यों कि विनयमूल होने से (एस-मग्गे उत्तमे-एप मार्गो हि उत्तमः) यही सब मार्गों की अपेक्षा श्रेष्ठ मार्ग है ॥६३॥

गौतम प्रभु की इस बात को सुनकर केशी मुनि ने कहा—'साहु' इत्यादि ।

हे गौतम मेरे प्रश्न का उत्तर देने के कारण आपकी प्रज्ञा बहुत ही अच्छी है। मुझे और भी संशय है अतः उसकी भी निवृत्ति आप करे ॥६४॥

અનુયાયી જેટલા છે એ બધા उम्मग्गपट्ठिया-उन्मार्गप्रस्थिता ઉન્માર્ગગામી છે કેમકે એ કપિલ આદિ દર્શન બધુ કુમાર્ગ છે તથા तु जिणमक्खाय सम्मग्ग-तु जिनाख्यात सन्मार्ग જીનેન્દ્ર દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગ જ એક સન્માર્ગ છે કેમ કે, વિનયમૂળ હોવાથી एस मग्गे उत्तमे-एप मार्गो हि उत्तम આજ સઘળા માર્ગોની અપેક્ષા શ્રેષ્ઠ માર્ગ છે ॥૬૩॥

કેશી શ્રમણ —"महाउदगवेगेण" ઇત્યાદિ !

હે ગૌતમ મારા પ્રશ્નનો ઉત્તર સારી રીતે આપવાથી આપની પ્રજ્ઞા ઘણી જ ઉત્તમ છે મને બીજો પણ સંશય છે જેથી આપ તેને પણ દૂર કરો ॥૬૪॥

चतुर्गतिलक्षणे संसारसमुद्रे नीयमानानां प्राणिनां धर्मः=श्रुतचारित्रलक्षणः, द्वीपः—संसारमहोदधिवेष्टितोऽपि मुक्तिपदकारणतया धर्मो न जरामरणवेगेन प्रतिहन्तुं शक्यते। अतः स धर्मो द्वीप इव अस्ति। अत एव विवेकिनस्तमाश्रित्य तिष्ठन्तीति ततो स धर्मः प्रतिष्ठा=निश्चलं स्थानं चास्ति। जरामरणवेगेन संसारजलधौ वाह्यमानानां प्राणिनां स धर्मो गतिः=आश्रयस्थानम्। तद्भिन्नसुरक्षितस्थानाभावात् स धर्मः उत्तमः=सर्वोत्कृष्टं शरणं=रक्षणस्थानं चास्ति ॥६८॥

पुनः केशी प्राह—

मूलम्—साहु गोयम! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो।
अण्णो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा! ॥६९॥

छाया—साधु गौतम! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम्।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम! ॥६९॥

टीका—अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या। ६९॥

मानानां प्राणिनाम्) जरा, मरण रूप महाजल के प्रवाह से चतुर्गतिरूप इस संसारसमुद्र में बहाये गये प्राणियों के लिये (उत्तम सरणं—उत्तम शरणम्) उत्तम शरण स्वरूप तथा (गई—गतिः) गति रूप (पइट्ठा य—प्रतिष्ठा च) आश्रय स्थान रूप एवं ध्रुवस्थान समान एक (धम्मो दिवो—धर्मः द्वीपः) धर्म ही उत्तम द्वीप है। इस धर्म के सिवाय और दूसरा कोई सुरक्षित स्थान नहीं है ॥६८॥

केशीश्रमणने कहा—'साहु' इत्यादि।

हे गौतम! आपकी बुद्धि अच्छी है आपने मेरे संशय को दूर कर दिया है फिर भी मेरे संशय को दूर करें ॥६९॥

प्राणिनाम् જરા, મરણરૂપ મહાજળના પ્રવાહથી ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસાર સમુદ્રમાં વહેતા પ્રાણીઓને માટે उत्तमं सरणं—उत्तमं शरणम् ઉત્તમ શરણ સ્વરૂપ તથા गई—गतिः ગતિરૂપ આશ્રયસ્થાનરૂપ અને અવસ્થાન સમાન એક धम्मो दिवो—धर्मः द्विपः ધર્મ જ ઉત્તમ દ્વીપ છે આ ધર્મના पइट्ठा य—प्रतिष्ठा च સિવાય બીજું કોઈ પણ સુરક્ષિત સ્થાન નથી ॥૬૮॥

કેશી શ્રમણે કહ્યું—"साहु" ઈત્યાદિ!

હે ગૌતમ! આપની બુદ્ધિ સારી છે, આપે મારા સંશયને દૂર કરી દીધો છે છતાં પણ એક બીજા સંશયને દૂર કરો ॥૬૯॥

महोदकवेगस्य=क्षुभितपातालकलशवातेरितमहदकमस्रोतो वेगस्य गतिः= गमनं न विद्यते। महोदकप्रवाहस्तत्र गन्तुं न शक्नोतीति निरुपद्रवः स महाद्वीप इति भावः ॥६६॥

केशी प्राह--

मूलम्---दीवे य इइ के वुत्ते, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंतं तुं, गोयमो इणमब्बवी ॥६७॥

छाया---द्वीपश्च इति क उक्तः?, केशी गौतममब्रवीत्।
ततः केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥६७॥

टीका--'दीवे य' इत्यादि। व्याख्या पूर्ववत् ॥६७॥

गौतमः प्राह--

मूलम्---जरामरणवेगेणं, वुज्झमाणाण पाणिणं।
धम्मो दीवो पइट्ठा य, गई सरणमुत्तमं ॥६८॥

छाया---जरामरणवेगेन, वाह्यमानानां प्राणिनाम्।
धर्मो द्वीपः प्रतिष्ठा च, गतिः शरणमुत्तमम् ॥६८॥

टीका-- 'जरामरणवेगेण' इत्यादि।

हे भदन्त! जरामरणवेगेन=जरामरणरूपमहोदकप्रवाहेण-वाह्यमानानां=

उदगवेगस्स गई तत्थ न विज्जइ-महाउदकवेगस्य गतिस्तत्र न विद्यते) वेगशाली प्रवाह की गति वहां नहीं है। अर्थात् वह महाद्वीपरूप स्थान बिलकुल निरुपद्रव है ॥६६॥

जब गौतमस्वामी ने इस प्रकार कहा तब केशीश्रमण के चित्त मे यह बात जगी कि ऐसा वह द्वीप क्या है? अतः उन्होंने पूछा-'दीवे य' इत्यादि।

हे गौतम! वह द्वीप ऐसा कौनसा है?। तब गौतमने कहा--॥६७॥

क्या कहा सो कहते है--'जरामरणवेगेण' इत्यादि।

अन्वयार्थ---(जरामरण वेगेण वुज्झमाणाण पाणिण-जरामरणवेगेन वाह्य-

---

ગતી નથી અર્થાત્ એ મહાદ્વીપરૂપ સ્થાન બિલકુલ ઉપદ્રવ રહિત છે ॥૬૬॥

જ્યારે ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યારે કેશી શ્રમણના ચિત્તમાં એવી વાત જાગી કે, એવો એ દ્વીપ શું છે? આથી તેમણે પૂછ્યું - "દિવે ય" ઇત્યાદિ।

હે ગૌતમ! એ દ્વીપ એવો કયો છે? ત્યારે ગૌતમે કહ્યું --॥૬૭॥

શું કહ્યું તેને કહે છે--"जरामरणवेगेण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--जरामरणवेगेण वुज्झमाणाणपाणिण-जरामरणवेगेन वाह्यमानना

परतीरस्य गामिनी न भवति। सच्छिद्रत्वेनाभ्यन्तरे जलागमनाद् मध्य एव सा ब्रुडतीति भावः। या नौः निरास्राविणी=निश्छिद्रतया जलागमरहिता भवति, सा तु पारस्य गामिनी भवति ॥७१॥

केशी पृच्छति –

मूलम्—नावा य इइ का वुत्ता, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंत तु, गोयमो इणमब्बवी॥७२॥

छाया—नौरिति का उक्ता?, केशी गौतममब्रवीत्।
ततः केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत्॥७२॥

टीका—'नावा य' इत्यादि। व्याख्या पूर्ववत् ॥७२॥

जो नौका सच्छिद्र हुआ करती है वह जल भरआने के कारण (सा पारस्स गामिणी न–सा पारस्य गामिनी न) पर तीर पर नहीं पहुँच सकती है। किन्तु बीच मे ही डूब जाती है। परन्तु (जा नावा निस्साविणी–या नौ निस्राविणी) जो नौका निश्छिद्र होती है उसमे जल नही भर सकता है, अत वह बीच मे नही डूबती है और (सा उ पारस्स गामिणी–सा तु पारस्य गामिनी) वह निर्विघ्नरूप से अपर तट पर पहुँच जाती है। इस गाथा से गौतम ने केशी को ऐसा समझाया है कि हम जिस नौका पर आरूढ हो रहे है वह सच्छिद्र नौका के समान नही है किन्तु निश्छिद्र नौका के समान है। अतः वह डगमगा नहीं सकती है ॥७१॥

ऐसा सुनकर केशीश्रमण ने पूछा—'नावा य' इत्यादि।

जिस नौका पर आप चढे हुए हैं वह नौका कौनसी है तब गौतम ने इस प्रकार कहा—॥७२॥

જે નૌકા છિદ્રવાળી હોય છે, તેમા પાણી ભરાઈ જવાથી सा पारस्स गामिणी न–सा पारस्य गामिनी न કિનારે સહિસલામત રીતે પહોચી શકતી નથી અને વચમા જ ડૂબી જાય છે પરંતુ जा नावा निस्साविणी–या नौः निस्राविणी જે નૌકામા છિદ્ર નથી હોતુ તેમા થોડુ પણ પાણી ભરાઈ શકતુ નથી, જેથી તે વચમા ડૂબતી નથી અને सा उ पारस्स गामिणी–सा तु पारस्य गामिनी તે નિર્વિઘ્ને સામે કાઠે સહી સલામત પહોચી જાય છે આ ગાથાથી ગૌતમસ્વામીએ કેશી શ્રમણને એવુ સમજાવ્યુ કે, હુ જે નૌકા ઉપર ચડેલ છુ એ નૌકા છિદ્રવાળી નથી પરંતુ છિદ્ર વગરની નૌકા છે આથી તે ડગમગતી નથી ॥૭૧॥

આવુ સાભળીને કેશી શ્રમણે પૂછયુ—"नावा य" ઇત્યાદિ!

જે નૌકા ઉપર આપબેઠેલા છો એ નૌકા કઈ છે? ત્યારે ગૌતમસ્વામીએ આ પ્રકારે કહ્યુ ॥૭૨॥

मूलम्—अण्णवसि महोहंसि, नावा विपरिधावइ।
जंसि गोयममारूढो, कहं पारं गमिस्ससि ? ॥७०॥

छाया—अर्णवे महौघे, नौर्विपरिधावति।
यस्या गौतम ! आरूढः, कथ पार गमिष्यति ? ॥७०॥

टीका—'अण्णवसि' इत्यादि।

महौघे=महाप्रवाहयुक्ते अर्णवे=समुद्रे नौः विपरिधावति=इतस्ततः परिभ्रमति। हे गौतम ! यस्यां नौकायां त्वम् आरूढोऽसि=स्थितोऽसि। तया नौकया त्वं कथं=केन प्रकारेण पारं=परतीरं गमिष्यसि=यास्यसि ? ॥७०॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—जा उ अस्साविणी नावा, न सा पारस्स गामिणी।
जा निरस्साविणी नावा, सा उ पारस्स गामिणी ॥७१॥

छाया—या तु आस्राविणी नौः, न सा पारस्य गामिनी।
या निरास्राविणी नौः, सा तु पारस्य गामिनी ॥७१॥

टीका—'जा उ' इत्यादि।

या तु नौः आस्राविणी=सच्छिद्रतया जलागमसहिता भवति, सा पारस्य=

उसी संशय को कहते हैं—'अण्णवसि' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे गौतम ! (महोहसि अण्णवसि—महौघे अर्णवे) महाप्रवाह से युक्त समुद्र में (नावा विपरिधावति-नौर्विपरिधावति) नौका डगमगाने लगती है। तो आप (जसि गोयममारूढो—यस्यां गौतम आरूढ) जिस नौका पर बैठे हुए हो वह (कह पार गमिस्ससि—कथं पार गमिष्यसि) नौका आपको समुद्र के पार कैसे पहुँचा सकती है ? ॥७०॥

इस बात को सुनकर गौतम स्वामी ने इस प्रकार कहा—'जा उ' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे भदन्त ! (जा उ अस्साविणी नावा—या तु अस्राविणी नौः)

એજ સંશયને કહે છે—"अण्णवसि" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે ગૌતમ ! महोहंसि अण्णवसि—महौघे अर्णवे મહા પ્રવાહથી યુક્ત સમુદ્રમાં नावा विपरिधावति—नौर्विपरिधावति નૌકા ડગમગવા લાગે છે તો આપ गोयम जंसि आरूढो—गौतम यस्या आरूढः જે નૌકા ઉપર બેઠેલા છો તે નૌકા कहं पारं गमिस्ससि—कथं पार गमिष्यसि આપને સમુદ્રથી પાર કેવી રીતે પહોંચાડી શકશે ? ॥७०॥

આ વાતને સાંભળીને ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રકારથી કહ્યું—"जा उ" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત ! जा उ अस्साविणी नावा—यातु अस्राविणी नौ

केशी प्राह—

मूलम्—भाणू य इइ के वुत्ते, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंत तु, गोयमो इणमब्बवी ॥७७॥

छाया—भानुश्च इति क उक्तः, केशी गौतममब्रवीत्।
ततः केशिनं ब्रुवन्तं तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥७७॥

टीका—'भाणू य' इत्यादि। अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥७७॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—उग्गओ खीणसंसारो, सव्वण्णू जिणभक्खरो।
सो करिस्सइ उज्जोयं, सव्वलोयम्मि पाणिणं ॥७८॥

छाया—उद्गतः क्षीणसंसारः, सर्वज्ञो जिनभास्करः।
स करिष्यति उद्द्योतं, सर्वलोके प्राणिनाम् ॥७८॥

टीका—'उग्गओ' इत्यादि।

क्षीणसंसारः—क्षीणः—विनष्टो भवभ्रमणरूपः संसारो यस्य स तथा, अपगतभवभ्रमणः सर्वज्ञः=सर्वपदार्थवेत्ता जिनभास्करः=तीर्थकररूपः सूर्यः उद्गतः=

वाला निर्मल सूर्य उदित हो गया है। वही इस समस्त जगतवर्ती प्राणियों को प्रकाश देगा ॥७६॥

गौतमस्वामी के इस कथन को सुनकर के केशीश्रमणने उनसे पूछा—'भाणूय' इत्यादि।

हे गौतम! जिसको आप सूर्य कहते हैं वह सूर्य कौन है?। इस प्रकार केशी के पूछने पर गौतमस्वामी बोले ॥७७॥

गौतमस्वामी क्या बोले सो कहते हैं—'उग्गओ' इत्यादि।

हे भदन्त! सर्वज्ञ जिनेन्द्र देवही एक सूर्य स्वरूप है। इनका भव-

---

વાળા નિર્મળ સૂર્ય ઉગેલ છે તે આ સઘળા જગતના પ્રાણીયોને પ્રકાશ આપશે ॥૭૬॥

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રકારના કથનને સાભળીને કેશી શ્રમણે તેમને પૂછ્યુ 'भाणू य' ઈત્યાદિ।

હે ગૌતમ! જેને આપ સૂર્ય કહો છો, એ સૂર્ય કોણ છે? આ પ્રમાણે કેશી શ્રમણના પૂછવાથી ગૌતમસ્વામીએ કહ્યુ ॥૭૭॥

ગૌતમસ્વામીએ શુ કહ્યુ તેને કહે છે—"उग्गओ" ઈત્યાદિ।

હે ભદન્ત! સર્વજ્ઞ જીનેન્દ્ર દેવજ એક સૂર્ય સ્વરૂપ છે તેમનો ભવભ્રમણરૂપ

मिति, अन्धकारस्तस्मिन् तथा भूते तमसि=गाढान्धकारे बहवः प्राणिनः तिष्ठन्ति= वर्तन्ते। एवंविधानां प्राणिनां कृते सर्वलोके=सर्वस्मिन् जगति कः उद्द्योत=प्रकाशं करिष्यति ॥७५॥

गौतमः प्राह—

मूलम्—उग्गओ विमलो भाणू, सव्वलोगप्पहकरो ।
सो करिस्सइ उज्जोयं, सव्वलोयम्मि पाणिणं ॥७६॥

छाया—उद्गतो विमलो भानुः, सर्वलोकप्रभाकरः ।
स करिष्यति उद्द्योतं, सर्वलोके प्राणिनाम् ॥७६॥

टीका—'उग्गओ' इत्यादि।

हे भदन्त ! सर्वलोकप्रभाकरः=सकललोकप्रकाशकरो विमलो भानुः सूर्यः उद्गतः=उदितः। स सर्वलोके=समस्ते जगति प्राणिनाम् उद्द्योतं=प्रकाशं करिष्यति ॥७६॥

उसी संशय को कहते हैं—'अंधयारे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—हे गौतम ! चक्षु की प्रवृत्ति के निरोधक होने के कारण अंधा जैसा बना देने वाले (घोरे अंधयारे तमे-घोरे अन्धकारे तमसि) भयंकर गाढ अंधकार में बहु (पाणिणो चिट्ठति-बहवः प्राणिनः तिष्ठन्ति) अनेक संसारी जीव पड़े हुवे हैं सो (पाणिणं सव्वलोगम्मि को उज्जोअं करिस्सइ-प्राणिनाम् सर्वलोके कः उद्योतं करिष्यति) इनके लिये संसार में प्रकाश कौन करेगा ॥७५॥

केशी श्रमण के इस प्रकार प्रश्न को सुनकर गौतम स्वामी ने कहा—'उग्गओ' इत्यादि।

हे भदन्त ! सर्व लोक को अपनी विमलप्रभा से प्रकाशित करने

તે સંશયને કહે છે—"अंधयारे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—હે ગૌતમ ! આંખની પ્રવૃત્તિના નિરોધક હોવાના કારણે આંધળા જેવા બનાવી દેનાર घोरे अंधयारे तमे-घोरे अन्धकारे तमसि ગાઢ અંધકારમાં बहु पाणिणो चिट्ठति-बहवः प्राणिनः तिष्ठति અનેક સંસારી જીવ પડેલ છે તો पाणिणं सव्वलोगम्मि को उज्जोअं करिस्सइ-प्राणिनाम् सर्वलोके कः उद्योतं करिष्यति તેમને માટે સંસારમાં પ્રકાશ કોણ કરશે ? ॥૭૫॥

કેશી શ્રમણના આ પ્રકારના પ્રશ્નને સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ કહ્યું—"उग्गओ" ઇત્યાદિ !

હે ભદન્ત ! સઘળા લોકોને પોતાની ઉજ્વળ પ્રભાના વિમળ પ્રકાશથી ઉજ્વળ કરવા

व ध्यमानाना=पीडयमानाना=जीवाना क्षम=व्या यादि रहित, शिव=सर्वोपद्रव रहितम्, अनाबाध=पीडावर्जित च स्थान किं मन्यसे=अवबुध्यसे? 'सारीर-माणसे दुक्ख' इत्यत्र तृतीयार्थे प्रथमा ॥८०॥

गौतमः प्राह—

मूल—अत्थि एगं धुवं ठाण लोगग्गमि दुरारुह ।
जत्थ नत्थि जरामच्चू, वाहिणो वेयणा तहा ॥८१॥

छाया—अस्ति एक ध्रुव स्थान लोकाग्र दुरारोहम् ।
यत्र नस्तो जरामृत्यू, व्याधयो वेदनास्तथा ॥८१॥

टीका—'अत्थि' इत्यादि ।

लोकाग्रे=चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्याग्रभागे एकम्=अद्वितीय दुरारोह= दुःखेनारुह्यते यत् तत् दुर्लभेन सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रयेण आरोढु शक्य ध्रुव=

ण पाणिण—शारीरमानसैर्दुःखै' ब ध्यमानाना प्राणिनाम्) शारीरिक एव मानसिक दुःखों से बाध्यमान ससारी जीवों का (खेम सिवमणाबाह ठाण किं मन्नसी—क्षेम शिवमनाबाध स्थानं किं मन्यसे) आधि व्याधि से रहित, सर्व उपद्रवो से विहीन तथा दुःखवर्जित स्थान कौनसा है ॥८०॥

केशी श्रमण के इस प्रश्न को सुनकर गौतमस्वामी ने कहा—'अत्थि' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—हे भदन्त! चौदह १४ राजु प्रमाण ऊँचे इस (लोगग्गमि दुरारोह धुवं ठाण अत्थि—लोकाग्रे दुरारोह ध्रुव स्थान अस्ति) लोक के अग्रभाग मे एक दुरारोह स्थान है। जो प्राणी सम्यग्दर्शन आदि रत्नत्रय से युक्त हो जाते है वे ही इसको प्राप्त कर सकते ह अन्य नही, इसी लिये

पाणिण—शारीरमानसैर्दुःखैः ब ध्यमानाना प्राणिनाम् शारीरिक अने मानसिक दुःखोथी બાધાઇ રહેલ એવા સંસારી જીવોને खेम सिवमणाबाह ठाण किं मन्नसी—क्षेम शिवमनाबाध स्थान किं मन्यसे આધિ વ્યાધિથી રહિત એવું સર્વ ઉપદ્રવોથી વિહીન તથા દુઃખવર્જીત સ્થાન આપે કયુ માનેલ છે? ॥૮૦॥

કેશી શ્રમણના આ પ્રશ્નને સાભળીને ગૌતમસ્વામીએ કહ્યું—" अत्थि " ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—હે ભદન્ત! लोगग्गम्मि दुरारोह धुव ठाण अत्थि—लोकाग्रे दुरारोह ध्रुव स्थान अस्ति ચૌદ રાજુ પ્રમાણ ઉંચા આ લોકના અગ્રભાગમાં એક મહેનતથી પહોચાય તેવુ સ્થાન છે જે પ્રાણી સમ્યગ્ દર્શન આદિ રત્નત્રયથી યુક્ત થઈ જાય છે એજ આને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, બીજા કોઈ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી આ કારણથી

उदित.। स जिनभास्करः सर्वलोके=चतुर्दशरज्ज्वात्मके समस्ते जगति प्राणिनाम् उद्योत=प्रकाश करिष्यति ॥७८॥

केशीमुनि माह--

मूलम्--साहु गोयम! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो।
अन्नो वि संसओ मज्झं, तं मे कहसु गोयमा! ॥७९॥

छाया--साधु गौतम! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम्।
अन्योऽपि संशयो मम, तं मे कथय गौतम! ॥७९॥

टीका--'साहु गोयम!' इत्यादि--अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥७९॥

मूलम्--सारीरमाणसे दुक्खे, वज्झमाणाण पाणिणं।
खेमं सिवमणाबाहं, ठाणं किं मन्नसी मुणी ॥८०॥

छाया--शारीरमानसैर्दुःखै, बाध्यमानानां प्राणिनाम्।
क्षेमं शिवमनाबाधं, स्थानं किं मन्यसे मुने? ॥८०॥

टीका--'सारीरमाणसे' इत्यादि।

हे मुने! शारीरमानसैः=शरीरसम्बन्धिभिः मनःसम्बन्धिभिश्च दुःखैः

भ्रमणरूप संसार नष्ट हो चुका है। ये सूर्य ही चौदह १४ राजुप्रमाण इस समस्त लोकवर्ती प्राणियों के अज्ञानांधकार को नष्ट कर उनको उद्योत प्रदान करते हैं ॥७८॥

गौतमस्वामी के इस कथन को सुनकर केशीश्रमण ने कहा 'साहु' इत्यादि।

हे गौतम! आपकी बुद्धि अच्छी है। आपने मेरा संशय दूर कर दिया है परन्तु और भी मेरे को संशय है उसको आप दूर करें ॥७९॥

केशीश्रमण अपने संशय को कहते हैं--'सारीरमाणसे' इत्यादि।

अन्वयार्थ--(मुणी-मुने) हे मुनिराज! (सारीरमाणसे दुक्खे वज्झमाणा

સંસાર નાશ પામેલ છે એ સૂર્ય જ ચૌદ રાજુ પ્રમાણ આ સઘળા લોકવર્તી પ્રાણીઓના અજ્ઞાન અને અંધકારનો નાશ કરી તમને અજવાળુ આપે છે ।૭૮॥

ગૌતમસ્વામીના આ પ્રકારના કથનને સાંભળીને કેશી શ્રમણે કહ્યું—" साहु " ઈત્યાદિ !

હે ગૌતમ! આપની બુદ્ધિ સારી છે આપે મારા સંશયને દૂર કરેલ છે પરંતુ હજુ પણ મારા મનમાં એક સંશય છે તેને પણ આપ દૂર કરો ॥૭૯॥

કેશી શ્રમણ પોતાના એ સંશયને કહે છે—" सारीरमाणसे " ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—मुणी-मुने હે મુનિરાજ सारीरमाणसे दुक्खे वज्झमाणाण

छाया—निर्वाणमिति अबाधमिति, सिद्धि र्लोकाग्रमेव च ।
क्षेमं शिवमनाबाधं, यच्चरन्ति महर्षयः ॥८३॥

टीका—'निव्वाणंति' इत्यादि ।

हे भदन्त ! निर्वाणमिति=निर्वान्ति-कर्मानलविध्यापनात् शीतीभवन्ति जन्तवो यस्मिंस्तत्-निर्वाण-निर्वाणमिति नाम्ना प्रसिद्धम्, अबाधमिति=नास्ति बाधा=शरीरमनः-सम्बन्धिनी पीडा यत्र तत् अबाधम्, अबाधमिति नाम्ना प्रसिद्धम्, सिद्धि'=सिध्यन्ति=निष्ठितार्था भवन्ति जन्तवोऽस्यामिति सिद्धि , सिद्धिरिति नाम्ना प्रसिद्धम्, लोकाग्र=लोकाग्रस्थानस्थितत्वात् लोकाग्रमिति नाम्ना प्रसिद्धम्, च=पुन क्षेमम्-क्षेमस्य=शाश्वतसुखस्य कारणत्वात् क्षेममिति नाम्ना प्रसिद्धम् शिवम्-उपद्रवाभावात् शिवमिति नाम्ना प्रसिद्धम् अनाबाधम्=न विद्यते आबाधा=जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका यत्र तदनाबाधम्-अनाबाधमिति नाम्ना प्रसिद्ध च यत्स्थानमस्ति, यच्च स्थान महर्षयो-महामुनयः चरन्ति=गच्छन्ति । एवकारः पूरणे चकार समुच्चये, अस्या अग्रिमगाथया सह सम्बन्ध ॥८३॥

पुनस्तदेव स्थान विशिनष्टि—

मूलम्—तं ठाणं सासयवासं, लोगग्गम्मि दुरारुहं ।
जं संपत्ता न सोयंति, भवोहंतकरा मुंणी ॥८४॥

छाया—तत्स्थानं शाश्वतवासं, लोकाग्रे दुरारोहम् ।
यत् सम्प्राप्ता न शोचन्ति, भवौघान्तकरा मुनयः ॥८४॥

टीका—'तं ठाणं' इत्यादि ।

लोकाग्रे=चतुर्दशरज्ज्वात्मकस्य लोकस्याग्रभागे स्थितं दुरारोहं=दुःखापेण सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रयेण आरोढुं शक्यं शाश्वतवासं=शाश्वतो वासः=स्थितिर्यत्र तत्तथाभूतम्-

---

केशीश्रमण के इस कथन को सुनकर गौतमस्वामी ने उनसे ऐसा कहा—'निव्वाणंति' इत्यादि ।

हे भदन्त ! निर्वाण, अबाध, सिद्धि, लोकाग्र, क्षेम, शिव एवं अनाबाध इन समस्त नामों से जो स्थान प्रसिद्ध है। तथा जिस स्थान को महामुनिजन ही प्राप्त करते हैं ॥८३॥

કેશી શ્રમણના આ પ્રશ્નને સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું 'निव्वाणंति' ઇત્યાદિ !

હે ભદન્ત ! નિર્વાણ, અબાધ, સિદ્ધિ, લોકાગ્ર ક્ષેમ, શિવ, અને અનાબાધ આ સઘળા નામોથી એ સ્થાનને મહામુનિ જનો જ પ્રાપ્ત કરે છે ॥૮૩॥

निश्चल स्थानमस्ति। यत्र स्थाने जरामृत्यू नस्त', तथा व्याधयो=रोगा वेदनाः= शारीरमानसवेदनाश्च न सन्ति ॥८१॥

केशी पृच्छति—

मूलम्—ठाणे य इइ के वुत्ते ?, केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंत तु, गोयमो इणमब्बवी ॥८२॥

छाया—स्थान च इति किम् उक्त, केशी गौतममब्रवीत्।
तत केशिन ब्रुवत तु, गौतम इदमब्रवीत् ॥८२॥

टीका—'ठाणे य' इत्यादि। अस्या व्याख्या पूर्ववद् बोध्या ॥८२॥

गौतम माह—

मूलम्—निव्वाण ति अवाहंति, सिद्धीलोगग्गमेव यं।
खेमं सिवंमणावाहं, जं चरंति महेसिणो ॥८३॥

इसको दुरारोह कहा गया है। यह स्थान असाधारण है। क्यों कि इसके जैसा और कोई दूसरा स्थान नहीं है। जीव को एक बार प्राप्त होने पर फिर इसका वियोग नहीं होता है अतः यह ध्रुव है। (जत्थ जरा मच्चू तहा वाहिणो वेयणा नत्थि-यत्र जरामृत्यू व्याधय' तथा वेदना नास्ति) इसमे पहुँचे हुए जीवों को जरा और मृत्यु का सामना किसी भी समय मे नहीं करना पडता है। रोग तथा वेदनाओं का इसमे सर्वथा अभाव रहता है ॥८१॥

गौतमस्वामी के इस कथन को सुनकर केशीश्रमण ने उनसे पूछा—'ठाणे य' इत्यादि।

आपने जिस स्थान को कहा है ऐसा वह स्थान कौनसा है ॥८२॥

એને મહા મહેનતથી પહોચી શકાય તેવુ (દુરારોહ) સ્થાન કહેવામા આવેલ છે એ સ્થાન અસાધારણ છે કારણ કે, તેના જેવુ બીજુ કોઇ પણ સ્થાન નથી જીવને એ એક વખત પ્રાપ્ત થયા પછી ફરીથી તેનો વિયોગ થતો નથી જેથી તે ધ્રુવ છે જત્થ જરામચ્ચૂ તહા વાહિણો વેયણા નત્થિ-યત્ર જરામૃત્યૂ વ્યાધય તથા વેદના નાસ્તિ તેની અદર પહોચેલા જીવને જરા અને મૃત્યુનો સામનો કોઇ પણ સમયે કરવો પડતો નથી રોગ અને વેદનાઓનો તેમા સપૂર્ણ પણે અભાવ છે ॥૮૧॥

ગૌતમસ્વામીના આ પ્રકારના કથનને સાભળીને કેશી શ્રમણે તેમને પૂછ્યુ—"ઠાણે ય" ઇત્યાદિ!

આપે જે સ્થાનને કહેલ છે એવુ તે સ્થાન કયુ છે ? ॥૮૨॥

कलानुष्ठानस्य धर्मस्य च शिक्षाव्रतरूपत्वादात, तद्विषय प्रथमः प्रश्न १। सकला नुष्ठानानि लिङ्गत पालयानीति ततो लिङ्गविषये द्वितीयः प्रश्न २। लिं सत्यप्यनिर्जितेष्वात्मादिशत्रुषु न शक्यन्तेऽनुष्ठानानि सुखेन पालयितुम्, अत शत्रुजयविषये तृतीयः प्रश्नः ३। तेषु शत्रुष्वपि कषाया एवोत्कटा स्तदात्मकाश्च

गण कृत कृत्य बन जाते है इससे "सिद्धि" भी इसका एक नाम है। यह स्थान ठीक लोक के अग्रभाग मे स्थित है अत 'लोकाग्र' भी इसका एक नाम हो गया है। शाश्वतसुख का कारण होने से "क्षेम" उपद्रवों का अभाव होने से "शिव", जन्म, जरा, मरण, क्षुधा एव पिपासा आदि की यहा पर जीवों को बाधा नही होती है इससे इसको "अबाध" कहा गया है। यहा का निवास नित्य होने से "शाश्वतवास" कहा गया है। केशी कुमार श्रमणने ये जो सब बारह १२ प्रश्न अनुक्रम से किये है उनका अभिप्राय इस प्रकार है—जितने भी अनुष्ठान होते है वे सब धर्म के लिये होते है तथा धर्म शिक्षाव्रतरूप है इस लिये उसके विषय मे केशीश्रमण ने सर्व प्रथम "चाउज्जामो य धम्मो" इत्यादि से धर्म विषयक प्रश्न किया है।१। सकल अनुष्ठानों को पालन करने का कोई न कोई लिंग अवश्य हुआ करता है, इसलिये इसी अपेक्षा से "अचेलगो य" इत्यादि से लिङ्ग विषयक द्वितीय प्रश्न किया है।२। लिङ्ग धारण कर भी लिया परतु यदि आत्मादिक शत्रुओं पर विजय प्राप्त न की जावे तो अनुष्ठानो का मलिन सम्यक् प्रकार से नहीं हो सकता

પણ કહેવામા આવેલ છે એને પ્રાપ્ત કરીને પ્રાણીગણ કૃત કૃત્ય બની જાય છે આથી 'સિદ્ધિ' પણ એનુ એક નામ છે એ સ્થાન ઠીક લોકના અગ્રભાગમા સ્થિત છે આથી "લોકાગ્ર" પણ એનુ એક નામ થઈ ગયેલ છે શાશ્વત સુખનુ કારણ હોવાથી "ક્ષેમ" ઉપદ્રવોના અભાવ હોવાથી "શિવ" જન્મ, જરા, મરણ ભૂખ અને તરસ આદિની ત્યા જીવોને બાધા થતી નથી આથી તેને 'અબાધ' કહેવામા આવે છે ત્યાનો નિવાસ નિત્ય હોવાથી "શાશ્વતવાસ" કહેવામા આવેલ છે કેશી કુમાર શ્રમણે આ જે સઘળા ૧૨ બાર પ્રશ્નો અનુક્રમથી કહેલ છે તેનો અભિપ્રાય આ પ્રકારનો છે—જેટલા પણ અનુષ્ઠાન હોય છે તે સઘળા ધર્મના માટે જ હોય છે તથા ધર્મ શિક્ષાવ્રત રૂપ છે આથી તેના વિષયમા કેશી શ્રમણે સહુથી પહેલા "ચાઉજ્જામો ય ધમ્મો" ઇત્યાદિથી ધર્મ વિષયક પ્રશ્ન કહેલ છે ।૧। સઘળા અનુષ્ઠાનોને પાલન કરવામા કોઈને કાઈ લિંગ અવશ્ય હોય છે આ માટે એજ અપેક્ષાથી "અચેલગો ય" ઇત્યાદિથી લિંગ વિષય બીજો પ્રશ્ન કરેલ છે ।૨। લિંગ ધારણ કરી પણ લીધુ પરંતુ જો આત્માદિક શત્રુઓ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામા ન આવે તો અનુષ્ઠાનો સંપૂર્ણ સમ્યક પ્રકારથી થઈ

अपुनरावृत्तिकमित्यर्थः, एतादृश तत्स्थानम् अस्ति। भवौघान्तकरा'-भवौघा'= जन्मपरम्परा तस्य अन्तकराः=उच्छेदका मुनयो यत्=स्थान सम्प्राप्ता.=समधि गताः न शोचन्ति=शोकभाजो न कदाचिदपि भवन्ति। 'सासय' इत्यत्र मकारो आर्षत्वात्। केशिना हि द्वादश प्रश्ना क्रमानुसारेण कृताः। तथाहि-धर्मार्थत्वात्स

फिर उसी स्थान को कहते हैं—'त ठाण' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(त ठाण-त स्थान) ऐसे उस स्थान मे प्राप्त हुए जीव का (सासय वास-शाश्वतवास) वास शाश्वत रहा करता है। वह स्थान (लोगग्गम्मि-लोकाग्रे) लोक के अग्रभाग में है। तथा (दुरारुह-दुरारोहम्) दुरारोह है। सम्यग्दर्शन आदि रत्नत्रय द्वारा ही जीवों को यह प्राप्त होता है। (भवोहतकरा मुणी-भवौघान्तकरा मुनयः) जन्म परम्परा का अत करने वाले मुनिजन (ज सपत्ता न सोयति-यत् सम्प्राप्ता न शोचन्ति) इस स्थानपर आकर फिर शोक से कभी लिप्तनहीं होते हैं।

इस स्थान को निर्वाण आदि नामों से जो कहा गया है उन नामो का उस स्थान के साथ सम्बन्ध इस प्रकार से जानना चाहिये— इस स्थान को प्राप्त कर प्राणी कर्मरूप अग्नि के इकदम बुझ जाने से बिल्कुल शीतीभूत हो जाते है इसलिये इसको "निर्वाण" इस नामसे सबोधित किया गया है। शारीरिक एव मानसिक बाधा जीवों को यहां नहीं होती है क्यों कि इन दोनों का यहा सर्वथा अभाव हो जाता है अतः इसको "अबाध" ऐसा भी कह दिया गया है। इस को पाकर प्राणि

ફરીથી એ જ સ્થાનને કહે છે—"त ठाण" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—त ठाण-त स्थान એવા સ્થાનને પ્રાપ્તકરેલ જીવનો सासय वास-शाश्वतवास વાસ શાશ્વત રહ્યા કરે છે આ સ્થાન लोगग्गम्मि-लोकाग्र લોકોના અગ્ર ભાગમા છે તથા दुरारुह-दुरारोहम् દુરારોહ છે સમ્યગ્ દર્શન આદિ રત્નત્રય દ્વારાજ એ જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે भवोहतकरा मुणी-भवौघान्तकरा मुनयः જન્મપર પરાનો અત કરવાવાળા મુનિજન ज सपत्ता न सोयति-यत् सम्प्राप्ता न शोचन्ति એ સ્થાન ઉપર પહોંચીને પછી શોકમા કદી પણ લિપ્ત થતા નથી

એ સ્થાનને નિર્વાણ આદિ નામોથી જે કહેવામા આવેલ છે એ નામોનો એ સ્થાનની સાથેનો સબધ આ પ્રકારથી જાણવો જોઈએ

એ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરીને પ્રાણી કર્મરૂપી અગ્નિ એકદમ બુઝાઇ જવાથી બિલ કુલ શીતીભૂત થઇ જાય છે આ કારણે એને "નિર્વાણ" આ નામથી સબોધિત કરવામા આવે છે શારીરિક તેમજ માનસિક બાધા જીવોને એ સ્થાનમા થતી ન કેમકે એ બન્નેનો ત્યા સપૂર્ણપણે અભાવ થઇ જાય છે આથી એને "અબાધ" એવુ

कलानुष्ठानस्य धर्मस्य च शिक्षाव्रतरूपत्वादात, तद्विषय प्रथमः प्रश्न १। सकला नुष्ठानानि लिङ्गत. पालयानीति ततो लिङ्गविषये द्वितीय प्रश्न २। लि सत्यप्यनिर्जितेष्वात्मादिशत्रुषु न शक्यन्तऽनुष्ठानानि सुखेन पालयितुम्, अत शत्रुजयविषये तृतीय. प्रश्नः ३। तेषु शत्रुष्वपि कषाया एवोत्कटा स्तदात्मकोच

गण कृत कृत्य बन जाते है इससे "सिद्धि" भी इसका एक नाम है। यह स्थान ठीक लोक के अग्रभाग मे स्थित है अत 'लोकाग्र' भी इसका एक नाम हो गया है। शाश्वतसुख का कारण होने से "क्षेम" उपद्रवों का अभाव होने से "शिव", जन्म, जरा, मरण, क्षुधा एव पिपासा आदि की यहा पर जीवों को बाधा नही होती है इसमे इसको "अबाध" कहा गया है। वहा का निवास नित्य होने से "शाश्वतवास" कहा गया है। केशी कुमार श्रमणने ये जो सब बारह १२ प्रश्न अनुक्रम से किये है उनका अभिप्राय इस प्रकार है—जितने भी अनुष्ठान होते है वे सब धर्म के लिये होते है तथा धर्म शिक्षाव्रतरूप है इस लिये उसके विषय मे केशीश्रमण ने सर्व प्रथम "चाउज्जामो य धम्मो" इत्यादि से धर्म विषयक प्रश्न किया है।१। सकल अनुष्ठानों को पालन करने का कोई न कोई लिङ्ग अवश्य हुआ करता है, इसलिये इसी अपेक्षा से "अचेलगो य" इत्यादि से लिङ्ग विषयक द्वितीय प्रश्न किया है।२। लिङ्ग धारण कर भी लिया परन्तु यदि आत्मादिक शत्रुओं पर विजय प्राप्त न की जावे तो अनुष्ठानों का पालन सम्यक् प्रकार से नही हो सकता

પણ કહેવામા આવેલ છે એને પ્રાપ્ત કરીને પ્રાણીગણ કૃત કૃત્ય બની જાય છે આથી 'સિદ્ધિ' પણ એનુ એક નામ છે એ સ્થાન ઠીક લોકના અગ્રભાગમા સ્થિત છે આથી "લોકાગ્ર" પણ એનુ એક નામ થઈ ગયેલ છે શાશ્વત સુખનુ કારણ હોવાથી "ક્ષેમ" ઉપદ્રવોનો અભાવ હોવાથી "શિવ" જન્મ, જરા, મરણ ભૂખ અને તરસ આદિની ત્યા જીવોને બાધા થતા નથી આથી તેને 'અબાધ' કહેવામા આવે છે ત્યાનો નિવાસ નિત્ય હોવાથી "શાશ્વતવાસ" કહેવામા આવેલ છે કેશી કુમાર શ્રમણે આ જે સઘળા ૧૨ બાર પ્રશ્નો અનુક્રમથી કહેલ છે તેનો અભિપ્રાય આ પ્રકારનો છે—જેટલા પણ અનુષ્ઠાન હોય છે તે સઘળા ધર્મના માટે જ હોય છે તથા ધર્મ શિક્ષાવ્રત રૂપ છે આથી તેના વિષયમા કેશી શ્રમણે સહુથી પહેલા "चाउज्जामो य धम्मो" ઇત્યાદિથી ધર્મ વિષયક પ્રશ્ન કહેલ છે ।૧। સઘળા અનુષ્ઠાનોને પાલન કરવામા કોઈને કોઈ લિંગ અવશ્ય હોય છે આ માટે એજ અપેક્ષાથી "अचेलगो य" ઇત્યાદિથી લિંગ વિષય બીજો પ્રશ્ન કરેલ છે ।૨। લિંગ ધારણ કરી પણ લીધુ પરતુ જો આત્માદિક શત્રુઓ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામા ન આવે તો અનુષ્ઠાનો સપૂર્ણ સમ્યક પ્રકારથી થઈ

रागद्वेषौ, अतस्तद्रूपपाशच्छेदनविषये चतुर्थः प्रश्नः ४। तत्रापि लोभ एव दुरन्तः, अतो लोभरूपलतोच्छेदनविषये पञ्चमः प्रश्नः ५ लोभरूपलतोच्छेदोऽपि न कषायरूपाग्निनिर्वापणं विना संभवति, अतोऽग्निनिर्वापणविषये षष्ठः प्रश्नः ६। तन्निर्वापणं मनस्यनिगृहीते न संभवति, अतो दुष्टाश्वनिग्रहविषये सप्तमः प्रश्नः ७। मनोरूपदुष्टाश्वनिग्रहे कृतेऽपि सम्यङ्मार्गपरिज्ञानं विना न संभवति स्वाभिमतमोक्षरूपपदप्राप्तिरिति सम्यङ्मार्गविषये अष्टमः प्रश्नः ८।

है अतः तृतीय प्रश्न 'अणेगाणसहस्साण' इत्यादि से भाव शत्रु जय के विषय मे किया गया है। ।३। शत्रुओं मे सब से प्रबल शत्रु इस आत्मा के लिये उत्कट कषाय तथा कषायात्मक रागद्वेष हैं, इसलिये छेदन के विषय मे 'दीसति' इत्यादि से चतुर्थ प्रश्न हुआ है ।४। लोभ कषाय दुरन्त है इसलिये पंचम प्रश्न में इस लोभरूप कषाय को उखाडने की बात 'अतो हिययसंभूया' इत्यादि से पूछी गई है ।५। लोभ कषाय का उच्छेद भी कषायरूप अग्नि के निर्वापण विना संभवित नहीं होता है इसलिये षष्ठ प्रश्न मे अग्नि के रूपक द्वारा उसके निर्वापण के विषय में 'संपज्जलिया घ' इत्यादि से प्रश्न किया गया है। ।६। अग्नि का निर्वापण जब तक मन निगृहीत नहीं होता है तब तक नहीं हो सकता है इसलिये मनरूप दुष्ट अश्व के निग्रह के विषय में 'अयं साहसिओ' इत्यादि से सप्तम प्रश्न हुआ है ।७। जबतक भले मार्ग का परिज्ञान नहीं हो जाता है तबतक मनरूप दुष्ट अश्व का निग्रह होने पर भी जीवों

શકતા નથી આથી ત્રીજો પ્રશ્ન "अणेगाणसहस्साण" ઇત્યાદિથી ભાવ શત્રુ જયના વિષયમાં કરાયેલ છે ।।૩।। શત્રુઓમાં સહુથી પ્રબળ શત્રુઓ આત્મા માટે ઉત્કટ કષાય તથા કષાયાત્મક રાગ દ્વેષ છે આ કારણે છેદના વિષયમાં 'दीसति' ઇત્યાદિ ચોથો પ્રશ્ન થયેલ છે ।૪। લોભ કષાય દુરન્ત છે, આ કારણે પાંચમા પ્રશ્નમાં આ લોભ રૂપ કષાયને ઉખેડવાની વાત "अतो हिययसंभूया" ઇત્યાદિથી પૂછવામાં આવેલ છે ।૫। લોભ કષાયનો ઉચ્છેદ પણ કષાય રૂપ અગ્નિના નિર્વાણ વગર સંભવિત હોતો નથી આથી છઠ્ઠા પ્રશ્નમાં અગ્નિના રૂપક દ્વારા તેના નિર્વાણ પણાના વિષયમાં "संपज्जलिया घ" ઇત્યાદિથી પ્રશ્ન કરવામાં આવેલ છે ।૬। અગ્નિનું નિર્વાપણ જ્યાં સુધી મન નિગ્રહિત થતું નથી ત્યાં સુધી થઇ શકતું નથી આ કારણે મન રૂપ દુષ્ટ અશ્વના નિગ્રહના વિષયમાં "अयं साहसिओ" ઇત્યાદિથી સાતમો પ્રશ્ન થયેલ છે જ્યાં સુધી સીધા માર્ગનું પરિજ્ઞાન થઇ જતું નથી ત્યાં સુધી મનરૂપ દુષ્ટ અશ્વનો નિગ્રહ થવા છતાં પણ જીવોને સ્વાભિમત મોક્ષરૂપની

सम्यङ्मार्गत्व जिनप्रणीतधर्म एवेति नवम प्रश्नः ९। तस्यैव सन्मार्गत्व स्थापनाय महोदकवेगनिवारणविषये तत्र धर्मे दृढतोत्पादनाय ससाररूप समुद्रपारगमनविषये दशम प्रश्नः। अथ यदि जिनप्रणीतधर्मएव सम्यङ् मार्गस्तर्हि किमन्येऽपि न तथा वदन्तीत्याशङ्क्य तेषामज्ञत्वख्यापनार्थं तमोवि- घटनविषये एकादशः प्रश्नः ११। एवमपि किमनेन सम्यङ्मार्गेण मोक्षरूप स्थानप्राप्तिः सभावनाऽस्ति ? इति शङ्कानिरासाय स्थानविषये द्वादशः प्रश्नः १२। एव द्वादशाना प्रश्नाना समन्वयो बोध्यः ॥८४॥

को स्वाभिमत मोक्षरूप पद की प्राप्ति नहीं हो सकती है इसलिये सम्यक् मार्ग के विषय मे "कुप्पहा" इत्यादि से अष्टमप्रश्न किया गया है ॥८॥ वह सम्यक् मार्ग जिन प्रणीत धर्म को ही हो सकता है अन्य नहीं इस विषय स्पष्ट करने के लिये 'महाउदगवेगेण' इत्यादि से नवम प्रश्न किया गया है।९। जिनप्रणीतधर्म मे ही सन्मार्गता है यह स्थापन करने के लिये तथा उसी में महोदक वेग को निवारण करने की शक्ति है इस बात को बताने के लिये तथा उसी धर्म मे दृढता धारण करनी चाहिये-क्यो कि वही ससाररूप समुद्र से पार कराने मे शक्त है इस बात को पुष्ट करने के लिये यह 'अण्णवसि' इत्यादि से दशमा प्रश्न किया गया है।१०। 'अधयारे' इत्यादि से ग्यारहवा प्रश्न यह स्पष्ट करता है कि-जिन प्रणीत धर्म ही एक सम्यक् मार्ग है परतु अन्य तीर्थिक जन इस विषय को जो नहीं मानते है, सो उनकी यह अज्ञानता है। उनका यह अज्ञान रूप तम इसी मार्ग के आश्रयण करने से नष्ट हो सकता है।११।

પ્રાપ્તિ થઇ શકતી નથી આથી સમ્યક્ માર્ગના વિષયમા "कुप्पहा" ઇત્યાદિથી આઠમો પ્રશ્ન કરેલ છે ॥૮॥ તે સમ્યક્ માર્ગ જીન પ્રણીત ધર્મ જ હોઇ શકે છે બીજો નહી આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે "महा उदगवेगेण" ઇત્યાદથી નવમો પ્રશ્ન કરેલ છે ।૯। જીન પ્રણીત ધર્મમા જ સન્માર્ગતા છે આની સપૂર્ણ સમજુતિ માટે તથા એમા જ મહોદક વેગનુ નિવારણ કરવાની શક્તિ છે આ વાતને બતાવવા માટે એક જ ધર્મમા દૃઢતા ધારણ કરવી જોઇએ કેમકે, તે સસાર સમુદ્રથી પાર કરાવવામા શક્તિશાળી છે આ વાતને પુષ્ટ કરવા માટે આ "अण्णवसि" ઇત્યાદિથી દસમો પ્રશ્ન કરવામા આવેલ છે ॥૧૦॥ "अधयारे" ઇત્યાદિથી અગ્યારમો પ્રશ્ન એ સ્પષ્ટ કરે કરે છે કે, જીનપ્રણીત ધર્મ જ એક સમ્યક્ માર્ગ છે પરતુ અન્ય તીર્થિક જન જેઓ આ વિષયને માનતા નથી તે એમની અજ્ઞાનતા છે એમનુ એ અજ્ઞાન રૂપ તમ (અધારૂ) આજ માર્ગનો આશ્રય કરવાથી નષ્ટ થઈ શકે છે ।૧૧।

एव गौतमनोक्ते केशी मुनि' प्राह—

मूलम्—साहु गोयम ! पण्णा ते, छिन्नो मे संसओ इमो ।
नमो ते संसयाईय!, सव्वंसुत्तमहोदही ! ॥८५॥

छाया—साधुगौतम ! प्रज्ञा ते, छिन्नो मे संशयोऽयम् ।
नमस्ते संशयातीत !, सर्वसूत्रमहोदधे ! ॥८५॥

टीका—'साहु' इत्यादि—

हे गौतम ! ते प्रज्ञा साधु =शोभना अस्ति । मे=मम अय सशय, छिन्नः । हे सशयातीत !=हे सन्देहरहित ! हे सर्वसूत्रमहोदधे !=हे सकलसिद्धान्तसमुद्र ! ते=तुभ्य नम'=नमस्कारोऽस्तु ! ॥८५॥

ततः केशी मुनिर्यत्कृतवाँस्तदाह सूत्रकारो गाथाद्वयेन—

मूलम्—एवं तु संसए छिन्ने, केसी घोरपरक्कमे ।
अभिवंदित्ता सिरसा, गोयमं तु महायसं ॥८६॥
पंच महव्वयधम्मं, पडिवज्जइ भावओ ।
पुरिमस्स पच्छिमम्मि, मग्गे तत्थ सुहावहे ॥८७॥

छाया—एव तु सशये छिन्ने, केशी घोरपराक्रमः ।
अभिवन्द्य शिरसा, गौतम तु महायशसम् ॥८६॥

'सारीरमाणसे' इत्यादि से बारहवाँ प्रश्न यह बताता है कि-इसी मार्ग से मोक्षरूप स्थान की प्राप्ति होती है अन्य से नही ।१२। इस प्रकार इन बारह १२ प्रश्नों का समन्वय जानना चाहिये ॥८४॥

केशी श्रमण कहते है—'साहु' इत्यादि ।

हे गौतम ! आप की प्रज्ञा बहुत ही अच्छी है । मेरा सशय आपने दूर किया है अतः हे सशयातीत ! तथा सर्वसूत्रमहोदधि स्वरूप ! आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥८५॥

"सारीरमाणसे" ઇત્યાદિથી બારમો પ્રશ્ન એ બતાવે છે કે આ જ માર્ગથી મોક્ષ રૂપ સ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય છે અન્ય સ્થાનોની નહીં ।૧૨। આ પ્રકારથી એ બાર ૧૨ પ્રશ્નોનો સમન્વય જાણવો જોઈએ ॥૮૪॥

કેશી શ્રમણ કહે છે—"साहु" ઇત્યાદિ ।

હે ગૌતમ આપની પ્રજ્ઞા ઘણી જ સારી છે મારો સંશય હવે આપે દૂર કરેલ છે આથી હે સંશયાતીત ! તથા સર્વસૂત્ર મહોદધિ સ્વરૂપ ! આપને મારા નમસ્કાર છે ॥૮૫॥

पञ्चमहाव्रतधर्मं, प्रतिपद्यते भावतः।
पूर्वस्य पश्चिमे, मार्गे तत्र शुभावहे ॥८६॥

टीका—'एवं' इत्यादि।

एवम्=अमुना प्रकारेण तु=निश्चयेन संशये छिन्ने सति घोरपराक्रमः केशी मुनिः महायशसः=दिगन्तव्याप्तकीर्तिं गौतमं गणधरं शिरसा अभिवन्द्य पूर्वस्य=आदितीर्थंकरस्य अभिमते पश्चिमे=अन्तिमतीर्थंकरसम्बन्धिनि शुभावहे=कल्याणप्रापके मार्गे भावतः पूर्वं चातुर्यामो धर्मः=प्रतिपत्तव्य इतिभावः आसीत्. अधुना पञ्चयामधर्मः प्रतिपत्तव्य इति भावोऽभूदिति पञ्चयामधर्मप्रतिपत्त्यभिप्रायात् तत्र=तिन्दुकोद्याने पञ्चमहाव्रतधर्मं प्रतिपद्यते=स्वीकरोति स्म। द्वितीय 'तु' शब्दः पूरणार्थः ॥८६॥८७॥

इसके बाद केशीश्रमण ने जो किया सो कहते हैं 'एव तु' इत्यादि 'पचमहव्वयधम्म इत्यादि।

अन्वयार्थ—(एव तु ससए छिन्ने–एवं तु संशये छिन्ने) इस प्रकार के कथन से जब केशीश्रमण का संशय नष्ट हो गया तब (घोरपरक्कमे केसी–घोरपराक्रम केशी) घोर पराक्रम शाली उन केशीकुमार ने (महायसस गोयम सिरसा अभिवंदित्ता–महायशसम् गौतमं शिरसा अभिवन्द्य) महायशस्वी गौतम गणधर को मस्तक झुकाकर नमस्कार किया और (पुरिमस्स पच्छिमम्मि मग्गे तत्थ सुहावहे–पूर्वस्य पश्चिमे शुभावहे तत्र मार्गे) आदि तीर्थंकर से अभिमत अंतिम तीर्थंकर के कल्याण प्रापक मार्ग में (भावओ पचमहव्वयधम्म पडिवज्जइ-भावतः पञ्चमहाव्रतधर्मं प्रतिपद्यते) भाव से पचमहाव्रतरूप धर्म को अंगीकार किया। अर्थात् केशीश्रमण कुमार गौतमगणधर के कथन को सुनकर यह जान गये कि

આના પછી કેશી શ્રમણે જે કર્યું તેને કહે છે—"एवतु" ઇત્યાદિ। "पचमहव्वयधम्म" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—एव तु संशये छिन्ने–एव तु संशये छिन्ने આ પ્રકારના કહેવાથી જ્યારે કેશી શ્રમણના સંશય નાશ પામી ગયા ત્યારે घोरपरक्कमे केसी–घोरपराक्रम केशी ઘોર પરાક્રમશાળી એ કેશી કુમારે महायसस गोयम सिरसा अभिवंदित्ता–महायशसं गौतमं शिरसा अभिवन्द्य મહાયશસ્વી ગૌતમ ગણુધરને મસ્તક ઝુકાવીને નમસ્કાર કર્યો અને આદિ पुरिमस्स पच्छिमम्मि सुहावहे तत्थ मग्गे–पूर्वस्य पश्चिमे शुभावहे तत्र मार्गे તીર્થંકરના અભિમત અંતિમ તીર્થંકરના કલ્યાણ પ્રાપક માર્ગમાં ભાવથી भावओ पचमहव्वयधम्म पडिवज्जइ–भावतः पञ्चमहाव्रतधर्मं प्रतिपद्यते પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મને અંગીકાર કર્યો અર્થાત્ કેશી શ્રમણ કુમાર ગૌતમ ગણુધરના કથાનકને સાંભળીને એ જાણી ગયા

सम्प्रति ... यधनार्थमपनहरन महापुरुषसमागम ... ॥ --

मूलम्--केसी गोयमओ णिच्चं, तम्मि आसि समागमे।
सुयसीलसमुक्करिसो, महत्थत्थविणिच्छओ ॥८८॥

छाया--केशि गौतमतो नित्यं, तस्मिन्नासीत् समागमे।
श्रुतशीलसमुत्कर्षो, महार्थार्थविनिश्चय ॥८८॥

टीका--'केसि गोयमओ' इत्यादि।

तस्मिन् पुरे केशिगौतमयो. समागमे=समेलने केशि गौतमतः=केशि गौतमाभ्यां तयोरभ्यासान्नित्य श्रुतशील समुत्कर्ष.-श्रुत-ज्ञान, शीलम्= आचार. तयो' समुत्कर्षः-समुन्नति'-ज्ञानाचरणप्रकर्ष, महार्थार्थविनिश्चय.- महार्था -मुक्ति साधकत्वेन महाप्रयोजना ये अर्था =शिक्षाव्रतादयस्तेषा विनिश्चयो= निर्णयश्च आसीत्=अभूत्, तयो. शिष्यापेक्षयेद बोध्यम् ॥८८॥

तथा--

मूलम्--तोसिया परिसा सव्वा, सम्मग्गं समुवट्ठिया।
संथुया ते पसीयंतु, भयवं केसी गोयमे-त्ति "बेमि" ॥८९॥

॥इइ केसिगोयमिज्जं अज्झयणं समत्तं ॥२३॥

पहले पार्श्वनाथ के समय मे चातुर्यामरूप धर्म था और अब अन्तिम तीर्थंकर के इस शासन काल मे पचयाम रूप धर्म है। अत उन्हो ने भी इस पचयामरूप धर्म को अगीकार कर लिया ॥८६।८७॥

अब अध्ययन का उपसहार करते हुए केशीश्रमण और गौतम जैसे महापुरुषो के समागम का फल कहते है--'केसिगोयमओ' इत्यादि।

उस नगर मे केशिगौतम के इस समागम मे उन दोनो से श्रुत ज्ञान की एव शीलरूप आचार धर्म की खूब उन्नति हुई तथा मोक्ष का साधनभूत शिक्षाव्रत आदिरूप अर्थ का अच्छी तरह निर्णय हुआ ॥८८॥

કે પહેલા જે પાર્શ્વનાથના સમયમા ચાતુર્યામ રૂપ ધર્મ હતો અને હવે અતિમ તીર્થંકરના આ શાસનકાળમા પાચયામ રૂપ ધર્મ છે આથી એમણે પણ પાચયામ રૂપ ધર્મને અગીકાર કરી લીધો ॥૮૬॥૮૭॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસહાર કરીને કેશીશ્રમણ અને ગૌતમ જેવા મહાપુરુષોના સમાગમના ફળને કહે છે—"केसिगोयमओ" ઇત્યાદિ।

આ નગરમા કેશી ગૌતમના આ સમાગમમા એ બન્નેથી શ્રુતજ્ઞાનની તથા શિલરૂપ આચાર ધર્મની ખૂબ ઉન્નતિ થઇ તથા મોક્ષના સાધન ભૂત શિક્ષાવ્રત આદિરૂપ અર્થનો સારી રીતે નિર્ણય થયો ॥૮૮॥

छाया—तोषिता परिषत्सर्वा, सन्मार्गं समुपस्थिता।
सम्स्तुतौ तौ प्रसीदताम्, भगवन्तौ केशिगौतमाविति ब्रवीमि ॥८९॥

टीका—'तोसिया' इत्यादि।

सदेवासुरमानुषा सर्वा परिषत् तोषिता=सन्तुष्टा जाता। सा परिषत् सन्मार्गं=मुक्तिमार्गं प्रति समुपस्थिता=उद्यता=सावधाना जाता। इत्थं तच्चरितवर्णनद्वारा तयोः स्तुतिमुक्त्वा तत्प्रसादाकाङ्क्षी सूत्रकार प्राह—'सथुया' इत्यादिना—इत्थं सम्स्तुतौ=तत्तच्चरितवर्णनतः कृतस्तुती तौ भगवन्तौ केशीगौतमौ अस्मासु प्रसीदताम्=प्रसन्नौ भवताम्। 'इतिब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्य। 'प्रसयन्तु' इत्यत्रार्षत्वादेकत्वं बोध्यम् ॥८९॥

इतिश्री—विश्वविख्यात—जगद्वल्लभ—प्रसिद्धवाचक—पञ्चदशभाषाकलितललितकलापा लापक—प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक—वादिमानमर्दक—शाहूछत्रपति—कोल्हापुर—राजप्रदत्त—'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु—बालब्रह्मचारि—जैनाचार्य—जैनधर्मदिवाकर—पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्यायां व्याख्यायां केशिगौतमीय नाम त्रयोविंशतितममध्ययनं सम्पूर्णम् ॥२३॥

तथा—'तोसिया' इत्यादि।

अन्वयार्थ—इस प्रकार देव असुर एवं मनुष्यों से भरी हुई वह (सव्वा परिसा तोसिया—सर्वा परिषत् तोषिता) समस्त सभा बडी ही सतुष्ट हुई। उनके उपदेश श्रवण से सब के सब (सम्मग्गं समुवट्ठिया—सन्मार्गं समुपस्थिता.) मुक्तिमार्ग की ओर चलने के लिये सावधान बन गये। इस तरह चारित्र वर्णन द्वारा (सथुया ते केसी गोयमे पसीयतु त्तिबेमि स्तुतौ तौ केशीगौतमौ प्रसिदताम् इतिब्रवीमि) स्तुत हुए वे

તથા "तोसिया" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—આ પ્રમાણે દેવ, અસુર, અને મનુષ્યોથી ભરેલી એ सव्वा परिसा तोसिया—सर्वा परिषत्तोषिता સમસ્ત સભા ઘણી જ સંતોષ પામી એમના ઉપદેશ શ્રવણથી સઘળા सम्मग्गं समुवट्ठिया—सन्मार्गं समुपस्थिताः મુક્તિ માર્ગની તરફ ચાલવા માટે સાવધાન બની ગયા આ પ્રમાણે ચરિત્ર વર્ણન દ્વારા सथुया ते केसी गोयमे पसीयतु त्तिबेमि—सम्स्तुतौ तौ केशी गौतमौ प्रसीदताम् इति ब्रवीमि

सम्प्रति अध्ययनार्थमुपसंहरन् महापुरुषसमागमफलमाह—

मूलम्—केसी गोयमओ णिच्चं, तम्मि आसि समागमे।
सुयसीलसमुक्करिसो, महत्थत्थविणिच्छओ ॥८८॥

छाया—केशि गौतमतो नित्यं, तस्मिन्नासीत् समागमे।
श्रुतशीलसमुत्कर्षो, महार्थार्थ विनिश्चय ॥८८॥

टीका—'केसि गोयमओ' इत्यादि।

तस्मिन् पुरे केशिगौतमयो समागमे=सम्मेलने केशि गौतमत.=केशि गौतमाभ्यां तयोरवस्थानादि नित्यं श्रुतशील समुत्कर्ष.—श्रुत—ज्ञान, शीलम्=आचार' तयोः समुत्कर्षः—समुन्नति —ज्ञानाचरणप्रकर्ष, महार्थार्थविनिश्चय.—महार्था.—मुक्ति साधकत्वेन महाप्रयोजना ये अर्था.=शिक्षाव्रतादयस्तेषां विनिश्चयो=निर्णयश्च आसीत्=अभूत्, तयो शिष्यापेक्षया बोध्यम् ॥८८॥

तथा—

मूलम्—तोसिया परिसा सव्वा, सम्मग्गं समुवट्ठिया।
संथुया ते पसीयंतु, भयवं केसी गोयमे-त्ति "वेमि" ॥८९॥

॥इइ केसिगोयमिज्ज अज्झयणं समत्तं ॥२३॥

पहेले पार्श्वनाथ के समय मे चातुर्यामरूप धर्म था और अब अन्तिम तीर्थंकर के इस शासन काल म पचयाम रूप धर्म है। अत. उन्हों ने भी इस पचयामरूप धर्म को अगीकार कर लिया ॥८६।८७॥

अब अध्ययन का उपसहार करते हुए केशीश्रमण और गौतम जैसे महापुरुषो के समागम का फल कहते हैं—'केसिगोयमओ' इत्यादि।

उस नगर मे केशिगौतम के इस समागम मे उन दोनो से श्रुत ज्ञान की एव शीलरूप आचार धर्म की खूब उन्नति हुई तथा मोक्ष का साधनभूत शिक्षाव्रत आदिरूप अर्थ का अच्छी तरह निर्णय हुआ ॥८८॥

કે પહેલા જે પાર્શ્વનાથના સમયમા ચાતુર્યામ રૂપ ધર્મ હતો અને હવે અતિમ તીર્થંકરના આ શાસનકાળમા પાચયામ રૂપ ધર્મ છે આથી એમણે પણ પાચયામ રૂપ ધર્મને અગીકાર કરી લીધો ॥૮૬॥૮૭॥

હવે અધ્યયનનો ઉપસહાર કરીને કેશીશ્રમણ અને ગૌતમ જેવા મહાપુરુષોના સમાગમના ફળને કહે છે—"केसिगोयमओ" ઇત્યાદિ।

આ નગરમા કેશી ગૌતમના આ સમાગમમા એ બન્નેથી શ્રુતજ્ઞાનની તથા શિલરૂપ આચાર ધર્મની ખૂબ ઉન્નતિ થઇ તથા મોક્ષના સાધન ભૂત શિક્ષાવ્રત આદિરૂપ અર્થનો સારી રીતે નિર્ણય થયો ॥૮૮॥

अथ चतुर्विंशतितममध्ययनम् प्रारभ्यते—

उक्तं त्रयोविंशतितममध्ययनम्। सम्प्रति प्रवचनमातृनामकं चतुर्विंशतितममारभ्यते। अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन्नध्ययने परेषामपि मनोविप्लवः केशीगौतमवदपनेय इति प्रोक्तम्। तदपनयन तु भाषासमित्यात्मकेन वाग्योगेनैव सम्भवति। भाषासमितिश्च प्रवचनमातॄणामन्तर्गता, इति तत्स्वरूपमिहोच्यते। इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यैतस्याध्ययनस्येदमादिम सूत्रम्—

मूलम्—अट्ठ प्पवयणमायाओ, समिई गुत्ती तहेव य ।
पंचेव समिईओ, तओ गुत्ती उ आहियो ॥१॥

छाया—अष्टप्रवचनमातरः, समितयो गुप्तयस्तथैव च ।
पञ्चैव समितयः, तिस्रो गुप्तयस्तु आख्याताः ॥१॥

टीका—'अट्ठ' इत्यादि ।

समितय —सम्=सम्यक्—सर्वज्ञवचनानुसारेण इतय =आत्मन प्रवृत्तय ,

चौवीसवाँ अध्ययन प्रारम्भ—

तेईसवाँ अध्ययन समाप्त हुवा, अब चोवीसवा अध्ययन प्रारम्भ होता है। इस अध्ययन का नाम प्रवचनमातृ है। इसका सबंध पूर्व अध्ययन के साथ इस प्रकार है जिस प्रकार केशिगौतम ने दूसरो के मनोविप्लव—मनकी शका का अपनयन किया है उसी प्रकार साधु को भी दूसरों के मनोविप्लव का अपनयन करना चाहिये। परन्तु यह काम भाषासमिति स्वरूप वाग्योग के बिना नहीं हो सकता है, और भाषासमिति क्या है यह बात इस अध्ययन मे प्रकट की जावेगी। अष्ट प्रवचन माता अन्तर्गत यह भाषासमिति है। इस अध्ययन का यह आदि गाथा है—'अट्ठ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(पंचेव समिईओ—पञ्चैव समितय) पाच समिति (तओ

ચોવીસમા અધ્યયનનો પ્રારભ

ત્રેવીસમુ અધ્યયન પુરૂ થઇ ગયુ છે હવે ચોવીસમા અધ્યયનનો પ્રારભ થાય છે આ અધ્યયનનુ નામ પ્રવચનમાતૃ છે તેનો સબધ ત્રેવીસમા અધ્યયન સાથે આ પ્રમાણે છે જે પ્રમાણે કેશી ગૌતમે બીજાઓના મનની શકાઓનુ સમાધાન કરેલ છે આ પ્રમાણે સાધુએ પણ બીજાઓના મનની શકાઓનુ સમાધાન કરવુ જોઈએ પરતુ એ કામ ભાષા સમિતિ સ્વરૂપ વાગ્યોગના વગર બની શકતુ નથી અને ભાષાસમિતિ શુ છે, એ વાત આ અધ્યયનમા પ્રગટ કરવામા આવશે અષ્ટ પ્રવચન માતાના અતર્ગત આ ભાષા સમિતિ છે આ અધ્યયનની આ પ્રથમ ગાથા છે "अट्ठ" ઇત્યાદિ ।

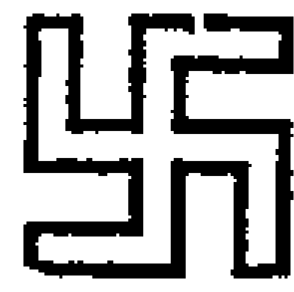
અન્વયાર્થ—पंचेव समिईओ—पञ्चैव समितय' પાચ સમિતિ અને तओ गुत्ती

भगवन्त केशीश्रमण और गौतम गणधर हमारे ऊपर सदा प्रसन्न रहें। "इति ब्रवीमि" सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते है कि-हे जम्बू! जैसा मैंने श्री महावीर प्रभु से सुना हु वैसा ही कहता हू ॥८९॥

यह उत्तराध्ययन सूत्र के तेईसवें अध्ययन का हिन्दी भाषानुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥२३॥

સ્તુત થયેલા એ ભગવન્ત કેશી શ્રમણ અને ગૌતમ ગણધર અમારા ઉપર સદા પ્રસન્ન રહે "इतिब्रवीमि" સુધર્મા સ્વામીને કહે છે કે' હે જમ્બૂ જેવુ મે ભગવાન મહાવીર સ્વામીની પાસેથી સાભળેલ છે એવુ જ કહુ છુ ॥૮૯॥

શ્રી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના તેવીસમા અધ્યયનનો ગુજરાતી ભાષા અનુવાદ સંપૂર્ણ ॥૨૩॥



अन्नादि गवेषणा, आदान=पात्रादेर्ग्रहणम् उपलक्षणत्वाद् निक्षेपण च, एषा समाहारद्वन्द्वस्तस्मिन तथा-उच्चारे=उच्चारपरिष्ठापनायां च समिति =यतनापूर्वक प्रवृत्ति , समितिरित्यस्य ईर्यादौ प्रत्यकत्र पृथक्पृथगावृत्याऽन्वय' । इति=अमुना प्रकारेण पञ्च, षष्ठी मनोगुप्तिः, सप्तमी वचोगुप्तिः, अष्टमी कायगुप्तित्येवम् अष्ट प्रवचनमातर. सन्ति । ॥२॥

मूलम्—एयाओ अट्ठ समिईओ, समासेण वियाहिया ।
दुवालसग जिणक्खाय, मांय जत्थ उ पवयणं ॥३॥

छाया—एता अष्ट समितयः, समासेन व्याख्याताः ।
द्वादशाङ्ग जिनाख्यात, मात यत्र तु प्रवचनम् ॥३॥

टीका—'एयाओ' इत्यादि ।

एता अनन्तरोक्ता अष्ट समितय. समासेन=सक्षेपेण व्याख्याता =कथिता. । शास्त्रवि यनुसारत आत्मनो व्यापारो गुप्तिष्वप्यस्तीति समितिशब्देन गुप्तीनामपि

अब पाच समितियो के नाम कहते है—'ईरिया इत्यादि ।

गमन में यतनापूर्वक प्रवृत्ति का नाम ईर्यासमिति है। बोलने मे यतनापूर्वक प्रवृत्ति का नाम भाषा समिति है। यतनापूर्वक आहारादिक की गवेषणा करने की प्रवृत्ति एषणा समिति है। पात्रादिक का धरना एव उठाना इसका नाम आदान-आदाननिक्षेप समिति है। यतनापूर्वक उच्चार प्रस्रवण के परिष्ठापन करने की प्रवृत्ति उच्चार समिति है। मन की गुप्ति वचन की गुप्ति एव कायकी गुप्ति, ये ३ तीन गुप्तिया है ॥२॥

'एयाओ अट्ठ समिईओ' इत्यादि—

उपर्युक्त ये आठ समितिया सक्षेप से यहा प्रदर्शित की गई है। शास्त्रविधि के अनुसार आत्मा का व्यापार गुप्तियो मे भी है इसलिये

હવે પાચ સમિતિના નામ કહેવામા આવે છે—"ईरिया" ઇત્યાદિ !

ગમનમા યત્ના પૂર્વકની પ્રવૃત્તિનુ નામ ઇરિયા સમિતિ છે બોલવામા યત્ના પૂર્વક અન્નાદિકની ગવેષણા કરવાની પ્રવૃત્તિનુ નામ એષણા સમિતિ છે પાત્રાદિક ધરવુ અને ઉપાડવુ તેનુ નામ આદાનનિક્ષેપસમિતિ છે યત્નાપૂર્વક ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણના પરિષ્ઠાપન કરવાની પ્રવૃત્તિનુ નામ ઉચ્ચાર સમિતિ છે મનની ગુપ્તિ, વચનની ગુપ્તિ, અને કાયાની ગુપ્તિ આ ત્રણ ગુપ્તિઓ છે ॥૨॥

"एआयो अट्ठ समिईओ" ઇત્યાદિ !

ઉપર્યુક્ત એ આઠ સમિતિઓ સક્ષેપથી અહી પ્રદર્શિત કરવામા આવેલ છે શાસ્ત્રવિધિ અનુસાર આત્માનો વેપાર ગુપ્તિઓમા છે આ માટે સમિતિ શબ્દથી

तथैव च गुप्तयः–गोपनानि गुप्तय., अकुशलेभ्यो मनःकाययोगानां निरूपाः कुशलानामुदीरणस्पार्थ, एता अष्ट=अष्टसंख्याका प्रवचनमातरः=द्वादशाङ्गरूपप्रवचनानां जनन्यः सन्ति। उक्तं हि––

"एया पवयणमाया दुवालसंग पसूयाओ" ॥

छाया––एता प्रवचनमातरः द्वादशाङ्ग प्रसूता. ॥ इति।

तत्र अष्टप्रवचनमातृषु पञ्चैव पञ्चसंख्याविशिष्टाः समितयः, तिस्रस्तु गुप्तयः आख्याता=कथितास्तीर्थंकरैः ॥१॥

समिति ता एव नामतः प्राह––

मूलम्––ईरियाभासेसणादाणे, उच्चारे समिई इय।
मणगुत्ती वयगुत्ती, कायगुत्ती य अट्ठमा ॥२॥

छाया––ईर्या भाषैषणाऽऽदाने, उच्चारे समितिरिति।
मनोगुप्तिर्वचोगुप्तिः, कायगुप्तिश्च अष्टमी ॥२॥

टीका––'ईरिया' इत्यादि।

ईर्याभासैषणादाने–ईरणम् ईर्या=गमनम्, भाषणम्–भाषा, एषणम्–एषणा=

गुत्ती उ आहिया-तिस्रो गुप्तयस्तु आख्याता) एव तीनगुप्ति, ये (समिई गुत्ती तहेव य अट्ठपवयणमायाओ–समितयः तथैव च गुप्तयः अष्ट प्रवचनमातरः) अष्ट प्रवचन माताएँ हैं। सर्वज्ञ वचन के अनुसार आत्मा की प्रवृत्ति का नाम समिति है। अकुशल मन वचन एवं काय योगों का निग्रह करना तथा कुशल मन वचन एवं काय योगों का उदीरण करना इसका नाम गुप्ति है। पाँच समिति,तीन गुप्ति, इन आठों को प्रवचन माताएँ इसलिये कही गयी हैं कि ये सब द्वादशांगरूप प्रवचन की जननी है। कहा भी है–"एया पवयणमाया दुवालसग पसूयाओ" ॥१॥

उ आहिया–तिस्रो गुप्तयस्तु आख्याता ત્રણ ગુપ્તિ, समिई तहेव य गुत्ती अट्ठ पवयणमायाओ आहिया–समितयः तथा गुप्तयः अष्ट प्रवचनमातरः आख्याता આ આઠ પ્રવચન માતા છે સર્વજ્ઞના વચન અનુસાર આ આત્માની પ્રવૃત્તિનુ નામ સમિતિ છે અકુશળ મન, વચન, અને કાયાના યોગોનો નિગ્રહ કરવો તથ કુશળ મન, વચન, અને કાયાના યોગોનુ ઉદાહરણ કરવુ તેનુ નામ ગુપ્તિ છે પાચ સમિતિ ત્રણ ગુપ્તિ, આ આઠેને પ્રવચન માતા એ માટે કહેવામા આવે છે કે સહુ દ્વાદશાગ રૂપ પ્રવચનની જનની છે કહ્યુ પણ છે—

एया पवयणमाया दुवालसग पसूयाओ ॥१॥

क्षेत्रत.=क्षेत्रमाश्रित्य यतना तु युगमात्र='धूसरा' इति भाषा सिद्धप्रमाण क्षेत्र प्रेक्षेतेति। कालतः=कालमाश्रित्य यतना यावद् रीयेत=यावन्त काल गच्छेत्ता-वत्कालप्रमाणा। अर्थात् मुनयो दिवसे विलोक्य यतनया गच्छन्ति, रात्रौ तु मर्यादितभूमौ प्रमार्ज्य यतनया गच्छन्ति। च=पुन भावतः=भावमाश्रित्य यतना-उपयुक्त.=दत्तावधानो यद् रीयेत= गच्छेदिति। जीवोपमर्दनभिया दत्तावधाना यन्मुनयश्चरन्ति, तत्तेषा भावतो यतना बोद्धव्या। इत्येव चतुर्विधा यतना बोद्धव्या॥७॥

उसी चार प्रकार की यतना का स्वरूप कहते हैं—'दव्वओ' इत्यादि।

द्रव्य की अपेक्षा यतना का स्वरूप चक्षु द्वारा गन्तव्य मार्ग का निरीक्षण करना है। क्यों कि जबतक मार्ग अच्छी तरह नहीं देखा जायगा तबतक वहा पर द्वीन्द्रियादि जीवों का रक्षण कैसे हो सकेगा, अत मार्ग मे चलते हुए साधु को जीवों का निरीक्षण करते चलना चाहिये यही द्रव्य यतना का स्वरूप है।१। कितने मार्ग का निरीक्षण करते हुए साधु को आगे बढते रहना चाहिये यह बात क्षेत्र यतना से स्पष्ट की गई है। यह यतना यह कहती है कि आगे का धूसरा प्रमाण मार्ग देखते २ साधु का गमन करना चाहिये।२। कालयतना यह कहती है कि मुनियो को दिवस में देखकर यतना पूर्वक चलना चाहिये। यदि रात्रि मे प्रस्रवण आदि के लिये जाना पडे तो भूमि की मर्यादा कर लेनी चाहिये और उसी भूमि मे यतना से प्रमार्जन [पूजते] करते जाना चाहिये। जीवो के उपमर्दन के भय से जो मुनि उपयोगसहित होकर चलते है यही उनकी भाव की अपेक्षा यतना हैं ॥७॥

એ ચાર પ્રકારની યતનાના સ્વરૂપને કહેવામા આવે છે—"दव्वओ" ઇત્યાદિ।

દ્રવ્યની અપેક્ષા યતનાનુ સ્વરૂપ આખોથી અથવા જવાના માર્ગનુ નિરીક્ષણ કરવુ એ છે કેમકે, જ્યા સુધી માર્ગ સારી રીતે જોવામા ન આવે ત્યા સુધી ત્યા દ્વિ ઇંદ્રિયાદી જીવોનુ રક્ષણ કઇ રીતે થઇ શકે, ? આથી માર્ગમા ચાલતા સાધુએ જીવોનુ રક્ષણ કરીને ચાલવુ જોઇએ આજ દ્રવ્ય યતનાનુ સ્વરૂપ છે ॥૧॥ કેટલા માર્ગનુ નિરીક્ષણ કરતા સાધુએ આગળ વધવુ જોઇએ આ વાત ક્ષેત્ર યતનાથી સ્પષ્ટ કરવામા આવેલ છે એ યતના એવુ બતાવે છે કે, આગળનો ધુસરા પ્રમાણ માર્ગ જોતા જોતા સાધુએ ગમન કરવુ જોઇએ ॥૨॥ કાળ યતના એ બતાવે છે કે, મુનિયોએ દિવસમા જોઇને યતના પૂર્વક ચાલવુ જોઇએ કદાચ રાત્રિમા પ્રસ્રવણ આદિના માટે જવુ પડે તો ભૂમિની મર્યાદા કરી લેવી જોઈએ અને એ ભૂમિમા યતનાથી પ્રમાર્જન કરતા જવુ જોઈએ જીવોના ઉપમર્દનના ભયથી, જે મુનિ ઉપયોગ સહિત થઈને ચાલે છે, એ તેની ભાવની અપેક્ષા યતના છે ।૭॥

उत्पथेन वर्जितः-उन्मार्गभिन्न, उक्तः। उत्पथे व्रजतो हि आत्मविराधनादयो दोषाः सम्भवन्त्येव ॥५॥

अथ यतनामाह—

मूलम्—दव्वओ खेत्तओ चेव, कालओ भावओ तहा।
जयणा चउव्विहा वुत्ता, तं मे कित्तयओ सुण ॥६॥

छाया—द्रव्यतः क्षेत्रतश्चैव, कालतो भावतस्तथा।
यतना चतुर्विधा उक्ता, ता मे कीर्तयतं शृणु ॥६।

टीका—'दव्वओ' इत्यादि।

द्रव्यत' क्षेत्रतश्चैव कालतस्तथा भावतो यतना भवति, इत्येव यतना चतुर्विधा उक्ता=कथिता हे शिष्य! ताम्=यतना कथयतो मे=मम सकाशात् शृणु ॥६॥

मूलम्—दव्वओ चक्खुसा पेहे, जुगमित्तं तु खेत्तओ।
कालओ जाव रीएज्जा, उवउत्ते य भावओ ॥७॥

छाया—द्रव्यतश्चक्षुषा प्रेक्षेत, युगमात्र तु क्षेत्रत.।
कालतो यावद् रीयत, उपयुक्तश्च भावत' ॥७॥

टीका—'दव्वओ' इत्यादि।

द्रव्यतः=द्रव्यमाश्रित्य यतना-चक्षुषा प्रेक्षेत=जीवादिद्रव्यमवलोकयेदिति।

रात्रि मे आखो से यथावत् पदार्थों का अवलोकन नहीं हो सकता है। मार्गशब्द से यहा उत्पथभिन्न रास्ता गृहीत हुआ है। उत्पथ का वर्जन यहा इसलिये किया गया है कि उत्पथ से गमन करने वाले साधु को आत्मविराधनादिक दोषो का पात्र होना पडता है ॥५॥

अब यतना का स्वरूप कहते है—'दव्वओ' इत्यादि।

यतना द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भाव की अपेक्षा से चार प्रकार की कही गई है। मै अब इन का वर्णन करता हू सो सुनो ॥६॥

અવલોકન થઈ શકતુ નથી માર્ગ શબ્દથી અહી ઉત્પથ-ભિન્ન રસ્તો એ પ્રમાણે કહેવામા આવેલ છે ઉત્પથનુ વર્જન અહી એ માટે કરાયેલ છે કે ઉત્પથથી ગમન કરનાર સાધુએ આત્મવિરાધનાદિક દોષના પાત્ર થવુ પડે છે ॥૫॥

હવે યતનાના સ્વરૂપને કહેવામા આવે છે "दव्वओ" ઇત્યાદિ।

યતના દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ તથા ભાવની અપેક્ષાથી ચાર પ્રકારની કહેવામા આવે છે હુ હવે એનુ વર્ણનકરૂ છુ તેને સાભળો ॥૬॥

ईर्या समिति का स्वरूप कहकर अब भाषा समिति का स्वरूप कहते हैं कि–'कोहे' इत्यादि।

अन्वयार्थ––(कोहे माणे मायाए लोभे हासे भयमोहर्ये तहेव विकहासु उवउत्तया–क्रोधे माने मायाया हास्ये भयमौखर्ये तथैव विकथासु उपयुक्ता) क्रोध मे, मान मे, माया में, हास्य मे भय में वाचालता मे तथा स्त्री आदि की विकथाओं मे इन आठो मे उपयोग रचना अर्थात् क्रोधादि के आवेश मे नहीं बोलना चाहिये ॥९॥

तब कैसे बोलना चाहिये? सो कहते हैं––'एयाइ' इत्यादि।

अन्वयार्थ––(एयाइ अट्ठठाणाइ–एतानि अष्ट स्थानानि) इन आठ स्थानों

ઇરિયા સમિતિનુ સ્વરૂપ કહીને હવે ભાષાસમિતિનુ સ્વરૂપ કહેવામા આવે છે—"कोहे" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—कोहे माणे मायाए लोभे हासे भयमोहरिए तहेव विकहासु उवउत्तया–क्रोधे माने मायाया लोभे हास्ये भयमौखर्ये तथैव विकथासु उपयुक्तता માનમા, માયામા, અને લોભમા હાસ્યમા, ભયમા, વાચાલતામા તથા સ્ત્રી આદિની વિકથાઓમા, આ આઠેમા ઉપયોગ રાખવો અર્થાત ક્રોધાદિકના આવેશમા નહિ બોલવુ જોઈએ ॥૯॥

ત્યારે કેમ બોલવુ જોઈએ? તે કહેવામા આવે છે—"एयाइ" ઈત્યાદિ।

અન્વયાર્થ––एयाइ अट्ठठाणाइ–एतानि अष्ट स्थानानि આ આઠ સ્થાનોનો

सम्मति भावयतनामेव स्पष्टयति—

मूलम्—इंदियत्थे विवज्जित्ता, सज्झायं चेव पंचहा।
तम्मुत्ती तप्पुरक्कारे, संजए ईरियं रिए ॥८॥

छाया—इन्द्रियार्थान् विवर्ज्य, स्वाध्यायं चैव पञ्चधा।
तन्मूर्तिस्तत्पुरस्कारः, संयत ईर्यां रीयेत ॥८॥

टीका—'इंदियत्थे' इत्यादि।

इन्द्रियार्थान्=शब्दादीन्, विवर्ज्य=तदनध्यवसानतः परिहृत्य, तथा-पञ्चधा=वाचनादि पञ्चप्रकारं स्वाध्यायं, चैव=स्वाध्यायमपि, गत्युपयोगबाधित्वात् परिहृत्य तन्मूर्तिः-तस्यामेव ईर्यायां व्याप्रियमाणा मूर्तिः शरीरं यस्य स तन्मूर्तिः, तथा-तत्पुरस्कारः-तामेव पुरस्करोति=उपयुक्ततया प्राधान्येनाङ्गीकुरुते इति तत्पुरस्कारः। अनेन कायमनसोस्तदेकाग्रत्वमुक्तम्। एवंभूतः सन् संयत ईर्यां रीयेत=विचरेत्। दशबोलान् वर्जयन् गच्छेदिति भावः ॥८॥

उक्ता ईर्यासमितिः, अथ भाषासमितिमाह—

मूलम्—कोहे माणे यं मायाए, लोभे यं उवउत्तया।
हासे भयमोहरिए, विकहासु तहेवं यं ॥९॥

अब इसी भाव यतना का स्पष्टीकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'इंदियत्थे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(इंदियत्थे पंचहा सज्झायं च विवज्जित्ता-इन्द्रियार्थान् पञ्चधा स्वाध्यायं च विवर्ज्य) इन्द्रियों के शब्दादिक पांच विषयों को तथा वाचना आदि भेद से पांच प्रकार के स्वाध्याय को इन दश बोलों को वर्जकर (तम्मुत्ती तप्पुरक्कारे-तन्मूर्ति तत्पुरस्कार) केवल गमन में ही व्याप्रियमाण शरीर वाला मुनि गमन में ही एकाग्रचित्त होकर (ईरियं रिए-ईर्यां रीयेत) ईर्या में विचरण करे ॥८॥

હવે એ જ ભાવયતનાનુ સ્પષ્ટિકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—"इंदियत्थे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—इंदियत्थे पंचहा सज्झायं च विवज्जित्ता-इन्द्रियार्थान् पञ्चधा स्वाध्यायं च विवर्ज्य ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક પાચ વિષયોને તથા વાચના આદિના ભેદથી પાચ પ્રકારના સ્વાધ્યાયને આ દશ બોલોને વર્જીને तम्मुत्तीतप्पुरक्कारे-तन्मूर्ति तत्पुरस्कार, કેવળ ગમનમા જ વ્યાપ્રિયમાણ શરીરવાળા ગમનમા એકાગ્રચિત્ત બની ईरियं रिए-ईर्यां रीयेत ઇરિયાથી વિચરણ કરે ॥૮॥

छाया--क्रोधे माने च मायायां, लोभे च उपयुक्तता ।
हास्ये भयमौखर्ये, विकथासु तथैव च ॥९॥

टीका--'कोहे' इत्यादि ।

क्रोधे माने च मायायां लोभे च उपयुक्तता=उपयोगपरता भवति । तथा-हास्ये, भयमौखर्ये=वाचालतायां तथैव च विकथायां=स्त्र्यादिकथायाम् उपयुक्तता=उपयोगपरता कर्त्तव्या । क्रोधाद्यावेशे उपयोगवान् भवेदिति भावः ॥९॥

मूलम्--एयाइं अट्ठ ठाणाइं, परिवज्जित्तु संजए ।
असावज्जं मियं कांले, भांसं भासिज्ज पन्नंव ॥१०॥

छाया--एतानि अष्टस्थानानि, परिवर्ज्य संयतः ।
असावद्यां मितां काले, भाषां भाषेत प्रज्ञावान् ॥१०॥

टीका--'एयाइं' इत्यादि ।

प्रज्ञावान् संयतः=साधुः एतानि=पूर्वोक्तानि क्रोधादीनि अष्ट स्थानानि परि-

---

ईर्या समिति का स्वरूप कहकर अब भाषा समिति का स्वरूप कहते हैं कि-'कोहे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(कोहे माणे मायाए लोभे हासे भयमोहर्ये तहेव विकहासु उवउत्तया-क्रोधे माने मायायां हास्ये भयमौखर्ये तथैव विकथासु उपयुक्ता) क्रोध मे, मान मे, माया मे, हास्य मे भय मे वाचालता मे तथा स्त्री आदि की विकथाओं मे इन आठो मे उपयोग रखना अर्थात् क्रोधादि के आवेश मे नहीं बोलना चाहिये ॥९॥

तब कैसे बोलना चाहिये ? सो कहते हैं--'एयाइं' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(एयाइं अट्ठठाणाइं-एतानि अष्ट स्थानानि) इन आठ स्थानो

ઇરિયા સમિતિનુ સ્વરૂપ કહીને હવે ભાષાસમિતિનુ સ્વરૂપ કહેવામા આવે છે—"कोहे" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—कोहे माणे मायाए लोभे हासे भयमोहरिए तहेव विकहासु उवउत्तया-क्रोधे माने मायायां लोभे हास्ये भयमौखर्ये तथैव विकथासु उपयुक्तता માનમા, માયામા, અને લોભમા હાસ્યમા, ભયમા, વાચાલતામા તથા સ્ત્રી આદિની વિકથાઓમા, આ આઠેમા ઉપયોગ રાખવો અર્થાત ક્રોધાદિકના આવેશના નહિ બોલવુ જોઈએ ॥૯॥

ત્યારે કેમ બોલવુ જોઈએ ? તે કહેવામા આવે છે—"एयाइ" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--एयाइ अट्ठठाणाइ-एतानि अष्ट स्थानानि આ આઠ સ્થાનોને

सम्प्रति भावयतनामेव स्पष्टयति—

मूलम्—इंदियत्थे विवज्जित्ता, सज्झायं चेव पंचहा।
तम्मुत्ती तप्पुरक्कारे, संजए ईरियं रिए ॥८॥

छाया—इन्द्रियार्थान् विवर्ज्य, स्वाध्याय चैव पञ्चधा।
तन्मूर्तिस्तत्पुरस्कारः, संयत ईर्यां रीयेत ॥८॥

टीका—'इंदियत्थे' इत्यादि।

इन्द्रियार्थान्=शब्दादीन, विवर्ज्य=तदनध्यवसानतः परिहृत्य, तथा-पञ्चधा=वाचनादि पञ्चप्रकारं स्वाध्याय, चैव=स्वाध्यायमपि, गत्युपयोगघातित्वात् परिहृत्य तन्मूर्तिः—तस्यामेव ईर्यायां व्याप्रियमाणा मूर्त्तिः शरीरं यस्य स तन्मूर्तिः, तथा—तत्पुरस्कारः—तामेव पुरस्करोति=उपयुक्ततया प्राधान्येनाङ्गीकुरुते इति तत्पुरस्कारः। अनेन कायमनसोस्तदेकाग्रत्वमुक्तम्। एवंभूतः सन् संयत ईर्यां रीयेत=विचरेत्। दशबोलान् वर्जयन् गच्छेदिति भावः ॥८॥

उक्ता ईर्यासमितिः, अथ भाषासमितिमाह—

मूलम्—कोहे[1] माणे[2] यं मायाए, लोभे यं उवउत्तया।
हांसे भयमोहरिए, विकहासु तहेव यं ॥९॥

अब इसी भाव यतना का स्पष्टीकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं—'इंदियत्थे' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(इंदियत्थे पंचहा सज्झायं च विवज्जित्ता-इन्द्रियार्थान् पंचधा स्वाध्यायं च विवर्ज्य) इन्द्रियों के शब्दादिक पांच विषयों को तथा वाचना आदि भेद से पांच प्रकार के स्वाध्याय को इन दश बोलों को वर्जकर (तम्मुत्ती तप्पुरक्कारे-तन्मूर्ति तत्पुरस्कार) केवल गमन में ही व्याप्रियमाण शरीर वाला मुनि गमन में ही एकाग्रचित्त होकर (ईरियं रिए-ईर्यां रीयेत) ईर्या में विचरण करे ॥८॥

હવે એ જ ભાવયતનાનું સ્પષ્ટિકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—"इंदियत्थे" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—इंदियत्थे पंचहा सज्झायं च विवज्जित्ता-इन्द्रियार्थान् पंचधा स्वाध्यायं च विवर्ज्य ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક પાંચ વિષયોને તથા વાચના આદિના ભેદથી પાંચ પ્રકારના સ્વાધ્યાયને આ દશ બોલોને વર્જીને तम्मुत्तीतप्पुरकारे-तन्मूर्ति तत्पुरस्कारः કેવળ ગમનમાં જ વ્યાપ્રિયમાણ શરીરવાળા ગમનમાં એકાગ્રચિત્ત બની ईरियं रिए-ईर्यां रीयेत ઇરિયાથી વિચરણ કરે ॥૮॥

कथं विशोधयेत्? इत्याह--

मूलम्--उग्गमुप्पायणं पढमे, बीए सोहिज्ज एसणं।
परिभोगम्मि चउक्कं, विसोहिज्ज जयं जई ॥१२॥

छाया--उद्गमोत्पादनं प्रथमायां, द्वितीयायां शोधयेदेषणाम्।
परिभोगे चतुष्कं, विशोधयेद् यतमानो यतिः ॥१२॥

टीका--'उग्गमुप्पायणं' इत्यादि।

यतमानो=यतनां कुर्वाणो यतिः=संयतः प्रथमायां=गवेषणैषणायाम् उद्गमोत्पादनम्=उद्गमोत्पादनादोषान् शोधयेत्=परिहरेत्। उद्गमदोषा आधाकर्मादयः षोडश, उत्पादनादोषा धात्र्यादयोऽपि षोडशैव सन्ति। द्वितीयायां=ग्रहणैषणायाम् एषणाम्=एषणादोषान्-शङ्कितादीन् दश दोषान् शोधयेत्-परिहरेत्। तथा-परिभोगे=परिभोगैषणायां चतुष्कं=पिण्डशय्यावस्त्रपात्रात्मकं विशोधयेत्=उद्गमादिदोषपरिहारपूर्वकं शुद्धमेव पिण्डादिचतुष्कं परिभुञ्जीत। उक्तंच--

मूलम्--"पिंडं सेज्जं च वत्थं च चउत्थं पायमेव य" ॥

छाया--पिण्डः शय्या च वस्त्रं च, चतुर्थं पात्रमेव च, इति ॥१२॥

एषणा का कैसे विशोधन करे? सो कहते है--'उग्गमुप्पायणं इत्यादि।

अन्वयार्थ--(जयं जई-यतमान यतिः) यतना करने वाला यति (पढमे-प्रथमायाम्) प्रथम गवेषणा एषणा मे (उग्गमुप्पायणं-उद्गमोत्पादनम्) उद्गमोत्पादना दोषो का (सोहिज्ज-शोधयेत्) परित्याग करे। आधाकर्म आदि सोलह १६ उद्गमदोष एव धात्र्यादिक सोलह १६ उत्पादना दोष है। (बीए-द्वितीयायाम्) दूसरी ग्रहणएषणा मे (एसणं सोहिज्ज-एषणाम् शोधयेत्) शंकित आदि दस एषणा के दोषो का परित्याग करे। तथा (परिभोगम्मि-परिभोग एषणा मे (चउक्कं विसोहिज्ज-चतुष्कं विशोधयेत्) पिण्ड, शय्या, वस्त्र एव पात्र इन चार वस्तुओं का उद्गमादिक दोषों के परिहार पूर्वक सेवन करे। "पिण्ड सेज्जं च वत्थं च

એષણાનું કેમ વિશોધન થાય? તે કહેવામાં આવે છે--"उग्गमुप्पायणं" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ--जयं जई-यतमानो यति યતના કરવાવાળા યતિ पढमे-प्रथमायां પ્રથમ ગવેષણા એષણામાં उग्गमुप्पायणं-उद्गमोत्पादनम् ઉદ્ભવતા દોષોના सोहिज्ज-शोधयेत् પરિત્યાગ આધાકર્મ આદિ સોળ ઉદ્ગમ દોષ અને ધાત્ર્યાદિક, સોળ ઉત્પાદના દોષ છે बीए-द्वितीयायाम् બીજી ગ્રહણ એષણામાં एसणं सोहिज्ज-एषणां शोधयेत् શંકિત આદિ દશ એષણાના દોષોને પરિત્યાગ કરે તથા परिभोगम्मि-परिभोगे પરિભોગ એષણામાં चउक्कं विसोहिज्ज-चतुष्कं विशोधयेत् પિંડ, શય્યા, વસ્ત્ર અને પાત્ર આ ચાર વસ્તુઓનો ઉદ્ગમ આદિક દોષોના પરિહાર પૂર્વક સેવન

सर्व असावद्यम्=निर्दोषां मिता=परिमितायाम्=एवंगुणगत ... भाषा काले=अवसरे भाषेत= वदेत् ॥१०॥

उक्ता भाषासमिति, एषणासमितिमाह--

मूलम्--गवेसणाए गहणे यं, परिभोगेसणा यं जा ।
आहारोवहिसेज्जाए, एए तिण्णि विसोहए ॥११॥

छाया--गवेषणायां ग्रहणे च, परिभोगैषणा च या।
आहारोपधिशय्यासु, एतास्तिस्रो विशोधयेत् ॥११॥

टीका--'गवेसणाए' इत्यादि ।

गवेषणायाम्=अन्वेषणायां या एषणा, ग्रहणे=स्वीकारे च या एषणा, च परिभोगैषणा=परिभोगे-आसेवने एषणा-परिभोगैषणा एतास्तिस्र एषणा संयमार्थं साधुभ्यः समुपदिष्टाः । संयतः आहारोपधिशय्यासु-आहारः अशनादिकं उपधिः=वस्त्रपात्रादि, शय्या=वसतिरूपा तासु, एताः=पूर्वोक्ता तिस्र एषणा विशोधयेत्=निर्दोषा कुर्यात्। 'आहारोवधिसेज्जाए' इत्यत्र बहुत्वे आर्षत्वादेकत्वम्। गवेषणादिभिराहारादित्रयं विशोधयेदिति संक्षेपार्थः ॥११॥

का (परिवज्जितु-परिवर्ज्य) परित्याग करके (पन्नव संजए-प्रज्ञावान् संयत) प्रज्ञाशाली संयमी मुनि (असावज्ज मियं भास-असावद्यां मितां भाषाम्) निर्दोष एवं परिमित भाषा को (काले काले) अवसर पर (भासिज्ज-भाषेत) बोले ॥१०॥

अब तीसरी एषणा समिति को कहते हैं--'गवेसणा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--(गवेसणाए गहणे य जा परिभोगेसणा-गवेषणायां ग्रहणे च या एषणा या च परिभोगैषणा) अन्वेषणा में तथा स्वीकार मे जो एषणा है तथा आसेवन मे जो एषणा है सो साधु (एए तिन्नि-एता तिस्र) इन तीन एषणाओं को (आहारोवहिसेज्जाए विसोहए-आहारोपधि शय्यासु विशोधयेत्) आहार उपधि एवं शय्या मे निर्दोष रखें। यह एषणा समिति है ॥११॥

परिवज्जितु-परिवर्ज्य परित्याग કરીને पन्नव संजए-प्रज्ञावान् संयत પ્રજ્ઞાશાળી સયમ મુનિ નિર્દોષ તથા પરિમિત ભાષાથી અવસર ઉપર બોલે છે ॥૧૦॥

હવે ત્રીજી એષણા સમિતિને કહે છે--"गवेसणा" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--गवेसणाए गहणे य जा परिभोगेसणा-गवेषणायां ग्रहणे च या एषणा या च परिभोगैषणा અન્વેષણામા તથા સ્વીકારમા જે એષણા છે તથા આસેવનમા જે એષણા છે તે સાધુ एए तिन्नि-एता तिस्र આ ત્રણ એષણાઓને आहारोवहसेज्जाए विसोहए-आहारोपधिशय्यासु विशोधयेत् આહાર, ઉપધિ, અને શય્યામા નિર્દોષ રાખે આ એષણાસમિતિ છે ॥૧૧॥

छाया—चक्षुषा प्रतिलेख्य, प्रमार्जयेद् यतमानो यति ।
आददीत निक्षिपेद् वा, द्वावपि समित॰ सदा ॥१४॥

टीका—'चक्खुसा' इत्यादि ।

यतमानो यतिः चक्षुषा प्रतिलेख्य=प्रत्युपेक्ष्य–अवलोक्य प्रमार्जयेत परिशोधयेत्। तदनु द्वावपि=औघोपग्रहिकोपधी अपि सदा=सर्वकालम् समितः= उपयुक्त सन् आददीत=गृह्णीयात्,निक्षिपेत्=स्थापयेद् वा ॥१४॥

इत्थमादाननिक्षेपसमितिमुक्त्वा सम्प्रति परिष्ठापनासमितिमाह—

मूलम्—उच्चार पासवणं, खेलं सिंघाण जल्लियं ।
आहार उवहि देहं, अन्नं वावि तहाविहं ॥१५॥

छाया—उच्चार प्रस्रवण, श्लेष्माण सिङ्घाण जल्लम् ।
आहारम् उपधिं देहम् अन्य वापि तथाविधम् ॥१५॥

टीका—'उच्चार' इत्यादि ।

उच्चार=पुरीष, प्रस्रवण=मूत्र, श्लेष्माण=मुखविनिर्गत कफम् सिङ्घाण=

उसी विधि को सूत्रकार कहते हैं—'चक्खुसा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जय जई–यतमान॰ यति) यतनापूर्वक प्रवृत्ति करने वाले यति को चाहिये कि वह (चक्खुसा पडिलेहित्ता–चक्षुषा प्रतिलेख्य) सर्वप्रथम उपधि का चक्षु से अच्छी तरह अवलोकन करे पश्चात् उसका (पमज्जिज्ज–प्रमार्जयेत)प्रमार्जन करे। इसके बाद (दुहओ–द्वौ अपि) इन दोनो प्रकार की उपधि को (सया समिए–सदा समित) सर्वकाल उपयुक्त हुआ वह यति (आइए निक्खिवेज्ज वा–आददीत निक्षिपेत् वा) उठावे तथा रक्खे ॥१४॥

परिष्ठापन समिति का स्वरूप इस प्रकार है—'उच्चार' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(उच्चार–उच्चारम्) उच्चार (पासवण–प्रस्रवणम) प्रस्रवण

આ વિધિને સૂત્રકાર કહે છે—"चक्खुसा" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—जय जई–यतमान यति॰ યતના પૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા મુનિ માટે એ જરૂરનુ છે કે, તે चक्खुसा पडिलेहित्ता–चक्षुषा प्रतिलेख्य સર્વ પ્રથમ ઉપધિનુ પોતાની આંખોથી સારી રીતે અવલોકન કરી પછી તેનુ पमज्जिज्ज प्रमार्जयेत् પ્રમાર્જન કરે આ પ્રમાણે કર્યા પછી दुहओ–द्वौ अपि એ બન્ને પ્રકારની ઉપધિને सया समिए–सदा समित સર્વકાળ ઉપયુક્તતા માટે તે યતિ आइए निक्खिवेज्ज वा-आददीत निक्षिपेत वा ઉપાડે તથા રાખે ।१४॥

પરિષ્ઠાન સમિતિનુ સ્વરૂપ આ પ્રકારનુ છે—"उच्चार" ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—उच्चार–उच्चारम् ઉચ્ચાર, पासवण–प्रस्रवणम् પ્રસ્રવ खेल–

उक्ता एषणासमितिः, इदानीमादाननिक्षेपणासमितिमाह—

मूलम्—ओहोवहोवग्गहियं, भंडगं दुविहं मुणी।
गिण्हंतो निक्खिवंतो यं, पउंजिज्ज इमं विहिं ॥१३॥

छाया—ओघोपध्यौपग्रहिकं, भाण्डकं द्विविधं मुनिः।
गृह्णन् निक्षिपंश्च, प्रयुञ्जीत इमं विधिम् ॥१३॥

टीका—'ओहोवहोवग्गहियं' इत्यादि।

मुनिः ओघोपध्यौपग्रहिकम्=ओघोपधिम् औपग्रहिकोपधिं,तत्र-ओघोपधिं=नित्यग्राह्यलक्षणं सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादिकम्, औपग्रहिकम्=कारणग्राह्यलक्षणं भाण्डकम्=उपकरणम् एतद् द्विविधं=द्विप्रकारकमुपधिं गृह्णन्=आददानः, निक्षिपन्-स्थापयंश्च इमं=वक्ष्यमाणं विधिं प्रयुञ्जीत=कुर्यात्। 'ओहोवहोवग्गहिय' इत्यत्र 'उवहि' शब्दो मध्यनिर्दिष्टो 'देहलीदीप न्यायेन' उभयत्रापि सम्बध्यते ॥१३॥

विधिमेवाह—

मूलम्—चक्खुसा पडिलेहित्ता, पमज्जिज्ज जयं जई।
आइए निक्खिवेज्जा वा, दुहओ वि समिए सया ॥१४॥

चउत्थं पायमेव य" चतुष्क पद से पिण्ड, शय्या, वस्त्र एवं पात्र इन चारों का यहां ग्रहण इस कथन के अनुसार किया गया है ॥१२॥

आदाननिक्षेपण समिति का स्वरूप इस प्रकार है 'ओहोवहोवग्गहियं' इत्यादि।

अन्वयार्थ-(मुणी-मुनिः) मुनि (ओहोवहोवग्गहीय-ओघोपध्यौपग्रहिक) ओघोपधि-नित्यग्राह्यरूप सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरण आदि-को तथा "औपग्रहिक" कारण ग्राह्यलक्षण (भँडग भाण्डकम्) उपकरण को (दुविह-दुविहम्) इन दोनों प्रकार की उपधि को (गिण्हतो-गृह्णन्) उठाता हुआ तथा (निक्खिवतो-निक्षिपन्) धरता हुआ (इमं विहिं पउजिज्ज-इमं विधिम् प्रयुञ्जीत) इस नीचे कही जाने वाली विधि को काम मे लेवे ॥१३॥

કરે "पिंड, सेज्जं च वत्थं च चउत्थं पायमेवय" ચતુષ્ક પદથી પિંડ, શય્યા, વસ્ત્ર અને પાત્ર આ ચારેનું ગ્રહણ અહીં આ કથનના અનુસાર કરવામાં આવેલ છે ॥૧૨॥

આદાન નિક્ષેપણ સમિતિનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે--"ओहो वहो वग्गहिय" ઇત્યાદિ!

અન્વયાર્થ--मुणी मुनिः મુનિ ओहो वहोवग्गहिय-ओघोपध्यौपग्रहिक ઓઘોપધિ નિત્ય ગ્રાહ્યરૂપ સદોરકમુખવસ્ત્રિકા રજોહરણ આદિને તથા औपग्राहिक કારણ ગ્રાહ્ય લક્ષણ भडग-भाण्डकम् ઉપકરણને दुविह-दुविहम् આ બન્ને પ્રકારની ઉપધિને गिण्हतो गृह्णन् ઉપાડતા અને निक्खिवतो-निक्षिपन् ધારણ કરતા इम विहिं पउजिज्ज-इमं विधिम् प्रयुञ्जीत આ નીચે કહેવામા આવેલ વિધિને કામમા લ્યે ॥૧૩॥

देर्विलोकन यत्र तदसलोकम्—स्थण्डिलम् अनापातमसलोकमिति प्रथमो भङ्गः। चैव—च=पुनः, 'एव'कारः पूरणार्थः, अनापात सलोक=सलोकोऽस्त्यस्मिन्निति सलोक—स्थण्डिल भवति। अय भावः—यत्र स्थण्डिले स्वपक्षपरपक्षादेरागमन न भवति, परन्तु सलोकश्च भवति, इति अनापात सलोकमिति द्वितीयो भङ्ग'। आपातम्-आपात=स्वपरपक्षयोरागमन यत्र तदापातम, असलोकम्—स्वपक्षपरपक्षयोरालोक वर्जित स्थण्डिलमिति तृतीयो भङ्ग। आपातचैव सलोक'स्थण्डिलम्—यत्र स्थण्डिले स्वपक्षपरपक्षयोरागमनम् आलोकश्च भवति तादृश स्थाण्डिल च भवतीति चतुर्थो भङ्गः। एवमन्य परास्योपघातिकादि विशेषणेष्वपि चत्वारो भङ्गा बोध्याः ॥१६॥

दश विशेषणपदज्ञापनार्थमुच्चारादि यादृशे स्थण्डिले व्युत्सृजेत्तदाह।

मूलम्—अणावायमसलोए, परस्सऽणुवघाइए।
समे अज्झुसिरे वावि, अचिरकालकयम्मि य ॥१७॥
वित्थिण्णे दूरमोगाढे, णासन्ने विलवज्जिए।
तसपाणबीयरहिए, उच्चाराईणि वोसिरे ॥१८॥

होने पर भी स्वपर उभय पक्ष के व्यक्तियों का अवलोकन (देखना) जहां पर न हो ऐसी भूमि का नाम अनापात एवं असलोक है। यह पहिला भग है।१। जो भूमि (अणावाए चेव होइ सलोए—अनापात चैव भवति सलोकम्) अनापात तो हो परन्तु असलोक न हो अर्थात् सलोक हो यह द्वितीय भग है।२। जो भूमि (अवायमसलोए—आपातमसलोकम्) आपात हो परन्तु सलोक नहीं हो यह तीसराभग है।३। तथा जो भूमि (आवाय चेव सलोए—आपात चैव सलोकम्) आपात भी हो तथा सलोक भी हो ऐसी वह भूमि चतुर्थभगवाली जाननी चाहिये।४। इसी तरह के चार भग भूमि के अन्य विशेषणों में भी लगा लेना चाहिये ॥१६॥

પણ સ્વ પર ઉભય પક્ષની વ્યક્તિઓનું અવલોકન જ્યાં ન હોય એવી ભૂમિનું નામ અનાપાત અને અસલોક છે આ પહેલો ભગ છે (૧) જે ભૂમિ अणावाए चेव होइ सलोए—अनापात चैव भवति सलोकम् અનાપાત હોય પરંતુ અસલોક ન હોય અર્થાત્ સલોક હોય એ બીજો ભગ છે (૨) જે ભૂમિ अवायमसलोए—आपातमसलोकम् આપાત હોય પણ સલોક ન હોય તે ત્રીજો ભગ છે [૩] તથા જે ભૂમી अवाय चेव सलोए—आपात चैव सलोकम् આપાત પણ હોય તથા સલોક પણ હોય એવી તે ભૂમિ ચોથા ભગવાળી જાણવી જોઈએ (૪) આ પ્રકારના ચાર ભૂમિના અન્ય વિશેષણો પણ લગાડી લેવા જોઈએ ॥૧૬॥

नासिकान्तर्निर्गतम्, जल्ल=शरीरमलम्, आहारम्=अशनादिकम्, उपधिम्=उपकरणम्, देह=शरीरम्, वा=अथवा अन्यदपि इतोऽतिरिक्तमपि तथाविध=परिष्ठापनार्ह यत्किंचित्कारणतो गृहित भवत् तत्सर्व स्थण्डिले व्युत्सृजेदिति अग्रणान्वय.। 'सिंघाण' इत्यत्रार्षत्वात् लुप्तद्वितीयान्तम्। 'जल्लिय' इति आर्षत्वान्निर्दिष्टम् ॥१५॥

स्थण्डिल च दशविशेषणपदविशिष्टमिति मनस्याधाय तद्‌गतान्स्थण्डिलोपलक्षणार्थमाद्यविशेषणपदयोर्भङ्गरचनामाह।

मूलम्--अणावायमसलोए, अणावाए चेव होइ सलोए।
आवायमसलोए, आवाए चेव सलोए ॥१६॥

छाया--अनापातमसंलोकम्, अनापात चैव भवति संलोकम्।
आपातमसंलोकम्, आपात चैव संलोकम् ॥ १६ ॥

टीका--'अणावाय' इत्यादि।

अनापातम्--न विद्यते आपात. स्वपरोभयपक्षसमीपागमनरूपो यत्र तदनापात-स्थण्डिलम्, असलोकम्--नास्ति सलोको, दूरस्थितस्यापि स्वपक्षपरपक्षा

(खेल-श्लेष्माणम्) कफ-खेंखार (सिंघाण-सिङ्घाणम्) नाक का मैल (जल्लिय-जल्लम्) शरीर का मैल (आहार-आहारम्) भोजन आदि (उवहिं-उपधिम्) उपकरण (देह-देहम्) शरीर (वा अन्न तहा विह अवि-वा अन्य अपि तथाविधम्) अथवा और भी कोई पदार्थ जो परिष्ठापन के योग्य हो उस को परठना इसका नाम परिष्ठापन समिति है ॥१५॥

कैसी भूमि मे परिष्ठापन करना इसके लिये सूत्रकार कहते हैं--'अणावाय' इत्यादि--

अन्वयार्थ--जो भूमि (अणवायमसलोए-अनापमसलोकम्) अनापात एव असलोक हो अर्थात् जिस भूमि में अपने पक्ष के पर पक्षके तथा उभयपक्ष के व्यक्तियो का समीप मे आगमनरूप आपात न हो तथा दूरस्थित

श्लेष्माणम् કફ સિંઘાણમ્--સિઙ્ઘાણમ્ નાકનો મેલ, જલ્લિયમ--જલ્લમ્ શરીરનો મેલ આહાર--આહારમ્ ભોજન આદિ ઉવહિં--ઉપધિમ્ ઉપકરણ દેહ--દેહમ્ શરીર વા અન્ન તહાવિહ અવિ--વા અન્ય અપિ તથાવિધમ્ અથવા બીજી જે કાંઈ વસ્તુઓ પરિષ્ઠાપનના યોગ્ય હોય તેને પરઠવો એનુ નામ પરિષ્ઠાન સમિતિ છે ॥૧૫॥

કેવી ભૂમિમા પરિષ્ઠાન કરવુ આને માટે સૂત્રકાર બતાવે છે--"અણાવાય" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ--જે ભૂમિ અણાવાયમસલોએ--અનાપાતમસલોકમ્ અનાપાત અને અસલોક હોય અર્થાત્--જે ભૂમિમા પોતાના પક્ષના, બીજા પક્ષના તેમજ ઉભય પક્ષની વ્યક્તિઓની નજીકમા આગમન રૂપ આપાત ન હોય તથા દૂર હોવા છતા

देर्विलोकन यत्र तदसलोकम्-स्थण्डिलम् अनापातमसलोकमिति प्रथमो भङ्गः। चैव-च=पुनः, 'एव'कारःपूरणार्थः, अनापात सलोक=सलोकोऽस्त्यस्मिन्निति सलोक-स्थण्डिल भवति। अय भावः-यत्र स्थण्डिले स्वपक्षपरपक्षादेरागमन न भवति, परन्तु सलोकश्च भवति, इति अनापात सलोकमिति द्वितीयो भङ्गः। आपातम्-आपात=स्वपरपक्षयोरागमन यत्र तदापातम्, असलोकम्-स्वपक्षपरपक्षयोरालोक वर्जित स्थण्डिलमिति तृतीयो भङ्ग। आपातचैव सलोक'स्थण्डिलम्-यत्र स्थण्डिले स्वपक्षपरपक्षयोरागमनम् आलोकश्च भवति तादृश स्थाण्डिल च भवतीति चतुर्थो भङ्ग'। एवमन्य परास्योपघातिकादि विशेषणेष्वपि चत्वारो भङ्गा बोध्या' ॥१६॥

दश विशेषणपदज्ञापनार्थमुच्चारादि यादृशे स्थण्डिले व्युत्सृजेत्तदाह।

मूलम्—अणावायमसलोए, परस्सऽणुवघाइए।
संमे अज्झुसिरे वावि, अचिरकालकयम्मि य ॥१७॥
वित्थिन्ने दूरमोगाढे, णासन्ने बिलवज्जिए।
तसपाणबीयरहिए, उच्चाराईणि वोसिरे ॥१८॥

होने पर भी स्वपर उभय पक्ष के व्यक्तियों का अवलोकन (देखना) जहाँ पर न हो ऐसी भूमि का नाम अनापात एवं असलोक है। यह पहिला भग है।१। जो भूमि (अणावाए चेव होइ सलोए-अनापात चैव भवति सलोकम्) अनापात तो हो परन्तु असलोक न हो अर्थात् सलोक हो यह द्वितीय भग है।२। जो भूमि (अवायमसलोए-आपातमसलोकम्) आपात हो परन्तु सलोक नहीं हो यह तीसरा भग है।३। तथा जो भूमि (आवाय चेव सलोए-आपात चैव सलोकम्) आपात भी हो तथा सलोक भी हो ऐसी वह भूमि चतुर्थभगवाली जाननी चाहिये।४। इसी तरह के चार-भग भूमि के अन्य विशेषणों में भी लगा लेना चाहिये ॥१६॥

પણ સ્વ પર ઉભય પક્ષની વ્યકિતઓનુ અવલોકન જ્યાં ન હોય એવી ભૂમિનુ નામ અનાપાત અને અસલોક છે આ પહેલો ભગ છે (૧) જે ભૂમિ अणावाए चेव होइ सलोए-अनापात चैव भवति सलोकम् અનાપાત હોય પરંતુ અસલોક ન હોય અર્થાત્ સલોક હોય એ બીજો ભગ છે (૨) જે ભૂમિ अवायमसलोए-आपातमसलोकम् આપાત હોય પણ સલોક ન હેય તે ત્રીજો ભગ છે [૩] તથા જે ભૂમી अवाय चेव सलोए-आपात चैव सलोकम् આપાત પણ હોય તથા સલોક પણ હોય એવી તે ભૂમિ ચોથા ભગવાળી જાણવી જોઈએ (૪) આ પ્રકારના ચાર ભૂમિના અન્ય વિશેષણો પણ લગાડી લેવા જોઈએ ॥૧૬॥

छाया—अनापाताऽसंलोके, परस्यानुपघातिके ।
समे अशुषिरे वाऽपि, अचिरकालकृते च ॥१७॥
विस्तीर्णे दूरावगाढे, नासन्ने बिलवर्जिते ।
त्रसप्राणबीजरहिते, उच्चारादीनि व्युत्सृजेत् ॥१८॥

टीका—'अणावाय' इत्यादि ।

संयतः परस्य=स्वपरपक्षादेः अनापातासंलोके=आगमनालोकविवर्जिते, अनुपघातिके—स्वपरोपघातवर्जिते, समे=निम्नोन्नतत्वरहिते ३, अशुषिरे वापि=तृणपर्णादिभिरव्याप्ते, अचिरकालकृते च=दाहादिना स्वल्पकालमचित्ते कृते, चिरकालकृते हि पुनःपृथिवीकायादयः सम्मूर्च्छन्त्येव, विस्तीर्णे=जघन्यतोऽपि हस्तप्रमाणे ६, दूरमवगाढे=जघन्यतोऽप्यधस्ताच्चतुरङ्गुलमचित्त ७, नासन्ने=ग्रामो-

भूमि के दस विशेषण कौन २ हैं—इस बात को सूत्रकार कहते हैं—'अणावाय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—जो भूमि (अणावायमसलोए—अनापातमसलोके) अनापात एवं असलोक हो १, (परस्सऽणुवघाइए—परस्यानुपघातिके) स्व पर उपघात से रहित हो २, (समे—समे) सम नीची ऊँची न हो ३, (अज्झुसिरे—अशुषिर) अशुषिर हो—तृण पर्ण आदि से व्याप्त होने से पोली न हो ४, (अचिरकालकयम्मि—अचिरकालकृते) अचिर कालकृत हो—दाहादिक द्वारा थोडे समय पहिले ही अचित्त की गई हो बहुत समय पहिले अचित्त होने पर पुनः वहां पृथिवी कायादिक जीव उत्पन्न हो जाते है ५ (विच्छिन्ने—विस्तीर्णे) विस्तीर्ण हो—कम से कम एक हाथ प्रमाण वाली हो ६, (दूरमोगाढे—दूरावगाढे) दूरावगाढ हो—कम से कम

ભૂમિના દશ વિશેષણો કયા કયા છે ? આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે-'अणावाय' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ—अणावायमसलोए—अनापातमसलोके જે ભૂમિ અનાપાત અને અસલોક હોય (૧) परस्सऽणुवघाइए—परस्यानुपघातिके સ્વ તથા પરના ઉપઘાતથી રહિત હોય (૨) ઉંચી નિચી ન હોય (૩) अज्झुसिरे ... હોય તૃણ પર્ણ આદિથી વ્યાપ્ત હોવાથી ... ન હોય (૪) अचिर कालकृते અચિરકાળકૃત હોય ... દ્વારા થો... અચેતન ...ચિત્ત ...વી કાય કરવામા આવેલ હોય, ઘણા ... આદિક જીવ ઉત્પન્ન થઇ ... ઓછા એક હાથ પ્ર...

धानादेर्दूरस्थिते ८, बिलवर्जिते=मूषकादिबिलरहिते ९, तथा-त्रसप्राणबीजरहिते -त्रसप्राणाः=द्वीन्द्रियादयः, बीजानि=शाल्यादीनि, इद समस्तैकेन्द्रिय-जीवाना मुपलक्षणम्, एतैः रहिते=वर्जिते च स्थण्डिले उच्चारादीनि व्युत्सृजेत्= परिष्ठापयेत् ॥ १७ ॥ १८ ॥

सम्प्रत्युक्तार्थमुपसहरन् वक्ष्यमाणार्थसम्बन्धाभिधानायाह ।

मूलम्—एयाओ पच समिईओ, समासेण वियाहिया।
इत्तो य तओ गुत्ती, वोच्छामि अणुपुव्वसो ॥१९॥

छाया—एताः पञ्चसमितयः, समासेन व्याख्याताः ।
इतश्च तिस्रो गुप्तीः, वक्ष्यामि अनुपूर्वशः ॥ १९ ॥

टीका—'एयाओ' इत्यादि ।

एताः पूर्वोक्ताः पञ्चसमितयः समासेन=सक्षेपेण व्याख्याताः=उक्ताः । च=पुनः इतोऽनन्तर तिस्रो गुप्तीरनुपूर्वशः=क्रमेण वक्ष्यामि=कथयिष्ये ॥१९॥

नीचे चार अगुल अचित्त हो ७, (णासन्ने-नासन्ने) आसन्न नहीं हो ग्राम उद्यान आदि से दूर हो ८,(बिलवज्जिए-बिलवर्जिते) बिलवर्जित हो चूहा आदिकों के बिल जिसमें न हों ९ एव (तसपाण बीयरहीए-त्रस प्राणबीज रहिते) जिस जमीन मे द्वीन्द्रियादिक जीव न हो शाल्यादिक बीज न हो १० ऐसी भूमि में साधु उच्चार आदि का परिष्ठापन न करे ॥१७॥१८॥

अब उपसहार करते हुए श्री सुधर्मा स्वामी कहते है- 'एयाओ' इत्यादि ।

इस प्रकार ये पाच समितिया सक्षेप से मैने कही हैं। अब इनके बाद क्रमशः तीनगुप्तियों को कहता हू ॥१९॥

ओछामा ओछु नीचे चार आगण अचित्त होय (७) णासन्ने-नासन्ने आसन्न न होय ग्राम उद्यान आदिथी दूर होय (८) बिलवज्जिए-बिलवर्जिते उदरना दर ज्या न होय (९) तसपाणबीयरहीए-त्रसप्राणबीजरहिते अने जे जमीनमा द्वि इन्द्रियादिक जीव न होय अने शाल्यादिक बीज पण न होय (१०) आवी भूमिमा साधुओ उच्चार आदिनु परिष्ठान करे ॥१७॥१८॥

हवे उपसहार करता श्री सुधर्मा स्वामी कहे छे—"एयाओ" इत्यादि ।

आ प्रकारे ए पाच समितिओ सक्षेपथी मे कहेल छे हवे आनो पछी क्रमश त्रण गुप्तियोने कहु छु ॥१९॥

छाया--अनापाताऽसंलोके, परस्यानुपघातिके ।
समे अशुषिरे वाऽपि, अचिरकालकृते च ॥१७॥
विस्तीर्णे दूरावगाढे, नासन्ने बिलवर्जिते ।
त्रसप्राणबीजरहिते, उच्चारादीनि व्युत्सृजेत् ॥१७॥

टीका--'अणावाय' इत्यादि ।

संयतः परस्य=स्वपरपक्षादेः अनापातासंलोके=आगमनालोकविवर्जिते, अनुपघातिके-स्वपरोपघातवर्जिते, समे=निम्नोन्नतत्वरहिते ३, अशुषिरे वापि=तृणपर्णादिभिरव्याप्ते, अचिरकालकृते च=दाहादिना स्वल्पकालमचित्ते कृते, चिरकालकृते हि पुनः पृथिवीकायादयः सम्मूर्च्छन्त्येव, विस्तीर्णे=जघन्यतोऽपि हस्तप्रमाणे ६, दूरमवगाढे=जघन्यतोऽप्यधस्ताच्चतुरङ्गुलमचित्त ७, नासन्ने=ग्रामो-

भूमि के दस विशेषण कौन २ है-इस बात को सूत्रकार कहते हैं--'अणावाय' इत्यादि ।

अन्वयार्थ--जो भूमि (अणावायमसलोए-अनापातमसलोके) अनापात एव असलोक हो १, (परस्सऽणुवघाइए-परस्यानुपघातिके) स्व पर उपघात से रहित हो २, (समे-समे) सम नीची ऊँची न हो ३, (अज्झुसिरे-अशुषिर) अशुषिर हो-तृण पर्ण आदि से व्याप्त होने से पोली न हो ४, (अचिरकालकयम्मि-अचिरकालकृते) अचिर कालकृत हो-दाहादिक द्वारा थोडे समय पहिले ही अचित्त की गई हो बहुत समय पहिले अचित्त होने पर पुनः वहां पृथिवी कायादिक जीव उत्पन्न हो जाते हैं ५ (विच्छिन्ने-विस्तीर्णे) विस्तीर्ण हो-कम से कम एक हाथ प्रमाण वाली हो ६, (दूरमोगाढे-दूरावगाढे) दूरावगाढ हो-कम से कम

ભૂમિના દશ વિશેષણો કયા કયા છે ? આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે- 'अणावाय' ઇત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--अणावायमसलोए-अनापातमसलोके જે ભૂમિ અનાપાત અને અસલોક હોય (૧) परस्सऽणुवघाइए-परस्यानुपघातिके સ્વ તથા પરના ઉપઘાતથી રહિત હોય (૨) ઉંચી નિચી ન હોય (૩) अज्झुसिरे-अशुषिर અશુષિર હોય તૃણ પર્ણ આદિથી વ્યાપ્ત હોવાથી પોલી ન હોય (૪) अचिरकायकयम्मि-अचिर कालकृते અચિરકાળકૃત હોય-દાહ આદિક દ્વારા થોડા સમય પહેલા જ અચેતન કરવામા આવેલ હોય, ઘણા સમય પહેલા અચિત્ત હોવાથી ફરીથી ત્યા પૃથ્વી કાય આદિક જીવ ઉત્પન્ન થઇ જાય છે (૫) विच्छिन्ने-विस्तीर्णे વિસ્તીર્ણ હોય, ઓછામા ઓછા એક હાથ પ્રમાણવાળી હોય (૬) दूरमोगाढे-दूरावगाढे, દૂરાવગાઢ હોય

अस्या मनोगुप्तेरेव स्वरूप निर्दिशन्नुपदेष्टुमाह ।

मूलम्—संरंभसमारंभे, आरंभे यं तहेवं यं ।
मं पवत्तमाणं तुं नियत्तिज्ज जंय जई ॥२१॥

छाया—सरम्भसमारम्भे, आरम्भे च तथैव च ।
मन. प्रवर्तमान तु, निवर्तयेद् यतमानो यति ॥२१॥

टीका—'सरभसमारभे' इत्यादि ।

यतमानो=यतना कुर्वाणो यति. सरम्भसमारम्भे-सरम्भ'=सकल्पः, स च मानसः='तथाऽह ध्यास्यामि यथाऽसौ मरिष्यतीत्येवविध, समारम्भः=परपीडाकरोच्चाटनादिनिमित्त ध्यानम्, अनयोः समाहारस्तस्मिन्, च=पुनः आरम्भे च आरम्भः=परमारणक्षमाशुभध्यानरूप, उक्तञ्च—"सकप्पो सरभो, परितावकरो भवे समारभो आरभो उद्दवओ, सुद्धनयाण तु सव्वेसिं ॥" इति तस्मिन्नपि प्रवर्तमान मन तथैव=आगमोक्तप्रकारेणैव तु=निश्चयेन निवर्तयेत् ॥२१॥

इसी मनोगुप्ति का स्वरूप कहते हुए सूत्रकार उपदेश करते हैं—'सरभ-समारभे' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(जय जई—यतमान. यति') यतना करता हुआ यति (सरसमारभे तहेव य आरभे पवत्तमाण मण नियत्तिज्ज—सरम्भसमारम्भे तथैव आरम्भे प्रवर्तमान मन निवर्तयेत्) सरम्भ में—अशुभ सकल्प मे, जैसे 'मै इस प्रकार का ध्यान करूँगा' कि जिससे यह मर जायगा ऐसे अशुभ विचार में, समारम्भ मे—परपीडा कारक उच्चाटनादिक के निमित्तभूत ध्यान मे, तथा आरम्भ मे—परको मारण मे समर्थ अशुभ ध्यान मे प्रवर्तमान मन को आगमोक्त विधि के अनुसार हटावे इसका नाम मनोगुप्ति है ॥२१॥

આ મનોગુપ્તિના સ્વરૂપને કહેતા સૂત્રકાર ઉપદેશ કરે છે—"सरभ समारभे" ઇત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—जय जई—यतमान यति યતના કરનાર યતિ सरभसमारभे तहेव य आरभे पवत्तमाण मण नियत्तिज्ज—सरम्भसमारम्भे तथैव आरभे प्रवर्तमान मन. निवत्तयेत् સરભમા—અશુભ સકલ્પમા જેમ "હુ આ પ્રકારનુ ધ્યાન કરીશ" કે જેનાથી આ મરી જશે એવા અશુભ વિચારમા, સમારભમા—પરપીડા કારક ઉચ્ચાટનાદિકના નિમિત્તભૂત ધ્યાનમા તથા આરભમા પરને મારવામા સમર્થ અશુભ ધ્યાનમા પ્રવર્તમાન બનીને મનને આગમોક્ત વિધિ અનુસાર હટાવે તેનુ નામ મનોગુપ્તિ છે ॥૨૧॥

तत्राद्यां मनोगुप्तिमाह ।

मूलम्—सच्चा तहेव मोसा यं, सच्चामोसा तहेव यं ।
चउत्थी असच्चमोसा यं, मणगुत्ती चउव्विहा ॥२०॥

छाया—सत्या तथैव मृषा च, सत्यामृषा तथैव च ।
चतुर्थी असत्यामृषा च, मनोगुप्तिश्चतुर्विधा ॥ २० ॥

टीका—'सच्चा' इत्यादि ।

सत्या–सद्भ्यः=पदार्थेभ्यो हितः=सत्यः–सत्पदार्थचिन्तनरूपो मनोयोगस्तद्विषया मनोगुप्तिरप्युपचारात्सत्या, च=पुनः तथैव मृषा=असत्या–पूर्वोक्तमनोयोगविपरीतमनोयोगविषया मनोगुप्तिरुपचारान्मृषा, तथैव च सत्यामृषा उभयात्मकमनोयोगविषया मनोगुप्तिः, च=पुनः चतुर्थी असत्यामृषा=उभयस्वभावरहितमनोदलिकव्यापाररूपमनोयोगविषया मनोगुप्तिः । इत्थं मनोगुप्तिश्चतुर्विधा कथिता ॥२०॥

तीन गुप्तियों में से प्रथम मनोगुप्ति को कहते हैं—'सच्चा' इत्यादि ।

अन्वयार्थ—(सच्चा–सत्या) सत्य १, (मोसा–मृषा) असत्य २, (सच्चा मोसा–सत्यमृषा) सत्यासत्य ३, ऐव चौथी (असच्चमोसा–असत्यमृषा) अनुभय ४, इसरूप से मनोगुप्ति चार प्रकारकी है । सत्पदार्थ के चिन्तवन रूप मनोयोग को विषय करने वाली मनोगुप्ति सत्यमनो गुप्ति है । असत्पदार्थ के चिन्तवनरूप मनोयोग को विषय करने वाली मनोगुप्ति है । उभयरूप पदार्थ के चिन्तवनरूप मनोयोग को विषय करने वाली मनोगुप्ति सत्या सत्यमनोगुप्ति है । उभय स्वभाव रहित मनोदलिक व्यापाररूप मनोयोग-विषयक मनोगुप्ति का नाम अनुभय मनोगुप्ति है ॥२०॥

એ ત્રણ ગુપ્તિઓમાંથી પ્રથમ મન ગુપ્તિને કહે છે—"सच्चा" ઈત્યાદિ !

અન્વયાર્થ—सच्चा–सत्या સત્ય (૧) मोसा–मृषा અસત્ય (૨) सच्चामोसा–सत्यमृषा સત્યા સત્ય (૩) અને ચોથી असच्चमोसा–असत्यमृषा અનુભય (૪) આ રૂપથી મનોગુપ્તિ ચાર પ્રકારની છે સત્પદાર્થના ચિંતવન રૂપ મનના યોગોનો વિષય કરવાવાળી મનોગુપ્તિ સત્ય મનોગુપ્તિ છે અસત્ પદાર્થના ચિંતન રૂપ મનોયોગનો વિષય કરવાવાળી મનોગુપ્તિ અસત્ય મનોગુપ્તિ છે ઉભયરૂપ પદાર્થના ચિંતનરૂપ મનોયોગનો વિષય કરવાવાળી મનોગુપ્તિ સત્યાસત્ય મનોગુપ્તિ છે ઉભય સ્વભાવ વગરની મનોદલિક વ્યાપાર રૂપ મનોયોગ વિષયક મનોગુપ્તિનું નામ અનુભય મનોગુપ્તિ છે ॥૨૦॥

णा योजने=शब्दादिषु व्यापारणे च यतमानो=यतना कुर्वाणो यतिः संरम्भसमा
रम्भे-संरम्भः=अभिघाताय यष्टिमुष्ट्यादीनामुत्थापनम्, एतदपि संकल्पसूचकम्,
अत उपचारात् संकल्पशब्दवाच्यं भवति, समारम्भः=परितापकरो मुष्ट्याद्यभि
घातः अनयोः समाहारद्वन्द्वस्तस्मिन्, तथा-आरम्भे=प्राणिविराधनारूपे व्यापारे
च प्रवर्तमानं कायं तथैव=शास्त्रोक्तरीत्यैव तु=निश्चयेन निवर्तयेत् ॥२४॥२५॥

आदि को पार करने मे, तथा (इंदियाण जुंजण-इन्द्रियाणा योजने) इन्द्रियों को उनके विषयभूत पदार्थों मे व्यापारितकरने मे (जयं जई-यतमान यतिः) यतना पूर्वक प्रवृत्ति करने वाला यति (संरंभ समारंभ आरंभम्मि पवत्तमाणं कायं तहेव नियत्तिज्ज-संरम्भ समारम्भे आरम्भे च प्रवर्तमानं कायं तथैव निवर्त्तयेत्) संरम्भ, समारम्भ एवं आरम्भ में प्रवर्तमान अपने शरीर को शास्त्र मे कही हुई विधि के अनुसार वहा से हटावे। इसका नाम कायगुप्ति है—

मारने के लिये यष्टि मुष्टि आदि का उठाना यह काय का संरंभ है। यद्यपि संरम्भ शब्द का अर्थ संकल्प है परन्तु यहा इस प्रकार की प्रवृत्ति विना संकल्प नहीं हो सकती है, अतः उपचार से इस प्रकार के व्यापार को भी 'संरम्भ' इस रूप से कह दिया गया है। परिताप कारक मुष्टि आदि का अभिघात करना इसका नाम समारम्भ। प्राणि-विराधनारूप व्यापार में शरीर का लगाना आरंभ है। शरीर को ऐसे व्यापारों मे नहीं लगाना इसका नाम कायगुप्ति है ॥२४॥२५॥

ઉછલવામા અર્થાત-વાર વાર ઉછળીને કોઈ ખાડા આદિને પાર કરવ મા તથા इंदियाण जुंजणे-इन्द्रियाणां योजने ઇન્દ્રિયોને એના વિષયભૂત પદાર્થોમા વ્યાપૃત કરવામા जयं जई-यतमान• यति યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા યતિ संरंभसमारंभे आरंभम्मि पवत्तमाणं कायं तहेव नियत्तिज्ज-संरम्भसमारम्भे आरम्भे च प्रवर्त्तमानं कायं तथैव निवर्त्तयेत् સરંભ સમારંભ અને આરંભમા પ્રવૃત્તમાન પોતાના શરીરને શાસ્ત્રમા કહેવામા આવેલ વિધિ અનુસાર ત્યાથી હઠાવે સરંભ સમારંભ, અને આરંભમા પ્રવર્તમાન પોતાના શરીરને શાસ્ત્રમા કહેવામા આવેલ વિધિ અનુસાર ત્યાથી હઠાવે તેનુ નામ કાયગુપ્તિ છે

મારવા માટે હાથનુ તેમજ મુઠીનુ ઉઠાવવુ આ કાયનો સરંભ છે જો કે સરંભ શબ્દનો અર્થ સંકલ્પ છે પરંતુ અહીં એ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ વગર સંકલ્પ થઈ શકતી નથી આથી ઉપચારથી કાયાના આ પ્રકારના વ્યાપારને પણ "સરંભ" આ રૂપથી કહેવામાં આવેલ છે પરિતાપ કારક મુઠી આદિનો અભિઘાત કરવો તેનુ નામ સમારંભ પ્રાણી વિરાધના રૂપ વ્યાપારમા શરીરને લગાડવુ એ આરમ્ભ છે શરીરને આવા વેપારમા ન લગાડવુ તેનુ નામ કાયગુપ્તિ છે ॥૨૪॥૨૫॥

इदानीं कायगुप्तिमाह--

मूलम्—ठाणे निसीयणे चेव, तहेव य तुयट्टणे।
उल्लंघण पल्लंघणे, इंदियाण य जुंजणे ॥२४॥
संरंभसमारंभे, आरंभम्मि तहेव य।
कायं पवत्तमाणं तु, नियत्तिज्ज जयं जई ॥२५॥

छाया— स्थाने निषदने चैव, तथैव, च त्वग्वर्तने।
उल्लङ्घनप्रलङ्घने,इन्द्रियाणां च योजने ॥२४॥
संरम्भसमारम्भे, आरम्भे तथैव च।
कायं प्रवर्त्तमानं तु, निवर्त्तयेद् यतमानो यतिः ॥२५॥

टीका—'ठाणे' इत्यादि।

स्थाने=ऊर्ध्वस्थाने, चैव-च=पुनः निषदने=उपवेशने, तथैव च त्वग्वर्तने=शयने उल्लङ्घनप्रलङ्घने-उल्लङ्घनं च प्रलङ्घनं चेत्यनयोः समाहारस्तस्मिन् तत्र-उल्लङ्घने =सकृत् तथा विधनिमित्ततो गर्त्ताद्युत्क्रमणे प्रलङ्घने=असकृदुल्लङ्घने, तथा-इन्द्रि-

करने में प्रवृत्ति करने रूप वचन व्यापार का नाम आरंभ है। यतनावान यति का कर्तव्य है कि वह अपनी वचनगुप्ति को संरम्भ, समारम्भ एवं आरंभ में न लगावे। इन संरम्भादिक से वचन को हटाना इसी का नाम वचोगुप्ति है ॥२३॥

अब तीसरी कायगुप्ति को कहते हैं—'ठाणे' इत्यादि।

अन्वयार्थ (ठाणे-स्थाने) खडे होने में (निसीयणे-च निषदने) तथा बैठने (तहेव य तुयट्टणे-तथैव त्वग्वर्तने) शयन करने मे (उल्लंघणपल्लंघणे-उल्लंघनप्रलंघने) उल्लंघ करने में-किसी खड्डे आदिको एक बार उछलकर पार करने में प्रलंघन-करने मे अर्थात् बार २ उछलकर किसी खड्डे

કારણભૂત મંત્રાદિકોનો જાપ કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ વચન વ્યાપારનું નામ આરંભ છે યતનાવાન યતિનું કર્તવ્ય છે કે, તે પોતાની વચનગુપ્તિને સંરંભ, સમારંભ અને આરંભમાં ન લગાડે આ સંરંભાદિકથી વચનને હઠાવવું તેનું નામ વચોગુપ્તિ છે ॥૨૩॥

હવે ત્રીજી કાયગુપ્તિને કહે—"ઠાણે" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—ठाणे-स्थाने ઉભા થવામાં તથા निसीयणे-च निषदने બેસવામાં तहेव य तुयट्टणे-तथैव त्वग्वर्तने સુવામાં उल्लंघणपल्लंघणे-उल्लंघनप्रलंघने ઉલ્લંઘન કરવામાં કોઈ ઉભેલાને ઉછાળીને પાર કરવામાં આવે પ્રલંઘન કરવામાં વાર વાર

सम्प्रत्यध्ययनार्थमुपसंहरन्नेतदाचरणफलमाह—

मूलम्—एंया पवयणमाया, जे संम्मं आयरे मुंणी।
सो खिप्पसव्वसंसारा, विप्पमुंच्चइ पडिए त्ति वेमि ॥२७॥

॥इइ पवयणमाइय चउवीसइम अज्झयणं समत्तं ॥२४॥

छाया—एताः प्रवचनमातृः, यः सम्यगाचरति मुनिः।
स क्षिप्रं सर्वसंसाराद्, विप्रमुच्यते पण्डित इति ब्रवीमि ॥२७॥

टीका—'एया' इत्यादि।

यो मुनि एताः=पूर्वोक्ता अष्ट प्रवचनमातृः सम्यक्=अवैपरीत्येन, न तु दम्भादिना, आचरति=सेवते। पण्डितः=तत्त्वातत्त्वविवेकवान् स मुनि क्षिप्रं=शीघ्रं सर्वसंसारात्=चतुर्गतिकरूपसकलसंसारात् विप्रमुच्यते=सर्वथा मुक्तो भवति। 'इति ब्रवीमि' इत्यस्यार्थः पूर्ववद् बोध्य' ॥२७॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहूछत्रपति-कोल्हापुर-राजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि--जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितायामुत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिन्याख्याया व्याख्यायां 'प्रवचनमातृ' नामकं चतुर्विंशतितममध्ययनं सम्पूर्णम् ॥२४॥

फल कहते हैं--'एया' इत्यादि।

अन्वयार्थ—(जे मुणी-यः मुनिः) जो मुनि (एया पवयणमाया-एताः प्रवचनमातृः) इन पूर्वोक्त अष्टप्रवचन माताओं को (सम्मं-सम्यक्) अविपरीतता से-दम्भादिक रहित (आयरे-आचरति, पालते है (पडिए-पण्डितः) तत्त्वातत्त्वविवेकवान् वे मुनि (खिप्प-क्षिप्रम्) शीघ्र ही (सव्वसंसारा-सर्वसंसारात्) चतुर्गतिरूप समस्त संसार से सर्वथा (विप्पमुच्चइ-विप्रमुच्यते) मुक्त हो जाते है। ऐसा मैं कहता हूं ॥२७॥

॥यह चौवीस वा अध्ययन समाप्त ॥२४॥

અધ્યનનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર તેના આચરણનું ફળ કહે છે—"एया" ઇત્યાદિ।

અન્વયાર્થ—जे मुणी-यः मुनिः જે મુનિ पवयणमाया-एताः प्रवचनमातृः આ પૂર્વોક્ત આઠ પ્રવચન માતાઓને सम्मं-सम्यक् અવિપરિતતાથી દંભ આદિથી રહીત બનીને आयरे-आचरति પાળે છે पडिए-पडितः તત્વાતત્વના વિવેકવાળા તે મુનિ खिप्प-क्षिप्रम् શીઘ્ર જે सव्वसंसारा-सर्वसंसारात् ચાર ગતિરૂપ સમગ્ર સંસારથી સર્વથા મુકત બની જાય છે એવું હું કહું છું ॥૨૭॥

શ્રી ઉત્તરાધ્યન સૂત્રનું ચોવીસમું અધ્યયન સંપૂર્ણ ॥૨૪॥

सम्प्रति प्रकृत समितिगुप्त्यो' परस्परविशेष मयमाह--

मूत्रम्--एयाओ पचं समिईओं, चरणस्स यँ पवत्तणे ।
गुत्ती नियंत्तणे वुंत्ता, असुभत्थेसु यँ सव्वसो ॥२६॥

छाया--एता पञ्च समितयः, चरणस्य च प्रवर्त्तने ।
गुप्तयो निवर्त्तनेऽप्युक्ताः, अशुभार्थेभ्यश्च सर्वश ॥२६॥

टीका--'एयाओ' इत्यादि ।

चरणस्य=चारित्रस्य प्रवर्त्तने च-चारित्रेषु प्रवृत्तावेव एता पूर्वोक्ता प्राणातिपातविरमणाद्य पञ्चसमितय उक्ता.। च=पुनः गुप्तय. सर्वश =सर्वेभ्योऽशुभार्थेभ्य =अशुभमनोयोगादिभ्यो निवर्त्तने=निवृत्तौ, अपि शब्दात् चारित्र प्रवृत्तौ च उक्ता.। 'असुभत्थेसु' इत्यत्र पञ्चम्यर्थे सप्तमी ॥२६॥

अब सूत्रकार समितिऔर गुप्ति में परस्पर क्या भेद है सो दिखलाते है—'एयाओ' इत्यादि ।

अन्वयार्थ-(चरणस्स पवत्तणे चारित्रस्य प्रवर्त्तने) चारित्र में प्रवत्ति करने परही(एयाओ-एता) पूर्वोक्त प्राणातिपात विरमण आदि पाँच समतियाँ कही गई है। (सव्वसो असुभत्थेसु नियत्तणे गुत्ती वुत्ता-सर्वश अशुभार्थेभ्यश्च निवर्त्तने अपि गुप्तय उक्ता) तथा समस्त अशुभ मनोयोगादिक से निवर्तन में "अपि" शब्द से चारित्र मे प्रवृत्ति करने मे गुप्तियाँ कही गई हैं।

भावार्थ—समिति केवल प्रवृत्ति स्वरूप हैं और ये प्राणातिपात विरमणरूप हैं। तथा गुप्तियाँ प्रवृत्ति निवृत्ति उभयस्वरूप हैं ॥२६॥

अब अध्ययन का उपसहार करते हुए सूत्रकार इनके आचरण

હવે સૂત્રકાર સમિતિ અને ગુપ્તિમા પરસ્પરમા કેવો ભેદ છે તે બતાવે છે --"एयाओ" ઈત્યાદિ ।

અન્વયાર્થ--चरणस्स पवत्तणे-चारित्रस्य प्रवर्त्तने ચારિત્રમા પ્રવૃત્તિ કરવા ઉપરથી જ एयाओ-एताः પૂર્વોકત પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાચ સમિતિઓ કહેવામા આવેલ છે, તથા सव्वसो असुभत्थेसु नियत्तणे गुत्ती वुत्ता-सर्वश अशुभार्थेभ्यश्च निवर्त्तने अपि गुप्तय' उक्ता સઘળા અશુભ મને યોગાદિકથી નિવર્તનમા "अपि" શબ્દથી ચારિત્રમા પ્રવૃત્તિ કરવામા ગુપ્તિઓ કહેવામા આવેલ છે

ભાવાર્થ--સમિતિ કેવળ પ્રવૃત્તિ સ્વરૂપ છે અને તે પ્રાણાતિપાત વિરમણ રૂપ છે તથા ગુપ્તિયો પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ ઉભય સ્વરૂપ છે ॥૨૬॥